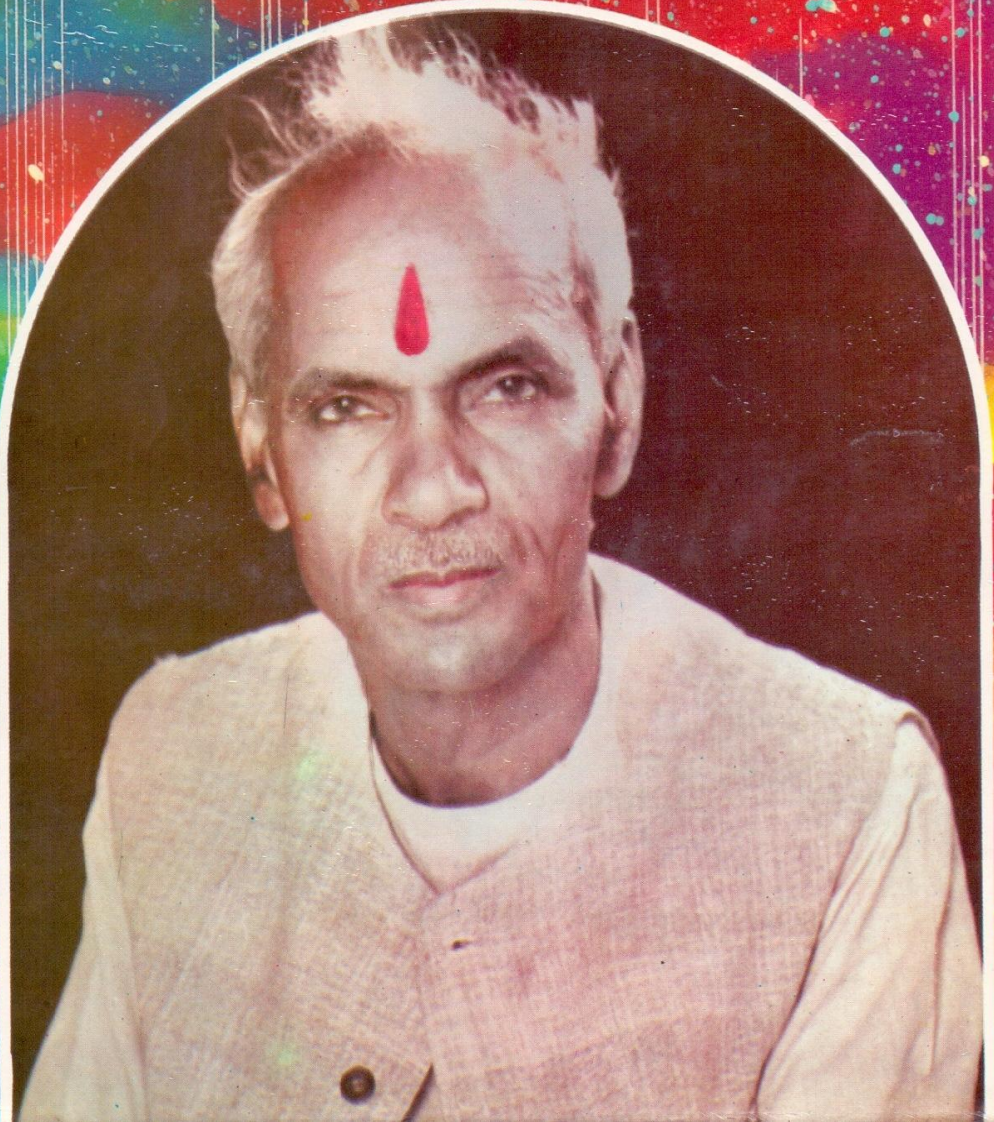
पं. श्रीराम शर्मा आचार्य वाङ्मय

भविष्य का धर्म : वैज्ञानिक धर्म



www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पं. श्रीराम शर्मा आचार्य वाङ्मय

भविष्य का धर्म : वैज्ञानिक धर्म

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

सम्पादक
ब्रह्मवर्चस

प्रकाशक
अखण्ड ज्योति संस्थान, मथुरा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

❐

प्रकाशक

अखण्ड ज्योति संस्थान

मथुरा - २८१००३

❐

© सर्वाधिकार सुरक्षित

❐

द्वितीय संस्करण १९९८

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

❐

मूल्य १२५)

❐

मुद्रक

जनजागरण प्रेस, मथुरा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समर्पणम्

ॐ मातरं भगवतीं देवीं श्रीरामञ्च जगद्गुरुम् ।
पादपद्मे तयोः श्रित्वा प्रणमामि मुहुर्मुहुः ॥

मातृवत् लालयित्री च पितृवत् मार्गदर्शिका ।
नमोऽस्तु गुरुसत्तायै श्रद्धा-प्रज्ञा युता च या ॥

भगवत्याः जगन्मातुः, श्रीरामस्य जगद्गुरोः ।
पादुकायुगले वन्दे, श्रद्धाप्रज्ञास्वरूपयोः ॥

नमोऽस्तु गुरवे तस्मै गायत्रीरूपिणे सदा ।
यस्य वागमृतं हन्ति विषं संसारसंज्ञकम् ॥

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

असम्भवं सम्भवकर्तुमुद्यतं प्रचण्डझञ्झावृतिरोधसक्षमम् ।
युगस्य निर्माणकृते समुद्यतं परं महाकालममुं नमाम्यहम् ॥

त्वदीयं वस्तु गोविन्द ! तुभ्यमेव समर्पये ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

विराट गायत्री परिवार एवं उसके संस्थापक-संरक्षक एक संक्षिप्त परिचय

इतिहास में कभी-कभी ऐसा होता है कि अवतारी सत्ता एक साथ बहुआयामी रूपों में प्रकट होती है एवं करोड़ों ही नहीं, पूरी वसुधा के उद्धार-चेतनात्मक धरातल पर सबके मनों का नये सिरे से निर्माण करने आती है । परमपूज्य गुरुदेव पं. श्रीराम शर्मा आचार्य को एक ऐसी ही सत्ता के रूप में देखा जा सकता है जो युगों-युगों में गुरु एवं अवतारी सत्ता दोनों ही रूपों में हम सबके बीच प्रकट हुई, अस्सी वर्ष का जीवन जीकर एक विराट् ज्योति प्रज्ज्वलित कर उस सूक्ष्म ऋषि चेतना के साथ एकाकार हो गयी जो आज युग परिवर्तन को सन्निकट लाने को प्रतिबद्ध है । परमवंदनीया माताजी शक्ति का रूप थीं जो कभी महाकाली, कभी माँ जानकी, कभी मां शारदा एवं कभी माँ भगवती के रूप में शिव की कल्याणकारी सत्ता का साथ देने आती रही है । उनने भी सूक्ष्म में विलीन हो स्वयं को अपने आराध्य के साथ एकाकार कर ज्योतिपुरुष का एक अंग स्वयं को बना लिया । आज दोनों सशरीर हमारे बीच नहीं है किन्तु, नूतन सृष्टि कैसे ढाली गयी, कैसे मानव गढ़ने का साँचा बनाया गया, इसे शान्तिकुंज, ब्रह्मवर्चस, गायत्री तपोभूमि, अखण्ड ज्योति संस्थान एवं युगतीर्थ आँवलखेड़ा जैसी स्थापनाओं तथा संकल्पित सृजन सेनानी गणों के, वीरभद्रों की करोड़ों से अधिक की संख्या के रूप में देखा जा सकता है ।

परमपूज्य गुरुदेव का वास्तविक मूल्यांकन तो कुछ वर्षों बाद इतिहासविद, मिथक लिखने वाले करेंगे किन्तु, यदि उनको आज भी साक्षात कोई देखना या उनसे साक्षात्कार करना चाहता हो तो उन्हें उनके द्वारा अपने हाथ से लिखे गये उस विराट परिमाण में साहित्य के रूप में युग संजीवनी के रूप में देख सकता है जो वे अपने वजन से अधिक भार के बराबर लिख गये । इस साहित्य में संवेदना का स्पर्श इस बारीकी से हुआ है कि लगता है लेखनी को उसी की स्याही में डुबा कर लिखा गया हो । हर शब्द ऐसा जो हृदय को छूता मन को, विचारों को बदलता चला जाता है । लाखों करोड़ों के मनों के अंत:स्थल को छू कर उसने उनका कायाकल्प कर दिया । रूसो के प्रजातंत्र की, कार्ल मार्क्स के साम्यवाद की क्रांति भी इसके समक्ष बौनी पड़ जाती है । उनके मात्र इस युग वाले स्वरूप को लिखने तक में लगता है कि एक विश्वकोश तैयार हो सकता है, फिर उस बहुआयामी रूप को जिसमें वे संगठनकर्ता, साधक, करोड़ों के अभिभावक, गायत्री महाविद्या के उद्धारक, संस्कार परम्परा का पुनर्जीवन करने वाले, ममत्व लुटाने वाले एक पिता, नारी जाति के प्रति अनन्य करुणा बिखेरकर उनके ही उद्धार के लिए धरातल पर चलने वाला नारी जागरण अभियान चलाते देखे जाते हैं, अपनी वाणी के उद्बोधन से एक विराट गायत्री परिवार एकाकी अपने बलबूते खड़े रहते दिखाई देते हैं तो समझ में नहीं आता, क्या-क्या लिखा जाय, कैसे छन्दबद्ध, लिपिबद्ध किया जाय, उस महापुरुष के जीवनचरित को ।

आश्विन कृष्ण त्रयोदशी विक्रमी संवत् १९६७ (२० सितम्बर १९११) को स्थूल शरीर से आँवलखेड़ा ग्राम जनपद आगरा जो जलेसर मार्ग पर आगरा से पंद्रह मील की दूरी पर स्थित है, में जन्मे श्रीराम शर्मा जी का बाल्यकाल-कैशोर्य काल ग्रामीण परिसर में ही बीता । वे जन्मे तो थे एक जमींदार घराने में, जहाँ उनके पिता-श्री पं. रूपकिशोर जी शर्मा आसपास के दूर-दराज के राजघरानों के राजपुरोहित, उद्भट विद्वान, भागवत कथाकार थे किन्तु, उनका अंत:करण मानव मात्र की पीड़ा से सतत विचलित रहता था । साधना के प्रति उनका झुकाव बचपन में ही दिखाई देने लगा । जब वे अपने सहपाठियों को, छोटे बच्चों को अमराइयों में बिठाकर स्कूली शिक्षा के साथ-साथ सुसंस्कारिता अपनाने वाली आत्मविद्या का शिक्षण दिया करते थे । छटपटाहट के कारण हिमालय की ओर भाग निकलने व पकड़े जाने पर उनने संबंधियों को बताया कि हिमालय ही उनका घर है एवं वहीं वे जा रहे थे । किसे मालूम था कि हिमालय की ऋषि चेतनाओं का समुच्चय बनकर आयी यह सत्ता वस्तुत: अगले दिनों अपना घर वहीं बनाएगी । जाति-पाँति का कोई भेद नहीं । जातिगत मूढ़ता भरी मान्यता से ग्रसित तत्कालीन भारत के ग्रामीण परिसर में एक अछूत वृद्ध महिला की जिसे कुष्ठ रोग हो गया था, उसी के टोले में जाकर सेवाकर उनने घरवालों का विरोध तो मोल ले लिया पर अपना व्रत नहीं छोड़ा ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

उस महिला ने स्वस्थ होने पर उन्हें ढेरों आशीर्वाद दिये। एक अछूत कहलाने वाली जाति का व्यक्ति जो उनके आलीशान घर में घोड़ों की मालिश करने आता था, एक बार कह उठा कि मेरे घर कथा कौन कराने आएगा, मेरा ऐसा सौभाग्य कहाँ। नवनीत जैसे हृदय वाले पूज्यवर उसके घर जा पहुँचे एवं कथा पूरे विधान से कर पूजा की, उसको स्वच्छता का पाठ सिखाया, जबकि सारा गाँव उनके विरोध में बोल रहा था।

किशोरावस्था में ही समाज सुधार की रचनात्मक प्रवृत्तियाँ उनने चलाना आरम्भ कर दी थीं। औपचारिक शिक्षा स्वल्प ही पायी थी किन्तु, उन्हें इसके बाद आवश्यकता भी नहीं थी क्योंकि जो जन्मजात प्रतिभा सम्पन्न हो वह औपचारिक पाठ्यक्रम तक सीमित कैसे रह सकता है। हाट-बाजारों में जाकर स्वास्थ्य-शिक्षा प्रधान परिपत्र बाँटना, पशुधन को कैसे सुरक्षित रखें तथा स्वावलम्बी कैसे बनें, इसके छोटे-छोटे पैम्फलेट्स लिखने, हाथ की प्रेस से छपवाने के लिए उन्हें किसी शिक्षा की आवश्यकता नहीं थी। वे चाहते थे, जनमानस आत्मावलम्बी बने, राष्ट्र के प्रति स्वाभिमान उसका जागे, इसलिए गाँव में जन्मे इस लाल ने नारी शक्ति व बेरोजगार युवाओं के लिए गाँव में ही एक बुनताघर स्थापित किया व उसके द्वारा हाथ से कैसे कपड़ा बुना जाय, अपने पैरों पर कैसे खड़ा हुआ जाय, यह सिखाया।

पंद्रह वर्ष की आयु में वसंत पंचमी की वेला में सन् १९२६ में उनके घर की पूजा स्थली में, जो उनकी नियमित उपासना का तब से आगार थी, जबसे महामना पं० मदन मोहन मालवीय जी ने उन्हें काशी में गायत्री मंत्र की दीक्षा दी थी, उनकी गुरुसत्ता का आगमन हुआ अदृश्य छायाधारी सूक्ष्म रूप में। उनने प्रज्ज्वलित दीपक की लौ में से स्वयं को प्रकट कर उन्हें उनके द्वारा विगत कई जन्मों में संपन्न क्रिया कलापों का दिग्दर्शन कराया तथा उन्हें बताया कि वे दुर्गम हिमालय से आये हैं एवं उनसे अनेकानेक ऐसे क्रियाकलाप कराना चाहते हैं, जो अवतारी स्तर की ऋषि सत्ताएँ उनसे अपेक्षा रखती हैं। चार बार कुछ दिन से लेकर एक साल तक की अवधि तक हिमालय आकर रहने, कठोर तप करने का भी उनने संदेश दिया एवं उन्हें तीन संदेश दिए- १. गायत्री महाशक्ति के चौबीस-चौबीस लक्ष के चौबीस महा- पुरश्चरण जिन्हें आहार के कठोर तप के साथ पूरा करना था। २. अखण्ड घृतदीप की स्थापना एवं जन-जन तक इसके प्रकाश को फैलाने के लिए समय आने पर ज्ञानयज्ञ अभियान चलाना, जो बाद में अखण्ड ज्योति पत्रिका के १९३८ में प्रथम प्रकाशन से लेकर विचार-क्रांति अभियान के विश्वव्यापी होने के रूप में प्रकटा तथा ३. चौबीस महापुरश्चरणों के दौरान युगधर्म का निर्वाह करते हुए राष्ट्र के निमित्त भी स्वयं को खपाना, हिमालय यात्रा भी करना तथा उनके संपर्क से आगे का मार्गदर्शन लेना।

यह कहा जा सकता है कि युग निर्माण मिशन, गायत्री परिवार, प्रज्ञा अभियान, पूज्य गुरुदेव जो सभी एक दूसरे के पर्याय हैं, की जीवन यात्रा का यह एक महत्वपूर्ण मोड़ था, जिसने भावी रीति-नीति का निर्धारण कर दिया। पूज्य गुरुदेव अपनी पुस्तक 'हमारी वसीयत और विरासत' में लिखते हैं कि "प्रथम मिलन के दिन समर्पण सम्पन्न हुआ। दो बातें गुरु सत्ता द्वारा विशेष रूप से कही गई, संसारी लोग क्या करते हैं और क्या कहते हैं, उसकी ओर से मुँह मोड़कर निर्धारित लक्ष्य की ओर एकाकी साहस के बलबूते चलते रहना एवं दूसरा यह कि अपने को अधिक पवित्र और प्रखर बनाने की तपश्चर्या में जुट जाना- जौ की रोटी व छाछ पर निर्वाह कर आत्मानुशासन सीखना। इसी से वह सामर्थ्य विकसित होगी जो विशुद्धतः परमार्थ प्रयोजनों में नियोजित होगी। वसंत पर्व का यह दिन गुरु अनुशासन का अवधारण ही हमारे लिए नया जन्म बन गया। सद्गुरु की प्राप्ति हमारे जीवन का अनन्य एवं परम सौभाग्य रहा।"

राष्ट्र के परावलम्बी होने की पीड़ा भी उन्हें उतनी ही सताती थी जितनी कि गुरुसत्ता के आदेशानुसार तपकर सिद्धियों के उपार्जन की ललक उनके मन में थी। उनके इस असमंजस को गुरुसत्ता ने तोड़कर परावाणी से उनका मार्गदर्शन किया कि युगधर्म की महत्ता व समय की पुकार देख सुन कर तुम्हें अन्य आवश्यक कार्यों को छोड़कर अग्निकाण्ड में पानी लेकर दौड़ पड़ने की तरह आवश्यक कार्य भी करने पड़ सकते हैं। इसमें स्वतंत्रता संग्राम सेनानी के नाते संघर्ष करने का भी संकेत था। १९२७ से १९३३ तक का समय उनका एक सक्रिय स्वयं सेवक-स्वतंत्रता सेनानी के रूप में बीता, जिसमें घरवालों के विरोध के बावजूद पैदल लम्बा रास्ता पारकर वे आगरा के उस शिविर में पहुँचे, जहाँ शिक्षण दिया जा रहा था, अनेकानेक मित्रों-सखाओं-मार्गदर्शकों के साथ भूमिगत हो कार्य करते रहे तथा समय आने पर जेल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

भी गये । छह-छह माह की उन्हें कई बार जेल हुई । जेल में भी वे जेल के निरक्षर साथियों को शिक्षण देकर व स्वयं अंग्रेजी सीखकर लौटे । आसन- सोल जेल में वे श्री जवाहर लाल नेहरू की माता श्रीमती स्वरूपरानी नेहरू, श्री रफी अहमद किदवई, महामना मालवीय जी, देवदास गाँधी जैसी हस्तियों के साथ रहे व वहाँ से एक मूलमंत्र सीखा जो मालवीय जी ने दिया था कि जन-जन की साझेदारी बढ़ाने के लिए हर व्यक्ति के अंशदान से-मुट्ठी फण्ड से रचनात्मक प्रवृत्तियाँ चलाना । यही मंत्र आगे चलकर एक घण्टा समयदान बीस पैसा नित्य या एक दिन की आय एक माह में तथा एक मुट्ठी अन्न रोज डालने के माध्यम से धर्मघट की स्थापना का स्वरूप लेकर लाखों-करोड़ों की भागीदारी वाला गायत्री परिवार बनाता चला गया, जिसका आधार था प्रत्येक व्यक्ति की यज्ञीय भावना का उसमें समावेश ।

स्वतंत्रता की लड़ाई के दौरान कुछ उग्र दौर भी आये, जिनमें शहीद भगतसिंह को फाँसी दिये जाने पर फैले जन आक्रोश के समय श्री अरविन्द के किशोर काल की क्रांतिकारी स्थिति की तरह उनने भी वे कार्य किये, जिनसे आक्रान्ता शासकों के प्रति असहयोग जाहिर होता था । नमक आन्दोलन के दौरान वे आततायी शासकों के समक्ष झुके नहीं, वे मारते रहे परन्तु, समाधि स्थिति को प्राप्त राष्ट्र देवता के पुजारी को बेहोश होना स्वीकृत था पर आन्दोलन से पीठ दिखाकर भागना नहीं । बाद में फिरंगी सिपाहियों के जाने पर लोग उठाकर घर लेकर आये । जरारा आन्दोलन के दौरान उनने झण्डा छोड़ा नहीं जबकि, फिरंगी उन्हें पीटते रहे, झण्डा छीनने का प्रयास करते रहे। उनने मुँह से झण्डा पकड़ लिया, गिर पड़े, बेहोश हो गये पर झण्डे का टुकड़ा चिकित्सकों द्वारा दाँतों में भींचे गये टुकड़े के रूप में जब निकाला गया तब सब उनकी सहनशक्ति देखकर आश्चर्य चकित रह गये । उन्हें तब से ही आजादी के मतवाले उन्मत्त श्रीराम मत्त नाम मिला। अभी भी आगरा में उनके साथ रहे या उनसे कुछ सीख लिए अगणित व्यक्ति उन्हें मत्त जी नाम से ही जानते हैं। लगानबन्दी के आँकड़े एकत्र करने के लिए उनने पूरे आगरा जिले का दौरा किया व उनके द्वारा प्रस्तुत वे आँकड़े तत्कालीन संयुक्त प्रान्त के मुख्य मंत्री श्री गोविन्द वल्लभ पंत द्वारा गाँधी जी के समक्ष पेश किये गये । बापू ने अपनी प्रशस्ति के साथ वे प्रामाणिक आँकड़े ब्रिटिश पार्लियामेण्ट भेजे, इसी आधार पर पूरे संयुक्त प्रान्त के लगान माफी के आदेश प्रसारित हुए । कभी जिनने अपनी इस लड़ाई के बदले कुछ न चाहा उन्हें सरकार ने अपना प्रतिनिधि भेजकर पचास वर्ष बाद ताम्रपत्र देकर शांतिकुंज में सम्मानित किया । उसी सम्मान व स्वाभिमान के साथ सारी सुविधाएँ व पेंशन उनने प्रधान मंत्री राहत फण्ड, हरिजन फण्ड के नाम समर्पित कर दीं । वैरागी जीवन का, सच्चे राष्ट्र संत होने का इससे बड़ा प्रमाण क्या हो सकता है ?

१९३५ के बाद उनके जीवन का नया दौर शुरु हुआ, जब गुरुसत्ता की प्रेरणा से वे श्री अरविन्द से मिलने पाण्डिचेरी, गुरुदेव ऋषिवर रवीन्द्रनाथ टैगोर से मिलने शांति निकेतन तथा बापू से मिलने साबरमती आश्रम, अहमदाबाद गये । सांस्कृतिक आध्यात्मिक मोर्चे पर राष्ट्र को कैसे परतंत्रता की बेड़ियों से मुक्त किया जाय, यह निर्देश लेकर अपना अनुष्ठान यथावत् चलाते हुए उनने पत्रकारिता के क्षेत्र में प्रवेश किया जब आगरा में 'सैनिक' समाचार पत्र के कार्यवाहक संपादक के रूप में श्री कृष्णदत्त पालीवाल जी ने उन्हें अपना सहायक बनाया। बाबू गुलाब राय व पालीवाल जी से सीख लेते हुए सतत स्वाध्यायरत रह कर उनने अखण्ड ज्योति नामक पत्रिका का पहला अंक १९३८ की वसंत पंचमी पर प्रकाशित किया । प्रयास पहला था, जानकारियाँ कम थीं अतः पुनः सारी तैयारी के साथ विधिवत् १९४० की जनवरी से उनने परिजनों के नाम पाती के साथ अपने हाथ से बने कागज पर पैर से चलने वाली मशीन से छापकर 'अखण्ड ज्योति' पत्रिका का शुभारंभ किया जो पहले तो दो सौ पचास पत्रिका के रूप में निकली, किन्तु क्रमशः उनके अध्यवसाय घर-घर पहुँचाने, मित्रों तक पहुँचाने वाले उनके हृदय स्पर्शी पत्रों द्वारा बढ़ती-बढ़ती नवयुग के मत्स्यावतार की तरह आज दस लाख से भी अधिक संख्या में विभिन्न भाषाओं में छपती व एक करोड़ से अधिक व्यक्तियों द्वारा पढ़ी जाती है ।

पत्रिका के साथ-साथ 'मैं क्या हूँ' जैसी पुस्तकों का लेखन आरम्भ हुआ, स्थान बदला, आगरा से मथुरा आ गये, दो-तीन घर बदलकर घीयामण्डी में जहाँ आज अखण्ड ज्योति संस्थान है, आ बसे । पुस्तकों का प्रकाशन व कठोर तपश्चर्या, ममत्व विस्तार तथा पत्रों द्वारा जन-जन के अंतः स्थल को छूने की प्रक्रिया चालू रही । साथ देने आ गयीं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

परमवंदनीया माताजी भगवती देवी शर्मा, जिन्हें भविष्य में अत्यधिक महत्वपूर्ण भूमिका अपने आराध्य इष्ट गुरु के लिए निभानी थी । उनके मर्मस्पर्शी पत्रों ने, भाव भरे आतिथ्य, हर किसी को जो दुखी था-पीड़ित था, दिये गये ममत्व भरे परामर्श ने गायत्री परिवार का आधार खड़ा किया, इसमें कोई सन्देह नहीं । यदि विचारक्रांति में साहित्य ने मनोभूमि बनायी तो भावात्मक क्रांति में ऋषियुगल के असीम स्नेह ने ब्राह्मणत्व भरे जीवन ने शेष बची भूमिका निभायी ।

'अखण्ड ज्योति' पत्रिका लोगों के मनों को प्रभावित करती रही, इसमें प्रकाशित 'गायत्री चर्चा' स्तम्भ से लोगों को गायत्री व यज्ञमय जीवन जीने का संदेश मिलता रहा, साथ ही एक आना से लेकर छह आना सीरज की अनेकानेक लोकोपयोगी पुस्तकें छपती चली गयीं। इस बीच हिमालय के बुलावे भी आये, अनुष्ठान भी चलता रहा जो पूरे विधि विधान के साथ १९५३ में गायत्री तपोभूमि की स्थापना, १०८ कुण्डी यज्ञ व उनके द्वारा दी गयी प्रथम दीक्षा के साथ समाप्त हुआ । गायत्री तपोभूमि की स्थापना के निमित्त धन की आवश्यकता पड़ी तो परम वंदनीया माताजी ने जिनने हर कदम पर अपने आराध्य का साथ निभाया, अपने सारे जेवर बेच दिये, पूज्यवर ने जमींदारी के बाण्ड बेच दिये एवं जमीन लेकर अस्थायी स्थापना कर दी गयी । धीरे-धीरे उदारचेताओं के माध्यम से गायत्री तपोभूमि एक साधना पीठ बन गयी। २४०० तीर्थों के जल व रज की स्थापना वहाँ की गयी, २४०० करोड़ गायत्री मंत्र लेखन वहाँ स्थापित हुआ, अखण्ड अग्नि हिमालय के एक अति पवित्र स्थान से लाकर स्थापित की गयी जो अभी तक वहाँ यज्ञशाला में जल रही है । १९४१ से १९७१ तक का समय परमपूज्य गुरुदेव का गायत्री तपोभूमि, अखण्ड ज्योति संस्थान में सक्रिय रहने का समय है । १९५६ में नरमेध यज्ञ, १९५८ में सहस्रकुण्डी यज्ञ करके लाखों गायत्री साधकों को एकत्र कर उनने गायत्री परिवार का बीजारोपण कर दिया । कार्त्तिक पूर्णिमा १९५८ में आयोजित इस कार्यक्रम में दस लाख व्यक्तियों ने भाग लिया, इन्हीं के माध्यम से देश भर में प्रगतिशील गायत्री परिवार की दस हजार से अधिक शाखाएँ स्थापित हो गयीं । संगठन का अधिकाधिक कार्यभार पूज्यवर परमवंदनीया माताजी पर सौंपते चले गये एवम् १९५९ में पत्रिका का संपादन उन्हें देकर पौने दो वर्ष के लिए हिमालय चले गये, जहाँ उन्हें गुरुसत्ता से मार्गदर्शन लेना था, तपोवन नंदनवन में ऋषियों से साक्षात्कार करना था तथा गंगोत्री में रहकर आर्ष ग्रन्थों का भाष्य करना था । तब तक वे गायत्री महाविद्या पर विश्वकोश स्तर की अपनी रचना गायत्री महाविज्ञान के तीन खण्ड लिख चुके थे, जिसके अब तक प्रायः पैंतीस संस्करण छप चुके हैं । हिमालय से लौटते ही उनमें महत्वपूर्ण निधि के रूप में वेद, उपनिषद्, स्मृति, आरण्यक, ब्राह्मण, योगवाशिष्ठ, मंत्र महाविज्ञान, तंत्र महाविज्ञान जैसे ग्रन्थों को प्रकाशित कर देव संस्कृति की मूल थाती को पुनर्जीवन दिया । परमवंदनीया माताजी ने उन्हीं वेदों को पूज्यवर की इच्छानुसार १९९१-९२ में विज्ञान सम्मत आधार देकर पुनर्मुद्रित कराया एवं वे आज घर-घर में स्थापित हैं ।

युग निर्माण योजना व 'युग निर्माण सत्संकल्प' के रूप में मिशन का घोषणा पत्र १९६३ में प्रकाशित हुआ । तपोभूमि एक विश्वविद्यालय का रूप लेती चली गयी तथा अखण्ड ज्योति संस्थान एक तपःपूत की निवास स्थली बन गया, जहाँ रहकर उनने अपनी शेष तप साधना पूरी की थी, जहाँ से गायत्री परिवार का बीज डाला गया था । तपोभूमि में विभिन्न शिविरों का आयोजन किया जाता रहा, पूज्यवर स्वयं छोटे-बड़े जन सम्मेलनों, यज्ञायोजनों के द्वारा विचार क्रांति की पृष्ठभूमि बनाते रहे, पूरे देश में १९७०-७१ में पाँच १००८ कुण्डी यज्ञ आयोजित हुए । स्थायी रूप से विदाई लेते हुए एक विराट सम्मेलन (जून १९७१) में परिजनों में विशेष कार्य भार सौंप, परम वंदनीया माताजी को शांतिकुंज, हरिद्वार में अखण्ड दीप के समक्ष तप हेतु छोड़ कर स्वयं हिमालय चले गये । एक वर्ष बाद वे गुरुसत्ता का संदेश लेकर लौटे एवं अपनी आगामी बीस वर्ष की क्रिया पद्धति बतायी । ऋषि परम्परा का बीजारोपण, प्राण प्रत्यावर्त्तन संजीवनी व कल्प साधना सत्रों का मार्गदर्शन जैसे कार्य उनने शांतिकुंज में सम्पन्न किये ।

सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थापना अपनी हिमालय की इस यात्रा से लौटने के बाद ब्रह्मवर्चस शोध संस्थान की थी, जहाँ विज्ञान और अध्यात्म के समन्वयात्मक प्रतिपादनों पर शोध कर एक नये धर्म वैज्ञानिक धर्म के मूलभूत आधार रखे जाने थे । इस सम्बन्ध में पूज्यवर ने विराट् परिमाण में साहित्य लिखा, अदृश्य जगत के अनुसंधान से लेकर मानव की प्रसुप्त क्षमता के जागरण तक साधना से सिद्धि एवं दर्शन-विज्ञान के तर्क, तथ्य प्रमाण के आधार पर प्रस्तुतीकरण तक । इसके

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

लिए एक विराट ग्रन्थागार बना व एक सुसज्जित प्रयोगशाला। वनौषधि उद्यान भी लगाया गया तथा जड़ी बूटी, यज्ञविज्ञान तथा मंत्र शक्ति पर प्रयोग हेतु साधकों पर परीक्षण प्रचुर परिमाण में किये गये। निष्कर्षों ने प्रमाणित किया कि ध्यान साधना मंत्र चिकित्सा व यज्ञोपैथी एक विज्ञान सम्मत विधा है। गायत्री नगर क्रमशः एक तीर्थ, संजीवनी विद्या के प्रशिक्षण का एकेडमी का रूप लेता चला गया एवं जहाँ ९-९ दिन के साधना प्रधान, एक-एक माह के कार्यकर्त्ता निर्माण हेतु युग शिल्पी सत्र सम्पन्न होने लगे।

कार्यक्षेत्र में विस्तार हुआ। स्थान-स्थान पर शक्तिपीठें विनिर्मित हुईं, जिनके निर्धारित क्रियाकलाप थे- सुसंस्कारिता, आस्तिकता संवर्धन एवं जन जागृति के केन्द्र बनना। ऐसे केन्द्र जो १९८० में बनना आरंभ हुए थे, प्रज्ञा संस्थान - शक्तिपीठ-प्रज्ञामण्डल-स्वाध्याय मंडल के रूप में पूरे देश व विश्व में फैलते चले गये। ७६ देशों में गायत्री परिवार की शाखाएँ फैल गयीं, ४६०० से अधिक भारत में निज के भवन वाले संस्थान विनिर्मित हो गये, वातावरण गायत्रीमय होता चला गया।

परमपूज्य गुरुदेव ने सूक्ष्मीकरण में प्रवेश कर १९८५ में ही पाँच वर्ष के अंदर अपने सारे क्रिया कलापों को समेटने की घोषणा कर दी। इस बीच कठोर तप साधना कर मिलना-जुलना कम कर दिया तथा क्रमशः क्रिया कलाप परमवंदनीया माताजी को सौंप दिये। राष्ट्रीय एकता सम्मेलनों, विराट दीप यज्ञों के रूप में नूतन विधा को जन-जन को सौंप कर राष्ट्र देवता की कुण्डलिनी जगाने हेतु उनने अपने स्थूल शरीर छोड़ने व सूक्ष्म में समाने की, विराट से विराटतम होने की घोषणा कर गायत्री जयन्ती २ जून १९९० को महाप्रयाण किया। सारी शक्ति वे परमवंदनीया माताजी को दे गये व अपने व माताजी के बाद संघशक्ति की प्रतीक लाल मशाल को ही इष्ट आराध्य मानने का आदेश देकर ब्रह्मबीज से विकसित ब्रह्मकमल की सुवास को देव संस्कृति दिग्विजय अभियान के रूप में आरंभ करने का माताजी को निर्देश दे गये।

एक विराट श्रद्धांजलि समारोह व शपथ समारोह जो हरिद्वार में सम्पन्न हुए, में लाखों व्यक्तियों ने अपना समय समाज के नव निर्माण, मनुष्य में देवत्व के उदय व धरती पर स्वर्ग लाने का गुरु सत्ता का नारा साकार करने के निमित्त देने की घोषणा की। परमवंदनीया माताजी द्वारा भारतीय-संस्कृति को विश्वव्यापी बनाने, गायत्री रूपी संजीवनी घर-घर पहुँचाने के लिए पूज्यवर द्वारा आरम्भ किये गये युगसंधि महापुरश्चरण की प्रथम व द्वितीय पूर्णाहुति तक विराट अश्वमेघ महायज्ञों की घोषणा की गयी। वातावरण के परिशोधन, सूक्ष्मजगत के नव निर्माण एवं सांस्कृतिक व वैचारिक क्रांति के निमित्त सौर ऊर्जा के दोहन द्वारा विशिष्ट प्रयोगों के माध्यम से विशिष्ट मंत्राहुतियों द्वारा सम्पन्न किये गये इन अश्वमेधों ने सारी विश्ववसुधा को गायत्री व यज्ञमय, वासंती उल्लास से भर दिया। स्वयं परमवंदनीया माताजी ने अपनी पूर्व घोषणानुसार चार वर्ष तक परिजनों का मार्गदर्शन कर सोलह यज्ञों का संचालन स्थूल शरीर से किया व फिर भाद्रपद पूर्णिमा १९ सितम्बर १९९४ महालय श्राद्धारंभ वाली पुण्य वेला में अपने आराध्य के साथ एकाकार हो गयीं। उनके महाप्रयाण के बाद दोनों ही सत्ताओं के सूक्ष्म में एकाकार होने के बाद मिशन की गतिविधियाँ कई गुना बढ़ती चली गयीं एवं जयपुर के प्रथम अश्वमेध यज्ञ (नवम्बर ९२) से छब्बीसवें अश्वमेध यज्ञ शिकागो (यू. एस. ए. जुलाई ९५) तक प्रज्ञावतार का प्रत्यक्ष रूप सबको दीखने लगा है।

गुरुसत्ता के आदेशानुसार सतयुग के आगमन तक १०८ महायज्ञ देवसंस्कृति को विश्वव्यापी बनाने हेतु संपन्न होने हैं। युग संधि महापुरश्चरण की अंतिम पूर्णाहुति उसी के बाद होगी। प्रथम पूर्णाहुति नवम्बर १९९५ में कार्त्तिक पूर्णिमा के अवसर पर युगपुरुष पूज्यवर की जन्मभूमि आँवलखेड़ा में मनायी जा रही है। उनके द्वारा लिखे गये समग्र साहित्य के वाङ्मय का जो सत्तर खण्डों में फैला है, विमोचन भी यहीं सम्पन्न हो रहा है। विनम्रता एवं ब्राह्मणत्व की कसौटी पर खरे उतरने वाले वरिष्ठ प्रज्ञापुत्र ही उनके उत्तराधिकारी कहे जायेंगे, यह गुरुसत्ता का उद्घोष था एवं इस क्षेत्र में बढ़ चढ़कर आदर्शवादी प्रतिस्पर्धा करने वाले अनेकानेक परिजन अब उनके स्वप्नों को साकार करने आगे आ रहे हैं। 'हम बदलेंगे-युग बदलेंगे' का उद्घोष दिग-दिगन्त तक फैल रहा है एवं इक्कीसवीं सदी-उज्ज्वल भविष्य-सतयुग की वापसी का स्वप्न साकार होता चला जा रहा है, यह स्पष्ट दिखाई दे रहा है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भूमिका

मनुष्य उतना ही जानता है जितना कि उसे प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर होता है । शेष सारा अदृश्य जगत का सूक्ष्म स्तरीय क्रियाकलाप जो इस सृष्टि में हर पल घटित हो रहा है, उसकी उसे ग्रन्थों-महापुरुषों की अनुभूतियों-घटना प्रसंगों के माध्यम से जानकारी अवश्य है किन्तु उन्हें देखा हुआ न होने के कारण वह कहता यह पाया जाता है कि यह सब विज्ञान सम्मत नहीं है, अतः मात्र कोरी कल्पना है । विज्ञान की परिभाषा यदि सही अर्थों में समझ ली जाय तो धर्म, अध्यात्म को विज्ञान की एक उच्चस्तरीय उस विधा के रूप में माना जायगा जो दृश्य परिधि के बाद अनुभूति के स्तर पर आरम्भ होती है । इतना भर जान लेने या हृदयंगम कर लेने पर वे सारे विरोधाभास मिट जायेंगे जो आज विज्ञान और अध्यात्म के बीच बताए जाते हैं । परमपूज्य गुरुदेव अपनी अनूठी निराली शैली में वाङ्मय के इस खण्ड में विज्ञान के विभिन्न पक्षों का विवेचन कर ब्राह्मी चेतना की व्याख्या तक पहुँचते हैं एवं तदुपरान्त इस सारी सृष्टि के खेल को उसी का क्रिया व्यापार प्रमाणित करके दिखा देते हैं । यही वाङ्मय के इस खण्ड का प्रतिपाद्य केन्द्र बिन्दु है ।

तत्त्व दृष्टि से बंधन्मुक्ति कैसे हो, "माया" किसे हम मानें एवं जो प्रत्यक्ष दीख पड़ता है, वह भी सत्य है, यह कैसे जानें ? इन गुत्थियों का समाधान देते हुए परमपूज्य गुरुदेव लिखते हैं कि यदि आज की मूढ़ मान्यताओं तथाकथित अंधविश्वासों, प्रथा-परम्पराओं, कुहासे में घिरे धर्म को विज्ञान का पुट देकर स्वच्छ छवि दी जा सके एवं स्थान-स्थान पर जहाँ तक विज्ञान व धर्म की व्याख्या साथ-साथ की जा सकनी सम्भव है, करते हुए दोनों को सहगामी बनाया जा सके, तो जो भी कुछ आज अज्ञान के रूप में हमें अपने समक्ष विज्ञान के ढकोसले में दिखाई देता है, वह स्पष्ट समझ में आने लगेगा । वैज्ञानिकों के ही तर्कों, तथ्यों, प्रमाणों की साक्षी देकर परमपूज्य गुरुदेव यह सिद्ध कर देते हैं कि विज्ञान पर यदि अध्यात्म रूपी सम्वेदना के समुच्चय तत्त्वज्ञान की जब तक नकेल नहीं कसी जायेगी, वह स्वच्छन्द हो भामासुर की तरह घातक बनता चला जाएगा । एवं यह गलत भी नहीं है । क्योंकि ऐसा होता हुआ हम दैनन्दिन जीवन में प्रति पल देख रहे हैं ।

सौरमण्डल का ही एक अंग हमारी पृथ्वी है । अनेकानेक सौरमण्डल इस सृष्टि में हैं, उसमें हमारी आकाश गंगा के एक ग्रहाधिपति सूर्य के मण्डल में क्या इसी ग्रह में सुविकसित सभ्यता है या कहीं और भी है, इस पर अनेकानेक घटनाक्रम के साथ ब्राह्मीचेतना के समष्टिगत स्वरूप को समझाया गया है एवं भगवान को एक इकॉलाजीकल अनुशासन के रूप में स्थापित किया गया है । यही धर्म का विज्ञान सम्मत प्रतिपादन है एवं इसमें ढेरों प्रमाण ग्रन्थों से एकत्र कर इस खण्ड में दिये गये हैं । सौरमण्डल के विराट रूप की व्याख्या करते हुए पूज्यवर प्रतिपादित करते हैं कि उस विराट में ही ईश्वरीय सत्ता ज्वाला के रूप में विद्यमान है एवं आत्मा एक चिनगारी के रूप में उसका एक घटक है । हर जीवात्मा को ब्रह्म से साक्षात्कार करने की अभीप्सा मन में रखते हुए समर्थ सत्ता को खोजने का परम पुरुषार्थ करना चाहिए । तत्त्वदर्शन से आनन्द-मोक्ष की प्राप्ति से लेकर वे ससीम जीवन, जो असीम पर निर्भर है, की विशिष्ट आधार पर स्थापना करते हैं । यह आधार विज्ञान सम्मत भी है व भलीभाँति बोधगम्य भी । आस्तिक दर्शन का वैज्ञानिक आधार एवं यहाँ जो कुछ भी दिखाई पड़ रहा है वह व्यवस्थित व नियमबद्ध किस प्रकार है, इसे भलीभाँति प्रमाणित करके इस खण्ड में समझाया गया है ।

समग्र वाङ्मय का प्रतिपादन एक ही है कि तथाकथित प्रत्यक्ष पर विश्वास करने वाले विज्ञान की अपूर्णता एवं अस्थिरता को दृष्टिगत रख बुद्धि पर, जो तरह-तरह के खेल, खेलना जानती है, खेलती रहती- प्रपंचों का सरंजाम जुटाती रहती है, धर्म का अंकुश लगना चाहिए । धर्म और विज्ञान को जो एक दूसरे का विरोधी मान लिया गया है, वह न मान कर उन्हें एक दूसरे का पूरक समझते हुए प्रगति के क्रम

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

को आगे बढ़ाया जाना चाहिए । धर्म का अध्यात्म का नियंत्रण भावनात्मक क्षेत्र पर है । उसके आधार पर ही चिन्तन का परिष्कार होता है । इसलिए सर्वाधिक महत्त्व इसी बात पर दिया जाना चाहिए कि विचार पद्धति अध्यात्म के अंकुश तले विनिर्मित हो । यह सही होगी तो सारे निर्धारण सही होते चले जायेंगे ।

सत्य की खोज के लिए यह आवश्यक है कि हम तर्क और तथ्य की कसौटी पर प्रत्येक परम्परा व मान्यता को कसें और उनमें से जो खरी उतरती हों, उन्हीं को अंगीकार करें । विज्ञान के इस पक्ष को ही दर्शन कहा जाता है एवं वस्तुतः दोनों के समन्वय से ही एक पूर्ण विज्ञान की प्रतिष्ठापना होती है । यथार्थवादी चिन्तन, औचित्य का अवलम्बन और मर्यादाओं का परिपालन-यही वैज्ञानिक धर्म का जो भविष्य का-इक्कीसवीं सदी का धर्म है-मूल आधार बनेगा और बनता चला जा रहा है । चेतना को सुसंस्कृत बनाने वाली ब्रह्म विद्या एवं जड़ पक्ष को सँवारने वाला भौतिक विज्ञान जब मिलेंगे तो नजारा ही दूसरा होगा । तब सतयुग सामने खड़ा दिखाई देने लगेगा, यही सार निष्कर्ष पूज्य गुरुदेव ने इस में प्रस्तुत किया है ।

-ब्रह्मवर्चस

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विषय सूची

विषय	पृष्ठ
अध्याय-१	
तत्वदृष्टि से बन्धन मुक्ति	
प्रत्यक्ष लगने पर भी सत्य कहाँ	१.१
मान्यताओं पर निर्भर निष्कर्ष	१.२
कोई रंग नहीं दुनिया में	१.४
समस्त दुःखों का कारण अज्ञान	१.८
अपनी-अपनी दुनिया	१.१०
दुःखों का कारण	१.१२
तत्वज्ञान क्या है	१.१३
सुख का केन्द्र और स्रोत आत्मा	१.१४
ईश्वर की सच्चिदानन्दमय सत्ता	१.२०
सृष्टि जगत का अधिष्ठाता	१.२१
सिद्ध न होने पर भी	१.२२
सत् तत्व का नियामक	१.२४
ईश्वर ज्वाला है और आत्मा चिन्गारी	१.२५
परमसत्ता का क्रीड़ा विनोद	१.२६
विचार से भी परे	१.२८
समर्थ सत्ता को खोजें	१.३०
असीम को खोजें	१.३१
हम विश्वात्मा के घटक	१.३२
तत्वदर्शन से आनन्द और मोक्ष	१.३४
एक ही सत्ता ओत-प्रोत है	१.३४
बन्धन क्या ? मुक्ति कैसे ?	१.३७
अध्याय-२	
अद्भुत सृष्टा के अद्भुत रहस्य	
सूक्ष्म जगत-प्रकृति और पुरुष के रूप में	२.१
दृश्य संसार के भीतर अदृश्य संसार	२.२
अणु से विराट् की ओर, अपूर्णता से पूर्णता की ओर	२.४
हम अणु में ही उलझे न रहें, 'विभु' बनें	२.८
समझ से परे अनसुलझी गुत्थियाँ	२.१०
विचित्र विलक्षण यह सृष्टि	२.१२
विस्तार की धुन में सिमट रही दुनिया	२.१३
तब, जब ज्वालामुखी फूटते हैं	२.१५
काल की इकाई से महाकाल तक	२.१८
विराट की एक झाँकी	२.२१
नित्य निरन्तर परिवर्तनशील, यह सृष्टि	२.२२
परलोक और पृथ्वी : कितने दूर, कितने पास	२.२३
लूट-खसोट के अवरोध में सूक्ष्म शक्तियों की भूमिका	२.२८

विषय	पृष्ठ
वह जो कभी आपने देखा नहीं	२.३०
अद्भुतः अश्रुतोऽहम् : "मैं अद्भुत हूँ-अश्रुत हूँ"	२.३२
प्रकृति के विचित्र नियम, अबूझ पहेलियाँ	२.३३
बिन्दु में सिन्धु समाया	२.३५
आश्चर्यों से भरी ईश्वरीय सत्ता	२.३६
इन आश्चर्यों का क्या कोई कारण है?	२.३८
दृश्य से भी अधिक विलक्षण और सामर्थ्यवान अदृश्य जगत	२.४०
परोक्ष जगत में बहते सशक्त प्रवाह	२.४१
सूक्ष्म वातावरण को प्रभावित करने की प्रक्रिया	२.४३
असन्तुलन और विक्षेप, सर्वथा अहितकर	२.४४
प्रकृति की विलक्षणताएँ और उनका अर्थ	२.४६
हमें आस्तिक बनाते हैं, प्रकृति के ये अपवाद	२.४७
अदृश्य शक्तियों का दृश्य जगत पर प्रभाव	२.४९
प्रकृति की अबूझ पहेली जीवन के विचित्र नियम	२.५०
दुनिया की आश्चर्यजनक इमारतें आश्चर्यजनक दृष्टिकोण	२.५२
अति सामर्थ्यवान है : सूक्ष्मजगत	२.५४
साथ जाते हैं सत्कर्म, जुटाते हैं हम दुष्कर्म	२.५५
अजूबों से भरी यह मायावी दुनिया	२.५६
तथ्यहीन कौतुक किस काम का ?	२.५८
कुछ विचित्र घटनाक्रम	२.५९
धरती पर चेतना अन्तरिक्ष से उतरी	२.६०
घटनाएँ जिनका रहस्य न जाना जा सका !	२.६०
आखिर ये विचित्र आवाजें कहाँ से आती हैं ?	२.६३
विग्रह की सहयोग और सहकार में परिणति	२.६४
प्रकृति का अनुसरण कीड़े-मकोड़ों जैसा आचरण नहीं	२.६५
वरुण देवता की अनुपम, अद्भुत और अन्यतम सत्ता	२.६७
अद्भुत सृष्टा के अद्भुत रहस्य	२.७०
जीवन एक पहेली	२.७२
अन्तर्जगत के सन्देश	२.७४
प्राण सत्ता का उदय और विकास स्रोत	२.७४
क्या यह भी विकास है ?	२.७६
विलक्षण चेतना की झांकियाँ	२.७७
ये रहस्य क्यों नहीं सुलझते	२.७९
अज्ञात सृष्टा का अद्भुत सृजन	२.८१
अद्भुत जगत के अद्भुत रहस्य	२.८२
कोई भी अकेला नहीं	२.८४
प्रत्यक्ष से भी विचित्र अदृश्य संसार	२.८६

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विषय	पृष्ठ
अध्याय-३	
असीम पर निर्भर ससीम जीवन	
सृष्टि संसार की नियामक सत्ता	३.१
आस्तिक दर्शन के वैज्ञानिक आधार	३.५
परमात्मा सृष्टि का संचालक है	३.८
प्रत्यक्षवाद कितना अधूरा	३.१०
सब कुछ व्यवस्थित और नियमबद्ध है	३.१२
समष्टि की हलचलों का व्यष्टि चेतना पर प्रभाव	३.१४
अन्तर्ग्रही परिस्थितियों का मानवी स्वास्थ्य पर प्रभाव	३.१६
पृथ्वी के इर्द-गिर्द चल रहीं अवांछनीय हलचलें	३.१६
क्या इन दिनों हम अनिष्ट काल में से गुजर रहे हैं ?	३.१७
जीवन अमर है वह मौत से हारा नहीं	३.२०
सूर्य-ग्रहणों की असाधारण शृंखला और उनकी अवांछनीय प्रतिक्रिया	३.२२
सूर्य स्फोटों का अपनी पृथ्वी पर प्रभाव !	३.२४
खग्रास ग्रहण से व्यापक उथल-पुथल सम्भावित	३.२६
आर्ष ज्योतिर्विज्ञान का पुनर्जीवन अनिवार्य	३.२६
ग्रहों के प्रभाव का लाभ उठायें	३.३०
परिवर्तन और आदान-प्रदान सृष्टि के सुदृढ़ नियम	३.३२
प्रकृति और मानव परस्पर अन्योन्याश्रित	३.३४
हम अपनी क्षुद्रता और मर्यादा भी समझें	३.३५
वस्तुओं में नहीं बुद्धि में दोष ढूढ़ें	३.३७
शीत शक्ति का उपयोग और दीर्घ जीवन	३.३७
गर्मा-गर्मी ही नहीं शान्ति और शीतलता भी आवश्यक है	३.३६
जीवन के रहस्य, जीवन की विचित्रताएँ	३.४१
शीतल आवरण से ही समस्वरता सम्भव है	३.४२
साधक को न अकेलापन खलता है न असफलता अखरती है	३.४२
पशु-पक्षियों पर मुकदमे	३.४३
सुयोग आकस्मिक है, सौभाग्य सद्भावजन्य	३.४४
जीवन जड़ तत्वों का उत्पादन नहीं है	३.४५
क्या हम आगे बढ़ रहे हैं ?	३.४७
बिनु पग चलइ-सुनइ बिनु काना	३.४६
बड़प्पन ही नहीं, तेजस्विता भी	३.५०
कौतुकमय संसार के कलाकार की खोज	३.५१
जो बुद्धि से परे है वह केवल 'अन्ध-विश्वास' ही नहीं	३.५३
परलोक को भूल कर कहीं आपको भी पछताना न पड़े ?	३.५६
ईश्वर की दिव्य-सत्ता जो श्रद्धा करने योग्य है	३.५८
दैवी-शक्ति द्वारा गुप्त रहस्यों का उद्घाटन	३.६१
मिश्र के रेगिस्तान में पानी	३.६२
श्री लायड जार्ज का कृषि-फार्म	३.६२
डिवाइनिंग द्वारा रोग-निदान	३.६२
युद्ध में दैवज्ञों का महत्त्व	३.६२
निश्छल आत्मा स्वयमेव देव-शक्ति	३.६३
एक नियम व्यवस्था में बँधे हम सब	३.६३
गड़े खजाने ढूँढ़ने पर भी मिलते क्यों नहीं ?	३.६६
छिपे खजाने क्या हमारे हाथ लग सकते हैं ?	३.६८
अभिशप्त स्वर्ण भण्डार, जो अभी किसी के हाथ लगे नहीं	३.७०
पदार्थों से जुड़े हुए अभिशाप	३.७३
अभिशप्त राजमहल	३.७५
शापितों का प्यार जो शताब्दियों से अक्षुण्य है	३.७६
उद्धत अहंकार की परिणति-विनाश	३.७६
आस्तिक बनें : ताकि सुखी रहें	३.७७
अध्याय-४	
ब्राह्मी चेतना का सुविस्तृत कार्य व्यापार	
ब्रह्माण्डव्यापी तथ्य जिनका जीवन में भी स्थान है	४.१
कितना विशाल विश्व, कितना तुच्छ अपना अस्तित्व	४.३
अणोरणीयान् महतो महीयान्	४.५
ब्राह्मी चेतना का विस्तार कार्य व्यापार	४.७
वेद और विज्ञान : ब्रह्माण्ड-विकास का तुलनात्मक अनुसन्धान	४.१०
विराट् को पढ़ें ही नहीं, कुछ अर्थ भी निकालें	४.१२
क्षुद्रता छोड़ें : महानता की ओर बढ़ें	४.१४
ब्रह्माण्ड अभी बच्चा है, बूढ़ा नहीं हुआ !	४.१६
चला चली की दुनिया में अविचल की प्राप्ति करें	४.१८
सहकारिता और आदान-प्रदान का ब्रह्माण्डव्यापी तथ्य	४.१६
सौर परिवार जैसी रीति-नीति, मानव परिवार भी अपनायें	४.२१
प्रकृति ही नहीं, पुरुष भी	४.२३
सृष्टि के कण-कण में जगमगाती दिव्य ज्योति	४.२५
उपकारिणी धरती माता	४.२६
अपनी पृथ्वी तक के बारे में हम कितना कुछ जानते हैं	४.२८
मोटी दृष्टि से तो धरतीमाता भी धूल मिट्टी मात्र है	४.३१
एक सुसम्पन्न सागर हमारे भीतर भी भरा पड़ा है	४.३२
मनुष्य जीवन : समुद्र से भी अधिक गहरा और विस्तृत	४.३५
हम समुद्र जैसे गम्भीर और महान् बनें	४.३८
समुद्री लहरों की तरह हमारा जीवन उछले, गरजे और आगे बढ़े	४.४०
काश ! हमारा व्यक्तित्व भी समुद्र जैसा गरिमायुक्त होता	४.४२
छोटा द्वीप बड़े तथ्य	४.४४

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विषय	पृष्ठ
भूखण्ड भी खिसक और बिखर रहे हैं	४.४६
ऊँचे उठें और असामान्य के सम्पर्क में आयें	४.४६
ऐसा बड़प्पन किस काम का ?	४.४६
अन्तरिक्ष एक सूक्ष्म शक्ति-प्रवाह	४.५०
प्राणियों के पोषण और रक्षण में रत मरुत देवता	४.५२
शक्ति शृंखला की एक और कड़ी लेजर किरणें	४.५४
धरती और सूरज जरा-जीर्ण हो चुके अब मरने ही वाले हैं	४.५५
जड़ और चेतन सूर्य की समानान्तर गतिविधियाँ	४.५५
सतत गतिशील उस विराट् की एक झाँकी	४.५७
हमारे जीवन का सूर्य अस्त तो होगा ही	४.६०
महानता के साथ अवरोध भी जुड़े हुए हैं	४.६०
भूतकालीन प्रतिपादनों के लिए दुराग्रह न करें	४.६३
चन्द्रमान्यताएँ कितनी वास्तविक कितनी अवास्तविक	४.६७
आइये ! अपनी विस्मृत धरोहर का स्मरण करें	४.६६
चन्द्रमा देवता, कुल ६६ मील दूर	४.७१
सौर-मण्डल : कितना विस्तृत कितना सम्पन्न	४.७३
हमारी बुद्धि सर्व ज्ञाता नहीं है	४.७४
ऊँची उड़ानें पर लक्ष्य विहीन	४.७६
क्षुद्रता अपनाकर, हम पाते कुछ नहीं खोते ही हैं	४.७६
प्रदर्शन और उद्वेग से बचना ही बुद्धिमत्ता है	४.८१
कान व आँख खुले रखें	४.८२
हमारा ज्ञान बढ़ा है और साथ में संसार भी	४.८३
अध्याय-५	
विनोदप्रिय भगवान का मनोरंजन दरबार	
इस संसार में सब कुछ चेतना ही है	५.१
यह सृष्टि किस कुशल कारीगर द्वारा बनाई गई है	५.२
क्या पृथ्वी भी प्लूटो बनने जा रही है ?	५.४
समय भविष्य की ओर ही नहीं चलता, भूतकाल की ओर भी लौटता है	५.५
दिन में दीखने वाले तारे	५.१०
सीमित साधनों से असीम की खोज का दुस्साहस	५.१०
अणु में विभु, लघु में महान् !	५.१२
प्रकृति के रहस्य अपने अन्तराल में खोजें	५.१३
१५ करोड़ मील लम्बी पूँछ वाले ब्रह्मकीट धूमकेतु	५.१६
हेली धूमकेतु से जुड़ी हुई आशंकाएँ	५.१८
इस उच्छृंखलता के कान कल-परसों पकड़े ही जाने वाले हैं	५.२०
अन्तरिक्ष की अनन्त गहराइयों में झाँकता मानवीय प्रतिबिम्ब	५.२२
विराट् जगत में मनुष्य की हस्ती ही क्या है ?	५.२४
लोकोत्तर जीवन श्रद्धाभूत ही नहीं विज्ञान-भूत भी	५.२६
सहकारिता और आदान-प्रदान एक ब्रह्माण्डव्यापी सत्य	५.२८

विषय	पृष्ठ
हमारा जीवन असीम पर निर्भर है	५.३०
अविज्ञात से डरकर पीछे न हटें वैज्ञानिक	५.३२
पदार्थ और प्राणियों की सामर्थ्य का उद्गम	५.३४
ब्रह्माण्ड में पदार्थ की तरह चेतन भी भरा पड़ा है	५.३७
लो ! अब पदार्थ ही मर गया	५.३६
पदार्थ और प्रति-पदार्थ, गुरुत्वाकर्षण और प्रति-गुरुत्वाकर्षण	५.४१
एक नई दुनिया अब हाथ लगने ही वाली है	५.४३
प्रतिविश्व-प्रतिपदार्थ : शक्ति का अजस्र स्रोत	५.४६
विश्व शक्ति का उद्गम प्रति-पदार्थ और प्रति-व्यक्तित्व	५.४८
सब कुछ नहीं : उपयोगी और सीमित ही	५.५०
पूर्व मान्यताओं के प्रति दुराग्रह उचित नहीं	५.५३
विश्व-शान्ति का वैज्ञानिक आधार सहयोग और सामूहिकता	५.५५
प्रगति का एकमेव आधार प्रतिभा, सहकार	५.५८
प्रत्यक्ष ही नहीं, परोक्ष भी समझें	५.६०
देवत्व दुर्बल न पड़े, असुरता पर हावी रहें	५.६२
परिस्थितियाँ भौतिक, कारण आत्मिक	५.६३
अपनी सामर्थ्य पहचानें : सुदृढ़ बनें	५.६४
पृथकता के अन्तराल में एकत्व का सत्य	५.६५
आत्मा और परमात्मा का योग परम पुरुषार्थ	५.६६
अध्याय-६	
भविष्य का धर्म : वैज्ञानिक धर्म	
विज्ञान से भी अधिक उपयोगी अध्यात्म	६.१
आत्मसत्ता का अस्तित्व और वैभव	६.४
वैज्ञानिकों की दृष्टि में आत्मसत्ता	६.६
आखिर आत्मा है क्या : नर या नारी	६.८
चाहें तो नर बन जायें चाहें तो नारी छूट इतनी भर है	६.१२
एक ही शरीर में विद्यमान नर और नारी	६.१४
नर और नारी के बीच की खाई न्यायोचित नहीं	६.१७
नर और मादा का विभेद, अकाट्य नहीं परिवर्तनशील है	६.२०
यौन परिवर्तन, कृत्रिम गर्भाधान	६.२२
मनुष्य अपने आप में पूर्ण है	६.२३
पार्थिनोजेनेसिस या अमैथुनी सृष्टि भी सम्भव है	६.२६
ईश्वरीय इच्छा का प्रतिफल	६.२६
नर और नारी में श्रेष्ठ कौन ?	६.२६
गर्भस्थ शिशु का इच्छानुवर्ती निर्माण	६.३१
विज्ञान के इस दिशा में प्रयास	६.३३
क्या मनुष्य पूर्वजों की प्रतिकृति है ?	६.३५
ब्रह्मचर्य से शक्ति और संयम द्वारा प्रसन्नता	६.३८
प्रवृत्तियाँ और भी हैं	६.४०

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विषय	पृष्ठ	विषय	
लाभ नहीं हानि ही हानि	६.४१	अदृश्य जगत की सम्पर्क साधना	६.५६
फ्रायड के सैक्स का प्रतिवाद	६.४३	विज्ञान और धर्म मिलकर चलें तो ही प्रगति सम्भव	६.५८
संयम अर्थात् शक्ति अर्थात् समर्थता	६.४४	समन्वय-सहकारिता की रीति-नीति	६.५९
पेड़ पौधे भी संयमी	६.४६	धर्म और विज्ञान के समन्वय में ही कल्याण है	६.६१
संयम बनाम समर्थता	६.४७	धर्म और विज्ञान को मिलकर चलना होगा	६.६२
जीवन की सफलता	६.४८	धर्म की उपेक्षा से पछतावा ही हाथ लगेगा	६.६४
सुख प्राप्ति का आधार	६.४८	विज्ञान और धर्म में समन्वय अनिवार्य	६.६६
मानवी काया, आत्मविज्ञान की बहुमूल्य प्रयोगशाला	६.५०	धर्म और विज्ञान जुड़वाँ भाई	६.६७
आत्मसत्ता में ईश्वर का अवतरण	६.५२	धर्म और दर्शन की उत्क्रान्ति भी आवश्यक	६.६९
अनुसन्धान आत्म चेतना का भी होना चाहिए	६.५४	अब दर्शन की बारी है उसे कुछ करने दिया जाय	६.७१

⌘⌘⌘

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

तत्वदृष्टि से बन्धन मुक्ति

प्रत्यक्ष लगने पर भी सत्य कहाँ

जो कुछ हम देखते, जानते या अनुभव करते हैं—क्या वह सत्य है ? इस प्रश्न का मोटा उत्तर हाँ में ही दिया जा सकता है, क्योंकि जो कुछ सामने है, उसके असत्य होने का कोई कारण नहीं । चूँकि हमें अपने पर, अपनी इन्द्रियों और अनुभूतियों पर विश्वास होता है इसलिए वस्तु, व्यक्ति या परिस्थिति के बारे में जो समझते हैं, उसे भी सत्य ही मानते हैं । इतने पर भी जब हम गहराई में उतरते हैं तो प्रतीत होता है कि इन्द्रियों के आधार पर जो निष्कर्ष निकाले जाते हैं वे बहुत अधूरे, अपूर्ण और लगभग असत्य ही होते हैं ।

शास्त्रों और मनीषियों ने इसीलिए प्रत्यक्ष इन्द्रियों द्वारा अनुभव किए हुए को ही सत्य न मानने तथा तत्वदृष्टि विकसित करने के लिए कहा है । यदि सीधे-सीधे जो देखा जाता व अनुभव किया जाता है उसे ही सत्य मान लिया जाय तो कई बार बड़ी दुःस्थिति बन जाती है । इस सम्बन्ध में मृगमरीचिका का उदाहरण बहुत पुराना है । रेगिस्तानी इलाके या ऊसर क्षेत्र में जमीन का नमक उभर कर ऊपर आ जाता है । रात की चाँदनी में वह पानी से भरे तालाब जैसा लगता है । प्यासा मृग अपनी तृष्णा बुझाने के लिए वहाँ पहुँचता है और अपनी आँखों के भ्रम पर पछताता हुआ निराश वापस लौटता है । इन्द्र धनुष दीखता तो है पर उसे पकड़ने के लिए लाख प्रयत्न करने पर भी कुछ हाथ लगने वाला नहीं है । जल बिन्दुओं पर सूर्य की किरणों की चमक ही आँखों पर एक विशेष प्रकार का प्रभाव डालती है और हमें इन्द्र धनुष दिखाई पड़ता है उसका भौतिक अस्तित्व कहीं नहीं होता ।

सिनेमा को ही लीजिए । पर्दे पर तस्वीर चलती-फिरती, बोलती, रोती-हँसती दीखती हैं । असम्भव जैसे जादुई दृश्य सामने आते हैं । क्या वह सारा दृश्यमान सत्य है ! प्रति सेकण्ड सोलह की गति से घूमने वाली अलग-अलग तस्वीरें हमारी आँखों की पकड़ परिधि से आगे निकल जाती हैं फलतः दृष्टि भ्रम उत्पन्न हो जाता है । स्थिर तस्वीरें चलती हुई मालूम पड़ती हैं । लाउडस्पीकर से शब्द अलग जगह निकलते हैं और तस्वीरें अलग जगह चलती हैं पर आँख कान इसी धोखे में रहते हैं कि तस्वीरों के मुँह से ही यह उच्चारण या गायन निकल रहे हैं ।

प्रातःकालीन ऊषा और सायंकालीन सूर्यास्त के समय आकाश में जो रंग-बिरंगा वातावरण छाया रहता है क्या वह यथार्थ है ? वस्तुतः वहाँ कोई रंग नहीं होता यह प्रकाश किरणों के उतार-चढ़ाव का दृष्टि संस्थान के साथ आँख मिचौनी ही है । आसमान नीला दीखता है पर वस्तुतः उसका कोई रंग नहीं है । पाल का रंग हो भी कैसे सकता है ? आसमान को नीला बता कर हमारी आँखें धोखा खाती हैं और मस्तिष्क को भ्रमित करती हैं ।

आँखों का काम मुख्यतया प्रकाश के आधार पर वस्तुओं का स्वरूप समझना है, पर देखा जाता है कि उनकी आधी से ज्यादा जानकारी अवास्तविक होती है । कुछ उदाहरण देखिए । कारखानों की चिमनियों से धुआँ निकलता रहता है । गौर करके उसका रंग देखिए वह अन्तर कई तरह का दिखाई देता रहता है । जब चिमनी की जड़ में पेड़, मकान आदि अप्रकाशित वस्तुएँ हों तो धुआँ काला दिखाई देगा पर यदि नीचे सूर्य का प्रकाश चमक रहा होगा तो वही धुआँ भूरे रंग का दीखने लगेगा । लकड़ी, कोयला अथवा तेल जलने पर प्रकाश के प्रभाव से यह धुआँ पीलापन लिए हुए दीखता है । वस्तुतः धुएँ का कोई रंग नहीं होता । वह कार्बन की सूक्ष्म कणिकाओं अथवा तारकोल सदृश्य द्रव पदार्थों की बूँदों से बना होता है । इनसे टकरा कर प्रकाश लौट जाता है और वे अँधेरी काले रंग की प्रतीत होती हैं ।

रेल के इंजन में वायलर की निकास नली से निकलने वाली भाप निकलते समय तो नीली होती है पर थोड़ा ऊपर उठते ही संघतित हो जाने पर भाप के कणों का आकार बढ़ जाता है और वह श्वेत दिखाई देने लगती है ।

जिन फैक्टरियों में घटिया कोयला जलता है उनका धुआँ गहरा काला होता है और यदि उसमें से आर- पार सूर्य को देखा जाय तो सूर्य गहरे लाल रंग का दिखाई देगा ।

पानी के भीतर अगणित जीव-जन्तु विद्यमान रहते हैं पर खुली आँखों से उन्हें देख सकना सम्भव नहीं, माइक्रोस्कोप की सहायता से ही उन्हें देखा जा सकता है । आकाश में जितने तारे खुली आँखों से दिखाई पड़ते हैं उतने ही नहीं हैं । देखने की क्षमता से आगे भी अगणित तारे हैं जो विद्यमान रहते हुए भी आँखों के लिए अदृश्य ही हैं बढ़िया दूरबीनों से उन्हें देखा जाय तो दृश्य तारागणों की अपेक्षा लगभग दस गुने अदृश्य तारे दृष्टिगोचर होंगे ।

परमाणु अणु की सत्ता को दूर सूक्ष्मदर्शन यन्त्रों से भी उसके यथार्थ रूप में देख सकना अभी भी सम्भव नहीं है । उसके अधिक स्थूल कलेवर की गणित के अध्यात्म पर विवेचना करके परमाणु और उसके अंग-प्रत्यंगों का स्वरूप निर्धारण किया है । अणु संरचना के स्पष्टीकरण में जितनी महायता उपकरणों ने की है उससे कहीं अधिक निष्कर्ष अनुमान पर निर्धारित गणित-परक आधार पर निकाला जाना सम्भव हुआ है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

यथार्थता की तह तक पहुँचने के लिए हमें परख के आधार को अधिक विस्तृत करना पड़ेगा । इन्द्रियजन्य ज्ञान को ही सब कुछ मान बैठना भूल है, जो भौतिक प्रयोगशाला से प्रत्यक्ष हो सके वह सही है ऐसी बात भी तो नहीं है । ऊपर प्रकाश की आँख मिचौनी से रंगों की गलत अनुभूति होने की चर्चा की गई है । सत्य तक पहुँचने के लिए इन्हीं भोंड़े उपकरणों को परिपूर्ण मानकर चलेंगे तो अन्धकार में ही भटकते रहना पड़ेगा । किंवदन्तियों और दन्तकथाओं के प्रतिपादनों से मुक्ति पाने के प्रयास में यदि इन्द्रिय ज्ञान की भोंडी भूल-भुलैयों में भटक पड़े तो केवल पिंजड़ा बदला भर हुआ । स्थिति ज्यों की त्यों बनी रही ।

कुछ मोटी बातों को छोड़कर शेष सभी विषयों में हम जो कुछ देखते, जानते और अनुभव करते हैं उसके सम्बन्ध में यही मानते हैं कि वही सत्य है, पर वस्तुतः ऐसा है नहीं । अपने पर, अपनी इन्द्रियों और अनुभूतियों पर विश्वास होने के कारण वस्तु, व्यक्ति या परिस्थिति के बारे में जो समझते हैं, उसे ही सत्य समझते हैं पर गहराई में उतरते हैं तो प्रतीत होता है कि हमारी मान्यताएँ और अनुभूतियाँ हमें नितान्त सत्य का बोध कराने में असमर्थ हैं । वे केवल पूर्ण मान्यताओं की अपेक्षा से ही कुछ अनुभूतियाँ करती हैं । यदि पूर्व मान्यताएँ बदल जायें तो फिर अपने सारे निष्कर्ष या अनुभव भी बदलने पड़ेंगे ।

मान्यताओं पर निर्भर निष्कर्ष

हमारा बुद्धि संस्थान केवल अपेक्षाकृत स्तर की जानकारियाँ दे सकने में ही समर्थ है । इतने से ही यदि सन्तोष होता हो तो यह कहा जा सकता है कि हम जो जानते या मानते हैं वह सत्य है, किन्तु अपनी मान्यताओं को ही यदि नितान्त सत्य की कसौटी पर कसने लगें तो प्रतीत होगा कि यह बुद्धि संस्थान ही बेतरह भ्रम ग्रसित हो रहा है फिर उसके सहारे नितान्त सत्य को कैसे प्राप्त किया जाय ? यह एक ऐसा विकट प्रश्न है जो सुलझाये नहीं सुलझता ।

वजन जिसके आधार पर वस्तुओं का विनिमय चल रहा है एक मान्यता प्राप्त तथ्य है । वजन के बिना व्यापार नहीं चल सकता । पर वजन सम्बन्धी हमारी मान्यताएँ क्या सर्वथा सत्य हैं ? इस पर विचार करते हैं तो पैरों तले से जमीन खिसकने लगती है । वजन का अपना कोई अस्तित्व नहीं । पृथ्वी की आकर्षण शक्ति का जितना प्रभाव जिस वस्तु पर पड़ रहा है उसे रोकने के लिए जितनी शक्ति लगानी पड़ेगी वही उसका वजन होगा । तराजू बाँटों के आधार पर हमें इसी बात का पता चलता है और उसी जानकारी को वजन मानते हैं, पर यह वजन तो घटता-बढ़ता रहता है । पृथ्वी पर जो वस्तु १ मन (१ मन = ३७.३२४२ किलोग्राम) भारी है वह ३$\frac{१}{२}$ मील (१ मील = १.६१ किलोमीटर) ऊपर आकाश में उठ जाने पर आधी अर्थात् २० सेर (१ सेर = ६३३ ग्राम) रह जायेगी । इससे ऊपर उठने पर वह और हल्की होती चली जायेगी । पृथ्वी और चन्द्रमा के बीच एक जगह ऐसी आती है जहाँ पहुँचने पर उस वस्तु का वजन कुछ भी नहीं रहेगा । वहाँ अगर एक विशाल पर्वत भी रख दिया जाय तो वह बिना वजन का होने के कारण जहाँ का तहाँ लटका रहेगा । अन्य ग्रहों की गुरुता और आकर्षण शक्ति भिन्न है वहाँ पहुँचने पर अपनी पृथ्वी का भार माप सर्वथा अमान्य ठहराया जाय । ऐसी दशा में यही कहा जा सकता है कि वजन सापेक्ष है । किसी पूर्वमान्यता, स्थिति या तुलना के आधार पर ही उसका निर्धारण हो सकता है ।

लोक व्यवहार की दूसरी इकाई है 'गति' । वजन की तरह ही उसका भी महत्त्व है । गति ज्ञान के आधार पर ही एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचने के विभिन्न साधनों का मूल्यांकन होता है, पर देखना यह है कि 'गति' के सम्बन्ध में हमारे निर्धारण नितान्त सत्य की कसौटी पर खरे उतरते हैं या नहीं ।

हम अपनी कुर्सी पर बैठे लिख रहे हैं और जानते हैं कि स्थिर हैं पर वस्तुतः एक हजार प्रति घण्टा की चाल से हम एक दिशा में उड़ते चले जा रहे हैं । पृथ्वी की यही चाल है । पृथ्वी पर बैठे होने के कारण हम उसी चाल से उड़ने के लिए विवश हैं । यद्यपि यह तथ्य हमारी इन्द्रियजन्य जानकारी की पकड़ में नहीं आता और निरन्तर स्थिरता प्रतीत होती है । पैरों से या सवारी से जितना चला जाता है, उसी को गति मानते हैं ।

पृथ्वी अपनी धुरी पर घूमती है, इसलिए इस क्षण जहाँ हैं वहाँ वापस २४ घण्टे बाद ही आ सकेंगे । पर यह सोचना भी व्यर्थ है क्योंकि पृथ्वी ६६६००० मील प्रति घण्टा की चाल से सूर्य की परिक्रमा के लिए दौड़ी जा रही है । वह आकाश में जिस जगह है वहाँ लौटकर एक वर्ष बाद ही आ सकती है, किन्तु यह मानना भी मिथ्या है क्योंकि सूर्य महासूर्य की परिक्रमा कर रहा है और पृथ्वी समेत अपने सौर परिवार के समस्त ग्रह उपग्रहों को लेकर और भी तीव्र गति से दौड़ता चला जा रहा है और वह महासूर्य अन्य किसी अति सूर्य की परिक्रमा कर रहा है । यह सिलसिला न जाने कितनी असंख्य कड़ियों में जुड़ा होगा । अस्तु एक शब्द में यों कह सकते हैं कि जिस जगह आज हम हैं कम से कम इस जन्म में तो वहाँ फिर कभी लौटकर आ ही नहीं सकते । अपना आकाश छूटा तो सदा सर्वदा के लिए छूटेगा । इतने पर भी समझते यही रहते हैं कि जहाँ थे उसी क्षेत्र, देश या आकाश के नीचे वहीं जन्म भर बने रहेंगे ।

स्थान की भाँति गति की मात्रा भी भ्रामक है । दो रेलगाड़ियाँ समान पटरियों पर साथ-साथ दौड़ रही हों तो वे साथ-साथ हिलती-डुलती भर दिखाई पड़ेंगी दो मोटरें आमने-सामने से आ रही हों और दोनों ४०-४० मील (१ मील = १.६१ किलोमीटर) प्रति घण्टे की चाल से चल रही

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हों तो जब वे बराबर से गुजरेंगी तो ८० मील की चाल का आभास होगा । जब कभी आमने-सामने से आती हुई रेलगाड़ियाँ बराबर से गुजरती हैं तो दूना वेग मालूम पड़ता है, यद्यपि वे दोनों ही अपनी-अपनी साधारण चाल से रही होती हैं । अपनी पृथ्वी जिस दिशा में जिस चाल से चल रही है वही गति और दिशा अन्य ग्रह नक्षत्रों की रही होती तो आकाश पूर्णतया स्थिर दीखता । सूर्य तारे कभी न उगते, न चलते, न डूबते । जो जहाँ है वहीं सदा बना रहता । तब पूर्ण स्थिरता की अनुभूति होते हुए भी सब की गतिशीलता यथावत् बनी रहती ।

गति सापेक्ष है । अन्तर कितनी ही तरह निकाला जा सकता है । सौ में से नब्बे निकालने पर दस बचते हैं । तीस में से बीस निकालने पर भी—पचास में से चालीस निकालने पर भी दस ही बचेंगे । अन्तर एक ही निकले इसके लिए अनेकों अंकों का अनेक प्रकार से उपयोग हो सकता है । इतनी भिन्नता रहने पर भी परिणाम में अन्तर न पड़ेगा । एक हजार का जोड़ निकालना हो तो कितने ही अंकों का कितनी ही प्रकार से वही जोड़ बन सकता है । गति मापने के बारे में भी यही बात है । भूतकाल के खगोल वेत्ता सूर्य को स्थिर मान कर यह गणित करते हैं । चन्द्र-ग्रहण, सूर्य-ग्रहण, सौर-मण्डल के ग्रह-उपग्रहों का उदय-अस्त दिन मान, रात्रि मान आदि इसी आधार पर निकाला जाता रहा है । फिर भी वह बिल्कुल सही बैठता रहा है । यद्यपि सूर्य को स्थिर मानकर चलने की मान्यता सर्वथा मिथ्या है । मिथ्या आधार भी जब सत्य परिणाम प्रस्तुत करते हैं तो फिर सत्य-असत्य का भेद किस प्रकार किया जाय, यह सोचने पर बुद्धि थककर बैठ जाती है ।

दिशा का निर्धारण भी लोक व्यवहार में आवश्यक है । इसके बिना भूगोल नक्शा, यातायात की कोई व्यवस्था ही न बनेगी । रेखागणित में आड़ी, सीधी, रेखाओं को ही आधार माना गया है । दिशा ज्ञान के बिना वायुयान और जलयानों के लिए निर्दिष्ट लक्ष्य तक पहुँच सकना ही सम्भव न होगा । पूर्व, पश्चिम आदि आठ और दो ऊपर नीचे की दसों दिशाएँ लोक व्यवहार की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण आधार हैं, पर 'नितान्त सत्य' का आश्रय लेने पर यह दिशा मान्यता भी लड़खड़ा कर भूमिसात हो जाती है ।

एक लम्बी नाली लगातार देखते चले जायें तो प्रतीत होगा कि वह सीधी समतल जा रही है, पर वस्तुतः वह गोलाई में ही खुद रही है और वह क्रम चलता रहने पर खुदाई उसी स्थान पर आ पहुँचेगी जहाँ से वह आरम्भ हुई थी । रबड़ की गेंद पर बिल्कुल सीधी रेखा खींचने पर भी वस्तुतः वह गोलाई में ही खिंच रही है, सीधी रेखा खींचने का मतलब उसके दोनों सिरों का अन्तर सदा बना रहना ही होना चाहिए, पर जब वे अन्ततः एक में आ मिलें तो फिर सीधी लकीर कहाँ हुई ? कागज पर, जमीन पर या कहीं भी छोटी बड़ी, सीधी लकीर खींची जाय वह कभी भी सीधी नहीं हो सकतीं । स्वल्प गोलाई अपने नाप साधनों से भले ही पकड़ में न आये, पर वस्तुतः वह गोल ही बन रही होगी । जिस भूमि को हम समतल समझते हैं वस्तुतः वह भी गोल है । समुद्र समतल दीखता है, पर उस पर चलने वाले जहाजों का मस्तूल ही पहले दीखता है इससे प्रतीत होता है कि पानी समतल प्रतीत होते हुए भी पृथ्वी के अनुपात में गोलाई लिए हुए है । जमीन पर खड़े होकर जमीन और आसमान मिलने वाला क्षितिज प्रायः ३ मील (१ मील = १.६१ किलोमीटर) पर दिखाई पड़ता है पर यदि दो सौ फुट ऊँचाई पर चढ़ कर देखें तो वह बीस मील दूरी पर मिलता दिखाई देगा । यह बातें पृथ्वी की गोलाई सिद्ध करती हैं । फिर भी मोटी बुद्धि से उसे गोल देख पाने का कोई प्रत्यक्ष साधन अपने पास नहीं है । वह समतल या ऊँची-नीची दीखती है गोल नहीं । ऐसी दशा में हमारा दिशाज्ञान भी अविश्वस्त ही ठहरता है ।

चन्द्रमा हमसे ऊँचा है पर यदि चन्द्रतल पर जा खड़े हों तो प्रतीत होगा कि पृथ्वी ऊपर आकाश में उदय होती है । सौर-मण्डल से बाहर निकल कर कहीं आकाश में हम जा खड़े हों तो प्रतीत होगा कि पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण ऊपर नीचे जैसी कोई दिशा में नहीं है । दिशाज्ञान सर्वथा अपेक्षाकृत है । दिल्ली, लखनऊ से पश्चिम में बम्बई से पूर्व में, मद्रास से उत्तर में और हरिद्वार से दक्षिण में है । दिल्ली किस दिशा में है यह कहना किसी की तुलना अपेक्षा से ही सम्भव हो सकता है वस्तुतः वह दिशा विहीन है ।

समय की इकाई लोक व्यवहार में एक तथ्य है । घण्टा मिनट के सहारे ही दफ्तरों का खुलना, बन्द होना, रेलगाड़ियों का चलना, रुकना सम्भव होता है । अपनी सारी दिनचर्या समय के आधार पर ही बनती है । पर समय की मान्यता भी असंदिग्ध नहीं है । सूर्योदय या सूर्यास्त का समय वही नहीं होता जो हम देखते या जानते हैं । जब हमें सूर्य उदय होते दीखता है उससे प्रायः ८$\frac{१}{२}$ मिनट पहले ही उग चुका होता है । उसकी किरणें पृथ्वी तक आने में इतना समय लग जाता है । अस्त होता जब दीखता है, उससे ८$\frac{१}{२}$ मिनट पूर्व ही वह डूब चुका होता है । आकाश में कितने ही तारे ऐसे हैं जो हजारों वर्ष पूर्व अस्त हो चुके पर वे अभी तक हमें चमकते दीखते हैं । यह भ्रम इसलिए रहता है कि उनका प्रकाश पृथ्वी तक आने में हजारों वर्ष लग जाते हैं । जब वे वस्तुतः अस्त हुए हैं उसकी जानकारी अब कहीं इतनी लम्बी अवधि के पश्चात हमें मिल रही है । सौर-मण्डल के अपने ग्रहों के बारे में भी यही बात है, वे पंचांगों में लिखे समय से बहुत पहले या बाद में उदय तथा अस्त होते हैं ।

जो तारा हमें सीध में दीखता है आवश्यक नहीं कि वह उसी स्थिति में है । प्रकाश की गति सर्वथा सीधी नहीं है । प्रकाश भी एक पदार्थ है और उसकी भी तौल है । एक मिनट में एक वर्गमील जमीन पर सूर्य का जितना प्रकाश

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गिरता है उसका वजन प्रायः एक ओंस होता है । पदार्थ पर आकर्षण शक्ति का प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है । तारों का प्रकाश सौर-मण्डल में प्रवेश करता है तो सूर्य तथा अन्य ग्रहों के आकर्षण के प्रभाव से लड़खड़ाता हुआ टेड़ा-तिरछा होकर पृथ्वी तक पहुँचता है, पर हमारी आँखें उसे सीधी धारा में आता हुआ ही अनुभव करती हैं । हो सकता है कि कोई तारा सूर्य या किसी अन्य ग्रह की ओट में छिपा बैठा हो पर उसका प्रकाश हमें आँखों की सीध में दीख रहा हो । इसी प्रकार ठीक सिर के ऊपर चमकने वाला तारा वस्तुतः उस स्थान से बहुत नीचा या तिरछा भी हो सकता है । इस प्रकार दिशा ही नहीं समय सम्बन्धी मान्यताएँ भी निर्भ्रान्त नहीं हैं ।

दार्शनिक विवेचनाओं में देश, काल का उल्लेख होता रहता है । उसे कोई मुल्क या घण्टा मिनट वाला समय नहीं समझ लेना चाहिए । यह पारिभाषिक शब्द है । वस्तुओं की लम्बाई, चौड़ाई, मोटाई को 'देश' कहा जाता है और उनके परिवर्तन को 'काल' । आमतौर से वस्तुएँ देश की अर्थात् लम्बाई, चौड़ाई, मोटाई के आधार पर ही देखी जाती हैं जबकि उनकी व्याख्या और विवेचना करते हुए काल का चौथा 'आयाम' भी सम्मिलित किया जाना चाहिए । किन्तु गतियाँ और दिशाएँ अनिश्चित भी हैं और भ्रामक भी । काल तो उन्हीं पर आश्रित है यदि आधार ही गड़बड़ा रहा है तो काल का परिमाण कैसे निश्चित हो । अस्तु वस्तुओं को तीन आयाम की अपेक्षा चार आयाम वाली भी कहा जाय तो भी बात बनेगी नहीं । वस्तुएँ क्या हैं ? उनका रूप, गुण, कर्म स्वभाव क्या है ? यह कहते नहीं बनता क्योंकि उनके परमाणु जिस द्रुतगति से भ्रमणशील रहते हैं उस अस्थिरता को देखते हुए एक क्षण की गई व्याख्या दूसरे ही क्षण परिवर्तित हो जायेगी ।

कौन बड़ा, कौन छोटा इसका निश्चय भी निःसंकोच नहीं किया जा सकता है । पाँच फुट की लकड़ी छः फुट वाली की तुलना में छोटी है और चार फुट वाली की तुलना में बड़ी । एक फुट मोटाई वाले तने की तुलना में दो फुट वाला मोटा 'अधिक' है और दो फुट वाले की तुलना में एक फुट वाला पतला । वह वस्तुतः मोटा है या पतला ऐसा कुछ नहीं कहा जा सकता । तुलना बदलते ही यह छोटा और बड़ा होता, पतला और मोटा होता सहज ही बदल जायेगा ।

कौन धनी है और कौन निर्धन, कौन सुखी है, कौन दुःखी, कौन सन्त है, कौन ज्ञानी है, कौन अज्ञानी, कौन सदाचारी है, कौन दुराचारी, इसका निर्णय अनायास ही कर सकना असम्भव है । इस प्रकार का निर्धारण करने से पूर्व यह देखना होगा कि किसकी तुलना में निर्णय किया जाय । नितान्त निर्धन की तुलना में वह धनी है जिसके पास पेट भरने के साधन हैं, किन्तु लक्षाधीश की तुलना में वह निर्धन ही है । जिसे दस कष्ट हैं उसकी तुलना में तीन कष्ट वाला सुखी है, पर एक कष्ट वाले की तुलना में वह भी दुःखी है । वस्तुतः कौन सुखी और कौन दुःखी हैं यह नहीं कहा जा सकता । डाकू की तुलना में चोर सहृदय है, किन्तु उठाईगीर की तुलना में वह भी अधिक दुष्ट है । एक सामान्य नागरिक की तुलना में उठाईगीरा भी दुष्ट है, जबकि वह सामान्य नागरिक भी सन्त की तुलना में पिछड़ा हुआ और गया-गुजरा है । सन्त भी किसी महा सन्त आत्मत्यागी शहीद की तुलना में हल्का बैठेगा ।

अपेक्षा से ही हम किसी वस्तु, व्यक्ति या परिस्थिति का मूल्यांकन करते हैं तुलना ही एक मोटी कसौटी हमारे पास है जिससे किसी निष्कर्ष पर पहुँचा जा सकता है । जिनके बारे में वह निर्धारण किया गया है, वे वस्तुतः क्या हैं ? इसका पता लगाना अपनी ज्ञानेन्द्रियों के लिए जिनमें मस्तिष्क भी सम्मिलित है, अति कठिन है, क्योंकि वे सभी अपूर्ण और सीमित हैं । कई अर्थों में तो उन्हें भ्रान्त भी कहा जा सकता है । सिनेमा के पर्दे पर तस्वीरें चलती-फिरती दिखाई देती हैं वस्तुतः वे स्थिर होती हैं, उनके बदलने का क्रम ही इतना तेज होता है कि आँखें उसे ठीक तरह पकड़ नहीं पातीं और आकृतियों को ही हाथ-पैर हिलाती, बोलती, गाती समझ बैठती हैं ।

अक्सर हमारी अनुभूतियाँ वस्तुस्थिति से सर्वथा उल्टी होती हैं । इन्द्रियाँ अपूर्ण ही नहीं कई बार तो वे भ्रामक सूचनाएँ देकर हमें ठगती भी हैं । उनके ऊपर निर्भर रहकर—प्रत्यक्षवाद को आधार मानकर शाश्वत सत्य को प्राप्त करना तो दूर समझ सकना भी सम्भव नहीं होता ।

उदाहरण के लिए प्रकाश को ही लें । प्रकाश क्या है ? उसे विद्युत चुम्बकीय लहरों का बवण्डर ही कहा जा सकता है । वह कितना मन्द या तीव्र है यह तो उसकी मात्रा पर निर्भर है, पर उसकी चाल सदा एक-सी रहती है । एक सेकण्ड में वह एक लाख छियासी हजार मील (१ मील = १.६१ किलोमीटर) की गति से दौड़ते रहने वाला पदार्थ है । प्रकाश किरणों में सात रंग होते हैं । इन्हीं के सम्मिश्रण से हल्के भारी अनेकानेक रंगों का सृजन होता है ।

कोई रंग नहीं दुनिया में

यह बात कहने, सुनने और जानने, मानने में बड़ी विचित्र लगेगी कि संसार के किसी पदार्थ में कोई रंग नहीं है । हर वस्तु रंग रहित है, किन्तु यह विशेषता अवश्य है कि प्रकाश की किरणों में जो रंग है उनमें से किसी को स्वीकार करें किसी को लौटा दें । बस इसी कारण हमें विभिन्न वस्तुएँ विभिन्न रंगों की दीखती हैं । पदार्थ जिस रंग की किरणों को अपने में सोखता नहीं वे उससे टकराकर वापस लौटती हैं । वापसी में वे हमारी आँखों से टकराती हैं और हम उस टकराव को पदार्थ का अमुक रंग होने के रूप में अनुभव करते हैं । पौधे वस्तुतः हरे नहीं होते, उनका कोई रंग नहीं, हर पौधा सर्वथा बिना रंग का है, पर उसमें प्रकाश की हरी किरणें सोखने की शक्ति नहीं होती, अस्तु वे उसमें प्रवेश

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नहीं कर पातीं । वापस लौटते हुए हमारी आँखों को इस भ्रम में डाल जाती हैं कि पौधे हरे होते हैं । हम उसी छलावे को शाश्वत सत्य मानते रहते हैं और प्रसंग आने पर पूरा जोर लगाकर यह सिद्ध करते रहते हैं कि पौधे निश्चित रूप से हरे होते हैं । कोई उससे भिन्न बात कहे तो हँसी उसी की बुद्धि पर आयेगी, भ्रान्त और दुराग्रही उसी को कहेंगे । यह जानने और मानने का कोई मोटा आधार दिखाई नहीं पड़ता है कि हमारी ही आँखें धोखा खा रही हैं—प्रकृति की जादूगरी, कलाबाजी हमें ही छल रही हैं । पेड़ का तो उदाहरण मात्र दिया गया । हर पदार्थ के बारे में हम रंगों के सम्बन्ध में ऐसे ही भ्रम जंजाल में जकड़े हुए हैं । जिन आँखों को प्रामाणिक मानते हैं, जिस मस्तिष्क की विवेचना पर विश्वास करते हैं यदि वही भ्रम ग्रस्त होकर हमें झुठलाने लगें तो फिर हमारा 'प्रत्यक्षवाद' को तथ्य मानने का आग्रह बेतरह धूल-धूसरित हो जाता है ।

हमारी दृष्टि में काला रंग सबसे गहरा रंग है और सफेद रंग कोई रंग नहीं है । पर यथार्थता इस मान्यता से सर्वथा उल्टी है । किसी भी रंग का न दीखना काला रंग है और सातों रंगों का सम्मिश्रण सफेद रंग । अँधेरा वस्तुतः 'कुछ भी नहीं' कहा जा सकता है जबकि वह घोर-घना छाया दीखता है और उसके कारण कुछ भी सूझ न पड़ने की स्थिति आ जाती है । वैशेषिक दर्शन ने अँधेरे को कोई पदार्थ मानने से इन्कार किया है, जबकि दूसरे दार्शनिक उसे एक तत्व मानने का जोर-शोर से प्रतिपादन करते हैं । कालापन सभी प्रकाश किरणों को अपने भीतर सोख लेता है । फलतः हमारे पल्ले कुछ नहीं पड़ता है और अँधेरे में ठोकर खाते हैं, घनी कालिमा छाई देखते हैं ।

किसी भी रंग की किरणें सोख सकने में जो पदार्थ सर्वथा असमर्थ हैं वे ही हमें सफेद दीखते हैं । कारण यह है उनसे टकरा कर तिरस्कृत प्रकाश तरंगें वापस लौटती हैं और उनके सातों रंगों का सम्मिश्रण हमारी आँखों को सफेद रंग के रूप में दीखता है । कैसी विचित्र, कैसी असंगत और कैसी भ्रम जंजाल भरी विडम्बना है यह । जिसे न उगलते बनता है न पीते, न स्वीकार करने को मन होता है और न अस्वीकार करने का साहस । अपने ही अपूर्ण उपकरणों पर क्षोभ व्यक्त न करते हुए मन मसोस कर बैठना पड़ता है । वैज्ञानिक सिद्धियों को अस्वीकार कैसे किया जा सकता है । हल्का, भारी, गहरा, उथला, कालापन भी एक पहेली है । अन्धकार कहीं या कभी बहुत गहरा होता है और कहीं या कभी उसमें हल्कापन रहता है यह भी उतने अंशों में प्रकाश को सोखने न सोखने की क्षमता पर निर्भर रहता है । काले रंग में प्रकाश का सारा अंश सोख लेने की क्षमता का एक प्रमाण यह है कि वह धूप में अन्य पदार्थों की अपेक्षा अधिक मात्रा में और अधिक जल्दी गरम होता है ।

अब एक नया प्रश्न उभरता है कि प्रकाश किरणों में रंग कहाँ से आता है ? इस स्थल पर उत्तर और भी विचित्र बन जाता है । प्रकाश लहरों की लम्बाई का अन्तर ही रंगों के रूप में दीखता है । वस्तुतः रंग नाम की कोई चीज समस्त विश्व में कहीं कुछ है ही नहीं । उसका अस्तित्व सर्वथा भ्रामक है ।

विद्युत चुम्बकीय तरंगें ही प्रकाश हैं । इन तरंगों की लम्बाई अलग-अलग होती है । अस्तु उनका अनुभव हमारा मस्तिष्क भिन्न-भिन्न अनुभूतियों के साथ करता है । यह अनुभूति भिन्नता ही रंगों के रूप में विदित होती है । सात रंग तथा उनसे मिल-जुलकर बनने वाले अनेकानेक रंगों का वैज्ञानिक विश्लेषण प्रकाश तरंगों की लम्बाई का मस्तिष्कीय अनुभूति के रूप में ही किया जा सकता है । रंगों की अपनी तात्विक सत्ता कुछ भी नहीं है ।

आश्चर्य का अन्त इतने से ही नहीं हो जाता । रंगों की दुनिया बहुत बड़ी है उस मेले में हमारी जान-पहचान बहुत थोड़ी-सी है । बाकी तो सब कुछ अनदेखा ही पड़ा है । लाल रंग की प्रकाश तरंगें एक इन्च जगह में तेतीस हजार होती हैं । जबकि कासनी रंग की सोलह हजार । इन्फ्रारेड तरंगें एक इन्च में मात्र ८० ही होती हैं । इसके विपरीत रेडियो तरंगों की लम्बाई २० मील (१ मील = १.६१ किलोमीटर) से लेकर २००० मील तक पायी जाती है । यह अधिक लम्बाई की बात हुई । अब छोटाई की बात देखी जाय परा कासनी किरणें एक इन्च में बीस लाख तक होती हैं । एक्स-रे किरणें एक इन्च में पाँच करोड़ से एक अरब तक पायी जाती हैं । गामा तरंगें एक इन्च में २२० अरब । इतने पर भी इन सबकी चाल एक जैसी है अर्थात् सेकण्ड में वही एक लाख छियासी हजार मील ।

अगर हम विदित प्रकाश किरणों को यन्त्रों की अपेक्षा खुली आँखों से देख सकने में समर्थ हो सके होते तो जिस प्रकार एक सात रंगों का सप्तक हमें दीखता है उससे अतिरिक्त अन्यान्य ऐसे रंगों के जिनकी आज तो कल्पना कर सकना भी अपने लिए कठिन है ६७ सप्तक और दीखते । ६७ × ७ = ४६९ रंगों के सम्मिश्रण से कितने अधिक रंग बन जाते इसका अनुमान इसी से लगाया जाता है कि विज्ञान सात रंगों से ही हजारों प्रकार के हल्के भारी रंग बने हुए दीखते हैं ।

प्रातःकाल का अरुणोदय और लाल रंग का सूर्य निकलना इस रंग भ्रम जंजाल की एक झलक है । सूर्य वस्तुतः सफेद ही होता है, पर सवेरे वह सिर पर नहीं पूर्व में तिरछी स्थिति में होता है । इसलिए उसकी किरणों को बहुत लम्बा वायुमण्डल पार करना पड़ता है । इस मार्ग में बहुत अधिक धूलि कण आड़े आते हैं । वे कण लाल रंग नहीं सोख पाते अस्तु वे किरणें हम तक चली आती हैं और सवेरे का उगता हुआ सूर्य लाल दिखाई पड़ता है ।

आँखें कितना अधिक धोखा खाती हैं और मस्तिष्क कितनी आसानी से बहक जाता है इसका एक उदाहरण रंगों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

की दुनिया में पहला पैर रखते ही विदित हो जाता है । अन्य विषयों में भी हमारी भ्रान्ति का ठिकाना नहीं । जीवन का स्वरूप, प्रयोजन और लक्ष्य एक प्रकार से पूरी तरह विस्मृत कर दिया है और जड़ पदार्थों पर अपनी ही मान्यता को बिखेर कर उन्हें प्रिय-अप्रिय के रूप में देखने की स्थिति को संसार से मिलने वाले सुख-दुःख मान लिया है । आत्म-ज्ञान की सूक्ष्म दृष्टि यदि मिल सके तो पता लगेगा कि हम अज्ञान, माया और भ्रम के जिस जंजाल में फँसे हुए हैं उनसे निकले बिना सत्य के दर्शन नहीं हो सकते और सत्य के बिना सुख नहीं मिल सकता ।

वेदान्त दर्शन संसार को माया बताता है और संसार को स्वप्न कहता है इसका अर्थ यह नहीं कि जो कुछ दीखता है उसका अस्तित्व ही नहीं अथवा जो सामने है वह झूठ है । वर्तमान स्वरूप एवं स्थिति में वे सत्य भी हैं । यदि ऐसा न होता तो कर्मफल क्यों मिलते ? पुण्य और तप तितीक्षा करने की क्या आवश्यकता होती ? कर्तव्य और अकर्तव्य में क्या अन्तर होता ? धर्मकृत्यों की क्या उपयोगिता रह जाती ? और पाप कर्मों से डरने बचने की क्या आवश्यकता रहती ?

माया का अर्थ वेदान्त ने इस अर्थ में किया है जिसमें जो भाषित होता हो वह तत्वतः यथार्थ न हो । जगत को इसी स्थिति में, इसी स्तर का माना गया है । वह जैसा कुछ प्रतीत होता है, क्या वह वैसा ही है ? इस प्रश्न पर जब गम्भीरतापूर्वक विचार किया जाय तो प्रतीत होगा कि संसार में जो कुछ हम इन्द्रियों द्वारा देखते हैं, अनुभव करते हैं वह यथार्थ में वैसा ही नहीं होता । इन्द्रिय छिद्रों के माध्यम से मस्तिष्क को होने वाली अनुभूतियों का नाम ही जानकारी तभी सत्य हो सकती है जब वस्तुओं के यथार्थ स्वरूप को सही रूप में इन्द्रियाँ समझ सकें । यदि वे धोखा खाने लगें तो मस्तिष्क गलत अनुभव करेगा और वस्तुस्थिति उल्टी दिखाई पड़ने लगेगी ।

नशा पी लेने पर मस्तिष्क और इन्द्रियों का सम्बन्ध लड़खड़ा जाता है, फलस्वरूप कुछ का कुछ अनुभव होता है । शराब के नशे में धुत्त व्यक्ति जैसा कुछ सोचता, समझता, देखता, अनुभव करता है वह यथार्थता से बहुत भिन्न होता है । और भी ऊँचे नशे इस उन्मत्तता की स्थिति को और भी अधिक बढ़ा देते हैं । डी. एलस्केस. ए. सरीखे नवीन नशे तो इतने तीव्र हैं कि उनके सेवन के उपरान्त ऐसे विचित्र अनुभव मस्तिष्क को होते हैं, जिनकी यथार्थता के साथ कोई संगति नहीं होती ।

साधारणतया दैनिक जीवन में भी अधिकांश अनुभव ऐसे होते हैं जिन्हें यथार्थ नहीं कहा जा सकता । सिनेमा के पर्दे पर जो दीखता है सही कहाँ है ? एक के बाद एक आने वाली अलग-अलग तस्वीरें इतनी तेजी से घूमती हैं कि उस परिवर्तन को आँखें ठीक तरह समझ नहीं पातीं और ऐसा भ्रम होता है मानो फिल्म में पात्र चल फिर रहे हैं । लाउडस्पीकर से शब्द अलग अन्यत्र निकलते हैं और पर्दे पर तस्वीर के होठ अलग चलते हैं पर दर्शकों को ऐसा ही आभास होता रहता है मानो अभिनेताओं के मुख से ही वार्तालाप एवं संगीत निकल रहा है । प्रकाश की विरलता और सघनता भर पर्दे पर उतरती है पर उसी से पात्रों एवं दृश्यों का स्वरूप बन जाता है और मस्तिष्क ऐसा अनुभव करता है मानो यथार्थ ही वह घटनाक्रम घटित हो रहा है ।

सिनेमा के दृश्यक्रम को देखकर आने वाला यह नहीं अनुभव करता कि उसे यान्त्रिक जाल-जंजाल में ढाई तीन घण्टे उलझा रहना पड़ा । उसे जो दुःखद-सुखद, रोचक, भयानक अनुभूतियाँ उतने समय होती रही हैं वे सर्वथा भ्रान्त थीं । सिनेमा हाल में कोई घटनाक्रम नहीं घटा । कोई प्रभावोत्पादक परिस्थिति नहीं बनी केवल प्रकाश यन्त्र या ध्वनि यन्त्र अपने-अपने ढंग की कुछ हरकतें भी करते रहे । इतने भर से दर्शक अपने सामने अति महत्त्वपूर्ण घटनाक्रम उपस्थित होने का आभास करता रहा, इतना ही नहीं उससे हर्षातिरेक एवं अश्रुपात जैसी भाव भरी मनःस्थिति में भी बना रहा । इस इन्द्रिय भ्रम को माया कहा जाता है । मोटी दृष्टि से यह माया सत्य है । यदि सत्य न होती तो फिल्म उद्योग, सिनेमा हाल, उसमें युक्त हुए यन्त्र, दर्शकों की भीड़ उनकी अनुभूति आदि का क्या महत्त्व रह जाता ? थोड़ी विवेचनात्मक गहराई से देखा जाय तो यह यन्त्रों की कुशलता और वस्तुस्थिति को समझ न सकने को नेत्र असमर्थता के आधार पर इस फिल्म दर्शन को मायाचार भी कह सकते हैं । दोनों ही तथ्य अपने-अपने ढंग से सही हैं । संसार चूँकि हमारे सामने खड़ा है, उसके घटनाक्रम को प्रत्यक्ष देखते हैं । इसलिए वह सही है, किन्तु गहराई में प्रवेश करने पर वे दैनिक अनुभूतियाँ नितान्त भ्रामक सिद्ध होती हैं । ऐसी दशा में उन्हें भ्रम, स्वप्न या माया कहना भी अत्युक्ति नहीं है ।

स्पष्ट है सभी दृश्य पदार्थ एक विशेष प्रकार के परमाणुओं का एक विशेष प्रकार का संयोग मात्र हैं । प्रत्येक परमाणु अत्यन्त तीव्र गति से गतिशील है । इस प्रकार हर पदार्थ अपनी मूलस्थिति में आश्चर्यजनक तीव्र गति से हरकत कर रहा है । पर खुली आँखें यह सब कुछ देख नहीं पातीं और वस्तुएँ सामने जड़वत् स्थिर खड़ी मालूम पड़ती हैं । ऐसा ही अपनी पृथ्वी के बारे में भी होता है । भूमण्डल अत्यन्त तीव्र गति से (१) अपनी धुरी पर, (२) सूर्य की परिक्रमा के लिए अपनी कक्षा पर, (३) सौर-मण्डल सहित महासूर्य की परिक्रमा के पथ पर, (४) घूमता हुआ लट्टू जिस तरह इधर-उधर लहराता रहता है उस तरह लहराते रहने के क्रम पर, (५) ब्रह्माण्ड के फलते-फूलते जाने की प्रक्रिया के कारण अपने यथार्थ आकाश स्थान को छोड़ कर फैलता स्थान पकड़ते जाने की व्यवस्था पर, निरन्तर एक साथ पाँच प्रकार की चालें चलती रहती हैं । इस उद्धत नृत्य को

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हम तनिक भी अनुभव नहीं करते और देखते हैं कि जन्म से लेकर मरण काल तक धरती अपने स्थान पर जड़वत् जहाँ की तहाँ पड़ी रही है । आँखों के द्वारा मस्तिष्क को इस सम्बन्ध में जो जानकारी दी जाती है और जैसी कुछ मान्यता आमतौर से बनी रहती है उसका विश्लेषण किया जाय तो प्रतीत होगा कि हम भ्रम अज्ञान की स्थिति में पड़े रहते हैं और कुछ का कुछ अनुभव करते रहते हैं, यह माया ग्रस्त स्थिति कही जाय तो कुछ अत्युक्ति न होगी ।

जल में सूर्य चन्द्र के प्रतिबिम्ब पड़ते हैं और लगता है कि पानी में प्रकाश पिण्ड जगमगा रहे हैं । हर लहर पर प्रतिबिम्ब पड़ने से हर लहर पर एक चन्द्रमा नाचता-थिरकता मालूम पड़ता है । रेल में बैठने वाले देखते हैं कि वे अपने स्थान पर स्थिर बैठे हैं केवल बाहर तार के खम्भे और पेड़ आदि भाग रहे हैं । क्या यह अनुभूतियाँ सत्य हैं ?

रात्रि को स्वप्न देखते हैं । उस स्वप्नावस्था में दिखाई पड़ने वाला घटनाक्रम यथार्थ मालूम पड़ता है । देखते समय दुःख-सुख भी होता है । यदि यथार्थ में सन्देह होता तो कई बार मुख से कुछ शब्द निकल पड़ना, स्वप्नदोष आदि हो जाने की बात क्यों होती ? जागने पर स्पष्ट हो जाता है कि जो सपना देखा गया था उसमें यथार्थ कुछ भी नहीं था । केवल कल्पनाओं की उड़ान को निद्रित मस्तिष्क ने यथार्थता अनुभव कर लिया । उतने समय की मूर्छित मनःस्थिति अपने को भ्रम जंजाल में फँसाये रह कर बे-सिर-पैर की उड़ानों में उड़ाती रही ।

अन्धेरे में झाड़ी भूत जैसी लगती है—रस्सी का टुकड़ा सांप प्रतीत होता है, मरीचिकाएँ थल में जल का और जल में थल का भान कराती हैं । यथार्थता से सर्वथा भिन्न अनुभूतियों का होना कोई अनहोनी बात नहीं है । आकाश में बहुत ऊँचे उड़ने वाले वायुयान छोटे पक्षी जैसे लगते हैं । पृथ्वी की अपेक्षा लाखों गुने बड़े और अपने सूर्य से हजारों गुने अधिक चमकदार तारागण नन्हे से दीपक की तरह टिमटिमाते दीखते हैं । क्या यह सारे दृश्य यथार्थ में वैसे ही हैं जैसे कि आँखें हमें अनुभव कराती हैं ? आँखों की तरह ही अन्य इन्द्रियों की बात है । वे एक सीमा तक ही वस्तुस्थिति का ज्ञान कराती हैं और जो बताती जाती हैं उसमें से भी अधिकांश भ्रान्त होता है । बुखार आने पर गर्मी की ऋतु में शीत का और शीत में गर्मी का अनुभव होता है । मुँह का जायका खराब होने पर हर चीज कड़वी लगती है । जुकाम हो जाने पर चारों ओर बदबू का अनुभव होता है । पीलिया रोग होने पर आँखें पीली हो जाती हैं और हर चीज पीले रंग की दिखाई पड़ती है । क्या यह अनुभूतियाँ सही होती हैं ?

जिस वस्तु का जैसा स्वाद प्रतीत होता है वह वास्तविक नहीं है । यदि ऐसा होता तो मनुष्य को जो नीम के पत्ते कड़वे लगते हैं, वे ऊँट को भी वैसे ही क्यों न लगते, वह उन्हें रुचिपूर्वक स्वादिष्ट पदार्थों की तरह क्यों खाता ? खाद्य पदार्थों का स्वाद हर प्राणी की जिह्वा से निकलते रहने वाला अलग-अलग स्तर के रसों तथा मुख के ज्ञान तन्तुओं की बनावट पर निर्भर है । भोजन मुँह में गया—वहाँ के रसों का सम्मिश्रण हुआ और उस मिलाप की जैसी कुछ प्रतिक्रिया मस्तिष्क पर हुई उसी का नाम स्वाद की अनुभूति है । खाद्य पदार्थ की वास्तविक रासायनिक स्थिति इस स्वाद अनुभूति से सर्वथा भिन्न है, जो कुछ चखने पर अनुभव होता है वह यथार्थता नहीं है ।

शरीर विज्ञानी जानते हैं कि काया का निर्माण अरबों-खरबों कोशिकाओं के सम्मिलन से हुआ है । उनमें से प्रति क्षण लाखों मरती हैं और नई उपजती हैं । यह क्रम बराबर चलता रहता है और थोड़े ही दिनों में, कुछ समय पूर्व वाली समस्त कोशिकाएँ मर जाती हैं और उनका स्थान नई ग्रहण कर लेती हैं । इस तरह एक प्रकार से शरीर का बार-बार कायाकल्प होता रहता है । पुरानी वस्तु एक भी नहीं रहती उनका स्थान नये जीव कोश ग्रहण कर लेते हैं । देह के भीतर एक प्रकार श्मशान जलता रहता है और प्रसूति गृह में प्रजनन की धूम मची रहती है । इतनी बड़ी हलचल का हमें तनिक भी बोध नहीं होता और लगता है देह जैसी की तैसी रहती है । जिन इन्द्रियों के सहारे हम अपना काम चलाते हैं उनमें इतना भी दम नहीं होता कि बाहरी वस्तुस्थिति बनाना तो दूर अपने भीतर की इतनी महत्त्वपूर्ण हलचलों का तो आभास दे सकें । ऐसी इन्द्रियों के आधार पर यथार्थ जानकारी का दावा कैसे किया जाय ? जिस मस्तिष्क को अपने कार्यक्षेत्र-शरीर के भीतर होने वाले रोगों में क्या स्थिति बनी हुई है, इतना तक ज्ञान नहीं है और घर की बात को बाहर वालों से पूछना पड़ता है, वैद्य और डॉक्टरों का दरवाजा खट-खटाना पड़ता है, उस मस्तिष्क पर यह भरोसा कैसे किया जाय कि वह इस ज्ञान का वस्तुस्थिति में हमें सही रूप में अवगत करा देगा ।

ज्ञान जीवन का प्राण है । पर वह होना यथार्थ स्तर का चाहिए । यदि कुछ का कुछ समझा जाय, उल्टा देखा और जाना जाय, भ्रम विपर्यय हमारी जानकारियों का आधार बन जाय तो समझना चाहिए वह ज्ञान प्रतीत होने वाली चेतना वस्तुतः अज्ञान ही है । उसमें जकड़े रहने पर हमें विविध विधि त्रास ही उठाने पड़ेंगे, पग-पग पर ठोकरें खानी पड़ेंगी । इसी स्थिति को माया कहते हैं । माया कोई बाहरी संकट नहीं, मात्र भीतरी भ्रान्ति भरी मनःस्थिति ही है, यदि उसे सुधार लिया जाय, तो समझना चाहिए माया के बन्धनों से मुक्ति मिल गई । यह मुक्ति वस्तुतः हर किसी के करतलगत है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समस्त दुःखों का कारण अज्ञान

प्रगति वस्तुओं के बाहुल्य के, इन्द्रिय भोगों के अथवा प्रिय परिस्थितियों की उपलब्धि के साथ जुड़ी हुई नहीं है, वरन् ज्ञान के विस्तार से सम्बन्धित है । जिनका ज्ञान जितना सीमित है वह उतना ही पिछड़ा हुआ है । सम्भव है जिनकी ज्ञान सम्पदा बढ़ी-चढ़ी है, उसकी शक्ति और अशक्ति का लेखा-जोखा भी ज्ञान सम्पदा की न्यूनाधिकता से साथ जुड़ा हुआ है ।

मनुष्य का नैतिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक स्तर उसकी सुसंस्कृत ज्ञान चेतना के साथ जुड़ा हुआ है । भौतिक शक्तियों के उपार्जन और उपभोग को भी मानसिक विकास से पृथक नहीं रखा जा सकता । आदिकाल में मनुष्य शारीरिक दृष्टि से अब की अपेक्षा अधिक बलिष्ठ रहा होगा, पर उसकी चेतना पशु स्तर से कुछ ही ऊँची होने के कारण सुविकसित लोगों की तुलना में गया-गुजरा ही सिद्ध होता रहा है । अतीत के पिछड़ेपन पर जब एक दृष्टि डालते हैं तो प्रतीत होता है कि चिन्तन क्षेत्र में अज्ञान की स्थिति कितनी कष्टकर और कितनी लज्जास्पद परिस्थितियों में मनुष्य को डाले रही है ।

अमेरिकन म्यूजियम ऑफ नेचुरल हिस्ट्री के पक्षी विभाग एसोसियेट क्यूरेटर द्वारा प्रकाशित विवरणों से पता चलता है कि न्यूगिनी के आदिम और आदिवासी किस तरह अपने क्षेत्र में जा भटकने वाले लोगों को भून-भूनकर खा जाते थे । उस क्षेत्र में पक्षियों की खोज में एक खोजी दल जा पहुँचा । पापुआन क्षेत्र के मियाओं कबीले के बड़े निर्दय क्रूर कर्मों के लिए प्रसिद्ध हैं । इस क्षेत्र में किसी विशेष सुरक्षा व्यवस्था के बिना किसी को जाने देने की इजाजत नहीं है, पर वह खोजी दल किसी प्रकार उस क्षेत्र में जा ही पहुँचा और उसके सभी सदस्यों का रोमांचकारी वध हो गया ।

पादरी आइवोस्केफर उस क्षेत्र में ४५ वर्ष से इन नर भक्षियों के बीच प्रभु ईसा का सन्देश सुनाने के लिए रहते थे । उन्होंने इन नर भक्षियों को अपने प्रेम एवं सेवा कार्य से प्रभावित कर रखा था । शिक्षा चिकित्सा आदि उपायों से उन्होंने इस क्षेत्र के निवासियों का मन जीत लिया था । उन्हें वे पवित्र आत्मा समझते थे और किसी प्रकार की हानि पहुँचाने के स्थान पर सम्मान प्रदान करते थे ।

आरम्भ में उस निष्ठावान, धर्मात्मा किन्तु क्रिया कुशल पादरी ने बड़ी बुद्धिमत्ता के साथ इन लोगों के बीच अपना स्थान बनाया था स्केफर ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि—पहली बार जब वे इस इलाके में अपने एक साथी के साथ गए तो उन्हें नर भक्षियों के द्वारा घेर लिया गया । उन देखने वालों ने शोर मचाकर ४०-५० योद्धाओं को बुला लिया, वे भाले ले लेकर आ गए और हम लोगों को चारों ओर से घेरे में लेकर हर्ष नृत्य करने लगे । उन्हें दो मनुष्य का, उसमें भी गोरों का ताजा माँस खाने को मिलेगा । इस कार्य का श्रेय वे लेंगे इस खुशी में उन्मत्तों जैसी उछल-कूद कर रहे थे । घेरे में आये शिकार अब भाग तो सकते नहीं थे ।

इस सम्बन्ध में वे निश्चिन्त होकर देवता के बलिदान के उद्देश्य से गीत गा रहे थे और हर्ष मना रहे थे ।

पादरी ने एक युक्ति से काम लिया । उसने थैले में से एक दर्पण निकाला और उसे आदिवासियों के सरदार के सामने कर दिया उसने जैसे ही अपनी आकृति देखी वह डर गया । दर्पण उन लोगों के लिए सर्वथा नई वस्तु थी । एक-एक करके पादरी ने दर्पण सभी को दिखाया । वे सभी बहुत डरे और समझने लगे कि यह आदमी कोई जादूगर है इसे मारने से कोई विपत्ति आ सकती है । अस्तु वे अपने-अपने भाले फेंक कर उसके इर्द-गिर्द आशीर्वाद पाने के लिए सिर झुकाकर बैठ गए । पादरी ने एक और दूसरा चमत्कार प्रकट किया । उसके पोपले मुँह में दोनों जबड़े नकली दाँतों के लगे थे । उन बैठे हुए दर्शकों को सम्बोधित कर अब उसने एक नया जादू दिखाया । मुँह में से दाँतों की बत्तीसी निकाली, दाँत उन्हें दिखाये, पोंपला मुँह दिखाया और फिर दाँतों को मुँह में ठूँस कर पहले जैसा मुँह बना लिया । आदिवासी इस चमत्कार को देखकर दंग रह गए और उन्होंने पूरा भरोसा कर लिया कि यह कोई जादुई पुरुष है इतनी मान्यता बना देने से पादरी का काम बहुत सरल हो गया और निश्चिन्ततापूर्वक अपना काम उस क्षेत्र में करने लगे । काम चलाऊ टूटी-फूटी आदिवासी भाषा तो उन्होंने पहले ही सीख ली थी ।

पादरी ने लिखा है कि न्यूगिनी के यह आदिवासी योद्धा, निर्दयी, क्रूर, कष्ट सहिष्णु और भारी अनुदार होते हैं । एक कबीले का अधिकार जिस क्षेत्र पर है, उसमें घुसकर यदि किसी दूसरे कबीले का कोई सदस्य भूल से या जान-बूझकर कोई पेड़ काट ले तो इतने से ही वे लोग आग बबूला हो जाते और रात को छिप कर उस पर हमला बोल देते । एक बार के हमले का जिक्र करते हुए उन्होंने लिखा है कि काँगना मन कबीले के लोगों ने अपने पड़ौसी करारन कबीले की झोपड़ियों पर चढ़ाई करके सोते हुए लोगों को पकड़ लिया और उनमें तीस के सिर काट कर ले आये । इस विजयोपहार में से एक सिर भेंट करने के लिए वे पादरी के पास भी आये थे ।

कबीले का मुखिया तथा योद्धा बनने के लिए वे लोग पूरी तैयारी करते हैं । प्रायः १६ वर्ष की आयु में उसे इसकी परीक्षा में उत्तीर्ण होने के लिए एक जीवित मनुष्य का सिर काटना पड़ता है । अक्सर इस कार्य के लिए अपने ही कबीले की या किसी अन्य कबीले से खरीदी हुई औरत प्रयुक्त की जाती है । थोड़े पालतू पशु, चमड़ा, पक्षियों के पंख आदि देकर औरतें आसानी से खरीदी भी जा सकती हैं । वध

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उत्सव पर उस अभागी महिला को देव गृह में ले जाया जाता है, जहाँ वह नव योद्धा भाले छेद-छेद कर उस स्त्री का काम तमाम कर देता है और फिर उसका सिर काटकर सरदार को भेंट करता है । इतना कर लेने पर उसकी गणना कबीले के योद्धा के रूप में होने लगती है । इन्हीं में से पीछे कोई मुखिया भी चुन लिया जाता है ।

एक बार तो पादरी के यहाँ ठहरे हुए गोरों को घेर लिया और प्रस्ताव किया कि दल की एक गोरी महिला उन्हें वध करने के लिए दे दी जाय इसके बदले में बीस आदिवासी युवतियाँ उन्हें दे देंगे । इस धर्म संकट को भी बड़ी चतुरतापूर्वक ही टाला जा सका ।

अतीत में अज्ञान ही पिछड़ी हुई परिस्थितियों में मनुष्य में रहा है । आज जिस स्थिति पर हम थोड़ा गर्व सन्तोष कर सकते हैं, वह ज्ञान साधन का ही प्रतिफल है । भविष्य में यदि अधिक सुख शांति की, आनन्द उल्लास की परिस्थितियाँ अभीष्ट हों तो उसके लिए सद्ज्ञान सम्पदा की दिशा में हमारे प्रयास अधिकाधिक तीव्र होने चाहिए । जिन दिनों भारत का स्वर्णिम काल था उन दिनों यहाँ की ज्ञान सम्पदा ही मूर्धन्य स्तर पर पहुँची हुई थी । संसार को स्वर्ग और मनुष्य को देवोपम बनाने के लिए, वर्तमान दुर्गति के दल-दल से निकलने के लिए ज्ञान साधना में अनवरत रूप से संलग्न रहने की आवश्यकता है । भूत और वर्तमान की तुलना करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि ज्ञान के बिना उज्ज्वल भविष्य का और कोई मार्ग नहीं ।

इस ज्ञान साधना के सम्बन्ध में उपनिषद्कार ने कहा है—

पराञ्चि खानि व्यतृणत स्वयम्भू
स्तस्मात्पराङ् पश्यति नान्तरात्मन् ।
कश्चिद्धीरः प्रत्यगात्मानमैक्ष—
दावृतचक्षुरमृतत्वमिच्छन् ॥

—केन २।१।१

अर्थात्, "स्वयंभू परमात्मा ने समस्त इन्द्रियों के द्वार बाहर की ओर निर्मित किए हैं, इसलिए बाह्य वस्तुएँ ही देखी जाती हैं, अन्तरात्मा नहीं देखी जाती । किसी मेधावी ने ही अमृतत्व की कामना कर चक्षु आदि को भीतर की ओर प्रेरित कर अन्तरात्मा के दर्शन (अनुभव) किए हैं ।"

हम बाह्य जीवन के बारे में, सुविस्तृत संसार के बारे में बहुत कुछ जानते हैं, पर आश्चर्य की बात यह है कि अपने सम्बन्ध में अपनी सत्ता और महत्ता एक सम्बन्ध में बहुत ही कम जानते हैं । बहिर्मुखी जीवन व्यस्त रहता है और यथार्थता के समझने की न तो आवश्यकता समझता है और न अवसर पाता है । यदि अपने स्वरूप, लक्ष्य और कर्तव्य का ठीक तरह भान हो जाय और संसार के साथ अपने सम्बन्धों को ठीक तरह जान सुधार लिया जाय तो यह साधारण दीखने वाला मानवी अस्तित्व महानता से सहज ही ओत-प्रोत हो सकता है ।

जीवन-यापन करने के लिए हमें नौ उपकरण प्राप्त हैं—(१) नेत्र (२) जिह्वा (३) नासिका (४) कान (५) त्वचा (६) मन (७) बुद्धि (८) चित्त (९) अहंकार । इन्हीं के माध्यम से हमें विभिन्न प्रकार का ज्ञान प्राप्त होता है । इस ज्ञान को ही यथार्थ मानते हैं, पर थोड़ी गहराई के साथ देखा जाय तो प्रतीत होगा कि यह सभी उपकरण एक सीमित और सापेक्ष जानकारी देते हैं, इनके माध्यम से मिली जानकारी न तो यथार्थ होती है और न पूर्ण । इसलिए उन अपूर्ण साधनों से मिली जानकारी को सही मान बैठना 'भूल' ही कही जायेगी । वेदान्त की भाषा में इस अपूर्ण जानकारी को 'स्वप्न' मिथ्या कहकर उसका वस्तुस्थिति पर प्रकाश डाला गया है ।

संसार में अनेक कारणों से अनेक शब्द कम्पन उत्पन्न होते रहते हैं, इन ध्वनि तरंगों की गति भिन्न-भिन्न होती है । मनुष्य के कान केवल उतने ही ध्वनि पकड़ सुन सकते हैं जिनकी गति ३३ सेकण्ड से लेकर ४० प्रति सेकण्ड के बीच होती है । इससे कम या ज्यादा गति वाले कम्पन अपने कानों की पकड़ में नहीं आते । इस परिधि के बाहर विचरण करने वाला प्रवाह इतना अधिक है जिसकी तुलना में सुनाई देने वाले शब्दों को लाख करोड़वाँ हिस्सा कह सकते हैं । इतनी स्वल्प ध्वनि को सुन सकने वाले कानों को शब्द सागर की कुछ बूँदों का ही अनुभव होता है । शेष के बारे में वे सर्वथा अनजान ही बने रहते हैं । इस अपूर्ण उपकरण के माध्यम से ध्वनि के माध्यम से विचरण करने वाले ज्ञान को सर्वथा स्वल्प ही कहा जा सकता है और उतने से साधन से मिलने वाली जानकारी के आधार पर वस्तुस्थिति समझने का दावा नहीं कर सकते ।

त्वचा के माध्यम से मिलने वाली जानकारी भी कानों की तरह ही अपूर्ण होती है साथ ही भ्रान्त भी । हाथ पर एक मिनट तक बर्फ रखे रहें इसके बाद उसी हाथ को साधारण जल में डुबोयें । लगेगा पानी गरम है । इसके बाद हाथ पर कुछ देर कोई गरम चीज रखे रहें, इसके बाद हाथ को उसी पानी में डुबोयें प्रतीत होगा पानी ठण्डा है । जल एक ही तापमान का था पर बर्फ अथवा गरम चीज रखने के बाद हाथ डुबाने पर अलग-अलग तरह के अनुभव हुए । ऐसी त्वचा की गवाही पर क्या भरोसा किया जाय जो कुछ का कुछ बताती है । ठण्ड और गर्मी की न्यूनाधिकता का अन्तर भी त्वचा एक सीमा तक ही बताती है । अत्यधिक गरम या अत्यधिक ठण्डी वस्तु में तापमान या शीतमान का जो अन्तर होता है उसे त्वचा नहीं बता सकती । ऐसी सीमित शक्ति वाली त्वचा इन्द्रिय के माध्यम से हम समग्र सत्य को समझ सकने में कैसे समर्थ हो सकते हैं ?

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अपनी आँखें सघन रात्रि में घोर अन्धकार का अनुभव करती हैं, कुछ भी देख नहीं सकतीं । पर उसी स्थिति में उल्लू, चमगादड़, बिल्ली, चीता आदि प्राणी भली प्रकार से देखते हैं । विज्ञान कहता है कि जगत में प्रकाश सर्वदा और सर्वत्र विद्यमान है । अन्धकार नाम की कोई चीज इस दुनिया में नहीं है । मनुष्य की आँखें एक सीमा तक के ही प्रकाश कम्पनों को देख पाती हैं जब प्रकाश की गति मनुष्य की नेत्र शक्ति की सीमा से कम होती है तो उसे अन्धकार प्रतीत होता है ।

आकाश में अनेक रंगों के भिन्न-भिन्न गति वाले प्रकाश कम्पन चलते रहते हैं । मनुष्य के नेत्र उनमें से केवल सात रंगों की स्वल्प जितनी प्रकाश तरंगों को ही अनुभव कर पाते हैं और शेष को देखने में असमर्थ रहते हैं । पीलिया रोग हो जाने पर हर वस्तु पीली दीखती हैं । 'रैटिनाइटिस पिग मैन्टोजा' रोग हो जाने पर एक सीधी रेखा धब्बे या बिन्दुओं के रूप में दिखाई देती है । आकाश को ही लीजिए वह हमें नीली चादर वाला गोलाकार पर्दे जैसा लगा दीखता है और लगता है उसमें समतल तारे टँके हुए हैं । पर क्या वह ज्ञान सही है ? क्या आकाश की सीमा उतनी नहीं है जितनी आँखों से दीखता है ? क्या तारे उतने ही छोटे हैं जितने कि आँखों को प्रतीत होते हैं ? क्या वे सब समतल बिछे हैं ? क्या आकाश का रंग वस्तुतः नीला है ? इन प्रश्नों का उत्तर खगोलशास्त्र के अनुसार नहीं हो सकता है, पर इन आँखों को क्या कहा जाय जो हमें यथार्थता से सर्वत्र भिन्न प्रकार की जानकारी देती हैं और भ्रम में डालती हैं ।

यही हाल नासिका का है । हमें कितनी ही वस्तुएँ गन्धहीन लगती हैं, पर वस्तुतः उनमें गन्ध रहती है और उनके स्तर अगणित प्रकार के होते हैं । कुत्तों की नाक इस गन्ध स्तर की भिन्नता को समझती है और बिछुड़ जाने पर अपने घर तक उसे पहुँचा देती है । प्रशिक्षित कुत्ते इसी गन्ध के आधार पर चोरी, हत्या आदि अपराध करने वालों को ढूँढ़ निकालते हैं । यही बात सुगन्ध-दुर्गन्ध के भेदभाव से सम्बन्धित है । प्याज, लहसुन आदि की गन्ध कितनों को बड़ी अरुचिकर लगती है, भोजन में थोड़ी-सी भी पड़ जाने से मितली आती है पर कितनों को इनके बिना भोजन में जायका ही नहीं आता । यही बात सिगरेट, शराब आदि की गन्ध के बारे में भी है । इन परिस्थितियों में नासिका के आधार पर यथार्थता का निर्णय कैसे किया जाय ?

जिह्वा स्वादों की जो अनुभूति कराती है वह भी वस्तुस्थिति नहीं है । खाद्य पदार्थ के साथ मुख के स्राव मिलकर एक विशेष प्रकार का सम्मिश्रण बनाते हैं उसी को मस्तिष्क स्वाद के रूप में अनुभव करता है । यदि वही वास्तविकता होती तो नीम के पत्ते मनुष्य की तरह ऊँट को भी कड़वे लगते और वह भी उन्हें न खाता । ऊँट को नीम की पत्तियों का स्वाद मनुष्य की जिह्वा अनुभूतियों से सर्वथा भिन्न प्रकार का होता है । इसका अर्थ यह हुआ कि पदार्थों का वास्तविक स्वाद जीभ पकड़ नहीं पाती । भिन्न-भिन्न प्राणी अपनी जीभ बनावट के अनुसार उसका स्वाद अनुभव करते हैं । कच्चा माँस मनुष्य के लिए अरुचिकर होता है यह इसी को माँसभोजी पशु बड़ी रुचिपूर्वक खाते हैं । मलीन वस्तुओं को मनुष्य की जीभ सहज स्वीकार नहीं कर सकती पर शूअर को उनमें प्रिय स्वाद की अनुभूति होती है । मुँह में छाले हो जाने पर बुखार या अपच रहने पर अथवा 'गुड़मार बूटी' खाकर रसना मूर्छित कर देने पर वस्तु के स्वाद का अनुभव नहीं होता । इस अधूरी जानकारी वाली जिह्वा इन्द्रिय को सत्य की साक्षी के रूप में कैसे प्रामाणिक माना जाय ?

प्रख्यात दार्शनिक फारावी का कथन है प्रत्येक वस्तु सत्ता स्वरूप है । हर पदार्थ के पीछे एक गति ही नहीं चेतना भी है । यह गति और चेतना न केवल पदार्थों में वरन् प्राण धारियों में भी काम करती है । फिर जड़ चेतन से संयुक्त उस विशाल ब्रह्म के पीछे सत्ता क्यों न होगी ? इस सम्भावना को अनुमान और प्रमाण दोनों से जाना जा सकता है । इसके अतिरिक्त परमात्मा को प्रमाणित करने के लिए और क्या सबूत चाहिए ?

अपनी-अपनी दुनिया

दुनिया वैसी ही नहीं—जैसी कि हम उसे देखते हैं । सच तो यह है कि संसार के समस्त पदार्थ कुछ विशेष प्रकार के परमाणुओं की भागती-दौड़ती हलचल मात्र है । हमारी आँखों की संरचना और मस्तिष्क का क्रिया-कलाप जिस स्तर का होता है, उसी प्रकार की वस्तुओं की अनुभूति होती है ।

हमारी आँखें जैसा कुछ देखती हैं, आवश्यक नहीं दूसरों को भी वैसा ही दीखे । दृष्टि के मन्द, तीव्र, रुग्ण, निरोग होने की दशा में दृश्य बदल जाते हैं । एक को सामने का दृश्य एक प्रकार का दीखता है तो दूसरे को दूसरी तरह का । यही बात स्वाद के सम्बन्ध में है । रोगी के मुँह का जायका खराब होने के कारण हर वस्तु कड़वी लगती है । पेट भरा होने या अपच रहने पर स्वादिष्ट वस्तु का भी स्वाद बिगड़ जाता है । बात यहीं समाप्त नहीं हो जाती, हर मनुष्य के स्रावों में कुछ न कुछ रासायनिक अन्तर रहता है जिसके कारण एक ही खाद्य पदार्थ का स्वाद हर व्यक्ति को दूसरे की अपेक्षा कुछ न कुछ भिन्न प्रकार का अनुभव होता है । यों नमक, शक्कर आदि का स्वाद मोटे रूप में खारी या मीठा कहा जा सकता है, पर यदि गम्भीर निरीक्षण किया जाय तो प्रतीत होगा कि इस खारीपन और मिठास के इतने भेद प्रभेद हैं जितने कि मनुष्य । किसी का स्वाद किसी से पूर्णतया नहीं मिलता, कुछ न कुछ भिन्नता रहती है । यही बात आँखों के सम्बन्ध में है आँखों की संरचना और मस्तिष्क की बनावट में जो अन्तर पाया जाता है उसी के कारण एक मनुष्य दूसरे की तुलना में कुछ न कुछ भिन्नता के साथ ही वस्तुओं तथा घटनाओं को देखता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मनुष्यों और पक्षियों की आँखों की सूक्ष्म बनावट में एवं मस्तिष्कीय संरचना में काफी अन्तर है इसलिए वे वस्तुओं को उसी तरह नहीं देखते जैसे कि हम देखते हैं । उन्हें हमारी अपेक्षा भिन्न तरह के रंग दिखाई पड़ते हैं ।

रूस की पशु प्रयोगशाला ने बताया है कि बैल को लाल रंग नहीं दीखता, उनके लिए सफेद और लाल रंग एक ही स्तर के होते हैं । इसी तरह मधु-मक्खियों को भी लाल और सफेद रंग का अन्तर विदित नहीं होता । जुगनू सरीखे कीट पतंग एक अतिरिक्त रंग 'अल्ट्रावायलेट' भी देखते हैं जो मनुष्यों की आँखें देख सकने में असमर्थ हैं । पक्षियों को लाल, नीला, पीला, और हरा यह चार रंग ही दीखते हैं । हमारी तरह वे न तो सात रंग देखते हैं और न उनके भेद उपभेदों से ही परिचित होते हैं ।

ठीक इसी प्रकार हरी घास की हरीतिमा सबको एक ही स्तर की दिखाई नहीं पड़ेगी । किन्तु हमारी भाषा का अभी इतना विस्तार नहीं हुआ कि इस माध्यम से हर व्यक्ति को जैसा सूक्ष्म अन्तर उस हरे रंग के बीच दिखाई पड़ता है उसका विवरण बताया जा सके । यदि अन्तर प्रत्युत्तर की गहराई में जाया जाय तो स्वाद और रंग के अन्तर बढ़ते ही चले जायेंगे और अन्ततः यह मानना पड़ेगा कि जिस तरह हर मनुष्य की आवाज, शक्ल और प्रकृति में अन्तर होता है । उसी प्रकार रंगों की अनुभूति में भी अन्तर रहता है । स्वाद के सम्बन्ध में भी यही बात है । गन्ध में भी यही अन्तर रहेगा । सुनने और छूने में भी हर व्यक्ति को दूसरे से भिन्न प्रकार का अनुभव होता है । यह भिन्नता बहुत ही सूक्ष्म स्तर की होती है, पर होती अवश्य है ।

सच तो यह है कि स्वाद की तरह रंगों की अनुभूति में भी हर मनुष्य का अनुभव एक-दूसरे से पूरी तरह नहीं मिलता और उसमें अन्तर होता है । यह अन्तर इतना सूक्ष्म होता है कि उसका वर्णन हमारी शब्दावली ठीक तरह से नहीं कर सकती । एक वस्तु की मिठास एक व्यक्ति को जैसी अनुभव होती है, दूसरे को उसकी अनुभूति जैसी होगी उसमें अन्तर रहेगा और अन्तर इतना हल्का है कि सभी लोग गन्ने को 'मीठा' कह सकते हैं, पर इस मिठास को किसने किस तरह के स्तर का अनुभव किया इसकी कोई सूक्ष्म परीक्षा व्यवस्था हो तो सहज ही यह कहा जा सकता है कि एक ने दूसरे से काफी अन्तर वाली मिठास चखी है । इसका कारण मुख में रहने वाले रासायनिक द्रवों की संरचना एवं मात्रा में अन्तर होना होता है ।

हमारी आँखें जिस वस्तु का जो रंग देखती हैं क्या वस्तुतः वह उसी रंग की है ? हमारी आँखों को जिस वस्तु का जो रंग दीखता है क्या अन्य जीवों को भी वैसा ही दीखता है ? इन दोनों प्रश्नों का उत्तर बेखटके 'नहीं' दिया जा सकता है ।

तथ्य यह है कि वस्तुतः किसी पदार्थ का कोई रंग नहीं है । अणुओं की विशेष प्रकार की संरचना ही सघन होकर विभिन्न प्रकार की वस्तुओं जैसी बनती है । अणुओं का कोई रंग नहीं । फिर रंगीनी क्या है ?

वस्तुएँ सूर्य की केवल सफेद किरणों को आत्मसात करती हैं और उन किरणों के किसी एक रंग को प्रतिबन्धित करती हैं । पौधों की पत्तियाँ हरे रंग की इसलिए दीखती हैं कि वे सूर्य किरणों का हरा रंग पचा नहीं पातीं और उसको उल्टी कर देती हैं । पत्तियों द्वारा किरणों का हरा रंग वापस फेंक देना यही है उनका हरा रंग दिखाई पड़ना ।

तत्व ज्ञानियों का यह कथन एक दृष्टि से सर्वथा सत्य है कि—"हर मनुष्य की अपनी दुनिया है । वह उसकी अपनी बनाई हुई है और उसी में रमण करता है । दुनिया वस्तुतः कैसी है ? इस प्रश्न का एक ही उत्तर हो सकता है कि वह जड़ परमाणुओं की नीरस और निर्मम हलचल मात्र है । यहाँ अणुओं की धूल बिखरी पड़ी है और वह किन्हीं प्रवाहों में बहती हुई इधर-उधर भगदड़ करती रहती है । इसके अतिरिक्त यहाँ ऐसा कुछ नहीं है जिसे स्वादिष्ट, अस्वादिष्ट या रूपवान या कुरूप कहा जा सके । हमें नीम की पत्ती कड़वी लगती है पर ऊँट उन्हें रुचिपूर्वक खाता है । सम्भव है उसे वे पत्तियाँ बिस्कुट या मिठाई की तरह मधुर लगती हों । वस्तुतः कोई वस्तु न मधुर है न कड़वी हमारी अपनी संरचना ही अमुक वस्तुओं के साथ तालमेल बिठाने पर जैसी कुछ उल्टी-पुल्टी प्रतिक्रिया उत्पन्न करती है उसी आधार पर हम उसका रंग, स्वाद आदि निर्धारण करते हैं ।

यही बात प्रिय अथवा अप्रिय के सम्बन्ध में लागू होती है । अपने और बिराने के सम्बन्ध में भी अपनी ही दृष्टि और अपनी ही मान्यता काम करती है । वस्तुतः न कोई अपना है न बिराना । इस दुनिया के आँगन में अगणित बालक खेलते हैं । इनमें से कभी कोई किसी के साथ हो लेता है, कभी प्रतिपक्षी का खेल खेलता है । इन क्षणिक संयोगों और संवेगों को बालबुद्धि जब बहुत अधिक महत्त्व देने लगती है तो प्रतीत होता है कि कुछ बहुत बड़ी अनुकूलता-प्रतिकूलता उत्पन्न हो गई है । हर्ष शोक के आवेशों में घटनाक्रम उतना उत्तरदायी नहीं होता जितना कि अपना मनःस्तर स्वयं सोचने का दृष्टिकोण । सन्त और चोर के—ज्ञानी और अज्ञानी के—दृष्टिकोण में एक ही स्थिति के सम्बन्ध में जो जमीन आसमान जैसा अन्तर रहता है उसका कारण पृथक-पृथक मनःस्थिति ही है । घटनाक्रम का उतना श्रेय या दोष नहीं ।

संसार के स्वरूप निर्धारण में उन्हें जानने समझने में पाँच ज्ञानेन्द्रियों की भाँति ही यह मनःसंस्थान के चार चेतना केन्द्र भी काम करते हैं । अतएव उन्हें भी अनुभूति उपकरणों में ही गिना गया है । हमारा समस्त ज्ञान इन्हीं उपकरणों के आधार पर टिका हुआ है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मनुष्यों की भिन्न मनःस्थिति के कारण एक ही तथ्य के सम्बन्ध में परस्पर विरोधी मान्यताएँ एवं रुचियाँ होती हैं । यदि यथार्थता एक ही होती तो सबको एक ही तरह के अनुभव होते । एक व्यक्ति अपराधों में संलग्न होता है, दूसरा परमार्थ परोपकार में । एक को भोग प्रिय है, दूसरे को त्याग । एक को प्रदर्शन में रुचि है, दूसरे को सादगी में । एक विलास के साधन जुटा रहा है, दूसरा त्याग पथ पर बढ़ रहा है । इन भिन्नताओं से यही सिद्ध होता है कि वास्तविक सुख-दुःख, हानि-लाभ कहाँ है किसमें है इसका निर्णय किसी सार्वभौम कसौटी पर नहीं मनःसंस्थान की स्थिति के आधार पर दृष्टिकोण के अनुरूप ही किया जाता है । यह सार्वभौम सत्य यदि प्राप्त हो गया होता तो संसार में मतभेदों की कोई गुंजाइश न रहती । मनःसंस्थान जो अनुभव कराता है उसमें भी इन्द्रिय ज्ञान से कम नहीं वरन् अधिक ही भ्रांति भरी पड़ी हैं ।

सुख और दुःख की अनुभूति सापेक्ष है । दूसरे की तुलना करके ही स्थिति के भले-बुरे का अनुभव किया जाता है । कोई मध्य स्थिति का व्यक्ति अमीर की तुलना में गरीब है, किन्तु महादरिद्र की तुलना में वह भी अमीर है । ज्वर पीड़ित व्यक्ति स्वस्थ मनुष्य की तुलना में दुःखी है पर केन्सर ग्रस्त की तुलना में सुखी । शरीर पीड़ा की कुछ अनुभूतियों को छोड़कर शेष ९० प्रतिशत दुःख और सुख सापेक्ष होते हैं । उसी स्थिति में एक व्यक्ति अपने को सुखी अनुभव कर सकता है और दूसरा दुःखी । इन विभिन्न निष्कर्षों के आधार पर सत्य को पहचानना कठिन है ।

संसार पदार्थों से बना है । पदार्थ अणुओं से बने हैं । अणु परमाणुओं से, परमाणु इलेक्ट्रॉन, प्रोटॉन आदि विखण्डों से और वे विखण्ड तरंगों का घनीभूत रूप हैं । विज्ञान बताता है कि यह जगत तरंगों का परिणाम है, तरंग मय है, तरंग ही है । शब्द, रूप, रस, गन्ध, स्पर्श की तन्मात्राएँ और विचार विवेचना, अभिव्यक्ति, अनुभूति, अभिव्यंजना आदि के पीछे केवल तरंगें काम करती हैं । यहाँ तरंगों के अतिरिक्त और कुछ नहीं है ।

प्रकृति में परम सत्ता का निरन्तर संयोग मिलन, संस्फुरण, आदान-प्रदान, आकर्षण-विकर्षण ही तरंगें बनकर गतिशील रहता है और वह गति ही पदार्थ बनकर सामने आती रहती है । जो दीखता है उसके मूल में केवल तरंग स्फुरणा के अतिरिक्त और कुछ नहीं है । जो प्रिय-अप्रिय है उसमें आत्मानुभूति की मात्रा की घट-बढ़ की उथल-पुथल के अतिरिक्त और कहीं कुछ नहीं है । जड़ चेतन के समस्त परमाणु एक क्रमबद्ध प्रक्रिया के अनुरूप एक दिशा में चलते जा रहे हैं । उस प्रवाह का कोई चाहे तो समुद्र तट पर बैठकर उसकी हिलोरों का आनन्द ले सकता है । भ्रमग्रस्त हर नई लहर के आने का लाभ और जाने की हानि समझता हुआ हँसने-रोने का प्रलाप कर सकता है । नियति का क्रम अपने ढंग से चलेगा, किसी के सोचने का तरीका क्या है, इसकी उसे परवाह नहीं । हाथी अपनी राह चलेगा ही कुत्ते उसका स्वागत करें या रोष दिखायें उनकी मर्जी । प्रकृति की स्वसंचालित व्याख्या हाथी की तरह ही चलेगी यहाँ हर वस्तु का रूप बदलेगा । आज का सृजन, संयोग कल विनाश एवं वियोग का रूप धारण करेगा । अपरिवर्तनवादी आकांक्षा अधूरी ही रहेगी । यहाँ स्थिरता के लिए कोई स्थान नहीं । जो संग्रह एवं स्थायित्व के अभिलाषी हैं उन्हें निराशा भरे पश्चाताप के अतिरिक्त और क्या हाथ लगेगा ?

दुःखों का कारण

वस्तुस्थिति को न जानने के कारण ही विविध भाँति के दुःख संताप उत्पन्न हुए । महर्षि वशिष्ठ ने भगवान राम को दुःखों का कारण अज्ञान बताते हुए उससे मुक्त होने का उपाय ज्ञान साधना ही बताया है ।

योगवाशिष्ठ का वचन है—

"आयधो व्याधयश्चैव
द्वय दुःखस्य कारणम् ।
तन्निवृत्तिः सुखं विद्यात्
तत्क्षयो मोक्ष उच्यते ॥"

अर्थात्—"आधि, व्याधि अर्थात् मानसिक और शारीरिक । यह दो ही प्रकार के दुःख इस संसार में हैं । इनकी निवृत्ति विद्या अर्थात् ज्ञान द्वारा ही होती है । इस दुःख निवृत्ति का नाम ही मोक्ष है ।"

इस प्रकार इस न्याय से विदित होता है कि यदि मनुष्य जीवन में दुःखों का तिरोधान हो जाय तो वह मोक्ष की स्थिति में अवस्थित हो जाय । दुःखों का अत्यन्त अभाव ही आनन्द भी है । अर्थात् मोक्ष और आनन्द एक-दूसरे के पर्याय हैं । इस प्रकार यदि जीवन के दुःखों को नष्ट किया जा सके तो आनन्द वाची मोक्ष को प्राप्त किया जा सकता है । बहुत बार देखा जाता है कि लोग जीवन में अनेक बार आनन्द प्राप्त करते हैं । वे हँसते, बोलते, खाते, खेलते, मनोरंजन करते, नृत्य-संगीत और काव्य-कलाओं का आनन्द लेते, उत्सव-समारोह और पर्व मनाते, प्रेम पाते और प्रदान करते, गोष्ठी और सत्संगों में मोद-विनोद करते और न जाने इसी प्रकार से आमोद-प्रमोद पाते और प्रसन्न बना करते हैं, तो क्या उनकी इस स्थिति को मोक्ष कहा जा सकता है ?

नहीं, मनुष्य की इस स्थिति को मोक्ष नहीं कहा जा सकता । मोक्ष का आनन्द स्थायी, स्थिर, अक्षय, समान अहेतुक और निःशेष हुआ करता है । वह न कहीं से आता और न कहीं जाता है । न किसी कारण से उत्पन्न होता है और न किसी कारण से नष्ट होता है । वह आत्म-भूत और अहेतुक होता है । वह सम्पूर्ण रूप में मिलता है सम्पूर्ण रूप में अनुभूत होता है सम्पूर्ण रूप में सदा-सर्वदा ही बना रहता है । वह सार्वदेशिक, सर्वव्यापक और सर्वस्व सहित ही होता है । मोक्ष का आनन्द पाने पर न तो कोई अंश शेष रह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जाता है और न उसके आगे किसी प्रकार के आनन्द की इच्छा शेष रह जाती है । वह प्रकाम, पूर्ण और परमावधिक ही होता है ।

पूर्वोक्त लौकिक आनन्दों में यह विशेषताएँ नहीं होतीं । उनकी प्राप्ति के लिए कारण और साधन की आवश्यकता होती है । वह किसी हेतु से उत्पन्न होता है और हेतु के मिट जाने पर नष्ट हो जाता है । इतना ही क्यों—यदि एक बार उसका आधार बना भी रहे तो भी उस आनन्द में जीर्णता, क्षीणता, प्राचीनता और अरुचिता आ जाती है । लौकिक आनन्दों की परि-समाप्ति दुःख में ही होती है । आज जो किसी कारण से प्रसन्न है, आनन्दित है वह कल किसी कारण से दुःखी होने लगता है । लौकिक आनन्द की कितनी ही मात्रा क्यों न मिलती जाय, तथापि और अधिक पाने की प्यास बनी रहती है । उससे न तृप्ति मिलती है न सन्तोष । जिस अनुभूति में अतृप्ति, असन्तोष और तृष्णा बनी रहे वह आनन्द कैसा ? लौकिक आनन्द के कितने ही सघन वातावरण में क्यों न बैठे हों एक छोटा-सा अप्रिय समाचार या छोटी-सी दुःखद बात उसे समूल नष्ट कर देती है । तब न किसी के मुख पर हँसी रह जाती है और न हृदय में पुलक ! लौकिक आनन्द और मोक्षानन्द की परस्पर तुलना ही नहीं की जा सकती ।

लौकिक आनन्दों में इस असफलता का कारण यह होता है कि वे असत्य एवं भ्रामक होते हैं । उनकी अनुभूति, प्रवंचना अथवा मृग-तृष्णा के समान ही होती है । इस असत्यता का दोष ही लौकिक आनन्द को निकृष्ट एवं अग्राह्य बना देते हैं । आनन्द केवल आत्मिक आनन्द ही होता है । मोक्ष का आनन्द ही वास्तविक तथा अन्वेषणीय आनन्द है । लौकिक आनन्दों की अग्राह्यता का प्रतिपादन इसीलिए किया गया है कि जो व्यक्ति उसके झूठे प्रवंचनों में फँस जाता है, उन्हें पकड़ने, पाने के लिए दौड़ता रहता है, उनको स्थिर और स्थायी बनाने में लगता है, वह अपना सारा जीवन इसी मायाजाल में उलझकर खो देता है । भ्रम में पड़े रहने के कारण उसे वास्तविकता का ध्यान ही नहीं आता । लौकिक आनन्दों के फेर में पड़कर जिसे वास्तविक आनन्द का ध्यान ही न आयेगा वह उसको पाने के लिए प्रयत्नशील भी क्यों होगा ? जिस हिरण को मरुमरीचिका जल भ्रम में भुला लेती है तन-मन से उसी को पकड़ने की पीछे पड़ा रहता है । अब पाया, अब पाया करता हुआ वह निःसार दुराशा का यन्त्र बना भटकता रहता है और इस प्रकार वास्तविक जल की खोज से वंचित हो जाता है । परिणाम यह होता है कि भटक-भटक कर प्यासा ही मर जाता है । जिस जीवन में वह पानी और परितृप्ति दोनों को पाकर कृतार्थ हो सकता था वह जीवन यों ही चला जाता है, नष्ट हो जाता है । यही हाल लौकिक आनन्दवादियों का होता है । जिस जीवन में वे मोक्ष और उसका वास्तविक सुख प्राप्त कर सकते हैं वे उसे माया-छाया और भ्रामक सुख की मरीचिका में नष्ट कर अपनी अनन्त हानि कर लेते हैं । इसीलिए लौकिक सुखों को प्रबलता के साथ अग्राह्य एवं गर्हित बताया गया है । वास्तविक आनन्द लौकिक लिप्साओं और सांसारिक भोग-विलासों में नहीं है वह मोक्ष और मोक्ष की स्थिति में है । उसी को पाने का प्रयत्न करना चाहिए, वही मानव जीवन का लक्ष्य है, उसी में शान्ति और तृप्ति मिलेगी ।

इस प्रकार स्पष्ट है कि दुःख तो दुःख ही है सांसारिक सुख भी दुःख का एक स्वरूप है । इनकी निवृत्ति से ही सच्चे सुख की प्राप्ति सम्भव है, किन्तु इनकी निवृत्ति का उपाय क्या है ? इसके लिए पुनः योगवाशिष्ठ में कहा गया है—

"ज्ञानान्निर्दुःखतामेति
ज्ञानादज्ञान संक्षयः ।
ज्ञानादेव परासिद्धि
र्नान्यस्याद्राम वस्तुतः ॥"

अर्थात्—"हे राम ! ज्ञान से ही दुःख दूर होते हैं, ज्ञान से अज्ञान का निवारण होता है, ज्ञान से ही परम सिद्धि होती है और किसी उपाय से नहीं ।"

और भी आगे बताया गया है—

"प्रज्ञां विज्ञात विज्ञेयं
सम्यग् दर्शन माधयः ।
न दहन्ति वनं वर्षा
सिक्तमग्निशिखा इव ॥"

अर्थात्—"जिसने जानने योग्य को जान लिया है और विवेक दृष्टि प्राप्त कर ली है, उस ज्ञानी को दुःख उसी प्रकार त्रासक नहीं होते जिस प्रकार वर्षा से भीगे जंगल को अग्नि शिखा नहीं जला पाती ।"

तत्वज्ञान क्या है

अब यहाँ पर ज्ञान का स्वरूप जानने से पूर्व यह जान लेना आवश्यक है कि आखिर दुःख की उत्पत्ति होती किन कारणों से ? वैसे तो जीवात्मा अपने मूल रूप में आनन्दमय है । तब अवश्य ही कोई कारण ऐसा होना चाहिए जो उसके लिए दुःख की सृष्टि करता है । उसको भी योगवाशिष्ठ में इस प्रकार बताया गया है—

"देह दुःख विदुर्व्याधि
माध्याख्यं मानसामयम् ।
मौर्ख्य मूले हते विद्या
तत्वज्ञाने परीक्षयः ॥"

अर्थात्—"शारीरिक दुःखों को व्याधि और मानसिक दुःखों को आधि कहते हैं । यह दोनों मौर्ख्य अर्थात् अज्ञान से ही उत्पन्न होती हैं और ज्ञान से नष्ट होती हैं ।"

संसार के सारे दुःखों का एकमात्र हेतु अविद्या अथवा अज्ञान ही है । जिस प्रकार प्रकाश का अभाव अन्धकार है और अन्धकार का अभाव प्रकाश होता है, उसी प्रकार ज्ञान का अभाव अज्ञान और अज्ञान का ज्ञान होना स्वाभाविक ही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है और जिस प्रकार ज्ञान का परिणाम सुख-शान्ति और आनन्द है उसी प्रकार अज्ञान का फल दुःख, अशान्ति और शोक-सन्ताप होना ही चाहिए ।

यह युग-युग का अनुभूत तथा अन्वेदित सत्य है कि दुःखों की उत्पत्ति अज्ञान से ही होती है और संसार के सारे विद्वान, चिन्तक एवं मनीषी जन इस बात पर एकमत पाये जाते हैं । इस प्रकार सार्वभौमिक और सार्वजनिक रूप से प्रतिपादित तथ्य में सन्देह की गुंजाइश रह ही नहीं जाती, इस प्रकार अपना-अपना मत देते हुए विद्वानों ने कहा है, चाणक्य ने लिखा—"अज्ञान के समान मनुष्य का और कोई दूसरा शत्रु नहीं है ।" विश्वविख्यात दार्शनिक प्लेटो ने कहा है—"अज्ञानी रहने से जन्म न लेना ही अच्छा है, क्योंकि अज्ञान ही समस्त विपत्तियों का मूल है ।" शेक्सपियर ने लिखा है—"अज्ञान ही अन्धकार है ।"

जीवन की समस्त विकृतियों, अनुभव होने वाले दुःखों, उलझनों और अशान्ति आदि का मूल कारण मनुष्य का अपना अज्ञान ही होता है । यही मनुष्य का परम शत्रु है । अज्ञान के कारण ही मनुष्य भी अन्य जीव-जन्तुओं की तरह अनेक दृष्टियों से हीन अवस्था में ही पड़ा रहता है । ज्ञान के अभाव में जिनका विवेक मन्द ही बना रहता है उनके जीवन के अन्धकार में भटकते हुए तरह-तरह के त्रास आते रहते हैं । अज्ञान के कारण ही मनुष्य को वास्तविक कर्तव्यों की जानकारी नहीं हो पाती इसलिए वह गलत मार्गों पर भटक जाता है और अनुचित कर्म करता हुआ दुःख का भागी बनता है । इसलिए दुःखों से निवृत्ति पाने के लिए यदि उनका कारण अज्ञान को मिटा दिया जाय तो निश्चय ही मनुष्य सुख का वास्तविक अधिकारी बन सकता है ।

अज्ञान का निवारण ज्ञान द्वारा ही हो सकता है । शीत उसकी विपरीत वस्तु आग द्वारा ही दूर होता है । अन्धकार की परिसमाप्ति प्रकाश द्वारा ही सम्भव है । इसलिए ज्ञान प्राप्ति का जो भी उपाय सम्भव हो उसे करते ही रहना चाहिए ।

ज्ञान का सच्चा स्वरूप क्या है ? केवल कतिपय जानकारियाँ ही ज्ञान नहीं माना जा सकता । सच्चा ज्ञान वह है जिसको पाकर मनुष्य आत्मा परमात्मा का साक्षात्कार कर सके । अपने साथ अपने इस संसार को पहचान सके । उसे सत् और असत् कर्मों की ठीक-ठीक जानकारी रहे और वह जिसकी प्रेरणा से असत् मार्ग को त्याग कर सन्मार्ग पर असंदिग्ध रूप से चल सके । कुछ शिक्षा और दो-चार शिल्पों को ही सीख लेना भर अथवा किन्हीं उलझनों को सुलझा लेने भर की बुद्धि ही ज्ञान नहीं है । ज्ञान वह है जिससे जीवन-मरण, बन्धन-मुक्ति, कर्म-अकर्म और सत्य-असत्य का न केवल निर्णय ही किया जा सके बल्कि गृहणीय को पकड़ा और आग्रह को छोड़ा जा सके, वह ज्ञान आध्यात्मिक ज्ञान ही है ।

अज्ञान की स्थिति में कर्मों का क्रम बिगड़ जाता है । संसार में जितने भी सुख-दुःख आदि द्वन्द्व हैं वे सब कर्मों का फल होता है । अज्ञान द्वारा अपकर्म होना स्वाभाविक ही है और तब उनका दण्ड मनुष्य को भोगना ही पड़ता है । इतना ही क्यों सकाम भाव से किए सत्कर्म सुख के फल रूप में परिपक्व होते हैं और असत्य होने से कुछ ही समय में दुःख रूप में परिवर्तित हो जाते हैं । इसलिए कर्म ही अधिकतर बन्धनों अथवा दुःख को मनुष्य पर आरोपित कराते हैं ।

सुख का केन्द्र और स्रोत आत्मा

किसी की यह धारणा सर्वथा मिथ्या है कि सुख का निवास किन्हीं पदार्थों में है । यदि ऐसा रहा होता तो वे सारे पदार्थ जिन्हें सुखदायक माना जाता है, सबको समान रूप से सुखी और सन्तुष्ट रखते अथवा उन पदार्थों के मिल जाने पर मनुष्य सहज ही सुख सम्पन्न हो जाता, किन्तु ऐसा देखा नहीं जाता । संसार में ऐसे लोगों की कमी नहीं है, जिन्हें संसार के वे सारे पदार्थ प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं, जिन्हें सुख का सराधक माना जाता है, किन्तु ऐसे सम्पन्न व्यक्ति भी असन्तोष, अशान्ति, अतृप्ति अथवा शोक सन्तापों से जलते देखे जाते हैं । उनके उपलब्ध पदार्थ उनका दुःख मिटाने में जरा भी सहायक नहीं हो पाते ।

वास्तविक बात यह है कि संसार के सारे पदार्थ जड़ होते हैं । जड़ तो जड़ ही है । उसमें अपनी कोई क्षमता नहीं होती । न तो जड़ पदार्थ किसी को स्वयं सुख दे सकते हैं और न दुःख । क्योंकि उनमें न तो सुखद तत्व होते हैं और न दुःखद तत्व और न उनमें सक्रियता ही होती है, जिससे वे किसी को अपनी विशेषता से प्रभावित कर सकें । यह मनुष्य का अपना आत्म-तत्व ही होता है, जो उससे सम्बन्ध स्थापित करके उसे सुखद या दुःखद बना लेता है । आत्म तत्व की उन्मुखता ही किसी पदार्थ को किसी के लिए सुखद और किसी के लिए दुःखद बना देती है ।

जिस समय मनुष्य का आत्म-तत्व सुखोन्मुख होकर पदार्थ से सम्बन्ध स्थापित करता है, वह सुखद बन जाता है और जब आत्मतत्व दुःखोन्मुख होकर सम्बन्ध स्थापित करता है, तब वही पदार्थ उसके लिए दुःखद बन जाता है । संसार के सारे पदार्थ जड़ हैं, वे अपनी ओर से न तो किसी को सुख दे सकते हैं और न दुःख । यह मनुष्य का अपना आत्म-तत्व ही होता है, जो सम्बन्धित होकर उनको दुःखदायी अथवा सुखदायी बना देता है । यह धारणा कि सुख की उपलब्धि पदार्थों द्वारा होती है, सर्वथा मिथ्या और अज्ञानपूर्ण है ।

किन्तु खेद है कि मनुष्य अज्ञानवश सुख-दुःख के इस रहस्य पर विश्वास नहीं करते और सत्य की खोज संसार के जड़ पदार्थों में किया करते हैं । पदार्थों को सुख का दाता मानकर उन्हें ही संचय करने में अपना बहुमूल्य जीवन बेकार में गँवा देते हैं । केवल इतना ही नहीं कि वे सुख आत्मा में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नहीं करते बल्कि पदार्थों के चक्कर में फँसकर उनका संचय करने के लिए अकरणीय कार्य तक किया करते हैं । झूठ, फरेब, मक्कारी, भ्रष्टाचार, बेईमानी आदि के अपराध और पाप तक करने में तत्पर रहते हैं । सुख का निवास पदार्थों में नहीं आत्मा में है । उसे खोजने और पाने के लिए पदार्थों की ओर नहीं आत्मा की ओर उन्मुख होना चाहिए ।

पदार्थों का उपभोग इन्द्रियों द्वारा होता है । इन्द्रियों के सक्रिय और सजीव होने से ही किसी रस, सुख अथवा आनन्द की अनुभूति होती है । जब तक मनुष्य सक्षम अथवा युवा बना रहता है, उसकी इन्द्रियाँ सतेज बनी रहती हैं । पदार्थ और विषयों का आनन्द मिलता रहता है, पर जब मनुष्य वृद्ध अथवा अशक्त हो जाता है । उन्हीं पदार्थों में जिनमें पहले विभोर कर देने वाला आनन्द मिलता था, एकदम नीरस और स्वादहीन लगने लगते हैं । उनका सारा सुख न जाने कहाँ विलीन हो जाता है । वास्तविक बात यह है कि अशक्तता की दशा अथवा वृद्धावस्था में इन्द्रियाँ निर्बल तथा अनुभवशीलता से शून्य हो जाती हैं । उनमें किसी पदार्थ का रस लेने की शक्ति नहीं रहती । इन्द्रियों का शैथिल्य ही पदार्थों को नीरस, असुखद तथा निस्सार बना देता है ।

वृद्धावस्था ही क्यों ? बहुत बार यौवनावस्था में भी सुख की अनुभूतियाँ समाप्त हो जाती हैं । इन्द्रियों में कोई रोग लग जाने अथवा उनको चेतनाहीन बना देने वाली कोई घटना घटित हो जाने पर भी उनकी रसानुभूति की शक्ति नष्ट हो जाती है । जैसे रसेन्द्रिय जिह्वा में छाले पड़ जायें तो मनुष्य कितने ही सुस्वाद पदार्थों का सेवन क्यों न करे, उसे उसमें किसी प्रकार का आनन्द न मिलेगा । पाचन क्रिया निर्बल हो जाय तो कोई भी पौष्टिक पदार्थ बेकार हो जायेगा । आँखें विकार युक्त हो जायें तो सुन्दर से सुन्दर दृश्य भी कोई आनन्द नहीं दे पाते । इस प्रकार देख सकते हैं कि सुख पदार्थ में नहीं बल्कि इन्द्रियों की अनुभूति शक्ति में है ।

अब देखना यह है कि इन्द्रियों की शक्ति क्या है ? बहुत बार ऐसे लोग देखने को मिलते हैं, जिनकी आँखें देखने में सुन्दर, स्वच्छ तथा विकारहीन होती हैं, लेकिन उन्हें दिखलाई नहीं पड़ता । परीक्षा करने पर पता चलता है कि आँखों का यन्त्र भी ठीक है । उनमें आने-जाने वाली नस-नाड़ियों की व्यवस्था भी ठीक है । तथापि दिखलाई नहीं देता । इसी प्रकार अन्य इन्द्रियाँ हाथ-पाँव, नाक-कान आदि की भी यही दशा हो जाती है । सब तरफ से सब वस्तुएँ ठीक होने पर भी इन्द्रिय निष्क्रिय अथवा निरनुभूति ही रहती है । इसका अर्थ यह हुआ कि रस की अनुभूति इन्द्रियों की स्थूल बनावट से नहीं होती, बल्कि इससे भिन्न कोई दूसरी वस्तु है, जो रस की अनुभूति कराती है । वह वस्तु क्या है ? वह वस्तु है चेतना, जो सारे शरीर और मन प्राण में ओत-प्रोत रहकर मनुष्य की इन्द्रियों को रसानुभूति की शक्ति प्रदान करती है । इसी सब ओर से शरीर में ओत-प्रोत चेतना को आत्मा कहते हैं । आनन्द अथवा सुख का निवास आत्मा में ही है । उसी की शक्ति से उसकी अनुभूति होती है और वही जीव रूप में उसका अनुभव भी करती है । सुख न पदार्थों में है और न किसी अन्य वस्तु में । वह आत्मा में ही जीवात्मा द्वारा अनुभव किया जाता है ।

मनुष्य की अपनी आत्मा ही सब कुछ है । आत्मा से रहित वह एक मिट्टी का पिण्ड मात्र ही है । शरीर से जब आत्मा का सम्बन्ध समाप्त हो जाता है तो वह मुर्दा हो जाता है । शीघ्र ही उसे बाहर करने और जलाने-दफनाने का प्रबन्ध किया जाता है । संसार के सारे सम्बन्ध आत्मा द्वारा ही सम्बन्धित हैं । जब तक जिसमें आत्मभाव बना रहता है, उसमें प्रेम और सुख आदि की अनुभूति बनी रहती है और जब यह आत्मीयता समाप्त हो जाती है । वही वस्तु या व्यक्ति अपने लिए कुछ भी नहीं रह जाता । किसी को अपना मित्र बड़ा प्रिय लगता है । उससे मिलने पर हार्दिक आनन्द की उपलब्धि होती है । न मिलने से बेचैनी होती है, किन्तु जब किन्हीं कारणोंवश उससे मैत्री भाव समाप्त हो जाता है अथवा आत्मीयता नहीं रहती तो वह मित्र अपने लिए, एक सामान्य व्यक्ति बन जाता है । उसके मिलने न मिलने में किसी प्रकार का हर्ष विषाद नहीं होता । बहुत बार तो उससे इतनी विमुखता हो जाती है कि मिलने अथवा दिखने पर अन्यथा अनुभव होता है । प्रेम, सुख और आनन्द की सारी अनुभूतियाँ आत्मा से ही सम्बन्धित होती हैं, किसी वस्तु, विषय, व्यक्ति अथवा पदार्थ से नहीं । सुख का संसार आत्मा में ही बसा हुआ है । उसे उसमें खोजना चाहिए । सांसारिक विषयों अथवा वस्तुओं में भटकते रहने से वही दशा और परिणाम सामने आयेगा, जो मरीचिका से भूले मृग के सामने आता है ।

मनुष्य की अपनी विशेषता ही उसके लिए उपयोगिता तथा स्नेह सौजन्य उपार्जित करती है । विशेषता समाप्त होते ही मनुष्य का मूल्य भी समाप्त हो जाता है और तब वह न तो किसी के लिए आकर्षक रह जाता है और न प्रिय ! इस बात को समझने के लिए सबसे अधिक निकट रहने वाले माँ और बच्चे को ले लीजिए । माता से जब तक बच्चा दूध और जीवन रस पाता रहता है, उसके शरीर से अवयव की तरह चिपटा रहता है । उसे माँ से असीम प्रेम होता है । जरा देर को भी वह माँ से अलग नहीं हो सकता । माँ उसे छोड़कर कहीं गई नहीं कि वह रोने लगता है, किन्तु जब इसी बालक को अपनी सुरक्षा तथा जीवन के लिए माँ की गोद और दूध की आवश्यकता नहीं रहती अथवा रोग आदि के कारण माँ की यह विशेषता समाप्त हो जाती है तो बच्चा उसकी जरा भी परवाह नहीं करता । वह अलग भी रहने लगता है और स्तन के स्थान पर शीशी से ही बहल जाता है । मनुष्य की विशेषताएँ ही किसी के लिए स्नेह, सौजन्य अथवा प्रेम आदि की सुखदायक स्थितियाँ उत्पन्न करती हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

किन्तु मनुष्य की इस विशेषता का स्रोत क्या है । इसका स्रोत भी आत्मा के सिवाय और कुछ नहीं है । बताया जा चुका है कि आत्मा से असम्बन्धित मनुष्य शव से अधिक कुछ नहीं होता । जो शव है, मुर्दा है अथवा अचेतन या जड़ है, उनमें किसी प्रकार की प्रेमोत्पादक विशेषता के होने का प्रश्न ही नहीं उठता । मनुष्य के मन, प्राण और शरीर तीनों का संचालन, नियन्त्रण तथा पोषण आत्मा की सूक्ष्म सत्ता द्वारा ही होता है । आत्मा और इन तीनों के बीच जरा-सा व्यवधान आते ही सारी व्यवस्था बिगड़ जाती है । सुन्दर, सुगठित और स्वस्थ शरीर की दुर्दशा हो जाती है । प्राणों का स्पन्दन तिरोहित होने लगता है और मन मतवाला होकर मनुष्य को उन्मत्त और पागल बना देता है ।

ऐसी भयावह स्थिति में संसार का कोई व्यक्ति, कोई आत्मीय और कोई स्वजन सम्बन्धी न तो प्रेम कर सकता है और न स्नेह सौजन्य के सुखद भाव ही प्रदान कर सकता है । यह केवल मनुष्य की अपनी आत्मा ही है, जो उसका सच्चा मित्र, सगा-सम्बन्धी और वास्तविक शक्ति है । इसी के कारण मनुष्य गुणों और विशेषताओं का स्वामी बनकर अपना मूल्य बढ़ाता और पाता है । जीवन में सुख, सौख्य के उत्पादन, अभिवृद्धि और रक्षा के लिए मनुष्य को चाहिए कि वह आत्मा की ही शरण रहे । उसे ही अपना माने, उससे ही प्रेम करे और उसे ही खोजने पाने में अपने जीवन की सार्थकता समझे ।

सुख का निवास किसी व्यक्ति, विषय अथवा पदार्थ में नहीं है । उसका निवास आत्मा में ही है । संसार के सारे पदार्थ जड़ और प्रभाव हीन हैं । किसी को सुख-दुःख देने की उनमें अपनी क्षमता नहीं होती । पदार्थों अथवा विषयों में सुख-दुःख का आभास उनके प्रति आत्म-भाव के कारण ही होता है । आत्म-भाव समाप्त हो जाने पर वह अनुभूति भी समाप्त हो जाती है । हमारी आत्मा ही विभिन्न पदार्थों पर अपना प्रभाव डाल कर उन्हें आकर्षक तथा सुखद बनाती है । अन्यथा संसार के सारे विषय, सारी वस्तुएँ, सारे पदार्थ और सारे भोग नीरस, निःस्सार निरुपयोगी हैं । जड़ होने से सभी कुछ कुरूप तथा अग्राह्य है ।

जिस पदार्थ के साथ जितने अंशों में अपनी आत्मा घुली-मिली रहती है, उतने ही अंशों में वह पदार्थ प्रिय, सुखदायी और ग्रहणीय बना रहता है और आत्मा का सम्बन्ध जिस पदार्थ से जितना कम होता जाता है, वह उतना ही अपने लिए कुरूप और अप्रिय बनता जाता है । आनन्द और प्रियता का सम्बन्ध पदार्थों से नहीं स्वयं आत्मा से ही होता है । अतएव, आत्मा को ही प्यार करना चाहिए, उसे ही तेजस्वी और प्रभावशील बनाना चाहिए, जिससे हमारा सम्बन्ध उसी से दृढ़ हो और उसके उपलक्ष से ही संसार में प्रेम और सुख दे सकें । हमारी अपनी आत्मा ही ज्ञान-विज्ञान का केन्द्र है । सुख-शान्ति का मूल आधार है । उन्नति और समृद्धि का बीज उसी में छिपा है, स्वर्ग और मुक्ति का आधार वही है । कल्पवृक्ष बाहर नहीं अपनी आत्मा में ही अवस्थित है, आत्मा में ही सब कुछ है और आत्मा स्वयं ही सब कुछ है । उसे ही सर्वस्व और सारे सुखों का मूल और शान्ति का स्रोत मान कर उसकी उपासना करनी चाहिए । जिसने आत्मा को अपना बना लिया, उसने मानो संसार को अपना बना लिया । जिसने आत्मा को देख लिया, उसने सब कुछ देख लिया और जिसने आत्मा को प्राप्त कर लिया, उसने निश्चय ही सारे सुख, सारे सौख्य और सारे रस, आनन्द एक साथ एक स्थान पर सदा के लिए पा लिए ।

आत्मा में केन्द्रित प्रियता को वस्तुओं में खोजना अबुद्धिमत्ता ही है । जड़ पदार्थों में न कुछ सुखद है और न दुःखद । इस तथ्य की थोड़ी-सी खोज-बीन करने पर सहज ही जाना जा सकता है और सुख के लिए, प्रिय पात्रता के लिए कस्तूरी मृग की तरह बाहर मारे-मारे फिरने की अपेक्षा अन्तर्मुखी हुआ जा सकता है । तिनके के पीछे ताड़ छिपा होने के इसी आश्चर्य को माया कहा जाता है । माया और कुछ नहीं केवल वह अज्ञान है जो बाहरी-मोटी-सामने की-तात्कालिक बातों को ही देखता है और कुछ गहराई में उतर कर वस्तुस्थिति समझने का कष्ट उठाने के लिए तत्पर नहीं होता ।

तत्वदर्शी ऋषियों ने अनन्त सुख-शान्ति की ओर अंगुलि निर्देश करते हुए कहा है—'अन्वेषक प्रकाश को भीतर की ओर मोड़ दो ।' कार्लाइल प्रभृति पाश्चात्य दार्शनिक भी यही कहते रहे हैं—'टर्न द सर्च लाइट इन वार्डस्' ।

वस्तुओं और व्यक्तियों में कोई आकर्षण नहीं है । अपनी आत्मीयता जिस किसी से भी जुड़ जाती है वही प्रिय लगने लगता है यह तथ्य कितना स्पष्ट किन्तु कितना गुप्त है, लोग अमुक व्यक्ति या अमुक वस्तु को रुचिर मधुर मानते हैं और उसे पाने, लिपटाने के लिए आकुल-व्याकुल रहते हैं । प्राप्त होने पर वह आकुलता जैसे ही घटती है वैसे ही वह आकर्षण तिरोहित हो जाता है । किसी कारण यदि ममत्व हट या घट जाय तो वही वस्तु जो कल तक अत्यधिक प्रिय प्रतीत होती थी और जिसके बिना सब कुछ नीरस लगता था । बेकार और निकम्मी लगने लगेगी । वस्तु या व्यक्ति वही, किन्तु प्रियता में आश्चर्यजनक परिवर्तन बहुधा होता रहता है । इसका कारण एक मात्र यही है कि उधर से ममता का आकर्षण कम हो गया ।

यह तथ्य यदि समझ लिया जाय तो ममता का आरोपण करके किसी भी वस्तु या व्यक्ति को कितने ही समय तक प्रिय पात्र बनाये रखा जा सकता है । यदि यह आरोपण क्षेत्र बड़ा बनाते चलें तो अपने प्रिय पात्रों की मात्रा एवं संख्या आश्चर्यजनक रीति से बढ़ती चली जायेगी और जिधर भी दृष्टि डाली जाय उधर ही रुचिर मधुर बिखरा पड़ा दिखाई देगा और जीवन क्रम में आशाजनक आनन्द, उल्लास भर जायेगा । आत्मविद्या के इस रहस्य को जानकर भी लोक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अनजान बने रहते हैं । आनन्द की खोज में, प्रिय पात्रों के पीछे मारे-मारे फिरते हैं । यदि इस माया मरीचिका को छोड़ दिया जाय, जिसे प्रियपात्र बनाना हो उसी पर ममता बिखेर दी जाय तो केवल वही व्यक्ति प्रिय पात्र रह जायेंगे जिनकी घनिष्ठता, समीपता, मित्रता, वस्तुतः हितकर है ।

बिछुड़ने एवं खोने पर प्रायः दुःख होता है । यदि समझ लिया जाय कि मिलन की तरह वियोग-जन्म की तरह मृत्यु भी अवश्यम्भावी है तो उसके लिए पहले से ही तैयार रहा जा सकता है । साँस लेते समय भी यह विदित रहता है कि उसे कुछ ही क्षण पश्चात छोड़ना पड़ेगा इसलिए श्वास-प्रश्वास की दोनों क्रियाएँ समान प्रतीत होती हैं । न एक में दुःख होता न दूसरी में सुख । एक का मरण दूसरे का जन्म है । मृत्यु के रुदन के साथ ही किसी घर का जन्मोत्सव बँधा हुआ है । व्यापार में एक को नफा तब होता है जब दूसरे को घाटा पड़ता है । धूप-छाँह की तरह, दिन-रात की तरह, सर्दी-गर्मी की तरह यदि मिलन बिछोह और हानि-लाभ को परस्पर एक-दूसरे के साथ अविच्छिन्न रूप से मानकर चला जाय तो राग-द्वेष एवं हानि लाभ के सामान्य सृष्टि क्रम में न कुछ प्रिय लगे न अप्रिय । हमारा अज्ञान ही है जो अकारण हर्षोन्मत्त एवं शोक संतप्त आवेश के ज्वार-भाटे में उछलता भटकता रहता है । यदि मायाबद्ध अशुभ चिन्तन से छुटकारा मिल जाय और सृष्टि के अनवरत जन्म, वृद्धि, विनाश के अनिवार्य क्रम को समझ लिया जाय तो मनुष्य शान्त, सन्तुलित, स्थिर, सन्तुष्ट एवं सुखी रह सकता है । ऐसी देवोपम मनोभूमि पल-पल में स्वर्गीय जीवन की सुखद सम्वेदनाएँ सम्मुख प्रस्तुत किए रह सकता है । चिन्तन में समाया हुआ माया विकार ही है जो समुद्र तट पर बैठे आज्ञानी बालक के, ज्वार से प्रसन्न और भाटा से अप्रसन्न होने की तरह हमें उद्विग्न बनाये रहता है ।

मल-मूत्र की गठरी के ऊपर प्रकृति ने एक आकर्षक खोल चढ़ाया हुआ है ताकि वह घृणित पिटारा सर्वत्र दुर्गन्ध बिखेरता न फिरे । लोग इस आवरण पर मुग्ध हो जाते हैं, रूप, यौवन पर लट्टू होते हैं । सौन्दर्य की शाश्वत प्यास सुकोमल पुष्प से लेकर बाल सुलभ भोलेपन तक से सर्वत्र सहज ही तृप्ति की जा सकती पर विकारी दृष्टि के साथ जुड़ी हुई कामुक लिप्सा नर-नारियों को बेतरह उद्विग्न करती रहती है और उन्हें न चलने योग्य मार्ग पर चलाती है । मूत्र त्याग के घृणित अंगों की तनिक-सी खुजली न जाने किससे क्या-क्या नहीं करा लेती । यदि मोहान्ध दृष्टि का पर्दा उठ सका होता तो शारीरिक रूप, यौवन की, यौन लिप्सा की मदोन्मत्तता का नशा सहज ही उतर जाता और पंचभूतों से बने जड़-कलेवर के पीछे आत्मा की ज्योति जगमगाती दीखती । कामुकता का स्थान पवित्र प्रेम भावनाओं ने ग्रहण कर लिया होता और नर-नारी के बीच के सम्बन्ध प्रकृति और पुरुष की तरह एक-दूसरे के पूरक बनकर श्रेय साधन में संलग्न रहे होते । आज का नारकीय दाम्पत्य-जीवन तब स्वर्गीय सुषमा बिखेर रहा होता । ऐसे उच्च आदर्शों को आधार मानकर बनाये गए गृहस्थ तब स्वर्ग की प्रतिमूर्ति बनकर धरती को आनन्द, उल्लास से भर रहे होते और नर-रत्नों की पीढ़ियाँ सृजी जातीं । यह पिशाचिनी माया ही है जिसने रूप, सौन्दर्य को परखने का दृष्टि दोष उत्पन्न करके आत्मतत्व को तिरस्कृत और चमड़ी की चमक को गौरव प्रदान किया है ।

अपना स्वरूप, अपना लक्ष्य, अपना कर्तव्य यदि मनुष्य समझ सका होता तो उसका चिन्तन और कर्तृत्व अत्यन्त उच्चकोटि का होता ऐसे नर को नारायण कहा जाता और उसके चरण जहाँ भी पड़ते वहाँ धरती धन्य हो जाती । पर अज्ञान के आवरण को क्या कहा जाय जिसने हमें नर-पशु के स्तर पर देखने और उसी प्रकार की रीति-नीति अपनाने के लिए निकृष्टता के गर्त में धकेल दिया है । माया का यही आवरण हमें नारकीय यातनाएँ सहन करते हुए रोता, कलपता जीवन व्यतीत करने के लिए विवश करता है ।

संसार को जैसा कि हम देखते, समझते हैं वह पूर्व प्रचलित भ्रान्त धारणाओं पर और मस्तिष्क सहित इन्द्रियों के ज्ञान पर आधारित है । यदि हम एक बार इन दोनों आधारों की अप्रामाणिकता और अक्षमता को स्वीकार कर लें तथा नये सिरे से अपने सम्बन्ध में, सम्बन्धित व्यक्तियों तथा पदार्थों के सम्बन्ध में समस्त विश्व ब्रह्माण्ड के सम्बन्ध में नये तर्क पूर्ण वैज्ञानिक दृष्टिकोण से विचार करना आरम्भ करें तो तथ्य बिल्कुल दूसरे ही स्तर के सामने आयेंगे और वही प्रतिपादन सोलहों आने सत्य सिद्ध होगा जिसे वेदान्त दर्शन में निर्धारित किया गया है ।

जिस प्रकार हर प्रभात को हम जगते हैं और हर रात को गहरी नींद में सोते हैं ठीक उसी प्रकार थोड़ी अधिक विस्तृत भूमिका में जन्म और मरण की प्रक्रिया चलती रहती है । सूर्य हर दिन डूबता, उगता है । जीवन भी नियत अवधि में उत्पन्न और समाप्त होता रहता है । जिस तरह एक के बाद दूसरे दिन का लम्बा जीवनयापन चलता रहता है उसी प्रकार एक जन्म के बाद दूसरे जन्म की शृंखला चलती है । इसमें न कोई दुःख की बात है न शोक की, न डर की । यह तथ्य यदि सामने प्रस्तुत रहे तो फिर जीवन की लम्बी शृंखला की योजना इस ध्यान में रखकर ही बनाई जानी चाहिए । यदि भावी जीवन को उज्ज्वल बनाने की सम्भावना सामने हो तो इसके लिए एक दिन के कष्ट, कठिनाई से व्यतीत करने की बात किसी को अखरती नहीं । ऐसी भूल भी कोई समझदार आदमी नहीं कर सकता कि एक दिन शौक-मौज मनाने के लिए कोई ऐसा अवांछनीय कार्य कर डाला जाय, जिसके लिए जीवन के शेष समस्त दिन विपत्ति में फँसकर व्यतीत करने पड़ें । मनुष्य-जीवन की भोजन व्यवस्था बनाते समय भी यदि यही रीति-नीति अपनाई जा सके तो समझना चाहिए कि अनन्त जीवनों की जुड़ी हुई शृंखला का स्वरूप समझ लिया गया । ऐसी दशा में न वस्तुओं से लोभ हो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

सकता है और न व्यक्तियों से मोह । तब केवल वस्तुओं के सदुपयोग और व्यक्तियों के प्रति कर्तव्यपालन का भाव ही मन में उठता रह सकता है ।

एक जन्म को ही पूरा जीवन मान बैठने से मनुष्य आज ही जी भरकर शौक-मौज करने के लिए आतुर होता है और भविष्य को अन्धकारमय बनाता है । यदि अनन्त जीवन में एक-एक जन्म को एक दिन की तरह नगण्य महत्त्व का माना जाय तो फिर विद्यार्थी के विद्याध्ययन, पहलवान और कृषक की तरह अनवरत कष्ट साधन करने के लिए उत्साह बना रहेगा और उज्ज्वल भविष्य की आस में आज की कठिनाइयों को तुच्छ माना जायेगा, पर होता ऐसा कहाँ है ? इसका कारण वर्तमान को ही सब कुछ मान बैठने का मायावादी अज्ञान ही है । इसी में फँसकर मनुष्य दुर्बुद्धि अपनाता और पापकर्म करता है यदि माया का पर्दा हट जाय तो फिर बाल-क्रीड़ाओं को छोड़कर वयस्कों और बुद्धिमानों जैसी गतिविधियाँ अपनाने की ही प्रवृत्ति बनेगी ।

हम सब सराय में ठहरे हुए मुसाफिरों की तरह ही दिन व्यतीत कर रहे हैं । जल प्रवाह में बहते हुए तिनकों की तरह ही इकट्ठे हो गए हैं । जब मिल ही गए तो सराय के नियमों का, सड़क पर चलने के कानूनों का, क्षेत्र के नागरिक कर्तव्यों का पालन करना ही पड़ेगा, इस दृष्टि के विकसित होने पर यह अज्ञान हट जाता है कि कोई हमारा है या हम किसी के हैं । सब ईश्वर के हैं और ईश्वर ही सबका हितू है । प्रत्येक प्राणी अपनी कर्म रज्जु में बँधा अपनी धुरी पर घूम रहा है । समय का परिपाक बहुतों को परस्पर जुड़ाता और बिछुड़ाता रहता है । यह सत्य यदि समझ में आ जाय तो न किसी के मोह बन्धन में बँधा जाय, न बाँधा जाय । आत्मीयता के विस्तार द्वारा सम्पन्न होने वाला प्रेम हर किसी पर परिपूर्ण मात्रा में बिखेरा जाय, पर उसमें विवेक का समुचित पुट रहे । परिवारी लोगों के प्रति अत्यधिक आसक्ति, पक्षपात और मोह के कारण उन्हें अनुचित लाभ देने की जो प्रवृत्ति पायी जाती है उससे हर किसी का घोर अहित होता है । मुफ्त में अनावश्यक सहायता पाकर परिवार के लोग मुफ्तखोर बनते हैं और अपने श्रम-साधनों से जो लोक-मंगल सम्भव था उससे समाज को वंचित रहना पड़ता है और व्यक्ति परमार्थ का कल्याणकारी लाभ लेने से वंचित रह जाता है । यह माया बन्धनों का परिणाम ही है जिसने मोह जाल में जकड़ कर विश्व हित को श्रेय साधना से वंचित करके पूर्णता के लक्ष्य तक पहुँचने में भारी व्यवधान प्रस्तुत किया ।

वस्तुएँ हमें इसलिए मिलती हैं कि उनका श्रेष्ठतम सदुपयोग करके उनसे स्व-पर कल्याण की व्यवस्था बनाई जाय । साधन जड़ जगत के अंग हैं और वे रंग रूप बदलते हुए इस जगत की शोभा बढ़ाते रहने के लिए हैं । उन्हें अपने गर्व-गौरव का, विलास वैभव का आधार बनाकर संग्रह करते चलें । अहंकार का पोषण, तृष्णा की तुष्टि अथवा विलासिता के अभिवर्धन में धन को, शारीरिक, मानसिक विभूतियों को नियोजित रखा जाय तो उत्कृष्ट जीवन जी सकने का द्वार अवरुद्ध ही बना रहेगा । संकीर्ण और स्वार्थी जिन्दगी ही जियी जा सकेगी और इस कुचक्र में यह सुर-दुर्लभ अवसर निरर्थक ही चला जायेगा ।

शरीर और मन को अपना आपा मान बैठना और उसकी वासनाओं, तृष्णाओं की मूर्ति में इतना निमग्न हो जाना कि आत्मा का स्वरूप और लक्ष्य पूरी तरह विस्मृत हो जाय, ये दूरदर्शितापूर्ण नहीं है । शारीरिक और मानसिक उपलब्धियों के लिए जितना श्रम किया जाता है और मनोयोग लगाया जाता है, जोखिम उठाया जाता है उतना ही विनियोग यदि आत्मोत्कर्ष के लिए, आत्मबल सम्पादन के लिए लगाया जा सके तो मनुष्य इसी जीवन में महामानव बन सकता है और उन विभूतियों को करतलगत कर सकता है जो देवदूतों में पायी जाती हैं । इतना उच्चकोटि का लाभ छोड़कर नगण्य-सी लिप्साओं में डूबे हुए न करने योग्य काम करना, उनके कटु-कर्म, परिपाक सहना, किसी विवेकवान के लिए उपयुक्त न होगा, किन्तु देखा जाता है कि अधिकांश व्यक्ति उचित छोड़कर अनुचित का, लाभ छोड़कर हानि का रास्ता अपनाते हैं इसे क्या कहा जाय ? यह माया का खेल ही है । जिससे भ्रमित होकर मनुष्य जल में थल—थल में जल देखने की तरह हानि को लाभ और लाभ को हानि समझता है । अपने पैरों पर आप कुल्हाड़ी मारता है ।

माया विमुग्ध होकर ही मनुष्य अपने उच्च स्तर से अपनी दुर्बलताओं के कारण अधः पतित होता है और दुःख क्लेश भरा नरक भोगता है अन्यथा मनुष्य को इस विश्व के साथ सम्पर्क बनाकर सुखानुभूति प्राप्त कराने वाले जो तीन उपकरण मिले हैं यदि उनका ठीक तरह उपयोग किया जा सके तो जीवन अति सुन्दर और मधुर बन सकता है । इन तीन उपकरणों के नाम हैं—(१) अन्तरात्मा, (२) मन, (३) इन्द्रिय समूह ।

इन्द्रियों की बनावट ऐसी अद्‌भुत है कि दैनिक जीवन की सामान्य प्रक्रिया में ही उन्हें पग-पग पर असाधारण सरलता अनुभव होती है । पेट भरने के लिए भोजन करना स्वाभाविक है । भगवान की कैसी महिमा है कि उसने दैनिक जीवन की शरीर यात्रा भर की नितान्त स्वाभाविक प्रक्रिया को कितना सरस बना दिया है । उपयुक्त भोजन करते हुए जीव को कितना रस मिलता है और चित को उस अनुभूति से कैसी प्रसन्नता होती है ।

आँख का साधारण काम है वस्तुओं का देखना ताकि हमारी जीवन यात्रा ठीक तरह चलती रह सके । पर आँखों में कितनी अद्‌भुत विशेषता भर दी है कि वह रूप, सौन्दर्य, कौतुक, कौतूहल जैसी रस भरी अनुभूतियाँ ग्रहण करके चित्त को प्रफुल्लित बनाती हैं । संसार में उत्पादन, परिपुष्टि, विनाश का क्रम नितान्त स्वाभाविक है । मध्यवर्ती स्थिति में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हर चीज तरुण होती है और सुन्दर लगती है । क्या पुष्प क्या मनुष्य हर किसी को तीनों स्थितियों में होकर गुजरना पड़ता है । मध्यकाल सौन्दर्य लगता है । वस्तुतः यह तीनों ही स्थितियाँ अपने क्रम, अपने स्थान और अपने समय पर सुन्दर हैं, पर आँखों को सुन्दर-असुन्दर का भेद करके मध्य स्थिति को सुन्दर समझने की कुछ अद्भुत विशेषता मिली है । फलस्वरूप जो कुछ उभरता हुआ विकसित, परिपुष्ट दीखता है सो सुन्दर लगता है । सुन्दर-असुन्दर का तात्विक दृष्टि से यहाँ कुछ भी अस्तित्व नहीं है, पर हमारी अद्भुत आँखें ही हैं जो अपनी सौन्दर्यानुभूति वाली विशेषता के कारण हमारे दैनिक जीवन से सम्बन्धित समीपवर्ती वस्तुओं में से सौन्दर्य वाला भाग देखतीं, आनन्द अनुभव करतीं, उल्लसित और पुलकित होती हैं । चित्त को प्रसन्न करती हैं ।

इसी प्रकार जननेन्द्रिय की प्रक्रिया है । प्रजनन मक्खी-मच्छरों, कीट-पतंगों, बीज-अंकुरों में भी चलता रहता है । यह सृष्टि का सरल स्वाभाविक क्रम है पर हमारी जननेन्द्रिय में कैसा अजीब उल्लास सराबोर कर दिया है कि संभोग के क्षण ही नहीं, उसकी कल्पना भी मन के कोने-कोने में सिहरन, पुलकन, उमंग और आतुरता भर देती है । तत्वतः बात कुछ भी नहीं है । दो शरीरों के दो अवयवों का स्पर्श, इसमें क्या अनोखापन है ? क्या अद्भुतता है ? क्या उपलब्धि है ? फिर स्पर्श का कुछ प्रभाव हो भी तो उसकी कल्पना से किस प्रकार, क्यों, किस लिए चित्त को बेचैन करने वाली ललक पैदा होनी चाहिए ? बात कुछ भी नहीं है । मात्र जननेन्द्रिय की बनावट में एक अद्भुत प्रकार की सरसता का समावेश मात्र है जो हमें सामान्य स्वाभाविक दाम्पत्य-जीवन के वास्तविक या काल्पनिक प्रत्यक्ष और परोक्ष क्षेत्र में एक विचित्र प्रकार की रसानुभूति उत्पन्न करके, जीने भर के लिए प्रयुक्त हो सकने वाले जीवन को निरन्तर उमंगों से भरता रहता है ।

ऊपर जीभ, आँख और जननेन्द्रिय की चर्चा हुई, कान और नाक के बारे में भी इसी प्रकार समझना चाहिए । यहाँ पान भाग वाला इन्द्रिय समूह अपने साथ रसानुभूति की विलक्षणता इसलिए धारण किए हुए है कि सरस, स्वाभाविक सामान्य जीवन क्रम ऐसे ही नीरस ढर्रे का जीने भर के लिए मिला हुआ प्रतीत न हो वरन् उसमें हर घड़ी उत्साह, उल्लास, रस, आनन्द बना रहे और उसे उपलब्ध करते रहने के लिए जीवन की उपयोगिता, सार्थकता और सरसता का भान होता रहे । इन्द्रिय समूह हमें इसी प्रयोजन के लिए उपलब्ध है । यदि उनका उचित, संयमित, विवेकपूर्ण व्यवस्थापूर्वक उपयोग किया जा सके, तो हमारा भौतिक सांसारिक जीवन पग-पग पर सरसता, आनन्द उपलब्ध करता रह सकता है ।

दूसरा उपकरण मन इसलिए मिला है कि संसार में जो कुछ चेतन है उसके साथ अपनी चेतना का स्पर्श करके और भी ऊँचे स्तर की आनन्दानुभूति प्राप्त करे । इन्द्रियाँ जड़ शरीर से सम्बन्धित हैं । जड़ पदार्थों को स्पर्श करके, उस संसर्ग का सुख लूटती हैं । जड़ का जड़ से स्पर्श भी कितना सुखद हो सकता है, इस विचित्रता का अनुभव हमें इन्द्रियों के माध्यम से होता है । चेतन का चेतन के साथ, जीवधारी का जीवधारी के साथ स्पर्श—सम्पर्क होने से मित्रता, ममता, मोह, स्नेह, सद्भाव घनिष्ठता, दया, करुणा, मुदिता जैसी अनुभूतियाँ होती हैं । प्रतिकूल परिस्थितियों में द्वेष, घृणा जैसे भाव भी उत्पन्न होते हैं पर उनका अस्तित्व है इसीलिए कि मित्रता के वातावरण में सम्पर्क, संसर्ग का आनन्द बिखरता रहे, यदि अन्धकार न हो तो प्रकाश की विशेषता ही नष्ट हो जाय । वस्तुतः मन की बनावट दूसरों के सम्पर्क, सहयोग, स्नेह भावों के आदान-प्रदान का सुख प्राप्त करने में है । मेले-ठेलों में, सभा-सम्मेलनों में जाने की इच्छा इसीलिए उठती है । उन जन संकुल स्थानों में व्यक्तियों की घनिष्ठता न सही समीपता का अदृश्य सुख तो अनायास मिलता ही है ।

चूँकि इन्द्रिय सुख और जन सम्पर्क की घनिष्ठता में सहायक एक और नया माध्यम सभ्यता के विकास के साथ-साथ बनकर खड़ा हो गया है इसलिए अब प्रिय वह भी लगने लगा है, इस तीसरे मनुष्य कृत आकर्षण तत्व का नाम है—धन में स्वभावतः कोई आकर्षण नहीं । इसमें इन्द्रिय समूह या मन को पुलकित करने वाली कोई सीधी क्षमता नहीं है । धातु के सिक्के या कागज के टुकड़े भला आदमी के लिए प्रत्यक्षतः क्यों आकर्षक हो सकते हैं, पर चूँकि वर्तमान समाज व्यवस्था के अनुसार धन के द्वारा इन्द्रिय सुख के साधन प्राप्त होते हैं । मैत्री भी सम्भव होती है । इसलिए धन भी प्रकारान्तर रूप से मन का प्रिय विषय बन गया । अस्तु धन की गणना भी सुखदायक माध्यमों से जोड़ ली गई है ।

तीन शरीरों को जीवात्मा धारण किए हुए है । तीनों की तीन रसानुभूतियाँ हैं । ऊपर दो की चर्चा हो चुकी है । स्थूल शरीर की सरसता-इन्द्रिय समूह के साथ जुड़ी हुई है । आहार, निद्रा, भय, मैथुन जैसे सुख इन्द्रियों द्वारा ही मिलते हैं । सूक्ष्म शरीर का प्रतीक मन है । मन की सरसता मैत्री पर, जन सम्पर्क पर अवलम्बित है । परिवार मोह से लेकर समाज सम्बन्ध, नेतृत्व, सम्मिलन, उत्सव, आयोजन जैसे सम्पर्क परक अवसर मन को सुख देते हैं । घटित होने वाली घटनाओं को अपने ऊपर घटित होने की सूक्ष्म सम्वेदना उत्पन्न करके वह समाज की अनेक हलचलों से भी अपने को बाँध लेता है और उन घटनाक्रमों में खट्टी-मीठी अनुभूतियाँ उपलब्ध करता है । उपन्यास, सिनेमा, अखबार, रेडियो आदि मन को इसी आधार पर आकर्षित करते और प्रिय लगते हैं ।

तीसरा रसानुभूति उपकरण है—अन्तरात्मा उसका कार्य क्षेत्र 'कारण शरीर' है । उसमें उत्कृष्टता, उत्कर्ष, प्रगति, गौरव की प्रवृत्ति रहती है जो उच्च भावनाओं के माध्यम से चरितार्थ होती है । मनुष्य की श्रेष्ठता और सन्मार्गगामिता प्रखर होती रहे इसके लिए उसमें भी एक रसानुभूति विद्यमान

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है, उसका नाम है वर्चस्व, यश कामना, नेतृत्व, गौरव प्रदर्शन । उस आकांक्षा से प्रेरित होकर मनुष्य अगणित प्रकार की सफलताएँ प्राप्त करता है ताकि वह स्वयं दूसरों की तुलना में अपने आपको श्रेष्ठ, पुरुषार्थी, पराक्रमी, बुद्धिमान अनुभव करके सुख प्राप्त करे और दूसरे लोग भी उसकी विशेषताओं, विभूतियों से प्रभावित होकर उसे यश, मान प्रदान करें ।

संक्षेप में यह मनुष्य के तीन शरीरों की—तीन रसानुभूतियों की चर्चा हुई । हमारी अगणित योजनाएँ—इच्छा, आकांक्षाएँ, गतिविधियाँ इन्हीं तीन मूल प्रवृत्तियों के इर्दगिर्द घूमती हैं । जो कुछ मनुष्य सोचता और करता है उसे तीन भागों में विभक्त किया जा सकता है । भगवान ने यह तीन उपहार जीवन को सरसता से भरा पूरा रखने के लिए दिए हैं । साथ ही उनका अस्तित्व इसलिए भी है कि व्यक्ति निरन्तर सक्रिय बना रहे । इन सुखानुभूतियों को प्राप्त करने के लिए उसके तीनों शरीर निरन्तर जुटे रहें । आलस्य, अवसाद की उदासीनता, नीरसता की स्थिति सामने आकर खड़ी न हो जाय और जीवन को आनन्द रहित भार रूप न बना दे । सक्रियता के आधार पर चल रहे सृष्टि क्रम को अवरुद्ध न कर दे । अन्तरात्मा, मन और इन्द्रिय समूह को यदि सही मार्ग पर चलने का अवसर मिलता रहे तो जीवन हर्षोल्लास के साथ व्यतीत हो सकता है ।

भूल मनुष्य की तब आरम्भ होती है जब वह इन तीनों रसानुभूतियों को अमर्यादित होकर अनावश्यक मात्रा में अति शीघ्र, बिना उचित मूल्य चुकाये प्राप्त करने लिए आकुल, आतुर हो उठता है और लूट-खसोट की मनोवृत्ति अपनाकर अवांछनीय गतिविधियाँ अपना लेता है । विग्रह इसी से उत्पन्न होता है । पाप का कारण यही उतावली है । जीवन में अव्यवस्था और अस्त-व्यस्तता इसी से उत्पन्न होती । पतन इसी भूल का परिणाम है । अपराधी, दुष्ट और घृणित बनने का कारण उन उपलब्धियों के लिए अनुचित मार्ग को अपनाना ही है । उतावला व्यक्ति आतुरता में विवेक खो बैठता है और औचित्य को भूलकर बहुत जल्दी, अधिक मात्रा में उपरोक्त सुखों को पाने के लिए असन्तुष्ट होकर एक प्रकार से उच्छृंखल हो उठता है । यह अमर्यादित स्थिति उसके लिए विपत्ति बनकर सामने आती है । सरल स्वाभाविक रीति से जो शान्तिपूर्वक मिल रहा था—मिलता रह सकता था—वह भी हाथ से चला जाता है और शारीरिक रोग, मानसिक उद्वेग, सामाजिक तिरस्कार, आर्थिक अभाव, आत्मिक अशान्ति के संकटों से घिरा हुआ जीवन नरक बन जाता है । अधिक के लिए उतावला मनुष्य सरसता स्वाभाविकता को भी खोकर उल्टा शोक-संताप, कष्ट-क्लेश एवं अभाव, दारिद्रय में फँस जाता है । आमतौर से मनुष्य यह भूल करते हैं । इसी भूल को माया, अज्ञान, अविद्या नामों से पुकारते हैं । यह भूल ही ईश्वर प्रदत्त पग-पग पर मिलती रहने वाली सरसता से वंचित करती है और इसी के कारण जीव ऊँचा उठने के स्थान पर नीचे गिरता है ।

अध्यात्म विद्या का उद्देश्य मनुष्य के चिन्तन और कर्तव्य को अमर्यादित न होने देने, अवांछनीयता न अपनाने के लिए आवश्यक विवेक और साहस उत्पन्न करता है मनुष्य अपने अस्तित्व को, लक्ष्य को व्यवहार को सही तरह समझे । सही मार्ग को अपनाकर सही परिणाम उपलब्ध करते हुए, प्रगति के पथ पर निरन्तर आगे बढ़ता चले । अपूर्णता से पूर्णता में विकसित हो । यही मार्गदर्शक करता, इसका व्यावहारिक समाधान प्रस्तुत करना आत्मविद्या का मूल प्रयोजन है ।

यह स्मरण रखा जाना चाहिए मानव का निर्माण जड़ एवं चेतन दोनों के युग्म से हुआ है । जब तक शरीर में चेतना है तब तक हमारी सभी इन्द्रियाँ क्रियाशील हैं और शरीर में हलचल है, लेकिन जिस क्षण चेतना या आत्मा शरीर से अलग हो जाती है । शरीर मिट्टी का ढेला मात्र ही रहता है । कोई स्पन्दन, कोई क्रिया, कोई सार्थकता नहीं रह पाती है । इस प्रकार हम देखते हैं कि शरीर एवं आत्मा का संयोग जहाँ जीवात्मा में विराट् शक्ति का स्रोत है, वहाँ आत्मा से रहित शरीर का कोई मूल्य नहीं । अपने जीवन का प्रत्येक क्षण हम अपने शरीर के सुख साधन जुटाने में खर्च करते हैं और इन्द्रियजन्य भोगों में मरते-खपते रहते हैं, लेकिन मृत्यु के समय तक भी हम अपनी वासनाओं, तृष्णाओं एवं लिप्साओं को तुष्ट नहीं कर पाते ।

जीवन के समग्र उद्देश्य की पूर्ति के लिए यह आवश्यक है कि हम शरीर एवं आत्मा दोनों के समिन्वत विकास, परिष्कार एवं तुष्टि-पुष्टि का दृष्टिकोण बनायें । एक को ही सिर्फ विकसित करें और एक को उपेक्षित करें, ऐसा दृष्टिकोण अपनाने से सच्चा आनन्द नहीं मिल सकता ।

ईश्वर की सच्चिदानन्दमय सत्ता

विश्व अस्तित्व की इकाइयाँ मानी गई हैं—(१) ईश्वर, (२) जीव, (३) प्रकृति । ईश्वर तीन गुण वाला है । सत्, चित, आनन्द । यह तीन उसके गुण हैं । सत् अर्थात् अस्तित्व युक्त । जो है, था, जो रहेगा, उस अविनाशी तत्व को सत् कहते हैं । चित् अर्थात् चेतना । जिसमें सोचने, विचारने, निर्णय करने एवं भावाभिव्यक्ति युक्त होने की विशेषताएँ हैं उसे चित् कहेंगे । आनन्द अर्थात् सुख, सन्तोष और उल्लास का समन्वय । ईश्वर अस्तित्ववान है, चैतन्य है तथा आनन्दानुभूति में पूरा है । इसलिए उसे सच्चिदानन्द कहते हैं ।

जीवन के दो गुण हैं—सत् और चित् । वह अस्तित्ववान् है । ईश्वर से उत्पन्न अवश्य है पर लहरों की तरह उसकी स्वतन्त्र सत्ता भी है और वह ऐसी है कि सहज ही नष्ट नहीं होती । मुक्ति में भी उसका अस्तित्व बना रहता है और निर्विकल्प, सविकल्प स्थिति में सारूप्य, सायुज्य, सालोक्य,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सामीप्य का आनन्द अनुभव करता है । प्रलय में सब कुछ सिमट कर एक में अवश्य इकट्ठा हो जाता है फिर भी वह आटे की तरह एक दीखते हुए भी जीव कणों की स्वतन्त्र सत्ता बनी रहती है । मूर्छा, स्वप्न, सुषुप्ति, तुर्या एवं समाधि अवस्था में भी मूलसत्ता यथावत् रहती है । मरणोत्तर जीवन तो रहता ही है । इस प्रकार जीव की सत् अस्तित्ववान् स्थिति अविछिन्न रूप से बनी रहती है ।

जीव का दूसरा गुण है—चित् । चेतना उसमें रहती ही है । यह चेतना ही उसका 'स्व' है । अहंता—ईगो—सैल्फ—आत्मानुभूति इसी को कहते हैं । तत्वज्ञानियों से लेकर अज्ञानियों तक में यह स्थिति सदैव पायी जायेगी । ईश्वर में आनन्द परिपूर्ण है । जीव उसकी खोज में रहता है, उसे प्राप्त करने के लिए विविध प्रयास करता है और न्यूनाधिक मात्रा में, भले बुरे रूप में उसी की प्राप्ति के लिए लालायित और यत्नशील रहता है ।

प्रकृति में एक ही गुण है, सत् । उसका अस्तित्व है । अणु परमाणुओं के रूप में, दृश्य और अदृश्य प्रक्रिया के साथ जगत की सत्ता के रूप में प्रकृति को देखा जा सकता है । ईश्वर और जीव दोनों का क्रिया-कलाप इस प्रकृति प्रक्रिया के साथ ही गतिशील रहता है । महाप्रलय में प्रकृति सघन होकर पंच तत्वों की अपेक्षा एक महातत्व में विलीन हो जाती है । इस प्रकार जब कभी इस विश्व ब्रह्माण्ड की लय प्रलय होगी तब ईश्वर के सत् तत्व में प्रकृति लीन हो जायेगी जीव चित् में घुल जायेगा और उसका अपना अतिरिक्त गुण आनन्द, यथावत् बना रहेगा ।

महासृष्टि के आरम्भ का क्रम भी यही है । तत्वदर्शियों के अनुसार ब्रह्म में स्फुरणा होती है । एक से बहुत होने की । वह अपने को अंश रूप में विभक्त करके एक से अनेक बनता है और जीव सत्ता का अस्तित्व विनिर्मित होता है । स्फुरणा द्वारा जीवन की उत्पत्ति के बाद उसकी दूसरी उमंग आगे आती है । वह है—इच्छा । आनन्द को निराकारिता को साकारिता में परिणत करने के लिए पदार्थ की आवश्यकता होती है । इच्छा का प्रतिफल ही आवश्यकता, आविष्कार और आविर्भाव के रूप में सामने आता है । यह प्रकृति है । स्फुरणा से जीव और इच्छा से प्रकृति का निर्माण करके ब्रह्म साक्षी और दृष्टा के रूप में सर्वत्र विद्यमान रहता है और इस जगत की सारी प्रक्रिया की स्वसंचालित पद्धति को बनाकर अपने क्रिया कर्तृत्व का आनन्द लेता है ।

सृष्टि जगत का अधिष्ठाता

इस सम्बन्ध में कई लोगों को सन्देह होता है कि ईश्वर है भी अथवा नहीं, सामान्य दृष्टि से विचार करने पर भी ईश्वर के अस्तित्व को सिद्ध करने वाले अनेकों प्रमाण मिल जाते हैं । कोई यह सिद्ध करने के लिए पूर्वाग्रह ग्रस्त होकर ही चले कि ईश्वर नहीं है तो बात अलग है । अन्यथा ईश्वर का अस्तित्व उदित और चमकते सूरज से भी अधिक प्रत्यक्ष है । उदाहरण के लिए प्रत्येक कर्म का कोई अधिष्ठाता, प्रत्येक रचना का कोई कलाकार अवश्य होता है । आगरे का ताजमहल संसार के सर्व प्रसिद्ध सात आश्चर्यों में से एक है । उसके निर्माण में प्रतिदिन २० हजार मजदूर काम करते थे, इतिहासकारों के अनुमान के अनुसार उसका निर्माण ६ करोड़ रुपये में हुआ । उसके निर्माण में साढ़े अट्ठारह वर्ष लगे । उसमें राजस्थान से आया संगमरमर, तिब्बत की नीलम मणि, सिंहल की सिपास्लाजुली मणि, पंजाब के हीरे, बगदाद के पुखराज रत्न लगे हैं । इतनी सारी व्यवस्था और साधन सामग्री जुटाने में एक व्यक्ति की बुद्धि काम कर रही थी वह था शाहजहाँ । ताजमहल की रचना के साथ शाहजहाँ चिरकाल अमर है ।

कोरिया का मेलोलियम संसार का दूसरा आश्चर्य । ६२ हाथ लम्बी उतनी ही चौड़ी चहारदीवारी के मध्य ४०-४० हाथ ऊँचे ३६ स्तम्भ जो नीचे मोटे पर ऊपर क्रमशः पतले होते गए हैं । सीढ़ियों पर नीचे से ऊपर तक संगमरमर की बहुमूल्य मूर्तियों की सजावट । प्रसिद्ध कलाकार पाइथिस और माटीराम द्वारा विनिर्मित इस समाधि मन्दिर का निर्माण केवल एक व्यक्ति की इच्छित रचना है वह थीं वहाँ की महारानी 'आर्टीमिसिया' ।

२० लाख रुपये की लागत से बनी २५ फुट ऊँची ओलम्पिया की जुपिटर प्रतिमा एथेन के सम्राट् पैराक्लीज की हार्दिक इच्छा का अभिव्यक्त रूप है । इफिसास का डायना मन्दिर चाँदफिन की कल्पना का साकार है तो अजन्ता की २६ गुफाओं में ५ मन्दिरों और २४ बौद्ध विहारों में प्रवर सेन युग के आचार्य सुनन्द का नाम अंकित है । सिकन्दरिया का प्रकाश स्तम्भ सिकन्दर के संकल्प का मूर्तिमान है । २६३ हाथ के घेरे में २२ फुट ऊँचे ठोस घेरे में खड़ा किया गया बैबिलोन का लटकता हुआ बाग (हैंगिंग गार्डन) बैबिलोन साम्राज्ञी ने बनवाया । रोम का कोलोसियस, पीसा की मीनार, रोडस की पीतल की मूर्ति, मिस्र के पिरामिड चार्टेज गिरजाघर डेविड, सिस्टाइन चैपिल पियेटा की प्रतिमाएँ, एफिल टावर (पेरिस), ह्वाइट हाउस अमेरिका, लाल किला दिल्ली आदि जितनी भी सर्वश्रेष्ठ रचनाएँ हैं, उनके रचनाकार आला मस्तिष्क और भाव सम्पन्न आत्माएँ रही हैं किसी भी सांसारिक निर्माण को स्वनिर्मित नहीं कहा जा सकता इसी से रचना के साथ रचनाकार का नाम अविच्छिन्न रूप से चलता है ।

यह छोटे-छोटे उपादान बिना कर्त्ता के अभिव्यक्ति नहीं पा सके होते तो इतना सुन्दर संसार जिसमें प्रातःकाल सूरज उगता और प्रकाश व गर्मी देता है । रात थकों को अपने अंचल में विश्राम देती, तारे पथ-प्रदर्शन करते, ऋतुएँ समय पर आतीं और चली जाती हैं । हर प्राणी के लिए अनुकूल आहार, जल-वायु की व्यवस्था, प्रकृति का सुव्यवस्थित स्वच्छता अभियान सब कुछ व्यवस्थित ढंग से चल रहा है । करोड़ों की संख्या में तारागण किसी व्यवस्था के अभाव में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अब तक न जाने कब के लड़ मरे होते । यदि इन सब में गणित कार्य न कर रहा होता तो अमुक दिन, अमुक समय सूर्य-ग्रहण, चन्द्र ग्रहण, मकर संक्रान्ति आदि का ज्ञान किस तरह हो पाता । यह प्रात्तोदेश्य कर्म और सुन्दरतम रचना बिना किसी ऐसे कलाकार के सम्भव नहीं हो सकती थी जो सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को एकरस देखता हो, सुनता हो, साधन जुटता हो, नियम व्यवस्थाएँ बनाता हो, न्याय करता हो जीव मात्र का पोषण संरक्षण करता हो ।

नियामक के बिना नियम व्यवस्था, प्रशासक के बिना प्रशासन चल तो सकते हैं, पर कुछ समय से अधिक नहीं जबकि पृथ्वी को ही अस्तित्व में आये करोड़ों वर्ष बीत चुके । परिवार के वयोवृद्ध के हाथ सारी गृहस्थी का नियन्त्रण होता है । गाँव का एक मुखिया होता है तो कई गाँवों के समूह की बनी तहसील का स्वामी तहसीलदार, जिले का मालिक कलक्टर, राज्य का गवर्नर और राष्ट्र का राष्ट्रपति । मिलों तक के लिए मैनेजर, कम्पनियों के डाइरेक्टर न हों तो उनकी ही व्यवस्था ठप्प पड़ जाती है और उसका अस्तित्व डावाँडोल हो जाता है फिर इतनी बड़ी और व्यवस्थित सृष्टि का प्रशासक, स्वामी और मुखिया न होता तो संसार न जाने कब का विनष्ट हो चुका होता । जड़ में शक्ति हो सकती है व्यवस्था नहीं । नियम सचेतन सत्ता ही बना सकती है, सो इन तथ्यों के प्रकाश में परमात्मा का विरद् चरितार्थ हुए बिना नहीं रहता ।

नेशनल हेराल्ड में एक लेख छपा था—"वैज्ञानिक भगवान में विश्वास क्यों करते हैं ? इस लेख में विद्वान लेखक ने बताया है कि संसार का हर परमाणु एक निर्धारित नियम पर काम करता है, यदि इसमें रत्ती भर भी अव्यवस्था और अनुशासनहीनता आ जाय तो विराट् ब्रह्माण्ड एक क्षण को भी नहीं टिक पाता । एक क्षण के विस्फोट से अनन्त प्रकृति में आग लग जाती और संसार अग्नि ज्वालाओं के अतिरिक्त कुछ न होता ।

नियामक विधान किसी मस्तिष्कीय सत्ता का अस्तित्व में होना प्रमाणित करता है । हमारे जीवन का आधार सूर्य है । वह १० करोड़ ३० लाख मील की दूरी से अपनी प्रकाश किरणें भेजता है जो ८ मिनट में पृथ्वी तक पहुँचती हैं । दिन भर में यहाँ के वातावरण में इतनी सुविधाएँ एकत्र हो जाती हैं कि रात आसानी से कट जाती है । दिन रात के इस क्रम में एक दिन भी अन्तर पड़ जाय तो जीवन संकट में पड़ जाय । सूर्य के लिए पृथ्वी समुद्र में बूँद का-सा नगण्य अस्तित्व रखती है फिर, उसकी तुलना में रूस के साइबेरिया प्रान्त में एक गड़रिये के घर में जी रही एक चींटी का क्या अस्तित्व हो सकता है, पर वह भी मजे में अपने दिन काट लेती है ।

सूर्य अनन्त अन्तरिक्ष का एक नन्हा तारा है । 'रीडर्स डाइजेस्ट' ने एक एटलस छापा है उसमें सौर-मण्डल के लिए एक बिन्दु मात्र रखा है और तीर का निशान लगा कर दूर जाकर लिखा है—"हमारा सौर-मण्डल यहाँ नहीं है" यह ऐसा ही हुआ कि कोई मेरी आँख का आँसू समुद्र में गिर गया । सूर्य से तो बड़ा "रीजल" तारा ही है जो उससे १५ हजार गुना बड़ा है । "अन्टेयर्स" सूर्य जैसे ३ करोड़ ६० लाख गोलों को अपने भीतर आसानी से सुला सकता है । जून १९६७ के "साइन्स टुडे" में "ग्राहम बेरी" ने लिखा है । पृथ्वी से छोटे ग्रह भी ब्रह्माण्ड में हैं और ५ खरब मील की परिधि वाले भीमकाय नक्षत्र भी । किन्तु यह सभी विराट् ब्रह्माण्ड में निर्द्वन्द विचरण कर रहे हैं यदि कहीं कोई व्यवस्था न होती तो यह तारे आपस में ही टकरा कर नष्ट-भ्रष्ट हो गए होते ।

सूर्य अपने केन्द्र में १ करोड़ ६० लाख डिग्री से.ग्रे. गर्म है, यदि पृथ्वी के ऊपर आयन मण्डल (आइनोस्फियर) की पट्टियाँ न चढ़ाई गयीं होतीं तो पृथ्वी न जाने कब जलकर राख हो गई होती । सूरज अपने स्थान से थोड़ा-सा खिसक जाय तो ध्रुव प्रदेशों की बर्फ पिघल कर सारी पृथ्वी को डुबो दे यही नहीं उस गर्मी से कड़ाह में पकने वाली पूड़ियों की तरह सारा प्राणि जगत ही पक कर नष्ट हो जाय । थोड़ा ऊपर हट जाने पर समुद्र तो क्या धरती की मिट्टी तक बर्फ बनकर जम सकती है । यह तथ्य बताते हैं । ग्रहों की स्थिति और व्यवस्था अत्यन्त बुद्धिमत्तापूर्वक की गई है । यह परमात्मा के अतिरिक्त और कौन चित्रकार हो सकता है ।

इतने पर भी कुछ लोग हैं जो यह कहते नहीं थकते कि ईश्वरीय सत्ता का कोई प्रमाण और कोई अस्तित्व नहीं है । मार्क्स ने किसी पुस्तक में यह लिखा है कि—'यदि तुम्हारा ईश्वर प्रयोगशाला की किसी परखनली में सिद्ध किया जा सके तो मैं मान लूँगा कि वस्तुतः ईश्वर का अस्तित्व है ।'

सिद्ध न होने पर भी

नास्तिक दर्शन की मूल मान्यता भी यही है कि ईश्वर सिद्ध नहीं किया जा सकता और जो सिद्ध नहीं होता उसका अस्तित्व कैसे हो सकता है यह मान्यता अपने आप में एकांगी और अधूरी है । मान्यता विज्ञान से सिद्ध नहीं होती अस्तित्व ही नहीं है । यह अब से सौ वर्ष पूर्व तक तो अपने स्थान पर सही थी क्योंकि तब विज्ञान अपने शैशव में था, परन्तु जब विज्ञान ने अविज्ञात के क्षेत्र में प्रवेश किया और एक से एक रहस्य सामने आते गए तो यह माना जाने लगा कि ऐसी बहुत-सी वस्तुओं का, सत्ताओं का अस्तित्व है जो अभी विज्ञान द्वारा सिद्ध नहीं हो सका है अथवा जिन तक विज्ञान नहीं पहुँच सका है ।

कुछ दशाब्दियों से पूर्व तक यह माना जाता था कि पदार्थ का सबसे सूक्ष्म कण अणु है और वह अविभाज्य है । पदार्थ के सूक्ष्मतम विभाजन के बाद अवशिष्ट स्वरूप को अणु कहा गया और माना जाने लगा कि यही अन्तिम है, परन्तु इसके कुछ वर्षों बाद ही वैज्ञानिकों को अणु से भी सूक्ष्म कण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

परमाणु का पता चला । परमाणु को अविभाज्य समझा जाने लगा, लेकिन परमाणु का विखण्डन भी सम्भव हो गया । पदार्थ के इस सूक्ष्मातिसूक्ष्म स्वरूप के विखण्डन से बहुत बड़ी ऊर्जा का विस्फोट दिखाई दिया, जिसके ध्वंस या सृजन में चाहे जिस प्रयोजन के लिए उपयोग सम्भव दिखाई देने लगा ।

परन्तु अब भी यह नहीं मान लिया गया है कि परमाणु ही अन्तिम सत्य है । यह समझा जा रहा है कि परमाणु से भी सूक्ष्म पदार्थ का कोई अस्तित्व हो सकता है । इसी आधार पर प्रो. रिचर्ड ने अपनी पुस्तक "थर्टीईयर ऑफ साइकिक रिसर्च" में लिखा है—"पचास वर्ष पूर्व यह माना जाता था कि जो बात भौतिक विज्ञान से सिद्ध न हो उसका अस्तित्व ही नहीं है, किन्तु भौतिक विज्ञान के क्षेत्र में ही अब ऐसे प्रमाण मिलते हैं कि वह अभी भौतिक वस्तुओं को ही ठीक से समझ नहीं पाया है । फिर उसे सत्ता के अस्तित्व को इस आधार पर कैसे चुनौती दी जा सकती है जिसे भौतिक विज्ञान की पहुँच के बाहर कहा जाता है ।"

सर ए. एस. एडिग्रन ने इसी तथ्य को यों प्रतिपादित किया है—"भौतिक पदार्थों के भीतर एक चेतन शक्ति काम कर रही है जिसे अणु प्रक्रिया का प्राण कहा जा सकता है । हम उसका सही स्वरूप और क्रियाकलाप अभी नहीं जानते, पर यह अनुभव कर सकते हैं कि संसार में जो कुछ हो रहा है वह अनायास, आकस्मिक या अविचारपूर्ण नहीं है ।"

आधुनिक विज्ञान पदार्थ का अन्तिम विश्लेषण करने में भी अभी समर्थ नहीं हो सकता है । उदाहरण के लिए परमाणु का विखण्डन हो जाने के बाद पदार्थ का एक ऐसा सूक्ष्मतम रूप अस्तित्व में आया है जिसे वैज्ञानिक अभी तक पूरी तरह समझ नहीं पाये हैं । जैसे प्रकाश कोई वस्तु नहीं है । वस्तु अर्थ है जो स्थान घेरे, जिसमें कुछ भार हो और जिसका विभाजन किया जा सके । प्रकाश का न तो कोई भार होता है, न वह स्थान घेरता है और न ही उसका विभाजन किया जा सकता है । पदार्थ का अन्तिम कण जो परमाणु से भी सूक्ष्म है ठीक प्रकाश की तरह है, परन्तु उसमें एक वैचित्र्य भी है कि वह तरंग होने के साथ-साथ स्थान भी घेरता है । वैज्ञानिकों ने परमाणु से भी सूक्ष्म इस स्वरूप को नाम दिया है—"क्वाण्टा" ।

कहने का अर्थ यह है कि भौतिक विज्ञान अभी पदार्थ का विश्लेषण करने में भली-भाँति समर्थ नहीं हो सका है फिर चेतना का विश्लेषण और प्रमाणीकरण करना तो बहुत दूर की बात है । शरीर संस्थान में चेतना का प्रधान कार्यक्षेत्र मस्तिष्क कहा जाता है । वहीं विचार उठते हैं, चिन्तन चलता है, भाव-सम्वेदनाओं की अनुभूति होती है । शरीर विज्ञान की अद्यतन शोध प्रगति भी मस्तिष्कीय केन्द्र का रहस्य समझ पाने में असमर्थ रही है । डॉ. मैकडूगल ने अपनी पुस्तक "फिजियोलॉजिकल साइकोलॉजी" में लिखा है—"मस्तिष्क की संरचना को कितनी ही बारीकी से देखा समझा जाय यह उत्तर नहीं मिलता कि मानव प्राणी पाशविक स्तर से ऊँचा उठकर किस प्रकार ज्ञान विज्ञान की धारा में बहता रहता है और कैसे भावनाओं सम्वेदनाओं से ओत-प्रोत रहता है । भाव सम्वेदनाओं की गरिमा को समझाते हुए हमें यह भी स्वीकार करना पड़ेगा कि मनुष्य के भीतर कोई अमूर्त सत्ता भी विद्यमान है जिसे आत्मा अथवा भाव चेतना जैसा कोई नाम दिया जा सकता है ।"

जीवित और मृत्यु देह में मूलभूत रासायनिक तत्वों में कोई परिवर्तन होता है तो इतना भर कि उनकी गति, निरन्तर उनका होता रहने वाला रूपान्तरण विकास अवरुद्ध हो जाता है । इस अवरुद्ध क्रम को चालू करने के कितने ही प्रयास किए गए, परन्तु उनमें कोई सफलता नहीं मिल सकी । प्रयास अभी भी जारी हैं, परन्तु भिन्न ढंग के । अब यह सोचा जा रहा है कि मृत्यु के समय शरीर में विलुप्त हो जाने वाली चेतना को पुनः किसी प्रकार लौटाया जा सके तो पुनर्जीवन सम्भव है । इसी आधार पर "मिस्टिरियस यूनिवर्स" ग्रन्थ के रचयिता सरजेम्स जोन्स ने लिखा है 'विज्ञान जगत अब पदार्थ सत्ता का नियन्त्रण करने वाली चेतन सत्ता की ओर उन्मुख हो रहा है तथा यह खोजने में लगा है कि हर पदार्थ को गुण धर्म की रीति-नीति से नियन्त्रित करने वाली व्यापक चेतना का स्वरूप क्या है ? पदार्थ की स्वसंचालिता इतनी अपूर्ण है कि उस आधार पर प्राणियों की चिन्तन क्षमता का कोई समाधान नहीं मिलता ।'

सृष्टि क्रम की सुव्यवस्था, विकासक्रम और जीवन चेतना की विचित्र अद्भुत विविधता फिर भी उनमें सुनियोजित साम्य-ईश्वरीय अस्तित्व का प्रबल प्रमाण है । इसके विरुद्ध यह कहा जाता है कि सृष्टि का कोई भी घटक, जीव-प्राणी पदार्थ से भिन्न कुछ नहीं है । कहा जाता है कि समस्त विश्व कुछ घटनाओं के जोड़ के अतिरिक्त कुछ नहीं है ।

उसके उत्तर में ख्याति प्राप्त विज्ञान वेत्ता टेण्डल ने अपने ग्रन्थ "फ्रेगमेण्ट्स ऑफ साइन्स" में लिखा है हाइड्रोजन, ऑक्सीजन, कार्बन और कुछ ऐसे ही जड़ ज्ञान शून्य पदार्थों के परमाणुओं से जीवन चेतना का उदय हुआ यह असंगत है । क्योंकि जीवन चेतना का स्पन्दन हर जगह इतना सुव्यवस्थित और सुनियोजित है कि उसे संयोग मात्र नहीं कहा जा सकता । चौपड़ के पाँसे खड़खड़ाने से होमर के काव्य की प्रतिभा एवं गेंद की फड़फड़ाहट से गणित के डिफरेंशियल सिद्धान्त का उद्भव कैसे हो सकता है ?"

"फ्रेगमेण्ट्स ऑफ साइन्स" के लेखक ने लिखा है कि यान्त्रिक प्रक्रिया के माध्यम से देखना, सोचना, स्वप्न, सम्वेदना और आदर्शवादी भावनाओं के उभार की कोई तुक नहीं बैठती । शरीर यात्रा की आवश्यकता पूरी करने के अतिरिक्त मनुष्य जो कुछ सोचता, चाहता और करता है तथा संसार में जो कुछ भी ज्ञात-विज्ञात है वह इतना अद्भुत है कि परमाणुओं के संयोग से उनके निर्माण की कोई संगति नहीं बिठाई जा सकती ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रहस्यमय यह संसार और इसके जड़ पदार्थों का विश्लेषण ही अभी प्रयोगशालाओं में सम्भव नहीं हुआ है तो चेतना, ईश्वरीय सत्ता का विश्लेषण प्रमाणीकरण लैबोरेटरी के यन्त्रों से किस प्रकार हो सकेगा ? फिर भी यह कहने का अथवा इस आग्रह पर अड़े रहने का कोई कारण नहीं है कि विज्ञान से सिद्ध न होने के कारण ईश्वर का अस्तित्व नहीं है । परमाणु का जब तक पता नहीं चला था, इसका अर्थ यह नहीं है कि उससे पहले परमाणु था ही नहीं । परमाणु उससे पहले भी था और आज तर्कों द्वारा उसे असत्य सिद्ध कर दिया जाय तो भी उसका अस्तित्व मिट नहीं जाता । स्वीकार करने या न करने, ज्ञात होने अथवा अज्ञात रहने से किसी का होना न होना कोई मतलब नहीं रखता ।

सत् तत्व का नियामक

सर्व नियामकसत्ता की प्रबन्ध व्यवस्था का पता जीवन के आविर्भाव से ही चल जाता है । जीवन की उपयोगी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सृष्टि में ऐसा प्रबन्ध है कि वे सरलतापूर्वक पूरी हो जाया करे । साँस के बिना प्राणी एक क्षण को भी जीवित नहीं रह सकता, सो वह प्रचुर मात्रा में सर्वत्र उपलब्ध है । उसके बाद जल की आवश्यकता है उसके लिए थोड़ा प्रयत्न करने से ही काम चल जाता है । तीसरी आवश्यकता अन्न की है सो उसके लिए साधन न जुटा सकने वाले प्राणियों के लिए फल-फूल की प्राकृतिक व्यवस्था है वहीं बुद्धिधारी जीव थोड़े प्रयत्न से अपनी आवश्यकता पूरी कर लेते हैं । इसके बाद के समस्त उपादान आवश्यकता के अनुपात में प्रयत्न और परिश्रम से प्राप्त होते रहते हैं । इन सार्वभौम आवश्यकताओं की पूर्ति बिना संचालक-व्यवस्थापक के कैसे सम्भव हो सकती थी ।

नैतिकता के सर्वमान्य सिद्धान्तों से न केवल जीव समुदाय जुड़ा है अपितु कर्त्ता ने वह अनुशासन स्वयं पर भी पूरी तरह लागू किया है । भ्रूण जैसी अत्यधिक कोमल और सम्वेदनशील सत्ता को विकसित होने के लिए खुला छोड़ दिया जाता है तो प्राण-धारी के लिए उपयोगी वायु, ताप और अन्य प्राकृतिक परिस्थितियाँ ही उसे नष्ट-भ्रष्ट कर डालतीं सो उसके लिए अति वातानुकूलित और सर्व सुविधा सम्पन्न निवास माँ के गर्भाशय की व्यवस्था क्या किसी अत्यधिक प्रबुद्ध सत्ता के अस्तित्व का प्रमाण नहीं । जहाँ चारों तरफ से बन्द कोठरी में ही उसे विकास की समस्त सुविधाएँ उचित मात्रा में मिलती रहती हैं, जन्म के पूर्व ही उसके लिए सन्तुलित आहार माँ के दूध जैसा उपलब्ध कराकर उसे अत्यधिक करुणा दर्शायी । असहाय, असमर्थ शिशु के लिए न केवल भौतिक सहायताएँ अपितु उसके लिए जिन भावनात्मक सुविधाओं की आवश्यकता थी वह समस्त उसे कुटुम्ब में, समुदाय और समाज में मिल जाती हैं । इस तरह जीवनसत्ता परिपक्व रूप में सामने आ जाती है इतने पर भी यह कितने आश्चर्य की बात है कि दूसरों के सहारे बढ़ा विकसित हुआ जीव न केवल सामाजिक कर्तव्यों के प्रति कृतघ्नता का परिचय देने लगता है, अपितु अपने परमपिता, अपनी मूलसत्ता को ही भुला बैठता है ।

इतने पर भी वह दयालु पिता उस शिशु के यौवन में प्रवेश करते ही उसकी पितृत्व, कामेच्छा और भावनात्मक सहयोग की पूर्ति के लिए जोड़ी मिलाने, नर को नारी में, नारी को नर में अपनी पूर्णता प्राप्त करने की सुविधा जुटाई, रोग निरोध की तथा सांसारिक प्रतिकूलताओं में अपने अस्तित्व की रक्षा की जन्म-जात सुविधाएँ भी प्रदान की हैं । रोगों से लड़ने की शक्ति रक्त कणों में शारीरिक अवयवों की सुरक्षा त्वचा के द्वारा देखने के लिए आँखें, सुनने के लिए कान और विचार करने के लिए बढ़िया मस्तिष्क इतनी सुन्दर मशीन आज तक न कोई बना सका और न बना सकना सम्भव है जो इच्छानुसार हर परिस्थिति में मुड़ने, लचकने, सँभालने में सक्षम है । आँख जैसी रैटिना, कान जैसा पर्दा, गुर्दे जैसे सफाई अधिकारी, हृदय जैसे पोषण संस्थान और पाँव जैसा सुन्दर आर्क बनाने वाली सत्ता कितनी बुद्धिमान होगी इसकी तुलना न किसी इन्जीनियर से हो सकती है न डॉक्टर से । वह प्रत्येक कला-कौशल का ज्ञाता, सर्व निष्णात और सर्व प्रभुता सम्पन्न दानी केवल परमात्मा ही हो सकता है इससे कम मानना न केवल उस परमात्मा की अवमानना होगी अपितु यह एक प्रकार से स्वयं का ही आत्मघात होगा ।

इतने पर ही उसके अनुदान समाप्त नहीं हो जाते अग्नि में चिन्गारी, पदार्थ में परमाणु । सूर्य में किरणों की तरह वह स्वयं भी मनुष्य की हृदय गुहा में बैठकर उसे प्रतिपल आत्मोत्कर्ष की प्रेरणा देता रहता है । गलत मार्ग पर चलने से पहले ही उसकी प्रेरणा रोकती है, पर मनुष्य अन्तःकरण की उस पुकार को अनसुनी कर स्वेच्छाचारिता बरतता और उस अपराध का दण्ड, रोग, शोक, क्लेश, कलह और मानसिक सन्ताप अरूप में भुगतता रहता है । फिर भी उसकी वासनाएँ शान्त नहीं होतीं, वह अपनी वासनाओं की, तृष्णा की, अतृप्त कामनाओं की प्यास बुझाने के लिए मानवेतर योनियों में भटकता है, तो भी उसकी दया, करुणा, उदारता एक पल को भी साथ नहीं छोड़ती और उसे निरन्तर ऊपर उठने, कामनाओं से मुक्ति पाकर शाश्वत, सनातन और दिव्य आनन्द की प्राप्ति के लिए प्रेरित करती रहती है । फिर भी इस सत्ता के अजस्र अनुदानों की ओर से आँख फेरकर मनुष्य प्यासा का प्यासा बना रहता है । माया के मूढ़ भ्रमजाल में पड़ा जीवन के बहुमूल्य क्षण मिट्टी के सोल नष्ट करता रहता है ।

वैज्ञानिक सृष्टि की नियामक विधि-व्यवस्था प्रत्येक अणु में विद्यमान दिव्य चेतना को नहीं झुठलाती । हरबर्ट स्पेंसर की दृष्टि में भगवान एक विराट् शक्ति है जो संसार की सब गतिविधियों का नियन्त्रण उसी प्रकार करता है जिस प्रकार घर का मुखिया, गाँव का प्रधान, जिले का कलेक्टर और प्रान्त का गवर्नर । राज्य के नियमों का हम इसलिए पालन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

करते हैं क्योंकि हमें राजदण्ड का भय होता है । नैतिक नियमों का पालन न करने पर हमें भय लगता है जबकि हम उसके लिए पूर्ण स्वतन्त्र होते हैं । यह इस बात का प्रमाण है कि संसार में कोई सर्वोच्चसत्ता काम करती है । निर्भीक व्यक्ति, नैतिक व्यक्ति ही हो सकता है इस तथ्य से वह भी स्पष्ट है कि वह प्रजावत्सल और न्यायकारी भी है ।

दार्शनिक काण्ट ने स्पेंसर के कथन को और भी स्पष्ट करते हुए लिखा है—नैतिक नियमों की स्वीकृति ही परमात्मा के अस्तित्व का प्रमाण और पूर्ण नैतिकता ही उसका स्वरूप है । संसार का बुरे से बुरा व्यक्ति भी किसी न किसी के प्रति नैतिक अवश्य होता है । चोर, डकैत और कसाई तक अपने बच्चों के प्रति दयालु और कर्तव्यपरायण होते हैं, जबकि वे जीवन भर कुत्सित कर्म ही करते रहते हैं । अपने भीतर से नैतिक नियमों की स्वीकृति इस बात का पुष्ट प्रमाण है कि संसार केवल नैतिकता के लिए ही जीवित है । उसी से संसार का निर्माण, पालन और पोषण हो रहा है । इसलिए परमात्मा नैतिक शक्ति के रूप में माना जाने योग्य है ।

हैब्रू ग्रन्थों में ईश्वर को "जेनोवाह" कहा गया है जेनोवाह का शाब्दिक अर्थ है—वह जो सदैव सत्य नीति ही प्रदान करता है । दार्शनिक प्लेटो ने उसे—"अच्छाई का विचार" कहा है । संसार के प्रत्येक व्यक्ति यहाँ तक कि जीव-जन्तुओं में भी अच्छाई की चाह रहती है । अच्छाई में ही आनन्द और आत्म-तृप्ति मिलती है । अच्छाई शरीर और सौन्दर्य की जो संयम और सदाचार द्वारा सुरक्षित हो, अच्छाई समाज की जो ईमानदारी, नेकनीयती, विश्वास, सहयोग और परस्पर प्रेम व भाईचारे की भावना से सुरक्षित हो, अच्छाई प्रकृति की जो रंग-बिरंगे फूलों, भोले-भाले पशु-पक्षियों के कलरव, उनकी क्रीड़ा द्वारा सुरक्षित हैं । इस तरह संसार में सर्वत्र अच्छाई के दर्शन करके प्रसन्नता अनुभव करते हैं । परमात्मा इस तरह अच्छाई का वह बीज है जो आँखों को दिव्य मनोरम और बहुत प्यारा लगता है ।

ईश्वर ज्वाला है और आत्मा चिन्गारी

ईश्वर वह चेतना शक्ति है जो ब्रह्माण्डों के भीतर और बाहर जो कुछ है उस सब में संव्याप्त है । उसके अगणित क्रिया-कलापों में एक कार्य इस प्रकृति का संचालन भी है । प्रकृति के अन्तर्गत जड़ पदार्थ और चेतना के कलेवर शरीर इन दोनों को सम्मिलित कर सकते हैं । प्रकृति और पुरुष का युग्म इसी दृष्टि से निरूपित हुआ है । जड़ और चेतन का सम्मिश्रण ही अपना यह विश्व है। इस विश्व की परिधि में ही हमारी इच्छाएँ, भाव-सम्वेदनाएँ, विचारणाएँ एवं गति-विधियाँ सीमित हैं । मस्तिष्क का निर्माण जिन तत्वों से हुआ है उसके लिए इतना ही सम्भव है कि इस ज्ञात एवं अविज्ञात विश्व-ब्रह्माण्ड की परिधि में ही सोचे, निष्कर्ष निकाले और जो कुछ सम्भव हो वह उसी परिधि में रहकर करे ।

विज्ञान अनुसंधान के आधार पर प्रकृति के थोड़े से रहस्यों का उद्घाटन अभी सम्भव हो सका है । जो जानना शेष है उसकी तुलना में उपलब्ध जानकारियाँ नगण्य हैं । अणु ऊर्जा अपने समय की बड़ी उपलब्धि मानी जाती है, पर मूर्धन्य विज्ञानवेत्ताओं का कथन है कि सूक्ष्मता की जितनी गहरी पर्तों में प्रवेश किया जायेगा उतनी ही अधिक प्रखरता का रहस्य विदित होता जायेगा । ढेले की तुलना में अणु शक्ति का चमत्कार अत्यधिक है । ठीक इसी प्रकार समूचे अणु पिण्ड की तुलना में उसका मध्यवर्ती नाभिक, न्यूक्लियस असंख्य गुनी शक्ति छिपाये बैठा है । अणु को सौर-मण्डल कहा जाय तो उसका मध्यवर्ती नाभिक सूर्य कहा जायेगा । सौर-मण्डल के सभी ग्रह-उपग्रहों को प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से सूर्य से ही अनुदान मिलते हैं और उसी आधार पर सौर-मण्डल का वर्तमान ढाँचा इस रूप में चल रहा है । यदि सूर्य नष्ट हो जायेगा तो फिर सौर-मण्डल का सीराजा ही बिखर जायेगा । तब यह पता भी न चलेगा कि प्रस्तुत ग्रह-उपग्रह अन्तरिक्ष में न जाने कहाँ विलीन हो जायेंगे और उनका न जाने क्या अन्त होगा ? अणु का मध्यवर्ती नाभिक कितना शक्तिशाली है और उसकी क्षमता जैसे अणु परिवार का संचालन कर रही है, इस बारीकी पर विचार करने मात्र से विज्ञानी मस्तिष्क चकित रह जाता है । कौन कहे, न्यूक्लियस के भीतर भी और कोई शक्ति परिवार काम कर रहा हो और फिर उसके भीतर भी कोई और जादूगरी बसी हुई हो । प्रतिविश्व—ऐन्टीयूनिवर्स—प्रतिकण एन्टीएटम—की चर्चा इन दिनों जोरों पर है । कहा जाता है कि अपनी दुनिया के ठीक पिछवाड़ बिल्कुल उससे सटी हुई एक और जादुई दुनिया है । उस अविज्ञात की सामर्थ्य इतनी अधिक होती जाती है जितनी कि शरीर की तुलना में आत्मा की । प्रतिकण और प्रतिविश्व के रहस्यों का पता चल जाय और उस पर किसी प्रकार अधिकार हो जाय तो फिर समझना चाहिए कि अभी प्राणि जगत का अधिपति कहलाने वाला मनुष्य तभी सच्चे अर्थों में सृष्टि का अधिपति कहलाने का दावा कर सकेगा ।

यह तो सूक्ष्मता की चर्चा हुई । स्थूलता की, विस्तार की बात तो सोचते भी नहीं बनती । आँखों से दीखने वाले तारे अपनी पृथ्वी से करोड़ों प्रकाश वर्ष दूर हैं । प्रकाश एक सेकण्ड में एक लाख छियासी हजार मील की चाल से चलता है । इस हिसाब से एक वर्ष में जितनी दूरी पार कर ली जाय वह एक प्रकाश वर्ष हुआ । कल्पना की जाय कि करोड़ों प्रकाश वर्ष में कितने मीलों की दूरी बनेगी । फिर यह तो दृश्य मात्र तारकों की बात है । अत्यधिक दूरी के कारण जो तारे आँखों से नहीं दीख पड़ते उनकी दूरी की बात सोच सकना कल्पना शक्ति से बाहर की बात हो जाती है । अपनी निहारिका में ही एक अरब सूर्य आँके गए हैं । उनमें से कितने ही सूर्य से हजारों गुने बड़े हैं । अपनी निहारिका जैसी अरबों, खरबों निहारिकाएँ इस निखिल ब्रह्माण्ड में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विद्यमान हैं । इस समस्त विस्तार की बात सोच सकना अपने लिए कितना कठिन पड़ेगा, यह सहज ही समझा जा सकता है ।

अणु की सूक्ष्मता और ब्रह्माण्ड की स्थूलता की गहराई, ऊँचाई का अनुमान करके हम चकित रह जाते हैं । अपनी पृथ्वी के प्रकृति रहस्यों का भी अभी नगण्य-सा विवरण हमें ज्ञात हो सका है, फिर अन्यान्य ग्रह-नक्षत्रों की आणविक एवं रासायनिक संरचना से लेकर वहाँ की ऋतुओं, परिस्थितियों तक से हम कैसे जानकार हो सकते हैं । इन ग्रहों की संरचना एवं परिस्थितियाँ एक-दूसरे से इतनी अधिक भिन्न हैं कि प्रत्येक ग्रह की एक स्वतन्त्र भौतिकी तैयार करनी होगी । हमें थोड़े से वैज्ञानिक रहस्य ढूँढ़ने और उपयोग में लाने के लिए लाखों वर्ष लगाने पड़े हैं फिर अगणित ग्रह-नक्षत्रों की, उनके मध्यवर्ती आकाश की स्थिति जानने के लिए जितना समय, श्रम एवं साधन चाहिए उन्हें जुटाया जा सकना अपने लिए कैसे सम्भव हो सकता है ?

वह सृष्टि की सूक्ष्मता और स्थूलता की चर्चा हुई । इसके भीतर जो चेतना काम कर रही है उसकी दिशा धाराएँ तो और भी विचित्र हैं । प्राणियों की आकृति-प्रकृति की विचित्रता देखते ही बनती है । प्रत्येक की अभिरुचि एवं जीवनयापन पद्धति ऐसी है जिसका एक-दूसरे के साथ कोई तालमेल नहीं बैठता । मछली का चिन्तन, रुझान, आहार, निर्वाह, प्रजनन, पुरुषार्थ, समाज आदि का लेखा-जोखा तैयार किया जाय तो वह नृतत्व विज्ञान से किसी भी प्रकार कम न बैठेगा । फिर संसार भर में मछलियों की भी करोड़ों जातियाँ-उपजातियाँ हैं और उनमें परस्पर भारी मित्रता पायी जाती है । इन सबका भी पृथक-पृथक शरीर शास्त्र, मनोविज्ञान, निर्वाह विधान एवं उत्कर्ष-अपकर्ष का अपने-अपने ढंग का विधि-विधान है । यदि मछलियों को मनुष्यों की तरह ज्ञान और साधन मिले होते तो उन्होंने अपनी जातियों-उपजातियों का उतना बड़ा ज्ञान भण्डार विनिर्मित किया होता जिसे मानव विज्ञान से आगे न सही पीछे तो किसी भी प्रकार नहीं कहा जा सकता था । बात अकेली मछली की नहीं है । करोड़ों प्रकार के जल-जन्तु हैं उनकी जीवनयापन प्रक्रिया एक दूसरे से अत्यधिक भिन्न है । जलचरों से आगे बढ़ा जाय तो थलचरों और नभचरों की दुनिया सामने आती है । कृमि-कीटकों से लेकर हाथी तक के थलचर—मच्छर से लेकर गरुड़ तक के नभचरों की आकृति-प्रकृति भिन्नता भी देखते ही बनती है । उनके आचार-विचार, व्यवहार, स्वभाव एक-दूसरे से अत्यधिक भिन्न हैं । व्याघ्र और शशक की प्रकृति की तुलना की जाय तो उनके बीच बहुत थोड़ा सामंजस्य बैठेगा अन्यथा उनकी निर्वाह पद्धति में लगभग प्रतिकूलता ही दृष्टिगोचर होगी । इन असंख्य प्राणियों की जीवन-पद्धति के पीछे जो चेतना तत्व काम करता है उसकी रीति-नीति कितनी भिन्नता अपने में सँजोये हुए है यह देखकर जड़ प्रकृति की विचित्रता पर जितना आश्चर्य होता था । चैतन्य में भी कहीं अधिक हैरानी होती है । कहना न होगा कि सर्वव्यापी ईश्वरीयसत्ता के ही यह क्रिया कौतुक हैं ।

सूक्ष्म जीवों की दुनिया और भी विचित्र है । आँखों से न दीख पड़ने वाले प्राणी हवा में—पानी में तैरते हैं । मिट्टी में बिखरे पड़े हैं और शरीर के भीतर जीवाणुओं के रूप में विद्यमान हैं । जीवाणु एवं विषाणु विज्ञान क्षेत्र की खोज को कहीं से कहीं घसीटे लिए जा रहे हैं । शरीर-शास्त्री, चिकित्सा-शास्त्री हैरान हैं कि इन शूरवीरों की अजेय सेना को वशवर्ती करने के लिए क्या उपाय किया जाय ? मलेरिया का मच्छर अरबों, खरबों की डी. डी. टी. खाकर भी अजर-अमर सिद्ध हो रहा है तो रोगाणुओं, विषाणुओं जैसे सूक्ष्म सत्ताधारी सूक्ष्म जीवों का सामना क्यों कर हो सकेगा ? सशस्त्र सेनाओं को परास्त करने के उपाय सोचे और साधन जुटाये जा सकते हैं, पर इन जीवाणुओं से निपटने का रास्ता ढूँढ़ने में बुद्धि हतप्रभ होकर बैठ जाती है । इन सूक्ष्म जीवों की अपनी दुनिया है । यदि उनमें से भी कोई अपनी जाति का इतिहास एवं क्रिया-कलाप प्रस्तुत कर सके तो प्रतीत होगा कि मनुष्यों की दुनिया उनकी तुलना में कितनी छोटी और कितनी पिछड़ी हुई है ।

अभी रासायनिक पदार्थों का, यौगिकों का, अणुओं का, तत्वों का विज्ञान अपनी जगह पर अलग ही समस्याओं और विवेचनाओं का ताना-बाना लिए खड़ा है । सृष्टि के किसी भी क्षेत्र में नजर दौड़ाई जाय, उधर ही शोध के लिए सुविस्तृत क्षेत्र खड़ा हुआ मिलेगा । मनुष्य को प्रस्तुत जानकारियों पर गर्व हो सकता है, पर जो जानने को शेष पड़ा है वह उतना बड़ा है कि समग्र जानकारी मिल सकने की बात असम्भव ही लगती है । मनुष्य की तुच्छता का, उसकी उपलब्धियों की नगण्यता का तब बोध होता है जब थोड़े से मोटे-मोटे आधारों से आगे बढ़कर गहराई में उतरा जाता है या ऊँचाई पर चढ़ा जाता है ।

ऊपर की पंक्तियाँ प्रकृति के जड़ पदार्थों और जीव कलेवरों के सम्बन्ध में थोड़ी-सी झाँकी कराती हैं और बताती हैं कि यह प्रसार विस्तार कितना अधिक है और उसे समझ सकने में मानवी बुद्धि कितनी स्वल्प है । सृष्टि वैभव को भी अकल्पनीय, अनिर्वचनीय एवं अगम्य ही कहा जा सकता है । फिर उस परमेश्वर के स्वरूप, उद्देश्य एवं क्रिया-कलाप को समझ सकने की बात कैसे बने, जो इस सूक्ष्म, स्थूल, चल, स्थिर प्रकृति से भीतर ही नहीं बाहर भी है और यह सारा बालू का महल उसने क्रीड़ा विनोद के लिए रच कर खड़ा कर लिया है ।

परमसत्ता का क्रीड़ा विनोद

काण्ट, हेगल, प्लेटो, एरिस्टाटल आदि प्रकृति विद्वान यह स्वीकार करते हैं कि एक ऐसी सत्ता है, जो ब्रह्माण्ड के रचयिता हैं या स्वयं ब्रह्माण्ड है, किन्तु इनमें से किसी ने भी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पूर्ण विचार देने में अपने आपको समर्थ नहीं पाया । संसार में जितने भी धर्म हैं, वह सब ईश्वरीय अस्तित्व को मानते हैं । प्रत्येक धर्म अपने ब्रह्म के प्रतिपादन में अनेक प्रकार के सिद्धान्त और कथाएँ प्रस्तुत करते हैं, किन्तु उस सत्ता का सविवेक प्रदर्शन इनमें से कोई नहीं कर सकता, तथापि वे उच्च सत्ता की सर्वशक्तिमत्ता पर अविश्वास नहीं करते ।

ईश्वर सम्बन्धी अनुसन्धान की वैज्ञानिक प्रक्रिया डार्विन से प्रारम्भ होती है । डार्विन एक महान् जीव-शास्त्री थे, उन्होंने देश-विदेश के प्राणियों, पशुओं और वनस्पतियों का गहन अध्ययन किया और १८५९ एवं १८७१ में प्रकाशित अपने दो ग्रन्थों में यह सिद्धान्त स्थापित किया कि संसार के सभी जीव एक ही आदि जीव के विकसित और परिवर्तित रूप हैं । उन्होंने बताया, संसार में जीवों की जितनी भी जातियाँ और उपजातियाँ हैं, उनमें बड़ी विलक्षण समानताएँ और असमानताएँ हैं । समानता यह कि उन सभी की रचना एक ही प्रकार के तत्व से हुई है और असमानता यह है कि उनकी रासायनिक बनावट सबसे अलग-अलग है । अनुवांशिकता का आधार रासायनिक स्थिति है, उसकी प्रतिक्रिया में भाग लेने वाली क्षमता चाहे कितनी सूक्ष्म क्यों न हो ।

इसके बाद मेंडल, हॉलैण्ड के ह्यूगो डी ब्रीज ने भी अनेक प्रकार के प्रयोग किए और यह पाया कि जीव में अनुवांशिक-विकास माता-पिता के सूक्ष्म गुणसूत्रों (क्रोमोसोम) पर आधारित हैं । हार्वर्ड यूनिवर्सिटी (अमेरिका) के डॉ. जेम्स वाट्सन और कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी (इंग्लैण्ड) के डॉ. फ्रांसिस क्रिक ने भी अनेक प्रयोगों द्वारा शरीर के कोशों (सेल्स) की भीतरी बनावट का विस्तृत अध्ययन किया और गुणसूत्रों (क्रोमोसोम) की खोज की । जीन्स (गुणसूत्रों में एक प्रकार की गाँठें) उसी की विस्तृत खोज का परिणाम थीं । इन वैज्ञानिकों ने बताया कि मनुष्य शरीर में डोरे की शक्ल में पाये जाने वाले गुणसूत्रों को यदि खींचकर बढ़ा दिया जाय तो उससे सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को नापा जा सकता है । बस इससे अधिक और मूल स्रोत की जानकारी वैज्ञानिक नहीं लगा पाये तब से उनकी खोजों की दिशा और ही है । उस एक अक्षर, अविनाशी और सर्वव्यापी तत्व के गुणों का पता लगाना उनके लिए सम्भव न हुआ, जो प्रत्येक अणु में सृजन या विनाश की क्रिया में भाग लेता है । हाँ इतना अवश्य हुआ कि वैज्ञानिकों ने यह सिद्ध कर दिया कि—(१) सारा जीव जगत एक ही तत्व से विकसित हुआ है, (२) गुणों के आधार पर जीवित शरीरों का विकास होता है।

यद्यपि यह जानकारियाँ अभी नितान्त अपूर्ण हैं तो भी उनसे मनुष्य को सत्य की यथार्थ जानकारी के लिए प्रेरणा अवश्य मिलती है । 'कटेम्प्रेरी थॉट ऑफ ग्रेट ब्रिटेन' के विद्वान लेखक ए. एन. विडगरी लिखते हैं—"वे तत्व जो जीवन का निर्माण करते हैं और जिनकी वैज्ञानिकों ने जानकारी की है, उनमें यथार्थ मूल्यांकन के अनुपात में बहुत कमी है, आज आवश्यकता इस बात की है कि सांसारिक अस्तित्व से भी अधिक विशाल मानवीय अस्तित्व क्या है, इसका पता लगाया जाय । विज्ञान से ही नहीं, बौद्धिक दृष्टि से भी उसकी खोज की जानी चाहिए । हमारा भौतिक अस्तित्व अर्थात् हमारे शरीर की रचना और इससे सम्बन्धित संस्कृति का मानव के पूर्ण अस्तित्व से कोई तालमेल नहीं है । इससे हमारी भावनात्मक सन्तुष्टि नहीं हो सकती, इसलिए हमें जीवन के मूल स्रोत की खोज करनी पड़ेगी । अपने अतीत और भविष्य के बीच थोड़ा-सा वर्तमान है, क्या हमें उतने से ही सन्तोष मिल सकता है, हमें अपने अतीत की स्थिति और भविष्य में हमारी चेतना का क्या होगा, हम संसार में क्यों हैं और क्या कुछ ऐसे आधार हैं जिनसे बँधे होने के कारण हम संसार में हैं, इनकी खोज होनी चाहिए ।" इन पंक्तियों में वही बात प्रतिध्वनित होती है, जो ऊपर कही गई है । विज्ञान ने निष्कर्ष भले ही न दिया हो पर उसने जिज्ञासा देकर मनुष्य का कल्याण ही किया है । 'अथातो ब्रह्म जिज्ञासा' ब्रह्म की पहचान के लिए हम तभी तत्पर होते हैं, जब उस मूल स्रोत के प्रति हमारी जिज्ञासा जाग पड़ती है ।

इस बिन्दु पर पहुँचकर हम कह सकते हैं कि ब्रह्मविद्या का अर्थ और इति दोनों ही वेदान्त धर्म में बहुत पहले से हैं । 'एको ब्रह्म द्वितीयो नास्ति' 'एक नूर से सब जग उपजिया' 'संकल्पयति यन्नाम प्रथमोऽसौ प्रजापतिः, तत्तदेवाशु भवति तस्येदं कल्पनं जगत् । (योगवाशिष्ठ ६।२।१८६।६), सृष्टि के आदि में एक ब्रह्मा ही था, उसने जैसे-जैसे संकल्प किया, वैसे-वैसे यह कल्पना जगत् बनता गया । 'एक मेवाद्वयं ब्रह्म' (छान्दोग्य ६।२।१) वही एक अद्वितीय और ब्रह्म होकर विराजता है । 'ईकोदेवः सर्वभूतेषु गूढ़ः सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा । कर्माध्यक्षः सर्वभूताधिवासः साक्षी चेता केवलोनिर्गुणश्च ।

श्वेताश्व—६।११,

वही एक देव सब भूतों में ओत-प्रोत होकर सबकी अन्तरात्मा के रूप में सर्वत्र व्याप्त है, वह इस कर्मरूप शरीर का अध्यक्ष है । निर्गुण होते हुए भी चेतना-शक्तियुक्त है । पूर्व में क्या किया है, अब क्या कर रहा है, जीव की इस सम्पूर्ण क्रिया का साक्षी वही है, वही सब भूतों में प्राण धारण करके जीव रूप में वास करता है ।

उपर्युक्त आख्यानों और पाश्चात्य वैज्ञानिकों की इस खोज में कि—"संसार के समस्त पदार्थ एक ही तत्व से बने हुए हैं" जबर्दस्त साम्य है । वेदान्त के यह प्रतिपादन आज से लाखों वर्ष पूर्व लिखे गए हैं, इसलिए जब हम अकेले वेदान्त को कसौटी पर लाते हैं तो उसकी परिपूर्णता और वैज्ञानिकता में कोई सन्देह नहीं रह जाता । जब तक वह एक था, तब तक 'पूर्ण परब्रह्म' था जब वही अपनी वासनाओं के कारण जीव रूप में आया तो अद्वैत से द्वैत बना, जीव जब अपने सांसारिक भाव से अपने शाश्वत अंश और मूल ब्रह्म पर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विचार करता है तो वही स्थिति 'त्रैत' कहलाती है । इसी का विकास और आत्मा को परमात्मा में लीन कर देने पर शरीरधारी की जो स्थिति होती है, वही विशिष्टाद्वैत के नाम से कहा गया है, इसमें न कहीं कोई भ्रांति है, न मत अनैक्य । वेदान्त ने यह प्रतिपादन प्रत्येक स्थिति के व्यक्ति की समझ के लिए किए हैं, वैसे सिद्धान्त में वह वैज्ञानिक मान्यताओं पर ही टिका हुआ है । कैवल्योपनिषद के पाश्चात्य वैज्ञानिक मान्यताओं और अपने पूर्वात्म दर्शन को एक स्थान पर लाकर दोनों में सामंजस्य व्यक्त किया गया है और कहा है—

यत् परं ब्रह्म सर्वात्मा विश्वस्यायतनं महत् ।
सूक्ष्मात सूक्ष्मतरं नित्यं तत्वमेव त्वमेव तत् ॥ १६॥
अणोरणीयानहमेव तद्वन्महान
विश्वमिदं विचित्रम् ।
पुरातनोऽह पुरुषोऽहमीशा
हिरण्यमोऽहं शिवरूपमस्मि ॥ २०॥

अर्थात्—जिस परब्रह्म का कभी नाश नहीं होता, जिसे सूक्ष्म यन्त्रों से भी नहीं देखा जा सकता जो इस संसार के इन समस्त कार्य और कारण का आधारभूत है, जो सब भूतों की आत्मा है, वही तुम हो, तुम वही हो और "मैं छोटे से भी छोटा और बड़े से बड़ा हूँ, इस अद्‌भुत संसार को मेरा ही स्वरूप मानना चाहिए । मैं ही शिव और ब्रह्मा स्वरूप हूँ, मैं ही परमात्मा और विराट् पुरुष हूँ ।"

उपर्युक्त कथन में और वैज्ञानिकों द्वारा जीव-कोश से सम्बन्धित जो अब तक की उपलब्धियाँ हैं, उनमें पाव-रत्ती का भी अन्तर नहीं है । प्रत्येक जीव-कोश का नाभिक (न्यूक्लियस) अविनाशी तत्व है वह स्वयं नष्ट नहीं होता पर वैसे ही अनेक कोश (सेल्स) बना लेने की क्षमता से परिपूर्ण हैं । इस तरह कोशिका की चेतना को ही ब्रह्म की इकाई कह सकते हैं, चूँकि वह एक आवेश, शक्ति या सत्ता है, चेतन है, इसलिए वह अनेकों अणुओं में भी व्याप्त इकाई ही है । इस स्थिति को जीव भाव कह सकते हैं पर तो भी उसमें पूर्ण ब्रह्म की सब क्षमताएँ उसी प्रकार विद्यमान हैं, जैसे समुद्र की एक बूँद में पानी के सब गुण विद्यमान होते हैं । वैज्ञानिकों का मत है कि शरीर में ६ खरब कोशिकाएँ हैं, इन सबकी सूक्ष्म चेतना की पूर्ण जानकारी वैज्ञानिकों को नहीं मिली पर हमारा वेदान्त उसे अहंभाव के रूप में देखता है और यह कहता है कि चेतना की अहंभाव की जिस प्रकार की वस्तु में रुचि या वासना बनी रहती है, वह वैसे ही पदार्थों द्वारा शरीर का निर्माण किया करता है, नष्ट नहीं होता । वही इच्छाएँ, अनुभूति, संवेग, संकल्प और जो भी सचेतन क्रियाएँ हैं करता या कराता है, पदार्थ में यह शक्ति नहीं है । क्योंकि ब्रह्म दृश्य नहीं विचार है उसे 'प्रज्ञान' भी कहते हैं ।

विचार से भी परे

परब्रह्म को विचार इसलिए कहा गया कि वह सूक्ष्म है अन्यथा शास्त्रकारों ने उसे अचिंत्य, अगोचर और अगम्य कहा गया है । उसकी व्याख्या विवेचना में तत्व वेत्ताओं ने कुछ चर्चा की है पर साथ ही नेति-नेति कहकर अपने ज्ञान परिधि की स्वल्पता स्वीकार कर ली है । वस्तुतः समग्र ब्रह्म का विवेचन बुद्धि विज्ञान एवं साधनों के माध्यम से सम्भव हो ही नहीं सकता । तब प्रश्न उत्पन्न होता है कि ईश्वर प्राप्ति की, ईश्वर दर्शन की जो चर्चाएँ होती रहती हैं, वे क्या हैं ? यहाँ इतना ही कहा जा सकता है कि जीव और ब्रह्म की मिलन पृष्ठ भूमि के रूप में जिस ईश्वर की विवेचना होती है उसी का साक्षात्कार एवं अनुभव सम्भव है ।

आकाश और धरती जहाँ मिलते हैं उसे अन्तरिक्ष कहते हैं । अन्तरिक्ष का सुहावना दृश्य सूर्योदय और सूर्यास्त के समय प्रातः सायं देखा जा सकता है । दो रंगों के मिलने से एक तीसरा रंग बनता है । भूमि और बीज के समन्वय की प्रतिक्रिया अंकुर के रूप में फूटती है । पति-पत्नी का मिलन अभिनव उल्लास के रूप में प्रकट होता है और प्रतिफल सन्तान के रूप में सामने आता है । जीव और ब्रह्म के मिलन की प्रतिक्रिया को ईश्वर कह सकते हैं । गैस और गैस मिल कर पानी के रूप में परिणत हो जाती है । शरीर और प्राण का मिलन जीवन के रूप में दृष्टिगोचर होता है । आग और जल के मिलने से भाप बनती है । नैगेटिव और पौजिटिव धाराएँ मिलने पर शक्तिशाली विद्युत प्रवाह गतिशील होता है । हम उसी ईश्वर से परिचित होते हैं जो आत्मा से परमात्मा के मिलन की प्रतिक्रिया के रूप में अनुभव की जाती है ।

वेदान्त दर्शन में ईश्वर के रूप-स्वरूप की जितने तात्विक स्वरूप की विवेचना की गई है उतनी अन्यत्र कहीं दृष्टिगोचर नहीं होती । 'तत्वमसि', 'अयमात्मा ब्रह्म', शिवोहम् सच्चिदानन्दोहम् सोहम्, आदि सूत्रों में यह रहस्योद्‌घाटन किया गया है कि यह आत्मा ही ब्रह्म है । यहाँ आत्मा से तात्पर्य पवित्र और परिष्कृत चेतना से है । अति मानस्-सुपर ईगो-पूर्ण पुरुष-भगवान परमहंस—स्थितिप्रज्ञ आदि शब्दों में व्यक्तित्व के उस उच्चस्तर का संकेत है जिसे देवात्मा एवं परमात्मा भी कहा जाता है । इसी स्थिति को उपलब्ध कर लेना आत्म-साक्षात्कार-ईश्वर प्राप्ति आदि के नाम से निरूपित किया गया है । बन्धन, मुक्ति या जीवन-मुक्ति इसी स्थिति को कहते हैं ।

आत्मा चिन्गारी है और परमात्मा ज्वाला । ज्वाला की समस्त सम्भावनाएँ चिन्गारी में विद्यमान हैं । अवसर मिले तो वह सहज ही अपना प्रचण्ड रूप धारण करके लघु से महान् बन सकता है । बीज में वृक्ष की समस्त सम्भावनाएँ विद्यमान हैं । अवसर न मिले तो बीज चिरकाल तक उसी क्षुद्र स्थिति में पड़ा रह सकता है, किन्तु यदि परिस्थिति बन जाय तो वही बीज विशाल वृक्ष के रूप में विकसित हुआ दृष्टिगोचर हो सकता है । छोटे से शुक्राणु में एक पूर्ण मनुष्य अपने साथ अगणित वंश परम्पराएँ और विशेषताएँ छिपाये रहता है । अवसर न मिले तो वह उसी स्थिति में बना रह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सकता है, किन्तु यदि उसे गर्भ के रूप में विकसित होने की परिस्थिति मिल जाय तो एक समर्थ मनुष्य का रूप धारण करने में उसे कोई कठिनाई न होगी । अणु की संरचना सौर-मण्डल के समतुल्य है । अन्तर मात्र आकार विस्तार का है । जीव ईश्वर का अंश है । अंश में अंशी के समस्त गुण पाये जाते हैं । सोने के बड़े और छोटे कण में विस्तार भर का अन्तर है तात्विक विश्लेषण में उनके बीच कोई भेद नहीं किया जा सकता ।

उपासना और साधना के छैनी हथौड़े से जीव के अनगढ़ रूप को कलात्मक देव प्रतिमा के रूप में परिणत किया जाता है । अध्यात्म शब्द का तात्पर्य ही आत्मा का दर्शन एवं विज्ञान है । इस सन्दर्भ के सारे क्रिया- कलापों का निर्माण निर्धारण मात्र एक ही प्रयोजन के लिए किया गया है कि व्यक्तित्व को, चेतना की उच्चतम, परिष्कृत, सुविकसित, सुसंस्कृत स्थिति में पहुँचा दिया जाय । इस लक्ष्य की उपलब्धि का नाम ही ईश्वर प्राप्ति है । आत्म-साक्षात्कार एवं ईश्वर दर्शन इन दोनों का अर्थ एक ही है—आत्मा में परमात्मा की झांकी अथवा परमात्मा में आत्मा की सत्ता का विस्तार । द्वैत को मिटा कर अद्वैत की प्राप्ति मनुष्य जीवन का लक्ष्य है । इसकी पूर्ति के लिए या तो ईश्वर को मनुष्य स्तर का बनाना पड़ेगा या मनुष्य को ईश्वर तुल्य बनने का प्रबल पुरुषार्थ करना पड़ेगा ।

अध्यात्म क्षेत्र की भ्रान्तियाँ भी कम नहीं हैं । बाल-बुद्धि के लोग आत्मा पर चढ़े कषाय-कल्मषों को काटने के लिए जो संघर्ष करना पड़ता है उस झंझट से कतराते हैं और सस्ती पगडण्डी ढूँढ़ते हैं । वे सोचते हैं पूजा-पत्री के सस्ते क्रिया-कृत्यों से ईश्वर को लुभाया, फुसलाया जा सकता है और उसे मनुष्य स्तर का बनने के लिए सहमत किया जा सकता है । वे सोचते हैं हम जिस घटिया स्तर पर हैं उसी पर बने रहेंगे । प्रस्तुत दृष्टिकोण एवं क्रिया-कलाप में कोई हेर-फेर न करना पड़ेगा । 'ईश्वर' को अनुकूल बनाने के लिए इतना ही काफी है कि पण्डितों की बताई पूजा-पत्री का उपचार पूरा कर दिया जाय । इसके बाद ईश्वर मनुष्य का आज्ञानुवर्ती बन जाता है और उचित अनुचित जो भी मनोकामनाएँ की जायें उन्हें पूरी करने के लिए तत्पर खड़ा रहता है । आमतौर से उपासना क्षेत्र में यही भ्रान्ति सिर से पैर तक छाई हुई है । मनोकामना पूर्ति के लिए पूजा-पत्री का सिद्धान्त तथाकथित भक्तजनों के मन में गहराई तक घुसा बैठा है । वे उपासना की सार्थकता तभी मानते हैं जब उनके मनोरथ पूरे होते चलें । इसमें कमी पड़े तो वे देवता मन्त्र, पूजा, सभी को भरपेट गालियाँ देते देखे जाते हैं । कैसी विचित्र विडम्बना है कि छोटा-सा गन्दा नाला गंगा को अपने चंगुल में जकड़े और यह हिम्मत न जुटाये कि अपने को समर्पित करके गंगाजल कहलाये ।

परब्रह्म एक ऐसी चेतना है जो ब्रह्माण्ड के भीतर और बाहर एक नियम व्यवस्था के रूप में ओत-प्रोत हो रही है । उसके सारे क्रिया-कलाप एक सुनियोजित विधि-विधान के अनुसार गतिशील हो रहे हैं । उन नियमों का पालन करने वाले अपनी बुद्धिमत्ता अथवा ईश्वर की अनुकम्पा का लाभ उठाते हैं । भगवान की बिजली से उपमा दी जा सकती है । बिजली का ठीक उपयोग करने पर उससे अनेक प्रकार के यन्त्र चलाये और लाभ उठाये जा सकते हैं, पर निर्धारित नियमों का उल्लंघन किया जाय तो बिजली उन्हीं भक्त सेवकों की जान ले लेती है, जिन्होंने उसे घर बुलाने में ढेरों पैसा, मनोयोग एवं समय लगाया था । उपासना ईश्वर को रिझाने के लिए नहीं, आत्म-परिष्कार के लिए की जाती है । छोटी मोटर में कम पावर रहती है और थोड़ा काम होता है । बड़ी मोटर लगा देने से अधिक पावर मिलने लगती है और ज्यादा लाभ मिलता है । बिजलीघर में तो प्रचण्ड विद्युत भण्डार भरा पड़ा है । उससे गिड़गिड़ा कर अधिक शक्ति देने की प्रार्थना तब तक निरर्थक ही जाती रहेगी जब तक घर का फिटिंग मीटर, मोटर आदि का स्तर ऊँचा न उठाया जाय । प्रार्थना के सत्परिणामों की बहुत चर्चा रहती है । भगवत् कृपा के अनेक चमत्कारों का वर्णन सुनने को मिलता रहता है । उस सत्य के पीछे यह तथ्य अविच्छिन्न रूप में जुड़ा हुआ मिलेगा कि भक्त ने पूजा उपासना के प्रति गहरी श्रद्धा उत्पन्न की और उस श्रद्धा ने उसके चिन्तन एवं कर्तृत्व को देवोपम बना दिया । जहाँ यह शर्त पूरी की गई है वहीं निश्चित रूप से ईश्वरीय अनुकम्पा की वर्षा भी हुई है, पर जहाँ फुसलाने की धूर्तता को भक्ति का नाम दिया गया है वहाँ निराशा ही हाथ लगी है ।

ईश्वर का सृष्टि विस्तार अकल्पनीय है । उसमें निवास करने वाले प्राणियों की संख्या का निर्धारण भी असम्भव है । पृथ्वी पर रहने वाले जलचर, थलचर, नभचर, दृश्य, अदृश्य प्राणियों की संख्या कुल मिलाकर इतनी बड़ी है कि उनके अंक लिखते-लिखते इस धरती को कागज बना लेने से भी काम न चलेगा । इतने प्राणियों के जीवन-क्रम में व्यक्तिगत हस्तक्षेप करते रहना, अलग-अलग नीति निर्धारित करना और फिर उसे प्रार्थना उपेक्षा के कारण बदलते रहना ईश्वर के लिए भी सम्भव नहीं हो सकता । ऐसा करने से तो उस पर व्यक्तिवादी द्वेष का आक्षेप लगेगा और सृष्टि सन्तुलन का कोई आधार ही न रहेगा । ईश्वर ने नियम मर्यादा के बन्धनों में क्रिया की प्रतिक्रिया के रूप में अपनी सारी व्यवस्था बना दी है और उसी चक्र में भ्रमण करते हुए, जीवधारी अपने पुरुषार्थ और प्रमाद का भला-बुरा परिणाम भुगतते रहते हैं । ईश्वर दृष्टा और साथी की तरह यह सब देखता रहता है । उसकी जैसी महान् सत्ता के लिए यही उचित है और यही शोभनीय । पूजा करने वालों के प्रति राग और न करने वालों के प्रति उपेक्षा अथवा द्वेष की नीति यदि उसने अपनाई होती तो निश्चय ही इस संसार में भ्रष्टाचार एवं अव्यवस्था का कोई अन्त ही न रहता । जो लोग इस दृष्टि से पूजा उपासना करते हैं कि उसके फलस्वरूप ईश्वर को

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

फुसलाकर उससे मनोवांछाएँ पूरी करा ली जायेंगी, वे भारी भूल करते हैं । पूजा को कर्म व्यवस्था का प्रतिद्वन्द्वी नहीं बनाया जा सकता । भगवान के अनुकूल हम बनें यह समझ में आने वाली बात है, पर उल्टा उसी को कठपुतली बना कर मर्जी मुताबिक नचाने की बात सोचना बचकानी ढिठाई के अतिरिक्त और कुछ नहीं है । हमें ईश्वर से व्यक्तिगत राग-द्वेष की अपेक्षा नहीं करनी चाहिए वरन् उसकी विधि व्यवस्था के अनुरूप बनकर अधिकाधिक लाभान्वित होने के राजमार्ग पर चलना चाहिए ।

भगवान को इष्टदेव बनाकर उसे प्राप्त करने का प्रयत्न किया जाता है । इष्ट का अर्थ है लक्ष्य । हम भगवान के समतुल्य बनें । उसी की जैसी उदारता, व्यापकता, व्यवस्था, उत्कृष्टता, तत्परता अपनायें यही हमारी रीति-नीति होनी चाहिए । इस दिशा में जितना मनोयोगपूर्वक आगे बढ़ा जायेगा उसी अनुपात में ईश्वरीय सम्पर्क का आनन्द और अनुग्रह का लाभ मिलेगा । वस्तुतः अध्यात्म साधना का एकमात्र उद्देश्य आत्मसत्ता को क्रमशः अधिकाधिक पवित्र और परिष्कृत बनाते जाना है । यही सुनिश्चित ईश्वर की प्राप्ति और साथ ही उस मार्ग पर चलने को जो विभूतियाँ मिलती रही हैं, उन्हें उपलब्ध करने का राजमार्ग है ।

समर्थ सत्ता को खोजें

घटना २८ जून, १९०४ की है । न्यूयार्क अमेरिका के एक डॉक्टर श्री रेमर की धर्मपत्नी विश्राम कर रही थीं । उनकी एक पुत्री—जेस्सी ४ माह पूर्व ही अपनी दादी के पास केलिफोर्निया गई हुई थी । माँ-बेटी के बीच की भौगोलिक दूरी ३००० किलोमीटर थी । अकस्मात श्रमती रेमर चीख कर पलंग से खड़ी हो गई डॉक्टर साहब दौड़े-दौड़े आये । पूछा क्या बात है ? श्रीमती रेमर ने कहा—मैंने अभी-अभी जेस्सी के चीखने की आवाज सुनी, ऐसा लगा वह किसी संकट में है । डॉक्टर ने धर्मपत्नी के शरीर का परीक्षण किया । हृदय, नाड़ी, रक्तचाप सभी असामान्य थे, उन्होंने ज्ञात करना चाहा तुमने कोई स्वप्न तो नहीं देखा ? श्रीमती रेमर ने बताया वह बिल्कुल जाग्रत अवस्था में थी, उन्हें भयंकर चीख के साथ अतिरिक्त कुछ सुनाई नहीं पड़ा । मैंने आवाज पहचानी वह केवल जेस्सी की थी ।

उस समय और कोई बात तो नहीं हुई, किन्तु दो दिनों तक घर में विलक्षण मायूसी छाई रही । तीसरे दिन वह निराशा की स्थिति पूर्ण विहाग में तब बदल गई जब सचमुच जेस्सी के दुर्घटनाग्रस्त होने का तार मिला । आश्चर्य की बात यह थी कि श्रीमती रेमर ने जिस समय चीख सुनी वह और जेस्सी के कार एक्सीडेंट जिससे उसका प्राणान्त हुआ—का समय एक ही था ।

एक अन्य घटना—फ्रान्स के रियर एडमिरल गैलरी की आत्मकथा से उदधृत है । आठ घन्टियाँ (एट बेल्स) नामक उक्त आत्मकथा में गैलरी महाशय लिखते हैं—मुझे सोमवार को अपनी ड्यूटी पर जाना था । रविवार की रात जब मैं सोया तो स्वप्न देखा कि मैं अपने जहाज पर बैठा हूँ, जहाज चलने की तैयारी में है । यात्री ऊपर आ रहे हैं । दो युवक आते हैं, मैंने उनसे नाम पूछा—एक ने अपना नाम डिक ग्रेन्स दूसरे ने पाप-कनवे बताया । तभी जहाज में एकाएक विस्फोट होता है पर यही दोनों जख्मी होते हैं और पाप मर जाता है । स्वप्न इतनी गम्भीर मनःस्थिति में देखा था कि सोकर उठने के बाद भी वह मानस पटल पर छाया रहा । जबकि आये दिन दिखने वाले स्वप्न जोर देने पर भी याद नहीं आते ।

आश्चर्य वहाँ से प्रारम्भ हुआ जब मैंने ऑफिस जाकर जहाज के यात्रियों की लिस्ट पर दृष्टि दौड़ाई मुझे यह देखकर भारी हैरानी हुई कि जो नाम इससे पहले कभी सुने भी नहीं थे, जो रात स्वप्न में देखे थे वे सचमुच उस लिस्ट में थे । यह देखते ही हृदय किसी अज्ञात आशंका से भर गया । फिर भी जीवन की गति तो कोई न चलाना चाहे तो भी चलती है । जहाज ने ठीक समय पर प्रस्थान किया पर अभी उसने अच्छी तरह बन्दरगाह भी नहीं छोड़ा था कि एक इन्जन में विस्फोट हुआ, केवल डिकग्रेन्स और पाप कनवे दुर्घटनाग्रस्त हुए, जिनमें से पाप कनवे की तत्काल मृत्यु हो गई ।

एक तीसरी घटना—डरहम की एक स्त्री से सम्बन्धित है, पैरासाइकोलॉजी संस्थान कैलीफोर्निया के रिकॉर्ड से ली गई । डरहम की एक स्त्री अपने बच्चों के साथ स्नान के लिए निकली । घर में उस समय उक्त महिला अर्थात् उस स्त्री की सास ही रह गई । अभी वह स्त्री वहाँ से कुछ सौ गज ही मोड़ पार कर गई होगी कि उसकी सास बुरी तरह चिल्लाई—बहू को खतरा है । पास-पड़ौस के लोग दौड़े और इस पागलपन पर हँसे भी, किन्तु दो घण्टे पीछे ही शेरिफ ने सूचना दी कि रास्ते में एक्सीडेंट हो जाने से अस्पताल में महिला का प्राणान्त हो गया है ।

ऊपर एक ही तरह की तीन घटनाएँ दी हैं जो न तो भाव सम्प्रेषण (टेलेपैथी) हैं और न ही परोक्षदर्शन (क्लेरवायेन्स) । टेलीपैथी का अर्थ उस आभास से है जिसमें किसी मित्र, परिचित, कुटुम्बी या प्रिय परिजन द्वारा भावनाओं की अत्यधिक गहराई से याद किया गया हो और वह सम्वेदना इस व्यक्ति तक पहुँची हो । इसी तरह दूरदर्शन का अर्थ तो मात्र भौगोलिक दूरी को किसी अतीन्द्रिय क्षमता से पार कर किसी घटना का आभास पाया गया हो । ऊपर तीन घटनाएँ प्रस्तुत की गई हैं उनमें एक का सम्बन्ध वर्तमान से है तो शेष दो का अतीत और भविष्य से । जो हो रहा है वह देखा जा सकता है जो हो चुका है उसे भी जाना जा सकता है कि अभी तक जो हुआ ही नहीं यदि उसकी जानकारी हो जाती है तो उसे न तो दूरदर्शन ही कहा जायेगा और न ही दूरसंचार । वास्तव में इस तरह की अनुभूतियाँ आये दिन हर किसी को होती रहती हैं और उनका

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मानव-जीवन से गहन आध्यात्मिक सम्बन्ध भी है । तथापि उन्हें समझ पाना हर किसी के लिए सम्भव नहीं होता ।

वेदान्त दर्शन के अनुसार सृष्टि में एक "ब्राह्मी चेतना" या परमात्मा ही एक ऐसा तत्व है जो सर्वव्यापी है अर्थात् ब्रह्माण्ड उसी में अवस्थित है । वह काल की सीमा से परे है अर्थात् भूत, भविष्य, वर्तमान तीनों भी उसी में समाहित हैं । उक्त तीनों घटनाओं का उल्लेख करते हुए 'एक्स्प्लोरिंग साइकिक फेनामेना बियाण्ड एण्ड मैटर' पुस्तक के लेखक श्री डी. स्काट रोगों ने उक्त तथ्य का स्मरण कराते हुए लिखा है कि भावनाएँ तथा विचार 'प्राणशक्ति की स्फुरणा' (डिस्चार्ज ऑफ वाइटल फोर्स) के रूप में होती हैं । यह स्फुरणा यदि एक ही समय में एक-दूसरे को आत्मसात् करती है तब तो वह दूरसंचार हो सकता है, किन्तु यदि वह समय की सीमाओं का अतिक्रमण करता है तो उसका अर्थ यही होगा कि माध्यम को आधारभूत सत्ता या ब्राह्मी चेतना होती है । इस चेतना की कल्पना आइन्स्टीन ने भी सापेक्षवाद के सिद्धान्त में की है और यह लिखा है कि यदि प्रकाश की गति से भी कोई तीव्र गति वाला तत्व होता है तो उसके लिए बीते कल, आज और आने वाले कल में कोई अन्तर ही न रहेगा । भारतीय शास्त्र पग-पग पर उसी महान् सत्ता में अपने आप बुलाने और परम पद पाने की बात कहते हैं निःसन्देह वह एक अति समर्थ, अत्यन्त सम्वेदनशील स्थिति होगी । यह घटनाएँ इस दिक्कालातीत चिन्मय ब्रह्म सत्ता से अपनी अभिन्नता जुड़ने की अनुभूति ही हो सकती है । क्षणिक सम्पर्क इतना आश्चर्यजनक हो सकता है तो उसकी प्रत्यक्ष अनुभूति कितनी सामर्थ्य प्रदान करने वाली होगी, तब मनुष्य को किसी प्रकार के अभाव वस्तुतः क्योंकर सताते होंगे ?

ऋग्वेद में एक ऋचा आती है—'अग्निना अग्नि समिध्यते, अर्थात् अग्नि से अग्नि प्रदीप्त होती है । आत्मज्ञान आत्मानुभूति से ब्रह्म प्राप्ति इसी सिद्धान्त पर होती है । उपर्युक्त घटनाएँ 'अन्तः स्फुरण' तथा 'आत्म जागृति' की क्षणिक अनुभूतियाँ हैं । रेडियो घुमाते-घुमाते अनायास कोई अति सूक्ष्म स्टेशन सेकण्ड के सौवें हिस्से में पकड़ में आ जाता है फिर ढूँढ़ने से भी नहीं मिलता । यह घटनाएँ वैसा ही तत्व बोध हैं, विस्तृत अनुभूति, ज्ञान प्राप्ति, ईश्वर की शक्तियों को अनुभव करने के लिए तो आत्म परिष्कार की गहराई में ही उतरना पड़ेगा । जो लोग सांसारिकता में ही पड़े रहेंगे वे न तो उस महान् को अनुभव कर सकेंगे न पा सकेंगे । वे तो ऐसी घटनाओं पर भी अटकलें ही लगाते रहेंगे ।

असीम को खोजें

यह खोज, खबर इसलिए भी उपयोगी है कि 'एकाकीपन' नामक कोई तत्व अगले दिनों शेष नहीं रहने वाला है । इस विश्व का कण-कण एक-दूसरे से अत्यन्त सघनता और जटिलता के साथ जुड़ा हुआ है, उन्हें पृथक करने से किसी की सत्ता अक्षुण्ण नहीं रह सकती । सब एक-दूसरे के साथ इतनी मजबूत जंजीरों से बँधे हुए हैं कि पृथकता की बात सोचना दूसरे अर्थों में मृत्यु को आमन्त्रण देना ही कहा जा सकता है ।

शरीर में कोशिकाओं की स्वतन्त्र सत्ता अवश्य है पर वह अपने आप में पूर्ण नहीं है । एक से दूसरे का पोषण होता है और दूसरे-तीसरे को बल मिलता है । हम सभी एक-दूसरे पर निर्भर हैं । यहाँ न कोई स्वतन्त्र न स्वावलम्बी । साधन सामूहिकता ही विभिन्न प्रकार के क्रिया-कलापों, अस्तित्वों और तथ्यों की जननी है, मानवी प्रगति का यही रहस्य है । प्रकृति प्रदत्त समूह संरचना का उसने अधिक बुद्धिमत्तापूर्वक लाभ उठाकर समाज व्यवस्था बनाई और सहयोग के आधार पर परिवार निर्माण से लेकर शासन सत्ता तक के बहुमुखी घटक खड़े किए हैं । एक-दूसरे के लिए वे किस प्रकार उपयोगी सिद्ध होंगे । पारस्परिक सहयोग से किस-किस प्रकार एक-दूसरे की सुखसुविधा बढ़ायें । इसी रीति-नीति के अभिवर्धन को अग्रगामी बनाने के लिए धर्म, अध्यात्म और तत्व-ज्ञान की आधारशिला रखी गई । भौतिक विज्ञान की खोज और प्रगति ने प्रकृतिगत परमाणुओं की इसी रीति-नीति का परिचय दिया है । जड़ अथवा चेतना किसी भी पक्ष को देखें, इस विश्व के समस्त आधार परस्पर सम्बद्ध प्रतीत होते हैं और उनकी सार्थकता एक-दूसरे के साथ जुड़े हुए रहने से ही सिद्ध होती है । एकाकी इकाइयाँ तो इतनी नगण्य हैं कि वे अपने अस्तित्व का न तो परिचय दे सकती हैं और न उसे रख सकती हैं ।

यह सिद्धान्त ग्रह-नक्षत्रों पर भी लागू होता है । विश्व-ब्रह्माण्ड के समस्त ग्रह नक्षत्र अपनी सूत्र संचालक आकाश गंगाओं के साथ जुड़े हैं और आकाश गंगाएँ महतत्व हिरण्य गर्भ की उँगलियों में बँधी हुई कठपुतलियाँ भर हैं । अगणित सौर-मण्डल भी एक-दूसरे का परिपोषण करते हुए अपना क्रिया-कलाप चला रहे हैं । सूर्य ही अपने ग्रहों को गुरुत्वाकर्षण में बाँधे हो और उन्हें ताप प्रकाश देते हो सो बात नहीं है, बदले में ग्रह परिवार भी अपने शासनध्यक्ष सूर्य का विविध आधारों से पोषण करता है । सौर परिवार के ग्रह अपनी जगह से छिटक कर किसी अन्तरिक्ष में अपना कोई और पथ बना लें तो फिर सूर्य का सन्तुलन भी बिगड़ जायेगा और वह आज की स्थिति में न रहकर किसी चित्र-विचित्र विभीषिका में उलझा हुआ दिखाई देगा ।

तारे और नक्षत्र में यह अन्तर है कि तारा अपनी रोशनी से चमकता है जब कि नक्षत्रों में अपनी रोशनी नहीं होती । वे तारों की धूप के प्रकाश में आते हैं तभी चमकते हैं । अपने सौर-मण्डल में केवल एक ही सूर्य है शेष ९ नक्षत्र हैं । ब्रह्माण्ड की तुलना में अपने सूर्य का सीमा क्षेत्र बहुत छोटा है पर पृथ्वी की तुलना में वह बहुत बड़ा है । नक्षत्रों के अपने उपग्रह होते हैं जैसे पृथ्वी का उपग्रह चन्द्रमा । ग्रह स्थिति के १२ चन्द्रमा हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

जिस प्रकार अपने सौर-मण्डल के नव-ग्रह सूर्य-तारक के साथ जुड़े हैं उसी प्रकार ब्रह्माण्ड के अगणित तारक अपनी-अपनी नीहारिकाएँ जो अरबों की संख्या में हैं, जुड़े हैं । उनमें भीतर ऐसी हलचल चलती रहती है जिसके कारण कुछ समय बाद भयंकर विस्फोट होते हैं और अन्तर्भूत पदार्थों में से कुछ टुकड़े बाहर छिटक कर स्वतन्त्र तारक के रूप में विकसित होते हैं । इन्हीं नवोदित तारकों का नाम 'नोवा और सुपर नोवा' दिया गया है । जिस प्रकार बिल्ली हर साल कई-कई बच्चे देती है । इसी प्रकार से नीहारिकाएँ भी थोड़े-थोड़े दिनों बाद प्रसूता होती हैं और विस्फोट जैसी भयानक प्रसव पीड़ा के साथ नव-तारकों को जन्म देती हैं । बच्चों की सारी हरकतें वे सिलसिले होती हैं ऐसा कुछ ऊट-पटाँग यह नवोदित तारे भी करते रहते हैं । जब वे घिस-पिट कर ठीक हो जाते हैं । शैशव से आगे बढ़कर किशोरावस्था में प्रवेश करते हैं तब उनकी व्यवस्था क्रमबद्ध हो जाती है । तब तक उनका फुलाव, सिकुड़न, रुदन, उपद्रव शयन सब कुछ अचम्भे जैसा ही है । छोटे बच्चे जैसे बार-बार टट्टी कर देते हैं उसी प्रकार इन नवोदित तारकों की गरमा-गरम गैस भी फटती चिटखती रहती है और उससे भी ग्रह, उपग्रह, उल्का, धूमकेतु आदि न जाने क्या-क्या अन्तरिक्षीय फुलझड़ियों का सृजन विसर्जन होता रहता है । इसके अतिरिक्त इन बच्चों में लड़ाई-झगड़े और मारपीट भी कम नहीं होती । निश्चित व्यवस्था का कार्यक्षेत्र न बन पाने के कारण उनके टकराव भी होते रहते हैं और कभी-कभी तो यह टकराव ऐसे विचित्र होते हैं कि दोनों पक्ष अपना अस्तित्व गँवा बैठें और फिर उनके ध्वंसावशेष से कुछ-कुछ और नवीन संरचना सामने आये ।

आकाश की नाप-तौल मीलों की संख्या में करना कौड़ियाँ बिछाकर मुहरों का हिसाब करने बैठने की तरह उपहासास्पद होगा । इस प्रकार तो इतनी बिन्दियाँ प्रयोग करनी पड़ेंगी कि ज्योतिर्विदांकों बाध्य बिन्दियों से भी भरने पड़ें ।

सूर्य की दूरी पृथ्वी से सवा नौ करोड़ मील है । इसके बाद का सबसे निकटवर्ती तारा २,५०,००,००,००,००,००० मील दूरी पर है । अन्य तारे तो इससे भी लाखों गुनी दूरी पर हैं । इस दूरी का हिसाब रखने के लिए 'प्रकाश वर्ष' का नया पैमाना बनाया गया है । प्रकाश की किरणें एक सेकण्ड में एक लाख छियासी हजार मील की चाल से चलती हैं । इस गति से चलते हुए प्रकाश एक वर्ष में जितनी दूरी तय कर ले उसे एक प्रकाश वर्ष कहा जायेगा । इस पैमाने के हिसाब से पृथ्वी से सूर्य की दूरी सिर्फ सवा आठ प्रकाश सेकण्ड रह जाती है । इसके आगे किसी और तारे की खोज में आगे बढ़ा जाय तो सबसे निकटवर्ती तारा सवा चार प्रकाश वर्ष चल लेने के बाद ही मिलेगा ।

ब्रह्माण्ड का ९९ प्रतिशत भाग शून्य है । एक प्रतिशत भाग को ही ग्रह नक्षत्र घेरे हुए हैं । अनुमान है कि आकाश में सूर्य जैसे अरबों तारकों का अस्तित्व है । वह तारे आकाश गंगाओं से जुड़े हैं । वे उसी से निकले हैं और उसी से बँधे हैं । मुर्गी अण्डे देती है उन्हें सेती है और जब तक बच्चे समर्थ नहीं हो जाते उन्हें अपने साथ ही लिए फिरती है । आकाश गंगाएँ ऐसी ही मुर्गियाँ हैं जिनके अण्डे बच्चों की गणना करना पूरा सिर दर्द है । हमारी आकाश गंगा एक लाख प्रकाश वर्ष लम्बी और २० हजार प्रकाश वर्ष मोटी है । सूर्य इसी मुर्गी का एक छोटा चूजा है जो अपनी माता से ३३००० प्रकाश वर्ष दूर रहकर उसकी प्रदक्षिणा १७० मील प्रति सेकण्ड की गति से करता है । आकाश गंगाएँ भी आकाश में करोड़ों हैं । वे आपस में टकरा न जायें या उनके अण्डे-बच्चे एक-दूसरे से उलझ न पड़ें इसलिए उन्होंने अपने सैर-सपाटे के लिए काफी-काफी बड़ा क्षेत्र हथिया लिया है । प्रायः ये आकाशगंगाएँ एक-दूसरे से २० लाख प्रकाश वर्ष दूर रहती हैं ।

अब तक खोजे गए तारकों में सबसे बड़ा 'काला तारा' है । यह अपने सूर्य से २० अरब गुना बड़ा है । यहाँ यह भूलना नहीं चाहिए कि सूर्य अपनी पृथ्वी से १३ लाख गुना बड़ा है । उस हिसाब से पृथ्वी की तुलना में काला तारा कितना बड़ा होगा इसे कागज पर जोड़ लेना तो सरल है पर उस विस्तार को मस्तिष्क में यथावत् बिठा सकना बहुत कठिन है ।

हम विश्वात्मा के घटक

मनुष्य अपने को एकाकी अनुभव करके स्वार्थान्ध रहने की भूल भले ही करता रहे, पर वस्तुतः इस विराट् ब्रह्म का, विशाल विश्व का, एक अकिंचन सा घटक मात्र है । समुद्र की लहरों की तरह उसका अस्तित्व अलग से दीखता भले ही हो, पर वस्तुतः वह समिष्टि सत्ता का एक तुच्छ सा परमाणु भर है । ऐसा परमाणु जिसे अपनी सत्ता और हलचल बनाये रहने के लिए दूसरी महा शक्तियों के अनुदान पर निर्भर रहना पड़ता है ।

अपनी पृथ्वी सूर्य से बहुत दूर है और उसका कोई प्रत्यक्ष सम्बन्ध दिखाई नहीं पड़ता फिर भी वह पूरी तरह सूर्य पर आश्रित है । सर्दी, गर्मी, वर्षा, दिन, रात्रि जैसी घटनाओं से लेकर प्राणियों में पाया जाने वाला उत्साह और अवसाद भी सूर्य सम्पर्क से सम्बन्धित रहता है । वनस्पतियों का उत्पादन और प्राणियों की हलचल में जो जीवन तत्व काम करता है । उसे भौतिक परीक्षण से नापा जाय तो उसे सूर्य का ही अनुदान कहा जायेगा । असंख्य जीव कोशाओं से मिलकर एक शरीर बनता है, उन सबके समन्वित सहयोग भरे प्रयास से जीवन की गाड़ी चलती है । प्राण तत्व से इन सभी कोशाओं को अपनी स्थिति बनाये रहने की सामर्थ्य मिलती है । इसी प्रकार इस संसार के समस्त जड़ चेतन घटकों को सूर्य से अभीष्ट विकास के लिए आवश्यक अनुदान सन्तुलित और समुचित मात्रा में मिलता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यह सूर्य भी अपने अस्तित्व के लिए महासूर्य के अनुग्रह पर आश्रित है और महासूर्यों को भी अतिसूर्य का कृपाकांक्षी रहना पड़ता है । अन्ततः सभी को उस महाकेन्द्र पर निर्भर रहना पड़ता है जो ज्ञान एवं शक्ति का केन्द्र है वह ब्रह्म है, सविता है । अति सूर्य, महासूर्य और सूर्य सब उसी पर आश्रित हैं ।

प्राणियों, वनस्पतियों और पदार्थों की गतिविधियों पर सूर्य के प्रभाव का अध्ययन करने पर पता चलता है कि उनकी स्वावलम्बी हलचलें वस्तुतः परावलम्बी हैं ।

(१) संसार अन्योन्याश्रित

(२) सूर्य चन्द्र मनुष्य वृक्ष जीवों को प्रभावित करते हैं । सूर्य की उँगलियों में बँधे हुए धागे ही बाजीगर द्वारा कठपुतली नचाने की तरह विभिन्न गतिविधियों की चित्र-विचित्र भूमिकाएँ प्रस्तुत करते हैं । यहाँ तक कि प्राणियों का, मनुष्यों का चिन्तन और चरित्र तक इस शक्ति प्रवाह पर आश्रित रहता है । न केवल सूर्य वरन् न्यूनाधिक मात्रा में सौर-मण्डल के ग्रह, उपग्रह तथा ब्रह्माण्ड क्षेत्र के सूर्य तारक भी हमारी सत्ता-स्थिरता एवं प्रगति को प्रभावित करते हैं ।

अमेरिका के पागलखानों में किए गए सर्वेक्षण में पाया गया कि पूर्णिमा के दिन मानसिक रोगी अधिक विक्षिप्त हो जाते हैं, जबकि अमावस के दिन यह दौर सर्वाधिक कम होता है । विक्षिप्त ही नहीं, सामान्य मनुष्यों की चित्त-दशा पर भी चन्द्रकलाओं के उतार-चढ़ाव का प्रभाव पड़ना सामूहिक मनःचेतना का ही द्योतक है ।

वनस्पति विज्ञानी वृक्षों के तनों में बनने वाले वर्तुलों द्वारा वृक्षों के जीवन का अध्ययन करते हैं । देखा गया है कि वृक्ष में प्रतिवर्ष एक वृन्त बनता है, जोकि उसके द्वारा छोड़ी गई छाल से विनिर्मित होता है । हर ग्यारहवें वर्ष यह वृन्त सामान्य वृन्तों की अपेक्षा बड़ा बनता है । अमेरिका के रिसर्च सेन्टर ऑफ ट्री रिंग ने पता लगाया कि ग्यारहवें वर्ष जब सूर्य पर आण्विक विस्फोट होते हैं तो वृक्ष का तना मोटा हो जाता है और उसी कारण वृन्त बड़ा बनता है । स्पष्ट है कि सूर्य और चन्द्र के परिवर्तनों से मनुष्यों एवं पशु-पक्षी तथा पेड़-पौधे भी प्रभावित होते हैं । तब क्या मात्र मनुष्यों में ही सामूहिक मनःचेतना न होकर सम्पूर्ण सृष्टि में ही कोई एक समष्टि चेतना विद्यमान है, यह प्रश्न आज वैज्ञानिकों के सामने खड़ा उन्हें आकर्षित कर रहा है ।

डॉ. हेराल्ड श्वाइत्जर के नेतृत्व में आस्ट्रिया के वैज्ञानिकों ने सूर्यग्रहण के प्रभावों का निरीक्षण-परीक्षण कर यह निष्कर्ष निकाला कि पूर्ण सूर्यग्रहण के समय सामान्य कीट-पतंग भी विचित्र आचरण करने लगते हैं ।

अनेक पक्षी सूर्यग्रहण के चौबीस घण्टे पूर्व ही चहचहाना बन्द कर देते हैं । चीटियाँ सूर्यग्रहण के आधा घण्टे पूर्व से भोजन की खोजबीन बन्द कर देती हैं और व्यर्थ ही भटकती रहती हैं । सदा चंचल बन्दर वृक्षों को छोड़कर जमीन पर आ बैठता है । वुड लाइस, बीटल्स, मिली पीड्स आदि ऐसे कीट-पतंग जो सामान्यतः रात्रि में ही बाहर निकलते हैं वे भी सूर्यग्रहण के दिन बाहर निकले देखे जाते हैं । दिशा-विज्ञान में दक्ष चिड़ियाँ भी चकित हो जाती हैं और उन्हें दिशा बोध नहीं रह जाता । नीलकंठ, गौरैया जैसी कुछ चिड़ियों को छोड़कर शेष चिड़ियाँ चहकना भी भूल-सी जाती हैं ।

जापान के प्रख्यात जैविकीविद् तोनातो के अनुसार हर ग्यारहवें वर्ष सूर्य पर होने वाले आण्विक विस्फोटों के समय पृथ्वी पर पुरुषों के रक्त में अम्ल तत्व बढ़ जाते हैं और उनका रक्त पतला पड़ जाता है ।

पृथ्वी का मात्र सूर्य से अथवा अपने ही उपग्रह चन्द्र से ही अन्तर्सम्बन्ध नहीं है । प्रोफेसर ब्राउन ने मंगल, शुक्र, बृहस्पति आदि ग्रहों का अध्ययन कर यह सिद्ध किया है कि इनकी गतियों और स्थितियों के परिवर्तन से पृथ्वी भी प्रभावित होती है । ये सभी सूर्य सन्तति ही तो हैं और जुड़वाँ बच्चों वाला सिद्धान्त यहाँ भी घटित होता है, तो आश्चर्य ही क्या ?

रूसी वैज्ञानिक चीजेवस्की ने १९२० में ही यह सिद्ध कर दिया था कि सूर्य पर प्रति ग्यारहवें वर्ष होने वाले आण्विक विस्फोट से पृथ्वी पर युद्ध एवं क्रान्तियों का उद्भव-विकास होता है । उनका कहना था कि पृथ्वी पर घटित होने वाले प्रत्येक प्रमुख परिवर्तन का सम्बन्ध सूर्य से होता है ।

ऐसे ही निष्कर्षों के विस्तृत अध्ययन व इस दिशा में व्यापक अनुसन्धान प्रयासों के लिए १९५० में वैज्ञानिक जियोजारजी गिआर्डी ने ब्रह्माण्ड रसायन को जन्म दिया । गिआर्डी के अनुसार समूचा ब्रह्माण्ड एक शरीर है और इसके सभी अंग इससे सम्पूर्णतः एकात्म हैं । इसका अर्थ हुआ कि प्रत्येक नक्षत्र पिण्ड फिर वह कितनी भी दूरी पर क्यों न हो पृथ्वी के जीवन को प्रभावित करता है ।

भारत में इसी तत्वदर्शन के अनुरूप अतीत में ज्योतिर्विज्ञान का विकास हुआ था । आर्यभट्ट का ज्योतिष सिद्धान्त, कालक्रिया पाद, गोलपाद, और सूर्य सिद्धान्त, फिर नारदेव, ब्रह्मगुप्त आदि द्वारा उन सिद्धान्तों का संशोधन-परिवर्धन, भाष्कराचार्य का महाभाष्करीय आदि ग्रन्थ उस महत् प्रयास के कुछ सुलभ अवशिष्ट परिणाम हैं । बाद में इस विशुद्ध विज्ञान का जो दुरुपयोग हुआ, उसे जातीय-जीवन क्रम के ह्रास-काल की अराजकता समझते हुए उसके मूल सिद्धान्त, सूत्रों तथा संकेतों के आधार पर इस दिशा में बहुत कुछ जानकारी प्राप्त की जा सकती है ।

भारतीय तत्व मनीषी हजारों वर्ष पूर्व इस तथ्य से परिचित थे कि जड़ता वस्तुतः कहीं है नहीं । वह हमारी स्थूल दृष्टि की 'एपियरेन्स' या आभास मात्र है । यथार्थतः सर्वत्र आत्मचेतना ही विद्यमान है । यह सर्वव्यापी चैतन्यसत्ता ही विश्वात्मा है । विश्वात्मा के साथ आत्मा की जितनी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समीपता और घनिष्ठता होती है उसी अनुपात से उसे विशिष्ट अनुदान प्राप्त होते हैं ।

भारतीय मनीषियों की मान्यता है कि सृष्टि के आरम्भ में एक मूल द्रव्य हिरण्यगर्भ था । उसी के विस्फोट से आकाश गंगाएँ विनिर्मित हुयीं । इस विस्फोट की तेजी कुछ धीमी हुई है पर अभी भी उस छिटकाव की चाल बहुत तीव्र है । अनन्त आकाश में यों आकाश गंगाएँ अपनी-अपनी दिशा में द्रुत गति से दौड़ती जा रही हैं । इस सन्दर्भ में अपनी आकाश गंगा की चाल २४,३०० मील प्रति सेकण्ड नापी गई है ।

यह विश्व अनन्त है और उसके सम्बन्ध में जानकारियाँ प्राप्त करने का क्षेत्र भी असीम है । इस असीम और अनन्त की खोज के लिए बिना निराश हुए मनुष्य की असीमता किस उत्साह के साथ अग्रगामी हो रही है यह देखकर विश्वास होता है कि मानवी महत्ता अद्‌भुत है और यदि वह सही राह पर चले तो न केवल प्रकृति के रहस्यों का उद्‌घाटन करने में वरन् उन्हें करतलगत करने में भी समर्थ हो सकती है ।

तत्वदर्शन से आनन्द और मोक्ष

पेंगल तब महर्षि नहीं बने थे । उसके लिए आत्म-सिद्धि आवश्यक थी, पर पेंगल साधना करते-करते पदार्थों की विविधता में ही उलझ कर रह गए । पशु-पक्षी, अन्य जन्तु, मछलियाँ, साँप, कीड़े-मकोड़ों में शरीरों और प्रवृत्तियों की भिन्नता होने पर भी शुद्ध अहंकार और चेतना की एकता तो समझ में आ गई पर विस्तृत पहाड़, टीले, जंगल, नदी, नाले, समुद्र, सूर्य, चन्द्रमा, तारे, प्रकाश और पृथ्वी पर पाये जाने वाले विविध खनिज, धातुएँ, गैसें, ठोस आदि क्या हैं, क्यों हैं, और उनमें यह विविधता कहाँ से आयी है—यह उनकी समझ में नहीं आया । इससे उनकी आत्म-दर्शन की आकांक्षा और बेचैन हो उठी ।

वे याज्ञवल्क्य के पास गए और उनकी बारह वर्ष तक सेवा सुश्रुषा कर पदार्थ-विद्या का ज्ञान प्राप्त किया । इस अध्ययन से पेंगल का मस्तिष्क साफ हो गया कि जड़ पदार्थ भी एक ही मूल सत्ता के अंश हैं । सब कुछ एक ही तत्व से उपजा है । 'एकोऽहं बहुस्यामः', 'एक नूर से सब जग उपजिआ' वाली बात उन्हें पदार्थ विषम में भी अक्षरशः सत्य प्रतीत हुई । पेंगलोपनिषद् में इस कैवल्य का उपदेश मुनि याज्ञवल्क्य ने इस प्रकार दिया है—

"सदैव सोग्रयदमग्र आसीत् । तन्नित्यनुक्तमविक्रियं सत्य ज्ञानानन्द परिपूर्ण सनातनमेकवातीयं ब्रह्म ॥ तस्मिन् मरुशुक्तिमस्थाणुस्फाटि कादो जल रौप्य पुरुष रेखाऽऽदिशल्लोहित शुक्ल कृष्ण गुणमयी गुण साम्या निर्वाच्या मूलप्रकृतिरासीत् । तत्प्रतिबिम्बितं यत्तद् साक्षि चैतन्यमासीत् ॥"

—पेंगलोपनिषद् १।२-३

हे पेंगल ! पहले केवल एक ही तत्व था । वह नित्य मुक्त, अविकारी, ज्ञानरूप चैतन्य और आनन्द से परिपूर्ण था, वही ब्रह्म है । उससे लाल, श्वेत, कृष्ण वर्ण की तीन प्रकाश किरणों या गुण वाली प्रकृति उत्पन्न हुई । यह ऐसा था जैसे सीपी में मोती, स्थाणु में पुरुष और मणि में रेखाएँ होती हैं । तीन गुणों से बना हुआ साक्षी भी चैतन्य हुआ । वह मूल प्रकृति फिर विकारयुक्त हुई तब वह सत्व गुण वाली आवरण शक्ति हुई, अव्यक्त कहते हैं ।.....उसी में समस्त विश्व लपेटे हुए वस्त्र के समान रहता है । ईश्वर में अधिष्ठित आवरण शक्ति से रजोगुणमयी विक्षेप शक्ति होती है, जिसे महत् कहते हैं । उसका जो प्रतिबिम्ब पड़ता है वह चैतन्य हिरण्य गर्भ कहा जाता है । वह महत्तत्व वाला कुछ स्पष्ट और कुछ अस्पष्ट आकार का होता है .....।

इसी उपनिषद् में आगे क्रमशः इसे विक्षेप से आत्मा, आत्मा से आकाश, आकाश से वायु, वायु से अग्नि, अग्नि से जल, जल से पृथ्वी आदि उत्पन्न हुए बताये हैं । वस्तुतः यह पर्तें एक ही तत्व की क्रमशः स्थूल अवस्थाएँ हैं, जो स्थूल होता गया वह अधिकाधिक दृश्य, स्पर्श्य होता गया । ऊपरी कक्षा अर्थात् ईश्वर की ओर वही तत्व अधिक चेतन और निर्विकार होता गया । वायु की लहरों के समान विभिन्न तत्व प्रतिभासित होते हुए भी संसार के सब तत्व एक ही मूल तत्व से आविर्भूत हुए हैं उसे महाशक्ति कहा जाय आत्मा या परमात्मा सब एक ही सत्ता के अनेक नाम हैं ।

विज्ञान की आधुनिक जानकारियाँ भी उपर्युक्त तथ्य का ही प्रतिपादन करती हैं ।

एक ही सत्ता ओत-प्रोत है

आइन्स्टाइन एक ऐसे फार्मूल की खोज में थे, जिससे जड़ और चेतन की भिन्नता को एकता में निरस्त किया जा सके । प्रकृति अपने आप में पूर्ण नहीं है, उसे पुरुष द्वारा प्रेरित, प्रोत्साहित और फलवती किया जा रहा है । यह युग्म जब तक सिद्ध नहीं हो जाता, तब तक विज्ञान के कदम लँगड़ाते हुए ही चलेंगे ।

जड़ और चेतन के बीच की खाई अब पटने ही वाली है । द्वैत को अद्वैत में परिणत करने का समय अब बहुत समीप आ गया है । विज्ञान क्रमशः इस दिशा में बढ़ रहा है कि वह जड़ को चेतन और चेतन को जड़ सिद्ध करके दोनों को एक ही स्थान पर संयुक्त बनाकर खड़ा कर सके । जीवन रासायनिक पदार्थों से—पंचतत्वों से बना है इस सिद्धान्त को सिद्ध करते-करते हम वहीं पहुँच जाते हैं जहाँ यह सिद्ध हो सकता है कि जीवन से पदार्थों को उत्पत्ति हुई है ।

उपनिषद् का कहना है कि ईश्वर ने एक से बहुत बनने की इच्छा की, फलतः यह बहुसंख्यक प्राणी और पदार्थ बन गए । यह चेतन से जड़ की उत्पत्ति हुई । नर-नारी कामेच्छा से प्रेरित होकर रति कर्म में निरत होते हैं फलतः रज शुक्र

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के संयोग से भ्रूण का आरम्भ होता है । यह भी मानवी चेतना से जड़ शरीर की उत्पत्ति है । जड़ से चेतन उत्पन्न होता है, इसे पानी में काई और मिट्टी में घास उत्पन्न होते समय देखते हैं । गन्दगी में मक्खी-मच्छरों का पैदा होना, सड़े हुए फलों में उत्पन्न होना यह जड़ से चेतन की उत्पत्ति है ।

पदार्थ विज्ञानी इस बात पर बहुत जोर देते हैं कि 'जड़' प्रमुख है । चेतन उसी की एक स्थिति है । ग्रामोफोन का रिकार्ड और उसकी सुई का घर्षण प्रारम्भ होने पर आवाज आरम्भ हो जाती है, उसी प्रकार अमुक स्थिति में, अमुक अनुपात में इकट्ठे होने पर चेतन जीव की स्थिति में जड़ पदार्थ विकसित हो जाते हैं । जीव-विज्ञानी अपने प्रतिपादनों में इसी तथ्य को प्रमुखता देते हैं ।

जीव-विज्ञान को दो भागों में बाँटा जा सकता है—वनस्पति विज्ञान (बोटिनी), प्राणि विज्ञान (जूलॉजी) इन दो विभाजनों से भी इस महा समुद्र का ठीक तरह विवेचन नहीं हो सकता । इसलिए इसे अन्य भेद-उपभेदों में विभक्त करना पड़ता है ।

सूक्ष्मदर्शी यन्त्रों से जिन जीवधारियों को देखा समझा जाता है उसके सम्बन्ध में जानकारी सूक्ष्म जैविकी (माइक्रो बायोलॉजी), कही जाती है । आकारिकी (मारफोलॉजी), शारीरिकी (एनाटोमी), ऊतिकी (हिस्टोलॉजी), कोशिकी (साइटोलॉजी), भ्रूणी (एम्ब्रोलॉजी), शरीर क्रिया (फिजियोलॉजी), परिस्थितिकी (एकोलॉजी), आनुवंशिकी (जैनेटिक्स), जैव विकास (ऑरगैनिक एवूलेशन) आदि । इन सभी जीव-विज्ञान धाराओं ने यह सिद्ध किया है कि जीवन और कुछ नहीं जड़ पदार्थों का ही विकसित रूप है ।

रासायनिक दृष्टि से जीवन सेल और अणु के एक ही तराजू पर तोला जा सकता है । दोनों में प्रायः समान स्तर के प्राकृतिक नियम काम करते हैं । एकाकी एटम, मॉलेक्यूल्स और इलेक्ट्रॉन्स के बारे में अभी भी वैसी ही खोज जारी है जैसी कि पिछली तीन शताब्दियों में चलती रही है । विकिरण—रेडियेशन और गुरुत्वाकर्षण, ग्रेविटेशन के अभी बहुत से स्पष्टीकरण होने बाकी हैं । जो समझा जा सका है वह अपर्याप्त ही नहीं असन्तोषजनक भी है ।

यों कोशिकाएँ निरन्तर जन्मती-मरती रहती हैं, पर उनमें एक के बाद दूसरी में जीवन तत्व का संचार अनवरत रूप से होता रहता है । मृत होने से पूर्व कोशिकाएँ अपना जीवन तत्व नवजात कोशों को दे जाती हैं, इस प्रकार मरण के साथ ही जीवन की अविछिन्न परम्परा निरन्तर चलती रहती है । उन्हें मरण धर्मा होने के साथ-साथ अजर-अमर भी कह सकते हैं । वस्त्र बदलने जैसी प्रक्रिया चलते रहने पर भी उनकी अविनाशी सत्ता पर कोई आँच नहीं आती ।

नोबेल पुरस्कार विजेता डॉ. एलेक्सिस कारेल उन दिनों न्यूयार्क के रॉक फेलर चिकित्सा अनुसन्धान केन्द्र में काम कर रहे थे । एक दिन उन्होंने एक मुर्गी के बच्चे के हृदय के जीवित तन्तु का एक रेशा लेकर उसे रक्त एवं प्लाज्मा के घोल में रख दिया । वह रेशा अपने कोष्ठकों की वृद्धि करता हुआ विकास करने लगा । उसे यदि काटा-छाँटा न जाता तो वह अपनी वृद्धि करते हुए वजनदार माँस-पिण्ड बन जाता । उस प्रयोग से डॉ. कारेल ने यह निष्कर्ष निकाला कि जीवन जिन तत्वों से बनता है यदि उसे ठीक तरह जाना जा सके और टूट-फूट को सुधारना सम्भव हो सके तो अनन्तकाल तक जीवित रह सकने की सभी सम्भावनाएँ विद्यमान हैं ।

प्रोटोप्लाज्म जीवन का मूल तत्व है । यह तत्व अमरता की विशेषता युक्त है । एक कोश वाला अमीबा प्राणी निरन्तर अपने आपको विभक्त करते हुए वंश वृद्धि करता रहता है । कोई शत्रु उसकी सत्ता ही समाप्त कर दे यह दूसरी बात है अन्यथा वह अनन्त काल तक जीवित ही नहीं रहेगा वरन् वंश वृद्धि करते रहने में भी समर्थ रहेगा ।

रासायनिक सम्मिश्रण से कृत्रिम जीवन उत्पन्न किए जाने की इन दिनों बहुत चर्चा है । छोटे जीवाणु बनाने में ऐसी कुछ सफलता मिली भी है, पर उतने से ही यह दावा करने लगना उचित नहीं कि मनुष्य ने जीवन का—सृजन करने में सफलता प्राप्त कर ली ।

जिन रसायनों से जीवन विनिर्मित किए जाने की चर्चा है क्या उन्हें भी उनकी प्रकृतिगत विशेषताओं को भी मनुष्य द्वारा बनाया जाना सम्भव है ? इस प्रश्न पर वैज्ञानिकों को मौन ही साधे रहना पड़ रहा है । पदार्थ की जो मूल प्रकृति एवं विशेषता है यदि उसे भी मनुष्य कृत प्रयत्नों से नहीं बनाया जा सकता तो इतना ही कहना पड़ेगा कि उसने ढले हुए पुर्जे जोड़कर मशीन खड़ी कर देने जैसा वाला प्रयोजन ही पूरा किया है । ऐसा तो लकड़ी के टुकड़े जोड़कर अक्षर बनाने वाले किन्डर गार्डन कक्षाओं के छात्र भी कर लेते हैं । इतनी भर सफलता से जीव निर्माण जैसे दुस्साध्य कार्य को पूरा कर सकने का दावा करना उपहासास्पद गर्वोक्ति है ।

कुछ मशीनें बिजली पैदा करती हैं—कुछ तार बिजली बहाते हैं, पर वे सब बिजली तो नहीं हैं । अमुक रासायनिक पदार्थों के सम्मिश्रण से जीवन पैदा हो सकता है सो ठीक है, पर उन पदार्थों में जो जीवन पैदा करने की शक्ति है वह अलौकिक एवं सूक्ष्म है । उस शक्ति को उत्पन्न करना जब तक सम्भव न हो तब तक जीवन का सृजेता कहला सकने का गौरव मनुष्य को नहीं मिल सकता ।

ब्रह्माण्ड की शक्तियों का और पिण्ड की, मनुष्य की शक्तियों का एकीरण कहाँ होता है । शरीर शास्त्री इसके लिए सुषुम्ना शीर्षक मेडुला आवलांगाटा—की ओर इशारा करते हैं । पर वस्तुतः वह वहाँ है नहीं । मस्तिष्क स्थित ब्रह्मरन्ध्र को ही वह केन्द्र मानना पड़ेगा, वहाँ ब्राह्मी और जैवी चेतना का समन्वय सम्मिलन होता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

ऊपर के तथ्यों पर विचार करने से यह एकांगी मान्यता ही सीमित नहीं रहती कि जड़ से चेतन उत्पन्न होता है इन्हीं तथ्यों से यह भी प्रमाणित होता है कि चेतन भी जड़ की उत्पत्ति का कारण है । मुर्गी से अण्डा या अण्डे से मुर्गी, नर से नारी या नारी से नर, बीज से वृक्ष या वृक्ष से बीज जैसे प्रश्न अभी भी अनिर्णीत पड़े हैं । उनका हल न मिलने पर किसी को कोई परेशानी नहीं । दोनों को अन्योन्याश्रित मानकर भी काम चल सकता है । ठीक इसी प्रकार जड़ और चेतन में कौन प्रमुख है इस बात पर जोर न देकर यही मानना उचित है कि दोनों एक ही ब्रह्म सत्ता की दो परिस्थितियाँ मात्र हैं । द्वैत दीखता भर है वस्तुतः यह अद्वैत ही बिखरा पड़ा है । अचेतन न केवल चेतन समुदाय अपितु सृष्टि का प्रत्येक कण पूर्णता के लिए लालायित और गतिशील है । भौतिक-जीवन में जिसके पास स्वल्प सम्पदा है वह और अधिक की प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील है, पर जो धनाढ्य हैं उन्हें भी सन्तोष नहीं । उसी के परिमाण में वह और अधिक प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील दिखाई देता है । बड़े-बड़े सम्राट तक अपनी इस अपूर्णता को पाटने के लिए आपाधापी मचाते और दूसरा साम्राज्यों की लूटपाट करते पाये जाते हैं तो लगता है सृष्टि का हर प्राणी साधनों की दृष्टि से अपूर्ण है इस दिशा में पूर्णता प्राप्त करने की हड़क हर किसी में चढ़ी बैठी दिखाई देती है ।

इतिहास का विद्यार्थी अपने आपको गणित में शून्य पाता है तो वह अपने आपको अपूर्ण अनुभव करता है, भूगोल का चप्पा छान डालने वाले को संगीत के स्वर बेचैन कर देते हैं उसे अपना ज्ञान थोथा दिखाई देने लगता है, बड़े-बड़े चतुर वकील और बैरिस्टरों को जब रोग बीमारी के कारण डॉक्टरों की शरण जाना पड़ता है तो उनका अपने ज्ञान का, अभिमान चकनाचूर हो जाता है । बौद्धिक दृष्टि से हर प्राणी सीमित है और हर कोई अगाध ज्ञान का पण्डित बनने को तत्पर दिखाई देता है ।

नदियाँ अपनी अपूर्णता को दूर करने के लिए सागर की ओर भागती हैं, वृक्ष आकाश छूने दौड़ते हैं, धरती स्वयं भी अपने आपको नचाती हुई न जाने किस गन्तव्य की ओर अधर आकाश में भागी जा रही है, अपूर्णता की इस दौड़ में समूचा सौर-मण्डल और उससे परे का अदृश्य संसार सम्मिलित है । पूर्णता प्राप्ति की बेचैनी न होती तो सम्भवतः संसार में रत्ती भर भी सक्रियता न होती सर्वत्र नीरव सुनसान पड़ा होता, न समुद्र उबलता, न मेघ बरसते, न वृक्ष उगते, न तारागण चमकते और न ही वे विराट् की प्रदक्षिणा में मारे-मारे घूमते ।

जीवन की सार्थकता पूर्णता प्राप्ति में है, इसका तात्पर्य यह हुआ कि अभी हम अपूर्ण हैं, असत्य हैं, अन्धकार में हैं । हमारे सामने मृत्यु मुँह बाये खड़ी है । अन्धकार, असत्य और मृत्यु पर विजय प्राप्त करने के लिए हम प्रकाश, सत्य और अमरता की ओर अग्रसर होना चाहते हैं, पर हो कोई नहीं पाता । हर कोई अपने आपको अशक्त और असहाय पाता है, अज्ञान के अन्धकार में हाथ-पैर पटकता रहता है ।

इस अपूर्णता पर जब कभी विचार जाता है तब एक ही तथ्य सामने आता है और वह है "परमात्मा" अर्थात् एक ऐसी सर्वोपरि सर्वशक्तिमान सत्ता जिसके लिए कुछ भी अपूर्ण नहीं है । यह सर्वज्ञ है, सर्वव्यापी, सर्वदृष्टा, नियामक और एकमात्र अपनी इच्छा से सम्पूर्ण सृष्टि में संचरण कर सकने की क्षमता से ओत-प्रोत है ।

विकासवाद के जनक डार्विन ने यह सिद्धान्त तो प्रतिपादित कर दिया कि प्रारम्भ में एककोशीय जीव- अमीबा की उत्पत्ति हुई यही अमीबा फिर "हाइड्रा" में विकसित हुआ, हाइड्रा मछली, मण्डूक, सर्पणशील पक्षी, स्तनधारी जीवों आदि की श्रेणियों में विकसित होता हुआ वह बन्दर की शक्ल तक पहुँचा, आज का विकसित मनुष्य शरीर इसी बन्दर की सन्तान है । इसके लिए शरीर रचना के कुछ खाँचे भी मिलाये गए । जहाँ नहीं मिले वहाँ यह मान लिया गया कि वह कड़ियाँ लुप्त हैं और कभी समय पर उसकी भी जानकारी हो सकती है ।

इस प्रतिपादन में डार्विन और इस सिद्धान्त के अध्येता यह भूल गए कि अमीबा से ही नर-मादा दो श्रेणियाँ कैसे विकसित हुयीं । अमीबा एककोशीय था उससे दो कोशीय हाइड्रा पैदा हुआ क्या अन्य सभी जीव इसी गुणोत्तर श्रेणी में आ सकते हैं । यदि सर्पणशील जीवों से परधारी जीव विकसित हुए तो वह कृमि जैसे चींटे, पतंगे, मच्छर आदि कृमि जो उड़ लेते हैं वे किस विकास प्रक्रिया में रखे जायेंगे ? पक्षी, जल-जन्तु और कीड़े सभी माँस खाते हैं । स्तनधारी उन्हीं से विकसित हुए तो गाय, भैंस, बकरी, हाथी आदि माँस क्यों नहीं खाते । हाथी के दाँत होते हैं हथनियों के नहीं, मुर्गे में कलँगी होती है मुर्गी में नहीं । मोर के रंग-बिरंगे पंख और मोरनियाँ बिना पंख वाली, विकास प्रक्रिया में एक ही जीव श्रेणी में यह अन्तर क्यों ? प्राणियों में दाँतों की संख्या, आकृति, प्रकृति में अन्तर पाया जाता है । घोड़े के स्तन नहीं होते बैल के अण्डकोश के पास स्तन होते हैं । पक्षियों की अपेक्षा सर्प और कछुए हजारों वर्ष की आयु वाले होते हैं, यह सभी असमानताएँ इस बात का प्रमाण हैं कि सृष्टि रचना किसी विकास का परिणाम नहीं अपितु किसी स्वयम्भू सत्ता द्वारा विधिवत् रची गई कलाकृति है ।

विकासवाद के सिद्धान्त के समर्थक यह कहते हैं कि अपने सुविधापूर्ण जीवन के लिए इच्छा ने उन जीवों के शरीर संस्थानों में अन्तर किया और यह अन्तर स्पष्ट होते-होते एक जीव से दूसरी किस्म का उसी से मिलता हुआ जीव विकसित होता गया । थोड़ी देर के लिए यह बात मान लें और मनुष्य शरीर को इस कसौटी पर कसें तो भी बात विकासवाद के विपरीत बैठेगी । मनुष्य कब से पक्षियों को देखकर आकाश में स्वतन्त्र उड़ने को लालायित है, किन्तु

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उसके शरीर में कहीं कोई पंख उगा क्या, समुद्र में तैरते जहाज देखकर हर किसी का मन करने लगता है कि हम भी गोता लगाएँ और मछलियों की तरह कहीं से कहीं जाकर घूम आयें, पर वह डूबने से बच पायेगा क्या ?

यह प्रश्न अब उन लोगों को भी विपरीत दिशा में सोचने और परमात्म-सत्ता के अस्तित्व में होने की बात मानने को विवश करते हैं जो कभी इस सिद्धान्त के समर्थक रहे हैं । राबर्ट ए मिल्लीकान का कथन है—विकासवाद के सिद्धान्त से पता चलता है कि जिस तरह प्रकृति अपने गुणों और नियमों के अनुसार पदार्थ पैदा करती है, उससे विपरीत परमात्मा में ही वह शक्ति है कि वह अपनी इच्छा से सृष्टि का निर्माण करता है । प्रकृति बीज से सजातीय पौधा पैदा करती है आम के बीज से इमली पैदा करने की शक्ति प्रकृति में नहीं है । इस तरह के बीज और ऊपर वर्णित विलक्षण रचनाएँ पैदा करने वाली सत्ता एकमात्र परमात्मा ही हो सकता है । वही अपने आप में एक परिपूर्ण सत्ता है और वही विभिन्न इच्छाओं, अनुभूतियों, गुण तथा धर्म वाली परिपूर्ण रचनाएँ सृजन करता है ।

क्रमिक विकास को नहीं भारतीय दर्शन पूर्णता-पूर्णता की उत्पत्ति मानता है । श्रुति कहती है ।

पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्ण मुच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्ण मेवावशिष्यते ॥

अर्थात्—पूर्ण परम ब्रह्म परमात्मा से पूर्ण जगत—पूर्ण मानव की उत्पत्ति हुई । पूर्ण से पूर्ण निकाल देने से पूर्ण ही शेष रहता है ।

नदी का एक किनारा समुद्र से जुड़ा रहता है और दूसरा किनारा उससे दूर होता है । दूर होते हुए भी नदी समुद्र से अलग नहीं । नदी को जल समुद्र द्वारा प्राप्त होता है और पुनः समुद्र में मिल जाता है । जगत उस पूर्ण ब्रह्म से अलग नहीं । मनुष्य उसी पूर्ण ब्रह्म से उत्पन्न हुआ इसलिए अपने में स्वयं पूर्ण है यदि इस पूर्णता का भान नहीं होता, यदि मनुष्य कष्ट और दुःखों से त्राण नहीं पाता तो इसका एकमात्र कारण उसका अज्ञान और अहंकार में पड़े रहना ही हो सकता है । इतने पर भी पूर्णता हर मनुष्य की आन्तरिक अभिलाषा है और वह नैसर्गिक रूप से हर किसी में विद्यमान रहती है ।

क्षुद्रता की परिधि को तोड़कर पूर्णता प्राप्त कर लेना हर किसी के लिए सम्भव है । मनुष्य की चेतन सत्ता में वह क्षमता मौजूद है, जिसके सहारे वह अपने स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीरों का उपयोग कर देवोपम जीवन जी सकता है । यह क्षमता उसने खो दी है । मात्र जीवन निर्वाह क्रम पूरा होते रहने भर का लाभ उस क्षमता से उठा सकना सम्भव होता है । यह उस प्रचण्ड क्षमता का एक स्वरूप अंश स्पष्ट है ।

बन्धन क्या ? मुक्ति कैसे ?

अधिकांश क्षमता तो भव बन्धनों में ही पड़ी जकड़ी रहती है । भव बन्धन क्या है ? व्यामोह ही भव बन्धन है । भव बन्धनों में पड़ा हुआ प्राणी कराहता रहता है और हाथ पैर बँधे होने के कारण प्रगति पथ पर बढ़ सकने में असमर्थ रहता है । व्यामोह को माया कहते हैं । माया का अर्थ है नशे जैसी खुमारी जिसमें एक विशेष प्रकार की मस्ती होती है । साथ ही मूल स्थिति की विस्मृति भी जुड़ी रहती है । संक्षेप में विस्मृति और मस्ती के समन्वय को नशे की पिनक कहा जा सकता है, चेतना की इसी विचित्र स्थिति को माया, मूढ़ता, अविद्या, भव बन्धन आदि नामों से पुकारा जाता है ।

ऐसी विडम्बना में किस कारण प्राणी बँधता, फँसता है ? इस प्रश्न पर प्रकाश डालते हुए आत्म हुए आत्म दृष्टाओं ने विषयवती वृत्ति को इसका दोषी बताया है । विषयवती वृत्ति की प्रबलता को बन्धन का मूल कारण बताते हुए महर्षि पातंजलि ने योग दर्शन के कुंछ सूत्रों से वस्तुस्थिति पर प्रकाश डाला है ।

विषयवती वा प्रवृत्तिरुत्पन्ना मनसः स्थिति निबंधिनि ।

—यो. द. १-३५

सत्व पुरुषायोरत्यन्ता संकीर्णयोः प्रत्यय विशेषो भोगः । पराधात्स्वार्थ संयतात्पुरुषा ज्ञानम् ।

—यो. द. ३-३५

ततः प्रतिभ श्रावण वेदनादर्शी स्वाद वार्ता जायन्ते ।

—यो. द. ३-३६

उपर्युक्त सूत्रों में यह बताने का प्रयत्न किया गया है कि शारीरिक विषय विकारों में आसक्ति बढ़ जाने से जीव अपनी मूल स्थिति को भूल जाता है और उन रसास्वादनों में निमग्न होकर भव बन्धनों में बँधता है ।

लालची मक्खी और चींटी की आसक्ति, आतुरता उसे विपत्ति के बन्धनों में जकड़ देती है और प्राण संकट उपस्थित करती है । चासनी को आतुरतापूर्वक निगल जाने के लोभ में यह अबोध प्राणी उस पर बेतरह टूट पड़ते हैं और अपने पंख, पैर उसी में फँसा कर जान गँवाते हैं । मछली के आटे की गोली निगलने और पक्षी के जाल में जा फँसने के पीछे वह आतुर असक्ति ही कारण होती है, जिसके कारण आगा-पीछा सोचने की विवेक बुद्धि को काम कर सकने का अवसर ही नहीं मिलता ।

शरीर के साथ जीव का अत्यधिक तादात्म्य बन जाना ही आसक्ति एवं माया है । होना यह चाहिए कि आत्मा और शरीर के साथ स्वामी सेवक का, शिल्पी उपकरण का भाव बना रहे । जीव समझ रहे कि मेरी स्वतन्त्रता सत्ता है । शरीर के वाहन, साधन, प्रकृति यात्रा की सुविधा भर के लिए मिले हैं । साधन की सुरक्षा उचित है । किन्तु शिल्पी अपने को, अपने सृजन प्रयोजन को भूल कर उपकरणों में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

खिलवाड़ करते रहने में सारी सुधि-बुधि खोकर तल्लीन बन जाय तो यह स्थिति दुर्भाग्यपूर्ण ही होगी । तीनों शरीर तीन बन्धनों में बँधते हैं । स्थूल शरीर इन्द्रिय लिप्सा में, वासना में । सूक्ष्म शरीर (मस्तिष्क) सम्बन्धियों तथा सम्पदा के व्यामोह में । कारण शरीर-अहंता के आतंक फैलाने वाले उद्धत प्रदर्शनों में । इस प्रकार तीनों शरीर-तीन बन्धनों में बँधते हैं और आत्मा उन्हीं में तन्मय रहने की स्थिति में स्वयं ही भव बन्धनों में बँध जाता है । यह लिप्सा लालसाएँ इतनी मादक होती हैं कि जीव उन्हें छोड़कर अपने स्वरूप एवं लक्ष्य को ही विस्मृति के गर्त में फेंक देता है । वेणुनाद पर मोहित होने वाले मृग वधिक के हाथों पड़ते हैं । पराग लोलुप भ्रमर-कमल में कैद होकर दम घुटने का कष्ट सहता है । दीपक की चमक से आकर्षित पतंगे की जो दुर्गति होती है वह सर्वविदित है । लगभग ऐसी ही स्थिति व्यामोह ग्रसित जीव की भी होती है । उसे इस बात की न तो इच्छा उठती है और न फुरसत होती है कि अपने स्वरूप और लक्ष्य को पहचाने । उत्कर्ष के लिए आवश्यक संकल्प शक्ति जगाई जा सकती है तो इस महान् प्रयोजन के लिए मिली हुई विशिष्ट क्षमताओं को भी खोजा जगाया जा सकता था, किन्तु उसके लिए प्रयत्न कौन करे ? क्यों करे ? जब विषयानन्द की ललक ही मदिरा की तरह नस-नस पर छाई है तो ब्रह्मानन्द की बात कौन सोचे ? क्यों सोचे ?

इस दुर्गति में पड़े रहने से आज का समय किसी प्रकार कट भी सकता है, पर भविष्य तो अन्धकार से ही भरा रहेगा । विवेक की एक किरण भी कभी चमक सके तो उसकी प्रतिक्रिया परिवर्तन के लिए तड़पन उठने के रूप में होगी । प्रस्तुत दुर्दशा की विडम्बना और उज्ज्वल भविष्य की सम्भावना का तुलनात्मक विवेचन करने पर निश्चित रूप से यही उमंग उभरेगी कि परिवर्तन के लिए साहस जुटाया जाय । इसी उभार के द्वारा अध्यात्म जीवन में प्रवेश और साधना प्रयोजनों का अवलम्बन आरम्भ होता है ।

परिवर्तन का प्रथम चरण है, बन्धनों का शिथिल करना । आकर्षणों के अवरोधों से विमुख होना । आसक्ति को वैराग्य की मनःस्थिति में बदलना । इसके लिए कई तरह के संयम परक उपायों का अवलम्बन करना पड़ता है । साधना रुचि परिवर्तन की प्रवृत्ति को उकसाने से आरम्भ होती है । इस सन्दर्भ में महर्षि पातंजलि का कथन है ।

बन्धकारण शैथिल्यात्प्राचार सम्वेदनस्य ।
चित्तस्य पर शरीरावेशः ॥

—योग दर्शन ३-३८

बन्धनों के कारण ढीले हो जाने पर चित्त की सीमा, परिधि और सम्वेदना व्यापक हो जाती है ।

मोक्षस्य नहि वासोऽस्ति न ग्रामान्तरमेव वा ।
अज्ञानहृदयग्रन्थिनाशो मोक्ष इति स्मृतः ॥

—शिव गीता १३/३२

अर्थात्—मोक्ष किसी स्थान विशेष में निवास करने की स्थिति नहीं है । न उसके लिए किसी अन्य नगर या लोक में जाना पड़ता है । हृदय के अज्ञानान्धकार का समाप्त हो जाना ही मोक्ष है ।

मोक्ष में परमात्मा की प्राप्ति होती है । अथवा परमात्मा की प्राप्ति ही मोक्ष है । यह मोक्ष क्या है ? भव बन्धनों से मुक्ति । भवबन्धन क्या है ? वासना, तृष्णा और अहंता के काम, लोभ और क्रोध के नागपाश । इनसे बँधा हुआ प्राणी ही माया ग्रसित कहलाता है । यही नारकीय दुर्दशा का दलदल है । इससे उबरते ही आत्मज्ञान का आलोक और आत्म-दर्शन का आनन्द मिलता है । इस स्थिति में पहुँचा हुआ व्यक्ति परमात्मा का सच्चा सान्निध्य प्राप्त करता है और ज्ञान तथा सामर्थ्य में उसी के समतुल्य बन जाता है ।

अथर्ववेद में कहा गया है—

ये पुरुषे ब्रह्मविदुः तेविदुः परमेष्ठितम् ।

अर्थात्—जो आत्मा को जान लेता है, उसी के लिए परमात्मा का जान लेना भी सम्भव है । ऋग्वेद में आत्मज्ञान को ही वास्तविक ज्ञान कहा गया है । ग्रन्थों के पढ़ने से जानकारियाँ बढ़ती हैं, आत्मानुभूति से अपने आपे को और परमतत्व को जाना जाता है । श्रद्धा-विहीन शब्दचर्चा का ऊहापोह करते रहने से तो आत्मा की उपलब्धि नहीं होती । एक ऋचा है—"यः तद् न वेदकिम् ऋचा करिष्यति ।"

जो उस आत्म-तत्व को नहीं जान पाया वह मन्त्र, बात या विवेचन करते रहने भर से क्या पा सकेगा ? उपनिषद् का कथन है—"ब्रह्मविद् ब्रह्मैव भवति" अर्थात् ब्रह्मवेत्ता ब्रह्म ही बन जाता है ।

यह स्थिति जीवन और जगत के पीछे छिपी हुई कारण सत्ता को देखने तथा उसे समझने, बोध प्राप्त करने के लिए साधना स्तर के प्रयासों से ही सम्भव है । भारतीय मनीषियों ने इसीलिए तत्व दर्शन को ही बन्धन मुक्ति का उपाय बताया है यह दृष्टि अपने मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार के परिष्कारपूर्वक ही विकसित की जा सकती है । योग, तप, ब्रह्मविद्या, साधना, उपासना, अभ्यास, मनन, चिन्तन और ध्यान निदिध्यासन द्वारा चित्तवृत्ति को इतना निर्मल परिष्कृत बनाया जाता है कि यह तत्व दृष्टि विकसित की जा सके ।

⌘⌘⌘

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अद्भुत सृष्टा के अद्भुत रहस्य

सूक्ष्म जगत-प्रकृति और पुरुष के रूप में

आमतौर से संसार इतना ही बड़ा दीखता है जितना कि वह इन्द्रियों या उपकरणों के सहारे अनुभव में आता है । उतने को ही सब कुछ समझा जाता है । उतने से ही सम्पर्क रखा जाता है । ध्यान रखना और व्यवस्था करने के लिए भी उतने को ही पर्याप्त माना जाता है, पर वह उतना सीमित है नहीं, जितना कि मोटी समझ बताती है ।

शरीर प्रत्यक्ष है । इसलिए उसी की आवश्यकता, व्यवस्था एवं सज्जा के लिए उपाय बरते जाते हैं । मन, बुद्धि, चित्त आदि के चेतना पक्ष अदृश्य हैं, इसलिए उनके सम्बन्ध में कुछ सोचने में व्यवस्था बनाने में उपेक्षा ही बरती जाती रहती है । इसे अदृश्य की अवमानना भी कह सकते हैं ।

पानी, मिट्टी से रोज ही वास्ता पड़ता है, पर यह कभी ध्यान भी नहीं आता कि उनमें विद्यमान रसायन एवं जीवाणु हमारे लिए कितने उपयोगी, अनुपयोगी भूमिका निभाते हैं ।

आकाश में तारे, सूर्य, चन्द्र या बादल भर दीख पड़ते हैं, पर उस परिवार में जीवन तत्व का अनन्त शक्ति स्रोतों का प्रवाह चलता है । यह विशेषज्ञों के अतिरिक्त सामान्य बुद्धि की पकड़ में नहीं आता । अन्तरिक्ष में बहती रहने वाली हवा का ऑक्सीजन भाग ही जीवधारियों का जीवन प्राण है । वह न रहे घट जाय तो दम घुटने से सभी का प्राणान्त हो जाय । जीवन अन्न-जल पर निर्भर माना जाता है, पर वस्तुतः उसका उद्गम स्रोत आकाश है जो मात्र नीली पोल भर प्रतीत होता है ।

रेडियो तरंगें, एक्स-रे, अल्फा, अल्ट्रासोनिक, लेसर आदि किरणें-तरंगों का आकाश में साम्राज्य है । वे ईश्वर के ब्रह्माण्डव्यापी महासागर में क्रीड़ा कल्लोल करती रहती हैं । पृथ्वी इसलिए जीवधारियों से और वनस्पतियों से सुसज्जित बन सकी कि उस पर सौर ऊर्जा सन्तुलित परिमाण में आती है । यदि ऐसा न होता तो समीपवर्ती होने पर वह भी बुद्ध की तरह आग का गोला बन जाती, अथवा दूरी अधिक होने पर प्लूटो की तरह अति शीतल निस्तब्ध बन कर रह गई होती । पृथ्वी पर जो कुछ भी है उसे वस्तुतः अन्तरिक्ष का अनुदान ही माना जा सकता है ।

सूर्य ही नहीं ब्रह्माण्डव्यापी घटकों से भी पृथ्वी को कुछ न कुछ उपहार निरन्तर मिलता रहता है । पृथ्वी और सूर्य को यदि माता-पिता माना जाय तो अन्य ग्रह नक्षत्रों को चाचा, ताऊ, भाई, भतीजा, नाना आदि मानकर चलना होगा, जिनका दुलार, सहयोग एवं अनुदान भी कम मूल्यवान नहीं होता । इतने पर भी कितने यह समझ पाते हैं कि अपने पुरुषार्थ के अतिरिक्त अपने वैभव-सौभाग्य में कोई और भी साझीदार है ।

अदृश्य जगत ही विशालकाय सत्ता है । उसकी तुलना में पृथ्वी तो एक छोटी मछली के समान है । समुद्र का पानी जब तक सही स्थिति में है तभी तक मछली का भी अस्तित्व है, अन्यथा विपरीत स्थिति आने पर उसके लिए तो महाप्रलय ही आ खड़ी होगी ।

अन्तरिक्ष और पृथ्वी के बीच उपयुक्त तालमेल बना रहे, इसकी भूमिका उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव निभाते हैं । जो भला-बुरा पृथ्वी पर आकाश से निरन्तर बरसता रहता है, उसमें से उपयोगी अंश उत्तरी ध्रुव की छलनी छानकर रख लेती है और शेष कचरे को दक्षिणी ध्रुव में होकर फिर उसी अनन्त गह्वर में धकेल देती है । प्रकृति सम्पदा का इसी प्रकार आदान-प्रदान होता रहता है । कहने वाले तो यहाँ तक कहते हैं कि जीवन पृथ्वी की अपनी उपज नहीं है । वह किसी अन्य विकसित ग्रह पिण्ड से यहाँ संयोगवश आ उतरा है । मनुष्य भटका हुआ देवता इसी आधार पर कहा जाता है ।

यह प्रकृति के जड़ जीवन की चर्चा हुई । इसके अतिरिक्त "चेतन" का एक और पक्ष है, जिसे जड़ जगत से असंख्य गुना महत्त्वपूर्ण माना जा सकता है । कोई शरीर कितना ही समर्थ व सुन्दर क्यों न हो, पर उसकी समस्त गतिविधियाँ अदृश्य स्तर की मानसिक चेतना के माध्यम से ही संचालित होती हैं । उसके मूर्छित हो जाने पर शरीर गहरी प्रसुप्ति में चला जाता है और बड़े ऑपरेशन होने पर भी कुछ पता नहीं चलता । यदि प्राण निकल जाय तो प्रौढ़ शरीर के लिए हिलना-डुलना तो दूर, कुछ समय भी लाश का अस्तित्व बनाये रहना सम्भव न हो सकेगा ! कीड़े-कौवे ही उसका सफाया कर देते हैं । इस दुर्गति से बचाने के लिए ही उसे मिट्टी में दबाने या आग में जलाने का उपक्रम किया जाता है । शरीर का सब कुछ दृश्य प्रतीत होता रहने पर भी वस्तुतः वह प्राण शक्ति की कठपुतली भर है । जो शरीर के नष्ट हो जाने पर भी अपनी सत्ता किसी न किसी रूप में बनाये रहती है और परलोक आदि में भ्रमण करती हुई नया जन्म धारण करती है, उसे अनादि अनन्त और अजर अमर भी कहा गया है । महत्ता उसी की है, गरिमा भी उसी की ।

प्रकृति से सम्बन्धित सूक्ष्म जगत का रहस्योद्घाटन भौतिक विज्ञान के अन्तर्गत निरन्तर होता चल रहा है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

उसी जानकारी के आधार पर रेडियो, टेलीविजन आदि काम करते हैं । एक्स-रे, लेसर आदि का प्रयोग होता है और उपग्रहों को पृथ्वी की कक्षा में घुमाने से लेकर अन्तर्ग्रही खोज पर भेजा जाता है, जो अभी तक जाना गया है, अगले दिनों उससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण जानकारियाँ प्राप्त करने की तैयारी है । तब मनुष्य के हाथ में पवन बादल आदि की लगाम होगी और सूर्य ईंधन की आवश्यकता की पूर्ति करने लगेगा । हो सकता है—अन्तरिक्ष में नगर बसने लगें और ग्रह उपग्रहों के बीच आदान प्रदान चल पड़े ।

इससे अधिक व्यापक और अधिक समर्थ चेतनापरक सूक्ष्म जगत है । पदार्थ सत्ता से भरे सूक्ष्म जगत की कुंजियाँ पदार्थ विज्ञानियों के हाथ लगती रहीं पर चेतन सत्ता वाले सूक्ष्म जगत के सम्बन्ध में अधिक जानकारियाँ सचेतन तेज-पुंज ही अनुभव करते हैं । उससे लाभ लेते व उसे प्रभावित करके अभीष्ट अनुदान हस्तगत करते हैं ।

यह आत्मा और परमात्मा का विषय है । आत्मा अणु है, परमात्मा विभु । आत्मा बिन्दु है और परमात्मा सिन्धु । दोनों के बीच वैसा ही तादात्म्य है जैसा कि परमाणु और सौर-मण्डल के बीच इन दोनों के बीच आदान-प्रदान और सहयोग—सहकार जिन महान् नियमों और सिद्धान्तों के आधार पर बना हुआ है, इसी का अनुसरण परमाणु और उसके सहयोगी घटक भी करते हैं । ब्रह्माण्डीय चेतना को ही परब्रह्म या परमात्मा कहते हैं । इसका एक छोटा किन्तु दिव्य सत्ता के अन्तर्गत विधान सभी शक्तियों का प्रतीक प्रतिनिधि है । दोनों के बीच यों प्रत्यक्ष सम्बन्ध सदा ही दृष्टिगोचर नहीं होता । दोनों की स्थिति पृथक-पृथक है । फिर भी दोनों एक-दूसरे के साथ परोक्ष रूप से एक हल्के सम्बन्ध सूत्र में जुड़े हुए हैं, जिसे विकसित कर लेने पर आदान-प्रदान का उपक्रम अधिक बड़े रूप में चल पड़ता है । ऋषि कल्प आत्माएँ इसी प्रक्रिया में प्रवीण पारंगत हो चुकी होती हैं । मानव में देवत्व के उदय का अर्थ है—जीवन में ब्रह्म सत्ता की अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में अवधारणा-अवतरण होना ।

जीवात्माओं का चौरासी लाख योनियों में परिभ्रमण का उपक्रम इसी चेतना से सूक्ष्म जगत में सम्पन्न होता है, जिसे परलोक कहते हैं । कर्मफल के चरितार्थ होने की व्यवस्था इसी क्षेत्र में बनती है । मरण के उपरान्त नया जन्म लेने तक प्राणी इसी क्षेत्र में विहार करता है, स्वर्ग-नरक भोगता है । देवशक्तियों की प्रचण्ड हिलोरें इसी महासागर में उठती रहती हैं और वे प्राणियों के नियन्त्रण, परिपोषण, परिवर्धन की भूमिकाएँ सम्पन्न करती हैं । ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र आदि नामों से इन्हीं दिव्य तरंगों को जाना जाता है ।

तपस्वी अपनी दिव्य आकर्षण शक्ति को असाधारण रूप से विकसित करके इस स्थिति में पहुँचते हैं कि चेतना के महासमुद्र में से अपने उपयोग के लिए आवश्यक मणि मुक्तक ढूँढ़ निकालें । ऋद्धि-सिद्धि इन्हीं उपलब्धियों को कहा जाता है । स्वर्ग मुक्ति का आनन्द इस चेतना महासमुद्र में तैरते हुए ही लिया जाता है । नरक की व्यवस्था इसी के एक कोने में है । अध्यात्म का समूचा आधार इस अदृश्य लोक पर टिका है जो निखिल विश्व ब्रह्माण्ड में परमात्मा बनकर और आत्मा बन कर मानवी अन्तराल में विद्यमान है ।

दृश्य संसार के भीतर अदृश्य संसार

जो कुछ दिखाई देता है या प्रत्यक्ष अनुभव होता है, जगत का अस्तित्व वहीं तक सीमित नहीं है । यों बहुत-सी वस्तुएँ ऐसी भी हैं जो प्रत्यक्ष चर्म-चक्षुओं से नहीं दिखाई देतीं, उसका कारण उनका दूर स्थित होना है । उदाहरण के लिए दिल्ली में बैठे व्यक्ति के लिए, बहुत दूर की बात तो जाने दें, दूसरा मौहल्ला भी एक तरह से अदृश्य है । आँखों की देखने की क्षमता थोड़ी-सी है और उनसे बहुत थोड़ी दूर तक देखा जा सकता है । बीच में यदि कोई आवरण आ जाय तो उसे भी वेध कर देख पाना असम्भव हो जाता है । अनुभव भी अपने आस-पास के कुछ फीट के घेरे के वातावरण का ही होता है । उसके आगे क्या हो रहा है ? यह जान पाना और अनुभव करना ज्ञानेन्द्रियों के वश की बात नहीं । परन्तु उनका भी अस्तित्व है और उन्हें भी स्थूल में गिना जा सकता है ।

सौर-जगत में अनेकों ग्रह हैं । नभ-मण्डल में लाखों तारे और नक्षत्र हैं । ब्रह्माण्ड का अमित विस्तार है । इस विस्तार को स्थूल अस्तित्व में गिना जा सकता है । उन तक पहुँचना सम्भव नहीं हो सका है, किन्तु कभी सम्भव हो भी सकता है । उस स्थूल जगत के अलावा एक ऐसा सूक्ष्म जगत भी है जिसका अस्तित्व अपने आस-पास ही है और उसे न चर्मचक्षुओं से देखा जा सकता है, न ज्ञानेन्द्रियों से अनुभव किया जा सकता है । कदाचित कोई ऐसा वैज्ञानिक उपकरण विकसित हो सके, जिसके द्वारा इस सूक्ष्म जगत को देखा जा सके, तो प्रतीत होगा कि अपने शरीर से ही कितनी ही ऐसी सूक्ष्म सत्ताएँ चिपटी हुई हैं, जिन्हें देखकर दंग रह जाना पड़ता है । यह जानकर विस्मय विमुग्ध हो जाना पड़ता है कि कदाचित ये अदृश्य सूक्ष्म सत्ताएँ और दृश्य होतीं तो क्या अपने स्थान से एक इंच भी हटना या हिलना-डुलना सम्भव हो पाता ?

स्थूल और दृश्य जगत के अलावा इसी जगत में ऐसी सूक्ष्म और अदृश्य सत्ताएँ भी हैं जो मनुष्य की अपेक्षा काफी बलवान और सामर्थ्यवान हैं । ये सत्ताएँ कभी अपने अस्तित्व का परिचय बड़े ही विचित्र ढंग से देती हैं और जब इस तरह की घटनाएँ प्रकाश में आती हैं तो उन्हें चमत्कार कहने के अलावा कोई मान्यता बनाना सम्भव नहीं होता ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

घटना सन् १९७५ की है । लन्दन निवासी श्री एलन और श्रीमती एलन गर्मियों की छुट्टी में उत्तरी ध्रुव की यात्रा करने के लिए निकले उस समय दोनों रूस की सीमा से सटे हुए लैपलैण्ड नामक स्थान से गुजर रहे थे । दोनों बातें करते हुए चल रहे थे । अचानक क्रिस्टीन ने अनुभव किया कि उसका साथी एलन अभी-अभी ही जैसे गायब हो गया है, क्योंकि एलन की बात के उत्तर में उसने जो कुछ कहा था उसके बाद उत्तर मिलना तो दूर रहा उसकी पदचाप तक सुनाई देना बन्द हो गई । यह सब इतना आकस्मिक हुआ था कि क्रिस्टीन कुछ समझ नहीं पायी थीं । उसने पीछे मुड़कर देखा तो दूर तक भी कहीं एलन दिखाई नहीं दे रहा था । जैसे उसे जमीन निगल गई हो, ऐसी घटना थी यह । ऐसी घटना पहले भी कहीं देखने-सुनने में नहीं आयी थी इसलिए यह विश्वास बँधते नहीं बनता था कि एलन गायब हो गया है ।

श्रीमती क्रिस्टीन ने अपने पति को आसपास इधर-उधर बहुत ढूँढ़ा, तलाशा परन्तु वह कहीं हों तो मिलें । उसका कहीं अता-पता नहीं चल रहा था । अपनी खोजबीन का कोई परिणाम न निकलते देखकर क्रिस्टीन ने स्थानीय लोगों की मदद ली । उस क्षेत्र में बसने वाले फिनिश जाति के लोगों ने भी एलन को ढूँढ़ने के लिए काफी श्रम किया, परन्तु कोई परिणाम नहीं निकला । खोजी कुत्तों की सहायता भी ली गई परन्तु खोजी कुत्ते उस स्थान पर आकर रुक जाते , जहाँ से एलन गायब हुआ था । रूसी सेना का एक कैम्प भी पास ही था । यह आश्चर्यजनक घटना सुनकर फौजी अधिकारियों ने श्रीमती क्रिस्टीन से सहानुभूति व्यक्त की और विशेषज्ञों की सहायता से एलन की खोज की, परन्तु उन्हें भी कोई सफलता नहीं मिली । अन्त में निराश होकर श्रीमती क्रिस्टीन अपना अभियान अधूरा छोड़कर वापस लन्दन आ गई । एलन का आज तक कोई पता नहीं चला है ।

ऐसी ही एक घटना मनीला के माध्यमिक स्कूल में पढ़ रहे बारह वर्षीय छात्र कार्बोलिया बलोजा के साथ घटी । सितम्बर १९५१ में वह अपने सहपाठियों के साथ खेल रहा था कि अचानक वह गायब हो गया, उसके सहपाठी हैरान रह गए कि देखते ही देखते कार्बोलिया कहाँ चला गया ? फिर जिस रहस्यमय विचित्र ढंग से वह गायब हुआ था, इसी प्रकार वह वापस प्रकट भी हो गया । इसके बाद तो ऐसा सिलसिला चला कि वह प्रायः कक्षा में बैठे-बैठे ही गायब होने लगा । कई बार वह गायब होता और फिर प्रकट हो जाता । इस सम्बन्ध में पूछे जाने पर कार्बोलिया ने बताया कि उसे प्रायः ऐसा अनुभव होता है कि परी जैसी कोई सुन्दर लड़की उसे अपने पास बुला रही है । वह सहज आकर्षणवश उसके समीप जाने की इच्छा से आगे बढ़ने की कोशिश करता है कि यकायक हल्का हो जाता है और हवा में उड़ जाता है । उसे नहीं मालूम कि वह गायब हो जाता है, परन्तु जिस समय वह अन्य सहपाठियों और कुटुम्बीजनों को गायब हुआ प्रतीत होता है, उस समय वह परी जैसी लड़की के साथ खेल रहा होता है ।

मनीला के जियोरा स्कूल का यह छात्र कई बार गायब हुआ । एक बार तो वह दो दिन तक गायब रहा । पुलिस में रिपोर्ट कराई गई और पुलिस इस मामले की छानबीन करने लगी, लेकिन उसके हाथ भी कुछ नहीं लगा । अन्त में पुलिस हार-थक कर रह गई । विवश पिता ने उसे एक कमरे में बन्द कर दिया, परन्तु कार्बोलिया को वहाँ से गायब होने में भी कोई परेशानी नहीं हुई ।

अन्त में इन घटनाओं को किन्हीं शैतानी शक्तियों का चक्कर मानकर कार्बोलिया के पिता ने चर्च के पादरी से अपना दुखड़ा रोया, पादरी ने कार्बोलिया को इस शैतानी चक्कर से छुड़ाने के लिए प्रार्थना की और जब कहीं जाकर उसका गायब होना बन्द हुआ ।

अमेरिका के टेनेसी राज्य में गालारिन नामक स्थान पर डेविंग लैग के साथ भी इसी प्रकार, गायब होने की घटना घटी । यह २३ सितम्बर, १८०८ की बात है । डेविड अपने क्षेत्र का प्रतिष्ठित व्यक्ति था, लोग उसे सम्मान की दृष्टि से देखते थे और उसका दबदबा भी मानते थे क्योंकि वह जमींदार था । उस शाम वह अपने दो मित्रों के साथ घूमने के लिए निकला और घूमते समय ही रास्ते में अचानक गायब हो गया । ऐसा भी नहीं था कि वह अपने मित्रों की दृष्टि बचाकर कहीं छुप गया हो अथवा किसी ने उसका अपहरण कर लिया हो, क्योंकि जिस समय वह अन्तर्ध्यान हुआ उस समय वह अपने मित्रों से बात कर रहा था और उसकी बात अधूरी ही थी कि वह अन्तर्ध्यान हो गया । मित्रों ने वहाँ खोज की, परन्तु डेविड का कहीं भी पता नहीं चला । मित्रों ने घरवालों को इसकी सूचना दी, पुलिस में भी रिपोर्ट की गई । हर तरह से खोजबीन हुई परन्तु डेविड का कहीं पता नहीं चला । जिस स्थान पर वह गायब हुआ, वहाँ कोई गड्ढा अथवा झाड़ी नहीं थी, जिसमें कि वह छुप जाता । उस स्थान के आसपास वाले क्षेत्र सहित नगर का कोना-कोना छान मारा गया, किन्तु डेविड का पता नहीं चलना था और नहीं ही चला ।

डेविड कोई साधारण व्यक्ति तो थे नहीं, प्रतिष्ठित जमींदार थे, अतः उनकी खोज के लिए पत्रकारों से लेकर जासूसों तक ने एड़ी-चोटी का जोर लगाया । सरकार ने इस घटना की जाँच के लिए एक आयोग ही नियुक्त कर दिया । इस आयोग ने वहाँ के निवासियों से कई तरह के प्रश्न पूछे, इस क्षेत्र की जानकारियाँ एकत्रित कीं, मिट्टी, पानी और घास आदि का परीक्षण किया गया । देखा गया कि पहले भी कभी कोई इस तरह की घटना घटी थी क्या ? लेकिन इस तरह की कोई घटना पहले कभी न घटी थी, इसका कोई प्रमाण तो क्या विवरण भी नहीं मिला । हर तरह से जाँच-पड़ताल करने पर आयोग के अध्यक्ष, जो एक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

भूतपूर्व न्यायाधीश थे, ने लिखा, यह अविश्वसनीय सत्य घटना है । जिसका समाधान बहुत खोजने पर भी नहीं मिल पाया ।

सन १९२० में लन्दन के युवा सांसद पिक्टर ग्रेसर एक दुकान से निकल रहे थे कि लोगों के देखते ही देखते गायब हो गए । उनकी खोज की गई, प्रेतविद्या के जानकार लोगों की भी सहायता ली गई, परन्तु पिक्टर ग्रेसर का कहीं भी पता नहीं चला, न कोई सूत्र हाथ लगा, जिसके आधार पर इस सम्बन्ध में निश्चयपूर्वक कुछ कहा जा सके ।

१३ जुलाई, १९५० को पोलैण्ड निवासी पादरी वोनिस्की अपने किसी मित्र से मिलने के लिए घर से निकले । वे सौ कदम भी नहीं जा पाये होंगे कि अचानक अन्तर्ध्यान हो गए । बोनिस्की बहुत प्रतिष्ठित और लोकप्रिय पादरी थे । उनके गायब होने की घटना पर बड़ा तहलका मचा । पुलिस ने भी जी-तोड़ कोशिश कर डाली, परन्तु उनका कहीं भी पता नहीं चल सका कि वे कहाँ गए ।

व्यक्तियों के इस प्रकार चलते-फिरते या देखते ही देखते गायब हो जाने की असंख्य घटनाएँ हैं । इस सन्दर्भ में बरमूडा के रहस्यमय त्रिकोण की चर्चा अप्रासांगिक नहीं होगी, जिसे शैतान के त्रिकोण के नाम से जाना और सम्बोधित किया जाता है । बरमूडा से फ्लोरिडा तक, फ्लोरिडा से सटगामो और सटगामो से बरमूडा तक एक ऐसी सीमा रेखा बनती है, जो रेखागणित के त्रिकोण की तरह आकृति बनाती है । इस क्षेत्र में कोई भी विमान या जहाज पहुँच जाता है तो उसका फिर पता नहीं चलता । वह गायब ही हो जाता है । वहाँ से किसी प्रकार लौट कर नहीं आ सके । कुछ लोगों का कहना है कि उस क्षेत्र में दिशा सूचक यन्त्र सहित वे सभी उपकरण काम करना बन्द कर देते हैं, जिनके माध्यम से बाहरी जगत के साथ सम्पर्क रखा जा सके । अब तक कई एक जहाज तथा विमान इस शैतानी त्रिकोण की चपेट में आकर लुप्त हो चुके हैं । ऐसा भी नहीं है कि वे नष्ट हो जाते हों, क्योंकि नष्ट होने या कोई दुर्घटना घटने की स्थिति में उन जहाजों या विमानों के कुछ तो अवशेष प्राप्त होते । कोई तो ऐसा चिन्ह मिलता कि कहा जा सके ये यान दुर्घटना ग्रस्त होकर नष्ट हो गए हैं, किन्तु ऐसे कोई चिन्ह नहीं मिले, न ही उन यानों के अवशेष ही प्राप्त हो सके ।

इन घटनाओं से सिद्ध होता है कि परिचित और प्रत्यक्ष अनुभव में आने वाले संसार के भीतर ही कुछ ऐसी अदृश्य सत्ताएँ भी हैं जिन्हें अभी तक जाना-पहचाना नहीं जा सका है । सूक्ष्म होने के कारण ये किन्हीं यन्त्रों की पकड़ में भी नहीं आती । ये अदृश्य और सूक्ष्म सत्ताएँ अच्छी भी हो सकती हैं तथा बुरी भी । इन्हें अदृश्य लोक या अदृश्य दुनिया भी कहा जा सकता है । जिस प्रकार मानवीय सत्ता या अन्य प्राणियों के तीन शरीर हैं—स्थूल, सूक्ष्म और कारण । उसी प्रकार प्रत्यक्ष जगत के भीतर भी स्थूल, सूक्ष्म और कारण जगत की तीन पर्तों को भारतीय मनीषियों ने स्वीकार किया है । देखते ही देखते गायब हो जाने वाली घटना सूक्ष्म परत की ही गतिविधि है । स्थूल-जगत के रहस्य ही अभी पूरी तरह नहीं जाने जा सके हैं, तो सूक्ष्म-जगत को कौन कहे ? परन्तु यह निर्विवाद है कि संसार, जो अपने आस-पास ही दिखाई देता है, वह उतना ही नहीं है जितना कि दिखाई देता या अनुभव होता है । उसके अस्तित्व की अनेकों गहरी पर्तें हैं । कदाचित उन्हें जाना जा सके और उपयोग में लाने की सामर्थ्य अर्जित की जा सके तो मनुष्य की शक्ति सामर्थ्य अनन्त गुना बढ़ और विकसित हो सकती है जिसकी कल्पना करना सम्भव नहीं है ।

अणु से विराट् की ओर, अपूर्णता से पूर्णता की ओर

परमाणु पदार्थ की सबसे छोटी इकाई है । उसकी लघुता अन्तिम है । अनुमान है कि यदि मनुष्य एक परमाणु के बराबर हो जाय तो भारतवर्ष के ९० करोड़ लोग पिन की नोक में आसानी से बैठाये जा सकते हैं । परमाणु की लघुता की कोई भी सीमा नहीं है ।

लेकिन यदि इस संसार में किसी एक स्थान पर अपवाद रहित सत्य मिल जाता तो चिड़ियों के चहकने से लेकर सूर्य के गतिशील होने तक की एक व्यापक हलचल विश्व में दिखाई दे रही है न होती, सृष्टि में सब ओर जड़ता ही जड़ता होती । सृष्टि के खेल को चलाये रखने के लिए हर परमाणु के भीतर एक शक्ति एक चेतना काम कर रही है । वही चेतन सत्ता जीव है, आत्मा है, उसी का विराट् रूप ब्रह्म है—

वालाग्रशत भागस्य शतधा कल्पितस्य च ।
भागो जीवः स विज्ञेयः स चानन्त्याय कल्पते ॥

—श्वेताश्वतरोपनिषद् ५/९

अर्थात् बाल के अग्रभाग के सौवें भाग से भी सौवें अंश जितना सूक्ष्माति सूक्ष्म परिमाण वाला आत्मा ही असीम गुणों वाला हो जाता है ।

परमाणु की लघुता का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि पानी की एक बूँद में ६० लाख शंख (साठ के आगे बीस शून्य) परमाणु होते हैं । पानी के एक घटक हाइड्रोजन परमाणु का व्यास एक इन्च के बीस करोड़वें भाग जितना होता है । उसका भार १६४ ग्राम के १० अरब शंख अर्थात् १ के आगे २४ शून्य होती है ।

इतना छोटा परमाणु भी अपने आप में न तो अन्तिम सत्य है और न ही स्थिर । उसकी स्थिरता परमाणु में न्यूट्रॉन कणों की उपस्थिति के कारण भ्रम जैसी जान पड़ती है मुख्य रूप से उसमें दो भौतिक शक्तियाँ इलेक्ट्रॉन (ऋण विद्युत) और प्रोट्रॉन (धन विद्युत) गतिशील हैं । यह दोनों शक्तिगम होने पर भी भौतिक माने जाते हैं । अर्थात् वह विभक्त

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तत्व हैं और परमाणु से छोटे हैं । ऋण आवेश इलेक्ट्रॉन का व्यास एक इंच के पचास नीलवें भाग (एक बटा ५ के आगे बारह शून्य) के बराबर और भार में हाइड्रोजन के परमाणु भार से भी एक बटा २ हजारवें भाग जितना । यह इलेक्ट्रॉन परमाणु की कक्षा में १३०० मील प्रति सेकण्ड की गति से चक्कर काट रहे हैं । इसी प्रकार धन अणु (प्रोटॉन) इलेक्ट्रॉन से दस गुना अधिक बड़ा स्थिर तथा भार में हाइड्रोजन परमाणु के बराबर होता है ।

अभी तक न तो यह इलेक्ट्रॉन लघुता की अन्तिम सीमा में आ पाये और नहीं प्रोटॉन तब तक इनको बाँध रखने वाली केन्द्रीय शक्ति भी आ धमकी इसे नाभिक या केन्द्रक (न्यूक्लियास) कहते हैं एक परमाणु में नाभिक का स्थान उसके दस नीलवें भाग जितना ही होता है ।

अब इलेक्ट्रॉन के भीतर इलेक्ट्रॉन और नाभिक (न्यूक्लियस) के भीतर अनेक नाभिकों (न्यूक्लियाई) की संख्या भी निकलती चली आ रही है । हमारे ऋषि ग्रन्थों में इन्हें "सर्गाणु" तथा "कर्षाणु" शब्दों से सम्बोधित किया गया है । विभिन्न तत्वों के परमाणुओं को इस सूक्ष्म शक्ति को देवियों की शक्ति कहा गया है । यों सामान्यतौर से तत्व पाँच ही माने गए हैं, किन्तु "वेद निदर्शन विद्या" में यह स्पष्ट उल्लेख है कि सोना, चाँदी, लोहा, अभ्रक आदि ठोस पृथ्वी के ही विभिन्न रूपान्तर हैं । इसी प्रकार वायु के ४९ भेद मिलते हैं अग्नियों और प्रकाश के भी भिन्न-भिन्न रूपों का वर्णन मिलता है शक्ति साहित्य में पदार्थ शक्तियों के सैकड़ों नाम मिलते हैं हर शक्ति का एक स्वामी देवता माना गया है और उसे शक्तिमान शब्द से सम्बोधित किया गया है । अब पदार्थ के साथ जिस प्रति पदार्थ की कल्पना की गई है वह प्रत्येक अणु में प्रकृति के साथ पुरुष की उपस्थिति का ही बोधक है ।

१९३० में इसी विषय पर प्रसिद्ध फ्रांसीसी वैज्ञानिक पाल एट्रियेन मॉरिस डीराक ने इस तरह के कणों की उपस्थिति का उल्लेख किया और उन्हें प्रति-व्यय (एण्टी एलेमेन्ट) का नाम दिया गया । डीराक को १९३३ में इसी विषय पर नोबेल पुरस्कार दिया गया । उसके बाद एण्टी इलेक्ट्रॉन एण्टी प्रोटॉन सामने आये । सबसे हलचल वाली खोज मार्च, १९६५ में अमेरिका की ब्रूक हेवेन राष्ट्रीय प्रयोगशाला में हुई जिसमें प्रत्येक तत्व का उल्टा अतत्व होना चाहिए । कोलम्बिया विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों ने "एण्टी ड्यूटीरियम" की खोज की जो सामान्य हाइड्रोजन के गुणों से विपरीत था और यह निश्चय हो गया कि संसार में प्रोटॉन से भी भारी नाभिक विद्यमान हैं और यहीं से एक नई कल्पना का उदय हुआ कि संसार में प्रति ब्रह्माण्ड नाम की भी कोई सत्ता होनी चाहिए ।

ब्रह्म कहते हैं ईश्वर को, अण्ड कहते हैं जिसमें निवास हो सके, लोक आदि । सारे संसार को ही ब्रह्माण्ड कहते हैं और भारतीय दर्शन में एक ही ईश्वर की कल्पना की गई है—

विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतोमुखो-
विश्वतोबाहुरुत विश्वतस्पात् ।
सं बाहुभ्या धमति-
सं पतमैर्द्यावा भूमी जनयन देव एकः ॥

—ऋग्वेद १०/८१/३

एक ही देव (परमात्मा) सब विश्व को उत्पन्न करता, देखता, चलाता है । उसकी शक्ति सर्वत्र समाई हुई है । वही परमशक्तिमान् और सबको कर्मानुसार फल देने वाला है ।

अंग्रेजी का "यूनिवर्स" शब्द भी सारे विश्व की एकता का प्रतीक है । सृष्टि का कोई भी स्थान पदार्थ रहित नहीं है । आकाश में भी गैसे हैं जहाँ बिल्कुल हवा नहीं है वहाँ विकिरण या प्रकाश के कण और ऊर्जा विद्यमान हैं । प्रकाश भी एक विद्युत चुम्बकीय तत्व है । वैज्ञानिकों ने अनुमान लगाया है कि वह एक वर्गमील क्षेत्र पर प्रतिमिनट आधी छटाँक मात्रा में सूर्य से गिरता रहता है । अर्थात् एक वर्गमील स्थान में जो भी प्राकृतिक हलचल हो रही है उसका मूल कारण यह आधी छटाँक विद्युत चुम्बकीय तत्व ही होता है ।

जिस प्रकार कोई स्थान पदार्थ रहित नहीं है और प्रति-कण की उपस्थिति भी सिद्ध हो गई है जो कि स्थूल कण की चेतना से विपरीत गुण वाला होता है तो यह एक मानने वाली बात हुई कि सारी-सारी में व्यापक प्रति ब्रह्माण्ड तत्व वही ईश्वर होना चाहिए जिसे कण-कण में विद्यमान, कर्माध्यक्ष विचार, ज्ञान, मनन आदि गुणों वाला तथा गुणों से भी अतीत कहा गया है ।

मनुष्य शरीर जिन जीवित कोशों (सेल्स) से बना है उसमें आधा भाग ऊपर बताए भौतिक तत्व होते हैं । उनकी अपनी विविधता कैसी भी हो पर यह निश्चित है कि कोश में नाभिक को छोड़कर हर स्थूल पदार्थ कण कोई न कोई तत्व होता है । उनके अपने-अपने परमाणु अपने-अपने इलेक्ट्रॉन प्रोटॉन, न्यूट्रॉन, पाजिट्रॉन प्रति इलेक्ट्रॉन तथा नाभिक भी होंगे । पदार्थ ही ब्रह्माण्ड की रचना करता है । इस प्रकार योगवशिष्ठ का यह कहना कि प्रत्येक लोक के अन्दर अनेक लोक और उनके ब्रह्मा (शासन कर्त्ता) विद्यमान हैं गलत नहीं है । जीव अपनी वासना के अनुसार जिस पदार्थ की कल्पना करता है उसी प्रकार के तत्व या गुण वाले लोक में चला जाता है । पर जिस प्रकार से मनुष्य के कोश का मूल "नाभिक" ही अपनी चेतना का विस्तार साइटोप्लाज्मा के हर तत्व के नाभिक में करता है उसी प्रकार इस सारी सृष्टि में हो रही हलचल का एक केन्द्रक या नाभिक होना चाहिए । चेतन गुणों के कारण उसे ईश्वर नाम दिया गया हो तो इसे भारतीय तत्वदर्शियों की अति-कल्पना न मानकर आज के स्थूल और भौतिक विज्ञान जैसा चेतना का विज्ञान ही मानना चाहिए और जिस प्रकार आज भौतिक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

विज्ञान की उपलब्धियाँ जीवन के सीमित क्षेत्र को लाभान्वित कर रही हैं जीवन के अनन्त क्षेत्र के लाभ इस महान् अध्यात्म विज्ञान द्वारा प्राप्त किया जाना चाहिए ।

परमाणु एक सजीव ब्रह्माण्ड है उसमें झाँक कर देखा गया तो सूर्य-सी दमक, सितारों-सा परिभ्रमण और आकाश जैसा शून्य स्थान मिला । परमाणु की सारी गति का केन्द्र बिन्दु उसका तेजस्वी नाभिक ही होता है । सन् १८९६ की बात है, एक दिन फ्रांसीसी भौतिक विज्ञानी हेनरी बेक्वेरल यूरेनियम पर प्रयोग कर रहे थे तब उन्हें पता चला कि यह यौगिक अपने भीतर अपने आप ऊर्जा उत्पन्न करते हैं । यह ऊर्जा पदार्थ से फूटती रहती है । मैडम क्यूरी ने इसी का नाम रेडियो सक्रियता बताया था । इसी गुण के कारण पदार्थ टूटते-फूटते, गलते और नष्ट होते रहते हैं यह अवधि बहुत लम्बी होती है इसलिए स्पष्ट दिखाई नहीं देती पर प्रकृति में इस तरह की सक्रियता सर्वत्र है । थोरियम का अर्द्धजीवन १४०००,०००,००० वर्ष है अर्थात् इतने वर्षों में उसकी मात्रा आधी रह जाती है, आधी विकिरण से नष्ट हो जाती है । पृथ्वी के लोग भी इस तरह का विकिरण किया करते हैं । प्रतिवर्ष मनुष्य जाति ६०००००००००००००००००० फुट पौण्ड ऊर्जा आकाश में भेजती रहती है जबकि हमारे जीवन को अपने समस्त ब्रह्माण्ड को गतिशील रखने के लिए सूर्य प्रति सेकण्ड चार सौ सेक्टीलियन अर्थात् दस अरब इक्कीस करोड़ किलोवाट शक्ति अपने सारे मण्डल को बिखेरता और उसे गतिशील रखता है । इस आदान-प्रदान क्रिया पर ही सारा संसार चल रहा है । यदि सूर्य यह शक्ति देना बन्द कर दे तो सौरमण्डल का हर कण, हर शरीर निश्चेष्ट होकर नष्ट हो जायेगा । सौर-मण्डलों की रचना व विध्वंस ऐसे ही हुआ करता है ।

थोरियम के परमाणु से यदि उसके नाभिक को उसी के इलेक्ट्रॉन से चोट कराई जाय तो जो रेडियो-ऊर्जा १४०००,०००००० ×२ (उसकी पूरी मात्रा समाप्त होने तक) वर्ष में समाप्त होती होगी वह एक क्षण में समाप्त हो जायेगी । यह शक्ति इतनी बड़ी होगी कि वह लन्दन जैसे तीन महानगरों को एक सेकण्ड में नष्ट कर दे । परमाणु की इस महाशक्ति की सूर्य की महाशक्ति से उसी प्रकार तुलना की जा सकती है जिस प्रकार परमाणु की रचना से सौर-मण्डल की रचना की तुलना की जाती है, वस्तुतः परमाणु, सूर्य और समस्त ब्रह्माण्ड के समान त्रिक हैं, जो परमाणु में है वही सौर-मण्डल में है । जिस प्रकार परमाणु अपने नाभिक के बिना नहीं रह सकता, सौर-मण्डल सूर्य के बिना ब्रह्माण्ड भी एक अनन्त सर्वव्यापी शक्ति के बिना रह नहीं सकता । प्रकृति और ब्रह्म की एकता का रहस्य भी यही है । जब तक नाभिक, न्यूट्रॉन एक हैं, जब तक दोनों में संघात नहीं होता सृष्टि परम्परा परमाणु की तरह स्थिर रहेगी जिस दिन संघात हुआ उसी दिन सारी सृष्टि शक्ति रूप में "बहुस्याय एकोभव" की स्थिति में चली जायेगी ।

शरीर एक परिपूर्ण ब्रह्माण्ड है । प्राकृतिक परमाणु (जो साइटोप्लाज्मा का निर्माण करते हैं) उसके लोक की रचना करते हैं और नाभिक मिलकर एक चेतना के रूप में उसे गतिशील रखते हैं । सूर्य, परमाणु प्रक्रिया का विराट् रूप है इसलिए वह दृश्य जगत की आत्मा है, चेतना है, नियामक है, सृष्टा है । उसी प्रकार सारी सृष्टि का एक अद्वितीय स्रष्टा और नियामक भी है पर वह इतना विराट है कि उसे एक दृष्टि में नहीं देखा जा सकता । उसे देखने, समझने और पाने के लिए हमें परमाणु की चेतना में प्रवेश करना पड़ेगा बिन्दु साधना का सहारा लेना पड़ेगा, अपनी चेतना को इतना सूक्ष्म बनाना पड़ेगा कि आवश्यकता पड़े तो वह काल ब्रह्माण्ड तथा गति रहित परमाणु की नाभि सत्ता में ध्यानस्थ व केन्द्रित हो सके । उसी अवस्था पर पहुँचने से आत्मा और परमात्मा की स्पष्ट अनुभूति होती है । नियामक शक्तियों के जानने का और कोई उपाय नहीं है । शरीर में वह सारी क्षमताएँ एकाकार हैं चाहें तो इस यन्त्र का उपयोग कर परमाणु की सत्ता से ब्रह्म तक की प्राप्ति इसी में कर लें ।

जैसा कि ऊपर कहा गया है कि पानी की एक बूँद में ६०००००००००००००००००० परमाणु होते हैं । वैज्ञानिकों ने हिसाब लगाकर देखा तो पाया कि यदि इतनी संख्या में कहीं अंगूर मिल जाते और उन्हें कहीं रखने के लिए स्थान की आवश्यकता पड़ती तो वह स्थान गोलाई की ओर से २४९०२ मील और ध्रुवों की ओर से २४८६० मील वाली पृथ्वी से ७५ गुना बड़ा तब होता जब एक स्थान में १ फुट ऊँचा अंगूर भर दिया गया होता ।

परमाणु अपने आप में अन्तिम लघुता नहीं है । उससे भी सूक्ष्म तत्व उसके अन्दर बैठे हैं और वह परमाणु की तुलना में इतने छोटे हैं जितनी सौरमण्डल की तुलना में पृथ्वी । सन् १९११ की बात है अर्नेस्ट रदरफोर्ड नामक एक अंग्रेज वैज्ञानिक एक प्रयोग कर रहे थे । सीसे की बनी हुई एक प्रकार की बन्दूक की नली में उन्होंने थोड़ी-सी रेडियम धातु रखी । सामने एक पर्दा लगाकर उन्होंने बीच में शुद्ध सोने का एक पत्तर लगा दिया । यह "पत्तर" बहुत पतला था तो भी परमाणुओं की सघनता तो थी ही उस पर रेडियम के परमाणुओं ने गोलियों की तरह बौछार की । ध्यान से देखने पर पता चला कि कुछ परमाणु उस पत्तर को भी पार कर गए हैं और उनकी आभा सामने पर्दे पर पड़ रही है यह सीधे मार्ग से कुछ हटी हुई थी ।

विचार करने से मनुष्य समुद्र के रहस्य को भी ढूँढ़ लेता है, रदरफोर्ड ने सोचा यदि सोने के परमाणु ठोस होते तो रेडियम के परमाणु उसे वेध पर पार नहीं जा सकते थे । स्पष्ट था कि परमाणु के भीतर ही रिक्तता थी, पोलापन था

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उस पोलेपन ने ही रेडियम परमाणुओं को आगे बढ़ने दिया पर उसका सम्पूर्ण भाग ही पोला नहीं था क्योंकि कई बार रेडियम के परमाणु इस तरह छितर जाते थे मानो सोने के परमाणुओं के भीतर कोई और भी सूक्ष्मतम वस्तु बैठी हुई हो और वह बन्दूक से आने वाले रेडियम परमाणुओं को भी तोड़-फोड़ डालती है । उसे रदरफोर्ड ने पहली बार परमाणु का मध्य नाभिक या केन्द्रक (न्यूक्लियस) नाम दिया । उसके बाद से आज तक नाभिक पर खोजें पर खोजें होती जा रही हैं पर इस सूक्ष्मतम तत्व के बारे में आज तक पूर्ण रूप से जानकारी नहीं प्राप्त की जा सकी पर जो कुछ समझ में आया उसने भारतीय तत्व दर्शन की इस मान्यता को बड़ा बल दिया कि आत्मा एक सर्वव्यापी चेतन तत्व है । संसार में जो कुछ भी है वह सब आत्मा में ही है ।

परमाणु जितना छोटा होता है उससे भी १०००००००००००००वाँ भाग छोटा नाभिक होता है । परमाणु जितना रहस्यपूर्ण है नाभिक उससे भी अधिक रहस्यपूर्ण है । अनुमान है कि परमाणु एक सौर-मण्डल की तरह है तो नाभिक एक सूर्य की तरह जिसमें परमाणु को क्रियाशील रखने वाली ऊर्जा भी है और प्रकाश भी । नियन्त्रण भी है और जीवन की सम्पूर्ण चेतना भी । नाभिक ही सच पूछा जाय तो परमाणु की प्रत्येक गतिविधि का अधिष्ठाता है । उसी प्रकार जीव का अधिष्ठाता आत्मा है जब तक जीव उसे प्राप्त नहीं कर लेता तब तक उसे शान्ति नहीं मिलती ।

यह तथ्य पढ़ते समय भारतीय तत्वदर्शन के यह विवेचन याद आ जाते हैं—

वालाग्र शत भागस्य शतधा कल्पितस्य च ।
भागो जीवा स विज्ञेय इति चाहापरा श्रुति ॥

— पञ्चदशी / चित्रदीप प्रकरण / / ८१

अर्थात्—एक बाल के अग्र भाग के जो सौ भाग करें उनमें से एक भाग के सौवें भाग की कल्पना करो तो उतना अणु एक जीव का स्वरूप है ऐसा श्रुति कहती है ।

किन्तु आत्मा—

तस्मादात्मा महानेव नैवाणुर्नापि मध्यमः ।
आकाश वत्सर्वगतो निरंशः श्रुति संमतः ॥

—पंचदशी / चित्र / ८६

अर्थात्—न अणु है न मध्यम है आत्मा विराट् और आकाश के समान (१) सर्वव्यापी, (२) क्रिया रहित, (३) सर्वगत, (४) नित्य कला युक्त है ।

परमाणु विज्ञान ने भारतीय दर्शन की इन सम्पूर्ण मान्यताओं को सिद्ध कर दिया है । भले ही आज के वैज्ञानिक अभी तक जड़ और चेतन के अन्तर को न समझ पाये हों । परमाणुओं की चेतना, जड़ पदार्थों से भिन्न गुणों वाली है । उपनिषद्कार लिखते हैं—

एष हि द्रष्टा, स्पष्टा श्रोता घ्राता ।
रसयिता मन्ता बोद्धा कर्त्ता—
विज्ञानात्मा पुरुषः ॥

अर्थात्—देखने वाला, छूने वाला, सुनने वाला, सूँघने वाला, स्वाद चखने वाला, मनन करने वाला और कार्य करने वाला ही विज्ञानमय आत्मा है ।

नाभिक तत्व को आत्मा की प्रतिकृति जीवन का सूक्ष्म कण—कहें तो कोई अत्युक्ति न होगी । नाभिक "प्रोटॉन" और "न्यूट्रॉन" दो प्रकार के कणों से बना हुआ होता है । उसके किनारे इलेक्ट्रॉन चक्कर काटते हैं । प्रोटॉन एक प्रकार की धन विद्युत आवेश, न्यूट्रॉन विद्युत आवेश रहित और इलेक्ट्रॉन जो इन दोनों की तुलना में १८०० गुना हल्का होता है ऋण विद्युत आवेश होता है । इसे आत्मा से भटका हुआ जीव कह सकते हैं । "वैशेषिकदर्शन" में आत्मा को शान्त, धीर और पूर्ण शक्ति के रूप में भी माना है और पदार्थ के रूप में भी । दोनों विसंगतियाँ नाभिक में मूर्तिमान हैं । नाभिक प्रोटॉन कण शक्ति हैं इनमें भार नहीं होता पर न्यूट्रॉन में भार होता है वही सारे परमाणु के भार के बराबर होता है । नाभिक में दोनों का ही अस्तित्व समान है । "इलेक्ट्रॉन" जीव है और वे तब तक चैन से नहीं बैठ पाते जब तक अक्रियाशील गैसों को अर्थात् मानसिक या आत्मिक द्वन्द्व की स्थिति से मुक्ति नहीं पा लेते ।

नाभिक के किनारे इलेक्ट्रॉन कई कक्षाओं में घूमते हैं । प्रत्येक कक्षा (आर्बिट) में २ n^2 इलेक्ट्रॉन हो सकते हैं । n = कक्षा की संख्या अर्थात् प्रथम कक्षा में ४, दूसरे में ८, तीसरे में १८ इलेक्ट्रॉन होंगे । यह कहना चाहिए जो जितना अधिक उलझ गया है वह उतना ही दुःखी है । पर अन्तिम कक्षा में प्रत्येक अवस्था में किसी भी द्रव्य में अधिक से अधिक ८ ही इलेक्ट्रॉन होंगे । यह इस बात के परिचायक हैं कि प्रत्येक जीव का अन्तिम लक्ष्य एक ही सिद्धान्त से बँधा हुआ है कि उसे आत्म तत्व को खोज करनी चाहिए । परमाणु की सारी हलचल अपने आपको अक्रियाशील बनाने की है । अक्रियाशील गैसें अर्थात् हीलियम, नियॉन, आर्गन, क्रिप्टॉन, जीनॉन रैडॉन आदि । जीव की सारी हलचल पूर्णता प्राप्त करने की हैं पर जब तक हम त्याग करना नहीं सीखते वह लक्ष्य मिलता नहीं । यह तथ्य भी हमें परमाणु से ही सीखने को मिलता है । उदाहरण के लिए नमक, सोडियम और क्लोरीन से मिलकर बनता है । सोडियम की बाहरी कक्षा में १ इलेक्ट्रॉन घूमता है वह अपना एक इलेक्ट्रॉन क्लोरीन को नियॉन की स्थिति में पहुँच जाता है । "क्लोरीन" की बाहरी कक्षा में ७ इलेक्ट्रॉन थे एक की आवश्यकता थी वह सोडियम ने पूरी करदी तो जैसे ही उसके इलेक्ट्रॉन ८ हो गए वह भी आर्गन नामक अक्रियाशील गैस की स्थिति में पहुँच जाता है । आपसी क्षमताओं का आदान-प्रदान कर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आत्म-विस्तार की यह प्रक्रिया ही आत्म-कल्याण का सच्चा राजमार्ग है ।

आत्मा बड़ी विराट् है यह ऊपर कहा गया है । उसे जानने के लिए परमाणु की तुलना सौर-मण्डल से करनी पड़ेगी । वस्तुतः परमाणु में सूर्य और उसका विस्तार ही प्रतिभासित है । सूर्य अक्रियाशील गैसों का पुंज है नाभिक के रूप में परमाणु में वही प्राण भरता है । इलेक्ट्रॉन्स और कुछ नहीं हर तत्व में नवग्रहों का प्रभाव है । पदार्थ की रासायनिक रचना के अनुरूप वे मनुष्य को भी प्रभावित करते रहते हैं पर यह तभी तक जब तक हमारी मानसिक और बौद्धिक चेतना आत्मा की खोज नहीं करती उसमें विलीन नहीं हो जाती । जीव रूपी इलेक्ट्रॉन जिस दिन नाभिक रूप आत्मा में विलीन हो जाता है उस दिन उसकी क्षमता सूर्य के समान प्रत्येक अणु में व्याप्त तेजस्वी और प्रखर हो जाती है नाभिक और सूर्य दोनों में ही (१) सर्वव्यापकता, (२) अक्रियाशीलता, (३) सर्वगतता, (४) न समाप्त होने वाला प्रकाश भरा है उपनिषद्कार का कथन है कि यह सूर्य ही आत्मा है ।

देवायं भगवान्भानुरन्तर्यामी सनातनः ।

—सूर्य पुराण १।११

अर्थात्—यह सूर्य ही अन्तर्यामी और सनातनदेव है ।

यन्मण्डलं सर्वगतस्य विष्णोरात्मा—
परंधाम विशुद्ध तत्वम् ॥

—गायत्री तन्त्र भास्कर

यह सूर्य ही सर्व वस्तुओं में व्यापक आत्मा रूप विशुद्ध तेज और तत्वरूप है ।

परमाणु में नाभिक की उपस्थिति आत्मा के अस्तित्व और गुणों का बोधक है जो इस विज्ञानमय स्वरूप को समझ कर आत्मा को प्राप्त करने का प्रयास करता है वह प्रकृति के प्रभाव से मुक्त होकर पूर्णता, शान्ति और सनातन सत्य की उपलब्धि करता है ।

हम अणु में ही उलझे न रहें 'विभु' बनें

प्राग (चेकोस्लोवाकिया) में एक ऐसी मशीन तैयार की गई है, जो धातु की पतली चादरों और जल्दी पिघलने वाली धातुओं को काटने या छेद करने के काम आती है । यह मशीन एक मिलीमीटर के सौवें भाग तक सही कटाई कर सकती है । इतनी सूक्ष्म और सही (एक्युरेट) किसी तेज अस्त्र, चाकू या आरी से नहीं की जाती । यह कार्य इलेक्ट्रॉनों की किरण फेंककर किया जाता है । इलेक्ट्रॉन की एक किरण की विद्युत् क्षमता ६०००० वोल्ट होती है । फिर यदि कई किरणों का समूह (बीम) प्रयुक्त किया जाय, तो उससे कितनी शक्ति प्रवाहित हो सकती है ?—इसका सहज ही अनुमान किया जा सकता है ।

इलेक्ट्रॉन परमाणु का ऋण विद्युत आवेश मात्र है । वह ·०००००००१ मिलीमीटर व्यास के अति सूक्ष्म परमाणु का एक अंश मात्र है लेकिन परमाणु का स्वयं भी कोई स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं । इलेक्ट्रॉनिक माइक्रोस्कोप से केवल इसका प्रभाव देखा जा सकता है । परमाणु का सबसे आश्चर्यजनक जगत तो उसकी चेतना, केन्द्रक या नाभिक (न्यूक्लियस) में विद्यमान है । इस सम्बन्ध में हुई खोजें बड़ी महत्त्वपूर्ण हैं और नाभिकीय विद्या (न्यूक्लियर साइन्स) के नाम से जानी जाती हैं । उसका प्रारम्भ १८९५ में प्रो. हेनरी बेक्वेरल ने किया और जेम्स चैडविक ने उसे विकसित किया । नाभिक में प्रसुप्त शक्ति को खोजा प्रो. एनारेको फर्मी ने । उन्होंने न्यूट्रॉन के अनेक रहस्यों का पता लगाकर सारे विज्ञान जगत में तहलका मचा कर रख दिया ।

नाभिकीय शक्ति का पता लगाकर प्रो. फर्मी को भी कहना पड़ा था—'हम छोटी-छोटी वस्तुओं में उलझे पड़े हैं । वस्तुतः संसार में महान् शक्तियाँ भी हैं, जिनसे सम्बन्ध बनाकर हम अपने आपको शक्तिशाली तथा और अधिक प्रसन्न बना सकते हैं ।'

यह शक्तियाँ, जिनका पता लगाया गया है, परमाणुओं की हैं और यह बताती हैं कि छोटी-से-छोटी वस्तु भी इतनी शक्तिशाली हो सकती है, तो यदि विश्व-विराट् के केन्द्रक (न्यूक्लियस) का पता लगाया जा सके, तब तो मनुष्य की क्षमता का वारापार ही न रहे ।

परमाणु के नाभिक का व्यास ·०००००००००००००१ मिलीमीटर होता है, उसके भीतर केले के पत्तों की तरह मूल रूप से तीन कण विद्यमान रहते हैं—(१) प्रोटॉन, (२) न्यूट्रॉन और नाभिक की कक्षा में चक्कर लगाने वाले, (३) इलेक्ट्रॉन । प्रोटॉन और न्यूट्रॉन की संख्या लगभग समान होती है, पर प्रोटॉन में धन विद्युत होती है जबकि न्यूट्रॉन में कोई आवेश नहीं होता । परमाणु का सारा भार इसी पर आश्रित है । यह तत्व विश्व में शक्ति और पदार्थ या प्रकृति और परमात्मा की तरह हैं । इलेक्ट्रॉन तो उस जीव की तरह है, जो अपने मूल बिन्दु से भटक जाने के कारण अशान्त घूमता रहता है । जब तक वह ईश्वरीय स्वरूप को प्राप्त नहीं कर लेता, कई कक्षाओं में अशान्त इधर-से-उधर घूमता रहता है पर उसे शान्त चित्त बैठकर अपनी क्षमता पर वैसे ही विचार करने का मन नहीं आता, जिस तरह मनुष्य अपने शरीर, अपनी इन्द्रियों के चक्कर में ऐसा पड़ा रहता है कि वह शरीर के अणु-अणु में भरी आत्म-चेतना की ओर ध्यान ही नहीं कर पाता ।

इलेक्ट्रॉन की मात्रा तो एक प्रोटॉन के लगभग १८४५वें हिस्से के ही बराबर होती है, तब उसमें इतनी शक्ति होती है कि प्राग में बनी मशीन चलाई जा सकती है, यदि उसके

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नाभिक की शक्ति का अनुमान करना पड़े, तो बुद्धि ही काम न दे ।

पानी में जिस तरह भँवर उठा करते हैं, उसी प्रकार नाभिक (न्यूक्लियस) एक प्रकार की 'ऊर्जा भँवर' ही होती है । नाभिक कोई स्थूल पदार्थ नहीं, वरन् एक प्रकार की चेतन सत्ता है, जिसमें शक्ति भी है और भार भी । यदि हम उसे धारण कर सकें, तो योगियों के समान पदार्थ पर नियन्त्रण प्राप्त कर सकते हैं ।

बनारस जिले में गुजी नामक स्थान के निकट जन्मे पवाहारी बाबा के बारे में प्रचलित है कि वे स्थूल अन्न ग्रहण नहीं करते थे । पव अर्थात् वायु, आहारी अर्थात् ग्रहण करने वाला पवाहारी अर्थात् जो केवल वायु का ही आहार ग्रहण करता था । वे काठियावाड़ के गिरनार पर्वत पर रहकर साधना करते थे । महीनों गुफा के अन्दर बन्द रहते थे । कई बार तो लोगों को सन्देह होता था कि वे मर गए । पर जब वे निकाले जाते थे, तो उनके शरीर-स्वास्थ्य में कोई अन्तर नहीं आता था । अमेरिकी डॉक्टरों के एक दल ने एक बार उनकी जाँच करके बताया था—'आहार द्वारा जो तत्व शरीर ग्रहण करता है वह सब तत्व उनके शरीर में हैं ।' जबकि वे खाना खाते ही नहीं थे । श्री पवाहारी बाबा अपनी विचार व भावनाओं के चेतना-प्रवाह द्वारा हवा में पाये जाने वाले अन्न और खनिज के सभी तत्व खींच लेते थे और इसी का परिणाम था कि वे बिना खाये जीवित बने रहते थे । मानसिक चेतना द्वारा पदार्थों के रूपान्तरण के ऐसे सैकड़ों उदाहरण और चमत्कार हिमालय में रहने वाले कई योगियों में आज भी देखे जा सकते हैं । यह सब अन्तःचेतना की शक्ति के ही विकास से ही सम्भव होता है । पदार्थ के नाभिक की शक्ति का साधारण अनुमान उसकी इलेक्ट्रॉनिक शक्ति से लगाते हैं, तो आत्म-चेतना की शक्ति का तो अनुमान ही नहीं किया जा सकता ।

ऊर्जा कोई स्थूल पदार्थ नहीं है । ताप, विद्युत् और प्रकाश के सम्मिलित रूप को ही ऊर्जा कहते हैं । प्रकृति का प्रत्येक कण इस तरह एक शक्ति है, जबकि आत्मा उससे भी सूक्ष्म और उस पर नियन्त्रण करने वाला है इसलिए उसे ताप, विद्युत् या प्रकाश के लिए बाह्य साधन भी अपेक्षित नहीं । यदि हम आत्मा को प्राप्त कर सकें, तो इन तीनों आवश्यकताओं की पूर्ति हम अपने भीतर से ही कर सकते हैं । घोर अन्धकार में भी आत्मदर्शी निर्भय चला जाता है, क्योंकि उसका प्रकाश उसे साथ देता है । जिस तरह हम दिन के प्रकाश में चलते हैं । योगी घने अन्धकार में भी वैसे ही चलता है । विद्युत एक ऐसी शक्ति है, जिससे शेर-चीते भी वश में किए जा सकते हैं । वह मनुष्य के पास हो, तो वह हथियारों से लैस सेना से भी क्यों डरेगा ? स्वामी रामतीर्थ हिमालय की तराइयों में घूमा करते थे, तब शेर-चीते भी उनके पास ऐसे आ जाते थे जैसे छोटे-छोटे बच्चे अपने पास खेला करते हैं । उनके शरीर में उतनी शक्ति होती है, जिससे प्रकृति के किसी भी परिवर्तन को आसानी से सहन किया जा सके । सूर्य के मध्य भाग में ५०००००० डिग्री ताप होता है, पर वह इस शक्ति का २०००००वाँ हिस्सा ही उपयोग में लेता है । हमारी सामान्य दीखने वाली शक्तियाँ भी संचित सूर्य की ताप-शक्ति के समान हैं पर उन्हें न जानने के कारण हम दीन-हीन स्थिति में पड़े रहते हैं ।

एक पौण्ड यूरेनियम-२३५ को तोड़ा जाता है, तो उससे उतनी ऊर्जा प्राप्त होती है, जितनी २०००० टन टी. एन. टी. के विस्फोट से । यह शक्ति इतनी अधिक होती है कि उससे १०० वाट पावर के दस हजार बल्ब पूरे वर्ष दिन-रात जलाये रखे जा सकते हैं । स्ट्रासमान ने सर्वप्रथम इसी शक्ति का उपयोग नागासाकी और हिरोशिमा को फूँकने में किया था । यह सब शक्ति तो आत्मिक चेतना या नाभिक के आश्रित कणों की शक्ति है । यदि नाभिक को तोड़ना किसी प्रकार सम्भव हो जाय, तो विश्व-प्रलय जैसी शक्ति उत्पन्न की जा सकती है—इसे आत्मदर्शी योगी जानते हैं ।

परमाणु का भार अचिन्त्य है और उसकी शक्ति अकूत । वैज्ञानिक बताते हैं कि यदि सारी पृथ्वी को पीटकर नाभिकीय घनत्व के बराबर लाया जाय, तो वह कुछ घन फुट में ही समा जायेगी । इसी से नाभिक की लघुता का अनुमान किया जा सकता है । किन्तु इस घनीभूत की गई पृथ्वी का एक अंगूर के बराबर टुकड़ा काटें, तो उसका भार साढ़े सात करोड़ टन होगा । ऐसी मजबूत चादरों के ऊपर यदि इस टुकड़े को रख दिया जाय, जिन्हें छेदना सम्भव न हो, तो यही टुकड़ा पृथ्वी को भगाकर अन्तरिक्ष में कहीं और लेकर भाग जायेगा । यदि उसे खुली मिट्टी पर रख दिया जाय, तो वह पृथ्वी को फाड़ता हुआ चला जायेगा और सम्भव है पृथ्वी को छेदकर वह स्वयं भी कहीं अन्तरिक्ष में जाकर भटक जाय । परमाणु के अन्दर इस नाभिक की शक्ति से वैज्ञानिक आश्चर्यचकित हैं ।

यह सूक्त बताते हैं कि भारतीय योगियों की सूक्ष्म दृष्टि भी वैज्ञानिकों की तरह ही रही है और उन्होंने चेतन सत्ता के नाभिक की जानकारी कर ली है । पदार्थ का परमाणु हमें सूक्ष्म-से-सूक्ष्म सत्ता की शक्ति की अनुभूति तो कराता है, पर वह चेतन सत्ता की जानकारी नहीं देता । भारतीय तत्ववेत्ताओं ने भी ऐसे ही चेतन परमाणु और उसके विभु नाभिक का पता लगाया । उसे चेतन सत्ता आत्मा या ईश्वरीय प्रकाश के रूप में माना है और उसकी विस्तृत खोज की है । उपलब्धियाँ दोनों की एक तरह की हैं । उपनिषद् उसे—'अणोरणीयान्महतो महीयानात्मा' (आत्मोपनिषद् १५।१) अणु से अणु और महान् से महान् बताती है । योग-वशिष्ठ में उसे इस प्रकार व्यक्त किया है—

अतीतः सर्वभावेभ्यो बालाग्रादप्यहं तनुः ।
इति तृतीयो मोक्षाय निश्चयो जायते सताम् ॥

—५।१७।१५

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

परोऽणु सकलातीत रूपोऽहं चेत्यहं कृतिः ।

—५/७३/१०

सर्वस्माद्वयतिरिक्तोऽहं बालाग्र शतकल्पितः ।

—४/३३/५१

मुक्ति दिलाने वाला यह आत्मा बाल को नोंक के सौवें भाग से भी सूक्ष्म परमाणु और दृश्य पदार्थों से विलग रहने वाला है । उसे जानने वाला सब कुछ जानता है ।

देवी भागवत में आत्म-सत्ता की प्रार्थना—या देवी सर्वभूतेषु शक्ति रूपेण तिष्ठति । 'हे भगवती ! सम्पूर्ण भूत प्राणियों में शक्ति रूप से आप ही निवास करती हैं'—की गई है । उस शक्ति और आत्म-चेतना के विज्ञान को भारतीय आचार्यों ने इतना अधिक विकसित किया कि भौतिक उपलब्धियों से जब उसकी तुलना करने लगते हैं, तो लगता है कि आज के वैज्ञानिकों ने जो कुछ पाया है, वह उस अथाह ज्ञान-सागर का जल-बिन्दु मात्र है । वस्तुतः यह सारा जगत विश्व ब्रह्माण्ड ही उस अदृश्य परमात्म चेतना का क्रीड़ा कल्लोल है । इसमें जहाँ-तहाँ ऐसे अगणित दृश्य बिखरे पड़े हैं जिन्हें देखकर यह सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि इस सृष्टि में कोई नियामक सत्ता अवश्य है, जिसे हमारे चर्मचक्षु देख नहीं पाते ।

समझ से परे अनसुलझी गुत्थियाँ

प्रकृति का दृश्य एवं परोक्ष लीला जगत ऐसी विलक्षणताओं से भरा पड़ा है, जिन्हें देखकर कारण समझ में न आने पर दाँतों तले उँगली दबानी पड़ती है । यही विश्वास सुदृढ़ होने लगता है कि विज्ञान की पहुँच से परे भी कोई विलक्षण सत्ता है जिसके क्रियाकलापों को अभी गहराई से जाना नहीं जा सका है । बरमूडा त्रिकोण से तो सब भली-भाँति परिचित हैं जो कि अमेरिका के पूर्वी समुद्री हिस्से में स्थित है, जहाँ अदृश्य, ब्रह्माण्डीय चुम्बकीय शक्ति सतत सक्रिय रह उस परिधि में आने वाले व्यक्ति, वस्तु, जलयान, वायुयान को खींचकर न जाने किस लोक में ले जाती है, जहाँ प्रवेश कर कोई लौटकर नहीं आया । इसका अभी तक समाधान खोजा नहीं जा सका कि यह क्यों होता है कि इसी बीच भारत के पूर्वोत्तर क्षेत्र से भी ऐसी ही रहस्यमयी घटनाएँ प्रकाश में आने लगी हैं ।

जटिंगा (आसाम) जो पहाड़ों के बीच घाटियों में स्थित है, पिछले दिनों प्रकाश के समक्ष आत्म हत्या करने वाले पक्षियों की प्रति वर्ष विशिष्ट अवधि में होने वाली घटनाओं के कारण विज्ञान जगत में बहुचर्चित रही है । अनगिनत पक्षी रात्रि के अंधेरे में आते हैं एवं जलते लैम्पों, लालटेनों, बल्ब आदि के सामने गिरकर दम तोड़ देते हैं । यह घटना हर वर्ष घटती है, पर कोई समाधान न पाकर वैज्ञानिक मात्र तीर-तुक्का, अटकलें मात्र लगाकर अपना कौतूहल शान्त करते रहे हैं । अब पश्चिम बंगाल, आसाम, मेघालय, अरुणाचल वाले भारत के पूर्वांचल के इसी क्षेत्र से सम्बन्धित कुछ और अद्भुत घटनाएँ प्रकाश में आयी हैं । वे भी उतनी ही विलक्षण व तर्क बुद्धि की सीमा से परे हैं, जितनी कि बरमूडा त्रिकोण व जटिंगा क्षेत्र की घटनाएँ रही हैं ।

अरुणाचल क्षेत्र में पिछले दिनों एक झील जो स्थानीय लोगों के लिए रहस्यों से भरी है, जन सामान्य की जानकारी में आयी है । इसके बारे में जनश्रुति है व देखा हुआ तथ्य है कि वहाँ पहुँचने वालों में से कोई वापस लौटकर नहीं आता, मनुष्य अथवा पशु-पक्षी ही क्यों न हों ?

यह आश्चर्यजनक और जीवों को अपना ग्रास बनाने वाली झील अरुणाचल प्रान्त को चीन के युन्नान प्रदेश से जोड़ने वाली स्टिलबेस रोड नामक प्रसिद्ध सड़क से कुछ फासले पर स्थित है जो पनासू के पास बर्मा की सीमा को भी स्पर्श करती है । यहाँ से देखने पर यह झील जो विशाल दलदल है, घास के बड़े मैदान के रूप में दृष्टिगोचर होती है । इस सुनसान क्षेत्र में एक भी पशु-पक्षी नजर नहीं आता इस झील का पता तब चला जब द्वितीय विश्वयुद्ध के समय भारत, ब्रिटेन तथा जापान के हजारों सैनिक अपने अस्त्र शस्त्रों सहित इस क्षेत्र में पहुँच कर विलुप्त हो गए और खोज बीन करने पर उनके पद चिन्ह तक ढूँढ़े न मिले । हुआ यह था कि सड़क निर्माण कार्य पूर्ण होते ही जापानियों ने असम पर आधिपत्य करने के उद्देश्य से बर्मा की सीमा पर भारी सैन्य दल जमा कर लिया था । इधर ब्रिटिश सरकार ने इस आक्रमण को असफल बना देने की ठान रखी थी और अवसर पाते ही स्टिलबेस रोड से अंग्रेज और भारतीयों की मिली-जुली कई सैन्य बटालियनों को चीन और बर्मा की ओर भेज दिया । उधर से हार-जीत का जब कोई सन्देश न मिला तो और अधिक संख्या में सैन्य दल रवाना किया गया परन्तु तब आश्चर्य का ठिकाना न रहा जब उनमें से एक भी जीवित व्यक्ति न तो गन्तव्य स्थल पर पहुँचा और न ही वापस लौटा । अधिकारियों ने बहुत ढूँढ़ खोज की तो पाया गया कि सभी सैनिक टुकड़ियाँ पनासू तक अवश्य पहुँची थीं पर इसके आगे उनका क्या हुआ ? वे कहाँ अदृश्य हो गए ? इसका पता नहीं चल सका ।

यही हश्र जापानी सैनिकों का भी हुआ । असम को जीतने का सपना लिए भारी तादाद में उनका सैन्य दल भारत की ओर बढ़ रहा था । रास्ते में उनका प्रतिरोध करने वाला भी कोई नहीं था अतः वे उसी सड़क से आगे बढ़ते गए । परन्तु यह क्या ? जैसे ही वे उस दलदली झील के समीप पहुँचे सबके सब गायब हो गए । सभी को झील निगल गयी । जापान की कई सैन्य टुकड़ियाँ आयीं और आगे बढ़ने के प्रयास में झील में समाती चली गयीं ।

आरम्भ में उपर्युक्त दोनों ही पक्षों को यह ज्ञात नहीं हो सका था कि उनके सैनिक कहाँ गायब हो जाते हैं ? जब खोजी दलों ने गहन सर्वेक्षण किया तो मात्र इतना ही जाना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जा सका कि पनासू सीमा तक दोनों ओर की सेनाएँ पहुँची थीं पर आगे रहस्यमयी दलदल झील में न जाने कहाँ खो गयीं ? हवाई सर्वेक्षणकर्त्ताओं ने उस क्षेत्र के फोटो चित्र लेने के लिए अपने कैमरे संभाले और अनेकों बार उसे क्लिक भी किया । रील धुलकर जब आयी तो पाया गया कि उस क्षेत्र के किसी भी कोने का कोई अंश उभरकर नहीं आया । चित्र खींचने के सभी प्रयास असफल रहे । कुछ अन्वेषकों का कहना है कि वह दलदल नहीं अपितु घास की सघन सतह से ढंका एक विशाल गड्ढा है, तो कुछ उस क्षेत्र को अंतरिक्षवासियों का एक सुरक्षित अड्डा मानते हैं जिसकी सुरक्षा व्यवस्था कुछ इस प्रकार से की जाती है कि वहाँ मनुष्य तो क्या परिंदे भी पास नहीं फटक पाते और यदि उस वर्जित क्षेत्र में किसी प्रकार प्रविष्ट कर ही जायें तो जीवित नहीं बचते । गायब हो जाते हैं । दलदल होने पर यह दलील तो समझ में आती है कि उसमें जाने अनजाने लोग पैर रख विलुप्त हो जाते हैं पर पक्षियों का न होना, उस क्षेत्र का निर्जन होना, समझ में नहीं आता । कारण जो भी हो, अपने को बुद्धिमान कहने और प्रकृति को वश में कर लेने का दम भरने वाला मनुष्य अभी तक उस प्राकृतिक झील का रहस्य समझ सकने में समर्थ नहीं हो सका है । कोई भी वैज्ञानिक सर्वेक्षणकर्त्ता या अभियान दल अभी भी उस क्षेत्र में प्रवेश करने का साहस नहीं जुटा पाता ।

इसी तरह की कुछ रहस्यमयी झीलें विश्व के अन्यान्य भागों में भी पायी गई हैं । वेस्टइंडीज के त्रिनिडाड द्वीप में एक ऐसी झील है जिसमें निर्मल जल की जगह तारकोल भरा हुआ है । यह पदार्थ सर्वत्र समान रूप से एक जैसा स्वरूप वाला न होकर कहीं ठोस रूप में है तो कहीं तरल रूप में । कहीं-कहीं इसमें बड़े बुलबुले उठते रहते हैं । इसमें भरे पदार्थ के आधार पर ही झील का नाम "तारकोल झील" पड़ गया है । अमेरिका के रेगिस्तानी क्षेत्र में भी एक ऐसी ही प्राकृतिक झील है जिसे साबुन की झील कहते हैं । इसमें वस्त्र धोने पर उनमें उतनी चमक नहीं आती जितना कि सामान्य साबुन या वाशिंग सोड़े से धोने पर । फिर भी उसमें उठने वाला झाग मानव निर्मित सभी डिटरजेंट साबुनों की अपेक्षा कहीं ज्यादा बना रहता है । हवाई द्वीप में एक आग की झील भी है जिससे सतत आग की लपटें और धुआँ बाहर निकलता रहता है । पर इन सबसे अद्‌भुत प्राकृतिक करिश्मा है—आयरलैण्ड की अनोखी—"पत्थर की झील" । वैज्ञानिकों का कहना है कि उसमें जो भी वस्तु फेंकी या डाली जाती है वह पत्थर बन जाती है । विश्लेषण करने पर मात्र इतना ही ज्ञात हो सका है कि उक्त झील में किसी भी पदार्थ के डालने पर उसके चारों ओर मोटी पत्थर की परत जम जाती हैं साथ ही अन्दर से भी वह वस्तु बहुत कुछ परिवर्तित हो जाती है, परन्तु ऐसा क्यों होता है ? वैज्ञानिक इस रहस्य को अभी तक नहीं समझ पाये हैं । हिमालय के उत्तराखण्ड क्षेत्र में भी काफी ऊँचाई पर ऐसी अविज्ञात झीलें हैं जो रहस्यों के घेरे में हैं ।

बादलों के टकराने—बिजली चमकने अथवा भूकम्प आने से पूर्व तीव्र गर्जना की ध्वनि सुनाई देती है । इनसे उत्पन्न ध्वनि तरंगों को "शाकवेव्स" के नाम से जाना जाता है, जिनके प्रघात से प्रतिवर्ष सहस्रों लोग अपनी जान गँवा बैठते हैं । तोपों की गड़गड़ाहट एवं जैट विमानों का शोर भी मनुष्य की जानी पहचानी ध्वनियाँ हैं किन्तु कभी-कभी प्रकृति के अन्तराल से अथवा निर्मल शून्य आकाश में उत्पन्न होने वाली विचित्र ध्वनियाँ या गड़गड़ाहट सुनाई देती हैं जिनका हम सही अर्थ नहीं समझ पाते । पश्चिम बंगाल के सुन्दरवन से सटे बारीसाल क्षेत्र में सदियों से धाँय-धाँय के विस्फोट वहाँ के निवासी सुनते आ रहे हैं । परन्तु इसकी विस्तृत जानकारी लोगों को तब मिली जब सन् १८९६ में अंग्रेज वैज्ञानिक जी. बी. स्काट ने उस क्षेत्र का दौरा किया और उस प्राकृतिक रहस्य का विवरण "नेचर" नामक प्रसिद्ध आंग्ल विज्ञान पत्रिका में प्रकाशित किया ।

जी. बी. स्काट के अनुसार उस वक्त उस क्षेत्र में न तो कोई सैनिक छावनी थी, न दूर कहीं कोई सैनिक अभ्यास हो रहा था और न ही लोगों के पास बन्दूक या तोपें थीं, फिर भी तोप दागने की आवाज बराबर स्पष्ट सुनाई दे रही थी । उस समय रात को या दिन में कोई बादल भी नहीं थे । आसमान साफ था, परन्तु यह स्पष्ट नहीं हो सका कि धाँय-धाँय की इस गर्जना भरी आवाज का मुख्य स्रोत क्या है ? यह ध्वनियाँ किसी स्थान विशेष से उत्पन्न न होकर जहाँ-तहाँ कहीं से भी फूट पड़ती हैं । इस सम्बन्ध में ख्यातिलब्ध वैज्ञानिक ए. जी. इन्गलेस का कहना है कि इस प्रकार के रहस्यपूर्ण "एअरक्वेक" की दिशाएँ बदलती रहती हैं, जिस तरह इन्द्र-धनुष का मूल दिखता कहीं है और होता कहीं है । स्थान परिवर्तन के साथ ही दर्शक को दृश्य परिवर्तन का आभास जिस तरह उनमें होता है, उसी तरह आवाजें भी दिशाओं में परिवर्तन करती अनुभव होती हैं । वानडेन ब्रुक जैसे वैज्ञानिकों का मत है कि वायुमण्डल में एक विशेष प्रकार के विद्युत प्रसार के एकत्र होने से इस तरह के वायु विस्फोट हो सकते हैं ।

अमेरिका के अटलांटिक के उत्तर पूर्व में भी इस तरह की —"बुमींग" धाँय-धाँय करने वाली आवाजें सुनी गई हैं । सर्वप्रथम सन् १९७७ में जब ऐसे विस्फोट सुने गए तो एकाएक लोगों को विश्वास नहीं हुआ कि शून्य आकाश भी बिना बादलों के कभी गरज सकता है । पर्यवेक्षणकर्त्ताओं ने बताया कि उस समय उक्त क्षेत्र में न तोपें चली थीं और न ही कोंकर्ड जैट विमान ही उड़े थे । कुछ वैज्ञानिकों ने इसे विशिष्ट प्रकार की हवा के घनत्व और तापमान के कारण उत्पन्न होने वाली सामान्य गड़गड़ाहट बताया और उसकी तुलना मृगमरीचिका से करते हुए इसे पवन मरीचिका नाम दिया है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ये घटनाक्रम सतत घटित होते रहते हैं, पर कोई विज्ञान सम्मत कारण न मिलने पर अविज्ञात के गर्भ में छिपे पड़े रहते हैं । खोजी अन्वेषक सतत प्रयासरत हैं कि इन घटनाओं के मूल कारण को जाना जाय । यह प्रयास सराहनीय हैं व ये रहस्य मानवी जिजीविषा को एक चुनौती हैं । फिर भी एक तथ्य तो स्पष्ट है ही कि विराट् के एक घटक प्रकृति को अभी पूरी तरह जान पाना सम्भव नहीं हो पाया है । यहीं हमें उस सत्ता के दर्शन होते हैं, जिसे अचिन्त्य, अगोचर, अगम्य कहा गया है । परब्रह्म की सत्ता को इस रूप में भी मानते हुए आस्तिकता की अपनी मान्यताओं को परिपुष्ट परिपक्व बनाया जा सकता है । यह अंधविश्वास नहीं, वरन् जो कुछ दृश्यमान सत्य है, उसकी अनुभूति है कि यह सब उस परमसत्ता की विनिर्मित रचनाएँ हैं, जिसे हम आँखों से नहीं देख पाते । इसी भावना को आधार बनाकर रहस्यों की बारीकी में भी जा पाना सम्भव है ।

विचित्र विलक्षण यह सृष्टि

सब कुछ मानते हुए भी कि यहाँ सब कुछ सुव्यवस्थित-सुनियोजित है, इस दृश्य जगत में कई घटनाक्रम ऐसे देखने को मिलते हैं, जिनका न कोई वैज्ञानिक समाधान मिल पाता है, न जिज्ञासा की तृप्ति कर सकने वाला ठोस आधार ही दीख पड़ता है । वैचित्र्य-विविधता इन घटनाक्रमों के रूप में ऐसी प्रतीत होती है मानो किसी दार्शनिक व्याख्यान के बीच में किसी ने मनोरंजन करने के लिए, वातावरण को हल्का बनाने के लिए कोई मजाक कर दिया हो ।

अविज्ञात के रूप में घोषित ये विचित्रताएँ किसी शाश्वत सत्य की ओर ले जाने वाली गुफा का द्वार खोलती हैं या सृष्टा की बहु विध व्यवस्था की द्योतक हैं, कुछ समझ में नहीं आता । पर उनका अस्तित्व यह तो प्रमाणित करता है कि ऐसा भी कुछ है जो विकसित विज्ञान अभी तक जान नहीं पाया है । आइये ! कुछ ऐसी ही पिण्ड-ब्रह्माण्ड से जुड़ी विलक्षणताओं की चर्चा कर उस सृजेता को नमन करें, जिसने यह बहुरंगी व्यवस्था रची, हमें ऊहापोह में डाला ताकि जिज्ञासु वृत्ति जिन्दा रहे ।

चीन के हुन्नान प्रान्त के यांगचुन नामक एक बच्चे ने तब शोहरत हासिल की जब यह पता चला कि उसे दिन में कुछ नहीं दिखाई देता, किन्तु रात्रि होते ही वह सब काम ऐसे कर लेता है जैसे उसे सब कुछ दिखाई दे रहा हो । चिकित्सकों ने सभी तरह से खोज-पड़ताल की पर वे किसी निष्कर्ष पर नहीं पहुँच सके । एक विचित्र बात यह है कि पूर्ण अन्धकार की स्थिति में तो उल्लू को भी बिल्कुल दिखाई नहीं देता, उसे भी थोड़ा प्रकाश चाहिए । पर यांगचुन तो इसमें भी अपवाद है । इसकी उपमा मात्र इंफ्रारेड सेंसर्स से की जा सकती है जिनसे रात्रि में सैनिकों को दिखाई दे इसलिए आधुनिकतम टैंकों व स्टेनगनों को युक्त किया जाता है ।

फेफड़ों की "आकुपेशनल" बीमारियों में (साँस द्वारा औद्योगिक प्रदूषण युक्त कण फेफड़ों में जमा होना) फारमर्स लंग्स, ब्राउन लंग, मशरूम लंग इत्यादि तो प्रसिद्ध हैं ही, सिलिकोसिस (धूल, रेत के कणों के कारण), ब्लैक लंग डीसिज (कोलडस्ट के कारण) एवं बेरिलियोसिस (लैम्प इण्डस्ट्री में प्रयुक्त बेरीलियम के कारण) भी ऐसे रोग हैं, जिनमें फेफड़ों की कार्यक्षमता घटती चली जाती है व एक्स-रे में सफेद धब्बों या धूलिकणों के गुच्छकों के अतिरिक्त कुछ नहीं दिखाई देता । मंदसौर जिले, जहाँ चॉक, पेंसिल बनाने का काम होता है, इनमें धूलकण जमकर पन्द्रह-बीस वर्षों में पूरे फेफड़ों में जम जाते हैं व एक्स-रे में हृदय के दोनों ओर स्लेट पट्टी दिखाई देती है । तीस वर्ष से अधिक इनमें से बिरले ही जीवित रह पाते हैं ।

ऐसी व्याधि जिसमें किसी व्यक्ति को साँस लेने में कठिनाई होती है, आयरन लंग्स (कृत्रिम फेफड़ों या रेस्पायरेटर्स) पर रखा जाता है । इसकी भी एक सीमित अवधि है, किन्तु इसमें भी एक महिला लॉरिल निस्वत ने रिकॉर्ड बनाया है । "ला क्रिसेण्टा" कैलिफोर्निया की यह महिला जिसका जन्म १९१२ में हुआ था, ३७ वर्ष ५८ दिन बेहोशी अर्धमृतक-सी स्थिति में पड़ी रहीं । अंततः २२ अगस्त १९८५ को उनकी मृत्यु हो गयी । ऐसे ही कई मामलों ने इच्छा मृत्यु (यूथेनेसिया) का मुद्दा जोरों से उछाला है, क्योंकि सम्भावना है कि बूढ़ों की व असाध्य रोगियों की संख्या अगले दो दशकों में और बढ़ेगी ।

गर्भिणी की मृत्यु के बाद यह माना जाता है कि यथाशीघ्र बच्चे को निकाला जा सके तो वह जीवित रह भी सकेगा । राओनोके वर्जीनिया की एक महिला जिसे मिर्गी का दौरा पड़ने के बाद मृत घोषित कर दिया गया था को मात्र बच्चे की खातिर कृत्रिम श्वॉस दी जाती रही । जीवन के कोई चिन्ह माँ में नहीं थे, पर बच्चे में थे एवं एक स्वस्थ कन्या ने माँ की मृत्यु (क्लीनिकल डेथ) के ८४ दिन बाद ५ जुलाई, १९८३ को जन्म लिया, उस कब्रगाह से बाहर आयी एवं फिर माँ को दफना दिया गया । पोस्टमार्टम बर्थ का यह अपने आप में एक अद्‌भुत, विलक्षण एवं एकमात्र उदाहरण है ।

एक ही परिवार में हर बच्चा एक ही तिथि को हो, वह भी पाँच एक शृंखला में, ऐसा अपवाद भरा उदाहरण विश्व में मात्र एक है । इसके होने के अवसर १८ अरब में एक के ही रहते हैं अर्थात् विश्व की आज की जनसंख्या के साढ़े तीन गुना में एक बार । क्लीण्टवुड वर्जीनिया (यू. एस. ए.) के रॉल्फ एवं कैरोलीन कमिन्स ने १९५२ में कैथेरीन, १९५३ में कैरोल को, चार्ल्स को १९५६ में, क्लाडिया को १९६१ में, सेसिलिया को १९६६ में जन्म दिया । ये सभी सन्तानें इन वर्षों में एक ही दिन २० फरवरी को जन्मीं । ऐसा संयोग और कहीं देखने को नहीं मिलता ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अब तक की जुड़वाँ सन्तानों के दीर्घायुष्य होने का विश्व रिकॉर्ड १०३वाँ जन्म दिन मनाकर उत्तरी कैरोलिना अमेरिका की दो बहिनों ने तोड़ा है । इन दोनों की १९० के लगभग सन्तानें हैं ।

विचित्रताओं के इन क्रम में अभी और भी कई प्रसंग हैं । क्या कोई विश्वास करेगा कि १० औंस यानी कुल मिलाकर २८३ ग्राम (पावभर से कुछ ज्यादा) वजन का बच्चा परिपक्वावस्था से ६ सप्ताह पूर्व पैदा होकर भी जिन्दा रहे और पैंतालीस वर्ष तक की आयु सुखपूर्वक जी सके । हाँ ! ऐसा हुआ है । श्रीमती मारियन टैगार्ट जो साऊथ शील्ड्स टाउन एण्ड वियर (यू.के.) की रहने वाली थीं ने इस पाव भर के माँस के लोथड़े को ५ जून, १९३८ को जन्म दिया, पर वह जीवित था । लम्बाई इसकी १२ इंच थी । उस समय कोई डॉक्टर भी नजदीक नहीं था, न ही दाई, परन्तु एक डॉक्टर ए. शियरर ने उसे एक घण्टे बाद पेन की स्याही भरने वाले ड्रापर से ब्राण्डी, ग्लूकोज व पानी का सम्मिश्रण पिलाना चालू किया व तीस दिन तक इसी पर जिन्दा रखा । पहली वर्षगांठ पर उसका वजन था सवा छह किलोग्राम, कोई खास बुरा नहीं । इक्कीसवीं वर्षगांठ पर (५/६/५९) उसका वजन ४८ किलोग्राम रिकॉर्ड किया गया । ३१ मई, १९८३ को उसकी अचानक मृत्यु हो गई, किन्तु इतिहास में यही एक ऐसा मेडीकल केस है जिसमें पर्याप्त चिकित्सा सुविधा न मिलने पर भी पावभर का प्रिमेच्योर बच्चा जीवित रहा व एक निर्धारित आयुष्य जीकर गया । जिसका साईं रखवाला हो, उसे मृत्यु आ ही कैसे सकती है ?

कहते हैं कि शुकदेव जी पूरे बारह वर्ष तक अपनी माँ के गर्भ में जीवित रहे थे एवं वहीं से अर्जित ज्ञान लेकर जन्मे थे । यह तो पौराणिक मिथक है, किन्तु चिकित्सा विज्ञान का इतिहास बताता है कि सबसे लम्बा समय जिसमें महिला गर्भवती बनी रही व स्वस्थ बच्चे को जन्म देने में सफल हो सकी, ३६ माह का है । इसका रिकॉर्ड १७५१ की "हिस्टॉयर डे ल अकादमी" (फ्रांस) पत्रिका में मिलता है । इनको भी मई १९६१ में बर्मा की एक महिला ने मात दे दी जब ५४ वर्ष की उम्र में सीजेरियन द्वारा (पेट मार्ग से) उन्होंने ३ पौंड के कैलसीफाइड मृत बच्चे को २५ वर्ष तक अपने गर्भाशय में रखने के बाद जन्म दिया । वस्तुतः उन्होंने तो मादा गैंडे को भी पीछे छोड़ दिया जिसकी गर्भ वहन करने की अवधि ५६० दिन होती है ।

विलक्षणताओं की कोई सीमा नहीं । जितनी इस धरती पर जीवधारियों की संख्या है, उतने ही प्रकार की भिन्नताएँ यहाँ विद्यमान हैं । हमारी जानकारी तो दृश्य तक ही सीमित है । एक उदाहरण लें—धरती के एक वर्गमील टुकड़े में जितने कीड़े-मकोड़े, क्षुद्र जीव होते हैं, उतने ही पूरी धरती पर मनुष्य रहते हैं । इससे ही अनुमान लगाया जा सकता है कि हमारा ज्ञान कितना सीमाबद्ध है । प्रत्यक्ष को छोड़ परोक्ष में ढूँढ़ खोज की जाय तो हमें बहुत कुछ ऐसा हस्तगत हो सकता है जिसे पूर्व की अर्जित ज्ञान सम्पदा से अधिक महत्त्वपूर्ण कहा जा सके । विविधता में ही वस्तुतः आनन्द है, उस पर भी ऐसा जो विचित्र हो । मानवी काया से लेकर विराट् ब्रह्माण्ड तक तथा क्षुद्र अदृश्य जीवाणुओं से लेकर वृक्ष वनस्पतियों तक ऐसा बहुत कुछ है, जिसे जानना अभी शेष है ।

विस्तार की धुन में सिमट रही दुनिया

सन् १९३९ में न्यूयार्क (अमेरिका) में विश्व मेला आयोजित किया गया । उसमें देश-देशान्तर के दर्शनीय सामान प्रदर्शित और विक्रय किए गए । मेले का सबसे बड़ा आकर्षण थी—एक पिटारी, जो लम्बाई में तो कुल साढ़े सात फीट, भार में कुल ८०० पौंड ही थी । पर उसमें ज्ञान-विज्ञान की इतनी सामग्री रख दी गई थी, जितने का यदि केवल एक लम्बे पेज को पुस्तक का आकार दिया जाता तो यह पाँच हजार मीटर से कम नहीं होती । इतनी लम्बी दूरी में तो फायलिब्रा लाइब्रेरी की सारी पुस्तकें आ सकती हैं, जिसके बारे में कहा जाता है कि संसार की ऐसी कोई पुस्तक नहीं, जो उसमें न हो ।

यह पिटारी पृथ्वी में इस दृष्टि से गाड़ी गई थी कि बीच के समय में कभी कोई ऐसा भूकम्प, युद्ध या प्रलय हो जाय, जिसमें वर्तमान सभ्यता ही नष्ट हो जाय, तो आज से कई हजार वर्ष बाद भी यदि उस पिटारी को बाहर निकाल लें तो इस युग की सामान्यतः सभी प्रमुख बातों का पता चल जाय । उस समय को सभ्यता का आकार-प्रकार निश्चित करने वाले सभी साज सामान इस नन्हीं सी पिटारी में बन्द कर दिए गए ।

'टाइम कैप्सूल' नामक इस डिब्बे में क्या रखा जाय ? उसके लिए संसार भर के विद्वान-वैज्ञानिकों, पुरातत्ववेत्ताओं, लेखकों, सम्पादकों, लाइब्रेरियनों, इतिहासज्ञों की बैठक बुलाई गई थी । उन्होंने जो सामग्री चयन की, वह सब इस ढंग से इस युग-मञ्जूषा में रखी गई कि इस नन्हीं-सी पिटारी में एक अरब शब्द, १००० चित्र, अंग्रेजी में परिचय सहित 'इन्साइक्लोपीडिया ब्रिटानिका' की सभी जिल्दें, एक पूरा वृत्तचित्र जिसमें अमेरिका के राष्ट्रपति रूजवेल्ट का भाषण भी, 'गौन विद दि विण्ड' नामक उपन्यास के साथ सैकड़ों अन्य पुस्तकें भी थीं । इसके अतिरिक्त दाढ़ी बनाने की सामग्री, सौंदर्य-प्रसाधन, साबुन, मन्जन आदि स्थूल वस्तुएँ भी रखी गई थीं ।

इसके बाद १६ अक्टूबर, १९६५ को एक दूसरा 'टाइम कैप्सूल' भी भूमि में दबाया गया । इसमें पहले से भी अधिक जानकारी तथा वस्तुएँ संग्रहीत की गयीं । उसका वजन तो अवश्य बढ़ाकर ६०० पौंड कर दिया गया था, पर लम्बाई

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पहले की अपेक्षा कुछ कम ही थी । 'क्रोमार्क स्टेनलैस स्टील' द्वारा निर्मित इस पिटारी को रासायनिक पदार्थों द्वारा इस तरह तैयार किया गया है कि ५ हजार वर्ष तक भी पृथ्वी में गढ़ा रहे तो भी उसमें जंग न लगे, कोई भीतरी खराबी पैदा न हो । इन कैप्सूलों की जानकारी देने के लिए संसार भर के तीन हजार पुस्तकालयों में उस तरह के शिलालेख तैयार किए गए हैं, जिस तरह आज लाखों वर्ष पूर्व के शिलालेख मिल जाते हैं, तो उनसे उस समय की परिस्थितियों की जानकारी मिलती है और संस्कृति के विकास में सहयोग । उसी प्रकार टाइम कैप्सूल में बन्द यह अथाह जानकारियाँ उस समय के युग की तमाम सारी जानकारियाँ सीमित स्थान में ही दे डालेंगी ।

पूरे एक युग को अति सूक्ष्म करके ५००० मीटर लम्बे ज्ञान के भाण्डागार को कुल साढ़े सात फीट के बक्से में बन्द कर दिया जाना सचमुच आश्चर्यजनक है, पर यह आश्चर्य केवल भौतिक विज्ञान के विद्यार्थियों को ही हो सकता है, किन्तु 'अणोरणीयान महतोमहीयान' महान् से महान् आत्मा अणु से भी अणुरूप है । तथा—

"बालाग्र शतभागस्य शतधा कल्पितस्य च,
भागो जीवः विज्ञेयः स चान्त्याय कल्पते ॥"

—श्वेताश्वेतरोपनिषद् ५।९

अर्थात् बाल के अग्रभाग के सौवें अंश के भी सौवें अंश के परिमाण वाला भाग ही प्राणी का स्वरूप जानना चाहिए । वह सूक्ष्मातिसूक्ष्म परिमाण वाला आत्मा असीम गुण वाला हो गया है ।' के जानने वाले अध्यात्म-विद्या विशारद हम भारतीयों के लिए इसमें आश्चर्य जैसा कुछ नहीं है । हमारी मान्यता तो विज्ञान की इन उपलब्धियों से भी सूक्ष्म और यह है कि अणुरूप आत्मा में एक सौर-मण्डल में विद्यमान जो कुछ भी है, सब कुछ है । संसार भर में जो कुछ भी स्थूल सूक्ष्म है वह परमात्मा नाम के किसी अति सूक्ष्मतम 'क्रिस्टल' में विद्यमान है ।

एकाक्षरोपनिषद् में इसी तथ्य की ओर संकेत करते हुए लिखा है—

स एष देवोऽम्बरयान चक्रे अन्येऽभ्य तिष्ठेत् तमो निरुन्ध्यः ।

—पूर्वार्द्ध श्लोक ८

अर्थात् उस ब्रह्म के गर्भ में सारा ही ब्रह्माण्ड समाया हुआ है जबकि वह स्वयं 'अंगुष्ठ मात्रो रवितुल्य रूपः संकल्प अहंकार समन्वितो यः' अर्थात् अंगुष्ठ मात्र स्वरूप में भी वह सूर्य के समान है । उसी में उसका संकल्प और अहंकार (अर्थात् सारा ज्ञान-विज्ञान) भरा पड़ा है ।

अणु से अणु में महत् से महत् की कल्पना बड़ी विचित्र है, किन्तु इस सत्यता में कोई सन्देह नहीं है । यह पिटारी उसका बहुत ही मोटा उदाहरण है । होता यह है कि कैसी भी मोटी और लम्बे पन्नों वाली पुस्तक हो, उसकी माइक्रोफिल्म प्रतियाँ उतार ली जाती हैं । जिस प्रकार शीशे के ताल (लेन्स) की मदद से छोटी-से-छोटी वस्तु को बड़ा-से-बड़ा बनाकर दिखाया जा सकता है । (पालिमोर आदि वेधशालाओं में ऐसे शक्तिशाली दूरबीन यन्त्र हैं, जो करोड़ों मील दूर के ग्रह-नक्षत्रों को भी बड़ा करके दिखा देते हैं) उसी प्रकार बड़ी-से-बड़ी वस्तुओं को छोटा-से-छोटा किया जा सकता है । माइक्रोफिल्म में अधिकतम विस्तार वाली पुस्तकों को इतने नन्हें-नन्हें अक्षरों में अंकित कर दिया जाता है कि १००० पृष्ठ की पुस्तक भी सिगरेट के पैकेट जितनी मोटाई में आ जाये । अलादीन के चिराग में बन्द भीमकाय असुर की कल्पना को कभी मिथ्या माना जाता था, पर आज का अणु विज्ञान उससे भी अधिक सूक्ष्म में विराट् की कल्पना तक उतर आया है । मनुष्य का शरीर जिन छोटे-छोटे कोशों (सेल्स अर्थात् मनुष्य शरीर जिस प्रोटोप्लाज्म नामक जीवित पदार्थ से बना है, उसका सबसे छोटा टुकड़ा) से बना है । उसकी लघुता की कल्पना नहीं की जा सकती । उसके भीतर उससे भी सूक्ष्म कण विद्यमान हैं । उदाहरण के लिए परमाणु का व्यास ·०००००० १ मि. मी. है, तो उसके केन्द्रक का व्यास ·००००००००००१ मि. मी. होगा । अब इस केन्द्रक में भी एक विशेष प्रकार की रासायनिक बनावट होती है, जिसे क्रोमोसोम या गुणसूत्र कहते हैं । रासायनिक भाषा में इसे ही डी. एन. ए. कहते हैं । उसकी आकृति मरोड़ी हुई सीढ़ी के समान होती है । वैज्ञानिकों का अनुमान है कि इस 'डी. एन. ए.' में सारे संसार भर का दृश्य, श्रव्य और ज्ञान भूरा हुआ है । एक केन्द्रक की डी. एन. ए. में जो भाषा अंकित होती है उसमें १००००००००० अक्षर होते हैं, जबकि सम्पूर्ण शरीर में ऐसे ६०० खरब कोशिकाएँ होती हैं । यदि ६०० खरब कोशों में अक्षर खोदे जायें तो अकेले शरीर में ही ६००००००००००००००×१००००००००० अर्थात् ६०००००००००००००००००००० अक्षर आ जायेंगे । फ्लशिंग मेडो (न्यूयार्क का वह स्थान जहाँ दोनों टाइम कैप्सूल जमीन में गाड़े गए हैं) में गाड़ी इस पिटारी में जबकि कुल १०००००० अक्षर ही थे । तब यह मानना चाहिए कि मनुष्य-शरीर में तो ऐसी ६००००००००००००० पिटारियों का ज्ञान भरा होना चाहिए ।

कोश (सेल) जिस प्रकार ज्ञान, गुण और संस्कारों से मुक्त नहीं उसी प्रकार वह पदार्थ से रहित भी नहीं रह सकता जबकि पदार्थ कोई स्वतन्त्र वस्तु नहीं, ब्रह्माण्ड का गुण मात्र है । इसलिए यह समझने में कोई दिक्कत नहीं कि शरीर रूपी पिटारी में ज्ञान-विज्ञान के अनादि स्रोत ही नहीं, पदार्थ की स्थूल संस्कृतियाँ भी निश्चित रूप से बन्द हैं । जमीन में गाड़े गए टाइम कैप्सूल तो कभी खराब भी हो सकते हैं, मनुष्य शरीर जैसा कैप्सूल तो हर किसी के लिए हर समय उपलब्ध है । विज्ञान जहाँ आज बाह्याण्ड में पहुँच

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के अनेक रहस्य खोल रहा है, वहाँ उसको उपलब्धियाँ और इस तरह के प्रमाण इस बात के साक्षी हैं कि मनुष्य पदार्थमय जगत के विस्तार में जो कुछ पाना चाहता है वह सब बीज रूप में उसके भीतर ही बन्द है, इसके लिए अन्यत्र भटकने की आवश्यकता नहीं ।

यह सब एक सामान्य व्यक्ति की दृष्टि में क्यों नहीं आता, विज्ञान अथवा योगियों की दृष्टि में ही यह सब क्यों है ? यह एक प्रश्न है, इसका उत्तर विज्ञान और योग दोनों का एक ही है । वह यह कि सूक्ष्मतर अवस्था में पहुँचने के लिए अपनी इन्द्रियों को भी सूक्ष्म बनाना होगा । टाइम कैप्सूल में वह सब यन्त्र रखे गए हैं, जिनकी मदद से पिटारी में बन्द सभी वस्तुओं को कभी भी खोलकर जानकारी प्राप्त की जा सकती है, उसी प्रकार अपनी चेतना को सूक्ष्मावस्था में प्रवेश कराकर हम भी समय, गति और ब्रह्माण्ड से परे उन सभी वस्तुओं को समझने, जानने और प्राप्त करने में समर्थ हैं—जो स्थूल दृष्टि से देखने में लाखों-करोड़ों मील दूर, अब नहीं भविष्य में होने वाली हैं या पहले कभी हो चुकी हैं ।

मनुष्य की नसें प्रति सेकण्ड कुल ७०० कम्पनों की अनुभूति ग्रहण कर सकती हैं । कान १५००० साइकल प्रति सेकण्ड की ही ध्वनि सुन सकते हैं, आँखें बैंगनी रंग से ऊँची फ्रीक्वेन्सी वाले रंग नहीं देख सकतीं । पर विद्युत् विशेषज्ञ श्री निकोला टैसला ने सिद्ध कर दिया कि यदि विद्युत क्षमता बढ़ाकर इन फ्रिक्वेन्सियों को बढ़ाया जा सके, तो मनुष्य की ज्ञानेन्द्रियाँ और भी सूक्ष्म अवस्थाओं की अनुभूति कर सकती हैं । ध्यान द्वारा आत्म-चेतना को एक सूक्ष्मतम् बिन्दु में एकाग्र करना इसी सिद्धान्त पर आधारित एक महान् योग-प्रक्रिया है, जिससे शरीर रूपी टाइम कैप्सूल में बन्द विराट् को भी सूक्ष्म रूप में अध्ययन और अनुभूति कर हम वह सब प्राप्त कर सकते हैं, जो इस सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में पहले से विद्यमान है ।

तब, जब ज्वालामुखी फूटते हैं

हम जिस पृथ्वी को देख रहे हैं, वह करोड़ों वर्ष आयु की बुढ़िया है । नवोढ़ा धरती का तो रूप ही कुछ और था । भूगर्भ शास्त्र (जिऑलॉजी) के अनुसार अपने आविर्भाव काल में पृथ्वी वातीय स्थिति (गैस-फार्म) में थी । वह सूर्य की तरह प्रचण्ड ऊर्जा वाला गोला थी, जिसमें जीव का तो क्या जल का रहना भी सम्भव न था । जल भी तब वाष्प रूप में ही था ।

ऊर्जा-फेंकना ग्रहों का स्वभाव है, उससे उनका ताप क्षीण होता है, ऐसे ही पृथ्वी की गर्मी भी धीरे-धीरे शान्त होने लगी । पानी बरसा कुछ उससे भी गर्मी कम हुई और एक दिन पृथ्वी अर्द्ध तरल स्थिति में आ गई । वायुमंडल के सम्पर्क के कारण पृथ्वी का ऊपरी हिस्सा शीघ्र ठण्डा हो गया और उसमें पपड़ी पड़ती गई, जिसके कारण कहीं पहाड़ बन गए, मैदान कहीं, टीले, नदियाँ-नाले और कहीं चट्टान । ऊबड़-खाबड़ पृथ्वी धरातल में क्रमशः ठण्डक के प्रवेश के कारण बनती चली गई ।

सृष्टि में वस्तुओं के रूपान्तर होते हैं, नाश नहीं होता । इस सिद्धान्त के अनुसार मनुष्य के अस्तित्व किसी भी रूप में तब रहा होगा । पृथ्वी गैस रूप में थी तो जीवन भी तब गैस जैसा ही किसी स्थिति में रहा होगा । धीरे-धीरे जब पृथ्वी ठण्डी पड़ने लगी तो उसके परमाणु अधिक स्थूल और दृश्य होते गए, इन परमाणुओं से बने शरीर भी धीरे-धीरे स्थूल आकार लेने लगे । पृथ्वी में प्राप्त प्राकृतिक और खनिज तत्वों के अनुरूप ही शरीरों में परिवर्तन होता आया है, क्योंकि दिखाई देने वाला शरीर तो पार्थिव प्रकृति के अंश लेकर ही बनता बिगड़ता रहता है । पृथ्वी में जो तत्व घटते-बढ़ते हैं, वह शरीरों में भी घटते-बढ़ते रहते हैं और तो और वायुमण्डल में जैसी गैसें धूल और रेडियो सक्रिय (रेडियोऐक्टिव) तत्व भरे पड़े हैं, मनुष्य शरीर में भी वह तत्व आते जाते और अपना प्रभाव दिखलाते रहते हैं, इसी कारण वायुमण्डल के शुद्धीकरण का ध्यान सभी धर्मों ने रखा है । अगरबत्ती जलाने का नियम सभी धर्मों ने इसी दृष्टि से अपनाया । यज्ञ उसका वृहद् और महतोपयोगी स्वरूप है । इस तुलनात्मक अध्ययन से हम कहते हैं कि मनुष्य ३/४ से भी अधिक पृथ्वी, जल है, जीवन की गतिविधियाँ इतने अंशों में पार्थिव वातावरण से सदैव प्रभावित होती रहती हैं ।

पृथ्वी जैसी ऊपर से दिखाई देती है, भीतर से वैसी नहीं है । इसके अन्दर अभी भी वह पुराने द्रव्य और संस्कार दबे पड़े हैं, जो करोड़ों वर्ष पूर्व उसमें सर्वत्र भरे पड़े थे । पृथ्वी ऊपर से ठण्डी होती गई पर अभी उसके गर्भ में अपार ऊष्मा संग्रहीत, सुरक्षित है । वह ज्वालामुखी (वालकैनो) के रूप में कभी-कभी फूट पड़ती है तो उसकी शक्ति का पता चलता है । भूगर्भ शास्त्री ज्वालामुखी को पृथ्वी का सशक्तम कार्य और गुण मानते हैं । सन् १७३७ में ज्वालामुखी फूटने से इतना भयंकर भूकम्प आया था कि अकेले भारतवर्ष में लगभग ३०००० व्यक्तियों की जानें चली गई थीं । १७५५ ई. सन् में लिसबन (पुर्तगाल) में ज्वालामुखी-भूकम्प के कारण १४००००० वर्गमील पृथ्वी चीमटे की तरह थरथरा गई थी, १९०८ में सिसली और कैलेब्रिया के ज्वालामुखी विस्फोट के कारण ७७२८२ व्यक्तियों की जानें गयीं और ९५००० व्यक्ति आंशिक या बुरी तरह घायल हुए ।

सन् १९३३ में जापान के दो प्रमुख नगर टोकियो और याकोहामा के ध्वंस को शताब्दियों तक नहीं भूला जा सकेगा । यह विध्वंस ज्वालामुखी फटने का ही परिणाम था उसमें १४२८०० मनुष्य मरे, १०३७३३ घायल हुए और कितने लोगों का कुछ पता ही नहीं चला वे कहाँ चले गए । क्वेटा (भारत) में १९३५ में ५६००० प्राणियों को आहत करने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

का श्रेय भी ज्वालामुखी को ही है । इसी वर्ष मध्य इटली के ३७० शहर और गाँव ज्वालामुखी की अग्नि में हवन हो गए थे । उसमें कोई ३० हजार व्यक्ति मारे गए थे ।

निरन्तर फूटते रहने वाली ज्वालामुखी पेटियाँ (बालकैनिक बैल्ट) के ज्वालामुखियों की संख्या तो और भी अधिक है विसूवियस और एटना तो विश्व-विख्यात ज्वालामुखी हैं । जापान, इटली और अलास्का में उनकी संख्या सर्वाधिक है, प्रमुख पेटियाँ—(१) प्रशान्त महासागरीय पेटी में फारमोसा, फिलीपीन्स, न्यूगिनी । (२) अन्ध-महासागरीय पेटी में मैडेरिस, कैनेरी, सेन्ट हैलेना आदि । (३) हिन्दमहासागरीय पेटी में जावा, सुमात्रा आदि द्वीपों पर । (४) भूमध्य सागरीय पेटी में सिसली, इटली, टर्की, ग्रीस आदि और (५) समुद्रतल में स्थित उत्तरी अमेरिका के अल्तूशियन द्वीप से जापान तक फैले हुए कोई ४३० ज्वालामुखी निरन्तर फूटते और प्रकृति की प्रबलतम एवं प्रचण्ड क्षमता का परिचय देते रहते हैं ।

पृथ्वी की यह शक्ति उसकी मूलभूत स्थिति के विद्यमान होने के कारण है । पृथ्वी ऊपर से ठण्डी हो गई, किन्तु अनेक पर्तों के दबाव के नीचे अब भी प्राचीनतम गैसीय और तरल स्थिति विद्यमान है । पृथ्वी का कुल व्यास ७९९८ मील है, उसका हृदय (कोर) इस हिसाब से ३९९९ मील होना चाहिए । अभी तक अधिकतर ५$\frac{३}{४}$ मील दूरी तक, वह भी प्रशान्त महासागर में, उतरा जा सका है । अनुमान है कि ४००० मील की दूरी पर पृथ्वी के सभी खनिज और धातुएँ या तो गैस स्थिति में होंगी या तरल स्थिति में । एक से एक महत्त्वपूर्ण वस्तुएँ भूगर्भ में छिपी पड़ी हैं । पेट्रोलियम और मिट्टी के तेल पृथ्वी की गहराई में ही मिलते हैं । सोने-चाँदी और मुख्यतया कोयले की खानें गहराई में ही हैं । साधारण स्थिति में ऊपरी पृथ्वी का दबाव अधिक और भीतर की गैसों का दबाव कम रहता है, इसलिए ४००० मील अन्तराल की स्थिति का पता नहीं चल पाता, किन्तु क्षरण द्वारा पृथ्वी का दबाव भीतरी गैसों की तुलना में कम होते ही भीतर की शक्ति उबल पड़ती है और पृथ्वी को फोड़कर अपने साथ चट्टानों का पिघला रूप लावा और संग्रहीत गैसों की प्रबलता लेकर पृथ्वी को फोड़कर मीलों आकाश में उछलने लगती है । इस समय विनाशकारी दृश्य उपस्थित हो उठते हैं । लावा चारों ओर फैल जाता है, भूकम्प उठ खड़े होते हैं, चारों ओर भाग-दौड़ मच जाती है ।

ऐसी विस्फोटक स्थिति सृष्टि के आविर्भाव काल में नहीं थी । तब पृथ्वी कठोर नहीं थी, भीतर का लावा भी सरल रूप में था, इसलिए वह कभी फूटता भी था तो चश्मों की तरह पृथ्वी को हौले-हौले फोड़कर तरल रूप में वह निकलता था ।

मनुष्य की आदि-शक्तियों के बारे में पहले कोई असमंजस न था । शारीरिक भोग-वासनाओं और इन्द्रिय-जन्य आसक्ति तब इतनी कड़ी न हुई थी कि आत्म-भाव को व्यक्त होने में कोई कठिनाई होती । आज से पिछले इतिहास की सभी पर्तें यह बताती हैं कि तब लोगों में आध्यात्मिकता का भाव बिल्कुल सहज रूप में था । भौतिक आकर्षण कम थे, इससे आध्यात्मिक तथ्यों के प्राकट्य में कोई कष्ट न होता था ।

धीरे-धीरे आध्यात्मिक शक्तियाँ दबने लगीं । ऊपरी आवरण कठोर होने लगे, शरीरों की वासनाएँ तीव्र होने लगीं । इससे आत्म-तत्व की स्थिति शक्ति और स्वरूप को भूला ज़ाने लगा । शरीर के गहन गह्वर में धरती के समान ही वह आत्म-शक्तियाँ भरी हुई हैं, जो शाश्वत और सनातन हैं, किन्तु हमारे बाह्य जीवन इतने कठिन और जटिल हो गए हैं कि उनकी ओर हमारा ध्यान ही नहीं जाता ।

कभी-कभी परिस्थितियों के प्रतिघात के कारण बाह्य आवरण हल्का और कमजोर पड़ जाता है । भोग-वासनाएँ कई बार स्वयं ही शिथिल पड़ जाती हैं, कई बार विवेक और वैराग्य के उदय होने पर उनकी निस्सारता प्रकट हो जाती है । हम सोचने लगते हैं कि मनुष्य जीवन, जो समय की अधिक से अधिक १०० पगडण्डियाँ पार करते ही समाप्त हो जाता है, क्या क्षणिक भोग-वासनाओं, तृष्णा और महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति के लिए ही मिला है । क्या बाह्य जीवन से मनुष्य चिरन्तन सुख-शान्ति और सन्तोष का अनुभव कर सकता है । इस तरह की भावनाओं के उदय से बाह्याडम्बरों की पर्तें ढीली पड़ जाती हैं और आध्यात्मिक शक्तियाँ अपनी सम्पूर्ण विशेषताओं के साथ फूट पड़ती हैं । द्वन्द्व उठ खड़ा होता है और विघटन की सी, क्रान्ति की सी, विचार-मन्थन की सी स्थिति उत्पन्न हो उठती है । इस हलचल पूर्ण स्थिति में अशान्ति विचारों की मारकाट तो दिखाई देती है पर उससे अन्ततः दुर्वासनाओं, कुटिलताओं, महत्वाकांक्षाओं और इन्द्रिय-जन्य आकर्षणों का ही सत्यानाश हो जाता है और शुद्ध जीवन-ज्योति का प्रकाश फैलने लगता है ।

ज्वालामुखी प्रकृति का सशक्ततम कार्य है और आत्मा चिर-शक्ति की अप्रतिम अभिव्यक्ति । पृथ्वी के अन्तराल में बसे ज्वालामुखी के समान मनुष्य शरीर में व्याप्त आत्म-तत्व जब जाग्रत होता है तो उससे हजारों-लाखों अतृप्त, अशान्त और विक्षुब्ध आत्माएँ प्रकाश और शीतलता अनुभव करती हैं । यह शक्ति सद्गुणों के रूप में फूटती और सब पर कृपा एवं स्नेह की वर्षा करती चली जाती है । जो भी उसके सम्पर्क में आते, लोहे से स्वर्ण बनते चले जाते हैं । ऐसी सद्गुणों की स्रोत आत्म-सत्ता का जहाँ भी प्राकट्य होता है, वहीं सुख-शान्ति और निर्मलता की धाराएँ बह निकलती हैं । ज्वालामुखी की प्रचण्ड शक्ति से अस्थिर असावधान लोग हानि उठाते हैं पर उनसे मानवता की बड़ी सेवा होती

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है । पृथ्वी के जिस भू-भाग में सर्वाधिक ज्वालामुखी फूटते रहते हैं, वह सबसे अधिक घनी आबादी वाले प्रान्त हैं, क्योंकि लावा पृथ्वी की पकी पकाई उर्वरा शक्ति है, उससे पृथ्वी की उपज बहुत अधिक बढ़ जाती है । कई बार बहुमूल्य धातुएँ लोगों को उस चमत्कार की तरह मिल जाती हैं, जिस प्रकार सद्गुण सम्पन्न आत्मानुवर्ती महापुरुषों के संसर्ग से स्वल्प क्षमता वाले लोगों को भी अपार शक्ति मिल जाती है । सुदूर भूभाग में दया, करुणा, स्नेह, आत्मीयता, सहयोग, सौजन्य की उर्वरता ऐसे महापुरुष ही बढ़ाते हैं और अपने पीछे ज्वालामुखी के समान शान्ति और सन्तोष का वातावरण छोड़ते हुए, इस संसार से विदा होते हैं । संसार में ४३२ ज्वालामुखी प्रमुख हैं, यदि इतनी ही सद्गुणों की स्रोत आत्म-शक्तियाँ इस देश, इस पृथ्वी पर जाग पड़ें तो देखते-देखते संसार सुख-शान्ति, समानता और समृद्धि से लहलहाने लगे, किन्तु यदि यही शक्तियाँ दिग्भ्रान्त हो जायें तो एक साथ फूट पड़ने वाले ज्वालामुखियों की तरह विध्वंसक हो सकती हैं ।

साढ़े तीन लाथ लम्बे और साठ-सत्तर किलो भारी मनुष्य के भीतर ऐसी क्षमताएँ और सम्भावनाएँ भरी पड़ी हैं कि उनका प्रत्यक्षीकरण उसे सृष्टि का अद्भुत विलक्षण चमत्कार ही सिद्ध करता है । मनुष्य की अन्तर्निहित क्षमताओं और शक्तियों की कोई सीमा नहीं है । यदि वे रचनात्मक दिशा में लग सकें तो साधारण-सा कलेवर धारण किए दिखाई देने वाला मनुष्य विराट् विश्व वसुन्धरा का सुरभित सुमन बन सकता है और यदि वही क्षमताएँ विध्वंसकारी प्रयोजनों में लग जायें तो वह स्वयं अपने आपको तो नष्ट करता ही है, अन्य औरों के लिए भी अगणित विपदाएँ खड़ी कर देता है ।

किसी का भी बाहरी कलेवर, देखकर यह नहीं सोच लेना चाहिए कि यह हाड़-माँस का एक साधारण-सा पुतला है । दीखने में बहुत-सी वस्तुएँ सामान्य दिखाई देती हैं, परन्तु उनकी अन्तर्निहित क्षमताएँ जब उजागर होकर आती हैं तब पता चलता है कि वास्तव में वह वस्तु कितनी क्षमता सम्पन्न है । बहुत-सी वस्तुएँ क्या संसार की लगभग सभी वस्तुएँ सामान्य स्थिति में अत्यन्त साधारण प्रतीत होती हैं, किन्तु जब उनके भीतर की शक्तियाँ जाग्रत होती हैं तो सृजन या विनाश के चमत्कारी परिणाम प्रस्तुत करती हैं । मनुष्य के भीतर भी ऐसी ही शक्तियाँ निहित हैं । यदि उनका सृजनात्मक उपयोग किया जाय तो सुखद परिणाम सामने आते हैं और उनकी दिशा यदि विध्वंस की ओर उन्मुख हो जाय तो सर्वनाश ही उत्पन्न करती हैं । सृजन के लिए किए गए शक्तियों के उपयोग का नाम ही पुण्य है और जब शक्तियाँ विध्वंस की दिशा में अग्रसर होती हैं तो उनसे ऐसे विस्फोट उत्पन्न होते हैं कि वे शक्तिधारी सहित अन्य समीपवर्ती व्यक्तियों और क्षेत्रों को भी नष्ट कर विनाश का दृश्य उपस्थित कर देते हैं । इन विनाश के परिणाम प्रस्तुत करने वाले कर्तृत्वों को, शक्तियों के दुरुपयोग को पाप, कल्मष, अपराध, अनैतिकता, अवांछनीयता कुछ भी कहा जा सकता है ।

साधारण अस्तित्व में छिपी हुई शक्ति की विभीषिका को ज्वालामुखी के उदाहरण से भली-भाँति समझा जा सकता है । पृथ्वी की सतह धूल, कंकड़, मिट्टी से ही बनी दिखाई देती है । ठोकर लगकर उस पर गिरने से केवल चोट ही लग सकती है, किन्तु पृथ्वी के भीतर की ऊष्मा या शक्ति जब ज्वालामुखी बनकर फूटती है तो विनाश का दृश्य देखते नहीं बनता । ज्ञात विवरणों के अनुसार अब तक पृथ्वी पर ४५५ क्षेत्र ऐसे हैं जहाँ अक्सर ज्वालामुखी फूटते रहते हैं । सबसे अधिक ज्वालामुखी प्रशान्त महासागर और उसके द्वीपों तथा तटवर्ती इलाकों में है । यहाँ इतने अधिक जाग्रत ज्वालामुखी हैं कि इस क्षेत्र को अग्निरेखा का क्षेत्र कहा जाता है ।

पृथ्वी के भूगर्भ में जब अग्नि की अधिकता हो जाती है और उसके निकलने का कोई रास्ता नहीं रह जाता तब वह अग्नि ज्वालामुखी क्षेत्रों से बाहर निकलती है । मानवीय चेतना के सम्बन्ध में भी यही बात लागू होती है । इसके भीतर भी शक्ति का एक अजस्र प्रवाह बहता रहता है । जब उन शक्तियों का उपयोग नहीं हो पाता या गलत दिशा में चल पड़ता है तो अपराध, अनीति, कुकर्म और अवांक्षनीयता के रूप में प्रकट होने लगती हैं जिससे निजी जीवन के साथ-साथ सामाजिक जीवन में भी कई विकृतियाँ उत्पन्न होती हैं । जिनका परिणाम निश्चित ही अनिष्टकर होता है ।

ज्वालामुखी जब फूटते हैं तो उस क्षेत्र की सतह से आग, धुआँ, राख और लावा भयानक आवाज के साथ बाहर निकलता है । यद्यपि बहुत कुछ यह जान लिया गया है कि ज्वालामुखी किन क्षेत्रों में अधिक आते हैं । यह जान लेने के बाद उस क्षेत्र में जन-हानि का कोई विशेष भय नहीं रहता । समय रहते वहाँ के लोगों को हटाकर सुरक्षित स्थानों पर पहुँचाया जा सकता है, किन्तु इतना जान लेने पर भी विनाश की विभीषिका को रोका नहीं जा सकता क्योंकि ज्वालामुखी फूटने पर उससे निकल पड़ने वाला लावा किस दिशा में बह निकलेगा यह कुछ पता नहीं चलता । इसलिए कई बार कड़े सुरक्षा प्रबन्ध किए जाने पर भी बहुत अधिक विनाश होता है ।

पिछले दिनों १८ मई, १९८० को अमेरिका के दक्षिणी भाग में स्थित बेन्कुवर पर्वतीय क्षेत्र में एक ज्वालामुखी का भयंकर विस्फोट हुआ कुछ ही क्षणों में वह सारा क्षेत्र घटाटोप धुएँ से घिर गया और उससे निकली राख आस-पास के ४०० किलोमीटर क्षेत्र में फैल गई । इस विस्फोट की सम्भावना एक महीने पहले से आंकी जा रही थी । काफी सुरक्षा प्रबन्ध भी किए गए, किन्तु फिर भी उससे होने वाले

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

विनाश को पूरी तरह टाला नहीं जा सका । अपराधी प्रवृत्ति को भले ही पहचान लिया जाय, उससे बचने के भी चाहे जितने प्रयास कर लिए जायें परन्तु इस तरह की प्रवृत्तियाँ पहले से ज्ञात सम्भावना वाले ज्वालामुखियों की तरह कुछ न कुछ हानि तो पहुँचाती ही हैं ।

ज्वालामुखियों में विस्फोट के समय निकलने वाला लावा प्रायः ३ या ४ मील प्रति घण्टे की गति से ४० से ६० मील तक के क्षेत्र में फैलता है । ऐसी स्थिति में तो फिर भी सुरक्षा प्रयास किए जा सकते हैं, किन्तु कई बार इनकी गति ३०० मील प्रति घण्टा तक होती है । उस स्थिति में ज्वालामुखी के कारण होने वाले महाविनाश को रोक पाना असम्भव ही होता है । जन-धन की किसी प्रकार रक्षा कर भी ली जाय तो ज्वालामुखियों में लावे के साथ जो गैसें निकलती हैं वे वायुमण्डल को काफी समय तक के लिए विषाक्त कर देती हैं । वृक्ष, वनस्पति और फसलें तो इनमें नष्ट होती ही हैं ।

पृथ्वी के निर्माण से लेकर अब तक उसके कई क्षेत्रों में हजारों ज्वालामुखी फूट चुके हैं । पिछली कुछ शताब्दियों में ही अनेक ज्वालामुखियों ने महाविनाश का दृश्य उपस्थित किया । ५ अप्रैल, १८१५ को इण्डोनेशिया के बोलकाना क्षेत्र में ३६ वर्गमील क्षेत्र में भयंकर ज्वालामुखी फूटा । इस ज्वालामुखी के कारण ४१०० फुट ऊँचाई वाली बौल्कानों पहाड़ी नष्ट हो गई और वहाँ ७ मील गहरा वृत्ताकार गड्ढा बन गया । पिछले सौ वर्षों में अब तक का सबसे बड़ा ज्वालामुखी विस्फोट २७ अगस्त, १८८३ को जावा और सुमात्रा के बीच वाले भू-भाग में हुआ था । इस ज्वालामुखी के कारण १६३ गाँव पूरी तरह से नष्ट हो गए । विस्फोट इतना प्रचण्ड था कि बड़े-बड़े पत्थर ३४ मील लम्बी ऊँचाई तक आकाश में छिप गए और करीब ३५०० वर्ग मील के घेरे में धूल छा गई । इस विस्फोट की गूँज १५४ लाख वर्गमील क्षेत्र में सुनी गई ।

सबसे निष्क्रिय अर्थात् जहाँ पहले विस्फोट हुआ करता था, ज्वालामुखी, चिली तथा अर्जेण्टाइना की सीमा पर स्थूलिया के क्षेत्र में है । निष्क्रिय ज्वालामुखी का अर्थ यह नहीं है कि अब वहाँ कभी विस्फोट होगा नहीं । निष्क्रिय से तात्पर्य विस्फोट हुए वर्षों अवधि बीत जाने से ही कुसंस्कारी मन कब अपनी कुसंस्कारिता के वशीभूत होकर कुकृत्यों में संलग्न हो जाय, इसका कोई निश्चित ठिकाना नहीं रहता । उसी प्रकार निष्क्रिय ज्वालामुखी भी कभी भी जाग उठते हैं और विनाश मचाने लगते हैं ।

सर्वाधिक सक्रिय ज्वालामुखी एण्टोकेला एवं माउण्ट हेलेना हैं, जो कभी भी धूल, गुबार, धुएँ और आग लावे के साथ बहने लगता है । हजारों वर्ष पूर्व कहाँ ज्वालामुखी धधक रहे थे ? इसका कोई पता ठिकाना नहीं है, और वे कभी भी फिर से जाग सकते हैं । जापान का बादाई ज्वालामुखी १००० वर्ष तक शान्त रहने के बाद फूट पड़ा था । ७००० वर्ष तक शान्त रहने के बाद आइसलैण्ड के ज्वालामुखी ने सन् १९७३ में लावा उगलना शुरू किया था । कौन जाने जिस स्थान पर हम बैठे हैं, वहाँ कभी कोई ज्वालामुखी लावा उगलता रहा हो और वह कब फूट पड़े ।

पृथ्वी के गर्भ में छिपी हुई अमिट शक्ति का परिचय ज्वालामुखियों से मिलता है । मनुष्य के भीतर भी ऐसी ही प्रचण्ड शक्तियाँ छिपी पड़ी हैं । वह आखिर है तो भूमिपुत्र ही । महत्त्व उन शक्तियों का तभी है जब उन्हें सृजनात्मक प्रयोजनों में लगाया जाय अन्यथा संचित शक्तियाँ दिग्भ्रान्त होकर ज्वालामुखियों की तरह ही विनाशकारी सिद्ध होती हैं ।

काल की इकाई से महाकाल तक

मालूम यह पड़ता है कि समय बिना किसी की प्रतीक्षा किए अपने ढंग से, अपने क्रम से व्यतीत होता चला जाता है, पर अब इस सम्बन्ध में नये सिद्धान्त सामने आये हैं कि गति की तीव्रता होने पर समय की चाल घट जाती है । मोटे तौर से इसका परिचय हम द्रुतगामी वाहनों पर सवारी करके आसानी से देख सकते हैं । एक घण्टे में पैदल चलने पर तीन मील का सफर होता है, पर मोटर से ८० मील पार कर लेते हैं । यह समय व्यतीत होने की चाल का घट जाना भी कहा जा सकता है ।

यह तो मोटा उदाहरण हुआ । वैज्ञानिक अनुसन्धान ने समय की गति सिकुड़ने से लेकर उसकी स्थिरता तक को एक तथ्य के रूप में सिद्ध किया है । यद्यपि वैसा अभी प्रत्यक्ष नहीं हो सका, पर वे कभी सिद्धान्त प्रामाणिक ठहराये जा चुके जिनके सहारे समय की गति को शिथिल अथवा अवरुद्ध होने की बात सम्भव कही जाने लगी है ।

आइन्स्टीन ने अपनी क्लिष्ट गणनाओं के आधार पर इस सम्भावना को पूर्णतया विश्वस्त बताया है । वे कहते हैं कि गति में वृद्धि होने पर समय की चाल स्वभावतः घट जायेगी । यदि १,८६००० मील प्रति सैकण्ड प्रकाश की चाल से चला जा सके तो समय की गति इतनी न्यून हो जायेगी कि उसके व्यतीत होने का पता भी न चलेगा । इस चाल के किसी राकेट पर बैठकर सफर किया जाय तो जिन ग्रह-नक्षत्रों पर घूमकर वापस लौटने पर अपने वर्तमान गणित के हिसाब से एक हजार वर्ष लगेंगे, उस विशिष्ट गणित के हिसाब से एक महीने से भी कम समय लगेगा । ऐसा व्यक्ति पृथ्वी पर लौटेगा तो देखेगा कि यहाँ हजार वर्ष बीत गए और ढेरों पीढ़ियाँ तथा परिस्थितियाँ बदल गयीं । इतने पर भी उस लौटे हुए व्यक्ति की आयु में तनिक भी अन्तर दिखाई न पड़ेगा, वह तरुण का तरुण ही प्रतीत होगा ।

पुराणों में ऐसी कथाएँ मिलती हैं जिनमें समय की सापेक्षता की कल्पना की गई है । भागवत-पुराण में वर्णन है कि पाताल लोक के राजा रेवत अपनी पुत्री रेवती के लिए

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उपयुक्त वर तलाश न कर सके तो उस कठिनाई को हल करने के लिए ब्रह्माजी के पास गए । उस समय वहाँ एक संगीत कार्यक्रम चल रहा था । ब्रह्माजी उसी में व्यस्त थे, अस्तु रेवत को प्रतीक्षा में बैठना पड़ा । सभा समाप्त हुई तो राजा ने ब्रह्माजी को अपना मनोरथ बताया तो उन्होंने हँसकर कहा—इतनी देर में तो पृथ्वी में सत्ताईस चतुर्युगी व्यतीत हो गयीं । जो लड़के तुम्हें पसन्द आये थे वे सब मर खप गए अब उनके वंश, गोत्रों तक का पता नहीं है । इन दिनों नारायण के अंशावतार बलदेव जी विद्यमान हैं उन्हें ही अपनी कन्या दान कर दो ।

वैज्ञानिक प्रतिपादनों से पता चलता है कि समय खिंचता और सिकुड़ता है । उसकी चाल धीमी हो सकती है और तेज भी । यह तथ्य सर्वसाधारण की समझ में शायद न आये । गणित के आधार पर सम्भव है यह समझ सकना सम्भव हो सके, पर व्यावहारिक जीवन में यह सच्चाई सर्वविदित है कि यदि एक-एक क्षण के सदुपयोग का ध्यान रखा जाय तो थोड़ी-सी जिन्दगी में भी इतना काम हो सकता है जितना कि आलसी लोग दस जन्म लेकर भी पूरा नहीं कर सकते । जागरूक और भावनाशील औसत आयु पाकर भी इतने लाभान्वित होते हैं जितने कि दस सुयोग्य व्यक्ति मिलकर भी नहीं हो सकते । तत्परता, सजगता, स्फूर्ति और व्यवस्थापूर्वक समय का उपयोग किया जाय तो कुछ ही वर्ष का समय अस्त-व्यस्त लोगों के पूरे जीवन में अधिक महत्त्वपूर्ण सिद्ध हो सकता है । समय की गतिशीलता का वैज्ञानिक रहस्य भले ही न समझा जा सके, पर इतना तो हमें गाँठ बाँध लेना चाहिए कि उस बहुमूल्य सम्पदा में से एक क्षण भी व्यर्थ गँवाने योग्य नहीं है । यह काल ही महाकाल है ।

वस्तुतः समय एक सापेक्ष वस्तु है, उसका अस्तित्व संसार में निरन्तर हो रही घटनाओं से है । एक लाख वर्ष बीत गए यह कहना गलत है, क्योंकि समय कुछ है ही नहीं यह कहना चाहिए इतनी घटनाएँ घट चुकीं । संसार के अणु-अणु में एक गति एक परिवर्तन है उसे कैसे जाना और अनुभव किया जाय ? यह एक प्रश्न है और उसका उत्तर यह है कि समय को भी लघुत्तम टुकड़े में काटा जाय यदि हम समय की सूक्ष्मतम इकाई में स्थिर हो जायें तो विराट् की गति को समझ सकते हैं, इस लेख में यही समझाने का प्रयास किया जा रहा है ।

कहते हैं ५० खरब से ८० खरब वर्ष के लगभग पहले ब्रह्माण्ड में एकाएक विस्फोट हुआ और उस विस्फोट केन्द्र बिन्दु से असंख्य "मन्दाकिनियाँ" प्रकाश लेकर चल पड़ीं । ब्रह्माण्ड में फैला हुआ जीवन और प्रकाश उसी स्रोत से बहता आ रहा है । कहते हैं १० खरब साल पहले हमारा सौर-मण्डल और वह जिस आकाश गंगा से बना है उसके ३० अरब तारागणों में से कोई भी अस्तित्व में नहीं आया था । पृथ्वी पर मनुष्य का आविर्भाव १ अरब ९७ करोड़ २९ लाख ४० हजार ६० वर्ष पहले हुआ था । समय की सारी सीमाएँ अनुमान मात्र हैं और उनका अनुमान घटनाओं से लगाया जाता है । घटनाएँ न होतीं तो हमें पता न चलता कि संसार में समय नाम की कोई वस्तु नहीं । समय सापेक्ष वस्तु है, उसके गर्भ में मात्र घटनाओं का तारतम्बार लगा हुआ है जो सत्य है वह समय की सीमा से परे है और जो अब भी सृष्टि के कण-कण में गतिशील हो रहा है ।

उस सत्ता को पीछे लौटकर नहीं पाया जा सकता क्योंकि आज तक जो भी घटनाएँ ब्रह्माण्ड में घटीं हम उनका इतिहास नहीं जान सकते, वह तो वेद के शब्दों में नेति, नेति (इनफिनिट, इनफिनिट) है, फिर यदि उस सत्ता की अनुभूति करनी हो उसे ढूँढ़ना हो तो कैसे ढूँढ़ा जाय ? यह प्रश्न अनादि काल से चला आ रहा है । दुनिया का हर विचारशील व्यक्ति चाहे वह साहित्यिक हो या कलाकार दार्शनिक हो या वैज्ञानिक सभी इस प्रयत्न में हैं कि उस आदि सत्ता को ढूँढ़ा जाय जो महाकाल से भी परे है । भारतीय मनीषियों ने कहा, उसकी अनुभूति पदार्थ और समय से परे उठकर ही हो सकती है । इसका व्यावहारिक हल ध्यान के रूप में निकाला । ध्यान द्वारा मन को स्थिर करना पदार्थ और समय से ऊपर उठना ही है । ध्यान की प्रगाढ़ अवस्था यद्यपि अति सूक्ष्म स्थिति है पर वस्तुओं का विश्लेषण और सत्य की जानकारी का वही एक मार्ग है ।

सन् १९४४ में अमेरिका के वैज्ञानिक प्रो. इसाडोर. आई. रैबी ने एक अनुसन्धान के आधार पर बताया कि संसार का प्रत्येक अणु बड़ी तेजी से कम्पनशील है । उन्होंने बताया कि सीजियम के अणु एक सेकण्ड में ९ अरब १९ करोड़ २६ लाख ३१ हजार ७ सौ ७० बार कम्पन करते हैं । अणुओं के इस कम्पन की बहुत सूक्ष्म समय में इतनी अधिक तेज कम्पनशीलता इस बात का प्रमाण थी कि ब्रह्माण्ड विस्फोट के समय की सारी दशाएँ और तत्व पदार्थों के सूक्ष्मतम परमाणुओं में निश्चित रूप से सन्निहित होने चाहिए । पर कठिनाई यह थी कि समय को छोटे से छोटा कैसे किया जाय । सृष्टि के कण-कण में व्याप्त गतिशीलता को उतना ही सूक्ष्म स्तर पर मापा जा सकता है, जितना सूक्ष्म समय की माप हो, पर वैज्ञानिक समय को अब तक शून्य (जीरो) बिन्दु पर न ला सके । हाँ, यह अवश्य हुआ कि समय को छोटे से छोटा करने का प्रयत्न किया गया । अनुमान है कि समय को बिल्कुल शून्य अवस्था पर जिस दिन माप लिया जायेगा उस दिन सृष्टि का हर सत्य प्रकाशित हो जायेगा । भारतीय ऋषियों ने जो ज्ञान तत्व को, ध्यान को, समय से ऊपर उठकर विश्व-चेतना के दर्शन का विधान बताया उसकी सत्यता के प्रमाण यहीं आकर मिलते हैं ।

आज जो भूकम्प आता है वह वस्तुतः आज की ही किसी दुर्घटना का परिणाम नहीं होता वरन् वह जहाँ से भूकम्प फूटता है वहाँ के अणुओं की दीर्घकालीन हलचल का परिणाम होता है । हजारों वर्षों से सूर्य उस स्थान पर प्रकाशकण उड़ेलता रहा होगा उन प्रकाशकणों की ऊर्जा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

किन्हीं तेल या तत्व के अणुओं को उत्तेजित करती रही होगी उससे इलेक्ट्रॉनिक न्यूट्रॉन कण या ऐसे ही किन्हीं चार्ज-कणों वाली शक्ति या गैस बनती और एकत्रित करती रही होगी । आज उसकी इतनी मात्रा एकत्रित हो गई रही होगी कि उसके दबाव को पृथ्वी और दूसरे तत्व सँभाल सकने में असमर्थ हो गए होंगे इसलिए वह विस्फोट हुआ और दिखाई दिया ।

प्रकृति के कण-कण में ऐसी हलचल चल रही है, पर हम समय के स्थूल भाग से बँधे होने के कारण उन सूक्ष्म परिवर्तनों को समझ सकने की स्थिति में होते नहीं इसीलिए उन मोटी घटनाओं के होने तक अपने आपको बचाव करने की स्थिति भी बना नहीं पाते और जैसे भी कुछ अच्छे-बुरे परिवर्तन प्रकृति करती रहती है उन्हीं से प्रभावित होते रहते हैं, देखने में लगता है मनुष्य बड़ा बेस प्राणी है, वह काल के थपेड़े खाने के लिए ही बना है, पर यह सचमुच उसे प्रदत्त शक्तियों के साथ लांछन है । मनुष्य के भीतर वह तत्व बहुत खूबसूरती से विकसित किए गए हैं जिनको यदि जान और समझ लिया जाय तो मनुष्य प्रकृति के सूक्ष्म अन्तराल में होने वाले परिवर्तनों का ने केवल ज्ञाता वरन् साझीदार तक होकर प्रकृति में अद्‌भुत हलचल उत्पन्न कर सकता है ।

महर्षि पातजंलि ने योग दर्शन में लिखा है—

"क्षण तत्क्रमयोः संयमाद विवकजंज्ञानम् ।"

—पातंजलि योग दर्शन ३/५२

अर्थात्—समय के छोटे टुकड़े में ध्यान जमाने से विवेक जन्य ज्ञान मिलता है और संसार की यथार्थ स्थिति का पता चलता है ।

जैन आगमों में भी बताया है कि संसार की वस्तुस्थिति समय के परमाणु में स्थित होने पर ही पहचानी जा सकती है।

चउव्विहे परमाणु पण्णते तजंहा, द्रव्य परमाणु खेत्त परमाणु, काल परमाणु-भाव परमाणु ।

—भगवती शतक सूत्र २०/५/१२

अर्थात् परमाणु में द्रव्य, क्षेत्र और भाव ही नहीं होता काल या समय की इकाई भी सन्निहित होती है, उस इकाई का बोध होने पर ही संसार का यथार्थ ज्ञान होता है ।

आगे इसी बात को यों स्पष्ट किया है—

कारण मेव तदन्त्यं सूक्ष्मो नित्यश्च भवति परमाणु ।
एक रस गन्ध वर्णो द्विस्पर्शः कार्य लिंगश्च ॥

—भगवती शतक १८ उ. २

अर्थात्—पदार्थ के निर्माण का अन्तिम कारण परमाणु है, वह सूक्ष्मतम है, भूत में था वर्तमान में है और भविष्य में भी रहेगा । उसमें एक रस, एक गन्ध एक वर्ण दो स्पर्श तथा कार्यलिंग यानी आँखों से दिखाई न देकर केवल समय की सूक्ष्मतम अवस्था में ध्यान जमाने वाले ज्ञानी ही उसे समझ सकते हैं ।

अभी तक विज्ञान ध्यानावस्थित होकर अन्तःकरण के सूक्ष्म विकास और विश्व को यथार्थ आध्यात्मिक स्थिति का विश्लेषण तो नहीं कर सका, पर जैसे-जैसे समय की इकाई छोटी होती जा रही है विज्ञान भारतीय योगियों के से चमत्कार हासिल करता चला जा रहा है, अभी तक प्रयुक्त समय की सबसे छोटी इकाई सेकण्ड थी । सेकण्ड का अर्थ दिन का १/८६४००वाँ हिस्सा । पर यह माप सही है इसमें वैज्ञानिकों को सन्देह है । दिन-रात की माप सूर्योदय और सूर्यास्त से लेते हैं, पर पृथ्वी की गति अनियमित होने के कारण हर १०० वर्ष पीछे सेकण्ड में १/१०००वें हिस्से के बराबर अन्तर आ जाता है । युगों की गणना में यह अन्तर बहुत भारी पड़ेगा और उससे घटनाओं का कभी भी सच-सच नहीं जाना जा सकेगा क्योंकि परमाणुओं का कम्पन तो इतना सूक्ष्म है कि वह एक सेकण्ड में अरबों बार काँप जाता है । तब सें एक सेकण्ड को हजारवें भाग "मिली सेकण्ड" दस लाख वें भाग "माइक्रोसेकण्ड" में बाँटा । उससे भी काम चलता न दीखा तो एक सेकण्ड को एक अरब हिस्सों में बाँटकर नेनो सेकण्ड की कल्पना की गई । "नेनों सेकण्ड" का अर्थ यह हुआ कि यदि हम एक "नानों सेकण्ड" में एक कदम चल सकें तो पृथ्वी की भूमध्य रेखा क्षेत्र में एक सेकण्ड में १० बार परिक्रमा कर सकते हैं अर्थात् सारी पृथ्वी में कहाँ क्या हो रहा है, उन सब बातों को एक सेकण्ड में दस बार स्पष्ट आँखों से देख सकते हैं, यह एक सिद्धान्त है जो केवल ज्ञान से ही सम्भव है ।

स्थूल दृष्टि से भी समय की पकड़ हमें उन्हीं आश्चर्यों की ओर ले जा रही है । अब प्रकाश को भी परमाणुओं में विभक्त किया जा रहा है । प्रकाश-अणुओं को "फोटोन्स" कहते हैं और अनुमान है कि वे सेकण्ड के एक लाखवें हिस्से के भी करोड़वें अंश में सीमित हैं । इसी बात को यदि यह कहें कि ध्यान की प्रगाढ़ अवस्था प्रकाश की ही अनुभूति है और संसार केवल प्रकाश की लहरों का खेल है तो किसी को आश्चर्य नहीं होना चाहिए । समय की इस सूक्ष्मतम अवधि को "पिंको सेकण्ड" कहा जाता है । "नीयोडाइमियम ग्लास लेसर" के भीतर प्रकाश कणों के प्रवेश से इन छोटे टुकड़ों को प्राप्त किया जाता है और उनका उपयोग यहाँ तक हो सकता है कि एक सेकण्ड में ही फुलस्केप के फुलस्केप समाचार हजारों मील दूर सेकण्डों में पहुँचाये जा सकते हैं । एक मिनट के अन्दर ही इस विधि से पेरिस के किसी मरीज की हृदय गति का रेखाचित्र खींचकर वाशिंगटन पहुँचाया जा सकता है और उसका इतने ही समय में इलाज समाप्त करके उसे अच्छा कर घर भी भेज दिया जा सकता है । लेसर किरणों के प्रयोग से संचार-पद्धति में कौतूहलवर्धक परिवर्तन होने की सम्भावना है । यहाँ तक हो सकता है कि लोगों के पास कुछ ऐसे यन्त्र हो जायें जो आकार में १/१० इंच से भी छोटे हों पर उतने में ही वे १.५ करोड़ सूचनाएँ एकत्र कर रखें और जब चाहें तब बात की बात में किसी को भी पहुँचा दें । यह सब ध्यान से प्राप्त होने वाली सिद्धियों की ही पुष्टि करते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अमेरिका की "वेस्टर्न इलेक्ट्रॉनिक कम्पनी ऐसे यन्त्र तैयार कर रही है, जो केवल बिन्दु के ही आकार के हों और सुई के छेद में ही जिन्हें आसानी से फिट किया जा सकता है । एक ऐसे धातु रहित तत्व नं. १४ के बने सिलिकन डाइड्स का उत्पादन किया जा रहा है, जो आधे "नेनों सेकण्ड" में ही विद्युत यन्त्र चालू कर सकेंगे अर्थात् जितनी देर में अब विद्युत चालू की जाती है, उतनी देर में तो १ वर्ष में पूरे होने वाले कामों को हल किया जा सकता है ।" लोगों की बौद्धिक क्षमताएँ बदली जा सकती हैं, शरीर बदले जा सकते हैं, पलक झपकते ही रोग अच्छे किए जा सकते हैं । वह सब आश्चर्य दिखाये जा सकते हैं, जिनकी आशा केवल एक भारतीय योगी या सिद्ध महात्मा से ही की जा सकती है ।

विज्ञान की यह उपलब्धियाँ अभी तक माध्यम रहित नहीं हैं तथापि उनसे यह निश्चित हो चुका अवश्य है कि समय के छोटे से छोटे अंश में महाकाल घुसा बैठा है । भारतीय योगियों ने समय से परे की अवस्था तक पहुँच कर ही सत्ताईस चतुयुर्गियों के ११६६४०००० वर्ष, सतयुग के १७२८००० वर्ष, त्रेता के २९६००० वर्ष, द्वापर के ८६४००० वर्ष और कलयुग के ५०३० वर्षों का इतिहास जानकर एक-एक मन्वन्तर के घटना चक्रों का इतिहास लिख दिया था, जो आज भी ठीक-ठीक उतरते चले जा रहे हैं । लोगों के आचार-विचार, खान-पान, रहन-सहन, राजनीति से लेकर सामाजिक परिस्थितियों तक के सारे भविष्य फल करोड़ों वर्ष पूर्व लिख दिए गए थे, जो आज ऐसे सच दिखाई दे रहे हैं, मानों उन लोगों ने यह सब अपनी आँखों से देखा हो ।

सारा संसार महाकाल के गर्भ में चल रही घटनाओं का नाटक मात्र है, हम जब तक घटनाओं से प्रभावित होते हैं, तब तक समय से परे की उस चिन्मय अवस्था को समझ नहीं पाते, इसीलिए संसार का यथार्थ भी हमारे सामने प्रकट नहीं हो पाता । यदि द्वारा समय की स्थिति से ऊपर उठने का प्रयास करें तो विश्वव्यापी ज्ञान चेतना में घुल-मिलकर हर समय के छोटे से छोटे अंश से लेकर महाकाल तक की घटनाओं के ऐसे ही ज्ञाता हो सकते हैं, जैसे कभी हमारे पुरखे हुआ करते थे ।

इन सबसे बड़ा लाभ उस अवस्था में आत्म-निर्माण या ब्रह्म प्राप्ति का होगा जिसे जाने बिना जीव अपने सांसारिक बन्धनों से मुक्त नहीं हो पाता ।

विराट की एक झाँकी

कहने को तो यह संसार आश्चर्यों से भरा पड़ा है, किन्तु यहाँ का सबसे बड़ा आश्चर्य स्वयं मनुष्य है । यह बात और है कि वह अपने को सामान्य मानता है, पर वास्तविकता यह है कि वह प्रकृति के रहस्यों से भी कई गुना अधिक विलक्षण है । जिस दिन वह अपने इस पक्ष को उद्घाटित कर लेगा, उस दिन उसके लिए कुछ भी जानना शेष नहीं रहेगा । फिर प्रकृति की हर रोमांचकारी अद्भुत घटना उसके लिए सामान्य बन जायेगी । तब न इस सृष्टि में कुछ आश्चर्य रहेगा, न अचम्भा, जिसकी कि इन दिनों हम चर्चा करते हैं ।

स्पेन में मैड्रिड के निकट एक शहर है—"चट्टानों का शहर" जो लगभग ५०० एकड़ भूमि में फैला हुआ है । इसका नाम शहर अवश्य है, पर यहाँ हैं, सिर्फ चट्टान ही चट्टान । इस चट्टानी शहर का सबसे बड़ा आकर्षण और आश्चर्य का केन्द्र है इसका विशाल निहाईनुमा शैलखण्ड । इस प्रस्तर खण्ड का ऊपरी भाग निहाई की तरह काफी चौड़ा है और निचला भाग धीरे-धीरे पतला होते-होते एकदम नुकीला हो गया है । आश्चर्य की बात तो यह है कि यह ऊँची और विशाल चट्टान अपने नुकीले भाग की ओर से नाचते लट्टू की तरह सीधी खड़ी है । अब तक वैज्ञानिक इसके सम्बन्ध में यह बताने में सर्वथा असमर्थ रहे हैं कि अपनी नोक पर टनों भारी वजन को सन्तुलित कर सैंकड़ों वर्षों से प्राकृतिक आपदाओं को झेलते हुए स्वयं को इस तरह सन्तुलित कैसे बनाये हुए है ?

इसी प्रकार उत्तरी आर्जेण्टीना की एण्डिन पहाड़ियों की तराई में "वैली ऑफ मून" नामक एक घाटी है । यहाँ एक-दूसरे पर रखे बड़े-बड़े पत्थरों से कई ऐसे विशाल और ऊँचे स्तम्भ बन गए हैं, जिसे देखकर ऐसा लगता है कि किसी कुशल इंजीनियर ने बड़ी दक्षतापूर्वक एक के ऊपर एक चट्टान रख कर इन्हें निर्मित किया हो, पर सच्चाई यह है कि इन प्रस्तर स्तम्भों में रखी चट्टानें इतनी विशाल हैं कि आज के विकसित विज्ञान द्वारा भी इन्हें एक-दूसरे के ऊपर रख कर इतना ऊँचा स्तम्भ बनना सम्भव नहीं । फिर प्रकृति ने इसका निर्माण क्यों व कैसे किया ? यह सवाल आज भी अनुत्तरित है ।

काला सागर के तट पर बुल्गारिया के प्रमुख बन्दरगाह वारना से करीब १२ मील दूर आठ सौ मीटर लम्बा और सौ मीटर चौड़ा एक ऐसा क्षेत्र है, जिसमें तीन सौ पत्थर के एक जैसे ऐसे स्तम्भ खड़े हैं, जो बिल्कुल वर्तुलाकार हैं । इनमें से कुछ टूट कर गिर गए हैं, पर अधिकांश अब भी खड़े हैं । इनकी ऊँचाई ६-१२ फुट तक है । सर्वथा मिट्टी वाली जमीन में इस प्रकार के पत्थर के स्तम्भ धरती फोड़ कर कैसे निकल आये, यह भूगोलवेत्ताओं और पुरातत्व विशेषज्ञों के लिए अब भी रहस्य का विषय बना हुआ है ।

मध्य मोरक्को में डेड्स नदी एक बिल्कुल ही सँकरी घाटी से होकर बहती है । घाटी नदी के दोनों किनारों पर दो विस्तृत शैल खण्डों के कारण बन गई है । इन शैल खण्डों के मध्य एक लम्बी चट्टान इस प्रकार लगी हुई है, जैसे खराद की मशीन में खरादी जाने वाली लकड़ी फँसी होती है । बरसात में इस नदी का जल स्तर इस घाटी में इतना ऊँचा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हो जाता है कि वह इस चट्टान को छूने लगता है और न सिर्फ छूता है, वरन् तीव्र जल-प्रवाह उसे मशीन में फँसी खराद की लकड़ी की तरह नचाने लगता है, जिससे वहाँ पानी खूब ऊँचाई तक उछलने लगता है । जिन दिनों यह दृश्य उपस्थित होता है, उन दिनों दर्शकों की भारी भीड़ उस मनोरम दृश्य को देखने के लिए वहाँ उपस्थित रहती है । अभी तक वैज्ञानिक इसका रहस्य नहीं जान पाये ।

हार्ज नामक जर्मनी के उत्तर में स्थित पर्वत शृंखला में एक ऐसा झरना है, जो समय-समय पर अपना रंग बदलता रहता है । कुछ समय इससे निकलने वाले पानी का रंग लाल होता है, तो कुछ समय बाद बदल कर काला, फिर नीला, तत्पश्चात पुनः लाल हो जाता है । इससे निकलने वाला जल इतना गर्म होता है कि शरीर पर पड़ने से फफोले हो जाते हैं । इसका यह स्वभाव तो समझ में आता है पर गिरगिट की तरह यह रंग किस रासायनिक प्रक्रिया के कारण बदलता है यह समझ से परे है ।

वस्तुतः जो हमें ज्ञात नहीं है व विचित्र-विलक्षण जान पड़ता है, उसके मूल में उस कुशल कलाकार की सृजेता की विविधता से भरी संरचना है । यदि उस विराट स्तर पर दृश्यमान विलक्षणता से ही हमें उस विराट, अचिंत्य, अगम्य का साक्षात्कार हो सके तो जीवन लक्ष्य पूरा हो जाय ।

नित्य निरन्तर परिवर्तनशील यह सृष्टि

संसार बाह्य दृष्टि से कितना सुहाना व आश्चर्यमय प्रतीत होता है । शैशवकाल से जरावस्था तक इसे देखते नहीं अघाते । इतना ही नहीं देखते-देखते ऐसा अपनत्व बोध जाग्रत होता है कि इसे शाश्वत एवं चिर सनातन समझकर सदा अपनाने के लिए लालायित बने रहते हैं, किन्तु यह मोह अपनत्व दर्शाने का भाव उस समय बालु का भीत के सदृश प्रतीत होता है, जब एक-एक करके सारी वस्तुएँ हमें त्यागती हुई चली जाती हैं अथवा हम उन्हें स्वयं त्याग देते हैं । यहाँ तक कि अपना शरीर भी एक न एक दिन छूट जाता है ।

परिवर्तनशीलता एवं गति की निरन्तरता ही इस सृष्टि का नियम है । नेत्रों में व्याप्त भ्रम अथवा इनकी सीमित क्षमता के कारण ही हम इस तथ्य से अनभिज्ञ बने रहते हैं । पैरों के नीचे पड़े मिट्टी के कण गतिहीन लगते हैं, पर उनके सूक्ष्मतम घटकों को देखा जाय तो यही स्पष्ट होता है, कि उनमें भी तीव्र हलचल हो रही है । शरीर के गति रहित होने पर भी आन्तरिक संस्थानों के क्रिया-कलाप में रुकावट नहीं आती । प्रत्येक पल लाखों कोषाणु मरते तथा लाखों नये पैदा होकर उनका स्थान ग्रहण करते हैं । नेत्र तो परिवर्तन के स्थूल पक्ष का ही बोध कर पाने में समर्थ हैं । अधिक सूक्ष्म परिवर्तन इस बोध की परिधि में नहीं आते, पर इससे उस सत्यता पर तनिक भी प्रभाव नहीं पड़ता कि सृष्टि के हर छोटे बड़े घटक गतिशील हैं तथा उनमें निरन्तर परिवर्तन हो रहे हैं ।

वस्तुतः स्थिरता यहाँ है भी नहीं । जड़ हो या चेतन सभी गतिमान हैं । जिन्हें हम जड़ कहते हैं, स्थिर मानते हैं । उनके भीतर भी स्थिरता नहीं है । प्रत्येक पदार्थ के अणु परमाणुओं में विद्यमान इलेक्ट्रॉन एक निश्चित गति से निर्धारित कक्षा में परिभ्रमण कर रहे हैं । इन सूक्ष्मतर इलेक्ट्रॉनों से लेकर अपने सौर-मण्डल के भारी भरकम सदस्यों तक की यही गतिशील स्थिति है ।

शरीर जिसको हम सर्वाधिक अपना मानते हैं । उस पर गौरव करते तथा सनातन शाश्वत मानते रहते हैं । इसी की बलिष्ठता स्वस्थता पर अभिमान करके दूसरों पर रौब गाँठने परेशान करने जैसी हरकतें भी करते हैं, पर पालने में पराश्रित हो झूलने वाला शैशवकालीन शरीर झुकी कमर वाला बनकर लकुटी ग्रहण कर पुनः पराश्रित की स्थिति में जा पहुँचता है, पता ही नहीं चलता । यह विचित्र, समझ में न आने वाला परिवर्तन अकस्मात होता हो ऐसा नहीं है । यह क्रम प्रतिपल प्रतिक्षण अबाध गति से चलता रहता है ।

शरीर ही क्या, जिस धरती माँ की गोदी में यह पलता, बढ़ता, मरता है, उसकी भी यही स्थिति है । अपनी पृथ्वी को जिस रूप में हम देखते हैं कभी ऐसी न थी । सतत परिवर्तन की परिणति स्वरूप इसका वर्तमान स्वरूप बना है । जन्म से लेकर अब तक आकाशीय धूल, उल्का खण्डों के पृथ्वी पर गिरने के कारण एक लाख पौण्ड प्रति वर्ष के क्रम से उसका भार बढ़ता आ रहा है और क्रमशः पृथ्वी भारी ही होती चली आयी है ।

प्राप्त शिला लेखों एवं पुस्तकों के आधार पर पुरातत्वविदों तथा इतिहासवेत्ताओं ने गवेषणा की है कि धरती पर सामाजिक एवं राजनैतिक इतिहास का प्रारम्भ लगभग ईसा से १०,००० वर्ष पूर्व हुआ था । जबकि धरती की पर्तों के नीचे प्राप्त विविध प्राणियों एवं वनस्पतियों के आधार पर जीवाश्म शास्त्रियों का मानना है कि पृथ्वी का इतिहास ५२ करोड़ वर्ष पूर्व से प्रारम्भ हुआ । हिमालय से प्राप्त वनस्पतियों एवं प्राणियों के अवशेष यह बताते हैं कि यह सारा प्रदेश पहले समुद्र में डूबा हुआ था अर्थात् जहाँ आज नगाधिराज हिमालय के विशालकाय उत्तुंग शिखर हैं कभी वहाँ विशाल वारिधि के प्रचण्ड लहरों का कोलाहल गूँजता होगा । भू-गर्भ विशेषज्ञों का कहना है कि दो टापुओं को छोड़कर सम्पूर्ण यूरोप खण्ड लहराता सागर था । एशिया का रूसी भू-भाग, इण्डोनेशिया, दक्षिण अरब, दक्षिण भारत, आस्ट्रेलिया के पश्चिमी एवं पूर्वी किनारे को छोड़कर सम्पूर्ण यूरोप, एशिया, आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैण्ड समुद्र के तल में समाए थे । चीन का कुछ हिस्सा पूर्व साइबेरिया से होकर अमेरिका के पश्चिमी भाग से जुड़ा था ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस तरह के परिवर्तनों के महत्त्वपूर्ण कारणों में ज्वालामुखियों का आतंक, समुद्री उथल-पुथल आदि प्रमुख हैं । जल के स्थान पर थल एवं थल के स्थान पर जल का नर्तन सतत चलता रहा है । इन सारे परिवर्तनों से यही सुस्पष्ट होता है कि ब्रह्माण्ड के समूचे अवयव नित्य निरन्तर गतिशील हैं । इनमें नित्यता, स्थिरता का भान होना हमारा अपना भ्रम है । वैज्ञानिकों का मानना है कि मात्र पृथ्वी ही नहीं उसके पिण्ड टुकड़े भी चल रहे हैं । वे अनेकों बार एक-दूसरे से अलग हुए, अनेकों बार जुड़े । सप्त महाद्वीपों में पृथ्वी का विभाजित होना इन टुकड़ों के गतिशील होने का परिचायक है । नवीन शोध निष्कर्षों के अनुसार ये महाद्वीप भी अपने स्थानों से खिसक कर स्थान बदल रहे हैं । विज्ञान की यह शाखा जिसके अन्तर्गत विभिन्न भू-भागों की गति का अध्ययन किया जाता है ग्लोबल प्लेट टेक्टोनिक्स है । इस विधा के वैज्ञानिकों ने यह भी बताया है कि ठोस दिखने पर भी पृथ्वी ठोस नहीं है । इसके केन्द्र में अतिशय गाढ़ा तरल पदार्थ है । जिसकी सतह पर ६५ कि. मी. से ९५ कि. मी. तक की मोटी परत के दस टुकड़े तैरते रहते हैं । इस शाखा में अध्ययन करने वाले वैज्ञानिकों का कहना है कि २० करोड़ वर्ष पूर्व में दसों टुकड़े आपस में मिले थे तथा एक ही महाद्वीप था । गति के कारण कालान्तर में सात द्वीपों में विभाजित हो गया । ये भी स्थिर नहीं है ये १ सेमी. से लेकर १५ सेमी. तक प्रति वर्ष में विभिन्न दिशाओं में खिसकते जा रहे हैं । यूरोप और उत्तरी अमेरिका एक-दूसरे से प्रति वर्ष २.५ सेमी. दूर होते जा रहे हैं । कभी एटलाण्टिक नामक एक विकसित महाद्वीप धरती पर था । उसके विलुप्त हो जाने से ही समुद्रों व महाद्वीपों का वर्तमान स्वरूप बना ।

गति एवं परिवर्तन का यह क्रम पिण्ड एवं ब्रह्माण्ड में सर्वत्र चल रहा है । कितने ही जीव नित्य पैदा होते और कितने ही नित्य मरते हैं । कितने ही पदार्थों का विखण्डन होता, कितने ही आपस में सम्मिलित होते हैं । परिवर्तन की यह शृंखला सर्वत्र परिव्याप्त है । तारा-ग्रह-उपग्रहों में भी कितने ही अपना स्थान बदलते टूटकर नष्ट-भ्रष्ट होते रहते हैं । आवश्यक नहीं कि उन सभी की जानकारी मनुष्य को हो जाय । अभी तो न जाने कितने ग्रह नक्षत्र ऐसे हैं जिनके अस्तित्व का हमें भान भी नहीं है । वैज्ञानिक कहते हैं कि मरक्यूरी ग्रह जो सूर्य की ५ करोड़ ८० लाख किलोमीटर दूरी पर परिक्रमा लगाता है, सबसे तेज गति से अर्थात् ब्रह्माण्ड में सभी ग्रहों उपग्रहों में तीव्रतम गति से एक लाख ७२ हजार किलोमीटर प्रति घण्टे की चाल से घूमता है । यह तो ज्ञात ब्रह्माण्ड के आँकड़े हैं । इससे भी परे वह है, जो अविज्ञात है ।

परिवर्तन के ये नियम मनुष्य पर भी लागू हैं । एक हालत में न तो मानव की शारीरिक स्थिति रहती है और न ही प्रकृति की । जन्मा हुआ शिशु नित्य नये दौर से गुजरता तथा विकास की मंजिल पूरी करता है । शारीरिक परिवर्तनों की तरह मनःस्थिति में भी अवस्था के अनुरूप परिवर्तन होते रहते हैं ।

परिवर्तनशीलता की इस प्रक्रिया को प्रायः सभी जीव सहर्ष स्वीकारते तथा उसके अनुरूप अपनी गतिविधियों का ताल-मेल बिठाते हैं । मनुष्य ही है जो परिस्थिति विशेष से आसक्ति व मोह की डोर में अपने को जकड़े रहता है । इसके परिवर्तित होने पर आवश्यक समायोजन न कर रोता-कलपता रहता है । स्थिरता गतिहीनता तो तमोगुण व मृत्यु का परिचायक है । इसी कारण प्राचीन तत्वान्वेषियों ने चरैवेति-चरैवेति का सूत्र प्रतिपादित किया । आत्मक्रम में बँधी इस परिवर्तन प्रक्रिया को स्वीकारने तथा उसके अनुरूप अपने जीवन को ढालने गतिविधियों का निर्धारण करने से ही जीवन के लक्ष्य उत्कर्ष को पा सकना सम्भव है । सतत चलना गतिशील सक्रिय बने रहना ही जीवन है ।

परलोक और पृथ्वी : कितने दूर कितने पास

२५ अगस्त, १९६६ को नार्थडिकोटा में एक वायुसेना के अधिकारी को रेडियो तरंगों के द्वारा सन्देश भेजने में एकाएक बाधा अनुभव हुई । अधिकारी उसका कारण समझ नहीं पा रहा था, तभी एक-दूसरे ऑफिसर ने आकर बताया कि उसने एक उड़नतश्तरी यू. एफ. ओ. (अन-आइडेन्टीफाइड ऑब्जेक्ट) देखी है । उससे गहरे लाल रंग का प्रकाश निकल रहा था । वह कभी ऊपर, कभी नीचे उड़ रही थी । इसी समय एक राडार ने भी १००००० फीट ऊपर उड़ते हुए, एक गोल तश्तरी पर्दे पर (फ्लैश) देखी । उड़नतश्तरी जब तक दिखाई देती रही, तब तक संचार-व्यवस्था (सिगनल-सिस्टम) बिल्कुल ठप्प रही, इसके बाद सन्देशों का आवागमन फिर प्रारम्भ हो गया ।

अब तक यह उड़नतश्तरी दक्षिण की ओर मुड़ चुकी थी और यह अनुमान था कि कोई १५ मील की दूरी पर वह पृथ्वी पर उतर गई है, इसलिए अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित वायुसेना का एक कुशल दस्ता (स्क्वेड्रेन) उधर दौड़ाया गया, किन्तु उनके वहाँ पहुँचने तक ८ मिनट में ही वह गोला न जाने कहाँ अदृश्य हो गया । इसी बीच दूसरी तश्तरी उत्तर की ओर दिखाई दी, उसे भी राडार ने देखा पर जब तक दस्ता उधर दौड़े वह भी गायब हो गई ।

३ अगस्त, १९६५ की बात है, सांता आना (कैलिफोर्निया) के पास एक उड़नतश्तरी बायीं ओर से आयी और सड़क पर देर तक इस तरह चक्कर लगाती रही, मानो वह किसी वस्तु को ढूँढ़ रही हो, फिर दाएँ मुड़ी और खेतों का चक्कर लगाया । सड़क निरीक्षक रेक्स हेफ्लिन उड़नतश्तरी की इन सारी हरकतों को देख रहा था । उसने इन दृश्यों को अपने कैमरे में खींच लिया । उसका एक चित्र

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

धर्मयुग के १ दिसम्बर १९६८ के अंक में प्रकाशित भी हुआ है । उसमें सड़क के बायीं ओर ऊपर उड़नतश्तरी साफ दिखाई देती है ।

५ अगस्त, १९५३ में एक और आश्चर्यजनक घटना ब्लैकहाक, साउथ डेकोटा में घटी । चालकों ने रात में आकाश की ओर अद्‌भुत वस्तुएँ देखीं । वायुसेना के एक अड्डे पर राडार ने भी इन उड़नतश्तरियों को देखा । वायुयान चालक ने बताया कि वह सबसे अधिक चमकने वाले तारे से भी अधिक चमकदार कोई वस्तु देख रहा है । वह वायुयान से दुगुनी गति (स्पीड) से दौड़ रही थी । वायुयान के पीछा करते ही वह कहीं अदृश्य हो गई ।

इसी तरह ६ नवम्बर, १९५७ के दिन ओटावा से १०० मील दूर वास्काटांग झील के पास एक उड़नतश्तरी रात के कोई ९ बजे आयी, उसके कारण रेडियो की शार्ट और मीडियम दोनों लहरें बन्द हो गई थीं । इस उड़नतश्तरी के दर्शकों में एक इलेक्ट्रॉनिक्स इन्जीनियर भी था, उसने अपने रिसीवर को चालू करना चाहा पर उसे तीव्र किट-किट की आवाज के अतिरिक्त कुछ सुनाई न पड़ा । वह आवाज उड़नतश्तरी के माध्यम से किसी अन्य लोक के नियन्त्रण केन्द्र का संकेत थी या और कुछ, उसकी कुछ भी जानकारी नहीं है ।

४ अक्टूबर, १९६७ को एक शाम को कनाडा के समुद्रीतट पर 'शागहार्बर' के सैकड़ों निवासियों ने एक विचित्र वस्तु आकाश से निकल कर आते देखी । उसकी चमकदार किरणें पीछे एक कतार-सी छोड़ती आ रही थीं । इसके बाद उसे लोगों ने समुद्र की सतह पर उतरते देखा । किरणों की कतार समुद्र में जाकर विलीन हो गई । २० मिनट के भीतर ही पुलिस कर्मचारी घटनास्थल पर पहुँचे और उड़नतश्तरी के धँसने वाले स्थान की खोज करने लगे ।

एक जहाज और आठ नावें भी उस खोज में सम्मिलित हुईं । 'सर्चलाइट' के तेज प्रकाश में केवल समुद्र के एक स्थान से पीले रंग का झाग निकलता दिखाई दिया । बहुत से बुलबुले भी निकल रहे थे । ऐसा वहाँ पहले कभी नहीं देखा गया था । फिर भी उड़नतश्तरी का कोई प्रकाश नहीं दिखाई दिया । दो दिन तक नौ सैनिक गोताखोर गोता लगाते रहे पर वहाँ किसी वस्तु या उड़नतश्तरी का कोई प्रमाण नहीं मिला ।

हैसलबेक जर्मनी का वह जंगली हिस्सा जहाँ अमेरिका और रूस की सीमाएँ मिलती हैं, ११ जुलाई, १९५२ में एक विचित्र घटना घटित हुई । एक उड़नतश्तरी, जिसका व्यास कोई ८ मीटर होगा, के पास दो चमकीले लबादे पहने, छोटे-छोटे मनुष्य खड़े थे । वहाँ का एक निवासी अपनी ११ वर्षीया पुत्री के साथ जा रहा था । उसे देखते ही वह लबादाधारी उड़नतश्तरी में समा गए और देखते-देखते अन्तरिक्ष में विलीन हो गए ।

एनिड ओकलाहोमा के पुलिस स्टेशन में २९ जुलाई, १९५२ को एक आदमी ने प्रवेश किया । वह डर के मारे थर-थर काँप रहा था । उसने अपना नाम सिड यूवैक बताया । वह इतनी बुरी तरह भयग्रस्त था कि कोई स्वप्न में भी उसके अभिनय करने की बात नहीं सोच सकता था । उसने बताया कि एक उड़नतश्तरी उसका अपहरण करना चाहती थी वाइसा और वाकोमिस के मध्य ८१ हाइवे पर वह अपनी कार से जा रहा था कि एक जबर्दस्त उड़नतश्तरी बड़े वेग से कार के ऊपर गोता-सी लगाती हुई झपटी । उस झपट के कारण हवा का इतना तीव्र झोंका आया कि कार थपेड़ा खाकर सड़क से बाहर जा गिरी । तश्तरी घड़ी के पेन्डुलम की तरह कार के ऊपर थोड़ी देर तक झूलती रही और फिर एकाएक गायब हो गई ।

काल्पनिक-सी लगने वाली उड़नतश्तरियों की यह घटनाएँ अब तथ्यों के इतने समीप आ गई हैं कि उन्हें झूँठ कहकर टाला नहीं जा सकता, यदि हमारी धरती में विज्ञान का इस तरह विकास हो सकता है कि यहाँ के लोग समुद्र में कूदकर कई दिन तक उसके भीतर रह सकते हैं, खेतों, खलिहानों, सड़कों, शैलाबग्रस्त क्षेत्रों का निरीक्षण कर सकते हैं । आकाश में दूर-दूर तक मंगल, शुक्र और चन्द्रमा की सतह तक अपने स्पूतनिक (रॉकेट) पहुँचा सकते हैं तो इसमें आश्चर्य ही क्या है कि ब्रह्माण्ड के किसी और नक्षत्र में भी इस तरह का वैज्ञानिक विकास हो चुका हो और वहाँ के निवासी भी पृथ्वीवासियों से सम्पर्क या सम्बन्ध स्थापित करना चाहते हों । या फिर यहाँ की परिस्थितियों का अध्ययन कर रहे हों, ताकि एक दिन यहाँ के लोगों से उसे छीन कर अपने यहाँ के निवासियों को लाकर बसा सकें ।

उन्नीसवीं शताब्दी में यह सारी बातें यों ही झुठला देने की हो सकती थीं बीसवीं सदी में नहीं । भगवान राम को विरथ देखकर आकाश से इन्द्र ने विमान भेजा, मातुतिन उसका चालक था । लंका से अयोध्या पहुँचाने के लिए भी पुष्पक विमान आया था । "बैबिलोन के हिब्रू भविष्यवक्ता इजकिल ने भी इस तरह का एक विवरण ईसा से ११३० वर्ष पूर्व लिखा था और बताया कि एक दिन उसने देखा कि एक तूफान-सा उठ रहा है, उसमें एक प्रचण्ड बादल फँस गया है । धीरे-धीरे उस बादल से एक गोला निकला, उसे देखकर आँखें चौंधिया जाती थीं । उसमें से चार जीवित प्राणी निकले । मुझे पृथ्वी से एक चक्का ऊपर उठता भी दिखाई दिया, तब वह चारों जीवित प्राणी भी नहीं दिखाई दिए ।" उसके इस कथन को तब भ्रान्त प्रलाप कहा गया था पर आज का वैज्ञानिक यह मानने को विवश है कि पृथ्वी का सम्बन्ध यदि करोड़ों वर्ष पूर्व से ही लोकान्तरवासियों से रहा हो तो इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है ।

शक्तिशाली दूरवीक्षण यन्त्रों और गणकों द्वारा अनेक वैज्ञानिक अथाह अन्तरिक्ष में तैरते हुए ग्रहों के सम्बन्ध में सही जानकारी प्राप्त करने के लिए दिन-रात जुटे रहते हैं,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अब वे भी मानने लगे हैं कि ब्रह्माण्ड के करोड़ों ग्रहों में से किसी न किसी में बुद्धिमान प्राणियों का आविर्भाव अवश्य है और वे भी हमारी तरह दूसरे जगतों से सम्पर्क स्थापित करने के प्रयत्न में संलग्न हैं । मनुष्य ने स्वयं ऐसे राडार स्टेशन बना लिए हैं, जो दस प्रकाश वर्षों की दूरी तक आपस में संचार सम्बन्ध बनाये रख सकते हैं । यहाँ यह समझ लेना आवश्यक है कि ग्रह-नक्षत्रों की दूरी इतनी अधिक है कि उसे गज, फिट, इंच या मीलों, मीटरों में नहीं नापा जा सकता, वह प्रकाश की गति से नापा जाता है । प्रकाश की एक सेकण्ड में एक लाख छियासी हजार मील है । एक प्रकाश वर्ष की दूरी का अर्थ यह होगा कि उस नक्षत्र तक हमारी पृथ्वी से १ लाख ८६ हजार मील प्रति सेकण्ड की गति से चलने में १ वर्ष लगेगा ।

खगोल शास्त्रियों का मत है कि १० प्रकाश वर्ष की दूरी में कुल १० नक्षत्र ही ऐसे हैं, जिनमें थोड़ा बहुत बुद्धिमान प्राणियों के अस्तित्व की सम्भावना है पर यदि हजार या करोड़ प्रकाश वर्ष की सीमा से ऊपर उठ जाय तो सम्भव है, वहाँ अधिक बुद्धिमान प्राणी मिलें किन्तु पृथ्वीवासी की आयु हजार वर्ष की हो नहीं सकती, इसलिए १ हजार वर्ष की प्रतीक्षा में न तो वहाँ भेजे गए । संकेतों का ही कोई लाभ है और न ही वहाँ जाने का क्योंकि यदि किसी वैज्ञानिक यन्त्र के माध्यम से वहाँ जाने का प्रयत्न किया भी जाय तो मनुष्य बीच में ही कहीं मर जायेगा ।

यही बात दूसरे लोकों से आने वाले प्राणियों के लिए भी है, इसलिए वैज्ञानिक सन्देह करते हैं कि उड़नतश्तरियों के उतरने की बात कुछ बुद्धि संगत है भी या नहीं । पर उन्हीं के कुछ अनुसन्धान इस असम्भावना को भी लगा देते हैं । जीव-जन्तुओं पर किए गए अनुसन्धानों से पता चला है कि यदि किसी प्राणी को जीवित अवस्था में बहुत अधिक ठण्डा कर दिया जाय तो वह एक प्रकार की सुषुप्तावस्था (हाइबरनेशन) में चला जाता है । उस समय इतनी गहरी नींद आ जाती है कि कोई पास से गुजरे तो यही समझेगा कि यह किसी की लाश है, किन्तु सौ वर्ष या उससे भी अधिक समय बाद वह नींद टूटने पर प्राणी बिल्कुल वैसा ही स्वस्थ और थकावट रहित अनुभव कर सकता है, जैसा कि सोकर जागने के पश्चात । यदि इस सिद्धान्त को व्यावहारिक बनाया जा सके तो सम्भव है कि हजार प्रकाश वर्ष की दूरी मनुष्य सुषुप्तावस्था में पार कर ले और किसी नक्षत्र में पहुँचने पर फिर जाग उठे । वहाँ के अध्ययन के पश्चात फिर उसी स्थिति में एक हजार वर्ष बाद पृथ्वी पर लौट आये । तब अधिक से अधिक यही होगा कि यहाँ के लोग कई सभ्यताएँ बदल चुके होंगे और अन्तरिक्षवासी का अपना ही परिचय देना कठिन हो जाय ।

यह समस्या दूसरी तरह से सुलझ सकती है । हमारे शास्त्रों में मनुष्यों की आयु कई-कई हजार वर्ष बतायी गयी है । शंकर की द्वितीय पत्नी उमा ने तो कई हजार वर्ष केवल तपश्चर्या ही की थी । लोग उसे गप्प कहते हैं पर आज का वैज्ञानिक वह भूल नहीं करना चाहता । वह मानता है कि वृद्धावस्था एक रोग है और उसे दूर किया जा सकता है । जीव कोशिका पर चल रहे अनुसन्धान एक दिन मनुष्य की आयु को इच्छानुवर्ती बना सकते हैं, अब इसमें सन्देह नहीं रह गया, श्रम और समय ही अपेक्षित रहा है ।

अन्तरिक्ष यानों से रेडियो सन्देश प्राप्त करने में जो समय लगता है, उसे बहुत कम करने के लिए वैज्ञानिक किसी ऐसे 'क्रिस्टल' की खोज में हैं, जो 'मन' की गति से काम कर सकता हो । उस अवस्था में यह देरी सिकुड़ कर इतनी रह जायेगी, जितनी परस्पर बातचीत में होगी । किसी ऐसे तत्व की सम्भावना से वैज्ञानिक इन्कार नहीं करते । वैज्ञानिकों ने उसकी पुष्टि में आपेक्षिक तीव्र गति (रिलेटिव वेलोसिटी) का एक सिद्धान्त भी खोज लिया है, उसके अनुसार जो रेडियो सन्देश किसी स्थान को पहुँचाने में या कोई वस्तु अन्य ग्रह में पहुँचाने में दस हजार वर्ष लेती हो वह केवल २० वर्ष में ही पहुँचाई जा सके । यद्यपि ब्रह्माण्ड की अनन्तता और असीमितता के आगे यह आपेक्षिक तीव्र गति भी बहुत न्यून है, पर उससे इस सम्भावना की पुष्टि तो हो ही जाती है कि ऊपर ब्रह्माण्ड के किसी नक्षत्र में पहुँचने के लिए समय और गति को नियन्त्रित और आपेक्षित बनाया जा सकता है ।

इस प्रयास में बहुत कुछ सहयोग ब्रह्माण्ड भी देगा । हमें यह पता है कि पृथ्वी एक भयंकर गति से घूमती है और सूर्य का भी चक्कर लगाती है । सूर्य स्वयं भी भ्रमण करता है और अपने सौर-मण्डल के दूसरे नक्षत्रों को भी चक्कर लगाने के लिए विवश करता है । सौर-मण्डल में चक्कर काटते हुए नक्षत्र सामूहिक रूप से किसी और दिशा में आगे बढ़ रहे हैं । अनुमान है कि वह किसी अन्य नक्षत्र का चक्कर काटता है । ऐसे-ऐसे अनेक सौर-मण्डल परिक्रमा करने में लगे हुए हैं । परिक्रमाशील नक्षत्र की ओर उड़ने वाला पृथ्वी के यान को गणित के ऐसे सिद्धान्त के सहारे भेजा जाना सम्भव है, जिससे आधी दूरी तो वह चले और शेष आधा भाग वह नक्षत्र चलकर पास आ जाय जिसमें उसे जाना है ।

इस सब सम्भावनाओं के व्यक्त करने का एक ही कारण है और वह यह है कि यदि इन सब सम्भावनाओं का विकास किसी अन्य नक्षत्र ने कर लिया होगा और वे पृथ्वी से सम्पर्क साधना चाहते होंगे तो वे निश्चय ही उड़नतश्तरियों में बैठकर पृथ्वी में आते होंगे । इसलिए उड़नतश्तरियों के इन प्रसंगों को मिथ्या नहीं कहा जा सकता ।

अपनी-अपनी जानकारी गुप्त रखने की भी एक परम्परा वैज्ञानिक देशों में है । इसलिए विज्ञान के जो आविष्कार और तथ्य सामने आ चुके हैं, उससे अधिक वैज्ञानिकों और राजनीतिज्ञों की डायरियों में गुप्त हैं, उन सबकी जानकारी चौंकाने वाली हो सकती है । वह जैसे-जैसे सामने आती जायेंगी, यह सिद्ध होता जायेगा कि सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

ग्रह-नक्षत्र एक ही कुटुम्ब के सदस्य हैं, उनमें उसी तरह सम्बन्ध स्थापित किया जा सकता है, जैसे एक गाँव वाले दूसरे गाँव से रखते हैं ।

अर्जेन्टीना के शोध-विद्वान डॉ. पेड्रो रोमनुक ने ब्यूनस एरस में लगभग इसी तथ्य को प्रमाणित करते हुए बताया कि रूस और अमेरिका दोनों के पास दूसरे ग्रहों से आयी हुई टूटी-फूटी उड़नतश्तरियाँ हैं । वह कैनेडी विश्वविद्यालय के अन्तर्गत—'बायोसाइको सिन्थेसिस' भाषण-माला के उद्घाटन समारोह में बोल रहे थे । उन्होंने रहस्योद्घाटन करते हुए कहा—"रूस को एक 'नर्स-शिप' मिला है, जिसका अध्ययन वहाँ के विद्वानों ने किया है पर उन्होंने उस सम्बन्ध में कोई बात नहीं बतायी । इसी प्रकार अमेरिका को अलामो गोर्डो, न्यूमैक्सिको क्षेत्र में एक उड़नतश्तरी मिली ।

उत्तर पश्चिमी अमेरिका वेधशाला के निर्देशक श्री सिलास न्यूटन ने अमेरिकी वायु गुप्तचरी केन्द्र को इसकी सूचना दी । उन्होंने यह भी बताया कि इस उड़नतश्तरी में दरवाजों की जगह बाहर निकलने के छोटे-छोटे छेद बने हुए हैं । इनमें से केवल छोटे आकार के प्राणी गुजर सकते हैं । स्वच्छ और कड़ी धातु की इस उड़नतश्तरी में छोटे आकार के ६ शव भी पाये गए । इनमें पाये गए प्राणियों का आकार-प्रकार मनुष्यों से मिलता-जुलता है । ऐसा लगता है, उड़नतश्तरी का द्वार खराब हो गया तो वायुमण्डलीय प्रभाव से उनकी मृत्यु हो गई । यह अन्तरिक्ष यान सौर-शक्ति से चलता है । इन प्राणियों ने किसी धातु का पारदर्शी नीला वस्त्र-सा धारण किया हुआ था, इस धातु पर किसी कैंची या ज्वलनशील टार्च का भी कोई प्रभाव नहीं पड़ता ।"

डॉ. रोमनिक ने उस सौर-शक्ति के बारे में विस्तार से कुछ नहीं बताया पर अब यह निश्चित हो चुका है कि कभी यहाँ जीवित प्राणी दूसरे नक्षत्रों से अवश्य आते रहे होंगे और उनका पृथ्वीवासियों से घनिष्ठ सम्बन्ध भी रहा होगा इस सम्बन्ध में कुछ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण घटनाएँ इस प्रकार हैं—

संस्कृत में एक "खेट" शब्द आता है जिसकी शब्द व्युत्पत्ति = खे + अटनम्, खे अर्थात् आकाश, अटनम् अर्थात् भ्रमण करना । खेट-आकाश-भ्रमण करना इसी शब्द से खेट शास्त्र बना है जिसका अर्थ विशुद्ध रूप से यह होता है कि प्राचीन काल में भारतवर्ष में विमानन एक समृद्ध विद्या थी और उसके द्वारा यहाँ के लोग सुदूर अन्तरिक्ष यात्राएँ कुशलतापूर्वक किया करते थे । भारद्वाज कृत "यन्त्र सर्वस्व" के २८वें वैमानिक प्रकरण में इस बात की विस्तृत व्याख्याएँ दी हैं जिनका उन औपनिषद तथा पौराणिक आख्यानों से पूरी तरह मेल खाता है जिनमें सुदूर ग्रहों के बुद्धिमान प्राणियों तथा वहाँ की स्वर्गीय परिस्थितियों का उल्लेख मिलता है ।

इसका यह अर्थ हुआ कि जीवन मात्र पार्थिव नहीं वह अनन्त है एक क्षुद्र ग्रह की प्रकृति और परिस्थितियों से उसे बाँध देना एक प्रकार से उसका अपमान है जितना जगत विराट् है हमारा जीवन भी उतना ही व्यापक हो तो ही इस देवोपम सौभाग्य की सार्थकता मानी जायेगी । हमारा चिन्तन नितान्त भौतिकवादी न होकर आध्यात्मिक रहना चाहिए यह सम्भव है कि हम उस उद्देश्य को समझ पायें कि मनुष्य जीवन का लक्ष्य और उपयोग क्या हो सकता है ।

यह मान्यता गलत है कि जीवन मात्र पार्थिव तत्वों की रासायनिक प्रक्रिया मात्र है । ऐसा रहा होता तो यह मानते हुए भी कि प्रत्येक ग्रह की प्रकृति के अनुरूप ही मानव शरीर और उसकी बौद्धिक रचना भी होगी । जहाँ तक शारीरिक बनावट की बात है वह तो देशान्तरों के जलवायु, ऋतु आदि के परिवर्तन के साथ इस पृथ्वी में ही बदली हुई मिलती है । एक ही पृथ्वी के मनुष्य भारतीय, चीनी, तिब्बती, अमरिकन तथा जर्मन इन सब के रूपरंग आकृति, प्रकृति में विलक्षण वैषम्य पाया जाता है, किन्तु बौद्धिक क्षमताओं में ऐसा कोई अन्तर दीखता नहीं । शिक्षा-दीक्षा के अभाव में या न्यूनाधिक्य के कारण यह अन्तर तो हो सकता है, किन्तु विचार सत्ता सबमें समान होती है । इसी तरह अन्य ग्रहों की पार्थिव रचना भले ही कैसी ही हो पर ऐसी प्रामाणिक घटनाएँ अक्सर घटती रहती हैं जिनमें इन तथ्यों की पुष्टि होती रहती है कि अन्तरिक्ष के कोने-कोने में बौद्धिक क्षमताएँ विद्यमान हैं । इस तथ्य का भी प्रतिपादक है कि जिस तरह पदार्थ सत्ता का एक स्थान से विस्फोट हुआ है । उसी तरह विचार सत्ता की भी एक केन्द्रीभूत शक्ति अवश्य होनी चाहिए जहाँ से वह दीपक की तरह सर्वत्र, जलता बुझता रहता है ।

अमेरिका के न्यू हैम्पशायर में एक्सेटर गाँव के समीप पुलिस सर्जन यूगिने बट्रेण्ड अपनी ड्यूटी पर थे तभी एकाएक एक कार आयी और उन्हें देखकर रुक गई उसमें से एक अत्यन्त घबराई हुई स्त्री निकली । उसने बताया मेरी कार के ऊपर एक विशाल गोलाकार रक्त वर्णी चमकती हुई वस्तु तेजी से पीछा करती हुई आ रही थी वह अभी-अभी एकाएक जंगल की ओर तेजी से मुड़कर अदृश्य हो गई है ।

पुलिस सर्जन ने समझा स्त्री कहीं डर गई है भय की अवस्था में अक्सर ऐसा होता है कि मानसिक कल्पना का साकार भूत आ धमकता है पर मनोबल वाले लोगों को वैसा कुछ प्रतीत नहीं होता । अभी सर्जन इसी उधेड़बुन में था कि एकाएक बायरलेस कन्ट्रोल की घण्टी बजी और उसने भी चिल्लाकर वही सूचना दी उनके ऑफिसर जिनी टोलेण्ड ने इस पेट्रोल पार्टी को तुरन्त जंगल की ओर बढ़ने का आदेश दिया । गाड़ी रास्ते में बढ़ी तो उन लोगों को ५८ व्यक्ति उसी तरह घबराये हुए कुछ खन्दकों में छुपे, कुछ भागते हुए मिले उन सबके कथन एक ही तरह के थे पेट्रोल गाड़ी अभी कुछ दूर ही गई थी । एक खेत की ओर से ६ घोड़े भयानक चीत्कार करते हुए आगे आ रहे थे और वही द्रुत गति की

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उड़नतश्तरी जैसी वस्तु उनका पीछा कर रही थी । पेट्रोल गाड़ी के पास पहुँचने तक वह निशान एकाएक पीछे मुड़ा आकाश की ओर तेजी से उड़ते हुए शून्य में विलीन हो गया ।

पीछे निकाले गए निष्कर्ष में इन अधिकारियों ने माना कि वह कोई विलक्षण आकृति का यान था, हम नहीं जानते कि उसे कोई बुद्धिमान प्राणी चला रहे थे या यह कोई अणु-नियन्त्रित यन्त्र था जो भी हो उसके पीछे किसी अत्यन्त बुद्धिमान सत्ता का हाथ सुनिश्चित था ।

एक तर्क यह हो सकता है कि विमानों के उड़ने की घूमने की, मुड़ने की नियमित गणितीय व्यवस्था होती है । पर इन घटनाओं से उक्त तथ्य पुष्ट नहीं होता । यह तर्क इसलिए उठ सकता है क्योंकि अपनी पृथ्वी में किसी आविष्कार के दाएँ-बाएँ ही उस तरह के विकास की कल्पना चलती है । पर बौद्धिक क्षेत्र का विस्तार तो अनन्त है सो यदि विचार करें तो एक ही वस्तु के अनेक रूपान्तर हो सकते हैं । भारद्वाज के "यत्र सर्वस्व" में ही विमानों के उड़ने के पाँच तरह के मार्ग बताये हैं—(१) रेखा पथ (२) मण्डल (३) लक्ष्य (४) शक्ति (५) केन्द्र । इसी प्रकरण में उन यन्त्रों का भी उल्लेख है, जिनसे विमानों के न केवल उड़ने उतरने वरन् नीचे ऊपर दाएँ-बाएँ जाने के लिए यन्त्रों के प्रयोग का वर्णन और विधान मिलता है । ऐसा भी उल्लेख मिलता है—विमान को दृष्टि से ओझल भी किया जा सकता था और उस कृत्रिम आवरण को मिटाया भी जा सकता था । यदि प्राचीन भारत में ही उस तरह के प्रमाण उपलब्ध हो सकते हैं; तो अन्य लोकों में बुद्धिमान प्राणियों की कल्पना को नकारा नहीं जा सकता ।

२१ व २३ नवम्बर १९६७ के म्यूनिख (जर्मनी) के अखबार "डाईसईट से ज्यूच" ने भी इस तरह की एक घटना के हवाले से उक्त तथ्य की पुष्टि की है और लिखा है कि अगरम के एक नक्षत्र विद् ने तो आकाश से आने वाले इस वस्तु के फोटो लिए हैं । यूगोस्लाविया के माउण्ट नीग्रे पहाड़ी पर इसी तरह के एक वस्तु ने जंगल में आग लगा दी और बहुत देर तक दूर थरथराती खड़ी रही मानों वह किसी प्रतिक्रिया का अध्ययन कर रही हो । इवान ग्रेड के निवासियों का तो यहाँ तक कथन है कि बाहर दिखने वाली चमक वस्तुतः कोई परमाणविक आवरण था यथार्थ वस्तु तो उस आवरण के मध्य थी एक स्थान पर विरल हुए उस आवरण के अन्दर अन्य वस्तु भी देखी हैं जो अत्यधिक शुभ्र संगमरमर की तरह की धातु जैसी प्रतीत होती थी ।

हिरोशिमा काण्ड धरती के लोग भूल नहीं सकते, क्योंकि यह एक ऐसी भयंकर दुर्घटना और मानवीय बुद्धि का वीभत्स दुरुपयोग था जिसने कुछ ही क्षणों में लाखों लोगों को भाड़ में चने की तरह भून दिया । साथ ही इस बात के लिए भी कि उस दिन मनुष्य प्रथम बार इतने शक्तिशाली स्वरूप में प्रस्तुत हुआ जो अकल्पनीय था और यह कहा जा सकता था कि मनुष्य धरती का ऐसा प्राणी है जो धरती ही क्या सात आसमान में भी आग लगा सकता है ।

किन्तु यह बात गलत है । विराट् ब्रह्माण्ड में ऐसी देव शक्तियाँ हैं जो मनुष्य से अधिक बुद्धिमान हैं उनकी सामर्थ्य मनुष्य से कहीं अधिक है । इन शक्तियों की महत्ता यद्यपि उनकी कल्याण, दया और पोषण भाव से है तथापि वे विश्व व्यवस्था और अनुशासन की दृष्टि से अपनी क्षमताओं का संहारकारी उपयोग भी कर सकती हैं । इसका ठीक हिरोशिमा काण्ड जैसा ही उदाहरण इस धरती में मौजूद है यद्यपि वह काण्ड हिरोशिमा काण्ड से छोटा था तथापि इतना व्यवस्थित कि उसने पूरे कस्बे को ही खाक बनाकर रख दिया था ।

साइबेरिया के तुंगुस्का प्रान्त में एक छोटी-सी नदी, जिसका नाम है 'येनेसेट्ट' बहती है । इसी नदी के किनारे एक छोटा-सा कस्बा था जो किसी भयंकर विस्फोट के कारण इस तरह खाक हो गया था कि दो व्यक्तियों के अतिरिक्त वहाँ न तो एक भी मनुष्य बचा था और न पशु-पक्षी, घर-द्वार । सब कुछ राख में बदल कर रह गया था ।

हिरोशिमा काण्ड तक साइबेरिया और वहाँ से बाहर सर्वत्र एक किंवदन्ती थी कि तुगुंस्का का विस्फोट उल्कापात का परिणाम है पर बाद में जो रहस्य ज्ञात हुए उन्होंने रूसी वैज्ञानिकों को वह लाभ पहुँचाया जिसके लिए उसे हैरीगोल्ड रसायन शास्त्री एल्फ्रेड डीन स्लेक, डेविड ग्रीन ग्लास, जूलियस, रीजेन वर्ग फुक्स आदि से अमेरिका में जासूसी करानी पड़ी थी । सभी जासूस और इस षडयन्त्र में फंसे लोग पकड़े गए थे और उन पर अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति का मुकदमा चला था, रूस बदनाम भी हुआ था तथापि वह कुछ अधिक रहस्यों का पता नहीं लगा पाया था ।

३० जून, १९०८ की बात है एकाएक कोई ३० हजार मील प्रति घण्टे की तेज चाल से एक स्वचालित अग्नि पिण्ड-सा इस बस्ती के ऊपर आया और इधर-उधर मँडराने लगा । धातुओं से बने अन्तरिक्ष यान तब तक विख्यात हो चुके थे ऐसा कोई जहाज होता तब उतनी घबराहट नहीं होती धातु रहित और चालित अग्नि पिण्ड का प्रकाश सारी बस्ती में टार्च से फेंके गए फोकस की तरह छा गया । उसे देखते ही लोगों के दिल काँपने लगे ।

दिन ढल रहा था । चरवाहा अपने बारहसिंगों के साथ वापस घर लौट रहा था । उसे प्यास लगी तो वह एक बावड़ी में पानी पीने चला गया । उसके पशु सब बाहर खड़े थे । तभी उस आग्नेयास्त्र ने बस्ती के चारों ओर चक्कर लगाये फिर बस्ती के बीचों बीच एक क्षण ठहरा और एक भयंकर विस्फोट के साथ बस्ती पर ऐसे टूट पड़ा जैसे कोई बम नियन्त्रण में न रहने के कारण टूट पड़ा हो । कुछ क्षण पूर्व एक हरी-भरी और चहल-पहल वाली बस्ती श्मशान सी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दिखाई देने लगी । चारों ओर लाशों का ढेर, पेड़-पौधे तक झुलस कर नष्ट हो गए थे बहुत दूर तक का क्षेत्र काला पड़ गया था । चरवाहा बावड़ी से बाहर निकला तो उसका एक भी जानवर जीवित न बचा था । सबके सब मृत्यु के उस पार जा चुके थे । आस-पास के गाँवों में खलबली मच गई । चरवाहे के अतिरिक्त केवल एक मछुआ जीवित बचा था जो दिनभर का थका बच्चों की प्रतीक्षा में एक खड्ड में सो गया था । लोग कहते थे कि उस गाँव के निवासी बहुत पाप करते थे, उनमें परस्पर शीलता और सज्जनता भी नहीं रह गई थी सब उद्दण्ड, स्वार्थी और ईमान खो चुके थे उसी का फल भगवान ने दिया । पीछे जो बातें मालूम हुईं वह इस मान्यता से भी अधिक कौतूहल-वर्धक लगीं ।

यह आश्चर्य तब प्रकट हुआ जबकि रूसी वैज्ञानिक डॉ. अलेक्जेण्डर काजेन्तसव हिरोशिमा की दुर्घटना के बाद अपने अन्य वैज्ञानिक साथियों के साथ वहाँ की "रेडियो एक्टिविटी" का अध्ययन करने गए । वहाँ उन्हें कुछ ऐसी बातों का पता चला जो १९२७ में तुंगुस्का प्रान्त में की गई १९२७ की प्रोफेसर कुलिक की खोज से मिलती-जुलती थी । प्रो. कुलिक ने ही प्रथम बार यह बताया था कि तुंगुस्का में हुआ विस्फोट कोई तारा टूटने से नहीं हुआ था क्योंकि वहाँ न तो कोई दरार पड़ी थी, न जमीन फटी थी और न ही आस-पास कोई ऐसे टुकड़े मिले थे जिनके बारे में अनुमान किया जाता है कि यह टूटी हुई उल्का के खण्ड हैं ।

काजेन्तसव ने हिरोशिमा की जाँच के तुरन्त बाद अपने साथी डॉ. लियापुनोव के साथ साइबेरिया की यात्रा की और वहाँ १९२७ में हुए विस्फोट से प्रभावित क्षेत्र, वस्तुओं और मिट्टी आदि की विस्तृत जाँच की तो वे आश्चर्य में डूब गए । आश्चर्य का कारण यह था कि यह विस्फोट ठीक हिरोशिमा के विस्फोट जैसा ही था और उससे यह प्रकट होता था कि विस्फोट किन्हीं बुद्धिमान प्राणियों द्वारा किया गया है । उन लोगों को रेडियो एक्टिविटी का पूरा-पूरा ज्ञान होना चाहिए । पृथ्वी पर तो आज तक कोई भी परमाणु बम धातु रहित नहीं बना पर यह लोग मानवीय ज्ञान से निश्चित ही अधिक समुन्नत हैं क्योंकि उनमें धातु रहित परमाणु बम के निक्षेप और विस्फोट की भी क्षमता है । तुंगुस्का के इस विस्फोट में भी हिरोशिमा जैसी ही अणुधूलि मिली, यहाँ भी पेड़ों के तने ठूँठ की तरह कटे थे जबकि उनकी शाखाएँ तराश कर काट दी गयीं लगती थीं । विशेषता यह थी तुंगुस्का के विस्फोट में धातु का कोई भी टुकड़ा नहीं मिला जबकि विस्फोट की क्षमता उससे अधिक थी ।

यह घटना हमें पुराणों के उन आख्यानों की ओर ले जाती हैं जिनमें यह बताया जाता है कि आकाशस्थ पिण्डों में अनेकों देव शक्तियाँ निवास करती हैं वह धरती में बढ़े असुरत्व को समाप्त करने के लिए कई बार अपनी शक्ति का प्रयोग करने से भी नहीं चूकतीं । इन शक्तियों का कई बार आवाहन भी किया जाता है जिससे वह धरती पर देवपुरुष की रक्षा के लिए आती और अन्यायी व अत्याचारी लोगों को नष्ट-भ्रष्ट कर जाती हैं । ऋग्वेद ३।५।१८-१९ के क्रमशः ९वें और १३वें एक आख्यायिका आती है जिसमें बताया जाता है कि "कुत्स" की रक्षा के लिए एक बार इन्द्र ने विदोथ के पुत्र ऋजिश्वा को बन्दी बना लिया तथा पिप्रु और प्रवृद्ध, मृगय नामक उसके प्रमुख सहयोगियों को मार भी डाला पर इससे इन असुरों का उत्पात कम न हुआ । ५० हजार असुरों ने धरती पर कोलाहल पैदा कर दिया तब इन्द्र ने वज्र का प्रहार किया और एक ही संघात में पचास हजार काले रंग वाले असुरों का संहार कर दिया था । यह वज्र वस्तुतः अणु-विस्फोट ही था जो देवाधिपति इन्द्र द्वारा प्रहार किया गया था ।

देव शक्तियों के ज्ञाता, योगी और आचार्य आज भी उनका आव्हान कर इस प्रकार के विस्फोट कर सकते हैं पर उनमें चूँकि मनुष्य के प्रति करुणा और दया का भाव अधिक होता है इसलिए वे लोगों को रचनात्मक तरीकों से ही आत्म-सुधार और आत्म-कल्याण को प्रेरणा देते रहते हैं पर यदि पानी सर से ऊपर निकल जाय तब वह विभीषिकाएँ भी अनिवार्य हो जाती हैं । आगे आने वाले दिनों में इस कल्पना का साकार रूप सामने आये तो उसे असम्भव न मानना चाहिए ।

लूट-खसोट के अवरोध में सूक्ष्म शक्तियों की भूमिका

भूमिगत विशेषता एवं सम्पदा का निर्माण इस तालमेल के साथ हुआ है कि उस क्षेत्र के निवासी अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करते रह सकें । अन्न, फल और औषधियों के बारे में प्रसिद्ध है कि जहाँ के जन्मे लोगों को उसी क्षेत्र का उत्पादन अनुकूल पड़ता है । द्रुतगामी साधनों से पदार्थों को सुदूर स्थानों तक भेजा जा सकता है, पर प्राणियों की, पदार्थों की संरचना में जो तत्व घुले रहते हैं उनका तालमेल न बैठ पाने से लाभदायक प्रतीत होते हुए भी हानिकारक बैठते हैं । क्षेत्रीयता की बात ऐसे ही कई दृष्टिकोण के आधार पर बहुत महत्त्वपूर्ण तथ्य के रूप में सामने आती है ।

खनिज पदार्थों एवं अन्य प्रकृति सम्पदाओं के सम्बन्ध में भी यही बात है । वे उस क्षेत्र के निवासियों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर वितरित की गई हैं । उत्तरी ध्रुव के निवासी मनुष्यों और प्राणियों की शारीरिक संरचना तथा उपलब्ध पदार्थ सामग्री को देखते हुए सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि प्रकृति की वितरण व्यवस्था कितनी दूरदर्शितापूर्ण है । खनिज तथा अन्यान्य प्रकृति सम्पदाओं के सम्बन्ध में भी यही बात है ।

क्षेत्रीय उपलब्धियों से लाभान्वित होने का प्रथम अधिकार वहाँ के भूमि पुत्रों का है । इसके बाद अन्यत्र के लोगों को उससे लाभान्वित होने का अवसर मिलना उचित

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है । इसी आधार पर देशों के क्षेत्रीय अधिकारों को मान्यता मिलती रही है । उपनिवेशवाद, साम्राज्यवाद की निन्दा का कारण यही है कि स्थानीय लोगों के लिए दी गई प्रकृति उपलब्धियों का उपहरण अन्यत्र के लोक करते हैं तो उससे अव्यवस्था एवं अनीति का फैलना स्वाभाविक है । ऐसे शोषण अपहरण का जहाँ विश्व न्याय के आधार पर विरोध होता है वहाँ ईश्वरीय व्यवस्था भी उसे निरस्त करने में सहायक होती है । प्रकृति प्रतिरोध का परिचय तब अधिक अच्छी तरह देखा जा सकता है जब समर्थों द्वारा असमर्थों के स्वत्वों का अपहरण करने वाली अनीति का आचरण उभरता है ।

अमेरिका की भूमि पर मूल अधिकार उस देश के मूल निवासियों का ही माना जा सकता है । वहाँ की प्रकृति सम्पदा का लाभ भी उन्हीं को मिलना चाहिए । गोरे लोगों ने बलपूर्वक उस भूमि पर अधिकार कर तो लिया है, पर प्रकृति वहाँ के मूल निवासियों के पक्ष में ही अपना समर्थन देती है और लुटेरों को असफल बनाने वाले आधार खड़े करती रहती है । इस सम्बन्ध में वहाँ के स्वर्ण क्षेत्रों में गोरों की असफलता विशेष रूप से विचारणीय है ।

अमेरिका के ऐरिजेना प्रान्त में कुछ खाई खड्डों से भरे सघन वन प्रदेश ऐसे हैं जो न केवल अगम्य और डरावने हैं वरन् उसमें रहस्य भरी विशेषताएँ भी पायी जाती हैं । यह रहस्य अलौकिकतावादियों और वैज्ञानिक शोधकर्त्ताओं के लिए एक पहेली बनी हुई है ।

कहा जाता है कि उस प्रदेश में या तो आसमान से सोने के धूलि कण बरसते हैं या फिर उसे अदृश्य लावे की तरह उगलते हैं । जो हो उस क्षेत्र की पहाड़ियों को सोने के पर्वत का नाम दिया जाता है और अनेकों उस सम्पदा को सहज ही प्राप्त कर लेने के लालच में उधर जाते ही रहते हैं ।

सम्पत्ति का लोभ जितना आकर्षक है उतना ही वहाँ के प्रहरी प्रेत पिशाचों के आतंक का भय भी बना रहता है । इस उपलब्धि के लिए अब तक सहस्रों दुस्साहसी उधर गए हैं । इनमें से अधिकांश को अपने प्राणों से हाथ धोना पड़ा है, जो किसी प्रकार जीवित लौट आये हैं उन्होंने सोने के अस्तित्व का तो आँखों देखा विवरण सुनाया है, पर साथ ही यह भी कहा है कि वहाँ अदृश्य आत्माओं का आतंक असाधारण है । वे सोना बटोरने के लालच से जाने वालों का बेतरह पीछा करती हैं और यदि भाग खड़ा न हुआ जाय तो जान लेकर ही छोड़ती हैं ।

भूमिगत विशेषताओं का अन्वेषण करने जो लोग पहुँचे हैं उन्होंने उस क्षेत्र को रूस के साइबेरिया की ही तरह रेडियो विकिरणों से प्रभावित पाया है । रूसी वैज्ञानिक साइबेरिया के कई क्षेत्रों को किसी अज्ञात विकिरण से प्रभावित मानते हैं और कहते हैं कि कभी अन्तरिक्ष या धरती से यहाँ अणु विस्फोट जैसी घटना घटी है । ऐसा किसी उल्कापात से भी हो सकता है । अमेरिकी लोग भी इस क्षेत्र की तुलना लगभग उसी रूसी प्रदेश से ही करते हैं । यहाँ एक ६०० फुट गहरा और एक मील लम्बा खड्ड है । समझा जाता है कि यह किसी उल्कापात का परिणाम है । उस क्षेत्र में किसी उद्देश्य से जाने वाले व्यक्तियों पर सम्भवतः विद्यमान विकिरण ही आतंकित करने जैसा प्रभाव उत्पन्न करता होगा और उस अप्रत्याशित प्रभाव को भूत-पलीतों का आक्रमण मान लिया जाता होगा ।

रहस्यवादियों का मत है कि यूरोपियनों के इस क्षेत्र पर कब्जा जमाने से पहले आदिवासी लोग रहते थे । इनमें से अपैची कबीला मुख्य था । उसके साथ गोरों की झड़पें होती रहीं और इन मार्ग के कंटकों को हटाने के लिए अधिकर्त्ताओं द्वारा क्रूरतापूर्ण नर संहार किए जाते रहे । इन मृतकों की आत्माएँ ही प्रतिशोध से भरी रहती हैं और जो इधर से गुजरता है उस पर टूट पड़ती हैं ।

कारण क्या है, यह तो अभी ठीक तरह नहीं समझा जा सका, किन्तु सोना बरसने और आतंक छाये रहने की बात सच है । गाथा और किम्वदन्तियाँ तो बहुत दिनों से प्रचलित थीं । वहाँ जाने और कुछ कमाकर लाने की बात भी बहुतों ने सोची, पर साहस सबसे पहले पाइलीन वीवर ने किया । वह अपने कुछ साथियों के साथ आवश्यक सामान लेकर गया और उस क्षेत्र में डेरा लगाया । दूसरे साथी तो सो गए, पर वीवर को नींद नहीं आयी । वह अकेला उठा और कौतूहल में दूर तक चला गया । उस जगह सोने के टुकड़े पाये । ध्यान से देखा तो वे शत-प्रतिशत सोने के थे । उसने बहुत से टुकड़े जमा कर लिए और जितना वजन उठा सकता था उतना साथ लेकर वापस लौटा । लौटते ही उसकी खुशी आतंक में बदल गई । डेरा जला हुआ पड़ा था और वहाँ सामान्यतया मनुष्यों की राख भर बची हुई थी । आँख उठाकर पर्वत की चोटी को देखा तो वहाँ से गिद्धों के झुण्ड की तरह भयानक छायाएँ उसकी ओर बढ़ती आ रही दिखाई पड़ीं । डर के मारे वह बेहोश हो गया । बहुत समय बाद जब होश आया तो किसी प्रकार भाग चलने का उपाय निकाला और जैसे-तैसे घर वापस आ गया ।

इस घटना की चर्चा तो बहुत हुई, पर दुबारा उधर जाने का साहस किसी में भी नहीं हुआ । इसके १६ वर्ष बाद मैक्सिको का एक दुस्साहसी पैरलटा एक मजबूत और साधन सम्पन्न जत्था लेकर उधर गया । उस दल के प्रायः सभी व्यक्ति उसी प्रयास में मर गए केवल एक ही उनमें से जीवित लौटा । उसने सोने की उपस्थिति और मडलाने वाली विपत्ति के जो विवरण सुनाए उसने कौतूहल तो बहुत बढ़ाया, पर नए जत्थों के उधर जाने का साहस उत्पन्न नहीं किया ।

छुटपुट रूप से अनेकों व्यक्ति एकाकी अथवा टुकड़ियाँ बनाकर उधर जाते रहे, किन्तु किसी को जान गवाँने के अतिरिक्त और कुछ हाथ नहीं लगा । इसके बाद अमेरिका

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

का ख्याति नामा डॉक्टर लवरेन कोमली का अभियान था । वे बहुत तैयारी और चर्चा के साथ गए थे । साधनों और जानकारी की जितनी आवश्यकता थी वह उन्होंने जुटा ली थी । साथी बीच में से ही लौट आये और मायाविनी छायाओं के आतंक के भयानक विवरण सुनाते रहे । लवरेन ने खोज को प्रतिष्ठा का प्रश्न बना लिया था । वे अकेले ही बढ़ते गए, किन्तु सोने के स्थान पर पागलपन साथ लेकर वापस लौटे । कुछ दिन भयभीत विक्षिप्तता के शिकार रहकर वे भी मौत के मुँह में चले गए ।

होनोलूलू के व्यवसाइयों का एक जत्था स्वर्ण सम्पदा को प्राप्त करने के उद्देश्य से उधर गया और आस्ट्रेलिया के युवक फैज ने रहस्यों पर से पर्दा उठाने की ठानी । जर्मनी के इन्जीनियरों के एक दल वालेज के नेतृत्व में बड़े दमखम के साथ उधर पहुँचा । वालेज अपने पूर्ववर्ती शोधकर्त्ताओं की तुलना में अधिक चतुर था उसने उस क्षेत्र की एक आदिवासी युवती को ललचाकर विवाह कर लिया और उसकी सहायता से सोने के स्थान तथा छायाओं के रहस्य जानने का प्रयत्न करने लगा । यह पता छायाओं को लग गया, उन्होंने युवती का अपहरण कर लिया और वाल्ज की जीभ काट ली । इसी कष्ट में उसकी मृत्यु हो गई । वाल्ज की डायरी किसी प्रकार साथियों को मिल गई उसमें लिखे विवरणों से पता चलता है कि उसने स्वर्ण स्रोतों का पता लगा लिया था । भूमिगत कई रहस्यमय स्थान देखे, सुरंगें ढूँढ़ी और प्रेतात्मात्माओं को चकमा देकर बच निकलने में सफल होता रहा । इतना सब उसकी आदिवासी पत्नी की सहायता से ही सम्भव हो सका, किन्तु दुर्भाग्य ने उसका पीछा नहीं छोड़ा और अपनी जान गवाँ बैठा यह प्रयत्न सन् १८६१ का है । इसके बाद अन्तिम प्रयत्न सन् १९५९ में हुए । स्टेनलोफर्नेल्ड और फरेश नामक दो व्यक्तियों ने संयुक्त प्रयत्न नये सिरे से सोना पाने के लिए किए । उसमें पूर्ववर्ती कठिनाइयों और सफलताओं को पूरी तरह ध्यान में रखा गया । इस बार तैयारी अधिक थी । प्रयत्न भी बड़े पैमाने पर और अधिक दिन चले, पर उसका निष्कर्ष इतने ही निकला कि फरेश प्राणों से हाथ धो बैठा और फर्नेल्ड किसी प्रकार जान बचाकर वापस लौट आया । पल्ले कुछ नहीं पड़ा ।

इस स्वर्ण अभियान में जितने मृतकों की लाशें मिल सकीं इनके देखने से एक ही निष्कर्ष निकला कि वे सभी मौतें शरीर से खून चूस लिए जाने के कारण हुईं । इनमें से किसी की भी देह में कहीं छेद नहीं पाये गए और न कहीं कपड़ों पर या जमीन पर रक्त बिखरा हुआ ही पाया गया फिर यह रक्त चूसने की क्रिया किसके द्वारा किस प्रकार की गई यह अभी भी उतना ही रहस्यमय बना हुआ है जितना पहले कभी था ।

लगता है सूक्ष्म जगत में ऐसे किन्हीं अदृश्य प्रहरियों की चौकीदारी भी विद्यमान है जो न्याय का समर्थन और लूट-खसोट का प्रतिरोध करने के लिए अपनी जागरूकता का परिचय देते रहते हैं । सम्भवतः उस क्षेत्र की स्वर्ण सम्पदा की रखवाली वे ही करते हों । यह भी अनुमान लगाने की गुंजाइश है कि जिनके स्वत्वों का अपहरण किया गया, जिन्हें निर्दयतापूर्वक मारा गया उनकी आत्माएँ प्रतिशोध की भावनाएँ भरे हुए उस इलाके में निवास करती हो और उनकी रोकथाम से मुफ्त का धन पाने वालों को असफल रहना पड़ता हो । आत्माओं द्वारा न्याय के संरक्षण और अनौचित्य का प्रतिरोध एक तथ्य है । साथ ही प्रकृति व्यवस्था में स्थानीय भूमि पुत्रों के लाभान्वित होने की जो नीति मर्यादा है उसका उल्लंघन में ऐसे कारण उत्पन्न कर सकता है जैसे कि अमेरिका में स्वर्ण उपलब्ध करने वालों को भुगतने पड़े हैं ।

वह जो कभी आपने देखा नहीं

एण्डले, फ्रांस में एक ऐसा विशाल पत्थर है, जो छोटे से आधार पर नाचते लट्टू की-सी स्थिति में खड़ा है । इसे देखने पर ऐसा लगता है, जैसे यह किसी विद्युत चुम्बकीय शक्ति के प्रभाव से टिका हो । वैज्ञानिकों ने वहाँ ऐसे किसी बल की सम्भावना की सूक्ष्मता से जाँच-परख की, पर वे किसी निष्कर्ष पर नहीं पहुँच सके । विचित्र बात यह है कि वह मौसम सम्बन्धी भविष्यवाणी भी करता है । मौसम साफ रहेगा, तो वह अपनी उसी धुरी कर चुपचाप खड़ा रहेगा, किन्तु यदि मौसम खराब होने वाला हो, तो इसकी सूचना वह धीरे-धीरे हिल-डुल कर देता है । विशेषज्ञ इस बात से हैरान हैं कि उसमें गति कहाँ से आती है और इस स्थिति में उसका सन्तुलन क्यों नहीं बिगड़ता ?

इसी प्रकार स्काटलैण्ड के डंकल्स नामक स्थान पर १४ फुट लम्बा ७ फुट चौड़ा तथा ५ फुट ऊँचा एक पत्थर तीन छोटे-छोटे आधारों पर इस तरह स्थिर है, जैसे कोई विशालकाय कछुआ विश्राम कर रहा हो । पुरातत्ववेत्ताओं का कहना है कि यह शिलाखण्ड विगत बीस लाख वर्षों से इसी स्थिति में पड़ा हुआ है, जबकि इस कालखण्ड में आँधी-तूफान से अगणित पहाड़ ध्वस्त हो गए ।

आयरलैण्ड के कार्क नगर में ''ब्लानी'' नामक एक ऐसा पत्थर है, जिसके बारे में कहा जाता है कि उसे चूमने वाले में वाकपटुता की अद्‌भुत क्षमता का विकास हो जाता है । प्रतिवर्ष मात्र इस पत्थर को चूमने के उद्देश्य से हजारों व्यक्ति दूर-दूर से यहाँ आते हैं ।

वृक्ष-वनस्पतियों की दुनिया भी कोई कम विचित्र नहीं है । कुछ पेड़ तो सामान्य आकार से इतने अधिक मोटे हो जाते हैं कि उनमें घर बनाया जा सके और कुछ पादप जगत के सारे नियमों को तोड़ते हुए विज्ञान के समक्ष उसे समझने के लिए चुनौती प्रस्तुत करते हैं ।

नारमैण्डी, फ्रान्स में एक विशालकाय ओक वृक्ष है, जिसकी आयु हजार वर्ष बताई जाती है । इसके तने की

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दानवी मोटाई को देखकर एक अंग्रेज के मन में विचार आया कि क्यों न इसमें एक गिरजाघर बनाया जाय, ताकि अधिकांश लोग इस वृक्ष के बारे में जान सकें । इसी उद्देश्य को लेकर उसने तने को खोखला बना कर एक दो मंजिला चर्च बनाया, जो १८९६ से लेकर अब तक ज्यों का त्यों बना हुआ है ।

कृषि अनुसन्धान केन्द्र, खरगोन के फार्म में कुछ समय पूर्व गुलाब के तीन ऐसे पौधे उग आये थे, जिसमें गुलाब के फूल के जगह गुड़हल के फूल खिलते थे । एक जाति के पौधे में दूसरी जाति के फूल कैसे निकल आये ? इसका कारण बताने में वनस्पति शास्त्री सर्वथा विफल रहे ।

इण्डोनेशिया के सुमात्रा द्वीप और अमेरिका के चिली देश में एक ऐसा पेड़ है, जो सदा आँसू बहाता रहता है । दिन भर में इतना रोता है कि उसके आँसू से एक छोटा गड्ढा भर जाता है ।

ध्रुव प्रदेशों के बारे में कहा जाता है कि वहाँ एक साथ कई-कई सूर्य कई-कई चन्द्रमा उदित होते हैं । सूर्य भी वहाँ हरे रंग का होता है । इसके अतिरिक्त दूर की वस्तुएँ हवा में लटकती दिखाई पड़ती हैं । छोटे टीले पहाड़ जितने बड़े प्रतीत होते हैं । यथार्थ में ऐसा होता तो नहीं है, पर किरणों की वक्रता के कारण पर्यवेक्षक को यह दृष्टिभ्रम हो जाता है ।

प्रकृति में कई बार इसी प्रकार की ऐसी घटनाएँ घटती हैं, ऐसा कुछ देखने को मिलता है जिनकी समीक्षा में मात्र यही कहना पड़ता है कि प्रकृति भी कितनी सुगढ़ और श्रेष्ठ कलाकार है, जो स्वयं भी समय और नियमितता की इतनी पाबन्द है, जितना मनुष्य भी नहीं ।

अमेरिका के केंचुकी प्रान्त में मैमथ नामक एक ऐसी गुफा है, जिसे प्रकृति ने अपने सुन्दर और सधे हाथों से निर्मित किया है । सुन्दर डिजाइनों से युक्त खम्भे और बड़े-बड़े कमरे कोई २०० मील क्षेत्र में फैले हुए हैं । इसका सबसे आश्चर्यजनक भाग इसकी गगनचुम्बी दीवारें हैं, जो कार्य किसी कुशल इन्जीनियर से हो सकता है, उसे प्रकृति ने स्वतः कर दिखाया, सहसा इस पर विश्वास नहीं होतीं पर यह सत्य है कि उसे प्रकृति ने बनाया है ।

संसार में अगणित ऐसे स्थान हैं जहाँ भू-गर्भ से, अधिक ताप व दाब के कारण धरती को फोड़ कर, फव्वारे निकल पड़ते हैं और गर्म गीजर्स का रूप धारण कर लेते हैं । यह गीजर्स स्वयं में एक विचित्रता लिए होते हैं, वह यह कि लगभग एक घण्टे के अन्तर से बराबर छूटते रहते हैं और इस तरह यह सिद्ध करते हैं कि प्रकृति को समय और नियमितता का भी ज्ञान है ।

प्राचीनकाल में ऐसे अनेक अखण्ड दीपकों के प्रमाण मिले हैं, जो सैकड़ों वर्षों से जलते आ रहे थे । मूर्धन्य इतिहासवेत्ता कैमडन ने खुदाई में मिले ऐसे अनेक जलते दीपकों का वर्णन अपनी पुस्तक में किया है । सेण्ट आगस्टाइन ने अपनी संस्मरण पुस्तक में लिखा है कि वीनस देवी के मन्दिर में एक ऐसा दीपक था, जिस पर तेज हवा और वर्षा को कोई प्रभाव नहीं पड़ता था । पुरातत्व विभाग ने सन् १८४० में स्पेन के कुर्तण क्षेत्र में एक कब्र की खुदाई के वक्त ऐसा ही जलता दीपक प्राप्त किया था । विशेषज्ञों का मत था कि यह कई सौ वर्षों से जलता चला आ रहा है । इटली के नसीदा द्वीप में खेत की जुताई के समय के किसान को एक कब्र मिली । जब उसे खोदा गया, तो काँच के बक्से में बन्द एक अखण्ड ज्योति मिली, जो लम्बे काल से उसी में बन्द जल रही थी ।

आयुष्य बढ़ने के साथ-साथ काले बाल सफेद हो जाते हैं-यह शरीर तन्त्र का सामान्य नियम है, किन्तु चीन में एक ६८ वर्षीय कृषक के बाल विगत दस वर्षों में पहले काले से श्वेत हुए, फिर श्वेत से श्याम और अब पुनः एक बार काले से सफेद हो गए हैं ।

पिछले दिनों डबरा की एक अद्भुत घटना का विवरण समाचार-पत्रों में छपा था । वहाँ पर कस्टम रोड पर एक जैन मन्दिर है, जिसमें भगवान पार्श्वनाथ की प्रतिमा स्थापित है । एक दिन अचानक दर्शकों की भीड़ भरे मन्दिर में विग्रह की देह से पसीना आने लगा । बहुत छानबीन करने के बाद भी जब पसीने के किसी बाह्य स्रोत का पता न चला, तो अध्ययन के लिए विशेषज्ञों को बुलाया गया । रसायनवेत्ताओं ने उस नमूने का जब सूक्ष्म विश्लेषण किया तो उसमें मानवी पसीने के सारे घटक पाये गए पर यह न जाना जा सका कि वह पसीना उस पत्थर की मूर्ति से क्यों और कैसे बह रहा है ?

सन् १८८३ में इटली के सैन ब्रूनो क्षेत्र में एक विचित्र भूकम्प युक्त विस्फोट हुआ । इसमें अगणित इमारतें टूटीं और धन-जन की क्षति हुई । आश्चर्य की बात यह है कि इस विस्फोट ने नगर के प्रधान मठ के प्रार्थना कक्ष को चाक पर चढ़े बर्तन की तरह घुमा दिया और बिना किसी क्षति पहुँचाए दूसरी जगह ज्यों का त्यों खड़ा कर दिया, जबकि मठ का अन्य भाग टूट कर विस्मार हो गया ।

इसी देश के टोरैण्टो शहर के समीप समुद्र में एक सफेद रंग के पानी का फुहारा फूटता है । इसका पानी मीठा है । खारे समुद्र में मीठे पानी का फुहारा किस प्राकृतिक विचित्रता का परिणाम है, यह अभी तक नहीं जाना जा सका है ।

ब्राजील के एक नगर वैलेस डोपारा पर दोपहर को २ से ४ बजे तक पूरे दो घण्टे नियमित रूप से वर्षा होती है । इसमें व्यतिरेक कदाचित ही कभी होता है । उस क्षेत्र के निवासी इन दो घण्टों में मध्यान्ह अवकाश मनाते हैं ।

उपर्युक्त घटनाक्रम एक विचित्रताएँ मात्र वाक्विलास या मनोरंजन के लिए वर्णित नहीं की गयीं । वैज्ञानिक कहते हैं कि हर पदार्थ को कोई जन्म देने वाला पदार्थ एवं घटनाक्रम का कोई न कोई कारण अवश्य होता है । यही बात

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आध्यात्मवादी भी कहते हैं—आप्त वचनों, वेदान्तमतों के अनुसार यहाँ सब कुछ सोद्देश्य है । कुछ भी अकारण नहीं है । इन प्रतिपादनों के अनुसार इन अपवाद स्वरूप घटने वाले प्रसंगों के मूल में भी कोई सत्ता होनी चाहिए । वह कौन-सी सत्ता है, कैसे यह सब इस रूप में सम्पन्न हो जाता है ? यह ऊहापोह वैज्ञानिकों के लिए उसने छोड़ रखा है । क्या ये मात्र संयोग है ? अथवा कभी-कभी होने वाले अपवाद हैं ? उत्तर वैज्ञानिकों को देना है ।

अद्भुतः अश्रुतोऽहम् : "मैं अद्भुत हूँ-अश्रुत हूँ"

अनेक प्रकार की योग साधनाएँ करने के उपरान्त ब्रह्मविद्या उपनिषद के मन्त्रदृष्टा ने क्रमशः शरीर मन की स्थूल शक्तियों का वेधन करते हुए मूल चेतना को प्राप्त किया । ब्राह्मी भूत हुए ऋषि ने ब्रह्म के स्वरूप का विश्लेषण करते हुए लिखा है—

केवलोऽहं कविः कर्माध्यक्षोऽहं करणाधिपः ।
गुहाशयोऽहं गोप्ताऽह चक्षुषश्चक्षुरस्म्यहम् ॥

अर्थात्—मैं (ब्रह्म) केवल हूँ मुझसे परे कुछ नहीं, कवि अर्थात् भाव हूँ, कर्म का निरीक्षक और फल देने वाला, जो कुछ सृष्टि में है सबका स्वामी हूँ, स्वयं ही अप्रकट रहकर विलक्षण कार्य करने वाला हूँ जहाँ मानवीय नेत्र नहीं देख सकते उस विराट् को, त्रिकाल को भी देखने में मैं ही समर्थ हूँ ।

परमात्मा के इस तात्विक रूप का साक्षात्कार तो मन्त्रदृष्टा ऋषि, उपनिषदकार, सन्त और साधक ही कर सके हैं, योग-मार्ग और योग-साधनाओं का अभ्यास करने से उसके विज्ञानमय स्वरूप की झाँकी होती है, किन्तु नहीं है मनोबल इतना सशक्त जिनका कि वे कठिन साधनाएँ कर सकें उनके लिए शास्त्रकार कहता है—"विष्णोरद्भुत कर्मणाः" वह अत्यन्त अद्भुत कर्म करता है—उसकी सत्ता को उसकी विलक्षण रचना जानो और उसे प्राप्त करने का प्रयत्न करो ।

यों आकाश में लटकते हुए तारे, गेंद की तरह उछलती हुई पृथ्वी, यहाँ के तरह-तरह के जीव-जन्तु, पेड़-पौधे, वायु, समुद्र सब एक से एक आश्चर्य हैं, मनुष्य शरीर जैसी आश्चर्यों की आश्चर्य मशीन आज तक कोई भी वैज्ञानिक नहीं बना पाया । विचार तो यह रचनाएँ ही उसकी सत्ता का बोध करने के लिए अपर्याप्त नहीं, किन्तु जगत की रचना में प्रकृति का भी उतना ही भाग है जितना परमेश्वर का प्राकृतिक पदार्थ भी टूटते-फूटते संकुलित-विच्छिन्न होते रहते हैं उससे भी अनेक आश्चर्यजनक रचनाएँ बनती बिगड़ती रहती हैं उदाहरण के लिए सन् १८२३ में सिनाई पर्वत के समीप वाली टोर की खाड़ी में पानी तीन बार खून के रंग का हो गया । उस समय वहाँ उपस्थित पानी के जहाज के नाविकों ने यह दृश्य देखा तो उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा । यह समुद्र के सामान्य प्राकृतिक नियमों का अपवाद था अतएव जाँच के लिए वैज्ञानिक विशेषज्ञ और जीव शास्त्री बुलाये गए । डार्विन तथा एरहन वर्ग ने बताया कि यह समुद्र में कुछ पौधों के कारण हुआ । वह अपने अन्दर से कोई तत्व निकालते हैं जिससे "ट्राई ट्रेशन" जैसी क्रिया होती है जल लाल रंग का हो जाता है ।

सूडान के फूजी अजी प्रान्त में कुछ ऐसे पौधे पाये जाते हैं जो अक्सर सीटी बजाया करते हैं कई बार इनकी सीटियाँ इतनी तीव्र बजती हैं कि आधुनिक सभ्यता में रँगे आज के युवकों द्वारा सिनेमा हाल या किसी जल से प्रदर्शन की हूटिंग (सीटी बजाना, उछलना, कूदना, विघ्न डालना) भी मात खा जाती है । वैज्ञानिकों ने खोज प्रारम्भ की तो पता चला कि इन पेड़ों के नीचे कुछ कीड़े होते हैं जो तने को भीतर ही भीतर खोखला कर देते हैं और एक इन्च या उससे भी बड़ा सूराख बना देते हैं । कई बार यह सूराख डालियों तक में जाकर फूटते हैं पेड़ वंशी बन जाता है जब हवा चलती और इन छेदों से गुजरती है तो सीटी बजने की सी तेज ध्वनियाँ उच्चरित होती हैं ।

दक्षिणी अफ्रीका के वेलाविस्थया नामक स्थान में एक विचित्र पेड़ पाया जाता है जो ऊँचाई में कुल १ फुट का होता है, किन्तु उसके तने की मोटाई १५ फीट होती है । १०० वर्ष तक की आयु के इस वृक्ष में कुल ३ पत्तियाँ ही होती हैं जो जन्म से होती हैं और सैकड़ों पतझर हो जाने पर भी पौधे का साथ नहीं छोड़तीं ।

यह आश्चर्य प्राकृतिक है प्रकृति की चेतनता ही इस तरह के विलक्षण आश्चर्यों का कारण होती है और इस तीसरे आश्चर्य की तरह कई बार वे इतने विलक्षण भी होते हैं कि प्रकृति अर्थात् जड़ परमाणुओं में भी एक विधिवत मस्तिष्क की मान्यता अमान्य नहीं करते बनती । तो भी इन पर विज्ञान हस्तक्षेप कर सकता है विश्लेषण कर सकता है इसलिए ऐसे आश्चर्य किसी अव्यक्त सत्ता का बोध कराने के लिए नाकाफी माने जाते हैं ।

मनुष्य शरीर में जड़ और चेतन दोनों ही सत्ताएँ काम करती हैं इसलिए स्थिति साफ नहीं हो पाती । कभी प्रकृति अर्थात् शरीर का रसायन भाग बल में होता है तो भावनाएँ दब जाती हैं इस समय अन्न से बना मन और उसकी वासनाएँ प्रखर हो उठती हैं और तब मनुष्य सांसारिक हो जाता है । उस समय उसका आध्यात्मिक दैविक स्वरूप दब जाता है और इन परिस्थितियों में यह शरीर ही नारकीय यन्त्रणा का आगार बन जाता है । उपनिषदकारों ने ब्रह्म प्राप्त पुरुषों के लिए जहाँ इस शरीर को देव मन्दिर कहा है वहाँ इस तरह के उदर परायण व्यक्तियों के लिए नारद परिव्राजकोपनिषद में कहा है—

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अस्थिस्थूणं स्नायुबद्धं मांस शोणित लेपितम् ।
चर्मावबद्धं दुर्गन्धि पूर्ण मूत्रपुरीषयोः ॥
मांसासृक्पूय विण्मूत्रस्नायुमज्जा स्थित संहतौ ।
देहे चेत्प्रीतिमान्मूढो भविता नरकेऽपिसः ॥

अर्थात्—खम्भों की तरह लगी हैं हड्डियाँ जिसमें, स्नायु-जाल से जो पूरा गया है मॉस का जिस पर पलस्तर चढ़ा है और त्वचा द्वारा जिसे मढ़ दिया गया है । मल-मूत्र और दुर्गन्ध से भरा वह शरीर मूर्खों के लिए रोगों का ही घर है ।

शरीर की सारी महत्ता उसके आग्नेय उसके सूक्ष्म तत्व रूप की है जिसके सम्बन्ध में ऊपर ब्रह्म-विद्या उपनिषद्कार ने बताया है उसी के विकास से मनुष्य ब्रह्म की चेतना को इस तरह प्राप्त कर सकता है जैसे रेडियो विद्युत का सम्बन्ध संसार के किसी भी ट्रान्समीटर द्वारा प्रक्षेपित विद्युत् तरंगों के साथ जुड़ जाने से वह रेडियो भी रेडियो स्टेशन की अनुभूति और प्रसारण वाला हो जाता है ।

ईश्वरीय क्षमताएँ शरीर और प्रकृति की क्षमता से बढ़ कर हैं क्योंकि प्रकृति और महाकूत भी ब्रह्म की ही उपज हैं—

"चिदानन्दोऽस्म्यहं चेताश्चिद्घनश्चिन्मयोऽस्म्यहम्"

अर्थात्—वह परमात्मा चिदानन्द, चेतना प्रदान करने वाला, चिद्घन और निरन्तर चेतना ही है । उसकी रचनाएँ प्रकृति से भिन्न विलक्षण आश्चर्यों वाली होती हैं । यद्यपि व्यवस्थापिका के रूप में उसकी प्रकृति काम करती दीखती है पर वह अपनी क्षमताएँ व्यक्त किए बिना भी नहीं रहता, अपनी सर्वोपरिता, अहंता और सत्ताभाव को यह आप ही व्यक्त किया करता है । संसार में ऐसे उदाहरण भी कम नहीं हैं । इन उदाहरणों द्वारा ही वह मानवीय बुद्धि को लौकिकता में अलौकिकता की ओर प्रेरित किया करता है ।

चीन के चिहली नगर में एक यूनानी रहता था उसका जन्म १३८९ में हुआ मृत्यु १४६४ में । ७५ वर्ष वह संसार के विलक्षण आश्चर्य के रूप में जिया । शी-स्वान नामक इस व्यक्ति का शरीर पारदर्शक था उसके शरीर के भीतर का माँस हडिड्याँ श्वास गमन मार्ग तक एक्स किरणों से भी अधिक स्पष्ट सभी अंग देखे जा सकते थे । मनुष्य शरीर में अद्भुत शक्ति के प्रदर्शन का यह अद्भुत उदाहरण था जिसका विज्ञान कोई भी हल प्रस्तुत नहीं कर सका ।

शांसी प्रान्त के राज्य मन्त्री श्री लू मिन की आँखों में दो-दो पुतलियाँ थीं जो जीव-विज्ञान का अविजित-आश्चर्य ही बनी रहीं । लूमिन बाद में गवर्नर हो गए उनकी आँखों से काम करने की क्षमता में भी कोई अन्तर नहीं था । फ्रांस के टूरकोइंग स्थान में सन् १७९३ में एक ऐसी लड़की ने जन्म लिया जिसकी केवल एक आँख थी वह १५ वर्ष तक "क्लीमेंट चाइल्ड" के नाम से विख्यात रहीं । यह एक आँख भी भारतीय योगियों की तृतीय आँख का प्रमाण थी और नाक के ठीक ऊपर दोनों भौहों के बीच थी । योग विज्ञान की मान्यता है कि इस स्थान पर पीयूष ग्रन्थि होती है जो वस्तुतः आध्यात्मिक तीसरे नेत्र का काम करती है । उसका जागरण हो जाने पर मनुष्य करोड़ों मील दूर की भी वस्तुएँ देख और अनुभव कर सकता है । यह लड़की इस आँख से सब कुछ देख सकती थी । उसे देखकर यह अनुमान किया जा सकता है कि भगवान ने उसे भेजकर मनुष्य को यह समझाने का प्रयास किया होगा कि मनुष्य बाह्य दृष्टिवादी ही न रहकर अन्तर्दृष्टा भी बने बिना उसके वह विश्व के यथार्थ को जान समझ नहीं सकता ।

ग्रीन्स वर्ग के एक चरवाहे वाल्टर रिडिल मैन के पास एक भेड़ थी । भेड़ें संसार में बहुत हैं, बहुत हो चुकीं और न जाने कितनी अभी होंगी—इस सामान्य से जीव से लाभ तो हैं पर उसमें कोई विशेषता न होने से उसे कोई महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त नहीं । उसके शरीर में ऊन उगने का एक प्राकृतिक नियम है । दुनिया की हर भेड़ के शरीर में ऊन ही उगती है किन्तु इस भेड़ की पीठ पर घास उगती थी और भगवान की उस प्रेरणा का दिग्दर्शन कराती थी कि यह शरीर माटी का एक घरौंदा मात्र है प्रकृति की खूबसूरती है कि उसने हर शरीर में नई आकृति गढ़ी पर उससे यह सत्य ओझल नहीं हो जाता कि शरीर का उपयोग केवल पार्थिव सुखों तक ही सीमित है यदि उसका असाधारण उपयोग करना हो तो उसके चेतन अंश की भी खोज और प्राप्ति की जानी चाहिए । परमात्मा ने यह प्रेरणा इस भेड़ की पीठ में घास उगाकर दी और अपनी महत्ता भी प्रतिपादित कर दी कि वह प्राकृतिक नियमों से भी बढ़कर कलाकार और रचनाकार है ।

ईश्वर वाणी है—"अद्भुतः अश्रुतोऽहम्"—मैं अद्भुत हूँ, जो कभी नहीं सुना गया वह भी मैं ही हूँ यह थोड़े से उदाहरण इस तथ्य के साक्षी हैं । प्रयत्न करें, साधनाएँ करें, तो उसके विराट् तात्विक स्वरूप को पाकर हम धन्य भी हो सकते हैं जिसके लिए मनुष्य जैसा शरीर जीव को प्रदान किया गया है ।

प्रकृति के विचित्र नियम
अबूझ पहेलियाँ

मनुष्य प्रकृति के सभी रहस्यों को जान लेने का दावा करने लगा है । पिछले सौ दो सौ वर्षों में निःसन्देह वैज्ञानिक उन्नति हुई है । विज्ञान के कारण प्रकृति के कई रहस्य सुलझे हैं और उनके नियमों को जान पाना सम्भव हो गया है । उन नियमों का अनुकरण कर अनेकानेक यन्त्र बनाये गए, थोड़े समय में अधिक काम निबटा लेने, रोग बीमारियों से लड़ने और मनुष्य की आयु तथा स्वास्थ्य के रक्षण अभिवर्धन में सफलता प्राप्त की गयी ।

होना तो यह चाहिए था कि प्रकृति के इन रहस्यों को जानने के बाद मनुष्य और अधिक विनीत, उदार तथा विशाल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हृदय बनता । कहा भी है 'विद्या ददाति विनयं' । विद्या से विनय प्राप्त होती है, परन्तु प्रकृति के रहस्यों और नियमों को जानने तथा उनका अनुकरण कर अपनी भौतिक स्थिति उन्नत बनाने के साथ-साथ मनुष्य का दर्प भी बढ़ता चला गया है । निःसन्देह मनुष्य सृष्टि के अन्य प्राणियों की तुलना में श्रेष्ठ है । परमात्मा ने उसे विद्या, बुद्धि, सोचने समझने की क्षमता और कर्म की स्वतन्त्रता के अधिकारों से सम्पन्न कर इस धरती पर भेजा है । इन विशेषताओं द्वारा अर्जित थोड़े से लाभों को देखकर ही वह दर्प से चूर हो उठे तो यह शुभ नहीं कहा जा सकता । प्रकृति का एक छत्र अधिपति और उसके सभी रहस्यों को जान लेने के दर्प ने उसे मानवीय सन्तोष, हृदय की शान्ति तथा आन्तरिक आनन्द-उल्लास से रिक्त ही किया है । परिणामतः वह दिनों-दिन श्रेष्ठता के अहंकार से प्रेरित होकर न करने और न अपनाने योग्य आचरण व रीति-नीति बरत रहा है ।

मनुष्य अपने श्रेष्ठता के आधारहीन दर्प से मुक्त हो सके इसके लिए प्रकृति अनेकों बार ऐसे रहस्य प्रस्तुत करती रहती है जिसे समझना अभी तो मनुष्य के बस में नहीं है । ऐसे कुछ उदाहरण यहाँ प्रस्तुत हैं ।

हाल ही में जबलपुर का एक समाचार-पत्रों में छपा है । आम का पेड़ पन्द्रह-बीस फुट ऊँचा बढ़ने के बाद ही बौराता और फल देता है । लेकिन जबलपुर में किसी व्यक्ति ने कुछ माह पूर्व आम का एक पौधा लगाया । यह पौधा दो फुट ऊँचा बढ़कर ही आम के फल देने लगा । कुछ महीनों की आयु वाले इस पौधे में ८० आम लगे । इस आम के पौधे को देखने के लिए दूर-दूर से हजारों लोग आये । कोई भी यह नहीं समझ सका कि इतने छोटे पौधे में कैसे फल-फूल लग आये । जिसने भी देखा उसने प्रकृति की लीला को अगम रहस्यमय पाया ।

बंगाल में एक नारियल का पेड़ भी इसी प्रकार की विचित्रता के कारण पिछले कई दिनों से चर्चा और आकर्षण का विषय रहा है । नारियल के पेड़ आमतौर विधिवत् लगाये जाते हैं, पर नदिया जिले के भाग जोआन गाँव में एक शिक्षक के घर नारियल का एक ऐसा पेड़ लगा हुआ है जिसकी शाखाओं से ही उसकी सन्तानें जन्मने लगती हैं । पिछले पाँच वर्षों में इस पेड़ ने करीब १०० पौधों को जन्म दिया और सभी पौधे उस पेड़ के पत्तों में मूल स्थान से लगे हैं । जिस शिक्षक के घर पर यह पेड़ लगा है, उसने बताया कि "पहली बार जब मैंने पेड़ के एक पत्ते में छोटा-सा अंकुर फूटते देखा तो आश्चर्यचकित रह गया । शुरू में तो मैंने उस अंकुर के साथ कोई छेड़-छाड़ नहीं की, पर कुछ दिनों बाद जब वह अंकुर बड़ा हुआ तो मैंने उसे निकालकर दूसरे स्थान पर रोप दिया । कुछ दिनों बाद उसी पेड़ पर पुनः वैसा ही अंकुर फूटा । पेड़ में नारियल तो लगते ही थे यह अंकुर भी फूटने लगे इस प्रकार पिछले पाँच वर्षों में कोई १०० नारियल के पौधों ने उस पेड़ से जन्म लिया है ।"

मजे की बात यह है कि उन अंकुरों को यदि पेड़ से अलग नहीं किया जाता तो वे नष्ट हो जाते हैं । जबकि अंकुर निकाल कर दूसरे स्थान पर लगाने से वह पेड़ बन जाता है । नारियल के उक्त पेड़ द्वारा नये पौधों को जन्म देने का यह क्रम अभी भी जारी है ।

यह प्रकृति की विचित्र लीलाएँ ही हैं जिनका रहस्य समझ पाना अभी तक सम्भव नहीं हुआ है । प्रकृति इस प्रकार की पहेलियाँ जीव-जन्तुओं के माध्यम से भी प्रस्तुत करती है । यौन परिवर्तन की घटनाएँ आये दिनों सामने आती रही हैं । इन परिवर्तनों के लिए हारमोन के क्रिया-कलाप उत्तरदायी ठहराये गए हैं, पर पिछले दिनों बालाघाट जिले में स्थित एक पशु-चिकित्सालय के डॉक्टरों ने एक ऐसे मुर्गे के बारे में बताया जो अण्डा देने लगा था । डेढ़ वर्ष के इस मुर्गे को अण्डा देते हुए कई लोगों ने देखा । यह मुर्गा एक मुर्गीपालक के पास था ।

मुर्गे को रोज दड़बे में बन्द कर देता था । जिस दड़बे में उसे बन्द किया जाता था उसमें दूसरे कोई मुर्गे या मुर्गी नहीं होते थे एक दिन मालिक ने उक्त मुर्गे के दड़बे में अण्डा देखा । शुरू में तो उसने कोई ध्यान नहीं दिया, सोचा कोई मुर्गी दिन में आकर अण्डा दे गयी होगी, पर जब रोज ऐसा ही होने लगा तब तो वह निगरानी करने लगा और यह देखकर विस्मित रह गया कि मुर्गी नहीं मुरगा ही अण्डा देने लगा था ।

६ अप्रैल, ७९ के समाचार-पत्रों में कई लोगों ने पढ़ा होगा कि उन्नाव में गंगा घाट थाने के पास रहने वाली एक महिला ने बच्चों के स्थान पर कुत्ते के दो पिल्लों को जन्म दिया । अब तक जुड़वाँ बच्चे होने की घटना तो आम सुनने, पढ़ने में आती थी, पर यह पहली घटना है जब किसी महिला ने कुत्ते के पिल्लों को जन्म दिया और वह भी जुड़वाँ । प्रत्यक्षदर्शियों के अनुसार ये पिल्ले एक-दूसरे से जुड़े हुए थे, उनके मुँह तो दो थे, परन्तु पैर चार ही थे । कान और पूँछ सब कुत्ते जैसे ही थे । यद्यपि जन्म के तीन घण्टे बाद ही ये पिल्ले मर गए, परन्तु एक अजूबा तो बने ही ।

ये तो हुईं ऐसी घटनाएँ जिनमें प्रकृति का अदृश्य परोक्ष हाथ दिखाई देता है, लेकिन उसकी प्रेरणा से जानवरों के स्वभाव में भी कई बार ऐसे परिवर्तन आ जाते हैं जिन्हें कि देख जानकर दाँतों तले अंगुली दबा लेनी पड़ती है । यह परिवर्तन कई बार इस तरह का होता है कि जिन्हें लगता है कि कहीं सम्बन्धित जानवर पिछले जन्म में मनुष्य ही तो नहीं रहा था और पूर्वजन्म के संस्कारों की प्रेरणा से वह अनायास मनुष्यों जैसा आचरण करने लगा हो । कानपुर से प्रकाशित होने वाले दैनिक 'आज' में पिछले दिनों बम्बई के उपनगरीय क्षेत्र चेम्बर के एक विद्यालय का बड़ा ही मनोरंजन समाचार छपा । विद्यालय की एक कक्षा में जब पढ़ाई चल रही थी तो एक बन्दर न जाने कहाँ से कक्षा में घुस आया

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और छात्रों के बीच बैठ गया । बन्दर को देखकर छात्र चुहलबाजी करने लगे, पर अपने साथ होती चुहल के बीच भी वह बन्दर चुपचाप शान्तिपूर्वक बैठा रहा ।

यही नहीं उसे जब भगाने की कोशिश की गयी तो भी बन्दर वहाँ से नहीं भागा । कक्षा जब समाप्त हुई तभी बन्दर वहाँ से उठकर गया । दूसरे-तीसरे दिन भी यही क्रम चलता रहा । कई दिनों तक बन्दर विद्यालय में आता रहा और बैठता रहा । जब तक विद्यालय के अधिकारियों ने दमकल वालों को बुलाया नहीं और उसे पकड़कर चिड़ियाघर नहीं भिजवा दिया तब तक वह बन्दर नियमित रूप से, समय पर विद्यालय आता रहा और चुपचाप पढ़ाई का आनन्द लेता रहा ।

यह घटनाएँ क्या सिद्ध करती हैं ? क्या मनुष्य ने प्रकृति के रहस्यों को जान लिया है । कदापि नहीं । प्रकृति इतनी बड़ी और विराट् है कि उसे जान पाना तो दूर, देख लेना भी सम्भव नहीं है । कोई भी समझदार विनम्र वैज्ञानिक यह दावा भी नहीं करता कि वह प्रकृति को जान चुका है । बल्कि जैसे-जैसे उसके ज्ञान का क्षेत्र बढ़ता जाता है वह न्यूटन की तरह कहने लगता है कि हम तो सागर के किनारे बैठकर कुछ घोंघे और सीपियाँ ही बीन पाये हैं । लेकिन ज्ञान का, श्रेष्ठता का, प्रकृति के सिरमौर होने का दर्प रखने और अपने अहंकार के कारण विश्व की शान्ति सुव्यवस्था को भंग करने वाले लोगों को क्षुद्र नहीं तो और क्या कहा जाय ? सच तो यह है कि क्षुद्रता ही इस युग का सबसे बड़ा अभिशाप है और प्रकृति की इन पहेलियों को देखकर अपनी क्षुद्रता को तिलांजलि देनी चाहिए ।

बिन्दु में सिन्धु समाया

कलकत्ते में एक ऐसा वट-वृक्ष (फाइकस बेंगालेन्सिज) पाया जाता है, जिसकी ऊपरी छतरी का व्यास २००० गज से भी अधिक है । बरगद की डालियों से भी जड़ें (बरोहे) निकल-निकलकर पृथ्वी में धँस जाते और ऊपरी फैलाव को साधे रहते हैं । इस वट-वृक्ष में भी हजारों जड़ें निकल कर जमीन में धँस गई हैं, उससे वृक्ष की सुरक्षा, शक्ति और शोभा और भी अधिक बढ़ गई है । हजारों व्यक्ति, हजारों पक्षी उसकी छाया में आश्रय और आजीविका प्राप्त करते रहते हैं । वृक्ष का इतना भारी घेरा एक प्रकार का आश्चर्य ही है ।

उससे भी बढ़कर आश्चर्य यह है कि इतना विशाल वट-वृक्ष जिस बीज से उगा है, उसका व्यास एक सेण्टीमीटर से अधिक न रहा होगा । वनस्पति विज्ञान (बॉटनी) के जानने वालों को पता होगा कि वृक्ष का सम्पूर्ण विकास जिस धरातल पर होता है, उसे बीज कहते हैं । बीज में ही वह सारी सम्भावनाएँ छिपी पड़ी रहती हैं, जो आगे चलकर एक दीर्घाकार वृक्ष के रूप में दिखाई देने लगती हैं । बीज की बाह्य त्वचा (एपिडर्मिस) के भीतर अनेक पर्तें होती हैं, उन्हें वल्कुट (कॉर्टेक्स) पतली भित्तियों वाले कोशों (पैरेन्काइटमस सेल्स) से बने होते हैं । बीज को आड़ा काटा जाय तो वह कोश गोल दिखाई देते हैं । वल्कुट की अन्तिम परत को अन्तस्त्वचा (एण्डोडर्मिस) कहते हैं । इसके कोश (सेल्स) आयताकार (रेक्टैंगुलर) होते हैं । उनकी आड़ी दीवालों पर एक विशेष प्रकार की मोटाई (थिकिंग्स) होती हैं । पतले भित्तियों वाले कोशों की एक परत अन्तस्त्वचा (एण्डोडर्मिस) के भीतर स्थित होती है, इसे परिरम्भ (पेरीसाइकिल) कहते हैं । जड़ की शाखाएँ इसी भाग से निकलती हैं । यहीं से कुछ कोश निकलकर बढ़ने के लिए स्थान बना लेते हैं और कॉर्टेक्स को काटते हुए जड़ों के रूप में फूट पड़ते हैं ।

जिस क्रिया में संवहन ऊतक (कैरीइंग टिसूज) का काम जाइलम और फ्लोएम नाम के तत्व करते हैं । ये दोनों बीज के मज्जा (पिथ) को घेरे रहते हैं । यह मज्जा (पिथ) की प्रेरणा ही ऊपर तने और नीचे जड़ के रूप में फूटती है । जड़ के इस क्रियाशील भाग को सूक्ष्मदर्शी से देखें तो बिना बढ़े हुए वृक्ष का आकार-प्रकार दिखाई दे जाता है । एक विलक्षण संसार उसमें दिखाई दे जाता है । यह आश्चर्य ही है कि मज्जा (पिथ) का सर्वेक्षण करके यह बताया जा सकता है कि वृक्ष की जड़ें इतनी होंगी, इतनी मोटाई लेकर इस गहराई में अमुक-अमुक दिशा को बढ़ेंगी । इसी प्रकार तना कितना मोटा, कितनी शाखों वाला किधर को मुड़ा, डालियों और कितने पत्तों वाला होगा । इस सबका पूर्णाभास इस हिस्से के सूक्ष्म दर्शन द्वारा किया जा सकता है । प्रश्न उन पर्तों और कोशों का नहीं, जो विकास की चेष्टाएँ करती हैं । सूझने वाली बात वह अन्तर्चेतना है, जो आत्म-प्रेरणा से विकसित होती और अपने आपको बढ़ा कर एक भरे-पूरे वृक्ष के रूप में परिणत कर देती है । एक पूरे वृक्ष का नक्शा एक बीज में भरा है, यह पढ़कर लोग आश्चर्य ही करेंगे ।

इतना विशाल वट-वृक्ष जिस बीज से अंकुरित, पुष्पित, पल्लवित और बड़ा हुआ वह आधे सेन्टीमीटर व्यास से भी छोटा घटक रहा होगा । उस बीज की चेतना ने जब विस्तार करना प्रारम्भ किया तो तना, तने से डालें, डालों से पत्ते, फल, फूल, जड़ें आदि बढ़ते चले गए ।

मनुष्य-शरीर की प्रवृत्ति और विकास-प्रक्रिया भी ठीक ऐसी ही है । वीर्य के एक छोटे-से-छोटे कोश (स्पर्म) को स्त्री के प्रजनन कोश ने धारण किया था । पीछे यही कोश जिसमें मनुष्य स्त्री या पुरुष के शरीर की सारी सम्भावनाएँ आकृति-प्रकृति, रंग-रूप, ऊँचाई, नाक-नक्शा आदि सब कुछ विद्यमान था उसने जब बढ़ना प्रारम्भ किया तो वह अन्तरिक्ष की अनन्त शक्तियों को खींच-खींचकर शरीर रूप में विकसित होता चला गया । एक सेन्टीमीटर स्थान में कई अरब कोश आ सकते थे, जो उसी सूक्ष्मतम कोश से ५ फुट ६ इंच का मोटा शरीर दिखाई देने लगता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गर्भ के भीतर रहने तक तो यह लघुता याद रहती है, किन्तु बाहर की हवा लगते ही जीवन का मूलभूत आधार भूल जाता है और मनुष्य अपने आपको स्थूल पदार्थों का पिण्ड मात्र मानकर मनुष्य जीवन जैसी बहुमूल्य ईश्वरीय विरासत को गँवा बैठता है । हम यदि छोटे-से-छोटे अणु में भी जीवन की अनुभूति कर सके होते, तो जन-चेतना के प्रति हमारा दृष्टिकोण आज की अपेक्षा कुछ भिन्न ही होता । भारतीय आचार्यों ने इस गहराई को अनुभव किया था, इसलिए उनका अधिकांश समय, ध्यान, धारणा, जप, तप, प्राणायाम, प्रत्याहार आदि साधनाओं में लगा था । उन्होंने प्रकाश के एक परमाणु में अपनी चेतना स्थिर कर संसार के रहस्यों को उसी तरह करतलगत किया था, जिस प्रकार मज्जा (पिथ) में ध्यान जमाने से वृक्ष की भूत-भविष्य की कल्पनाएँ साकार हो उठती हैं ।

शरीर जिन कोशों से बनता है, उसमें चेतन परमाणु ही नहीं होते, वरन् दृश्य-जगत् में दिखाई देने वाली प्रकृति का भी उसमें विकास होता है । इससे मनुष्य-शरीर की क्षमता और मूल्य और भी बढ़ गया है । द्रव, गैस और ठोस—जल, ऑक्सीजन, नाइट्रोजन, कार्बन, सिल्वर, सोना, लोहा, फॉस्फोरस आदि जो कुछ भी पृथ्वी में है और जो कुछ पृथ्वी में नहीं है । अन्य ग्रह नक्षत्रों में है, वह सब भी स्थूल और सूक्ष्म रूप से शरीर में है । जिस तरह वृक्ष में कहीं तने, कहीं पत्ते, कहीं फ्ल एक व्यापक विस्तार था, शरीर के विभिन्न क्षेत्रों में उसी प्रकार विभिन्न लोक और लोकों की शक्तियाँ विद्यमान देखकर ही शास्त्रकार ने कहा था—"यत्ब्रह्मांडे तत्पिंडे" ब्रह्मांड की सम्पूर्ण शक्तियाँ मनुष्य शरीर में विद्यमान हैं । सूर्य, चन्द्रमा, बुध, वृहस्पति, उत्तरायण, दक्षिणायन मार्ग, पृथ्वी, जल, अग्नि, आकाश, वायु, विद्युत, चुम्बकत्व, गुरुत्वाकर्षण यह सब शरीर में हैं । यजुर्वेद का कथन है—

शीर्ष्णो द्यौः समावर्तत:, यस्य वातः प्राणाप्राणौ ।
नाभ्याऽसीदन्तरिक्षँ दिशः श्रोत्रं पद्भयां भूमिः ॥

अर्थात् द्यौ शिर, वायु ही प्राण, अन्तरिक्ष नाभि, दिशा कान और भूमि पैर हैं । इस तरह यह विराट् जगत् मेरे भीतर समाया हुआ है ।

ईसाई धर्म की पुस्तक बाइबिल की व्याख्या करते हुए पैरासेल्सस लिखते हैं कि—"मनुष्य-शरीर को इच्छाओं का सजा हुआ वाद्ययन्त्र कहना चाहिए, जिसमें कि आत्मा की झंकार सबसे मधुर सुनाई देती है । इच्छाएँ आकाश में स्थित नक्षत्रों (देव-शक्तियों) के बीज-कोश ही हैं । यह बीज शरीर के कुछ महत्त्वपूर्ण स्थानों में रहते हैं । उनकी आण्विक संरचना और उन नक्षत्रों की आण्विक संरचना में विलक्षण साम्य होता है ।"

पैरासेल्सस आगे लिखते हैं—"शरीर की रचना (नक्षत्र गति) के संरक्षण और निर्देश में होती है । उत्पत्ति के तीसरे दिन चन्द्रमा ने बुद्धि और तुला ने व्यक्तित्व को प्रभावित किया । शरीर में तन्मात्राएँ दूसरे दिन ही आ गई थीं, जिनकी उत्पत्ति सूर्य-शक्ति से हुई । हृदय पर लियो (चन्द्रमा) का अधिकार होता है और वह आत्मिक शान्ति और सौम्यता प्रदान करता है । शरीर के दूसरे सूक्ष्म अंगों को सेजीटेरियस, इगो प्रभावित करते हैं ।" मनुष्य-शरीर में विद्यमान यही चेतना-कोश ही जीवन की गतिविधियों का निर्माण करते हैं । इस तरह बाइबिल और बाइबिल के पण्डित भी इस तथ्य से परिचित थे कि शरीर का स्थूल भाग जहाँ पार्थिव अणुओं से बना है वहाँ उसकी चेतना का विस्तृत ढाँचा ब्रह्माण्ड की शक्तियों और नक्षत्रों से बना है, उसका स्वरूप चाहे कितना ही सूक्ष्म क्यों न हो ।

योग ग्रन्थों में वर्णित चमत्कार शरीर की इन सूक्ष्म और अलौकिक शक्तियों का विकास मात्र है । सब कुछ हमारे शरीर में हैं, यदि हम उसे खोजने का प्रयत्न करें तो बाह्य सम्पदाएँ न होने पर भी अतुल शक्तियों के स्वामी बन सकते हैं । बहुमुखी शक्तियों के स्रोत हमारे भीतर भरे पड़े हैं, उनका विकास जीवन की अनेक धाराओं में कलकत्ते के वट-वृक्ष की भाँति किया जा सकता है उससे अपना ही नहीं, हजारों औरों को भी आश्रय, संरक्षण और जीवन प्रदान किया जा सकता है ।

आश्चर्यों से भरी ईश्वरीय सत्ता

संसार का सातवाँ आश्चर्य ताजमहल मानवीय बुद्धि, ज्ञान और कला कौशल का अद्भुत उदाहरण माना जाता है । बुद्धि तत्व के रहस्य अगम अगोचर हैं जो कुछ थोड़े से प्रकट हैं वह मनुष्य और अन्य जीवधारियों के हैं उन सब में मनुष्य की बुद्धि ने ही आश्चर्यजनक आविष्कार और रचनाएँ की हैं इसीलिए आज मनुष्य को सर्वश्रेष्ठ होने का अहंकार हो गया है, किन्तु यदि अचरज भरी नीचे दी गई घटनाओं का मनन किया जाय तो पता चलेगा कि मनुष्य की अन्तःप्रकृति के समान ही बाह्य प्रकृति भी एक विराट् मस्तिष्क की स्वामिनी और सहचरी है उसकी रचनाएँ मानवीय ज्ञान से कहीं अधिक सर्वशक्तिमान ज्ञान का अस्तित्व प्रतिपादित करती हैं ।

एलोविले—नारमैंडी (फ्रांस) में एक ओक का वृक्ष है जिसकी आयु लगभग १ हजार वर्ष हो चली । वृक्ष की विशालता और उसके तने की राक्षसी मोटाई देखकर एक अंग्रेज के मन में उसको एक जगह खोखला करके गिरजाघर बनाने की बात आयी । उसने अपने विचार को क्रियान्वित भी किया । एक दो मंजिला गिरजाघर इस विशाल वृक्ष के तने में बनाया गया जो १६९६ से लेकर अब तक ज्यों का त्यों बना हुआ है एक ओर गिरजाघर में बैठकर पूजा उपासनाएँ चलती रहती हैं दूसरी ओर वृक्ष भी ऋतु के अनुसार फलता-फूलता रहता है । तने के भीतर बना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

गिरजाघर आश्चर्य हो गया पर उस वृक्ष के नियंता को किसी ने भी आश्चर्य से नहीं देखा यह ऐसा ही है जैसे कि लोग विराट् ब्रह्माण्ड में समुद्र की एक बूँद के समान पृथ्वी को ही सब कुछ मानते हैं पर विराट् जगत की कल्पना उन्हें कभी नये ढंग से सोचने की प्रेरणा ही नहीं देती ।

बारजक विवारेस में पियरे डिफोरनेल नामक एक ऐसा व्यक्ति हुआ जिसको तीन शताब्दियों का पिता माना गया है । १२६ वर्ष जी कर मरने वाले इस किसान ने तीन विवाह किए तीनों पत्नियों से उसे तीन पुत्र हुए । पहला पुत्र हुआ १६६६ में अर्थात् १७वीं शताब्दी में, दूसरा १७३८ में अर्थात् १८वीं शताब्दी में तीसरा बेटा जन्मा तब उसकी आयु १२० वर्ष की थी यह सन् १८०१ की बात है अर्थात् १९वीं शताब्दी की । इस बच्चे के ६ वर्ष बाद भी वह स्वस्थ जीवन जीया और अपने आपको 'वाण्डर बुक ऑफ स्ट्रेन्ज फैक्ट्स' (अजनबी सच्चाइयों की आश्चर्यजनक पुस्तक) में उल्लेख होने का पात्र बनाया, किन्तु इस वृक्ष की जो हजार वर्ष से खड़ा है इस बेचारे मनुष्य से क्या तुलना फिर क्यों न यह माना जाय कि प्रकृति का मस्तिष्क मानवीय मस्तिष्क से कहीं अधिक सक्षम और विशाल है ।

कुतुबनुमा जैसी छोटी-सी मशीन भी भगवान की उँगलियों से बने 'कुतुबनुमा पौधे' की नकल के बिना मनुष्य नहीं बना सका इस वृक्ष को कुतुबनुमा वृक्ष इसलिए कहते हैं कि इसकी पत्तियाँ हमेशा उत्तर-दक्षिण की ओर ही घूमी रहती हैं । दुनिया भर की सारी मशीनें शरीर रचना का आधार हैं या प्रकृति के किसी भाग का अनुकरण । फिर नकलची मनुष्य को सबसे बुद्धिमान माना जाय अथवा यह कि सृष्टि में श्रेष्ठतम बुद्धि का अधिष्ठाता तो कोई और ही शक्ति है जिसका नियन्त्रण सारे विश्व-ब्रह्माण्ड में है मनुष्य बेचारे की पहुँच तो चन्द्रमा तक ही हो पायी है ।

जब प्रस्तुत किए जाते हैं निम्न प्रकार के उदाहरण तब तथाकथित बुद्धिवाद को पसीना आ जाता है । कोई उत्तर देते नहीं बनता विज्ञान का दम भरने वाले बौद्धों (बौद्धों का अर्थ बुद्ध धर्म मानने वालों से नहीं वरन् ज्ञान-विज्ञान का दम भरने वाले उन लोगों से है आस्तिकता जिनकी दृष्टि में अंध विश्वास से अतिरिक्त कुछ नहीं) को । इस तरह की एक घटना लिसेनागियर (आयरलैण्ड) की ही है । माता बिद्दी कैशल्या एक ऐसी स्त्री थी जिसने अपने गर्भ से एक बार एक-दो चार नहीं पूरे १०० मुर्गी के अंडे दिए । मातृ भावनावश कहें अथवा किन्हीं पूर्व जन्मों के संस्कार जिस तरह मुर्गी अपने अण्डों के ऊपर बैठकर उन्हें बच्चे न निकलने तक सेती रहती है । बिद्दी कैशल्या भी लगातार एक घोंसला बनाकर और अण्डे उसमें सुरक्षित रखकर ३ सप्ताह तक उसमें बैठी रही । ३ सप्ताह बाद उन अण्डों से आदमी के नहीं १०० मुर्गी के बच्चे पैदा हुए । वैसे तो विकासवादी आध्यात्मिक धार्मिक मान्यताओं की खाल उधेड़ते रहते हैं और जहाँ-तहाँ से प्राप्त नर कंकालों के आधार पर सिद्ध करते रहते हैं कि मनुष्य एककोशीय जीव अमीबा का विकसित रूप है पर जब उनसे पूछा जाता है कि यह मुर्गी के बच्चे जो स्त्री के पेट से पैदा हुए तो वे झुँझला पड़ते हैं और कहते हैं यह अपवाद है । अपवाद ही सही पर उसका भी तो कुछ बौद्धिक आधार होना चाहिए । यह विश्वव्यापी ईश्वरीय सत्ता के अतिरिक्त क्या हो सकता है ?

कुल ७७ रासायनिक सूत्रों को जोड़कर एक साधारण सा 'यीस्ट' बना लेने वाले डॉ. हरगोविन्द खुराना को नोबेल पुरस्कार मिला यह हम सबके लिए गर्व की बात हुई कि मनुष्य में कितनी बौद्धिक क्षमता है पर जो लाखों करोड़ों रासायनिक सूत्रों से बने पिण्ड और अरबों रासायनिक सूत्रों से बने ब्रह्माण्डों की रचना करता है उस विलक्षण बौद्धिक अस्तित्व को पुरस्कार देना तो दूर मान्यता देना भी आज के लोगों को भारी पड़ रहा है । इसे बौद्धिक दिवालियापन न कहा जाय तो और क्या कहा जाय । पदार्थ में भाव (अपदार्थ) की उपस्थिति विज्ञान ने सिद्ध कर दी फिर भावना-स्रोत को अमान्य किया जाय और पदार्थ स्रोतों के सिद्धान्त तय किए जायें तो इसे मनुष्य का एक-पक्षीय चिन्तन ही कहा जायेगा ।

आज भी ऐसी घटनाएँ घटित होती रहती हैं जबकि जड़ चेतन के संयोग की आश्चर्यजनक घटनाएँ देखने को मिल जाती हैं । वैज्ञानिक उनका कोई उत्तर नहीं दे पाते । सराक्यूज की रोने वाली मूर्ति का रहस्य अभी तक अमेरिकी वैज्ञानिक खोज नहीं पाये यहाँ प्रस्तुत है यूरेक्थम के प्रसिद्ध मन्दिर का ऐतिहासिक वर्णन जो सराक्यूज की रोने वाली मूर्ति से भी बढ़कर आश्चर्यजनक है । यह मन्दिर ग्रीक की राजधानी एक्रोपोलिस में स्थित है । बात उस समय की है जब थामस ब्रूस एल्गिन के अल सन् १७६६ में तुर्की में ब्रिटिश राजदूत थे । तुर्की के अधिकारियों ने उनसे इस मन्दिर को तोड़कर उसकी मूर्तियाँ इंग्लैण्ड ले जाने की आज्ञा प्राप्त कर ली । मन्दिर गिराने के लिए मजदूरों का एक जत्था रात में काम पर लगाया गया । एक्रोपोलिश निवासियों को इस बात का पता चला तो वे अपने सारे काम छोड़कर भगवान से प्रार्थना करने के लिए बैठ गए । इसी समय एक अविस्मरणीय घटना घटित हुई । अभी बाहर की चहार-दीवारी ही हट पायी थी जैसे ही मजदूरों ने मूर्ति को तोड़कर हटाया एक भयंकर चीख सुनाई दी उसके अन्दर से । कई मजदूर भयभीत होकर गिर पड़े और उनका रक्त तक जम गया ।

कहते हैं कि एक भारी हथौड़े से पिस्टन में पूरी शक्ति लगाकर चोट मारी जाय और पिस्टन को स्वेच्छापूर्वक पीछे को उछलने दिया जाय तो सिलेण्डर में रखा हुआ सारा पानी जमकर बर्फ हो जायेगा । यदि उस बर्फ पर एक गर्म जलता हुआ लोहे का टुकड़ा रखकर उस पर उसी हथौड़े की पूरी शक्ति लगा कर चोट की जाय तो वही बर्फ पानी हो जायेगी और फिर पानी ही न रहेगी वरन् उबलकर हाइड्रोजन व ऑक्सीजन गैसों में बदल कर इतना भयंकर विस्फोट करेगा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

कि वह लोहा भी पिघल कर गैस बनकर उड़ जायेगा । मजदूरों के शरीर का खून जम जाना इस सिद्धान्त की याद दिलाता है और यह बताता है कि वह चीख भारी हथौड़े की मार से भी गम्भीर रही होगी । फिर मजदूर उस मूर्ति के अतिरिक्त दूसरी मूर्ति नहीं तोड़ सके । कहते हैं जिस खम्भे पर मूर्ति रखी थी वह इस प्रकार बना था कि मूर्ति हटते ही चारों ओर से हवा एक दम खिंची उसी से विस्फोट हुआ पर वैज्ञानिक इस बात को मानते नहीं । यदि ऐसा होता तो गर्मियों में उठने वाले बवंडर (साइक्लोन) से भी भयंकर ध्वनियाँ होतीं जबकि ऐसा कहीं सुना नहीं गया । यह मूर्ति आज भी ब्रिटिश म्यूजियम में रखी है और 'यूरेक्थम के रहस्य' के नाम से यह आवाज आज भी रहस्यमय बनी हुई है । उसका कोई वैज्ञानिक विश्लेषण नहीं हो पाया । जड़ और चेतन का यह आकस्मिक संयोग, भाव सत्ता का अस्तित्व ही प्रतिपादित करता है उसकी ओर ही बिल्कुल मुँह मोड़ना मनुष्य जाति के लिए अहंकार की तृप्ति हो सकती है उपयोगी नहीं ।

शाप और वरदान इसी भाव सत्ता के विस्फोट और प्रमाण हैं उससे यह पता चलता है कि मनुष्य अपनी चेतना आत्मा से सान्निध्य सम्पर्क साधकर कहीं अधिक समर्थ और शक्तिशाली हो सकता है भौतिक भोग तो उसे रोगी-दुःखी और अशान्त ही बना सकते हैं सो वही इन दिनों हो भी रहा है । भाव सत्ता के अस्तित्व और उसकी शक्ति का प्रमाण है लिपजिग जर्मनी का न्यायाधीश "बेनेडिक्ट कारजो" जिसका जन्म १६२० में हुआ और मृत्यु १६६६ में ।

कारजो दुनिया का भयंकरतम न्यायाधीश था अपनी सर्विस की लम्बी अवधि में उसने ३० हजार से अधिक लोगों को फाँसी की सजा दी । फाँसी की सजा देने के बाद वह फाँसी होते देखने स्वयं भी जाता था । साथ में कुत्ता भी ले जाता था और फाँसी से मरे हुए मृतक की लाश कुत्ते से नुचवाता था । ऐसा कोई दिन नहीं गया उसके कार्यकाल में जबकि उसने कम से कम ५ व्यक्तियों को फाँसी न लगवाई हो । एक दिन एक दुःखी मनुष्य की आत्मा कराह उठी । फाँसी पर चढ़ने के पूर्व उसने शाप दिया, तेरी कुत्तों जैसी मृत्यु होगी, जिस दिन तेरा कुत्ता मरेगा उसी दिन तू भी मर जायेगा और कितने ही जन्म तू बार-बार कुत्ता होकर मरेगा ।

अभी शाप दिए कुछ ही दिन बीते थे कि एक दिन उसके पालतू कुत्ते को एक पागल कुत्ते ने काट लिया, फिर उसी के कुत्ते ने उसे काट लिया । कुत्ता मर गया उसके कुल तीन घण्टे पीछे कुत्तों की तरह भौंक-भौंककर उसकी भी मृत्यु हो गई । यह तो पता नहीं अगले जन्म में वह क्या हुआ पर यह आश्चर्य तो सभी को हुआ कि निर्दोष आत्मा के शाप, जिसे भावनाओं का आन्तरिक विस्फोट कहना ज्यादा उपयुक्त है—ने उसे किस तरह नारकीय परिस्थितियों में जा धकेला ।

तात्पर्य यह कि संसार में मनुष्य की बुद्धि से भी बड़ी बुद्धि है, उस भाव सत्ता का नाम ही भगवान है वही इतना विराट् होकर विराट् ब्रह्माण्ड की विलक्षण रचना, पालन-पोषण और विनाश की क्रीड़ा किया करता है । आश्चर्य मनुष्य की बुद्धि और उसका ज्ञान नहीं भगवान है उसे भी जानने का प्रयत्न अवश्य करना चाहिए ।

इन आश्चर्यों का क्या कोई कारण है?

यन्त्रों या मशीनों द्वारा बनाई गई वस्तुओं का रंग, रूप, आकार, प्रकार प्रायः एक ही प्रकार का होता है । किन्हीं यान्त्रिक गड़बड़ियों के कारण ही कभी कोई उत्पादन बेडौल हो जाता है, किन्तु वह अन्य उपकरणों की भाँति न तो टिकाऊ सिद्ध होता है और न ही उसे सामान्य ढंग से प्रयोग में लाया जा सकता है । प्रकृति में विद्यमान चेतन सत्ता, जो यहाँ प्राणियों और प्राकृतिक पदार्थों की उत्पत्ति, अभिवर्धन और विनाश का संचालन करती है, उसका पहला प्रमाण तो यही है कि इस सृष्टि में कोई भी दो वस्तुएँ एक समान नहीं हैं । संसार में इस समय ४०० करोड़ से भी अधिक मनुष्य बसते हैं, परन्तु किन्हीं में भी एक-दूसरे व्यक्ति से पूर्ण साम्य नहीं दिखाई देता । एक साथ जन्म लेने वाले दो बच्चों की आकृति में भले ही समानता दिखाई दे, किन्तु उनमें भी कोई न कोई अन्तर ऐसा होता ही है जो दोनों के अलग-अलग अस्तित्व को सिद्ध करता है ।

जानवरों में भी यही बात है । मनुष्य की अपेक्षा पशु अधिक एक-दूसरे के समान दिखाई देते हैं, किन्तु आयु, वजन, शरीर के आकार, रंग, रूप और विभिन्न विशेषताओं को दृष्टिगत रखते हुए उनकी आपस में तुलना की जाय तो कोई दो पशु भी एक जैसे नहीं होते । प्राणियों की बात जाने दें । दो कचड़े, दो पहाड़, दो नदियाँ भी ऐसी नहीं हैं जिन्हें एक-दूसरे की अनुकृति कहा जा सकता । यह विभिन्नता, विचित्रता इस बात की द्योतक है कि प्रकृति में सृजन, अभिवर्धन और विनाश की प्रक्रिया का संचालन करने वाली ऐसी कोई सत्ता है, जो इन सबका नियमन, नियन्त्रण करती है ।

कई बार उस अद्भुत कलाकार की अद्भुत रचनाएँ इस रूप में भी सामने आती हैं कि उन्हें देखकर दाँतों तले अंगुली दबानी पड़ती है । यद्यपि उन अद्भुतताओं का रहस्य समझने के लिए वैज्ञानिक विश्लेषण किया जाता है और उन कारणों का पता लगाने की चेष्टा की जाती है, जिनसे ऐसी विलक्षणताएँ उत्पन्न हुईं । बहुधा इस प्रकार के प्रयासों का कोई निष्कर्ष सामने नहीं आता और न ही कोई उनके कारणों का पता चलता है । ऐसा लगता है, ये कृतियाँ उस सृष्टा द्वारा मनुष्य के सामने प्रस्तुत की जाने वाली पहेलियाँ हैं और सम्भवतः उसके ज्ञान को चुनौती देती हुई सी प्रतीत होती हैं । उदाहरण के लिए ३० सितम्बर १९७७ को उत्तर-पूर्वी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चीन के लिआओनिग प्रान्त के एक किसान परिवार में एक ऐसे बच्चे का जन्म हुआ जिसके पैदा होते समय ही दाढ़ी मूँछ थीं । इसके अतिरिक्त पूरे शरीर पर बाल थे ।

इस बच्चे के जन्म का समाचार विश्व के प्रमुख समाचार पत्रों में प्रकाशित हुआ । बच्चे के होठ, हथेली तथा पैरों के तलुओं के अतिरिक्त पूरे शरीर पर घने बाल थे । माथे पर करीब तीन इंच लम्बे बाल और भौंहें इतनी घनी थीं कि कपाल तक फैलकर वे सिर के बालों के साथ मिल गयीं । आश्चर्य की बात तो यह है कि इन असामान्य विशेषताओं के होते हुए भी बच्चा सामान्य बच्चों के समान स्वस्थ और शक्तिशाली है जन्म से अब तक वह एक भी बार बीमार नहीं पड़ा । सामान्य बच्चों की तरह वह भोजन करता और गहरी नींद सोता है । बच्चे को इन दिनों वैज्ञानिकों के विशेष दल द्वारा अध्ययन के लिए लिआओनिंग प्रान्त की राजधानी शिनयांग में लाया गया है । उसकी एक फिल्म भी बनाई गयी है ।

भारत में सन् १६२५ में मंगलौर के एक प्रोफेसर की पत्नी ने ऐसे ही बच्चे को जन्म दिया था, जिसके मुँह पर मूँछें और शरीर पर घुँघराले बाल थे । यह चीनी बालक से एक अर्थ में भिन्न था कि उसके चार पैर थे, दो पैरों के तलुबे आगे की ओर तथा दो पैरों के तलुबे पीछे की ओर । दिल्ली में सन् १६१७ में एक ऐसे बच्चे ने जन्म लिया था जिसके तीन पैर थे । इसका आधा शरीर पुरुष का था और आधा स्त्री का । यह बच्चा आठ वर्षों तक जीवित रहा ।

१६ जून १६२६ को लाहौर के पास एक गाँव में एक बढ़ई स्त्री ने ऐसी लड़की को जन्म दिया जिसका चेहरा भालू जैसा और कान गधों के कान जैसे थे । उसकी जीभ गर्दन से सटी हुई थी । इस तरह की घटनाएँ आजकल भी होती हैं । आये दिन उनके समाचार प्रकाशित होते रहते हैं । कई लोग इन विलक्षणताओं के लिए परमाणु परीक्षणों से उत्पन्न हुए विकिरण को बताते हैं, किन्तु ऊपर भारत की जिन तीन घटनाओं का उल्लेख किया गया है, वे तो उस समय की हैं जब लोगों ने अणुबम का नाम तक नहीं सुना थे और न ही ऐसे प्रयोगों का आरम्भ हुआ था ।

सन् १६३३ में पंजाब के जलालपुर नामक स्थान में एक सात महीने की लड़की के सिर में से बच्चे का जन्म हुआ । यह समाचार लाहौर से प्रकाशित होने वाले अखबार में २२ अप्रैल, १६३३ को प्रकाशित हुआ था । सात महीने की इस बालिका के सिर में पहले तो एक छोटी-सी रसौली निकली । कुछ ही समय में यह इतनी बढ़ गई कि उसका वजन लगभग लड़की के वजन के बराबर हो गया । लड़की के माता-पिता इस संकट से त्राण पाने के लिए कई डॉक्टरों के पास गए, पर सभी ने इस खतरनाक ऑपरेशन को करने में हिचकिचाहट व्यक्त की । अन्त में लाहौर के डॉ. बोधराज ने उस बच्ची का ऑपरेशन किया और बढ़ा हुआ माँस पिण्ड काट डाला । इस कटे हुए माँस पिण्ड में से एक बच्चा निकला । जिसका शरीर पूर्णकाल तक गर्भ में रहने वाले बच्चे की तरह विकसित था । उसके सभी अंग नौ माह तक गर्भ में रहने वाले बच्चे के समान विकसित हो चुके थे । यही नहीं, बच्चा कई घण्टों तक जीवित भी रहा ।

बेलग्रेड के सरविया अस्पताल में कुछ वर्ष पूर्व एक किसान के गर्भ से दो बच्चों के जन्म की घटना समाचार पत्रों में प्रकाशित हुई थी । इस किसान को पेट में दर्द रहने की शिकायत रहती थी । डॉक्टरों ने बाहरी परीक्षणों द्वारा यह रोग निदान किया था कि उसके पेट में कोई फोड़ा या रसौली है, जो ऑपरेशन द्वारा ही बाहर निकाली जा सकती है । ऑपरेशन के लिए वह किसान जब सरबिया अस्पताल में गया । डॉक्टरों ने ऑपरेशन किया तो उसके पेट के ऊपरी भाग से दो बच्चे निकले । एक लम्बाई में नौ इन्च और वजन में कुछ पौण्ड भारी था । आश्चर्य की बात यह कि उसके सिर पर घने बाल होने के साथ-साथ मुँह में कई दाँत भी थे । शरीर की रचना जन्म लेने वाले सामान्य बच्चों की भाँति परिपूर्ण थी ।

चीन में पिछले दिनों एक और अद्‌भुत बालक का मामला प्रकाश में आया है । सन् १६७१ में जन्मे इस बच्चे को जन्म के समय ही पूरे दाँत निकले हुए थे । साथ ही शरीर पर घने बाल भी थे । आमतौर पर बच्चों के दूध के दाँत सात, आठ वर्ष की आयु में गिरने लगते हैं, किन्तु नौ वर्ष से अधिक हो जाने पर भी, अभी तक उसका एक भी दाँत नहीं गिरा है । उसके शरीर पर अभी भी पूर्ववत् बाल हैं । उसका शारीरिक विकास ठीक प्रकार से हुआ है । पढ़ने में भी वह होशियार है साथ ही पिंग-पोंग का अच्छा खिलाड़ी भी है । कहा जाता है कि रामचरित मानस के रचयिता गोस्वामी तुलसीदास के भी जन्म के समय ही मुँह में पूरे दाँत थे । आमतौर पर बच्चे जन्म लेने के बाद रोते हैं, किन्तु तुलसीदास जन्म लेने के बाद हँसने लगे थे । इसी से उनके माता-पिता ने उन्हें कोई प्रेत या अवतार समझकर, उनसे त्राण पाने का उपाय सोचा था ।

इस तरह के विचित्र बालकों का जन्म क्यों होता है ? कौन से कारण ये विलक्षणताएँ उत्पन्न करते हैं ? इस सम्बन्ध में वैज्ञानिक केवल अटकलों से ही काम ले रहे हैं । किसी ठोस निष्कर्ष पर पहुँच पाना अभी तक सम्भव नहीं हुआ है । प्रश्न उठता है कि प्रकृति अपने नियमों के अनुसार काम करती हो तो ये अपवाद किन नियमों के अन्तर्गत आते हैं ? यदि प्रकृति स्वयं अपना संचालन कार्य सम्पादन करने के लिए सर्वतः स्वतन्त्र नहीं है, तो कौन-सी शक्ति उसका नियमन करती है ? स्पष्ट ही किसी चेतन सत्ता का अस्तित्व स्वीकार करना पड़ता है और ये घटनाएँ इस सत्ता का क्रीड़ा कौतुक ही कही जायेंगी । आगे चलकर इन विलक्षणताओं का भले ही कोई कारण खोज लिया जाय, किन्तु चेतन सत्ता का अस्तित्व निर्विवाद और असंदिग्ध है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दृश्य से भी अधिक विलक्षण और सामर्थ्यवान : अदृश्य जगत

योग वाशिष्ठ में एक उपाख्यान इस प्रकार आता है "बहुत समय पूर्व पद्म नाम का एक राजा राज्य करता था । उसकी पत्नी का नाम शीला था । राजा और रानी में गहरी अनुरक्ति थी । शीला यह नहीं चाहती थी कि उसे कभी पति-वियोग सहना पड़े । वह माँ सरस्वती की उपासना करने लगी । प्रसन्न होकर ज्ञान की देवी प्रकट हुईं और शीला से उन्होंने वर माँगने को कहा । शीला ने प्रार्थना की कि यदि उसके पति की मृत्यु पहले हो जाय तो भी पति की आत्मा उसके समक्ष बनी रहे । देवी सरस्वती यह वरदान देकर कि शीला जब भी स्मरण करेगी वह प्रकट हो जायेंगी और उसकी इस इच्छा की पूर्ति करेंगी, अन्तर्ध्यान हो गयीं । कुछ समय बाद राजा की मृत्यु हो गयी । शोकातुर शीला ने वीणावादिनी का ध्यान किया । दिए गए वचन के अनुसार सरस्वती उपस्थित हुईं । शीला ने पूछा कि उसके पति कहाँ हैं ? देवी ने उत्तर दिया कि प्रत्यक्ष स्थूल सृष्टि के भीतर ही एक और सूक्ष्म सृष्टि है । उसके पति वहीं सूक्ष्म सृष्टि में निवास कर रहे हैं । शीला को देवी सरस्वती ने बताया कि एक जगत के भीतर दूसरा जगत और उसके भीतर तीसरा जगत इसी तरह यह सिलसिला अनन्त काल तक जारी है । एक सृष्टि के जीव दूसरी सूक्ष्म सृष्टि वाले जीवों को देख सकने में अक्षम हैं, पर साधना द्वारा विशिष्ट क्षमता अर्जित करके सूक्ष्मतम सृष्टियों में प्रविष्ट कर उनमें निवास करने वाले सूक्ष्म जीवों का स्वरूप और व्यवहार देखा जा सकता है ।"

उपाख्यान में आगे वर्णन आता है कि 'सूक्ष्मतर' सृष्टि में प्रवेश करके पति की स्थिति को देखने की उत्कट इच्छा शीला ने व्यक्त की । देवी की कृपा से अन्य सृष्टि में विचरण करने वाले पति के सशरीर स्वरूप को उसने देखा । कुछ ही समय में कितनी ही योनियों और सृष्टियों में भ्रमण करने के लम्बे कथानक के साथ उपाख्यान की समाप्ति होती है । आख्यान में सबसे महत्त्वपूर्ण तथ्य का रहस्योद्घाटन यह हुआ है कि प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर होने वाली सृष्टि के भीतर ही कितनी ही सूक्ष्मतर सृष्टियों का अस्तित्व विद्यमान है । जिसका बोध सामान्यतया मनुष्य को अपनी तन्मात्राओं तथा ज्ञानेन्द्रियों द्वारा नहीं हो पाता ।

मानवी ज्ञान की पकड़ सीमा त्रिआयामिक विश्व तक है । दृश्य जगत लम्बाई, चौड़ाई और ऊँचाई अथवा गहराई के अन्तर्गत आता है । हमारी इन्द्रियों की बनावट भी ऐसी है कि वे तीन आयामों वाली स्थूल सृष्टि भर का अनुभव कर पाती हैं । सापेक्षवाद के जनक विश्व के मूर्धन्य वैज्ञानिक आइन्स्टीन ने दिक्काल से परे चतुर्थ आयाम (फोर्थ डाइमेन्शन) की खोजकर विश्व के समक्ष एक नये रहस्य पर प्रकाश डाला । मूर्धन्य वैज्ञानिकों का मत है कि फोर्थ डाइमेन्शन में पहुँचने पर वस्तुओं का स्थूल स्वरूप दिखायी नहीं पड़ता । इस शृंखला में खोज की एक रहस्यमय कड़ी यह जुड़ी है कि प्रत्येक पदार्थ के साथ प्रति पदार्थ जीव के साथ प्रति जीव तथा विश्व के एक प्रति विश्व का अस्तित्व भी है । एण्टीमैटर, एण्टी यूनीवर्स, एण्टी प्रोटॉन, एण्टी इलेक्ट्रॉन पर शोध करने वाले मूर्धन्य वैज्ञानिकों में पाल. ए. एम. डिराक, डॉ. स्नोडिंगर, डॉ. कार्ल डी. एण्डरसन, एमेलियो जी. सेगरे, ओवेन चेम्बन लेन तथा पी. वाइपसीलेन्टिस का नाम उल्लेखनीय है । प्रति पदार्थ का अस्तित्व प्रमाणित होते ही अब यह सोचा जा रहा है कि न केवल पदार्थ का वरन् प्रत्येक संरचना का एक स्वतन्त्र प्रति स्वरूप विद्यमान होना चाहिए, किन्तु एक प्रश्न सहज ही उठता है कि पदार्थ, विश्व तो दीखता है पर प्रति पदार्थ, प्रति विश्व मानवी नेत्रों से दृष्टिगोचर नहीं होता । ऐसी सम्भावना व्यक्त की जा रही है कि प्रति जगत एवं सम्बन्धित पदार्थों एवं जीवधारियों का अस्तित्व चतुर्थ आयामिक अदृश्य सूक्ष्म सृष्टि में ही कहीं होना चाहिए ।

कभी-कभी ऐसी विलक्षण घटनाएँ घटित होती हैं, जो यह सोचने को बाध्य करती हैं कि अपने ही इर्द-गिर्द किसी रहस्यमय अदृश्य सृष्टि का अस्तित्व विद्यमान है, जो पदार्थों एवं जीवों को भी उदरस्थ कर लेती है । समय-समय पर देखते ही देखते पल मात्र में विलुप्त हो जाने वाले व्यक्तियों एवं पदार्थों की रहस्यमय घटनाएँ जिनका अब तक कुछ भी अता-पता मालूम न हो सका, उपर्युक्त सम्भावना को और भी अधिक परिपुष्ट करती हैं ।

अठारहवीं सदी के आरम्भ में स्पेन और फ्रांस के बीच भयंकर युद्ध चल रहा था । पाँच हजार सैनिकों का नेतृत्व कर रहे थे कमाण्डर ली. जोर्न बाब । सैनिक तीन टुकड़ियों में बँटकर चल रहे थे । एकाएक १५ सौ सैनिकों की एक टुकड़ी कुछ सेकण्डों में विलुप्त हो गयी । सूचना कमाण्डर ली. जोर्न बाब को मिली । उक्त स्थान को खतरनाक घोषित करते हुए उन्होंने सैनिकों को शीघ्रातिशीघ्र पार करने का आदेश दिया । बाद में विशेषज्ञों की एक टोली सैनिकों के विलुप्त हुए स्थान पर खोज-बीन के लिए भेजी गयी, पर कुछ भी सुराग न मिल सका । इस घटना का विस्तृत उल्लेख 'हिस्ट्री ऑफ वण्डरफुल इवेन्ट्स'—पुस्तक में है । ऐसी ही एक घटना १८५६ में घटी । ६५० फ्रान्सीसी सैनिकों का एक ग्रुप निकटवर्ती जर्मन चौकी पर हमला करने के लिए आगे बढ़ रहा था । सभी सैनिक अस्त्र-शस्त्रों से लैस थे । अचानक हवा का एक हल्का-सा बवण्डर आया और देखते ही देखते ५५ सैनिक अदृश्य हो गए । बचे हुए पाँच सैनिकों ने उस स्थान की एक-एक इंच भूमि देख डाली, पर उनका कुछ भी पता न लग सका । महीनों तक खोज-बीन चलती रही, पर निराशा ही हाथ लगी और एक भी सैनिक की जानकारी न मिल सकी ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सन् १९३९ में चीन और जापान के बीच युद्ध चल रहा था । चीनी सेना की तीन हजार सैनिकों की एक टुकड़ी का पड़ाव नानकिंग नामक स्थान पर था । टुकड़ी का सम्पर्क वायरलेस द्वारा केन्द्र से निरन्तर बना हुआ था । एक दिन प्रातः अचानक यह सम्पर्क टूट गया । केन्द्रीय सैनिक कमाण्ड ने अविलम्ब सैनिकों की एक दूसरी टुकड़ी उक्त ग्रुप का पता लगाने के लिए भेजा । इस दस्ते ने आकर नानकिंग स्थान पर खोज-बीन की । सैनिकों के अस्त्र-शस्त्र, खाद्य, सामग्री, वस्त्र, बिस्तर सभी समान वहाँ मौजूद थे, पर एक भी सैनिक का वहाँ पता न था । खोजी कुत्ते उक्त स्थान पर भेजे गए । वे वहाँ पहुँचकर भौंकते रहे पर कहीं आगे नहीं बढ़े । एक फर्लांग दूरी पर दो सैनिक सुरक्षा पहरे पर नियुक्त थे । उनसे पूछताछ की गई, पर उन्होंने किसी प्रकार के बाह्य आक्रमण आदि की पुष्टि नहीं की । इस घटना का फिर कोई पता न चला ।

व्यक्तियों ही नहीं वस्तुओं के अदृश्य हो जाने के समाचार भी कितनी ही बार मिले हैं । फ्रान्सीसी वैज्ञानिक 'सेलारियर' ने एक घटना का उल्लेख किया है कि "पेरिस में एक प्राचीन प्रतिमा थी । एक दिन पुरातत्व वेत्ता प्रतिमा का परीक्षण कर रहे थे कि वह अकस्मात हवा में ओझल हो गयी । अटलांटिक महासागर का रहस्यमय क्षेत्र बरमूडा त्रिकोण वैज्ञानिकों के लिए अभी भी शोध का विषय बना हुआ है । एक सदी के भीतर उस स्थान से सैकड़ों की संख्या में विशालकाय जलपोत तथा वायुयान गायब हो चुके हैं और उनमें बैठे हजारों व्यक्तियों का आज तक कोई सुराग नहीं मिल सका ।

इन घटनाओं को देखते हुए विश्व के मूर्धन्य वैज्ञानिक अब यह सोचने पर विवश हो गए हैं कि अपने ही इर्द-गिर्द किसी अदृश्य जगत का अस्तित्व मौजूद है जो दृश्य की तुलना में कहीं अधिक विलक्षण और सामर्थ्यवान है । भौतिकविद् हर्बर्ट गोल्डस्टीन अपने शोध प्रबन्ध 'प्रापेगेशम ऑफ शार्ट रेडियो वेव्स' में लिखते हैं कि "प्रत्यक्ष दुनिया के भीतर ही सूक्ष्म अदृश्य जगत विद्यमान है जिसमें प्राणी और पदार्थ दोनों ही भरे पड़े हैं, पर वे मानवी नेत्रों से दिखायी नहीं पड़ सकते । किसी न किसी रूप में वह संसार हमसे भी जुड़ा हुआ है तथा प्रभावित भी करता है ।" सुप्रसिद्ध विज्ञान कथा लेखक "एच. जी. वेल्सन"—"अपने फिक्शन उपन्यास दि इन विजिबुल मैन" में मानव के भीतर उन सम्भावनाओं पर प्रकाश डाला है । जिसके द्वारा वह देश, काल के नियमों से परे अदृश्य लोक में पहुँच सकता तथा उससे सम्बन्ध स्थापित कर सकता है । कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय के डॉ. रावर्ट सिरगी अपने सहयोगियों के साथ ऐसे आधार खोजने में संलग्न हैं जिसके द्वारा पदार्थ के चौथे आयाम को देख एवं समझ सकना सम्भव हो सके ।

भारतीय ऋषियों ने सृष्टि में सात लोकों का वर्णन किया है जो एक से अधिक सूक्ष्मतर और शक्ति सम्पन्न हैं । भूः, भुवः, स्वः, महः, जनः, तपः, सत्यम् लोकों का उल्लेख आर्ष ग्रन्थों में मिलता है । सर्वदृष्टा ऋषिगण इन लोकों में भी समय-समय पर आवागमन करते थे । देश, काल के बन्धन उन्हें नहीं बाँध पाते थे । देवर्षि नारद का लोक-लोकान्तरों में सदा भ्रमण करते रहने तथा उनमें रहने वालों की खोज-खबर लेने का आख्यान सुप्रसिद्ध है । ऋषियों की, योगियों की ऐसी सामर्थ्य का भी वर्णन मिलता है कि वे शरीर, दिक्काल के सभी बन्धनों को तोड़ कर अदृश्य हो जाते थे तथा अपने आप प्रकट भी हो जाते थे । प्राचीन और अर्वाचीन दोनों ही मान्यताओं से किसी ऐसे अदृश्य लोक का परिचय मिलता है जो दृश्य संसार की तुलना में कहीं अधिक विलक्षण है । उसमें पदार्थ और प्राणियों की एक विचित्र सृष्टि हो सकती है । सम्भव है उन जीवों की आकृति और प्रकृति भू-लोक पर निवास करने वाले जीवधारियों की तुलना में सर्वथा भिन्न हो । उनकी गतिविधियाँ एवं अभिरुचियों में भी भू-लोक के जीवधारियों से भारी भिन्नता हो सकती है । भूत, प्रेत, पितर, देवी-देवता जैसी कितनी ही रहस्यमय शक्तियों का परिचय समय-समय पर मिलता है । हो सकता है वे सभी उसी सूक्ष्म जगत में अपना अड्डा जमाये हुए हों और हमारे इर्द-गिर्द ही अदृश्य बने विचरण कर रहे हों, जिनकी अनुभूति हमारी इन्द्रियाँ न कर पाती हों ।

निश्चित ही रहस्यों, विलक्षणताओं एवं सामर्थ्यों का भाण्डागार अदृश्य जगत अपने गर्भ में असीम सम्भावनाएँ छुपाये हुए हैं । भारतीय ऋषियों ने मानवी चेतना की शक्ति को भी असीम सम्भावनाओं से ओत-प्रोत माना है । विशिष्ट अध्यात्म साधनाओं द्वारा न केवल उस अदृश्य जगत से सम्पर्क साधा जा सकता है । वरन् उसमें सन्निहित विविध प्रकार की क्षमताओं तथा जीवधारियों से लाभ उठा सकना भी सम्भव है ।

परोक्ष जगत में बहते सशक्त प्रवाह

यों हर मनुष्य की गतिविधियाँ अपना प्रभाव वातावरण पर छोड़ती हैं पर उनमें से प्रतिभाओं के बढ़े-चढ़े प्राण की मात्रा प्रचलन प्रवाह विनिर्मित करने में विशेष भूमिका निभाती है । जिन दिनों ऋषि-मुनियों का, तपस्वी-मनीषियों का साधु-ब्राह्मणों का युग था, उन दिनों उनकी संयुक्त समरस गतिविधियाँ ऐसा वातावरण बनाती थीं कि उसके प्रवाह में सर्व साधारण को अपनी गतिविधियों में शालीनता सहकारिता जैसे तत्व भरने पड़ते थे । सर्वत्र स्नेह सौजन्य की धारा बहती थी । मध्यकाल में जब सामन्ती रौबदाब था, तब न केवल उनके मुसाहिब जमींदारों ने वैसा ही तौर तरीका अपनाया वरन् साधारण प्रजाजन भी उसी की नकल बनाने लगे । बड़ों का आतंक छोटों के लिए सहज स्वाभाविक बन गया । अंग्रेजी शासन में बड़ों का अनुकरण करते हुए सामान्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

लोगों ने भी वैसी ही वेश-भूषा पहनना आरम्भ कर दी । उसी भाषा को बोलने में रुचि दिखाई । आहार-विहार में भी वही अनुकृति सहज स्थान पाती चली गई । यह फिल्मों का जमाना है, इन दिनों हर युवक-युवती पर वैसा ही स्वभाव एवं रहन-सहन व्यवहार अपनाने की उतावली पड़ी हुई है । बुद्ध, ईसा, गाँधी की भी अपने-अपने समय में प्रचण्ड लहरें चली थीं और उनसे बहुत बड़ा जन समुदाय प्रभावित होता चला गया ।

अमीरी का नशा सम्पन्नता के क्षेत्रों में उद्‌भुत हुआ है । मालदारों के ठाट-बाट, रहन-सहन, शृंगार, सज्जा, अपव्यय, दुर्व्यसन जन साधारण के द्वारा अपनाये जा रहे हैं ताकि वे भी इस आधार पर धनवान समझे जाने की लालसा किसी प्रकार पूरी कर सकें । अन्य अवसरों पर तो उतना नहीं होता पर विवाह-शादियों के दिनों यह ललक चरम सीमा तक पहुँच जाती है । दुल्हन के लिए बड़े जेवरों की ऐसी सज्जा सजाई जाती है मानो वह किसी करोड़पति की बेटी हो और ससुराल वाले कुबेर के खानदान वाले हों । बारात की सज-धज, महँगे प्रतिभोज, बैण्ड, आतिशबाजी आदि में पैसा इस तरह उछाला जाता है मानो इन लोगों के घरों में सोने-चाँदी के खजाने गढ़े हों । दहेज भी इस प्रकार माँगा जाता है मानो देने वाला जो चाहा जाय वही देने में समर्थ है । इसे एक प्रकार का उन्माद ही कह सकते हैं, जो विवाह-शादी के दिनों चरम सीमा पर देखा जाता है पर उसकी खुमारी आगे-पीछे भी बनी रहती है ।

कामुक दृष्टिकोण भी अब नशेबाजों की तरह परस्पर प्रतिस्पर्धा का विषय बनता जा रहा है । देह व्यापार की खुली दुकानें भी कम नहीं हैं । फिर लुकछुप कर जो होता है उसे तो अति विनाशकारी ही कहा जाता है नशों पर रोक भी लगती जा रही है, दूसरे उन्हें महँगा भी किया जा रहा है, फिर भी उसकी खपत के आँकड़े तूफानी गति से ऊपर उठते जा रहे हैं ।

यह सब क्या है ? इसे एक प्रकार से प्रचलन प्रवाह की चित्र-विचित्र धाराएँ ही कहा जा सकता है, जो कुछ प्रतिभावानों द्वारा चलाई जाती हैं और उन्हें सामान्य जन आँखें मूँदकर अपनाते, गले उतारते जाते हैं । सम्प्रदायों और दार्शनिक राजनैतिक वादों को छोड़ने-अपनाने में भी समय पर अदृश्य प्रवाह चलते हैं । जब तक उनके पीछे प्रेरणाएँ रहती हैं तब तक वे गतिशील भी रहते हैं ।

वन प्रदेशों में रहने वाले आदिवासी अभी भी ऐसी परम्पराओं को अपनाते देखे जाते हैं जो इतिहास की दृष्टि से सदियों पुरानी और विचारशीलों की दृष्टि से सर्वथा निरर्थक हो गयीं । फिर भी उन कबीलों के क्षेत्र में इस प्रकार जड़ जमाये हुए हैं मानो उनके विश्वास ही सनातन धर्म हैं । अन्यत्र भी ऐसी ही अनेक प्रकार की परम्पराएँ विद्यमान हैं और समर्थन प्राप्त किए हुए हैं जिन्हें विवेक की कसौटी पर कसे जाने के उपरान्त उनकी कुछ भी उपयोगिता सिद्ध नहीं होती । धर्म सम्प्रदाय भी अपने समय की प्रचण्ड लहर के रूप में अनेक लोगों द्वारा अपनाये जाते हैं पर दूसरा कोई मोड़ आ जाने पर नये मोड़ पर चल पड़ना भी आश्चर्यजनक ढंग से अपनाया जाने लगता है । चीन क्षेत्र में कभी बौद्ध धर्म का बोलबाला था । रूस के प्रभाव क्षेत्र में ईसाई और मुसलमान धर्म का बोलबाला था, पर अब वहाँ सर्वत्र साम्यवाद के जय-जयकार होते जाते हैं । अफ्रीकी देशों में पूर्वजों की मान्यता अब कहाँ रही । वहाँ के अधिकांश निवासियों ने सभ्य कहे जाने वाले लोगों द्वारा अपनाये धर्मों को अपनाना आरम्भ कर दिया है ।

उपर्युक्त पंक्तियों में विचार प्रवाहों का उल्लेख है जो प्रवाहित तो अदृश्य आकाश में होते हैं पर प्रभावित जन साधारण को करते हैं । यह ठीक है कि प्रतिभाशाली स्तर के मनुष्य अपनी प्रखरता के आधार पर प्रचण्ड विचार प्रवाहों को उत्पन्न तथा अग्रगामी करते हैं । पर यह भी गलत नहीं है कि चलते प्रवाह के साथ ढेरों कूड़ा-कचरा उसी दिशा में साथ-साथ बहता चला जाता है । इसी को "मॉब" मेन्टेलिटी या मास मूवमेण्ट कहते हैं । जब किसी प्रकार के खेल तमाशे चलते हैं तो देखा देखी जगह-जगह उनकी पुनरावृत्ति होने लगती है । धर्म क्षेत्र में एक उफान संकीर्तनों के प्रचलन का आया था । कभी देवालय बनाने पर लोग अपने को धर्म ध्वजी मानते थे । अब राजनैतिक आन्दोलनों का बोलबाला है ।

तालाब में ढेला फेंकने पर उसकी लहरें सभी दिशाओं में बहने लगती हैं । आन्दोलनों के सम्बन्ध में भी यही बात है । कभी-कभी तो हड़तालें भी दनादन होने लगती हैं । एक मूर्धन्य द्वारा उठाया गया कदम दूसरों के लिए अनुकरण या प्रतिष्ठा का प्रश्न बन जाता है । नर-नारी आये दिन फैशन बदल-बदल कर कपड़ों का प्रयोग करते देखे जाते हैं । यही भी एक प्रकार से हवा का प्रवाह ही है ।

राजनेता जब आवश्यक समझते हैं, जन-जन के मन में अपने प्रचार माध्यमों से युद्धोन्माद पैदा करते हैं और आवेश इस सीमा तक उभार देते हैं कि युद्ध आरम्भ करना उन राजनेताओं की विवशता बन जाती हैं साम्प्रदायिक दंगे भी ऐसी ही अफवाहों अथवा तथ्यों के आधार पर उभारे गए आक्रोश के फलस्वरूप ही होते हैं । चुनावों के समय भी ऐसे ही तनाव उत्पन्न हो जाते हैं ।

यह अदृश्य वातावरण में चलती रहने वाली अनेक प्रकार की प्रवाह धाराओं की शक्ति सामर्थ्य का उल्लेख है । इन दिनों में यही हो रहा है । अवांछनीयताओं ने लोक मानस पर बुरी तरह अधिकार जमाया है । बुराई में भलाई की तुलना में अधिक आवेश होता है । इसलिए उसका प्रवाह और भी अधिक तेजी से गति पकड़ लेता है । जबकि भलाई का प्रवाह सौम्य एवं सामान्य गति से ही प्रवाहित होता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पैट्रोल और बारूद जितनी जल्दी आग पकड़ते हैं उतनी ज्वलन शक्ति सामान्य पदार्थों में नहीं होती । बुराई तेजी से फैलती है जबकि भलाई की परम्पराओं को अग्रगामी बनाने में समय लगता है और प्रबल प्रयास करना पड़ता है ।

दृश्य जगत के प्रयास प्रयत्नों का अपना महत्त्व है । उसके लिए अनौचित्य को रोकना और औचित्य को बढ़ाना, अनेक रचनात्मक और सुधारात्मक कार्यक्रम अपनाकर सम्पन्न करना पड़ता है । यह उचित भी है और आवश्यक भी । किया भी जाता है, किया भी जा रहा है, किन्तु साथ ही उस पक्ष को भी नजर अन्दाज नहीं करना चाहिए, जो अदृश्य जगत में चल रहे सूक्ष्म प्रवाहों के कारण दृश्य जगत को जन-साधारण को प्रभावित करता है ।

इस क्षेत्र के उपायों में जन जीवन में सदाशयता के समुचित समावेश की आवश्यकता है । नीतिनिष्ठा और समाजनिष्ठा को आस्था जगत में व्यावहारिक जीवन में समुचित स्थान मिले ऐसे प्रयत्न करने चाहिए । साथ ही यह भी नहीं भुला दिया जाना चाहिए कि उत्कृष्ट प्रेरणाओं से भरे पूरे आध्यात्मिक स्तर की सामूहिक तप साधनाओं की भी अनिवार्य रूप से आवश्यकता पड़ती है । उनकी उपयोगिता समझी और प्रक्रिया भी अपनायी जानी चाहिए ।

सूक्ष्म वातावरण को प्रभावित करने की प्रक्रिया

सामान्यतया आवाज एक सीमित दूरी तक ही सुनाई पड़ती है । जैसे-जैसे दूरी बढ़ती जाती है, ध्वनि भी घटती या समाप्त होने लगती है । यही बात गर्मी के सम्बन्ध में भी कही जा सकती है । वह समीपवर्ती क्षेत्र को गरम करती है । निकट रहने पर ताप अधिक होता है और दूर हटने पर गर्मी भी घटने लगती है ।

किन्तु विशेष उपाय उपचारों के माध्यम से आवाज, गर्मी, रोशनी आदि को भी दूर-दूर तक भेजा जा सकता है । तार, रेडियो, टेलीविजन आदि उपकरणों द्वारा यह तथ्य निरन्तर सामने आता रहता है । रेडियो स्टेशन से प्रसारित हुए शब्द सम्वाद क्षण भर में सहस्रों मील की यात्रा करते हुए कहीं से कहीं जा पहुँचते हैं । बिजली के तारों द्वारा गर्मी-रोशनी भी कहीं से कहीं पहुँचाई जा सकती है ।

अब इस सन्दर्भ में कुछ नये आविष्कार सामने आये हैं । किसी स्थान से प्रसारित तरंगें किसी विशेष क्षेत्र में भेजी जा सकती हैं और वे वहाँ रहने वालों के मस्तिष्कों में इच्छित उथल-पुथल पैदा कर सकती हैं । अभी तक यह प्रयोग मात्र किन्हीं को रुग्ण या विक्षिप्त बनाने के सम्बन्ध में किए जाते रहे हैं । उसे शत्रु पक्ष की कार्यक्षमता नष्ट करने में मनःस्थिति विकृति के काम में लाया गया है, पर इस आधार पर यह सम्भावना भी बनती है कि यह प्रयोग उत्कर्ष और समाधान के हितकर एवं उच्चस्तरीय उद्देश्यों के लिए किया जाय तो उससे श्रेष्ठ स्तर का प्रयोजन भी सध सकता है । अभी प्रयोग किस निमित्त हुआ, इस पर अधिक ध्यान न देकर सोचना यह चाहिए कि इस माध्यम को श्रेष्ठ उद्देश्यों के लिए नियोजित करने से कल्याणकारी प्रयोजनों की पूर्ति भी तो हो सकती है ।

कुछ समय पूर्व संसार भर के अखबारों में एक ऐसी रूसी आविष्कार का समाचार छपा था जिसमें एक विशेष प्रकार की रेडियो किरणों द्वारा कनाडा के उत्तरी भाग में बसे व्यक्तियों के मस्तिष्कों को ध्वनि आवृत्ति के माध्यम से अक्षम बना देने की चर्चा थी ।

यह शिकायत कनाडा ने अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर उठाई । इस राष्ट्र के कई क्षेत्रों में ऐसा महौल बना कि हर आदमी उदासी से ग्रसित हो गया । अपने को अस्वस्थ और अक्षम अनुभव करने लगा । इन लोगों की अपने दैनिक कार्य निपटाने की क्षमता भी घट गई और कारखानों, दफ्तरों में नियत समय पर न पहुँच कर गैरहाजिर रहे ।

कनाडा के दो खदान नगरों के श्रमिकों पर लगातार कई दिन तक यह शामत छाई रही । अधिकांश काम पर गए ही नहीं । जो गए वे अपनी ड्यूटी सही तरह देने के स्थान पर कुछ का कुछ करने लगे । सिर दर्द, अनिद्रा, थकावट, बेचैनी, मितली, उदासी, उन पर बेतरह छाई रही । कुछ को चित्र-विचित्र आवाजें कानों में सुनाई पड़ती रहीं ।

एक साथ लाखों लोगों का एक ही प्रकार की विपन्न मनोदशा से ग्रसित हो जाना, आश्चर्य की बात थी । कनाडा ने अनुमान लगाया कि यह रूस द्वारा छोड़ी गई किसी रेडियो विकिरण की तरंगों का प्रभाव है । यों इसके पक्ष में प्रमाण प्रस्तुत कर सकने जैसा कुछ उसके पास नहीं था । फिर भी अनुमान ने अफवाह का रूप धारण किया और वह संसार भर के समाचार पत्रों में छपा । ऐसा हो सकने की सम्भावना पर अनेक अनुमान लगाये गए और वैज्ञानिक तर्क प्रस्तुत किए गए ।

एक बार ऐसी ही शिकायत अमेरिका ने भी की थी । उत्तर-पश्चिम के एक क्षेत्र अलास्का पर रूस ने ऐसा ही प्रयोग परीक्षण किया है । एक बार दोनों देशों में इसी कारण तनाव बढ़ गया व युद्ध की-सी स्थिति आ गई थी ।

इस सन्दर्भ में कहा जाता है कि शत्रु क्षेत्र को निष्क्रिय बनाने के लिए इस प्रकार की रेडियो तरंगों का प्रयोग परीक्षण बहुत समय से चला आ रहा है । अमेरिका के राष्ट्रपति लिण्डन जानसन के समय में वहाँ ऐसा ही आविष्कार होने की चर्चा छपी थी । चौकन्न होकर रूस भी उस दिशा में मुड़ा और एक ऐसे अस्त्र का अन्वेषण करने में जुट गया जिससे किसी क्षेत्र विशेष के सैनिकों व नागरिकों को अस्थायी रूप से शारीरिक एवं मानसिक दृष्टि से अक्षम बना दिया जाय । वे साहस खो बैठें । अस्वस्थता अनुभव करें और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आत्म-समर्पण की बात सोचें । उत्साह और साहस गिर जाने पर, शरीर और मस्तिष्क के साथ न देने पर प्रायः ऐसी ही स्थिति हर किसी की हो सकती है ।

अब तक के युद्ध आयुधों में यह सबसे कम हानिकारक हथियार है । बड़े युद्धों में धन जन की तात्कालिक हानि तो होती ही है, उससे भी बड़ी समस्या होती है अपंगों और अनाथों के निर्वाह की । नष्ट-भ्रष्ट इमारतें तथा कारखाने फिर खड़े करने की । यह सब युद्ध से भी महँगा पड़ता है । प्रस्तुत रेडियो विकिरण के आधार पर यह हो सकता है कि शत्रु पक्ष को अस्थायी रूप से असमर्थ बना दिया जाय । आत्म-समर्पण को पूरा करा लिया जाय । इसके उपरान्त उन्हें निर्वाह योग्य स्थिति में रहने देकर उस झंझट से बचा जाय जो युद्धोपरान्त की समस्याओं के रूप में संकट बनकर सामने आते हैं । अस्तु इस अस्त्र को सामान्य होते हुए भी असामान्य महत्त्व का माना जा रहा है और उसके प्रहार से बचने या लाभ उठाने के लिए सभी पक्ष चौकन्ने हैं ।

इस गुप्त अस्त्र के बारे में कहा गया है कि आविष्कृत तरंगें रेडियो स्तर की तो हैं, पर हैं उससे सर्वथा भिन्न । यह बेरी हाई फ्रीक्वेन्सी—अल्ट्रा हाई फ्रीक्वेन्सी—माइक्रो फ्रीक्वेन्सी एवं राडार टेलीविजन तरंगों से भी भिन्न हैं । वे बिना मध्यवर्ती परावर्तकों के भी किसी भी वांछित क्षेत्र पर सीधी फेंकी जा सकती हैं ।

रेडियो तरंगों में यह कठिनाई है वे किसी ट्रान्जिस्टर जैसे माध्यम से ही पकड़ी जा सकती हैं । वह माध्यम न हो तो फिर प्रसारणों को सुन सकना कठिन है, किन्तु यह बात इन नवीन आविष्कृत तरंगों के सम्बन्ध में नहीं है । उन्हें मानव मस्तिष्क की विद्युतीय क्षमता एवं तरंगों की आवृत्ति से तालमेल बिठाते हुए इस प्रकार का बनाया गया है कि जिस क्षेत्र विशेष में वे पहुँचे वहाँ के सभी निवासी इन्हें अनिच्छुक होते हुए भी अपनाने के लिए बाधित हों । रेडियो का बटन बन्द करके उसकी आवाज बन्द की जा सकती है, किन्तु मस्तिष्क के ऊपर चढ़ाने योग्य ऐसा कोई आवरण नहीं खोजा जा सका जो इन प्रेरित तरंगों के आक्रमण से बचाव कर सके ।

यह तरंगें क्या हो सकती हैं, इस सम्बन्ध में लांस ऐन्जल्स के विकिरण विशेषज्ञ जोसेफ टॉड ने कहा है कि यह इन्फ्रा रेडियो स्तर की तरंगें हैं और किसी भी क्षेत्र को हल्के रूप में अथवा पूरी तरह अशक्त, अक्षम बना सकती हैं । वे समय के लिए अथवा सर्वदा के लिए ऐसे लोग उत्पन्न कर सकती हैं जिनसे मनुष्य जीवित रहने पर भी कोई बड़ा पुरुषार्थ न कर सके ।

मनुष्य शरीर एक समूची वैज्ञानिक प्रयोगशाला के समान है । उसमें प्रकृति को प्रभावित करने वाले सभी उपकरण भली-भाँति सुसज्जित हैं । वैज्ञानिकों प्रयोजनों के लिए जो उपकरण काम में लाये जाते हैं वे सभी प्रसुप्त स्थिति में मानवी काय-कलेवर के अन्तर्गत विभिन्न शक्ति संस्थानों में विद्यमान हैं ।

महामानवों ने समय-समय पर अपनी प्रचण्ड शक्ति से वातावरण बदला है और लोक चिन्तन के प्रवाह को आश्चर्यजनक मोड़ दिया है । सम्पर्क क्षेत्र के व्यक्तियों को परामर्श एवं दबाव से सुधारे बिगाड़े जाने की बात सभी जानते हैं । उसी जानकारी में यह तथ्य भी सम्मिलित किया जाना चाहिए कि दूरवर्ती कुछ लोगों को ही नहीं, व्यापक क्षेत्र के निवासियों को भी दिशा विशेष में चलने बदलने के लिए प्रशिक्षित किया जा सकता है ।

मनस्वी महामानवों में यह शक्ति पुरातन काल से प्रखर रही है अब उस शक्ति को फिर से उभारने की आवश्यकता है ताकि बिगड़े हुए लोक चिन्तन को सुधारा और सत्प्रयोजन के लिए उभारा जा सके । रूस के आविष्कारक क्षेत्र विशेष के लोगों को जिस आधार पर अस्त-व्यस्त करने में एक सीमा तक सफल हुए हैं, उसी आधार पर मानवी सत्ता की समर्थ प्रयोगशाला में लगे उपकरणों द्वारा व्यापक क्षेत्र के जनमानस को सुधारा सम्भाला भी तो जा सकता है ।

असन्तुलन और विक्षेप, सर्वथा अहितकर

घटकों के रूप में मनुष्य जाति अलग-अलग दिखायी पड़ती हुई भी परस्पर एक-दूसरे से अविच्छिन्न रूप से जुड़ी है । सोचा यह जाता है कि भले-बुरे चिन्तन एवं गतिविधियों का प्रभाव मात्र अपने ऊपर ही पड़ता है, जबकि तथ्य और ही है । "अपने मतलब से मतलब और अपने काम से काम" की उक्ति व्यक्तिगत स्वार्थ की सिद्धि के लिए भले ही एक सीमा तक सही उतरे पर इस प्रवृत्ति का दूरगामी परिणाम समस्त समाज पर पड़ता है और हर दृष्टि से अहितकर ही होता है । संकीर्ण स्वार्थों की पूर्ति के लिए प्रतिस्पर्धा चलती तथा अधिकांश व्यक्ति अपने सामाजिक एवं नैतिक दायित्वों की अपेक्षा करने लगते हैं । इन दूरवर्ती परिणामों से अवगत पुरातन ऋषियों ने सदा ही मानव गरिमा के प्रतिकूल निकृष्ट बनाने वाले तत्वों की भर्त्सना की है । चिन्तन को ऊर्ध्वगामी बनाने, गतिविधियों को महान् प्रयोजनों में नियोजित करने की प्रेरणा दी है ।

व्यक्ति समष्टिगत चेतना का अंश है । तालाब में फेंके जाने वाले पत्थर से तरंगें उठतीं तथा दूर-दूर फैल जाती हैं । उसका प्रभाव फेंके गए स्थान तक ही सीमित नहीं रहता, वरन्, सम्पूर्ण तालाब पर पड़ता है । प्रकृति समष्टिगत चेतना का विराट् स्वरूप है । लघु स्वरूप मनुष्य है । अंशी होने एवं विराट् चेतना से अविच्छिन्न रूप से जुड़े होने के कारण उसकी प्रत्येक हलचल का प्रभाव समष्टि पर पड़ना स्वाभाविक है । भले-बुरे विचार एवं कर्म व्यक्ति को ही नहीं समाज को भी प्रभावित करते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ब्रह्माण्ड के प्रत्येक घटक भी एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं । ग्रह-नक्षत्रों के आपसी सन्तुलन एवं सहयोग पर ही सृष्टि गतिशील है । विग्रह असहयोग अथवा असन्तुलन अनेकानेक प्रकृति विक्षोभों के रूप में परिलक्षित होता है । बगावत पर उतारू ग्रह-नक्षत्र स्वयं तो नष्ट-भ्रष्ट होते ही हैं सृष्टि के अन्य घटकों को भी चैन से बैठने नहीं देते । उनका दूरगामी तथा भयंकर प्रभाव अन्य स्थानों पर पड़ते देखा गया है । असन्तुलन से उत्पन्न होने वाली तरंगों के कारण अनेकों प्रकार की दुर्घटनाएँ तक हो जाती हैं ।

कुछ दिनों पूर्व अटलांटिक महासागर के पूर्वीय क्षेत्र के गल्फ स्ट्रीम में एक माल वाहक जहाज समुद्री तूफान के कारण अचानक गायब हो गया । इस प्रकार के समुद्री तूफानों को नाविक 'फ्रिकसी' कहते हैं । अथक प्रयत्नों के बाद भी जहाज का कोई सुराग नहीं मिल सका । फ्रिकसी की चपेट से किसी प्रकार बचे नाविकों का कहना है कि इन अवसरों पर इतना समय भी नहीं मिलता कि रेडियो संकेत भेजा जा सके । न ही लाइफ बोट उतारने का अवसर मिल पाता । इन दुर्घटनाओं से विरले ही बच पाते हैं । स्काटलैण्ड के जार्ज ग्रस्ट २४ वर्ष की आयु से लेकर ३७ तक की आयु तक निरन्तर माल वाहक जहाज के कप्तान रहे । अपने समुद्री जीवन के अनुभवों से सम्बन्धित इन्होंने अनेकों पुस्तकें भी लिखी हैं । इस घटना का उल्लेख करते हुए लिखते हैं कि "उस दिन मैं जहाज का दिशा नियन्त्रक सँभाले हुए था । अपनी ड्यूटी बदलने ही वाला था, अचानक कुछ ही दूरी पर एक पहाड़ जैसी तरंग दिखाई पड़ी । सामने तरंग की ऊँचाई १०० फुट से भी अधिक रही होगी । गति एक्सप्रेस गाड़ी के समान थी । इस आकस्मिक विभीषिका में साहस रख पाना मुश्किल पड़ रहा था । हमारे सहयोगी ने टेलीग्राफिक सन्देश जहाज में बैठे अन्य यात्रियों को खतरे की सूचना देने का परामर्श दिया, किन्तु यह सोचकर कि गहन अन्धकार में यात्री अपना सन्तुलन न खो बैठें इसलिए सूचना प्रसारित करने का इरादा बदल दिया ।

दूसरे ही क्षण भीमकाय तरंगों से जहाज को ७५ फीट से भी अधिक ऊँचाई पर उछाल दिया । उठती गिरती तरंगों में अनिश्चित भविष्य की ओर डोल रही जीवन-मृत्यु के बीच हम झूलने लगे । जहाज के भीतर पानी भर गया । अब खतरे की घण्टी बजाना आवश्यक था । आत्मरक्षा के लिए यात्रियों की भाग-दौड़ आरम्भ हुई । लाइफ बोट में किसी प्रकार कुछ यात्री सवार हो सके । तरंगों के प्रचण्ड वेग के कारण लाइफ बोट पर नियन्त्रण कर पाना असम्भव था । लहरों में थपेड़ों के संयोगवश किसी प्रकार बोट किनारे आ लगी । इसे ईश्वरीय अनुकम्पा ही मानते हैं कि उस भयंकर तूफान से हम सब निकल सके ।

सन् १९८२ में मैनचेस्टर विश्वविद्यालय के प्रोफेसर वेलफोर स्टेवोर ने घोषणा की कि वायुमण्डल में परिवर्तन पृथ्वी के चुम्बकीय क्षेत्र में व्यापक परिवर्तन का कारण होता है । चुम्बकीय परिवर्तन का कारण पृथ्वी की ऊँचाई अन्तरिक्ष से आने वाली विद्युत धाराएँ हैं । अन्यान्य ग्रहों, सूर्य आदि से विकिरण की प्रक्रिया तो लगातार चलती रहती है । उनमें विक्षेप आने पर असन्तुलन उत्पन्न होता तथा प्रभाव दूरवर्ती ग्रहों पर भी पड़ता है । समुद्री ज्वार, भूकम्प जैसी घटना में इन अन्तरिक्षीय विद्युत तरंगों का भारी योगदान है । वैज्ञानिकों का कहना है कि समुद्रों में स्कन्द ज्वार (स्प्रिंग टाइड) तब आते हैं । जब पृथ्वी पर सूर्य और चन्द्रमा दोनों का गुरुत्वाकर्षण बल बराबर होता है । जब सूर्य और चन्द्रमा विपरीत दिशा में होते हैं तो ऊँचाई घट जाती है । गुरुत्वाकर्षण में परिवर्तन का प्रभाव वातावरण तक ही सीमित नहीं रहता, वरन् समस्त जीवधारियों पर भी पड़ता है । नवीनतम वैज्ञानिक शोधों के अनुसार सौर सक्रियता के वर्षों में पृथ्वी के गुरुत्व बल में असाधारण परिवर्तन होता है । इसका प्रभाव मनुष्य की मनःस्थिति पर भी पड़ता है । विश्व में हुए अब तक अधिकांश बड़े युद्धों में यह तथ्य उद्घाटित हुआ है कि जिन वर्षों में सूर्य पर धब्बे अधिक दिखाई पड़े उसी अवधि में उनका सूत्रपात हुआ । सौर धब्बे प्राणियों को किस प्रकार प्रभावित करते हैं यह प्रक्रिया तो अब तक अविज्ञात है, किन्तु इस तथ्य को अब एक मत से स्वीकार किया जा रहा है कि प्राणियों की मनःस्थिति इन परिवर्तनों से बुरी तरह प्रभावित होती तथा विक्षुब्ध बनती है ।

धब्बे क्यों और कैसे उत्पन्न होते हैं । इस सम्बन्ध में सुनिश्चित जानकारी नहीं मिल पायी, किन्तु ऐसा अनुमान किया जाता है कि सौर-मण्डल में बँधे-गुथे ग्रह नक्षत्रों के असन्तुलन का परिणाम है, जो भावी-विभीषिकाओं की ओर संकेत करते हैं ।

मानवी व्यक्तित्व भी श्रेष्ठ-शालीन एवं उपयोगी तभी बना रह सकता है जब वह समाज के साथ अभिन्न रूप से जुड़ा रहे । परस्पर के सहयोग आदान-प्रदान की सन्तुलित रीति-नीति बनी रहे । पृथ्वी का सन्तुलन एवं उसका अस्तित्व उसके एकांगी प्रयास पर नहीं निर्भर है । दिखाई तो वह स्वावलम्बी पड़ती है, पर अन्तर्ग्रही बन्धनों में जकड़ी हुई है । अन्य ग्रहों से मिलने वाले अनुदानों तथा विक्षोभों का प्रभाव उसके ऊपर पड़ता है । उसी प्रकार मनुष्य भी समग्र समाज का एक अभिन्न घटक है । वह सारे समाज के सुख-दुःख का भागीदार है । समाज के प्रभावों से वह स्वयं भी नहीं बचा रह सकता । अन्तर्ग्रही असन्तुलनों को सुधार पाना-परिवर्तित कर सकना तो मनुष्य के बलबूते अधिक सम्भव नहीं है, पर अपनी गतिविधियाँ ऐसी रख सकता है । जिससे समाज एवं अदृश्य जगत में असन्तुलन एवं विग्रह उत्पन्न न हो । अन्तर्ग्रही असन्तुलन धरातल और प्राणि समुदाय को अस्त-व्यस्त और संव्यस्त करते हैं उनके उदाहरण प्रकृति प्रकोपों के रूप में मिलते रहते हैं । सूक्ष्मदर्शी इसी प्रत्यक्ष में एक कड़ी और जोड़ते रहे हैं कि यदि मानवी चिन्तन में निकृष्टता और आचरण में भ्रष्टता बढ़ गई तो उसका

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

परिणाम दृश्य संकटों और विग्रहों के रूप में तो होगा ही इससे अदृश्य अन्तरिक्ष में भी ऐसी विभीषिकाएँ उत्पन्न होंगी जो समस्त संसार के लिए दुःखद हों । साथ ही उन उद्धत लोगों को भी विनाश के गर्त में ले डूबें ।

प्रकृति की विलक्षणताएँ और उनका अर्थ

संसार का प्रत्येक क्रिया-कलाप कार्य-कारण शृंखला से बँधा है । व्यक्ति, समाज और राष्ट्र इसी कार्य-कारण शृंखला को जानकर तदनुरूप अभीष्ट की प्राप्ति के लिए साधन रूप कारण जुटाने और कार्य-सिद्धि का प्रयास करते हैं । वैज्ञानिक प्रगति का आधार भी कार्य-कारण सिद्धान्त को समझकर तदनुरूप वैज्ञानिक प्रयोगों को करते हुए नई-नई उपलब्धियाँ अर्जित करना है । दर्शन-शास्त्र और भौतिक-विज्ञान दोनों में कार्यकारण सिद्धान्त तथा प्रकृति की समरूपता का सिद्धान्त सर्वमान्य है । उसी आधार पर योजनाएँ बनाना और उन्हें क्रियान्वित करने के लिए आगे बढ़ना सम्भव होता है । कार्यों के परिणामों पर विश्वास न हो तो फिर योजना बनाना सम्भव न हो पाये और उस पर अमल करने का उत्साह भी न पैदा हो । राजनीति, समाज-सुधार, नव-निर्माण-रचना या विध्वंस का कोई भी कार्य कार्यकारण की अनिश्चितता की स्थिति में शुरू ही नहीं किया जा सकता । शिक्षा, व्यापार-वाणिज्य, चिकित्सा, कृषि, उद्योग, यातायात, भवन-निर्माण, अभियान्त्रिकी, आदि किसी भी क्षेत्र में प्रवृत्त होने की प्रेरणा ही न पैदा हो । पदार्थों की प्रकृति में निश्चयात्मकता न हो तो भौतिक विज्ञान की खोजें ही आगे न बढ़ें । एक पदार्थ का एक अंश एक निश्चित देश-काल परिस्थिति में जो प्रतिक्रिया करता है, वही प्रतिक्रिया उस पदार्थ का दूसरा वैसा ही अंश उन्हीं परिस्थितियों में अन्यत्र न करे, तो पदार्थ-विज्ञान की प्रगति असम्भव हो जाय, क्योंकि तब एक-एक अणु के बारे में अलग-अलग खोज करनी पड़े । प्रकृति समरूपता का यही सिद्धान्त जीव-विज्ञान, मनोविज्ञान एवं तत्वज्ञान की विभिन्न शाखाओं के विवेचन का आधार है । प्रकृति अपने गुणों और नियमों के अनुसार ही पदार्थ पैदा करती है । एक बीज से सजातीय पौधा और जीव ही पैदा होता है । आम के बीज से इमली नहीं पैदा होती, तो भी कई बार प्रकृति में अनेक विलक्षणताएँ विद्यमान पायी जातीं एवं उत्पन्न होती देखी जाती हैं । बारम्बार परीक्षा से पुष्ट, अनुभव से प्रमाणित विधि-व्यवस्था एवं नियम-विधान के अपवाद देखे जाते हैं और चित्र-विचित्र वस्तुएँ देखी-पायी जाती हैं, जो प्रकृति के सामान्य क्रम से भिन्न होती हैं ।

सामान्यतः ये अपवाद प्रकृति का ही अंग होते हैं । कन्याकुमारी में सात रंग की रेत पायी जाती है—लाल, भूरी, पीली, रजतवर्णी, नारंगी, नीली और बैंगनी । प्रकृति की इसी विलक्षणता को भारतीय पुराकथा में इस रूप में व्यक्त किया गया है कि जब भगवान शंकर कन्याकुमारी पार्वती की तपस्या से प्रसन्न होकर उनसे परिणय बद्ध हुए, तो देवताओं ने सात रंग के फूल बरसाए । तभी से यहाँ की रेत सतरंगी हो गई ।

प्रकृति-वैचित्र्य के प्रति श्रद्धा व्यक्त करने वाली ऐसी पुराकथाएँ विश्व के सभी भागों में प्रचलित हैं ।

हिमालय पर्वतमाला के बीच गढ़वाल जिले में स्थित 'फूलों की घाटी' भी प्रकृति का ऐसा ही विलक्षण उपहार है । समुद्रतल से १२ हजार फीट की ऊँचाई पर स्थित यह रहस्यमय घाटी अपने सौन्दर्य और वैचित्र्यपूर्ण विविधता में अनुपम है । जल के स्थान पर थल में उगने वाला एकमात्र कलम यहीं उगता-फूलता है । असंख्य पुष्पों की प्रकृति निर्मित स्वतन्त्र क्यारियों की अलौकिक छटा मनुष्य के लिए आश्चर्य और आकर्षण का प्रबल केन्द्र है ।

दक्षिणी ध्रुव प्रदेश तो ऐसी विचित्रताओं का विस्तृत क्षेत्र ही है यहाँ की हवा रंगीन है । कभी-कभी धरती भी रंग-बिरंगी हो उठती है । कभी घना अन्धेरा छा जाता है । कभी धरती से आकाश तक सर्वत्र प्रकाश ही प्रकाश संव्याप्त दिखाई पड़ता है । क्षितिज का दूर-दूर तक कहीं पता नहीं लगता । कभी पृथ्वी घूमती-सी लगने लगती है और लगता है अब गिरे कि तब गिरे । ३०० किलोमीटर प्रति घण्टे से भी अधिक तीव्र गति से हवा बहती है, तो भी उसकी तेज आवाज नहीं सुनाई पड़ती, जबकि पृथ्वी में अन्यत्र ७०-८० किलोमीटर प्रति घण्टे की रफ्तार से चलने वाली हवा भी हू-हू करती शोर मचाती सुनी जाती है ।

पृथ्वी की ९० प्रतिशत बर्फ ध्रुव प्रदेश में ही है । यदि यह पिघल जाय तो विश्व के सभी समुद्र अपनी मर्यादा छोड़ दें और सहसा उन सबका तल ढाई सौ फुट ऊँचा हो जाय । अक्टूबर से मार्च तक दक्षिणी ध्रुव में चौबीसों घण्टे दिन रहता है । मनुष्य तो यहाँ नहीं रह सकता, किन्तु अन्य अनेक जीव यहाँ मजे से रह लेते हैं । इनमें से ६० किस्म के ऐसे भी कीड़े हैं, जो गर्मी के दिनों में ही सक्रिय रहते हैं । शेष समय प्रसुप्त रहे आते हैं । यदि उनके ऊपर बर्फ जम जाती है, तो भी वे मरते नहीं । प्रसुप्तावस्था में विश्राम करते हैं और बर्फ पिघलते ही फिर सक्रिय हो जाते हैं । ऐसे भी कीड़े-मकोड़े हैं, जो ७० वर्षों तक प्रसुप्त पड़े रहने पर भी मरते नहीं, पुनः उपयुक्त अवसर पाते ही हलचल करने लगते हैं ।

यह प्रदेश थोड़ा भी नहीं है । अपितु क्षेत्रफल में अमेरिका का दुगुना है । दक्षिणी ध्रुव प्रदेश में चारों तरफ समुद्र है । बीच में थोड़ा-सा थल भाग है । जबकि उत्तरी ध्रुव में भूमि-भाग से घिरा हुआ समुद्र तट है ।

ये सभी विलक्षणताएँ प्रकृति का ही स्वाभाविक अंग हैं । इनमें से प्रत्येक कार्य का कारण यदि वैज्ञानिक नहीं भी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जान पाते, तो भी वह कार्य कारण शृंखला का उल्लंघन नहीं माना जा सकता । हाँ, इनसे ज्ञान की सीमा का पता अवश्य लगता है । दक्षिणी ध्रुव प्रदेश में ही अब तक वैज्ञानिक अनुसंधान के ७० बार प्रयास किए गए । हर बार नयी ही विलक्षणताएँ सामने आयीं, किन्तु इससे प्रकृति की समरूपता का सिद्धान्त नहीं खण्डित होता । इससे सिर्फ यह ज्ञात होता है कि कारण-कार्य शृंखला का हमें ठीक-ठीक ज्ञान नहीं है और अमुक कार्य का जो कारण मान लिया गया है, वह पूर्णतः यथार्थ नहीं, अनुमानित यथार्थ है, जो सत्य के निकट हो सकता है, पूर्ण सत्य नहीं । इसी कारण वैज्ञानिक प्रयोगों के नियम बनाते समय 'एरर' या भूल को भी एक सर्वमान्य तथ्य मानकर चला जाता है । प्रायः किसी एक क्रिया की गणनाएँ हर बार एक नहीं होतीं, उनमें अत्यल्प ही सही अन्तर होता है, जिसे 'एरर' कहकर काम चलाया जाता है ।

कई बार ऐसा भी होता है कि एक ही प्रक्रिया की व्याख्या भिन्न-भिन्न व्याख्या-सूत्रों (फार्मूलों) द्वारा सही-सही कर दी जाती है । दोनों व्याख्याएँ पूरी तरह सही प्रतीत होती हैं । उनके परिणाम निष्कर्ष भी एक ही होते हैं । जबकि वे व्याख्या-सूत्र यानी फार्मूले भिन्न-भिन्न होते हैं, यहाँ तक कि परस्पर विपरीत तक हो सकते हैं ।

प्राचीन समय में भारतीय ज्योतिषियों की मान्यता थी कि पृथ्वी स्थिर है, सूर्य ही भ्रमणशील है । उस आधार पर ही फार्मूले गढ़कर गणना की गयीं, पंचांग बने, फलित दिखाए गए । तो भी चन्द्र-ग्रहण, सूर्य-ग्रहण समेत विभिन्न नक्षत्रीय स्थितियों के निरूपण कभी गलत नहीं सिद्ध हुए । आज सभी मानते हैं कि सूर्य ही नहीं पृथ्वी भी भ्रमण करती है । यद्यपि सापेक्ष दृष्टि से सूर्य भी गतिशील है, तथापि इस सौर-मण्डल की सापेक्षता में सूर्य स्थिर है, पृथ्वी उसकी परिक्रमा करती है । इस आधार पर जो गणनाएँ की जाती हैं, उनके फलित भी वही होते हैं, जो इसकी विपरीत मान्यता से निकलते थे । सूर्य-ग्रहण, चन्द्र-ग्रहण की ठीक-ठीक तिथि व समय दोनों ही गणना-पद्धति से निरूपित किए जा सकते हैं और दोनों के परिणाम एक होते हैं । इतना ही नहीं आज से लगभग डेढ़ हजार वर्ष पूर्व महान् गणितज्ञ आर्यभट्ट ने यह स्थापना की कि—"यह मही (पृथ्वी) गोल आकाश में वैसे ही अधर में लटकी है, जैसे कि चुम्बक की आकर्षण-शक्ति के सहारे कोई गोला अधर में लटका रहे और पृथ्वी का यह गोला सूर्य की परिक्रमा करता है तथा अपनी ही धुरी पर भी घूमता है ।" उस समय उनके समकालीन एक अन्य महान् गणितज्ञ वराहमिहिर ने भू-भ्रमण सिद्धान्त का जोरदार खण्डन किया था, तो भी नक्षत्रों की स्थिति के बारे में दोनों गणितज्ञों की गणना के परिणाम एक जैसे होते थे ।

ये सीमाएँ विज्ञान की जानकारी की सीमाएँ हैं । सर्वव्यापी सत्ता के अविज्ञात क्रियाकलापों के रहस्य पूरी तरह न जान पाने का यह परिणाम है । उस अविज्ञात चेतन-सत्ता के विधि-विधानों को पूरी तरह जान पाना तो कठिन है ही । उसकी इच्छा-शक्ति को पूर्णतः समझ पाना तो कठिन ही नहीं, असम्भव भी है । वह इच्छा-शक्ति कार्य-कारण नियमों शृंखलाओं का भी यदा-कदा किन्हीं और जटिल कारणों से उल्लंघन कर सकती है । जैसा कि विज्ञानी रावर्ट ए. मैल्क ने कहा है—"परमात्मसत्ता ही अपनी इच्छा शक्ति से सृष्टि का निर्माण करती है । आम के बीज से इमली पैदा करने की शक्ति प्रकृति में नहीं है, किन्तु परमात्म-सत्ता में यह शक्ति है । वह विलक्षण रचनाएँ पैदा करने में समर्थ सत्ता है ।"

प्रकृति की विलक्षणताएँ उस सर्वसमर्थ सृष्टा की सामर्थ्य बतलाती हैं । विज्ञान हो या दर्शन, सभी उसी सामर्थ्य को यथाशक्ति समझने का विनम्र प्रयास मात्र है । बौद्धिक दृष्टि से मनुष्य समेत हर प्राणी सीमित है और उनके सभी प्रयासों की सीमाएँ हैं । असीम सामर्थ्य मात्र उस सर्वज्ञ, सर्वव्यापी, सर्वदृष्टा, नियामक और अपनी इच्छा से सब कुछ कर सकने में सक्षम ईश्वरीय सत्ता में ही है । व्यवस्था और वैचित्र्य दोनों ही उसी की सामर्थ्य की अभिव्यक्तियाँ हैं ।

हमें आस्तिक बनाते हैं, प्रकृति के ये अपवाद

यह प्रकृति विलक्षणताओं का भण्डागार है । यहाँ एक से एक बढ़कर ऐसी विचित्रताएँ देखने को मिलती हैं, जिन्हें इसकी अद्भुतता कहा जाय या सृष्टा की उद्देश्यपूर्ण सृजनात्मकता कुछ समझ में नहीं आता । यदि उन्हें निरपेक्ष सत्ता की कृति मान ली जाय, तो इनके पीछे निहित प्रयोजन भी समझ में आना चाहिए, किन्तु जब ऐसा कुछ बुद्धि की समझ में नहीं आ पाता, तब इसे आश्चर्य, अचम्भा और रहस्य-रोमांच की श्रेणी में विवश होकर रखना पड़ता है । आये दिन ऐसी कितनी ही घटनाएँ देखने को मिलती रहती हैं, जिन्हें सामान्य बुद्धि की समझ से परे होने के कारण इसी शृंखला में सम्मिलित करना पड़ता है । इन्हीं में से एक है प्रकृति की रहस्यमय ध्वनियाँ । देखने-सुनने में तो यह भौतिक लगती हैं, पर जाँच से अब तक इनका न तो उद्गम, न कारण का पता चल पाया है । इसी से इन्हें परोक्ष और अलौकिक ध्वनियों की संज्ञा दे दी गई है ।

मिस्र में नील नदी के पश्चिमी तट पर थिब्स के अवशेषों में अभी भी एक जोड़ी पत्थर की विशाल मूर्तियाँ खड़ी हैं । वैसे तो यह प्रतिमाएँ अब पूर्ववत् नहीं रहीं । इनका काफी कुछ हिस्सा टूट चुका है, किन्तु फिर भी बहुत कुछ अभी भी विद्यमान है, जो इन्हें मूर्ति की शक्ल प्रदान किए हुए हैं । इनमें से प्रत्येक की ऊँचाई लगभग पचास फुट है और एक-दूसरे से दूरी भी करीब इतनी ही है । इन प्रतिमाओं का निर्माण काल का तो सही-सही अनुमान नहीं लगाया जा सका है, किन्तु ऐसे प्रमाण उपलब्ध हैं, जो सिद्ध करते हैं कि इनकी रचना ईसा से पन्द्रह सौ वर्ष पूर्व हुई है । इन्हें 'मेमनन'

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की प्रतिमा कहा जाता है । इनकी सबसे बड़ी विशिष्टता यह है कि ये सूर्योदय अथवा इसके आस-पास विचित्र प्रकार की ध्वनियाँ उत्पन्न करती हैं, इसी से यह पर्यटकों का आकर्षण केन्द्र बनी हुई हैं । सैलानी प्रायः फरवरी अथवा मार्च के महीने में नील नदी के किनारे इसीलिए इकट्ठे होते हैं, ताकि वे इन निर्जीव प्रतिमाओं की सजीव आवाजें सुन सकें, किन्तु विचित्रता यह है कि अब तक जितने लोगों ने इनकी बोलियाँ सुनी हैं, सभी ने उसे भिन्न-भिन्न प्रकार की ध्वनियाँ बतायी हैं । इन पर्यटकों में स्ट्रेबो, प्लीनी, पाउसेनियस, जुवेनल, विलकिन्सन जैसे ख्याति प्राप्त तत्कालीन पुरातत्ववेत्ता भी सम्मिलित हैं । स्ट्रेबो के अनुसार इनकी आवाज हवा के हल्के झोंके अथवा घूँसे के प्रहार से मिलती-जुलती हैं । पाउसेनियस इन्हें वीणा के तार टूटने जैसी बताते हैं । सर जी. विलकिन्सन (लन्दन) ने अपनी पुस्तक "मॉडर्न इजिप्ट एण्ड थिब्स" में इसे दो पीतल के टुकड़ों के आपस में टकराने से उत्पन्न हुई उच्च तारत्व जैसी ध्वनि बतायी है । "दि वायस ऑफ मेमनन" नामक रचना में लॉर्ड कर्जन ने इससे पैदा होने वाली धुन को न अधिक सुरीली न बहुत कर्कश कहकर वर्णित किया है ।

पेरिस के तत्कालीन पुरातत्ववेत्ता जे. ए. लेट्रोन ने बहुत छानबीन, प्रतिमाओं के गहन निरीक्षण करने के उपरान्त एक पुस्तक लिखी हैं—"ला स्टेचू वोकेल डी मेमनन" । इसमें उन्होंने अनेक तर्कों, तथ्यों और प्रमाणों के आधार पर यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि यह ध्वनियाँ मूर्ति के अन्दर किसी यांत्रिक उपकरण का परिणाम नहीं हैं । उन्होंने इसे मानने से स्पष्ट इन्कार कर दिया कि यह संगीत प्रस्तर खण्ड के अन्दर किसी मानव निर्मित वाद्य यन्त्र की फलश्रुति है । इसके समर्थन में वे यह तर्क देते हैं कि यदि ऐसा होता तो एक ही प्रकार की ध्वनि उनसे निःसृत होनी चाहिए थी किन्तु विभिन्न पर्यटकों के यात्रा-विवरणों से ऐसा विदित नहीं होता, दूसरे वे अपने निर्माण-काल के बहुत समय बाद तक मौन रहीं फिर उन्होंने बोलना शुरू किया और लम्बे समय के पश्चात एकबार पुनः मौन धारण कर लिया । इतिहासकारों के अनुसार ईसा पूर्व २०वीं शताब्दी से लेकर सन् १८९६ तक यह मूर्तियाँ प्रत्येक सुबह नहीं तो कम-से-कम वर्ष में अनेक बार अवश्य बोलती थीं, किन्तु इसके उपरान्त यह एकबार पुनः मौनव्रत का अनुपालन कर रही हैं और कब तक करती रहेंगी, यह अविज्ञात है । लेट्रोन की अवधारणा है कि यदि यान्त्रिक कारणों से आवाजें होतीं, तो उन्हें निश्चित अन्तराल पर बराबर होनी चाहिए थीं, पर अब तक के साक्ष्यों के अनुसार इनकी मौन की अवधि सदा अनिश्चित रही है । वे इन आवाजों को प्रकृति का कोई विशेष संकेत संदेश बताते हैं, जिन्हें समझने में अब तक मनुष्य विफल रहा है ।

अंग्रेज पर्यटक सर ए. स्मिथ के अनुसार मेमनन की मूर्तियों ने १९वीं सदी के प्रारम्भिक दशक में भी आवाजें उत्पन्न की थीं, किन्तु इस बात का कोई और साक्षी उपलब्ध नहीं होने के कारण इतिहासवेत्ता इसे प्रामाणिक नहीं मानते । हाँ, फ्रांस का "रिव्यू एन्साइक्लोपीडिक" (भाग ६, पृ. ५९८ पेरिस, मार्च, १८२१) ही एक मात्र ऐसा उपलब्ध ग्रन्थ है, जो ए. स्मिथ के इस कथन की पुष्टि करता है, कि आधुनिक काल में भी ये मेमनन के प्रस्तर विग्रह अचानक एकबार पुनः मुखर हो उठे थे । इसके पश्चात् अधुनातन समय में फिर किसी ने इनकी बोलियाँ नहीं सुनीं और न ही इस सम्बन्ध में कोई लिखित रिकॉर्ड पाया गया है ।

उपलब्ध ग्रन्थों से ज्ञात होता है कि ऐसी ही ध्वनियाँ नेपोलियन के मिस्र अभियान दल में सम्मिलित तीन मूर्धन्य वैज्ञानिकों जोमार्ड, जोल्वायस एवं डिविलियर्स ने वहाँ की अन्य कई मूर्तियों से उत्सर्जित होती हुई अपने कानों सुनी थीं । उन्होंने तब उन रहस्यमय आवाजों के कारण जानने की असफल कोशिश की थी, हर प्रकार से विग्रहों का निरीक्षण-परीक्षण किया था और सन्देह की ऐसी कोई गुंजाइश शेष नहीं छोड़ी थी कि बाद में लोग उनकी जाँच पर उँगली उठा सकें, मगर नतीजा वही ढाक के तीन पात वाला सामने आया । जब वे इस सम्बन्ध में किसी निष्कर्ष पर नहीं पहुँच सके, तो अन्ततः थककर उन्होंने शोध कार्य अधूरा छोड़ दिया, परन्तु अध्ययन के उपरान्त उन्होंने एक टिप्पणी अवश्य की थी कि मूर्तियों से निकलने वाली सुरीली धुनों के सम्बन्ध में किसी प्रकार की शंका करना नितान्त भ्रमपूर्ण है । उनके अनुसार यह संगीत प्रतिमा के अन्दर से ही यदा-कदा निकलता है—इसमें दो मत नहीं हैं । उन्होंने लिखा है कि मिस्र के सियोन और कारनक मन्दिर के विग्रहों के अन्दर से जो आवाजें प्रस्फुटित हुई थीं, उनकी ध्वनियाँ पाउसेनियस द्वारा वर्णित मेमनन की मूर्तियों से विकीर्ण साज से काफी कुछ मिलती-जुलती हैं ।

न केवल पार्थिव वस्तुएँ ध्वनि संकेत विसर्जित करती हैं, वरन् दूरस्थ आकाशकीय पिण्ड भी एक प्रकार की ध्वनि संकेत निरन्तर हमारी ओर प्रेषित करते रहते हैं । इस सन्दर्भ में अनुसंधानरत कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के कुछ रेडियो खगोलज्ञों ने घोषणा की है कि उन्हें बाह्य अन्तरिक्ष से कुछ संकेतों का पता लगा है । डॉ. ए. एम. हेविश ने इन संकेतों को स्पष्ट करते हुए मुलाई वेधशाला में कुछ खगोलज्ञों के सामने बताया—"अब हमारा विश्वास है कि उक्त संकेत सम्भवतः ल्यूड्रान नक्षत्रों से आ रहे हैं, जो सूर्य से अरबों, खरबों मील की दूरी पर स्थित माने जाते हैं ।" डॉ. मुलाई ने इन संकेतों को विलक्षण, रहस्यमय और आश्चर्यजनक बताते हुए कहा—"यह संकेत बहुत व्यवस्थित नपे-तुले समय भेजे गए लगते हैं ।"

कौशीतकि ब्राह्मणोपनिषद् में उल्लेख है कि—"श्रेष्ठ कर्मों का अनुष्ठाता इस लोक को त्यागकर चन्द्रलोक को प्राप्त होता है । कृष्ण पक्ष में चन्द्रमा स्वर्ग में निवास करने वाले को तृप्त नहीं कर सकता, तब वह व्यक्ति सोचता है कि मुझे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

कर्म करने के लिए फिर धरती में जाना है । वह अपनी विचार-शक्ति से अपने कुटुम्बीजनों और उच्च आत्माओं को कुछ सन्देश देने का प्रयत्न करते हैं पर उनकी कोई नहीं सुनता और वह आत्मा दुःखी होती है कि जब में फिर संसार में जाऊँगा तो मनोविकार ग्रस्त लोगों की संगति में पड़कर मुझ शाश्वत शुद्ध आत्मा का स्वरूप भी मलिन और गन्दा हो जायेगा ।"

कारण जो भी कुछ हो, है यह सब अति विलक्षण, अद्‌भुत व विज्ञान जगत के सामने एक अति महत्त्वपूर्ण प्रश्न चिह्न है । विज्ञान "क्या" की व्याख्या मात्र करता है जबकि आत्मिकी, परोक्ष विज्ञान "क्यों" की व्याख्या करता है । जहाँ सामान्य 'कॉशनल' बुद्धि सहारा न दे, मनीषी कहते हैं, वहाँ 'प्रज्ञा' का सहारा लेना चाहिए । 'प्रज्ञा' मात्र अध्ययन व जानकारी बढ़ाने से विकसित नहीं होती । प्रज्ञा बढ़ती है अध्यात्म उपचारों को दैनन्दिन जीवन का अंग बनाने से । सम्भवतः ये विलक्षण ध्वनियाँ ऐसा ही कुछ सन्देश बौद्धिक मरीचिका में रास्ता भूले मानव को देती रहती हैं ।

अदृश्य शक्तियों का दृश्य जगत पर प्रभाव

हमारी स्थूल दृष्टि उन वस्तुओं की शक्ति और महत्ताएँ स्वीकार करती हैं, जो आँखों से दीखती हैं या प्रत्यक्ष अनुभव में आती हैं, किन्तु यदि गहराई से देखा जाय तो प्रतीत होगा कि दृश्य का सूत्र संचालन अदृश्य से हो रहा है । जितनी महत्त्वपूर्ण शक्तियाँ संसार में हैं, वे सभी अदृश्य हैं ।

हवा यों पेड़-पौधों को हिलाने, त्वचा का स्पर्श करने जैसे सामान्य कार्य करती भर दीखती है, पर वस्तुतः उसका कार्य सृष्टि का सन्तुलन बनाये रखना है । धरती की जो स्थिति हम आज देखते हैं, उसके निर्माण में हवा का बहुत बड़ा हाथ है ।

इस धरती के और उस पर निवास करने वाले प्राणियों के अस्तित्व को, उनके उत्थान-पतन को हवा जिस तरह प्रभावित करती है, उसे देखते हुए उसे जीवन-भूरि ही कह सकते हैं । यों सभी जानते हैं कि प्राणियों का प्रधान आहार उनकी नाक द्वारा साँस के रूप में ही ग्रहण किया जाता है । जल और अन्न तो उसके बाद की आवश्यकताएँ हैं ।

प्रकृति के अन्तराल में एक ऐसी शक्ति काम करती है, जो हवाओं की गरम अयनवृत्त और ठण्डे बर्फीले ध्रुवीय-क्षेत्र को परस्पर बदलती रहती है । एक दूसरी वायु-शक्ति ऐसी भी है, जो विषुवत्-रेखा पर १००० मील प्रति घण्टे की चाल से उत्पन्न होती है और पृथ्वी को अपनी धुरी पर घूमने के लिए आवश्यक बल प्रदान करती है ।

जमीन को प्राणियों के योग्य बनाने में हवाओं का बड़ा हाथ है । दक्षिणी-अमेरिका के पश्चिमी किनारों को गर्मी से उत्तरी-ध्रुव की हवाएँ ही बचाती हैं । नीदरलैण्ड की आर्थिक रीढ़ वायु-सम्पदा के साथ जुड़ी हुई है । वहाँ लगभग १००० कारखाने ऐसे हैं, जो हवा के बल पर ही चलते हैं और अनाज पीसने, लकड़ी चीरने जैसे पचासों औद्योगिक प्रयोजन पूरे करती है ।

संसार भर में वर्षा का बहुत कुछ दारोमदार इन हवाओं के उतार-चढ़ाव और अनुग्रह पर ही निर्भर रहता है । प्राचीन काल में जलयानों का भाग्य हवाओं की अनुकूलता-प्रतिकूलता के साथ जुड़ा रहता था । रोमन लोगों ने हवाओं के बहाव का गहरा अध्ययन करके अपनी जहाज रानी को व्यवस्थित किया था और किस देश के साथ कब आवागमन का समय निर्धारित करना—इस तथ्य के सहारे अपना व्यापार खूब चमकाया था । अंग्रेजों ने दक्षिण अफ्रीका को अपना उपनिवेश बनाने में सबसे बड़ी सहायता अनुकूल हवाओं से ही प्राप्त की ।

गत शताब्दी में मैथ्यू फन्टेन नामक वायु-विशेषज्ञ ने संसार भर में हवाओं के ओंधे-तिरछे प्रवाहों का क्रमबद्ध सर्वे किया, उससे अंग्रेजों के आस्ट्रेलिया आवागमन में जल-मार्ग की आधी कठिनाई दूर हो गई । सहारा का रेगिस्तान हवाओं की देन है । ईरान में लगभग चार महीने ऐसा अन्धड़ चलता है, जिससे बालू के टीले खड़े हो जाते हैं और पानी की भारी कमी पड़ जाती है ।

सन् १६०६ में सर जार्ज सोमेर का जहाज धुक्कड़ हवाओं के फेर में फँसकर बरमूडा के तट पर जा टकराया उसने उस सुन्दर भू-प्रदेश को देखा और इंग्लैण्ड को अच्छी आजीविका देने वाला उपनिवेश बता दिया । वाटर लू की लड़ाई नेपोलियन इसलिए हारा कि हवाओं ने उससे दुश्मनी निबाही और पानी बरसाकर युद्धस्थल को कीचड़ में बदल दिया । बुलगे के युद्धक्षेत्र में हिटलर को प्रारम्भिक लाभ अनुकूल हवाओं के कारण ही प्राप्त हुआ था ।

प्रकृति की सूक्ष्म-सत्ता का अध्ययन करके वैज्ञानिक आश्चर्यचकित हैं कि अदृश्य जगत में कितनी बड़ी सामर्थ्य भरी पड़ी है ।

रेगिस्तानों में जब तेज हवा चलती है, तब वह टीलों को एक जगह से दूसरी जगह उड़ा ले जाती है । समतल को ऊबड़-खाबड़ और ऊबड़-खाबड़ को समतल कर देती है, पर यह उथल-पुथल होते बेसिलसिले ही हैं । उसे प्रकृति का साधारण खेल भी माना जाता है और दूसरी ओर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया जाता ।

पर आश्चर्य तब होता है जब हवाएँ किसी विशेष क्रम से चलती हैं और बालू अपने विशेष पर प्रकार के निशान बनाती चली जाती हैं । नात्का, पेरू आदि के रेगिस्तानों में यह कौतूहल विशेष रूप से दृष्टिगोचर होता है । उन क्षेत्रों में जब तेज हवाएँ चलती हैं तब वे चित्र-विचित्र ढंग से अपनी गति बदलती हैं । कभी सीधी चलती हैं, कभी टेड़ी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

तिरछी, कभी लहराती हुई । बालू के कण उनसे प्रभावित होते हैं । फलतः मीलों लम्बे घेरे में भूमि पर ऐसी रेखाएँ बन जाती हैं मानो किसी गणितज्ञ ने रुचिपूर्वक नाप तौलकर ज्यामिती के आधार पर उन्हें बनाया हो और इस समूचे क्षेत्र को रहस्यमय कलाकारिता की पृष्ठभूमि में सजाया गया हो । आकृतियाँ इतनी अजीबो-गरीब तथा इतनी आकर्षक होती हैं कि दर्शक का मन मोह लेती हैं और प्रकृति की इस कलाकारिता को वह स्तब्ध होकर देखता रह जाता है । इस क्षेत्र में कितने ही दर्शक दूर देशों से इसी निमित्त आते हैं कि प्रकृति विनिर्मित इस कलात्मक संरचना को देखें और दृश्यों की विभिन्नता का आनन्द लूटें ।

विगत आधी शताब्दी से इन कृतियों के रहस्य खोजे जा रहे हैं और किसी निष्कर्ष पर पहुँचने का प्रयत्न किया जा रहा है पर अभी तक कुछ तुक बैठा नहीं है । रहस्य तब और भी गहरा हो जाता है जब बालू और कंकड़ों से मिलकर बन्दर, रीछ, बैल, भेड़ जैसे छोटे और गुलाई लिए हुए जानवरों की अनुकृतियाँ बनकर खड़ी हो जाती हैं । दूर से फोटो लेने पर वे जीव-जन्तु ही प्रतीत होते हैं । पर भेद तब खुलता है जब उन्हें निकट जाकर देखा जाता है ।

इस अजूबे के शोधकर्त्ता जर्मन वैज्ञानिक मारिया रीच ने इसी प्रयोजन की तह तक पहुँचने के लिए उनमें अपना डेरा डाला है और यह जानने का प्रयत्न किया है कि आखिर होता ऐसा क्यों है ?

इन विचित्र रेखाओं का एक विशेष नामकरण किया गया है "नाज्का" इनके साथ कौतूहल ही नहीं वरन् ज्योतिष विज्ञान की भी कितनी ही तुकों का समावेश होता है । एक क्षेत्र में किसी विशेष मास में निश्चित तारीख को नियत रेखाएँ बनती हैं । जिन्हें उन दिनों के कार्यक्रम तथा भविष्य की जन्म कुण्डली कहा जा सकता है । इस आधार पर यह भी सोचा गया है कि यह अंकन विश्व के विभिन्न समूह क्षेत्र से सम्बन्धित भूतकालीन एवं भावी घटनाक्रमों को अंकन करते हैं जिसका रहस्य पढ़ लिए जाने पर यह जाना जा सकेगा कि प्रकृति अपने ढंग से अपनी भाषा में अपनी कलम से कुछ विचित्र लेखन करती है । पढ़े-लिखों की तरह मनुष्यों से कहती है कि "क्या तुम इस अविज्ञात का अर्थ बता सकने जितना पढ़ लिख गए हो ?"

संसार में अन्यत्र भी ऐसे क्षेत्र हैं जिनमें धरती की पट्टी पर बहुत कुछ रहस्यमय लिखा है । मिस्री रेगिस्तान में कई जगह हँसने रोने या गाने जैसी आवाजें बालू में से निकलती हैं । पर उनकी गतिविधियाँ तीव्र होना वायुवेग के ऊपर निर्भर रहता है ।

नाज्का रेखाएँ ४ से १८ इंच तक ऊँची उठी हुई देखी गई हैं और उनसे बने हुए खिलौनों की ऊँचाई ६० फुट से लेकर ४०० फुट तक ऊँची देखी गई है ।

वाशिंगटन विश्वविद्यालय एवं ब्रिटेन के खगोलशास्त्रियों ने उस क्षेत्र में पायी जाने वाली चट्टानों पर देखे गए अंकनों में पृथ्वी का आदिम काल से अद्यावधि घटित हुए घटनाक्रम का विवरण तैयार करने का प्रयत्न आरम्भ किया है ।

कैसी विचित्र है प्रकृति की रहस्यमयी भाषा और लेखनी कौन समझ पायेगा उसके पग-पग पर बिखरे चित्र विचित्र रहस्यों को ?

इसी तरह के अनेकों घटनाक्रम हैं । उनमें से एक घटना १८४६ की है । बारमूडा के एली बन्दरगाह में 'मिनिर्वा' लकड़ी का बना जहाज रवाना हुआ । उसे अफ्रीका तथा सुदूर पूर्व की लम्बी यात्रा करनी थी, पर जहाजी तूफान में फँसकर वह डूब गया । एक वर्ष तक उसकी बहुत खोज की गई पर कुछ पता न चला तो ढूँढ़ने की बात भी छोड़ दी गई ।

उसी ऐली बन्दरगाह पर सन् १८५१ में एक जहाज अपने आप आ लगा । वह क्षत-विक्षत हो रहा था । उसके अस्थिपिंजर को निकाला तो पता चला कि यह तो उस 'मिनिर्वा' का भूत है जो दो वर्ष पूर्व जल समाधि लेकर मर गया था । अपने जन्म स्थान को यह भूत क्योंकर लौटा इस रहस्य को कोई ठीक तरह समझ न सका ।

प्रकृति की अबूझ पहेली जीवन के विचित्र नियम

प्रकृति के अधिकांश रहस्यों को समझने और सुलझा लेने का दावा करने वाला मनुष्य अभी कितना नासमझ और अल्प सामर्थ्य वाला है, यह आये दिन घटने वाली कई घटनाओं से सिद्ध होता रहता है । इनमें से अधिकांश घटनाएँ भ्रम, फ्राड या धोखा कहकर मनुष्य फिर भी अपने दम्भ को बचाने की कोशिश करता है, लेकिन कई मामले तो इतने प्रत्यक्ष होते हैं कि उन्हें किसी भी तरह भ्रम या फ्राड कह कर उनसे छुट्टी नहीं पायी जा सकती । प्रकृति प्रायः मनुष्य के सामने ऐसी पहेलियाँ प्रस्तुत करती रहती है, जो मनुष्य को अपनी वस्तुस्थिति का आभास कराती हैं और इस भ्रम को तोड़ती हैं कि मनुष्य सर्वज्ञानी और सब कुछ जान समझ लेने वाला बन गया है ।

उदाहरण के लिए एक ही समय में जन्म लेने वाली जुड़वाँ सन्तानों को लें । सामान्यतः जुड़वाँ बच्चों से यह अर्थ लगाया जाता है कि एक ही गर्भ से, एक ही समय या कुछ क्षणों के अन्तर से पैदा होने वाले बच्चे । इस तरह के जुड़वाँ दो प्रकार के होते हैं । एक तो वे जो कुछ मिनटों या क्षणों के अन्तर से पैदा होते हैं । इन्हें सही दर्राय कहा जाता है । सामान्यतः इनके जन्म कुछ मिनटों के अन्तर से होते हैं । कभी-कभी इनके जन्म एक घण्टे या उससे अधिक का अन्तर से होते हैं । ये भिन्न लिंग के भी हो सकते हैं । सहोदर जुड़वाँ एक ही समय पर स्खलित दो शुक्राणुओं से विकसित

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

होते हैं और अलग-अलग उर्वरित होते हैं । इस प्रकार के जुड़वाँ अपने गर्भाधान काल में माता के शरीर से विभिन्न प्रकार के जीवन तत्व ग्रहण करते हैं । इसलिए इनके गुण-स्वभाव भिन्न भी हो सकते हैं उनकी रुचियाँ और विशेषताएँ अलग-अलग भी हो सकती हैं ।

दूसरे प्रकार के जुड़वाँ बच्चे एक साथ जन्म लेते हैं । इनके बारे में कहा जाता है कि ये एक ही शुक्राणु से उर्वरित होते हैं और विकास की प्रारम्भिक अवस्था में ही दो पिण्डों के रूप में विभाजित हो जाते हैं । जन्म लेने के बाद यह आधे सामान्य शिशु के रूप में पलते हैं, लेकिन ये गर्भाशय में एक ही प्रकार का आहार, जीवन तत्व प्राप्त करते हैं, इसलिए ये एक ही आकार-प्रकार और शक्ल सूरत के होते हैं । ऐसे जुड़वाँ बच्चों को यमज कहा जाता है । इनकी आकृति तथा प्रकृति में सामान्यतः बहुत कम अन्तर देखा जाता है । जुड़वाँ सन्तानों के उपलब्ध रिकार्डों के अनुसार जन्म लेने वाले ८० बच्चों में से औसतन एक बच्चा जुड़वाँ होता है । इसलिए जुड़वाँ होना कोई असामान्य बात नहीं है । कई बार एक ही स्त्री के गर्भ से एक ही समय में तीन बच्चे भी पैदा होते हैं । इस तरह के बच्चों के जन्म की सम्भावना प्रति छह हजार में से एक होती है । एक ही गर्भ में से एक ही समय में चार या पाँच बच्चे होना बहुत कम देखा जाता है ।

यमज जुड़वाँ बच्चों के सम्बन्ध में कहा जाता है कि वे प्रायः बहुत कम जीवित रहते हैं । ऐसे बच्चे जिनके अंग आपस में जुड़े हुए हों वह तो जीवित नहीं ही बचते किन्तु थाईलैंड के मीकलांग गाँव में ११ मई, सन् १८११ को दो ऐसे यमज बच्चों ने जन्म लिया जो अलग-अलग अस्तित्व रखते हुए भी सीने के दाएँ-बाएँ हिस्से से जुड़े हुए थे । यह तो अपने आप में कोई खास अनोखी बात नहीं है । आश्चर्य की बात तो यह है कि वे दोनों ६३ वर्ष की आयु तक जीवित रहे, उन्होंने विवाह किया, घर बसाया और इसी तरह जुड़े रह कर सामान्य जीवन व्यतीत किया ।

प्रकृति द्वारा दी गई इन विचित्रताओं को साथ लिए जन्म लेते ही उनके माँ-बाप सहित परिवार के अन्य लोग भी भयमिश्रित आश्चर्य में पड़ गए । मीकलांग गाँव थाईलैण्ड (तब सियामी) की राजधानी बैंकाक से करीब ६० मील दूर उत्तर पश्चिम में है । सियामी माता और चीनी पिता से जन्म लेने वाले इन अद्‌भुत बालकों की खबर जंगल की आग के समान फैल गई और उन्हें दूर-दूर से लोग देखने के लिए आने लगे । यह बच्चे किस तरह अपनी जिन्दगी काटेंगे, कैसे रहेंगे आदि कई प्रश्न देखने वालों के हृदय में उठते थे, परन्तु माता-पिता के लिए तो संतान सो संतान । प्रकृति की इस विचित्रता के कारण उत्पन्न हुई विवशता को देखकर माता-पिता ने उन पर अपना विशेष ममत्व उँड़ेला । यह घटना अब से लगभग पौने दो सौ वर्ष पुरानी है और उस समय तक शल्य चिकित्सा का इतना विकास नहीं हुआ था कि दोनों को अलग किया जा सके । उस समय थाईलैंड में ज्यादा डॉक्टर भी नहीं थे, जो थे उनमें से भी अधिकांश चीनी नस्ल के थे जो पश्चिमी पद्धति के स्थान पर पुरानी और पिछड़ी हुई चिकित्सा पद्धति ही प्रयोग में लाते थे ।

उन बच्चों को जिनका नाम चांग और इंग रखा गया था, देखने के लिए आने वालों में कई डॉक्टर भी थे । उन डॉक्टरों में से कइयों ने चांग और इंग के माता-पिता से बच्चों को अलग करने के लिए आग्रह किया और वह कार्य स्वयं करने के प्रस्ताव भी । निश्चित ही यह चिकित्सा का अपने आप में एक नया अनुभव था । पर चाँग और इंग की माँ नीफ ने ऐसे सभी प्रस्तावों को अस्वीकार कर दिया । क्योंकि प्रस्ताव करने वाले डॉक्टरों ने शल्य क्रिया का जो स्वरूप प्रस्तावित किया था वह बेहद पीड़ाजनक था । उनमें से किसी डॉक्टर ने गर्म लोहे के तार से चांग और इंग को अलग करने का सुझाव दिया था तो किसी ने रस्सी के दोनों ओर थैली की तरह लटका देने का उपाय सुझाया था । उन बच्चों की माँ इस तरह के उपायों को इस्तेमाल करने के लिए किसी भी तरह सहमत नहीं हुई ।

चांग और इंग बड़े होने लगे । समय बीतता गया । समय बीतने और बड़े होने के साथ-साथ उनकी परेशानियाँ भी बढ़ने लगीं । पहली कठिनाई तो यही आयी कि वे चलें कैसे क्योंकि दोनों के शरीर सीने के पास धड़ से इस तरह जुड़े हुए थे जैसे वे गलबहियाँ डाले हुए हों । माँ ने दोनों बच्चों को गिरते पड़ते चलना सिखा ही दिया साथ ही वह दोनों को इस तरह शिक्षित भी करती रही कि तुम दोनों की जिन्दगी परस्पर सहयोग और सद्‌भाव पर ही अवलम्बित है । सहयोग और सद्‌भाव पर तो यह सारी दुनिया टिकी हुई, क्योंकि सभी मनुष्य और प्राणी जगत एक-दूसरे से किसी न किसी प्रकार आपस में सम्बद्ध हैं, लेकिन प्रकृति ने चांग और इंग के साथ तो यह विवशता ही जोड़ दी थी इसलिए उनके लिए तो सहयोग सद्‌भाव से रहना और भी जरूरी, अनिवार्य था । सो उन्होंने अपनी माँ की सीख को गाँठ में बाँध लिया और उसी के सहारे ६३ वर्ष की जिन्दगी पार कर ली ।

आरम्भ में उन्हें चलना सीखने में बड़ी कठिनाई हुई थी पर धीरे-धीरे उन्होंने न केवल अपनी इस कठिनाई पर काबू पा लिया बल्कि साथ-साथ नदी में तैरना और नाव चलाना भी सीख लिया । सन् १८२८ में एक अंग्रेज व्यापारी रावर्ट हंटर की निगाह इन दो अद्‌भुत जुड़वाँ किशोरों पर पड़ी जिस समय हंटर ने चांग और इंग को देखा उस समय वे दोनों नदी में तैर रहे थे । पहले तो हंटर ने समझा कि यह जल का कोई विचित्र जीव है लेकिन जब दोनों भाई पानी से निकलकर एक नाव में सवार हो गए तो बड़े गौर से देखने पर वह समझ सका कि ये दीनों जुड़वाँ भाई हैं । आज तक उसने इस तरह के जुड़वाँ भाई न तो कहीं देखे थे और न ही ऐसे व्यक्तियों के बारे में सुना था ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

हंटर के व्यापारी दिमाग में तुरन्त एक योजना आयी और वह चांग तथा इंग के माता-पिता से मिल कर प्रकृति के इस अजूबे का व्यावसायिक लाभ उठाने लगा । वह नोक दम्पत्ति को कुछ दे दिला कर चांग और इंग को अपने साथ अमेरिका ले गया । अमेरिका पहुँचते ही हंटर ने वोस्टन के हरवार्ड मेडिकल कॉलेज के प्रो. जान वारेन तथा अन्य डॉक्टरों से दोनों भाइयों का मेडिकल परीक्षण कराया । डॉक्टरों ने प्रमाणित कर दिया कि ये दोनों किशोर नैसर्गिक रूप से जुड़वाँ हैं । इसके बाद हंटर ने अमेरिका और ब्रिटेन में चांग तथा इंग के कई एक प्रदर्शन किए तथा लाखों रुपये कमाये ।

बाद में समझ आने पर चांग और इंग ने हंटर से सम्बन्ध तोड़ कर स्वतन्त्र रूप से प्रदर्शन करना आरम्भ किया । जल्दी ही वे मालामाल हो गए । सन् १८३३ से १८३६ तक दोनों ने अमेरिका में सैकड़ों प्रदर्शन किए । इसी बीच दोनों भाइयों की मुलाकात जार्जिया के एक समृद्ध किसान की लड़कियों एडलीड और लसी से हुई । यह मुलाकात जल्दी ही प्रेम परिणय में बदल गई । विवाह के लिए कठिनाई यह थी कि दोनों भाई जुड़वाँ थे । इसलिए दोनों ने ऑपरेशन करवा कर अलग-अलग हो जाने की बात सोची । डॉक्टरों ने यह ऑपरेशन बहुत पेचीदा और जान जोखिम का बताया, परन्तु चांग और इंग के मन में विवाह की कामना इतनी प्रबल हो गई थी कि उन्होंने जोखिम उठाना स्वीकार कर लिया । एडलीड और लसी, जो स्वयं भी चांग तथा इंग से प्रेम करने लगी थीं उनसे ऑपरेशन के लिए मना किया और इसी स्थिति में विवाह करने के लिए तैयार हो गयीं ।

उनके विवाह का समाचार अनेकों प्रतिष्ठित समाचार पत्रों ने प्रकाशित किया । बड़े भव्य और शानदार समारोह में चांग और इंग तथा एडलीड और लैसी का विवाह सम्पन्न हुआ । विवाह के बाद इस दम्पत्ति युगल ने २१ बच्चों को जन्म दिया जिनमें से १८ जीवित रहे । विवाहित जीवन को सामान्य ढंग से व्यतीत करने के लिए दोनों भाइयों ने मर्यादाएँ और नियम बाँध लिए थे तथा आजीवन अपने बनाये नियमों का पालन करते रहे उन दोनों के जीवन में सबसे उल्लेखनीय विशेषता यह रही कि चांग और इंग आपस में बहुत ही कम बोलते थे फिर भी बिना बोले ही वे एक-दूसरे के मन की बात समझ जाते थे । उन दोनों की मृत्यु सन् १८७४ में सेर्टएयरी (उत्तरी कोरोलीना) में एक साथ हुई । ६३ वर्ष तक प्रकृति की विलक्षण विशेषता को साथ लिए सामान्य ढंग से जीवन जीने वाले इन दोनों भाइयों का सचित्र विवरण एनी वालेस ने 'दट्टू' पुस्तक में लिखा है ।

इसी प्रकार का एक उदाहरण भारत में भी इसी शताब्दी के आरम्भ में सामने आया । शायद लोगों को इस बात का पता ही नहीं चलता यदि मैसूर के आईफेरे गाँव में जन्मी गंगम्मा और गौरम्मा को यदि उनके माता-पिता मैसूर रियासत के राजा के पास न लाते । १९१५ में इन दोनों बहिनों का जन्म एक साथ हुआ । उनके सभी अंग अवयव अलग थे पर पीठ के नीचे वाला हिस्सा आपस में जुड़ा हुआ था । लोगों ने इन लड़कियों के जन्म को किसी राक्षसी का अवतार बताया जिसके चार हाथ, चार पैर, चार आँखें, चार कान, दो नाक, दो मुँह, दो सिर और दो धड़ थे । भयभीत होकर माता-पिता उन्हें राजा के पास ले गए । महाराजा को भी ये लड़कियाँ बड़ी विचित्र लगीं । उन्होंने अपने विद्वान दरबारियों से परामर्श किया कि ये लड़कियाँ जुड़वाँ कैसे पैदा हुईं ? उनके जन्म से परिवार पर क्या असर पड़ेगा आदि आदि प्रश्नों पर विचार करने के साथ यह भी सोचा कि हिन्दू परिवारों में तो वैसे ही लड़कियाँ भार रूप होती हैं । उस पर जुड़वाँ लड़कियाँ और भी ज्यादा विपत्ति तथा परेशानी की जड़ । इसलिए मैसूर नरेश ने उन लड़कियों को अपने पास रख लिया ।

बड़ी होने पर माता-पिता ने उन्हें वापस माँगा तो राजा ने गौरम्मा और गंगम्मा को उन्हें सौंप दिया चांग और इंग की तरह इन लड़कियों का भी प्रदर्शन किया गया । सन् १९२५ से आरम्भ हुआ उनका प्रदर्शन गंगम्मा और गौरम्मा के जीवन पर्यन्त चला । उन्हें लाखों लोग देखते और प्रकृति के इस चमत्कार को देखकर दाँतों तले अंगुली दबा लेते । सन् १९३७ में इन दोनों बहिनों को अन्तर्राष्ट्रीय प्रदर्शनी में भी ले जाया गया, जो पेरिस आयोजित की गई थी । ये दोनों बहिनें सन् १९५२ तक जीवित रहीं । यद्यपि उनका जीवन क्रम चांग और इंग की भाँति नहीं रहा फिर भी प्रकृति की विलक्षणताओं के इतिहास में उनका अपना स्थान तो है ही ।

वैज्ञानिक आज तक इस गुत्थी को नहीं सुलझा सके हैं कि यमज बच्चे आमतौर पर बहुत कम जीते हैं और उनमें भी एक-दूसरे के साथ जुड़े हुए बच्चों के जीवित रहने की संभावना तो बिल्कुल नहीं हैं । फिर सिद्धान्त और शरीर विज्ञान के सामान्य नियम के विपरीत चांग तथा इंग और गंगम्मा तथा गौरम्मा क्रमशः ६३ तथा ३७ वर्षों तक कैसे जीवित रहीं । इसे प्रकृति की एक अनबूझ पहेली ही कहना पड़ेगा और ऐसी अनेकानेक पहेलियाँ हैं, जिन्हें बूझ पाना सर्वज्ञ होने का दावा करने वाले मनुष्य के लिए अभी सम्भव नहीं है ।

दुनिया की आश्चर्यजनक इमारतें
आश्चर्यजनक दृष्टिकोण

आँखों से देखी जा सकने वाली संसार की भव्य इमारतें दर्शकों को आश्चर्य में डालती हैं । उन्हें देखने के लिए दूर-दूर से लोग जाते हैं और वास्तुकला, कारीगरी तथा सूझबूझ की सराहना करते हुए अचम्भा करते हैं कि इनमें कितना धन और कितना श्रम लगा होगा ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लोगों को जितना कौतूहल इन इमारतों की आकृति को देखकर होता है । यदि उन्होंने इसके निर्माण के पीछे छिपे हुए विचार और उद्देश्य को भी देखा समझा होता तो और भी अधिक अचम्भा होता । लगता है कि यह इमारतें जितनी भव्य हैं उसी अनुपात से उनके निर्माताओं की ना समझी और दृष्टता की विशालता भी कम नहीं है ।

दुनिया की आश्चर्यजनक इमारतों में प्रथम गणना मिस्र के पिरामिडों की आती है । यूनानी इतिहास लेखक हिरोडोटरा के अनुसार मिस्र के बादशाह अपने जीवन काल में ही अपने गढ़ने के लिए विशालकाय मकबरे बनवाया करते थे । जब वे मरते थे तब उनके हरम की अनेक रानियाँ बाँदियाँ, रखेलें, नौकर, घोड़े भी उन्हीं के साथ जिन्दा दफन कर दिए जाते थे । मृतक बादशाह की लाश ऐसे मसालों से पोती जाती थी कि वह बहुत समय तक सुरक्षित रह सके । दफन के समय स्वादिष्ट भोजन, बहुमूल्य वस्त्र, आभूषण तथा विलासिता के उपकरण भी रखे जाते थे ताकि मृतक की आत्मा को सुविधा की हर वस्तु हर समय उपलब्ध रहे ।

यों विभिन्न राजाओं द्वारा बनाये गए मिस्र में अनेकों पिरामिड मौजूद हैं पर उनमें सबसे बड़ा है चौयस का पिरामिड जिसका निर्माण ईसा से २७०० वर्ष पूर्व हुआ था । घोर रेगिस्तान में बनी इस गगनचुम्बी इमारत की प्रत्येक भुजा २३३ मीटर की है । उसका आयतन २५ लाख घन मीटर है । इसके बनाने में २० वर्ष लगे और विभिन्न देशों से इसके निर्माण के लिए पकड़े गए, एक लाख गुलाम इसी को बनाते-बनाते करुण क्रन्दन के साथ मर खप गए ।

दूसरी बड़ी इमारत है 'रोम का दंगल' जिसे कोलोजियस के नाम से पुकारते हैं । शासकों की दो पीढ़ियाँ इसे बनाती रहीं तब वह पूरा हुआ । उसके सबसे बड़े वृत्त का व्यास १८५ मीटर और सबसे छोटा ५६ मीटर का है । इसकी ऊँचाई ४८५ मीटर है । इसके अन्दर ८५००० दर्शकों के लिए सुविधापूर्वक बैठने योग्य स्थान है । इसका निर्माण आक्रान्ता द्वारा आक्रान्त को किस प्रकार चीरा उधेड़ा जा सकता है ऐसे क्रूर दृश्य का आनन्द लेने के लिए किया गया । उस जमाने के बादशाह और सरदार इस मनोरंजन ने बहुत रस लेते थे और क्रूरता के इस कौतूहल का रस लेने के लिए उसी प्रकृति के असंख्य लोग वहाँ जमा रहते थे ।

हाथी, शेर, भैंसे, मेंढ़े, जैसे पशुओं को परस्पर लड़ाया जाता था । गुलामों को यह जंगली पशु किस तरह चीरते-फाड़ते हैं और उस अभागे की प्राण रक्षा के समय कितनी कातर स्थिति होती थी, इसे देखना दिखाना ही इस निर्माण का उद्देश्य था । विजयी आक्रान्ता की नृशंसता जितनी उग्र होती उतनी ही उसकी सराहना की जाती थी और चीत्कार करते हुए मरण कृत्य को अच्छा मनोरंजन माना जाता था । इस भवन में कितना और कितना श्रम लगा । कितने गुलामों की हड्डियाँ गलीं और निर्माण के बाद उसकी भव्यता सिद्ध करने के लिए कितनों को मरण पर्व मनाना पड़ा, कितनों की क्रूर नृशंसता को पोषण मिला यदि कोई उन तथ्यों को भी देखे तो वह भी अपने ढंग का एक आश्चर्य ही प्रतीत होगा ।

पीसा का एक ओर झुका हुआ गगनचुम्बी टावर देखने वालों के लिए एक अच्छा खासा कौतूहल है । वह बारहवीं शताब्दी में बनाया गया था । जब चौथी मंजिल बन रही थी तब वह इमारत जमीन में धँस गई । कुछ दिन उसे फिर बनाया गया और सातवीं मंजिल बनाकर रोक दिया गया । सन् १३५० में उसकी आठवीं मंजिल बनाई गई । यह ऊँची मीनार ४०३० मीटर झुकी हुई है । ऊँचाई के अतिरिक्त इतना झुकने पर भी उसका खड़ा रहना दर्शकों के लिए अच्छा कौतूहल है ।

आगरे का ताजमहल दर्शकों के लिए अच्छा आकर्षण है १८०८ मीटर ऊँची इस इमारत को बनाने में २० हजार मजदूर २० वर्ष तक लगे रहे और उस जमाने के ३० करोड़ रुपये खर्च हुए जो इन दिनों के हिसाब से ३० अरब से कम नहीं बैठेंगे । अपनी बीबी की कब्र अपने साथ-साथ बनाने की धुन में बादशाह शाहजहाँ ने इस इमारत का निर्माण कराया ।

उपर्युक्त इमारतों के पीछे निर्माताओं का जो दृष्टिकोण रहा उन पर धन-जन की जितनी बलि चढ़ी उसका इससे अच्छा क्या दूसरा उपयोग नहीं हो सकता था ?

पर संसार में समझदारी का सर्वथा अभाव कभी भी नहीं रहा । विशाल निर्माण की महत्वाकांक्षा में लोकहित को मिलाकर और भी अधिक शानदार बनाया जा सकता है, इस दूरदर्शिता का परिचय भी समय-समय पर दिया जाता रहा है ।

वाया एपिया यूनान की अति सुदृढ़ और सुविस्तृत सड़क निर्माताओं के कौशल का आज भी शानदार परिचय देती है । रोम से केपुआ तक ५४० कि. मी. लम्बी और आठ कि. मी. चौड़ी यह मजबूत सड़क बताती है कि इस दिशा में भी पुरातन ज्ञान कितना बढ़ा-चढ़ा था ।

पनामा की नहर विश्व के दो प्रसिद्ध भागों को मिलाने वाली अद्वितीय नहर है । इसकी लम्बाई ८१ कि. मी. और गहराई १४ मी. है । इसका मुख्य द्वार समुद्र सतह से ऊपर है ।

मास्को (रूस) का लोमानशोव का विश्वविद्यालय सुदृढ़ और सुविस्तृत इमारतों में अपना महत्त्वपूर्ण स्थान बनाये हुए है । इसमें ३२ मंजिलें हैं और ४५००० कमरे । इसका आयतन १३७०००० घन मीटर है । विद्यार्थियों के ऊपर नीचे आने-जाने के लिए ११२ लिफ्टें हैं कोई भी व्यक्ति ३५ सेकण्ड में नीचे फर्श से सबसे ऊपर वाली मंजिल पर पहुँच सकता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

संसार की भव्य इमारतों में कुछ ऐसी हैं जो आज न तो उपयोगी लगती हैं न अनुपयोगी, केवल कौतूहलवर्धक हैं । जैसे चीन की २५०० कि. मी. लम्बी, ४ से १६ मीटर तक ऊँची और ६ से ८ मीटर तक चौड़ी दीवार । इसे उस जमाने में आक्रमणकारियों से सुरक्षा के लिए बनाया गया था ।

ऐन्थेस का पार्थियन—एन्थीना देवी का मन्दिर । इसका मुख्य द्वार स्वर्ण मण्डित है इसकी विशालता और भव्यता देखते ही बनती है । इसे इस विश्वास के साथ बनाया गया था कि अधिक बड़े भवन में प्रतिष्ठित कर देने पर वह देवी, उस देश के निवासियों की अधिक सहायता करेगी ।

सोलहवीं सदी में बना मास्को का क्रैमलिन भवन जितना शानदार है उससे भी आश्चर्यजनक है उसमें रखा हुआ मकान जिसका वजन १६५००० ग्राम है ।

किसी जमाने में इमारतों की भव्यता ही उनके निर्माताओं की स्मृति का माध्यम रही होगी, पर अब विचारशील दृष्टिकोण तो उनके बनाने के पीछे छिपे उदात्त दृष्टिकोण की ही सराहना कर सकता है । विशालता और सुन्दरता को देखकर तो दर्शकों का कौतूहल मात्र जाग्रत हो सकता है ।

अति सामर्थ्यवान है : सूक्ष्मजगत

यदि किसी व्यक्ति के समक्ष किसी मृत की अनुकृति प्रकट हो जाय, तो वह भयभीत होकर "भूत-भूत" कहता भाग खड़ा होगा, किन्तु यदि कोई व्यक्ति अपने सामने अपनी ही प्रतिकृति को काम करता देखे तो इसे क्या कहा जाय ? भ्रम ? भय ? या मस्तिष्कीय विकार ? सामान्य बुद्धि कुछ भी समझ सकती है, पर आध्यात्मिक पुरुषों के लिए यह न तो भ्रम है, न भय की परिणति और न मानसिक दुर्बलता का परिणाम, वरन् एक वास्तविकता है, जिसकी सत्ता से इन्कार नहीं किया जा सकता । आये दिन ऐसी कितनी ही घटनाएँ घटती रहती हैं, जिनमें सूक्ष्म शरीर के मामले प्रकाश में आते रहते हैं ।

एक घटना जर्मनी की है । म्यूनिख शहर का एक अभियन्ता जब दोपहर के भोजन के लिए कार्यालय से अपने निकटवर्ती मकान में आया, तो भोजन से पूर्व किसी कार्यवश अपने शयन कक्ष में प्रवेश किया, किन्तु वहाँ एक सर्वथा अपरिचित व्यक्ति को देखकर आश्चर्य में पड़ गया । वह व्यक्ति दीवार के सहारे कोई चित्र टाँगने में व्यस्त था । उसे क्रोध चढ़ आया । अभी वह कुछ बोल पाता, इससे पूर्व ही पदचाप सुनकर अजनबी उसकी ओर मुड़ा । उसे देखते ही एडरिच का गुस्सा शान्त हो गया । सामने उसी का प्रतिरूप खड़ा था । आश्चर्य मिश्रित भय से उसके होठ बन्द हो गए । मुँह से कोई भी शब्द न निकल सका । एक पल तक दोनों आमने-सामने खड़े रहे, फिर प्रतिरूप अचानक गायब हो गया । अब एडरिच को होश आया । दीवार की ओर दृष्टि दौड़ायी तो वह यह देखकर हैरान रह गया, कि जो चित्र लगाया गया है, वह उसी की तस्वीर है । कमरे में सामने ही उसका ड्राइंग बोर्ड था । अकस्मात ध्यान उस ओर गया, तो वह और विस्मय में पड़ गया । वह जिस नक्शे को महीनों के प्रयास से न बना सका था, वही कागज पर बना पड़ा था ।

इसी से मिलती-जुलती घटना का वर्णन डॉ. ग्रिफन ने अपनी पुस्तक "साइकिक पावर" में किया है, वह पेशे से मनःचिकित्सक थे । प्रतिदिन सुबह से शाम तक अपने क्लीनिक में रोगियों को देखते और शाम को घर लौट आते । एक दिन क्लीनिक में अप्रत्याशित भीड़ हो गई । रोगियों को वे जल्दी-जल्दी देखने लगे । सोच रहे थे कि समस्त मरीज आज ही निपटा दिए जायें । इस कारण उन्होंने दोपहर का भोजन भी नहीं लिया और सिर्फ चाय से सन्तोष कर लिया । चाय पीने के उपरान्त पुनः वे बीमारों को देखने में जुट पड़े । धीरे-धीरे शाम हो गई, किन्तु अब भी २५ मरीज शेष थे । किसी भाँति २० को निपटा दिया गया । अब तक रात के आठ बज चुके थे और डॉ. ग्रिफन बुरी तरह थक गए थे । आराम की नितान्त आवश्यकता महसूस हो रही थी । सोच रहे थे कि शेष ५ को कल बुला लिया जाय, पर इसी समय विचार आया कि इतनी देर बिठाये रखने के बाद लौटा देना ठीक नहीं । रोगियों को इससे मानसिक वेदना होगी । अस्तु उन्होंने बचे हुए को भी देख लेना उचित समझा और उनके जीवनवृत्तान्त सुनने और सलाह देने में पुनः व्यस्त हो गए । तब सभी रोगी निपट चुकें, तो रात के साढ़े नौ बज चुके थे । थककर उनका बुरा हाल था । उन्होंने जैसे-तैसे क्लीनिक बन्द किया, गाड़ी स्टार्ट की और घर की ओर चल पड़े । आधे घण्टे बाद गन्तव्य पर पहुँचे । कमरे के अन्दर प्रकाश हो रहा था । यह देख आरम्भ में तो उन्होंने सोचा कि सम्भवतः प्रातः जल्दबाजी में लाइट बुझाना भूल गए हों, इसलिए अब भी वह जल रही है । ताला खोलकर वे कमरे में प्रविष्ट हुए । नजर जैसे ही पलंग पर पड़ी, वे चौंक पड़े, सामने एक अन्य ग्रिफन महोदय लेटे पुस्तक पढ़ रहे थे । वे पलंग के और निकट आ गए और ध्यान से देखने लगे । पता चला दोनों में जरा भी अन्तर नहीं है । वे असमंजस में पड़ गए । आखिर यह हम शक्ल कौन हो सकता है ? यहाँ क्यों आया और इतने साहस और सहजता से पुस्तक पढ़ने में तल्लीन कैसे है ? इसी उधेड़बुन में वे पड़े थे कि देखा प्रतिरूप शनैः शनैः बिस्तर से ऊपर उठ रहा है और स्पष्टता मलिन होता जा रही है । कुछ क्षण पश्चात् आकृति तिरोहित हो गई । न वहाँ उसका कोई निशान था, न ही वह पुस्तक । अब सब कुछ सामान्य था ।

लगभग ऐसी ही घटना इंग्लैण्ड के एक प्रशासनिक व्यक्ति से सम्बन्धित है । बात बीसवीं सदी के आरम्भिक दशक की है । उन दिनों हाउस ऑफ लार्डस् में बहस चल

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रही थी । विपक्षी दल तरह-तरह के अभियोग लगाकर सरकार को गिराने के लिए उतारू थे । संसद के एक महत्त्वपूर्ण व्यक्ति इन्हीं दिनों बीमार पड़ गए थे । उनकी अनुपस्थिति सरकार के लिए खतरनाक हो सकती थी । इलाज जारी था, पर वे स्वस्थ नहीं हो पा रहे थे । उधर सदन की बहस भी जारी थी । जिस दिन अविश्वास के प्रस्ताव पर विपक्षी सांसदों के मत लिए जा रहे थे, उस दिन सरकारी पार्टी के सांसदों ने जब सर कार्न रॉस को अपनी कुर्सी पर मौजूद पाया, तो उन्हें आश्चर्य भी हुआ और प्रसन्नता भी, किन्तु तब लोगों ने यह समझ कर कुछ नहीं पूछा कि शायद वे स्वस्थ हो गए हों, पर वास्तविकता का पता तो बाद में ही चल पाया, जब उस दिन के उपरान्त वे दो सप्ताह तक सदन की गतिविधियों में हिस्सा नहीं ले सके । पता लगाने पर ज्ञात हुआ कि वे अब तक स्वस्थ नहीं हो सके हैं, अस्तु संसद में उपस्थित होने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता, किन्तु उनकी उपस्थिति के साक्ष्य के रूप में उस दिन की सामूहिक तस्वीर आज भी सदन की दीवार पर लटकी देखी जा सकती है ।

ब्रिटिश परामनोविज्ञानी रिचर्ड बुलकर ने अपने जीवन के महत्त्वपूर्ण संस्मरणों को "मेमोयर्स" नामक पुस्तक में प्रकाशित किया है । इसमें अनेक संस्मरण सूक्ष्म शरीर से सम्बन्धित भी हैं । एक संस्मरण का उल्लेख करते हुए वे लिखते हैं कि एक बार उनकी माँ गम्भीर रूप से बीमार पड़ी । घर से, तुरन्त चले आने सम्बन्धी तार आया । जब तार प्राप्त हुआ, उस समय तक वहाँ जाने वाली सारी गाड़ियाँ जा चुकी थीं । अतः उनका जाना एक दिन बाद ही सम्भव हो सकता था, किन्तु समाचार से उनका मन इतना बेचैन हो उठा कि एक दिन रुक पाना भी भारी होने लगा । निदान उन्होंने एक प्रयोग करने को सोचा । परामनोविज्ञानी होने के नाते सूक्ष्म शरीर से यात्रा के अनेक प्रसंग उन्होंने सुन और पढ़ रखे थे, अतः उसी शरीर से वहाँ पहुँचने का निश्चय किया । वे एक एकान्त कमरे में जाकर मन को एकाग्र करने लगे । जब एकाग्रता प्राप्त हुई, तो दृढ़ इच्छा की कि वे अपने घर रोगग्रस्त माँ के पास अवश्य पहुँचेंगे । लगभग आधे घण्टे के उपरान्त उन्हें माँ चारपाई पर पड़ी स्पष्ट दिखाई पड़ी । वह स्वस्थ तो नहीं हो सकी थीं, पर इतनी अस्वस्थ भी नहीं कि मामला गम्भीर माना जाता । उन्होंने माँ के शरीर का स्पर्श करने की कोशिश की, पर सफल न हो सके । इसके पश्चात् ही दृश्य दिखाई देना बन्द हो गया । दूसरे दिन जब वे घर पहुँचे तो माँ ने बड़े विस्मय भरे शब्दों में इस घटना का अक्षरशः वैसा ही उल्लेख किया जैसा उन्होंने देखा था ।

इन घटनाओं को विज्ञान भ्रम अथवा मन की काल्पनिक संरचना कहकर टाल सकता है, पर आध्यात्मवादी जानते हैं कि ऐसी घटनाएँ सर्वथा असम्भव भी नहीं । योगी-यति ऐसी क्षमताएँ कठिन तपश्चर्याओं द्वारा स्वयं को साध और शोध कर अर्जित करते हैं, किन्तु जहाँ मनोभूमि पहले से परिष्कृत होती है, वहाँ शोधन की कष्टसाध्य प्रक्रिया से नहीं गुजरना पड़ता और थोड़े से प्रयास-अभ्यास द्वारा इसे सम्पन्न किया जा सकता है । उपर्युक्त प्रसंगों में यही हुआ ऐसी अध्यात्मविज्ञान की मान्यता है ।

साथ जाते हैं सत्कर्म जुटाते हैं हम दुष्कर्म

मनुष्य भगवान का ज्येष्ठ राजकुमार है और इस सृष्टि का मुकुटमणि भी । भगवान ने अपनी संसृति में उसकी संरचना सिर्फ इसलिए नहीं की, कि वह भी अन्य जीवों की तरह शिश्नोदरपरायण बना रहे और मानव जीवन के इस बहुमूल्य अनुदान को इसी तरह बर्बाद कर दे, वरन् उसने उससे यह भी अपेक्षा रखी है कि वह स्वयं को अन्य प्राणियों की तुलना में श्रेष्ठ, वरिष्ठ व बुद्धिमान-विवेकवान सिद्ध करें, किन्तु विडम्बना यह है कि वह भगवद्-इच्छा और अपने दायित्वों को भुला कर उदरपूर्णा को ही अपना एक मात्र कर्तव्य मान बैठा है और इसी निमित्त तरह-तरह के कौतुक रचता रहता है । इन दिनों ऐसी ही घटनाएँ आये दिन देखने-सुनने को मिलती रहती हैं ।

मेलबोर्न (आस्ट्रेलिया) निवासी टील्फ डेविड हेलपर इन्हीं कौतुकियों में से एक हैं । हुआ यों कि वह एक बेरोजगार युवक था । उसे पैसे की नितान्त आवश्यकता थी, किन्तु किसी स्रोत से किसी भी प्रकार धन कमाने में वह सर्वथा विफल रहा । इससे वह काफी चिन्तित और परेशान हुआ । एक दिन जब वह सो रहा था, तो एक स्वप्न देखा कि वह जमीन पर बिना किसी वस्त्र के लेटा हुआ है और उसके शरीर पर एवं इर्द-गिर्द भाँति-भाँति के कृमि-कीटक रेंग रहे हैं । इनसे वह तनिक भी भयभीत नहीं हो रहा है । जब वह उठा, तो उसके मन-मस्तक पर वह दृश्य ज्यों का त्यों बना हुआ था । उसने उसी समय यह निश्चय किया, कि वह जीव-जन्तुओं के माध्यम से नये-नये करतब दिखाकर लोगों को चमत्कृत करेगा और धन कमायेगा । बस, फिर क्या था, उसने अपने निश्चय को व्यावहारिक रूप देना आरम्भ किया । वह तरह-तरह के जीव-जन्तु पाल कर उन्हें प्रशिक्षित करने लगा एवं उनसे भाँति-भाँति के कौतुक दिखाकर पैसा कमाना आरम्भ किया । वह जहाँ भी गया उसे ढेर सारे पैसे मिले । उसका सारा जीवन इसी में खप गया ।

धन कमाना बुरा नहीं है, इसे ही सब कुछ मान लिया जाय पर जहाँ ठगी और प्रवंचना जैसी युक्तियों का सहारा लिया जाय वहाँ वह निश्चय ही हेय और निन्दनीय है । यह बात दूसरी है कि बाद में इसे अनुचित मानकर राशि लौटा दी गई है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इंग्लैण्ड के विल्सन बन्धुओं ने अपनी दीनता मिटाने के लिए ऐसे ही उपाय का अवलम्बन लिया । विभिन्न प्रकार के कार्यों में जब उन्हें सफलता नहीं मिली, तो वे इंग्लैण्ड से जमैका (वेस्टइण्डीज) पहुँचे, वहाँ उन्होंने कोई काम ढूँढ़ना चाहा पर विफल रहे । कोई धन्धा आरम्भ करने के लिए पैसों की आवश्यकता थी । पर पैसे कहाँ से आयें ? उनके पास तो फूटी कौड़ी भी नहीं थी । पेट भरने के लिए ही उन्हें जहाँ-तहाँ की खाक छाननी पड़ती । अन्ततः उन्होंने तत्कालीन दास-व्यापार से लाभ उठाने का निश्चय किया । इसके लिए बड़े भाई जिम ने छोटे भाई जेड को 'दास' के रूप में प्रयुक्त किया । उसके बालों का मुण्डन कर काले रंग से पूरी तरह रंग कर उसे एक काले अफ्रीकी का रूप दे दिया और बाजार में बेच दिया । इसमें उसे एक बड़ी राशि प्राप्त हुई कुछ दिन मालिक के पास रहने के उपरान्त पूर्व निर्धारणानुसार जेड चकमा देकर भाग आया । इसके बाद उसने अपना रंग छुड़ाया और फिर से एक काले अफ्रीकी से बदल कर गोरा अंग्रेज बन गया । इस राशि से दोनों भाइयों ने मिलकर व्यापार आरम्भ किया, जिसमें उन्हें बड़ा मुनाफा मिला । जब वे वापस इंग्लैण्ड लौटने लगे, तो उनके पास ३२ हजार पौण्ड थे, पर जमैका से वापस जाने से पूर्व उन्होंने जिस व्यापारी को ठगा था, उसे वह सम्पूर्ण राशि लौटा दी ।

किसी ने ठीक ही कहा है—"बँधी मुट्ठी लाख की, खुली तो खाक की ।" मनुष्य जन्म निश्चय ही बँधी मुट्ठी की स्थिति में लेता है, किन्तु जब इस नश्वर संसार से कूच करता है, तो उसकी मुट्ठी सर्वथा खुली रहती है । धन-सम्पत्ति सब कुछ यहीं रह जाते हैं । उसके साथ जाता है, तो एकमेव उसका कर्म । फिर शुभाशुभ कर्म के हिसाब से उसे दूसरे जीवन में उसका फल भोगना पड़ता है । अतः विवेकशील उसे ही कहा जा सकता है, जो धन जोड़ने के चक्कर में अपना सम्पूर्ण जीवन बर्बाद करने की तुलना में समाज-सेवा सम्बन्धी कोई ऐसा कार्य करें, जो न सिर्फ उसे धन्य बनाकर उसका लोक और परलोक सुधार दें, वरन् उस परमपिता को भी गौरवान्वित होने का अवसर प्रदान करें, जिसकी वह सन्तान है ।

अजूबों से भरी यह मायावी दुनिया

प्रकृति की लीला कितनी विचित्र और विलक्षण है, इसे मानवी बुद्धि अभी पूर्णतः समझ नहीं पायी है । इस प्रकार की न जाने कितनी अनबूझ पहेलियाँ उसके गर्भ में छिपी पड़ी हैं, जिन्हें शायद अब तक पूरी तरह खोजा भी नहीं जा सका है । कदाचित आगामी समय में इन्हें खोज भी लिया जाय, तो इनके रहस्यों का पता लगा पाना सामान्य बुद्धि के लिए कठिन ही नहीं, असम्भव भी है, क्योंकि सामान्य बुद्धि सदा विज्ञान का सहारा लेती है और विज्ञान की पहुँच मात्र स्थूल जगत तक सीमित है, वह कार्य का स्थूल कारण ही बता सकता है, किन्तु जहाँ कारण सूक्ष्म हो, वहाँ विज्ञान का अवलम्बन निराशाजनक ही सिद्ध होगा । इसके लिए प्रज्ञा स्तर की बुद्धि चाहिए । वही उनका सही और समुचित कारण ढूँढ़ सकती है । आये दिन देखे जाने वाले अजीबोगरीब प्राकृतिक कारनामे अपने रहस्य अनावरण के लिए इसी स्तर की बुद्धि की माँग करते हैं और आशा रखते हैं कि अगले ही दिनों मनुष्य इन्हें समझने में सफल हो सकेगा ।

कांगो नदी के पूर्वी तट पर, तट से ५ किलोमीटर दूर एक सघन वन है । उसमें एक छोटी-सी गुफा है । गुफा का प्रवेश द्वार इतना छोटा है कि कोई व्यक्ति यदि उसके अन्दर जाना चाहे, तो खड़ा-खड़ा प्रविष्ट नहीं हो सकता । व्यक्ति के झुकने से भी काम नहीं चलता । भीतर जाने के लिए घुटने के बल पर हाथों का सहारा लेकर चलना पड़ता है, तभी उसमें प्रवेश पा सकना सम्भव है । अन्दर धीरे-धीरे कन्दरा चौड़ी और बड़ी होती चली गई है । कन्दरा के मुख से करीब ३० कदम अन्दर उसकी दायीं दीवार में एक पत्थर की कील जैसी संरचना उभरी हुई है । यदि कोई व्यक्ति उसे छू दे तो दीवार फटने जैसी आवाज अन्दर गूँजने लगती है । यह आवाज ठीक पाँच सेकण्ड तक होती है, तदुपरान्त वह स्वतः बन्द हो जाती है, भले ही व्यक्ति पत्थर की कील दबाये ही क्यों न रहे । कई बार इस समय में व्यतिरेक होता देखा गया है । अनेक बार ध्वनि ८-१० सेकण्ड तक होती रहती है, पर अधिकांश अवसरों पर यह ठीक पाँच सेकण्ड बाद बन्द हो जाती है । दुबारा ध्वनि तभी उत्पन्न होती है, जब उसे छोड़ने के पश्चात् पुनः दबाया जाय । विश्व के अनेक वैज्ञानिक दल उस रहस्यमय ध्वनि को जानने समझने के लिए कई बार उस गुफा की यात्रा कर चुके हैं, पर गुत्थी को सुलझाने में वे अब तक विफल रहे हैं ।

अमेरिका में "क्रेटर लेक" नामक एक विशाल झील है । इसके मध्य में "विजार्ड आइलैण्ड" नाम का एक छोटा-सा टापू है, जो सम्भवतः कभी किसी ज्वालामुखी के फटने के कारण झील के मध्य उभर आया हो, विशेषज्ञों को इस सम्बन्ध में ऐसा ही अनुमान है । इस छोटे-से द्वीप में एक बड़ा ही अनूठा वृक्ष है । प्रत्यक्षदर्शियों का कहना है कि अरुणोदय होते ही यह पेड़ पूरब की दिशा में सूर्य की ओर कुछ प्रनत हो जाता है, मानो नवविहीन के आगमन पर सविता देव का अभिवादन कर रहा हो । कहते हैं कि दोपहर होते-होते यह पुनः पूर्वस्थिति में ठीक उदग्र रूप से खड़ा हो जाता है । वनस्पति-शास्त्रियों के लिए आज भी उक्त पेड़ का यह अनोखा करतब चुनौतीपूर्ण बना हुआ है ।

प्रकृति का एक कौतुकपूर्ण दृश्य हमें तब देखने को मिलता है, जब हम साइबेरिया में स्थित "वेली ऑफ गीजर्स" नामक तंग घाटी की यात्रा करते हैं । सन् १९४१ तक इस फब्बारे की घाटी का किसी को पता न था, किन्तु इसके उपरान्त यहाँ लगभग २० ऐसे गीजरों का पता चला है, जो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अपनी रंग-बिरंगी छटा से दर्शकों का मन मोह लेते हैं । इन फब्बारों की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि ये १० मिनट से लेकर ६ घण्टे तक के नियमित अन्तराल में छूटते रहते हैं । इनकी नियमितता इतनी सुनियोजित और अटल है, जिसे देख दाँतों तले उँगली दबानी पड़ती है, जो गीजर १० मिनट की अवधि में निःसृत होते हैं वह सदा दस-दस मिनट पर छूटते ही रहते हैं । ऐसी ही नियमितता अन्यों के साथ भी देखी जा सकती है । वहाँ का सबसे बड़ा फब्बारा, जिसे "फर्स्ट बोर्न" का नाम दिया गया है, हर घण्टे पर विभिन्न रंग के फुहारों के साथ जमीन से निकलता रहता है । यह जल के ४० फुट ऊँचे स्तम्भ का निर्माण करता है और इनसे छिटकने वाली फुहारों की ऊँचाई पाँच सौ फुट तक चली जाती है । पूरी घाटी में इन गीजरों के छूटने और मिटने का क्रम बड़े ही लयबद्ध ढंग से होता रहता है ।

पश्चिमी ईरान की जागरस पहाड़ियों में भूमिगत एक ऐसी विशाल गुफा है, जिसमें प्रवेश करने पर अनेक ऊँचे-ऊँचे व मोटे पाषाण स्तम्भ दिखाई पड़ते हैं । इन स्तम्भों को देखने के उपरान्त यह स्वीकार कर पाना मुश्किल हो जाता है, कि यह मानवीकृत न होकर प्रकृति की कुशल कारीगरी का नमूना है । इनकी सुगढ़ता किसी भी वास्तुकार को चुनौती देने के लिए पर्याप्त है । इस "धार पराऊ" कन्दरा में सबसे ऊँचे प्रस्तर, स्तम्भ का नाम खोजी दल ने "शहंशाह" रखा । इसकी ऊँचाई १३८ फुट है । इस प्रकार के और भी अनेक स्तम्भ वहाँ हैं, पर ऊँचाई में सब इससे कम हैं । सम्भवतः इसी कारण अन्वेषणकर्त्ताओं ने इसका नाम "शहंशाह" अथवा "सम्राट" रख दिया ।

मनुष्य यदि वास्तुशिल्प का कोई आकर्षक और उत्कृष्ट नमूना प्रस्तुत करें, तो इसमें आश्चर्य जैसी कोई बात नहीं है, क्योंकि वह सृष्टि का सबसे बुद्धिमान और कार्यकुशल प्राणी है, किन्तु यदि प्रकृति ऐसे उदाहरण प्रस्तुत करती है, तो निश्चय ही यह अचम्भे की बात है । ऐसा ही एक अचम्भा उत्तरी आयरलैण्ड के काउण्टी एण्ट्रीम समुद्री तट पर स्थित है । इसे देखने से प्रथम दृष्टि में ऐसा प्रतीत होता है कि उक्त संरचना किसी प्राचीन सभ्यता द्वारा निर्मित वास्तुकला का सर्वोत्तम प्रतिमान है, पर पुरातत्ववेत्ताओं का कहना है कि यह कोई मानवीकृत निर्माण नहीं है, वरन् निसर्ग की कुशल इंजीनियरी का एक अच्छा प्रमाण है । गवेषणा करने वालों ने इसका नाम "जाइण्ट्स काउज वे" अर्थात् "दैत्यों का पक्का मार्ग" रखा है । यह ४० हजार बहुकोणीय पाषाण-स्तम्भों की एक विशाल और विस्तृत संरचना है । इस सीढ़ीनुमा संरचना के तीन खण्ड हैं—निम्न, मध्य और ऊपरी । यह मध्य खण्ड ही है, जिसकी सुगढ़ता को देखकर खोजियों को आरम्भ में इसे किसी सुविकसित प्राचीन सभ्यता की कोई संरचना का भग्नाशेष होने का भ्रम हुआ था, क्योंकि इस हिस्से के प्रस्तर स्तम्भों में इतने उच्चस्तर की शिल्पकला का प्रदर्शन देखने को मिलता है, जिससे कुछ क्षण के लिए इसके प्रकृतिकृत होने का विश्वास कर पाना मुश्किल हो जाता है । इस भाग के सारे स्तम्भ पूर्णतः षट्कोणीय हैं, अन्तर सिर्फ इतना है कि वे सभी एक ही व्यास के पाषाण-खण्ड न होकर उनका विस्तार १५-२० इंच व्यास तक है, किन्तु यहाँ भी बुद्धिमत्ता और सुगढ़ता की बानगी देखने योग्य है । मध्य का निचला हिस्सा १५ इंच व्यास वाले स्तम्भों से शुरू होकर धीरे-धीरे ऊपर की ओर व्यास बढ़ते-बढ़ते इस खण्ड के शीर्ष पर अधिकतम २० इंच तक पहुँच गया है । इस प्रकार इस खण्ड को देखने से ऐसा मालूम होता है, जैसे कोई कुशल कलाकार ने बड़ी बारीकी से पत्थर के इन शैल-खण्डों को सुरुचिपूर्ण ढंग से परस्पर सटा-सटा कर फिट किया हो ।

जब किसी घाटी पर किसी मनुष्य अथवा अन्य प्राणी के पहुँच जाने पर अचानक ही जोरदार धमाका हो उठे, तो इसे क्या कहा जाय ? प्रकृति की कौतुकपूर्ण लीला ? आश्चर्य ? या कोई ऐसा उपक्रम, जिसके द्वारा वह मानव अथवा मानवेतर प्राणियों को अपने निकट न पहुँचने देने की चेतावनी देती हो ? कदाचित ऐसा ही हो, क्योंकि अब तक रियोडीला पाज की घाटी में घटने वाली इस अनूठी घटना का रहस्योद्घाटन करने में वैज्ञानिक और प्रकृतिविद् सर्वथा असमर्थ रहे हैं । वस्तुतः यह घाटी बोलिविया में लापाज नदी के तट पर हिमाच्छादित एण्डीस पर्वत के किनारे स्थित है और पूर्णतः मिट्टी की बनी विचित्र भूल-भुलैया जैसी संरचना है । जब कभी कोई जीवधारी भूलवश इसके निकट आ पहुँचता है तो तोप जैसी धड़ाके के साथ भयंकर गर्जना होती है और इसी के साथ धूल का एक गुब्बार वायुमण्डल में छा जाता है, जिससे थोड़े समय तक वहाँ कुछ भी दिखाई नहीं पड़ता । आये दिन लोग प्रकृति के इस रहस्यमय करतब को छेड़ने और देखने के लिए घाटी के आस-पास आते ही रहते हैं । तोप जैसी इसकी गगनभेदी ध्वनि के कारण ही वह स्थानीय क्षेत्र में "ग्रेण्ड कैनन ऑफ दि ग्रेण्ड केनाइन" अर्थात् "भव्य घाटी का भव्य धमाका" के नाम से लोकप्रिय हो गई है ।

भगवान ने मनुष्य को जानने समझने की बुद्धि दी है । उसके द्वारा कई अवसरों पर वह ऐसी पहेलियों को सुलझा भी लेता है, जो आरम्भ में जटिल गुत्थी जान पड़ती हैं, पर हर बार वह ऐसा कर ही लेगा, इसे दावे के साथ नहीं कहा जा सकता । अनेक मौकों पर स्थूल क्रिया के मूल में कारण स्थूल न होकर सूक्ष्म होते हैं । इन कारणों को सूक्ष्म बुद्धि द्वारा ही समझा जा सकता है । सूक्ष्म बुद्धि अध्यात्म-अवलम्बन के बिना सम्भव नहीं । अतः यदि मनुष्य को सृष्टि की इन रहस्यमय गुत्थियों का उत्तर पाना है, तो अध्यात्म का आश्रय लेना ही पड़ेगा । इससे कम-में काम चलने वाला नहीं । अजंता की गुफाओं को ही लें । वे विश्वविख्यात हैं । उन्हें देखने के लिए संसार भर के लोग आते हैं और पुरातनकाल की इस कलाकौशल को देखकर स्तब्ध रह जाते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वे चिरकाल तक अविज्ञात स्थिति में पड़ी रहीं । एक दिन अजंता गाँव के निकट एक अंग्रेज शिकारी उस क्षेत्र में बन्दूक लिए घूम रहा था । ऐसे और भी आते थे । उस क्षेत्र के लड़कों का साथ लेते और शिकार का पता बताने के बदले बख्शीस देते थे ।

उस शिकारी को एक ग्रामीण लड़का, एक झुरमुट के पास ले गया और उँगली के इशारे से उसके भीतर रंगीन पत्थरों वाले खण्डहर दिखाने लगा ।

वास्तुकला के उस अद्‌भुत नमूने को देखकर शिकारी स्तब्ध रह गया । गाँव के श्रमिक बुलाये गए । रास्ता बनाया गया । खोजियों का सिलसिला चल पड़ा और अजंता की गुफाओं के रूप में पुरातन इतिहास की एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि को हस्तगत किया गया ।

तथ्यहीन कौतुक किस काम का ?

विशालकाय संरचनाएँ गढ़ने और अद्‌भुत इमारतें खड़ी करने का महत्त्व तब है, जब वह लाभदायक और उपयोगी सिद्ध हों, अन्यथा वे कौतुक कौतूहल मात्र बनकर रह जाती हैं । ऐसे आश्चर्य तो प्रकृति में ही असंख्यों भरे हैं फिर बहुमूल्य साधन-सामग्री नियोजित कर इन अचम्भों को खड़ा करने की कोई तुक रह नहीं जाती । इतने पर भी न जाने क्यों मनुष्य ऐसे कृत्यों में संलग्न देखा जाता है ।

यह प्रवृत्ति मात्र वर्तमान समाज की है, सो बात नहीं । सभ्यता के प्रारम्भ से ही इस प्रकार की प्रवृत्तियाँ मनुष्य में पकने-पनपने लगी थीं, जो बाद में मूर्त रूप धारण कर ऐसे निर्माणों की शृंखला खड़ी करने में तत्पर हो गयीं, जिस पर अंकुश अब तक नहीं लगाया जा सका है ।

ऐसा ही एक निर्माण अपनी विलक्षणता की गाथा गाते लेबनान में देखा जा सकता है । बेरूत से ५३ मील दूर यह भव्य संरचनाएँ रोमन मन्दिरों की हैं, जिनके निर्माण काल के बारे में पुरातत्ववेत्ताओं का अनुमान है कि यह प्रथम शताब्दी के आस-पास विनिर्मित हुए । मन्दिर समूह एक ऊँचे प्लेटफार्म पर स्थित है, जहाँ से प्राकृतिक दृश्यों का विहंगावलोकन अत्यन्त मनोहारी लगता है, किन्तु उक्त निर्माण की यही एकमात्र विशिष्टता नहीं है । सबसे बड़ी विचित्रता वहाँ की वह विशाल दीवार है, जो मन्दिर के चारों ओर बनी हुई है । यह दीवार आज भी विशेषज्ञों को अपनी विशालता के कारण स्तम्भित किए हुए है । दीवार के पश्चिमी सिरे पर तीन भीमकाय चट्टानें काट कर तराशी हुई स्थिति में रखी गई हैं । यह शिलाखण्ड अपने विराट् आकार के कारण अजूबे और विश्व प्रसिद्ध बने हुए हैं । आधुनिक इंजीनियरों के लिए सर्वाधिक आश्चर्य की बात यह है कि इतने बड़े शिलाखण्ड खदान से उस स्थान तक लाये किस प्रकार गए ? और यदि किसी विशेष युक्ति से यह सम्भव हो सका, तो फिर उन्हें वर्तमान स्थान और स्थिति में रख पाना किस भाँति शक्य हो सका ? उनके लिए यही सबसे जटिल प्रश्न बना हुआ है, जिसका उत्तर दे पाना अभी शेष है, क्योंकि उनका मानना है कि आज के वैज्ञानिक युग में अत्याधुनिक परिष्कृत यन्त्रों के माध्यम से भी यह कार्य सम्पादित कर पाना एक प्रकार से टेढ़ी खीर है, फिर भी रोमन साम्राज्य के दौरान इसे सम्पन्न किया गया और तब से लेकर अब तक की करीब दो हजार साल की अवधि तक में वे अपनी स्थिति यथावत् बनाये हुए हैं । यह और भी विस्मयकारी है ।

चट्टानें "ट्रायलीथन" के नाम से प्रसिद्ध हैं । आकार-प्रकार में यह इतनी विस्तृत हैं कि यदि वे खड़ी की जा सकें, तो प्रत्येक प्रस्तर खण्ड आज की छः मंजिली इमारत जितने ऊँचे होंगे । सबसे बड़ा खण्ड ६४ फुट ऊँचा, १२ फुट चौड़ा और १४ फुट लम्बा है, इसका वजन करीब आठ सौ टन है । यह शिलाएँ बारबेक स्थित मन्दिर स्थल से लगभग एक मील दूर एक खदान से काट कर निकालीं और निर्माण-स्थल तक लायी गईं, जहाँ उन्हें २५ फुट ऊँचे छोटे पत्थरों से बने प्लेटफार्म पर रखा गया । इनके सिरों को इतनी दक्षतापूर्वक परस्पर मिलाया और जोड़ा गया है कि उनके बीच ब्लेड को भी घुसा पाना सम्भव नहीं । इससे तब की उच्चस्तरीय शिल्पकला का संकेत मिलता है । रहस्य तब और गहरा जाता है, जब यह ज्ञात होता है कि खदान में ट्रायलीथन से भी विराट् आयतन वाला एक पाषाण-खण्ड अब भी पड़ा हुआ है, इसका वजन हजार टन जितना आँका गया है । इसके सम्बन्ध में कोई यह नहीं जानता कि इस अन्तिम खण्ड का प्रयोग क्यों नहीं किया गया ? शायद आज के विशेषज्ञ इसका यह कहकर उत्तर दें कि तत्कालीन समय की वैज्ञानिक प्रगति के हिसाब से यह चट्टान इतनी भारी साबित हुई कि उसे स्थानान्तरित कर पाना असम्भव बन गया हो, फलतः वह अनुपयोगी दशा में अपने मूल स्थान में पड़ी रह गई हो ।

कारण चाहे जो हो, रोमनों की इस प्रकार की विलक्षण निपुणता के बावजूद भी ऐसा कोई दूसरा उदाहरण रोमन साम्राज्य में अन्यत्र कहीं देखने को नहीं मिलता । इससे ऐसा प्रतीत होता है कि किसी सनकी सम्राट ने स्वयं को श्रेष्ठ व यशस्वी बनाने के लिए यह संरचना खड़ी की हो और यथास्थिति बनाये रखने के लिए बाद में निर्माताओं का वध कर दिया हो । इतने पर भी आज न तो उसके सृजेता का पता है और न ही उस अद्‌भुत को अक्षुण्ण रखने में वह सफल हो सका है । फिर इस अनुपयोगी श्रम का लाभ ? लगभग नगण्य जितना ही है । यदि इतना परिश्रम उसने अपने व्यक्तित्व को गढ़ने और खुद को उत्कृष्ट बनाने में किया होता, तो न सिर्फ वर्तमान में दूसरों के लिए प्रेरणा-स्रोत साबित होता, वरन् उच्चादर्शों के कारण इतिहास पुरुष बनकर इन दिनों भी जी रहा होता, पर आडम्बर के उलझाव ने उसे कहीं का नहीं रहने दिया । न तो जीवन का श्रेष्ठतम सदुपयोग

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बन पड़ा, न वही प्रयोजन सध सका, जिसमें वह आजीवन संलग्न रहा । हम आकर्षक व्यक्तित्व की संरचना गढ़ें, अनावश्यक कौतुक खड़ा न करें, यही समाज की सर्वोपरि आवश्यकता और समय की माँग है ।

कुछ विचित्र घटनाक्रम

८२ वर्षों से लावारिस पड़े एक शराबखाने तथा सराय को इंग्लैण्ड के हैम्पटन ने खरीद लिया । उसमें एक ऐसी पेटी पायी गई जिसमें २५ हजार सोने की अशर्फी थीं । वह किसी ऐसे व्यक्ति की थीं जो यहाँ छिपा गया था और फिर वापस न लौट सका ।

इसे कहते हैं—**छप्पर फाड़कर सोना बरसना ।**

रवाड जार्डन का एक भविष्यवक्ता शेख अब्दुल रजव था । उसने भविष्यवाणी की कि सम्राट अब्दुल्ला का कत्ल होने ही वाला है, वैसा ही हुआ । इसके बाद भविष्यवक्ता ने मौन धारण कर लिया और फिर वह जीवन भर बोला ही नहीं । ताकि उसके मुख से कोई अशुभ वचन न निकलें ।

भविष्य कथन के लिए वक्ता को ही प्रायश्चित्त करना पड़ा ।

ओहियो के फिलिप केड्डेल के बाएँ फेफड़े में गोली लगी । शल्य चिकित्सकों ने उसे बाहर निकाल सकने में अपनी असमर्थता बताई, पर खाँसी के साथ एक दिन वह गोली अपने आप ही निकल गई ।

'जाको राखै साइयाँ मार सके ना कोय ।"

सन् १९२७ में साइबेरिया के राष्ट्रपति चुनाव में चार्ल्स को प्रतिद्वन्द्वी की तुलना में २,३४,००० मतों से जीता घोषित किया गया । यह संख्या उस देश के कुल मतदाताओं से १५ गुनी अधिक है ।

"झूठ बोला जाय तो इतना ।"

बेविलिया देश में पिछले १५० वर्षों में १४९ राज्य विप्लव हो चुके हैं ।

इसे कहते हैं—**क्रान्ति का जुनून ।**

हार्वट काउण्टी की एक बुढ़िया, सैली ईगर ९० वर्ष की आयु में अपनी ऐनक खो बैठी । बाद में उसने नई ली ही नहीं । वह बिना ऐनक की सहायता के सुई में धागा पिरो लेती थी ।

बुढ़िया में जवानी जैसी क्षमता फिर लौटने लगी थी । उसका प्रत्येक अवयव नये सिरे से चमकने लगा था ।

मिस्र के शासक हसन के हत्यारे सईद को पकड़ा गया तो उससे सवाल पूछते हुए हत्या का विवरण पूछा । उसने अपनी कमर में से छुरा निकाल कर अपने ही सीने में भोंक लिया और कहा—'ऐसे' ।

निष्ठुरों को न दूसरों के ऊपर दया आती है न अपने ऊपर । इसकी यह घटना एक प्रत्यक्ष प्रमाण थी ।

थाईलैण्ड एक राजा कांग द्वारा अपने पुत्र फार्न को देश निकाला दे दिया । बड़ा होने पर लड़के ने सेना गठित की और पिता के राज्य पर चढ़ाई करके उसे मार डाला ।

लोगों के द्वारा पिता को मारने के लिए धिक्कारे जाने पर उसके नाम पर एक भव्य मन्दिर बनाया इसमें उसने राज्यकोष में मिली सारी सम्पत्ति लगा दी ।

पितृ द्रोह और पितृ भक्ति का कैसा है यह संयुक्त उपाय ?

सन् १९०० में तत्कालीन चुनाव विजय पर सरकार की ओर से एक विशाल भोज दिया गया था । उसमें करीब २३ हजार संभ्रान्त नागरिक आमन्त्रित किए थे । भोज में ५० हजार बोतलें शराब की खर्च हुईं ।

जनता का धन जनता के लिए उड़ा देने का यह एक अनोखा नमूना था ।

वुड स्टाक कनाडा में दो ऐसे व्यक्तियों का संयोग हो गया जिनमें से एक की बिल्कुल टाँगें नहीं थीं और एक के दोनों हाथ नहीं थे । बिना हाथ वाले का नाम था चार्ल्स ट्रिप और बिना टाँग वाला था—एली ब्राउन । लोगों ने तलाश कर दोनों का जोड़ा मिला दिया । वे दोनों जीवन भर साथ रहे । दोनों के मिलने पर एक पूरे मनुष्य की पूर्ति हो गई और वे बिना किसी प्रकार का अभाव अनुभव किए जीवन-यापन करते रहे ।

रोम का सम्राट कलाउडिस की पुत्री ऐन्टोनिया अतिशय सुन्दर थी । उसे प्राप्त करने के लिए अनेकों का मन ललचाता रहता । वह एक के बाद जिन दो युवकों के साथ विवाही गई । उन्हें किसी न किसी दोषारोपण से उन्हें फाँसी पर चढ़ावा दिया । अन्त में सम्राट नीरों उस पर ललचाया । प्रस्ताव अस्वीकार करने पर नीरो ने एन्टोनिया को फाँसी लगवा दी ।

अति की सुन्दरता भी बुरी । अति की हर बात बुरी ।

गैरिट डी. बाल न्यूजर्सी अमेरिका का गवर्नर निर्वाचित हुआ, किन्तु उसने उस पर आसीन होने से इन्कार कर दिया । उसने कहा राजनीति में पड़ने की अपेक्षा में लोक शिक्षा जैसे अधिक महत्त्वपूर्ण कार्य में ही अपने जीवन का सदुपयोग करना चाहूँगा । इस सन्दर्भ में उसने अपने विचार राष्ट्रपति तक के आग्रह से भी नहीं बदले ।

आदर्शों पर टिकने वाले ऐसे होते हैं ।

बिचु आनलिण्ड की खाली हाथों एक जंगली शेर से अफ्रीका के जंगलों में मुठभेड़ हो गई । उसे २३ जख्म आये तो भी उसने गर्दन दबोच कर उस शेर को मार ही डाला ।

साहस और पराक्रम ऐसे ही अवसरों पर काम आता है ।

मद्रास सेण्ट जार्ज किले के अंग्रेज कमाण्डर एडवर्ड विक्टर की जंगल में बाघ के साथ मुठभेड़ हो गई, उसने बाघ को गला घोंट कर मार दिया था ।

हिम्मत सबसे बड़ा हथियार है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

मैसूर के एक राजा ने किसी साधु पर अप्रसन्न होकर उसे तोप के मुँह में डालकर तीन बार उड़ाया । एक बार वह हाथी की अम्बारी पर, दूसरी बार ऊँची छत पर और तीसरी बाल बालू के टीले पर जा बैठा । न मरते देखकर राजा ने उसे क्षमा कर दिया ।

इसे कहते हैं—**बिना मौत आये कोई नहीं मरता ।**

धरती पर चेतना अन्तरिक्ष से उतरी

जीवन की उत्पत्ति धरती पर पाये जाने वाले रसायनों से हुई, इस मान्यता पर जोर भले ही दिया जाता हो पर बात वस्तुतः ऐसी है नहीं । एककोशी द्विकोशी जीव वनस्पति वर्ग के घटक इस प्रकार उत्पन्न होने की बात एक सीमा तक समझ में आती है, पर मनुष्य जैसे सुविकसित संरचना वाले प्राणी में इसी प्रकार सड़ी घास या पानी के संयोग से उत्पन्न हो सकते हैं यह कथन सहज ही गले नहीं उतरता । फिर एक जाति के जीव दूसरी जाति में बदल जाते हैं यह कथन सब प्राणियों के सम्बन्ध में लागू नहीं होता ।

सड़न से उत्पन्न कृमि कीटकों की भी अपनी-अपनी प्रजातियाँ भी अपना वंशानुक्रम बनाये रहते हैं । तितलियाँ और मछलियाँ भी अपनी पूर्वज परम्परा को धारण किए रहती हैं । ये विशेष परिस्थितियों में ही अपने काय कलेवर में थोड़ा बहुत अन्तर करती हैं और फिर उसे दृढ़तापूर्वक बनाये रहती हैं । आये दिन बदलाव नहीं लातीं । पीढ़ियों तक अभ्यस्त वातावरण को निर्वाह करने का अपना ढाँचा एवं स्वभाव अपनाये रहती हैं ।

यह कथन भी सही नहीं है कि एक प्राणी विकास क्रम के अनुसार अधिक बुद्धिमान और काय कलेवर विकसित करता रहता है यदि ऐसा होता तो सृष्टि के आदि से ही प्राणी जिस रूप में चले आ रहे हैं वे वैसे न बने रहते । देखा जाता है कि हाथी, घोड़े, ऊँट, बैल आदि आरम्भ में जैसे थे वैसे ही अब भी बने हुए हैं । क्षेत्रीय जलवायु के कारण ही उनके स्वभाव और आकृति में यत्किंचित अन्तर आता है, पर वह भी अपने क्षेत्र में स्थिर हो जाते हैं । फिर उनकी प्रजातियाँ भी निश्चित हो जाती हैं ।

पदार्थों में से कोई ऐसा नहीं है जो सड़न द्वारा उत्पन्न होने वाले कृमि कीटकों के अतिरिक्त किसी बुद्धिमान प्राणी को जन्म दे सके । प्रकृति की विलक्षणता तो बहुत है पर वह ऐसी नहीं कि विकसित चेतना का सृजन कर सके । यदि ऐसा होता तो उन सभी ग्रह पिण्डों में जीवधारी पाये जाते जिनमें तापमान और आहार, आवास की गुंजाइश है । ऐसे ग्रह तो अपने सौर-मण्डल में ही कई हैं । फिर समस्त ब्रह्माण्ड में ऐसी स्थिति अरबों-खरबों में हो सकती थी, पर वैसा है नहीं । इससे प्रकट है कि प्राणियों का उत्पादन एवं विकास उस प्रकार नहीं हुआ है जैसा कि कहा और समझा जाता है ।

अब वैज्ञानिकों का एक बड़ा वर्ग इस तथ्य को स्वीकार करने लगा है कि पदार्थ की भाँति ही चेतना प्रवाह भी अनादि काल से इस ब्रह्माण्ड में मौजूद है और वह कारणवश एक से दूसरे ग्रह पिण्ड पर पहुँचता रहता है । वहाँ की परिस्थितियाँ जैसी होतीं उसी के अनुरूप अपने मूलभूत वर्ग की रक्षा करते हुए कलेवर का सृजन कर लेता है ।

पृथ्वी पर हर दिन आकाश से अगणित उल्काएँ (प्रति दो मिनट दो करोड़ की संख्या में) बरसती हैं । उनमें से कुछ तो वायुमण्डल में प्रवेश करते ही जल जाती हैं, जो साबुत स्थिति में धरातल तक आ जाती हैं उनका विश्लेषण करने पर पाया गया है कि उनमें पृथ्वी पर पाये जाने वाले खनिज एवं रसायन तो हैं ही साथ ही विभिन्न प्रकार के जीवन तत्व भी हैं जो उपयुक्त परिस्थितियों में विकसित होकर शरीरधारी बन सकते हैं । इन तथ्यों के आधार पर यह माना जा सकता है कि किसी बुद्धिमान ग्रह का जीवन पृथ्वी पर उतरा होगा और उसने अपने स्वरूप के अनुसार कलेवर धारण किया । बीज के अनुरूप अंकुर और वृक्ष बनते गए होंगे । विभिन्न प्राणियों की सृष्टि होती गई होगी ।

प्राणियों में जन्मजात रूप में पाये जाने वाले विभिन्न कौशलों से भरपूर स्थिति में होना आनुवांशिक स्वभाव धारण किए रहना इस तथ्य को प्रकट करता है कि जीवन कृत्रिम नहीं मौलिक है और वह सनातन काल से नियत निर्धारित विधा के अनुरूप विकसित होता चला आया है । रसायनों के संयोग से किसी प्रयोगशाला में कोई मौलिक प्राणी नहीं बन सका इससे भी चेतना की मौलिकता सिद्ध होती है ।

घटनाएँ जिनका रहस्य न जाना जा सका !

विज्ञान की अधुनातन प्रगति और चन्द्रमा तथा मंगल ग्रहों पर विजय जैसे अभियान यह सिद्ध करते हैं कि मनुष्य संसार का सर्वश्रेष्ठ और बुद्धिमान प्राणी है, परन्तु इसी कारण यह सृष्टि की सर्वोच्च सत्ता, सामर्थ्यवान इकाई कहलाने का अधिकारी नहीं हो जाता । प्रकृति के थोड़े से रहस्यों का अनावरण कर लेने भर से उस पर दिनों-दिन यह दम्भ छाता जा रहा है कि उसकी बराबरी कोई दूसरा प्राणी तो क्या प्रकृति भी नहीं कर सकती, लेकिन जब प्रकृति उसके सामने ऐसे सवाल कर देती है, जिन्हें वह सुलझा न सके तब मनुष्य को क्षुद्रता और अल्प सामर्थ्य का आभास होता है ।

प्रकृति के कुछ रहस्य तो ऐसे हैं, जिन्हें देखकर बड़े-बड़े मूर्धन्य वैज्ञानिक भी आश्चर्यचकित रह जाते हैं । संसार के विभिन्न भागों में पायी जाने वाली रहस्यात्मक ध्वनियाँ अभी भी मानवी बुद्धि को चुनौती दे रही हैं ।

सन् १९६१ से हडस्टन लाइब्रेरी में वायलिन का मधुर संगीत सुनाई पड़ता रहता है । वहाँ न तो कोई वाद्ययन्त्र है

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

और न ही कोई टेपरिकॉर्डर या ट्रांजिस्टर, जिसे कोई बजाता हो, वायलिन क्यों बजता है ? कौन बजाता है ? उसका पता लगाने की हर सम्भव कोशिश की गयी, लेकिन अभी तक कुछ ज्ञात नहीं हो पाया । कुछ लोगों का कहना है कि बहुत पहले वहाँ एक अफसर रहता था, जो घण्टों वायलिन बजाया करता था । वह अब मर चुका है, किन्तु संगीत अभी भी सुनाई देता है ।

कभी-कभी ऐसी घटनाएँ प्रकाश में आती रहती हैं । जिनका समाधान ढूँढ़े नहीं मिलता । एक घटना अक्टूबर १९६२ की है । नैसविले, टिनेसी में जान हाकिन्स नामक एक व्यक्ति के मकान में सामने के दरवाजे पर किसी ने दस्तक दी । आवाज सुनकर हाकिन्स से जब दरवाजा खोला तो वहाँ कोई नहीं था । अन्दर से दरवाजा बन्द करके जैसे ही वह बैठा कि फिर से खट-खट की आवाज आयी । इस प्रकार यह आवाज बार-बार आती रही । कुछ दिन बाद वह मकान के अन्य दरवाजों और खिड़कियों पर भी सुनाई देने लगी । पुलिस की चौकसी बिठाई गई, वैज्ञानिकों ने भी जाँच-पड़ताल की, परन्तु कोई व्यक्ति नजर नहीं आया जो इस तरह की शरारत-पूर्ण हरकतें करता हो । दो माह तक दिन-रात इस तरह की आवाज बराबर आते रहने के पश्चात् स्वयंमेव बन्द हो गई । आश्चर्य तो इस बात का है कि बिना किसी की उपस्थिति के भी दस्तक की आवाज लगातार कैसे आती रही ? यह रहस्य अब तक अनसुलझ ही बना हुआ है ।

प्रकृति के विभिन्न अंचलों एवं घटकों से निकलने वाली अद्‌भुत ध्वनियों को लैटिन में 'ब्रोनटाइड' कहा जाता है । इस तरह की आवाजों को विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में समय-समय पर वैज्ञानिकों, यात्रियों ने खोजा भी है । गाने वाली बालू संसार के विभिन्न रेगिस्तानों में पायी जाती है । होनोलूलू के निर्जन हवाई टापू से रोते हुए कुत्तों की आवाज आती है । रात्रि के अन्धेरे में यह आवाज और अधिक तीव्र हो उठती है । गोबी मरुस्थल के 'टकला माकान' क्षेत्र में फैले रेत से एवं सहारा रेगिस्तान के टीलों से संगीतमय ध्वनि प्रवाह निकलता रहता है । जैसलमेर में बालू के कुछ टीलों से कराहने की आवाज आती है । ऐसे अनेकानेक प्राकृतिक रेडियो स्टेशन हैं जो चित्र-विचित्र स्तर की ध्वनियाँ प्रसारित करते रहते हैं । वैज्ञानिकों ने इस रहस्यों का पता लगाने के प्रयास, प्रयत्न भी किए हैं पर अभी तक वे इतना ही ज्ञात कर पाये हैं कि प्रकृति में बालू की तरह के कुछ ऐसे कण हैं जो परस्पर संघात से प्राकृतिक ध्वनियों का सृजन करते हैं ।

प्रकृति के अद्‌भुत रहस्यों का पता लगाने में अपने जीवन का अधिकांश भाग खर्च करने वाले अन्वेषणकर्त्ता विलियम आर. कार्लिस ने सौ वर्षों से अधिक समय से प्रकाशित विशिष्ट पत्र-पत्रिकाओं जैसे "साइकोलॉजिकल बुलेटिन", "लैन्सैट", "अमेरिकन जर्नल ऑफ साइकिएट्री" आदि के माध्यम से प्राकृतिक आश्चर्यों को एकत्र किया है । उन्होंने इन रहस्यमयी घटनाओं से सम्बन्धित २५ हजार से अधिक लेख लिखे हैं । साथ ही 'सोर्स बुक प्रोजेक्ट', 'इनक्रेडिबुल लाइफ', 'द अन फैदम्ड माइन्ड' तथा 'ऐनसियन्ट मैन' जैसी अपनी प्रसिद्ध कृतियों में लगभग दो हजार घटनाओं का वर्णन किया है । उनका कथन है कि अभी तक प्राकृतिक रहस्यों के मात्र कुछ ही अंशों को उद्‌घाटित करने में वैज्ञानिकों को सफलता मिली है । उसका पच्चासी प्रतिशत भाग अभी भी अविज्ञात है । विश्व में जितनी भी जानकारी प्राप्त कर ली गई है, विभिन्न विषयों के एनसाइक्लोपीडिया में जितना ज्ञान संग्रह कर लिया गया है, उसकी तुलना में विपुल अज्ञात बहुत अधिक महत्त्वपूर्ण है । उसे जान लेने पर ज्ञान-विज्ञान का भण्डार मनुष्य के हाथ लग सकता है ।

विकासवाद के सिद्धान्त के प्रणेता प्रख्यात वैज्ञानिक डार्विन के पुत्र चार्ल्स फील्ड ने १८९५ की 'नेचर' पत्रिका में रहस्यमय ध्वनियों-ब्रोनटाइडों का प्रकाशन कराया था । उनके अनुसार गंगा के डेल्टा स्थित वेरीसाल परगने से तोप दागने जैसी धाँय-धाँय की आवाज आती थी । कार्लिस ने इस लेख को पढ़ने के बाद अपनी खोज में पाया कि ऐसी रहस्यात्मक ध्वनियाँ अनेकों स्थान पर भिन्न-भिन्न नामों से सुनी जाती हैं । उदाहरण के लिए बेल्जियम में मिस्टोफर की, स्काटलैण्ड में मूडस की, प्रशान्त महासागर के हैटी द्वीप समूह में गोफरी ध्वनियाँ सुनी जाती हैं । इनकी पुष्टि समय-समय पर अन्यान्य मूर्धन्य वैज्ञानिकों द्वारा की गई है । रेडियो फिजिक्स तथा अनुसन्धान केन्द्र कार्नेल विश्वविद्यालय के निदेशक रामस गोल्ड ने कार्लिस के कार्यों को न केवल स्वीकृति प्रदान की वरन् ब्रोनटाइड को भी स्वीकारा है । अमेरिका के अत्यन्त धनमान मूर्धन्य पत्रकार चार्ल्स फोर्ट ने भी अपना सारा जीवन प्राकृतिक आश्चर्यों को संग्रहीत करने में ही व्यतीत कर दिया और अजूबों से भरी एक इनसाइक्लोपीडिया का निर्माण किया । कार्लिस ने लगभग चौबीस "फील्ड गाइड" द्वारा इन अज्ञात रहस्यों को समझने, समझाने का प्रयास किया है ।

सुमात्रा—इण्डोनेशिया में एक ऐसा कुआँ है जिसके अन्दर झाँकने से दर्शक को एक के स्थान पर दो प्रतिबिम्ब दिखाई देते हैं । प्रकाश किरणों में ऐसी अद्‌भुत क्षमताएँ तो हैं कि वे किसी वस्तु का प्रतिबिम्ब कहीं भी कैसा भी उल्टा-सीधा, चित्र-विचित्र बना दें, किन्तु उसके लिए तरह-तरह के प्रिज्म एवं लेन्सों का उपयोग आवश्यक होता है । इस कुएँ में कहीं कोई शीशा भी नहीं जड़ा है । आश्चर्य तो यह है कि जो दो प्रतिबिम्ब दिखाई पड़ते हैं उनमें से एक तो स्वयं दर्शक का ही होता है, पर दूसरा किसी अपरिचित का । वैज्ञानिकों के पास इसका कोई उत्तर नहीं है कि "ऑप्टिक्स" के सारे सिद्धान्तों से परे ऐसा क्यों कर होता है ?

जाने वह कौन-सी अभिशप्त घड़ी थी जब लैटले—फ्रान्स में एक बार भयंकर तूफान आया । तेज बिजली कड़की ओर एक किसान के फार्म पर टूट पड़ी । इसमें हजारों की संख्या

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

में काली और सफेद रंग की भेड़ें थी । बिजली से केवल निर्जीव वस्तुएँ बच सकती हैं । पर गोरे-काले के भेद-भाव से उसे क्या लेना देना ? किन्तु यहाँ उसने भेद-भाव का वर्ताब किया । फार्म में जितनी काली भेड़ें थीं—बिजली गिरने से सबकी सब मारी गयीं, पर सफेद भेड़ों में से एक का भी बाल-बाँका न हुआ । प्रकृति के भेद-भाव युक्त इस व्यवहार को आज तक कोई भी वैज्ञानिक या बुद्धिजीवी मेधावी हल नहीं कर सका ।

अद्‌भुत सृष्टा के लिए कुछ भी असम्भव नहीं है । इसका परिचय कभी-कभी इस प्रकार मिलता है । फ्रान्स के मोमिन्स नगर में एक ऐसे बच्चे ने जन्म लिया, जिसने अनुवांशिकी के समस्त वैज्ञानिक नियमों को उठा कर एक ओर फैंक दिया । व्रासर्ड नामक यह बालक वैज्ञानिकों के लिए आश्चर्य एवं अनुसन्धान का केन्द्र बिन्दु बना हुआ है । उसकी एक आँख भूरी तथा एक आँख नीली है । जीवविज्ञानी इस विचित्रता का कोई कारण नहीं ढूँढ़ पा रहे हैं ।

इसी तरह १८२६ में लन्दन में चार्ल्सवर्थ नामक एक बच्चे ने जन्म लिया था और अनुवांशिकी के नियमों को चुनौती दी थी । चार वर्ष की आयु प्रायः ऐसी होती है जब बालक अच्छी तरह बोल भी नहीं पाता किन्तु चार्ल्सवर्थ चार वर्ष में ही पूर्ण वयस्क हो गया । उसके मूँछ दाढ़ी भी निकल आयी । उसके व्यवहार, बात-चीत में भी पूरी तरह बुजुर्गपन टपकने लगा । सात वर्ष की आयु में उसके सम्पूर्ण बाल सफेद हो गए और इसी वर्ष उसकी मृत्यु हो गई । ऐसे मामले अब 'प्रोजेरिया' व्याधि समूह के अन्तर्गत माने जाने लगे हैं । इसी प्रकार इटली में एक ऐसा व्यक्ति हुआ है जिसका शरीर तो सामान्य था पर आँखें उल्लू जैसी थीं । वह दिन में नहीं देख पाता था, किन्तु रात्रि के घोर अन्धेरे में भी किसी वस्तु को स्पष्ट रूप से देख सकता था । ४१ वर्ष की उम्र में उसकी मृत्यु हो गई और वह रहस्य अब तक अनसुलझा ही बना रहा ।

लन्दन में 'एडवर्ड मार्डो' नामक एक अंग्रेज अपनी शारीरिक विशेषताओं के कारण लोगों के आकर्षण का केन्द्र बना रहा । उसके दो चेहरे अन्य व्यक्तियों से अलग सहज ही उसका परिचय दे देते थे । सिर तो एक ही था, पर मुँह, आँख, नाक दोनों ओर थे । पीछे स्थित आँख से भी वह अच्छी तरह देख सकता था । पिछले मुँह से अस्पष्ट भाषा में बोलता था जबकि सामने का मुख सामान्य था ।

इसी तरह शरीर विज्ञान के नियमों का उल्लंघन करने वाली फ्रांस के टुरकुइंग नगर में एक बच्ची ने जन्म लिया । उसके अन्य अंग-अवयव तो सामान्य थे, किन्तु आँख एक ही थी और वह भी दोनों भौंहों के मध्य, जहाँ आज्ञाचक्र की उपस्थिति बताई जाती है ।

मनुष्य अपनी संकल्पशक्ति को जुटाकर अतिमानव बन सकता है, इसमें सन्देह नहीं । इतना होने पर भी उसे सर्वशक्तिमान नहीं कह सकते । इसलिए कि उसकी इच्छा और माँग के विरुद्ध भौतिकी और पराभौतिकी क्षेत्र में ऐसी सैकड़ों घटनाएँ घटती रहती हैं, जिनका नियन्त्रण तो दूर वह उस रहस्य तक को नहीं जान पाता कि उनका कारण क्या है ? जब कि निसर्ग में उस तरह का स्वयं कोई सुनिश्चित सिद्धान्त नहीं होता । उदाहरण के लिए पेरिस के एक प्रख्यात वकील जैक्विसल हरवेट ४ वर्ष की आयु के बाद से ही ७२ वर्ष की उम्र तक एक क्षण भी नहीं सोए । इससे न तो उनके स्वास्थ्य पर कुछ बुरा प्रभाव पड़ा और न काम-काज पर ही मृत्यु-पर्यन्त वे पूर्णतः स्वस्थ रहे ।

१९५७ में केन्टुकी बालगृह लिंडन में एक ऐसी घटना प्रकाश में आयी जिसे देख सुनकर मूर्धन्य चिकित्सा-शास्त्री आश्चर्यचकित रह गए । इस बालगृह में एक छः वर्षीय बॉबी नामक निर्धन बालक को भर्ती कराया गया । वह कुपोषणजन्य बीमारियों को शिकार था । उसकी चिकित्सा कर रहे डॉक्टरों को यह देखकर बहुत अचम्भा हुआ कि अविकसित और अशिक्षित बॉबी लैटिन, स्पेनिश, फ्रेंच, जर्मन, टर्किश भाषा सहित पाँच कठिन भाषाओं का पूर्ण ज्ञाता है । १२ वर्ष की आयु तक वह बीस भाषाएँ पढ़ने की क्षमता रखता था ।

अभी-अभी पिछले दिनों महाराष्ट्र से एक ऐसा मामला प्रकाश में आया है, जिसका रहस्य वैज्ञानिक जेनेटीक्स से लेकर आधुनिकतम चिकित्सा विज्ञान की किसी विधा में न पा सके । एक ट्रक ड्राइवर ने नासिक के समीप सड़क पर पड़े अजगर के ऊपर से अपना ट्रक चढ़ा कर यात्रा तो पूरी कर ली, पर खौफ उसके मन में छाया रहा । कुछ ही दिन बाद उसकी पत्नी ने डेढ़ वर्ष के अन्तराल में दो बच्चों को जन्म दिया, जिनकी सारी त्वचा अजगर की तरह थी । सारे उपचार निरर्थक सिद्ध हुए । न इसे भय की प्रतिक्रिया कहा जा सकता है, न ही सहज संयोग, क्योंकि उसकी पत्नी पहले से ही गर्भवती थी । कोई इसे अभिशाप भी कह सकता है, पर आज के विज्ञान प्रधान युग में कोई तर्क सम्मत जवाब किसी के पास नहीं है ।

माउल्टिंग-केंचुल छोड़ने अर्थात् त्वक्‌मोचन के लिए साँप प्रसिद्ध है । किन्तु यदि यही प्रक्रिया मनुष्य की त्वचा के साथ घटित होने लगे तो उसे असामान्य ही कहा जायेगा । १९८१ में शिकागो मेडिकल सोसाइटी के एक ऐसे व्यक्ति का उपचार किया, जिसे १२ घण्टे के लिए तीव्र बुखार आता था । देह की सारी त्वचा लाल सुर्ख पड़ जाती और इसके बाद बड़े-बड़े टुकड़ों में केचुल की तरह छूटती जाती । जिस भाँति दस्ताने या मोजे उतारे जाते हैं उसी तरह चमड़ी की पर्तें उतरने लगतीं । तब तक इसका स्थान नई त्वचा ले चुकी होती ।

प्रकृति के रहस्य अगम हैं और उससे भी रहस्यपूर्ण और विचित्र है-सूक्ष्म चेतन संसार । प्रकृति जब-तब मनुष्यों के सामने इस प्रकार की चुनौती भरे प्रश्न खड़े करती रहती

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है । जिन्हें लाख प्रयत्न करने पर भी सुलझाया नहीं जा सकता । अभी तक तो यही ठीक से जान पाना सम्भव नहीं हुआ है कि प्रकृति में क्या-क्या है ? उसके सम्पूर्ण रहस्यों को समझ पाना तो दूर की बात रही । फिर चेतन तत्व कितना गूढ़ होगा ? क्या उसके रहस्यों का अनुमान लगाया जा सकता है ?

आखिर ये विचित्र आवाजें कहाँ से आती हैं ?

भगवान की दुनिया विचित्र है । मानवी-बुद्धि उसका बहुत थोड़ा-सा ही रहस्य जान पायी है और उतने से ही इतराने लगी है । जो जाना गया है, उससे अनजाना करोड़ों गुना अधिक है । प्रकृति के कुछ रहस्य तो ऐसे हैं, जिन्हें देखकर दाँतों तले उँगली दबानी पड़ती है । गाने वाली बालू से भरे रेगिस्तान अभी भी अपने रहस्य बताने के लिए मानवी-बुद्धि को चुनौती दे रहे हैं ।

गाने वाली बालू संसार के विभिन्न भागों में पायी जाती है । बारहवीं शताब्दी की बात है—मध्य-एशिया के दुर्गम रेगिस्तान टकला माकान को मार्कोपोलो अपने दल सहित पार कर रहा था । एक शाम खेमा गाढ़ते समय उस दल ने सीटी जैसी सुरीली आवाज लगातार बजते सुनी । इसका कोई कारण समझ में नहीं आया तो दल के कुली भाग खड़े हुए । उन्होंने उसे स्पष्टतः भूत का आतंक माना ।

प्रायः सभी कुली भाग खड़े हुए थे, पर तीन को उसने बड़ी मुश्किल से रोका । भूत के आतंक से वे भी बद-हवास हो रहे थे । इस सुनसान में लगातार इतनी मीठी बंशी रातभर आखिर भूत के अतिरिक्त और कौन बजा सकता है । वे निरन्तर भागने की आतुरता व्यक्त करते रहे । मार्कोपोलो ने बड़ी चतुरता से उन्हें रोक पाने में सफलता पायी । उसने बचे हुए तीन कुलियों को अपने पास एक जादू का ताबीज दिखाया और कहा—यह भूतों से रक्षा करने में पूरी तरह समर्थ है । कल जो कुली भागे थे, उन्हें सीटी बजाने वाले भूत ने सामने वाले टीले के पीछे पकड़ कर चबा डाला है और उनकी चमड़ी की डुग्गी बनाकर बजाता फिर रहा है । तुम भागना चाहो तो भले ही चले जाओ, पर तुम्हारी भी वही दुर्गति होगी । हाँ, मेरे पास रहोगे तो यह ताबीज मेरी ही नहीं, तुम्हारी भी रक्षा कर लेगा । इस आश्वासन से कुली रुक गए और उस रेगिस्तान को पार कर सकना सम्भव हो गया । मार्कोपोलो ने इस सुनसान के संगीत का पता लगाने में बहुत अक्ल लड़ाई, पर कुछ नतीजा नहीं निकला । भूत पर वे विश्वास नहीं करते थे, पर इस नीरव-निनाद का अन्य कोई कारण भी तो समझ में नहीं आता था ।

उस रहस्य पर से पर्दा इस शताब्दी के आरम्भ में उठा है । सर आरेल स्टइन ने गोबी मरुस्थल का सर्वे करते हुए यह विवरण प्रकाशित किया कि 'टकला माकान' क्षेत्र में बिखरी बालू ध्वनि मुखर है । उससे वाद्य-यन्त्रों की तरह क्रमबद्ध ध्वनि-प्रवाह निकलता है । गोबी मरुस्थल प्रायः आठ लाख वर्गमील में बिखरा पड़ा है । इसके कितने ही क्षेत्र ऐसे हैं, जहाँ बालू गाती है । इनकी आवाजें अलग-अलग क्षेत्रों में अलग-अलग तरह की हैं । टकला-माकान क्षेत्र के पच्छिमी-अंचल 'अदास-पादशा' के सारे क्षेत्र की बालू ध्वनि-मुखर है । वहाँ अलग-अलग स्थानों में अलग-अलग तरह के संगीत बजते, गूँजते सुने जा सकते हैं ।

स्पेन के एक यात्री एन्टेनियो डी. अल्लोआ जब अपने दल के साथ ऐंड्रीज-पर्वत श्रेणी पार कर रहा था तो पंचामार्का नोटी के समीप वायुमण्डल में गूँजता हुआ संगीत सुना । उसे सुनकर सारा दल भाग खड़ा हुआ । भगोड़ों ने यहाँ तक बताया कि उन्होंने अत्यन्त विशालकाय दैत्य की डरावनी छाया भी उस क्षेत्र में भागती-दौड़ती अपनी आँखों से देखी थी ।

प्रकृति के कतिपय अद्भुत रहस्यों का पता लगाने में अपनी जीवन का महत्त्वपूर्ण भाग खर्च करने वाले अन्वेषी लेवरी ने दक्षिणी-अमेरिका के दुर्गम अंचलों की खोज-बीन की । उसने स्कूइवो नदी के रेतीले मैदान में मुखरित होने वाले ध्वनि-संगीत का वर्णन किया है । इसका विवरण सर आर्थर कानन डायल की लास्टवर्ल्ड में विस्तारपूर्वक दिया गया है ।

पिछले दिनों चेकोस्लोवाकिया की एक नदी के समीप कुछ लोग पर्यटन कर रहे थे, तभी सामने से कुछ मधुर संगीत सुनाई देने लगा । लोगों ने छान मारा पर पता न चला कि कौन और कहाँ से गा रहा है । जबकि आवाज उनके पास ही हो रही थी । उस स्थान पर कुछ समय पूर्व कुछ सिपाही मारे गए थे, इसलिए यह मानकर उस बात को टाल दिया गया कि उन सिपाहियों की मृतात्माएँ गा रही होंगी ।

एक बार कैलीफोर्निया की एक स्त्री भोजन पकाने जा रही थी, अभी वह उसकी तैयारी कर रही थी, चूल्हे से विचित्र प्रकार के गाने की ध्वनि निकलने लगी । गाना पूरा हो गया उसके साथ ही ध्वनि आनी भी बन्द हो गयी । न्यूयार्क में एक बार बहुत से लोग रेडियो प्रोग्राम सुन रहे थे, एकाएक संगीत ध्वनि तो बन्द हो गयी और दो महिलाओं की ऊँची-ऊँची आवाजों में बातें आने लगीं । रेडियो स्टेशन से पूछा गया तो पचा चता कि वहाँ से केवल नियमबद्ध संगीत ही प्रसारित हुआ है । बीच की आवाज कहाँ से आयी यह किसी को पता नहीं ।

सेण्ट लुईस में एक बार रात्रि-भोज का आयोजन किया गया । जैसे ही संगीतकारों ने वाद्य-यन्त्र उठाये कि उनसे ताजा खबरें प्रसारित होने लगीं । इससे आयोजन के सारे कार्यक्रम ही फेल हो गए । नाहरियाल की एक स्त्री ने बताया कि उसके स्नान करने के टव से गाने की ध्वनियाँ आती हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

एलवर्टा के एक किसान का कहना है कि जब वह अपने कुएँ के ऊपर पड़ी हुई लोहे की चादर को हटाता है, तो कुएँ के तल से संगीत सुनाई देने लगता है । पुलिस को सन्देह हुआ कि किसान ने कहीं रेडियो छुपाया होगा । इसलिए इंच-इंच जमीन की जाँच कर ली । पड़ौसियों के रेडियो भी बरामद कर लिए पर जैसे ही उस लोहे की चादर को हटाया गया, आवाज बार-बार सुनाई दी और अन्ततः उस समस्या का कोई हल निकाला नहीं जा सका ।

'वण्डर बुक ऑफ दी स्ट्रेंज फैक्टर्स' नामक प्रसिद्ध पुस्तक के लेखक ने नील नदी के किनारे स्थित कारनक के खण्डहरों में दो घूरती हुई प्रतिमाओं का उल्लेख किया है । ये दोनों प्रतिमाएँ डेढ़ किमी. के फासले पर जमी हुई हैं तथा उनके पास जाने पर ऐसा लगता है जैसे कोई विशालकाय दैत्य घूर रहा हो । इनमें एक प्रतिमा पत्थर की सामान्य मूर्तियों की तरह चुप खड़ी रहती है, पर दूसरी से अक्सर कुछ बोलने की आवाज आती रहती है । पत्थर की मूर्ति क्यों और कैसे बोलती है इसका पता लगाने की हर सम्भव कोशिश की गयी, किन्तु अभी तक कुछ कारण खोजा नहीं जा सका । मूर्ति में कोई रेडियो भी नहीं है जिससे यह अन्दाज लगाया जा सके कि वह अदृश्य शब्द प्रवाहों को पकड़कर ध्वनि में रूपान्तरित कर देते हैं ।

ब्रिटेन के नार्थ वेल्स प्रदेश के तट पर चलने से उसमें रेतीय सुमधुर संगीत ध्वनि सुनाई पड़ती है जिससे वह लोगों के आकर्षण का केन्द्र बनता चला गया । लन्दन विश्वविद्यालय के सुप्रसिद्ध रसायन शास्त्री डॉ. केनेथ रिजवे तथ्य की पुष्टि के लिए इसी संगीतमय रेत को बोरियों में भरवाकर अपनी प्रयोगशाला में ले गए । प्रयोगों के उपरान्त उन्होंने बताया कि पैर के दबाव के कारण बालू के कण आगे-पीछे सरकते हैं ये कण अधिकांशतः समान आकार के होते हैं इसलिए उनमें से संगीतमय ध्वनि निकलती है, लेकिन हुआ यह कि रेत ने प्रयोगशाला में संगीत नहीं गाया ।

मध्य एशिया के आठ लाख वर्ग किमी. क्षेत्र में फैले हुए गोबी मरुस्थल के तकलामारान अंचल के पश्चिमी छोर पर स्थित अन्दास पारसा नामक स्थान में करुण संगीत सुनाई देता है । यह संगीत कभी-कभी ही सुनाई देता है और अधिक से अधिक पन्द्रह मिनट तक चलता है । अमेरिका की एक रेडियो कम्पनी ने इस करुण संगीत को टेपकर सुनाया तो कुछ ही दिनों में आकाशवाणी केन्द्र को हजारों श्रोताओं ने पत्र लिखे और बताया कि इस संगीत को सुनकर उनका हृदय व्यथा वेदना से भर आया । एक टी. वी. कम्पनी ने इस स्थान की एक टी. वी. फिल्म भी उतारी और अपने दर्शकों को बिना किसी कमैण्ट्री के दिखाई तो दर्शक रोने भी लगे ।

अफगानिस्तान में काबुल के पास एक रेतीले मैदान में घोड़ों के दौड़ने और नगाड़ों के पीटने की आवाज आती है जैसे कहीं से घुड़सवार अपने घोड़े दौड़ाते हुए एक नगाड़े को पीटते आ रहे हों ।

इजरायल के सिनाई अंचल की तलहटी में स्थित एक पर्वत से घण्टियाँ बजने की आवाज आती है । इसी कारण वह 'वेल माउण्टेन' कहकर भी पुकारा जाने लगा है । ईरान के मरुस्थल में कई स्थानों में ऐसा स्पष्ट संगीत सुनाई देता है जैसे वहाँ कोई बीन बजा रहा हो ।

कवाई टापू पश्चिमी आइलैण्ड के हवाइयाँ ग्रुप में आता है । होनोलूलू से करीब १२ किमी. दूर के इस टापू पर स्थित एक २० मीटर ऊँची पहाड़ी तरह-तरह की आवाज करती है । इस पहाड़ी के पत्थर कोटल, शेल्स तथा लावा के कणों से निर्मित पाये गए हैं, जो स्वयं अपने आप में आश्चर्य हैं । उससे भी बड़ा आश्चर्य यह कि पहाड़ी से प्रायः कुत्तों के भौंकने की ध्वनि आती है । रात के अन्धकार और आँधी वर्षा के समय यह ध्वनि बहुधा होती है । बच्चों के लिए यह क्षेत्र निषिद्ध घोषित है क्योंकि बच्चे इस आवाज को सुनने पर भयभीत हो जाते हैं । ऐसा भी नहीं है कि पास के किसी गाँव में कुत्ते ही भोंकते हों और उनकी प्रति ध्वनि आती हो । इस पहाड़ी के आसपास मीलों दूर तक कोई गाँव नहीं है । आज तक कोई भी वैज्ञानिक उस कारण की खोज नहीं कर पाया कि टीले से भौंकने की आवाज क्यों आती है । सदियों से यह रहस्य ज्यों का त्यों बना हुआ है तथा अपने विश्लेषण की लम्बे समय से प्रतीक्षा कर रहा है । 'वण्डर बुक ऑफ दी स्ट्रैन्ज फैक्टर्स' नामक पुस्तक में इन भौंकने वाले टीलों का सविस्तार विवरण दिया गया है ।

कोई यह अभी तक नहीं बता सका कि ये आवाजें कैसे पैदा हुईं ? विज्ञान के पास ऐसी विचित्र घटनाओं का कोई जवाब नहीं । क्या इक्कीसवीं सदी में प्रवेश कर रहे वैज्ञानिकों के समुदाय में से कोई एक भी इस अविज्ञात को तथ्यों, प्रमाणों के आधार पर सिद्ध करने को तैयार है ? यह चुनौती सभी के लिए है ।

विग्रह की सहयोग और सहकार में परिणति

वह समय अब पीछे छूटता जा रहा है जब विज्ञान के द्वारा सच्चाई खोज निकालने की जोर-शोर से घोषणा की जाती थी और साथ ही यह भी कहा जाता था कि अध्यात्म की मान्यताएँ काल्पनिक एवं निरर्थक हैं, पर अब स्थिति वैसी नहीं रही । विज्ञान और बुद्धिवाद को अब अपने पूर्व प्रतिपादनों पर नये सिरे से विचार करना पड़ रहा है । अब बुद्धिवाद पर नीतिमत्ता और उत्कृष्टता का अनुशासन आवश्यक प्रतीत हो रहा है । तथ्य अब इस निष्कर्ष पर पहुँच रहे हैं कि संसार में सब कुछ जड़ ही नहीं है । पदार्थ पर अंकुश रखने वाली चेतन सत्ता का भी स्वतन्त्र अस्तित्व है

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और उसका विश्व-व्यवस्था एवं प्राणि जगत पर सुनिश्चित अनुशासन है ।

विज्ञान का जैसे-जैसे बचपन दूर हो रहा है और प्रौढ़ता परिपक्वता की स्थिति आ रही है, वैसे-वैसे विज्ञ जनों ने अध्यात्म सत्ता, शैली एवं उपयोगिता के सम्बन्ध में अपनी पुरानी मान्यताएँ बदली हैं । साथ ही अध्यात्म ने भी हठधर्मी छोड़ी है ।

परिवर्तित विचारधारा का परिचय विश्व के मूर्धन्य महा-मनीषियों द्वारा इन्हीं दिनों व्यक्त किए गए उद्‌गारों से मिलता है । प्रसिद्ध वैज्ञानिक ऑलिवर लॉज का कथन है कि "मुझे विश्वास है, अब वह समय निकट आ गया है जबकि विज्ञान को नये क्षेत्र में प्रवेश करना होगा । विज्ञान अब भौतिक जगत तक ही सीमित नहीं रहेगा । चेतन जगत भी अब वैज्ञानिक प्रयोग परीक्षण का महत्त्वपूर्ण विषय बन गया है ।"

प्रसिद्ध वैज्ञानिक जेम्स ने लिखा है—"पहले यह मान्यता थी कि जड़-जगत ही चेतना की उत्पत्ति का आधार है । भौतिक तत्वों के समन्वय से ही मन की उत्पत्ति होती है । लेकिन अब यह माना जाने लगा है कि जड़ जगत के पीछे एक विराट् चेतना काम कर रही है ।" अपनी पुस्तक 'दि न्यू साउण्ड बैक ऑफ साइन्स' में वे लिखते हैं—"उन्नीसवीं सदी में विज्ञान का मूल विषय भौतिक जगत था, लेकिन अब प्रतीत हो रहा है कि विज्ञान जड़ पदार्थों से अधिकाधिक दूर होता जा रहा है ।"

प्रो. ए. एस. एडिंग्टन ने कहा है—"अब विज्ञान इस निर्णय पर पहुँचा है कि समस्त सृष्टि में एक अज्ञात शक्ति गतिमान है । अब विज्ञान का जड़ पदार्थों से लगाव समाप्त हो गया । चेतना, मन, आत्मा का अस्तित्व माना जाने लगा है । चेतन सत्ता ही जड़ जगत की उत्पत्ति का मूल कारण है ।"

प्रसिद्ध वैज्ञानिक हरबर्ट स्पेन्सर ने कहा है—"जिस शक्ति को मैं बुद्धि से परे मानता हूँ वह धर्म का खण्डन नहीं करती अपितु उसे और अधिक बल पहुँचाती है ।"

सुविख्यात वैज्ञानिक अल्फ्रेड रसेल वैलेस ने अपनी पुस्तक "सोशल एन्वाइसमेंट एण्ड मॉरल प्रोग्रेस" में स्पष्ट लिखा है—"मुझे विश्वास है, चेतना ही जड़ पदार्थों को गति प्रदान करती है ।"

बीसवीं सदी के महान् विज्ञान वेत्ता अलबर्ट आइन्स्टीन ने कहा है—"मैं ईश्वर को मानता हूँ । इस अविज्ञात सृष्टि से अद्‌भुत रहस्यों में ईश्वरीय शक्ति ही परिलक्षित होती है । अब विज्ञान भी इस बात का समर्थन कर रहा है कि सम्पूर्ण सृष्टि का नियमन एक अदृश्य चेतन सत्ता कर रही है ।"

जे. बी. एस. हैल्डेन ने लिखा है—"अविज्ञात सृष्टि के कुछ ही रहस्यों को हम जान पाये हैं । सृष्टि को हम एक निर्जीव मशीन मात्र समझ रहे थे—यह हमारी भूल थी । वास्तव में यह सृष्टि चेतन शक्ति से सम्बद्ध है । जड़ पदार्थों का संचालन यह चेतन शक्ति ही कर रही है ।"

आर्थर एच. कैम्पटन ने कहा है—"हमारे चिन्तन-मनन को न केवल मस्तिष्क ही प्रभावित करता है वरन् इससे भी अलग एक शक्ति है जो विचारणाओं को प्रेरित करती है । उस चेतन शक्ति की सम्पूर्ण जानकारी तो नहीं मिल पायी है लेकिन यह निश्चित है कि मृत्यु के बाद भी उस चेतना का अस्तित्व बना रहता है ।"

प्रकृति का अनुसरण कीड़े-मकोड़ों जैसा आचरण नहीं

आधुनिक दर्शन के पक्ष में दो दलीलें असंख्य मुखों से सुनी जाती हैं कि बड़ी मछली छोटी को निगल जाती है । बड़ा पेट छोटे की खुराक खींचकर खा जाता है । प्रकृति का यही नियम है । इसी को पालन करने में भलाई है । अन्यथा दुर्बल और कमजोर इस जमीन को घेर लेंगे और असंख्यों समस्याएँ उत्पन्न करेंगे । "जीवन के लिए संघर्ष" और "योग्यतम का चुनाव", यही हैं दो बीज मन्त्र जिनकी व्याख्या विवेचना करते हुए आधुनिक संस्कृति की रूपरेखा खड़ी की गई है ।

प्रकृति का अर्थ पशु-पक्षी, कीड़े-मकोड़े तक ही सीमित हो तब बात दूसरी है । अन्यथा प्रकृति के नियमों का अनुसरण करते समय मनुष्य की विशेषताओं को भी ध्यान में रखना चाहिए । इन विशेषताओं को अध्यात्म विज्ञान के अनुरूप "आत्मा" कहा जा सकता है और उसकी मौलिक संरचना तथा प्रेरणा को भी कहीं जगह देनी होगी, किन्तु यदि प्रकृति का अर्थ वहाँ तक ले जाना हो, जहाँ मनुष्य को चलने-फिरने वाला पौधा अथवा दो पैर वाला जानवर मानना हो तो ऋतु प्रकृति पर उन्हीं नियमों को लागू करना होगा जो बन्दर की औलाद पर लागू होते हैं ।

यदि आधुनिक दर्शन 'आत्मा' से इन्कार करके प्रकृति के प्राणियों पर लागू होने वाले नियमों को ही सब कुछ मानने लगे तो भी प्रकृति का सुविस्तृत पर्यवेक्षण करना होगा । उसके नियमों में से अपने मतलब के जो हों उन्हीं को सब कुछ मान बैठने से अन्यान्यों को छोड़ देने से दर्शन शास्त्र की मर्यादा न निभ सकेगी । प्रकृति में अरबों-खरबों प्राणी रहते हैं । गतिविधियाँ बहुमुखी हैं । उनमें से बड़ी मछली द्वारा छोटी को खाया जाना और बड़े पेट द्वारा छोटे की खुराक अपहरण कर लिया जाना यह दो उदाहरण ही पर्याप्त न होंगे । यह उदाहरण भी सर्वांगपूर्ण नहीं हैं । यह भी आधे-अधूरे हैं । इन दो को समग्र कहना हो तो यों कहना पड़ेगा कि जीव-जन्तु अपने सजातीय बच्चों को ही खा जाते हैं । यदि ऐसा हुआ होता तो अभिभावकों द्वारा बच्चों के पालन-पोषण की परम्परा ही समाप्त हो गई होती । मछलियों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

के कोई बच्चे दिखाई न पड़ते । उनकी माताएँ ही उन्हें खा-पीकर साफ कर दिया करतीं यदि सारी प्रकृति मछली तक सीमित नहीं है, अन्य प्राणी भी उसमें शामिल हैं, तो मादाओं द्वारा अपने बच्चों का पालन-पोषण किस आधार पर चल रहा है ? सिंह जैसे खूँखार जानवर तक अपने बच्चों को पालते हैं । यद्यपि वे उनकी तुलना में कमजोर भी होते हैं, मांस आदि में हिस्सा भी बँटाते हैं ।

प्रकृति का एक छोटा नियम ऐसा अवश्य है जिसमें हिंस्र पशु क्षुधा निवृत्ति के लिए छोटे प्राणियों को खा जाते हैं । पर वे भी अपने सजातियों को नहीं खाते । मछली अपवाद है, सो भी आंशिक रूप से अन्यथा मछलियाँ ही अपने अण्डे-बच्चों का सफाया कर दिया करतीं । पेड़ों के बगीचे कहीं दिखाई न पड़ते । कोई पेड़ एकाकी भले ही खड़ा होता । पास उगने वाले पेड़ों को जब बड़े खा ही जाया करते हों तो बगीचे कैसे बनते ? झाड़ियाँ कैसे सघन होतीं ?

प्रकृति का नियम सहयोग भी है । दया और सेवा भी । दुर्बलों को सबल बनाने के लिए सहायता करना भी अन्यथा किसी मादा के थनों से दूध कहाँ से आता और क्यों आता ? मादाएँ अपने बच्चों को साथ क्यों लगाए फिरतीं ?

डार्विन प्रभृति प्रत्यक्षवादियों ने मनुष्य की सत्ता और उसकी प्रकृति का स्वरूप निर्धारित करने में जीव जगत की परम्पराओं को आधार माना है । प्राणी किस प्रकार बने, बढ़े और सशक्त हुए, इसका इतिहास खोजते-खोजते वे उसी परम्परा को अपनाना मनुष्य के हित में मान बैठे हैं । इसी आधार पर उन्होंने भावी मनुष्य समाज का ढाँचा खड़ा किया है । इसी को वे समय के अनुरूप सही दर्शन मानते हैं । इस सन्दर्भ में नीत्से आदि विचारकों का कथन है कि मनुष्यों का कमजोर वर्ग बना रहने पर सशक्त वर्ग की क्षमता क्षीण होगी ! इसलिए उन्हें पालने की अपेक्षा समाप्त कर देने में ही लाभ है । पशुओं के बूढ़े और बेकार होने पर, वे उनका वध कर देने की प्रथा का समर्थन करते हैं । गौशाला, अनाथालय, अपंग सेवा सदन, भिक्षुक गृह, रुग्ण आश्रम जैसे संस्थान चलाने का परिणाम वे यह बताते हैं कि इससे समर्थ लोगों के फलने-फूलने में बाधा पड़ेगी । फलतः दुनिया वैसी सुन्दर और सशक्त न बन सकेगी जैसी कि वह बनती । नाजीवाद में अनेक तर्कों का आश्रय लेकर उन्होंने युद्ध की आवश्यकता पर जोर दिया है और उसे उपयोगी ठहराया है । साथ ही उन्होंने जर्मन जाति की श्रेष्ठता का पक्ष लिया है और कहा है कि विश्व शासन उन्हीं के हाथ में रहना चाहिए । अन्य कमजोर जातियों को युद्ध के बहाने समाप्त कर देना चाहिए । यह दर्शन जर्मन जाति को उन्मत्त स्थिति तक पहुँचाकर उन्हें युद्ध के लिए आकुल करता रहा है । वे अपने समुदाय को विकसित करने के लिए समीपवर्ती क्षेत्रों को खाली रखने और वहाँ की साधन सामग्री अपने लोगों तक सीमित सुरक्षित रखने पर जोर देते रहे हैं ।

यह एकांगी चिन्तन न केवल अधूरा वरन् अनुपयुक्त भी सिद्ध होता जा रहा है । इसमें दोनों पक्ष के लोगों की ही अधिक हानि हुई है । वे ही मरते या घायल होते रहे हैं । उनके आश्रितों की संख्या बढ़ने से फिर दुर्बल वर्ग बढ़ गया जिसे कि वे समाप्त करना चाहते थे । इससे तो तैमूरलंग आदि की कत्लेआम पद्धति अधिक तर्क संगत थी, जिसमें मजबूत आदमी गुलामों के रूप में पकड़कर आश्रित बना लिए जाते थे और कमजोरों को काटते मारते चले जाते थे । आधुनिक दर्शनशास्त्र ने अब तक जो प्रतिपादन एवं तर्क और उदाहरण दिए हैं वे हर दृष्टि से हल्के पड़ते हैं ।

अब तक जीवन के लिए संघर्ष का तात्पर्य यह निकाला जाता है कि पड़ौसी के मुँह का ग्रास छीन लिया जाय । जबकि यह होना चाहिए कि प्रकृति के साथ लड़-झगड़ कर उसके अंचल में भरी हुई विपुल सम्पदा में से अधिक उपलब्ध किया जाय । अमेरिका अब से दो सौ वर्ष पूर्व सूना पड़ा था । वहाँ जो लोग यूरोप से जा-जाकर बसे, उन्होंने जीवन के लिए संघर्ष किया और प्रकृति के अन्तराल में भरी हुई विपुल सम्पदा का दोहन किया और देखते-देखते सुसम्पन्न हो गए ।

प्रकृति के समर्थ व्यक्ति नेतृत्व के लिए चुने जाते हैं । वे अपने साथ अनेकों को लेकर चलते हैं जो कार्य वे अपने बुद्धि बल और बाहुबल से नहीं कर सकते थे उसे करते हुए वातावरण को समुन्नत बनाकर करते हैं । यह सर्वोत्तम के चयन का सिद्धान्त है । टाटा ने साधन रहित होते हुए भी अपने बुद्धि कौशल से लोहे का विशाल कारखाना खड़ा कर दिया । उसमें लाखों श्रमिकों को आजीविका मिली और साथ ही देश की महती आवश्यकताओं की पूर्ति हुई । हर मनुष्य यदि बुद्धिपूर्वक काम कर सके तो अपने निर्वाह के अतिरिक्त समाज के लिए कुछ न कुछ प्रगति में सहायता कर सकता है । इस वैयक्तिक क्षमता को किस प्रकार सही तरीके से काम में लाया जाय यही निर्धारण कर सकने वालों के सम्बन्ध में नेतृत्व की क्षमता सम्पन्न होने से उन्हें सराहा जाता है । इसके अर्थ यह कभी नहीं हैं कि पड़ौसियों को मार-काट कर खतम किया जाय और सर्वत्र अपने ही अपने को अधिपति घोषित किया जाय ।

प्रकृति से शिक्षा ग्रहण करके उसके आदर्शों पर चलने के लिए बड़ी मछली द्वारा छोटी को खा जाने का एक ही उदाहरण नहीं है । प्रकृति की ओर वापस लौटने का तात्पर्य रहन-सहन में सादगी का समावेश करना है न कि संचित सभ्यता को तिलांजलि दे बैठना । पशु और कीड़े ही हमारे शिक्षक हैं तो शिक्षा के झंझट का परित्याग करना होगा । भाई-बहिन के रिश्तों को तिलांजलि देनी होगी । आग का उपयोग बन्द करना होगा । सौन्दर्य और कला का परित्याग करना होगा, क्योंकि मनुष्य के अतिरिक्त और कोई भी प्राणी इन विशेषताओं का अभ्यस्त नहीं है । मनुष्य की अपनी विशेष संरचना है । उससे अन्य प्राणियों का हित साधन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

होना चाहिए न कि नीति और व्यवस्था के सम्बन्ध में मनुष्य निम्न कोटि के जीव-जन्तुओं से वह सीखे जिससे उसकी गरिमा का सर्वनाश होता है ।

वरुण देवता की अनुपम, अद्भुत और अन्यतम सत्ता

महर्षि मेधातिथि और काण्व ने जल की प्रशस्ति में लिखा है—

अम्बयो यन्त्युर्ध्वाभर्जामयो अध्वरीताम् ।
पृंचातीर्मधुना पयः ॥१६॥
अमूर्ण उप सूर्यो याभिर्वा सूर्यः सह ।
ता नो हिन्वन्त्वध्वरम् ॥१७॥
अपो देवीरूप ह्वये यत्र गावः पिबन्ति नः
सिन्धुभ्यः कर्त्वं हविः ॥१८॥
अप्स्वन्तरमृतमासु भेषजमपामुत प्रशस्तये—
देवा भवत वाजिनः ॥१९॥

—ऋग्वेद १।५।२३,

यज्ञ की इच्छा करने वाले के लिए जल एक ही माँ से पैदा हुए बन्धु के समान है, वह दूध को पुष्ट करता हुआ, यज्ञ मार्ग से चलता है, जो जल सूर्य के पास स्थित है अथवा सूर्य जिनके साथ है, वे हमारे यज्ञ को सींचें हम जलों को चाहते हैं, क्योंकि उन्हें गायें पीती हैं । बहते हुए जल को हवि देंगे । जलों में अमृत है, जलों में औषध है, जलों की प्रशंसा से उत्साह प्राप्त करो ।

उपर्युक्त वैदिक कथन में जहाँ जल के भौतिक लाभों का वर्णन किया है, वहाँ उसकी अत्यन्त सूक्ष्म चेतन क्रियाशीलता पर भी प्रभाव डाला है, अब विज्ञान उसकी पुष्टि भी करता है । जल का बन्धु होना कुछ अटपटा-सा लगता है पर आज के वैज्ञानिक को वही बात सच मालूम पड़ गई । उन्होंने देखा कि जल में जड़ के ही गुण विद्यमान नहीं वरन् वह विश्व चेतना का एक अत्यन्त आवश्यक चेतन अंश है उसके बिना जीव जीवन धारण किए रहने में समर्थ नहीं । जीवों की कोशिका जैसे अत्यन्त सूक्ष्म एवं कोमल भाग में जल की मात्रा ही सर्वाधिक है, कोश (सेल) शरीर का वह सबसे छोटे से छोटा परमाणु है, जिनसे सारे शरीर का निर्माण होता है । वह एक प्रकार के प्रोटोप्लाज्मा नामक तत्व से बना है । भीतर नाभिक (न्यूक्लियस) और उसको घेरने वाले भाग को साइटोप्लाज्मा कहते हैं । साइटोप्लाज्मा का अधिकांश भाग जल है । भाई उसे कहते हैं, जो अपनी ही माँ के पेट से जन्मा हो और दुःख, कष्ट, असुरक्षा की स्थिति में काम आता हो । जो हमें मैत्री-प्रेम, दया का पाठ पढ़ाता है और आत्म-कल्याण के लिए उत्पन्न संकटों से बचाता है । जल भी आत्म-चेतना का वैसा ही भाई है । कोश के नाभिक (न्यूक्लियस) को जिस प्रोटीन झिल्ली ने सुरक्षित किया है, उसमें जितने भी खनिज होते हैं, उन्हें जल ही पचाकर शक्ति देता है, स्वयं दबकर नाभिक की सुरक्षा करता है । आश्चर्यजनक बात है कि जल लोहे, सोने जैसी कठोर धातुओं को भी गला डालता है । जब कोशिका में वह सृष्टि के आदि आविर्भाव से ही विद्यमान होने और शरीर में सूर्य (अग्नि) की सहायता से प्राण संचार करने की क्रिया सम्पन्न करने के कारण वह सहोदर भाई ही तो हुआ । शरीर में तेजस्विता का आधार जल तत्व ही है । इसलिए हम जन्म लेने से लेकर मृत्यु होने तक और उसके पश्चात् पारलौकिक गति में भी जल तत्व से विलग होकर नहीं रह सकते ।

स्थूल पदार्थों में सामान्य नियम यह होता है कि वे अपने गुणों के अनुसार ही आचरण करते हैं । मनुष्य उसका अपवाद है, वह प्रत्येक स्थिति के अनुरूप अपने आप को ढालने की क्षमता से परिपूर्ण है, ऐसा इसलिए होता है कि उसमें स्थूल अवयवों की अपेक्षा चेतन अंश अधिक सक्रिय और समर्थ होता है । अन्तरिक्ष यान एक होता है । पर उसमें लगी हुई बैटरियाँ सूर्य से विद्युत शक्ति खींचती रहती हैं, कैमरे फोटो लेते रहते हैं, एक्सीलरेटर गति पर नियन्त्रण रखते हैं ।

धातुओं के विशेष सम्मिश्रण से बनी चादरें कालिक-किरणों से यान के भीतरी भाग की रक्षा करती हैं । देखने में एक यान सक्रिय रहता है, किन्तु उसका सम्पूर्ण व्यक्तित्व इन छोटी-छोटी सक्रिय इकाइयों से बना है । वह न हो तो यान का अस्तित्व ही कुछ न रह जाय । इसी प्रकार मनुष्य की अन्तर्चेतना स्वतन्त्र अस्तित्व होकर भी चेतना की इकाइयों से विनिर्मित है । जल भी उनमें से एक है और वह चेतना के किसी भी स्वरूप की तरह समग्र व्यक्तित्व है, अर्थात् वह पदार्थों की तरह केवल जड़ गुणों वाला ही नहीं । मानवीय चेतना की तरह वह अपने आपको किसी भी परिस्थिति में ढालने की क्षमता से परिपूर्ण है इसीलिए वरुण (जल) देवता है और उसके साथ आत्मसम्बन्ध के द्वारा वह लाभ मिलने भी सम्भव हैं, जिनका वर्णन वेदों में किया गया है ।

जल के स्वतन्त्र अस्तित्व होने का एक प्रमाण तो यही है कि वह पदार्थ के नियमों का पालन करते हुए भी तापमान के नियमों का पालन अपनी तरह से करता है । भौतिक विज्ञान के अनुसार संसार के सभी पदार्थ गर्मी पाकर फैलते हैं और ठण्डा करने पर सिकुड़ने लगते हैं, किन्तु जल इस नियम का पालन नहीं करता । सामान्य जल का तापमान प्रायः २० डिग्री शतांश (सेन्टीग्रेड) होता है, इस जल का तापमान यदि क्रमशः घटाते हुए ४ डिग्री सेन्टीग्रेड पर लाये तो जल का घनत्व (डेन्सिटी) क्रमशः बढ़ता जाता है इसी प्रकार हिम (शून्य डिग्री तापमान पर जमा हुआ जल) को क्रमशः ताप देकर ४० डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान पर लाया जाय, तब भी जल का घनत्व क्रमशः बढ़ता जाता है, इस प्रकार ४ डिग्री शतांश (सेन्टीग्रेड) पर जल का घनत्व सर्वाधिक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अर्थात् १ ग्राम प्रति घन सेन्टीमीटर होता है । अर्थात् ४ डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान के सिवाय अन्य सभी तापमानों पर जल का घनत्व एक से कम होता है ।

ऐसा करने की आवश्यकता तब न होती, यदि जल एक जड़ तत्व होता तो उसे अधिक गर्म अवस्था में ठण्डी अवस्था में लाते समय तो उसका घनत्व अवश्य बढ़ता, किन्तु ठण्डी अवस्था से ४ डिग्री सेन्टीग्रेड की अधिक गर्म अवस्था में लाते समय उसका घनत्व घटना चाहिए । अपने इस मनोनीत गुण के द्वारा वरुण देव सम्पूर्ण जलचरों और मनुष्यों की जीवन रक्षा करते हैं । हिमाच्छादित प्रदेशों के जब झीलों तथा सागरों के जल के ऊपरी भाग हिम में बदल जाते हैं, तब भी उसके नीचे ४ डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान वाला तरल जल विद्यमान रहता है तथा जल के ऊपरी धरातल से समस्त जलचर हटकर नीचे आकर अपनी प्राण रक्षा कर लेते हैं । इस अवस्था में भी ये अपने साथ पर्याप्त ओषजन (ऑक्सीजन) घोलकर रखते हैं, जो जलचरों को हिमाच्छादित अवधि तक पर्याप्त होती है । सूखे में रहने वाले लोग भी बर्फ की ऊपरी सतह तोड़कर जल लेते और जीवन की रक्षा करते रहते हैं ।

जल देवता ने अपने इस गुण का परित्याग कर दिया होता तो समुद्र में वाष्प बनने से लेकर ध्रुव प्रदेशों तक की स्थिति कुछ ऐसी हो गई होती कि प्राणियों का जीवित रहना असम्भव हो गया होता । इन नियमों के परिपालन में न्यूनाधिक कमी भी संकटकारक हो सकती थी पर उन्होंने प्राणियों के हित में अपने नियमों का उल्लंघन कभी नहीं किया । यह तो मनुष्य ही है, जिसे भगवान ने अपनी सभी शक्तियाँ दीं, अपने जैसा सामर्थ्यवान बनाया पर वही मनुष्य संसार के तो क्या अपने भी काम नहीं आया । संसार का ऐसा कोई जीव नहीं है, जो किसी भी स्थिति में मनुष्य में समान इच्छित परिवर्तन कर सकता है । जाड़े, गर्मी, बरसात के अनुरूप वस्त्र बदल लेने की क्षमता उसे दी गई ।

किसी भी देश, प्रान्त और भाषा वाले क्षेत्र में जाकर वह कुछ ही समय में वहाँ के कायदे-कानून में ढल जाता है । अद्भुत कार्य न सही पर मानव-मात्र के कल्याण के लिए वह किसी भी समय में अपनी स्थिति में परिवर्तन ला सकता है । मनुष्य ने भी जल देवता की तरह सेवा और सदाशयता का मार्ग अपनाया होता तो संसार में आज जो कोलाहल और कलह मची हुई है, वह तब शान्ति और मैत्री में परिणत हो गई होती । जल देवता हमें मानवता की सेवा में निरन्तर रत रहने की तथा अपने आपको दबाकर कष्ट सहकर भी दूसरों के हित में काम आने की प्रेरणा देते रहते हैं ।

उपर्युक्त ऋचाओं में कहा गया है । जल सूर्य के पास स्थित है, स्थूल दृष्टि से यह अनहोनी बात है । सूर्य के पास कोई गैसें ही रह सकती हैं । उसका तापमान इतना अधिक है कि वहाँ स्थूलता ठहर ही नहीं सकती । लोहा, पीतल, चाँदी, अभ्रक आदि सभी धातुएँ वहाँ गैस स्थिति में ही रह सकती हैं, जल चूँकि तरल है या ठोस इसलिए वह सूर्य के पास ठहर ही नहीं सकता पर वैज्ञानिकों ने इस आश्चर्य को भी पढ़ा । उन्होंने देखा कि जल २ भाग हाइड्रोजन और १ भाग ऑक्सीजन के (टू वाल्यूम्स ऑफ हाइड्रोजन वन वाल्यूम ऑक्सीजन टू वाल्यूम्स ऑफ वाटर) सम्मिश्रण से बना है । यह दोनों ही गैसें हैं, विज्ञान के विद्यार्थी यह भी जानते हैं कि परमाणुओं के पीरियाडिक अन्तर के कारण एक ही तत्व अनेक तत्वों में प्रतिभासित होता है । पीरियाडिक तालिका में ऑक्सीजन से पहले वाला तत्व नाइट्रोजन और आगे वाला फ्लोरीन कहलाता है । इन दोनों के मिलने से तो हाइड्रोजन बना, जोकि हल्का तत्व है और सूर्य के आस-पास वही छाया हुआ है । जब ऑक्सीजन इस हाइड्रोजन के साथ संयोग करता है तो जल दिखाई देने लगता है, यदि वह इस अवस्था में न आता तो सम्भवतः लोग उसके अस्तित्व को न मानते पर अब यह जानना सम्भव हो गया कि यह तत्व सूर्य की ही देन है, इसलिए जल सूर्य (चेतना) की ही एक शक्ति है, उसे होना चाहिए गैस किन्तु प्राणि मात्र या सृष्टि के संचालन के लिए उसने स्वेच्छा से दृश्य तरल होना स्वीकार किया ।

हम राजा हैं या सचिव, श्रमिक हैं या उद्योगपति, अध्यापक हैं या विद्यार्थी, सन्त हैं अथवा साधक सब एक ही परमात्मा के पुत्र भाई-भाई की तरह हैं । विचित्र श्रेणियों में प्रतिभासित होकर भी हम एक मूल सत्ता से जुड़े हुए उसी के अंश हैं । यह भाव तभी सार्थक हो सकता है, जब हम किसी भी स्थिति में अपने से कम योग्यता वाले, कम साधनों और पीड़ित दलित स्थिति में पड़े लोगों की सेवा, सहायता में संलग्न रहते हैं । समाज के किसी भी वर्ग का दीन और दलित होना, सबके लिए अपमान और पाप है, इसलिए हमें जल के समान ही भाई-चारे का व्यवहार कर संसार की भलाई में जुटे रहना चाहिए ।

तरल होते हुए भी उसमें स्थूलता कुछ भी नहीं है, स्थूलता पृथ्वी का अंश है और जहाँ पृथ्वी (मिट्टी) का अंश होगा, वहाँ रंग, गन्ध और न स्वाद भी होगा पर जल में न तो गन्ध है, न स्वाद और न रंग इसलिए वह विशुद्ध चेतनता है, यदि यह माना जाय तो उसमें किसी को आश्चर्य नहीं होना चाहिए ।

दृश्य में स्थूलता और अदृश्य में चेतनता ही मनुष्य की विलक्षणता है । सच कहें तो मन और आत्मा के सभी भाव चेतनता के ही विशेषण हैं वही जीवन और विश्व को प्रभावित करते हैं, इसलिए भावनाओं का महत्त्व सर्वाधिक है । मनुष्य की भूल कि वह स्थूल द्रव्यों को तो महत्त्व देता है, किन्तु उस शाश्वत चेतना के विकास में किंचित भी ध्यान नहीं देते, जिससे उसका मूलभूत अस्तित्व बँधा हुआ है ।

भारतीय आचार्यों ने मानवीय गुणों को सर्वाधिक महत्त्व दिया, क्योंकि वह जानते थे, चेतनता ही प्रधान है । वह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रेम के लिए दया, स्नेह, आत्मीयता मानवता की रक्षा के लिए अपनी सुख-सम्पत्ति तक को न्योछावर कर देते थे । गुणों की इस प्रतिष्ठा का कारण उनकी आत्मानुभूति ही थी जल का यह गुण बताता है कि मनुष्य ही दृश्य बना रहे पर वह अपने चेतनात्मक गुणों का अभाव न होने दे । आत्म-शक्तियों को वह निरन्तर लोक-कल्याण के लिए जागरूक रखे ताकि चेतना जड़ता में न भटकने पाये ।

यही नहीं जल सूर्येदव की शक्ति के द्वारा अपना मन्थन करके वाष्प पैदा करते हैं और फिर वर्षा के द्वारा सारी पृथ्वी को तृप्त करते हैं । पानी की विशिष्ट ऊष्मा संसार के सब पदार्थों से विलक्षण होती है । अपनी इस विलक्षणता के कारण ही वह शेष वातावरण में ताप का नियन्त्रण करते हैं । जल के द्वारा ही जीव एवं वनस्पतियाँ गर्मी एवं सर्दी के अन्तर को उतार-चढ़ाव को झेलते रहते हैं । जन्म से ही नहीं तमाम जीवन भर मनुष्य वरुण देव की कृपा पर ही आश्रित रहता है । ऐसे उपकारी देवता को स्थूल और सूक्ष्म दृष्टि से आत्म-सात करने वाला मनुष्य कभी अस्वस्थ, अप्रसन्न एवं असन्तुष्ट क्यों रहेगा ।

वरुण देवता की चेतना से सूक्ष्म सम्बन्ध स्थापित करने के ऋषियों के विज्ञान में कितनी सत्यता है, उसका रहस्य अब लोगों की समझ में आया है, जब जल के अणुओं की संरचना का अध्ययन किया गया । शुनः शेप आजीगर्ति ने उसकी कृपा से ही ईश्वरत्व का बोध किया था । ऋग्वेद अ. १, अ. २ व १४ म. १, अ. ६ के २४वें सूक्त में उन्होंने वरुण विद्या का उद्घाटन करते हुए बताया—

नहिते क्षत्रं न सहो न मन्युं
वयश्चनामी पतयन्त आयुः ।
ने मां आयो अनिमिषं चरन्तीनं ये
वातस्य प्रमिनन्त्यभ्वम् ॥६॥
अम्बुध राजा वरुणो वनस्योर्ध्व स्तूपं
ददते पूतदक्षः
नीचीनाः स्थुरुपरि बध्न एषामस्मे
अन्तर्निहिताः केतवः स्युः ॥७॥
अदब्धानि वरुणस्य व्रतानि विचाक—
शच्चन्द्रमा नक्तमेति ॥१०।१४॥

इन मन्त्रों के अधिष्ठाता शुतः शेप आजीगर्तिः कृत्रिमो वैश्वामित्रो देवरातः ने कहा—"तुम्हारे अखण्ड राज्य बल और क्रोध को यह उड़ते हुए पक्षी नहीं पहुँच सकते । निरन्तर चलते हुए वायु का प्रबल वेग भी तुम्हारी गति रोकने में समर्थ नहीं । पवित्र पराक्रम युक्त वरुण आकाश के ऊपर की ओर तेज समूह को स्थापित करते हैं इस तेज समूह का मुख नीचे और जड़ ऊपर है । यह हमारे भीतर स्थित होकर बुद्धि रूप से वास करते हैं वरुण ने सूर्य गमन के लिए विस्तृत मार्ग बनाया है तथा निराश्रय आकाश में सूर्य के पाँव रखने की व्यवस्था की है.....। वे धृत नियम वरुण प्रजाओं के उपयोगी बारह महीनों को तथा तेरहवें अधिक मास को भी जानते हैं । सोने के कवच में उन्होंने अपना मर्म भाग ढक लिया है । उनके चारों ओर समाचार वाहक उपस्थित हैं..... (इसी मण्डल में २५वें सूक्त के मन्त्र) ।

इन मन्त्रों में शक्ति का विलक्षण विज्ञान भरा पड़ा है । उसका जो अंश वैज्ञानिक जान पाये हैं, वह इससे बिल्कुल मिलता-जुलता है, जबकि वे अभी अरबवें हिस्से का शतांश ही जान सके हैं । पानी के विलक्षण गुण, कर्म और स्वभाव का अध्ययन करते समय वैज्ञानिकों ने आश्चर्यपूर्वक देखा कि उसका अणु दो छोटी-छोटी भुजाओं वाला है, वह एक गुच्छे-सा लगता है और दोनों भुजाएँ बाहर की ओर निकली हुई हैं, इन भुजाओं के मध्य में सिर की तरह ऑक्सीजन का एक परमाणु है, जिसमें दो इकाई, धन विद्युत आवेश है तथा हाइड्रोजन परमाणुओं में २-२ इकाई ऋण विद्युत आवेश रहता है । ध्रुव विद्युतीय होने के कारण विपरीत दिशाओं वाली इन भुजाओं में प्रबल आकर्षण शक्ति है, उस आकर्षण शक्ति के मध्य में ही उसका नाभिक सुरक्षित है, यह सूर्य का अंश है । अर्थात् उसके नाभिक में सूर्य जैसी प्रचण्ड क्षमता विद्यमान है, जिसे वैज्ञानिक अभी जान नहीं पाये । यह वह सर्वान्तर्वापी शक्ति है, जिसे जानकर विश्व के किसी भी भाग में हो रही हलचल का पता लगाया जा सकता है, यही नहीं उस शक्ति का नियन्त्रण करना मनुष्य सीख जाय तो वस्तुतः वह करोड़ों मील दूर के आँधी-तूफान को भी घर में बैठा उसी तरह रोक सकता है, जैसे कोई किवाड़ अपनी इच्छा से खोल-बन्द कर सकते हैं, मस्तिष्क में भी जो शून्य स्थान (वेन्ट्रिकिल्स) हैं, उनमें अधिकांश जल ही भरा है ।

वरुण ईश्वर की त्रिगुणात्मक शक्ति का पुंज है, इसे वैज्ञानिकों ने देख तो लिया है पर अभी उनकी जानकारी प्रारम्भिक है । पानी के अणु ध्रुव-विद्युतीय आकर्षण के कारण कई अणु गुच्छकों के सिरे एक स्थान पर चिपक जाते हैं, इससे त्रिविमतीय (श्री डाइमेन्शनल) समुदाय का निर्माण होता है, इसे हाइड्रोजन बोर्डिंग कहते हैं, यह 'बोर्डिंग' ही जल के अनेक ज्ञात-अज्ञात असाधारण गुणों का आधार है । तरल स्थिति में आना भी इस हाइड्रोजन बोर्डिंग का ही फल है, अन्यथा जल तो सूक्ष्म गैसीय स्थिति का तत्व है, इसी कारण से सभी हाइड्रोजन वाले पदार्थों की अपेक्षा वह १०० डिग्री सेन्टीग्रेड के सर्वाधिक तापक्रम पर उबलता और शून्य डिग्री में जम जाता है । इस तापक्रम के बीच का कोई भी पदार्थ तरल अवस्था में नहीं रह सकता पर प्रोटोप्लाज्म के अन्दर भी इसी गुण के कारण तरल स्थिति में विद्यमान है । ऐसा न होता तो आज जो सृष्टि दिखाई देती है, वह अस्तित्व में न आती ।

यूनिवर्सिटी कॉलेज लन्दन के डॉ. ह्वाइट ने पानी में पोलोइथेलीन ऑक्साइड नामक पदार्थ घोलकर दिखाया कि वह एक सर्वशक्तिमान तत्व है । ऐसा करने पर उसने गुरुत्वाकर्षण के नियम का भी पालन नहीं किया, बिना किसी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

यन्त्र के वह ऊपर की ओर चढ़ने लगा, जब लोगों ने पूछा कि इसका कारण क्या है तो डॉ. ह्वाइट को चुप्पी ही साधते बना 'क्योंकि स्वयं उन्हें भी उसकी जानकारी नहीं थी । वस्तुतः प्रकृति का भण्डार इतना विशाल है कि उसे जितना खोजा जा सके उतना ही कम है । भौतिक विज्ञान से बढ़कर चेतना विज्ञान है । जड़ शक्तियों की तुलना में चेतना शक्तियों की क्षमता एवं उत्कृष्टता का बाहुल्य स्वीकार करना ही पड़ेगा ।

प्रकृति के अद्‌भुत रहस्यों में से कुछ को मनुष्य ने एक सीमा तक ही जाना है । अभी बहुत बड़ा क्षेत्र अनजाना और अछूता पड़ा है ।

अद्‌भुत सृष्टा के अद्‌भुत रहस्य

लिंकन की भी प्रथम धर्म-पत्नी फैशनेबुल थीं, गृह-व्यवस्था, कविता तथा चित्रकला की शौकीन थीं, केनेडी की भी । दोनों लिबरल पार्टी के सदस्य थे । लिंकन १८६१ में प्रेसीडेण्ट बने, केनेडी १९६१में । लिंकन के प्राणों की सर्वाधिक चिन्ता केनेडी नामक समकालीन व्यक्ति को रहती थी, केनेडी के सुरक्षार्थ उनका निजी सचिव लिंकन सर्वाधिक सतर्क रहता था । दोनों गोली से मारे गए व शुक्रवार के ही दिन । लिंकन की मृत्यु के बाद उनका पद सँभाला दक्षिणी उपराष्ट्रपति जान्सन ने और केनेडी की मृत्यु के बाद इस जिम्मेदारी को सँभालने वाले का नाम जान्सन ही था । वे दक्षिण से आये उपराष्ट्रपति थे ।

क्या यह अद्‌भुत साम्य मात्र संयोग है ? या इसके पीछे कोई सूक्ष्म आत्मिक विधान निहित है ?

अमेरिकी पादरी जिमविशप की मान्यता है कि राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन ने ही राष्ट्रपति जान एफ. केनेडी के रूप में पुनर्जन्म ग्रहण किया । उन्होंने दोनों के जीवन का तुलनात्मक अध्ययन कर इन तथ्यों की ओर लोगों का ध्यान खींचा है ।

लिंकन व केनेडी दोनों में गहरी धार्मिक भावना थी । वे बाइबिल के प्रेमी पाठक भी दोनों थे । दोनों विश्व-शान्ति के उपासक थे । दोनों में ४० वर्ष की आयु में ही राष्ट्रपति बनने की इच्छा हुई । नीग्रो स्वतन्त्रता के लिए दोनों ने निरन्तर प्रयास किया । लिंकन के चार बच्चे थे, दो मर गए थे । शेष दो से उन्हें गहरा प्यार था । केनेडी के भी चार बच्चे हुए दो का निधन हो गया । उन्हें भी वैसा ही प्यार था । दोनों अपने बच्चों से विनोद-परिहास बहुत करते थे ।

सन् १२१५ में जन्में फ्रांस के सन्त लुइस एक महान् क्रान्त दृष्टा थे । ५३९ वर्ष बाद सन् १७५४ में सम्राट लुइस १६वें का जन्म हुआ । दोनों के जीवन काल में ५३९ वर्ष का अन्तर था और दोनों की देह यानी रूपाकार में भी एकता थी । इसके अतिरिक्त दोनों के जीवन में असाधारण समानताएँ थीं ।

सन्त लुइस की छोटी बहिन का नाम इसाबेल था, वह उनसे १० वर्ष बाद पैदा हुई । सम्राट लुइस की बहिन भी १० वर्ष ही छोटी थी जिसका नाम था इलिजाबेथ । दोनों के पिताओं की मृत्यु उनकी आयु के १२वें वर्ष में हुई । १५वें वर्ष में सन्त लुइस बीमार हुए और सम्राट लुइस भी उसी आयु में उसी रोग से ग्रस्त हुए । दोनों का विवाह १७वें वर्ष में हुआ व २१वें वर्ष दोनों को बालिग अधिकार मिले ।

सन्त लुइस ने २९वें वर्ष में हेनरी तृतीय से और सम्राट लुइस ने २९वें वर्ष में जार्ज तृतीय से शान्ति वार्ता की । दोनों के पास उनकी ३४ वर्ष की उम्र में पूर्व के राजकुमार का राजदूत, राजकुमार के ईसाई बनने की इच्छा से आया । ३५ वर्ष की उम्र में सन्त लुइस क्रान्तिकारी विचारों के कारण नजरबन्द किए गए । ३५ वर्ष की ही आयु में सम्राट लुइस के सभी सत्ताधिकार छिन गए । इसी आयु में सन्त भी पद से हटाए गए, सम्राट भी । आयु के उसी वर्ष में यानी ३६वें वर्ष में सन्त लुइस ने ट्रिस्टन की स्थापना की व क्रान्ति का उद्‌घोष किया । सम्राट लुइस ने भी ३६वें वर्ष वैस्टीन के पतन के साथ क्रान्ति का शुभारम्भ किया । सन्त ने उसी वर्ष जैकन की स्थापना की, सम्राट ने जैको बिनस का सूत्रपात किया । सन्त के ३६वें वर्ष में इसाबेल ऐन्गुलेम की मृत्यु हुई । सम्राट के ३६वें वर्ष में इसावेल्ड ऐन्गुलेम का जन्म हुआ । दोनों ३८ वर्ष के थे, जब मातृ-सुख से वंचित हो गए । ३९वें वर्ष सन्त अवकाश ग्रहण कर जैकोबिन बने । सम्राट ने ३९वें वर्ष में जैकोबिन को जीवन अर्पण किया । उसी वर्ष सन्त मैडेलियम प्रान्त में वापस पहुँचे । ३९वें वर्ष में ही सम्राट लुइस मैडेलिन के अन्तिम संस्कार में पैरिस में सम्मिलित हुए ।

इस तरह दोनों के जीवन की घटनाओं में अद्‌भुत साम्य है । सभी घटनाएँ ५३९ वर्ष के अन्तर से मानो स्वयं को दुहराती रहीं ।

नेपोलियन और ड्यूक ऑफ विलिंगडन के जीवन क्रम में तारीखों की दृष्टि से अद्‌भुत समता है, दोनों १५ अगस्त, १७६० को जन्मे । दोनों के पिताओं की मृत्यु सोलहवें वर्ष में हुई । ड्यूक को जिस दिन जनरल का पद मिला उसी दिन नेपोलियन की नियुक्ति लेफ्टिनेन्ट पद पर हुई । आश्चर्य है कि वे दोनों मरे भी एक ही दिन ।

हिटलर और नेपोलियन के जीवन में भी तिथियों सम्बन्धी ऐसी ही समता है । वर्षों की दृष्टि से १२९ वर्ष का अन्तर जरूर है, पर उनके क्रिया-कलापों में कितनी ही घटनाएँ पुनरावृत्ति जैसी हैं । नेपोलियन २० अप्रैल १७६० को जन्मा और हिटलर २९ अप्रैल १८७९ को । फ्रांस में राज्य-क्रान्ति १७८९ में हुई और जर्मनी में १९१८ को, नेपोलियन ने १८०४ में सत्ता हथियायी और हिटलर ने १९३३ में । नेपोलियन ने रूस पर हमला १८१२ में किया था और हिटलर ने १९४१ में । वियना सन्धि १८१५ में

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हुई और जर्मन सन्धि १६४४ में । यह ऐसे संयोग हैं जिनके आधार पर हिटलर को नेपोलियन का दूसरा संस्करण कहा जा सकता है ।

सुप्रसिद्ध दार्शनिक एफ. एम. विलिस ने भारतीय धर्म को आत्मा के विकास के सिद्धान्त को पूरी तरह माना है और लिखा है कि कई बार एक जन्म के छोड़े हुए अधूरे कार्यों को पूरा करने के लिए श्रेष्ठ आत्माएँ जन्म लेती हैं और अगले जन्म के विचार तथा चिन्तन में अद्भुत साम्य इस बात का प्रमाण होती है । श्री विलिस ने ऐसे अनेकों जोड़े ढूँढ़े थे और उनके द्वारा इस दर्शन की पुष्टि की थी । उनका कहना है कि ईसामसीह जो काम शेष छोड़ गए थे, उन्हें उन्होंने दुबारा अपोलिनियस ऑफ रियाना के रूप में जन्म लेकर पूरा किया । ग्लैण्डस्टोन पहले जन्म में सिसरो थे, श्रीमती बीसेंट पहले ब्रनो थी । शोयेनहादर के विचार बौद्ध मत से इतने मिलते-जुलते हैं कि उन्हें बुद्ध ही कहा जा सकता है ।

कोई अनिवार्य नहीं है कि ये संयोग उसी व्यक्ति का दूसरे रूप में पुनर्जन्म ही हो, परन्तु ऐसे व्यक्तियों के जीवन परस्पर एक ही सूत्र में सम्बद्ध है, इसकी पूरी सम्भावना है ।

आयरलैण्ड के कुक हैवेन शहर में एक ही मकान में रहने वाले दो परिवारों में कुछ मिनटों के अन्तर से दो पुत्र हुए । एक दम्पत्ति ने अपने बच्चे का नाम एलेनर ग्रेडी रखा दूसरे ने अपने बच्चे का नाम पैट्रिक रखा । दोनों बच्चे धीरे-धीरे अपने जीवन के स्वाभाविक विकास क्रम की ओर चल पड़े ।

पैट्रिक और एलेनर दोनों अलग-अलग खेलते, अलग-अलग रहते, किन्तु एक दिन दोनों रोते-रोते घर पहुँचे, दोनों के दाहिने पैर पर एक ही स्थान पर चोट लगी थी । माता-पिता ने पट्टी कर दी, कोई ध्यान नहीं दिया । दोनों बच्चे पढ़ रहे थे तब कई बार ऐसा हुआ कि यदि परीक्षा में पैट्रिक को ३०० अंक मिले तो दूसरे स्कूल में पढ़ रहे ग्रेडी को भी उतने ही अंक मिले । जिस दिन एलेनर के विवाह सम्बन्ध की बात चली ठीक उसी दिन पैट्रिक की भी और संयोग की बात यह कि दोनों का विवाह एक ही दिन हुआ । दोनों की शादी एक ही दिन तय हुई और पहला बच्चा भी एक ही दिन हुआ ।

बचपन में एक ही मकान में रहे एलेनर और पैट्रिक बड़े होने पर आपस में मिले तब उन्होंने इन समानताओं पर ध्यान दिया और अन्तिम समय भी वे समानता की एक और मिसाल छोड़ गए कि दोनों व्यक्तियों की मृत्यु भी एक दिन एक ही समय पर हुई । उस समय दोनों अपने-अपने खेत में काम कर रहे थे ।

यह घटना जीवन की विचित्र रहस्यमयता को प्रतिपादित करती ही है यह भी बताती है कि मनुष्य का अस्तित्व शरीर तक ही सीमित नहीं है, बल्कि उसकी मूल सत्ता शरीर में बहुत सूक्ष्म और स्थूल नियमों से परे है । मनीषियों ने उस सूक्ष्म सत्ता को आत्म तत्वजीव सत्ता का नाम दिया है और कहा है कि वह काय-कलेवर तक ही सीमित नहीं रहती बल्कि विकसित होकर विश्व ब्रह्माण्ड की विराट् चेतना से भी जा जुड़ती है ।

पैट्रिक और एलिनेर के जीवन की समानता से भी अधिक विचित्र समानताएँ थीं इटली के सम्राट डम्बर्टो प्रथम तथा वहीं के एक होटल मालिक थे । उस होटल मालिक को तो सम्राट का प्रतिरूप ही कहा जाता था । दोनों की सूरत शक्ल और चेहरे-मोहरे इस प्रकार मिलते थे कि डम्बर्टो तथा होटल मालिक को एक समान कपड़े पहना कर खड़ा कर दिया जाय तो उनकी पत्नियों के लिए भी पहचानना असम्भव हो कि कौन हमारा पति है । सूरत शक्ल में ही नहीं नाम भी दोनों का एक ही था । पाठक किसी भ्रम में न पड़ जायें इसलिए यहाँ एक को डम्बर्टो प्रथम तथा दूसरे डम्बर्टो को होटल मालिक कहा जा रहा था ।

सम्राट डम्बर्टो और होटल मालिक डम्बर्टो का जन्म १४ मार्च, १८४४ को प्रातः ठीक साढ़े दस बजे हुआ था । सम्राट डम्बर्टो टूरिन के राजमहल में जन्में, तो होटल मालिक एक झोंपड़े में । २ अप्रैल, १८६६ को सम्राट डम्बर्टो का विवाह हुआ और उनकी पत्नी का नाम मर्घरिटा था । होटल मालिक का विवाह भी उसी दिन हुआ और उसकी पत्नी का नाम भी मर्घरिटा था । एक ही दिन युवराज सिंहासनारूढ़ हुए और दूसरे डम्बर्टो ने होटल खोला । २८ जुलाई, १९०० को होटल मालिक की हत्या किसी ने गोली मारकर कर दी । उसी दिन उसी समय सम्राट डम्बर्टो को भी एक पारितोषिक वितरण के समय गोली मार दी गई ।

ये घटनाएँ सिद्ध करती हैं कि सूक्ष्म चेतना की सत्ता स्थूल सत्ता से महान् है और मनुष्य को किसी उद्देश्य से इस पृथ्वी पर भेजती है । अपने स्वरूप को भुलाने पर वह इन संकेतों से समझाती भी है ।

ऐसे साम्य-संयोगों और असाधारण सादृश्यों की प्रचुरता आत्म-सत्ता के किसी गूढ़ नियम का संकेत करती है । वस्तुतः प्रकृति के अद्भुत रहस्यों में से कुछ को मनुष्य ने एक छोटी सीमा तक जाना है और उनको वैज्ञानिक शोधों एवं यन्त्र उपकरणों के माध्यम से उपयोग में लाकर लाभ भी उठाया है । आदिम कालीन मनुष्य का ज्ञान स्वल्प था, अन्य जीव-जन्तुओं की जानकारी कम है, इसलिए उन्हें वे लाभ नहीं मिल पाये जो आज का अन्वेषक मनुष्य प्राप्त करके सुविधा साधन उपलब्ध कर रहा है ।

प्रकृति का भण्डार इतना विशाल है कि उसे जितना खोजा जा सके उतना ही कम है । भौतिक विज्ञान से बढ़कर चेतना विज्ञान है । जड़ शक्तियों की तुलना में चेतना शक्तियों की क्षमता एवं उत्कृष्टता का बाहुल्य स्वीकार करना ही पड़ेगा । इस दिशा में और भी अधिक खोज होनी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चाहिए । अध्यात्म विज्ञान की शोध में ही हमारी दिलचस्पी और तत्परता और भी अधिक होनी चाहिए । प्राचीनकाल में ऋषि तपस्वियों ने बहुत कुछ खोज की थी पर वह उस समय की परिस्थितियों के अनुकूल थी । उन शोधों के बाद अब कुछ ढूँढ़ना शेष नहीं रहा ऐसी बात नहीं है । फिर प्राचीनकाल की उपलब्धियाँ भी तो लुप्त हो गयीं । ऐसी दशा में उस दिशा में हमें वैज्ञानिक आत्म विज्ञान की शोधों में नए सिरे से तत्पर होना चाहिए ।

जीवन एक पहेली

मनुष्य का कर्तृत्व उसकी सफलताओं का कारण है यह तथ्य सर्वविदित है । पर यह मान्यता भी ससीम है । उसके साथ एक कारण और भी जुड़ा प्रतीत होता है—निर्धारित नियति । भले ही वह अपने ही पूर्व संचित कर्मों का फल ही हो या उसका संचालन किसी अदृष्ट से सम्बन्धित हो ।

संख्या के साथ व्यक्ति विशेष का सम्बन्ध क्यों होता है ? यह तो नहीं कहा जा सकता, पर होता अवश्य देखा गया है । घटनाओं पर आश्चर्य करना भर पर्याप्त नहीं, इसके आधार को भी जानना चाहिए । जिससे उस नियति शृंखला के अनुकूल चलकर लाभान्वित होना और प्रतिकूलता से बच निकलना सम्भव हो सके ।

तिथियों का कुछ विचित्र संयोग देखिये—चन्द्रवरदाई और पृथ्वीराज चौहान घनिष्ठ मित्र थे । वे दोनों एक ही दिन जन्मे और एक ही दिन मरे भी ।

महाकवि शेक्सपियर के लिए २३ अप्रैल जन्म देने भी आयी और वही २३ अप्रैल उन्हें उठा भी ले गई ।

विवेकानन्द की शिष्या भगिनी निवेदिता के जीवन में अक्टूबर मास महत्त्वपूर्ण घटनाएँ प्रस्तुत करता रहा । वे २४ अक्टूबर, १८६७ में जन्मी २२ अक्टूबर, १८९५ को उसने विवेकानन्द को अपना समर्पण दिया । २० अक्टूबर को उन्होंने महर्षि अरविन्द से महत्त्वपूर्ण भेंट की और १३ अक्टूबर, १९११ में वह संसार छोड़ कर चली गयीं ।

वीर सावरकर के जीवन में फरवरी मास अशुभ रहा । हेग के अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय ने उन्हें २५ फरवरी, १९११ को सजा दी और ठीक ५५ वर्ष बाद २६ फरवरी, १९६६ को मृत्यु हो गई ।

लोकमान्य तिलक के जीवन की महत्त्वपूर्ण घटनाएँ मंगलवार को घटित होती रही हैं । उनका केशरी पत्र मंगलवार को प्रकाशित हुआ । स्वतन्त्रता संग्राम में वे मंगल को पकड़े गए और जमानत पर भी मंगल के दिन ही छूटे । मंगलवार से मुकदमा चला और जेल से छूटने का दिन भी वही वार था ।

शुक्रवार को लोग शोक दिवस मानते हैं । ईसा, सुकरात, गाँधी, लिंकन, केनेडी आदि कितने महापुरुषों को शुक्रवार ने उदरस्थ किया है ।

किन्हीं के जीवन में कुछ अंकों की विशेष महत्ता रही है । प्रिंस विस्मार्क को ३ का अंक कुछ विलक्षण संयोग लाता रहा । उन्होंने अपने तीन नाम रखे लाएन वर्ग-शोवासेनी और विस्मार्क । उन्हें तीन उपाधियाँ मिली प्रिंस, ड्यूक तथा काउन्ट । वे तीन कॉलेजों में पढ़े । उनके तीन बेटे हुए । वे तीन देशों में राजदूत रहे । वे तीन युद्धों में लड़ने गए । इन्होंने तीन घोड़े गँवाए । तीन बार इन पर घातक आक्रमण हुए । तीन बार उन्होंने त्यागपत्र दिए ।

लालबहादुर शास्त्री के लिए १० के अंक से कुछ अनोखे सम्बन्ध थे । वे अंग्रेजी वर्ष के दसवें महीने अक्टूबर में जन्मे । उन्होंने मन्त्रित्व आदि १० महत्त्वपूर्ण पद सँभाले । उनके दिल्ली निवास स्थान का नम्बर १० था । उनकी मृत्यु १० तारीख को हुई । रोमन लिपि में लालबहादुर शब्द लिखने में १० अक्षर प्रयुक्त होते हैं ।

साइप्रस के शासनाध्यक्ष मकरिआस के लिए १३ का अंक कुछ ऐसे ही संयोग लाता रहा । वे १३ अगस्त, १९१३ को जन्मे । १३ वर्ष की आयु में चर्च में भर्ती हुए । १३ नवम्बर, १९४६ में उन्होंने प्रोस्ट दीक्षा ली । १३ जून, १९४८ में वे विशप बने तथा राजगद्दी पर बैठे । १३ मार्च, १९५१ में यूनान के राजा ने उनका अभिनन्दन किया । १३ दिसम्बर, १९५९ को वे राष्ट्रपति चुने गए ।

विश्व-विख्यात चित्रकार आल्मा-टाडमा के जीवन में "१७" की संख्या का महत्त्व एक बड़े जादू की तरह था । यह बात वे स्वयं स्वीकार करते हुए बताया करते थे—"मैं १७ वर्ष की उम्र का था तब १७ तारीख को ही अपनी प्रिय पत्नी से मिला । मेरे पहले मकान का नम्बर १७ था और जब दुबारा मकान बनवाने की बात आयी तो बहुत प्रयत्न करने पर भी वह १७ अगस्त से पहले प्रारम्भ नहीं हो सका । नवम्बर की १७ तारीख थी जब मैंने नूतन-गृह में प्रवेश किया अपने लिए जब "सेन्टजोन्स बुड में चित्रकारी के लिए कमरा लिया तो वह भी १७ नम्बर ही निकला ।"

निःसन्देह "अक्षरों" की महत्ता बहुत अधिक है पर लगता है संसार का नियमन संख्या द्वारा हो रहा है । तभी तो कई बार ऐसे विचित्र सांख्यिकी संयोग उपस्थित हो जाते हैं कि गैलीलियो जैसे वैज्ञानिक तक को मानना पड़ा था कि संसार गणित की भाषा में बोल रहा है । विधाता संसार का हिसाब-किताब संख्या में रखता है । इस तथ्य की पुष्टि में सुप्रसिद्ध भविष्य वक्ता और ज्योतिषी कीरो ने आश्चर्यजनक घटनाएँ अपनी पुस्तक "कीरोज बुक ऑफ नम्बर्स" में संकलित की हैं—प्रस्तुत घटनाएँ अधिकांश उस पुस्तक का ही अंश हैं ।

ए. बी. फ्रेन्च के जीवन की घटनाओं में ७ संख्या का महत्त्व बताते हुए कीरो लिखते हैं कि—"उनका जन्म ७वें महीने की ७ तारीख को हुआ था । अपनी ७ वर्ष तक की उम्र में वे कभी बीमार नहीं हुए । ७वीं कक्षा तक वे कभी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

फेल नहीं हुए । अपने विवाह के लिए उन्होंने ७वीं लड़की को चुना और यह एक विस्मय की बात थी कि लड़की के लिए भी फ्रेन्च ७वें ही लड़के थे । उनके जीवन की अधिकांश घटनाएँ ७ के ही साथ घटित हुईं ।"

उनके एक चाचाजी थे उनकी धर्मपत्नी एक बार रेल यात्रा कर रही थीं । रेलगाड़ी दुर्घटनाग्रस्त हो गई । जिस डिब्बे में बैठी थीं उसका नम्बर ८६३१ था, एक बार लाटरी खरीदी उसका नं. ८६३१ था उसमें कुछ नहीं निकला, एक बार स्वयं भी एक ट्रक की चपेट में आ गए संयोग से उसका नम्बर ८६३१ ही था । उनके चार पुत्र हुए चारों मर गए । उन लड़कों की मृत्यु क्रमशः ८, ६, ३, और १ वर्ष की आयु में हुई और इन संख्याओं को मिलाने से फिर वही ८६३१ संख्या बनती है जिसने दुर्भाग्य की दृष्टि से जीवन भर उनका पीछा नहीं छोड़ा ।

लोगों का अनुमान है कि १३ की संख्या अशुभ होती है किन्तु कीरो की दृष्टि में यह कोई तर्क संगत बात नहीं है उन्होंने अनेक उदाहरणों द्वारा सिद्ध किया है कि १३ की संख्या को जहाँ अशुभ माना जाता है वहाँ कितने ही लोगों के जीवन की सौभाग्यदायक संख्या सिद्ध हुई । उत्तरी बर्टन यार्कस् के डॉ. रूड के जीवन में १३ की संख्या दुर्भाग्य सूचक के रूप में आयी । १३ वर्ष की आयु में वे बीमार पड़े । १३ दिन तक घोर कष्ट में रहे । १३ तारीख को ही हृदय की बीमारी के कारण उनकी मृत्यु हो गई । गाँव के क्लब में जिसमें वे कुल १३ सप्ताह रहे, के फण्ड में उनकी मृत्यु के समय कुल १३ शिलिंग शेष थे । उनकी मृत्यु का दिन उनके सबसे छोटे बच्चे की १३वीं वर्षगाँठ थी । उनके अन्तिम संस्कार के लिए १३ सौ मील की यात्रा करनी पड़ी । अन्तिम संस्कार के समय कुल १३ सदस्य उपस्थित हुए उनके परिवार के सदस्यों की संख्या भी १३ ही थी । उनके बड़े लड़के को नेवी में नौकरी मिली और साथ में जो नम्बर मिला वह भी १३ ही था । जिस जहाज में काम करना था उसका नम्बर १३ ही था । रूड का नाम फूवाह था जो कि बाइबिल के १३वें छन्द में आता है । उनकी मृत्यु के समय शोक सम्वेदना के जो तार आये उनकी संख्या भी १३ ही थी ।

यह तो थी दुर्भाग्य की बात—१३ जिसके साथ सौभाग्य जुड़ा हुआ है । डेनवर कोलराडो के घनाढ्य उद्योगपति शेरमैन का जन्म १३ तारीख को हुआ । सगाई १३ तारीख को हुई और विवाह भी १३ जून, १९१३ को हुआ । उनकी पत्नी का जन्मदिन भी १३ तारीख का ही था । उनके विवाहोत्सव में भी कुल १३ ही अतिथि थे । उन्हें जो फूल भेंट किए गए उनकी संख्या भी १३ थी । १३ की संख्या उनके जीवन में सदैव लाभदायक रही ।

संख्या की विचित्रता का संसार बड़ा व्यापक है जन्म, मृत्यु और जीवन काल की घटनाओं को ध्यान पूर्वक देखें तो पता चलता है कि हर व्यक्ति के जीवन में जोड़, बाकी, गुणा, भाग काम करता है और यही तथ्य इस बात का प्रमाण है कि प्रकृति जड़ नहीं है वरन् उसमें एक मस्तिष्कीय प्रक्रिया हर क्षण, हर घड़ी काम कर रही है ।

इस तथ्य का प्रतिपादन संख्याओं की—गणित की यह विचित्रता प्रकट करती है । फ्रांस के प्रथम सम्राट हेनरी १४ मई, १०२९ को सिंहासन पर बैठे जबिक वहाँ के आखिरी सम्राट का नाम भी हेनरी ही था १४ मई, १६१० को उनकी हत्या कर दी गई थी । जिस तारीख को एक को सिंहासन मिला उसी को दूसरी १४ मई को मृत्यु का उपहार । इस बीच वहाँ के अन्य सभी राजाओं के जीवन में १४ संख्या का सदैव महत्त्व बना रहा । हेनरी १४वें का पूरा नाम हेनरी डिबारबन था पूरे नाम में १४ अक्षर होते हैं । १४वीं शताब्दी में १४वीं १० वर्षीय काल सारणी (डिकेड) में ईसा के जन्म से १४ वर्ष बाद हेनरी चतुर्थ का जन्म १४ मई को ही हुआ । सन् १५५३ में जन्म हुआ यह सब अक्षर जोड़ने से भी १४ संख्या आती है । १४ मई को ही हेनरी द्वितीय ने फ्रांस का राज्य विस्तार किया था । हेनरी चतुर्थ की पत्नी का जन्म भी १४ मई को हुआ । हेनरी तृतीय को १४ मई के दिन युद्ध मोर्चे पर जाना पड़ा । हेनरी चतुर्थ ने आयवरी का युद्ध १४ मार्च, १५९० को जीता । १४ मई, १५९० में उनकी फौज की पैरिस के फाक्सवर्ग में हार हुई नवम्बर मास की १४ तारीख ही थी जिस दिन फ्रांस के १६ बड़े व्यक्तियों ने हेनरी चतुर्थ की सेवा करते-करते मर जाने की ऐतिहासिक प्रतिज्ञा की थी । इसी के ठीक २ वर्ष बाद १४ नवम्बर को फ्रांस की पार्लियामेंट ने एक कानून पास कर पापलबुल को हेनरी के स्थान पर सत्ताधिकारी चुना । १४ दिसम्बर, १५९९ को सवाय के ड्यूक ने अपने आपको हेनरी को आत्म-समर्पण किया । १४ तारीख ही थी जिस दिन लार्ड डफिन ने लुई १३वें के रूप में वैपतिस्मा ग्रहण किया ।

१४ मई, १६४३ को हेनरी चतुर्थ के पुत्र लुई १३वें की मृत्यु हुई । लुई १४वें १६४३ में सिंहासन पर बैठे इन चारों संख्याओं का योग भी १४ ही होता है । उन्होंने ७७ वर्ष (७ + ७ = १४) तक का जीवन जिया और १७१५ में मृत्यु हुई । यह चारों अक्षर जोड़ने पर भी १४ की ही संख्या आती है । लुई १५वें ने कुल १४ वर्ष राज्य किया । इस प्रकार फ्रांस के सिंहासन पर १४ का महत्त्व सदैव बना रहा ।

जर्मनी के शासक चार्ल्स चौथे का विश्वास था कि उनके जीवन में चार की संख्या सौभाग्य सूचक है सो उन्होंने अपने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में चार को महत्त्व दिया । वह चार रंग की पोशाक पहनते थे और दिन में चार बार पहनते थे । चार प्रकार का भोजन, चार मेजों पर दिन में चार बार करते थे, चार प्रकार की शराब पीते थे, उनके अंग रक्षक चार थे, बग्घी में चार पहिये, और चार ही घोड़े जुतते थे । उनके राज्य में चार गवर्नर नियुक्त थे, चार सेनापति, चार ड्यूक और कप्तान भी चार ही थे । उनके चार महल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

थे उनमें चार-चार ही दरवाजे थे । हर महल में चार-चार कमरे, हर कमरे में चार-चार खिड़कियाँ थीं और यह एक संयोग ही था कि मृत्यु के समय चार डॉक्टर उपस्थित थे उन्होंने चार बार "गुड बाय" कहा और ठीक चार बजकर चार मिनट पर इस संसार से विदा हो गए ।

संसार कितना विचित्र और विलक्षण है । इसके रहस्यमय पर्त क्रमशः ही खुले और खुलते जा रहे हैं । मानवी बुद्धि प्रकृति के रहस्यों को धीरे-धीरे ही जानने समझने लायक बनी है और बनती चली जा रही है । अंकों का क्या कुछ सम्बन्ध मनुष्य जीवन के साथ जुड़े घटनाक्रमों से भी है यह तथ्य की यथार्थता कभी न कभी स्पष्ट होकर ही रहेगी ।

अन्तर्जगत के सन्देश

मनुष्य क्षुद्र जीव सत्ता से क्रमशः विकसित होता हुआ बन्दर से आदमी बना—यह सिद्धान्त अपने आप में अपूर्ण है, क्योंकि विज्ञान अभी जीवन की इन विचित्र पहेलियों को ही नहीं सुलझा सका तो पृथ्वी पर मानवी सत्ता का प्राकट्य कैसे हुआ, यह किस आधार पर कहा जा सकता है । मानवी सत्ता की विलक्षण सामर्थ्य का एक और उदाहरण इटली निवासी अल्वर्टो अस्करी के स्पष्ट घटी घटना से मिलता है । अल्वर्टो अस्करी को सन् १९५३ तथा १९५४ में सर्वप्रथम आने का पुरस्कार मिल चुका था, के जीवन में भी इस तरह का लोमहर्षक क्षण आया जब उनकी मृत्यु उन्हें पूर्व ही आकर दर्शन दे गई । १९५५ में जिन दिनों वह पुनः रेस में भाग लेने की तैयारी कर रहे थे । उन्हें २० वर्ष पुरानी एक घटना याद हो आयी । तब अल्वर्टो १६ वर्ष के बालक थे । उन दिनों कार-रेस में उनके पिता एन्टोनियो अस्करी शीर्ष स्थान पर थे । उस वर्ष की प्रतियोगिता में पिता के साथ कार में पुत्र अल्वर्टो भी दौड़ रहे थे । जिस समय कार वायलोन का घना जंगल पार कर रही थी, एकाएक एक काली बिल्ली ने रास्ता काटा । बिल्ली को बचाने के लिए एन्टोनियो ने तेज स्टीयरिंग काटा, किन्तु तीव्र गति से चल रही गाड़ी नियन्त्रण खो बैठी और एक पेड़ से जा टकराई । ऐन्टोनियो का घटनास्थल पर ही देहावसान हो गया । न जाने क्यों उसी क्षण अल्वर्टो जो अब तक सकुशल था, को एकाएक ऐसा आभास हुआ कि २० वर्ष बाद जब वह ३६ वर्ष का होगा, उसकी भी इसी तरह मृत्यु हो जायेगी । यह आभास कुछ ही क्षणों में विश्वास में बदल गया ।

दुर्घटना के चार दिन पूर्व एकाएक अल्वर्टो की तबियत खराब हुई तब तो उनका विश्वास कतई परिपुष्ट हो गया क्योंकि उनके पिता को भी ठीक चार दिन पूर्व तबियत बिगड़ी थी उनका मन रेस में भाग लेने का नहीं कर रहा था, किन्तु उसके प्रशिक्षक भूतपूर्व कार रेस चैम्पियन लुई बिल्लोरसी ने उन्हें आश्वस्त किया, ऐसा कुछ नहीं होगा । उन्होंने इस अन्धविश्वास जैसी भीति के लिए अल्वर्टो को फटकार दी, किन्तु नियति तो जैसे अभेद्य हो, अल्वर्टो ने नियत समय पर प्रतियोगिता के लिए अन्तिम अभ्यास के लिए अपनी कार स्टार्ट की । बिल्लोरसी की कार उसके पीछे थी । जैसे ही कार वायलोन के जंगल में उस स्थान पर पहुँची ठीक वही २० वर्ष पूर्व का दृश्य-एक काली बिल्ली ने रास्ता काटा । अल्वर्टो ने हर चन्द बचने की कोशिश की, किन्तु कार एक दैत्याकार पेड़ से जा टकराई और अल्वर्टो ने वहीं अपनी जीवन लीला समाप्त कर दी ।

इस घटना से दैवी विधान की निश्चितता सिद्ध की जा सकती है । वस्तुतः बात ऐसी नहीं है । किसी स्थान पर आग लगने से पूर्व धुआँ निकलता है । वह एक प्रकार से इस बात का संकेत होता है कि अभी समय है पानी डालकर आग लगने के सम्भावित संकट को टाला जा सकता है, किन्तु कोई ध्यान न दे तो ईश्वर-विधान का क्या दोष ।

विकासवाद सिद्धान्त के जनक चार्ल्स डार्विन ने अपने निष्कर्षों को प्रमाणित करने के लिए जो अध्ययन निरीक्षण किया उसमें इन विचित्रताओं के बारे में कुछ भी नहीं कहा गया है । इस तरह के विलक्षणों संयोगों को न तो डार्विन ने अपने अध्ययन में सम्मिलित और न ही इनका कोई कारण बताया है । आगे के अध्यायों में हम देखेंगे कि विकासवाद का वर्तमान सिद्धान्त कितना एकांगी और अधूरा है । वह एक सीमा तक ही सही हो सकता, उस सीमा तक जहाँ तक कि उससे मानवीय सत्ता जीवन चेतना की समर्थता और सशक्तता का नियम पुष्ट होता है ।

प्राण सत्ता का उदय और विकास स्रोत

बात उन दिनों की है जब चीन में ब्रिटेन शासन करता था । शंघाई (चीन) के एक गुरुद्वारे में आत्मासिंह नामक एक ग्रन्थी रहता था । आत्मासिंह के सौम्य स्वभाव से लोग बहुत प्रभावित थे । वह जितने चरित्रवान थे उतने ही ईश्वर भक्त, उन्हें ईश्वरीय विधान पर अटूट आस्था थी ।

दैवयोग से कुछ दिन पीछे बाबा सिंह की किसी ने हत्या कर दी । पुलिस ने आत्मासिंह पर सन्देह किया और परिस्थिति का लाभ उठाकर उसे गिरफ्तार कर मुकदमा चला दिया । आत्मासिंह अपनी निर्दोषिता के कोई स्थूल प्रमाण प्रस्तुत नहीं कर सके इसलिए अन्धे कानून ने उन्हें फाँसी की सजा दे दी ।

फाँसी के लिए शंघाई से जल्लाद न मिलने पर हाँग-काँग से जल्लाद बुलाये गए । नियम समय पर फाँसी प्रारम्भ हुई । गले में फाँसी का फन्दा डालकर जैसे ही नीचे का तख्ता हटाया गया कि एक जोर की धड़ाम की आवाज आयी । रस्सा बीच से टूट गया । आत्मासिंह फर्श पर जा गिरे उन्हें कोई चोट नहीं आयी ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पदाधिकारी बड़े विस्मित हुए । मामला ब्रिटिश काउन्सिल जनरल सरजान ब्रेनन के पास पहुँचा । उन्होंने कई विशेषज्ञ बुलाकर रस्से की जाँच कराई । विशेषज्ञ कोई कारण नहीं ढूँढ़ सके—रस्सा टूटा कैसे इस पर सभी आश्चर्यचकित थे । दूसरा रस्सा मँगाया गया । उसमें आत्मासिंह के वजन से चार गुना अधिक वजन के पत्थर लटकाकर रस्से की परीक्षा कर ली गई और दुबारा फाँसी की व्यवस्था की गई । इस बार बड़े-बड़े उच्च पदाधिकारी भी उपस्थित थे । जैसे ही दुबारा फिर फन्दा डालकर लटकाया गया कि पुनः पहले जैसी आवाज हुई और रस्सा टूट गया । आत्मासिंह को कोई चोट नहीं आयी । चीन में ब्रिटिश राजदूत सरह्यु नायपुल ह्यूगेशन ने कहा, आत्मासिंह निर्दोष है, उसे फाँसी नहीं दी जा सकती, क्योंकि उसका रक्षक परमात्मा है ।

ईश्वर के प्रति आस्था-उसका सतत सान्निध्य मनुष्य में अद्‌भुत और विलक्षण शक्तियाँ जाग्रत कर देता है । इस तरह के कई प्रामाणिक उदाहरण मिलते हैं । स्वामी विवेकानन्द ने भी इस प्रकार के अनुभव का उल्लेख किया । उन दिनों स्वामी जी हैदराबाद गए हुए थे । वहाँ कोई ब्राह्मण रहता था, इसके बारे में स्वामीजी ने सुन रखा था कि "वह मनुष्य न जाने कहाँ से अनेक वस्तुएँ उत्पन्न कर देता है ।" वह उच्च खानदान का और शहर का नामी व्यापारी था । स्वामीजी उसके पास गए और अपने चमत्कार दिखाने को कहा । उस समय वह बेचारा बीमार था । भारतवर्ष में ऐसा विश्वास है कि अगर कोई पवित्र मनुष्य किसी के सिर पर हाथ रख दे तो उसकी बीमारी ठीक हो जाती है । वह ब्राह्मण स्वामी जी के समीप जाकर बोला—"भगवन् ! पहले आप मेरे सिर पर हाथ रख दें तो मेरा बुखार भाग जाय । अनन्तर में अपने चमत्कार दिखाऊँगा ।" स्वामीजी ने शर्त स्वीकार कर ली ।

वह मनुष्य अपनी कमर में एक चिथड़ा पहने था । अन्य सब कपड़े उतार कर रख दिए । अब उसे केवल एक कम्बल ओढ़ने को दिया गया । शीत के दिन थे और भी अनेक लोग एकत्रित हो गए । उसने कम्बल ओढ़ा और एक कोने में बैठ गया ।

उसके बाद उसने कहा—"आप लोगों को जो कुछ चाहिए वह लिखकर दीजिए ।" सबने कुछ लिख-लिखकर दिया, स्वामीजी ने स्वयं भी उन फलों के नाम लिखकर दिए, जो उस प्रान्त में पैदा ही नहीं होते थे, किन्तु आश्चर्य कि उसने कम्बल में से अंगूर के गुच्छे तथा सन्तरे इतनी अधिक मात्रा में निकाल कर दिए कि उनका वजन उस मनुष्य के वजन से दो गुना होता है, वह फल सबने खाये भी । खाने योग्य थे भी अन्त में स्वामीजी के आग्रह पर उसने सौ डेढ़ सौ गुलाब के फूल निकाल कर दिए । प्रत्येक फूल बढ़िया खिला हुआ और पंखुड़ियों पर सवेरे के ओस बिन्दु विद्यमान थे, खण्डित फूल था, न मुरझाया और न टूटा ।

इस घटना पर अपनी सम्मति व्यक्त करते हुए स्वामी विवेकानन्दजी लिखते हैं—"लोग इसे जादू मानते हैं, चमत्कार कहते हैं, यह अवांछित है, ऐसी मान्यता है, किन्तु मैं ऐसा नहीं मानता । यह सत्य का ही प्रदर्शन था । जो है ही नहीं उसकी छाया कहाँ से आ सकती है, इसलिए यह माया नहीं थी ।"

"यह मन की अनन्त शक्तियों का प्रमाण है, हम मन से जो चाहें उत्पन्न कर सकते हैं । मन के भीतर सारी सृष्टि की समृद्धि और सम्पत्ति है । शर्त यही है कि हम मन से काम लें । अनियन्त्रित मन अपना भी बुरा करता है, संसार का भी । हैदराबाद का यह ब्राह्मण मन से तो काम लेता है, मगर यह नहीं जानता कि मन से काम ले रहा है, वह भी भ्रान्त, इसलिए वह चमत्कार की दुनिया तक ही सीमित रह गया । अपने अन्दर ईश्वर को व्यक्त नहीं कर पाया ।"

पाल ब्रान्टन ने भारतवर्ष में इस तरह के चमत्कारों को ढूँढ़-ढूँढ़कर देखा और बाद में इस गुप्त विद्या के प्रतिपादन में पुस्तक लिखी । पांडिचेरी के फ्रांसीसी न्यायाधीश लुई जंकालियट ने भी एक ऐसी पुस्तक लिखी है, जिसमें भारतवर्ष की इस पुरातन विद्या की भूरि-भूरि प्रशंसा की है ।

इस तरह की घटनाएँ दर्शाती हैं कि मनुष्य अपने आपके बारे में कितना कम जानता है और यह भी कि जैसा वह सोचता है उससे अधिक बड़ी व समर्थ शक्तियाँ उसके भीतर बीज रूप से विद्यमान हैं । इन अर्थों में मनुष्य को सर्व समर्थ ईश्वरीय सत्ता की प्रतिनिधि उत्तराधिकारी सन्तान ही कहा जाना चाहिए, परन्तु वैज्ञानिकों के अनुसार मनुष्य आरम्भ में क्षुद्र और अशक्त दुर्बल जीव ही था । धीरे-धीरे ही उसका विकास हुआ ।

क्रमशः विकास करने की इस वैज्ञानिक मान्यता को विकासवाद कहा जाता है । इन दिनों जीव-विज्ञानी विकासवाद के सिद्धान्त का बहुमत समर्थन कर रहे हैं । यह मान्यता बहुचर्चित बहु श्रुत होते-होते बहुमान्य भी हो गई है कि जीवन का आरम्भ अविकसित स्तर पर हुआ और वह क्रमशः आगे बढ़ता चला आया । आजकल यही सिद्धान्त विद्यालयों में पढ़ाया जाता है और समझाया जाता है कि आदमी की आदि सत्ता अभिनन्दनीय नहीं है । उसका पूर्व इतिहास गौरवास्पद नहीं । आज का मनुष्य अपने पूर्वजों से कहीं अधिक अच्छी स्थिति में है, यह मान्यता हमें अहंकारी ही नहीं बनाती वरन् पूर्वजों के प्रति अश्रद्धा एवं उपहास के भाव भी पैदा करती है । ऐसी दशा में इतिहास का कोई मूल्य ही नहीं रह जाता । तब अविकसित लोगों के रचे हुए वेद, शास्त्र आज के विकसित लेखकों द्वारा लिखे गए, अश्लील, जासूसी और तिलस्मी उपन्यास कहीं अधिक कला एवं कल्पना के आधार कहे जा सकते हैं ।

यदि तथ्य ही होते और उनके पीछे प्रमाण एवं तर्क का समुचित समावेश रहा होता तो जो कुछ कहा जा रहा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है उसे सत्य की प्रतिष्ठा के नाम पर अपनाना ही समीचीन होता, भले ही उससे अतीत के प्रति उपहास बुद्धि ही क्यों न उपजती, भले ही पूर्वजों की क्षुद्रता पर व्यंग्य करना पड़ता और अपनी प्रगतिशीलता पर निःसंकोच गर्व करने का द्वार खुलता ।

विकासवाद के सिद्धान्त का एक अंश ही ग्राह्य हो सकता है । जैसे बालक का शरीर और मस्तिष्क अविकसित होता है, समयानुसार उसकी सर्वतोमुखी प्रगति होती है और युवावस्था में पहुँचने पर वह प्रौढ़, प्रगल्भ परिपक्व बन जाता है । इतने पर भी उसकी मूल चेतना में शुक्राणु में ही वंश परम्परा की आश्चर्यजनक सम्भावनाएँ विद्यमान मानी जाती हैं । गेहूँ के बीज से गेहूँ उत्पन्न होता है । आम की आकृति और स्वाद का पूरा ढाँचा उस गुठली में भरा रहता है जिससे कि नया पौधा उगता है । इस वंशधर में अपने पूर्वज के गुण ही विकसित होते पाये जायेंगे । विकास क्रम की यह परम्परा कहीं भी देखने में नहीं आती कि सरसों का बीज क्रमशः विकसित होते-होते कटहल जैसे फूल लगाने लगा हो । मूँग की बेल पर कद्दू जैसे स्वाद और आकार के फल लग सकना शायद कभी भी सम्भव न हो सकेगा ।

क्या यह भी विकास है ?

वस्तुतः परमात्मा ने अपनी प्रत्येक रचना को पूर्ण बनाया है और आये दिन कई ऐसी घटनाएँ भी घटती रहती हैं जो इस मान्यता को झुठलाती रहती हैं । यही नहीं, ये घटनाएँ अपनी विलक्षण विचित्रताओं और रहस्यमय विशेषताओं के कारण उस अज्ञात अलौकिक और सर्वसमर्थ सत्ता की ओर भी संकेत करती हैं ।

सन् १८५७ भारतवर्ष में प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम (गदर) के नाम से विख्यात है यही वर्ष कैलीफोर्निया की नापाकाउन्टी स्टेट में एक ऐसे आश्चर्य के लिए विख्यात है जिसने देववाद की यथार्थता का एक अद्भुत उदाहरण प्रस्तुत कर लाखों लोगों को विस्मित कर दिया ।

२७ अगस्त । कई दिन से बादल घुमड़ रहे थे पर वर्षा नहीं हो रही थी और तब एकाएक बूँदें गिरनी प्रारम्भ हुईं । वर्षा से बचाव के लिए लोग जल्दी घरों में छिपने लगे । तो भी कुछ लोग जो बाहर जंगल में काम कर रहे थे वे जल्दी ही घर नहीं पहुँच सके घर तो पहुँचे पर देर से भीगते हुए पहुँचे ।

बरसात का पानी सिर से पाँव तक बह रहा था, कुछ बूँदें एक चरवाहे के ओठों पर लगीं पानी, क्या था पूरा शर्बत अब उसने अपनी हथेली आगे कर दी और पूरा चुल्लू इकट्ठा कर पिया तो वह आश्चर्य में डूब गया क्योंकि वह पानी नहीं वास्तव में शर्बत था । ठीक वैसा ही जैसा कि चीनी घोल पर शर्बत बनाया जाता है ।

एक चरवाहे को ही नहीं, कई किसानों, कुछ अध्यापकों और शहर के अनेक लोगों को भी एक साथ ही अनुभव हुआ कि आज जो पानी बरस रहा है वह सामान्य वर्षा से बिल्कुल भिन्न है अर्थात् पूरे नापाकाउन्टी क्षेत्र में बरसे जल में भरी पूरी मिठास थी ऐसा नहीं कोई हल्का मीठापन रहा हो ।

बात ही बात में चर्चा सारे क्षेत्र में फैल गई । जो जहाँ था उसने वहीं वर्षा का जल पिया और पाया कि उस दिन की बरसात में मिश्री घुली हुई थी ।

इस घटना को प्रकृतिगत रहस्य माना गया, कुछ लोगों ने इसके पीछे देववाद को भी कारक रूप में स्वीकार किया । अपवाद स्वरूप होने पर भी उन घटनाओं का कोई न कोई कारण तो होना ही चाहिए । कई बार ऐसी विलक्षण आकृति प्रकृति के लोग और मनुष्योत्तर प्राणी भी मिल जाते हैं जो क्रमशः विकास वाले सिद्धान्त को चुनौती देते हैं ।

"स्टेन्टर" नामक जीव को देखना चाहिए । वह मृत्यु के समय एक क्षण तूफान से पूर्व के वातावरण की भाँति अत्यन्त शान्त-सा प्रतीत होता है दूसरे ही क्षण एक भयंकर विस्फोट के साथ अपने प्राण निकाल देता है । उस विस्फोट को सुनते हुए भय लगता है, मानो "स्टेन्टर" मृत्यु के समय भावी जीवन की कल्पना से भयभीत हो उठा हो ।

इंग्लैण्ड के विश्व-विख्यात प्लीमथ बन्दरगाह पर बने प्रसिद्ध प्रकाश स्तम्भ एडिस्टोन के पीछे भी एक ऐसी ही विलक्षण घटना जुड़ी हुई है । यूरोपियन भी जिसकी आश्चर्य के साथ चर्चा करते और यह मानते हैं कि ऐसी घटनाएँ किसी अतीन्द्रिय कारण का ही फल हो सकती हैं ।

यह प्रकाश स्तम्भ हेनरी विस्टनले नामक अंग्रेज शिल्पी ने बनाया था । इसे बनाने में उसने अपनी सारी आत्मा लगा दी थी । अपने निर्माण के प्रति उसका प्यार इसी बात से प्रकट होता है कि उसने इस प्रकाश स्तम्भ का एक छोटा मॉडल भी बनाया और उसे अपने घर में ड्राइंग रूप में सजाकर रखा ।

दिन बीतते गए एक बार की बात है कि समुद्र में भयंकर तूफान आया । तूफान ने न केवल इस बन्दरगाह को ध्वस्त कर दिया वरन् इस प्रकाश स्तम्भ को भी बर्बाद कर दिया । विस्टनले उस समय बन्दरगाह से २०० मील दूर अपने घर पर था । इधर समुद्र में तूफान आया और प्रकाश स्तम्भ गिरा उधर घर में रखा वह मॉडल भी अपने आप जमीन पर गिरकर चकनाचूर हो गया और उसी समय अपनी चारपाई पर लेटे विस्टनले ने कहा अब जब न यह कलाकृति रही और न वह तो मैं ही जीकर क्या करूँ इतना कहते-कहते उसने भी अपने प्राणों का परित्याग कर दिया । उस समय तो इन शब्दों का अर्थ वहाँ उपस्थित कोई भी व्यक्ति नहीं समझ पाया पर पीछे जब सब बातें प्रकाश में आयीं तो लोग आश्चर्यचकित रह गए कि दो जड़ और एक चेतन—तीन आत्माओं का एक साथ विसर्जन क्यों हुआ और २०० मील दूर बैठे मिस्त्री विस्टनले को पूर्वाभास अपने आप कैसे हो गया ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विलक्षण चेतना की झांकियाँ

इन सब तथ्यों से यह तो प्रकट हो ही जाता है कि इस विश्व का सुव्यवस्थित संचालन करने वाली सत्ता सर्वव्यापी है और हममें हर एक उससे सतत जुड़ा रहता है । वह चैतन्य सत्ता ही हमारी चेतना का कारण एवं आधार है । उसी विराट् अनन्त चेतना समुद्र की बूँदें हैं व्यष्टि-चेतना । पर इस तथ्य से आँखें मूंदकर मात्र जड़ प्रकृति को सृष्टि व्यापार की संचालक मानने वाले न तो अपनी ही चेतना की गहराइयों तक पहुँच पाते हैं न दूसरों की चेतना का अनुभव कर पाते हैं ।

आत्म-सत्ता के संकेतों के प्रति उदासीन मनुष्य अपने को सम्भ्रांत प्रगतिशील मानते हुए भी वस्तुतः आत्मतत्व से कितना अनभिज्ञ और आध्यात्मिक दृष्टि से कितना अपरिपक्व-अविकसित होता है, इसका प्रमाण है—यह एक घटना जो पाण्डिचेरी के अरविन्द आश्रम की संचालिका श्री यज्ञ शिखा माँ (श्री माँ) को लिखे गए एक पत्र के आधार पर लिखी जा रही है । यह पत्र मध्य प्रदेश के महान् राजनैतिक क्रान्तिकारी काशीराम का है, जो उनके एक मित्र द्वारा श्री माँ को भेजा गया था । श्री काशीराम जी अमर शहीद भगतसिंह, चन्द्रशेखर आजाद आदि के साथियों में हैं, कानपुर सूटिंग केस में उन्हें सात वर्ष की जेल हुई थी । गाड़ोदिया बैंक के डकैती केस में वे चन्द्रशेखर के साथ रहे थे ।

इस पत्र में अपने प्रिय पुत्र के निधन का सकरुण चित्रण करते हुए काशीराम ने आत्मा सम्बन्धी भारतीय दर्शन को गम्भीर आस्था के साथ स्वीकार किया है और लिखा है कि हम सांसारिक व्यापारों में इतने पदार्थवादी हो गए हैं कि आत्मा की आवाज को भी नहीं पहचान सकते । आत्मा हर क्षण हमें अपने सन्देश और प्रेरणाएँ देकर हमारा मार्गदर्शन करना चाहती है, पर सांसारिक आसक्तियों में फँसे हम साधारण मनुष्य उसकी उपेक्षा ही करते रहते हैं और मनुष्य शरीर जैसे अलभ्य अवसर को यो ही गँवाते रहते हैं ।

श्री काशीराम ने लिखा है—"सहदेव के जन्म के समय मेरे एक मित्र, जिन्होंने ज्योतिष का बहुत अध्ययन किया था, मेरे पास ही थे । उन्होंने भैया (जिस परिवार को यहाँ उद्धृत किया जा रहा है, उनके घर छोटे बच्चों को भैया के ही सम्बोधन से पुकारा जाता है) की जन्म तिथि के आधार पर बताया कि आपके घर कोई देवात्मा आयी है । इसे तो किसी बड़े सम्पन्न घर में जन्म लेना चाहिए था, पता नहीं वह कैसे आपके घर में आ गया । फिर कुछ रुककर उन्होंने कहा, जून सन् १९५५ की किसी तारीख को आपका बच्चा नहीं रहेगा ? यदि कुछ उपाय कर लोगे तो यह बना भी रह सकता है, बचा रहा तो आपके जीवन में तीव्र परिवर्तन आयेगा । सुख-सम्पत्ति का घाटा नहीं रहेगा ।"

"बातचीत के दौरान उन्होंने बताया कि ज्योतिष शास्त्र के अब ज्ञाता रहे नहीं, अब तो जहाँ-तहाँ उसका झूठा व्यवसाय चल रहा है, पर यदि सचमुच भविष्य विद्या की साधना करे तो न केवल बालक के पूर्व जन्मों का इतिहास जाना जा सकता है, वरन् भविष्य के एक-एक दिन का इतिहास भी सिनेमा के पर्दे की तरह देखा जा सकता है । उन्होंने नकली प्रचलित फलित ज्योतिष का बहुत खण्डन किया था ।"

"मेरे पूछने पर उन्होंने बताया पूर्व जन्मों की जो ईश्वर उपासक और देव वृत्ति की आत्माएँ हैं वे यदि किसी प्रकार परमात्मा को नहीं पा पातीं तो उनका दूसरा जन्म श्री, कुल, यश, साधन सम्पन्न परिवारों में जन्म होता है । यदि वे किसी साधारण परिवार में ही जन्म ले लें तो "तिमि सुख सम्पत्ति बिनहिं बुलाये । धर्मशील पहें जाहिं सुहाये ।" के अनुसार साधन सम्पत्तियाँ उसके पास अपने आप दौड़ी चली आती हैं इसी आधार पर हमने कहा है कि यदि बच्चा ६ वर्ष की आयु के बाद जीवित रहा तो आपके घर किसी बात की कमी नहीं रहेगी ।"

उस समय की यह बात आयी गई हो गई ।

"आगे की घटना फिर प्रारम्भ होती है—सहदेव बच्चा था, पर वह जीवन में एक बार भी असत्य नहीं बोला । उसने कभी पैसे भर की किसी और की वस्तु नहीं उठायी । उसके मुँह से निकली हुई कोई भी बात असत्य नहीं होती थी । एक बार काशीराम के एक पड़ौसी का मुकदमा चल रहा था । जिस दिन उन्हें फैसला सुनाया जाना था, सवेरे-सवेरे वे घर आये और पूछा "भैया ! बताओ मैं मुकदमा जीत जाऊँगा या नहीं ।" भैया ने कहा—"तुम मुकदमा हार जाओगे और तुम्हें तीन साल की सजा होगी ।" उन सज्जन ने इसे मुकदमे में बड़ी लम्बी रिश्वतें दी थीं और उन्हें छूट जाने का पक्का आश्वासन मिला था । इसीलिए बच्चे कितने संवेदनशील होते हैं, पर हम उसकी भावनाओं का आदर कहाँ करते हैं । माता-पिताओं की उपेक्षा उन्हें गलत रास्तों में भटका देती है । उन्हें गुनहगार ठहराया जाता है, पर सारी भूल अभिवावकों की होती है, जो उन्हें स्नेह और मनौवैज्ञानिक ढंग से सिखाना, समझाना भी नहीं जानते ।

रात बारह बजे बच्चे की नींद टूटी । उसने कई बार श्री काशीराम जी को पिताजी, पिताजी ! कहकर पुकारा—उस दिन दुर्भाग्य से पति-पत्नी दोनों ने भंग पी ली थी । देर तक नींद न टूटी एक पड़ौसी ने आकर जगाया—बच्चा कब से चिल्ला रहा है और आप ऐसे धुत्त सो रहे हैं । उस दिन श्री काशीराम जी ने पहली बार अनुभव किया—नशा—मनुष्य जीवन का कितना बड़ा पाप है ।

बच्चे ने बिना किसी प्रकार की शिकायत किए कहा—"पापाजी, मेरी गरदन दुःख रही है" यह कहकर उसने काशीराम जी का हाथ पकड़ कर अपने दाहिनी गरदन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पर रख कर वह स्थान बताया । श्री काशीराम जी चौंक पड़े—बच्चे का सारा शरीर गर्म तवे की भाँति जल रहा था । उन्होंने घबड़ा कर पत्नी को जगाया । दोनों उतर कर नीचे आये । पत्नी बच्चे को लेकर सो गई काशीराम जी अलग जा सोये । नशे का अभिशाप—दोनों में से किसी को भी यह ध्यान नहीं रहा कि बच्चे को बुखार है उसे डॉक्टर को दिखाना चाहिए, औषधि दिलानी चाहिए ।

प्रातःकाल सहदेव की स्थिति बहुत बिगड़ी हुई मिली तब श्री काशीराम जी डॉक्टर के लिए दौड़े । समय निकल जाता है, तब सिवाय हड़बड़ी के और क्या हो सकता है । डॉक्टर आया उसने देखकर बताया कि स्थिति ठीक नहीं है, उसे अस्पताल ले जाना चाहिए ।

नानी-नाना बुला लिए गए । बच्चा दिनभर तीव्र ज्वर में अचेत नानी की गोद में पड़ा रहा । काशीराम जी डॉक्टर के पास गए । डॉक्टर "अभी-अभी" कहकर अपने मरीजों में व्यस्त था, उसे पता था, काशीराम जी की स्थिति तंगी की है, वहाँ से दवाओं के पैसे मिलना कठिन है, इसलिए उसने शाम के सात बजा दिए और चला नहीं ।

काशीराम जी डॉक्टर के पास खड़े थे, तो उन्हें ऐसा लगा जैसे सहदेव कह रहा हो—"पिताजी अब तो लौट आओ अब मैं हमेशा के लिए जा रहा हूँ" आत्मा की आवाज पर कितनी स्पष्ट और शक्तिशाली । श्री काशीराम जी ने कहा—"डॉक्टर साहब ! धन्यवाद ! अब आपको कष्ट करने की आवश्यकता नहीं रही । सहदेव रहा नहीं ।" यह कहकर वे घर की तरफ भागे और तब पीछे-पीछे डॉक्टर साहब भी अपनी कार लेकर दौड़े पर प्राण किसी की प्रतीक्षा नहीं करते हैं ? बच्चे का शरीर ठण्डा पड़ चुका था, होठ सूख गए थे । डॉक्टर ने जल्दी-जल्दी देखा और कह दिया—"बच्चे की मृत्यु हो गयी है ।" किसे दोष दिया जाय ऐसे तो हजारों बच्चे रोज मरते रहते हैं डॉक्टर लौटा और अपने काम में लग गया ।

जल्दी नाना जी को भी थी । जीवन और मृत्यु के क्षणों में भी मनुष्य उस काल की विलक्षण घटनाओं के बारे में एक क्षण भी विचार नहीं करता सम्भव है ऐसे प्रसंग देखकर ही धर्मराज युधिष्ठर ने यक्ष के "संसार में सबसे बड़ा आश्चर्य क्या है ?" प्रश्न का उत्तर देते हुए कहा था—

अहन्यहति भूतानि गच्छन्ति यम मन्दिरम् ।
शेष स्थिरत्वमिच्छन्ति किंवाश्चार्यमतः परम् ॥

अर्थात् एक-एक करके सारा संसार मृत्यु के मुख में समाता चला जा रहा है, पर पीछे रह जाने वालों की गतिविधियाँ ऐसी रहती हैं मानो उन्हें मृत्यु तक जाना ही नहीं—हे यक्ष ! इससे बढ़कर संसार में और कोई दूसरा आश्चर्य नहीं हो सकता ।

व्यवस्थापक नाना जी ही थे । बच्चे को ले जाकर जल्दी-जल्दी गड्ढा खोदकर दफना दिया गया । श्री काशीराम जी उसका अच्छी तरह मुँह भी नहीं देख पाये ।

मित्र, परिचित और सम्बन्धी आते और श्री काशीराम जी को सान्त्वना दिलाते रहे । वह दिन ऐसे ही बीता । संध्या आयी और चली गई । बत्तियाँ जल गयीं । बच्चे की माँ की स्थिति अब भी बड़ी गम्भीर थी । पर काशीराम जी के दुःख का पारावार ही न था । स्वतन्त्रता आन्दोलन का क्रान्तिकारी जो कभी गोली और बन्दूक दागने और डकैती डालने जैसे कामों में भी नहीं घबराता था, पुत्र की ममता के आगे उसकी सारी दृढ़ता ढेर हो गई ।

रात कोई आठ बजे होंगे । काशीराम जी चारपाई पर लेटे थे । बिजली का खम्भा सामने ही था बल्ब जल गया था । उससे सड़क के उतने हिस्से में खूब प्रकाश फैल रहा था । तन्त्र वस्य (हिप्नोटाइज्ड) मस्तिष्क की भाँति काशीराम जी को एकाएक ऐसा लगा जैसे सहदेव की छाया बल्ब के नीचे प्रकाश में खड़ी है । आकृति थोड़ा आगे बढ़ी और बोली—"पिताजी ! आपने मुझे जीवित गाढ़ दिया । जल्दी करो मुझे निकाल लो । मुझे बड़ा कष्ट हो रहा है ।" रुक-रुक कर बच्चे ने तीन बार यही शब्द कहे । बच्चे की आकृति सामने आते ही पिता का हृदय छलक पड़ा । वे चिल्लाये-भैया ! मेरे भैया ! और उनके इतना कहने पर ही उनकी धर्मपत्नी का ध्यान उनकी ओर गया । उन्होंने बताया अभी भैया आया था और कह रहा था, मुझे जीवित गाढ़ दिया गया है । मुझे फावड़ा तो लाओ, मैं अभी जाकर सहदेव को खोद लाता हूँ ।

धर्मपत्नी ने कहा—तुम्हें यों ही वहम हो गया है, जब बच्चा बीमार था, तब दवा कराते नहीं बना अब जब उसकी लाश गाढ़ दी गई तो उसे उखाड़ने से क्या लाभ ? श्री काशीराम ढीले पड़ गए और फिर इन्हीं शोकपूर्ण विचारों में डूब गए ।

हल्की सी नींद लगी और भैया की आवाज फिर सुनाई दी, "पिताजी, मुझे जीवित गाढ़ दिया गया है, मुझे निकाल लो पिताजी मेरा दम घुट रहा है ।" काशीराम जी की नींद टूट गई । फिर सोये तो फिर वही आवाज । रात भर बच्चे की आत्मा पिता के आस-पास घूमती, जगाती और सन्देश देती रही, पर कुछ धर्मपत्नी के शब्द, कुछ अपना भी अविश्वास बेचारे लेटे के लेटे ही रहे । पर प्रातःकाल ४ बजे जब बच्चे को मरे २४ घंटे हो रहे थे, फिर जोर से बच्चे की आवाज सुनाई दी—"पिताजी मुझे जीवित गाढ़ दिया गया है, मुझे निकाल लो ।"

श्री काशीराम जी को नींद टूट गई । वह भागे पागलों की तरह बच्चे की कब्र के पास पहुँच गए । एक क्षीण-सी आवाज आयी—"पिताजी ! बहुत देर कर दी । मैं मर रहा हूँ, अब आने का क्या लाभ ?" काशीराम जी पागल हो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उठे । हाथ में कोई वस्तु नहीं किससे खोदते । फिर घर को भागे । फावड़ा लेकर फिर उसी स्थान की ओर दौड़े, जहाँ बच्चा गढ़ा था । अब तक घर के सब लोग भी जग चुके थे । सबने यही कहा कि काशीराम जी बच्चे की ममता में पागल हो गए हैं, यह किसी ने नहीं समझा कि आत्मा की भी कोई आवाज होती है, उसका भी कहीं कोई अस्तित्व होता है ?

काशीराम जी ने कब्र खोदकर बच्चे को निकाला तो आश्चर्यचकित रह गए । बच्चे की देह बिल्कुल गर्म थी, लाश में किसी प्रकार की खराबी नहीं थी । साँस चलने का तो कोई लक्षण दिखायी नहीं दे रहा था, पर कनपटी की नसें अब भी फड़क रही थीं और उससे यह स्पष्ट होता था कि अभी भी उसके शरीर में जीवन शेष है । अब तक घर के बहुत से लोग और दूसरे लोग भी जमा होने लगे थे । बहुत लोगों ने उसके फोटे लिए । कई लोग कई तरह की चर्चा कर रहे थे, पर यह किसी से न बना कि कोई किसी डॉक्टर को लाता ।

बच्चे का शरीर उसकी नानी को देकर काशीराम जी कई डॉक्टरों के पास गए । पर जिसने भी यह चर्चा सुनी उसी ने काशीराम जी को पागल कहकर टाल दिया । इसी बीच कोई एक तान्त्रिक भी दौड़ा-दौड़ा वहाँ आया और बच्चे को देखकर चिल्लाया-तुम लोगों ने बच्चे को जीवित मार डाला—उसका इलाज भी नहीं करते बना । उसके इतना कहते-कहते एक बार बच्चे ने खून की उल्टी की और फिर सदा के लिए इस संसार से विदा हो गया । मिट्टी जहाँ से आयी थी उसी में मिल गई ।

यह पत्र श्री माँ ने बहुत ध्यान से पढ़ा और फिर काशीराम जी के मित्र को, जिन्होंने उन तक यह पत्र पहुँचाया था—लिखा—ओह ! उसने आत्मा की आवाज को नहीं पहचाना (पिटी, ही डिड नॉट लिसन टू दि इन्ट्यूशन) । एक काशीराम क्या, हम सब भी तो पागलों की सी जिन्दगी जीते हैं । बाहरी भौतिक संसार के सुख के लिए न जाने क्या-क्या करते हैं, पर आत्मा तो उपेक्षित पड़ी है । हमें उसकी आवाज सुनने का अवकाश ही कहाँ ?

एक सुशिक्षित-सुसंस्कृत आदर्शनिष्ठ क्रान्तिकारी का यह संस्मरण आसक्त चेतना की सूक्ष्म शक्ति और उसकी प्रचण्ड सामर्थ्य का प्रमाण है । इतनी प्रचण्ड शक्ति परिस्थिति या वातावरण पर निर्भर नहीं हो सकती । वह स्वयं ही अपना विकास करने और अपनी शक्ति का उचित उपयोग करने में समर्थ है, जो लोग इस शक्ति का उपयोग करने की कला जानते हैं वे इसका कल्याणकारी प्रयोजनों के लिए उपयोग करते भी हैं ।

एक अंग्रेज शिकारी डेविड लेजली ने अपने अफ्रीकी शिकार यात्राओं के विवरणों की एक पुस्तक लिखी है "जुलुओं के बीच" उसमें एक घटना यह है कि उसके साथी हाथियों की शिकार के लिए घेराबन्दी करते हुए कहीं गायब हो गए और बहुत ढूँढ़ने पर भी उनका कहीं कुछ भी पता न चला । इस तलाश में एक 'जुलु' तान्त्रिक की सहायता ली गई । उसने उन सभी साथियों की शक्लें, वस्तुएँ, आदि का ब्यौरा बताते हुए यह भी कहा कि वे इस समय अमुक स्थान पर हैं बताये हुए स्थान पर हैं जाकर उन्हें खोज लिया गया ।

धना के भूतपूर्व राष्ट्रपति एन्क्रुमा सदैव एक तान्त्रिक की सलाह लेते थे । कीनिया के प्रधानमन्त्री जोमो केन्याटा का तान्त्रिकों पर विश्वास है । वे जब भी विदेश प्रवास पर जाते हैं, अपने साथ एक तान्त्रिक भी ले जाते हैं ।

मनुष्य शरीर की सामान्य विद्युत शक्ति से दैनिक जीवन का क्रिया-कलाप चलता है, किन्तु यह नहीं मान बैठना चाहिए कि मानवी ऊर्जा की मात्रा इतनी ही सीमित है । यदि वह किसी प्रकार बढ़ सके तो मनुष्य शरीर चलते फिरते बिजलीघर के रूप में परिणत हो सकता है । इस शक्ति को योगीजन भले कार्यों में और दुष्ट प्रकृति के लोग दुष्प्रजनों में लगाते हैं । आग का भोजन बनाने और घर जलाने में कुछ भी प्रयोग हो सकता है । यही बात साधना द्वारा उत्पन्न हुई आत्म-शक्ति के सम्बन्ध में भी है ।

फिजी द्वीप के निवासी एक त्यौहार मनाते हैं उस दिन उन्हें आग पर चलना पड़ता है । इसे अभ्यास भी कहा जा सकता है और आत्मविश्वास की शक्ति भी, कि वे लोग दहकते आग के शोलों में घंटों नाचते रहते हैं, किन्तु कभी ऐसा कोई अवसर नहीं आता कि उनके पैर जल जाते हों ।

आयरन ड्यूक ऑफ वेलिंग्टन कसास राज्य अमेरिका के जान डब्लू हार्टन ने पेट में न जाने कहाँ की आग पैदा कर ली थी कि नाश्ते में ४० पौण्ड तरबूजा खा लेने के बाद भी सोड़ा की बोतलें, टूटे शीशे, अण्डों के छिलके और केले के अनगिनत छिलके चबा जाते थे । एक बार एक इन्जीनियर द्वारा चुनौती दिए जाने पर उन्होंने भरपूर भोजन करने के बाद सीमेण्ट का पूरा कट्टा सीमेण्ट खा लिया और उसे इस स्वाद के साथ एक-एक चम्मच भक्षण किया जैसे छोटे बच्चे प्रेमपूर्वक शक्कर या मिठाई खाते हैं । उन्होंने यह भी कहा मैं कुछ और अभ्यास करूँ तो इतनी ही मात्रा में विष तक खाकर दिखा सकता हूँ ।

ये रहस्य क्यों नहीं सुलझते

होनोलूलू से ७५ मील की दूरी पर कवाई टापू है यह पश्चिमी आइलैण्ड के हवाई ग्रुप में आता है । नहिली के किनारे एक ६० फुट ऊँची और आधा मील लम्बी एक पहाड़ी है । इसमें बालू, कोरल, शेल्स तथा लावा के कण पाये जाते हैं जो अपने आप में एक आश्चर्य हैं उससे भी आश्चर्य यह है कि इस टीले से प्रायः कुत्ते के भौंकने की आवाज आया करती है । रात के अन्धकार और प्राकृतिक प्रकोप जैसे अवसरों पर यह ध्वनि बहुतायत से सुनने को मिलती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बच्चों के लिए यह क्षेत्र निषिद्ध है क्योंकि यह बोली सुनकर बच्चे डर जाते हैं । आज तक कोई भी विशेषज्ञ कोई भी वैज्ञानिक उस कारण की खोज नहीं कर पाया कि इस टीले से यह भूँकने की आवाज क्यों आती है ।

ऐसी भी नहीं है कि पास के किसी गाँव से कोई कुत्ते भौंकते हों और उनकी प्रतिध्वनि आतीं हो । इतिहास में फ्रेड पैटजेल जिसे "हाग कालर चैम्पियन" के नाम से जाना जाता है वह तो उदाहरण है जिसके बारे में प्रसिद्ध है कि वह इतना ऊँचा बोलता था कि उसकी आवाज ३ मील दूर तक मजे से सुनीं जा सकती थी, किन्तु इस टापू में ऐसा भी व्यक्ति नहीं, कोई भी जन्तु नहीं जिसकी आवाज इतनी दूर तक पहुँच सकती हो । रहस्य ज्यों का त्यों रहस्य बना हुआ है और अपने विश्लेषण की एक लम्बे समय से प्रतीक्षा कर रहा है ।

चेकोस्लोवाकिया की राजधानी प्राग के दो नवयुवकों के बारे में एक बड़ी विचित्र बात सुनने को आयी । जब ये दोनों जोर-जोर से साँस लेते हैं तो उनके शरीर के अन्दर से विचित्र प्रकार की ध्वनियाँ और संगीत आने लगता है, जो किसी समीपवर्ती रेडियो स्टेशन का ब्राडकास्ट प्रोग्राम भी हो सकता है । दोनों युवक जोर-जोर से साँस लेते समय किसी लाउडस्पीकर के सिरे का स्पर्श करते थे तो आवाज इतनी ऊँची हो जाती थी कि सुनने वालों को ऐसा लगता था, जैसे कोई रेडियो पूरा खोल दिया गया हो ।

दोनों युवक एक फैक्टरी में काम करते थे । डॉक्टरों ने उनकी पूरी शरीर परीक्षा की पर कोई कारण न बता सके । अनेक पत्रकारों ने विस्तृत छानबीन की पर निराशा ही हाथ लगी । युवकों के शरीर से संगीत ध्वनियों के प्रसारण का कोई कारण नहीं जाना जा सका ।

विश्व विख्यात पर्यटक बर्ट्रेण्ड टामस ने एक बार अरब रेगिस्तान की यात्रा की तो उन्हें कुछ ऐसे बालू के टीले मिले जो गाते थे और उनके गाने की ध्वनियाँ इतनी स्पष्ट और ऊँची होती थीं कि काफी दूर बैठकर भी उन्हें मजे से सुना जा सकता था । यात्रा-संस्मरण में टामस ने लिखा है कि यह मधुर-संगीत कई तरह के वाद्ययन्त्रों से संयुक्त होता था । कभी ढोलक की आवाज आती थी, कभी वीणा की झंकार ।

सहारा के रोने वाले टीलों की कथा भी कुछ ऐसी ही है । कैलीफोर्निया में भी बालू के कुछ ऐसे टीले हैं, जो गाते हैं । हवाई द्वीप का एक टीला कुत्ते की सी आवाज में भौंकता है । दक्षिण अफ्रीका में कुछ ऐसी रहस्यमय भीतें हैं, वह अट्टहास तक करती सुनी गई हैं । यूरोप में कुछ ऐसे समुद्र तट हैं, जहाँ यात्री मधुर संगीत ध्वनियों का रसास्वादन करते हैं । लंकाशायर के सेण्टएनी के समुद्री तट की बालू को एक विशेष प्रकार से दबाया गया तो उससे विचित्र तरह की ध्वनियाँ प्रसारित हुईं । वैज्ञानिकों ने इन सब रहस्यों का पता लगाने की चेष्टा की पर अभी तक वे इतना ही जान पाये हैं कि प्रकृति में बालू की तरह के कुछ ऐसे कण हैं, जो परस्पर संघात से प्राकृतिक ध्वनियाँ निकालते हैं ।

अहमदनगर जिले में प्रवरा नदी के तट पर सतराता सोनगाँव में बने एक शिव-मन्दिर से आने वाली संस्कृत आवाज को बहुत से लोगों ने जा-जाकर सुना । यह संगीतमय ध्वनि शिवलिंग पर डाले जाने वाले जल की निकासी के लिए बनाई गयी नाली से आती थी । पूना के ८० वर्षीय इतिहासज्ञ श्री डी. पी. पोद्दार ने भी इस विचित्र ध्वनि की पुष्टि की थी और आगे अन्वेषण कराये जाने का सुझाव दिया था ।

जैसलमेर में भी कुछ बालू के टीले पाये जाते हैं, जहाँ से कराहने आदि की कई तरह की ध्वनियाँ सुनी गई हैं । वहाँ के निवासियों का कहना है कि यह आवाजें इन टीलों में दबी प्रेतात्माओं की आवाजें हैं ।

कुछ वैज्ञानिकों ने इन रहस्यपूर्ण संगीत ध्वनियों का कारण रेडियो के शार्टवेव ट्रान्समीटरों को बताया है । उनका विश्वास है कि इस तरह के रहस्य भविष्य में और भी बढ़ सकते हैं । शिकागो में एक महिला ने पुलिस को रिपोर्ट दी है कि वह जैसे ही अपने रसोई घर का दरवाजा खोलती है, उसके विद्युत चालित चूल्हे से एक विशेष प्रकार की संगीत ध्वनि आने लगती है । दरवाजा बन्द करते ही संगीत भी बन्द हो जाता है । इसकी इन्जीनियरों ने जाँच की तो पाया कि न तो पास में कोई शार्टवेव ट्रान्समीटर है और न ही बगल के किसी रेडियो से ध्वनि पकड़ी जा रही है, क्योंकि जाँच करते समय पास-पड़ौस के तमाम सेट बन्द करा दिए गए थे ।

बिजली के यन्त्रों से इस तरह की ध्वनियाँ अधिक आती हैं, इसलिए यह रहस्य तात्विक है, ऐसा तो समझा जा रहा है पर अभी यथार्थ तथ्य पकड़ में नहीं आ रहे ।

कुओं, बालू के टीलों, समुद्र तट, बिजली के पंखों, चूल्हों ओर वाद्य-यन्त्रों से संगीत क्यों और कहाँ से फूट पड़ता है ? यह अब तक भी वैज्ञानिकों के लिए एक पहेली बना हुआ है । अब तक इस सम्बन्ध में जितनी जाँच और पड़तालें हुईं, वह सब की सब अधूरी रह गयीं । किसी एक मत पर नहीं पहुँचा जा सका कि इस तरह की संगीत ध्वनियों का अमुक कारण है ।

इस दम्भ के कारण ही उसमें स्वार्थ, अनुदारता, अहंकार, अनास्था और अश्रद्धा के बीज दिनों-दिन विकसित होते जा रहे हैं । उदाहरण के लिए यही विचार आम होते जा रहे हैं कि मनुष्य से बड़ा कोई नहीं है वह दिनों-दिन और अधिक समर्थ सशक्त होता जायेगा ।

इसे दम्भ नहीं तो और क्या कहा जायेगा कि विपुला प्रकृति के थोड़े से रहस्य हाथ लग जाने पर मनुष्य अपने आपको प्रकृति और ईश्वर से भी बड़ा समझने लगे । यह दम्भ ठीक उसी स्तर का है जैसे अनपढ़ लोगों के गाँव में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कोई साधारण पढ़ा-लिखा व्यक्ति पहुँच जाय और यह दावा करने लगे कि मैं दुनिया का सबसे बड़ा विद्वान हूँ ।

यह दावा दूसरे लोगों की दृष्टि में नितान्त हास्यास्पद ही होगा । कोई व्यक्ति उसके सामने एक जटिल सवाल कर दे और वह उस सवाल को हल न करने के कारण खिसिया उठे, उसी तरह की स्थिति मनुष्य की तब हो जाती है जब प्रकृति उसके सामने ऐसे सवाल कर देती है, जिन्हें सुलझा न सके । उस दशा में मनुष्य की अपनी क्षुद्रता और अल्प सामर्थ्य का आभास होता है ।

प्रकृति के ऐसे ही रहस्यपूर्ण सवाल जहाँ-तहाँ बिखरे पड़े हैं और उनका हल आज तक कोई भी वैज्ञानिक या बुद्धिशील मेधावी नहीं कर सका । एक ऐसा ही सवाल प्रकृति ने ब्रिटेन के कुछ क्षेत्रों में किया है । 'पत्थर' शब्द का उच्चारण करते ही मन में कठोरता, अनम्यता और अडिगता की कल्पना उभरती है । कठोर, संवेदनहीन और किसी को कष्ट कठिनाई में देखकर भी प्रभावित न होने वाले व्यक्ति को पाषाण हृदय ही कहा जाता है, परन्तु कुछ पत्थर ऐसे भी होते हैं जो कठोर होते हुए भी मुलायम और नम्य होते हैं । ब्रिटेन के कुछ क्षेत्रों के अलावा ये पत्थर भारत में हरियाणा के चरखी दादरी क्षेत्र में पाये जाते हैं ।

इन पत्थरों की नम्यता और लचीलेपन को देख कर लोगों ने इन्हें 'दिलदार पत्थर' नाम दिया है । दिल शब्द का उच्चारण करते ही लोचपन और संवेदनशीलता की कल्पना उभरती है । इसी तरह का लचीलापन और कोमलता उन दिलदार पत्थरों में पायी जाती है । इन पत्थरों का कोई रंग नहीं होता और ये सामान्य पत्थरों की तरह अपारदर्शी भी होते हैं परन्तु लचक होने के कारण इनका उपयोग किन्हीं निर्माण कार्यों में नहीं होता ।

इन पत्थरों का गठन लाखों कोशों के संघटन से होता है और ये कठोर होते हुए भी हवा पानी के प्रभाव से छलनी की तरह छिद्रदार बन जाते हैं । इनमें हवा पानी के आने-जाने के लिए पर्याप्त स्थान भी होता है । दोनों सिरों को पकड़ कर इन्हें हिलाया जाय तो ये रबर की तरह लहराने भी लगते हैं, किन्तु फिर भी ये ठोस होते हैं । इस प्रकार के लोचदार और ठोस पत्थर कैसे बनते हैं, विज्ञान अभी इसको नहीं समझ पाया है ।

अज्ञात सृष्टा का अद्भुत सृजन

न केवल गाने वाले संगीतकार पत्थर और रेत इस प्रकृति के आश्चर्य हैं अपितु और भी कई विस्मय विमुग्ध कर देने वाली घटनाएँ आये दिनों देखने पढ़ने में आती हैं । श्रीनगर से ८७ मील दूर अमरनाथ की यात्रा और वहाँ अपने आप बनने वाले शिवलिंग को देखने के लिए तो भारत के ही नहीं संसार के हजारों लोग जाते हैं ।

हिन्दू जन अपनी श्रद्धा के सुमन भगवान आशुतोष के चरणों में समर्पित करने के लिए और दूसरे विदेशी लोग प्रकृति का वह चमत्कार देखने के लिए जिसका कोई वैज्ञानिक विश्लेषण आज तक नहीं किया जा सका ।

चन्द्रमा पृथ्वी की एक ऐसी दिशा में अवस्थित है कि वह पृथ्वीवासियों को ३० दिन में एक पक्ष में क्रमशः बढ़ता हुआ पूर्णमासी के दिन पूर्ण दर्शन देने की स्थिति में आ जाता है तो दूसरी बार क्रमशः घटता हुआ अमावस्या के दिन बिल्कुल छुप जाता है । यहाँ विज्ञान का कार्य-कारण सिद्धान्त समझ में आता है । कोई क्रिया विशेष कारणों की उपस्थिति में ही सम्भव है, पर जब कोई कार्य-कारण बिना सम्भव हो तब ? विज्ञान के पास उसका कोई जवाब नहीं । वह ऐसी क्रियाएँ नहीं मानना पर सृष्टि में यह भी होता है तब मानना पड़ता है कि सृष्टि में सब कुछ स्थूल पदार्थों का ही अस्तित्व नहीं स्थूलोत्तर चेतन अस्तित्व भी है और स्थूल से कहीं अधिक सशक्त हैं ।

अमरनाथ इस बात का प्रत्यक्ष उदाहरण है । अमावस्या के दिन उस बिन्दु पर कुछ भी नहीं होता जहाँ उसके दूसरे ही दिन से चन्द्रकला की दशा के ही अनुसार एक हिम शिवलिंग का विकास प्रारम्भ हो जाता है और बढ़ते-बढ़ते यही पूर्णमासी के दिन शिवलिंग का रूप ले लेता है । अमरनाथ अत्यधिक शीत प्रदेश है । वहाँ साल भर बर्फ जमी रहती है । श्रावण के महीने वहाँ की बर्फ कम होती है मौसम भी कुछ अनुकूल हो जाता है तब हजारों दर्शनार्थी वहाँ जाकर उस अद्भुत शिवलिंग के दर्शन करते हैं । शिवलिंग के पास ही और भी मूर्तियाँ जमती हैं उनको पार्वती जी, गणेशजी और कार्तिकेयजी मानकर पूजन किया जाता है । अमरनाथ के इस विचित्र रहस्य के कारण की खोज आज तक कोई भी नहीं कर सका । जो भी उसे देखता है ईश्वर की महिमा कहकर सिर झुका लेता है ।

अमेरिका के केण्टकी राज्य में मैमथ नामक प्राकृतिक गुफा है इसे मनुष्यों ने नहीं बनाया प्रकृति ने अपने आप बनाया है, उसकी कारीगरी देखते ही बनती है । डिजायनदार खम्भे और कमरे कोई २०६ मील लम्बे क्षेत्र में फैले हुए हैं । इसी में कई तालाब और नाले भी हैं । जिसमें जल विहार भी किया जा सकता है । घनघोर अन्धकार वाली इस गुफा का आश्चर्य उसकी दीवारें हैं, अनुमानतः कई दीवारें तो इसमें पाँच मंजिल की इमारत जितनी ऊँची हैं । जो कार्य किसी इन्जीनियर से हो सकता है वह प्रकृति ने अन्तःप्रेरणा से करके यह दिखा दिया कि उसमें किसी भी योग्यतम इंजीनियर से बढ़कर ही बुद्धि और शक्ति है ।

काँगड़ा जिले के डाडा सीखा गाँव की एक खण्ड को खोदने पर एक पत्थर मिला । पत्थर किसी इमारत या पुरातत्व विभाग का दबा हुआ टुकड़ा न होकर विशुद्ध खनिज था पर जब उसे बाहर निकाला गया तो लोग आश्चर्यचकित रह गए कि उस पत्थर में एक चिड़िया का हूबहू चित्रांकित है । चोंच, पूँछ, पंजे सारे अवयव ठीक किसी चित्रकार जैसे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ही हैं । उसे देखने के लिए हजारों की भीड़ जमा रहती है । लोग समझ नहीं पा रहे जहाँ हवा पहुँचती नहीं, जहाँ खाने-पीने के नाम पर मिट्टी ही मिट्टी है, उस अन्तराल में दबी यह प्रकृति आखिर किस तरह चित्र बनाती रही । कारण कुछ भी हो, प्रकृति के इस उदाहरण से सिद्ध कर दिया कि वह इंजीनियर ही नहीं कुशल चित्रकार भी है ।

अमेरिका के पश्चिमी भाग में स्थित "येलोस्टोन नेशनल पार्क" जाने का अवसर मिले तो वहाँ का "ओल्ड फेथफुल" गोजर अवश्य देखना चाहिए । पृथ्वी के भीतर से प्राकृतिक तौर पर निकलने वाले फब्बारों को "गोजर" कहते हैं । भूगर्भ शास्त्रियों का कथन है कि पृथ्वी के गर्भ में जल राशि की छिपी तहें हैं । जो तहें ज्वालामुखी पहाड़ों के पास हैं वह कभी-कभी ज्वालामुखी अग्नि ताप के सम्पर्क में आ जाती हैं । यह तापमान उस पानी को उबालने लगता है । भाप मिश्रित होने के कारण वह धरती को फोड़कर निकल पड़ता है और पृथ्वी से बाहर गरम फब्बारे के रूप में फूट पड़ता है ।

ज्वालामुखी की आग हो अथवा धरती के भीतर का पानी, सब प्रकृति के ही विभाग हैं । इसलिए इस सकारण दृश्य को भी प्रकृति का ही खेल कहा जा सकता है पर जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है यह गोजर अपने आप में विचित्रता लिए हुए है । वह यह है कि यह लगभग एक घण्टे के अन्तर से बराबर छूटता रहता है और इस तरह यह सिद्ध करता है कि प्रकृति को समय और नियमितता का भी ज्ञान है ।

आयरलैण्ड के कार्क नगर में पाये जाने वाले "ब्लार्नी" पत्थरों के चमत्कारिक गुण की चर्चा करना अनुपयुक्त न होगा । "ब्लार्नी" शब्द का अर्थ है वाक्पटुता और जैसा कि नाम से स्पष्ट है, इस पत्थर के बारे में कहा जाता है कि इसे जो भी चूम लेता है उसमें बोलने की सामर्थ्य का चमत्कारिक विकास होता है । यह पत्थर बैनकबर्न की लड़ाई के अवसर पर, जब कि जनरल मैकार्थी ने राबर्ट ब्रूस की सहायतार्थ पाँच हजार सैनिक दिए थे, राबर्ट ब्रूस ने ये उपहार स्वरूप मैकार्थी को दिया था । मैकार्थी ने उसे अपने किले की बुर्ज पर जड़वा दिया था । आज भी हजारों पर्यटक प्रतिवर्ष कार्क शहर केवल इस पत्थर को चूमने और प्रकृति के अद्भुत प्रभाव से लाभान्वित होने के लिए जाते हैं ।

प्रकृति के रहस्य अगम हैं और उससे भी अगम रहस्यपूर्ण है चेतन संसार । प्रकृति जब तब मनुष्यों के सामने इस प्रकार की चुनौती भरे प्रश्न खड़े करती रहती है जिन्हें लाख प्रयत्न करने पर भी सुलझाया नहीं जा सकता है । यह नहीं कहा जा रहा है कि इन रहस्यों को कभी सुलझाया ही नहीं जा सकेगा । सम्भव है आगे चलकर दिलदार पत्थर और संगीतकार रेत का रहस्य सुलझा लिया जाय परन्तु फिर भी ऐसी कितनी ही विचित्रताएँ हैं जिन्हें पूरी उम्र तो क्या एक पूरा युग कल्प लगाकर भी नहीं समझा जा सकता । अभी तो यही ठीक से जान पाना सम्भव नहीं हुआ है कि प्रकृति में क्या-क्या है ? उसके सम्पूर्ण रहस्यों को समझ पाना तो दूर की बात रही ।

जब प्रकृति ही इतनी रहस्यपूर्ण और विचित्र है तो सूक्ष्म चेतना कितनी रहस्यमय होगी ? चेतन तत्व कितना गूढ़ होगा ? आत्मसत्ता और परमात्म सत्ता के रहस्यों का क्या अनुमान लगाया जा सकता है ? और मनुष्य अपनी छोटी-सी बुद्धि से उसे समझने तथा उसकी सत्ता को कपोल कल्पना सिद्ध करने का दावा किस आधार पर कर सकता है ।

अद्भुत जगत के अद्भुत रहस्य

कई बार दृश्य के अदृश्य में और अदृश्य के दृश्य में परिणत होने की घटनाएँ घटित होती रहती हैं और वे इतनी विचित्र होती हैं कि उन्हें भूत-प्रेत, देवी-देवता की करतूत, सिद्धि, चमत्कार अथवा अतीन्द्रिय चेतना की अनुभूति आदि कहकर मन समझाना पड़ता है । वास्तविकता क्या है इसका सही पता लगा सकना और उन अद्भुत घटनाओं का समाधानीकरण या विश्लेषण कर सकना प्रायः सम्भव ही नहीं हो पाता ।

इस सन्दर्भ से आये दिन जहाँ-तहाँ घटित होने वाली घटनाओं में से दो इस प्रकार हैं—इनमें से पहली घटना का वर्णन पिछले पृष्ठों में किया जा चुका है । संक्षेप में वह इस प्रकार है—

मनीला की यू. पी. आई. नामक प्रामाणिक समाचार ऐजेन्सी ने पूरी खोज-बीन के पश्चात् एक समाचार प्रकाशित कराया था कि कार्नेलियो क्लोजा नामक एक बारह वर्षीय छात्र जब तब अनायास ही अदृश्य हो जाता है । स्कूल के क्लास से गायब हो जाना और दो-दो दिन बाद वापस लौटना आरम्भ में लड़के की चकमेबाजी समझा गया, किन्तु पीछे उसके दिए गए ब्यौरे पर ध्यान देना पड़ा । वह कहता था कोई समवयस्क परी जैसी लड़की उसे खेलने के लिए पास बुलाती है और वह रुई की तरह हल्का होकर उसके साथ खेलने उड़ने लगता है ।

पुलिस ने बहुत खोजबीन की, उस पर विशेष पहरा बिठाया गया । यहाँ तक कि उसके पिता ने कमरे में बन्द रखा तो भी उसका गायब होना नहीं रुका । पीछे किसी पादरी के मन्त्रोपचार से वह संकट दूर हुआ ।

इसी तरह की एक घटना का फ्रान्सीसी वैज्ञानिक सेतारियर ने भी उल्लेख किया है । उनकी विश्वसनीयता पर किसी को उँगली उठाने का साहस नहीं हो सकता । उसने एक घटना का उल्लेख किया है—पेरिस की एक प्राचीन प्रतिमा की जब वैज्ञानिकों का एक दल परीक्षा कर रहा था तो वह मूर्ति देखते-देखते अदृश्य हो गई और उसके स्थान

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पर एक दूसरी विशालकाय मूर्ति आ विराजी जो पहली की तुलना में कहीं बड़ी थी ।

यह घटना अभी बहुत पुरानी नहीं हुई है, जिसमें टेनेसी राज्य के गालटिन नगर के एक धनी किसान डेविड लेंग के अचानक गायब हो जाने के समाचार ने दूर-दूर तक आतंक पैदा कर दिया था और उस सम्बन्ध में भारी जाँच-पड़ताल हुई थी । वही किसी जरूरी काम से घर से बाहर जा रहा था कि देखते-देखते आँखों के सामने से अदृश्य हो गया और फिर कभी नहीं लौटा । कोई ऐसी वजह भी नहीं थी जिससे वह जान-बूझकर भाग जाता । हँसता-हँसाता यह कहकर घर से निकला था कि "अभी दस मिनट में आता हूँ ।" जिस स्थान से वह गायब हुआ था उसके आस-पास पन्द्रह फुट के घेरे की घास बुरी तरह झुलस गयी थी । पुलिस तथा दूसरे खोजी सिर तोड़ प्रयत्न करने पर भी उसका कुछ पता न लगा सके ।

ऐसी घटनाओं की विवेचना करते हुए वैज्ञानिक क्षेत्रों में कई प्रकार से चर्चा होती रहती है । अब विज्ञान इस निश्चय पर पहुँच चुका है कि मनुष्य की इन्द्रिय चेतना के आधार पर विकसित बुद्धि जितना जान पाती है, दुनिया वस्तुतः उससे कहीं अधिक है । उसे न बुद्धि समझ पाती है और मानव निर्मित यन्त्र ही उसे पूरी तरह पकड़ पाते हैं । फिर भी कुछ विशेष सूक्ष्म सम्वेदना वाले यन्त्र थोड़ी बहुत जानकारी कभी-कभी देते रहते हैं और यह सिद्ध करते हैं कि प्रत्यक्ष दर्शन न केवल अधूरा वरन् भ्रामक भी है ।

हम नित्य ही सूर्य की 'धूप' को देखते हैं । पर सच्चाई यही है कि धूप कभी भी नहीं देखी जा सकती । उसके प्रभाव से प्रभावित पदार्थ विशेष स्तर पर चमकने लगते हैं, यह पदार्थों की चमक है । सूर्य की किरणें जो इस चमक का प्रधान कारण हैं हमारी दृश्य शक्ति से सर्वथा परे हैं । अन्तरिक्ष में प्रायः पूरे सौर-मण्डल को प्रकाशित एवं प्रभावित करने वाली धूप वस्तुतः सोलर स्पेक्ट्रम सौर-मण्डलीय वर्ण क्रम है । उसे ऊर्जा की तरंगों एवं स्फुरणाओं की एक सुविस्तृत पट्टी कह सकते हैं । इस पट्टी में प्रायः १० अरब प्रकार के रंग हैं । पर उनमें से हमारी आँखें लाल से लेकर बैंगनी तक एक-एक रंग सप्तक को तथा उसके सम्मिश्रणों को ही देख पाती हैं । बाकी सारे रंग हमारे लिए सर्वथा अदृश्य अपरिचित और अकल्पनीय हैं ।

अब हम कुछेक सूक्ष्म किरणों को किन्हीं विशेष यन्त्रों की सहायता से देख समझ सकने में थोड़ा-थोड़ा समर्थ होते जाते हैं । जैसे धूप में "इन्फ्रारेड" तरंगें देखी तो नहीं जातीं पर जलन के रूप में अनुभव होती हैं । इन किरणों का फोटोग्राफी में प्रयोग करके दुनिया का वास्तविक रंग विचित्र पाया गया है । घास-पात, पेड़-पौधे वस्तुतः बिल्कुल सफेद हैं, आसमान समुद्र बिल्कुल काले जबकि पत्तियाँ हरी और आसमान तथा समुद्र नीले दीखते हैं । इन किरणों की सहायता से अमेरिका ने क्यूबा में लगे रूसी प्रक्षेपास्त्रों के फोटो हवाई जहाज से खींचे थे । आश्चर्य यह कि उसमें उन जलती सिगरेटों के फोटे भी आ गए जो २४ घण्टे पहले वहाँ के कर्मचारियों ने जलाई थीं और वे तभी बुझ भी गई थीं । दृश्य जगत में पदार्थ समाप्त हो जाने पर भी वह अन्तरिक्ष में अपनी स्थिति बनाये रह सकता है यह अजूबा हमें भूत और वर्तमान के बीच खिंची हुई लक्ष्मण रेखा से आगे बढ़ा ले जाता है जो वस्तु अपने अनुभव के अनुसार समाप्त हो गयी वह भी अन्तरिक्ष में 'वर्तमान' की तरह यथावत् मौजूद है, यह कैसी विचित्रता है ।

ट्रेवर जेम्स ने इन्फ्रारेड मूवी फिल्म के लिए प्रयुक्त होने वाले एक विशेष कैमरे आई. आर. १३५ का उपयोग करके मोजावे रेगिस्तान के अन्तरिक्ष की स्थिति चित्रित की है । फिल्म में ऐसे पक्षी दिखाई पड़ते हैं जो अपनी आँखों से कभी भी दिखाई नहीं पड़ते ।

जीवाणुओं की अपनी अनोखी दुनिया है; वे मिट्टी, घास-पात, पानी और प्राणियों के शरीरों में निवास करते और अपने ढर्रे की मजेदार जिन्दगी जीते है । पर हम उनमें से कुछ को ही सूक्ष्मदर्शी यन्त्रों से देख पाते हैं । बाकी तो इतने सूक्ष्म हैं कि किसी भी यन्त्र की पकड़ में नहीं आते, किन्तु अपने क्रिया-कलाप बड़ी शान के साथ जारी रखते हैं ।

शास्त्रकार ने उसे "अणोरणीयान् महतो महीयान्" कहा है । परमाणु से भी गहरी, उसकी संचालनकर्त्री सूक्ष्मता को देखा और जाना तो नहीं जा सका पर उसका अभास पा लिया गया है । 'महतो महीयान्' की बात भी ऐसी ही है । विशालकाय ग्रहपिण्ड और नीहारिका समुच्चय अत्यन्त विशाल है इतना विशाल जिसकी तुलना में अपना सौर-मण्डल बाल बराबर भी नहीं है । फिर भी वह सब कुछ अधिक दूरी होने के कारण दीखता नहीं । रेडियो, दूरबीनें जिन आकाशीय पिण्डों का परिचय देती हैं वह आँखों से देखे जा सकने वाले सितारों की तुलना में अत्यधिक विस्तृत हैं । आश्चर्य यह है कि यह रेडियो, दूरबीनें भी पूरी धोखेबाज हैं वे अब से हजारों लाखों वर्ष पुरानी उस स्थिति का दर्शन कराती हैं जो सम्भवतः अब आमूलचूल ही बदल गई होंगी सम्भव है वे तारे बूढ़े होकर मर गए हों जो हमारी रेडियो, दूरबीनों पर जगमगाते दीखते हैं ।

अल्ट्रा वायलेट फोटोग्राफी से ऐसे प्राणियों के अस्तित्व का पता चलता है जो हमारी समझ, परख और प्रामाणिकता के लिए काम में लायी जाने वाली सभी कसौटियों से ऊपर हैं । इन प्राणियों को 'प्रेत मानव' अथवा 'प्रेत प्राणी' कहा जाय तो कुछ अत्युक्त न होगी । अब हमारे परिवार में यह अदृश्य प्राणधारी में भी सम्मिलित होने आ रहे हैं । सूक्ष्म जीवाणु की तरह उनकी हरकतें और हलचलें भी अपने अनुभव की सीमा में आ जायेंगी ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हर्वर्ट गोल्डस्टीन ने अपने शोध निबन्ध "प्रापेगेशन ऑफ शार्ट रेडियोवेव्स" में यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया है कि वायुमण्डल में संव्याप्त अपवर्तनांक प्रवणता के पर्दे से पीछे अदृश्य प्राणियों की दुनिया है । वह दुनिया हमारे साथ जुड़ी हुई है और दृश्यमान सहचरों से कम प्रभावित नहीं करती । वर्तमान सूक्ष्मदर्शी साधन अपर्याप्त हैं तो हमें निराश न होकर ऐसे साधन विकसित करने चाहिए जो इस अति महत्त्वपूर्ण अदृश्य संसार के साथ हमारी अनुभव चेतना का सम्बन्ध जोड़ सकें ।

साधारणतया हमारी जानकारी पदार्थ के तीन आयामों तक सीमित है लम्बाई-चौड़ाई और ऊँचाई । अब इसमें "काल" को चौथे आयाम के रूप में सम्मिलित कर लिया गया है । आइन्स्टीन ने अपने सापेक्षवाद सिद्धान्त की विवेचना करते हुए यह समझाने का प्रयत्न किया है कि यह भौतिक संसार वस्तुतः "संयुक्त, चतुर्विस्तारीय दिक् काल जगत्" है । वे देश और काल की वर्तमान मान्यताओं को एक प्रकार से सापेक्ष और दूसरे प्रकार से अपूर्ण अवास्तविक मानते हैं ।

कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय के डॉ. राबर्ट सिरगी अपने दल के साथ ऐसे उपकरण बनाने में संलग्न हैं जिनसे पदार्थ के चौथे आयाम को समझ सकना सम्भव हो सके । वे कहते हैं जो हम जानते और देखते हैं उनसे आगे की गतियाँ और दिशाएँ मौजूद हैं, हम केवल तीन आयामों की परिधि में आने वाले पदार्थों का ही अनुभव कर पाते हैं, जबकि इससे आगे भी एक विचित्र दुनिया मौजूद है । उस विचित्रता को समझे बिना हमारी वर्तमान जानकारियाँ बाल बुद्धि स्तर की ही बनी रहेंगी ।

दृश्य का अदृश्य बन जाना और अदृश्य का दिखाई देने लगना मोटी बुद्धि से बुद्धि भ्रम अथवा कोई देवी चमत्कार ही कहा जा सकता है । इतना होते हुए भी एक ऐसे सूक्ष्म जगत का अस्तित्व मौजूद है जो अपने इस ज्ञात जगत की तुलना में न केवल अधिक विस्तृत वरन् अधिक शक्तिशाली भी है । भूतकाल में उसे सूक्ष्म जगत एवं दिव्य-लोक कहा जाता रहा है । उसमें पदार्थों का ही नहीं प्राणियों का भी अस्तित्व मौजूद है । वे प्राणी मनुष्य की तुलना में बहुत छोटे भी हो सकते हैं और बहुत बड़े भी । आवश्यकता एवं परिस्थितियाँ उनकी भी हो सकती हैं और जिस प्रकार हम उस सूक्ष्म जगत के साथ सम्बन्ध जोड़ने को उत्सुक हैं उसी प्रकार वे भी हमारे सहचरत्व के लिए इच्छुक हो सकती हैं । प्राणियों और पदार्थ का लुप्त एवं प्रकट होते रहना इन स्थूल और सूक्ष्म जगत के बीच होते रहने वाले आदान-प्रदान का एक प्रमाण हो सकता है ।

सुप्रसिद्ध विज्ञान कथा लेखक एच. जी. वेल्स ने अपनी एक पुस्तक "दि इनविजिविल मैन" अदृश्य मानव में उन सम्भावनाओं पर प्रकाश डाला है, जिनके अनुसार कोई दृश्य पदार्थ या प्राणी अदृश्य हो सकता है और अदृश्य वस्तुएँ दृष्टिगोचर होने लग सकती हैं । इस विज्ञान का उन्होंने अपवर्तनांक—रिफ्रैक्टिव इन्डेक्स नाम देकर उसके स्वरूप एवं क्षेत्र का विस्तृत वर्णन किया है ।

हम ज्ञात को ही पर्याप्त न मानें । प्रत्यक्ष को ही सब कुछ न कहें । प्रस्तुत मस्तिष्कीय और यान्त्रिक साधनों को सीमित मानकर न चलें और जो अविज्ञात है उसकी शोध में बिना किसी पूर्वाग्रह के लगे रहें तो इस अणोरणीयान महतो महीयान् जगत के वे रहस्य जानने की दिशा में अग्रसर हो सकते हैं जो अभी तक नहीं जाने जा सके ।

कोई भी अकेला नहीं

कई बार ऐसी घटनायें देखने को मिलती हैं कि उनके कारणों को लेकर बुद्धि चकरा जाती है । 'भूमध्य सागर' में स्थित ४५ मील लम्बा और बीस मील चौड़ा एक द्वीप है मार्टीनिक, यह द्वीप ऊँचे पर्वतों और सघन वनों से घिरा हुआ है । उनमें से एक सबसे ऊँचे पर्वत शिखर माउण्ट पेली के उत्तरी सिरे पर एक ज्वालामुखी ला-मांतेन बहुत दिनों से अपना अस्तित्व बनाये हुए है । इस द्वीप का प्रमुख नगर है—सेंट पियरे ।

यह ज्वालामुखी अठारहवीं सदी में प्रकट हुआ था । सन् १८५१ के छोटे विस्फोट की भी लोगों को याद थी । उसने गर्जन तर्जन ही दिखाया था, कभी कोई बड़ी हानि नहीं पहुँचाई थी । पर सन् १९०२ में तो वह ऐसा मचला कि एक प्रकार से उस क्षेत्र के लिए प्रलय ही उपस्थित कर दी ।

२३ अप्रैल को अचानक ला-मांतेन सक्रिय हुआ । माउण्ट पेली के पश्चिमी और दक्षिणी ढलान पर राख और अंगारे बरसने शुरू हुए । भूकम्प जैसे झटके लगे । दो दिन बाद ज्वालामुखी उग्र हो उठा । चट्टानें लाल पड़ गयीं । आग का भयंकर गुब्बारा फूट पड़ा । राख की दूर-दूर तक वर्षा होने लगी । सेन्ट पियरे नगर के निवासी गर्मी से अकुलाने लगे । पर वे सोचते यही रहे कि यह कोई सामयिक घटना है । दो चार दिन में सब कुछ अपने आप ठीक हो जायेगा ।

दो सप्ताह तक ऐसी ही गड़बड़ चलती रही । ७ मई को प्रभात होने भी न पाया था कि—माउण्ट पेली ने भयंकर रूप से गर्जन आरम्भ कर दिया और ज्वालामुखी से रंग-बिरंगी ज्योति किरणें चमकने लगीं । समुद्र में भारी तूफान आया । चट्टानें और मिट्टी उछल-उछल कर चारों ओर बिखर गयीं । समुद्र तट पर हजारों टन मछलियों की लाशें जमा हो गयीं ।

इस स्थिति में नागरिक चिन्तित तो थे पर यह किसी को आशा न थी कि स्थिति कुछ असाधारण या अप्रत्याशित हो उठेगी । देहात से ग्रामीण जनता भाग कर शहर को आ रही थी, उसका ख्याल था कि शहर अधिक सुरक्षित होते हैं । स्थिति बिगड़ती देखकर तत्कालीन गवर्नर मौट्टेत ने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्थिति का अध्ययन करने के लिए एक समिति नियुक्त की उसने भी यह निष्कर्ष निकाला कि बड़े खतरे जैसी कोई बात नहीं है ।

सवेरे के आठ बजे । ज्वालामुखी का मुँह फटा । घनी काली भाप तोप कर्ण भेदी ध्वनि के साथ निकली और आकाश में दूर-दूर तक छा गई । काली छतरी की तरह घोर अन्धकार उत्पन्न करती हुई वह गिलगिली भाप तेजी से उठी और उसने एक प्रकार से अपनी चादर में सारा ही क्षेत्र ढक लिया । लोग हक्का-बक्का हो गए । क्या हो रहा है, क्या होने वाला है, क्या किया जाय, किसी की समझ में कुछ भी नहीं आ रहा था ।

उबलती हुई भाप ने जल प्रलय जैसा रूप बनाया और वह इस तरह दौड़ी मानो नगर को निगल जाना ही उसका लक्ष्य हो । आगे-आगे धूल उड़ रही थी, पीछे धुआँ उमड़ रहा था । उससे आग की लपटें और रंग-बिरंगी बिजली जैसी चमक उठ रही थी । उसके पीछे भाप का तूफान लहराता चला आ रहा था । देखते-देखते उसने सारे नगर को अपनी कुण्डली में कस लिया । भट्टी में पड़े हुए लकड़ी के टुकड़े की तरह सारा नगर अपनी शोभा सुषमा को खोकर अग्निमय हो गया ।

तूफान की भयानकता रोमांचकारी थी । बन्दरगाह पर खड़े जहाज उलट कर डूब गए । जो डूबने से बच गए उन्होंने अपने लंगर खोल दिए और लड़खड़ाते हुए खुले समुद्र में किसी भी ओर भागे, जो तट से दूर थे उन्होंने अपने कदम पीछे मोड़ लिए ।

विस्फोट इतना तीव्र और इतना आकस्मिक था कि उस द्वीप के निवासी कई घण्टों तक यह समझ ही न सके कि कहाँ क्या हो रहा है ? गवर्नर ने गश्ती जहाज की स्थिति का पता लगाने भेजा तो जलते हुए सेन्ट पियरे तक पहुँच सकना उसके लिए भी सम्भव न हो सका । शक्तिशाली दूरबीनों से सिर्फ इतना देखा जा सका कि नगर एक चिता की तरह जल कर बुझने की स्थिति में मुरझाता जा रहा था । राडडम जहाज का कप्तान अपने जहाज को भगाकर पड़ौस के द्वीप सेन्ट लूशिया के कैस्ट्रीज बन्दरगाह के लिए ले जाने लगा तो गर्मी से उसके हाथों का माँस लटक पड़ा । बाईस नाविक तो डेक पर ही झुलस कर मर गए ।

तूफान में जब हल्कापन आया और स्थिति का लेखा-जोखा लिया गया तो पता चला कि तीस हजार की आबादी में तीन व्यक्ति जले-भुने सिसकते मिले जो कुछ ही घण्टे बाद मर गए ।

इस समस्त नगर में एक ही व्यक्ति जीवित बचा । वह था जेल में कैद पच्चीस वर्षीय आगस्त सिल्वेयरिस । उसे यातना पूर्ण कैद की सजा मिली थी और जमीन के नीचे एक कोठरी में बन्द करके रखा गया था । इस कोठरी में हवा के लिए एक छोटा-सा छेद दरवाजे के पास था । तीन दिन बाद जब नगर की खोज खबर लेना सम्भव हुआ तो जेलखाने के खण्डहरों में से किसी के कराहने की आवाज आयी । मलवा खोद कर निकाला गया तो 'आगस्त' जीवित बचा हुआ पाया गया ।

विस्फोट ने सेन्ट पियरे नगर को पूरी तरह निगल लिया । इसके आगे वाले क्षेत्र में भी जीवित प्राणी कोई नहीं बचा पर वहाँ तक प्रवाह हल्का हो जाने से सम्पत्ति का हानि उतनी नहीं हुई । इसके बाद में वृक्ष वनस्पति जल गए पर मनुष्यों ने भाग कर अपनी जान बचा ली । मृत्यु का प्रवाह कुछ ऐसा विचित्र बहा कि जहाँ एक सीमा रेखा का सब कुछ नष्ट हो गया वहाँ उसके पास की सीमा रेखा में किसी का कुछ भी नहीं बिगड़ा । अनुमान किया जाता है कि उस विस्फोट में कम से कम २००० डिग्री फारेनहाइट गर्मी थी । भाप और धुएँ के साथ उतने घातक और विषैले पदार्थ भरे थे कि उनकी चपेट में जो भी आया बच न सका । विस्फोट की गैस ने उस क्षेत्र के अधिकांश लोगों के स्वास्थ्य पर घातक प्रभाव डाला और वे बहुत दिनों तक बीमारियों के ग्रास बने कराहते रहे ।

आगस्त का जीवन रक्षा एक संयोग भी कहा जाता है, परन्तु तथ्य से इन्कार नहीं किया जा सकता कि मनुष्य अकेला नहीं, उसके साथ उसका भगवान भी है, जिसे वह बचाता है उसे इस तरह बचा लेता है जैसे इस प्रलयंकारी तूफान में समस्त नगर जल जाने पर भी सेंट पियरे का जसींदोज कैदी बच गया । मनुष्य ने तो उसे मारने में कोई कमी नहीं रखी थी । जिस स्थिति में उसे कैद कर रखा गया था, उसमें वह बहुत दिन तक जीवित नहीं रह सकता था पर जब भगवान को बचाना हुआ तो इस तरह बच गया जिसे देखकर भौतिक नियमों को ही सब कुछ मानने वालों को चकित रह जाना पड़ता है ।

प्रह्लाद का जीवन-क्रम ऐसा ही है । उसका पिता हिरण्यकश्यप और उसकी बुआ होलिका उसे मार डालने के लिए हर चन्द प्रयत्न करते रहे पर बचाने वाले ने बताया कि मनुष्य से भगवान की शक्ति अधिक है । मारने वाला सब कुछ नहीं—बचाने वाला भी 'कुछ' है । कुम्हार के धधकते हुए अवे में जब बिल्ली के बच्चे जीवित निकले तो प्रह्लाद को विश्वास हो गया कि भौतिक नियमों से ऊपर भी कोई दिव्य नियम व्यवस्था मौजूद है और यदि यह सहायक हो तो बड़ी से बड़ी आपत्तियों का शमन हो सकता है ।

सन्त कबीर ने इस सत्य को अधिक गहराई के साथ जाना था, और उन्होंने हर किसी से कहा था, संसार के विरोध अवरोध की चिन्ता न करके उस परम शक्तिशाली को पकड़ा जाय, जिसके अनुकूल रहने पर संसार की समस्त प्रतिकूलताएँ निरस्त हो जाती हैं । कबीर का यह दोहा याद रखने ही योग्य है—

जाको राखै साइयां, मार सकिहै न कोय ।
बाल न बाँका कर सके जो जग बैरी होय ॥

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सेन्ट पियरे की उस रोमांचकारी दुर्घटना में जहाँ सब कुछ दुःखदायक दुर्घटना भरा चित्रण ही है वहाँ एक प्रकाश की किरण भी विद्यमान है कि कोई समर्थ सत्ता ऐसी भी है जो यदि चाहे तो घोर विभीषिकाओं के प्रस्तुत रहते किसी को उबार सकती है ।

विज्ञान जगत में इसी तरह वर्ष १९७० की एक घटना को अमेरिकावासी कभी भी भुला नहीं सकते । अपोलो-१३ नाम का राकेट अग्निकाण्ड से ग्रसित हो चुका था जिसमें बैठे सभी अन्तरिक्ष यात्रियों की जान जोखिम में पड़ गई । पृथ्वी से २ लाख पाँच हजार मील की ऊँचाई पर जो कुछ घटित हो रहा है इसकी सूचना 'ग्राउन्ड कन्ट्रौल तकनीकी' के माध्यम से प्राप्त की जा सकी । देश के लगभग सभी नागरिकों ने जब इस दुःखद समाचार को रेडियो और टेलीविजन पर सुना तो आकुल-व्याकुल हो उठे । ऐसी विपन्न एवं विषम परिस्थितियों में मानवी प्रयास तो सफल होते नहीं दिखते, ईश्वरीय सत्ता ही इस आसन्न संकट को टाल सकती है । ऐसा सोच समझ कर करोड़ों लोगों ने ईश्वर से प्रार्थना करना आरम्भ कर दिया । फलतः जेम्स ए. लीवेल, फैड डब्लू. हैस और जौन एल. स्टीवर्ट जैसे अन्तरिक्ष अभियानी रॉकेट से निकल कर प्रशान्त महासागर की ओर बढ़े और एक मालवाहक जलयान पर आ टिके जहाँ से उन्हें हैलीकौप्टर की सहायता से बाहर लाया जा सका । उपस्थित जन समुदाय ने देखा कि तीनों ही साहसी युवक ईश्वर प्रार्थना की मुद्रा में थे । उनके हाथ जुड़े और सिर नीचे को झुका था । 'टाइम' पत्रिका के मुख पृष्ठ पर उनका चित्र इसी स्थिति में देखने को मिला । उन्होंने अपनी सुरक्षित यात्रा का एक मात्र कारण दैवी सहायता को ही बताया । अमेरिका के राष्ट्रपति ने ईश्वरीय अनुकम्पा के उपलक्ष में एक विशेष प्रार्थना सभा बुलाई और दैवी सत्ता के प्रति आस्थावान होने के लिए इस घटना का हवाला देकर सभी राष्ट्रवासियों को प्रेरित भी किया ।

ह्यस्टन अन्तरिक्ष केन्द्र के विशेषज्ञों का कहना है कि तीनों ही यात्रियों ने अपने साहस को नहीं खोया और बिना किसी कृत्रिम इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों की सहायता लिए ईश्वर स्मरण करते हुए रॉकेट की खिड़कियों से पैराशूट लेकर कूद पड़े और अपने को पृथ्वी तक पहुँचाने में सफल हो सके । सच ही है मारने वाले से बचाने वाला बड़ा है ।

अतः हम ऐसी महान् सत्ता का मजबूती से पल्ला पकड़ें तो उसमें अपना ही हित साधन है । वैसे भी कठिनाइयों से डरकर यदि हिम्मत हार बैठा जाय तो बात दूसरी है । अन्यथा प्राणधारी की अदम्य जीवनेच्छा इतनी प्रबल है कि वह बुरी से बुरी परिस्थितियों में जीवित ही नहीं फलता-फूलता भी रह सकता है ।

प्रत्यक्ष से भी विचित्र अदृश्य संसार

पुनर्जन्म के सम्बन्ध में यों तो अनेकों घटनाएँ सामने आती हैं । अखबारों में छपती रहती हैं । पूर्वजन्म की स्मृति आना और बोलना सीखते ही पिछले जन्म के घर, पत्नी-बच्चों, रिश्तेदारों के सम्बन्ध में बताने, उन्हें पहचानने और कोई राज की बात जिसे अकेला वही व्यक्ति या एकाध अन्य सदस्य और जानते थे बताने की घटनाएँ इतनी आम हो चुकी हैं कि कोई नयी चर्चा उठते ही उसी जैसी दो-चार और घटनाओं की भी चर्चा होने लगती है ।

इन घटनाओं के सम्बन्ध में जो विवरण प्राप्त हुए उनके आधार पर जाँच-पड़ताल से जो तथ्य सामने आये उन्होंने पुनर्जन्म और परलोक के भारतीय सिद्धान्त की पुष्टि करते हुए यह भी प्रमाणित कर दिया है कि मरने के बाद शरीर तो छूट जाता है पर मनुष्य की चेतना जीवित ही रहती है लेकिन अभी कुछ समय पूर्व विश्व-विख्यात ब्रिटिश परा मनोवैज्ञानिक जे. बर्नार्ड हटन ने कुछ ऐसी घटनाओं पर शोध किया जो यह सिद्ध करती हैं कि व्यक्ति ही नहीं घटनाओं का भी पुनर्जन्म होता है । इस विषय को इन्होंने अपनी पुस्तक 'द अदर साइड ऑफ रियेलिटी' (यथार्थ का दूसरा पक्ष) में प्रमाणों और तथ्यों के आधार पर प्रतिपादित किया है ।

जे. बर्नार्ड हटन द्वारा उल्लिखित जो घटना सर्वाधिक चर्चित है उसके कई साक्षी आज भी जीवित हैं जिन्होंने उसे देखा है हटन की भाँति । हटन ने इस घटना का साक्षात् किया था सन् १९२३ में । उस समय वे बच्चे ही थे । उनके पिता किसी सरकारी विभाग में अच्छे पद पर थे और समय-समय पर पूरा परिवार छुट्टियों का आनन्द लेने के लिए किसी एकान्त स्थल पर जाया करता था । उस वर्ष हटन परिवार सिल्ट द्वीप पर अपनी छुट्टियाँ मना रहा था । यही द्वीप चारों ओर से समुद्र से घिरा तथा सुन्दर रम्य प्रकृति की गोदी में बना हुआ है ।

हटन के साथ उनके एक मित्र जो सेना में कैप्टन थे—शुलकौझ भी द्वीप पर छुट्टियाँ मनाने के लिए सपरिवार आये हुए थे । दोनों मित्रों ने पास-पास रहने का फैसला किया और एक ही स्थान पर बँगले किराये पर लिए । अभी छुट्टियाँ बीत भी न पायी थीं कि हटन को किसी आवश्यक कार्य से बाहर जाना पड़ा । श्रीमती हटन और उनके बच्चों के साथ कैप्टिन शुलकौझ का परिवार भी श्री हटन को विदा करने स्टेशन तक गया । विदा कर लौटते हुए सबने पूरे द्वीप का घूमते हुए चक्कर लगा कर अपने बंगलों पर वापस लौटने का निश्चय किया । इस प्रकार उन्हें छोटे से सिल्टद्वीप की चार मील परिधि भर का चक्कर लगाना पड़ता । अतएव वे स्टेशन से बँगलों के लिए पैदल ही रवाना हुए ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सब घूमते हुए चले जा रहे थे । घूमते-घूमते के एक ऐसे स्थान पर जा रुके जहाँ खाड़ी-सी बन गयी थी । रुकने का कारण था खाड़ी में उठने वाला एक तेज ज्वार और उसमें फँसी मल्लाहों की एक नाव, जिसमें करीब १५-२० मछुआरे बैठे थे और सबके चेहरों पर मौत का भय छाया हुआ था । इस समय देख कर आश्चर्य इस बात पर अधिक होता था कि जिस क्षेत्र में ज्वार के बीच नाव फँसी हुई थी वहाँ तो प्रचण्ड लहरें उठ रही थीं जैसे सागर किश्ती पर ही अपना सारा क्रोध उतारने के लिए बेताब हो रहा हो पर उस क्षेत्र के आस-पास का समुद्र बिल्कुल शान्त था ।

थोड़ी देर में कुछ मछुआरे पास के गाँव से आ गए और उन्होंने तोप द्वारा लाइफ लाइन फैंकी ताकि उसे पकड़ कर फँसे हुए मछुआरे अपनी जीवन रक्षा कर लें, लेकिन वह लाइफ लाइन नाव तक ही नहीं पहुँची । दुबारा लाइफ लाइन फेंकी गयी । इस बार पूरी सतर्कता रखी गयी थी । इसलिए लाइफ लाइन ठीक नाव तक पहुँच गयी । नाव में बैठे मछुआरे उसे पकड़ें-पकड़ें इतने में ही एक लहर ऊँची उठी और उसने लाइफ लाइन को लपक लिया ।

तोप की आवाज सुन कर पास की बस्ती से बहुत सारे लोग जिनमें स्त्रियाँ और बच्चे भी थे समुद्र के तट पर आ गए । अच्छी खासी भीड़ इकट्ठी हो गयी । कुछ स्त्रियाँ विलाप भी करने लगीं । सम्भवतः उस नाव में उनके पति, पुत्र या सम्बन्धी होंगे । दो बार लाइफ लाइन फेंकने की कोशिश बेकार गयी तो तोप दागने वाले मछुआरों ने किनारे से एक नाव उतारी । जिसमें चार-पाँच हृष्ट-पुष्ट और ताकतवर व्यक्ति बैठे थे वे सफलतापूर्वक नाव को खेते हुए उस ओर ले गए जहाँ कि उनके साथी फँसे हुए थे ।

लहरों से संघर्ष करते हुए वे अपने साथियों की ओर बढ़ने लगे । किनारे से रवाना हुई नाव उन तक पहुँच ही गयी थी । तट पर खड़े कुछ मछुआरों ने फिर लाइफ लाइन फेंकी पर वह भी लहरों की चपेट में आ गयी । जीवन और मृत्यु के इस संघर्ष को देखकर किनारे पर खड़े व्यक्ति परमात्मा से दया की प्रार्थना कर रहे थे । लाइफ बोट को सहारा देकर दुर्घटना में फँसे मछुआरों को किनारे पर लाने की कोशिश की ही जा रही थी कि एक तेज लहर आयी जिसने आकाश की ऊँचाइयों को छूते हुए दोनों नावों और उनके सवार मछुआरों को सागर की तलहटी में पहुँचा दिया ।

इस दृश्य के समय बड़ा कारुणिक वातावरण बन गया था । स्वयं शुलकौझ, उनके साथी, बच्चों व अपनी तथा अपने मित्र की पत्नियों को कुछ समझ नहीं आ रहा था । एक-दूसरे से आश्चर्य व्यक्त करते हुए उन्होंने आस-पास देखा तो न कोई भीड़ थी और न ही सागर में तूफान आया हुआ था । एकदम शान्त समुद्री भी जैसे उस घटना को झुठला रहा था ।

घटना अविश्वसनीय लगती है परन्तु है सच । यह बात तब प्रमाणित हुई जब कैप्टेन ने अपने घर जाकर द्वीप के पादरी से इसकी चर्चा की । पादरी ने और भी आश्चर्य में डाल दिया कि अब से पचास वर्ष पूर्व जब वह बच्चा ही था सचमुच ही ऐसी घटना घट चुकी है । दिन यही था जिस दिन शुलकौझ ने यह दृश्य देखा था । यही नहीं पादरी ने उन लोगों के बयान भी दिखाये जो पहले इस घटना की पुनरावृत्ति की देख चुके थे । कैप्टेन शुलकौझ ने उन बयानों को पढ़ा तो अनुभव हुआ कि जैसे अभी-अभी कोई व्यक्ति यह घटना देखकर आया है और अपने संस्मरण लिख रहा है ।

उस समय बच्चे रहे बर्नार्ड-हटन इस अविश्वसनीय सच्चाई से इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने इसी दिशा में खोज करना अपना लक्ष्य बना लिया और परा मनोविज्ञान के क्षेत्र में एक से एक अद्भुत प्रयोग किए तथा उनके निष्कर्षों से लोगों को अचम्भित कर दिया क्योंकि आज का बुद्धिजीवी वर्ग इस प्रकार की बातों को बिना कुछ समझने का प्रयत्न किए तत्काल कपोल कल्पना या गप्प करार दे देता है ।

पश्चिमी देशों में मरणोत्तर जीवन की स्थिति पर शोध और प्रयोग के बड़े कार्य होने लगे हैं । सर ओलीवर लाज, सर विलियम बारेट, एफ. डब्ल्यू. एच. मारेस, रिचार्ड होडसन, मिसेज सिडविक, सर आर्थरकानन डायल आदि परा मनोवैज्ञानिकों ने इस दिशा में गम्भीर खोजें की हैं और प्रामाणिक तथा तथ्यपूर्ण जानकारियाँ संग्रहीत कर अध्यात्म को भी विज्ञान की कसौटी पर कसा है ।

उक्त प्रकार की घटना के ही समान प्रख्यात परा मनोवैज्ञानिक ए. पी. सीनेट ने भी ऐसा ही एक चौंका देने वाला अनुभव लिखा है । सीनेट एक बार झील के किनारे चहलकदमी कर रहे थे । यकायक उन्हें लगा कि कोई युवती आत्मघात के उद्देश्य से झील में कूदने जा रही है । उन्होंने युवती को देखा और उसे पकड़ने के लिए दौड़े, ताकि उसे आत्मघात से बचाया जा सके, पर इसके पहले ही लड़की पानी में कूद चुकी थी । छपाक् की आवाज हुई और सीनेट लोगों को उसे निकालने के लिए पुकारने लगे । लोग आये, उन्होंने झील में लड़की का मूर्छित शरीर या शव निकालने के लिए काफी देर तक डुबकियाँ लगायीं । बाद में पुलिस को रिपोर्ट की गई, पर यह जानकर आश्चर्य हुआ कि प्रति वर्ष इसी दिन और इसी समय आत्म-हत्या की रिपोर्ट दर्ज करायी जाती है । पिछली पन्द्रह-सोलह साल की फाइलों में एक-सी रिपोर्ट, आत्म-हन्ता लड़की का एक-सा हुलिया और एक से कपड़े बताये जाते हैं ।

सीनेट ने यह क्रम कब से शुरू होता है—यह बताने का आग्रह किया तो पता चला कि सोलह साल पहले इसी हुलिया की लड़की ने आत्म-हत्या की थी । उसके परिवार वालों ने इसके शव को ढूँढ़ा और निकाला था । इस प्रकार

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

घटनाओं की पुनरावृत्ति का कारण बताते हुए, 'टेकनीक्स ऑफ एस्ट्रल प्रोजैक्शन' 'सुप्रीम ऐडवेंचर' तथा 'मोरल एस्ट्रल प्रोजक्शन' जैसी विश्व विख्यात पुस्तकों के लेखक रावर्ट कूकल ने लिखा है कि—मृत्यु चाहे दुर्घटना में हुई हो या आत्मघात द्वारा । मरने वालों का सूक्ष्म शरीर (एस्ट्रल-बॉडी) तुरन्त यह अनुभव करने में असमर्थ होता है कि वह मर रहा है । किसी तालाब में ढेला फेंकने के बाद जिस प्रकार बहुत देर तक तरंगें उठती रहती हैं । उसी प्रकार मृतक व्यक्ति का सूक्ष्म शरीर भी उन घटनाओं की मूर्च्छा की दशा में पुनरावृत्ति करता है । ए. पी. सीनेट द्वारा उल्लखित इस घटना का यही कारण है ।

रावर्ट कूकल ने अपनी पुस्तकों में ऐसे बहुत से तथ्य संग्रहीत किए हैं जो उन्होंने मृतात्माओं से प्रत्यक्ष वार्तालाप, सम्पर्क, खोज-बीन और प्रयोगों के आधार पर खोजे हैं । उनके निष्कर्ष भारतीय तत्वज्ञान को ही पुष्ट करते हैं जो यह मानता है कि मृत्यु केवल स्थूल शरीर की होती है । प्राणी के साथ उसका सूक्ष्म शरीर, इच्छाएँ, वासनाएँ, आकांक्षाएँ साथ ही जुड़ी रहती हैं जो उसे पारलौकिक जीवन में ही नहीं दूसरे जन्मों में भी नियन्त्रित और प्रभावित करती हैं । मोह और अतृप्त वासनाओं के सम्बन्ध में कूकल ने लिखा है—"जो लोग मोह के वशीभूत होते हैं तथा जिनके जीवन में अतृप्त वासनाएँ घर किए रहती हैं उनकी एस्ट्रल बॉडी पूर्णरूप से ईथर से मुक्त नहीं होती । उनके लिए सारा वातावरण धूमिल अन्धकार पूर्ण और भयावह रहता है ।" इसे ही भारतीय धर्मशास्त्रों ने अपनी अलंकारिक भाषा में नरक कहा है ।

अन्त में जे. वर्नार्ड हटन द्वारा देखी गई एक अनोखी घटना के पुनर्जन्म का भी स्पष्टीकरण किया है जिसका कारण बताते हुए उन्होंने लिखा है—"भय और आसक्ति समान रूप से मनुष्य के सूक्ष्म शरीर को प्रभावित करते हैं । आकस्मिक दुर्घटनाओं में तो इसलिए और भी ज्यादा कि बहुत काल तक मृत्यु का ही भान नहीं होता और अपने शरीर में बँधा हुआ उसका लगाव उसे पुनः पुनः संघर्षों की ओर धकेलता है ।"

इस प्रकार की घटनाओं के पुनर्जन्म का पूर्ण स्पष्टीकरण तो गहन प्रवेश की क्षमता या इस दिशा में की जाने वाली खोजों द्वारा ही हो सकता है । बहरहाल वैज्ञानिकों के लिए यह गुत्थी आज भी उलझी हुई है कि उस घटना की प्रतिवर्ष उसी दिन किस प्रकार पुनरावृत्ति होती रही है ।

इन चमत्कारिक घटनाओं के पहले कौन से कारण विद्यमान हैं, विज्ञान अभी तक इसका पता नहीं लगा सका है । वस्तुतः विज्ञान प्रकृति के नियम को समझाकर उनसे लाभ उठा ही नहीं पा रहा है । अब तक जितने भी उपकरण, यन्त्र और साधन बने विकसित हुए हैं, वे सभी प्रकृति की ही नकल हैं । एक कुतुबनुमा जैसी छोटी-सी मशीन भी भगवान की उँगलियों से बने, कुतुबनुमा पौधे की नकल किए बिना मनुष्य बना नहीं सका । इस वृक्ष को कुतुबनुमा इसलिए कहते हैं कि इसकी पत्तियाँ हमेशा उत्तर दक्षिण की ओर घूमती रहती हैं । दुनिया भर की सारी मशीनें शरीर रचना का आधार हैं, अथवा प्रकृति के किसी भाग का अनुकरण फिर विज्ञान को किस आधार पर सर्वोपरि और सर्व प्रधान समझा जाय । सृष्टि से श्रेष्ठतम बुद्धि की अधिष्ठात्री तो कोई और ही शक्ति है जिसका नियन्त्रण सारे विश्व ब्रह्माण्ड में है ।

⌘⌘⌘

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

असीम पर निर्भर ससीम जीवन

सृष्टि संसार की नियामक सत्ता

वो प्रत्येक व्यक्ति अपने सुख-दुःख, आनन्द, क्षोभ, शान्ति, उद्वेग के लिए स्वयं जिम्मेदार है । स्वयं वह अपने लिए काँटे बोता है और फूल उगाता है । फिर भी उसे अपने किए का परिणाम चुनने की स्वतन्त्रता नहीं है । यदि यह स्वतन्त्रता मिली होती तो कोई भी व्यक्ति बुरे काम करने के बाद भी अच्छे परिणाम चुन लेता और बुरे कार्यों के परिणाम दूसरे व्यक्तियों के लिए छोड़ देता ।

इसी कारण कहा जा सकता है मनुष्य कर्म करने में तो स्वतन्त्र है पर परिणाम ईश्वर के अधीन है, ईश्वर एक ऐसी व्यवस्था, नियामक सत्ता है जो कर्मों के परिणाम और उस आधार पर जाति गतिविधियों का नियमन करती है, उस सत्ता को असीम कहा जाता है । इसलिए यह मानने में कोई संकोच नहीं करना चाहिए कि मनुष्य का जीवन असीम पर निर्भर है ।

वैसे भी प्रत्येक कर्म का कोई अधिष्ठाता, प्रत्येक रचना का कोई रचयिता और प्रत्येक व्यवस्था का कोई न कोई नियामक अवश्य होता है । आस्तिकवाद के समर्थन में भी यही तर्क दिया जाता है और इसी आधार पर ईश्वर का अस्तित्व सिद्ध किया जाता है । प्रश्न यह भी किया जा सकता है कि जब प्रत्येक रचना का कोई न कोई अधिष्ठाता है, तो इसी के अनुसार ईश्वर की सृजेता सत्ता भी कोई न कोई होनी चाहिए । ईश्वर यदि अपना कारण स्वयं है तो फिर प्रकृति अपना कारण स्वयं क्यों नहीं हो सकती ?

इस तरह के प्रश्न, उत्तर और प्रतिप्रश्नों की शृंखला का कहीं भी अन्त नहीं है । पाण्डित्य प्रदर्शन के लिए, अपनी विद्वत्ता सिद्ध करने के लिए कितने भी तर्क दिए जा सकते हैं और प्रतिपक्षी को हतप्रभ किया जा सकता है, परन्तु सत्य की शोध के लिए पूर्वाग्रह से मुक्त दृष्टिकोण चाहिए और चाहिए निर्मल दृष्टिकोण । ताकि वस्तुस्थिति को उसके सही परिप्रेक्ष में देखा और समझा जा सके ।

ईश्वर है या नहीं ? उससे भी ज्यादा विचारणीय प्रश्न यह रहा है कि इस विश्व की रचना कैसे हुई ? किसने की ? इस प्रश्न पर जो मतभेद चिरकाल से चला आ रहा है वह अभी भी विद्यमान है । विज्ञानी कहता है कि जड़ तत्वों का अनायास सम्मिलन ही सृष्टि का निमित्त है । इसी से छोटे-छोटे अनेक पदार्थ मिले जिनमें चेतना भी एक इकाई है । आस्तिक मान्यताओं के अनुसार हर वस्तु का कोई कर्त्ता होता है तो सृष्टि का भी कोई चेतन कर्त्ता होना चाहिए वह ईश्वर है । ईश्वरवादियों की दो मान्यताएँ हैं—एक यह कि वह अपनी सूक्ष्म स्थिति से दृष्टा साक्षी है और सृष्टि का सूत्र संचालन बाजीगर द्वारा कठपुतली नचाने की तरह करता है । दूसरा पक्ष है कि यह सृष्टि ही ईश्वर है । हर पदार्थ के मूल में काम करती हलचल और हर प्राणी में निवास करने वाली बुद्धि के रूप में उसकी सत्ता प्रत्यक्ष है । व्यष्टि को उसका अंश माना जाय और समष्टि को उसका संयुक्त समग्र रूप ।

इन मान्यताओं पर दार्शनिक दृष्टि से विचार करने की आवश्यकता है । विज्ञान पक्ष की यह मान्यता यदि स्वीकार कर ली जाय कि परमाणुओं के मिलन से सृष्टि बनी तो एक नया प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि प्राणियों में जो 'अहम्' बीध पाया जाता है क्या वह भी उसी अणु सम्मिलन का परिणाम है ? क्या विज्ञानियों द्वारा आविष्कृत यन्त्रों में वह 'अहम्' है । नदी, पर्वत, अन्न, धातु आदि पदार्थों में वह आत्म-बोध है ? क्या वे विचारपूर्वक कुछ करने और बनने का उपक्रम करने की स्थिति में हैं ? क्या उनमें दूसरों के प्रति सहानुभूति सम्वेदना है ? क्या उनमें आकांक्षा, विचारणा एवं क्रियाशीलता जैसी अन्तःचेतना उठती हैं ? यदि ऐसा रहा होता तो जड़-पदार्थ भी चेतन प्राणियों की तरह अपनी-अपनी योजनाएँ बनाते और इच्छा पूर्ति के लिए स्वेच्छापूर्वक स्वतन्त्र गतिविधियाँ अपनाते ।

जड़ का आधार चेतना है या चेतना का आधार जड़ ? यह विवाद का मुख्य विषय है । पदार्थ में कुछ अपनी विशेषताएँ हैं । उनके परस्पर मिलन से नई-नई ऐसी वस्तुएँ बनती हैं जो मिलन वाले घटकों से भिन्न प्रकार की होती हैं । रसायनशास्त्र के अन्तर्गत ऐसे प्रयोग निरन्तर होते रहते हैं । इस मिलन प्रतिक्रिया की विचित्रता के कारण ही यह अनुमान होता है कि जब वस्तुओं की रगड़ से बिजली पैदा हो सकती है तो रासायनिक पदार्थों का अमुक सम्मिश्रण चेतन को क्यों उत्पन्न नहीं कर सकता ? इस तर्क पर यह विचार करना चाहिए कि रासायनिक सम्मिश्रण से नये पदार्थ या प्रवाह तो अवश्य बनते हैं, पर वे सभी बोध रहित होते हैं । आग और पानी के सम्मिश्रण में एक तीसरी चीज भाप बन सकती है, पर यह रहेगा बोध रहित ही । रगड़ से बिजली तो बनती है, पर उसमें ज्ञान कहाँ होता है ? मनुष्य कृत अद्भुत यन्त्रों का निर्माण हुआ है । कम्प्यूटर कितने ही प्रसंगों में मनुष्य से अधिक बुद्धिमान और तत्पर दिखाई पड़ते हैं । फिर भी उनमें अपनी चिन्तन क्षमता नहीं है, किन्तु बुद्धि युक्त मनुष्य द्वारा संचालित किए बिना बहुमूल्य स्वसंचालित कहे जाने वाले यन्त्र भी कहाँ काम करते हैं ? अन्तरिक्ष में उड़ने वाले रॉकेटों का भी नियन्त्रण तो मनुष्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

को ही करना पड़ता है भले ही उन यन्त्रों में कितनी ही प्रचण्ड सामर्थ्य क्यों न भरी पड़ी हो । फिर निर्माताओं ने उन यन्त्रों में जितनी सामर्थ्य भर दी है वे उससे रत्ती भर भी अधिक काम नहीं कर सकते । स्थिति के अनुसार परिवर्तन करने की सूझ-बूझ उनमें कहाँ होती है वे अपने में उत्पन्न हुई गड़बड़ियों को समझने तथा सुधारने में भी समर्थ कहाँ होते हैं ? ऐसी दशा में जड़ से चेतन की उत्पत्ति कहाँ हो सकी ? बात इतनी भर सिद्ध हुई कि पदार्थों के मिलने से नई किस्म के पदार्थ बन सकते हैं, पर वे रहेंगे अन्तः बोध रहित ही । चेतना का गुण बोध है । जिसे बोध नहीं, मात्र हलचल करता है, उसे चेतन की संज्ञा नहीं दी जा सकती ।

महत्त्वपूर्ण वैज्ञानिक उपलब्धियाँ चेतन मस्तिष्क के प्रयास का प्रतिफल हैं । यदि ऐसा न होता तो प्रकृति की विद्युत शक्ति बहुत पहले ही अपने अस्तित्व का परिचय देने लगी होती और आज जो काम कर रही है वह उससे भी पहले ही करने लगी होती । पदार्थ में पायी जाने वाली एनर्जी हलचल भर कर सकती है । चेतना का मौलिक गुण है आत्म बोध । रेडियम आदि में शक्तिशाली एनर्जी पायी जाती है, पर वह आत्म-बोध के आधार पर सम्भव हो सकने वाली विचारणा और आकांक्षा से सर्वथा रहित है । किसी विचारशील के इशारे पर अपनी क्रियाशक्ति का प्रभाव भर देख सकती है । एनर्जी और चेतना दोनों एक वस्तु नहीं है जैसा कि विज्ञान पक्ष द्वारा प्रतिपादित किया जा रहा है ।

न तो चेतन, जड़ और न जड़ में चेतना का अस्तित्व है । दोनों की अपनी-अपनी सत्ता और महत्ता है । हाँ, दोनों के बीच ताल-मेल बहुत अधिक है । जड़ से चेतन को अपनी आकांक्षाएँ एवं आवश्यकताएँ पूरी करने का अवसर बनता है । चेतना से जड़ की उपयोगिता को उभारने और सुव्यवस्थित रूप से प्रयुक्त करके उसकी सार्थकता सिद्ध की जाती है । लोक व्यवहार में यही क्रम चलता है । सृष्टि निर्माण का आधार भी यही समझा जाना चाहिए ।

विज्ञान की मान्यता यह है कि जो माना गया वह यह है । उसका यह आग्रह नहीं है कि जो जान लिया गया उससे आगे और कुछ जानने के लिए नहीं है । जिज्ञासा का द्वार खुला रहने और भावी शोध से नये निष्कर्ष निकालने की आशा बनाये रहने के कारण विज्ञान को नास्तिक नहीं कहा जा सकता वह आज ईश्वर को उस रूप में नहीं मानता जिसमें कि आस्तिक मानते हैं तो भी ऐसी सम्भावनाएँ विद्यमान हैं जो चेतना का स्वतन्त्र अस्तित्व सिद्ध करने के लिए आगे बढ़ती चली आ रही हैं और विज्ञान की उन सम्भावनाओं को स्वीकार करने के लिए मस्तिष्क खुला रखना होगा ।

नियन्त्रित और नियामक व्यवस्था और व्यवस्थापक के न्याय से भी ईश्वर का अस्तित्व सिद्ध होता है । यह तो सर्वमान्य है कि कार्य का अधिष्ठाता, प्रत्येक रचना का कोई कलाकार अनिवार्य रूप से होता है । आगरे का ताजमहल संसार के सर्व प्रसिद्ध सात आश्चर्यों में से एक है । उसके निर्माण में प्रतिदिन २० हजार मजदूर काम करते थे, इतिहासकारों के अनुसार उसका निर्माण ६ करोड़ रुपये में हुआ । उसके निर्माण में साढ़े अट्ठारह वर्ष लगे । उसमें राजस्थान से आया संगमरमर, तिब्बत की नीलम मणि, सिंहल की सिपास्लाजुली मणि, पंजाब के हीरे, बगदाद के पुखराज रत्न लगे हैं । इतनी सारी व्यवस्था और साधन सामग्री जुटाने में एक व्यक्ति की बुद्धि काम कर रही थी, वह था शाहजहाँ । ताजमहल की रचना के साथ शाहजहाँ चिरकाल अमर है ।

कोरिया का मेलोलियम संसार का दूसरा आश्चर्य । ६२ हाथ लम्बी उतनी ही चौड़ी चहारदीवारी के मध्य ४०-४० हाथ ऊँचे ३६ स्तम्भ जो नीचे मोटे पर ऊपर क्रमशः पतले होते गए हैं । सीढ़ियों पर नीचे से ऊपर तक संगमरमर की बहुमूल्य मूर्तियों की सजावट । प्रसिद्ध कलाकार पाइथिस और माटीराम द्वारा विनिर्मित इस सम्प्रधि मन्दिर का निर्माण केवल एक व्यक्ति की इच्छित रचना है वह थी वहाँ की महारानी "आर्टीमिसिया" ।

२० लाख रुपये की लागत की बनी २५ फुट ऊँची ओलम्पिया की जुपिटर प्रतिमा एथेन के सम्राट पैराक्लीज की हार्दिक इच्छा का अभिव्यक्त रूप है । इफिसास का डायना मन्दिर चाँदफिन की कल्पना का साकार है तो अजन्ता की २६ गुफाओं में ५ मन्दिरों और २४ बौद्ध विहारों में प्रवर सेन युग के आचार्य सुनन्द का नाम अंकित है । सिकन्दरिया का प्रकाश स्तम्भ सिकन्दर के संकल्प का मूर्तिमान है । २६३ हाथ के घेरे में २२ फुट ऊँचे ठोस घेरे में खड़ा किया गया बैबिलोन साम्राज्ञी ने बनवाया रोम का कोलोसियस, पीसा की मीनार, रोडस की पीतल की मूर्ति, मिस्र के पिरामिड, चार्टेज गिरजाघर, डेविड, मोजेज, सिस्टाइन चैपिल पियेटा की प्रतिमाएँ, एफिल टावर (पेरिस), व्हाइट हाउस (अमेरिका), लालकिला (दिल्ली) आदि जितनी सर्वश्रेष्ठ रचनाएँ हैं, उनके रचनाकार आला मस्तिष्क और भाव सम्पन्न आत्माएँ रही हैं किसी भी सांसारिक निर्माण को स्वनिर्मित नहीं कहा जा सकता इसी से रचना के साथ रचनाकार का नाम अविच्छिन्न रूप से चलता है ।

यह छोटे-छोटे उपादान बिना कर्त्ता के अभिव्यक्ति नहीं पा सके होते तो इतना सुन्दर संसार जिसमें प्रातःकाल सूरज उगता और प्रकाश व गर्मी देता है । रात थकों को अपने अंचल में विश्राम देती, तारे पथ-प्रदर्शन करते, ऋतुएँ समय पर आतीं और चली जाती हैं । हर प्राणी के लिए अनुकूल आहार, जल-वायु की व्यवस्था, प्रकृति का सुव्यवस्थित स्वच्छता अभियान सब कुछ व्यवस्थित ढंग से चल रहा है । करोड़ों की संख्या में तारागण किसी व्यवस्था के अभाव में अब तक न जाने कब के लड़ मरे होते । यदि इन सब में गणित कार्य न कर रहा होता तो अमुक दिन, अमुक समय सूर्य-ग्रहण, चन्द्र-ग्रहण, मकर संक्रान्ति आदि का ज्ञान किस

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तरह हो पाता । यह सोद्देश्य कर्म और सुन्दरतम रचना बिना किसी ऐसे कलाकार के सम्भव नहीं थी जो सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को एकरस देखता हो, साधन जुटाता हो, न्याय करता हो और जीव मात्र को पोषण तथा संरक्षण प्रदान करता हो ।

नियामक के बिना नियम व्यवस्था, प्रशासक के बिना प्रशासन चल तो नहीं सकते हैं, पर आधे घण्टे से अधिक नहीं जबकि पृथ्वी को ही अस्तित्व में आये करोड़ों वर्ष बीत चुके । परिवार के वयोवृद्ध के हाथ सारी गृहस्थी का नियन्त्रण होता है । गाँव का एक मुखिया होता है तो कई गाँवों के समूह की बनी तहसील का स्वामी तहसीलदार, जिले का मालिक कलेक्टर, राज्य का गवर्नर और राष्ट्र का राष्ट्रपति । मिलों तक के लिए मैनेजर और कम्पनियों के डायरेक्टर न हों तो उनकी ही व्यवस्था ठप्प पड़ जाती है और उनका अस्तित्व डाँवाडोल हो जाता है फिर इतनी बड़ी और व्यवस्थित सृष्टि का प्रशासक, स्वामी और मुखिया न होता तो संसार न जाने कब का विनष्ट हो चुका होता । जड़ में शक्ति हो सकती है व्यवस्था नहीं । नियम सचेतन सत्ता ही बना सकती है, सो इन तथ्यों के प्रकाश में परमात्मा का विरद चरितार्थ हुए बिना नहीं रहता ।

२ फरवरी, १९४७ के नेशनल हेरल्ड में एक लेख छपा था—"वैज्ञानिक भगवान में विश्वास क्यों करते हैं ? इस लेख में विद्वान लेखक ने बताया है कि संसार का हर परमाणु एक निर्धारित नियम पर काम करता है, यदि इसमें रत्ती भर भी अव्यवस्था और अनुशासनहीनता आ जाय तो विराट् ब्रह्माण्ड एक क्षण को भी नहीं टिक पाता । एक कण के विस्फोट से अनन्त प्रकृति में आग लग जाती और संसार अग्नि ज्वालाओं के अतिरिक्त कुछ न होता ।

नियामक विधान किसी मस्तिष्कीय सत्ता का अस्तित्व में होना प्रमाणित करता है । हमारे जीवन का आधार सूर्य है । वह १० करोड़ ६० लाख मील की दूरी से अपनी प्रकाश किरणें भेजता है जो ८ मिनट में पृथ्वी तक पहुँचती हैं । दिन भर में यहाँ के वातावरण में इतनी सुविधाएँ एकत्र हो जाती हैं कि रात आसानी से कट जाती है । दिन-रात के इस क्रम में एक दिन भी अन्तर पड़ जाय तो जीवन संकट में पड़ जाय । सूर्य के लिए पृथ्वी समुद्र में एक बूँद का सा नगण्य अस्तित्व रखती है फिर, उसकी तुलना में रूस साइबेरिया प्रान्त में एक गड़रिए के घर में जी रही एक चींटी का क्या अस्तित्व हो सकता है, पर वह भी मजे में अपने दिन काट लेती है ।

लेकिन परमात्मा कभी-कभी अपने अस्तित्व के दिग्दर्शन के लिए संहारक क्षमता का उपयोग भी करता है । ऐसे दृश्य उपस्थित होते हैं कि मनुष्य तो क्या समस्त जीव जगत तक थर्रा उठता है । इस स्थिति का उद्देश्य मानव की प्रसुत-आध्यात्मिकता को झकझोरना कहा जा सकता है । जैसे पिता बालक की उद्दण्डता तब तक बर्दाश्त करता है जब तक और किसी का अहित न हो । डाँटा तो वह कभी-कभी ही डराने, धमकाने अनुशासन में बनाये रखने के लिए करता है । ईश्वर भी इसी प्रकार अपनी सन्तानों को अनुशासन में रखने के लिए समय-समय पर धमकाता, डराता और दण्ड देता रहता है । 'ईश' का अर्थ है—अनुशासन । इस सृष्टि के कण-कण में एक अनुशासन संव्याप्त है । मनुष्य अपने शरीर और मस्तिष्क को जितने अंश में अनुशासित रख सकता है वह उतने अंश में अपने आप का ईश्वर है । इस संसार में अनुशासनहीन कुछ भी नहीं है । आकाशस्थ ग्रह नक्षत्र एक अनुशासन में बँधे हैं । उत्पादन, अभिवर्धन और परिवर्तन की सुव्यवस्था सर्वत्र देखी जा सकती है । प्राणी और पदार्थ एक-दूसरे के पूरक बनकर रह रहे हैं । प्रजनन और काम कौतुक में प्रत्येक वर्ग की वंश वृद्धि का कैसा अद्भुत समन्वय है, जिसे देखकर आश्चर्यचकित रह जाना पड़ता है । परमाणु समूह का अपने क्रिया-कलाप में बिना दूसरों से टकराये संलग्न रहना कितना विधिवत् और कितना व्यवस्थित है । शरीर की कोशाएँ अपने आप में एक स्वतन्त्र व्यक्तित्व का परिचय देती हैं और सघन सहयोग के सहारे शरीर की गतिविधियों का सुसंचालन करती हैं । किसी भी क्षेत्र में—किसी भी दशा में—दृष्टि पसार कर देखा जाय सर्वत्र अनुशासन संव्याप्त है । बाढ़, भूकम्प, आँधी, तूफान जैसी दुर्घटनाएँ भी अनायास नहीं होतीं उनके मूल में भी कई सिद्धान्त काम करते हैं और उन्हीं के आधार पर वे घटनाएँ घटित होती हैं, जिन्हें यदा-कदा होने के कारण हम आकस्मिक और अप्रत्याशित समझते और आश्चर्य करते हैं । इस अनुशासन को भी ईश्वर नाम दिया जा सकता है ।

लहरों का पृथक अस्तित्व देखने पर भी वे वस्तुतः समुद्र की विशाल जल राशि की ही छोटी-छोटी इकाइयाँ होती हैं । किरणों का समन्वय ही सूर्य है । व्यक्तियों के समूह को समाज कहते हैं । सृष्टि के सबसे छोटे घटक अण्ड या अणु कहलाते हैं इन्हीं का विशाल समुदाय ब्रह्माण्ड है । आत्माओं की सामूहिक चेतना परमात्मा है । हम हवा के विशाल समुद्र में उसी प्रकार साँस लेते और जीते हैं जिस प्रकार मछलियाँ किसी जलाशय में अपना निर्वाह करती हैं । प्राणियों की समग्र सत्ता ब्रह्म है, अणुओं का समुदाय ब्रह्माण्ड । प्राणी और पदार्थों की सत्ता दीखती तो स्वतन्त्र है, पर वस्तुतः वह एक ही विशाल महाप्राण के अनन्त संसार से अपना पोषण प्राप्त करते हैं । उसमें उगते, बढ़ते और बदलते रहते हैं । इस महाप्राण को तथा महान् अनुशासन को ईश्वर कहा जा सकता है ।

न तो पैर को पैर देख पाते हैं और न हाथ को हाथ । आँखों की ज्योति ही दोनों को देख सकने में समर्थ होती है । आँखें स्वयं ही इस ज्योति में प्रकाशवान होती हैं तो भी वे अपने आलोक को देख सकने में समर्थ नहीं होतीं । हाथ के लिए आँख की ज्योति का देख सकना तो और भी कठिन है । जड़ पदार्थों से बने इन्द्रिय समूह से, यन्त्र उपकरणों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

से उस परम चेतन ज्योति को कैसे देखा जाय ? यह सम्भव न होने से ही यदि ईश्वर की सत्ता मानने से इन्कार किया जाय तो बात दूसरी है, अन्यथा यदि सूक्ष्म और स्थूल की अनुभूति के लिए प्रत्यक्ष से साक्षी न बनने की बात स्वीकार कर ली जाय तो ईश्वर के अस्तित्व की अनुभूति पग-पग पर हो सकती है । जड़ से जड़ की नाप तौल हो सकती है । चेतन-चेतन की अनुभूति पा सकता है । परिष्कृत, परिशोधित आत्मा के लिए यह तनिक भी कठिन नहीं है कि वह अपने अन्तराल में विद्यमान ऐसी सत्ता का अनुभव करे जो उसे निरन्तर ऊँचा उठाने और आगे बढ़ाने का आह्वान करती है ।

मूर्धन्य मनीषी पास्कल कहते थे कि—'जो हमारी पकड़ में नहीं आया, उसके सम्बन्ध में यह सोचना गलत है कि उसका अस्तित्व है ही नहीं ।' अब से कुछ शताब्दियाँ पहले बिजली, रेडियो आदि की कहीं चर्चा तक नहीं थी । भूतकाल में भी कभी उनकी उपस्थिति देखी नहीं गई थी । इन शक्तियों की कल्पना जब किन्हीं मस्तिष्कों में उदय हुई तब भी कोई ऐसे प्रमाण नहीं थे जिनसे उनकी उपस्थिति निश्चित रूप से सिद्ध की जा सके । फिर भी अनास्तित्व में अस्तित्व की सम्भावना स्वीकार की गई और खोजें चल पड़ीं । विभिन्न आविष्कार इस प्रकार प्रकट हुए हैं ।

ईश्वर के अस्तित्व से मात्र इस आधार पर इन्कार करना अयोग्य है कि वह इन्द्रियों और यन्त्रों की पकड़ में नहीं आता । ईश्वर तो चेतन है । जड़ जगत की भी अनेकों शक्तियाँ पर्दे के पीछे से झाँकती हैं और अपने आभास का संकेत करती हैं । शोधकर्त्ता इन्हीं सम्भावनाओं पर आस्था रख कर इतना श्रम, समय और धन खर्च कर रहे हैं । यदि यह मानकर चला जाय कि जिनका प्रत्यक्ष होगा उन्हीं की सम्भावना स्वीकार की जायेगी तब तो विज्ञान की प्रगति का सारा आधार ही समाप्त हो जायेगा । तब उपलब्धियों का प्रयोग भर होता रहेगा । इन शोधों के लिए चेष्टा करना तो दूर उनकी कल्पना तक उपहासास्पद बन जायेगी ।

यह सब सत्य इस बात के स्पष्ट प्रमाण हैं कि संसार को बनाने वाला अद्भुत गणितज्ञ, विलक्षण, इन्जीनियर, सुयोग्य चिकित्साधिकारी, मौसमवेत्ता और परमाणु वैज्ञानिक है, उस सत्ता के अस्तित्व से इन्कार करना अपने आप को पतन में धकेलने के बराबर है । उसे प्राप्त करने का प्रबल पुरुषार्थ आवश्यक है । जिसने उसे पा लिया उसने अपना जीवन धन्य कर लिया समझना चाहिए ।

सर्व नियामकसत्ता की प्रबन्ध व्यवस्था का पता जीवन के आविर्भाव से ही चल जाता है । जीवन की उपयोगी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सृष्टि में ऐसा प्रबन्ध है कि वे सरलतापूर्वक पूरी हो जाया करें । साँस के बिना प्राणी एक क्षण को भी जीवित नहीं रह सकता, सो वह प्रचुर मात्रा में सर्वत्र उपलब्ध है । उसके बाद जल की आवश्यकता है उसके लिए थोड़ा प्रयत्न करने से ही काम चल जाता है । तीसरी आवश्यकता अन्न की है सो उसके लिए साधन न जुटा सकने वाले प्राणियों के लिए फल-फूल की प्राकृतिक व्यवस्था है वहीं बुद्धिधारी जीव थोड़े प्रयत्न से अपनी आवश्यकता पूरी कर लेते हैं इसके बाद के समस्त उत्पादन आवश्यकता के अनुपात में प्रयत्न और परिश्रम से प्राप्त होते रहते हैं । इन सार्वभौम आवश्यकताओं की पूर्ति बिना संचालक-व्यवस्थापक के कैसे सम्भव हो सकती थी ।

नैतिकता के सर्वमान्य सिद्धान्तों से न केवल जीव समुदाय जुड़ा है अपितु कर्त्ता ने वह अनुशासन स्वयं पर भी पूरी तरह लागू किया है । भ्रूण जैसी अत्यधिक कोमल और सम्वेदनशील सत्ता को विकसित होने के लिए खुला छोड़ दिया जाता तो प्राणधारी के लिए उपयोगी वायु, ताप और अन्य प्राकृतिक परिस्थितियाँ ही उसे नष्ट-भ्रष्ट कर डालतीं सो उसके लिए अति वातानुकूलित और सर्व सुविधा सम्पन्न निवास माँ के गर्भाशय की व्यवस्था क्या किसी अत्यधिक प्रबुद्ध सत्ता के अस्तित्व का प्रमाण नहीं । जहाँ चारों तरफ से बन्द कोठरी में ही उसे विकास की समस्त सुविधाएँ उचित मात्रा में मिलती रहती हैं ।

जन्म के पूर्व ही उसके लिए सन्तुलित आहार माँ के दूध जैसा उपलब्ध कराकर उसने अत्यधिक करुणा दरसाई । असहाय, असमर्थ शिशु के लिए न केवल भौतिक सहायताएँ अपितु उसके लिए जिन भावनात्मक सुविधाओं की आवश्यकता थी वह समस्त उसे कुटुम्ब में, समुदाय और समाज में मिल जाती हैं । इस तरह जीवनसत्ता परिपक्व रूप में सामने आ जाती है इतने पर भी यह कितने आश्चर्य की बात है कि दूसरों के सहारे बढ़ा, विकसित हुआ जीव न केवल सामाजिक कर्तव्यों के प्रति कृतघ्नता का परिचय देने लगता है, अपितु अपने परमपिता, अपनी मूलसत्ता को ही भुला बैठता है ।

इतने पर भी वह दयालु पिता ने उस शिशु के यौवन में प्रवेश करते ही उसकी पितृत्व, कामेच्छा और भावनात्मक सहयोग की पूर्ति के लिए जोड़ी मिलाने, नर को नारी में नारी को नर में अपनी पूर्णता प्राप्त करने की सुविधा जुटाई, रोग निरोध की तथा सांसारिक प्रतिकूलताओं में अपने अस्तित्व की रक्षा की जन्म-जात सुविधाएँ भी प्रदान की हैं । रोगों से लड़ने की शक्ति रक्त कणों में, शारीरिक अवयवों की सुरक्षा त्वचा के द्वारा, देखने के लिए आँखें, सुनने के लिए कान और विचार करने के लिए बढ़िया मस्तिष्क इतनी सुन्दर मशीन आज तक न कोई बना सका और न बना सकना सम्भव है जो इच्छानुसार हर परिस्थिति में मुड़ने, लचकने, सँभालने में सक्षम है । आँख जैसी रेटिना, कान जैसा पर्दा, गुर्दे जैसी सफाई अधिकारी, हृदय जैसे पोषण संस्थान और पाँव जैसा सुन्दर आर्क बनाने वाली सत्ता कितनी बुद्धिमान होगी इसकी तुलना न किसी इन्जीनियर से हो सकती है न डॉक्टर से । वह प्रत्येक कला कौशल का ज्ञाता, सर्व निष्णात

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और सर्व प्रभुता सम्पन्न दानी केवल परमात्मा ही हो सकता है इससे कम मानना न केवल उस परमात्मा की अवमानना होगी अपितु यह एक प्रकार से स्वयं का ही आत्मघात होगा ।

इतने पर ही उसके अनुदान समाप्त नहीं हो जाते । अग्नि में चिन्गारी, पदार्थ में परमाणु, सूर्य में किरणों की तरह वह स्वयं भी मनुष्य की हृदय गुहा में बैठकर उस प्रतिपल आत्मोत्कर्ष की प्रेरणा देता रहता है । गलत मार्ग पर चलने से पहले ही उसकी प्रेरणा रोकती है, पर मनुष्य अन्तःकरण की उस पुकार को अनसुनी कर स्वेच्छाचारिता बरतता और उस अपराध का दण्ड, रोग, शोक, क्लेश, कलह और मानसिक सन्ताप के रूप में भुगतता रहता है । फिर भी उसकी वासनाएँ शान्त नहीं होतीं, वह अपनी वासनाओं की, तृष्णा की, अतृप्त कामनाओं की प्यास बुझाने के लिए मानवेतर योनियों में भटकता है, तो भी उसकी दया, करुणा, उदारता एक पल को भी साथ नहीं छोड़ती और उसे निरन्तर ऊपर उठने, कामनाओं से मुक्ति पाकर शाश्वत, सनातन और दिव्य आनन्द की प्राप्ति के लिए प्रेरित करती रहती है । फिर भी इस सत्ता के अजस्र अनुदानों की ओर से आँख फेरकर मनुष्य प्यासा का प्यासा बना रहता है । माया के मूढ़ भ्रमजाल में पड़ा जीवन के बहुमूल्य क्षण मिट्टी के मोल नष्ट करता रहता है ।

वैज्ञानिक सृष्टि की नियामक विधि-व्यवस्था प्रत्येक अणु में विद्यमान दिव्य चेतना को नहीं झुठलाती । हरबर्ट स्पेंसर की दृष्टि में भगवान एक विराट् शक्ति है जो संसार की सब गतिविधियों का नियन्त्रण उसी प्रकार करता है जिस प्रकार घर का मुखिया, गाँव का प्रधान, जिले का कलेक्टर और प्रान्त का गवर्नर । राज्य के नियमों का हम इसलिए पालन करते हैं क्योंकि हमें राजदण्ड का भय होता है । नैतिक नियमों का पालन न करने पर हमें भय लगता है जबकि हम उसके लिए पूर्ण स्वतन्त्र होते हैं । यह इस बात का प्रमाण है कि संसार में कोई सर्वोच्च सत्ता काम करती है । निर्भीक व्यक्ति, नैतिक व्यक्ति ही हो सकता है इस तथ्य से यह भी स्पष्ट है कि वह प्रजावत्सल और न्यायकारी है ।

आस्तिक दर्शन के वैज्ञानिक आधार

एक प्रश्न का सही उत्तर भी सदैव एक होता है, दो नहीं । यदि उत्तर दो हों तो उनमें से एक का असत्य होना अवश्यम्भावी है यह एक बात हुई । जिसका उत्तर सही होता है वह उत्तीर्ण, विद्वान और विचारवान् घोषित किया जाता है । जिसका हल त्रुटिपूर्ण होता है यह माना जाता है कि उसका अध्ययन अपूर्ण रहा, यह दूसरी बात हुई । एकिक नियम से इन दोनों बातों को यों भी कहा जा सकता है कि विद्वान, विचारवान् और अध्ययनशील व्यक्तियों के निष्कर्ष मान्य होने चाहिए जबकि जिन्होंने किसी विषय का स्पर्शहीन किया हो उसके उत्तर से सन्तुष्ट नहीं होना चाहिए ।

परमात्मा का अस्तित्व है या नहीं, इस बात की पुष्टि के लिए यदि उपर्युक्त सिद्धान्त को कसौटी पर कसें तो लगता है मात्र सतही ज्ञान वाले या निषेध बुद्धि व्यक्तियों ने ही उपर्युक्त मान्यता का खण्डन किया है, विज्ञान वेत्ताओं में अधिकांश सभी ने या तो इस सम्बन्ध में प्रायोगिक तौर पर अपनी अनभिज्ञता व्यक्त की है या फिर उन्होंने पूरी तरह ईश्वरीय सत्ता पर विश्वास व्यक्त किया है ।

ईश्वर की मान्यता सृष्टि का सर्वोच्च विज्ञान है और परम सत्य की खोज, विज्ञान का इष्ट । अतएव वैज्ञानिकों के निष्कर्षों की उपेक्षा करने का अर्थ असत्य का समर्थन और सत्य से इन्कार के अतिरिक्त और कुछ नहीं होगा । अखण्ड-ज्योति में समय-समय पर वैज्ञानिकों की वह सम्मतियाँ प्रकाशित की जाती रही हैं जिनमें उन्होंने विराट् के प्रति, असीम के प्रति श्रद्धावश, ज्ञान के अगाध विस्तार और मानवीय विवेक के आधार पर समर्थ सत्ता के औचित्य को स्वीकार किया है । ऐसा ही जोरदार प्रश्न एक बार अमेरिका के वैज्ञानिकों के सम्मुख वहाँ के बुद्धिवादियों ने उठा दिया । उस समय 'न्यूयार्क एकेडमी ऑफ साइन्सेज' के तत्कालीन अध्यक्ष—वैज्ञानिक एम्सक्रेशी मारिशन ने उसका उत्तर इतने तार्किक और व्यवस्थित ढंग से दिया जिससे डार्विन के सिद्धान्त को मानने वालों में तहलका मच गया । ईश्वरीय अस्तित्व के प्रतिपादन में उन्होंने जो सात मूलभूत आधार निश्चित किए हैं वे इतने सशक्त और प्राणवान् हैं जिनसे एकाएक तो कोई पूर्वाग्रह ग्रस्त नास्तिक भी इन्कार नहीं कर सकता । यह सातों सिद्धान्त भारतीय सिद्धान्त के सृष्टिकर्त्ता के (१) सृजनकर्त्ता (२) पालनकर्त्ता (३) संहारकर्त्ता तीनों स्वरूपों का प्रतिपादन करते हैं ।

यूरोप तथा एशिया के वैज्ञानिकों के समक्ष अपनी बात प्रस्तुत करते हुए मारिशन महोदय ने बताया कि सृष्टि संरचना पर दृष्टि दौड़ाते हैं तो ऐसा लगता है सारा निर्माण किसी गणितज्ञ, सूझ-बूझ वाले, बुद्धिमान चीफ इन्जीनियर की देख-रेख, प्लानिंग के अन्तर्गत हुआ है । सृष्टि का प्रादुर्भाव एकाएक, अकस्मात्, दुर्घटनावश, यों ही नहीं हो गया । रेल की रेल से, मोटर से, पुल से दुर्घटना हो जाती है तो ध्वंस होता है, विनाश होता है, त्राहि-त्राहि मचती है जबकि संसार में अच्छी से अच्छी और उससे अच्छी प्रसन्नतादायक रचनाएँ होती चली आती हैं, ध्वंस के स्थान पर व्यवस्था दिखाई देती है । प्रसन्नता, प्रफुल्लता, उल्लास, उत्साह और प्राणों की छलकन दिखाई देती है । दुर्घटना कभी-कभी होती है, आकस्मिकता का नम्बर करोड़ों बार के प्रयोगों में कहीं एक बार आता है । उदाहरण के लिए दस-दस नये पैसे के दस सिक्के लें । उन पर एक से दस के नम्बर डाल दें । सारे सिक्कों को दोनों हथेलियों का घोंसला बनाकर देर तक हिलायें और उन्हें फिर एक गड्डी में रख दें । यह क्रिया सौ, दो सौ बार दुहराएँ तो यह सम्भव हे कि एक नम्बर का सिक्का ठीक एक नम्बर पर ही आ जाय । हजार दो हजार

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

बार में एक नम्बर के बाद दूसरा भी क्रम में आ सकता है, चार-पाँच हजार बार में सम्भव है, एक-दो तीन नम्बर वाले सिक्के भी क्रम में आ जायें । एक से दस तक के सभी सिक्के एक ही क्रम में आ जायें । इस स्थिति के लिए लाखों, करोड़ों नहीं असंख्य बार यह क्रिया दोहरानी पड़ सकती है । यदि सिक्कों को आँखों से देख करें, ज्ञान से उनके नम्बर पढ़कर क्रम बार लगाएँ तो एक से अधिक बार की क्रिया दोहरानी नहीं पड़ेगी । प्रकृति की, सृष्टि की सुव्यवस्थाएँ इस बात की प्रमाण हैं कि यह सारी रचना प्रकाश में, बुद्धि के द्वारा देख, सुन, समझ और निष्कर्षों को ध्यान में रखकर की गई है ।

सूर्य, जीवन का स्रोत और प्राणीय चेतना का आधार माना गया है । वह पृथ्वी से ९ करोड़ मील दूर है उसकी सतह का तापमान १२००० डिग्री फारेनहाइट का है, पहले तो यही बात स्पष्ट है कि यदि इस दूरी को थोड़ा भी कम कर दिया जाता तो पृथ्वी में इतनी भयंकर ऊर्जा होती कि न तो यह वृक्ष वनस्पति होती और न प्राणि जगत-जीवन के लिए जितने ताप की आवश्यकता है उतना, इतनी ही दूरी में सन्तुलित रह सकता । यही नहीं कुछ ऐसी किरणें भी हैं जो इतनी दूरी पर भी विनाश कर सकती थीं उनसे रक्षा के लिए वायुमण्डल (आइनोस्फियर) के रक्षा कवच में पृथ्वी को बन्द कर दिया गया । बात इतने से भी बनती नहीं थी, यदि पृथ्वी को स्थिर रखा गया होता तब भी यहाँ इतना अधिक ताप आ जाता कि लोग भाड़ की गर्मी में भुन जाने वाले चने की तरह जलकर फुटका हो जाते इस दृष्टि से पृथ्वी को जानबूझ कर उसकी अपनी ही कक्षा में प्रति घण्टे एक हजार मील की गति से घुमा दिया गया जिससे मरुत देव गतिमान हुए और उन्होंने ताप और शीत का नियन्त्रण प्रारम्भ कर दिया । कदाचित् इस गति को १००० की अपेक्षा १०० मील प्रति घण्टे कर दिया गया होता तो इसका अर्थ यह होता कि पृथ्वी के दिन और रात १२० घण्टे के होने लगते । १२ घण्टे की गर्मी और सक्रियता से थककर चकनाचूर हो जाने वाले मनुष्य को दस गुने बड़े दिन को काटना ही कठिन पड़ जाता ऊपर से मध्यान्ह की किरणें इतनी वीभत्स अग्नि वर्षा करतीं कि मिट्टी में भी आग लग जाती और वह स्वयं भी जलकर या तो तरल लौ की शक्ल में हो जाती या भाप बनकर उड़ जाती । रात में यही स्थिति ठीक उल्टी अर्थात् हिम-प्रलय जैसी होती । उस स्थिति में जीवन की कल्पना करना ही कठिन होता है, जो बात सूर्य की दूरी से ऋतु नियन्त्रण पर लागू होती है, वही चन्द्रमा की दूरी पर, समुद्र के नियन्त्रण पर । इस दूरी में थोड़ा भी अन्तर पड़ने से चन्द्रमा ही पृथ्वी को नष्ट-भ्रष्ट कर डालता ।

उस बड़े इन्जीनियर का रेखागणित ज्ञान तो उस समय आश्चर्यचकित कर देता है, जब पता चलता है कि पृथ्वी अपने ही कक्ष में २३ (अंश) झुकी हुई है । यदि ऐसा न होता तो महासागरों का सारा जल वाष्प विभक्त होकर कुछ उत्तरी ध्रुव में भाग जाता कुछ दक्षिणी ध्रुव में । फिर न यह सुहाने बादल आते, न रिमझिम वर्षा होती, न झरनों की झरझर, न नदियों की कलकल, पौधों का बढ़ना, फूलना, फलना सारी शोभा विनाश के गर्भ में डूब जाती ।

पृथ्वी कुल दस फुट मोटी होती तो जीव जगत के लिए ऑक्सीजन ही सम्भव न होती । समुद्र दस फुट गहरा होता तो कार्बन डाइ ऑक्साइड और ऑक्सीजन का सन्तुलन ही न बैठता, वायुमण्डल विरल होता तो तारों का उल्कापात इस तरह होता मानो किसी बगीचे में आम टपकते हों सारी धरती, लहू-लुहान होती, सौन्दर्य नाम की तो यहाँ कोई सत्ता ही नहीं होती ।

अपना दूसरा तर्क प्रस्तुत करते हुए डॉ. मारिशन ने बताया कि जिन दिनों डार्विन विकासवाद सिद्धान्त प्रतिपादित करने में जुटे थे उन दिनों "प्रोटोप्लाज्मा" या "कोशिका विज्ञान" का प्रादुर्भाव नहीं हो पाया था । इस विज्ञान से जीवन का सूक्ष्मतम स्वरूप आया और यह सिद्ध हो गया कि कोशिका उसी तरह का एक ब्रह्माण्ड है जैसा हमारा बाह्य दृश्य ब्रह्माण्ड । उसमें से नाभिक की इच्छा से प्लाज्मा की हलचल होती है स्वयं साइटोप्लाज्मा से नाभिक नहीं बनता । उसे यों समझ सकते हैं कि दृश्य प्रकृति का निर्माण सूर्य करता है । इस दृश्य प्रकृति ने सूर्य का निर्माण नहीं किया । यह चेतना ही जीवन है और भार न होने पर भी इतना शक्तिशाली है कि पौधे में अभिव्यक्त होता है तो चट्टान को फोड़कर ऊपर आ जाता है । इतना बड़ा कलाकार है कि फूलों में तरह-तरह के रंग भरता रहता है । प्रत्येक जीव को समूह गान की प्रेरणा देकर उसने अपने आपको महान् संगीतज्ञ और प्रत्येक फूल में अलग-अलग तरह की गन्ध भर कर उसने अपना महान् रसायनज्ञ (केमिस्ट) स्वरूप ही दर्शा दिया है ।

बाजार में किसी खिलौने वाली दुकान में जाते हैं तो झांझ बजाने वाली गुड़िया, नाच दिखाने और ढपली बजाने वाले बन्दर, दौड़ने वाले घोड़े, तेज गति से दौड़ने वाली बसें, रेलें और हैलीकोप्टर आदि तरह-तरह के खिलौने देखकर मन प्रसन्न हो उठता है । सामान्य दृष्टि में यह खिलौना चाभी भर देने से चलने वाले होते हैं । पर विचारशील व्यक्ति उसे इन्जीनियरिंग बुद्धि का कौशल मानते और उन कारीगरों की प्रशंसा करते हैं जिन्होंने उनके भीतर इस तरह की मशीनरी का निर्माण कर दिया जिससे निर्जीव घोड़े, प्लास्टिक के बने बन्दर भी सजीव से गति करते दिखाई देने लगते हैं ।

सृष्टि में दृष्टि दौड़ाएँ तो लगता है यहाँ भी एक विलक्षण इन्जीनियरिंग कमाल भरा हुआ है । खिलौनों की मशीन की तुलना प्रकृति के नन्हें-नन्हें जीव-जन्तुओं से लेकर विशालकाय पशुओं तक की अन्तः प्रवृत्तियों से की जाती है । इनमें मनुष्यों की तरह की विचारशक्ति नहीं होती, उनमें लिखने-पढ़ने या गूढ़ विषयों को सोचने-समझने की

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भी सामर्थ्य नहीं होती, पर जिस तरह चाबी भरे हुए खिलौने वैसी ही गति करने लगते हैं जैसे उनके मूल उपमान तो यह विश्वास न करने का कोई कारण शेष नहीं रह जाता कि सृष्टि का कोई नियंता नहीं है । अन्तः प्रवृत्तियों का यह इतिहास इतना अचरज भरा है कि उसमें सिवाय सृष्टि स्रजेता के सर्वज्ञ, सर्व कुशल और सर्वशक्तिमान होने के अतिरिक्त दूसरी बात ही मस्तिष्क में नहीं आती । अस्तित्व में न होने की बात ही बिल्कुल ही गले नहीं उतरती ।

सालमन मछली वर्षों तक समुद्र में रहती है और जब कभी अपने जन्म स्थान की याद करती है तो समुद्र से चलकर अनेक बड़ी नदियों, सहायक नदियों की यात्रा करती हुई ठीक उसी स्थान पर पहुँच जाती है जहाँ उसका जन्म हुआ था यदि उसे विपरीत दिशा में मोड़ने का प्रयत्न भी किया जाय या धोखा देने का प्रयास किया जाय तो भी उसे बहकाया नहीं जा सकता वह फिर कर लौटेगी अपने सही स्थान को ही ।

टिड्डियाँ किसी उपयुक्त स्थान पर अण्डे देकर उड़ जाती हैं । पीछे बिना अभिभावकों की देखरेख में अण्डों से बच्चे निकल आते हैं और अपने पूर्वजों के पीछे-पीछे यात्रा पर उसी दिशा में चल पड़ते हैं और कुछ समय पश्चात् अपने पितरों से जा मिलते हैं ।

प्रवासी पक्षी एक ऋतु कहीं गुजारते हैं दूसरी के लिए कठिन यात्राएँ करके ठीक उसी स्थान पर जा पहुँचते हैं जहाँ उनके वंशधर आते-जाते रहे हैं । यह सारे कार्य अन्तःप्रवृत्ति के सहारे चलते हैं यह प्रवृत्तियाँ और कुछ नहीं वह चाबियाँ हैं जो नियन्ता ने उनमें पहले से भर कर छोड़ दी हैं ।

ईल मछली इस तरह का सर्वाधिक आश्चर्यजनक उदाहरण है । दुनिया भर की सभी ईलें चाहे वह ग्रेट वियर की हों या काश्मीर की डल झील की, अण्डे-बच्चे वे अटलाण्टिक के बारमुडा क्षेत्र में जहाँ समुद्र संसार में सबसे गहरा है, में ही देती हैं यह वही स्थान है जहाँ से पृथ्वी किसी ऐसे ब्रह्माण्डीय शक्ति प्रवाह से जुड़ी है जहाँ आकाश में गया कोई भी जहाज आज तक लौटा नहीं, यह कहाँ अन्तर्ध्यान हो जाते हैं यह आज तक भी कोई जान नहीं पाया ।

झीलों की ईलें, वहाँ से निकलने वाली नदियों से होकर समुद्र और समुद्र से अटलाण्टिक महासागर और वहाँ से बारमुडा पहुँचती हैं । वहाँ बच्चे देकर अपनी जीवन लीला समाप्त कर देती हैं । जिस मछली ने कोई भूगोल नहीं पढ़ी, जिसे महाद्वीपों का ज्ञान नहीं, वही ईलें यहाँ जन्म लेने के उपरान्त अपने माता-पिता के देश चल देती हैं और बड़े-बड़े महासागर पार कर ठीक वहीं जा पहुँचती हैं जहाँ उनके माता-पिता कभी जीवन-यापन किया करते थे ।

ततैया की तरह का कीड़ा वाष्प ऐसा जीव है जिसके बच्चों को विकास के लिए जीवित जीव का ही मांस चाहिए मृत का नहीं, वाष्प कीड़ा घास के कीड़े को पकड़ता है और उसे मिट्टी में इस तरह गाड़ देता है जिससे वह मरता नहीं वरन् मूर्छित हो जाता है इस तरह जीवित किन्तु अचेतन घास के कीड़े से ही यह बच्चे अपना विकास कर लेते हैं । यह बुद्धि का खेल नहीं है यह मात्र भरी हुई चाबी का खेल है । यदि बुद्धि की बात होती तो हाथी विधिवत् खेती कर रहे होते, शेर अपने बच्चों के लिए विद्यालय खोले हुए होते, भेड़ियों की मनुष्य से मित्रता हो गई होती, बन्दर बगीचों के मालिक हो गए होते । ठीक उसी तरह जिस तरह चाबी भरा घोड़ा आदमी को देशाटन करा सकता है, हर मनुष्य की अपनी रेलगाड़ी होती और हैलीकोप्टर से कम में कोई यात्रा नहीं कर रहा होता ।

मनुष्य में बौद्धिक क्षमताओं की असीम सम्भावनाएँ परमात्मा के अस्तित्व का चौथा बड़ा प्रमाण है । इस इलेक्ट्रॉनिक युग में जबकि दुनिया भर के सारे कार्य कम्प्यूटर करने लगे हैं, मानवीय बुद्धि की तुलना में सभी हतप्रभ हैं । गणित के उतने हल जितनी जानकारियाँ भरी गई हों कम्प्यूटर प्रदान कर सकता है, पर किसी भी तरह की बात का तात्कालिक, परिस्थितिजन्य तथा ऐसा उत्तर जिसमें भावनाएँ, सम्वेदनाएँ भी जुड़ी हुई हों वह नहीं दे सकता । शरीर की रचना जैसी मशीन नहीं, इस रूप में उसने साक्षात् अपनी ही चेतना का एक अंश मानवीय प्राणों में घोल दिया है ।

अब जबकि विज्ञान की एक नई धारा जेनेटिक्स (अनुवांशिकी) का विकास हो रहा है यह विलक्षणताएँ और भी स्पष्ट होने लगी हैं । उँगली के एक छोटे से पोर में ही २ हजार मिलियन अर्थात् २००००००००० विचित्रताएँ और शक्तियाँ गुणसूत्र रूप में सन्निहित पायी गई हैं । इसका अर्थ यह हुआ कि एक मनुष्य के शरीर में सारा ब्रह्माण्ड उस तरह समाया हुआ है जिस तरह एक नन्हें बीज में वृक्ष की सारी सम्भावनाएँ विद्यमान रहती हैं । यदि छोटे से पिण्ड की दो आकृतियाँ अर्थात् एक जड़ प्रकृति, दूसरी चेतन दो शक्तियाँ कार्यरत हैं उसी तरह ब्रह्माण्ड में भी उस सम्भावना से इन्कार नहीं किया जा सकता है । यह समष्टि चेतना ही परमात्मा हो सकती है यदि यह दो तत्व भिन्न न होते मृत्यु के बाद भी शरीर के सभी आवश्यक तत्व विद्यमान रहने पर भी मनुष्य की चेतना का लोप नहीं हो जाता । प्रकृति अपने आप में अत्यन्त समर्थ सत्ता है, पर जीव के उत्पादन की क्षमता उसमें नहीं है यदि मनुष्य कर ले तो उसे भी चेतन अंश की क्रिया-अनुसन्धान कहा जा सकता है ।

अध्यात्म की, परमात्मा की कल्पना अपने आप में एक महान् शोध है । यह कल्पना नहीं बुद्धि का गणितीय निर्णय है इसमें भले ही अंक प्रयुक्त न हुए हों उसमें बुद्धि की दौड़ उससे भी बहुत अधिक उत्कृष्ट स्तर पर हुई है । अज्ञात की कल्पना न कर सकें इसका यह अर्थ नहीं कि अज्ञात होता ही नहीं यह बात हमारे जीवन व्यवहार में प्रतिदिन देखने को मिलती रहती है । इस तरह मानवीय भावनाओं ने जिस समर्थ सत्ता का स्पर्श-अनुभूति के रूप में किया और उसके

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रति श्रद्धा के सतोगुणी सत्परिणाम प्राप्त किए उसे यों ही झुठला देना व्यक्ति विशेष के तात्कालिक सन्तोष का कारण हो सकता है उससे न तो उसका न समाज और विश्व का हित हो सकता है । आज की समस्याओं का एक मात्र आधार यह अनास्था ही है उसे दूर किया जा सके तो मानवीय गरिमा अत्यन्त समर्थ, समृद्ध और समुन्नत रूप में चरितार्थ हो सकती है ।

गणितीय आधार पर ही नहीं, वस्तुपरक दृष्टि से भी ईश्वर का अस्तित्व संसिद्ध है । यह तो एक मानी हुई बात है कि वे सभी वस्तुएँ जो प्रत्यक्ष दिखाई नहीं देती अस्तित्व हीन नहीं हैं । उदाहरण के लिए हवा को किसने देखा, आकाश का अनुभव किस प्रकार का होता है । ये दोनों तत्व दृष्टि और प्रत्यक्ष अनुभव में नहीं आते । फिर भी इनका अस्तित्व है । ईश्वर के अस्तित्व को केवल इसी आधार पर अस्वीकारा जाता है कि उसका कोई अनुभव नहीं होता । विज्ञान की ओर से भी ईश्वर का अन्स्तित्व सिद्ध करने के लिए ढेरों तर्क दिए जाते हैं ।

परन्तु अब विज्ञान को भी अपनी मान्यताएँ बदलनी पड़ रही हैं । विज्ञान क्या है ? प्रकृति के रहस्यों को समझने और उनसे लाभ उठाने के लिए की जाने वाली गवेषणा तथा प्रयोग । प्रत्यक्षवादी मान्यताओं के प्रति आग्रहशील रहने के कारण ही विज्ञान अपनी हठवादिता पर दृढ़ रहा है, लेकिन जैसे-जैसे प्रकृति के रहस्यों में गहरा उलटा जाने लगा वैसे-वैसे अब विज्ञान को सृष्टि की नियामक नियन्त्रणकर्त्री चेतन सत्ता का अस्तित्व स्वीकार करने के लिए बाध्य-सा होना पड़ रहा है ।

परमात्मा सृष्टि का संचालक है

विश्व विख्यात वैज्ञानिक डॉ. अरिस्टोटल के लिए संसार में सबसे बड़ा आश्चर्य था, ब्रह्माण्ड का स्वरूप और उसकी नियमित गति । एक प्रकाश वर्ष की दूरी १८६००० × ६० × ६० × २४ × ३६५ $\frac{१}{४}$ = २०५४३६७६००००० मील होती है । सैद्धान्तिक अनुमान है कि वह जो ब्रह्माण्ड दिखाई दे रहा है यह ५० करोड़ प्रकाश वर्ष की दूरी में (व्यास) में फैला हुआ है । हम जिस सूर्य के प्रकाश से अपना जीवन-यापन चलाते हैं, वह जिस आकाश गंगा (नेबुला) से प्रकाश लेता है, ऐसी-ऐसी दस करोड़ आकाश गंगाएँ अन्तरिक्ष में प्रकाश फैलाती हुई अरबों सूर्यों को चमका रही हैं । इसमें अन्य ग्रह-नक्षत्रों की तो संख्या गिनी भी नहीं जा सकती ।

इतना बड़ा संसार भी कितनी नियम और व्यवस्था के साथ चल रहा है और तो और हमारा मस्तिष्क गणित के द्वारा पहले ही ग्रह-नक्षत्रों के परिभ्रमण पथ पर होने वाले ग्रहण आदि संकेतों का पता लगा लेता है इसका अर्थ है कि संसार अनियमित नहीं । इतने विराट् जगत को घुमाने वाला कोई महान् शक्तिशाली तत्व होना चाहिए । अरिस्टोटल का कथन है, वह केवल ईश्वर ही हो सकता है । भगवान के अतिरिक्त और किसी में यह शक्ति नहीं "परमात्मा सृष्टि का संचालक है ।" यह उनकी मान्यता थी ।

हरबर्ट स्पेन्सर की दृष्टि में भगवान एक विराट्-शक्ति है, जो संसार की सब गतिविधियों का नियन्त्रण उसी प्रकार करते हैं, जिस प्रकार मुखिया घर का, प्रधान गाँव का, कलेक्टर जिले का, गवर्नर प्रदेश का और राष्ट्रपति सारे राष्ट्र की भोजन, वस्त्र, निवास, सुरक्षा आदि की व्यवस्था करता है । उन्होंने कहा—"राज्य के नियमों का हम इसलिए आदर करते हैं, क्योंकि हमें राज्य की शक्ति से भय होता है । नैतिक नियमों का पालन न करने पर भी हमें भय रहता है, जबकि हम उसके लिए पूर्ण स्वतन्त्र होते हैं, यह इस बात का प्रमाण है कि संसार में कोई सर्वोच्च सत्ता काम करती है, हम उसके परिचय में कभी न कभी रहे हैं, क्योंकि हम डरते हैं । निर्भीक व्यक्ति नैतिक व्यक्ति ही हो सकता है, इसलिए उसे संसार की व्यवस्था ईमानदारी और न्याय से करने वाला प्रजावत्सल तत्व होना चाहिए ।"

सुप्रसिद्ध दार्शनिक काण्ट ने हरबर्ट स्पेन्सर के कथन को अधिक स्पष्ट किया है । वह लिखते हैं—"नैतिक नियमों से स्वीकृति ही परमात्मा के अस्तित्व का प्रमाण और पूर्ण नैतिकता ही उसका स्वरूप है । संसार का बुरे से बुरा व्यक्ति भी किसी न किसी के प्रति नैतिक अवश्य होता है । चोर डकैत भी नहीं चाहते कि कोई उनसे झूठ बोले, छल कपट करे । जबकि वे स्वयं सारे जीवन भर यही किया करते हैं । अपने भीतर से नैतिक नियमों की स्वीकृति इस बात का प्रमाण है कि संसार केवल नैतिकता के लिए ही जीवित है, उसी से संसार का निर्माण, पालन और पोषण हो रहा है, इसलिए भगवान नैतिक-शक्ति के रूप में माना जाने योग्य है ।"

हैब्रयू ग्रन्थों में ईश्वर को 'जेनोवाह' कहा गया है । जेनोवाह का अर्थ है, वह जो सदैव सत्य नीति ही प्रदान करता है । मनुष्य अपने स्वार्थ के लिए दूसरों को ठगता देखा जाता है पर पाया गया है कि ऐसा व्यक्ति कुछ ही दिनों में लोगों के आदर से, सम्मान से वंचित हो जाता है । कभी-कभी तो ऐसे लोगों की इसी जीवन में दुर्गति होते देखी गई है । इस सबका अर्थ है कि विश्व की सम्पूर्ण व्यवस्था किसी सत्य के आधार पर चल रही है, जो भी उससे हटने का प्रयत्न करता है, वह पीड़ित और प्रताड़ित होता है, जबकि इन नियमों पर आजीवन आरूढ़ रहने वाले व्यक्ति सांसारिक दृष्टि से कुछ घाटे में भी रहें तो भी उनकी प्रसन्नता में कोई अन्तर नहीं आता ।

सत्य और नीति निष्ठा द्वारा संसार का नियन्त्रण करने वाली ऐसी शक्ति जो प्रत्येक व्यक्ति की आकांक्षाओं में विद्यमान रहती है, वही ईश्वर है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रसिद्ध दार्शनिक प्लेटो की ईश्वरीय मान्यता भी लगभग ऐसी ही थी, वह कहते थे—"ईश्वर अच्छाई का विचार है ।" संसार के प्रत्येक व्यक्ति यहाँ तक कि जीव-जन्तुओं को भी अच्छाई की चाह रहती है । जहाँ अच्छाई होती है, वहीं आनन्द रहता है । अच्छाई शरीर और सौन्दर्य की जो संयम और सदाचारों के द्वारा सुरक्षित हो, अच्छाई शरीर और वस्त्रों की जो धोने और स्नान करने से सुरक्षित हो, अच्छाई वातावरण की, घर, गाँव और नगरों की जो स्वच्छता और सफाई द्वारा सुरक्षित हो, अच्छाई प्रकृति की, जो हरे-भरे पौधों और खिलते हुए रंग-बिरंगे फूलों, भोले-भाले पशु-पक्षियों के कलरव और उछल-कूद से सुरक्षित हो । इस तरह संसार में हम सर्वत्र अच्छाई के दर्शन करके प्रसन्नता अनुभव करते हैं । यही प्रभुत्व हैं, इन्हीं से आनन्द मिलता है, इन्हीं से संसार में आगे का मजा आता है । सो भगवान को यदि मानें तो उसे अच्छाई का वह बीज मानना पड़ेगा, जो आँखों को दिव्य, मनोरम और बहुत प्यारा लगता ।

प्रसिद्ध वैज्ञानिक न्यूटन से एक बार उनके एक मित्र ने आश्चर्य व्यक्त करते हुए पूछा—"आप वैज्ञानिक होकर भी ईश्वर में आस्था रखते हैं ? उसकी प्रार्थना किया करते हैं ? यदि भगवान सचमुच है तो वह क्या है ?"

'ज्ञान' न्यूटन ने गम्भीरतापूर्वक उत्तर दिया । उन्होंने कहा—"हमारा मस्तिष्क ज्ञान की खोज में जहाँ पहुँचता है वहीं उसे एक शाश्वत चेतना का ज्ञान होता है । कण-कण में यह जो ज्ञान की अनुभूति भरी हुई है, वह परमात्मा का ही स्वरूप है । सृष्टि का कोई कण चेतना से वंचित नहीं, परमात्मा इसी रूप में सर्वव्यापी है । ज्ञान की ही शक्ति से संसार का नियन्त्रण होता है, विनाश करना चाहो तो भी ज्ञान की ही आवश्यकता होती है । परमात्मा इस रूप से ही सर्वशक्तिमान है । शरीर के एक-एक कोश (सेल्स) में ज्ञान की ही पैठ है और उससे कोई सूक्ष्म तत्व नहीं, जो अणु से अणु में भी प्रवेश कर सके, परमात्मा इस रूप में ही अनन्त विस्तार के जगत् में समाया हुआ है ।"

स्पिनोजा ने विज्ञान और दर्शन दोनों का अध्ययन करके बताया कि "संसार में दो प्रकार की सत्ताएँ काम कर रही हैं, एक दृश्य, एक अदृश्य । एक का नाम है, प्रकृति या पदार्थ यह दिखाई देता है । दृश्य संसार प्रकृति की ही रचना है, अपना शरीर भी पदार्थ से बना है । इसमें भी धातुएँ, खनिज, लवण, गैसें आदि भरी पड़ी हैं पर विचार उससे भिन्न है, यह दिखाई नहीं देता पर हम उसे हर घड़ी अनुभव करते हैं । हमारे जीवन की सारी क्रियाशीलता विचारों की ही देन है । विचार ठण्डे पड़ते ही शरीर ठण्डा पड़ जाता है । विचार मरे कि शरीर मर गया । मृत्यु के अन्तिम क्षण तक विचार प्रक्रिया का बने रहना यह बताता है कि विचार ही विश्व-व्यापी चेतना या ईश्वर है । विचार कभी नष्ट नहीं होते, ईश्वर भी अविनाशी है । निःसन्देह अविनाशी विचार ही भगवान हैं । या यों कहें कि भगवान का स्वरूप, गुण और विचारमय ही हो सकता है, चाहें वह किसी शक्ति कणों के रूप में हो अथवा प्रकाश रूप में पर विचारों का अस्तित्व संसार में है अवश्य । हम सदैव ही उनसे प्रेरित, प्रभावित होते रहते हैं । विचारों को कोई भी व्यक्ति अपना नहीं कह सकता । फ्रायड को भी कहना पड़ा था कि विचार अवचेतन मन से आते हैं और मनुष्य का उस पर कोई नियन्त्रण नहीं, वह कोई स्वतन्त्र सत्ता है ।"

वैज्ञानिक हीगल ने भी भगवान को सामान्य इच्छाओं से उठा हुआ, इच्छाओं को भी नियन्त्रण में रखने वाला परम (एब्सोल्यूट आइडिया) बताया है । जिस प्रकार प्रत्यक्ष में देखने से हमारा मस्तिष्क एक प्रकार से विचारों का पुंज है, इसी के किसी कोने से विचारों का प्रवाह निरन्तर चलता रहता है । इसी तरह सारे विश्व में फैले विचार किसी केन्द्रीभूत सत्ता से प्रस्फुटित हो रहे हैं, जिस प्रकार सूर्य में ऑक्सीजन जलती रहती है और हीलियम के कण उछलते रहते हैं, उसी प्रकार संसार के किसी भाग से नियमित विचारों का निर्झर झरता रहता है । उस केन्द्रीभूत सत्ता का नाम हीगल ने परमेश्वर बताया ।

संत इमर्सन और बर्कले के मत में सब आत्माओं में श्रेष्ठ शक्ति का नाम ही परमात्मा है । उन्होंने तत्व-दर्शन का सहारा लिया था । सारा संसार कहीं से उधार प्राण और चेतना ले रहा है । यह चेतना और प्राण शक्ति अपने मूलरूप में एक जैसी ही है । विचार ग्रस्त होने के कारण वह अनेक जीवों के रूप में दिखाई देती है पर आत्म-चेतना के सभी लक्षण मनुष्य और पशु, प्राणियों में समान हैं । जिस तरह बड़े विद्युतघर से विद्युत लेकर छोटे-छोटे बल्ब जलने लगते हैं, उसी प्रकार प्राणियों की चेतना भी किसी मूल तत्व से प्राण और प्रकाश लेकर अस्तित्व में आती है । जो सब आत्माओं का उद्गम है, वही परमेश्वर है । यदि आत्माओं का स्वरूप प्रकाश है तो परमात्मा भी प्रकाश है, यदि ज्ञान या विचार है तो परमात्मा भी ज्ञान या विचार है । यह सारी विशेषताएँ वस्तुतः एक ही हैं, कहने भर का अन्तर जान पड़ता है ।

डॉ. ब्रेडले भगवान को जानने के लिए अनुभवों का रूप समझने की प्रेरणा देते हैं । उनका कहना है, हमारे अन्दर जो अनुभूति कोष है, वह पदार्थ ही नहीं प्रकाश, चुम्बक, विद्युत कणों से भी भिन्न है, इसलिए उन्होंने भगवान को परम (एब्सोल्यूट) अनुभव कहा है । यह सारी बातें मिलकर एक अध्यात्मवादी सृष्टि का निर्माण करती हैं, इसलिए यूकन ने उसे अध्यात्मिक जीवन का आधार कहा । जगद्गुरु शंकराचार्य और उपनिषद दर्शन उसे ही 'अहंब्रह्मास्मि', 'तत्वमसि', 'अयमात्मा ब्रह्म', मैं ही ब्रह्म हूँ, 'परमात्मा तत्व रूप है ।' यह मेरी आत्मा ही ब्रह्म है आदि सूक्तों से सम्बोधित करते हैं । यह सारी विशेषताएँ परमात्मा के स्वरूप के भिन्न-भिन्न विशेषण हैं तत्वतः वह एक ही है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उसकी स्पष्ट अनुभूति का द्वार खोला आइन्स्टीन ने । सापेक्षवाद का सिद्धान्त (थ्योरी ऑफ रिलेटिविटी) में आइन्स्टीन ने जिस परम अवस्था (एब्सोल्यूट स्टेज) का वर्णन किया है, वह परमात्मा ही है । हम जब तक समय, स्थान, गति और कारण (टाइम, स्पेश, मोशन एण्ड काजेशन) से बँधे रहते हैं, तब तक ज्ञान, मस्तिष्क, विचार की दिशाएँ इधर-उधर दौड़ती रहती हैं, कभी भूत की बात सोचते हैं, कभी भविष्य की, कभी अपने घर की बात सोचते हैं, कभी अमेरिका, रूस या चन्द्रमा पर मानव के पदार्पण की । मस्तिष्क गति-विहीन नहीं होता कभी हो सकता भी नहीं । कारण के कारण की खोज में लगा रहता है, पर यदि इन सब बातों का भूलकर केवल मस्तिष्क में ही स्थिर हो जायें तो हमारे लिए समय, स्थान, गति और कारण कोई स्थान ही न रहेगा, हम एक परम स्थिति (एब्सोल्यूट स्टेज) में उठे हुए होंगे । वह ज्ञान, वह अनुभूति, वह अध्यात्म ही ईश्वर है और ईश्वर कोई हाथ-पैर वाला मनुष्य नहीं है ।

फिर भी कई लोग हैं जो वैज्ञानिक कारणों से न सही दार्शनिक प्रतिपादकों से ईश्वर का अस्तित्व संदिग्ध सिद्ध करते रहते हैं । विज्ञान ने ईश्वर के सम्बन्ध में केवल इतनी ही कहा है कि भौतिकी नियमों और प्रयोगशाला के उपकरणों द्वारा ईश्वर का अस्तित्व सिद्ध नहीं होता इसलिए विज्ञान उसके बारे में कुछ भी कहने में असमर्थ है । नास्तिकवादी दर्शन ने वैज्ञानिकों के इन्हीं विचारों को अपने प्रतिपादनों का आधार बनाया ।

इस सम्बन्ध में आस्तिक दर्शन की मान्यता है कि भौतिक नियमों के आधार पर चेतना की व्याख्या कर पाना न तो सहज सम्भव है और न ही हमें उसके लिए आतुर और आग्रह होना चाहिए विज्ञान भी इस सीमा तक उदार दृष्टिकोण अपनाता है यह उचित भी है ।

प्रत्यक्षवाद कितना अधूरा

पदार्थ विज्ञान का जन्म और अभिवर्धन कुछ शताब्दियों का है जबकि सृष्टि का जीवन अरबों, खरबों वर्षों का । हर्मनवेल के अनुसार, "हम प्रकृति के रहस्यों का परिचय प्राप्त करने की दिशा में क्रमशः बढ़ रहे हैं । इसमें अधीर नहीं हो रहे हैं, फिर चेतना के रहस्यों को जानने के लिए विज्ञान की वर्तमान अपरिपक्व स्थिति को ही क्यों प्रमाण भूत आधार मानें ? हमें धैर्य रखना होगा और वैज्ञानिक प्रगति की उस स्थिति के लिए प्रतीक्षा करनी होगी जहाँ पहुँच कर वह चेतना विज्ञान को भी अपने साथ सम्मिलित कर सके और अपने विकसित ज्ञान के आधार पर जीवन तत्व की व्याख्या कर सके ।"

शरीर शास्त्री सर चार्ल्स शैरिंगटन ने अपनी पुस्तक 'मैन आन हिज नेचर' में लिखा है, चेतना के स्तर की परीक्षा हम ऊर्जा नापने के उपकरणों से नहीं कर सकते । भावनाएँ और विचारधाराएँ किस स्तर की हैं और व्यक्ति के आदर्श एवं आचरण किस श्रेणी के हैं, यह जानने के लिए किसी शरीर का रासायनिक विश्लेषण करने से क्या काम चलेगा ? व्यक्तित्व अपने आप में एक रहस्य है उसकी गहराई में उतरने के लिए वे परीक्षण पद्धतियाँ असफल ही रहेंगी जो कोशिकाओं एवं ऊतकों की संरचना तक ही साथ लेकर समाप्त हो जाती हैं । मनुष्य का कलेवर ही पदार्थों से बना है इसलिए इसी का विश्लेषण, वर्गीकरण तत्व परीक्षा द्वारा सम्भव हो सकता है । चेतना एवं उसके स्तर जिस संरचना से बने हैं उनका निरूपण एवं सुधार परिवर्तन करने के लिए भौतिकी के नियम, परीक्षण एवं उपकरण निरर्थक सिद्ध होंगे ।"

भौतिकी में नोबेल पुरस्कार विजेता प्रो. ई. पी. विगनर ने कहा है—"आधुनिक भौतिकी के सिद्धान्तों से चेतना की संरचना-स्थिति एवं उतार-चढ़ावों की व्याख्या नहीं हो सकती । जिस कारणों से चेतना में उभार, उतार, चढ़ाव, परिवर्तन आते हैं और उत्थान पतन के आधार खड़े होते हैं वे तत्व कुछ और ही हैं । वस्तुओं को पतन के आधार पर प्रभावित परिवर्तित किया जाता है वे सिद्धान्त चेतना को परखने और सुधारने के लिए किसी प्रकार काम नहीं आ सकते । मस्तिष्क विद्या शरीर के एक अवयव की हलचलों का विश्लेषण तो कर सकती है, पर उस आधार पर किसी के विचार बदलने या सम्वेदनाओं को प्रभावित करने जैसे प्रयोजन बहुत ही स्वल्प मात्रा में हो सकते हैं । भौतिकी के आधार पर चेतना की व्याख्या करने के लिए जो प्रयत्न किए जाते हैं उनमें विसंगतियाँ ही भरी रह जाती हैं ।"

पदार्थ विज्ञान प्रकृति के विवरण प्रस्तुत कर सकता है पर उसकी संरचना एवं हलचलों के पीछे सन्निहित उद्देश्यों पर प्रकाश नहीं डाल सकता । परमाणु, उपपरमाणु, जीन, जीवाणु, कम्पन, ऊर्जा, प्रकाश, विकिरण का स्वरूप ही भौतिकी हमें बता सकती है, पर यह नहीं बता सकती कि ब्रह्माण्ड में भरा हुआ पदार्थ किस लिए इतनी द्रुतगति से कहाँ दौड़ता चला आ रहा है ? आकाश गंगाओं की विशालता और ग्रह-नक्षत्रों की मध्यवर्ती दूरी को नापने से हमारा क्या प्रयोजन सिद्ध होगा ? जब तक यह पता न चले कि उनका अस्तित्व किस उद्देश्य की पूर्ति में संलग्न है । भौतिकी ही यदि सब कुछ है तो उसकी व्याख्या में इतना और जोड़ना चाहिए कि यहाँ सब कुछ निरुद्देश्य है । यदि पदार्थों और हलचलों का कोई उद्देश्य नहीं तो फिर मनुष्य की सत्ता का, उसकी जीवन सम्पदा का ही कुछ प्रयोजन क्यों होगा ? उद्देश्य रहित अस्तित्व के लिए न कुछ कर्तव्य है और न अकर्तव्य । फिर नीति, नियम, अनुशासन और आदर्श की बात करना भी व्यर्थ है, भौतिकी ही यदि सब कुछ है और तत्वदर्शन निरर्थक हैं तो समझना चाहिए कि हम निरर्थक हैं कि हम निरर्थक दुनिया में, निरर्थक जीवन-यापन कर रहे हैं और अपनी उच्छृंखलता पर निरर्थक ही अंकुश लगाने की बात सोच रहे हैं । यदि भौतिकी उन्हीं निष्कर्षों तक हमें पहुँचाती

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है तो उस उपलब्धि की तुलना में आदिमकाल का पिछड़ापन किसी प्रकार भी बुरा नहीं ठहराया जा सकता

दार्शनिक कोयरे के अनुसार, "विज्ञान ने अविज्ञात पर से बहुत से पर्दे उठाये हैं और अनजान स्थिति को हटाकर जानकारी की सम्पन्नता प्रदान की है । उस पर भी बड़ी हानि यह हुई कि प्रत्यक्ष मनुष्य, अप्रत्यक्ष होता चला गया है और क्रमशः लुप्त होने के निकट जा पहुँचा है ।"

विज्ञान के अनुसार परमाणु और जीवाणु का तो अस्तित्व है, पर चेतना का नहीं । कुछ समय पहले वेदान्ती इस संसार को माया, मिथ्या, स्वप्न और भ्रमवश बताया करते थे । अब विज्ञान ने उलट कर हमला किया है और यह कहना आरम्भ कर दिया है कि मनुष्य की सत्ता माया, मिथ्या और भ्रम है । मनुष्य का न कोई अस्तित्व है और न उद्देश्य । जो कुछ है केवल पदार्थ ही है । पदार्थ ही सोचता है, चाहता है, यह कहते भी नहीं बनता फिर जो मनुष्य सामने खड़ा है और विज्ञान को उपार्जित करता है वह स्वयं क्या है ? क्या वह विज्ञान की उपज है अथवा विज्ञान में ही विलीन होने जा रहा है ।

भौतिकी के स्वरूप का निर्धारण और इतिहास को क्रमबद्ध बनाने वाले इर्विन श्रेडिगर ने अपनी प्रतिपादित 'सीक फार दि रोड' में लिखा है—पदार्थ का मूल स्वरूप, कण है या तरंग, यह विवाद महत्त्वपूर्ण नहीं, जितना कि जड़ और चेतन के पारस्परिक सम्बन्धों की गुत्थी सुलझाना । क्या जड़ ही एक स्थिति में चेतन बन जाती है ? अथवा क्या चेतना स्वयं ही जड़ है । क्या मात्र इस संसार में पदार्थ ही पदार्थ है ? चेतना का कोई स्थायित्व या अस्तित्व भी है या नहीं यह असमंजस भौतिकी ने उत्पन्न किया है । या तो उसे अपनी बात प्रमाणित करके यह घोषणा करनी चाहिए कि भौतिकी ही सब कुछ है, चेतना की पृथकता या प्रमुखता की बात व्यर्थ है अथवा दर्शन को इस स्तर के प्रमाण संचय करने चाहिए कि छाया हुआ असमंजस दूर हो सके और चिन्तन को आस्ति और नास्ति के बीच कोई स्वरूप दिशा धारा मिल सके ।

कोयरे ने झल्ला कर कहा है कि—"यह कितनी विचित्र बात है कि विज्ञान ने हर पदार्थ को मान्यता दी है, किन्तु मनुष्य का अस्तित्व ही मानने से इन्कार कर दिया है । कभी धर्म गुरु कहते थे जो हमारे साथ नहीं चलेगा वह जहन्नुम में जायेगा और अब विज्ञानी ने लगभग वैसी ही पहेली प्रस्तुत की है और कहना आरम्भ किया है जो विज्ञान को स्वीकार न करेगा वह अपनी हस्ती ही गँवा बैठेगा ।"

चेतना के अस्तित्व को अमान्य ठहराना और उसकी अवमानना करना मात्र वैज्ञानिक एवं दार्शनिक विवाद ही नहीं है । उसके निर्णय का प्रभाव मनुष्य की नैतिक, संस्कृति, समाज-व्यवस्था पर भी पड़ता है । उतावली में 'अस्वीकृति' के प्रति आग्रह जमा लिया जाय तो उसका तात्कालिक प्रभाव यह होगा कि मानवी गरिमा का मूल्यांकन स्वतः मनुष्य की अपनी ही आँखों में हो जायेगा । जब वह कुछ है ही नहीं, रासायनिक पदार्थों से बना ढकोसला ही जब उछलकूद कर रहा है और उसका अस्तित्व क्षण भर का है तो फिर नीति और धर्म का अनुशासन मानकर कष्टसाध्य जीवन जीना निरर्थक है । तब फिर बुद्धिमत्ता इसी में है कि इन क्षणों में जितना अधिक मौज-मजा लूटा जाय उससे वंचित न रहा जाय, भले ही इससे प्रचलित नीति मर्यादाओं का अतिक्रमण ही क्यों न करना पड़े ?

आत्म-गौरव का तब कोई महत्त्व नहीं रह जाता जब अपना अस्तित्व ही संदिग्ध है । ऐसी दशा में समाज व्यवस्था के प्रति अपना योगदान करने की प्रवृत्ति ही क्यों उठेगी । तब देशभक्ति, समाजसेवा, लोकहित, परमार्थ जैसे उन आदर्शों का कोई मूल्य नहीं रह जाता जिनके ऊपर व्यक्ति की श्रेष्ठता का स्वरूप बताने और उसे अपनाने वाले को श्रेय सम्मान देने की परम्परा चलती रही है । नास्तिकता की प्रतिक्रिया चरित्र निष्ठा और समाज निष्ठा पर सीधा कुठाराघात करती है । उनका आस्था परक मूल्य समाप्त करती है फिर समाज व्यवस्था के नाम पर जो अनुशासन लादा जाता है वह कोई दर्शन नहीं रह जाता । मात्र व्यवहार रह जाता है । ऐसे व्यवहार को स्वार्थ साधन के लिए तोड़ फेंकने में किसी को कोई संकोच नहीं हो सकता ।

आज धर्म और अध्यात्म की सूत्र संचालक आस्था, आस्तिकता के प्रति लोकश्रद्धा, व्यक्तिवाद और विलासी दृष्टिकोण के कारण स्वतः ही गिरती चली जा रही है फिर नास्तिकता को दार्शनिक और वैज्ञानिक मान्यता भी मिल गई तो उसे शोध की प्रगति या अन्य जो भी नाम दिया जाय, माना और गर्व किया जा सकता है, किन्तु उसका दुष्परिणाम उस संचित पूँजी को गँवाने के रूप में ही सामने आयेगा जिसे मानवी प्रयासों की लम्बी शृंखला के उपरान्त बड़ी कठिनाई से गढ़ा गया है । उच्चस्तरीय आस्थाओं का बाँध तोड़ देने के उपरान्त तो रही बची आशा भी समाप्त हो जायेगी । तब चरित्र संकट की अराजकता की प्रतिक्रिया मनुष्य को मनुष्य द्वारा फाड़-चीर कर सही निचोड़ने, चूसने और दबाने के रूप में तो प्रस्तुत होगी ही । तब नीति और न्याय का समर्थन उथले और उपहासास्पद तर्कों के सहारे ही किया जा सकेगा और उसके किसी के गले उतरने की आशा नहीं की जायेगी ।

भारतीय नास्तिकवाद में चार्वाक दर्शन प्रसिद्ध है । उनके मत का संक्षिप्त विवेचन इन दो श्लोकों में हुआ है ।

देहस्थौल्यादियोगाच्च स एवात्मा च चापरः ।
न स्वर्गो नापवर्गो वा नैवात्मा पारलौकिकः ॥
यावज्जीवं सुखं जीवेदृणं कृत्वा घृतं पिबेत् ।
भस्मीभूतस्य देहस्य पुनरागमनं कुतः ॥

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अर्थात्—काया पंच तत्वों के सम्मिलन से बनी है । यह सम्मिलन ही आत्मा है । इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं । स्वर्ग, अपवर्ग, आत्मा, परलोक आदि कहीं कुछ नहीं है ।

इस मान्यता का फलितार्थ क्या होता है ? इसका स्पष्टीकरण दूसरे श्लोक में देखा जा सकता है । जब आत्मा, कर्मफल, परलोक, पुनर्जन्म आदि कुछ है ही नहीं तो फिर जिस तरह भी हो उसी प्रकार स्वार्थ सिद्ध करने और मौज-मजा लूटने के लिए प्रयत्न करना ही अक्लमन्दी है । फिर नीति, धर्म, समाज, सदाचार आदि पर ध्यान क्यों दिया जाय और उनके बन्धनों में बँध कर अपनी सुविधाओं में कमी क्यों की जाय ? दूसरे श्लोक में यही निष्कर्ष है । चार्वाक कहते हैं—

"जब तक जीना सुख से जीना, कर्ज लेकर भी घी पीना । देह तो भस्मीभूत है । फिर आने का तो सवाल ही नहीं ।" इसी दिशा में जो मौज-मजा सम्भव हो इसी समय कर लेने की बात ही सही जँचती है । पुण्य-परमार्थ, संयम, सदाचार, सेवा आदि के लिए ऐसी मनःस्थिति में कोई स्थान नहीं रह जाता ।

चार्वाक की तरह ईसा से ३०० वर्ष पूर्व यूनान का दार्शनिक एपीक्यूरस भी इसी मत का प्रतिपादन करता था । इसने भी प्राणी को पदार्थ कहा है और चेतना को काया का उत्पादन कहा है । इतने पर भी वह इस शंका समाधान करने में असमर्थ रहा कि यदि चेतना काया का धर्म है तो मरने के बाद वह काया से अलग क्यों की जाती है ? जबकि प्रत्येक पदार्थ का गुण उसके साथ अविच्छिन्न रूप से बना ही रहता है ।

इससे अधिक स्पष्ट निष्कर्ष जर्मन वैज्ञानिक हेकल ने निकाला है । उन्होंने अपने ग्रन्थ 'दि रिडल ऑफ दी यूनिवर्स' में यह सिद्ध किया है कि परमाणु में मात्र हलचल ही नहीं चेतना भी मौजूद है और वह अपने ढंग से उसी प्रकार आगा-पीछा सोचती है जैसा कि प्राणियों की सत्ता ।

मानवी सत्ता की व्याख्या प्रयोगशाला के निष्कर्षों के आधार पर ही की जाय यह आवश्यक नहीं । प्रत्यक्ष ही सब कुछ नहीं है । उन भाव सम्वेदनाओं का महत्त्व तो दूर उनके अस्तित्व का कोई कारण तक सिद्ध नहीं किया जा सका जिनके ऊपर भावनाओं का आधार खड़ा हुआ है । स्पष्ट है कि यदि भाव तत्व हटा दिया जाय तो फिर मनुष्य सचमुच ही एक चलता-फिरता पौधा अथवा सोचने, हँसने वाला यन्त्र बनकर रह जायेगा ।

अधूरा प्रत्यक्षवाद यदि चेतना की व्याख्या करने में अतिशय उतावली करेगा, अपने साधन की अपूर्णता का ध्यान न रखेगा तो यह अत्युत्साह उस मानवी प्रगति की जड़ पर कुठाराघात ही करेगा जिसका एक अंग स्वतः विज्ञान है ।

सब कुछ व्यवस्थित और नियमबद्ध है

चेतना का मुख्य गुण है विकास । जहाँ भी चेतना या जीवन का अस्तित्व विद्यमान दिखाई देता है, वहाँ अनिवार्य रूप से विकास, वर्तमान स्थिति से आगे बढ़ने की हलचल दिखाई देती है । इस दृष्टि से मनुष्यों, जीव-जन्तु और पेड़-पौधों को ही जीवित माना जाता है, परन्तु भारतीय अध्यात्म की मान्यता है कि जड़ कुछ है ही नहीं, सब कुछ चैतन्य ही है । सुविधा के लिए स्थिर, निष्क्रिय और यथास्थिति में बने रहने वाली वस्तुओं को जड़ कहा जाता है, परन्तु वस्तुतः वे प्रचलित अर्थों में जड़ हैं नहीं ।

चेतना और उसके परिणामस्वरूप उत्पन्न होने वाली गति विकास की प्रक्रिया को पृथ्वी, सूर्य, चन्द्रमा से लेकर अखिल ब्रह्माण्ड में देखा जा सकता है । उदाहरण के लिए पिछले दिनों वैज्ञानिकों में अपने अन्तरिक्ष उपकरणों और खगोलीय शोधों के आधार पर कहा कि सारा ब्रह्माण्ड निरन्तर फैलता जा रहा है ।

कोई ५० वर्ष पूर्व की बात है—विश्वविख्यात नक्षत्रविद् डॉ. हवल अपने दूरदर्शी स्पेक्ट्रोमीटर पर सुदूर नक्षत्रों से आने वाले प्रकाश के वर्णक्रम का अध्ययन करते थे । सूर्य का श्वेत प्रकाश सात रंगों के मेल से बना है । स्पेक्ट्रोमीटर एक ऐसा यन्त्र है जिसमें एक त्रिपार्श्व काँच लगा रहता है जब प्रकाश की एक किरण को उसमें कुदाया जाता है तो इस काँच के गुण के अनुसार वह अपने सात रंगों में फूट पड़ता है । इन रंगों के वर्णक्रम से प्रकाश की स्थिति और अन्तरंग खनिज स्रोतों की जानकारी भी की जाती है । पर यहाँ जो प्रयोग चल रहा था उसका प्रयोजन आकाशगंगा की दूरी की जाँच करना था जो उस समय ब्रह्माण्ड की सीमा पर प्रतीत हो रही थी ।

जाँच के समय एक बिल्कुल ही नया तथ्य प्रकाश में आया । वर्णक्रम का लाल रंग निरन्तर सरकता और क्षीण होता प्रतीत हो रहा था, जिसका अर्थ था कि आकाश गंगा परे हट रही है । उससे आने वाला नाद भी क्रमशः मन्द पड़ता जा रहा था, उससे भी उपर्युक्त तथ्य की ही पुष्टि हो रही थी । इस परिवर्तन को 'डाप्लर प्रभाव' की संज्ञा दी गई और एक नये दर्शन ने जन्म लिया कि ब्रह्माण्ड निरन्तर बढ़ रहा है, यह चौंका देने वाली जानकारी थी, जिसने वैज्ञानिकों के सामने विचार के लिए सैकड़ों प्रश्न छोड़े हैं ।

अभी कुछ दिन पूर्व ही वैज्ञानिक डॉ. फ्रेड हायल भारतवर्ष आये थे, विज्ञान भवन में उपर्युक्त प्रश्न का उत्तर देते हुए उन्होंने कहा था—अन्तरिक्ष की गहराइयाँ जितना अनन्त की ओर बढेंगी, उसमें झाँककर देखने से मानवीय अस्तित्व का अर्थ और प्रयोजन उतना ही स्पष्ट होता चला जायेगा । शर्त यह रहेगी कि हमारा अपना भी विकास और विस्तार हो । यदि हमारी बुद्धि, विचार और ज्ञान मात्र पेट

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रजनन, तृष्णा अहन्ता तक ही सीमित रहता है तब तो हम पड़ोस भी नहीं जान सकेंगे, पर यदि इन सबसे पूर्वाग्रह मुक्त हों तो ब्रह्माण्ड इतनी खुली और अच्छे अक्षरों में लिखी चमकदार पुस्तक है कि उससे हर शब्द का अर्थ, प्रत्येक अस्तित्व का अभिप्राय समझा जाता और अनुभव किया जा सकता है ।

ब्रह्माण्ड के निरन्तर विकास का अर्थ यह हुआ कि सृष्टि में जो कुछ भी है चाहे वह पदार्थ हो, ऊर्जा हो, चुम्बकत्व हो, प्रकाश हो, अथवा विचार सत्ता जो भी स्थूल या सूक्ष्म अस्तित्व में है वह सब एक ही केन्द्र बिन्दु पर समाहित था । इस सन्दर्भ में भारतीय दर्शन और वैज्ञानिक दोनों की धारणाएँ एक जैसी हैं । प्रारम्भ में एक महापिण्ड था यह विज्ञान की मान्यता है कि उस महापिण्ड में किसी समय एकाएक विस्फोट हुआ । विस्फोट से समस्त दिशाओं में आकाश गंगाओं के रूप में पदार्थ बह निकला, अब तक की शोधों के अनुसार ब्रह्माण्ड में १६ अरब आकाश गंगाएँ हैं और हर आकाश गंगा में १० अरब तारे हैं । एक आकाश गंगा की परिधि या व्यास लगभग १ लाख प्रकाश वर्ष अर्थात् ३०००००×६०×६०×२४×३६५$\frac{१}{४}$ प्रकाश की गति का जो गुणनफल आता है वह दूरी एक प्रकाश वर्ष कहलाती है । ६५२५६०००००००० किलोमीटर दूरी १ प्रकाश वर्ष की हुई, इससे १ लाख गुना बड़ा व्यास अपनी आकाश गंगा का है जबकि उसके परिवार के दूर-दूर तक छिटके तारों की दूरी भी अरबों प्रकाश वर्ष में है अतएव इस भयंकरतम विस्तार का तो कुछ पता ही नहीं चलता ।

सूर्य और पृथ्वी के बीच की दूरी सवा नौ करोड़ मील है वहाँ से यहाँ तक प्रकाश आने में सवा ८ मिनट लगते हैं । यदि किसी तारे का प्रकाश पृथ्वी तक ८ हजार वर्षों में आता है तो उसका अर्थ यह हुआ कि वह पृथ्वी से ४७ पदम मील दूर है कि उनका प्रकाश पृथ्वी तक आने में ही अरबों वर्ष लग जायेंगे अर्थात् उस दूरी का तो अनुमान ही असम्भव है । इस तरह सृष्टि की अनन्त गहराई में अनन्त प्रकृति अनन्त रूपों में विद्यमान है ।

भारतीय दर्शन की मान्यता चेतन को मूल मानकर ज्यों की त्यों है प्रारम्भ में एक ही तत्व परमात्मा पिण्ड रूप में था उसके नाभि देश से 'एकोऽहं बहुस्याम्' मैं एक हूँ बहुत हो जाऊँ इस तरह की स्फुरणा, भावना या विचार उठा इससे वह फट पड़ा और महा प्रकृति की रचना हुई, उसमें सत, रज, तम तीन गुणों का सम्मिलन था, इन्हीं से सृष्टि में जीवन का निर्माण हुआ और सृष्टि के विस्तार की तरह ही ८४ लाख जीव योनियों का निरन्तर विस्तार होता चला गया, जिस तरह ब्रह्माण्ड विकसित हो रहा है नाना प्रकार की जीवन सृष्टि का भी विकास होता जा रहा है यह सब अत्यधिक करुणा मूलक, स्नेहजनक मातृसंज्ञक रूप से चल रहा है । भौतिक या अध्यात्मिक दोनों ही दृष्टियों से आकाश गंगाएँ माता का हृदय कही जा सकती हैं । इनसे एक ओर भौतिक जगत को आवश्यक जीवन और प्रकाश मिलता है तो दूसरी ओर जीवन सत्ता उसी से प्राण और पोषण पाती है ।

चेतन कहीं भी प्रकृति से भिन्न नहीं है किसी न किसी अवस्था में दोनों अन्योन्याश्रित हैं, "गिरा अरथ जल बीचि सम कहियत-भिन्न न भिन्न" वाली स्थिति है । यदि दोनों में से कोई इस सन्तुलन को बिगाड़ने का प्रयास करते हैं वहीं संकट पैदा हो जाता है । महापिण्ड या परमात्मा ने अपनी शक्ति स्वरूपा सहचरी आकाश गंगाओं को विपुल शक्ति देकर व्यवस्था के लिए भेज दिया । मन्दाकिनियाँ उस अनुदान को हर मण्डप के एक-एक मुखिया सूर्य को आवश्यक सम्पदाएँ सौंपती चली जाती हैं । यह सूर्य आद्य शक्ति अपनी माँ से पोषण और बल लेकर अपने समस्त सौर-मण्डल को जीवित और जाग्रत रखते हैं सबको शक्ति, प्रकाश, गर्मी, वायु, जल, वर्षा, प्रकृति, अन्न आदि देते हैं इन सबका प्रयोजन चेतना को—इच्छा शक्ति को जीवित रखना ही तो हो सकता है । यदि मनुष्य समाज की परिवार संस्थाएँ प्रेम, सद्भावना और सहकारिता के इस चुम्बकत्व को स्वयं भी धारण कर लें तो विशाल सौर परिवार की तरह करोड़ों जीवों का समुदाय एकत्र हो जाने पर भी सभी आनन्द और उल्लास का जीवन जीते रह सकते हैं ।

अनेक ग्रह-नक्षत्रों का परिवार, जिन्हें अनुशासित, मर्यादित, पोषित और संरक्षित रखने का काम निरन्तर तप कर सूर्य भगवान करते हैं । सौर परिवार या सौर-मण्डल कहलाता है । इन सब सौर परिवारों का मुखिया उनका सूर्य है । देखने में वह आग का गोला लगते हैं, पर उनमें सोडियम, लोहा, मैग्नीशियम, कैल्शियम आदि सब कुछ है, १८५६ में डॉ. मेघनाद साहा ने अपनी खोजों से यह सिद्ध किया था कि सूर्य के प्लाज्मा में दृश्य जगत का हर तत्व विद्यमान है । लोगों को सूक्ष्म अस्तित्व में भी आत्मिक आनन्द की सभी सामग्री बताई जाती है तो लोग विश्वास नहीं करते उनकी स्थूल दृष्टि में दृश्य जगत और स्थूल पदार्थ ही प्रसन्नता के मूल हैं, पर हमारी अनुभूतियाँ जितनी सूक्ष्म और विशाल होती जाती हैं रस और आनन्द के तत्व भी उसी अनुपात में असीम तृप्ति वाले बनते चले जाते हैं ।

सूर्य ने भी शक्तियों पर एकाधिकार, परिग्रह नहीं किया वह अपनी शक्तियाँ निरन्तर बाँटते रहते हैं इससे वे रिक्त नहीं हुए वरन् परमात्मा का मातृ हृदय उन्हें यथावत बनाये रखे हैं जब मनुष्य समाज ने संग्रह का पाप लाद कर कितनी अव्यवस्थाएँ बढ़ा दी हैं, यह हर कोई भली प्रकार अनुभव करता है ।

सूर्य की तरह हर तारे का अपना भी एक परिवार होता है, उसके अपने चन्द्रमा होते हैं, उसका अपना वातावरण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

होता है उसी के अनुरूप वह शक्ति का आवश्यक अंश ग्रहण करता रहता है ।

परम ब्रह्माण्ड से लेकर मन्दाकिनी परिवारों के विराट् जगत, सौर-मण्डल, तारा-मण्डल से लेकर प्रकृति के सूक्ष्म परमाणु तक में सर्वत्र नियम, क्रम, व्यवस्था और अनुशासन है । यह तत्व शान्ति और प्रगति के मूल आधार हैं उनकी उपेक्षा कहीं भी उचित और सह्य नहीं, ब्रह्माण्ड का यह विधान समान रूप से मनुष्य जीवन पर भी लागू है ।

तारों को एक प्रकार से ताप-नाभिकीय भटिट्यों की संज्ञा दी जा सकती है, इस उच्च ताप में ही तत्वों का निर्माण होता रहता है, किन्तु कहीं भी विखण्डन की स्थिति नहीं आती अन्यथा महाविस्फोट हो जाय और किसी भी एक तारे की मर्यादा भंग से सारी सृष्टि का सर्वनाश हो सकता है । सामाजिक व्यवस्था की दृष्टि से जिन्हें बड़े उत्तरदायित्व, जिम्मेदारियाँ दी जाती हैं उन्हें असीमित अधिकार देने की परम्परा प्रकृति में भी है मनुष्य समाज में भी प्रकृति अपना सन्तुलन निरन्तर बनाये हुए है इसी से संसार में सुव्यवस्था कायम है, जबकि मनुष्य इन अधिकारों का हनन करके अपने लिए देश, समाज, संस्कृति सभी के लिए संकट पैदा करता रहता है । शेक्सपियर ने सम्भवतः इसी तथ्य की ओर संकेत करते हुए जूलियस सीजर में लिखा है—"दोष अपने तारों में नहीं स्वयं मनुष्य में है ।"

ब्रह्माण्ड की गति और विस्तार का क्रम सर्वत्र एक सा है, हर ग्रह नक्षत्र अपनी धुरी पर घूमता है । पृथ्वी २४ घण्टे में अपनी एक परिक्रमा पूरी करती है जबकि चन्द्रमा ३३६ घण्टे में । अर्थात् वहाँ के दिन और रात में हमारी पृथ्वी के दिन व रात से १४ गुने बड़े दिन और १४ गुनी बड़ी रात । बुध की परिस्थितियाँ भिन्न हैं अर्थात् उसका एक भाग निरन्तर सूर्य की ही ओर बना रहता है दूसरा अन्धकार में पर अपने आप में, गतिशील वह भी है हम समझते हैं सूर्य स्थिर है, पर ऐसा नहीं वह भी १ सेकण्ड में १३ मील की गति से घूमता है, मन्दाकिनियाँ भी अपने सौर परिवारों को लेकर किसी विराट् परिक्रमा में संलग्न हैं, अपनी "स्पाइरल" आकाश गंगा की स्वयं की गति २०० मील प्रति सेकण्ड है । इसी तरह ब्रह्माण्ड १५० मील प्रति सेकण्ड की गति से विकसित हो रहा है । यह गति हर जगह है । इसी तरह प्रत्येक व्यक्ति को अपनी एक आचार संहिता ऐसी निर्धारित करनी चाहिए, जिससे समाज में गतिशीलता तो रहे पर किसी की सीमा किसी के अधिकारों का अतिक्रमण न हो । हर ग्रह अपने मुखिया की परिक्रमा में लगा है । हर चन्द्रमा अपने ग्रह का, ग्रह सौर परिवार का, सौर-मण्डल मन्दाकिनियों की परिक्रमा करते और मनुष्य को अपने देश, जाति, समाज के प्रति कर्तव्यनिष्ठ बने रहने की प्रेरणा देते रहते हैं ।

समष्टि की हलचलों का व्यष्टि चेतना पर प्रभाव

इस सृष्टि में कोई भी वस्तु सर्वथा स्वतन्त्र नहीं है । प्रत्येक वस्तु और प्राणी अपने आस-पास की दूरवर्ती और कहा जाय कि विश्व ब्रह्माण्ड की सभी ज्ञात-अज्ञात वस्तुओं और घटनाओं से प्रभावित होते हैं । प्रत्यक्षतः भले ही कोई स्वतन्त्र, अपनी मनमानी का स्वामी मालूम पड़े पर वस्तुतः उसके क्रिया-कलापों को, उनके परिणामों को कितनी ही बातें प्रभावित करती हैं ।

यह बात और है कि हम उन प्रभाव कारणों को समझ न पाते हों । हमारी स्थूल दृष्टि उन वस्तुओं की शक्ति और महत्ताएँ स्वीकार करती हैं, जो आँखों से दीखती हैं या प्रत्यक्ष अनुभव में आती हैं, किन्तु गहराई से देखा जाय तो प्रतीत होगा कि दृश्य का सूत्र संचालन अदृश्य से हो रहा है । जितनी महत्त्वपूर्ण शक्तियाँ संसार में हैं, वे सभी परोक्ष रूप से क्रियाशील हैं ।

डॉ. क्लारेन्स ए. मिल्स ने अपनी खोजपूर्ण पुस्तक "क्लाइमेट मेक्स दि मैन" में ऐसे आँकड़े प्रस्तुत किए हैं जिनसे स्पष्ट होता है कि मौसम के उतार-चढ़ाव के अनुसार अमुक बीमारियाँ घटतीं और अमुक बढ़ती हैं इसी प्रकार लोगों की प्रसन्नता-अप्रसन्नता, शान्ति तथा उद्विग्नता में भी अनायास ही अन्तर आता है । जुलाई, अगस्त में जब बड़ी गर्मी पड़ती है तब अक्सर पारिवारिक कलह बढ़ते हैं । अप्रैल से अगस्त तक की अवधि में सामूहिक उपद्रवों की बाढ़ आती है । मौसम की गर्मी लोगों का पारा गरम कर देती है । मानसून आने पर इस प्रकार के फसाद अपने आप कम हो जाते हैं ।

मौसम का मनुष्य की प्रवृत्तियों पर क्या असर पड़ता है इसका विशाल अध्ययन प्रो. ई. डेक्सटर ने किया है । उन्होंने ४० हजार अपराधों की, घटनाओं की जाँच-पड़ताल करके यह पाया कि जैसे-जैसे मौसम गरम होता गया वैसे-वैसे अपराध बढ़ते गए और जिस क्रम में ठण्डक आयी इसी अनुपात से अपराधों की संख्या घटती चली गई ।

जार्ज स्टीवर्ट ने अपने ग्रन्थ 'स्टोर्म' में यह दर्शाया है कि मौसम के उतार-चढ़ाव राज सत्ताओं को उखाड़ सकने वाले उपद्रवों की पृष्ठभूमि बना सकते हैं और ठण्डक में लोग निराश एवं ठण्डी तबियत के साथ दिन गुजार सकते हैं ।

बसन्त ऋतु मनुष्यों में ही नहीं, अन्य प्राणियों में भी कामोत्तेजना उत्पन्न करती है । गर्भ धारण का आधा औसत उन्हीं दो महीनों में पूरा हो जाता है, जबकि शेष दस महीनों में कुल मिलाकर उतनी ही मात्रा पूरी होती है । कोई अविज्ञात शक्ति प्राणियों के मन में अकारण ही प्रणय केलि के लिए उत्साह भर देती है और वे उस दिशा में किसी के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

द्वारा खींचे, धकेले जाने वाले की तरह उस प्रयोजन में प्रवृत्त हो जाते हैं ।

सूर्य विशेषज्ञों का कथन है कि जिन दिनों सूर्य में लम्बे धब्बों की लाइनें बनती हैं, भयंकर विस्फोट होते हैं उन दिनों लोगों के दिमागों और परिस्थितियों में भी भयंकर उथल-पुथल होती है । अमेरिकी क्रान्ति, फ्रान्सीसी राज क्रान्ति, रूसी क्रान्ति उन्हीं दिनों हुई जिन दिनों सूर्य में चिन्ह धब्बों के रूप में दिखाई पड़ रहे थे । इनका असर मौसम, फसल, वनस्पति, समुद्र तथा प्राणियों की शारीरिक और मानसिक स्थिति पर असाधारण रूप से पड़ता है ।

सूर्य-ग्रहण के समय प्रकृति पर पड़ने वाले प्रभाव तो आसानी से देखे व समझे जा सकते हैं । जब सूर्य-ग्रहण होता है चौबीस घण्टे पूर्व से ही कुछ पक्षी चह-चहाना बन्द कर देते हैं, बन्दर वृक्षों को छोड़कर चुपचाप जमीन पर आकर बैठ जाते हैं सदा चंचल रहने वाला बन्दर उस समय इतना शान्त हो जाता है कि लगता है उस जैसा शान्त और सीधा प्राणी कोई है ही नहीं । बहुत से जंगली जानवर भयभीत से दीखने लगते हैं ।

वैज्ञानिक अन्वेषक निरन्तर इस तथ्य की पुष्टि कर रहे हैं कि हमारी धरती का भाग्य ऊपर लोकों तथा ग्रहों से सीधा सम्बद्ध है । सूर्य में सतत एक विशेष प्रकार के ज्वाला प्रकोप फूटते रहते हैं, तब धरती पर प्रचण्ड चुम्बकीय तूफान उठते हैं और मानसिक दृष्टि से क्षीण व्यक्ति अस्त-व्यस्त हो उठते हैं, उनकी कमजोरी, खीझ और परेशानी बढ़ जाती है । इससे शराबखोरी, झगड़े-टंटे, सड़क दुर्घटनाएँ, आत्म-हत्याएँ आदि की संख्या कई गुनी बढ़ जाती हैं क्योंकि मस्तिष्कीय विद्युत की अल्फा एनर्जी पृथ्वी के चुम्बकीय क्षेत्र से सम्बद्ध है और धरती का चुम्बकीय क्षेत्र आकाशीय पिण्डों से जुड़ा है । इस तरह आकाशीय पिण्ड हमारे जीवन को सीधे प्रभावित करते हैं । पदार्थ में ऊर्जा कम्पन के रूप में होती है । तीव्रतम कम्पन की स्थिति में पदार्थ ऊर्जा में परिवर्तित हो जाते हैं । जड़-पदार्थों की सक्रियता का कारण इलेक्ट्रॉनिक शक्तियाँ हैं । ये सौर-मण्डल की ही शक्तियाँ हैं ।

विगत २२ फरवरी १९५६ की रात्रि में सूर्य में प्रचण्ड विस्फोट हुआ और सौर-कण धरती की ओर तेजी से दौड़े । उन्हीं सौर-कणों की वायुमण्डल से टकराहट से कई एशियाई देशों और आस्ट्रेलिया में भयानक आँधी तूफान आये ।

पहले माना जाता था कि पृथ्वी का मौसम केवल सूर्य के ही द्वारा मुख्यतः प्रभावित होता है । पर अब जाना गया है कि एक्स विकिरण के अनेक तारे अनन्त आकाश में हैं । छः वर्षों में ऐसे तीस तारे खोजे जा चुके हैं । पहला तारा १९६२ में प्रक्षेपास्त्रों के परीक्षण के दौरान खोजा गया, जिसकी पृथ्वी से दूरी १ हजार प्रकाश वर्ष है । पाया गया कि यह वर्तमान सौर एक्स विकिरण की अपेक्षा दस लाख गुनी तीव्र गति से एक्स विकिरण कर रहा है । इसका नाम रखा गया—स्को एक्स वन । अभी विशिष्ट प्रभाव सम्पन्न अनेक तारे हैं, जिनकी विविध प्रकार की अति महत्त्वपूर्ण किरणें हैं । वैज्ञानिक अभी इनकी बावत कुछ नहीं जान सके हैं ।

वैज्ञानिकों का मत है कि अन्तर्ग्रही शक्तियों के परिवर्तनों से मानवी काया में विभिन्न प्रकार के परिवर्तन आना स्वाभाविक है । इसका अनुमान चन्द्रमा की घट-बढ़ से लगाया जा सकता है । गाँधी मेडिकल कॉलेज (भोपाल) के डॉ. बी. के. तिवारी ने अपने शोध-पत्र प्रस्तुत करते हुए बताया है कि चन्द्रमा की कलाओं का नारी के मासिक धर्म पर विशेष प्रभाव पड़ता है ।

"मासिक का चक्र और उससे सम्बद्ध घातक घटनाएँ" नामक विषय पर 'फोरेंसिक मेडिसन तथा टाक्सिकॉलॉजी' के प्रथम कांग्रेस में चर्चा करते हुए डॉ. तिवारी ने कहा कि पूर्णिमा के दिन का चाँद नारी में अवसाद और मानसिक तनाव की स्थिति उत्पन्न करता है । लम्बे समय तक चल रहे शोध कार्यों से पता चला है नारी के मासिक चक्र के नियन्त्रण की प्रक्रिया बड़ी जटिल है । रक्त स्राव व हारमोन की घट-बढ़ के कारण महिलाएँ डिप्रेशन का शिकार बनती चली जाती हैं । उनके द्वारा हत्या और की जाने वाली आत्म-हत्याओं की घटनाएँ भी इसी समय अधिक होती देखी गई हैं । १२ से ५० वर्ष की ५० महिलाओं के मृत शरीरों का परीक्षण डॉ. तिवारी ने किया और निष्कर्ष निकाला कि इनकी मृत्यु मासिक काल में ही हुई । इनमें से ३३ दुर्घटना, १५ आत्म-हत्या, १ मानवघात के रूप में काल का ग्रास बन गईं । मात्र १ महिला प्रकृतिक रूप से मृत्यु को प्राप्त हुई थी । ये मौतें पूर्णिमा के निकट ही हुईं ।

चिकित्सा विज्ञान के विशेषज्ञों का कहना है कि ये दुर्घटनाएँ नारी की मानसिक दुर्बलताएँ के फलस्वरूप हुई हैं जिसका एकमात्र कारण चन्द्र कलाओं का समस्त विशेष पर कुप्रभाव ही सिद्ध हुआ है ।"

अनेकानेक प्रमाणों से यह स्पष्ट होता है कि मानव के चिन्तन को परोक्ष रूप से प्रभावित करने में मौसम की महत्त्वपूर्ण भूमिका है । यह भी प्रकारान्तर से ग्रह-नक्षत्रों से आने वाली किरणों के प्रवाहों से विनिर्मित होता है । इस तरह कई बार जब अपराधों, आत्म-हत्याओं, रोगों की अनायास बाढ़-सी आने लगती है तो देखा जाना चाहिए कि कहीं अन्तर्ग्रही परिस्थितियाँ तो इसका कारण नहीं हैं । यदि ऐसा है तो स्वयं को, अन्यों को इन प्रभावों से बचाकर अपने सुरक्षा कवच को मजबूत बनाकर अप्रिय प्रसंगों से बचा जा सकता है । ज्योतिर्विज्ञान की जानकारी इस प्रकार अनिवार्य भी है, लाभकारी भी ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अन्तर्ग्रही परिस्थितियों का मानवी स्वास्थ्य पर प्रभाव

जिन दिनों सूर्य में धब्बे अधिक बढ़ते हैं, उन दिनों धरती के वातावरण पर असाधारण प्रभाव पड़ता है । यों सूर्य पृथ्वी से १५ करोड़ किलोमीटर दूर है फिर भी उसकी प्रखरता इतनी है कि पृथ्वी को वही सबसे अधिक प्रभावित करता है । ऋतु परिवर्तनों से लेकर प्रकृति प्रकोपों और पदार्थों के उत्पादनों पर उसके कारण ही अनपेक्षित हेर-फेर होते रहते हैं ।

मनुष्य के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य पर सूर्य की सक्रियता का सीधा प्रभाव पड़ता है । वर्तमान स्थिति को देखते हुए इस कारण हृदय रोगों की वृद्धि होती देखी जा सकती है । इन्फ्लुएंजा जैसी बीमारियाँ फैल सकती हैं । मानसिक सन्तुलन गड़बड़ाने से ट्रेफिक दुर्घटनाओं की संख्या अनायास ही बढ़ जाती है ।

पिछले दिनों इण्टरनेशनल फिजीकल वर्ष मनाया गया था । उस अवधि में सभी देशों के चिकित्सकों ने सूर्य धब्बों से मानवी स्वास्थ्य का सम्बन्ध जुड़ने की बात स्वीकारी थी । मनोरोगों की घट-बढ़ के साथ इन धब्बों की संगति जुड़ते देखकर इसे शोध प्रसंगों में भी सम्मिलित किया गया है । हैलियो-बायोलॉजी और कासमॉस साइकोलॉजी (ब्रह्माण्डीय मनोविज्ञान) जैसी विज्ञान की नवीन धाराएँ इसी निमित्त विकसित हो चली हैं । क्लीनिकल इकोलॉजी भी पिछले दिनों उभर कर आयी हैं जिसमें मौसम के प्रभावों का पर्यवेक्षण किया जाता है ।

चन्द्रमा की घट-बढ़ का मानवी स्वास्थ्य में आने वाले उतार-चढ़ावों के साथ सम्बन्ध एक सुविदित तथ्य है । शारीरिक और मानसिक परिस्थितियों में इस कारण आश्चर्यजनक परिवर्तन होते देखे गए हैं । समुद्र में अमावस्या पूर्णिमा को ज्वार-भाटे आते हैं । प्रायः ऐसा ही प्रभाव मस्तिष्क पर भी पड़ते देखा गया है । पागलखानों के कार्यकर्त्ताओं को सचेत रखा जाता है कि वे इन दिनों विशेष रूप से सतर्कता बरतें, क्योंकि उन दिनों मनःस्थिति में असाधारण हेर-फेर होते पाये गए हैं ।

अस्पतालों में रिकॉर्ड से विदित है कि मिरगी, चर्मरोग उन्माद, भयाक्रान्त रोगी प्रायः अमावस्या के आसपास ही अधिक भर्ती होता है । सूर्य और चन्द्र जब १८० अंश पर होते हैं तब उनका बढ़ा हुआ चुम्बकत्व दबे हुए रोगों को उभारता है ।

स्वीडन के विज्ञानी सेन्टीअर होनिस ने आँकड़ों के आधार पर सिद्ध किया है कि अधिकांश स्त्रियों का मासिक धर्म अमावस्या पूर्णिमा के इर्द-गिर्द ही होता है । अमेरिका की "जनरल ऑफ गायनोकोलॉजी" पत्रिका में छपे एक लेख में ऐसे तथ्य प्रकाशित किए गए हैं, जिनसे ऋतु स्राव के उतार-चढ़ावों की संगति चन्द्रमा की घटती-बढ़ती कलाओं के साथ जुड़ती हैं ।

प्रसिद्ध सर्जन डॉ. एडीसन एन्ड्रीज ने अपने ऑपरेशन अनुभवों का वर्णन करते हुए लिखा है कि पूर्णिमा के आसपास हुए ऑपरेशनों में अधिक रक्त प्रवाह हुआ और कठिनाई से रुका मेयोक्लिनिक एवं अन्य बड़े हास्पिटलों की नर्सों ने भी इस तथ्य की पुष्टि की ।

ईसा से ४६० वर्ष पूर्व महामनीषी हेपोक्रेटस ने कहा था—"जिस चिकित्सक को ज्योतिष का ज्ञान नहीं, उसे चिकित्सक कहलाने का अधिकार नहीं ।"

सत्रहवीं सदी का प्रसिद्ध डॉक्टर निकोलस क्लेवीयस अपने समय का माना हुआ खगोलविद् भी था । उसने अपने निजी अनुभवों से यह विवरण प्रकाशित किया है कि किस प्रकार के रोग किन तिथियों में घटते-बढ़ते रहते और उपचार में उनका ध्यान रखने से किस प्रकार चिकित्सक को रोग निवारण में सफलताएँ एवं श्रेय मिलता है ।

यह समय भी कुछ ऐसा ही विषय है जिसमें अन्तर्ग्रही परिस्थितियाँ मानवी स्वास्थ्य पर अवांछनीय प्रभाव डाल सकती हैं । ऐसी दशा में हमें सामान्य से अधिक सतर्कता बरतनी चाहिए और आहार-विहार की उपयुक्तता का विशेष रूप से ध्यान रखना चाहिए ।

पृथ्वी के इर्द-गिर्द चल रहीं अवांछनीय हलचलें

ग्रह नक्षत्रों की दुनिया में आमतौर से मर्यादाओं का पालन ही चलता है । सभी अपने-अपने रास्ते चलते, परिभ्रमण कक्षाओं में घूमते रहते हैं । पर जब कभी वे परस्पर टकराते हैं तो न केवल अपना अस्तित्व गँवा बैठते हैं वरन् सम्बद्ध क्षेत्र में भी अव्यवस्था उत्पन्न करते हैं ।

खगोल वैज्ञानिकों के अनुसार मंगल और वृहस्पति के बीच किसी ग्रह का चूरा परिभ्रमण कर रहा है । उसमें असंख्यों छोटे-बड़े उल्का खण्ड हैं । समझा जाता है कि सौर-मण्डल की कोई दो सदस्य ग्रह किसी कारण आपस में टकराये होंगे और हार-जीत से पहले ही दोनों चूरा बनकर अन्तरिक्ष में छितरा गए हैं । यह कबाड़ा उन्हीं का ध्वंसावशेष, बनकर भ्रमण कर रहा है । टकराव के परिणाम प्रायः ऐसे ही होते हैं । इसलिए विज्ञजनों की सहकारिता और मर्यादा पालन के लिए जन-साधारण को प्रशिक्षित एवं सहमत करने के लिए भरसक प्रयास किया जाता है ।

पृथ्वी के इर्द-गिर्द एक के बाद कवचों की परतें लिपटी हुई हैं । उनसे टकराकर अन्तरिक्षीय उल्का पिण्डों से हो सकने वाली क्षति बची रहती है । उल्का पिण्ड धरती पर आक्रमण करते हैं । वायुमण्डल में प्रवेश करते-करते जल-भुनकर राख होते रहते हैं । इतने पर भी यह नहीं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समझ लेना चाहिए कि खतरा बिल्कुल टल गया । ढाल इतनी मजबूत नहीं है जिसे कोई भी हथियार वेध न सके । पृथ्वी पर अन्तरिक्षीय विघातक आक्रमण का खतरा बना रहता है । इतना ही नहीं इन दिनों तो उन आशंकाओं का अनुपात बढ़ता ही जा रहा है ।

विशाल ब्रह्माण्ड में विद्यमान ग्रह नक्षत्रों के विशाल समुदाय में अपनी पृथ्वी का आकार एक धूलि कण के समान है । अन्तरिक्ष में कितने ही नये तारकों का उद्भव एवं पुरानों का समापन होता रहता है । इस जन्म-मरण की प्रक्रिया में कई बार बड़े टकराव ही निमित्त कारण होते हैं । पृथ्वी की आयु बीस करोड़ वर्ष मानी जाती है । यह ब्रह्माण्ड काल के आयुष्य को देखते हुए चुटकी बजाने जितनी स्वल्प है । फिर भी इसे सौभाग्य ही कहना चाहिए कि उसे किसी अन्तरिक्षीय दुर्घटना का अब तक शिकार नहीं होना पड़ा । तथापि यह नहीं समझा जाना चाहिए कि खतरे की कोई आशंका नहीं है । वह सिर पर मंडराता ही रहता है । कई बार तो वह और भी अधिक सघन होता देखा गया है । अपने समय की ऐसी ही आशंकाओं से घिरा समझा जाय तो उसे अत्युक्ति नहीं कहा जायेगा ।

अन्तरिक्ष विज्ञानी बताते हैं कि कई हजार वर्ष पूर्व शुक्र और पृथ्वी की टक्कर होते-होते किसी प्रकार बच गई । दोनों के प्रभाव क्षेत्र इतने समीप आ गए थे कि टकरा जाने जैसा माहौल बन गया था । विपत्ति तो टल गई पर पृथ्वी की धुरी २३ अंश एक ओर झुक गई और इससे मौसम में असाधारण परिवर्तन हुए ।

साइबेरिया की पांडकामेन्नाया क्षेत्र में ३० जून सन् १९०८ में एक भयंकर उल्कापात हुआ था । उसके कारण वह क्षेत्र बुरी तरह काँप गया था । यूरोप और एशिया के अधिकांश भागों में उसकी रोशनी देखी गई और हजारों मील तक उसकी धमक सुनी गई थी । दूर-दूर का क्षेत्र जल-भुन गया था । यह बड़ी उल्का थी । यदि कोई बड़ी आकृति टकराई होती तो उसका क्या परिणाम होता यह अनुमान लगाना कठिन नहीं है ।

खगोल शास्त्रियों के अनुसार ३० अक्टूबर, १९३७ में भी ऐसा ही संकट आया था । जर्मन ज्योर्तिविद रीन मथ के अनुसार एक उल्का पिण्ड बीस मील प्रति सेकण्ड की गति से पृथ्वी की ओर लपकता आ रहा था । उसका व्यास दो मील के लगभग था । बचकर निकल गया तो अच्छा ही हुआ । अन्यथा कोई बड़ी दुर्घटना घटित होती । कुछ घण्टे ही उसकी दिशा वही रहती तो इतना भयानक विस्फोट होता जिसकी तुलना में अणु बमों के एक बड़े समूह का प्रहार भी तुच्छ प्रतीत होगा । वैज्ञानिकों का कथन है कि अन्तर्ग्रही प्रभावों को जानना इसलिए अत्यन्त जरूरी है कि हम सुरक्षा की व्यवस्था कर सकें एवं ऐसे कारण उत्पन्न न करें जो इन विक्षोभों को और भी बढ़ाने में सहायक हों ।

क्या इन दिनों हम अनिष्ट काल में से गुजर रहे हैं ?

उथल-पुथल इन दिनों न केवल अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में हो रही है वरन् समाज व्यवस्थाएँ भी बदल रही हैं । लोगों की आकांक्षाएँ और आदतें भी । मनःस्थिति में अनेक कारणों से उलट-पुलट हुई है । फलतः उसकी प्रतिक्रिया और परिस्थितियों में भी चकित कर देने वाला परिवर्तन हुआ है ।

प्रकृति क्षेत्र एवं धरती का वातावरण भी इससे अछूता नहीं रहा है । मनुष्य का भविष्य अधर में झूल रहा है । भविष्य की सम्भावना चौराहे पर खड़ी है वह उत्कर्ष या विनाश की किसी भी दिशा में कदम बढ़ा सकती है । यह बात पृथ्वी के सम्बन्ध में भी लागू होती है । वह ऐसे सन्धिकाल में होकर गुजर रही है, जिसमें अपने इस धरातल को विषम विपत्ति में भी फँसना पड़ सकता है ।

विज्ञानी राबर्ट डाएत्ज के अनुसार पृथ्वी के इतिहास में दस हजार वर्ष की अवधि में अनेकानेक असाधारण परिवर्तन होते रहे हैं । उनका बड़ा कारण आकाश से उतर कर किसी बड़े उल्का पिण्ड का धरती से टकराना होता रहा है । साधारण उल्काएँ तो आये-दिन पृथ्वी के कवच को चीर कर नीचे उतरती और वायु संघर्ष से जलकर भस्म होती रहती हैं । कुछ अधिक बड़ी और कड़ी होने के कारण जमीन से भी टकराती हैं और जहाँ गिरती हैं वहाँ बर्बादी खड़ी करती हैं, पर बहुत बड़े पिण्डों की बात दूसरी है । वे टकराते हैं तो पृथ्वी के क्रम एवं प्रवाह में उथल-पुथल उत्पन्न करते हैं । चन्द्रमा को खाई-खड्डों वाला स्वरूप इन उल्का आघातों के कारण ही हुआ है ।

पृथ्वी के इर्द-गिर्द कुछ दिनों से 'इकॉरस' नामक विशालकाय उल्का पिण्ड चक्कर लगा रहा है । सन् १९६८ में यह धरती के बहुत निकट आ गया था । सन् १९८३ में भी एक बार फिर लौटा, किन्तु टकराने जैसी परिस्थिति नहीं बनी । परिधि का स्पर्श करते हुए दूसरी ओर चला गया । इसकी आँख मिचौनी समाप्त नहीं हुई है । कभी आ टकराया तो २० करोड़ मैगाटन के परमाणु बम फटने जैसा विस्फोट उत्पन्न करेगा और जहाँ कहीं टकरायेगा वहाँ का स्वरूप ही बदल देगा । सारी पृथ्वी उसमें प्रभावित होगी ।

इकॉरस का छोटा भाई एक और उल्का पिण्ड है—तोरो । यह आकार में छोटा है तो भी ऐसा है कि टकराने पर कोई भयानक दुर्घटना खड़ी कर सके । यह पाँच किलोमीटर व्यास का है, तो भी तेजी से गिरने पर पृथ्वी की धुरी तक को हिला सकता है और उतने भर से जल, थल का वर्तमान नक्शा बदल सकता है । मौसम चक्र में असाधारण परिवर्तन हो सकता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

ध्रुव क्षेत्र के विशेषज्ञ एच. एन. ब्राउन का अनुसन्धान है कि इन दिनों दक्षिणी ध्रुव पर बर्फ का भार निरन्तर बढ़ रहा है । यह ऐसे ही बढ़ता रहा तो कुछ ही समय में पृथ्वी की धुरी बदल जायेगी और कहीं से कहीं जा पहुँचेगी । वर्तमान धुरी सात हजार वर्ष पहले बनी थी । अब हिम भार में असन्तुलन उत्पन्न होने के कारण सन् २००० के आस-पास फिर परिवर्तित हो सकती है । चार्ल्स हैपवुड ने भी इस मत का समर्थन किया है । ध्रुव स्थान बदलते हैं तो उसका प्रभाव धरती की क्रम व्यवस्था में भारी परिवर्तन होता है । अब तक तीन बार ऐसा हो चुका है । इन दिनों ध्रुवों में खिसकने की गति में तेजी आयी है । सन् २००० तक इनकी स्थिति ऐसी हो सकती है जिसका प्रभाव पृथ्वी की धुरी बदलने के रूप में सामने आये और उसके फलस्वरूप भारी उथल-पुथल मचे ।

धुरी में राई-रत्ती हेर-फेर होने पर भयानक भूकम्पों जैसी स्थिति बनती है । जिन्हें भूकम्पों का इतिहास विदित है वे जानते हैं कि इस आधार पर पिछले दिनों कैसे विचित्र उपस्थित हुए हैं । चिली के भूकम्प ने समुद्रतल १००० फुट ऊँचा उठा दिया था । १९५० में हिमालय क्षेत्र में जो भूकम्प आया था उससे चोटियाँ १०० फुट तक ऊँची हो गई थीं । पृथ्वी का सन्तुलन बनाये रहने के लिए हिमालय की चोटियों को जिस सीमा में रहना चाहिए अभी वे उससे ६०० फुट अधिक ऊँची हो गई हैं । यदि भूकम्पों ने उन्हें और भी ऊँचा उठाया तो पृथ्वी का सन्तुलन डगमगा सकता है और महाद्वीपों के स्थान परिवर्तन करना पड़ सकता है । ऐसे अवसरों पर खण्ड प्रलय जैसे दृश्य उपस्थित होते हैं ।

सन् १९८२-८३ में जितनी सर्दी पड़ी थी उतनी पिछले सौ वर्षों में कभी नहीं पड़ी । सम्भावनाएँ हैं कि ऐसी अनियमित अव्यवस्थाओं का दौर आगे भी चलता रहेगा और मौसम अपने सामान्य विधि-व्यवस्था का व्यतिक्रमण करके उछल-कूद की उलट-पुलट की नीति अपनाता रहेगा ।

इसका कारण खोजने वालों ने कई प्रकार के अनुमान लगाये और कारणों का पर्यवेक्षण करते हुए कई कतिपय निष्कर्ष निकाले कैलीफोर्निया जेट प्रोपल्शन लेबोरेटरी के मौसम विशेषज्ञ रिचर्ड विलसन का अभिमत है कि सूर्य कलंकों की वर्तमान स्थिति इसके लिए जिम्मेदार है । सन् १९७९ से इस सन्दर्भ में एक विसंगति क्रम चला है और वह १९९९ तक इसी प्रकार बेतुके ढंग से चलता रहेगा । इस कारण सूर्य की गर्मी प्रायः एक प्रतिशत धरती पर कम आयी और उस कारण सर्दी बढ़ी है ।

पिछले दो ढाई सौ वर्ष पूर्व भी ऐसा हो चुका है,। सन् १६४५ से १७१५ तक भी इसी कारण यूरोप और अमेरिका में भयानक ठण्ड पड़ी थी और उन दिनों उसे मिनी हिमयुग कहा जाने लगा था । बिगड़ा सन्तुलन उस समय तो सध गया था । पर जब भूत ने घर देख लिया तो फिर कभी भी छप्पर से कूदकर आँगन में आ धमक सकता है ।

१९८२ के मार्च, अप्रैल महीनों नें मैक्सिको का अलचिनोन ज्वालामुखी फटा था । इसका मलवा असाधारण था वह आसमान में ३० किलोमीटर ऊँचा उछल गया । इतनी ऊँचाई पर चलने वाली हवाओं ने उसे पकड़ लिया और उत्तरी गोलार्द्ध के एक बड़े भाग पर उस धूलि को बिखेर दिया उससे धूप के पृथ्वी तक आने में रुकावट उत्पन्न हुई । उस कमी के कारण ठण्ड का अनुपात बढ़ गया । माउन्टेन न्यू के नासा अनुसन्धान केन्द्र के विज्ञानी ब्रायन ट्रन का कथन है कि यह प्रभाव अभी देर तक बना रहेगा ।

ठीक ऐसा ही घटनाक्रम अब से १५० वर्ष पूर्व और भी घटित हो चुका है । सन् १८१६ में यूरोप में ठन्डे मौसम के कारण फसल को पाला मार गया था और उत्तर-पूर्व अमेरिका में जून से अगस्त तक बर्फ गिरी थी जबकि उन दिनों क्षेत्र में गर्मी पड़ा करती है । विशेषज्ञों के अनुसार इसका कारण उन दिनों इण्डोनेशिया ने तंवोरा ज्वालामुखी से हुआ भयंकर विस्फोट था । उस शताब्दी का यह अपने ढंग का अनोखा विस्फोट था । उसमें भी ऐसी ही धूलि उछली थी । फलतः सूर्योदय और सूर्यास्त के समय आसमान लाल दीखता था । चन्द्रमा पीले के स्थान पर नीला दीखने लगा था ।

अमेरिका की नेशनल एकेडेमी ऑफ साइन्सेज ने इस बदलते मौसम का एक और कारण बताया है । उसने एक नये सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है । उसके विशेषज्ञों का कथन है कि जिस प्रकार पृथ्वी और सूर्य के परिक्रमा चक्र में दूरी और समीपता के कारण सर्दी-गर्मी का मौसम बदलता है । ठीक उसी प्रकार अपना सूर्य भी महासूर्य के इर्द-गिर्द परिक्रमा करता है । उसकी कक्षा भी पृथ्वी जैसी चपटी है । इस कारण इसी में अन्तर पड़ता है । इसका सौर-मण्डल के ग्रहों पर प्रभाव पड़ता है । पिछले ५००० वर्षों में पृथ्वी समेत सौर-मण्डल अन्तर्ग्रही परिभ्रमण पथ की उष्णता परिधि में रह रहा था अब वह सर्दी के दौर में प्रवेश कर रहा है । फलतः ठण्डक बढ़ रही है ।

इन दिनों सूर्य की क्रियाशीलता अधिकतम है । इन्हीं दिनों पृथ्वी के वातावरण में धूमकेतुओं का प्रवेश हो रहा है । इन परिस्थितियों का धरातल पर मनुष्य आदि प्राणियों पर प्रभाव पड़े बिना नहीं रह सकता । खगोलविद् फ्रेडहाइल ने पुरातन अनुसन्धान के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला है कि जब कभी ऐसी परिस्थितियाँ आयी हैं तब महामारियाँ फैली हैं । धूमकेतुओं की समीपता से पृथ्वी के वातावरण में भारी परिवर्तन होता है ।

आमतौर से सूर्य की सक्रियता ११ वर्ष के साइकिल चक्र के अनुरूप बढ़ती पायी गई है । जब उस पर धब्बे अधिक बढ़ते हैं तब सक्रियता भी बढ़ती है । उस बढ़ोत्तरी

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

से धरती का सारा वातावरण प्रभावित होता है । वस्तुओं से उत्पादन और प्राणियों के स्वभाव एवं स्तर पर उसका प्रभाव पड़ता है ।

ब्रिटिश खगोल वेत्ता वाल्टर मौन्डेर ने विगत कई शताब्दियों में हुए सूर्य कलंकों का इतिहास संग्रह किया है । उनके अनुसार जब भी सूर्य सक्रियता बढ़ी है । तब-तब विक्षोभ, उपद्रव एवं प्रकृति प्रकोप होते रहे हैं । इसके विपरीत वे धब्बे जब घट जाते हैं तब अपेक्षाकृत अधिक शान्ति रहती है । अमेरिका में विगत ३०० वर्षों में जब-जब सूखा पड़ता रहा है तब-तब सूर्य की विपन्नता उसके साथ जुड़ी है । आस्ट्रेलिया के हिमनदों के पीछे हटना उसकी लम्बाई घट जाना अन्तरिक्षीय कारणों से सम्बन्धित माना गया है ।

सूर्य धब्बों की संख्या बढ़ती है तो उसकी लपटों की परिधि भी बढ़ती है और विद्युत आवेश वाले कणों की बौछार होने लगती है । इसका प्रभाव सौर-मण्डल के ग्रहों-उपग्रहों पर पड़ता है । अन्यत्र उसका क्या प्रभाव पड़ा इसकी जाँच-पड़ताल के उपयुक्त साधन अभी मनुष्य के पास नहीं है तो भी पृथ्वी पर इसका प्रत्यक्ष प्रभाव अनेक परीक्षणों से भली-भाँति सिद्ध होता है ।

फ्रान्सीसी वैज्ञानिक निकोलस के अनुसार सूर्य की चुम्बकीय बौछार बढ़ने से धरातल से ऊपर १५ से ५० किलोमीटर ऊपर का स्ट्रेटोस्फीयर एवं ट्राफोस्फीयर कवच अत्यधिक प्रभावित होता है और एक विशेष प्रकार की अल्ट्रावायलेट तथा एक्स किरणें धरातल की ओर उगलने लगता है । इस कारण पृथ्वी पर अदृश्य चुम्बकीय हलचलें उत्पन्न होती हैं । उनका कहना है कि पुरातन काल के विशालकाय महागज, महासरीसृप जैसे प्राणियों के उद्भव और विनाश में सूर्य कलंकों के घट-बढ़ ने विशेष भूमिका निभाई है ।

प्रस्तुत अन्तर्ग्रही परिस्थितियाँ पृथ्वी की सुस्थिरता और सुखद सम्भावनाओं को चुनौती देती हैं । इनसे डरने की तो आवश्यकता नहीं पर हमें जानकारी तो रहनी ही चाहिए और यदि प्रकृति प्रवाह के परिवर्तन में मानवी चेतना के हस्तक्षेप की आशा बँधती हो तो उसके लिए भी प्रयत्नशील होना चाहिए ।

यद्यपि यह सच है कि अपने पुरुषार्थ के बलबूते मनुष्य बहुत कुछ कर सकता है, फिर भी इसके साथ यह तथ्य भी अनिवार्य रूप से जुड़ा है मानवी पुरुषार्थ की एक सीमा है । सफलता-असफलता में उपलब्ध परिस्थितियों एवं अन्यों के सहयोग की भी आवश्यकता पड़ती है । जिस भू-भाग पर मनुष्य निवास करता एवं उसके अनेकानेक अनुदानों का लाभ उठाता है वह भी स्वतन्त्र एवं स्वावलम्बी नहीं है । पृथ्वी सम्पदा का एक बड़ा भाग अन्य ग्रहों की कृपा से प्राप्त होता है । सूर्य की अनुकम्पा से ही पृथ्वी पर जीवन का अस्तित्व बना हुआ है । जीव-जन्तु, पेड़-पौधे सूर्य ऊर्जा से ही जीवन धारण करते हैं । अजस्र अनुदान का यह क्रम रुक जाय तो पुरुषार्थी होते हुए भी मनुष्य कुछ भी नहीं कर सकता । समस्त पशु-पक्षी, वनस्पति एवं मनुष्य जाति का अस्तित्व संकट में पड़ जायेगा । भू-लोक का अन्तर्ग्रही अनुदान उनके आपसी सन्तुलन पर निर्भर करता है । ग्रहों के आपसी असन्तुलन का प्रभाव पृथ्वी एवं इस पर निवास करने वाले जीव एवं वनस्पति जगत पर असाधारण रूप में पड़ता है । अतएव मानवी भविष्य एवं सीमा तक अन्तर्ग्रही सन्तुलन पर निर्भर करता है । ग्रहों की प्रकृति में आये विक्षोभ समस्त सौर-मण्डल को प्रभावित करते हैं । प्राणि जगत की शारीरिक एवं मानसिक स्थिति तो प्रभावित होती है, पृथ्वी का सन्तुलन एवं सम्पूर्ण पर्यावरण भी विक्षुब्ध हो उठता है । फलतः अनेकों प्रकार के प्रकृति प्रकोप दृष्टिगोचर होते हैं ।

इस तथ्य की पुष्टि विज्ञान जगत में भी होने लगी है । ब्रिटेन से प्रकाशित होने वाली वैज्ञानिक पत्रिका नेचर के सम्पादक एवं प्रसिद्ध खगोलवेत्ता जानग्रिबिन तथा नासा अन्तरिक्ष शोध संस्थान के वैज्ञानिक स्टीफन प्लगमेण्ट ने सम्मिलित रूप से "द जुपीटर एफेक्ट" नामक पुस्तक लिखी है । पुस्तक में सौर-मण्डल के ग्रहों की स्थिति, गति एवं पृथ्वी के वातावरण एवं जीव-जगत पर पड़ने वाले उनके प्रभावों का वर्णन है । गणना के अनुसार इन खगोल वेत्ताओं ने घोषणा की है कि जब कभी सौर-मण्डल के नवों ग्रह सूर्य के एक ओर पंक्तिबद्ध होंगे, उस समय सूर्य की गति एवं स्थिति से असामान्य परिवर्तन होंगे । उसका प्रभाव पृथ्वी के वातावरण एवं मौसम पर पड़ेगा । पृथ्वी के परिक्रमा पथ में गतिरोध होने की सम्भावना है । फलतः विश्व के अनेकों स्थानों पर तीव्र भूकम्प आयेंगे । मौसम में अप्रत्याशित परिवर्तन होंगे । इस आकस्मिक असन्तुलन में मानव जाति सामंजस्य बिठा पाने में असमर्थ होगी । प्रतिकूल वातावरण अनेकों नये रोगों को जन्म देगा । भूकम्प, बाढ़, सूखा के विविध प्रहार से अपार जन-शक्ति नष्ट होगी ।

ग्रिबिन एवं प्लेगमेण्ट के अनुसार नौ-ग्रहों के एक सीध में आने से पृथ्वी पर चुम्बकीय सक्रियता बढ़ जायेगी । साथ ही सूर्य में चुम्बकीय असन्तुलन से सौर-ज्वाला की लपटें दिखाई पड़ सकती हैं । पृथ्वी का आयनोस्फीयर बदल सकता है तथा अन्तर्ग्रही संचार व्यवस्था में व्यतिक्रम उत्पन्न हो सकता है । पृथ्वी पर जलवायु का नियन्त्रण सूर्य द्वारा होता है । सूर्य में सर्वाधिक धब्बे उस समय दिखाई देंगे, जब नौ-ग्रह सूर्य के एक ओर पंक्तिबद्ध होंगे । इस अवधि में सूर्य शक्ति पृथ्वी पर अधिक मात्रा में आने से नदियों एवं सागरों का पानी तेजी से भाप में बदलने लगता है । ध्रुवीय हिमखण्डों के पिघलने की गति बढ़ जाती है । सूर्य में उथल-पुथल से जीव-जन्तुओं के व्यवहार में भी असाधारण अन्तर आता है । मानसिक सन्तुलन बिगड़ने से दुर्घटनाएँ अधिक होतीं तथा युद्ध आदि की सम्भावनाएँ बढ़ जाती हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

वैज्ञानिक पर्यवेक्षणों से इस तथ्य का उद्घाटन हुआ है कि जिन दिनों अन्तर्ग्रही असन्तुलन बढ़ता है, सूर्य में धब्बे अधिक दिखायी पड़ते हैं । फलतः प्रकृति प्रकोपों में भी वृद्धि होती है । भूकम्प अतिवृष्टि, अनावृष्टि, तूफान, महामारी जैसी घटनाएँ सूर्य कलंकों की अवधि में ही अधिक घटित होती हैं ।

अमेरिकी वैज्ञानिक एनड्रयू डगलस ने अपने शोध के उपरान्त निष्कर्ष निकाला कि सूर्य कलंकों तथा वृक्षों की वृद्धि में परस्पर घना सम्बन्ध है । 'डगलस' ने 'सेक्वोडया' नामक वृक्ष जिसकी आयु ३५०० वर्ष से भी अधिक है, पर पिछले १००० वर्षों के सूर्य कलंक चक्र एवं उसके प्रभाव का पता लगाया है । उनके अनुसार सूर्य की अधिकतम सक्रियता पिछले ३० वर्षों में सन् १९२८, १९३६, १९४७, १९५९, १९६६ में रही है । इन्हीं वर्षों में सर्वाधिक प्रकृति विक्षोभ उत्पन्न हुए हैं । वर्ष १९६६ में चीन, भारत, अफगानिस्तान, इटली, पाकिस्तान, बुल्गारिया, चेकोस्लाविया, पूर्वी जर्मनी सोवियत संघ आदि देशों के अनेकों स्थानों पर भयंकर बाढ़ आयी एवं भूकम्प के झटके महसूस किए गए ।

रूसी वैज्ञानिक चिजोवस्की ने पिछले ४०० वर्षों में पड़े सूर्य-कलंकों का विशद अध्ययन किया । उनका कहना है कि महामारियों की लहर सूर्य कलंकों में तेजी आने के तीन वर्ष बाद आती है । इन कलंकों का मनुष्य स्वास्थ्य एवं पृथ्वी के वातावरण से सीधा सम्बन्ध है । नवीन वैज्ञानिक खोजों द्वारा यह सिद्ध हो चुका है कि शरीर थायोराइड, एड्रिनल पिट्यूटरी आदि नलिका विहीन ग्रन्थियों का मनुष्य के विचारों, कल्पनाओं एवं भावनाओं से सीधा सम्बन्ध है । सौर्य मण्डल के ग्रह मनुष्य के विचारों एवं भावनाओं को प्रभावित करते हैं, जिनके फलस्वरूप अन्तर्ग्रन्थियों पर भी प्रभाव पड़ता है ।

सर्वविदित है कि तेज धूप में अधिक देर से बैठने पर उत्तेजना तथा चाँदनी रात में आह्लाद की अनुभूति होती है । यह सूर्य और चन्द की ग्रन्थियों पर प्रतिक्रिया का ही परिणाम है । मनोचिकित्सकों का कहना है कि अमावस्या एवं पूर्णिमा के दिन स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होते हैं । पागलपन, विक्षिप्तता, कामुकता, उत्तेजना जैसे मनोरोगों की बहुलता इन्हीं दिनों देखी जाती है । हत्या, आत्महत्या जैसी घटनाएँ भी इस अवधि में अधिक होती हैं । प्रकृति प्रकोप-भूकम्प आदि की घटनाएँ अधिकांशतः इस अवधि में ही घटित हुई हैं ।

प्रसिद्ध अमेरिकी वैज्ञानिक जान हेनरी नेल्सन ने अन्तर्ग्रही प्रभावों का लम्बे समय तक अध्ययन किया । वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि पृथ्वी के वातावरण एवं इस पर निवास करने वाले जीवों पर सूर्य, चन्द्र, मंगल, शनि, वृहस्पति एवं शुक्र आदि ग्रहों के प्रकम्पनों का निश्चित रूप से प्रभाव पड़ता है । भौतिक विज्ञान के सम्वेदनात्मक सहकम्पन सिद्धान्तों का उल्लेख करते हुए नेल्सन कहते हैं कि "ग्रहों की विशिष्ट स्थिति पृथ्वी पर चुम्बकीय तूफान उत्पन्न करने के साथ-साथ मनुष्य के सूक्ष्म ज्ञान तन्तुओं को कम्पित करते हैं । जिनके फलस्वरूप एक विशिष्ट प्रकार की उत्तेजक विचार शृंखला चल पड़ती है । फलतः मनुष्य में आक्रमण, हिंस आदि की प्रेरणा उठती है । मस्तिष्क का सन्तुलन डगमगा जाता है । सूर्य कलंकों के समय यह असन्तुलन और भी बढ़ जाता है । विशेषज्ञों का कहना है कि जिस समय नौ-ग्रह सूर्य के एक ओर एक सीधी रेखा में होंगे, उस समय मनुष्य जाति में मनोविक्षोभ चरम सीमा पर होगा । तृतीय विश्वयुद्ध की सम्भावना भी इसी आधार पर की जा रही है ।

जीवन अमर है वह मौत से हारा नहीं

जीवन अपने आप में इतना समर्थ है कि मृत्यु को चुनौती देते हुए वह अनादिकाल से लेकर अद्यावधि अपना अस्तित्व बनाये हुए है और सर्वभक्षी विभीषिकाओं से जूझते हुए, वह यही उद्घोष कर रहा है कि अनन्त काल तक उसी प्रकार बना रहेगा जैसा कि अब है ।

परिस्थितियाँ आती हैं और चली जाती हैं । विपन्नताएँ त्रास दिखाती हैं और धमकी देती हैं कि वे पलट कर या कुचल कर रख देंगी । इतने पर भी जीवन-जीवन ही है । वह अपनी गरिमा सिद्ध करते हुए सदा से यही कहता रहा है कि मरण उसका स्वभाव नहीं । कपड़ा बदलने से भी शरीर तथावत् बना रहता है । परिस्थितियों की विषमता मात्र कलेवर में उलट-पुलट कर सकती है । उससे जीवन की मूल सत्ता पर कोई आँच नहीं आती । मृत्यु और जीवन के युद्ध का परिणाम इतना ही निकलता रहा है कि मौत ने कलेवर की कुछ धज्जियाँ उखेड़ ली जीवन खीजा तो, पर नंगा होने का अवसर नहीं आया । उसने पुराना छिनने के साथ ही नया आवरण ओढ़ लिया ।

यह विचार सही नहीं है कि सुविधाजनक परिस्थितियों में निर्वाह होता है । असुविधाएँ और प्रतिकूलताएँ आघात कितना ही बड़ा क्यों न लगा दें, पर वह नष्ट करने में कभी सक्षम नहीं हो सकता, मौत जीवन को हरा नहीं सकती । मरण के बाद जन्म का सत्य सुनिश्चित है । जन्मने के उपरान्त मरंना पड़ता है, यह तो परिवर्तन चक्र का घुमाव अथवा मोड़ मात्र है ।

जीवन मात्र मनुष्य आकृति में ही नहीं अन्य छोटे-बड़े प्राण-धारियों के रूप में भी विद्यमान है और उसकी सत्ता उन अदृश्य सूक्ष्म जीवियों में भी विद्यमान है, जो नेत्रों अथवा अन्य इन्द्रियों से पहचाने नहीं जाते, फिर भी सामर्थ्य और सक्रियता की दृष्टि से इतने बलिष्ठ हैं कि उनकी तुलना अपने कलेवर के अनुरूप सिंह और हाथी भी नहीं कर सकते हैं । प्रतिकूलताओं से जूझने को अपना अस्तित्व हर स्थिति में बनाये रहने की उनमें अद्भुत शक्ति है जबकि बड़े आकार

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वाले प्राणी तनिक-सी दुर्घटनाओं के कुचक्र में फँस कर भी चीं बोल जाते हैं ।

जीवन न केवल अपनी धरती पर ही है, वरन् वह ब्रह्माण्ड के असंख्य ग्रह-पिण्डों पर विभिन्न आकृति और प्रकृति अपनाये हुए विद्यमान है । स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप उसने अपने निर्वाह का सन्तुलन बिठा लिया है ।

हार्वर्ड विश्वविद्यालय में जीव विज्ञान के प्राध्यापक डॉ. जार्ज वाल्ड के अनुसार यद्यपि मंगल पहला ग्रह है, जहाँ जीवन की खोज पृथ्वी के वैज्ञानिक कर रहे हैं । तथापि ऐसे एक अरब ग्रह हैं, जहाँ जीवन होने की सम्भावना है ।

हमारी आकाश गंगा में एक अरब ग्रह हैं । इससे परे एक अरब अन्य आकाश गंगाएँ हैं जिनमें से प्रत्येक में एक अरब ग्रह हैं । वैज्ञानिकों का वर्तमान अनुमान यह है कि इन सभी ग्रहों में से एक से पाँच प्रतिशत तक ग्रहों में जीवन अवश्य विद्यमान है, क्योंकि इतने प्रतिशत तक ग्रह हमारी पृथ्वी के समान हैं ।

पृथ्वी से पृथक ग्रहों में जीवन की खोज मनुष्य द्वारा जारी है । अमेरिका के मेरीलैंड विश्वविद्यालय के रासायनिक विकास संस्थान के निर्देशक डॉ. सिरिल पोन्नेमपेरुमा ने पिछले दिनों भारतीय विज्ञान कांग्रेस में बताया था कि ब्रह्माण्ड से सन्देश प्राप्त करने का प्रयास निरन्तर चल रहा है । अनेक वैज्ञानिकों की मान्यता है कि सिर्फ हमारे ही नभ-मण्डल में १० लाख सभ्यताएँ अस्तित्व में हैं । इन उन्नत सभ्यताओं का पता लगाने के लिए भारी संख्या में विशाल टेलिस्कोप लगाये गए हैं ।

ग्रीन बैंक, वेस्ट वर्जीनिया में 'ओस्मा' नामक योजना के अन्तर्गत सुदूर नक्षत्र लोकों की सभ्यताओं से रेडियो तरंगों द्वारा सम्पर्क स्थापित करने का कार्यक्रम चलाया गया । वैज्ञानिकों का कहना है कि चार बार इस सम्पर्क का कोई उत्तर प्राप्त हुआ है । यद्यपि अभी तक उसका अर्थ समझा नहीं जा सका है । इस प्रयास से यह आशा बँधी है कि अन्य ग्रह-नक्षत्रों के प्राणी निकट भविष्य में न केवल पृथ्वी के मनुष्यों से वरन् अन्य लोकों के निवासी जीवधारियों के साथ सम्पर्क बनाने और मेल-जोल बढ़ाने में समर्थ हो सकेंगे ।

अनुकूलताओं में ही जीवन रह सकता है, यह बात तो कही जाती है, पर वह अनुकूलता क्या हो सकती है । इसकी परिभाषा कर सकना सम्भव नहीं हो पा रहा । अत्यधिक गर्मी से अथवा अत्यधिक ठण्ड से जीवन का अस्तित्व खतरे में पड़ जाता है, यह कहा जाता है, पर अनुभव ने यह बताया है कि बात ऐसी नहीं है । गर्मी और ठण्डक की अतिशय सीमा में भी जीवन की सत्ता बनी रह सकती है ।

वैज्ञानिक इस सम्भावना को देख कर अन्य ग्रहों पर जीवन हो सकने की आशा से भर उठे हैं कि जीवन अत्यन्त विषम परिस्थितियों में भी पनप सकता है । खौलते हुए पानी से भी बहुत अधिक तापमान पर और जमी हुई बर्फ से बहुत अधिक ठण्डक में, जीवन-क्रम सहज सम्भव है ।

३३ वर्ष की आयु में नोबल-पुरस्कार से सम्मानित जीव वैज्ञानिक डॉ. जोशुआ लेडरवर्ग ने कहा है कि अन्य ग्रहों में भी जीवन की विद्यमानता की खोज के पूर्व हमें यह जान लेने का प्रयास करना आवश्यक है कि पृथ्वी पर जिस प्रकार जीवन का विकास हुआ है, उससे भिन्न भी कोई क्रम जीवन-विकास का सम्भव है या नहीं ? यदि सम्भव है तो वह कौन-सा क्रम है ?

वनस्पतियाँ कहाँ उग सकती हैं, कहाँ नहीं ? अब इस प्रश्न पर कोई विराम चिन्ह नहीं लगा सकता है । उत्तरी ध्रुव जैसे शून्य तापमान से भी नीचे के क्षेत्र में शाक-भाजी उगाने में सफलता प्राप्त कर ली गई है तथा खाद्य पदार्थों का उत्पादन ऐसी परिस्थितियों में भी सम्भव हुआ है, जहाँ के सम्बन्ध में अब तक जीवन शास्त्री यही कहते रहे हैं कि उनमें उत्पादन नहीं हो सकता ।

यूनियन कार्बाइड रिसर्च इन्स्टीट्यूट, न्यूयार्क में वैज्ञानिकों में मंगल ग्रह जैसा वातावरण कृत्रिम रूप से उत्पन्न करने का प्रयोग किया । उस वातावरण में ९८ प्रतिशत आर्गन गैस और २ प्रतिशत ऑक्सीजन रखी गई । तापमान शून्य से दस डिग्री सेन्टीग्रेड नीचे रखा गया । इस कृत्रिम वातावरण में कुकरबिटेसी कुल के खीरे, ककड़ी जैसे तीस प्रकार के पौधों के बीज सफलतापूर्वक उगाये गए । यद्यपि ऑक्सीजन नाम मात्र को थी, तो भी ये बीज यहाँ पनपे । एक अन्य प्रयोग में काँच में एक बर्तन में मिट्टी के कई नमूने लेकर उनमें कुछ जीवाणु रखे गए । बर्तन के भीतर के वातावरण में कार्बन-डाइ-ऑक्साइड, नाइट्रोजन और आर्गन गैस रखी गई, ऑक्सीजन नहीं रखी गई । पानी अत्यल्प मात्रा में रखा गया । इन बर्तनों को १६ घण्टे तक शून्य से २५ डिग्री सेन्टीग्रेड नीचे के तापमान पर रखा गया । फिर आठ घण्टे तक शून्य से २५ डिग्री ऊपर रखा गया । महीनों बाद भिन्न-भिन्न अवधियों में इन नमूनों की जाँच की गई । पाया गया कि कुछ किस्म के जीवाणु इस स्थिति में भी जी लेते हैं और कुछ तो प्रजनन द्वारा अपनी आबादी भी बढ़ा लेते हैं । शैवाल और फफूँदी के मिले-जुले रूप वाली लाइकेन नामक वनस्पति भी इस वातावरण में खूब पनपी ।

एक अन्य प्रयोग में एरोबैक्टर, एरोजीन्स तथा कुछ अन्य जीवाणु कार्बन डाइ-ऑक्साइड, नाइट्रोजन तथा थोड़ा-सा पोषक माध्यम डाल कर सील बन्द कर दिए गए । प्रतिदिन साढ़े उन्नीस घण्टे तक इनको शून्य से ७५ डिग्री नीचे के तापक्रम पर रखा जाता, फिर साढ़े चार घण्टे तक सामान्य तापमान पर । कई दिनों तक यही क्रम चला । प्रयोग के बाद इन सूक्ष्म-जीवियों की संख्या पूर्वापेक्षा चार हजार गुनी हो गई ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पानी को जीवन का आधार माना जाता है, पर अब ऐसी सम्भावनाएँ सामने आयी हैं कि पानी के स्थान पर दूसरे विकल्प भी हो सकते हैं, जिनके सहारे जीवन निर्वाह सम्भव हो सके ।

वैज्ञानिकों का एक अनुमान यह है कि मंगल एवं अन्य ग्रहों पर पानी का स्थान अमोनिया ले सकता है । वैज्ञानिक ए. जे. मी. के अनुसार अमोनिया में जल से अधिक तरलता होती है और वह अधिक अच्छा विलायक है । जलीय रसायन (एक्वाकेमिस्ट्री) की तरह अमोनिया रसायन (अमोना-केमिस्ट्री) के अन्तर्गत जल के तुल्य समस्त अभिक्रियाएँ सम्पन्न होती देखी गई हैं । जल और अमोनिया में बहुत से गुण समानान्तर पाये गए हैं । प्रोफेसर बर्नाल, एक्सेल इत्यादि का मत है कि सम्भव है, अन्य ग्रहों पर जीवन का आधार अमोनिया हो, क्योंकि वैज्ञानिकों के अनुसार पृथ्वी जब अपनी शैशवावस्था में थी, तब इसके वातावरण में हाइड्रोजन, अमोनिया और मीथेन का ही आधिक्य था ।

जल एवं अमोनिया के गुण-साम्य के आधार पर वैज्ञानिक इस सम्भावना पर विचार कर रहे हैं कि मंगल आदि के मानव-स्नान, पान आदि के लिए जल के स्थान पर अमोनिया का ही प्रयोग करते होंगे ।

इन तथ्यों पर दृष्टिपात करने से विदित होता है कि जीवन निश्चित रूप से अमर है । उस अविनाशी को न तो कोई प्रतिकूलता नष्ट कर सकती है और न मृत्यु के लिए ही उसकी सत्ता मिटा सकना सम्भव है ।

सूर्य-ग्रहणों की असाधारण शृंखला और उनकी अवांछनीय प्रतिक्रिया

चन्द्र-ग्रहण आमतौर से पड़ते रहते हैं । सूर्य-ग्रहणों की संख्या कम होती है । पर उसका प्रभाव धरती के वातावरण पर अधिक पड़ता है । विशेषतया तब, जबकि वह अधिक ढके और खग्रास जैसी स्थिति उत्पन्न हो ।

युग सन्धि के बीस वर्षों में जो विशेष सूर्य-ग्रहण शृंखला सन् १९८० से आरम्भ हो २००० तक चलने वाली है । वह असाधारण है । उसका प्रभाव अन्तरिक्ष विज्ञानी तथा ज्योतिर्विद समान रूप से अशुभ बता रहे हैं । १६ फरवरी, १९८० के बाद अगले बीस वर्षों में दो पूर्ण सूर्य-ग्रहण और होंगे । एक २४ अक्टूबर १९९५ में दूसरा ११ अगस्त १९९९ में । दोनों ही भारत में भली प्रकार देखे जा सकेंगे । १६ फरवरी १९८० को पूर्ण सूर्य-ग्रहण हुआ था जो इस शताब्दी की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण घटना इस देश के लिए थी, क्योंकि ग्रहण की पूर्णता का पथ भारतीय महाद्वीप के ऊपर से गुजरता है । पिछला पूर्ण सूर्य-ग्रहण जो स्पष्टतः भारत में देखा जा सका था, २२ जनवरी, १८९८ को हुआ था ।

सम्पूर्ण पृथ्वी को दृष्टिगत रखकर यह अनुमान लगाया गया है कि ग्रहण ११-४५ दोपहर (भारतीय समयानुसार) आरम्भ होकर ५-०१ पर शाम को समाप्त हुआ । यह गोलार्द्ध के लांगीट्यूड ३०° पश्चिम से १२०° पूर्व तक एवं लैटीट्यूड ६०° उत्तर से लैटीट्यूड ३५° दक्षिण तक देखा गया । इस परिधि में पूरा अफ्रीका, सऊदी अरब, ईराक, ईरान, अफगानिस्तान, पाकिस्तान, भारत, नेपाल, बंगलादेश, श्रीलंका, बर्मा, मलाया, थाइलैण्ड, फिलिपीन्स, इण्डोनेशिया, चीन, मंगोलिया एवं रूस आ जाते हैं ।

भारतीय महाद्वीप में ग्रहण का आरम्भ पश्चिमी घाट के अकोला (कर्नाटक) में ३ बजकर ३९ मिनट पर आरम्भ हुआ था । चन्द्रमा की पृथ्वी पर पड़ने वाली छाया तब उत्तर-पूर्व दिशा में घूमती हुई आंध्र प्रदेश एवं उड़ीसा प्रान्त पर होती हुई पूर्वी समुद्री छोर पर पुरी के नजदीक ३ बजकर ५६ मिनट (भारतीय समयानुसार) पर छूती हुई निकल गई । इसके बाद एक छोटा-सा हिस्सा मिजोरम का भी इसके प्रभाव क्षेत्र में आया ।

ग्रहण की पूर्णता की अवधि में अँधेरे आकाश में केवल चमकदार तारे एवं यह (बुध एवं शुक्र) ही आँखों से दिखाई पड़े ।

इस अवधि में सूरज का प्रकाश सीधे न देख कर उसकी तेजी की १००,००० गुना कम करके देखा जाना चाहिए । सौर विकिरण का अल्ट्रावायलेट एवं इन्फ्रारेड वाला हिस्सा दृष्टि में नहीं आये, इसकी व्यवस्था करने के लिए विशेष फिल्टर ग्लास उपयुक्त होते हैं । काली एक्सपोज की गई फोटोग्राफी की फिल्म को दुहरा कर ग्रहण को देखा जा सकता है । वेल्डर का डार्क-आर्क, लैंस भी प्रयोग किया जा सकता है ।

इसी वर्ष १६ फरवरी, १९८० को जो खग्रास सूर्य-ग्रहण पड़ा था उसे ज्योतिषियों ने ही नहीं वैज्ञानिकों ने भी सारे संसार के लिए अनिष्ट बताया था । "दैनिक हिन्दुस्तान" के १४ जनवरी के अंक में वैज्ञानिकों की इस मान्यता का उल्लेख है कि इस सूर्य-ग्रहण के समय बड़ी मात्रा में गामा आदि किरणों का निर्माण होगा । ये किरणें समस्त जीवधारियों के स्वास्थ्य पर कुछ न कुछ प्रतिकूल प्रभाव डालेंगी । इस समय मनुष्यों का रक्तचाप बढ़ जाने और प्राणियों में दहशत फैल जाने की सम्भावना व्यक्त की गई है । वैज्ञानिकों ने गर्भवती महिलाओं को विशेष रूप से सतर्क किया है कि वे सूर्य-ग्रहण के समय बाहर न निकलें, क्योंकि ग्रहण के समय सूर्य से निकलने वाली विभिन्न किरणें गर्भस्थ शिशु को असाधारण रूप से प्रभावित कर सकती हैं ।

सन् १९८० में पूर्ण खग्रास सूर्य-ग्रहण पड़ा था, इसके अतिरिक्त एक और महत्त्वपूर्ण घटना घटित हुई थी और वह यह कि यह एक ऐसा वर्ष था जबकि सूर्य पर बनने वाले काले धब्बों का ग्यारह वर्षीय चक्र पूर्ण हुआ था । इस वर्ष

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सूर्य पर इन धब्बों की संख्या बढ़ी थी, परिणामस्वरूप पृथ्वी पर जबर्दस्त चुम्बकीय तूफान उठे और साथ ही सौरवायु एवं सूर्य की ऊष्मा और घातक हो उठी थी उन दिनों घातक पराबैंगनी रश्मियों की तीव्रता भी अधिक हो उठी थी, जिसके परिणामस्वरूप भूमध्य रेखा के समीपवर्ती अक्षांश वाले (भारत, पाकिस्तान, अफगानिस्तान, बर्मा आदि एशियाई) देशों में भयंकर गर्मी पड़ेगी, जोरदार आँधियाँ आने या मूसलाधार वर्षा होने की कल्पना की गई थी ।

सूर्य का पूर्ण ग्रहण प्रकृति की अनूठी छवियों में से एक होता है । यह मात्र नव चन्द्रोदय के समय सम्भव है । इसका अर्थ है कि जब चन्द्रमा पृथ्वी और सूर्य के बीच हो । चन्द्रमा जब धरती और सूर्य के बीच आ जाता है वह प्रकाश पथ को ढक लेता है और ग्रहण का कारण बनता है । चन्द्र-ग्रहण अपने सम्पूर्ण तत्कालीन प्रकाश क्षेत्र में देखा जा सकता है, किन्तु सूर्य-ग्रहण अधिक से अधिक १० हजार किलोमीटर लम्बे और २५० किलोमीटर चौड़े क्षेत्र में ही देखा जा सकता है । सम्पूर्ण सूर्य-ग्रहण की वास्तविक अवधि अधिक से अधिक ७$\frac{१}{२}$ मिनट ही होती है ।

खगोल विज्ञानियों और भौतिकविदों की दृष्टि से भी पूर्ण सूर्य-ग्रहण एक महत्त्वपूर्ण अध्ययन के योग्य घटना है, क्योंकि इस समय सौर वातावरण का अत्युत्तम रीति से अध्ययन सम्भव होता है ।

खग्रास सूर्य-ग्रहण के समय सूर्य की ऊपरी सतह पर क्रमशः ये परिवर्तन दिखाई पड़ते हैं सौर वर्णपात में विभिन्न रासायनिक संयोगों के कारण काले धब्बे वाली रेखाएँ दिखायी पड़ती हैं । प्रारम्भ और अन्त में क्रोमोस्फियर रक्ताभ-सा दिखाई पड़ता है ।

सर्वप्रथम चन्द्रमा की काली-सी छाया दीखती है, जो सूर्य के गोले के एक हिस्से को छूती-सी दिखाई पड़ती है । धीरे-धीरे पूरा सूर्य ढकता जाता है, प्रकाश मद्धिम पड़ता जाता है । हवा में ठण्डक और सिहरन बढ़ने लगती है । जब सूर्य की संकट-सी आभा मात्र ही अवशिष्ट रहती है, उस समय पूरे आकाश में अँधेरा छाने लगता है । कभी-कभी सूर्य-मण्डल के चारों ओर एक हीरक-अँगूठी जैसी आभा दिखाई पड़ती है । इसके कुछ ही क्षणों बाद पूरा सूर्य-मण्डल अदृश्य हो जाता है और एक हल्की-सी सफेदी भर बच रहती है । कभी-कभी लाल-लपटें जैसी फैलती देखी जाती हैं । इसी समय जब राक्षसी अँधेरा अपनी भुजाएँ चारों ओर फैलाता है; जानवर उत्तेजित हो उठते हैं । पक्षी घोंसलों में दुबक जाते हैं और कई फूल अपनी पंखुड़ियाँ समेट लेते हैं । इस समय खगोलवेत्ता पूरी मुस्तैदी के साथ चुपचाप अपने औजारों, उपकरणों के द्वारा अध्ययन में तल्लीन रहते हैं ।

खगोलविद् अधिक अच्छी तरह अध्ययन कर सकने की दृष्टि से ऐसे खग्रास सूर्य-ग्रहण पृथ्वी के जिस हिस्से में कुछ अधिक क्षणों तक दिखाई पड़ सकें, वहाँ ही अपने अड्डे जमाते हैं । महीनों पहले से उसकी तैयारी की जाती है । वैज्ञानिक उपकरण तथा अन्य औजार हजारों किलोमीटर तक ढोकर ले जाय जाते हैं । फिर वह घने जंगल के बीच स्थित केन्द्र हो अथवा भले ही बीच समुद्र में अवस्थित द्वीप हो । जैसा कि २० जून, १९५५ में श्रीलंका में दिखाई पड़ने वाले सूर्य-ग्रहण के लिए किया गया था ।

१९८२ में सम्पन्न हुआ अपूर्व अन्तरिक्षीय ग्रह संयोग के सदृश इस शताब्दी में पहले सिर्फ दो बार ही ग्रह सम्मिलित हुए हैं । यह है एक ही वर्ष में सात ग्रहण पड़ना । इस शताब्दी में पहली बार ऐसा १९१७ में हुआ था । उस वर्ष चार सूर्य-ग्रहण तथा तीन चन्द्र-ग्रहण पड़े थे । इनमें से जनवरी, जुलाई तथा दिसम्बर में दो-दो तथा जून में एक ग्रहण पड़ा था । दूसरी बार १९३५ में सात ग्रहण पड़े पाँच सूर्य-ग्रहण तथा दो चन्द्र-ग्रहण । जिनमें से जनवरी में दो, फरवरी में एक, जुलाई में तीन तथा दिसम्बर में एक ग्रहण पड़ा । इसके बाद १९८२ में भी सात ग्रहण पड़े । इनकी शृंखला ठीक १९१७ जैसी ही थी यानी जनवरी में दो, जून में एक, जुलाई में दो तथा दिसम्बर में दो ।

ग्रहणों की यह शृंखला धनु, मिथुन, धुरी पर पड़ी तब माना गया था कि वे राष्ट्र तथा शहर जो इस धुरी के बीच में हैं या जिनकी भूमध्य रेखीय युति इस धुरी पर पड़ती है । वे इन ग्रहणों के प्रतिकूल प्रभाव की चपेट में विशेषकर आयेंगे । इस प्रकार संयुक्त राज्य अमेरिका, बेलज्यिम, इंग्लैण्ड, तुर्की, वेस्टइंडीज, ब्राजील, मिस्र, स्विटजरलैण्ड, आस्ट्रेलिया, हंगरी, स्पेन, पुर्तगाल, लंकाशायर, सहारा का रेगिस्तानी क्षेत्र, नार्वे आदि इस संयोग शृंखला से बुरी तरह प्रभावित होंगे । ग्रहों की युति तुला में हुई थी । इसलिए कहा गया था कि चीन, हिन्दचीन, रूस तथा मुस्लिम देशों पर भी इसका हानिकर असर पड़ेगा ।

तब कहा गया था कि १६ फरवरी, १९८० को होने वाला खग्रास सूर्य-ग्रहण १९८२ की विभीषिकाओं की पूर्व सूचना ही समझा जाना चाहिए । लगभग ऐसे ही कुछ सूर्य-ग्रहण २१ अगस्त, १९१४ को तथा २९ मई, १९३९ को हुए थे । ये दोनों ही क्रमशः प्रथम तथा द्वितीय विश्व युद्ध के पूर्व घटित हुए थे । १९८० का खग्रास सूर्य-ग्रहण सन् १४ और ३९ से भी बड़ा था । यह इतना भयंकर खग्रास सूर्य-ग्रहण था जो इस शताब्दी में पहले कभी नहीं हुआ । वह इस शताब्दी के प्रारम्भ के दो वर्ष पूर्व सन् १९९९ में पड़ा था । उन दिनों लगभग ३० वर्ष लम्बे अकाल का दौर अपनी चरम सीमा पर था । अगले दिनों भी ऐसे ही भयंकर दुर्भिक्ष की विपत्ति की सम्भावना व्यक्त की गई थी ।

फरवरी १९८२ में सूर्य के जिस ओर पृथ्वी थी उससे विपरीत दिशा में शेष समस्त ग्रह एक सीधी पंक्ति में थे और उनका नेतृत्व कर रहे थे—वृहस्पति । लेकिन इन सभी ग्रहों के तल एवं स्तर भिन्न-भिन्न थे ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नवम्बर १९८२ में सूर्य, शनि, गुरु और प्लूटो की तुला में युति थीं । यह मानव समाज के लिए अशुभ संकट माना गया था और कहा गया था कि इससे भी अधिक हानिकारक संयोग इसके पूर्व २१ अगस्त, से ११ सितम्बर, १९८२ एक बीच सामने आने वाला है, जब छः ग्रहों राहु, शनि, गुरु, सूर्य, बुध एवं शुक्र की प्रचण्ड सिंह लग्न में युति हो रही है । ज्योतिर्विज्ञानियों के अनुसार निश्चय ही ऐसी युतियाँ सम्पूर्ण संसार के लिए विशेष हानिकारक हैं, किन्तु इसका अर्थ यह नहीं समझ लेना चाहिए कि सम्पूर्ण मानव-जाति का समूलोच्छेद हो ही जायेगा ।

अब तक जिन सूर्य-ग्रहणों के विवरण नोट किए जा सके हैं उनमें प्राचीनतम हैं ई. पूर्व २१३७ को २२ अक्टूबर को देखा गया सूर्य-ग्रहण । इसका विवरण चीनी पत्र 'शू चिंग' में दर्ज है । उस समय के दोनों शाही ज्योतिषियों 'सी' और 'हो' ने इतनी ज्यादा शराब पी ली कि वे लड़खड़ाने लगे और अध्ययन न कर सके । सम्राट ने उन्हें इस पर कठोर दण्ड दिया ।

आस्ट्रियन खगोलवेत्ता टी. अपोलजर ने १८८७ में एक शोध ग्रन्थ प्रकाशित किया जिसका नाम था "केननडेर फिन्स्टरनिसें" । इसमें उन्होंने ८ हजार सूर्य-ग्रहणों तथा ५२०० चन्द्र-ग्रहणों का विवरण दिया था, जो १२०७ ईस्वी पूर्व से उन दिनों तक घटित हुए थे, और आगे सन् २१६१ तक होने बाले हैं ।

१९वीं सदी में कुल चार खग्रास सूर्य-ग्रहण भारत में देखे गए । पहला २१ दिसम्बर, १८४३ को जिसे मुख्यतः दक्षिणी भारत में देखा गया, पर जिसका कोई रिकॉर्ड उपलब्ध नहीं है । दूसरा १८ अगस्त, १८६८ को देखा गया । इसका रिकॉर्ड अध्ययन मछलीपटनम में खगोलविद् एन. आर. पागसन ने किया । महान् फ्रेंच खगोलवेत्ता जे. जानसीन भी इस हेतु भारत आये थे । तीसरा खग्रास सूर्य-ग्रहण १२ दिसम्बर सन् १८७१ को पड़ा । मद्रास के खगोलवेत्ता अवनाशी ने कोयम्बटूर वेधशाला में इसका अध्ययन किया ।

१९वीं शताब्दी का अन्तिम खग्रास सूर्य-ग्रहण २२ जनवरी, १८९८ को पड़ा, जो मध्य भारत में देखा गया, इसे अनेक प्रख्यात अंग्रेज एवं अमेरिकी खगोलविदों ने देखा व जाँचा-परखा विवरण नोट किए । सर जार्मन लाकेर तथा प्रो. ए. फाउलर ने विजय दुर्ग में खगोलवेत्ता सर विलियम फ्रिस्ट्री तथा प्रोफेसर एच. एच. टर्नर ने शहडोल में अमेरिकी ज्योतिर्विद डब्लू. डब्लू. केम्पबेल ने जेबर में तथा जान एवनशेड ने तालनी में इसका पर्यवेक्षण-अध्ययन किया । १९८० में उस्मानिया विश्वविद्यालय हैदराबाद में १६ फरवरी के ग्रहण का पर्यवेक्षण किया गया था इसके लिए चार लाख मूल्य के विशेष उपकरण मँगाये गए थे । संसार भर के वैज्ञानिकों ने इस प्रभाव को जाँचने के लिए अपने-अपने ढंग से प्रयत्न किए ।

१६ फरवरी, १९८० को घटित होने वाला खग्रास सूर्य-ग्रहण भारतीय पेनिनसुला में देखा गया था । यह दक्षिण पश्चिमी अफ्रीका एक दक्षिण में स्थित अटलांटिक समुद्र में सूर्योदय से प्रारम्भ हुआ । इसके बाद मध्य अफ्रीका, हिन्दमहासागर होत हुए बर्मा उपमहाद्वीप में देखा गया । तदुपरान्त बर्मा होते हुए वह चीन में सूर्यास्त के समय समाप्त हो गया ।

भारत में यह ग्रहण पश्चिमी तट स्थित करबाड़ में सर्वप्रथम दिखाई दिया । मानक समय के अनुसार दिन के २-१७ पर । तदुपरान्त गड़ग, रायपुर, दोरनाकल होते हुए पूर्वी तट स्थित पुरी में समाप्त हुआ । रायपुर में यह २ बजकर २५ मिनट पर तथा पुरी में २ बजकर ४२ मिनट पर दिखाई देना शुरू हुआ । करवाड़ में कुल २ घण्टे ४० मिनट, गउग में $2\frac{3}{4}$ घण्टे, रायपुर में २ घण्टे ४० मिनट, दोरनाकल में $2\frac{1}{2}$ घण्टे और पुरी में $2\frac{1}{4}$ घण्टे तक दिखाई दिया, अन्य स्थान, जहाँ से पूरा ग्रहण देखा गया ।

धारवाड़, हुवली, महबूबनगर, नालगोंडा, खम्माम, भद्राचलम, कोरापुट, वाविली और भुवनेश्वर ।

भारत के कुछ मुख्य शहरों में सूर्य-ग्रहण दिखाई देना निम्नानुसार रहा—

हैदराबाद २ बजकर २८ मिनट पर, बम्बई २ बजकर १९ मिनट पर, दिल्ली २ बजकर ३६ मिनट पर कलकत्ता २ बजकर ४७ मिनट पर, अहमदाबाद में २ बजकर २० मिनट पर, भोपाल में $2\frac{1}{2}$ बजे से, लखनऊ में २ बजकर ४० मिनट पर ।

सन् १९८० में चार ग्रहण पड़े । पहला १६ फरवरी को पूर्ण सूर्य-ग्रहण, दूसरा १ मार्च को चन्द्र-ग्रहण तीसरा २७ जुलाई को चन्द्र-ग्रहण तथा चौथा १० अगस्त को पुनः सूर्य-ग्रहण । उल्लेखनीय है कि ये चारों ग्रहण क्रमशः सूर्य और चन्द्र और चन्द्र और सूर्य पन्द्रह दिन की अवधि के भीतर ही पड़े थे । इस्लाम धर्म की प्रसिद्ध पुस्तक 'मौज जात मसीह" के पृष्ठ १४६ पर हजरत इमाम वाकर के सन्दर्भ से कहा गया है—"जब चाँद एवं सूर्य-ग्रहण पन्द्रह दिन के फर्क में (अवधि) होंगे तो उससे यह साबित होगा कि कयामत का समय करीब आ गया है ।"

सूर्य स्फोटों का अपनी पृथ्वी पर प्रभाव !

इन दिनों अन्तरिक्ष में तीन प्रक्रियाएँ ऐसी उभर रही हैं जो घटना की दृष्टि से दूरवर्ती होने के कारण सामान्य कही जा सकती हैं, किन्तु उनकी परोक्ष प्रतिक्रिया ऐसी है, जिससे जन-जीवन के बुरी तरह प्रभावित होने की आशंका है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इनमें एक है—इन्हीं दिनों सूर्य पर उभरने वाले स्फोट (कलंक) । दूसरा—कई ग्रहों के एक पंक्ति में जा पहुँचने के कारण उत्पन्न हुआ 'युति' असन्तुलन । तीसरा है असाधारण विशेषताओं वाला ग्रहण चक्र, जिसमें १६ फरवरी, १९८० एवं २४ अक्टूबर १९९५ एवं ११ अगस्त १९९९ वाले सूर्य-ग्रहणों की चर्चा विशेष रूप से की जा सकती है ।

सर्वविदित है कि पृथ्वी की जलवायु का नियन्त्रण सूर्य द्वारा होता है इसलिए इन सौर कलंकों का भी पृथ्वी के जीवन पर गम्भीर प्रभाव पड़ता है । वैज्ञानिकों के अनुसार प्रति ११वें वर्ष सूर्य के प्रभा मण्डल में सूर्य के तल पर बनने वाले इन धब्बों के कारण चुम्बकीय वैद्युतिक तरंगों का इतनी जल्दी निर्माण होता है कि वे पृथ्वी के परवर्ती मण्डल को बहुत अधिक प्रभावित करती हैं । इस प्रकार पृथ्वी का परवर्ती मण्डल प्रभावित होने से हवाएँ ज्यादा बहती हैं, ऋतुएँ ठण्डी पड़ जाती हैं, भयंकर हिमपात होते हैं, ओलों की वर्षा होती है, आँधी-तूफान और चक्रवात आते हैं तथा वायु भार ऊँचा हो जाता है ।

सूर्य पर जब कलंकों अर्थात् धब्बों की संख्या बढ़ जाती है तो उस स्थिति में पृथ्वी के तापक्रम को बनाये रखने वाली ओजोन गैस के स्तर में कमी आ जाती है । ग्यारह वर्ष के क्रम से, सूर्य की सर्वोच्च क्रियाशीलता के समय चुम्बकीय तूफान, रेडियो सम्बन्धों में कटाव, आयनोस्फियर में जल-जलायशें व ध्रुवी प्रकाश आदि का जन्म होता है । वैज्ञानिकों के अनुसार पिछले ५० वर्षों में सन् १९३६, १९३७, १९४७-४८, १९५८ और १९६९ में सूर्य सर्वोच्च क्रियाशीलता में था । इसके बाद पुनः १९८०, १९९५ एवं १९९९ में सूर्य सर्वोच्च क्रियाशीलता की स्थिति में रहेगा । सन् १९८२ में जब नौ ग्रह सूर्य की एक सीध में आये थे तब भी यह क्रियाशीलता की स्थिति बनी रही थी । इन दिनों प्राकृतिक विपदाएँ तो कहर ढाती ही हैं, मनुष्य की प्रकृति को भी असाधारण रूप से प्रभावित करती है ।

न केवल व्यक्तिगत वरन् समष्टिगत मानव समाज की प्रवृत्तियों पर भी इन सौर परिवर्तनों का प्रभाव पड़ता है । अठाहरवीं शताब्दी से अब तक के विश्व इतिहास की गवेषणाओं से यह तथ्य स्पष्ट होता है कि महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक क्रान्तियाँ, रक्तपात, हिंसक उपद्रव आदि घटनाएँ इन्हीं सौर कलंक के वर्षों में हुई हैं । सन् १७८९ में फ्रांस की प्रसिद्ध ऐतिहासिक क्रान्ति हुई जिसमें न केवल फ्रांस ने वरन् पूरे विश्व समाज ने ही एक नये दौर में प्रवेश किया । इसी प्रकार ट्रैफलगर और वाटरलू की भयंकर लड़ाइयाँ इन सूर्य कलंकों के परम वर्षों में हुईं ।

सन् १८५७ में जब भारत का प्रथम स्वाधीनता संग्राम लड़ा गया तब भी सौर कलंक अपने परम वर्षों में थे । इसके बाद अमेरिका में चला ग्रह युद्ध भी उस समय अपने पूरे उभार पर था, जब सौर कलंक परम वर्षों में थे । सन् १९०४-५ में जब रूस और जापान के बीच भयंकर लड़ाई लड़ी गई । प्रथम विश्व युद्ध भी सन् १९१४-१५ में आरम्भ हुआ, जबकि सूर्य अपने कलंक के परम वर्षों में थे । सन् १९४७ में भारत को स्वतन्त्रता प्राप्त हुई, इसके पूर्व दूसरा विश्व युद्ध लड़ा ही जा चुका था। चीन में भी इन्हीं दिनों कम्युनिस्ट क्रान्ति हुई ।

सन् १९४७ के बाद सूर्य कलंक के तीन परम वर्ष क्रमशः १९५८ और १९६९ एवं १९८२ गुजर चुके हैं । आने वाला सूर्य कलंक का परम वर्ष सन् १९९५ एवं १९९९ में है । अभी पिछले दिनों चीन और वियतनाम के बीच घमासान लड़ाई हो चुकी है । ईरान में भी भयंकर क्रान्ति हुई है । ईरान-ईराक युद्ध हुआ है, अभी भी वहाँ स्थिति सुधरी नहीं है, स्थिति तनावपूर्ण है । रक्तपात और हिंसक घटनाओं के दौर जारी हैं । श्रीलंका, पूर्व यूगोस्लाविया एवं अफगानिस्तान में भी यही हो रहा है । विश्व के और भी कई दूसरे देशों में तनाव पैदा हो रहे हैं । उनकी आन्तरिक और बाह्य स्थिति बेहद उलझी हुई है । विश्व पुनः संकटपूर्ण स्थिति में है । विभिन्न राष्ट्रों के बीच तनावपूर्ण सम्बन्धों को देखते हुए सर्वत्र यह आशंकाएँ व्यक्त की जा रही हैं कि पता नहीं कब विश्व युद्ध की चिन्गारी फूट पड़े ? यह आशंका ही नहीं सम्भावना भी समझी जा रही है । जिन्हें भी वर्तमान परिस्थितियों का थोड़ा बहुत ज्ञान है, वे इन्हें अशुभ ही अनुभव करते हैं । विशेषज्ञ तो यह निश्चित ही मानते हैं कि इन दिनों दुनिया सचमुच बारूद के ढेर पर बैठी हुई है, कभी भी उसमें आग की कोई चिन्गारी लग सकती है और आग सुलग कर भीषण भयंकर अशान्ति में परिणत हो सकती है । यह समय सौर कलंकों की अभिवृद्धि का तो है ही, सन् १९९५ एवं १९९९ में तो चुम्बकीय क्रिया बहुत अधिक होने से बहुत अधिक धब्बे बनने लगेंगे ।

'जूपिटर इफेक्ट' पुस्तक में कहा गया है कि इस कारण महासागरों, सागरों और नदियों का पानी अधिक तेजी से भाप में परिवर्तित होने लगता है । हिमनदों के पिघलने की गति बढ़ जायेगी । समुद्र की धाराओं में परिवर्तन होने लगेगा । सामान्य सौर कलंकों के समय भी समुद्र की धाराओं में परिवर्तन होने लगता है और नीचे का ठण्डा पानी ऊपर आ जाता है । उत्तरी और दक्षिणी ध्रुवों पर जमी हुई बर्फ पिघलने लगती है । कुछ क्षेत्रों में वर्षा अधिक होने लगती है, फलस्वरूप नदियों में बाढ़ें आने लगती हैं । कुछ क्षेत्रों में वर्षा न केवल घट जाती है वरन् बन्द ही हो जाती है ।

अमेरिकी परमाणु ऊर्जा आयोग की अलबुकर्क स्थित सांडिया लेबोरेटरी ने गत ३५ वर्षों में दुर्घटनाओं के आँकड़े एकत्रित किए और उनका अध्ययन किया तो इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि—"सौर कलंक जब अपनी चरम स्थिति में होते हैं तो दुर्घटनाएँ प्रायः छहः गुनी हो जाती हैं ।"

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

न्यूयार्क के डॉ. बेकर ने बताया कि "तीव्र सौर क्रिया के दिनों में मानसिक रोगियों की संख्या में असाधारण रूप से वृद्धि होती है ।"

भारतीय ज्योतिष खगोलीय तथा फलित दोनों ही पद्धतियाँ सूर्य मण्डल में होने वाले विस्फोटों का स्वरूप, कारण तथा पृथ्वी के चराचर पर उससे होने वाले प्रभाव पर विस्तृत वर्णन मिलता है । महर्षि गर्ग, पाराशर, देवल, कश्यप, नारद तथा वशिष्ठ आदि ने इन विस्फोटों के बारे में पर्याप्त अनुसन्धान किया है ।

इस पद्धति से विचार कर वर्तमान ज्योतिर्विदों ने जो निष्कर्ष निकाले हैं, उसके अनुसार—"आगामी सूर्य कलंकों का प्रभाव कम से कम सन् १९९९ तक रहेगा । इस प्रभाव के कारण एक ओर जहाँ दुर्भिक्ष, सूखा, युद्धोन्माद बढ़ने, रोग, बाढ़, तूफान, भूकम्प आदि दैवी आपदाओं से जन धन की क्षति होने की भी सम्भावना है । वहीं उसके विपरीत कोई युगान्तरकारी परिवर्तन भी घटित हो सकता है जिसे अभूतपूर्व कहा जा सके ।"

खग्रास ग्रहण से व्यापक उथल-पुथल सम्भावित

सूर्य-ग्रहणों की शृंखला में फरवरी ८० के बाद २४ अक्टूबर, ९५ का ग्रहण ऐसा है जिसकी अपनी ऐसी विशेषताएँ हैं जैसी पिछले कई सौ वर्षों में नहीं पायी गईं । इसलिए उसका महत्त्व असाधारण रूप से बढ़ जाता है । वस्तुस्थिति को देखते हुए वैज्ञानिकों की दृष्टि इस अवसर पर विशेष खोजबीन पर केन्द्रित है । वे प्रकृति के रहस्यों में से कुछ और प्राप्त करने की आशा इस विशेष अवसर से करते हैं । सूर्य-ग्रहण की इन दशाओं में समय से पूर्व यह कहना तो कठिन है कि उस अवसर पर की गई शोधों का क्या प्रतिफल निकला । यह समयानुसार प्रकट होगा कि धरती पर उसके साधनों और प्राणियों पर सौर-मण्डलीय हलचलें क्या प्रभाव डालती हैं, पर इतनी आशंका तो बनी ही रहेगी कि चलते हुए सामान्य क्रम में जब व्यतिरेक होता है तो उसका परिणाम भी उठक-पटक के रूप में देखा जाता है । सामान्यतया हर उथल-पुथल असुविधाजनक ही होती है ।

सर्वविदित है कि चन्द्र-ग्रहण एवं सूर्य-ग्रहण के समय पर धरती के साथ जुड़े हुए सम्बन्ध सूत्र और प्रवाह क्रम में व्यतिरेक उत्पन्न होता है व्यतिरेक से सामान्य प्रक्रिया में अन्तर पड़ता है । फलतः प्रतिक्रिया और परिस्थिति में अन्तर पड़ना भी स्वाभाविक है । ग्रहणों के प्रभाव को चिरकाल से अनुभव किया जाता रहा है और उनके सम्बन्ध में कितनी ही चित्र-विचित्र मान्यताएँ भी हैं उनमें से कुछ अलंकारिक, कुछ वास्तविक और कुछ निरर्थक हैं । प्राचीनकाल के अलंकारिक प्रतिपादनों में ऐसी रहस्यमय वास्तविकताओं का पता चलता है और जो सत्य के अत्यन्त समीप होती है । ग्रहणों का प्रभाव असामान्य होता है । इस मान्यता में कोई भ्रान्ति नहीं है । सूर्य का प्रभाव अधिक है इसलिए उस पर लगने वाले ग्रहण को धरती पर अस्तव्यस्तता भी अधिक होती है । अस्तव्यस्तता से अस्वाभाविक ही नहीं अवांछनीय परिणति भी होती है इसलिए ग्रहणों को सदा से चिन्ता का विषय माना जाता रहा है । विशेषतया सूर्य-ग्रहण को ।

सूर्य-ग्रहणों की शोध का प्रामाणिक प्रयास २८ जुलाई, १८५१ के सूर्य-ग्रहण से आरम्भ हुआ है । स्पेन के पूर्वी प्रायः द्वीप से सैनी और वारेन नामक ज्योतिषियों ने उसके चित्र खींचे और ग्रहण के समय की वस्तुस्थिति का पता लगाया । इसके बाद नये उपकरणों की सहायता से विज्ञानी जानसेन ने १८ अगस्त, १८६८ के सूर्य-ग्रहण की तस्वीरें मलाया प्रायःद्वीप में जाकर उतारी । सन् १८७० में सिरूली ने और भी अधिक स्पष्ट चित्र खींचे । इनसे पता चला कि उस अवसर पर सूर्य पर कुछ चमकीली रेखाएँ दृष्टिगोचर होती हैं और इर्द-गिर्द खास किस्म की तेजोवलय छाया रहता है । सन् १८७१ में नया 'स्वक्टा स्कोप' यन्त्र बना और उसने नई गैसों के प्रवाह तथा वर्णमण्डल का अधिक परिचय दिया । पूर्ण सूर्य-ग्रहण के समय वर्ण-मण्डल की गहराई १५००० किलोमीटर आंकी गई है । उससे लाल रंग की विलक्षण चिन्गारियाँ छूटती देखी गईं । १७ मई, १८८२ को सूर्य-ग्रहण मिस्र में देखा गया था उसमें एक चमकीला पुच्छल तारा पकड़ में आया । २२, जनवरी १८९८ के सूर्य-ग्रहण ब्रिटिश वैज्ञानिकों ने अतिरिक्त लाल लपटें उछलती देखीं । खण्ड ग्रहण तो समय-समय पर होते रहते हैं पर उनसे इतनी जानकारी नहीं मिलती जितनी कि पूर्ण ग्रहण से । ३० जून, १९५४ का सूर्य-ग्रहण वाल्टिक सागर क्षेत्र में था और १२ अक्टूबर, १९५८ का प्रशान्त महासागर में । इस अवसर पर डेजर द्वीप में एक विशेष वेधशाला फिट की गई और पाया गया कि ग्रहण काल में पराबैंगनी विकिरण घटता है, किन्तु एक्स किरणों में कोई अन्तर नहीं आता ।

सन् १९८० से लेकर १९९९ तक के लगभग बीस वर्षों में चलने वाली सूर्य-ग्रहण शृंखला असाधारण होने से ज्ञातव्य है । पूर्ण ग्रहणों में १६ फरवरी, १९८० का अफ्रीका और भारत में । ३१ जुलाई, १९८१ का सोवियत संघ में । ११ जून, १९८३ का हिन्द महासागर में । २३ नवम्बर, १९८४ का न्यूगिनी दक्षिणी प्रशान्त में । १२ नवम्बर, ८५ का एन्टार्कटिका, दक्षिण प्रशान्त में और १८ मार्च, ८८ का प्रशान्त, सुमात्रा, बोर्नियो में खग्रास दीखेगा । अन्यत्र उन्हें खण्डग्रास देखा गया था ।

ग्रहण के समय ऐसी महत्त्वपूर्ण खोजें सम्भव होती हैं जो अन्य समयों पर नहीं की जा सकतीं । सन् १९६८ में लार्कयर और जानसन नामक वैज्ञानिकों ने सूर्य-ग्रहण के अवसर पर की गई खोज के सहारे वर्ण मण्डल में हीलियम गैस की उपस्थिति का पता लगाया था । आइन्स्टीन का वह प्रतिपादन भी सूर्य-ग्रहण के अवसर पर भी सही सिद्ध हो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

सका, जिससे उन्होंने अन्य पिण्डों के गुरुत्वाकर्षण से प्रकाश के पड़ने की बात कही थी । अविज्ञात ग्रह उपग्रह की खोज के लिए यह ग्रहण काल सर्वोत्तम सुविधाजनक रहता है ।

सूर्य-ग्रहण के अवसर पर प्रकाश की तीव्रता ही कम नहीं होती वरन् उसके गुण भी बदल जाते हैं । जानवरों में बेचैनी पायी जाती है और वे बुरी तरह डरे हुए चिल्लाते हुए देखे जाते हैं । खाना, सोना सभी को हराम हो जाता है । पक्षी अपने घोंसलों की ओर भागते हैं । खिले हुए फूल सिकुड़ने और बन्द होने लगते हैं । तापक्रम इतना गिर जाता है कि ओस पड़ने लगती है अचानक सर्दी बढ़ने लगती है और मौसम आश्चर्यजनक परिवर्तन दृष्टिगोचर होता है । प्रकाश के मोती जैसे तैरते दिखाई पड़ते हैं । ग्रहण लगने से प्रायः पन्द्रह मिनट पहले धूप अनायास ही हल्की पड़ जाती है । १६ फरवरी, १९८० के ग्रहण अवसर पर सूर्य मकर और कुम्भ राशि की सीमा रेखा पर था अतएव उस समय बुध और शुक्र ग्रह आकाश में उगे हुए दिखाई दिए । भाद्रपद, उत्तर भाद्र पद पुनर्वसु तथा प्राश्व और व्याघ निग्रह भी उगे हुए दीखे थे ।

२२ जनवरी, १९९८ में ठीक इन्हीं दिनों जैसा पूर्ण सूर्य-ग्रहण भारत में देखा गया था । ८२ वर्ष पूर्व की घटनाओं का उल्लेख विजय दुर्ग (महाराष्ट्र) के परीक्षण कर्त्ताओं ने नोट किया था । उस समय सूर्य का रथ चक्र तेजी से पश्चिम की ओर भागता हुआ और चन्द्र पिण्ड को तेजी से उस पर झपटता हुआ देखा गया । भयानक अँधेरा छाया और सूर्य अस्त हो गया । दो बड़े और तीन छोटे धब्बे उभरे हुए दीखे । ग्रहण लाल वर्ण का था । चाँदनी सी निकल आयी । आकाश में तारे दीखने लगे । इन सब में मंगल अधिक स्पष्ट था । क्षैतिज पर पहले कत्थई रंग की आभा देखी गई और फिर वह हल्के बैंगनी तथा सुनहरे रंग में बदलती देखी गई । ग्रहण जिस तेजी से लगा उसी तेजी से समाप्त भी हुआ ।

सूर्य के परिमण्डल (कोरोना) और वर्ण-मण्डल (क्रोमोस्फियर) की संरचना, गर्मी तथा दबाव की जैसी सही जानकारी ग्रहण के समय मिल सकती है, वैसी और किसी समय नहीं । वैज्ञानिक इस अवसर पर जिन तथ्यों का पता लगाते हैं उनमें रेडियो लहरों का उत्सृजन आयनोस्फियर में परिवर्तन, भू-चुम्बकत्व का प्रभाव प्रमुख है ।

हैदराबाद के सेन्टर ऑफ एडवान्स स्टडी इन एस्टोनोमी ने करोना के ध्रुवीकरण वर्णक्रम का विश्लेषण अन्तर्ग्रही तरंगों के परिवर्तन की जाँच-पड़ताल की और पता लगाया कि जलचरों और नभचरों को सूर्य-ग्रहण किस सीमा तक और किस तरह प्रभावित करता है । इस शोध को अब 'क्रोनोबायोलॉजी' के नाम से अब अतिरिक्त नाम दिया जाने लगा है ।

इण्डियन इंस्टीट्यूट ऑफ ऐस्ट्रो फिजिक्स के अनुसार किसी विशिष्ट स्थान से ५० सालों में ४० चन्द्र-ग्रहण और २० खण्ड सूर्य-ग्रहण देखे जा सकते हैं, किन्तु पूर्ण सूर्य-ग्रहण देखने का अवसर ३६० वर्ष में एक बार ही आता है । चन्द्र-ग्रहणों की तुलना में सूर्य-ग्रहणों का अनुपात ३ : २ होता है । ग्रहण पथ समूची पृथ्वी पर नहीं फैलता उसका विस्तार मात्र २६२ कि. मी. रहता है ।

२२३ चन्द्रमासों अर्थात् ६५४५ दिनों के उपरान्त हर बार सूर्य और चन्द्रमा ऐसी स्थिति में लौट आते हैं कि ग्रहण चक्र की पहले की तरह पुनरावृत्ति होने लगे । इस आधार पर प्रायः १८ वर्ष १० दिन का ग्रहण क्रम जान लेने के उपरान्त बहुत समय तक के ग्रहणों की भविष्यवाणियाँ की जा सकती हैं । इतने पर भी चन्द्र पथ की विलक्षणता के कारण ठीक उसी स्थान पर इसी रूप में दीख पड़ने में हेर-फेर भी होता रहता है ।

भारत में १६ फरवरी वाले सूर्य-ग्रहण का पर्यवेक्षण करने के लिए विशेष रूप से तैयारियाँ की गई थीं । इसके लिए ६० बड़े केन्द्र और १२० छोटे निरीक्षण केन्द्र कर्नाटक, उड़ीसा और आन्ध्र के कितने ही स्थानों पर लगाए गए थे । कई वेधशालों से गुब्बारे छोड़े गए थे और आकाश में उस समय होने वाले परिवर्तनों का पता लगाया गया था । आन्ध्र प्रदेश चल-चित्र संस्थान ने इस अवसर पर ऐसी फिल्म बनाई थी जिससे प्राणियों और पदार्थों पर होने वाले सूर्य-ग्रहण का पता चल सके ।

इण्डियन इन्स्टीट्यूट ऑफ ऐस्टो फिजिक्स ने रायपुर जिले के ज्वालाकन्टे गाँव में एक २१ मीटर ऊँचा लौह मंच बनाया था । उस पर 'सेलोस्टेट' स्पेक्टोग्राफ जैसे बहुमूल्य यन्त्र लगाए गए थे । इनकी सहायता से ग्रहण के अवसर पर वर्ण मण्डल एवं प्रभामण्डल की जानकारी देने वाले महत्त्वपूर्ण चित्र लिए गए थे ।

साधारण ज्ञान के अनुसार सूर्य-ग्रहण की विद्या बड़ी जटिल और आश्चर्यजनक है । भूगोल के छात्र जानते हैं कि सूर्य का व्यास ८६४००० मील और चन्द्रमा का मात्र २१६० मील है । इसका अर्थ है सूर्य में ४०० चन्द्रमाओं का समावेश । सूर्य पृथ्वी से ९२९५७२०० मील की औसत दूरी पर है । चन्द्रमा की औसत दूरी २३८८४० मील है । इसका अर्थ भी यही होता है कि चन्द्रमा जितनी दूरी तक विराम देते हुए सूर्य तक पहुँचने का प्रयत्न किया जाय तो वैसे विराम ४०० होंगे । ऐसी दशा में पृथ्वी और सूर्य के बीच में आ जाने पर भी चन्द्रमा की छाया पूरी तरह सूर्य को ढँक नहीं सकती । फिर भी पूर्ण सूर्य-ग्रहण दीखता है । इस आश्चर्य का कारण पृथ्वी से चन्द्रमा की समीपता ही है । यदि वह अपेक्षाकृत दूर होता तो फिर सूर्य के एक भाग की ही उसकी छाया ढँक पाती ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पूर्ण ग्रहण दो मिनट पचास सेकण्ड का ही था । इसका १२ बजकर ४२ मिनट पर दक्षिण अटलांटिक महासागर में दक्षिण अफ्रीका के मध्य भाग से प्रायः ढाई हजार किलोमीटर दूरी से आरम्भ हुआ । इसके उपरान्त वह कांगो, जैरे, तंजानिया, केनिया होकर आगे बढ़ता हुआ अरब सागर में अफ्रीका के पूर्वी तट तक चला गया । इस स्थान पर वह चार मिनट १२ सेकण्ड दिखाई दिया । धरती पर यह ग्रहण दर्शन की अधिकतम अवधि थी । भारत के कर्नाटक, आन्ध्र, मध्य प्रदेश, उड़ीसा, मिजोरम प्रान्तों को पार करता हुआ वह बंगाल की खाड़ी में बढ़ा । बंगला देश और बर्मा होते हुए अन्ततः वह चीन के चुंग किंन नगर से १०० किलोमीटर दूर समाप्त हो गया । देशों के साथ इस ग्रहण की संगति जोड़ी जाय तो उस परिधि में प्रायः पूरा अफ्रीका महाद्वीप, सऊदी अरब, ईराक, ईरान, अफगानिस्तान, पाकिस्तान, भारत, नेपाल, भूटान, श्रीलंका, बंगलादेश, बर्मा, मलाया, थाईलैण्ड, फिलिपाइन्स, इण्डोनेशिया, चीन, मंगोलिया तथा सोवियत संघ देश आते थे । अन्य देशों को इस अद्‌भुत दर्शन से वंचित रहना पड़ा था । पूर्ण ग्रहण की पट्‌टी ११५ से १३० किलोमीटर की सीमा में थी । अन्यत्र वह खण्ड ग्रास दिखाई दिया।

भूमध्य रेखा पर पृथ्वी की भ्रमण गति प्रति घण्टा १७०० किलोमीटर पश्चिम से पूर्व की ओर होती है । जबकि चन्द्रमा की छाया पृथ्वी को काटते हुए प्रति घण्टा ३४३० किलोमीटर है । इस अन्तर को ध्यान में रखते हुए पृथ्वी से अधिक समय तक यह ग्रहण देखना हो तो सामान्य अवधि ६ मिनट को बढ़ाकर ८० मिनट तक किया जा सकता है । सुपरसोनिक विमानों की जो गति है उसे देखते हुए उनमें बैठे हुए अन्वेषणकर्त्ता अपना शोध काल इतना लम्बा बढ़ा सकते हैं । इस सन्दर्भ में प्रयत्न किए जा रहे हैं क्योंकि अभी जो थोड़ी-सी अवधि है वह अन्तरिक्ष की उथल-पुथल के पक्षों को जानने के लिए अपर्याप्त ही कही जा सकती है ।

सूर्य के चारों ओर फैले हुए प्रभा मण्डल में विद्यमान गैस की परत का तापमान १० लाख सेन्ट्रीग्रेड पाया गया जबकि सूर्य के धरातल का मात्र छैः हजार सेन्टीग्रेड । यह अद्‌भुत अन्तर किस कारण है । इसकी जानकारी ग्रहण के अवसर पर बनने वाली विशेष स्थिति से अपेक्षाकृत अधिक सरलता से मिल सकती है ।

कोणार्क के सूर्य मन्दिर पर ग्रहण की मध्य रेखा आती है, अस्तु वहाँ से यह अन्वेषण अधिक अच्छी तरह हो सकने की सम्भावना को ध्यान में रखते हुए वैज्ञानिकों के जत्थे वहाँ पहुँचे थे । यह मन्दिर ७०० वर्ष पूर्व ठीक ऐसे स्थान पर बना है । जहाँ सूर्य-ग्रहण का प्रभाव अधिक स्पष्ट और अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में देखा जा सकता है । भारत के विभिन्न केन्द्रों में सूर्य-ग्रहण का पर्यवेक्षण करने के लिए संसार भर से प्रायः एक हजार वैज्ञानिक आये थे जिन्होंने अपने-अपने शोध क्षेत्र पर होने वाली ग्रहण प्रतिक्रिया की बहुमूल्य यन्त्रों के आधार पर जाँच-पड़ताल की थी ।

ज्योतिषी और विज्ञानी इस सम्बन्ध में एक मत हैं कि ग्रहण काल से अन्तरिक्षीय विकिरण का मनुष्यों और पदार्थों पर अनुपयुक्त प्रभाव पड़ेगा । इसलिए उस समय भोजन नहीं करना चाहिए, खुली आँख से ग्रहण को न देखना, गर्भवती महिलाओं को भीतर रहना, बीमारों और कमजोरों की खुली जगह की अपेक्षा भीतर रहना चाहिए क्योंकि उस विकिरण का प्रभाव किसी न किसी रूप में अनुपयुक्त ही पड़ता है ।

सूर्य-ग्रहण होते यों हर साल हैं, पर वे खग्रास नहीं होते । साथ ही एक क्षेत्र में बार-बार नहीं दीखते । एक ही स्थान पर दुबारा खग्रास का दृश्य देखना हो तो उसके लिए ३६० वर्ष तक प्रतीक्षा करनी पड़ेगी । इस बार अर्थात् २४ अक्टूबर, १९९५ को देखा गया है ।

भूतकाल में जब-जब ऐसे सूर्य-ग्रहण पड़े हैं उसके कुप्रभाव ही सामने आये हैं । इस बार भी यदि ऐसा होगा तो समझना चाहिए कि आज के परिवर्तन प्रक्रिया को देखते हुए उससे अवांछनीय तत्वों का ही विनाश होगा । हर विनाश के पीछे विकास की सम्भावना भी रहती है और वही सन्तुलन को बनाती है । इस आधार पर देर तक चलने वाले सूर्य-ग्रहण का एक परिणाम सृजनात्मक सत्प्रवृत्तियों का सम्वर्धन ही होना चाहिए । इस प्रकार समूची प्रतिक्रिया को शुभ और अशुभ का सम्मिश्रण कह सकते हैं । संक्षेप में, इसे युग परिवर्तन में सहायक ही समझा जाना चाहिए ।

प्रसुप्त सूर्य-ग्रहण देखने वालों के सम्बन्ध में उच्चस्तरीय चिकित्सकों ने चेतावनी देते हुए कहा है कि इससे आँखों का 'रेटीना' जल सकता है और देखने वाला सदा सर्वदा के लिए अन्धा हो सकता है । इसी प्रकार इससे नपुंसक होने का भी खतरा है । इन्फ्रारेडो का सीधा असर धरती के वातावरण पर आने से कोमल काया वालों पर उसका जल्दी और ज्यादा असर पड़ेगा । पक्षी इससे अधिक प्रभावित होंगे । इसी प्रकार बालकों को कोमल छाया पर विपरीत असर पड़ने की अधिक सम्भावना रहेगी । इसलिए उन्हें यथा सम्भव ग्रहण को देखने और उसकी धूप में जाने से रोकना ही उचित है । यही बात गर्भवती स्त्रियों के सम्बन्ध में भी है । वे उन दिनों नाजुक स्थिति में से गुजरती हैं । विशेषतया उदरस्थ बालक तो और भी कोमल तथा सम्वेदनशील होते हैं । उन किरणों के प्रभावित होने पर उनकी शारीरिक संरचना एवं मानसिक विकास में अवांछनीय गड़बड़ियाँ हो सकती हैं ।

अन्तरिक्ष विज्ञानी डॉ. श्रीवास्तव के अनुसार—सूर्य की घातक किरणों से रक्षा करने वाली वायुमण्डल में उपस्थित गैस की परत दस प्रतिशत घट जाने के कारण ग्रहण के समय पृथ्वी पर अधिक विध्वंसक प्रभाव पड़ेंगे ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इन दिनों सूर्य में कम्पन चल रहा है । वह प्रतिवर्ष १३ किलोमीटर सिकुड़ रहा है । साथ में उसमें धब्बे भी असाधारण रीति से उभर रहे हैं जो अपने कुप्रभाव के लिए बहुत उत्तरदायी होंगे । इन सबके उतार-चढ़ाव स्वरूप अगले दिनों व्यापक उथल-पुथल की कल्पना निराधार नहीं कही जा सकती ।

आर्ष ज्योतिर्विज्ञान का पुनर्जीवन अनिवार्य

अपनी पृथ्वी देखने में अपनी धुरी पर घूमती, अपनी कक्षा में दौड़ लगाती और आत्म-निर्भर दीखती है, पर वास्तविकता वैसी है नहीं । सौर परिवार के सदस्यों की आकर्षण शक्ति उन्हें एक व्यवस्था क्रम में जकड़े हुए है । उनमें गड़बड़ी पड़े तो किसी भी ग्रह-नक्षत्र के अनियन्त्रित होकर किसी दूसरे के साथ टकरा जाने-स्वयं मरने और दूसरे को मारने का पूरा-पूरा खतरा उत्पन्न हो जायेगा । पृथ्वी को जीवन सूर्य से प्राप्त हुआ है । उसी की रोशनी और गर्मी से धरातल पर अगणित गतिविधियाँ चलतीं और अनेकों सम्पदाएँ उत्पन्न होती हैं । ऋतुओं की उपयोगिता सभी समझते हैं । वे अपने आप नहीं आ टपकतीं वरन् पृथ्वी और सूर्य की दूरी बदलते रहने से ही ऋतु परिवर्तन सम्भव होता है । पराश्रित तो किसी न किसी अंश में सभी ग्रह-नक्षत्र होते हैं, पर पृथ्वी की जो विशेष स्थिति है उसमें उसका अपना वैभव कम और अन्तर्ग्रही अनुदान विशेष है । सूर्य तो पृथ्वी का जीवनदाता प्राण है । इस आदान-प्रदान का सिलसिला टूट जाय या घट-बढ़ जाय तो समझना चाहिए कि भूतल का सारा वैभव देखते-देखते तिरोहित हो जायेगा । तब यहाँ श्मशान जैसी स्तब्धता छाई होगी ।

मात्र सूर्य से ही नहीं पृथ्वी को अन्यान्य ग्रह-नक्षत्रों से भी असंख्य अनुदान मिलते हैं । उत्तरी ध्रुव की विशेषताओं में एक यह है कि उसका विचित्र चुम्बकत्व अपने उपयोग की आवश्यक वस्तुएँ अनन्त अन्तरिक्ष में खींचता रहता है । यह सूक्ष्म अनुदान एक ग्रह दूसरे की सुविधा के लिए आकाश में बिखेरता रहता है । लेन-देन तो दूसरे ग्रहों में भी चलता रहता है, पर इस सन्दर्भ में पृथ्वी की चतुरता और क्षमता अत्यधिक है कि वह दूसरों के द्वारा बिखेरी हुई सम्पदाओं में अपने काम की चीजें बड़ी मात्रा में कुशलतापूर्वक समेट ले । यदि ध्रुवों के चुम्बकत्व में यह विशेषता न होती तो पृथ्वी को ग्रह परिवार से ये गौरव न मिला होता जो अद्‌भुत सौभाग्य की तरह उपलब्ध है ।

उपर्युक्त विश्लेषण से इस तथ्य का रहस्योद्‌घाटन होता है कि मात्र व्यक्ति या समाज ही नहीं ग्रह-नक्षत्र भी एक दूसरे पर आश्रित हैं और पारस्परिक सहयोग एवं आदान-प्रदान से अपना काम चलाते हैं । इसे बैंकिंग पद्धति या सहकारी व्यवस्था के समतुल्य माना जा सकता है । शासन, अर्थ, तन्त्र, कानून, समाज का स्वरूप आदि संसार की अधिकांश गतिविधियाँ इसी आधार पर चल रही हैं । यह सौर-मण्डल ही नहीं सारा ब्रह्माण्ड उसी आधार पर जीवित और गतिशील है ।

ग्रह-नक्षत्रों का प्रभाव समय-समय पर पृथ्वी पर पड़ता है । विशेषतया सूर्य की स्थिति में तनिक-सा भी अन्तर पड़ने पर उसकी प्रतिक्रिया तुरन्त ही धरातल पर दिखाई पड़ती है । तापमान घटने-बढ़ने का तो प्रत्यक्ष और परोक्ष प्रभाव पड़ता ही है । अन्तरिक्ष में संव्याप्त सूक्ष्म तरंगों की स्थिति में हेर-फेर होने पर पृथ्वी के अनेक क्षेत्र अनेक प्रकार से प्रभावित होते हैं । उसका प्रकृति सम्पदा तथा प्राणियों के शारीरिक, मानसिक स्थिति पर अप्रत्याशित प्रभाव पड़ता है । सूर्य-ग्रहण एवं चन्द्र-ग्रहण के अवसर पर आदान-प्रदान में थोड़ा-सा ही अन्तर पड़ता है, पर उसकी प्रतिक्रिया दूरगामी होती है । कई बार तो उस व्यतिरेक का प्रभाव तत्काल ही दृष्टिगोचर होता है । चन्द्रमा की कलाएँ घटने-बढ़ने से समुद्र में आने वाले ज्वार-भाटों से सभी परिचित हैं । यह ग्रह प्रभाव ही है जो पृथ्वी की परिस्थितियों में फेरबदल प्रस्तुत करता है । मानसून, तूफान आदि की आकाश में घटित होने वाली घटनाओं में धरती की परिस्थितियाँ उतना कारण नहीं होतीं जितना कि सूर्य या सौर-मण्डल के साथ पृथ्वी के साथ चल रहे तालमेल का व्यतिरेक ।

अमुक वनस्पतियों का अमुक ऋतु में पैदा होना न होना, बढ़ना न बढ़ना । इस बात पर निर्भर रहता है कि सौर ऊर्जा की अमुक मात्रा का अवसर उन्हें मिलता है या नहीं मिलता । पृथ्वी के रासायनिक पदार्थ तो सदा एक जैसे रहते हैं । फिर वनस्पतियों का एक रस पोषण मिलने और उपयुक्त तापमान रहने पर भी यह अन्तर क्यों होता है कि नियत समय पर ही अमुक वनस्पतियाँ उगे या न उगें । उस रहस्य का स्पष्टीकरण इतना ही है कि अन्तर्ग्रही अनुदान भू-मण्डल को समान रूप से प्रभावित नहीं करते वरन् उसके विभिन्न जड़, चेतन, घटकों को भी अलग-अलग प्रकार के अनुदान देते हैं ।

आत्म-हत्याओं और अपराधों के घटने-बढ़ने की जाँच-पड़ताल से पाया गया कि समयानुसार सन्तुलन और विक्षोभ के भी ज्वार-भाटे आते हैं । इनसे प्रभावित होकर असंख्य उत्तेजनों के कारण होने पर भी शान्त रहते और सामान्य परिस्थितियों में भी नाम मात्र के कारण आपे से बाहर होते देखे गए हैं इसे सामूहिक जीवन पर पड़ने वाला ग्रह प्रभाव कह सकते हैं । कितने ही वृक्षों में यह विशेषता पायी जाती है कि ग्यारह वर्षीय सूर्य चक्र के अनुरूप उनमें रासायनिक अवरोध पड़ता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

बसन्त ऋतु में वृक्ष वनस्पतियों के फूलने का प्रत्यक्ष कारण तापमान के घट-बढ़ से भी जोड़ा जा सकता है, पर इसका क्या उत्तर है कि अधिकांश प्राणियों में उन दिनों कामुकता उभरती है और गर्भ धारण दौर व्यापक रूप से चलता है । इससे प्रतीत होता है कि ऋतुएँ न केवल परिस्थितियों को प्रभावित करती हैं । वरन् मनःस्थिति में भी परिवर्तन प्रस्तुत करती हैं । कहा जा चुका है कि ऋतु परिवर्तन धरती की विशेषता नहीं, सूर्य की निकटता तथा दूरी की प्रतिक्रिया मात्र है ।

विनाश की प्रस्तुत विभीषिकाओं में मानवी दुष्कर्मों की प्रधानता तो प्रमुख कारण है ही, पर उसके अतिरिक्त भी एक महत्त्वपूर्ण तथ्य है—ग्रहों की स्थिति का भू-मण्डल पर प्रभाव । उसे न तो नगण्य ठहराया जा सकता और न उसे अमान्य रखा जा सकता है । इस सम्बन्ध में हम सब पूर्णतया अनजान हैं । यदि विनाशकारी अन्तर्ग्रही विवरण का स्वरूप और स्तर समझा जा सके तो रोकथाम का उपाय ढूँढ़ निकालना भी कठिन नहीं है ।

भौतिक विज्ञान मात्र प्रकृति क्षेत्र तक सीमित है । अध्यात्म विज्ञान का चेतना क्षेत्र पर अधिकार है । चेतना इतनी समर्थ है कि पदार्थ की स्थिति में आवश्यक परिवर्तन करती रही है और करती रहेगी । प्रस्तुत ग्रह संकट का निवारण कर सकने के लिए प्रकृति विज्ञानी अपनी असमर्थता व्यक्त कर सकते हैं, किन्तु चेतना की शक्ति को निराश होने की कोई आवश्यकता नहीं है वह अपनी प्रचण्ड सामर्थ्य से प्रकृति प्रवाह को मोड़ने और परिस्थिति में परिवर्तन करने की सामर्थ्य से सम्पन्न है ।

पृथ्वी और अन्तरिक्ष का समान अस्तित्व है । एक को समीपवर्ती दूसरे को दूरवर्ती अथवा एक को प्रत्यक्ष दूसरे को परोक्ष कह सकते हैं । प्राचीनकाल से भी इनके समन्वय की आवश्यकता समझी गई थी । आज भी उसे फिर से क्रियान्वित करना आवश्यक हो गया है । दोनों के मध्य आदान-प्रदान का उतना ही क्रम चल रहा है जितना कि प्रकृति प्रवाह से अनायास उपलब्ध हो सकता है । इसकी अभिवृद्धि में मानवी प्रयत्न जुड़ने की आवश्यकता है । प्रकृति से तो आग और बिजली जैसे तत्व भी अनादि काल से विद्यमान थे, पर मनुष्य ने उन्हें प्रयत्नपूर्वक हस्तगत किया है । अन्तरिक्ष के अनुदान अन्ततः उच्चस्तरीय हैं । उनकी उपलब्धि इस युग सन्धि की वेला में तो अनिवार्य रूप से आवश्यक हो गई है । विनाश से सुरक्षा और विकास की सफलता में मानवी प्रयत्नों और साधनों को आवश्यक तो कहा जा सकता है, पर पर्याप्त नहीं । इस अपूर्णता को पूर्णता में बदलने के लिए अन्तरिक्षीय सहयोग इन दिनों नितान्त आवश्यक हो गया है । इस समन्वय का आदान-प्रदान का द्वार खुल जाने से कितनी सुखद सम्भावनाएँ सामने आ सकती हैं ।

ग्रहों के प्रभाव का लाभ उठायें

अपने पुरुषार्थ के बलबूते मनुष्य परिस्थितियों का सृजन कर सकता है । यह मान्यता एक सीमा तक ही सच है । सृष्टि के प्रत्येक घटक एक-दूसरे से अभिन्न रूप में जुड़े हुए हैं । उनकी अलग-अलग परिस्थितियाँ हैं । पर अविच्छिन्न अंग होने के कारण एक की स्थिति का दूसरे के ऊपर प्रभाव पड़ता है । मनुष्य का भौतिक प्रयास अपने समीपवर्ती वातावरण को अनुकूल बनाने में समर्थ हो सकता है । यह सच तो है किन्तु अन्य ग्रहों के प्रभावों से भी वह नहीं बच सकता । भौतिक प्रयत्नों द्वारा अन्तःग्रही प्रभावों को रोका जा सके, यह सम्भव नहीं है । इन अर्थों में उसका भाग्य समष्टि के साथ जुड़ा हुआ है । ग्रह नक्षत्रों के कुप्रभावों को रोकने के लिए व्यक्तिगत भौतिक प्रयासों की तुलना में सामूहिक आध्यात्मिक पुरुषार्थ ही अधिक सफल एवं समर्थ होते हैं ।

अमेरिकी परमाणु ऊर्जा आयोग की अलवुर्क के स्थित सांडिया प्रयोगशाला के वैज्ञानिकों ने यह जानने के लिए कि सौर-मण्डल की गतिविधियों का पृथ्वी पर क्या प्रभाव पड़ता है, विस्तृत अध्ययन किया । उन्होंने अपराधों एवं दुर्घटनाओं सम्बन्धित बीस वर्षों के आँकड़े एकत्रित किए । ८८ पृष्ठों की एक लम्बी रिपोर्ट तैयार हुई । इस रिपोर्ट से निष्कर्ष निकाला गया कि सौर-क्रियाओं एवं चन्द्रमा की कलाओं का मानव व्यवहार एवं दुर्घटनाओं पर विशेष प्रभाव पड़ता है । इन वैज्ञानिकों ने सूर्य के घूमने के कारण पृथ्वी के चुम्बकीय क्षेत्र में होने वाली २७ दिन के चक्र की गड़बड़ी से भी दुर्घटनाओं का सम्बन्ध जोड़ा है । गहन पर्यवेक्षण के उपरान्त यह मालूम हुआ कि इस चक्र के प्रथम ७ दिन, १३वें, १४वें तथा २५वें दिन अधिक दुर्घटनाएँ हुईं ।

मियामी यूनिवर्सिटी के दो मनोवैज्ञानिकों आर्नोल्ड लीवर और कैकोलिन शेरिन ने अमेरिकन जर्नल ऑफ साइकियाट्री विभाग में चन्द्रमा की कलाओं का मनुष्य के ऊपर क्या प्रभाव पड़ता है की ढूँढ़ (खोज) की । प्राप्त तथ्यों द्वारा यह ज्ञात हुआ कि चन्द्रमा का प्रभाव न केवल ज्वार-भाटों के रूप में, समुद्र में दिखायी पड़ता है वरन् मनुष्य के मन और मस्तिष्क पर भी पड़ता है । पूर्णिमा के तीन दिन पूर्व से हत्याओं की दर बढ़ने लगती है । पूर्णिमा के दिन सर्वाधिक हत्याओं एवं आत्म हत्याओं की घटनाएँ घटित होती हैं । पूर्णिमा के दिन मानसिक रोगियों की व्यग्रता और भी बढ़ जाती है । कुछ तो हिंसा आदि पर उतारू हो जाते हैं । ग्रामीण क्षेत्रों में यह मान्यता है कि पूर्णिमा के दिन बैलों का बधिया नहीं करानी चाहिए । चिकिसा क्षेत्र के सर्जरी विशेषज्ञों का भी अनेकों प्रयोगों के उपरान्त यह निष्कर्ष है कि पूर्णिमा के दिन ऑपरेशन आदि करने पर शरीर से रक्त का स्राव अन्य दिनों की अपेक्षा अधिक होता है । इसका कारण पूर्ण रूप से स्पष्ट नहीं हो सका है, पर

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ऐसा विश्वास किया जाता है कि पूर्णिमा के दिन विशेष प्रकार की किरणें अधिक मात्रा में आती हैं जिससे रक्त स्राव को रोकने वाले रक्त में विद्यमान प्लैटलेट कार्य बन्द हो जाता है । फलस्वरूप रक्त अधिक निकलता है । उपर्युक्त अध्ययन में यह पाया गया कि हर चौदहवें महीने जब सूर्य और चन्द्रमा पृथ्वी पर सबसे अधिक गुरुत्वाकर्षण डालते हैं, अपराधों की संख्या बढ़ जाती है । इन दिनों मस्तिष्क के न्यूरान्स की सक्रियता अधिक हो जाती है । "चन्द्रमा मनसोजायत" इसी तथ्य का प्रतिपादन करता है ।

'द केस फार एस्ट्रोलॉजी' नामक पुस्तक में अनेकों उद्धरण पृथ्वी के वातावरण जीवों, वृक्ष, वनस्पतियों, ग्रह-नक्षत्रों के पड़ने वाले प्रभावों के दिए हुए हैं । वैज्ञानिक फ्रैंक ए. ब्राउन ने सिद्ध किया है कि मटर के दाने, आलू, चूहे, केकड़े एवं सीपियाँ सभी सूर्य एवं चन्द्रमा की स्थिति से प्रभावित होते हैं । इन प्रभावों का सूर्य प्रकाश से कोई सम्बन्ध नहीं है । जीवों को अँधेरी कोठरी में भी बन्द कर दिया जाय तो भी उनकी क्रियाएँ उसी प्रकार चलती रहती हैं । इससे यह सिद्ध हुआ कि सूर्य एवं चन्द्रमा की गति का प्रभाव जीवों पर पड़ता है न कि उनके प्रकाश का । इस तथ्य को वैज्ञानिक कसौटी पर कसने के लिए ब्राउन ने एक प्रयोग किया । समुद्र से हजारों मील दूर सीपियों को अँधेरी कोठरी में रखा । उनके खुलने एवं बन्द होने के क्रम एवं समय में किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं आया ।

भौतिकविद् जान एलसन ने एक अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में उल्लेख किया कि रेडियो प्रसारण में बाधा डालने वाले आयन मण्डल से आने वाले तूफानों का सूर्य के सन्दर्भ में ग्रहों की स्थिति से सीधा सम्बन्ध है । जब भी दो या दो से अधिक ग्रह सूर्य की राशि में होते हैं तो उनमें १८० अंश और ९० अंश दूर राशि में ऐसे ही तूफान आते हैं और जब कई ग्रह सूर्य की राशि से ६० अंश या १२० अंश की दूरी पर होते हैं तो आयन मण्डल शान्त रहता है । पाश्चात्य ज्योतिष शास्त्र की भी मान्यता है कि ९० अंश और १८० अंश का सम्बन्ध कठोर से और ६० अंश या १२० अंश का कोमल से होता है ।

ग्रहों का भला-बुरा प्रभाव भी सर्वत्र एक जैसा नहीं दिखाई पड़ता है, यदि ऐसा होता तो सभी स्थानों पर समुद्री ज्वार-भाटे एक समय ही आते । तूफान, भूकम्प की घटनाएँ भी एक साथ सर्वत्र घटित होतीं । इसका कारण पृथ्वी के विभिन्न भागों का सूर्य एवं चन्द्र के विभिन्न अक्षांशों पर पड़ता है । इटली के रसायनविद् पिच्चादी ने सन् १९५८ में सिद्ध किया कि रासायनिक क्रियाएँ भी सूर्य एवं चन्द्र की गति से प्रभावित होती हैं । फसलों, फलों के अन्दर विद्यमान जीवन तत्वों पर भी इस गति की प्रतिक्रिया होती है । मौसम के अनुरूप पैदा होने वाले फलों, खाद्यान्नों को इसीलिए स्वास्थ्यवर्धक माना गया है कि सूर्य राशि का कोमल प्रभाव उन पर पड़ता है ।

इस तथ्य की पुष्टि के लिए रासायनिक क्रियाएँ सदा एक जैसी होती हैं अथवा भिन्न, अनेकों प्रयोग किए गए । पानी में घुले बिस्मथ ऑक्सी क्लोराइड के तली में बैठने का समय नापने के लिए एक सामान्य प्रयोग ७ वर्षों के भीतर दो लाख बार विभिन्न प्रयोगशालाओं में सम्पन्न किया गया । प्रयोगों द्वारा सिद्ध हुआ कि बिस्मथ ऑक्सी क्लोराइड के तली में बैठने का समय ग्रहों की स्थिति एवं सूर्य राशि के परिवर्तन के अनुसार बदलता रहता है । मार्च माह में यह गति सबसे धीमी होती है । रसायनविद् 'पिच्चादी' ने यह निष्कर्ष निकाला कि अन्तर्ग्रही चुम्बकीय तरंगों की प्रतिक्रिया पानी में विभिन्न स्थानों पर भिन्न-भिन्न होती है । इसी कारण रासायनिक क्रियाओं की गति में भी भिन्नता पायी जाती है ।

अन्य ग्रहों की चुम्बकीय शक्ति के थोड़े हेर-फेर से पृथ्वी पर भारी विप्लव उत्पन्न हो जाता है । १९६० के बाद बंगाल की खाड़ी में आठ बार समुद्री लहरें उठीं । जिसके फलस्वरूप चार लाख व्यक्ति मारे गए । सन् १९६७ में महाराष्ट्र का कोयना नगर भूकम्प से नष्ट हो गया । यह दुर्घटना दक्षिण के उस पठार में हुई जिसे भू-विज्ञानी भूकम्पों से मुक्त बताते हैं । १९ जनवरी, १९७५ को कांगडा की घाटी किन्नौर में भीषण भूकम्प आया । चीन में आये भूकम्प से लाखों व्यक्ति मारे गए । सन् ७८ में आन्ध्र में आये साइक्लोन ने हजारों व्यक्तियों की जानें लीं । इन सभी दुर्घटनाओं के पर्यवेक्षण के उपरान्त वैज्ञानिकों ने पाया कि उक्त स्थानों पर अन्तरिक्ष से आने वाले रेडियो विकिरण की बहुलता थी । इन स्थानों पर सूर्य ९० अंश और १८० अंश की राशि पर अवस्थित था । भौतिकविद् जान एलसन के अनुसार सूर्य जब इन राशियों पर होता है तो उसके सीध में पड़ने वाले भू-भाग पर तूफान, भूकम्प की घटनाएँ घटित होती हैं ।

यह तर्क किया जा सकता है कि यह प्रभाव सर्वत्र सभी प्राणियों पर या भू-भाग पर एक जैसा क्यों नहीं पड़ता ? उत्तर स्पष्ट है—आग फेंकी जाय तो स्वाभाविक है सूखी लकड़ियों वाले स्थान में लग जायेगी, पानी में वही बुझ जायेगी और चट्टान में तब तक सुलगेगी जब तक वह स्वतः मन्द न पड़ जाय । पानी बरसता है तो मिट्टी देर तक गीली रहती है, पर चिकने संगमरमर को वर्षा के तुरन्त बाद ही सूखा देखा जा सकता है व जन-समुदाय की शारीरिक बनावट, मानसिक स्थिति और अनेक परिस्थितियाँ अलग-अलग प्रभाव के लिए जिम्मेदार होती हैं । वर्षा से पूर्व किसान अपने खेतों को पूरी तरह साफ छोड़ देते हैं ताकि समूची जमीन जी भर कर पानी पी ले । सामूहिक रूप से ग्रह-नक्षत्रों से लाभ का यह उदाहरण है जिसका लाभ यह देश सदैव लेता रहा ।

अन्तर्ग्रही कुप्रभावों को सामूहिक आध्यात्मिक उपचारों द्वारा रोका जा सकता है । ग्रहण आदि के समय में उपासना,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

साधना की भारतीय परम्परा रही है जो इसी तथ्य की पुष्टि करती है कि उस अवसर पर सूर्य एवं चन्द्रमा से निस्सृत होने वाले हानिकारक विकिरणों से सुरक्षा की जा सके । कब किस ग्रह की क्या स्थिति है ? उनके आपसी गठबन्धन की स्थिति का पृथ्वी पर मनुष्य जाति पर क्या प्रभाव पड़ेगा इसे जानने के लिए आधुनिक वेधशाला का योगदान आवश्यक है । हर क्षण उनकी चाल में होने वाले परिवर्तनों का सही अध्ययन तभी किया जा सकता है । ताकि सौर-मण्डल की गतिविधियों एवं उनके पृथ्वी पर पड़ने वाले प्रभावों का सही अध्ययन किया जा सके । उसी आधार पर कुप्रभावों से बचने के लिए आध्यात्मिक उपचारों की भी व्यवस्था बनाई जा रही है । प्रकृति विप्लवों को रोकने में यह सामूहिक साधना, उपचार प्रणाली समर्थ सिद्ध होगी ।

परिवर्तन और आदान-प्रदान सृष्टि के सुदृढ़ नियम

प्रत्येक ग्रह-नक्षत्र अपने आप में अकेला रहता और अपनी धुरी पर घूमता दिखाई पड़ता है; पर वस्तुतः वे एक-दूसरे के साथ उन जंजीरों में बँधे हैं जो आँखों से तो दिखायी नहीं पड़तीं, पर मजबूती उनकी आश्चर्यजनक है । मनुष्य भी अपने आप में अकेला दीखता है, पर वह परिवार और समाज के साथ इतनी मजबूत रस्सी से बँधा हुआ है जो तोड़ी नहीं जा सकती । यदि उसे तोड़ने का प्रयत्न किया जाय तो मानसिक सरसता से लेकर क्षुधा निवृत्ति तक के सारे सूत्र टूट जायेंगे और उस अनभ्यस्त स्थिति में पड़ कर वह अपने अस्तित्व का अन्त कर लेगा । यही बात ग्रह-नक्षत्रों के बारे में भी है वे एक-दूसरे को प्रभावित करते हैं । परस्पर स्नेह-सहयोग का आदान-प्रदान करते हैं । इसीलिए वे जीवित और गतिशील हैं । मनुष्यों की तरह ही ग्रह-नक्षत्रों की भी एक सामाजिकता है । वे मिल-जुल कर रहने और एक-दूसरे की सहायता करने के लिए सृष्टा के सुदृढ़ नियमों के आधार पर मनुष्यों की तरह ही सामूहिक जीवन जी रहे हैं । यद्यपि दीखते वे भी मनुष्यों की तरह अलग-अलग ही हैं ।

यदि सूर्य केवल पूरे ७२ घण्टे पृथ्वी पर बिल्कुल उदय न हो तो वह गहन अन्धकार में निमग्न हो जायेगी, तब यहाँ हाथ को हाथ नहीं सूझेगा । सारी धरती पर तीन मीटर ऊँची बर्फ की पर्त जम जायेगी और प्राणधारियों के जीवन का अन्त हो जायेगा । सूर्य की अल्ट्रावायलेट किरणें ही शरीरधारियों की देह को प्राण धारण किए रहने योग्य बनाती हैं । उन्हीं से अन्न और वनस्पतियाँ उत्पन्न होती हैं, जो हमारे आहार का प्रधान अंग हैं । यदि यह किरणें पृथ्वी पर आना रुक जायें, तो उत्पादन में पूर्ण अवरोध खड़ा हो जायेगा और विकास क्रम जहाँ का तहाँ रुक जायेगा । इतना ही नहीं जो विषाणु अन्तरिक्ष से आते हैं और पृथ्वी पर पनपते हैं, वे अल्ट्रावायलेट किरणों के अभाव में द्रुत गति से निर्भयता पूर्वक बढ़ेंगे और किसी को रुग्ण बना कर छोड़ेंगे ।

सर्वविदित है कि ग्यारह वर्ष पश्चात् सूर्य में काले धब्बे दिखाई पड़ते हैं; उनका प्रभाव पृथ्वी पर स्पष्ट रूप में दिखाई देता है । चुम्बकीय क्षेत्र लड़खड़ा जाता है । रेडियो संचार में भारी बाधा उत्पन्न होती है तथा मौसम में भारी उथल-पुथल होती है ।

रूसी वैज्ञानिक चिजोव्स्की ने पिछले ४०० वर्षों से संसार में फैली महामारियों का इतिहास तैयार किया और बताया है कि सूर्य के धब्बों की घट-बढ़ के साथ इस विपत्ति का सीधा सम्बन्ध है । जितने दिनों तक यह धब्बे गहरे या उथले रहते हैं, उसी अनुपात से पृथ्वी पर गहरा या हल्का प्रकोप महामारियों का होता है ।

विज्ञानी माइकेलसन के अनुसार अमावस्या, पूर्णिमा को पृथ्वी पर पड़ने वाले सूर्य-चन्द्र के प्रभावों से प्रभावित होकर न केवल समुद्र में ज्वार-भाटे आते हैं वरन् पृथ्वी भी प्रायः नौ इंच फूलती-धँसती है । संसार में विभिन्न समयों पर आये बड़े भूकम्पों का इतिहास यह बताता है कि प्रायः अमावस्या, पूर्णिमा के इर्द-गिर्द ही वे आते रहे हैं । डॉक्टर बुड़ाई के अनुसार इन्हीं तिथियों में मृगी, उन्माद और कामुक दुर्घटनाओं का दौर आता है । वे कहते हैं सूर्य, चन्द्र की स्थिति का न केवल मौसम पर वरन् मनुष्य शरीर में महत्त्वपूर्ण काम करने वाली पिट्यूटरी, थायोराइड, एड्रीनल आदि हारमोन स्रावी ग्रन्थियों पर भी प्रभाव पड़ता है और वे उत्तेजित होकर शरीर एवं मन की स्थिति में असाधारण प्रतिक्रियाएँ उत्पन्न करती हैं । दुर्घटना और अपराधों का दौर इन्हीं दिनों कहीं अधिक बढ़ जाता है ।

ब्रिटेन के वैज्ञानिक आरनाल्ड मेयर और कोलिस्को के पर्यवेक्षणों ने यह सिद्ध किया है कि चन्द्रमा की स्थिति मनुष्यों को, प्राणधारियों को और वनस्पतियों को प्रभावित करती है । स्वीडन के वैज्ञानिक सेबेन्ट एहैनियस ने प्रायः दस हजार प्रमाण एकत्रित करके यह सिद्ध किया है कि समुद्र, मौसम, तापमान, विद्युत स्थिति जैसे प्राकृतिक क्षेत्र पर ही नहीं मनुष्य शरीर एवं मन पर भी उसका प्रभाव पड़ता है । स्त्रियों के मासिक धर्म पर चन्द्रमा की स्थिति का असंदिग्ध प्रभाव पड़ता है । सूर्य-ग्रहण और चन्द्र-ग्रहण को खुली आँखों से देखने की हानि सर्व विदित है । कारण यह है कि इन घड़ियों में उनका सन्तुलित क्रियाकलाप लड़खड़ा जाने से ऐसा ही निवारक प्रभाव उत्पन्न होता है जो आँख जैसे कोमल अंगों को विशेष रूप से क्षतिग्रस्त बना दे ।

अमेरिकी खगोलवेत्ता जान हेलरी नेल्सन का कथन है कि न केवल सूर्य, चन्द्र वरन् सौर-मण्डल के अन्य ग्रहों का भी पृथ्वी पर प्रभाव पड़ता है और उस आधार पर मौसमी उथल-पुथल एवं प्राणियों की शारीरिक मानसिक स्थिति में उतार-चढ़ाव आते हैं । धूमकेतु जब उदय होते हैं तब भी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पृथ्वी पर पड़ने वाला अन्तरिक्षीय प्रभाव अवरुद्ध होता है और उसके परिणामस्वरूप प्राकृतिक सन्तुलन बिगड़ने से तरह-तरह के उपद्रव खड़े होते हैं । शरीरगत रुग्णता और मानसिक आवेश ग्रस्तता उन दिनों अधिक बढ़ी-चढ़ी देखी जा सकती है ।

अमेरिका के समुद्र एवं मौसमी प्रशासन संगठन ने एक प्रतिवेदन प्रकाशित करके बताया कि सन् १९७५ में ७ फरवरी, १९ जुलाई और १७ अगस्त के लगभग संसार के अनेक भागों में समुद्री तूफान आने तथा अन्य प्रकार की मौसम सम्बन्धी दुर्घटनाएँ घटित होने की आशंका है ।

इन दिनों चन्द्रमा-पृथ्वी की निकटतम दूरी १८२०० किलोमीटर पर होगी । इतना निकट वह पिछले ३०० वर्षों में कुछ ही बार आया है । इन्हीं दिनों सूर्य भी प्रायः उसी देशान्तर पर भ्रमण कर रहा है जिस पर कि पृथ्वी और चन्द्रमा कर रहे हैं । फलतः वे दोनों सूर्य की परिक्रमा के निकटतम होने जा रहे हैं । ये तथ्य सूर्य की उन गतिविधियों में सहायक होंगे जो पृथ्वी के मौसम को प्रभावित करती हैं ।

गतिशीलता का ही दूसरा नाम परिवर्तन है । यह हर वस्तु, व्यक्ति के लिए आवश्यक है । ग्रह नक्षत्र यों यथा स्थान जमे दीखते हैं । अपनी पृथ्वी का गोला उसके देश क्षेत्र यथा स्थान जड़वत रहते दीखते हैं पर प्रकृति को यह असह्य है । स्थिर समुद्र, ज्वार-भाटों की हलचल होने से ही सजीव है अन्यथा अब तक सड़-गल कर वह कब का विषाक्त हो गया होता, पृथ्वी समेत अन्य ग्रह भी न केवल धुरी और कक्षा पर घूमते हैं वरन् साँस लेते, फैलते-सिकुड़ते भी हैं । उनके भीतर रेंगने की क्रिया भी चलती रहती हैं । मनुष्य जीवन में भी सुख-दुःख की, उत्थान-पतन की, जन्म-मरण की, भली-बुरी परिस्थितियाँ आती जाती रहती हैं । एक स्थिति में सदा बने रहना न मनुष्य के लिए सम्भव है और न ग्रह नक्षत्रों के लिए ।

संसार का भू-सर्वेक्षण करने वाले अमेरिकी वैज्ञानिकों का कहना है कि अब से १० करोड़ वर्ष पूर्व दक्षिणी ध्रुव उस क्षेत्र में था, जहाँ अब भारत है । महाद्वीपों के खिसकने की यह प्रक्रिया धीरे-धीरे चलती रहती है और जल को थल में तथा थल को जल में बदलती रहती है । दक्षिणी ध्रुव का गोडयान लेण्ड किसी समय बहुत विस्तृत था, अब वह सिकुड़ कर छोटा हो गया है । यूरोप और एशिया प्राचीनकाल में एक ही महाद्वीप था । उनके बीच समुद्री अवरोधों की कोई बाधा न थी । हिमालय की पर्वत माला के बारे में उनका विचार है कि यह पहले भूमध्य सागर के गर्भ में डूबी हुई थी, पीछे उभर कर ऊपर आ गई । इसी प्रकार उस समय के विशालकाय पर्वत अब समुद्र तल में डूबे पड़े हैं ।

साधारणतया यही समझा जाता है कि पृथ्वी अपनी धुरी पर घूमती है और सूर्य की परिक्रमा करती है पर अब उसकी एक और गति भी खोज ली गई है । समुद्र की लहरों पर, जिस तरह जलयान झोंके खाता हुआ चलता है, उसी तरह धरती भी एक तरह के झोंके हिलोरें लेती हुई झूलती जैसी चलती है ।

रूसी भूतत्ववेत्ता वी. रीवन ने इन झोंकों का क्रम तथा परिमाण ठीक तरह नापने में सफलता पायी है । उनका कहना यह भी है कि ध्रुव करीब १० मीटर व्यासार्ध के साथ एक घेरे में चारों ओर घूमते हैं, वे अपनी प्रारम्भिक स्थिति में प्रायः १४ महीने बाद लौटते रहते हैं ।

पृथ्वी का वातावरण दिन-दिन अधिक गरम होता जा रहा है । इस संदर्भ में पश्चिमी जर्मनी के परमाणु विज्ञानी डॉ. आटो हकसले ने प्रकृति विज्ञानियों की कान्फ्रेंस में अपना निबन्ध सुनाते हुए कहा—धरती पर से अब हिम युग का अन्त होने जा रहा है और ग्रीष्म युग पदार्पण कर रहा है । ध्रुवीय क्षेत्रों में क्रमशः सूर्य की किरणें अधिक प्रखर होती जा रही हैं । इससे बर्फ पिघलने का सिलसिला तेजी से चल पड़ा है । यह तेजी से थल का एक बड़ा भाग जल में डुबो देगी और उथले समुद्रों में से बहुत से द्वीप ऊपर उभर आयेंगे । बढ़े हुए जल का दबाव जहाँ एक क्षेत्र को दबोचेगा वहाँ उसकी प्रतिक्रिया दूसरे क्षेत्रों को उभारने में भी व्यक्त होगी । व्यक्ति, देश और समाज भी इसी तरह दबते उभरते रहते हैं । नियति हर किसी को मीठे-कड़वे अनुभव लेने के लिए बाध्य करती है ।

मंगल को भूमि पुत्र कहा जाता है । वैज्ञानिकों का कहना है कि पृथ्वी से मिलती-जुलती परिस्थितियाँ सौर-मण्डल के मंगल ग्रह में ही हो सकती हैं । वहाँ कुछ वस्तुएँ ऐसी हैं जिनके बारे में यह कहा जाता है कि वे कभी न कभी पृथ्वी से अनुदान के रूप में वहाँ पहुँची हैं । स्वयंमेव उस तरह के उपार्जन की क्षमता वहाँ के वातावरण में नहीं है । मनुष्य भी तो इसी प्रकार के आदान-प्रदान एक-दूसरे को देते हैं । कोई व्यक्ति अपने बल-बूते उतना साधन सम्पन्न नहीं बन सकता जैसा कि वह होता है ।

मंगल ग्रह पर यदि वनस्पति होगी तो उसके सम्बन्ध में धारणा है कि वह पृथ्वी पर पायी जाने वाली नागफनी से मिलती-जुलती होगी, हाँ उसका विस्तार पृथ्वी पर पाये जाने वाले सभी वृक्षों से अधिक होगा । अन्तरिक्ष वनस्पति विज्ञान के जन्म दाता गावरिल तिरबोज की इस मान्यता का नये खगोलवेत्ताओं ने समर्थन ही किया है । कजाकिस्तान की अन्तरिक्ष प्रयोगशाला के प्रवक्ता निकोलाई के अनुसार मंगल पर वही रासायनिक परिस्थितियाँ हैं जो पृथ्वी पर नागफनी उगने वाले क्षेत्रों में होती हैं । यह एक वनस्पति की बात हुई खोज क्रम आगे बतायेगा कि न केवल पृथ्वी और मंगल का वरन् अन्यान्य ग्रहों का भी आदान-प्रदान चिरकाल से चल रहा है और भविष्य में भी यह क्रम चलता रहेगा ।

संसार के व्यक्तियों को अन्तरिक्ष की स्थिति प्रायः अपनी जैसी ही दीखती है अपनी आँख पर जिस रंग का चश्मा चढ़ा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

हो वस्तुएँ उसी रंग की दीखने लगेंगी, भले ही वे वस्तुतः उस रंग की न हों ।

समुद्र के किनारे खड़े होकर जब हम क्षितिज की ओर निगाह फेंकते हैं तो एक रेखा की तरह वह स्थान दीखता है जहाँ क्षितिज और समुद्र जल का मिलन होता है । यह मिलन रेखा कहाँ है इसे जानना हो तो समझना चाहिए कि वह सतह से उतनी ही ऊँची है जितनी कि हमारी आँखें खड़े होने की जगह से ऊँची हैं । यह दूरी चार किलोमीटर की होगी । इसी प्रकार हम जितने ऊँचे स्थान पर खड़े होकर देखेंगे क्षितिज की रेखा उतनी ही ऊँचाई पर तथा दूरी पर दिखाई देगी । यद्यपि पृथ्वी की गोलाई के आधार पर उस अनुपात में थोड़ा अन्तर तो आता ही है । मनुष्यों में भी थोड़ा बहुत भले-बुरे का अन्तर रहता है पर वे विशेषतया उसी स्तर के दीखते हैं जैसी कि हमारी निज की स्थिति होती है ।

जीवन की परम्पराएँ एक हैं । क्या जड़ और क्या चेतन, क्या व्यक्ति और क्या ग्रह नक्षत्र सभी को नियति के सुदृढ़ नियमों में बँधकर रहना और चलना पड़ता है । इस तथ्य को यदि ठीक तरह समझा जा सके तो हम परिवर्तनों से डरें नहीं वरन् उस गतिशीलता का आनन्द लूटें । सुदृढ़ नियमों की जंजीर को समझ लें तो फिर मर्यादा में रहने का महत्त्व समझें और उच्छृंखलता अपनाकर विपत्तियाँ मोल न लें ।

प्रकृति और मानव परस्पर अन्योन्याश्रित

मानवी जीवन और प्राकृतिक परिवेश एक-दूसरे से घनिष्ठतापूर्वक जुड़े हैं । एक की गड़बड़ी से दूसरा प्रभावित हुए बिना नहीं रहता । व्यवहार विज्ञानियों ने इन दिनों एक नये आयाम की खोज की है । उनके अनुसार समूचे संसार में फैले मानव समाज की व्यावहारिक गड़बड़ियों का एक महत्त्वपूर्ण कारण पर्यावरणीय असन्तुलन है । इनका मानना है कि अच्छे समाज, अच्छे आदमी के लिए जरूरी है कि प्रकृति सम्पन्न और समृद्ध हो ।

बात भी सही है । आजकल प्रकृति एवं समाज की पारस्परिक अन्तर्क्रिया इतनी व्यापक है कि उससे समूची मानव जाति प्रभावित हो रही है । पर्यावरणीय बिगाड़ का कारण औद्योगीकरण, नगरीकरण, ऊर्जा और कच्चे माल के पारम्परिक साधनों की घटोत्तरी, प्राकृतिक सन्तुलनों के विघटन, विभिन्न जानवरों व पेड़, पौधों के खाने-पीने के साधनों के विनाश को बताया जाता है ।

स्वच्छन्द वैज्ञानिक प्रगति तथा तकनीकी सामर्थ्य ने मनुष्य को काफी ताकत दे दी है । हम पर्वतों को हटा सकते हैं । नदियों का मार्ग बदल सकते हैं । नये सागरों का निर्माण कर सकते हैं । मतलब यह कि हम प्राकृतिक जगत में काफी फेर-बदल कर सकते हैं । परन्तु कौन-सी फेर-बदल उचित है, कौन-सी अनुचित ? क्या करने से सत्परिणाम सामने आयेंगे, क्या करने से दुष्परिणाम ? इसे बिना सोचे-विचारे कोई काम करने लगा जाय तो इसे मूर्खता के सिवा और क्या कहा जायेगा ?

अमेरिकन विद्वान जे. एम. हाक "बिहैवियरल इकोलॉजी" में कहते हैं कि आज यह जाहिर हो गया है कि हम प्राकृतिक जगत पर अपने अन्तहीन आक्रमण तथा बगैर सोचे-विचारे उसमें बड़े फेर-बदल करके इस अधिकार का अविवेकपूर्ण उपयोग नहीं कर सकते और हमें करना भी नहीं चाहिए, क्योंकि इसके परिणाम हानिकारक होंगे । आधुनिक अनुसंधानों से मालूम हुआ है कि जैव मण्डल पर मनुष्य के अनवरत एकतरफा और काफी हद तक अनियमित प्रभाव से हमारी सभ्यता एक ऐसी सभ्यता में तब्दील हो सकती है, जो मरुभूमियों को मरुद्यानों में रूपान्तरित करने के स्थान पर मरुद्यानों को रेगिस्तानों में प्रतिस्थापित कर देगी ।

व्यवहार विज्ञानी जे. स्टैनले के अनुसार जहाँ-जहाँ इस तरह वातावरण अस्त-व्यस्त हुआ है । वहाँ के निवासियों की मानसिक स्तर की अस्त-व्यस्तता प्रत्यक्ष दिखाई देती है । उनके व्यवहार में चिड़चिड़ाहट, झल्लाहट, मारपीट, आक्रामकता को स्पष्टतः देखा जा सकता है । स्टैनले ने अपनी किताब "माइण्ड एण्ड इकोलॉजी" में इसे समझाते हुए कहा है कि "व्यवहार के बीज मनुष्य के मन में रहते हैं । मानसिकता के अनुरूप ही शरीर की विभिन्न गतिविधियाँ, क्रियाकलाप संचालित होते हैं । परिवेश की गड़बड़ियों का सीधा असर चेतन और अवचेतन मन पर पड़ता है ।"

श्रीमद्भगवद् गीता में इस बात को और अधिक ढंग से समझाया गया है । इसमें प्रकृति के आठ अंग बताये गए हैं । इन्हें अष्टधा कहा गया है । पहले पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि आदि पाँच बाहरी और मन, बुद्धि, अहंकार तीन आन्तरिक, ये बाहरी और आन्तरिक घटक आपस में खूब जुड़े हैं । बाहरी प्रकृति की हलचलें आन्तरिक प्रकृति को हिलाये डुलाये बिना नहीं रहतीं ।

इसी सबको मद्दे नजर रखते हुए ए व्याहाइट का "डि ह्यूमनाइजेशन ऑफ मैन" में कहना है कि प्रकृति पर अपनी मानवीय विजयों के कारण हमें आत्म प्रशंसा में विभोर नहीं हो जाना चाहिए, क्योंकि ऐसी हर विजय हमें अमानव बनाने वाली होती है । यह सही है कि हरेक विजय से पहले वे ही परिणाम मिलते हैं जिनका हमने भरोसा किया था । पर दूसरी और तीसरी बार में उसके बिल्कुल भिन्न तथा अप्रत्याशित परिणाम होते हैं, जिनसे अक्सर पहले परिणाम का असर जाता रहता है । पिछली सदी तथा मौजूदा सदी के पूर्वार्द्ध में मनुष्य का लालच इतना बढ़ा-चढ़ा नहीं था जो सारी मानव जाति के अस्तित्व की आवश्यक शर्त के रूप में

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सोचने को विवश करता । यह तकाजा करता कि समाज और उत्पादन के सिलसिले में प्रकृति पर हमारे हस्तक्षेप के दूरगामी परिणामों पर विचार किया जाय, लेकिन अब यह फौरी और आवश्यक हो गया है ।

अब यह साफ जाहिर हो गया है कि मनुष्य द्वारा भौतिक चीजों के लिए प्रकृति के शोषण की शैली जीवन जीने की शैली को भी बर्बाद करती है और यह ऐसे बड़े पैमाने पर होता है कि समूची मानव जाति तथा अन्य जीवधारी उसकी चपेट में आ जाते हैं ।

हमारा जीवन सरल, सौम्य और मृदुल बने इसके लिए जरूरी है कि हम पृथ्वी पर जीवन प्रणाली के विभिन्न तत्वों पर अपने प्रभाव को सावधानीपूर्वक देखें, समझें और सुधारें । पर्यावरण को मनुष्य की आवश्यकताओं के अनुरूप रूपान्तरित करना एक सीमा तक तो ठीक है । विनाशक प्राकृतिक शक्तियों जैसे भूकम्पों, टाइफूनों, चक्रवातों, बाढ़ व सूखा, चुम्बकीय और सौर आँधियों से भी संघर्ष करना पड़ेगा, परन्तु यह केवल उन नियमों के अनुसार ही किया जा सकता है जिनके द्वारा जैव-मण्डल एक अखण्ड व स्वनियामक प्रणाली के रूप में काम करता तथा विकसित होता है । आज का पर्यावरणीय सवाल महज प्रदूषण तथा मनुष्य के आर्थिक क्रियाकलापों के दूसरे नकारात्मक परिणामों तक सीमित नहीं है । यह हमारी जीवन शैली को गढ़ने से भी सम्बन्धित है ।

विशेषज्ञों का कहना है कि इस शताब्दी के उत्तरार्द्ध में पहले के वीरान क्षेत्रों में नई-नई बस्तियाँ बस जाने, जहरीले पदार्थों के व्यापक उपयोग तथा प्रकृति के निर्मम शोषण की वजह से विभिन्न जीवजातियों के गायब होने की दर तेजी से बढ़ गई है । जीवाश्म वेत्ताओं का मानना है कि इसके इस खात्मे में इनका पारस्परिक आक्रामक व्यवहार भी एक बड़ा कारण है ।

पिछले २००० वर्षों में जो जातियाँ गायब हुई हैं उनमें आधी से अधिक १६०० के बाद हुई हैं । जैविकीविदों की मान्यता है कि पिछले ३५० सालों में, १९वीं सदी के मध्य तक प्रति दस साल में प्राणियों की एक जाति या उपजाति नष्ट हुई है ।

प्रकृति व प्राकृतिक साधनों के एक अन्तर्राष्ट्रीय रक्षा संगठन ने अनुमान लगाया है कि अब औसतन हर साल एक जाति या उपजाति लुप्त हो जाती है । इस समय पक्षियों और जानवरों की लगभग १००० जातियों के गायब होने का खतरा है ।

इस जैविकीय दरिद्रीकरण का प्रभाव बताते हुए एक व्यवहार विज्ञानी एफ. ए. बीमान का "बिहैवियरल एग्रेशन एण्ड एनवायरनमेन्ट" में कहना है कि वर्तमान शती में पर्यावरण ध्वस्त होने के साथ शनैः-शनैः मनुष्य का व्यवहार भी अधिकाधिक आक्रामक होता गया है । इससे पहले के मानवीय इतिहास के पृष्ठ सिर्फ कुछ व्यक्तियों की व्यावहारिक विकृतियों को ही बताते हैं । इन कुछ को छोड़कर शेष दुनिया के आदमियों ने पारस्परिक सरलता और सौम्यता ही पसन्द की है, पर अब बदलते माहौल में सभ्य दुनिया के हर कोने में मानवीय व्यवहार के अमानवीकरण की झलक देखी जा सकती है ।

इस अमानवीकरण को हटाने के लिए जरूरी है कि प्रकृति के साथ मनुष्य जाति के व्यवहार के तौर-तरीके बदलें । इसके लिए उस नीति को बदलना होगा, जिसके अन्तर्गत प्रकृति पर विजय प्राप्त करने, उसके विभिन्न साधन स्रोतों से मनचाही लूट-खसोट करने को ही सामाजिक लक्ष्य मान लिया गया है ।

हम हँसी-खुशी की जिन्दगी जी सकें, इसके लिए सन्तुलित रीति हर हालत में अख्तियार करनी ही होगी । इसके प्रयोग के तौर-तरीके, स्थान, परिवेश और उसकी अवस्थाओं, आवश्यकताओं के अनुरूप अवश्य भिन्न हो सकते हैं । सहयोग, संरक्षण, सद्भाव का यह प्रवाह हमारे व्यावहारिक विकारों को धीरे-धीरे दूर कर निर्मल करता जायेगा । इसके लगातार बने रहने के लिए जरूरी है हम सभी का एक जुट प्रयास जो एक-दूसरे में निरन्तर इसके लिए प्रेरणा भरता रहेगा । यही "डीप इकोलॉजी" का तत्व दर्शन है ।

हम अपनी क्षुद्रता और मर्यादा भी समझें

यह विराट् ब्रह्माण्ड कितना विशाल है और उसकी तुलना में हमारी पृथ्वी कितनी छोटी बैठती है इसका थोड़ा-सा भी अनुमान लगाने पर सिर चकराने लगता है कि किसी बड़े पहाड़ की तुलना में धूलि का कण जितना छोटा होता है उतनी ही ब्रह्माण्ड की तुलना में अपनी पृथ्वी है । उस पृथ्वी की विशालता का यदि एक मनुष्य से तुलना की जाय तो वह और भी तुच्छ रह जाता है । प्रभु की अनन्त सृष्टि में मनुष्य का कितना स्वल्प, कितना नगण्य सा स्थान है इसे यदि वह समझ सके तो जिस अहन्ता से वह इठलाता फिरता है उसका कोई कारण ही प्रतीत न हो ।

निःसन्देह मनुष्य महान् भी है पर वह महानता भौतिक नहीं, आत्मिक है । भौतिक दृष्टि से ही वह अन्य जीव-जन्तुओं और पशु-पक्षियों से भी गया बीता है । हाथी, सिंह, गोरिल्ला जैसी सामर्थ्य उसमें नहीं है । घोड़े, हिरन जैसे बड़े जानवर ही नहीं खरगोश और कुत्ते भी दौड़ में आगे हैं । रात्रि में देखने की सामर्थ्य बिल्ली जितनी भी नहीं । पक्षियों की तरह आकाश में उड़ना और जलचरों की तरह पानी में रहना किस मनुष्य के लिए सम्भव है । सर्प और रीछ की तरह छः-छः महीने बिना खाये-पिए कौन निर्वाह कर सकता है ?

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रकृति प्रदत्त समर्थता को छोड़ दें तो भी शारीरिक, कायिक रोग और मानसिक उद्वेग से उसे जितना सतप्त व्यथित रहना पड़ता है उतना अन्य कोई प्राणी नहीं रहता । ऐसी दशा में उसकी भौतिक समर्थता का अहंकार सर्वथा मिथ्या ही कहा जायेगा । ब्रह्माण्ड में अवस्थित असंख्य ग्रह-नक्षत्रों में अपनी पृथ्वी का स्थान राई भर है । इस पृथ्वी पर किसी मनुष्य का स्थान तो समस्त शरीर की तुलना में एक रक्त कण से भी स्वल्प बैठता है । इतनी छोटी हस्ती लेकर भी वह अहन्ता से मदोन्मत्त होकर उद्धत आचरण करने पर उतारू हो तो उसे मूर्खता के अतिरिक्त और क्या समझा जाय ।

ब्रह्माण्ड और पृथ्वी की तुलना करना, अपनी चिन्तन परिधि से, कल्पना शक्ति से बाहर की चीज है । इसलिए उस कल्पना की तुक बिठाने के लिए सूर्य को एक मध्यवर्ती आधार मानकर चलो, उस तुलना के करने में थोड़ी सहायता मिलेगी । यद्यपि ब्रह्माण्ड में करोड़ों सूर्य अपने ग्रह-उपग्रह के साथ अपना-अपना सौर-मण्डल बनाकर भ्रमण करते रहते हैं और किसी महाकेन्द्र की परिक्रमा में संलग्न रहते हैं तो भी अपने सौर-मण्डल के केन्द्र सूर्य का ही ऊहापोह इतना विशाल हो जाता है कि उसकी कल्पना करने से ही मानवीय बुद्धि एक प्रकार से हताश होकर बैठ जाती है । फिर करोड़ों सूर्यों की सम्मिलित शक्ति एवं विशालता की कल्पना किस तरह की जाय ?

अपने ज्वलनशील गैसों के पिण्ड, सूर्य का व्यास पृथ्वी से १०९ गुना बड़ा है । व्यास ८६५३८० मील, परिधि २७००००० मील और उसका क्षेत्र ३३९३००० अरब वर्गमील है । यदि वह पृथ्वी से ९३००००० मील की दूरी पर न होकर कुल १००००० मील दूर होता तो हमें आकाश में एक मात्र सूर्य ही सूर्य दिखाई देता ।

सूर्य की शक्ति का कोई वारापार नहीं । उसकी सतह का तापक्रम ६०० डिग्री सेन्टीग्रेड है तो अन्दर का अनुमानित ताप १५००००० डिग्री सेन्टीग्रेड । १२ हजार अरब टन कोयला जलाने से जितनी गर्मी पैदा हो सकती है उतनी सूर्य एक सेकण्ड में निकाल देता है । अनुमान है कि सूर्य का प्रत्येक वर्ग इन्च क्षेत्र ६० अश्वों की शक्ति (हार्स पावर) के बराबर शक्ति उत्सर्जित करता है । उसके सम्पूर्ण ३३९३०००००००००० वर्गमील क्षेत्र में शक्ति का अनुमान करना हो तो इस गुणन खण्ड को हल करना चाहिए—३३९३०००००००००००×१७६०×३×१२ इतने हॉर्स पावर की शक्ति न होती तो यह जो इतनी विशाल पृथ्वी और विराट् सौर जगत आँखों के सम्मुख प्रस्तुत है वह अन्धकार के गर्त में बिना किसी अस्तित्व के डूबा पड़ा होता है ।

इस प्रचण्ड क्षमता का अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि यदि ९३००००० मील लम्बी और ८८० गज मोटी बर्फ की सिल्ली के ऊपर उसको केन्द्रित (Focus) कर दिया जाय तो सारी बर्फ एक सेकण्ड में गलकर बह निकलेगी । सूर्य के १ वर्ग इन्च में जिस ऊर्जा व प्रकाश की कल्पना की गई है वह ५ लाख मोमबत्तियों के एक साथ जलाने की शक्ति के बराबर होती है । यह सारी शक्ति एक साथ पृथ्वी पर फेंक दी जाती तो यहाँ की मिट्टी भी जलने लगती । जलने नहीं लगती यह भी एक प्रकार का सूर्यपिण्ड हो जाती जबकि सामान्य स्थिति में पृथ्वी को सूर्य-शक्ति का २२० करोड़वाँ हिस्सा ही मिलता है । ३ अरब आबादी मनुष्यों की, १०० अरब आबादी पक्षियों की १००० अरब आबादी अन्य जीव-जन्तुओं की और पृथ्वी पर पाये जाने वाले विशाल वनस्पति जगत तथा ऋतु संचालन का सारा कार्य उस २२० करोड़वें हिस्से जितनी शक्ति से सम्पन्न हो रहा है । पूरी शक्ति जो सौर-मण्डल के करोड़ों ग्रहों-उपग्रहों, क्षुद्र ग्रहों का नियमन करती है, प्रकाश और गर्मी देती है । अपने १९ करोड़ ९८ लाख महाशंख भार को २०० मील प्रति सेकण्ड की भयानक गति से २५ करोड़ वर्ष में पूरी होने वाली विराट् आकाश की परिक्रमा भी वह अपनी इसी शक्ति से पूरी करता है । उस सम्पूर्ण शक्ति और सक्रियता को कूता जाना सम्भव नहीं है उसे भावनाओं में केवल मात्र उतारा जाना सम्भव है ।

वह तो पृथ्वी से उसकी इतनी दूरी है जो जीव-जन्तुओं को हँसने कुदकने का अवसर दे रही है । यदि यह दूरी घट जाय तो जीवन अग्नि रूप हो जाय अर्थात् जो चेतना अब दिखाई दे रही है वह सूर्य के गहरे कराल अग्नि ज्वाल में समा जाय । कदाचित किसी तेज से तेज रफ्तार वाली डाकगाड़ी या तूफान एक्सप्रेस से सूर्य तक जाना सम्भव हो जाय तो वहाँ तक पहुँचते-पहुँचते एक मनुष्य को ८५-८५ वर्ष के दो जीवन धारण करने पड़ जायें । इसमें मृत्यु और पुनर्जन्म के बीच की निद्रा के ५ वर्ष अभी जोड़े ही नहीं गए । ध्वनि से भी तीव्र रफ्तार वाले जहाज को ही वहाँ पहुँचाने तक २० वर्ष लग सकते हैं और इस बीस वर्ष में तो सारी पृथ्वी का खाका ही बदल सकता है ।

शक्ति की, विशालता की, कर्तव्य की, वैभव की थोड़ी-सी झाँकी अपने सूर्य के सम्बन्ध में ऊपर दी है । इसमें भी हजारों गुने बड़े सूर्य करोड़ों की संख्या में अपने सौर-मण्डलों सहित उस ब्रह्माण्ड में घूम रहे हैं । उन सबकी गरिमा का लेखा-जोखा कैसे लिया जाय । पर देखते हैं कि वे समस्त शक्ति केन्द्र अपने-अपने कार्य में नियमितता, व्यवस्था और मर्यादा लेकर चल रहे हैं । कहीं न उद्धतता है न उच्छृंखलता । निर्धारित कर्तव्य कर्म को अणु से लेकर महत् तक सभी पालन कर रहे हैं । यदि ऐसा न होता तो यह इतना ब्रह्माण्ड व्यवसाय एक क्षणभर में बिखर जाता । ग्रह-नक्षत्र आपस में टकरा जाते या शक्ति का व्यतिक्रम करके सारी ईश्वरीय व्यवस्था को नष्ट-भ्रष्ट करके रख देते ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मनुष्य को विचार करना चाहिए कि वह प्रकृति की मर्यादाओं को तोड़कर अपने स्वास्थ्य को ही नष्ट कर लेगा । प्रकृति की व्यवस्था को बदल सकना और मर्यादा को बदलना उस जैसे छुद्र के लिए किसी भी प्रकार सम्भव नहीं । नीति और सदाचार की, कर्तव्य और धर्म की मर्यादाओं का उल्लंघन करके वह अपने आतंक और अनाचार का परिचय दे सकता है पर इससे वह विश्वव्यवस्था को अपने अनुरूप बदलने में सफल नहीं हो सकता । इस उद्धत आचरण से वह अपनी मानसिक, सामाजिक और आन्तरिक समस्वरता ही नष्ट करेगा । उसे समझना चाहिए कि जो नियामक शक्ति इतने बड़े ब्रह्माण्ड के सूर्य को शक्ति स्रोतों को मर्यादा में रहने और कर्तव्य पथ पर चलने के लिए विवश करती है । वह इस छुद्र प्राणी के नगण्य से अस्तित्व को अपने ओछेपन पर इतराने और व्यवस्थाएँ बिगाड़ने की छूट देर तक कैसे दे सकती है ?

अच्छा हो कि महा नियन्ता द्वारा कष्टकारक ब्रह्म दण्ड प्रयोग किए जाने से पूर्व ही हम सचेत हो जायें और अपनी मर्यादाओं में रहकर, ब्रह्माण्ड की एक शिष्ट इकाई की तरह वह आचरण करें जिसे उचित एवं उपयुक्त कहा जा सके ।

वस्तुओं में नहीं बुद्धि में दोष ढूँढ़ें

संसार की न तो कोई वस्तु बुरी है और न अच्छी । अच्छाई, बुराई उसके उपयोग की क्षमता एवं दिशा में है । विष भी उपयुक्त प्रयोजनों के लिए काम में आने पर अमृत जैसे उपयोगी सिद्ध होते हैं और अमृत भरा वजनदार घड़ा किसी के सिर पर पटक दिया जाय तो वह उसकी मृत्यु का कारण बन सकता है ।

पदार्थों का विश्लेषण, विवेचन तो करना चाहिए पर उन्हें भला या बुरा नहीं मान लेना चाहिए । धन, रूप, बल, बुद्धि, कौशल, विद्या आदि विभूतियाँ यों सौभाग्य सूचक मानी जाती हैं, पर यदि इन्हें अवांछनीय प्रयोजनों के लिए काम में लाया जाय तो समाज के लिए ही नहीं स्वयं प्रयोक्ता के लिए भी अभिशाप सिद्ध होती हैं । जहाँ इनका सदुपयोग वरदान जैसे परिणाम उत्पन्न करता है वहाँ दुरुपयोग में भयंकर संकट भी उत्पन्न होता है ।

उदाहरण के लिए हाइड्रोजन गैस को ही लिया जाय । यह एक हल्की-सी गैस है । यदि उसकी शक्ति का सदुपयोग करें तो बहुत से लाभ उठा सकते हैं, किन्तु दुरुपयोग करने पर वह विनाशकारी परिणाम उपस्थित कर सकती है ।

सोलहवीं सदी में विज्ञानी पैरासेलसस के धातु को तेजाब में घोलने पर निकलने वाली ज्वलनशील गैस का परिचय प्राप्त कर लिया था, पर तब किसी को यह पता नहीं था कि यह हाइड्रोजन गैस भविष्य में विज्ञान जगत में मूर्धन्य भूमिका का सम्पादन करेगी ।

हवा में उड़ने वाले बाल-बच्चों के गुब्बारे हाइड्रोजन गैस की शक्ति से ही ऊपर उठते और उड़ते हैं । सन् १७८३ में एस. सी. चार्ल्स ने मानव वाहन बड़ा गुब्बारा बनाया था । उसके बाद उड्डयन क्षेत्र में प्रगति होती ही चली गई । गुब्बारे अब भी वायुमण्डल की खोज खबर लेने के लिए उड़ाये जाते हैं । उनमें वायुदाब मापी 'बैरोमीटर' तापमापी, थर्मामीटर तथा रेडियो सान्डे जैसे यन्त्र रखे रहते हैं । जिनकी सूचना द्वारा धरती वालों को वायुमण्डल की स्थिति का पता लगता है । यह गुब्बारे हाइड्रोजन गैस की शक्ति से ही उड़ते हैं ।

युद्ध प्रयोजन में काम आने वाले विस्फोट टी. एन. टी. डाइनेमाइट बनाने से लेकर उर्वरक खाद में प्रयुक्त होने वाले अमोनिया फॉस्फेट तथा अमोनियम सल्फेट जैसे पदार्थ इसी गैस के आधार पर बनते हैं । दवाएँ बनाने में अमोनियम कार्बोनेट, बैटरियाँ बनाने में अमोनिया क्लोराइड, बर्फ जमाने में अमोनिया गैस का उपयोग होता है । यह सब हाइड्रोजन के ही बाल-बच्चे हैं । अणुबम से हजारों गुनी अधिक शक्ति वाला हाइड्रोडन बम इसी गैस के दो परमाणुओं के नाभिकों को मिलाकर बनाया जाता है ।

हल्की हाइड्रोजन के ऊपर अणुओं का अपेक्षाकृत कम भार रहता है इसलिए वह स्वयं ऊँची उठती है और अपनी शक्ति से दूसरों को ऊपर उठाती है । यही मानवों में होती है वे व्यक्ति भौतिक महत्त्वाकांक्षाओं के वजन से अपने को भारी नहीं बनाते । सन्तोष और शान्ति का सादा अपरिग्रही जीवन जीते हैं और अपनी क्षमताओं को उन कार्यों में लगाते हैं जिनसे समस्त संसार का भला हो सके । हाइड्रोजन की उपयोगिता उसके हल्केपन के साथ जुड़ी हुई है । अहंकार, परिग्रह, दम्भ और वासना-तृष्णा की ललक का अनावश्यक भार यदि हमारे ऊपर लदा हुआ नहीं हो तो अधिकाधिक ऊँचाई के शिखर तक चढ़ सकना सम्भव हो सकता है ।

सबसे बड़ी बात उपयोग करने वाली प्रवृत्ति एवं क्षमता की है यदि इस गैस को रचनात्मक काम में लगाया जाता रहे तो उसके सहारे मनुष्य को अनेकानेक सुविधाएँ बढ़ाने का अवसर मिलता रह सकता है, किन्तु यदि उसे विस्फोटक के रूप में प्रयुक्त किया जाने लगा तो उसकी ध्वंसक शक्ति भी इतनी प्रचण्ड है कि देखते-देखते व्यापक दावानल के रूप में परिणत हो सकती है और प्रयोक्ता के लिए तथा समीपवर्ती क्षेत्र के लिए घातक परिणाम उत्पन्न कर सकती है । यही तथ्य अन्तर्ग्रही परिस्थितियों के बारे भी लागू होता है ।

शीत शक्ति का उपयोग और दीर्घ जीवन

अन्य ग्रहों की यात्रा के अनुसन्धान कार्य में जहाँ नये-नये उपकरण, नई-नई जानकारियाँ प्रकाश में आईं वहाँ एक बड़ा लाभ मनुष्य के शरीर, स्वास्थ्य के गहन अध्ययन और मनुष्य शरीर को रोगों से, बुढ़ापे से और प्रतिकूल प्राकृतिक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

परिस्थितियों से बचाये रखने के लिए नये-नये आश्चर्यजनक अनुसन्धान प्रकाश में आये और इन नई शोधों से मनुष्य जीवन की सौ वर्षीय अवधि को बढ़ाकर न केवल हजार वर्ष की आयु वरन् २५००० वर्ष तक भी बढ़ा ले जाना सम्भव हो गया ।

बीमारी फैलाने वाले कीटाणुओं का, विषाणुओं का भय अब साल दो साल का ही रहा है, विकिरण के दुष्प्रभाव से अब जो पोशाकें पहनी जाया करेंगी वह बचा देंगी, भोजन कोई समस्या नहीं है । वैज्ञानिक परीक्षण कर रहे हैं एक दिन आयेगा जब पृथ्वी पर पायी जाने वाली मनुष्य जाति अपने ही उच्छिष्ट का उपयोग जीवन धारण के लिए कर लिया करेगी । यह भी सम्भव है कि बहुत स्वल्पाहार वर्षों तक के भोजन की आवश्यकता पूरी कर दिया करे । दीर्घजीवन और अमरत्व के लिए जीवित कोशों की सुरक्षा भर की समस्या थी उसे अब "क्रियोजेनिक्स" विज्ञान (शीत विज्ञान) ने हल कर दिया । ऊपर जिस प्रयोग की चर्चा की गई है वह "क्रियोजेनिक्स" का ही चमत्कार है ।

इससे पूर्व कि इस तरह के प्रयोगों की और अधिक चर्चा करें इस "क्रियोजेनिक्स" विज्ञान को समझ लेना चाहिए । यह विज्ञान है अति शीत अवस्था में वस्तुओं का "रूपान्तरण" और सुरक्षित स्थायित्व (प्रिजर्वेशन) । पानी जिस तापक्रम पर जमकर बर्फ बन जाता है । उसे शून्य डिग्री कहते हैं । उस शून्य से नीचे भी यदि ताप को गिराते चले जायें और उसे माइनस २७३ अंश (अर्थात् शून्य से भी २७३ अंश) नीचे गिरा दें इसे अति शीत अवस्था कहेंगे । इस अवस्था में ऑक्सीजन, नाइट्रोजन तथा हाइड्रोजन जैसी गैसें भी तरल अवस्था में आ जाती हैं । अन्तिम शीतावस्था ४५९.७ अंश की है और इस अवस्था में तो पदार्थों की परमाण्विक क्रियाएँ ही रुक जाती हैं । उस रुकी हुई स्थिति में एक पदार्थ को दूसरे तक में अर्थात् ताँबे को सोने, सोने की प्लैटिनम में बदलना सम्भव हो जाता है ।

इस परम शीत अवस्था में यदि नाइट्रोजन को तरल कर लिया जाय और उस पर रक्त को सुरक्षित रखा जाय तो वह रक्त थक्का बनने से पहले ही जम जायेगा और उसे कितने ही वर्षों तक सुरक्षित रख जाना सम्भव हो जायेगा । इस अवस्था में जीवित कोशों को किसी प्रकार का नुकसान नहीं पहुँचता । हिमालय के २५००० फुट से भी ऊँचे कितने ही क्षेत्र ऐसे हैं जहाँ इतनी शीत रहती है वहाँ कई स्थानों पर भालू बर्फ के नीचे दब जाते हैं और ६ महीने बर्फ के नीचे दबे रहते हैं । जब गर्मियाँ आती हैं और उनके ऊपर की बर्फ पिघल कर बह जाती है तो वे फिर जीवित हो जाते हैं । हिमालय में अनेक अमर आत्माओं का वास बताया जाता है वह प्राणों की ऊष्मा और अति शीत अवस्था में जीवित कोशों के सुरक्षित बने रहने के समन्वय का ही फल है । यह केवल योगी के लिए ही सम्भव होता है पर प्राण-विद्या की योगसाधना हर किसी के लिए सम्भव है और भारतवर्ष में इसी विद्या के बल पर कभी लोगों ने हजारों वर्ष से अधिक की आयु पायी हो तो इसे अतिशयोक्ति नहीं माना जाना चाहिए । आज वह सम्भावनाएँ प्रायोगिक तौर पर सत्य हो रही हैं ।

लेनिनग्राड (रूस) के वैज्ञानिक डॉ. एल लोजिन लोजिनस्की ने १९६४ में यह प्रयोग मक्के के कुछ कीटाणुओं पर किया । उन्होंने परम शून्य डिग्री से कुल ४ अंश ऊपर २६६ अंश सेन्टीग्रेड पर हीलियम को तरल बनाकर उसमें मक्के के कीटों को डुबो दिया । साढ़े ६ घण्टे बाद इन मृत कीटों को क्रमशः गर्मी प्रदान की तो २० कीटों में से १३ फिर से जीवित हो गए । प. जर्मनी के वैज्ञानिकों ने नाइट्रोजन को द्रव बना कर उसमें मेंढकों को डुबा दिया और उन्हें काफी समय तक डूबा रहने दिया गया पीछे उन्हें भी गर्मी प्रदान की गई जिससे वे फिर जीवित हो गए । अमेरिकी वैज्ञानिकों ने एक स्टरलेट को इस स्थिति में लगातार चार दिन तक मृत अवस्था में रखकर जिन्दा कर दिया । ५ मछलियों को लगातार २५ घण्टे तक परम शून्य स्थिति में रखकर जिन्दा करके यह सिद्ध कर दिया गया कि शरीर एक अवस्था में यथावत स्थिति में रखा जा सकता है यदि प्राण क्षुब्ध न हों तो शरीर धारी को निद्रा जैसी स्थिति में रखकर पुनः जीवित कर देना एक सामान्य बात है ।

सबसे आश्चर्यजनक प्रयोग था सोवियत वैज्ञानिक कोप्तरेव का उन्होंने २५००० वर्ष पूर्व हुए एक हिमपात के समय दबे हुए कुछ जल कीट जिन्हें डाफनियाँ कहा जाता है को निकाल कर उन्हें क्रमिक गर्मी देकर फिर से जीवित कर यह सिद्ध कर दिया कि पुराणों में जो हजारों वर्षों की आयु का उल्लेख है वह विज्ञान की सीमा के अन्तर्गत है कपोल-कल्पना नहीं । प्राणों को शरीर में सुरक्षित बनाये रखने और शरीर को बाह्य-वातावरण से बचाये रखने की व्यवस्था की जा सके तो मनुष्य प्रसुप्त अवस्था में नहीं चेतन अवस्था में ही हजारों वर्ष का जीवन जी सकता है और अब वह समय आ भी समीप गया है जब लोगों की आयु पुराण काल के लोगों की तरह लम्बी होगी । तब मुख्य समस्या रोगों के बचाव और दैनिक जीवन व्यापार की नहीं होगी वरन् यह होगी कि इतनी लम्बी आयु आखिर काटी कैसे जाय ?

अमरत्व भले ही अभी आत्मा की चेतना तक सीमित माना जाय पर शरीर को अधिकाधिक समय तक जीवित रह सकनें वाला बनाया जा सकता है । यदि दुष्ट दुरुपयोग से इस दीर्घ जीवन को अभिशाप बनाया जाय तो बात दूसरी है अन्यथा उसके सदुपयोग की बात सामने हो तो मानव जीवन के महान् अनुदान का भरपूर लाभ उठाया जा सकता है और उसके परमार्थ प्रयोग द्वारा संसार का हित सामान्य किया जा सकता है ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शीत की शक्ति का प्रयोग करके मनुष्य पुराण काल में वर्णित आश्चर्यजनक उपलब्धियों को करतलगत किया जा सकता है । वैज्ञानिक प्रगति के साथ-साथ मनुष्य अपनी सत्ता फिर पुराण पुरुष के रूप में प्रकट कर सकता है, तब वह अर्जुन की तरह इन्द्रलोक जाकर विद्या पढ़ेगा । मेघनाथ की तरह अन्य ग्रहों में जाकर वहाँ के राज्य जीता करेगा । त्रिशंकु की तरह किसी १०-२० मील व्यास वाले किसी क्षुद्र ग्रह में बैठकर ब्रह्माण्ड के नजारे देखा करेगा । लम्बी आयु इसी में खपेगी । बुध की यात्रा २१० दिन में होती है, शुक्र जाने के लिए २९२ दिन चाहिए । इतने दिन जाने में इतने ही दिन आने में लगेंगे तो आखिर वहाँ १०-२० वर्ष तो घूमना ही चाहिए । मंगल की यात्रा ५१८ दिन में सम्भव है तो वृहस्पति और शनि की क्रमश; २७२४ और ४४१६ दिन । वृहस्पति पृथ्वी से १३०० गुना बड़ा है । इतने बड़े ग्रह में घूमना हो तो आज की पृथ्वी के मनुष्य की आयु भी कम पड़ेगी । यूरेनस और नेप्च्यून के लिए आने-जाने का सम्मिलित समय ही क्रमशः ६४ वर्ष, १२२ वर्ष लगता है यम के लिए १८४ वर्ष लगेंगे । शीत-विज्ञान (क्रियोजेनिक्स) द्वारा इतनी लम्बी आयु तो सोने की हो जायेगी । लोग सोते-सोते वहाँ पहुँच जायेंगे फिर भी २५००० वर्ष की उम्र में से ढेर सारा समय बचेगा वह विराट् ब्रह्माण्ड में घूमने में प्रयुक्त होगा, इसके अतिरिक्त और कुछ रास्ता भी तो नहीं होगा । पुराण-पुरुष यही करते रहे हैं, आगे के मनुष्य भी यही करेंगे । उसके लिए हम सबको भी अभी जल्दी मरने की बात नहीं सोचनी चाहिए । अमरत्व, इच्छा, आयु और दीर्घजीवन की कामना करनी चाहिए ताकि वह पुण्य घड़ी देखने का स्वयं भी सौभाग्य प्राप्त कर सकें ।

गर्मा-गर्मी ही नहीं शान्ति और शीतलता भी आवश्यक है

ताप की उपयोगिता और शक्ति सभी को विदित है । चूल्हा और दीपक की आग जलाये बिना दैनिक आवश्यकताएँ पूरी नहीं होतीं । सूर्य का ताप कपड़े सुखाने से लेकर मौसम गरम करने, उजाला फैलाने, पेड़-पौधे उगाने में, बादल वर्षा की व्यवस्था तक असंख्यों कार्य पूरे करता है । कल-कारखानों से लेकर रेल मोटर तक ताप के प्रभाव से चलते हैं । तार, रेडियो जैसे साधनों में बिजली का ताप ही काम करता है । धूपबत्ती जलाने से अग्निहोत्र तक और विवाह से लेकर अन्त्येष्टि तक सभी कर्म-काण्डों में अग्नि की साक्षी आवश्यक है । स्पष्टतया गर्मी हमारे जीवन का प्राण है ।

किन्तु यह भूल नहीं जाना चाहिए की शीत का महत्त्व भी ताप से कम नहीं है । जाड़े के दिनों में हमारा स्वास्थ्य हर ऋतु से अधिक अच्छा रहता है । जीवन विकास में ताप की उपयोगिता कितनी ही क्यों न हो पर उसकी सुरक्षा और स्थिरता में शीत को ही प्रधानता देनी पड़ेगी । ठण्डे देशों के निवासी गर्म क्षेत्रों में रहने वालों की तुलना में कहीं अधिक स्वस्थ, सुडौल और सुन्दर पाये जाते हैं । इतना ही नहीं वे दीर्घ जीवी भी होते हैं । गर्म प्रदेशों में लड़कियाँ बहुत छोटी उम्र में रजस्वला होने लगती हैं साथ ही यह भी तय है कि उनका बुढ़ापा और मृत्यु काल भी जल्दी ही आ सकता है । इसके विपरीत ठण्डे देशों में यह विकास क्रम थोड़ा धीमा भले ही चले पर दृढ़ता एवं स्थिरता निश्चित रूप से अधिक रहेगी ।

मस्तिष्क को ठण्डा रखने पर सदा से जोर दिया जाता रहा है । सिर पर छतरी, टोपी लगाने का महत्त्व इसी दृष्टि से है कि उसे धूप गर्म न करने पाये । तेल, चंदन आदि लगाने की बात इसीलिए सोची जाती है कि सिर ठण्डा रहे । विचारों में शान्ति और सन्तुलन की बात को मस्तिष्कीय शीतलता का प्रमाण समझा जाता है । शिवजी के सिर पर चन्द्रमा की स्थापना और गंगा प्रवाह का पौराणिक अलंकार यही बताता है कि महानता मस्तिष्कीय शीतलता के साथ जुड़ी हुई है । उत्तेजित उद्विग्न, चिन्तित, आवेश ग्रस्त और उद्विग्न मनुष्य अपने पैरों आप कुल्हाड़ी मारते हैं और बेमौत मरते हैं । योगी-यति यदि हिमालय जैसे शीतल प्रदेश में अपनी तपश्चर्या करते हैं ताकि उस सौम्य वातावरण में आत्म-बल का विकास अधिक सरलतापूर्वक सम्भव हो सके । स्नेह, सद्भाव, सौजन्य, मधुरता, मृदुलता जैसी कोमल सत्प्रवृत्तियों से हिमानी शीतलता के साथ तौला और सराहा जाता है । चन्द्रमा की शीतल किरणों में अमृत घुला होने की चर्चा चिरकाल से सुनी जाती रही है ।

स्नेही स्वजनों को कलेजे से लगाने में छाती ठण्डी होती है । धन सम्पत्ति को 'तरावट' की संज्ञा दी जाती रही है । पौष्टिकता प्रदान करने वाले पदार्थ 'तर माल' कहे जाते हैं । चाय, कॉफी जैसे गर्म पेयों का प्रचलन कितना ही बढ़-चढ़ क्यों न गया हो, मलाई की बर्फ, कोका-कोला, सोड़ा शर्बत आदि की खपत भी कम नहीं है । मौसम जरा-सा गर्म होते ही बर्फ एक दैनिक आवश्यकता बन जाती है । गर्मी के दिनों में लोग पहाड़ों पर भागते हैं और कूलर लगाकर काम चलाते हैं और पानी से भीगे खश के पर्दे दरवाजे पर टाँगते हैं । बिजली के और हाथ के पंखे गर्मी को ठण्डक में बदलने के लिए ही प्रयुक्त होते हैं । बार-बार हाथ-मुँह धोने और नहाने की जरूरत इसीलिए पड़ती है । गंगा-यमुना जैसी सरिता सरोवरों का स्नान पुण्यफल प्रद इस मायने में तो है ही कि उससे ठण्डक की अनुभूति तत्काल होती है ।

यह सामान्य जीवन में शीत की उपयोगिता की बात हुई । विज्ञान अब ऐसे शोध प्रयासों में लगा हुआ है जिनके सहारे दीर्घ जीवन से लेकर अन्तरिक्ष यात्रा तक के अगणित महत्त्वपूर्ण प्रयोजनों को शीत के सहारे पूरा किया जा सके ।

सन् १९६७ में एक अमेरिकी अध्यापक जेम्स वेड फोर्ड को उसकी इच्छानुसार मृत्यु के उपरान्त दफनाया नहीं गया

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है वरन् उसके शरीर को शीत से जमाकर इसलिए सुरक्षित रख दिया गया है कि समयानुसार उस मृत शरीर को गरम करके पुनर्जीवित किया जा सके । शरीर में नाइट्रोजन द्रव को १९६ शून्य से तापक्रम पर जमाया जाता है जबकि पानी, ० डिग्री से. पर ही जम जाता है ।

बूढ़े या मरणासन्न लोगों को शीत की स्थिति में बहुत वर्षों तक रखने के बाद उनके शरीर की थकान दूर की जा सकेगी और उनमें विश्राम लाभ के कारण पुनः नवजीवन जैसी चेतना उत्पन्न की जा सकेगी ऐसा विश्वास शरीर विज्ञानियों को हो गया है और वे उपर्युक्त सिद्धान्त को कार्यान्वित कर सकने का पथ-प्रशस्त कर रहे हैं ।

रूसी वैज्ञानिक पी. वैरब्मेत्येव ने मछलियों को वर्षों तक शीत प्रसुप्त रखने के बाद उन्हें पुनर्जीवित करने में सफलता पायी है । इस सन्दर्भ में एक नया रसायन प्रकाश में आया है—'एन्टीमेटा वोलाइट्स' इसे किसी शरीर में पहुँचा कर जीव कोशों की अधिकांश प्रक्रियाएँ स्थिर की जा सकती हैं । यदि इस दिशा में एक कदम और आगे प्रगति हो सके और 'अधिकांश' को 'सम्पूर्ण' में परिणत किया जा सके तो शीत प्रसुप्त का कार्य इस रसायन प्रयोगों से भी सम्भव हो सकता है तब जर्जर शरीरों को बहुत दिनों तक विश्राम की स्थिति में रखकर उनकी थकान मिटाई जा सकेगी और कायाकल्प जैसा लाभ मिल सकेगा ।

फ्रांसीसी विज्ञान वेत्ता जीनरास्टेण्ड ने पता लगाया था कि सुषुप्ति के समय विश्राम देने और जीवन कोशों की रक्षा करने का प्रयोजन उस स्थिति में सहज उत्पन्न होने वाला रसायन 'ग्लाइस काल' पूरा करता है ।

लम्बे समय की सुषुप्तावस्था उत्पन्न करने में एक भय यह है कि कहीं सोने वाले के खून में शीत की अधिकता के कारण थक्के न बनने लगें । सभी जानते हैं कि रक्त में उत्पन्न हुए थक्के हृदय की गति को रोक कर मरण संकट उत्पन्न कर सकते हैं । इसलिए सोचा यह गया है कि लम्बे समय तक सोने वाले के शरीर से सारा असली रक्त निकाल लिया जाय और उसके स्थान पर नकली रक्त भर दिया जाय । नकली रक्त अब बनने लगा है । ग्लूकोज, नमक, ऑक्सीजन तथा दूसरे रसायनों को मिलाकर ऐसा द्रव बना लिया गया है जो रक्त की जगह काम दे सकता है और उसमें थक्के बनाने की आशंका नहीं रहती ।

शीतलता उत्पन्न करने वाले तरल रसायनों में डाइमेथिल सल्फी ऑक्साइड मुख्य है । इसे संक्षेप में डी. एस. एस. ओ. कहते हैं । दान में मिले नेत्र, गुर्दे, आदि अवयवों की किसी दूसरे के शरीर में फिट करने के लिए देर तक सुरक्षित रखना पड़ता है । इस स्थिति में अंगों की सड़न बचाने के लिए डी. एस. एस. ओ. का प्रयोग अभीष्ट प्रयोजन को बहुत सरल बना देता है ।

मेंढक गर्मियों में गहरे कीचड़ में धँस जाते हैं और कीचड़ के साथ-साथ स्वयं भी सूख जाते हैं । इस स्थिति में वे लगभग मृत जैसी सुषुप्ति में पड़े रहते हैं किन्तु बहुत ही मन्द गति से धड़कन तब भी चलती रहती है । वर्षा होने पर कीचड़ नरम होती है तो इन मेंढकों में भी जीवन लौट आता है और शरीर को पूर्ववत् सक्रिय बनाने के लिए वे टरनि लगते हैं । कई जाति की मछलियाँ और साँपों को भी इसी तरह लम्बी सुषुप्ति में पड़े हुए पाया गया है । बर्फीले प्रदेश में रहने वाले भालू भी कड़ाके की सर्दियों में किसी गुफा में जाकर लम्बी नींद लेते हैं ।

निम्नतापोत्पादिकी (क्रियोजोनिक्स) के आधार पर मौत ही नहीं बुढ़ापे पर भी नियन्त्रण कर सकना सम्भव हो जायेगा इस विश्वास के साथ आज के वैज्ञानिक इन प्रयोगों में तत्परतापूर्वक लगे हुए हैं ।

ताप की एक सीमा तक ही शरीर को आवश्यकता होती है यदि उसकी मात्रा बढ़ने लगे तो विपत्ति खड़ी हो जाती है । बुखार शरीर में बढ़े हुए ताप का ही नाम है । जिसके कारण काया दो चार दिन में ही चकमका जाती है । बाह्य जीवन में भी यही बात है वातावरण गरम होने से हलचलें बढ़ती हैं और शक्ति का अनावश्यक क्षरण होता है । शीत में अपने ढंग की क्षमता मौजूद है और वह हमारे लिए अनेक दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण है । न केवल शारीरिक और मानसिक दृष्टि से वरन् भौतिक जगत में भी शीत की शक्ति अब अधिक अच्छी तरह पहचानी जाने लगी है ।

भविष्य में अन्तर्ग्रही यात्राओं में शीत का ही उपयोग किया जायेगा । शनि ग्रह तक आने-जाने में कम से कम १२ वर्ष का समय लगने की आशा की गई है । इतने समय तक खाने-पीने का सामान लेकर चलने वाला रॉकेट कितना भारी होगा और उसे छोड़ने चलाने के लिए कितने ईंधन की आवश्यकता पड़ेगी, इस विचार से तो वह यात्रा असम्भव ही हो जायेगी । इस समस्या का हल एक ही है कि यात्री को शीत में सुला दिया जाय और नियत समय पर स्वसंचालित यन्त्र उसे गरम करके पुनर्जीवित कर दे तथा आवश्यकतानुसार फिर सुला दे । इसी व्यवस्था में कोई चालक बारह वर्षों तक बिना खाये पिए रह सकता है और अपनी यात्रा हल्के यान से भी जारी रख सकता है ।

वर्तमान वैज्ञानिक सफलताओं के अनुसार न्यूनतम तापक्रम २७३ डिग्री सेन्टीग्रेड तक का उत्पन्न किया जा सकता है । सामान्यतया ० डिग्री सेन्टीग्रेड पर पानी बर्फ के रूप में जम जाता है । १० डिग्री से. पर वह भाप बन जाता है । २७३ डिग्री शून्य परम ताप-शीत की अन्तिम स्थिति मानी तो गई है पर उसे अभी प्राप्त नहीं किया जा सका ।

जूल थामसन पद्धति के अनुसार निम्नतापोत्पादिकी विज्ञान से कितने ही आश्चर्यजनक कार्य लिए जाने लगे हैं । गैसों को द्रव रूप में ही नहीं उन्हें ठोस रूप में भी जमा लिया

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गया है । हालैण्ड के विज्ञानी कामेरलिंघ ओनेस ने शीत से उत्पन्न अति संवाहकता की शक्ति पर अनेक शोधें की हैं और भविष्यवाणी की है कि निकट भविष्य में ताप की प्रतिद्वन्द्विता शीत द्वारा कर सकना सम्भव हो जायेगा । ताप को ही हर काम में वरिष्ठता नहीं मिलेगी वरन् शीत को भी उतना उपयोगी एवं शक्तिशाली अनुभव किया जायेगा ।

पात्रों को गैस रहित करना, अशुद्ध जल को शुद्ध बनाना भी ऊँची तथा लम्बी उड़ान वाले रॉकेट चालकों के लिए श्वास सुविधा जुटाना, सूखी बर्फ बादलों पर छिड़क कर कृत्रिम वर्षा कराना, वस्तुओं को शीतल करके सुरक्षित रखना, आग बुझाने को कार्बनडाइ ऑक्साइड का भण्डार सुरक्षित रखना, धातुओं का परिशोधन-जैसे प्रयोजन तो पिछले बहुत समय से पूरे किए जा रहे हैं । कम्प्यूटर सरीखे जटिल रचना वाले तथा डाटा प्रोसेसिंग यन्त्रों के स्वसंचालित रखने का साधन जुटाना शीत शक्ति के सहारे अधिक सरल हो चला है । शक्तिशाली चुम्बकों का निर्माण करने के लिए भी यही पद्धति अधिक सरल पायी गई है ।

गर्मी के गीत गाते हमें मुद्दतें बीत गईं । अब शीत के रहस्यों से भी हमें अवगत होना चाहिए । युद्ध से लेकर व्यस्तता भरी भगदड़ तक के परिणाम चिरकाल से अनुभव में आते रहे हैं अब शान्ति, शीतलता, सौजन्य, मृदुलता, मधुरता और सन्तुलन भरी दूरदर्शिता का आश्रय लिया जाना चाहिए और देखना चाहिए कि शान्ति की दूरदर्शी रीति-नीति प्रचण्ड उद्विग्नता से कम शक्तिशाली है या अधिक । शोधें हमें ताप के समान ही शान्ति की गरिमा से परिचित करायेंगी और तब यही उचित होगा कि हम शान्ति और क्रान्ति की समन्वयात्मक प्रक्रिया अपना कर सन्तुलित वातावरण उत्पन्न करें ।

जीवन के रहस्य, जीवन की विचित्रताएँ

आयरलैण्ड के क्रुक हैवेन शहर में एक ही मकान में रहने वाले दो दम्पत्तियों के एक ही दिन कुछ मिनटों के ही अन्तर से दो पुत्र पैदा हुए । एक दाम्पत्य ने अपने बच्चे का नाम एलेनर ग्रेडी रखा दूसरे ने अपने बच्चे का नाम पैट्रिक रखा । दोनों बच्चे धीरे-धीरे अपने जीवन के स्वाभाविक विकास क्रम की ओर चल पड़े ।

प्रति सेकण्ड ३ बच्चों का जन्म हो जाने वाली इस पृथ्वी में शरीर धारण कोई अनोखी बात नहीं है आज-कल तो जनसंख्या वृद्धि एक समस्या ही बन गई है क्योंकि खाद्यान्न में १ से २,२ से ३,३ से ४ की धीमी गति से प्रगति होती है जबकि बच्चे १ से २,२ से ४ और ४ से ८ की गुणोत्तर गति से । अतएव अनुमान है कि कुछ दिन में जनसंख्या भूख के कारण कहीं अपना ही विस्फोट न कर ले ऐसी स्थिति में बच्चों का जन्म तो एक प्रकार का अभिशाप भी है फिर इन बच्चों के जन्म की चर्चा क्यों छेड़ी गई ?

इसलिए कि जीवन के वास्तविक अर्थ को समझा जाय और उसका लक्ष्य भी प्राप्त किया जाय ? ऋग्वेद में बताया है—

अपाङ् प्राङेति स्वधया गृभीतोऽमर्त्योमर्त्येना सयोनिः । ता शश्वन्ता—विषूचाना वियन्तान्यऽन्य चिक्युर्न नि चिक्युरन्यम् ॥

—१/१६४/३८

अर्थात्—अन्न से बना हुआ यह शरीर तुम्हारे कल्याण के लिए मिला है अशुभ कर्म करके नीचे मत गिरो, महान् कार्य करो और ऊपर उठो ।

किन्तु जड़ शरीर और इन्द्रियों की आसक्ति में पड़े मनुष्य शरीर की सूक्ष्म चेतना की ओर ध्यान ही नहीं देते । प्रस्तुत पंक्तियों में दी जा रही घटना यह बताती है कि मनुष्य-चेतना किसी सार्वभौमिक नियम के अनुसार किसी उद्देश्य के लिए जन्म लेता है उसे इस अद्वितीय चेतना और अन्तिम सत्य का ज्ञान प्राप्त करना और उसकी अनुभूति करना ही चाहिए ।

पैट्रिक और एलेनर ग्रेडी अलग-अलग खेलते, किन्तु एक दिन दोनों रोते-रोते घर पहुँचे, दोनों के दाहिने पैर पर लगभग एक ही स्थान पर चोट लगी थी । माता-पिता ने पट्टी कर दी कोई ध्यान नहीं दिया । दोनों बच्चे पढ़ रहे थे तब कई बार ऐसा हुआ कि यदि परीक्षा में पैट्रिक को २६० अंक प्राप्त हुए तो दूसरे स्कूल में पढ़ रहे ग्रेडी को भी २६० ही अंक मिले । अन्तर पड़ा तो बहुत ही मामूली ।

जिस दिन एडिनर ग्रेडी के विवाह सम्बन्ध की बात चली ठीक उसी दिन पैट्रिक की भी और संयोग कुछ यों हुआ कि दोनों की शादी एक ही दिन तय हुई एक दिन ही हुई और पहला बच्चा भी दोनों के एक ही दिन हुआ । इन घटनाओं ने लोगों का ध्यान हठात् इधर खींचा और आयरलैंड के शिक्षित व्यक्ति भी यह मानने लगे कि कोई एक सार्वभौमिक सत्ता व नियम सृष्टि में काम अवश्य कर रहा है अन्यथा यह विचित्रताएँ क्यों कर प्रकाश में आतीं । महात्मा गाँधीजी और लालबहादुर शास्त्री की जन्मतिथियाँ एक थीं दोनों का जीवन एक-सा था । पं. मोतीलाल नेहरू और श्री रवीन्द्र नाथ टैगोर एक ही दिन जन्मे उनकी उपलब्धियाँ लगभग एक जैसी थीं । अमेरिका के राष्ट्रपति कैनेडी और राष्ट्रपति लिंकन १०० वर्ष के अन्तर से जन्मे पर उनके जीवन की घटनाओं में इतनी अधिक समानता देखी गई कि लोगों को यहाँ तक कहते सुना गया—"लिंकन ही कैनेडी होकर जन्मे हैं ।

पैट्रिक और एलेनर ग्रेडी ६६ वर्ष की आयु में एक ही दिन बीमार पड़े और एक ही समय मर कर चले गए पर अपने पीछे एक प्रश्नवाची चिन्ह छोड़ गए जो चिरकाल तक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लोगों को मनुष्य-जीवन की यथार्थता को खोजने की आध्यात्मिक प्रेरणा देता रहेगा ।

शीतल आवरण से ही समस्वरता सम्भव है

भीतरी आग को बाहर फूट पड़ने से बचाने की प्रक्रिया ही इस संसार को सामान्य क्रम से चलने देने का आधार बनी हुई है । यदि भीतरी आग को स्वच्छन्द फूटने का अवसर मिलता रहे तो यहाँ न व्यवस्था रहेगी और न सुरक्षा । धरती के भीतर आग भरी पड़ी है । इसके ऊपर भूतल का ठण्डा और मोटा कवच चढ़ा है । यह कवच जब भी, जहाँ भी ढीला पड़ता है वहीं विनाशकारी भूचाल सामने आ उपस्थित होते हैं ।

पृथ्वी की ऊपरी परत एक प्रकार से नारंगी के छिलके की तरह है, जिसके भीतर भू-गर्भ की भयंकर ऊष्मा और उथल-पुथल पर नियन्त्रण रहता है । बहुत गहराई पर पृथ्वी का भीतरी भाग अभी भी पिघले हुए लाल लोहे की तरह है और क्रमशः ठण्डा होने की प्रक्रिया के अन्तर्गत भीतर ही भीतर भारी हलचलें चलती रहती हैं । वह उथल-पुथल भीतर ही सीमित रहे । इसकी सुरक्षा पृथ्वी की ऊपरी परत पर अवस्थित वह कवच ही करता है, जो प्रायः तीन मील से लेकर १०० मील तक मोटा है । यदि यह छिलका न होता तो भीतरी हलचलें ऊपरी परत तक उभरती रहतीं और भूमि पर सर्वत्र अस्थिरता रहने से कहीं कुछ भी सुरक्षित न होता ।

इस कवच-परत में कहीं-कहीं कुछ छिरछिरापन है । इसलिए समय-समय पर उसमें से भीतरी हलचलें फूट पड़ती हैं और धरती पर भूचाल एवं भूकम्प होते रहे हैं । कभी-कभी तो बहुत ही विकट होते हैं । अलास्का का भूकम्प इतना विकट था कि जापान पर डाले गए अणुबमों की तुलना में उसे एक करोड़ गुना शक्तिशाली कहा जा सके । उसने ७ लाख वर्गमील भूमि को प्रभावित किया था ।

भू-तत्व के अन्तराल में होते रहने वाले परिवर्तन उसकी बाहरी सतह को प्रभावित करते हैं । हिमालय लगातार ऊँचा उठ रहा है । नीलगिरि तो प्रायः ३०० मीटर ऊपर उठ चुका है । रामेश्वरम् का तटवर्ती जंगल समुद्र में धँस गया, बम्बई के निकट भी कुछ भू-भाग जल-समाधि ले चुका है । भौगोलिक दृष्टि से भारत का दक्षिणी पठार किन्हीं भूचालों की ही देन है । भीतर की आग जब बाहर फूटती है तो समस्वरता को तोड़-मरोड़ कर दुःख देती है । पर्वत उठें या खड्ड पड़ें दोनों ही स्थिति में उपयोगी समतल भू-परत की उपयोगिता से तो हाथ धोना ही पड़ता है ।

धरती की तरह ही मनुष्य के भीतर भी कई प्रकार की आग छिपी पड़ी है, उनमें से उपभोग और संचय की लालसा प्रमुख है । उद्धत स्वेच्छाचार की अहंकारिता भी लगभग वैसी ही है, यह मर्यादाओं को तोड़कर मनमानी करने पर उतारू रहती है । यह भी एक प्रकार की आग है । क्रोध और दर्प को भी इसी पंक्ति में बिठाया जा सकता है । वासना और तृष्णा की चिन्ता और उद्विग्नता की आग की भयंकरता से कौन परिचित न होगा ? यदि इन्हें भीतर ही दबा न रहने दिया जाय, उभरने के लिए स्वच्छन्द छोड़ दिया जाय तो जीवन की समस्वरता स्थिर रह नहीं सकेगी । समाज का सन्तुलन टिक ही न सकेगा ।

शील, मर्यादा, नीति, संयम और आस्तिकता की दूरदर्शिता पूर्ण पर्तें ही जीवन-क्रम में सज्जनता और शालीनता स्थिर रखती हैं । न्याय, धर्म और विवेक के बन्धनों में बँधा हुआ समाज ही शान्ति पूर्वक रहता और प्रगति के पथ पर बढ़ता है । अपराधी उच्छृंखलता और संकीर्ण स्वार्थ-परता की दुष्टता की आग को ऊपर तक न आने देना ही बुद्धिमत्ता है । नीलकण्ठ शिव की तरह विषाक्तता को कण्ठ में रोके रहने में ही भलाई है । अन्यथा भूचाल जैसे दुष्परिणाम हमारे लिए घातक संकट करेंगे ।

साधक को न अकेलापन खलता है न असफलता अखरती है

मनुष्य के सामने यदि कुछ लक्ष्य हो और उसमें उसकी गहरी रुचि हो तो उन दिशा में चलते हुए मनुष्य बड़ी से बड़ी कठिनाइयों को हँसते-हँसते सहन कर सकता है । लक्ष्य प्राप्त की आशा की चमक उसे यह अनुभव ही नहीं होने देती है कि वह अकेला चल रहा है या असफल हो रहा है । स्वर्ण खोजी इसोला का उदाहरण इसी तथ्य को स्पष्ट करता है ।

अब से कोई २५ वर्ष पहले ४२ वर्षीय इसोला फिनलैण्ड के ग्रामीण स्कूल में अध्यापक था । वह सोचा करता उसे कुछ असाधारण काम करना है । इसी मान्यता के कारण उसने विवाह के झंझट से अपने को दूर रखा । उसकी रुचि टुण्ड्रा के हिमाच्छादित प्रदेश में बसने की और कुछ नये अन्वेषण करने की थी ।

टुण्ड्रा प्रदेश में अधिक जानकारी देने वाले साहित्य की उसने तलाश की तो एक पुस्तक ऐसी हाथ लगी जिसमें लिपलैण्ड में गए स्वर्ण खोजियों का विवरण था । वे लोग उस प्रदेश में ढूँढ़ खोज कर प्रायः पन्द्रह किलो सोना हर व्यक्ति पीछे प्राप्त कर लेते थे । यह कार्य उन लोगों ने तीस वर्ष तक जारी रखा । इस विवरण से इसोला को नया उत्साह मिला । फिनलैण्ड के भूगर्भ विशेषज्ञों ने भी इस बात की पुष्टि की कि लिपलैण्ड नदी घाटियों और पहाड़ियों में सोने का विपुल भण्डार मौजूद है ।

इसोला ने अपना कार्यक्षेत्र उसी प्रदेश को बनाना निश्चित किया और अध्यापक की नौकरी छोड़ दी । स्कूल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

से मिलने वाली पेन्शन ही तब उसके भावी गुजारे का एक मात्र आधार थी । वह टुण्ड्रा पहुँचा और घूम फिर कर मेसी नदी के किनारे ६०० मीटर लम्बा और ५० मीटर चौड़ा भूमि खण्ड अपने लिए चुन लिया । उसकी प्रार्थना पर फिनलैण्ड सरकार ने न केवल भूमिखण्ड मुफ्त दे दिया वरन् उसके द्वारा उपलब्ध स्वर्ण राशि पर किसी प्रकार का टैक्स न लगाने का भी अश्वासन दे दिया । अब वह निश्चिन्तता पूर्वक अन्वेषण कार्य में निरत है ।

एक कमरे वाला अपने हाथों बनाया हुआ झोंपड़ा उसमें एक तख्त एक मेज, कुर्सी, भालू की खाल का बिस्तरा, स्टोव, रेडियो, कागज, कापी, बन्दूक, कारतूस आदि सूक्ष्म सामान उसमें है ।

इस झोंपड़े से कोई ५ किलोमीटर दूर हवाई पट्टी है । वहाँ कभी कई हवाई जहाज उस क्षेत्र के निवासियों की आवश्यकताएँ पूरी करने तथा खोज-खबर लेने आते हैं । इसोला को इन्हीं से बन्द डिब्बों का भोजन मिल जाता है । कड़ी ठण्ड में जहाज नहीं आते तब वह उन दिनों के लिए अपना भोजन तथा ईंधन पहले से ही जमा कर लेता है । कभी-कभी वह भालू का शिकार भी करता है और उसका माँस बर्फ में गाड़ कर बहुत दिनों तक उससे काम चलाता है ।

इसोला निरेतर नदी तट पर जमी रेत में से स्वर्ण कण ढूँढ़ने में लगा रहता है । इस प्रयोजन के लिए उसे पहाड़ियों और घाटियों की यात्रा भी करनी पड़ती है और कुदाल चलाकर खुदाई में भी निरत रहना पड़ता है । न तो उसे एकाकी जीवन पर खीझ आती है और न इतनी लम्बी अवधि में कोई अधिक सम्पत्ति हाथ न लगने की निराशा उसे सताती है । गर्मी में जब मच्छरों का बाहुल्य होता है तो भी वह अपनी तितीक्षा में अभ्यस्त होने के कारण उनसे घबराता नहीं ।

अपने प्रयास में उसे समय-समय पर सोने के टुकड़े मिलते रहते हैं । एक बार सबसे बड़ा टुकड़ा १६० ग्राम का हाथ लगा था । इसके बाद जो टुकड़े मिलते रहे हैं । वे चार-पाँच ग्राम से अधिक भारी नहीं हैं । आमतौर से तो राई रत्ती जैसे टुकड़े ही हाथ लगते हैं । औसतन साल भर में एक किलो सोना वह ढूँढ़ निकालता है । इससे मिलने वाली कीमत तथा पेन्शन की राशि से उसकी गुजर हो जाती है ।

पशु-पक्षियों पर मुकदमे

यूरोप में एक जमाना ऐसा भी रहा है जब पशु-पक्षियों पर भी अदालत में मुकदमे चलते थे । उनके लिए वकील नियुक्त होते थे । आदमियों की तरह अभियुक्त पशु-पक्षियों को भी दण्ड दिए जाते थे । उनके बयान उनका चेहरा देखकर कल्पित कर लिए जाते थे । ऐसे कुछ विचित्र मुकदमे नीचे प्रस्तुत हैं—

(१) सन् १५५६ ई. में इटली की अदालत में अनाज खाने वाले कीड़ों के नाम सम्मन जारी किए गए कि उन्होंने जान-बूझकर दूसरों की सम्पति को नुकसान पहुँचाया । सम्मन कीड़ों ने नहीं लिए तब वे पेड़ों पर चिपका दिए गए । अदालत में एक भी कीड़ा उपस्थित नहीं हुआ तो भी उन्हें हुक्म दिया गया कि इस इलाके से चले जायें और किसी दूसरे इलाके में अपने पेट भरने का इन्तजाम करें ।

(२) सन् १६४२ ई. में म्यूनिख की अदालत में एक भेड़िये के विरुद्ध मुकदमा चला कि उसने दो लड़कियों को घायल कर दिया था, चूँकि भेड़िया पकड़ा न जा सका इसलिए उसका चित्र अदालत में लाया गया और उसे मौत की सजा दी गई । असली के बदले उसी चित्र वाले नकली भेड़िये को मौत का दण्ड मिला ।

(३) इसी प्रकार सन् १४६७ ई. में एक सुअर को छोटी बच्ची को काट लेने के अपराध में मौत की सजा मिली, चूँकि वह पकड़ लिया गया था इसलिए उसे विधिवत् फाँसी दी गई ।

(४) सन् १५४० ई. में ऐसे ६२ मामले यूरोप की विभिन्न अदालतों में पेश हुए जिनमें जानवरों ने मनुष्यों को नुकसान पहुँचाया था सभी के वकील अदालत में आते रहे और मुकदमे के फैसला होने में कई वर्ष लगे । इन अभियुक्तों में से अधिकांश को मृत्यु दण्ड मिला ।

(५) सन् १५६१ ई. में एक इलाके के चूहों के खिलाफ मुकदमा चला कि उन्होंने जान-बूझकर मनुष्यों की सम्पत्ति को नुकसान पहुँचाया है । वकीलों ने चूहों को निर्दोष सिद्ध किया क्योंकि उनका गुजारा सदा से इसी आधार पर होता रहा है । अदालत ने चूहों की गैर हाजिरी में भी यह हुक्म सुनाया कि वे इस इलाके को छोड़ दें और कहीं अन्यत्र मुकाम करें ।

(६) एक बन्दर के मुकदमे में गवाह की जरूरत पड़ी । उसी पेड़ पर रहने वाले एक तोते को पकड़ा गया और उसकी मुखाकृति को देखकर सहमति-असहमति का अनुमान लगाया गया और बन्दर को दण्ड दिया गया ।

उपर्युक्त मुकदमों की सुनवायी में तीन से पाँच वर्ष तक का समय लगा । सबसे बड़ी कमी यह थी मुजरिम अदालत में हाजिर नहीं होते थे । मात्र वकील ही उनकी ओर से सफाई देने आते थे । इन वकीलों को सरकारी खजाने से फीस दी जाती थी इसलिए वे मुकदमे को लम्बा खींचने की कोशिश करते थे । यह प्रथा सन् १६०० में बन्द हुई । सन् १४०० से १६०० तक ढेरों मुकदमे इस प्रकार के चलते रहे, ढेरों धन इस सनक में खर्च हुआ ।

पिछले दिनों न्याय या अन्याय की ठीक परिभाषा नहीं हो सकी थी । राजा का हुक्म ही न्याय था । वे जिस पर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चाहें थोड़े से कारण पर अपनी मनमर्जी का बड़े से बड़ा दण्ड दे दिया करते थे । किसी पर खुश हों तो किसी को भी क्षमा कर देते थे । न्याय उनकी मुट्ठी में रहता था । कोई दण्ड विधान या आचार संहिता नहीं थी । यदि थी तो नाम मात्र को और फिर उनका कोई पालन भी नहीं करता था ।

जब न्यायालय बने और दण्ड विधान बने तो ऐसे अधूरे थे जिनमें मनुष्य और पशु का अन्तर तक भुला दिया गया था । मुकदमे की खानापूरी करने के लिए वकीलों की चढ़ बनी थी । पशु-पक्षियों के नाम भी सम्मन भेजे जाते और उन्हें अदालत में जवाब देने के लिए कहा जाता । जबकि ये बोल तक नहीं सकते थे । उसी जमाने के कुछ मुकदमे मनोरंजनार्थ ऊपर दिए गए, जो मानव की एक और मूर्खता के परिचायक हैं ।

सुयोग आकस्मिक है सौभाग्य सद्भावजन्य

कई बार मनुष्य आकस्मिक सुयोगों का लाभ उठा लेता है । वह विपत्ति से बच निकलता है और अनिष्ट उसे मात्र छूकर निकल जाते हैं । ऐसे घटनाक्रमों को आश्चर्य माना जाता है और सौभाग्य भी ।

रॉय सुलीवॉन अमेरिका में विश्व का एकमात्र जीवित मनुष्य है जिसने आकाशीय विद्युत का ७ बार आघात सहन कर वर्जीनिया के मानवीय विद्युत-संवाहक के नाम से ख्याति अर्जित की है । सुलीवॉन खुद को जानकारी नहीं है कि विद्युत क्यों उसके प्रति आकर्षित है । सन् १९४२ में पहला वज्रपात उसके ऊपर हुआ । फलस्वरूप पैर के अंगूठे का नाखून जल गया । उसके बाद यह वज्रपात का सिलसिला १९६९ में बराबर जारी रहा । जुलाई, १९६९ में भौंहे जलीं । जुलाई १९७० में बायां कंधा झुलस गया । १६ अप्रैल, १९७२ का बोलों में आग लगी और ७ अगस्त, १९७३ में फिर से बालों में आग लगी । उस आघात के फलस्वरूप अपनी गाड़ी से १० फीट दूर गिर पड़ा और माथा ठण्डा करने के लिए पानी डालना पड़ा । उसके बाद ५ जून, १९७६ के छटे वज्रघात से टखने (ankle) को चोट पहुँची और सातवें एवं अन्तिम बार के आघात से छाती के साथ आमाशय जल गया ।

पर इससे यह नहीं कहा जा सकता कि तड़ित चालक बनकर उसे ईश्वर की अनुकम्पा मिली । यदि ऐसा हुआ होता तो उसने कुछ सोचा होता और बचे हुए जीवन का ऐसे परमार्थ प्रयोजनों में लगाया होता जिसकी सर्वत्र सराहना होती । कितनों को ही प्रेरणा मिलती और कई जीवन की सार्थकता अनुभव करते हुए अनुकरणीय मार्ग पर चलते ।

अपनी सशक्तता का कितने ही व्यक्ति परिचय देते हैं और सिद्ध करते हैं कि वे दूसरों से अधिक सामर्थ्यवान हैं । जो कार्य दूसरे लोग नहीं कर सकते उन्हें वे करने में समर्थ हैं ।

बेलजियम के 'हरक्युलिस' जान मेसीस ने ७ अप्रैल, १९७९ को अपने दाँतों से हेलीकॉप्टर को ऊँचा उठने से रोक लिया था । मनुष्य बनाम मशीन की इस रस्सा-कशी में हेलीकॉप्टर का ऊर्ध्व दबाव ३६५ पौण्ड आँका गया था ।

यह कार्य सर्व साधारण के लिए असम्भव है । दाँत, जबड़ा हर किसी के इतने मजबूत कहाँ होते हैं ?

जोहान हलींगर ने १९०० ईस्वी में वियेना से पेरिस ८७१ मील का रास्ता हाथों के बल चल कर तय किया । प्रतिदिन १० घण्टे १.५८ मील की रफ्तार से यह यात्रा ५५ दिन में पूरी की ।

लम्बी यात्राएँ कई करते हैं । पर वे रुक-रुक कर होती हैं । चलने वाले पैरों के बल चलते हैं और बीच-बीच में सुस्ताते रहते हैं । अनवरत इतना श्रम कर पाना हर किसी के लिए कहाँ सम्भव है ?

किन्तु यह सब किया गया शक्ति प्रदर्शन भर के लिए औरों की तुलना में अपने को अधिक मनस्वी और सामर्थ्यवान सिद्ध करने के लिए । पर इतने भर से क्या बना ? मनुष्य जैसे दुर्बल प्राणी से प्रतिस्पर्धा में आगे निकल जाना साधारण बात है । अभी शेर, चीते, हिरन, जिर्राफ, घोड़े जैसे कितने ही प्राणी पड़े हैं जो मनुष्यों में से किसी भी धावक को, एथलीट को पीछे छोड़ने की क्षमता रखते हैं ।

ओहियो निवासी डोन कुक ने लगभग १७५०० इटली नस्ल वाली मधुमक्खी की दाढ़ी उगाई है । इस दाढ़ी की लम्बाई गलमुच्छा से कमर तक १७ इंच है । रानी मधुमक्खी को ठोड़ी से चिपकाये रखने के फलस्वरूप अन्य मधुमक्खियाँ रानी मधुमक्खी तक पहुँचने के प्रयास में एक-दूसरे से चिपक कर इस अद्वितीय दाढ़ी का निर्माण करती हैं । इस व्यक्ति का जिक्र गिनीज बुक में विस्तार से हुआ है । यह अच्छा खासा कौतुक है । उस मनुष्य को सोते-जागते हर समय ध्यान रखना होता होगा कि कहीं कोई मक्खी करवट बदलते, नहाते, कपड़े बदलने में कष्ट न पाये और उड़ न जाय । इस सतर्कता को सराहा जा सकता है, किन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि उसने अपने में मानवोचित सद्गुण बढ़ाये और किसी की कोमल भावनाओं को आघात नहीं लगने दिया ।

प्रदर्शन को लोग महत्त्व देते हैं । अपनी सतर्कता का प्रमाण भी प्रस्तुत करते हैं । पर ध्यान इस ओर नहीं देते कि व्यक्तित्व को जिन सत्प्रवृत्तियों के आधार पर महान् बताया जा सकता है, उनका अभिवर्धन और घोषण करें ।

मनुष्यों में से कई लम्बे भी होते हैं और भारी भी । उनकी अपने साथ तुलना करके कोई साधारण व्यक्ति हँसते-मुस्कराते इतना भर कह सकता है कि वे स्वर्ग तक पहुँचने के लिए प्रयत्न कर रहे हैं या पर्वत के छोटे भाई बनने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

का सुयोग प्राप्त कर रहे हैं । संसार में इस बढ़े हुए स्तर के कितने ही मनुष्य हैं ।

२२ फरवरी, १९१८ को इलीनोइस क्षेत्र के एलटोन में जन्मा रोबर्ट परसींग वेडलो विश्व का आज तक का सबसे लम्बा मनुष्य माना जाता है । २२.४ साल में उसने ८ फीट ११.१ इंच की लम्बाई प्राप्त कर ली थी ।

इतनी लम्बाई हस्तगत करने के बारे बताया जाता है कि २ साल की उम्र में दूसरी बार के हर्निया की सर्जरी के बाद उसकी लम्बाई असाधारण रूप से बढ़ने लगी थी । सम्भवतः उसके पिट्युरी हारमोन्स में कहीं न्यूनाधिकता आ गई होगी मात्र मर्द ही नहीं, महिलाओं ने भी इस क्षेत्र में प्रतिद्वन्द्विता की है ।

१८ जून, १९५५ को शिकागो में जन्मी और इन्डियाना के शेल्बोविले में स्थित सेण्डी एलन ने अपनी २२ वर्ष की उम्र में ७ फीट ७$\frac{1}{4}$ इंच लम्बाई प्राप्त करके विश्व का एक नया कीर्तिमान स्थापित किया ।

लम्बाई के बाद वजन का सुयोग आता है । कई व्यक्ति असाधारण रूप से भारी होते हैं और कई मनुष्यों के बराबर माँस का बोझ अपने ऊपर लादे फिरते हैं ।

चिकित्सकों द्वारा तौल किया गया वजनी सम्राट का श्रेय सन् १९२६ मोन्टीसेलो, मिस्सोरी में जन्मे रोवर्ट अर्ल ह्युजेस को मिला है । फरवरी १९५८ में १,०६९ पौण्ड के अपने वजन से उसने विश्व को चकाचौंध कर दिया था । इतना वजन लादकर भी वह वर्षों जीया । महज एक अजूबा भर बना रहा, वह किसी के काम क्या आता, उसे करवट दिलाने के लिए आठ व्यक्तियों की आवश्यकता पड़ती थी ।

सर्वाधिक वजनदार जुड़वाँ बच्चों का श्रेय ७ दिसम्बर, १९४६ में जन्मे नोर्थ केरोलीना के हेण्डरसनविले में स्थित बिली और बेनी मेकगुयीर को मिला है । नवम्बर १९७८ में दोनों का वजन क्रमशः ७४३ पौण्ड और ७२३ पौण्ड के साथ कमर का घेरा ८४ इंच था।

यह उपलब्धियाँ आश्चर्यजनक हो सकती हैं पर अभिनन्दनीय नहीं । गौरवशाली भी नहीं ।

कई व्यक्ति धनवान होते हैं । सामान्य लोगों की तुलना में उनका वैभव अनेक गुना अधिक होता है, पर इससे किसी की गरिमा कहाँ बढ़ती है ? बहुत संग्रह होना, या बलिष्ठता, लम्बाई, ऊँचाई की दृष्टि से बड़ा होना मनुष्य का गौरव नहीं है । विशिष्टता इसमें है कि जो कुछ भी न्यूनाधिक मात्रा में मिला है उसका श्रेष्ठतम उपयोग किया जाय । उसे पुण्य परमार्थ स्तर के ऐसे कामों में लगाया जाय, जिससे पिछड़े लोग सहारा प्राप्त कर सकें और उठते लोग अपने लिए प्रेरणाप्रद मार्गदर्शन प्राप्त कर सकें । बड़प्पन का वैभव नहीं, महानता का अवलम्बन ही ऐसा मार्ग है जिसके सहारे व्यक्ति ऊँचा, अग्रणी और महान् कहला सकता है ।

जीवन जड़ तत्वों का उत्पादन नहीं है

जड़ में जीवन पाया जाता है यह ठीक है । यह भी ठीक है कि जीवन सत्ता द्वारा जड़ का संचालन होता है, किन्तु यह मान्यता सही नहीं कि जड़ से जीव की उत्पत्ति होती है जीवन जड़ता की एक स्फुरणा मात्र है । अधिक से अधिक यह कह सकते हैं कि जीवन की स्फुरणा से जड़ तत्वों में हलचल उत्पन्न होती है और वह अचेतन होने के बावजूद चेतन दिखाई पड़ता है । मूल सत्ता जड़ की नहीं चेतना की है । चेतना से जड़ का संचालन, परिवर्तन, परिष्कार हो सकता है, किन्तु जड़ में न तो जीवन उत्पन्न करने की शक्ति है और न उसे उत्पन्न, प्रभावित करने में समर्थ है । चेतन, जड़ का उपयोग-उपभोग भर करता है । यही ब्रह्मविद्या की मान्यता परख की कसौटी पर खरी उतरती है ।

यह सिद्धान्त एक प्रकार से अकाट्य ही है कि जीव से जीव की उत्पत्ति है । निर्जीव से जीव नहीं बनता है । कृत्रिम जीवन उत्पन्न करने में पिछले दिनों जो सफलता पायी गई है उसकी व्याख्या अधिक से अधिक यही हो सकती है कि अविकसित जीवन स्तर को विकसित जीवन में परिष्कृत किया गया । अभी ऐसा सम्भव नहीं हो सका कि निर्जीव तत्व को जीवित स्तर का बनाया जा सके । सम्भवतः ऐसा कभी भी न हो सकेगा ।

जीवन अविनाशी है । वह सृष्टि के आरम्भ में पैदा हुआ और अन्त तक बना रहेगा । स्थिति के अनुसार परिवर्तन होना स्वाभाविक है, क्योंकि इस जगत का प्रत्येक अणु परिवर्तित होता है हलचलों के कारण ही यहाँ तरह-तरह की जन्मने, बढ़ने और मरने की गतिविधियाँ दृश्यमान होती हैं । हलचल रुक जाय तो उसका विकल्प प्रलय, जड़ नीरवता ही हो सकती है । जीवन भी हलचलों से प्रभावित होता है और वह जन्मता, बढ़ता और मरता दीखता है । स्थूल काया की तरह सूक्ष्म कोशिकाएँ भी जन्मती, बढ़ती और मरती हैं फिर भी उनके भीतर का मूल प्रवाह यथावत् बना रहता है । एक से दूसरे स्थान में, एक से दूसरे रूप में स्थानान्तरण होता दीखता है । यही हलचलों का केन्द्र है । इसी में सृष्टि की शोभा, विशेषता है । इतना सब होते हुए भी जीवन की मूल सत्ता यथावत् अक्षुण्ण बनी रहती है उसका बहिरंग ही बदलता है अन्तरंग की, मूल प्रकृति की अविनाशी सत्ता ही कहा जा सकता है । उसके अस्तित्व को कोई चुनौती नहीं दे सकता, काल भी नहीं ।

अति आदिम अवस्था में एक कोशीय प्राणी द्विखण्डित होकर दो कोशों अर्थात् दो जीवों में विखण्ड हो जाता है । इन जीवों की न कोई माता होती है न पिता, क्योंकि एक कोश के दो में बँट जाने से प्रथम कोश का अस्तित्व ही नहीं रह जाता । फिर इन नवीन कोशों का भी विखण्डन होता है । इस प्रकार अतीत काल से लेकर अद्यावधि जीवनी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शक्ति का अखण्ड स्रोत प्रवाहित होता आया है और वह जीव सत्ता अविनाशी बनी हुई है ।

एक कोश का विखण्डन होने पर जिस नवीन जीव की उत्पत्ति होती है उसमें कोई नवीनता नहीं होती, प्रथम कोश की ही तरह वे नये कोश भी होते हैं, किन्तु मैथुन द्वारा उत्पन्न प्राणियों में दो जीवों की सम्मिश्रित विशेषता उत्पन्न होती है । इस प्रक्रिया से उत्पन्न हुए जीवों के शरीर कोशों को दो भागों में बाँटा जा सकता है—(१) देहकोश—साइटोप्लाज्म (२) बीजकोश—जर्म प्लाज्म । नर-नारी के बीजकोषों के संयोग में 'भ्रूणकोश' की उत्पत्ति होती है । इसी एक भ्रूणकोश से सहस्रों कोश उत्पन्न होते हैं । इनमें से कुछ बीजकोश होते हैं कुछ जीवकोश ।

वैज्ञानिक वाइजमैन के अनुसार देहकोशों में तो परिवर्तन होते रहते हैं, पर बीजकोशों में परिवर्तन नहीं होता । बीजकोश से देहकोश की उत्पत्ति होती है । देहकोश के लिए यह सम्भव नहीं कि वह बीजकोश उत्पन्न कर सके । बीजकोशों के द्वारा नित्य नूतन परिपूर्ण देह बनती रहती है । वह प्रवाह सन्तानों में चला जाता है । इस प्रकार जीवन अजर-अमर बना रहता है । जीव विज्ञानी वाल्टर ने अपने वंशानुक्रम ग्रन्थ में आत्मा की अमरता के सिद्धान्त को लगभग उसी स्तर पर प्रतिपादित किया है जिस प्रकार कि भारतीय अध्यात्म की मान्यता रही है ।

मानव जड़ पदार्थों का जितना अंश है उसका मूल्यांकन उपहासास्पद है । वह तुच्छ और नगण्य है । कायिक विश्लेषण से जो कुछ सामने आता है उसका कोई मूल्य नहीं । हमारी देह में ६४ प्रतिशत पानी, १६ प्रतिशत प्रोटीन, १४ प्रतिशत चर्बी, ५ प्रतिशत खनिज और १० प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट होता है । माँस शरीर में ४२ प्रतिशत है । उसमें तीन चौथाई पानी और एक चौथाई प्रोटीन जैसे दूसरे पदार्थ हैं इन सबका आर्थिक या रासायनिक मूल्यांकन किया जाय तो वह दस रुपये से भी कम बैठेगा ।

अन्य प्राणियों की तुलना में भी मनुष्य की शारीरिक शक्ति स्वल्प है । शक्ति के हिसाब से एक औसत घोड़ा औसत मनुष्य की तुलना में २२ गुना अधिक शक्तिशाली होता है । दीर्घजीवन की दृष्टि से भी वह कितने ही जीवों के बहुत पीछे है । संसार में सबसे दीर्घजीवी मनुष्य जिगली सिस्लिमाव नामक रूस के अजरवेजान गाँव में रहता है । संसार में सबसे लम्बा मनुष्य जीककर्ल है जिसकी ऊँचाई ९ फुट ७ इन्च है । सबसे भारी डैनियल लैम्बर्ट है जिसका भार ७६० पौण्ड है । यह सब आँकड़े आश्चर्यजनक हैं, पर इससे क्या अकेली ह्वेल मछली ही हाथी से पाँच गुनी बड़ी और भारी होती है । ह्वेल साधारणतया ८२०० पौंड की होती है ।

जीवों में मनुष्य अद्‌भुत है । उसकी अन्तःचेतना में ऐसी विशेषताएँ पायी जाती हैं जो जीव-विज्ञान की सामान्य मर्यादाओं और मान्यताओं का विलक्षण ढंग से अतिक्रमण करती हैं । ऐसा अन्य प्राणियों में नहीं होता वे एक सीमा तक ही अपने वंश के निर्धारित स्तर का उल्लंघन करते हैं, पर मनुष्य की विशेषताएँ जब उभरती हैं तो सारे नियम कानून तोड़कर रख देती हैं और ऐसे अद्‌भुत प्रमाण उत्पन्न करती हैं कि जीव-विज्ञानी दाँतों तले उँगली दबाये रह जाते हैं और उसे सृष्टि की अद्‌भुत एवं अनुपम रचना कह कर अपना समाधान करते हैं ।

चार्ल्स स्टिन मेज जब १६ वर्ष का था तभी उसका वजन ५८५ पौण्ड था । उसके भार में असाधारण रूप से वृद्धि होती चली गई । ३८ वर्ष का होने तक उसका वजन ७४० पौण्ड हो गया । उसकी खुराक आश्चर्यजनक रूप से बढ़ती जाती थी । मरने से पूर्व तो वजन में वृद्धि और भूख में अद्‌भुत उभार आया था । २१ जनवरी १९६३ को उसे अस्पताल में भर्ती किया गया । वह कहता था यह खाऊपन और वजन बढ़ना ही मेरी मौत का कारण बनेंगे । सचमुच ऐसा ही हुआ भी केवल १५ दिन में उसका भार ७० पौण्ड बढ़ गया और उतना खाया कि खिलाने वाले चकित रह गए । यह अति वृद्धि ही दो सप्ताह में ही उसे मौत के मुँह में घसीट ले गई ।

अमेरिका के मान्टिऐलो में जन्मा एक बालक राबर्ट अर्ल ह्यजेस अपने जन्म समय में ही ११ पौण्ड का था । वह ३२ वर्ष का होकर सन् १९५८ में मरा तब तक उसका वजन १०४१ पौण्ड हो गया था । उसी देश में फ्लोरा नामक एक नीग्रो महिला मृत्यु के समय तक ८४० पौण्ड की हो चुकी थी । संसार की सबसे पतली और हल्की, महिला मैक्सिको की लूसिया जेरट है जो २० वर्ष की उम्र में १३ पौण्ड की थी ।

संसार के लम्बे व्यक्तियों में इलीनोइस प्रान्त के एल्टन नामक स्थान में जन्मे राबर्ट पर्शिंग वैदली थे । वे १९४० में २२ वर्ष की उम्र में मरे तब तक उनकी लम्बाई ८ फुट १० इन्च पहुँच चुकी थी वजन ४९१ पौण्ड । इससे पूर्व फिनलेण्ड का कैथानूस नामक व्यक्ति लम्बाई का कीर्तिमान स्थापित कर चुका था । वह ९ फुट ४ इन्च का था । उसकी हड्डियाँ अभी लन्दन म्युजियम नीदरलैण्ड में सुरक्षित हैं ।

यह तो वृद्धि की बात हुई अब छोटे और हल्के रह जाने की बात लीजिए । २६ फरवरी, १८७६ में जन्मी राजकुमारी पोलिन कद की दृष्टि से बहुत छोटी थी वह ९ वर्ष की होकर मरी तब तक केवल २४ इन्च ऊँची हो पायी थी । इटली की कैरोलिन क्राचमी भी ९ वर्ष की उम्र तक २० इन्च ऊँची ही हो पायी थी । आस्ट्रिया की राजकुमारी कोली वारी २५ वर्ष की आयु में मरी । तब तक वह २७ इन्च बढ़ पायी थी वजन ५ किलोग्राम था ।

जातियों की दृष्टि से अफ्रीका के रुआण्डा बुरुण्डी के कुछ कबीलों की लम्बाई ६ से ७ फुट तक की होती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इसके विपरीत अण्डमान निकोबार आदिवासी ४$\frac{1}{4}$ फुट से ऊँचे नहीं उठते । कांगो (अफ्रीका) के बौने लोग तो इससे भी छोटे ३$\frac{1}{2}$ से ४ फुट के ही पाये जाते हैं ।

कुछ दिन पूर्व समाचार-पत्रों में भारत की एक अद्‌भुत महिला का समाचार छपा था—'बनारस के गंगाघाट पर बस्तर जिले की एक आदिवासी महिला भिक्षावृत्ति करके अपना गुजारा करती थी । उसकी उम्र २२ वर्ष की थी, पर इतनी ही आयु में उसकी लम्बाई ६ फुट १ इन्च पहुँच गई । लम्बाई के साथ-साथ उसकी खुराक भी बढ़ी वह ढाई किलो चावलों का बना भात खा लेने पर ही क्षुधा तृप्त कर पाती थी उसके गरीब पति के लिए इतना आहार जुटा सकना सम्भव न रहा तो वह बनारस गंगा किनारे उसे छोड़ गया ताकि किसी प्रकार अपना पेट पालन कर सके ।'

मनुष्य पशु वर्ग का प्राणी माना जाता है, पर मस्तिष्क की दृष्टि से उसने सबको पीछे छोड़ दिया है । हाथी का मस्तिष्क उसके शरीर भार का ६००वाँ भाग ही होता है, पर मनुष्य के दिमाग का भार उसके शरीर का ६०वाँ भाग है । इतना भारी विस्तृत और विकसित मस्तिष्क अन्य किसी जीव का नहीं होता ।

उसकी मस्तिष्कीय संरचना विलक्षण है । उसकी सूक्ष्मता, इतनी बारीकी और इतनी सम्वेदनशीलता अन्य किसी प्राणी में नहीं पायी जाती । मस्तिष्क विद्या के ज्ञाता उसमें फीलिंग, कान्सस्नैस, परशेप्शन, आइडिया, जेनरलाईजेशन, इरिटेबिलिटी आदि क्षमताएँ इतनी अधिक विकसित देखते हैं जितनी कि किसी प्राणी में नहीं पायी जाती । यों शरीर विश्लेषण की दृष्टि से इस मस्तिष्क संस्थान को नर्व फाइबर्स और नर्वसैल का मज्जा घटक मात्र कह सकते हैं । रासायनिक दृष्टि से उसे माँस पिण्ड भर कहा जा सकता है, पर चेतनात्मक दृष्टि से उसकी सम्वेदनशीलता और सूक्ष्मता ऐसी है जिसे प्राणी जगत के अन्य किसी के साथ नहीं तौला जा सकता ।

जीवन को जड़ ठहराना दुराग्रह है । उसी प्रकार मनुष्य को पशु या वानर ठहराना व्यर्थ है । चेतना का अपना स्तर है, अपना स्वरूप और अपना अस्तित्व । वह अन्य जड़ पदार्थों की तरह किसी प्रकृति मर्यादा में सर्वथा आबद्ध नहीं है । जीवन, जड़ पदार्थों का उपयोग, उपभोग करता है वह उनसे उत्पादित या प्रतिबन्धित नहीं है ।

क्या हम आगे बढ़ रहे हैं ?

उन्नतिः क्रमशोलोके जीव धर्मः सतांमतः ।
उपर्यारुह्यनीचैः सः प्राप्नुहि पूर्णतां सदा ॥
सम्पूर्णां सहजत प्राप्तां योग्यतां धारयत्यलम् ॥

—पञ्चाध्यायी

अर्थात् संसार में क्रम से विकास करना सज्जनों से स्वीकृत जीव का धर्म है । वह नीचे से ऊपर को चढ़कर हमेशा पूर्णता को प्राप्त करने के लिए स्वाभाविक सम्पूर्ण योग्यता को पर्याप्त मात्रा में धारण करता है ।

सृष्टि के समस्त पदार्थों के जीवन क्रम पर दृष्टि डालने से पता चलता है कि हर एक पदार्थ आरम्भ में छोटा होता है । पीछे वह बढ़ता और विकसित होता हुआ आगे बढ़ रहा है । अंकुर-अंकुर से नन्हा सा पौधा, नन्हे से पौधे से बड़ा पौधा, अन्त में वृक्ष । रज-वीर्य के अत्यन्त छोटे कण-गोली के बराबर माँस पिण्ड, गर्भ-बालक, किशोर अन्त में तरुण पुरुष । परमाणु, अणु, टुकड़ा अन्त में बड़ा पदार्थ । वर्णमाला सीखने वाला विद्यार्थी ऊँची कक्षाओं का छात्र अन्त में विद्वान । जिधर भी दृष्टि दौड़ाइए हर पदार्थ छोटे से बड़ा बनता हुआ दिखाई पड़ेगा । इससे प्रतीत होता है कि जीवन का विकास-क्रम 'लघु से महान्' बनने की आधारशिला पर स्थिर है ।

पूर्वीय विज्ञान और पाश्चात्य विज्ञान दोनों ही इस प्रश्न पर एकमत हैं । भारतीय आचार्यों का मत है कि "चौरासी लाख योनियों में भ्रमण करने के पश्चात् जीव मनुष्य शरीर को प्राप्त करता है ।" योनियों में स्वेदज, उभ्दिज, अंडज, जरायुज, क्रमशः एक के बाद दूसरी कक्षा की योग्यता और शक्ति बढ़ती जाती है । स्वेदज जीवों में जितना ज्ञान और विचार है उसकी उपेक्षा उभ्दिजों की योग्यता बढ़ी हुई होती है । इसी प्रकार यह योग्यता बढ़ते-बढ़ते शरीरों की बनावटों में अन्तर होने लगता है और अन्त में मानव शरीर प्राप्त हो जाता है । मनुष्य, सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ प्राणी है, वह मंजिल की सबसे आखिरी सीढ़ी पर खड़ा हुआ है । जहाँ जीव को पहुँचना है वह स्थान मनुष्य शरीर के बिल्कुल निकट है ।' पाश्चात्य विकासवादी पंडित डार्विन भी अपना मत इसी प्रकार प्रकट करते हैं उनका कहना है कि अल्प चेतन एकेन्द्रिय प्राणियों की चेतना बढ़कर मछली, मेंढक, गिरगिट, गिलहरी, न्योला, बिल्ली, कुत्ता आदि में विकसित होता हुआ बन्दर से मनुष्य बना है । भारतीय अवतारों ने क्रम पर विवेचना करते हुए कुछ विद्वानों ने उससे भी विकासवाद की पुष्टि की है । हिन्दुओं के दस अवतार प्रसिद्ध हैं । उनमें से आरम्भ के यह हैं—(१) मत्स्य, (२) कूर्म, (३) बाराह, (४) नरसिंह, (५) बामन । अनुमान लगाया जाता है कि आरम्भ में मछली जैसे जीव, फिर कछुए जैसे, इसके बाद उन्नति करते-करते सुअर की आकृति के तदुपरान्त अधकचरे मनुष्य आधे आदमी जैसे नरसिंह हुए होंगे । पीछे बौने-अल्प योग्यता वाले-मनुष्य हुए होंगे । हो सकता है कि शारीरिक दृष्टि से वे वर्तमान मनुष्यों की अपेक्षा कुछ सबल रहे हों पर बौद्धिक दृष्टि से बौने, बामन-छोटे अवश्य रहे होंगे । ऐसे ही अन्य आधार भी जीवन विकास के सम्बन्ध में प्राप्त हो सकते हैं । पाश्चात्य अनुसन्धानों से तो सोलह आना इसी मत का समर्थन होता है कि जीवन नीचे से ऊपर की ओर तुच्छता से महानता की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ओर बढ़ रहा है । अध्यात्मवादी भी मानते हैं कि आत्मा बढ़ते-बढ़ते परमात्मा हो जाता है ।

यहाँ एक सन्देह उठ खड़ा होता है कि योनियों की असमानता के कारण कोई प्राणी तो बहुत आनन्द में रहते होंगे और कुछ उनके लिए तरसते होंगे जैसे कबूतर हवा में उड़ने का आनन्द ले सकता है पर कछुए के लिए वह कहाँ रखा है ? बन्दर तो मधुर फलों का स्वाद लेता है पर मेंढक के लिए वह कहाँ है ? मनुष्य षट्रस व्यञ्जन खाता है पर गधे को घास-पात खाकर गुजारा करना पड़ता है । इसी प्रकार जीवों का कार्यक्रम बौद्धिक मर्यादा आदि में भी विषमता होती है, शरीरों का छोटा बड़ा होना इन्द्रियों की न्यूनाधिकता का अन्तर है ही । पाप पुण्य की दृष्टि से भी अन्तर है ही । कोयल अपने बच्चों को कौओं से पलवाने के लिए धूर्तता करती है, माँसाहारी पशु-पक्षी अपने से छोटे जीवों को निर्दयता पूर्वक खा जाते हैं । ऐसी असमानता और विभिन्नता को देखकर बुद्धि सहज ही बड़ी भ्रमित हो जाती है और प्रश्न उपस्थित होता है कि ईश्वर की पुण्य रचना में ऐसी असमानता क्यों है ? यदि सभी प्राणी समान योग्यता के होते, कोई जीवजन्तु माँसाहारी न होता तो विश्व की व्यवस्था कितनी सुन्दर होती ।

हमें जानना चाहिए यह असमानता न तो भयंकर है न बुरी और न असह्य । हमारी स्थूल दृष्टि से यह अन्तर जैसा असाधारण दिखाई देता है । तात्विक दृष्टि से देखने पर वह यथार्थ वैसा नहीं है । यदि कोई अशिक्षित आदमी एक स्कूल में पहुँच जाय और एक ही समान बालकों में से किसी को गणित, किसी को भूगोल, किसी को भाषा किसी को दस्तकारी पढ़ता देख कर नाराज हो और कहे कि यह कैसा अविवेकी मास्टर है जो किसी से कुछ काम करा है किसी को कुछ शिक्षा दे रहा है किसी को कुछ । अज्ञानी की दृष्टि से स्कूल की यह असमानता मास्टर को अविवेकी ठहराती है, लेकिन एक सुविज्ञ व्यक्ति जानता है कि यह बालक जब अफसरी के योग्य होंगे तब इन्हें दस्तकारी, हिसाब, भूगोल, सुलेख आदि सभी की आवश्यकता पड़ेगी । इसलिए विभिन्न विषयों को धीरे-धीरे, पचता-पचता, पढ़ने के लिए अलग पुस्तकें, अलग-अलग कक्षाएँ, नियत करनी पड़ती हैं । योनियाँ स्वतन्त्र कक्षाएँ हैं जिनमें अलग-अलग विषयों की शिक्षा मिलती है और क्रमशः ऊँची कक्षा में चढ़ते जाते हैं । एक योनि के जीवधारी के काम, दूसरी के कामों से असम्बद्ध मालूम पढ़ते हैं तो भी उनमें आपसी तारतम्य रहता है । पहाड़े याद करने वाले बालक और ज्योमेट्री के प्रश्न करने वाले के काम में भले ही भिन्नता और कभी-कभी विपरीतता मालूम पड़े पर यथार्थ में एक का दूसरे से सम्बन्ध है । ज्योमेट्री के छात्र ने यदि एक दिन पहाड़े याद न किए होते तो आज जिस कार्य को वह कर रहा न कर सकता ।

चींटी और हाथी की तुलना शरीर की लम्बाई-चौड़ाई के अनुसार करते हुए तुच्छता महानता का निर्णय करना उचित न होगा । चींटी अपने शरीर की पुस्तक द्वारा भार वाहन, वस्तु छेदन, संचय वृत्ति, संघ बद्धता, सहयोग, आदि की शिक्षा प्राप्त कर रही है, जो आगे चल कर अफसरी के वक्त, मानव जीवन में काम देगा । हाथी अपने शरीर की कक्षा में सहनशीलता, स्वामिभक्त, गम्भीरता, इन्द्रिय संयम, सबलता, आदि पढ़ रहा है, बिना इसके भी तो अफसरी में काम न चलता । सिंह फाड़ खाना सीखता है ताकि मानव जीवन में अन्यायों को नोंच डालने की क्षमता प्राप्त हो जाय, लोमड़ी चालाकी पढ़ती है ताकि अफसरी के वक्त, मानव शरीर प्राप्त करने के समय चतुरता पूर्वक जीवन समस्याओं को हल कर लिया करे । हिरन अपनी कक्षा में दौड़ने की और खरगोश आत्म रक्षा की योग्यता संग्रह करता है । इस प्रकार विभिन्न योनियों में अलग-अलग प्रकार की शिक्षाएँ प्राप्त करता हुआ क्रमशः विकसित होकर मनुष्य शरीर में आता है और उन सब कक्षाओं की शिक्षा में इतना ज्ञान प्राप्त कर लेता है कि हजारों जीव-जन्तुओं से एक मनुष्य का पलड़ा भारी बैठता है । हजारों विद्यार्थियों की तुलना में एक प्रोफेसर अधिक बुद्धिमान ठहरता है ।

इन्द्रिय सुख की सृष्टि से कोई जीव आगे-पीछे नहीं है । बन्दर को फल जितने सुस्वादु लगते हैं, उतने ही मधुर ऊँट को नीम के पत्ते लगते हैं । राजा अपनी रानी से जितना प्रसन्न है, महतर अपनी महतरानी से उतना ही प्रसन्न है । इस प्रकार पशु-पक्षी भी वैसा ही आनन्द अनुभव करते हैं शब्द, रूप, रस, गन्ध, स्पर्श का सुख सबको मिलता है, जो जीव जिस योनि में है, जैसे साधन प्राप्त करता है उसी के अनुसार उनकी इन्द्रियाँ होती हैं ताकि वही परिस्थिति उसके लिए आनन्ददायक बन जाय । बेशक अन्य योनियाँ विवेक दृष्टि से मनुष्य से नीची हैं पर इसका अर्थ कदापि नहीं है कि वे दुखी हैं, अभावग्रस्त हैं या निष्प्रयोजन जीवन व्यतीत कर रही हैं । मनुष्येतर प्राणियों को भोग योनि मानना भ्रम है । जीवनमुक्त और देवता लोग भवबाधित मनुष्यों को नीची कोटि का समझें यह तो ठीक है पर यदि वे हमें भोग योनि मानें तो यह अन्याय होगा । सभी जीव अपनी-अपनी दशा में सुखपूर्वक हैं यही कारण है कि सबको मृत्यु बुरी लगती है । सभी अपनी अपनी कक्षा के अनुसार ज्ञान की योग्यताओं की शिक्षा प्राप्त करते हुए लघुता से महानता की ओर, अपूर्णता से पूर्णता की ओर, बन्धन से मुक्ति की ओर बढ़ते चले आ रहे हैं । निःसन्देह जीवन का लक्ष्य 'विकास' है । ईश्वरीय प्रेरणा से बलात् प्रेरित हुए जीव इसी महान् यात्रा के पथ पर दौड़ते हुए चले जा रहे हैं ।

जीवन क्यों आरम्भ हुआ ? जीवन यात्रा किस प्रकार आगे बढ़ रही है ? क्या जीव नीच योनियों के लिए फिर उल्टा लौट सकता है ? जब बहुत शिक्षाएँ प्राप्त करके मनुष्य योनि प्राप्त हुई है तो भी अनेक पापी क्यों दृष्टिगोचर होते हैं ? ऐसे अनेक प्रश्न पाठकों के मन में उत्पन्न होते हैं । इन गुत्थियों को सरलतापूर्वक समझने के लिए आवश्यक है कि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हम इस अद्भुत सृष्टा की बनाई हुई प्रत्येक वस्तु का गम्भीरतापूर्वक पर्यवेक्षण करें जो इन चर्म चक्षुओं से दिखाई तो नहीं पड़ता, परन्तु अपनी उपस्थिति कण-कण में कराता रहता है ।

बिनु पग चलइ-सुनइ बिनु काना

स्त्री के बीज कोश (ओवम) और पुरुष के बीज-कोश (स्पर्म) के मिलन से नये शिशु का जन्म और सन्तति क्रम इस संसार में चल रहा है पर यदि इसी क्रम को समय की लम्बी पाबन्दियाँ पार करते हुए पीछे सुदूर अतीत में ले जायें तो एक प्रश्नवाचक चिन्ह लग जाता है सृष्टि का श्रीगणेश करने वाली सत्ता क्या थी ?

इस सम्बन्ध में जीव शास्त्रियों और दार्शनिकों ने अपनी-अपनी तरह से विचार किया है । जीव शास्त्री इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि सृष्टि का वर्तमान स्वरूप और विकसित मनुष्य की उत्पत्ति एककोशीय जीव के क्रमिक विकास का प्रतिफल है ।

किन्तु, अपनी शक्ल निरन्तर बदलते रहने वाला एक कोश वाला जीव 'अमीबा' इस बात की घोषणा करता है कि संसार में प्राकृतिक नियम अन्तिम सत्य नहीं । अन्तिम व्यवस्था जीव चेतना के अन्तराल में समाहित है । अमीबा नर-नारी के संयोग से जन्म नहीं लेता । अमीबा बढ़ते-बढ़ते जब पूर्ण प्रौढ़ावस्था में आता है तो उसके शरीर का प्रथमावलास (प्रोटोप्लाज्मा अर्थात् शरीर का रसायन भाग) और केन्द्रक (न्यूक्लियस जिसमें इसके जीवन के लक्षण होते हैं) दोनों दो भागों में विभक्त हो जाते हैं और इस तरह एक नये स्वस्थ शिशु अमीबा का जन्म हो जाता है । अमीबा की वंश-वृद्धि का क्रम इसी भाँति चलता रहता है जो इस बात का उदाहरण है कि व्यवस्था की दृष्टि से सृष्टि ने आज जो भी रूप ले लिया हो उस पर सृष्टि उद्भव और विकास की सारी शक्ति जीवन के मूल तत्व इच्छा शक्ति पर आधारित है ।

स्पंज नाम का छिद्रिष्ठ (फाइलम पोरी-फेरा) जीव भी इसी कोटि में आता है । स्पंज के शरीर से चार किलियाँ निकल आती हैं मानो वह किसी बीज के अँखूयें हों । कुछ दिन में वह किलियाँ हरकत करती हैं जिससे स्पंज गोलाकार चक्कर काटने लगता है । यह किलियाँ एक स्पंज के बीज कीट के दूसरे के डिम्ब कोश से मिलने के कारण पैदा होती हैं और यही स्पंज के अन्दर विकसित होकर उसके किसी एक छेद से निकल कर नये स्पंज के रूप में जन्म ले लेती है पर यह इनकी वंश वृद्धि का एक तरीका है दूसरा तरीका अमीबा की तरह का ही है । स्पंज का शरीर बढ़कर, बढ़ा हुआ हिस्सा ही शरीर से अलग होकर दूसरा स्पंज बन जाता है और इस बात को प्रमाणित करता है कि समष्टि-जीवन चेतना एक अनादि तत्व है वह तत्व अपनी ही इच्छा से सृजन की शक्ति से नितान्त सम्पन्न और समर्थ है ।

छत्रिक (जैलीफिश) और इसी तरह के कुछ अन्य जीव भारतीय दर्शन के "रयि और प्राण" तत्व का प्रतिपादन करते हैं । सृष्टि के मूल में प्रकृति और पुरुष की यह दो शक्तियाँ ही जहाँ इकट्ठी हो जाती हैं वहाँ एक स्वतन्त्र ब्रह्माण्ड जीव की सृष्टि हो जाती है वैसे दोनों दो भिन्न, किन्तु पूरक तत्व हैं । छत्रिक के वृषण हाइड्रा के समान परिपक्व हो जाने पर फूट पड़ते हैं उसमें से छितरी हुई शुक्र कोशाएँ पानी में तैरने लगती हैं जहाँ कहीं डिम्ब कोश का संयोग हो जाता है शुक्र कोशाएँ १ से २, २ से ४ की गुणोत्तर गति से बढ़ने लगती हैं छत्रिक प्रारम्भ में डिम्ब कीट (लार्वा) की शक्ल ले लेता है और फिर पानी की निचली जमीनी सतह पर आकर बैठ जाता है आधा इन्च के इस लारवे में कई स्थानों पर घरार पड़ जाते हैं । धीरे-धीरे सभी घरारों वाले हिस्से टूट कर अलग हो जाते हैं और जितने भी टुकड़े हो जाते हैं सबके सब नवजात छत्रिक बन जाते हैं ।

भिन्न-भिन्न शरीर जीवात्मा के भिन्न-भिन्न क्षेत्र और यन्त्र हैं उनकी मूल चेतना एक ही समष्टि तत्व की अंश मात्र है उसका यह महत्त्वपूर्ण उदाहरण है, किन्तु मनुष्य एक सर्वांगपूर्ण यन्त्र जो पा गया तो उसकी लौकिकता और भौतिकता में ही वह फूला नहीं समाया । दिन रात अपनी इन्द्रियों की तृष्णा में ही पड़ा रहने लगा और इस तरह उसने आत्म-विकास की आवश्यकता, स्वर्ग मुक्ति और ब्रह्म प्राप्ति की जीवनोद्देश्यता से ही मुँह मोड़ लिया । आज की भौतिकतावादी तृष्णाएँ और मानवीय समस्याएँ इसी आसक्ति के परिणाम हैं यदि मनुष्य विचार और विवेक से काम ले तो मनुष्य और मनुष्येत्तर प्राणियों की, विचित्रताएँ ही यह समझा देती हैं कि मनुष्य का सत्य उसकी आत्म-चेतना है शरीर नहीं । जो काम वह शरीर के विभिन्न अंगों से ले सकता है, वह अपनी मूल चेतना के विकास द्वारा चेतना से चेतना में ही ले सकता है ।

फीताकृमि (टेपवर्म) एक ऐसे ही उदाहरण वाला परोपजीवी कीड़ा है । उसे न तो हाथ-पाँव उपलब्ध हैं और न मुँह । यह तो सुअर से लेकर मनुष्य शरीर तक जहाँ कहीं भी पहुँच जाते हैं रक्त शिराओं के द्वारा माँस-पेशियों में घुस जाते हैं और अपने शरीर से ही दूसरे के अंग से रस चूस कर बढ़ते रहते हैं । यही स्थिति नर शक्ल कीट की होती है । पाव इन्च लम्बे शरीर में आगे दो मूँछें जो उसे बहिरंग जगत की सूचना देने में एरियर का काम देती हैं । पेट, पतली मूँछ और दो पंख मात्र होते हैं कोई मुँह नहीं होता । ऐसी स्थिति में उसका एक ही काम रह जाता है—प्रजनन, मादा को गर्भान्वित कर, पड़े रहने भर तक ही उसका सारा जीवन सीमित है । मनुष्य भी यदि भोग परायण जीवन मात्र जीये तो उसमें और इन कीट-पतंगों में क्या

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

फर्क रहे, जबकि मनुष्य को परमात्मा ने एक बहुत ही उपयोगी यन्त्रों से जटित मुकुट-मणि शरीर प्रदान किया है ।

घ्राणेन्द्रिय श्वास के लिए बनाई है श्वास से ऑक्सीजन तत्व मिलता है यही उसका उपयोग है । उसके लिए तरह-तरह की खुशबूएँ जुटाना उद्देश्य नहीं । ऐसा रहा होता तो परमात्मा ने फ्लाई कीड़ों को भी बढ़िया वाली नाक से सुसज्जित किया होता । यह कीड़ा अपनी त्वचा से ही श्वास लेकर आधी जिन्दगी काट देता है पीछे उसके गलफड़े भी निकल आते हैं इतनी देर करने में प्रकृति का यह उद्देश्य दीखता है कि मनुष्य अनुभव करे कि शरीर उसका यथार्थ स्वरूप नहीं शरीर-धर्म तो कैसे भी पूरे हो सकते हैं मनुष्य की सर्वश्रेष्ठता का उपयोग तो इस बात में है कि वह अपनी बढ़िया वाली बुद्धि का उपयोग संसार के यथार्थ को जानने और सबके लिए एक समान उपयोगी जीवन व्यवस्था जुटाने में करे ।

भँभीरी (ड्रेगन फ्लाई) नाम जीव की आँखों से मनुष्य की आँखें क्या तुलना कर सकती हैं । इसके पंख और शरीर में ही विधाता ने सौन्दर्य नहीं भरा अंग-अंग में दिव्यता भर दी । सम्भव है उसे संसार को दिव्य भाव से देखने का गुण रहा हो और उसी के अनुरूप उसे ऐसा शरीर मिला हो । मनुष्य को दो आँखें दोनों में कुल दो ताल (लेन्स) वह भी अधिक से अधिक १८० डिग्री में घूम कर देख सकती हैं पर ड्रेगन फ्लाई है जिसकी आँखों में विधाता ने कई-कई हजार छपहन ताल जड़ें हैं वह अपनी गर्दन को स्वतन्त्र रूप से ३६० डिग्री में घुमाकर मनुष्य का उपहास कर सकता है कि ऐ मनुष्य ! शरीर का गर्व न कर, गर्व करना है तो परमात्मा द्वारा प्रदत्त बुद्धि और विवेक की शक्ति पर कर तू चाहे तो उसके द्वारा संसार की सत्य और मूलाधार चेतना का परिचय प्राप्त कर स्वतः धन्य हो सकता है और अन्य जीवों को भी सुखी और व्यवस्थित रख सकता है ।

उस चेतना का हर कण एक दिव्य आँख है उसके लिए भौतिक आँख की भी आवश्यकता नहीं । सिलवर मछली के मुँह में दो मूछें होती हैं आँखें नहीं होतीं पर क्या मजाल कि आँखों वाले उसे पराजित कर दें या परेशान करें । उसकी यह मूँछें ही आँख का काम देती हैं, जो बातें अन्य लोग आँखों से भी नहीं देख सकते वह अपने दोनों एण्टेनाओं से सिल्वर मछली बखूबी देख लेती है ।

घोंघों (लैण्ड स्नेल) के लिए पतझर-ऋतु मरण तुल्य होती है । पौधों से खुराक मिलनी बन्द हो जाती है तब घोंघे अपने कवच में घुस जाते हैं और किसी सुरक्षित स्थान पर बैठकर बिना कुछ खाए, बिना पिए और साँस लिए उसी स्थान पर बैठे रहकर जाड़ा बिता देते हैं । मनुष्य इतना लम्बा शयन करें तो मृत घोषित कर जला दिया जाय पर घोंघा है ये अपना उदाहरण देकर समझाता है कि यदि खाना-पानी और श्वास भी न मिले तो कोई हर्ज नहीं मनुष्य को आत्मस्थ होकर अपने शक्तिशाली जीवन सत्य को प्राप्त करने का प्रयत्न करना चाहिए ।

एक बार एक वैज्ञानिक रोडनियस इल्ली का अध्ययन कर रहे थे उन्होंने जहाँ अन्य आश्चर्यजनक सत्यों की खोज की वहाँ एक बार यह भी देखा कि पाँचवी अवस्था की रोडनियस इल्ली का सिर कट गया तो भी वह ग्यारह महीने तक जीवित पड़ी रही । यह उदाहरण इस बात का प्रमाण है कि जीव-चेतना प्राकृतिक गुण नहीं एक स्वतन्त्र सत्ता है जिसकी विशेषताएँ नैसर्गिक विशेषताओं से भिन्न कोटि की हैं । पूर्णता के गुण आत्म चेतना में हैं अतएव हमें आत्मा का अनुसन्धान करना चाहिए ।

शरीर तो यन्त्र मात्र है । समुद्री झींगे (लोबस्टर) की दो मूँछें होती हैं जो उसके शरीर से भी लम्बी होती हैं यह उसकी स्पर्शेन्द्रिय का काम देती हैं । जिस प्रकार कोई राडार यन्त्र दूर-दूर की सूचनाएँ देता रहता है उसी प्रकार झींगे की यह मूँछें जब वह सो रहा होता है तब भी उसे आस-पास के वातावरण की सूचनाएँ देती रहती हैं । इसकी विचित्र आँखें इस तरह की होती हैं मानो एक डण्डे में दो मोती जड़ दिए हों इन्हें वह इधर-उधर हिलाकर देखता रहता है । यह झींगा इस बात का उदाहरण है कि शरीर तो एक मात्र यन्त्र और आत्मा का वाहन है । आत्मा तो एक अलग ही सत्ता है—

बिनु पग चलइ सुनइ बिनु काना ।
कर बिनु कर्म करइ विधि नाना ॥
आनन रहित सकल रस भोगी ।
बिनु वाणी वक्ता बड़ जोगी ॥

उस सर्व समर्थ सत्ता को पाने का प्रयत्न किया जाय तो मनुष्य शरीर की सार्थकता है, अन्यथा जैसे यह सब जीव वैसे ही मनुष्य भी एक तुच्छ जीव है ।

बड़प्पन ही नहीं, तेजस्विता भी

समर्थता—वैभव-बड़प्पन तथा साधनों का बाहुल्य होते हुए भी दूरदर्शिता, तेजस्विता एवं साहसिकता के अभाव में हर किसी को पतन, पराभाव का सामना करना पड़ सकता है । इस तथ्य की साक्षी वे विशालकाय प्राणी देते हैं जो कभी इस धरती पर छाए हुए थे और जिनकी सामर्थ्य अद्भुत थी ।

जीवों के विकास क्रम की आरम्भिक अवधि में महागज, महासरीसृप एवं महागरुड़ धरती समुद्र एवं आकाश में अपना आधिपत्य जमाये हुए थे । उनके लिए आहार की भी कमी नहीं थी, फिर भी वे अपना अस्तित्व पूरी तरह गँवा बैठे । अब उनके वंशजों तक का अता-पता नहीं मिलता । मात्र उपलब्ध अस्थिपिंजरों से ही उनके अस्तित्व तथा विनाश की जानकारी मिलती है । वैभव की महत्ता तो है, किन्तु परिस्थितियों से जूझने की क्षमता भी तो चाहिए ही ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सदियों वर्ष पूर्व धरती पर दानवाकार अत्यन्त बुद्धिशाली डाइनोसोर्स 'महासरीसृप' अपने विकास की चरम सीमा पर पहुँच गए थे । बुद्धिमान होते हुए भी वे अपनी वंश परम्परा को कायम न रख सके और रहस्यमय ढंग से अचानक विलुप्त हो गए ।

साढ़े ६ करोड़ वर्ष पूर्व आर्कटिक क्षेत्र में ऐसे जीवधारी बहुतायत में पाये जाते थे जो न तो मैमल्स (महागज) और न ही रेप्टाइल्स (सरीसृप) इन्हें 'डाइनोसोर्स' कहा जाता था । ५० हजार वर्ष पूर्व जब द्वीप समूहों के किनारे धीरे-धीरे एक-दूसरे से अलग होने लगे तथा पहाड़ियाँ सिकुड़कर बड़े-बड़े पर्वतों का रूप धारण करने लगीं उसी समय डाइनोसोर्स तेजी से विकसित होकर विश्व के समस्त क्षेत्र में (मात्र अन्टार्कटिका को छोड़कर) फैल गए थे । सैकड़ों फुट लम्बे तथा हजारों टन वजनी ये जीवधारी अपने समय के इतिहास प्रसिद्ध प्राणी थे । इनमें सबसे अधिक विकसित "सोरो निथोइडेस डाइनोसोर्स" थे जिन्हें बर्ड लाइक रेप्टाइल्स (महागरुड़) कहा जाता था । इनका मस्तिष्क विकसित, लम्बा तथा चिड़ियों जैसे चोंच-पंख आदि विकसित थे । सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक एड्रियन जे. डेस्माण्ड के अनुसार ये जन्तु अन्य डाइनोसोर्स से भिन्न एवं अधिक बुद्धिमान थे । इनके पास अपनी सुरक्षा के लिए चिड़ियों जैसी चोंच भी थी । फिर भी नष्ट होने से ये बच नहीं पाये । कुछ इस प्रकार की आपाती घटनाएँ घटित हुईं कि डाइनोसोर्स की छोटी बड़ी सभी स्थलीय एवं समुद्री जातियाँ हर प्रकार की जलवायु में रहने वाली जातियाँ विलुप्त हो गईं । किसी भी जीव के आश्चर्यजनित रूप से इस तरह विलुप्त होने की विश्व में यह आश्चर्यजनक घटना है ।

डाइनोसोर्स के बारे में प्रारम्भिक मान्यताएँ थीं कि ये जीव दानवाकार भारी भरकम शरीर वाले मन्द बुद्धि कोल्ड ब्लेडेड, ओवर इवाल्वड (अति विकसित) तथा अपने लिए स्वयं भारभूत थे । शरीर के अनुपात में मस्तिष्क छोटा होने के कारण अपनी रक्षा करने में ये प्राणी असफल रहे । आठ टन वजन वाला डाइनोसोर्स अपनी दो टाँगों पर चलता था जबकि ५० टन वजनी 'ब्रोन्टोसोरस' जमीन से सटकर चलता था । अतः यह स्वीकारा जाने लगा है कि डाइनोसोर्स गर्म रक्त वाले प्राणी होने चाहिए । इनमें से अधिकांश बहुत ही बुद्धिमान एवं उच्च विकसित कोटि के प्राणी थे ।

डाइनोसोर्स भारी भरकम काया होने के कारण विकास की चरम सीमा को प्राप्त कर अचानक गायब हो गए । वातावरण में एकाएक परिवर्तन तथा पर्वतों के सिमटने के कारण ये जीव स्वयं को परिवर्तन के अनुकूल ढाल नहीं पाये । वस्तुतः अस्तित्व का मूल-मन्त्र शारीरिक विकास नहीं, बड़ा शक्तिशाली होना नहीं, तेजस्वी होना है । शरीर विशाल होते हुए भी अन्दर परिस्थितियों से मोर्चा लेने की क्षमता न हो तो वह सामर्थ्य किस काम की । पुरुषार्थ किया जाय, पर साहस वर्धन, तेजस् वृद्धि की दृष्टि से, न कि शरीर-बल बढ़ाने के लिए ।

कौतुकमय संसार के कलाकार की खोज

जहाँ तक सामान्य जगत की बात है उसे पदार्थों की रचना, पदार्थों का खेल कहा जा सकता है पर वहाँ इस संसार में अनेक ऐसे विलक्षण आश्चर्य और अलौकिक कौतुक भी दिखाई देते हैं जो पदार्थ के रासायनिक और भौतिक गुणों से भिन्न क्रिया कर रहे प्रतीत होते हैं वे इस बात के प्रमाण होते हैं कि संसार में कोई एक विचारशील सार्वभौमिक कलाकार सत्ता काम कर रही है । मनुष्य और प्रकृति दोनों की सामर्थ्य से परे यही आश्चर्यजनक घटनाएँ उसके होने का प्रमाण देती हैं और उसके प्रति श्रद्धा रखने और उसकी ही शोध, साक्षात्कार करने की प्रेरणा देती हैं ।

मिशिगन (अमेरिका) में एक ऐसा व्यक्ति है जो मुँह से साँस खींचकर आँखों से निकाल सकता है इन सज्जन का नाम है एल्फ्रेड लागेवेन । इस तरह की अनुभूति उन्हें अपने आप तब हुई जब एक दिन उन्होंने मुँह में हवा भर गाल फुलाये तो उन्हें अनायास ही ऐसा लगा कि वह हवा आँखों से निकल रही है । आँखों के आगे हाथ लगाकर देखा तो हवा की स्पष्ट अनुभूति हुई । इस बात को वहाँ उपस्थित अन्य लोगों ने भी अनुभव किया ।

आँख का काम देखना है हवा छोड़ना नहीं, कान सुनने के लिए भगवान ने बनाये हैं खाना खाने के लिए नहीं । यदि कोई ऐसी अद्भुत बातों का प्रदर्शन कर सकता है तो उसे आश्चर्य और अपवाद ही कह सकते हैं । सच कहा जाय तो यह आश्चर्य और इस तरह अपवाद उत्पन्न करने की क्षमता मनुष्य में न होकर इसकी ईश्वरीय सत्ता में है जिसने आश्चर्यों का आश्चर्य इतना बड़ा संसार तैयार कर दिया ।

कुछ लोगों को लगा कि अल्फ्रेड किसी टेकनीक से हवा जैसी अनुभूति हाथों को करा देता होगा तो वह मोमबत्ती जलाकर ले आये और जब अल्फ्रेड ने मुँह को पूरी तरह साँस से भर कर बन्दकर लिया तब उसने नथुने भी बन्द करके मोमबत्ती आँखों के सामने ले जाई गई और कहा गया अब आप इसे आँख से फूँक मारकर बुझाइए । अल्फ्रेड ने सचमुच आँख से फूँक मारी और उस जलती मोमबत्ती को भी बुझा कर दिखा दिया । उसकी यह विलक्षणता इस बात की प्रमाण है कि मनुष्य शरीर भगवान की बनाई हुई रहस्यपूर्ण विशेषताओं का प्रतीक है, यदि आन्तरिक दृष्टि से खोज की जाय तो इस शरीर यन्त्र से सैकड़ों ऐसे कार्य किए जा सकते हैं । स्थूल दृष्टि से विलक्षण चमत्कार ही जान पड़ते हों ।

आँख के लेन्स इस तरह बनाये गए हैं कि जो वस्तु सामने जैसी हो वह वैसी ही दिखाई देती रहे । यह सब

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

प्राकृतिक होता तो एक दृढ़ नियम की भाँति आदि मानव से लेकर प्रलय के अन्तिम मरणासन्न व्यक्ति तक सबमें यही नियम काम करते रहना चाहिए था पर यहाँ तो बीच में ही उलट-फेर हो जाने से फिर वही बात प्रमाणित होती है कि इस संसार में जो कुछ हो रहा है वह सब ईश्वरीय बुद्धि कौशल का ही खेल है । उदाहरण के लिए पेरू में कैम्पा नामक एक ऐसी आदिवासी मनुष्यों की जाति रहती है जिनकी आँखों के लेन्स हमेशा उल्टे होते हैं । उसका परिणाम यह होता है कि यह लोग हर वस्तु को उल्टा ही देखते हैं । पुस्तकें पढ़ते समय वे उसे उल्टा रखते हैं तब उसके अक्षर उन्हें सीधे समझ में आते हैं ।

पेरू के इन केम्पाओं की भाँति हमने भी संसार को प्रकृति-प्रवाह के प्रतिकूल दृष्टिकोण अपनाकर देखने की क्षमता उत्पन्न की होती तो वह सूक्ष्म रहस्य भी हमारे सामने स्पष्ट हो गए होते जो स्थूल दृष्टि से समझ में नहीं आते पर जिनके अस्तित्व पर कोई सन्देह नहीं है । यह विषय और तत्व अध्यात्मिक हैं । परमात्मा, आत्मा लोक परलोक पुनर्जन्म आदि से सम्बन्धित हैं उन्हें समझने के लिए सामान्य सृष्टि क्रम से उल्टा ही दृष्टिकोण अपनाना पड़ता है ।

साधारणतया होता यह है कि मनुष्य की मृत्यु दिखाई नहीं देती । उस समय की अनुभूति केवल मरने वाले को ही होती है वह भी यह व्यक्त नहीं कर पाता कि वह नासमझी का जीवन जीने के कारण कितने दुःख, कितनी निराशा के साथ प्राणों का परित्याग करता है । इसलिए जीवन के इस सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण अध्याय के प्रति अन्य लोगों का भी दृष्टिकोण सामान्य सा नासमझी का ही रह जाता है ।

मृत्यु जीवन का अनिवार्य ही नहीं एक अति महत्त्वपूर्ण अध्याय है यह दो अवस्थाओं की सन्धि है । सन्धि का महत्त्व इसलिए अधिक होता है कि उस स्थिति में दो बिल्कुल उल्टी दिशाओं का एक ही स्थान पर ज्ञान होता है । संध्या का महत्त्व इसीलिए सर्वाधिक होता है क्योंकि उस बिन्दु पर प्रकाश और अन्धकार एकाकार होते हैं । सत्य और असत्य, परमात्मा और प्रकृति, जन्म और मृत्यु की परिस्थितियों का सबसे बढ़िया चिन्तन, ज्ञान और अनुभूति उसी समय हो सकती है । इसीलिए ध्यान और उपासना के लिए सन्ध्या काल सबसे उपयुक्त माना गया । मृत्यु भी एक ऐसी ही महत्त्वपूर्ण सन्ध्या है जिसमें जीवन के स्थूल और सूक्ष्म रहस्यों का ज्ञान होता है । इसलिए उसकी विशेष तैयारी के हमारे यहाँ पूर्व विधान बनाये गए हैं ।

हम उन पर ध्यान नहीं देते पर दूसरे जीवों के जीवन में उसका कितना महत्त्व है, इसे देखना हो तो किसी जलाशय के किनारे पहुँचकर "स्टेन्टर" नामक जीव को देखना चाहिए । वह मृत्यु के समय एक क्षण तूफान से पूर्व के वातावरण की भाँति अत्यन्त शान्त-सा प्रतीत होता है दूसरे ही क्षण एक भयंकर विस्फोट के साथ अपने प्राण निकाल देता है । उस विस्फोट को सुनते हुए भय लगता है मानो "स्टेन्टर" मृत्यु के समय भावी जीवन की कल्पना से भयभीत हो उठा हो । भले ही कुछ न हो तो भी यह घटना मनुष्य को इस महत्त्वपूर्ण स्थिति पर ध्यान देने और उसके लिए आवश्यक तैयारी करने को बाध्य अवश्य करती है ।

यह घटनाएँ व्यक्तियों से, जीव-जन्तुओं से सम्बन्धित कही जा सकती हैं पर उस सत्ता की क्रीड़ा-स्थली मनुष्य और मनुष्येत्तर जीवों के शरीर मात्र नहीं समस्त ब्रह्माण्ड ही उसका घर है । उसकी अद्भुत लीलाएँ भी सर्वत्र देखने को मिलती हैं । ऐसा ही एक आश्चर्य पिछले वर्ष बिहार रांची जिले में उद्घाटित हुआ । रांची से १३० मील दूर मराचट्टी थाने के अन्तर्गत एक जंगल में एक नाला बहता है उसी के पास एक महुए का वृक्ष है । वृक्ष निर्जीव वस्तु मानी जाती है पर इस महुआ वृक्ष की विलक्षणता ने तो यही सिद्ध कर दिया कि वृक्ष का शरीर भले ही निर्जीव और जड़ हो, जड़ तो मनुष्य का शरीर भी है पर जिस तरह व्यक्ति के कलेवर में एक सूक्ष्म चेतना, आत्मा काम कर रही होती है वृक्षों के मूल में भी वैसी ही चेतना काम करती है ।

इस वृक्ष के बारे में पिछले वर्ष सन् ७० के अगस्त मास में एक अफवाह फैली कि उसके नीचे पहुँचते ही जो भी पहुँचता है उसके हाथ वृक्ष की ओर खिंचने लगते हैं और थोड़ी ही देर में वह मूर्छित होकर गिर पड़ता है । इसके बाद उस व्यक्ति के पुराने से पुराने रोग अच्छे हो जाते हैं और वह अपने आपको बिल्कुल स्वस्थ और हल्का अनुभव करता है । एक विचित्रता यह भी है कि वहाँ से जो लोग किए हुए पापों के प्रति प्रायश्चित का भाव लेकर जाते और फिर कभी दुष्कर्म न करने का संकल्प कर लेते हैं । उनमें स्वास्थ्य नीरोगिता के लक्षण स्थायी हो जाते हैं पर जिन लोगों ने पीछे बुराइयाँ प्रारम्भ कर दीं उनके रोग फिर वापस आ गए ।

कहने में यह बातें अन्ध-विश्वास और मनगढ़न्त सी लगती हैं पर कोई सत्य, कोई अलौकिक आश्चर्य उसमें अवश्य है इसकी पुष्टि "नव-भारत टाइम्स" जैसे राष्ट्रीय ख्याति के अखबार ने की है । इस अखबार के सम्पादकों ने अपना निजी सम्वाददाता इस वृक्ष की परीक्षा लेने को भेजा था । सम्वाददाता ने वहाँ के अनुभव ३० नवम्बर के दैनिक नव-भारत टाइम्स में छपाये भी थे ।

महुआ वृक्ष के चमत्कार की घटना का वर्णन देते हुए लिखा है—अघहर ग्राम का एक किसान जागेश्वर महतो लकड़ियाँ लेकर घर लौट रहा था । थकावट के कारण उसने इस वृक्ष के समीप लकड़ियों का गट्ठर पटक दिया नाले में हाथ-पैर धोए और जैसे ही महुआ वृक्ष के नीचे आकर बैठा उसके हाथ अपने आप ऊपर की ओर खिंचने लगे थोड़ी ही देर में वह मूर्च्छित होकर गिर पड़ा । कुछ देर पीछे बेहोशी दूर हुई तो उसने अपने पेट के बहुत पुराने मर्ज में आराम

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और शरीर में ताजगी अनुभव की । उसने यह बात गाँव के अन्य लोगों को बताई । गाँव के न केवल हिन्दू, वरन् मुसलमान और ईसाई धर्मावलम्बियों ने भी जाकर परीक्षण किया और उन्होंने भी उस चमत्कार को आश्चर्यजनक रूप से सत्य पाया । कुछ दिन में वहाँ सैकड़ों लोगों की भीड़ बढ़ी तो वहाँ सरकार ने अव्यवस्था के कारण प्रतिबन्ध लगा दिया पर यह बात सम्वाददाता ने भी स्वीकार की है कि और सब बातें अन्ध-विश्वास मान ली जायें तो भी वृक्ष के नीचे बैठते ही अनायास ऊपर की ओर खिंचना फिर मूर्च्छित होकर गिर पड़ना और मूर्छा अपने आप दूर हो जाना इत्यादि प्रकट सत्य ऐसे हैं जिन्हें मात्र अन्ध-विश्वास नहीं कहा जा सकता उसके पीछे कोई दैवी सत्य अवश्य होना चाहिए ।

हमारे देश में अन्ध-विश्वास बहुत अधिक फैला है इसलिए उसके मध्य हुई सत्य बातें भी अन्ध-विश्वास कहकर शिक्षित लोगों द्वारा सृष्टि की आद्य शक्तियों और सूक्ष्म तत्वों की उपेक्षा की जाती रहती है । आत्मा, परमात्मा, परलोक और पुनर्जन्म जैसे अध्यात्मिक सत्यों और सिद्धान्तों को भुलाया जाना इस बात का प्रमाण है कि हम स्थूल जगत से आगे की बात या तो सोचना ही नहीं चाहते अथवा सोचने और किसी अन्तिम निष्कर्ष पर पहुँचने के लिए सामर्थ्य भी नहीं । प्रकृतिवादी इन पूर्वाग्रहों ने ही हमारी भौतिक वासनाओं को प्रखर किया है आज की अशान्ति आज के द्वन्द्व, आज के विग्रह और विभीषिकाएँ उसी का परिणाम हैं ऐसे भौतिकवादी दर्शन को ही मान्यता देना भी एक प्रकार का अन्ध-विश्वास ही है । यदि चाहें तो इस तरह की घटनाओं से अध्यात्मिक सत्यों की भी प्रेरणा ग्रहण कर सकते हैं ।

इंग्लैण्ड के विश्व विख्यात प्लीमथ बन्दरगाह पर बने प्रसिद्ध प्रकाश स्तम्भ एडिस्टोन के पीछे भी एक ऐसी ही विलक्षण घटना जुड़ी हुई है । योरोपियन भी जिसकी आश्चर्य के साथ चर्चा करते और यह मानते हैं कि ऐसी घटनाएँ किसी अतीन्द्रिय कारण का ही फल हो सकती हैं ।

यह प्रकाश स्तम्भ हेनरी विस्टनले नामक अंग्रेज शिल्पी ने बनाया था । इसे बनाने में उसने अपनी सारी आत्मा लगा दी थी । अपने निर्माण के प्रति उसका प्यार इसी बात से प्रकट होता है कि उसने इस प्रकाश स्तम्भ का एक छोटा मॉडल भी बनाया और उसे अपने घर में ड्राइंग रूम में सजाकर रखा ।

दिन बीतते गए एक बार की बात है कि समुद्र में भयंकर तूफान आया । तूफान ने न केवल इस बन्दरगाह को ध्वस्त कर दिया वरन् इस प्रकाश स्तम्भ को भी बर्बाद कर दिया । विस्टनले उस समय बन्दरगाह से २०० मील दूर अपने घर पर था । इधर समुद्र में तूफान आया और प्रकाश स्तम्भ गिरा उधर घर में रखा वह मॉडल भी अपने आप जमीन पर गिरकर चकनाचूर हो गया और ठीक इसी समय अपनी चारपाई पर लेटे विस्टनले ने कहा अब जब न यह कलाकृति रही और न वह तो मैं ही जीकर क्या करूँ ? इतना कहते-कहते उसने भी अपने प्राणों का परित्याग कर दिया । उस समय तो इन शब्दों का अर्थ वहाँ उपस्थित कोई भी व्यक्ति नहीं समझ पाया पर पीछे जब सब बातें प्रकाश में आईं तो लोग आश्चर्यचकित रह गए कि दो जड़ और एक चेतन तीन आत्माओं का एक साथ विसर्जन क्यों हुआ और २०० मील दूर बैठे मिस्त्री विस्टनले को इसका पूर्वाभास अपने आप कैसे हो गया ।

यह आश्चर्य संसार की व्यवस्था में किसी विचारशील सत्ता के स्पष्ट प्रमाण हैं । चाहें तो इनसे प्रेरित होकर भी सृष्टि के कलाकार की खोज में आरूढ़ हो सकते हैं ।

जो बुद्धि से परे है वह केवल 'अन्ध-विश्वास' ही नहीं

तूतन खमेन में एक वृद्ध फकीर ने बहुत दिन तक धार्मिक सेवा की । वह जहाँ भी जाता भगवान की उपासना, आस्तिकता, नेकनीयती, प्राणियों को न सताने, माँस आदि अभक्ष न खाने की शिक्षा दिया करता । सामाजिक जीवन में साधु को बड़ी प्रतिष्ठा प्राप्त थी । उनका सभी लोग हृदय से आदर करते और उनके निर्णयों को स्वीकार करते । मृत्यु के बाद उन्हें भावनापूर्ण एक कब्र में दफना दिया गया पर तब भी लोग उनके नाम पर न्याय और सत्कर्म की प्रेरणा ग्रहण करते रहते । विशेष अवसरों पर उसके लिए लोग उनकी कब्र के पास जाकर प्रार्थना भी किया करते ।

मानते हैं धार्मिकता के बीच अन्ध-विश्वास के लिए बहुत स्थान है । ऐसे भी लोग हैं, जो लोगों की श्रद्धाओं को दुहा करते और अपनी स्वार्थ पूर्ति किया करते हैं, ऐसी दुष्प्रवृतियाँ जहाँ भी पनप रही हों, उनका विरोध करना चाहिए, किन्तु हम यह मानने के लिए विवश नहीं कि ऐसी मान्यताएँ सब अन्ध-विश्वास ही होती हैं । अनेक ऐसी बातें हैं जिनको वैज्ञानिक प्रयोगों द्वारा सिद्ध नहीं किया जा सकता तो भी उनका अस्तित्व है, ध्वनि मौन दिखाई देती है, चुम्बक शक्ति को कितनी ही सूक्ष्मदर्शी (इलेक्ट्रॉनिक माइक्रोस्कोप) यन्त्रों द्वारा भी नहीं देखा जा सकता । हवा में घुली ईथर शब्द तरंगों को सेकण्डों में कहाँ से कहाँ पहुँचा देती हैं पर उसे किसने देखा है ? कुछ वस्तुएँ ऐसी हैं, जिन्हें अनुभव किया जा सकता, देखा नहीं । भूत, अदृश्य आत्माएँ देवता और परमात्मा का अस्तित्व भी इसी तरह एक स्वयं सिद्ध सिद्धान्त है, इनसे प्राणियों को अदृश्य और चमत्कारिक सहायताएँ भी मिलती हैं, इसलिए यदि कोई उन पर श्रद्धा रखता है, कोई उन्हें पूजता है तो उसे पाखण्ड नहीं कहना चाहिए । संसार में सब कुछ अन्ध-विश्वास ही नहीं प्रस्तुत घटना इसी सन्दर्भ में है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

सन् १९२२ ई. में डॉ. ब्रेस्टड ने होवर्ड कार्टर, आर्थर वीगल, लार्ड कारनवर्ग आदि सामन्तों को वह कब्र उखाड़ फेंकने के लिए उत्तेजित किया । पूरा दल जब दरगाह पहुँचा तो समाचार-पत्रों के प्रवक्ताओं ने उन्हें मना किया—सर ! इस कब्र पर हम लोगों के विश्वास सुरक्षित हैं, आप इसे न उजाड़ें होवर्ड कार्टर ने उन्हें धमका कर कहा—"यह विज्ञान का युग है, यहाँ भावनाएँ, विश्वास और आत्मा एवं परमात्मा कुछ नहीं चलते । हमें इसका कुछ डर नहीं है । सिपाहियों तोड़ डालो इस कब्र को ।" और आदेश के थोड़ी देर बाद ही सारी दरगाह ध्वस्त पड़ी थी ।

"यह विज्ञान का युग है । इसमें धर्म, विश्वास, ईश्वर, आत्मा आदि कुछ नहीं चलते ।" यह कहना सरल है, उसे सिद्ध करना सरल नहीं । सापेक्षवाद के सिद्धान्त (थ्योरी ऑफ रिलेटिविटी) का प्रतिपादन करते समय आइन्स्टीन जैसे महान् विज्ञानवेत्ता को भी यह मानना पड़ा था कि संसार में उच्च सत्ताएँ (सुपर पावर्स) भी काम करती हैं और उनका सोचना, करना, सहायता पहुँचाना या ध्वंस करना सब कुछ विधि-विधान के साथ चलता रहता है । वह शक्तियाँ समय से बँधी नहीं हैं, उनके लिए एक जन्म एक सेकण्ड की तरह है, इसलिए कर्मफल की बात हम समझ नहीं पाते अन्यथा हमारे लिए छोटे से छोटे दुर्भाव, त्रुटि और अपराध के लिए भी दण्ड निर्धारित है और हम उससे कभी बचकर नहीं निकल सकते । शक्ति प्रदर्शन कर सकते हैं । किसी का उत्पीड़न कर सकते हैं, उपहास कर सकते हैं, छल-कपट, धोखा, बेईमानी, चोरी, व्यभिचार कर सकते हैं पर इनके दुष्परिणाम भी उतनी ईमानदारी से भुगतने पड़ते हैं, न्याय की दृष्टि से ईश्वरीय शक्तियाँ किसी को क्षमा नहीं करतीं । पाप का दण्ड भुगतना ही पड़ता है ।

कब्र के साथ एक लकड़ी रखी थी, उसमें क्या कुछ कीटाणु हैं, इस वैज्ञानिक अनुसन्धान के लिए उसे गिलास में डालकर उबाला गया । पर अभी आग थोड़ी तेज ही हुई थी गिलास एक धमाके के साथ फट गया और वैज्ञानिक यन्त्र प्रयोगशाला (लेबोरेटरी) में टूट-फूटकर बिखर गया । नवम्बर १९२२ में एक सर्प कार्टर के घर में घुसा कार्टर तो किसी तरह बच गया पर उसकी प्यारी कनारी चिड़िया को सांप ने निगल लिया । डेढ़ माह बाद कारनवर्ग को एक मच्छर ने काटा और उससे ही उसे न्यूमोनिया हो गया और वह मर गया । मच्छर काटने का निशान ठीक वैसा ही था, जैसा सम्राट के चेहरे पर सांप के काटे का निशान था । उसका सौतेला भाई भी भरी युवावस्था में बिना किसी सर्दी बुखार के दो घण्टे में तड़फड़ा कर मर गया । डॉ. ब्रेस्टड तो कब्र खुदने के दूसरे सप्ताह ही स्वर्गलोक की यात्रा कर चुके थे । कार्टर अभी भी कहता रहा कि वह किसी अन्ध-विश्वास से नहीं डरता पर उसकी मृत्यु भी बड़ी असहाय अवस्था में किसी जोहड़ में फँसकर हुई ।

मनुष्य में एक बड़ी भारी कमजोरी है कि वह जिस वस्तु में अपना स्वार्थ जुड़ा देखता है उसे पाने के लिए कोई भी उचित, अनुचित रीति अपनाने में पाप-पुण्य का ध्यान नहीं करता है, पर यदि पारमार्थिक दृष्टि से देखा जाय तो संसार का सारा सौभाग्य या दुर्भाग्य, पुण्य और पाप की ही फलश्रुति है, अपने स्वार्थ को पीछे हटाकर जब हम दूसरों की, जरूरत-मन्दों की सेवा और आवश्यकता को प्राथमिकता देने लगते हैं तो उससे अपना आपा ही संतुष्ट नहीं होता, जिसे लाभ मिल रहा है, उसका भावात्मक आशीर्वाद भी मिलता है, लोग उस अदृश्य सहानुभूति को पहचानते नहीं पर वह है बड़ी समर्थ । पुण्यों की प्रतिक्रिया ही सौभाग्य बनकर मनुष्य को सुंख देती है । हम भारतीयों ने आदि काल से रसास्वादन किया है और परमार्थ को ही असली स्वार्थ का महत्त्व दिया है ।

इसी तरह जब अपनी तृष्णा, वासना, भोग और अहंकार की पूर्ति के लिए दूसरों की सुख-सुविधा का विचार न करके छीना-झपटी, शोषण, अपहरण, रिश्वत, चोरी-डकैती, कत्ल आदि करते हैं तो लोग स्थूल रूप से दण्ड से बच गए और लाभान्वित हुए दिखाई देते हैं, पर पाप-कर्म के साथ भावनाओं की वीभत्सता भी ऋण विद्युत की तरह समर्थ तत्व है, उसके झटके से मनुष्य बच नहीं सकता । कई बार कारण समझ में न आने पर भी दुर्भाग्य ग्रस्त लोग भगवान को कोसते देखे जाते हैं पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से वह पाप का ही परिणाम होता है, इसलिए सुख, सौभाग्य की कामना वाले अनेक लोग कभी भूलकर भी दूसरे का जी नहीं दुःखाते वह सदैव ऐसे नेक भलाई के काम करते हैं, जिससे दूसरों का आशीर्वाद और भावात्मक सहानुभूति मिले ।

जिन लोगों ने सन् १९१४ के प्रथम विश्व युद्ध का इतिहास पढ़ा है, उन्हें पता होगा वह कितना भयंकर युद्ध था, दो करोड़ व्यक्ति मारे गए थे, अरबों की सम्पत्ति नष्ट हुई थी सच पूछा जाय तो इस विश्व युद्ध की शुरुआत किसी अभिशाप के कारण हुई । वह घटना भी अपने आप में पूरा एक धार्मिक इतिहास है और यह बताता है कि संसार में सब कुछ अन्ध-विश्वास ही नहीं ऐसी शक्तियाँ भी हैं, जो अदृश्य होकर भी बड़ी समर्थ हैं, यह संयोग, कुयोग के रूप में परिलक्षित भी होती रहती हैं ।

आस्ट्रिया के युवराज आर्य ड्यूक फ्रांज फर्डिनेंड और उनकी पत्नी डचेस होहेन बुर्ग ने बोस्निया में एक आलीशान कार बनवाई । छः सवारियों के बैठने योग्य इस टूरिंग कार के निर्माण के लिए गरीब लोगों को उत्पीड़ित कर पैसा लिया गया । मजदूरों से दिन-रात काम कराकर बेगार में कार बनवाई गई । हजारों लोगों की आहों से अभिशापित लाल रंग की यह कार बहुत ही खूबसूरत बनी पर उस सौन्दर्य में क्या—दुर्देव छुपा था, वह सामन्तवादी आँखें परख न सकीं ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रकाश, विद्युत, ध्वनि, चुम्बक आदि शक्तियों का वैज्ञानिक अनुमान नहीं लगा पा रहे । परमाणु शक्ति ने तो इन महाशक्तियों को भी पीछे कर दिया पर अभी ऐसी शक्तियाँ भी हैं, जो जड़ परमाणु से करोड़ों गुना अधिक शक्तिशाली हैं, वह हैं मानवीय चेतना की शक्ति । वह है गुण, ज्ञान और भावनाओं की शक्ति । भावनाओं की प्रबलता पत्थर में भी आग लगा सकती है । जब किसी निरपराध को सताया या दंडित किया जाता है, जब किसी को छला, धोखा दिया जाता है, तब भावनाओं से निकली हुई आह में वह शक्ति होती है, जो शाप बनकर लगती और ध्वंस करके छोड़ती है, आज जो लोग सामाजिक जीवन में ऐसी विषमताएँ पैदा कर रहे हैं, वह भी दुःखी, पीड़ित और दलित आत्माओं के अभिशाप से इसी प्रकार बच नहीं सकते ।

२८ जून, १९१४ को कार एक शाही रंग-ढंग में अपने मालिकों को लेकर बोस्निया के गवर्नर के महल से निकली । युवराज फर्डिनेड अपनी धर्मपत्नी के साथ ऐंठ और अभिमान के साथ उसमें बैठे थे । सेराजेवो नगर अभी काफी दूर था कि बीच में ही हवा की तरह सनसनाता हुआ, एक बम कार की बगल में आकर फटा । कार के साथ चल रहे चारों घुड़सवार अंग-रक्षक घायल हो गए । सिपाही आगे बढ़ने की स्थिति में नहीं थे पर अभिमानी युवराज ने उनकी मरहम पट्टी कराकर फिर आगे बढ़ने को कहा । सेराजेवो आ गया । कार ड्राइवर शहर की एक-एक गली से परिचित था, किन्तु न जाने कैसे उसका हाथ अपने आप एक गलत गली में घूम गया । उधर एक मकान से एक युवक हाथ में पिस्तौल लेकर लपका और कार का शीशा तोड़कर हाथ भीतर घुसेड़ कर गोलियाँ दागने लगा जब तक अंग-रक्षक उसे सँभालें शाही दम्पत्ति के प्राण निकल चुके थे ।

इस घटना ने ही आस्ट्रिया के महलों में युद्ध की ज्वाला भड़काई । युवक कोई दक्षिण पन्थी था, इसलिए दक्षिण पन्थी गुट पर सम्राट ने हमला बोल दिया । तब यह कार सेराजेवो के गवर्नर के महल में थी । इसी महल में ५वीं आस्ट्रियन सेना के सेनापति जनरल पोत्योरेक ने युद्ध का संचालन किया । सेनापति ने वह कार अपने कब्जे में ली, ठीक उसके २१वें दिन वह युद्ध हार गया, उसे पदच्युत कर वापस बुला लिया गया । इस सेनापति की मृत्यु वियना के एक भिखारी गृह में हुई । उसके बाद कार का स्वामित्व पाया पोत्योरेक के ही एक कप्तान ने, किन्तु कार में चढ़ते अभी नौ दिन हुए थे कि एक दिन उसने दुर्घटना कर दी । दो किसानों को कुचल कर कार एक पुलिया से जा टकराई और उसमें से कप्तान की जिन्दा नहीं मृत लाश निकाली गई । कार को गवर्नर के पास भेज दिया गया इस बीच युद्ध समाप्त हो गया और यूगोस्लाविया का गवर्नर इस कार का मालिक बन गया । कार हाथ में आने के एक माह के भीतर उसने पाँच दुर्घटनाएँ कीं । अन्तिम दुर्घटना ऐसी जबर्दस्त थी कि उसमें गवर्नर का दाहिना हाथ ही जाता रहा । गवर्नर ने उस बदनाम कार को नष्ट-भ्रष्ट कर डालने की आज्ञा दे दी पर इसी बीच डॉ. सरकिस नामक एक डॉक्टर ने उसे कुल एक हजार रुपये में खरीद ली । कार के साथ दुर्भाग्य की अफवाह चारों ओर फैल चुकी थी, इसलिए उसके लिए कोई ड्राइवर नहीं मिला । अन्त में सरकिस स्वयं ही उसे चलाने लगा और मुश्किल से तीन माह उसका प्रयोग कर सका था कि एक रात सड़क पर चलते समय कार न जाने कैसे लुढ़क गई । आज तक डॉ. सरकिस लोगों को ताना मारा करता था, देखो कार कैसी अच्छी चल रही है, अब कहाँ गया उसका भूत, पर कल जब उसे कार से औंधा मरा बाहर निकाला गया तो उसकी लाश बिना प्राणों के पायी गई ।

इस बार कार उल्टी तो थी खराब नहीं हुई थी, इसलिए एक सोने-चाँदी के व्यापारी ने उसे खरीद लिया और खरीदने के कुछ दिन बाद ही आत्महत्या करके मर गया । इसके बाद उसने एक और डॉक्टर का स्वामित्व ग्रहण किया । डॉक्टर ने उसे डरते-डरते खरीदा था, एक महीने में उसकी सारी कमाई पट्ट पड़ गई तो बेचारे ने डरकर आधी कीमत पर स्विटजरलैण्ड के एक रेस ड्राइवर को बेच दिया । उन्हीं दिनों डेलामाइट में एक कार दौड़ प्रतियोगिता आयोजित की गई थी । इस कार ने उसमें हिस्सा लिया । दुर्भाग्य से यही कार ऐसी थी, जो एक दीवार से टकरा गई और अपने ड्राइवर को स्वर्गवासी बनाकर फिर अकेली रह गई ।

इस बार वह फिर सेरेजेवो लौट आयी । एक धनी किसान ने उसे खरीद लिया । अब तक वह रंग बदल चुकी थी, इसलिए शायद उसने पहचानने में भूल की । एक दिन किसी यात्रा में कार बीच रास्ते में खराब हो गई और ऐसी जाम हुई कि अनेक प्रयत्नों के बाद वह स्टार्ट नहीं हुई । आखिर हारकर दो बैलगाड़ियाँ किराये पर की गईं, जो रस्सों से खींचकर कार घर तक पहुँचा दें । मोटे-मोटे रस्सों से कार बैलगाड़ी से बाँध दी गई पर अभी गाड़ी १० गज ही चल पायी थी कि इन्जन अपने आप स्टार्ट हो गया । कार बेतहासा भागी । गाड़ी को कुचल कर वह भी औंधी गिरी और अपने मालिक किसान को भी खा गई ।

इस बार मोटर चकनाचूर हो गई थी पर दुर्भाग्य अभी भी उसके साथ बँधा रहा । इस बार उसे टाइवर हर्शफील्ड ने खरीद लिया और उसकी नये सिरे से मरम्मत कराकर स्वयं उसे जोतने लगा । कार ऐसी चलने लगी कि लोग भूल गए उसके साथ कोई दुर्भाग्य भी जुड़ा है । अदृश्य विधान होने के कारण लोग शीघ्र ही ऐसी बातें भूल जाते हैं पर सूक्ष्म शक्तियाँ भी तो अपने अस्तित्व के लिए विवश हैं । एक दिन हर्शफील्ड अपने ६ मित्रों के साथ एक भोज के लिए रवाना हुआ । सड़क पर कार तेजी से दौड़ी जा रही थी । एक मोड़ से गुजरते समय कार सामने से आती हुई दूसरी कार से टकरा गई । भिड़न्त बराबर की थी पर सामने वाली कार को कोई नुकसान नहीं पहुँचा जबकि हर्शफील्ड अपने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चार साथियों के साथ अपनी जान से हाथ धो बैठा केवल एक व्यक्ति ही उसमें जीवित बचा था ।

अब सरकार चेती । उसने कार को अपने व्यय से ठीक कराकर आस्ट्रिया के एक मुर्दा अजायबघर को दे दिया गया । अब तक द्वितीय विश्व-युद्ध भी छिड़ चुका था । जिन दिनों कार अजायबघर पहुँची, युद्ध के अन्तिम दिन थे । एक दिन दुर्भाग्य से उसी अजायबघर में कई बम गोले एक साथ फूटे जिसमें वह अजायबघर पूरी तरह ध्वस्त हो गया और वह ऐतिहासिक कार भी उसी के साथ गर्द में लीन हो गई । उसके साथ ही द्वितीय विश्व-युद्ध भी समाप्त हो गया ।

इस घटना ने सारे यूरोप में एक बार तहलका मचा दिया कि आत्मा में बड़ी जबर्दस्त शक्ति है, वह अभिशाप के रूप में किसी पर लग जाय तो कार की तरह ही सैकड़ों का विध्वंस करके ही छोड़ती है ! उससे अनेक लोगों ने बुराई, पशुओं की हिंसा और क्रूरता आदि बुराइयाँ छोड़ी थीं और हजारों लोगों ने आत्म-परायणता, सेवा-भाव और सद्गुण अपनाना प्रारम्भ कर दिया था ।

'होप' नामक हीरा भी इसी तरह यूरोप में अपने अमंगल के लिए बहुत विख्यात हो चुका है । वह जिसके पास भी रहा उसे चैन से नहीं रहने दिया । यह हीरा ब्रह्मा के किसी हिन्दू मन्दिर में भगवान की मूर्ति में आँख में जड़ा हुआ था । ३०० वर्ष पहले की बात है, बेपटिस्ट टवर्नियर नामक अंग्रेज उसे चुरा ले गया । उसने उसे एक जौहरी टामस होप को बेच दिया । उसी ने हीरे का नाम होप रखा । हीरे के पहुँचते ही उसका कारोबार बैठ गया । उसने घबड़ाकर उसे कम दामों में बेच दिया । बाद में वही हीरा वाशिंगटन (अमेरिका) की एक नवयुवती ईवलिन मैकलीन रेनल्ड्स ने खरीदा और उसके कुछ दिन बाद ही उसने निद्रा की गोलियाँ अधिक मात्रा में लेकर आत्महत्या कर ली ।

इसके बाद हीरा एण्टायनट के पास पहुँचा । उसके पहुँचते ही उसके जीवन में झगड़ों की बाढ़ आ गई । अभी वह हीरे को बेचने की ताक में ही था, उसका सिर काट लिया गया । अब वह हीरा प्रिन्सेस दी लम्बल ने पहना और उसकी भी हत्या कर दी गई । उसके पास से फास नामक एक जौहरी ने यह हीरा चुरा लिया उसने कुल सात दिन में आत्महत्या कर ली । तब फॉलीज वर्गर नामक एक ड्रामा करने वाली लड़की ने इसे खरीद लिया । उसने एक दिन ड्रामा करते समय वह हीरा पहना । रंगमंच (स्टेज) पर चढ़ते ही किसी ने उसे गोली मार दी । स्टाक मार्केट के प्रमुख उद्योगपति लार्ड फ्रांसिस होप ने यह हीरा लेकर अपनी सारी सम्पत्ति गँवा दी । तब वह पहुँचा अरब के सुल्तान अब्दुल हमीद के पास । उसे गद्दी से उतार दिया गया । तब इसे श्रीमती वाल्श मैकलीन ने खरीदा और उसी दिन उनका प्रिय पुत्र मोटर से कुचल कर मारा गया । इस तरह यह हीरा भी सारे यूरोप में अपने अमगंल के लिए सर्वत्र बदनाम हुआ ।

उपर्युक्त घटनाएँ यह बताती हैं कि मनुष्य अपनी दुष्टता के परिणाम और जीवनों में ही नहीं भुगतता वरन् वह हाथों हाथ भी दण्ड पाता है । चोरी, छल-कपट, बेईमानी, बे-इन्साफी के परिणाम समाज के लिए दुःखद होते हैं, व्यक्ति के लिए पतनकारी । इसलिए दोनों की ही भलाई इस बात पर टिकी है कि हम भावनाओं की शक्ति को मानें और इस संसार में बुरा कार्य करने का साहस न करें, अन्यथा किसी भी क्षण हम ईश्वरीय शक्तियों के कोप-भाजन बन सकते हैं ।

परलोक को भूल कर कहीं आपको भी पछताना न पड़े ?

"प्रजा के कार्यों में संसार ने मेरा लोहा माना । मेरा नाम सुनकर लोग दहल जाते थे । मुझे यह भी मालूम है कि मेरा नाम सदा-सर्वदा के इतिहास में जुड़ गया है, किन्तु मेरे दुर्भाग्य का किसी को पता नहीं । मेरे पास जो शक्ति और सामर्थ्य थी उसका कैसा अच्छा उपयोग कर सकता था, किन्तु मैंने जीवन के स्थायी महत्त्व को जानने का कभी प्रयत्न नहीं किया । मेरी मानसिक स्थिति बड़ी कष्टदायक है और मैं समझ नहीं पाता कि जीवित अवस्था की हुई भूलों से छुटकारा किसी प्रकार मिलेगा । मेरे जीवन की तख्ती (स्लेट) में जो धब्बे पड़े हुए हैं मुझे परलोक में भी कुछ है, कुछ नहीं, मैं सम्पूर्ण रूप से स्थित हूँ इसका पता पहले चल गया होता तो जीवन को बड़े परिश्रम और ईमानदारी से बिताकर सन्तोष की नींद ले रहा होता ।"

आप कल्पना भी नहीं कर सकते होंगे कि यह शब्द विश्व-विजयी नेपोलियन बोनापार्ट के हैं और उसकी मृत्यु के बाद के हैं । मृत्यु के बाद जीवन का अस्तित्व भी है ? ऐसी आशंका उन लोगों को भी है जिनकी बौद्धिक क्षमताएँ रेत में से तेल निकाल लाने जैसे चमत्कार दिखा रही हैं, किन्तु इतना विशाल ब्रह्माण्ड और गणित के सिद्धान्त पर चल रहे अरब-खरब नक्षत्र, सारे जीवन की विविध प्रकार की हलचलों, प्राणियों की चेतना के समान स्तर, जन्म-मृत्यु, स्वप्न सुषुप्ति जाग्रत अवस्थाओं को देखकर भी आज का भौतिकवादी मनुष्य यह नहीं समझ पा रहा है कि मनुष्य देह में हमारा आविर्भाव किसलिए हुआ है और क्या हम इसका बहुत अच्छा उपयोग जीवन को दिव्य शक्तियों से ओत-प्रोत बनाने, पारलौकिक सुख प्राप्त करने में कर सकते हैं ? मनुष्य की सबसे बड़ी भूल है । उसे न सुधार पाने के फलस्वरूप ही वह इस जीवन की सीढ़ी को पार करके भी अशान्ति और असन्तोष ही अनुभव करता है । ऐसी ही अशान्ति एक दिन नेपोलियन ने अनुभव की ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आप विश्वास नहीं करेंगे और कहेंगे कि यह कथन नेपोलियन का कैसे हो सकता है । उसकी प्रामाणिकता क्या है ? यदि आप मि. नार्थ क्लिफ नामक इटैलियन परलोकवादी से भेंट कर सके होते तो यह प्रमाण जुटाने की आवश्यकता न पड़ती । प्रेतात्माओं को बुलाकर उनसे अनेक गुप्त से गुप्त जानकारियाँ प्राप्त कर लेने वाले भारतीय परलोकवादी डॉ. बी. डी. ऋषि (अहमद नगर) की तरह क्लिफ भी मृतात्माओं को एक विशेष ढंग से बुलाते थे उनमें से कई घटनाएँ ऐसी प्रकाश में आईं जिन्हें इटली के कुछ बड़े लोग ही जानते थे बाद में उनके उन सत्यों को स्वीकार भी किया था और उसके फलस्वरूप इटली की राजनीति में व्यापक परिवर्तन हुए थे । उन्होंने ही नैपोलियन बोनापार्ट की आत्मा का आव्हान किया था । यह शब्द उपर्युक्त समय के ही हैं ।

जीव-चेतना का गम्भीर अध्ययन करने वाले भारतीय मनीषी इसीलिए बार-बार यही चेतावनी देते रहे कि मनुष्य को यह देह और संयोग बड़े पुण्य से मिला है उसका उपयोग न करने वाला चाहे कितना ही शिक्षित क्यों न हो अज्ञान ही है और जो इस जीवन के रहस्य को मन में भली-भाँति बैठा लेता है वह अशिक्षित होकर भी सौभाग्यवान् ही है क्योंकि वह शाश्वत जीवन के लक्ष्य और ईश्वरीय आनन्द को प्राप्त कर लेता है ।

योगवाशिष्ठ में शास्त्रकार ने स्पष्ट चेतावनी देते हुए लिखा है—

मरणादिमयीमूर्च्छा प्रत्येकेनानुभूयते ।
यैषां तां विद्धि सुमते महाप्रलययामिनीम् ॥
—३/४०/३१

तदन्ते तनुते सर्ग वर्ग एव पृथक् पृथक् ।
सहजस्वप्नसंकल्पान्संभ्रमत्वलनृत्यवत् ॥
—३/४०/३२

महाप्रलयराभ्यन्ते चिरादात्ममनोवपुः ।
यथेदं तनुते तद्वत्प्रत्येक मृत्यनन्तरम् ॥
—३/४०/३३

अन्ये स्वमिव ये जीवास्तेषां मरणजन्मसु ।
स्मृतिः कारणतामेति मोक्षाभाव स्वशादिहं ॥
—३/४०/३७

अर्थात् जिस तरह महाप्रलय की रात्रि में सब कुछ सुषुप्त-सा लगता है उसी तरह मृत्यु के बाद जीव मूर्च्छा की स्थिति में चला जाता है और स्वप्न एवं संकल्प की तरह अपनी एक विलक्षण पारलौकिक सृष्टि रचता है । महाकाल की रात्रि समाप्त होने पर जिस प्रकार परमात्मा नई सृष्टि प्रारम्भ करता है उसी प्रकार जीव भी उस स्थिति को पार करने के बाद ही नया जीवन धारण करता है जब तक मोक्ष प्राप्त नहीं हो जाता अपनी स्मृति के कारण जीव जन्म और मरण का अनुभव करता रहता है ।

योगवाशिष्ठ के इसी अध्याय में अगले श्लोकों में महर्षि वशिष्ठ ने यह भी बताया है कि पुण्यात्माएँ मोक्ष प्राप्त न होने पर भी परलोक में उस अवस्था को प्राप्त होती हैं जिनमें उन्हें सुख और प्रसन्नता की अनुभूति होती है, किन्तु हिंसा, जड़ता, पाप, कुटिलता और दुष्प्रवृत्तियों से घिरे लोग उस स्थिति में बड़ी बेचैनी अनुभव करते हैं । उस समय तो उन्हें यह संकल्प उठता है कि अब नये जन्म में वे इस प्रकार जीवन बितायेंगे कि आत्मा सद्गति अनुभव करे पर शरीर गत चेतना में आते ही वे उसे भूल जाते हैं और वासनाओं में पड़े रहकर फिर-फिर कर दुर्गति का कष्ट भोगते रहते हैं ।

जीव-चेतना के वैज्ञानिकों को भी इस तरह की आशंका अवश्य है यद्यपि वे उसे स्पष्ट स्वीकार नहीं करते हैं । अपने शरीर की सूक्ष्मतम स्थिति में विज्ञान के माध्यम से ही चलें तो पता चलेगा कि सूक्ष्म से सूक्ष्म अणु में भी [illegible] होकर चेतना एक प्रकार का विस्तार या अवस्था है उसका कभी अन्त नहीं होता । हमारे शरीर का प्रत्येक भाग कोशिकाओं (सेल्स) से बना है । यह एक छोटा-सा परमाणु है जिसका आकार इतना छोटा है कि एक इन्च में ६००० कोशिकाएँ बैठ जायेंगी । यह कोशिका भी अपने आप में एक ईश्वरीय चमत्कार है । प्रत्येक कोशिका के चारों ओर अत्यन्त पतली झिल्ली का खोल होता है उसके भीतर पतला चिकना पदार्थ भरा रहता है जिसे प्रोटोप्लाज्म कहते हैं । इस प्रोटोप्लाज्म में भी हलचल है । यह हवा खींचता है और कार्बन (दूषित वायु) बाहर निकालता है । तात्पर्य यह है कि हम अकेले साँस नहीं लेते हमारे शरीर का प्रत्येक अवयव साँस लेता है तब तक ही हम जीवित हैं । प्रोटोप्लाज्म के भीतर एक केन्द्र पिण्ड (न्यूक्लियस) होता है उसे वैज्ञानिक जीवन का आधार मानते हैं वही नई कोशिकाएँ बनाने की विचित्र क्षमता रखता है जब न्यूक्लियस की शक्ति निर्बल पड़ने लगती है तब प्रोटोप्लाज्म भी सूखने लगता है । एक दिन केवल सूखा पदार्थ रह जाता है मूल चेतना कहीं और गायब हो जाती है । डायटम जो दुनिया का सबसे छोटा जीव है जिसे पौधों की इकाई भी कह सकते हैं और चेतन जीव की भी अभी वैज्ञानिकों में इस सम्बन्ध में मतैक्य नहीं है पर यह निश्चित है कि उसके प्रोटोप्लाज्म में से भी चेतना का अन्त हो जाता है उस स्थिति में चेतन की स्थिति और क्रियाशीलता का स्वरूप क्या होगा इसे वैज्ञानिक नहीं केवल तत्वदर्शी ऋषि ही समझ सके हैं फिर गुणों की धाराएँ गुणों में बरतती हैं और उसी अनुरूप दुःख या सुख का अनुभव करती हैं । अपनी पाप-वासना के कारण अधोगामी योनियाँ अधोलोकों का सन्ताप करती हों और ऊर्ध्वलोकों वाली पुण्य आत्माएँ सुख और शान्ति तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं मानना चाहिए ।

परलोक न कोई स्थान है न दृश्य पदार्थ, वह तो चेतना की विभिन्न अवस्थाएँ हैं जिसकी अनुभूति की जा सकती है । स्वरूप का विश्लेषण नहीं किया जा सकता । उसकी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रामाणिकता उन दृष्टान्तों से जो प्रेत आत्माओं या मृत आत्माओं के आव्हान से सम्बन्ध रखते हैं उसी से साबित की जा सकती है । सामान्य स्तर के लोगों के साथ घटित ऐसी घटनाओं को अन्ध-विश्वास कहा जा सकता है ऐसे बनावटी अध्यात्म की तो निन्दा की जानी चाहिए, किन्तु अध्यात्म एक विज्ञान भी है वह बुद्धि और जीवन का प्रधान लक्ष्य है उसकी अपेक्षा भी नहीं की जा सकती । इसलिए वह ऐतिहासिक और असामान्य घटनाएँ दी जा रही हैं जिनकी सत्यता को अन्ध श्रद्धा न कहा जा सकेगा ।

द्वितीय महायुद्ध में "मोन्स" की लड़ाई का दस्तावेज बड़ा आश्चर्यजनक और वस्तुस्थिति को प्रमाणित करने वाला है । इस युद्ध में ब्रिटिश सेना बुरी तरह मारी-काटी गई । कुल ५०० सैनिक शेष रहे थे । जर्मन सेनाएँ उन्हें भी काट डालने की तैयारी में थी । उनकी संख्या उस समय दस हजार थी । ब्रिटिश सैनिकों में से एक सिपाही ने कभी सेंट जार्ज की तस्वीर एक होटल में देखी थी । यह तस्वीर एक प्लेट में कढ़ी थी और उसके नीचे लिखा था, "सेंट जार्ज इंग्लैण्ड की सहायता करने को उपस्थित हों" वह कभी इंग्लैण्ड के प्रख्यात सेनापति थे और अपने कई हजार सैनिकों के साथ युद्ध में मारे गए थे । उनकी याद आते ही सैनिकों ने अपनी सम्पूर्ण भावना और आत्म-शक्ति से सेंट जार्ज का स्मरण किया और दूसरे क्षण स्थिति कुछ और ही थी । बिजली-सी कौंधी और ५०० सैनिकों के पीछे कई हजार श्वेत वस्त्रधारी सैनिकों की-सी आभा दिखाई देने लगी । दूसरे ही क्षण दस हजार जर्मनी सेना मैदान में मरी पड़ी थी । रहस्य तो यह था कि किसी भी सैनिक के शरीर में किसी भी अस्त्र का कोई चोट या घाव तक नहीं था । उस घटना ने इंग्लैण्ड में एक बार तहलका मचा दिया कि सचमुच मृत्यु के उपरान्त आत्मा का अस्तित्व नष्ट नहीं होता वरन् रूपान्तर होता है और यह आत्माएँ अदृश्य होते हुए भी स्थूल सहायताएँ पहुँचा सकती हैं ।

बम्बई में एक पारसी श्री पोस्टन जी. डी. महालक्ष्मी वाला ने अपनी पुस्तक "परलोकवाद में साहसपूर्ण घटनाएँ" (एडवेन्चर्स ऑफ स्प्रिचुअलिज्म) में एक अमेरिकी डॉ. पी. बल्स का वर्णन किया है । पी. बल्स ने परलोक विद्या की बड़ी खोज की थी । श्री पेस्टनजी की उपस्थिति में ३ सितम्बर १९२५ को एक प्रयोग किया गया । एक कोरा कागज रखकर डॉ. पी. बल्स की आत्मा का आव्हान किया गया । श्री पोस्टनजी उनसे लॉस एंजिल्स (अमेरिका) में मिल चुके थे । जब उनकी आत्मा का आव्हान किया गया तो मृतात्मा ने उस कागज पर हस्ताक्षर किए जब उसे पलटकर देखा गया तो सचमुच डॉ. पी. बल्स के हस्ताक्षर थे । उन्हें उनके पिछले हस्ताक्षरों से मिलाया गया तो उनमें जरा भी अन्तर नहीं था ।

"स्प्रिचुअल हीलिंग" नामक पुस्तक में लेडबीटर ने भी यह स्वीकार किया है कि मृत्यु के उपरान्त जीव विचारों के लोक में जीवित रहता है । भौतिक जगत में हम पदार्थ को बहुत महत्त्व देते हैं, किन्तु यह तो उस जीवन की प्रतिच्छाया मात्र है ।

परलोक को प्रमाणित करने में अध्यात्मिक फोटोग्राफी अब तक महत्त्वपूर्ण विज्ञान बन रही है । मूर्धन्यविज्ञानी डॉ. विलियम होप और श्रीमती बम्सरन तथा लन्दन की श्रीमती डीन ने प्रसिद्ध वैज्ञानिक विलियम क्रुक्स होप और कूसकल का वर्णन करते हुए लिखा है । उन्होंने मृतात्माओं के कुछ ऐसे दुर्लभ चित्र छापे जिन्हें कुछ ही लोगों ने देखा था और बाद में उन्होंने पहचाना भी कि उस समय मृतात्मा की ठीक वैसी ही स्थिति थी जैसी फोटो में आयी । ऐसे प्रयोग भारतवर्ष में बहुत होते हैं, उनमें मृतात्माओं से बातचीत भी की जाती है । उस गहराई में न जायें तो भी हमें यह मानना पड़ेगा कि इसी देह से मनुष्य-जीवन की इतिश्री नहीं हो जाती । वरन् अपने अच्छे-बुरे कर्मों के अनुसार जीव को दूसरी अवस्थाओं में भी अनिवार्य रूप से जाना ही पड़ता है । मनुष्य-जीवन उस गहन सत्य की अनुभूति और आत्मकल्याण के लिए परमात्मा के वरदान स्वरूप मिला है जो उसका उपयोग नहीं कर पाते वह नेपोलियन के समान ऐश्वर्यशाली होते हुए भी पछताते हुए जाते हैं ।

ईश्वर की दिव्य-सत्ता जो श्रद्धा करने योग्य है

विद्युत एक अदृश्य तत्व है, किन्तु अन्धकार दूर करने के लिए एक विशेष प्रक्रिया अपनानी पड़ती है और उस अदृश्य विद्युत का प्रभाव दृश्य प्रकाश के रूप में परिणत हो जाता है । चुम्बकत्व यों एक ऐसी शक्ति है जिसे देखा नहीं जा सकता, किन्तु उसे ही एक लोहे की सुई में पिरो दिया जाता है तो वही दिशा बोध कराने वाली कुतुबनुमा बन जाती है । परमात्मा एक अदृश्य तत्व है, किन्तु अन्तःकरण की श्रद्धा और मन का विश्वास एकाकार होते हैं तो उस सत्ता के प्रभाव पुण्यफल देखते ही बनते हैं ।

कौरवों की सभा में द्रोपदी का चीरहरण किया जा रहा था, वह अबला असहाय खड़ी थी, मनुष्य की नहीं ईश्वर की सहायता प्राप्त हुई और उसकी लाज बच गई । दमयन्ती बीहड़ वन में अकेली थी, व्याध उसका सतीत्व नष्ट करने पर तुला था । सहायक कोई नहीं । उसकी नेत्र ज्योति में से भगवान प्रकट हुए और व्याध जलकर भस्म हो गया । दमयन्ती पर कोई आच नहीं आयी । प्रहलाद के लिए उसका पिता ही जान का ग्राहक बना बैठा था, बच कर कहाँ जाय ? खम्भे में से नृसिंह भगवान प्रकट हुए और प्रहलाद की रक्षा हुई । घर से निकाले हुए पाण्डवों की सहायता करने, उनके घोड़े जोतने भगवान स्वयं आये । नरसी महता की सम्मान रक्षा भगवान ने अपनी सम्मान रक्षा की तरह ही मानी ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ग्राह के मुख से गज के बन्धन छुड़ाने के लिए प्रभु नंगे पैरों दौड़े आये थे ।

मीरा को विष का प्याला भेजा गया और साँपों का पिटारा, पर वह मरी नहीं । न जाने कौन उनके हलाहल को चूस गया और मीरा जीवित बची रही । गाँधी को अनेक सहयोगी मिले और वे दुर्दान्त शक्ति से निहत्थे लड़ कर जीते । भगीरथ की तपस्या से गंगा द्रवित हुई और धरती पर बहने के लिए तैयार हो गईं । शिवजी सहयोग देने के लिए आये और गंगा को जटाओं में धारण किया, भगीरथ की साध पूरी हुई । दुर्वाशा के शाप से संत्रस्त राजा अम्बरीष की सहायता करने भगवान का चक्र सुदर्शन स्वयं दौड़ा आया था । समुद्र से टिटहरी के अण्डे वापस दिलाने में सहायता करने के लिए भगवान अगस्त्य मुनि बनकर आये थे । नल और नील ने समुद्र पर पुल बाँधने का असम्भव दीखने वाला काम सम्भव कर दिया था । हनुमान को समुद्र छलाँगने की शक्ति भी किसी अदृश्य शक्ति से ही उपलब्ध हुई थी ।

यह उदाहरण प्राचीन पौराणिक गाथाएँ कहकर झुठलाये जा सकते हैं और उनकी सत्यता से इन्कार किया जा सकता है । हमारा देश सदियों से भाव प्रधान और आस्तिक-अध्यात्मिक विचारों की जन्मभूमि रहा है अतएव इन घटनाओं को किंवदंतियों की भी संज्ञा दी जा सकती है, किन्तु सनातन सत्ता तो काल गति और ब्रह्माण्ड से सर्वथा अतीत है जिस तरह वह प्राचीन काल में थी, आज भी है और उसकी अदृश्य सहायताएँ पूर्व से पश्चिम, उत्तर से दक्षिण तक आज भी प्राप्त करते रहते हैं । टंग्स्टन तार पर धन व ऋण विद्युत धाराओं के अभिव्यक्त होने की तरह यह ईश्वरीय अनुदान जिन दो धाराओं के सम्मिश्रण से किसी भी काल में प्रकट होते रहते हैं वह है श्रद्धा और विश्वास । यह सत्ताएँ जहाँ कहीं जब कभी हार्दिक अभिव्यक्ति पाती हैं परमेश्वर की अदृश्य सहायता वहाँ उभरे बिना नहीं रह सकती । इस तरह के सैकड़ों उदाहरण लेडीवीटर ने अपनी पुस्तक "अनविजिवल हेल्पर्स" (अदृश्य सहायक) पुस्तक में दिए हैं जिनसे इस युग में भी अतीन्द्रिय सत्ता के अस्तित्व पर विश्वास हुए बिना नहीं रहता और लेडीरुथ मान्ट गुमरी की पुस्तक "सत्य की खोज में" (इन सर्च ऑफ ट्रूथ) में २०वीं शताब्दी की सबसे आश्चर्यजनक घटना के रूप में "सराक्यूज की रोती हुई प्रतिमा" (वीपिंग स्टेच्यू ऑफ सराक्यूज) में दिया है । एक सरल हृदय अपंग किन्तु श्रद्धालु महिला की भाव-भरी प्रार्थना से विह्वल होकर उसकी प्लास्टर ऑफ पेरिस की प्रतिमा की आँखों से आँसू बह निकलें । डच विद्वान फादर ए. सोमर्स ने स्वयं मूर्ति और उसके आँसुओं का परीक्षण करने के बाद उसे विस्तार से समाचार-पत्रों में छपाया और एच जोर्गन ने उसका अंग्रेजी रूपान्तर प्रकाशित कराया ।

२१ मार्च, १९५३ को कुमारी एण्टोर्निएटा का श्री एँग्लोजेन्यूसी के साथ पाणिग्रहण संस्कार हुआ । इस अवसर पर उपहार की अन्य वस्तुओं में यह छोटी-सी प्लास्टर ऑफ पेरिस की अन्दर से पोली ऊपर एनामिल चढ़ी प्रतिमा भेंट में मिली थीं एन्टोर्निएटा को मीरा के गिरधर गोपाल की तरह यह मूर्ति बहुत प्यारी लगी और वह उसकी इष्टदेवी बन गई ।

विवाह के बाद एण्टिर्निएटा गर्भवती हुईं । गर्भ जैसे-जैसे विकसित हुआ वह अत्यधिक दुर्बल होती गईं । आँखें धँस गईं, मुँह पीला पड़ गया, एक दिन तो मुँह से बोलना और आँख से दिखाई देना भी बन्द हो गया । यही नहीं उन्हें मिर्गी के फिट्स भी पड़ने लगे । डॉक्टरों ने जाँच करके बताया गर्भ में जहर फैल गया है और लड़की का बचना असम्भव है उस दिन उसे भयंकर दौरा भी पड़ा । दौरा शान्त हुआ उस समय एन्टोर्निएटा अत्यधिक शान्त किन्तु भाव विह्वल थीं । भीतर ही भीतर मन व्याकुल था और परमात्मा की गुहार कर रहा था अन्तःकरण से शिकायत उठ रही थी । हे प्रभु ! तू कितना निर्दय है कि अपनी सन्तान को पीड़ित देखकर भी तुझे दुःख नहीं होता । यह भावना उमड़ी ही थी कि मेडेना उस मूर्ति की आँखों से एकाएक आँसू झर-झर झर उठे । यह दृश्य देखकर सारा वातावरण स्तम्भित हो गया । धीरे-धीरे खबर मुहल्ले, पड़ौस, नगर और समूचे प्रान्त सराक्यूज तथा अमेरिका में फैल गई । दुनिया भर के अखबारों ने इस अद्भुत घटना का उल्लेख किया । २९ अगस्त से मूर्ति का आँसुओं का निरीक्षण परीक्षण प्रारम्भ हुआ । सर्वप्रथम डॉ. मारियो मेसीना जो वाइआ कारसो में रहते थे उन्होंने मूर्ति का भीतर बाहर, ताज हटाकर पूरी तरह निरीक्षण किया मूर्ति में कहीं कोई नमी नहीं पर आँसू रुकने का नाम ही न लेते थे । जेन्यूसो घर से बाहर था वह घर पहुँचा तो पत्नी की पीड़ा और बदले में मूर्ति का रुदन देखकर दहाड़ मार कर रो उठा । उसी रात पुलिस ने घेरा डाल कर मूर्ति का निरीक्षण किया । अधिकारीगण तक इस घटना से भाव विह्वल हो उठे । किसी की समझ में नहीं आया, मूर्ति में आँसू कहाँ से आ रहे हैं । दूसरे दिन, "ला सिसीलिआ" दैनिक पत्र के सम्पादक ने स्वयं निरीक्षण कर अपने पत्र में लिखा आँसू वास्तविक हैं, कहीं कोई छलछद्म नहीं । परमात्मा की शक्ति विलक्षण है ।

श्री मासूमेकी और १० पुरोहितों के डेलीगेशन, इटालियन क्रिश्चियन लेबर यूनियन के अध्यक्ष प्रो. पावलो अलबानी आदि ने भी तथ्यों की जाँच की और सही पाया । लगातार कई दिनों तक अश्रुपात होते रहने के कारण आश्चर्य और भीड़ एक साथ बढ़ रही थी । समाचार-पत्र सात दिन तक इस विस्मयकारक घटना की आँखों देखी खबरें छापते रहे । १ सितम्बर को एक जाँच आयोग (ट्रिब्यूनल) नियुक्त किया गया जिसके सदस्य थे—(१) जोएफ ब्रूनो. पी. पी., (२) डॉ. माइकेल कैऐला डाइरेक्टर ऑफ माइक्राग्रेफिक डिपार्टमेंट, (३) डॉ. फ्रैंक कोटजिया असिसटेण्ट डाइरेक्टर, (४) डॉ. लूड डी उर्सो । इसके अतिरिक्त निस सैम्परिसी चीफ कान्स्टेबुल, प्रो. जी. पास्क्विलीनों, डी. फ्लोरिडा,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

डॉ. ब्रिटनी (केमिस्ट) फैरिगो उम्बर्टो (स्टेट पुलिस के ब्रिगेडियर) तथा प्रेसीडेन्ट ऑफिस के प्रथम लेफ्टिनेंट कारमेलो रमानो भी थे । पिपेट की सहायता से दोनों आँखों से एक-एक सी. सी. आँसू एकत्र किए गए उनका विश्लेषण करने से पता चला कि आँसू वास्तविक हैं और किसी ३-४ वर्ष के बालक के से ताजे आँसू हैं पर वह कहाँ से क्यों निःसृत हो रहे हैं ? यह कोई नहीं जान सका । स्वयं मूर्तिकार भी विस्मित था उसकी सैकड़ों मूर्तियाँ बाजार में थीं, पर ऐसी अद्‌भुत घटना का कारण कोई नहीं समझ सका । प्रो. एल. रोजा ने एम. डी. कास्त्रो को इस घटना का विवरण इस प्रकार भेजा—

पू. श्री एम. डी. कास्त्रो

प्रीस्ट ऑफ सेन्टिगो डी. सूडाड रिकॉल स्पेन ।

आपकी प्रार्थना पर यह सब लिख रहा हूँ । कमीशन ने आँसू इकट्ठे किए हैं मूर्ति दो पेचों से जुड़ी हुई थी । मूर्ति का प्लास्टर बिलकुल रूखा था आँसुओं का परीक्षण आर्क बिशप क्यूरियो द्वारा नियुक्त कमीशन ने किया है माइक्रो किरणों से देखने पर इन आँसुओं में वह सभी तत्व पाये गए हैं जो तीन वर्ष के बच्चे के आँसुओं में होते हैं यहाँ तक कि क्लोरेटियम के पानी का घोल । प्रोटीन व क्वाटनरी साफ झलक दे रहा था । मेरी पूर्ण जानकारी में मेरे हस्ताक्षर साक्षी हैं—

हस्ताक्षर प्रो. एल. रोजा,

सात दिन तक घटना चक्र चला । बिना किसी चिकित्सा के एण्टोनिपेटा चंगी हो गई पर यह पहेली न सुलझ सकी कि इन आँसुओं का कारण क्या है ? अपनी सत्ता को उस परमात्मा के अतिरिक्त कौन समझ सकता है ?

सन् १८७४ की बात है । इंग्लैण्ड का एक जहाज धर्म प्रचार के सिलसिले में न्यूजीलैण्ड के लिए रवाना हुआ । उसमें २१४ यात्री थे । वह विस्के की खाड़ी से बाहर ही निकला था कि जहाज के पेंदे में छेद हो गया । मल्लाहों के पास जो पम्प थे तथा दूसरे साधन थे उन सभी को लगाकर पानी निकालने का भरपूर प्रयत्न किया, पर जितना पानी निकलता था उससे भरने की गति तीन गुनी तेज थी ।

निराशा का वातावरण बढ़ता जाता था । जब जहाज डूबने की बात निश्चित हो गई तो कप्तान ने सभी यात्रियों को छोटी लाइफ वोटों में उतर जाने और उन्हें खेकर कहीं किनारे पर जा लगने का आदेश दे दिया । डूबते जहाज में से जो जानें बचाई जा सकती हों, उन्हें ही बचा लिया जाय । अब इसी की तैयारी हो रही थी ।

तभी अचानक पम्पों पर काम करने वाले आदमी हर्षातिरेक से चिल्लाने लगे । उन्होंने आवाज लगाई कि जहाज में पानी आना बन्द हो गया । अब डरने की कोई जरूरत नहीं रही । यात्रियों ने चैन की साँस ली और जहाज आगे चल पड़ा । काल्पर्सडाक बन्दरगाह पर उस जहाज की मरम्मत कराई गई तब पता चला कि उस छेद में एक दैत्याकार मछली की पूँछ फँसकर इतनी कस गई थी कि न केवल छेद ही बन्द हुआ वरन् मछली भी घिसटती हुई साथ चली आयी ।

"अनविजिबल हेल्पर्स" सी. डब्ल्यू. लेडी बीटर ने लन्दन की हालबर्न स्ट्रीट का एक उदाहरण देते हुए लिखा है—एक बार इस सड़क के कुछ मकानों में भयंकर आग लगी । जिससे दो मकान पूरी तरह जलकर राख हो गए । एक बुढ़िया को छोड़कर शेष सभी को बचा लिया गया, किन्तु सामान कुछ भी नहीं बच सका । उस रात जिस दिन आग लगी मकान मालिक के एक मित्र किसी कार्यवश कालचेस्टर गए थे वे अपने बच्चे को उन्हीं के पास छोड़ गए थे । मकान पूरी तरह जल गया और सभी लोगों की गणना की गई तब उस बच्चे की याद आयी । उसे अटारी पर सुलाया गया था । उसकी खोज की गई तो यह देखकर सबकी आँखें फटी की फटी रह गईं कि जिस चारपाई पर बच्चा सोया था उसके चारों ओर एक गोल वाले भाग में आग का रत्ती भर भी प्रभाव नहीं पड़ा था और बच्चा पूरी तरह सुरक्षित इस तरह सो रहा था मानो वह अपनी माँ की ही गोद में सो रहा हो । यह तथ्य देखकर लोगों ने अनुभव किया कि वास्तव में कोई सार्वभौमिक सत्ता है अवश्य जो प्राकृतिक परमाणुओं को भी पूरी तरह अपने नियन्त्रण में रख सकती है । इस घटना को देख-सुनकर होलिका दहन और उसमें से प्रहलाद को जीवित बचा लेने की, विष पीकर भी मीरा के जीवित बच जाने की, खम्भे को चीर कर नृसिंह भगवान के प्रकट होने की पौराणिक आख्यानों की सत्यता सामने आ जाती है ।

नृसिंह पूर्वतापिन्युपनिषद् के एक प्रसंग में देवता ब्रह्मा जी से प्रश्न करते हैं—हे प्रजापति ! भगवान को नृसिंह क्यों कहते हैं ? ब्रह्मा जी उत्तर देते हैं—सब प्राणियों में मानव का बौद्धिक पराक्रम प्रसिद्ध है । सिंह का शारीरिक पराक्रम दोनों के संयोग का अर्थ है प्रकाश और दृश्य रूप में, बुद्धि और बल रूप में अपने भक्तों की रक्षा में तत्पर रहना । नृसिंह कोई साकार स्वरूप हो या नहीं पर प्रकाश और पराक्रम के रूप में उसका अस्तित्व कहीं भी अभिव्यक्त देखा जा सकता है ।

बर्किंघमशायर बर्नहालवीयों के निकट एक किसान के छोटे-छोटे दो बच्चे खेत पर से खेलते-खेलते दूर जंगल में भटक गए । रात को पता चला । किसान दम्पत्ति बच्चों को बहुत प्यार करते थे । अज्ञात भय से वे बच्चों को खोजने सड़क पर निकले उन्होंने एक अद्‌भुत नीलवर्ण प्रकाश देखा—वे उधर ही बढ़े, जितना वे आगे बढ़ते प्रकाश भी उसी गति से एक ओर जंगल में बढ़ना शुरू हुआ और एक भयानक जीव-जन्तुओं से भरे सुनसान में जाकर स्थिर हो गया । किसान अनुगमन करता हुआ जैसे ही उस स्थान पर पहुँचा वह यह देखकर चकित रह गया कि दोनों बच्चे वृक्ष

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की एक जड़ के सहारे इस तरह शान्त और निश्चिन्त सोये हैं मानो कोई उनकी पहरेदारी कर रहा हो ।

लारेंको मार्क्वोस (मोजाम्बिक) की घटना है । एक पंगु अफ्रीकी को लकवा मार गया । पैर मुड़ जाने से वह घिसट कर चलता था अर्नेस्टो टिटोस मुल्होव नामक यह अफ्रीकी बड़ा ईश्वर भक्त था उसकी भक्ति और वर्तमान स्थिति पर उसके मित्र अक्सर टीका टिप्पणी करते रहते । वपूतिस्मा (ईसाई धर्म में दीक्षा का एक विशेष त्यौहार) के दिन उससे रहा नहीं गया वह भाव विह्वल अन्तःकरण से प्रोटेस्ट चर्च की ओर घिसटता हुआ भागा । जितना वह भागता उसकी प्राण शक्ति उतनी ही सक्रिय होती गई और चर्च तक पहुँचते न जाने किस अद्भुत शक्ति ने उसे खड़ा कर दिया, जिसे डॉक्टर भी ठीक नहीं कर सकते थे । अनायास ठीक हो जाने पर लोगों के आश्चर्य का ठिकाना न रहा । ए. एफ. सी. ने यह समाचार देते हुए स्वीकार किया कि सचमुच संसार में कोई अद्भुत अदृश्य शक्ति है अवश्य जो अपनी सर्व शक्तिसत्ता का परिचय देती रहती है ।

उपर्युक्त सराक्यूज की रोने वाली मूर्ति का रहस्य अभी तक अमेरिकी वैज्ञानिक खोज नहीं पाये यहाँ प्रस्तुत है यूरेक्थम के प्रसिद्ध मंदिर का ऐतिहासिक वर्णन जो सराक्यूज की रोने वाली मूर्ति से भी बढ़कर आश्चर्यजनक है । यह मंदिर ग्रीक की राजधानी एक्रोपोलिस में स्थित है । बात उस समय की है जब थामस ब्रूस एल्गिन के अल सन् १७९९ में तुर्की में ब्रिटिश राजदूत थे । तुर्की के अधिकारियों से उन्होंने इस मंदिर को तोड़ कर उसकी मूर्तियाँ इंग्लैण्ड ले जाने की आज्ञा प्राप्त कर ली । मंदिर गिराने के लिए मजदूरों का एक जत्था रात में कार्य पर लगाया गया । एक्रो पोलिश निवासियों को इस बात का पता चला तो वे अपने सारे काम छोड़ कर भगवान से प्रार्थना करने के लिए बैठ गए । इसी समय एक यह अविस्मरणीय घटना घटित हुई । अभी बाहर की चहारदीवारी ही हट पायी थी जैसे ही मजदूरों ने मूर्ति को तोड़ कर हटाया एक भयंकर चीख सुनाई दी उसके अन्दर से । कई मजदूर भयभीत होकर गिर पड़े और उनका रक्त तक जम गया ।

कहते हैं एक भारी हथौड़े से पिस्टन में पूरी शक्ति लगा कर चोट मारी जाय और पिस्टन को स्वेच्छापूर्वक पीछे उछलने दिया जाय तो सिलेण्डर में रखा हुआ सारा पानी जम कर बर्फ हो जायेगा । यदि उस बर्फ पर एक जलता हुआ लोहे का टुकड़ा रख कर उस पर उसी हथौड़े की पूरी शक्ति लगा कर चोट की जाय तो वही बर्फ पानी हो जायेगी और फिर पानी ही न रहेगी वरन् उबल कर हाइड्रोजन व ऑक्सीजन गैसों में बदल कर इतना भयंकर विस्फोट करेगा कि वह लोहा भी पिघल कर गैस बनकर उड़ जायेगा । मजदूरों के शरीर का खून जम जाना इस सिद्धान्त की याद दिलाता है और यह बताता है कि वह चीख भारी हथौड़े की मार से भी भयंकर रही होगी । फिर मजदूर उस मूर्ति के अतिरिक्त दूसरी मूर्ति नहीं तोड़ सके । कहते हैं जिस खम्भे पर मूर्ति रखी थी वह इस प्रकार बना था कि मूर्ति हटते ही चारों ओर से हवा एक दम खिंची उसी से विस्फोट हुआ पर वैज्ञानिक इस बात को मानते नहीं । यदि ऐसा होता तो गर्मियों में उठने वाले बवंडर (साइक्लोन) से भी भयंकर ध्वनियाँ होतीं जबकि ऐसा कहीं सुना नहीं गया । यह मूर्ति आज भी ब्रिटिश—म्यूजियम में रखी है और 'यूरेक्थम के रहस्य' के नाम से यह आवाज भी रहस्यमय बनी हुई है । उसका कोई वैज्ञानिक विश्लेषण नहीं हो पाया ।

२६ जून, १९५४ को देहली से छपने वाले दैनिक हिन्दुस्तान में एक अद्भुत घटना छपी है—"पन्ना जिले के धर्मपुर स्थान में कच्ची ईंटों को पकाने के लिए एक भट्टा लगाया गया था । किसी को पता भी नहीं कि ईंटों के बीच एक चिड़िया ने घोंसला बनाया है और उसमें अण्डे सेये हैं । एक सप्ताह तक भट्टा जलता रहा । ईंटें आग में पकती रहीं आठवें दिन भट्टा खोला गया तो एक चिड़िया उसमें से उड़कर भागी । आश्चर्यचकित सैकड़ों लोग वहाँ एकत्र हो गए । लोग तब यह मानने को विवश हो गए कि परमात्मा की अदृश्य सत्ता का संरक्षण सर्व समर्थ है जब उन्होंने देखा कि दो अंडे सुरक्षित रखे हुए हैं और जिस स्थान पर घोंसला बना है उसके एक फीट दायरे में आग पहुँची ही नहीं जबकि सारे भट्टे में इस तरह का एक इंच स्थान भी न बचा था ।

ऐसे असंख्य उदाहरण आये दिन हमारे सामने आते रहते हैं जब अनहोनी उस नियामक के अस्तित्व का संकेत करती रहती है पर स्थूल बुद्धि के व्यक्ति उस सूक्ष्म को कहाँ स्वीकारते हैं ? स्वीकार लें तो न केवल अध्यात्मिक अपितु हमारा व्यवहारिक संसार भी सुख-शान्ति से ओत-प्रोत हो सकता है ।

दैवी-शक्ति द्वारा गुप्त रहस्यों का उद्घाटन

मनुष्य का स्वभाव है कि जिस बात को वह प्रत्यक्ष ज्ञान द्वारा नहीं जान सकता, उसके लिए वह किसी ऐसे व्यक्ति की सहायता माँगता है, जिसे गुप्त या अप्रकट बातों को जानने की शक्ति प्राप्त हो । कुछ लोगों को यह शक्ति स्वभावतः ही प्राप्त होती है और कुछ अभ्यास और साधन द्वारा भी इसमें निपुणता पा सकते हैं ।

ऐसी गुप्त-ज्ञान की प्रक्रियाओं में एक विधि 'डिवाइविंग' कहलाती है, जिसका यूरोपीय देशों में कहीं-कहीं प्रचार पाया जाता है । यह एक ऐसी विधि है, जिसमें किसी विशेष साधन या अभ्यास की आवश्यकता नहीं होती, अवसर पड़ने पर कोई भी शुद्ध विचारों का और पवित्रता से रहने वाला व्यक्ति इसको प्रयोग में ला सकता है, जो लोग इस विधि में दक्षता प्राप्त कर लेते हैं, वे जमीन के भीतर पानी के सोते, तेल के सोते, धातुओं की खानें आदि का पता निश्चित रूप से बता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

देते हैं और इससे बहुत अधिक परिश्रम और धन की बचत होती है ।

मिश्र के रेगिस्तान में पानी

यह प्रसिद्ध है कि अंग्रेजी सेना के प्रसिद्ध सेनापति और बाद में इंग्लैण्ड के युद्ध-मन्त्री लार्ड किचनर इस विद्या के विशेष ज्ञाता थे । जब वे मिश्र में स्थित अंग्रेजी सेना में लेफ्टिनेन्ट के पद पर काम करते थे तो सरकार ने 'कोरोस्को' के रेगिस्तान में २५० मील लम्बी रेल बनाने की आज्ञा दी । पर उस रेगिस्तान में पानी का सर्वथा अभाव होने से इस कार्य में बड़ी कठिनाई पड़ने लगी और ऐसा जान पड़ा कि रेल नहीं बन पायेगी । जब यह समाचार लार्ड किचनर को मिला तो वे स्वयं उस प्रदेश में पहुँचे और इसी विधि का प्रयोग करके दो जगह कुएँ खोदने का आदेश दिया । उन कुओं से बहुत साफ और मीठा पानी निकला जिससे रेलवे लाइन शीघ्र ही बनकर तैयार हो गई । इसी मार्ग से अंग्रेजी फौजें शीघ्रता से मिस्र भेजी जा सकीं, जहाँ उन्होंने विद्रोहियों को दबा कर सरकारी प्रभाव फिर से जमाया ।

इस घटना के फल से उस प्रदेश के प्राचीन निवासी लार्ड किचनर को 'जादूगर' मानने लगे । इसके बाद और भी कितने ही लोगों ने उसी रेलवे लाइन के पास कुआँ खोदने का प्रयत्न किया, पर किसी को सफलता न मिल सकी ।

श्री लायड जार्ज का कृषि-फार्म

प्रथम महायुद्ध के अवसर पर इंग्लैण्ड के प्रधानमन्त्री श्री लायड जार्ज थे । महायुद्ध के कुछ वर्ष पश्चात् उन्होंने एक बड़ी जमीन खेती और फलों का बगीचा लगाने के लिए खरीदी थी । उसका तमाम इन्तजाम बहुत ठीक था, पर पानी की अक्सर कमी हो जाती थी । इससे यह आशंका पैदा हो गई कि अगर किसी वर्ष बरसात कम हुई तो 'फार्म' को अवश्य हानि उठानी पड़ेगी ।

इस कमी को पूरा करने के लिए श्री लायड जार्ज ने कई युक्तियाँ सोचीं, पर कोई कारगर न जान पड़ी । अन्त में एक दिन वे अपने एक पड़ौसी किसान के पास पहुँचे । उन्होंने देखा था कि उनके आस-पास के सब खेत जब सूखे से रहते हैं, तब भी किसान की जमीन सदा हरी-भरी और तरोताजा बनी रहती है । उन्होंने उसके पास जाकर पूछा कि उसको पानी कहाँ मिलता है । किसान ने कहा कि मेरी स्त्री दैवी विधि से 'डिवाइनिंग' से पानी का पता लगाना जानती है । उसके बतलाने से जो कुआँ खोदा गया उससे काफी पानी निकलता है ।

श्री लायड जार्ज ने तुरन्त ही उस महिला को अपने यहाँ बुलाया और जब उसने पानी के स्रोत का ठीक पता बता दिया तो वहीं पर कुआँ खुदवाया गया, जिससे हर रोज ३ लाख गैलन पानी निकलने लगा । तब से फार्म की उपज काफी बढ़ गई और वह सदा हरा-भरा रहने लगा ।

वास्तव में दैवी-विधि से जमीन के भीतर पानी के स्रोत का पता लगाना बड़ी उपयोगी और प्राचीन विद्या है । पुराने समय में पानी के लिए संसार भर में कुआँ खोदने के सिवा और कोई उपाय था ही नहीं । नल तो अभी थोड़े ही समय से लगने लगे हैं । ऐसी दशा में अनेक व्यक्ति इस विद्या का अभ्यास करते थे । फिर विशेष आत्मशक्ति वाले तो जहाँ बतलाते थे, वहाँ पानी अवश्य निकलता था । 'बाइबिल' में लिखा है कि एक पहाड़ी स्थान में जब मूसा के अनुयायी प्यासे मरने लगे तो उसने एक चट्टान को तुड़वाया, जिसके नीचे से मीठे पानी का स्रोत निकला और सबने अपनी प्यास बुझाई । इस तरह की घटनाएँ हमारे देश में भी नानक, तुकाराम और अनेक अन्य सच्चे सन्तों के सम्बन्ध में सुनने में आती हैं । वे सब कार्य उनकी दैवी-शक्ति से ही पूरे हो सके थे ।

डिवाइनिंग द्वारा रोग-निदान

स्विटजरलैण्ड का एक दैवज्ञ इसी तरह की एक पेड़ की डाली द्वारा, जिसे 'डिवाइनिंग राड' कहते हैं, रोगों का भी पता लगा सकता है । इंग्लैण्ड की 'रायल इन्जीनियरिंग सेना' के कप्तान ए. जे. एडेनी उसके पास गए थे । उसने दैवी-विधि द्वारा उनको बतला दिया कि उनके दाहिने कूल्हे में गठिया की बीमारी है । इसी विधि से उसने एक अन्य व्यक्ति के पेट का कैंसर बता दिया था, यद्यपि डॉक्टर बहुत प्रयत्न करने और 'एक्स-रे' से जाँच करने पर भी उसका निर्णय न कर सके थे ।

युद्ध में दैवज्ञों का महत्त्व

युद्ध-काल में प्रायः ऐसी अनेक समस्याएँ उठ खड़ी होती हैं, जिनको वैज्ञानिक तरीकों के बजाय ऐसी दैवी विधि से ही शीघ्र हल किया जा सकता है । गत युद्ध के समय तो कुछ लोगों ने यह प्रस्ताव किया था कि प्रत्येक सेना के साथ एकाध दैवज्ञ भी रहना चाहिए । अब भी कभी-कभी ऐसा किया जाता है, पर वह निजी तौर पर ही होता है । उन्हीं दिनों अंग्रेजी सेना सेल्सबरी के मैदान में नकली युद्ध का अभ्यास करने के लिए एकत्रित हुई थी । जहाँ इस सेना का कैम्प लगाया गया था, वहाँ आस-पास में पानी निकालने की इन्जीनियरों ने बहुत चेष्टा की, पर उनको बार-बार असफल होना पड़ा ।

इससे अधिकारियों को बड़ी चिन्ता हुई, क्योंकि यदि वहाँ से कैम्प को हटाकर अन्यत्र लगाया जाता तो लाखों रुपये की बर्बादी होती । इसलिए लाचार होकर एक दैवज्ञ महिला मिस पेनरोज को बुलाया गया । यह पहिले ब्रिटिश कोलम्बिया में दैवी-विधि से पानी ढूँढ़ने का कार्य करती थी । उसने आते ही पानी के स्रोत का पता लगा लिया और सेना की सारी कठिनाई दूर हो गई ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दैवज्ञों का कहना है कि वे पानी की तरह जमीन के भीतर की अन्य वस्तुओं, जैसे धातु आदि का भी पता लगा सकते हैं । ऐसी हालत में वे अपनी लड़ने वाली सेना, जल और वायु के जहाजों को यह बतला सकते हैं कि शत्रु का गोला-बारूद भण्डार कहाँ छिपा है अथवा गोताखोर नाव समुद्र के भीतर कहाँ छिपी है ।

सामयिक पत्रों में छपा था कि जर्मनी का हिटलर दैवी-विधि विद्याओं पर बहुत विश्वास रखता था और बिना दैवज्ञों की सम्मति के युद्ध का कोई नया कार्य नहीं करता था । उसी समय इंग्लैण्ड में एक दैव-विद्या का ज्ञाता आ गया था, जिसका नाम लुई डी व्होल था । वह दरअसल हँगरी का रहने वाला था और पहिले उसने कुछ समय तक जर्मनी में रहकर हिटलर के प्रधान सलाहकर विलियम क्राफ्ट के साथ काम भी किया था । वह क्राफ्ट के अध्यात्मिक सिद्धान्तों और गणना-प्रणाली को अच्छी तरह जानता था और इसलिए इस बात का शीघ्र पता लगा लेता था कि युद्ध में हिटलर द्वारा कौन-सा नया कदम उठाया जाने वाला है ।

एक दिन किसी दावत में उसकी भेंट ब्रिटेन के विदेश मन्त्री लार्ड हैलिफैक्स (भारत के भूतपूर्व गर्वनर जनरल) से हो गई । बातचीत में उसने हिटलर की अत्यन्त गुप्त महत्त्वपूर्ण बातें लार्ड हैलिफैक्स को बतलाईं, जो उनको मनोरंजक जान पड़ीं और उन्होंने हँसते हुए डी. व्होल से कह दिया कि "अगर तुम्हारी भविष्यवाणी सत्य निकली तो मैं तुम्हें एक खास काम सौपूँगा ।"

डी. व्होल की भविष्यवाणी ठीक साबित हुई और लार्ड हैलिफैक्स ने उस सेना में सम्मिलित करके कप्तान का पद दिया और वह दैवी विधि द्वारा हिटलर की चालों के बारे में पता लगाने लगा । उसकी भविष्यवाणियाँ अधिकांश में ठीक साबित हुईं और उनसे सेना अधिकारियों ने काफी लाभ भी उठाया ।

यूरोप, अमेरिका में छोटे-बड़े सभी कार्य संगठन और सहयोगपूर्वक होते हैं और इसी से उनकी उचित प्रगति भी होती रहती है । इंग्लैण्ड के दैवज्ञों ने भी बहुत वर्ष पूर्व अपनी एक संस्था स्थापित कर ली थी, जिसके संचालक कर्नल ए. एच. वैल थे । इसकी तरफ से कई पुस्तकें भी इस सम्बन्ध में प्रकाशित की गई थीं । फ्रांस में भी इस विद्या के कई अच्छे जानकर पाये जाते हैं ।

'डिवाइनिंग' की विधि का विवेचन करने से हम इसी निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि वह एक शुद्ध अध्यात्मिक विद्या है । उसमें किसी प्रकार के वैज्ञानिक यन्त्र अथवा रासायनिक द्रव्य आदि का कोई प्रयोजन नहीं होता । केवल उसके करने वाले व्यक्ति की आत्म-शक्ति और समग्र विश्व में व्याप्त चैतन्य सत्ता (ईश्वरीय शक्ति) पर उसका दृढ़ विश्वास होता है और उसी के आधार पर उसे सत्य-संकेत प्राप्त हो सकता है ।

आध्यात्मवादियों के मतानुसार आत्मा की शक्ति अनन्त है और यदि वह सत्य का ध्यान रखकर किसी विषय पर विचार करेगा, तो चैतन्य-सत्ता उसका सत्य मार्ग-दर्शन ही करेगी ।

निश्छल आत्मा स्वयमेव देव-शक्ति

अमेरिकी राष्ट्रपति वाशिंगटन के कुटुम्ब में दो बहिनें, जिनका नाम जान और वर्जिना था, अपने दोनों भाइयों फ्रेड और जैक से बहुत स्नेह रखती थीं । भाई-बहिनों के इस प्रेम में कहीं कोई स्वार्थ या मोह की भावना न थी । विशुद्ध प्रेम कल्याण का भाव था ।

एक दिन की बात है, दोनों बहिनें घर पर थीं । भाई वहाँ से बहुत दूर अपने काम पर किसी दूसरे शहर में थे । अचानक अस्पताल से फोन आया—"वहाँ कोई ऐसा जख्मी आदमी पड़ा है, उसका मुख इस तरह कुचल गया है कि उसे पहचानना कठिन हो रहा है, किन्तु वह तुम्हारे पिता का नाम लेता है, इसलिए अस्पताल आकर फौरन उसकी पहचान कर लो ।"

दोनों बहिनें किसी अज्ञात भय से काँप उठीं । मन में भय समा गया, कहीं जैक या फ्रेड में से तो कोई नहीं है । जाने से पूर्व दोनों बहिनों ने भगवान से प्रार्थना की—"हे प्रभु ! ऐसा न हो कि वह हमारा भाई हो ।" इसके बाद भरे आँसुओं से वह अस्पताल पहुँचीं । वहाँ जाकर पता चला कि वह उनके घर का नौकर था और वह किसी वाहन दुर्घटना में कुचल गया था । उनके पहुँचते-पहुँचते उसकी मृत्यु हो गई, पर दोनों बहनों को तब भी अपने भाइयों की बड़ी याद आती-रही ।

कहते हैं सच्चे हृदय की याद में इतनी शक्ति होती है कि वह एक हृदय का सन्देश दूसरे हृदय तक बेतार के तार की तरह पहुँचा देती है । घर पहुँचे अभी दो ही क्षण मुश्किल से बीते होंगे कि जैक का फोन आया । उसने बताया—"मुझे ऐसा लग रहा है कि तुम दोनों मुझे बुला रही हो, बताना तुम दोनों कुशलमंगल से तो हो ।"

दोनों बहिनें आश्चर्यचकित थीं कि उनकी अन्तर-वाणी जैक तक कैसे पहुँच गई । उसकी तरफ से आश्वस्त बहिनों का ध्यान अब फ्रेड की तरफ गया, उसका भी पत्र आया उसने भी लिखा था—"मुझे कई दिन से ऐसा लग रहा है कि तुम दोनों मेरी याद कर रही हो—लिखना अच्छी तो हो ।"

एक नियम व्यवस्था में बँधे हम सब

प्रकृति के आँगन में रहने और पलने वाले सभी प्राणियों की स्वतन्त्र सत्ता दिखाई देती और प्रतीत होती है । यहाँ तक कि एक परिवार में रहने वाले मनुष्य भी अपनी-अपनी जिन्दगी जीते हैं, आपस में थोड़े बहुत काम चलाऊ घनिष्ठ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

सम्बन्ध रखते हैं और शेष जीवन स्वतन्त्र रूप से व्यतीत करते हैं, परन्तु ऐसा है नहीं । जड़-चेतन सभी विराट् चेतना के अविच्छिन्न अंग हैं और एक नियति चक्र में बँधे एक-दूसरे पर इस प्रकार निर्भर हैं कि उनमें से प्रत्येक न केवल एक-दूसरे से प्रभावित होता है वरन् दूसरों को प्रभावित भी करता है । यों इस प्रभाव को वातावरण का प्रभाव भी कहा जाता है । युद्ध के दिनों में जिन देशों के बीच युद्ध होता है, वहाँ के नागरिकों में ऐसा जोश उत्पन्न होता है कि शान्तिकाल में वह कहीं नहीं दिखाई देता । उन दिनों देशवासी अपने व्यक्तिगत या सामुदायिक समस्याओं को भूल कर राष्ट्रीय एकता के ऐसे भावना प्रवाह में बहने लगते हैं कि वैसी एकता अन्य अवसरों पर कदाचित ही देखने में आती है । दंगों, हिंसात्मक घटनाओं और अन्य विपदाओं के समय आतंक की व्यापक भावना फैल जाती है । कहने को इसे सामूहिक मनोविज्ञान भी कहा जा सकता है, परन्तु पिछले दिनों हुए वैज्ञानिक प्रयोगों और अध्ययनों से यह निष्कर्ष सामने आया है कि न केवल मनुष्य ही इस तरह सामूहिक स्थितियों से प्रभावित होता बल्कि जीव-जन्तु भी प्रभावित होते हैं और मात्र बाह्य घटनाएँ ही प्राणियों को प्रभावित नहीं करतीं वरन् प्रकृति जगत में ब्रह्माण्ड के किसी भी घटक में होने वाले परिवर्तनों से प्राणिमात्र प्रभावित होते हैं ।

जिन्हें हम अज्ञ या अल्पज्ञ समझते हैं, वे छोटे-छोटे जीव-जन्तु तक साधारण से प्रकृति परिवर्तनों से प्रभावित होते हैं और उन्हें पहचानते हैं । इन जन्तुओं को पहचानने की क्षमता या सम्वेदनशीलता किस प्रकार काम करती है । यह जानने के लिए कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के जीव वेत्ता डॉ. जैनट हार्कर ने तिलचट्टों पर कुछ प्रयोग किए । तिलचट्टे रात के अँधेरे में ही अपनी दिनचर्या आरम्भ करते हैं और सूरज अस्त हो जाने के बाद ही अपने घरों से निकलते हैं । सूर्य अस्त हो जाने और अँधेरा घिर आने का संकेत देने वाले केन्द्र इनके सिर में होता है । इस तथ्य को जाँचने के लिए डॉ. हार्कर ने एक तिलचट्टे का सिर काट दिया और धड़ से अलग कर दिया । इस स्थिति में तिलचट्टे को निश्चित ही मर जाना चाहिए था, परन्तु आश्चर्य की बात थी कि वह जीवित था । उस सिर कटे तिलचट्टे की पीठ पर एक पैर कटा तिलचट्टा बाँधा गया, जिसका सिर सही सलामत था और उन दोनों के शरीर में छेद कर दोनों की काया को एक नली द्वारा जोड़ दिया गया, जिससे ऊपर वाले तिलचट्टे का रक्त नीचे वाले, सिर कटे तिलचट्टे के शरीर में जाने लगा ।

ऐसा इसलिए किया गया था ताकि पता लगाया जा सके कि क्या सूरज डूबने और अँधेरा होने का सम्बन्ध परिचय केवल मस्तिष्कीय केन्द्र को ही मिलता है अथवा शरीर के अन्य अंग अवयव भी इस तरह की सूचना देते या परिवर्तनों को पहचानते हैं । एक आश्चर्य तो यही था कि तिलचट्टा जीवित था, दूसरा आश्चर्य यह था कि सिर कटे हुए तिलचट्टे को भी सूरज डूबने पर पता चल गया कि सूरज अस्त हो चुका है और वह अपनी दैनिक दिनचर्या की तरह घोषणा करने के लिए कसमसाने लगा ।

ऐसा कैसे सम्भव हुआ ? यह जानने के लिए किए गए अनुसन्धानों से पता चला कि तिलचट्टे के सिर में एक विशेष प्रकार का हारमोन होता है जो उसे इस बात की सूचना देता है कि सूरज अस्त हो गया है । आगे के शोध प्रयोग जारी रखते हुए श्रीमती हार्कर ने तिलचट्टों को दो समूहों में बाँट दिया । एक दूसरे के तिलचट्टों को तो सामान्य परिस्थितियों में रखा गया, किन्तु दूसरे समूह के तिलचट्टों को दिन भर कृत्रिम अन्धकार पैदा कर तथा रात्रि में कृत्रिम रोशनी के बीच रखा गया । देखने में आया कि उससे तिलचट्टों के क्रिया-कलापों में यह अन्तर आया है कि वे कृत्रिम रोशनी को दिन समझ कर रात में भी दिन की तरह रहते थे तथा दिन में पैदा किए गए कृत्रिम अन्धकार में रात की तरह हरकतें करने लगते । इन तिलचट्टों के सिर की वे गुच्छिकाएँ निकालकर सामान्य तिलचट्टों के सिर में फिट कर दी गईं । उनके सिर की सामान्य गुच्छिका संकेत देती कि दिन है तो भ्रम में रखे गए तिलचट्टों की गुच्छिका रात का संकेत देती । इस व्यतिक्रम को सामान्य तिलचट्टे अधिक न सह पाये और थोड़े ही दिनों में मर गए ।

इन प्रयोग के आधार पर डॉ. जैनर ने प्रतिपादित किया है कि प्रकृति के किसी भी कार्य में हस्तक्षेप करना संकटों को आमन्त्रण देना है । प्रकृति ने सभी प्राणियों को नियति चक्र पहचानने और उनके अनुसार अपना जीवन व्यतीत करने की सुविधा दे रखी है । उनमें कोई हस्तक्षेप करता है या व्यवधान आता है तो उसका प्रभाव निश्चित रूप से अनिष्टकर होता है ।

प्रकृति परिवर्तनों का बोध मस्तिष्क वाले अर्थात् तन्त्रिका संस्थान युक्त शरीर रचना प्राणियों को ही होता है और तन्त्रिका विहीनों को नहीं होता हो तो ऐसी बात भी नहीं है । पृथ्वी पर विद्यमान सबसे लघुकाय प्राणियों एवं कोशीय जीवों तक को इसका पता चल जाता है । 'यूग्लीना' नामक एक कोशीय जीव जिसे अमीबा की तरह न वनस्पति वर्ग में रखा जा सकता है और न ही जन्तु वर्ग में प्रयोग करने में यही तथ्य सामने आया है यूग्लीना की एक कोशीय काया में भरा द्रव्य सूरज की धूप से ऊर्जाकर्षित कर अपना काम चलाता है । ऊर्जा को खींचते समय उसकी एक अति सूक्ष्म चाबुक जैसी पूँछ जिसे काशामिका कहा जाता है, इधर-उधर घूमती है । दिन में वह सूरज से ऊर्जा प्राप्त करता है और रात्रि में अपने आसपास के अन्य एक कोशीय जीवों को अपना आहार बनाता है ।

यूग्लीना की कशामिका प्रकाश के प्रति अति सम्वेदी होती है । जैसे ही प्रकाश होता है यह एक सेकण्ड में बारह बार फड़कती है और सूर्यास्त होते ही निष्क्रिय हो जाती है । सूर्य प्रकाश को पहचानने की अद्‌भुत क्षमता इस जीव में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

होती है । आँखों से न दिखाई देने वाले इस नन्हें से जीव को जब कृत्रिम रोशनी में रखा गया तो उसमें कोई हलचल नहीं हुई और जब दिन के समय अन्धेरे में रखा गया तो कशामिका उसी प्रकार घूमने-फड़कने लगी जैसे कि वह सूर्य प्रकाश के समय फड़कती थी ।

$\frac{१}{१०}$ इन्च के लगभग आकार वाली वोल्वोक्स वनस्पति समुद्र में होती है । इसमें भी यूग्लीना की तरह कशामिकाएँ या पूँछ होती हैं लेकिन यह शैवाल अपनी पूँछों से दूसरा ही काम लेता है, वह है समुद्र में तैरने का । इन कशामिकाओं को दायें-बायें फेंककर वह पानी में तैरता है । प्रसिद्ध वैज्ञानिक जे. डी. पालमर इनका अध्ययन कर रहे थे तो अचानक उनके दिमाग में यह बात आयी कि क्या इन पर पृथ्वी के चुम्बकीय बलों का कोई प्रभाव होता है ? इस प्रश्न का उत्तर पाप्त करने के लिए उन्होंने कुछ वोल्वाक्सों को परीक्षण के लिए चुना । उनमें से एक तिहाई को तो सामान्य स्थिति में रखा गया और एक तिहाई को उत्तर दक्षिण दिशा में झूलती हुई चुम्बकीय छड़ के नीचे रखा गया । शेष एक-तिहाई को ऐसी छड़ के सामने रखा गया जो पूर्व-पश्चिम दिशा में झूल रही थी । इस छड़ का चुम्बकीय बल पृथ्वी के चुम्बकीय बल से तीस गुना अधिक था । जिन वोल्वाक्सों को पृथ्वी के चुम्बकीय क्षेत्र के बराबर वाली छड़ के नीचे रखा गया था वे तो सामान्य क्रम से उसी दिशा में मुड़े परन्तु जिन्हें प्रतिकूल दिशा में रखी गई चुम्बकीय छड़ के नीचे रखा गया था उनमें आधे भी उस छड़ की दिशा में नहीं गए थे । इस तरह के अनेक प्रयोगों द्वारा पालमर ने यह निष्कर्ष निकाला कि ये छोटे-छोटे जीव-जन्तु न केवल पृथ्वी की चुम्बकीय क्षमता से प्रभावित होते हैं बल्कि उन्हें पहचानते भी हैं ।

प्रकृति नियमों का पालन सूक्ष्म जीवों से लेकर बड़े जन्तु और वनस्पति तक बड़ी कड़ाई के साथ पालन करते हैं । इसे यों भी कहा जा सकता है कि जीव-जन्तु और वृक्ष वनस्पति तक प्रकृति के सामान्य से सामान्य नियमों से प्रभावित होते हैं । डॉ. फ्रेंक ब्राउन ने पिछले बत्तीस वर्षों से इस दिशा में गहन शोध अध्ययन किया है और पाया है कि प्रकृति परिवार का प्रत्येक सदस्य एक नियति चक्र में बँधा अपने क्रिया-कलाप सम्पन्न करता है ।

सूरजमुखी का फूल तो सूरज की ओर ताकता, निहारता ही रहता है । कीचड़ में पैदा होने और पलने वाला एक घोंघा 'नासारिअस ओब्सोलिश' भी सूर्य के साथ-साथ चलता है । डॉ. ब्राउन ने इंग्लैण्ड के समुद्री तट पर कोई ३४००० घोंघों का अध्ययन निरीक्षण किया तथा पाया कि ये घोंघे सुबह से शाम तक पूर्व से पश्चिम की ओर ही अपनी गति दिशा में रखते हैं । उन्हें ऐसी स्थिति में भी रखा गया जहाँ कि उन्हें सूर्य के उगने और दिन दुपहर में आकाश के बीचों-बीच आने तथा बाद में पश्चिम दिशा में ढलने का पता ही नहीं चले । इस प्रकार की व्यवस्था द्वारा उत्पन्न किए गए अवरोध से वे अप्रभावित ही रहे । रात में जब कभी उन्हें चलना होता है तो वे चन्द्रमा से प्रभावित होकर उसी दिशा में बढ़ते हैं । अमावस्या के दिन तो वे एक तरह से छुट्टी ही मनाते हैं ।

ग्रुनिअन नामक एक समुद्री मछली तो पूरी तरह चन्द्रमा के साथ अपनी जीवनचर्या व्यतीत करती है । पूर्णिमा के दिन जब समुद्र में ज्वार आता है या पानी की लहरें अपेक्षाकृत अधिक दूरी तक जमीन पर पहुँचती हैं तो ये मछलियाँ उन लहरों के साथ अपने अण्डे लेकर तट पर आतीं तथा बालू पर छोड़ जाती हैं । अटलांटिक महासागर में पायी जाने वाली सीपियाँ केवल पूर्णमासी के दिन ही अपना मुँह खोलती हैं । कहीं ऐसा समुद्र में उठने वाले ज्वार के प्रभाव से तो नहीं होता ? यह सोच कर डॉ. ब्राउन ने कुछ सीपियाँ प्रयोगशाला में टब के भीतर पानी भर कर उनमें रखीं । वहाँ भी उन्होंने पूर्णमासी के दिन ही अपना मुँह खोला जबकि टब में ज्वार आने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता था ।

सूर्य और चन्द्रमा के मानव शरीर पर पड़ने वाले प्रभावों के आधार पर डॉ. एडसन एण्ड्रूज ने कहा है कि मनुष्य भले ही अपने आपको स्वतन्त्र समझें, परन्तु उसका शरीर जिन पंचतत्वों से बना है, वे पंचतत्व ब्रह्माण्डीय हलचलों से प्रभावित होते हैं तथा उनका असर मनुष्य के जीवन पर भी पड़ता है । पृथ्वी और मनुष्य शरीर की संरचना में साम्य दर्शाते हुए उन्होंने लिखा है कि हमारी नसों में बहने वाला रक्त समुद्री जल से अद्‌भुत साम्य रखता है और जब पूर्णिमा के दिन समुद्र में ज्वार उठता है तो हमारी शिराओं में भी ज्वार उठने लगता है । उन्होंने डॉक्टरों को सलाह भी दी है कि वे जहाँ तक सम्भव हो पूर्णिमा के दिन कोई ऑपरेशन न किया करें क्योंकि उस दिन अधिक रक्त बहने की सम्भावना रहती है । स्वयं अपने सम्बन्ध में उन्होंने लिखा है कि भले ही मुझे कोई अन्धविश्वासी क्यों न समझे ? पर मैं केवल अमावस की रात या दिन को ही ऑपरेशन के लिए चुनता हूँ । यदि कोई आपरेशन कुछ समय के लिए भी स्थगित नहीं किया जा सकता तो ही उसे बिना यह विचार किए करना चाहिए अन्यथा अमावस का दिन ऑपरेशन के लिए सबसे अधिक उपयुक्त है ।

मनुष्य शरीर और समुद्र आदि तो दूर की बात रही अब तो एक प्याली में भरे हुए पानी पर भी चन्द्रमा के गुरुत्वाकर्षण बल को मापा जाने लगा है । चन्द्रमा और वर्षा के पारस्परिक सम्बन्धों को लेकर भी वैज्ञानिक विचित्र निष्कर्षों पर पहुँचे हैं । उनके अनुसार पूर्णिमा के समय तक अर्थात् शुक्लपक्ष में बादलों पर ब्रह्माण्डीय धूलि की अधिक वर्षा होती है और उन दिनों कृष्ण पक्ष की अपेक्षा अधिक वर्षा होती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस प्रकार अनेक प्रतिपादनों और प्रमाणों के आधार पर यह सिद्ध किया जाने लगा है कि समूचा विश्व ब्रह्माण्ड एक व्यवस्था के अन्तर्गत चल रहा है । सबके लिए एक से नियम हैं, एक सा नियति चक्र है और सभी अपनी-अपनी स्थिति के अनुसार उनसे प्रभावित होते हैं । यह अन्तर्सम्बन्ध अनायास ही इस अध्यात्म मान्यता की पुष्टि कर देता है कि समूचा विश्व-ब्रह्माण्ड एक ही विराट् चेतना का अंग है और भिन्न-भिन्न दिखाई देने वाले घटक केवल उस अग्नि के अलग-अलग स्फुल्लिंग मात्र हैं ।

गड़े खजाने ढूँढ़ने पर भी मिलते क्यों नहीं ?

भूमिगत खजानों की चर्चा संसार में अन्यत्र भी होती रहती है, पर भारत में तत्सम्बन्धी तथ्यों और किंवदंतियों का ऊहापोह अपेक्षाकृत अधिक ही होता रहता है । इन खजानों में कितनी राशि है ? कहाँ छिपी है ? और उसे प्राप्त करने के लिए क्या किया जा सकता है ? प्रायः इन्हीं प्रश्नों पर चर्चा होती रहती है । खुदाई के अनेक प्रयत्न होते रहते हैं ? पर उनमें सफलता कदाचित ही थोड़ी बहुत मिल जाती है । इससे दो निष्कर्ष निकलते हैं एक तो यह कि वे गाथाएँ असत्य हैं, दूसरा यह कि उनका स्थान जानने और प्राप्त करने के उपाय हस्तगत नहीं हो पाते । इन्हीं दो सन्दर्भों में छान-बीन चलती रहती है । उत्सुक व्यक्ति इन्हीं के टिप्पणी पर माथा-पच्ची करते रहते हैं और उपाय करते हैं कि किसी प्रकार उस धनराशि का पता लगाया और लाभ उठाया जाय ।

इस सन्दर्भ में एक तीसरा तथ्य और भी अधिक विचारणीय होना चाहिए कि सृष्टा की अनेकानेक विधि व्यवस्थाओं में धन सम्बन्धी नीति, मर्यादा और व्यवस्था क्या है ? उसे न समझ पाने पर एक ऐसी बाधा बनी रहेगी जिसके कारण उस भूमिगत धन का पाना और पाकर उससे लाभ उठाना सम्भव हो ही नहीं सकेगा ।

सर्वविदित है कि इस धरती और समुद्र के गर्भ में बहुमूल्य खनिजों के विशाल भण्डार दबे पड़े हैं । सोना, चाँदी, ताँबा, लोहा आदि धातुओं की खदानें आखिर जमीन में ही तो निकलती हैं । कोयले को काला सोना और तेल को पतला सोना कहा जाता है । हीरा, पन्ना, नीलम, पुखराज आदि रत्न भी खनिज ही हैं और जमीन से खोदकर निकाले जाते हैं । मोती, मूंगा आदि समुद्र में पाये जाते हैं । दूसरे [illegible]यनिक पदार्थ भी प्रकारान्तर से भूमि और जल की सम्पदा ही हैं । यह समझने में किसी को कठिनाई नहीं होनी चाहिए कि भूमि ही रत्न गर्भा है । समुद्र को भी एक सीमा तक ऐसे ही श्रेय मिल सकता है । यह सम्पदा सर्व सुलभ क्यों नहीं ? इसका उत्तर एक ही है कि मनुष्य के उचित श्रम, मनोयोग, कौशल के फलस्वरूप ही सही पारिश्रमिक के रूप में ही प्रकृति यह सम्पदा किसी को देना चाहती है । पात्रता के मूल्य पर अनुदान पाने की ही सृष्टि व्यवस्था है । मुफ्त की सम्पदा अनैतिक है । भले ही वह जुए, सट्टे में कमाई गई हो, उत्तराधिकार में पायी गई हो या लूटकर लायी गई हो, जो उचित परिश्रम के प्रखर कौशल के आधार पर कमाया गया है वही नैतिक है । नीति युक्त सम्पदा के साथ एक और मर्यादा जुड़ी हुई है कि उसका उपभोग या संग्रह नहीं हो सकता, उसका उपयोग होना चाहिए और सर्वजनीन वितरण भी । व्यक्तिगत लिप्सा के लिए सम्पदा को जमा करना माता लक्ष्मी को बन्दिनी, रखेल औरत का दर्जा देने के बराबर है । इसी प्रकार सामान्य लोक निर्वाह की अपेक्षा बहुत अधिक अमीरी का उपभोग भी अपने से छोटों के लिए मिलने वाले भाग को हड़प जाने के बराबर है । मनुष्यकृत कानून में दण्ड की व्यवस्था भले ही रखी न गई हो, पर ईश्वरीय नीति मर्यादा से यह धारा सुनिश्चित रूप से विद्यमान है कि सम्पदा उचित पौरुष और कौशल के सहारे ही कमाई जाय और उपार्जन के उपरान्त उसका उपयोग अपने लिए उतना ही किया जाय जितना कि औसत नागरिक के हिस्से में आता है । शेष को संव्याप्त अभाव और पिछड़ेपन के निवारण में तत्काल उदारतापूर्वक वितरित कर दिया जाय ।

इस नीति की कसौटी पर जब खजानों में दबी सम्पदा को परखा जाता है तो प्रतीत होता है कि वह हर दृष्टि से खोटी है, उसमें धन सम्बन्धी नीति मर्यादाओं का पूरी तरह उल्लंघन हुआ है । फलस्वरूप उसके संग्रही वैसा लाभ न उठा सके जैसा कि वे चाहते थे । जिस प्रकार उन्होंने उसे हड़पने की चेष्टा की उसी प्रकार प्रकृति ने उनके हाथ से छीन लिया । यह छीना भी सामान्य रीति से नहीं वरन् करारे तमाचे लगा-लगाकर उसे उगलने के लिए बाध्य किया गया ।

भूमिगत खजानों में कितनी राशि है और किस स्थान पर दबी है ? यह जानने से पूर्व इस उपेक्षित तथ्य को भी जानने चाहिए कि वह किस प्रकार पायी और क्यों छिपाई गई है ? स्पष्ट है कि वह धनराशि किसी ने उचित परिश्रम करके नहीं कमाई है । उसे न्यायोचित परिश्रम का प्रतिफल नहीं कह सकते । वह विशुद्ध रूप से लूटमार का धन है । ऐसी लूटमार जिसके कारण अनेकों को अपने निर्वाह साधनों से लेकर प्राणों तक का परित्याग करना पड़ा है । सभी जानते हैं कि लुटेरे उठाईगीरे ही नहीं होते वे उत्पीड़न और आक्रमण की असह्य प्रताड़नाएँ भी देते हैं और जिससे छीना गया है उसके सामान्य जीवन-क्रम को उस पदाघात से तोड़-मरोड़कर रख देते हैं । खजाने ऐसे ही लुटेरों की आततायी दुष्प्रवृत्तियों के प्रतिफल हैं । उन्हें जिस निर्दयता के साथ कमाया गया उसी संकीर्णता के साथ व्यक्तिगत उपयोग के लिए जमा करके रखा गया । रखे कहाँ ? ऐसे अनीति उपार्जन को दूसरे अधिक बलिष्ठ छीनने को तैयार बैठे रहते हैं । भविष्य में उपभोग के लिए संग्रह और अन्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बलिष्ठों से बचाव की दृष्टि से ही उन्हें भूमिगत किया गया होता है । यदि ऐसा न होता तो उसका न तो संग्रह ही हो पाता और न सामयिक सदुपयोग की व्यवस्था करने की अपेक्षा जमीन में दबा देने की आवश्यकता पड़ती है । स्पष्ट है कि इन खजानों की उपलब्धि और छिपाकर रखने की प्रवृत्ति के पीछे नैतिकता की एक किरण भी कहीं दीख नहीं पड़ती । नीति का समावेश होता तो उसे न्यायोचित नीति से कमाने और आवश्यकता से अधिक होने पर तत्काल सामयिक पिछड़ेपन को दूर करने के लिए उसका उपयोग करने की योजना जुड़ी होती, उसे जमीन में दबाने की आवश्यकता ही न पड़ती । अनीति का समावेश जहाँ भी होगा वहाँ दैवी अभिशाप बरसेगा और ऐसा प्रसंग बनेगा जिसके अनुसार आक्रान्ताओं को उसका लाभ उठाने से वंचित रहना पड़े । खजानों के लुप्त हो जाने, भूमि द्वारा वापस छीन लिए जाने के पीछे सृष्टा की इसी नीति मर्यादा को काम करते हुए देखा जा सकता है ।

कोई जमाना था जब राजा जनक जैसे ब्रह्मज्ञानी हल चला कर कृषि कर्म द्वारा अपना व्यक्तिगत गुजारा करते थे और प्रजा द्वारा राजस्व के रूप में उपलब्ध हुए प्रजा-धन को प्रजा हित में लगा देने की व्यवस्था बनाते रहते थे । राजा हरिश्चन्द्र ने सामयिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अपना सर्वस्व विश्वामित्र के सुपुर्द कर दिया था । संचय हो जाने पर राज्याधिकारी सर्वमेध यज्ञ का आयोजन करते थे अर्थात् संग्रहीत सम्पदा को सामयिक सत्प्रयोजनों के लिए पूरी तरह खर्च कर डालते थे और खजाने को सहज ही झाड़ बुहारकर पूरी तरह स्वच्छ कर देते थे । जहाँ अनीति उपार्जन ही नहीं है वहाँ संग्रह की आवश्यकता ही क्यों पड़ेगी । विशेषतया व्यक्तिगत उद्धत उपभोग की बात तो सोचने तक में न आ सकेगी । ऐसी दशा में ऐसी धनराशि जमा ही न हो सकेगी; जिसे भूमिगत करने की आवश्यकता पड़े । अनैतिकता ही है जो छिपने और छिपाने के जाल-जंजाल बुनती रहती है । खजाने इसी कारण दबते और दबाये जाते हैं ।

स्पष्ट है कि डाकुओं की लूटपाट से प्राप्त हुई सम्पदा ही खजानों में दबी पड़ी है । सामान्य व्यक्ति को डाकू कहा जाता है । बलवान को सामन्त, शूरवीर, भूपति आदि नाम दे दिए जाते हैं । यह तो कहने वालों की इच्छा पर निर्भर है अनीति उपार्जनकर्त्ता को हेय तो ठहराया जायेगा, भले ही उसे तिरस्कृत नाम दिया जाय अथवा डर के मारे सम्मानित शब्दों से विभूषित किया जाय । तथ्य अपनी जगह पर जहाँ के तहाँ बने रहेंगे । जिन दिनों खजाने जोड़ने और गाढ़ने की आपाधापी थी वह सामन्तवादी जमाना था । उन दिनों जिसकी लाठी उसकी भैंस का जंगली कानून चलता था । फलतः आक्रमण और लूटमार का ही आतंक सर्वत्र छाया रहता था और उसी की तैयारी या सुरक्षा की बात हर किसी के दिमाग पर छाई रहती थी । आये दिन युद्ध ठनते थे । इनका कोई नैतिक आधार नहीं था । प्रजा को सम्पदा, तरुणों और तरुणियों की गुलामों के रूप में पकड़-धकड़, राजमहलों पर अधिकार शोषण के लिए अधिक भूमि पर अधिकार, निरंकुशता बरतने के लिए अधिक साधन सम्पन्नता जैसे उद्देश्य ही उन दिनों के आक्रमणों के पीछे काम करते थे । इसी कुचक्र में अनेकों को निरीह निर्दोष प्राण गँवाने और ममन्तिक कष्ट सहने पड़ते थे । सामन्तों की सेनाएँ लूटपाट करती थीं । उनका बड़ा भाग तो अधिनायक के पास जा पहुँचता था, पर होता यह भी था कि उनके चतुर सेनापति और सिपाही अपने दाव-पेंच भी ढूँढ़ते थे और जहाँ भी अवसर मिलता उस लूट के माल का बढ़ा भाग अधिनायक तक पहुँचाने की अपेक्षा बीच में स्वयं ही हड़प लेते थे । इसे वे रखें कहाँ ? जमीन में दाब देना ही एकमात्र उपाय था । प्रायः यही है वह तात्विक इतिहास जो इन खजानों के पीछे छिपा पड़ा है जिनकी उखाड़-पछाड़ के लिए कितने ही लोग कितने ही प्रकार से सोचते और ललचाते रहते हैं ।

खजाने किस प्रकार जमा हुए इसके कुछ उदाहरण सामने हैं—

अकबर का विश्वासी सेनापति अबुल-फजल, हैदराबाद की लूट का धन लेकर दिल्ली वापस जा रहा था । उसके पास २३ करोड़ के करीब नगदी और लगभग इतनी ही रत्न राशि थी । रास्ते में ओरछा के राजा ने उसे पकड़कर मार डाला और सारा पैसा छीन लिया । ओरछा के अभिलेखों में इसका उल्लेख है ।

अनीति उपार्जन में एक बड़ी कठिनाई यह रहती है कि संग्रहकर्त्ता की संकीर्ण स्वार्थपरता उसे किसी उपयोगी काम में लगाने की उदारता नहीं दिखा सकती । उसे यहाँ से वहाँ छिपाये फिरने की ही तरकीबें ढूँढ़ती रहती हैं । अन्ततः उसका क्या होता है यह बात ऐसे लोगों के मस्तिष्क में उपजती ही नहीं ।

रतलाम के जंगलों में छिपाये गए एक खजाने का विवरण उपलब्ध ताम्रपत्र में इस प्रकार मिलता है— (१) सोने की २०८६ ईंटें, (२) मोटे मोतियों की माला २५६, (३) सोने की छड़ें ११६२२, (४) खुले मोती ४५६७८, (५) कंठे हीरों के २२ कंठे अन्य रत्नों के ३७ इसके अतिरिक्त अनेकों रत्न जटित स्वर्ण आभूषणों की बड़ी सूची और भी है ।

शाहजहाँ को जब यह लगा कि उसका बेटा औरंगजेब विश्वासपात्र नहीं रहा तो उसने अपने खजाने का बहुमूल्य हिस्सा कानपुर के समीपवर्ती जंगलों में गढ़वा दिया । एक ताम्रपत्र में इसका वर्णन कैथी लिपि में मिलता है । जिससे पता चलता है कि नौ सौ देशों में भी यह सोना, चाँदी तथा जवाहरात भरे गए थे और जमीन में दफनाये गए थे ।

खजाने गाढ़ने के समय जो तान्त्रिक विधि-विधानों पूजा उपचार की तरह प्रयुक्त होते थे । उसका वर्णन देखने से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ऐसे विवरण मिलते जो उस दुरभि सन्धि के साथ ठीक तरह तालमेल बिठा देते हैं । गाढ़ने वाला अपने निवास से दक्षिण दिशा में उसे गाढ़ता था क्योंकि यह प्रेतों की दिशा है । प्रेतों को उसका संरक्षण नियुक्त करने के लिए उनका आव्हान, पूजन, परिपोषण अनेकों पशु-पक्षियों तथा मनुष्यों की बलि चढ़ाकर किया जाता था । उन्हें घड़ा मद्य प्रस्तुत किया जाता था । इतने उपहार पाकर वे चौकीदारी करते रहने को सहमत किए जाते थे ।

कहा जाता है कि यह प्रेत पिशाच ही सर्पों के रूप में पीढ़ी दर पीढ़ी उस खजाने की रक्षा करते रहते हैं । यह सर्प अपने लिए तो उसे काम में ला नहीं सकते, पर किसी अन्य को भी-किसी भले या बुरे उपयोग के लिए लेने नहीं देते, जो उसे प्राप्त करने की कोशिश करता है । उस पर सर्प या प्रेत के रूप में टूट पड़ते हैं और ठीक उसी मनोवृत्ति का परिचय देते हैं जो इस खजाने को जमा करने और गाढ़ने वाले की रही थी । हो सकता है उस संग्रहकर्त्ता की दुष्प्रवृत्तियाँ ही प्रकारान्तर से सर्प समुदाय या प्रेत संरक्षकों का रूप धारण करके उसकी चौकीदारी में संलग्न रहती हों ।

खजाना गाढ़ने की तरह ही उसे उखाड़ना भी खतरे से खाली नहीं है । यह प्रकृति की मर्यादा और ईश्वर की इच्छा के विपरीत है । उपार्जन कठोर परिश्रम और न्याय नीति के आधार पर होना चाहिए । औसत मनुष्य की तरह निर्वाह करके जो शेष बचता है उसे परमार्थ प्रयोजन में लगाते रहना चाहिए ताकि संग्रह का अवसर ही न आने पाये । औचित्य इसी में है । अनीति से उपार्जन-लोकवश संग्रह-सामयिक आवश्यकताओं की पूर्ति में न लगाकर उसे उत्तराधिकारियों के जमा करने के लिए दाब कर रख देना विवेक दृष्टि से हेय ही कहा जा सकता है । खजाने गाढ़ने के पीछे कोई नीतिमत्ता नहीं है । इसी प्रकार बिना श्रम उपार्जित सम्पत्ति के उपयोग की ललक भी नीति युक्त नहीं है । इससे धन का सिद्धान्त और स्वरूप ही विकृत होता है । सम्भवतः इसीलिए खजाने जमीन में जहाँ-तहाँ गढ़े होने पर भी वे इसीलिए ऊपर उभरने नहीं पाते कि गाढ़ने वालों की तरह उखाड़ने वालों को भी पश्चात्ताप ही उपलब्ध होगा ।

छिपे खजाने क्या हमारे हाथ लग सकते हैं ?

समुद्र अन्वेषी अंग्रेज कप्तान कुक वैज्ञानिकों का एक दल लेकर सन् १७६८ में लम्बी समुद्र यात्रा पर निकला था । इसमें उसने इंग्लैण्ड से लेकर आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड तक के लम्बे क्षेत्र के प्रामाणिक नक्शे तैयार किए थे; साथ ही उस बहुमूल्य सम्पदा का पता लगाने का प्रयत्न किया जो समय-समय पर डूबे हुए जहाजों के कारण समुद्र तल में डूबी पड़ी है । एक तूफान में फँस जाने का कारण सन् १७७० में ग्रेट बैरियर रीफ के समीप उसने अपने जहाज पर लदी छः तोपें भी पानी में फेंक दी थीं । कप्तान कुक के द्वारा प्रस्तुत प्रतिवेदनों में से कुछ गुम हो गए हैं, अस्तु उससे कामों का फिर से सर्वे करना पड़ रहा है । उसने जिस स्थान पर अपनी तोपें फेंकी थीं । उसी के नजदीक बहुत-सी सम्पत्ति समुद्र तल में होने का संकेत था, अस्तु उस स्थान को ढूँढ़ने का प्रयास नये सिरे से करना पड़ा ।

पिछले दो सौ वर्षों में एक के बाद एक खोजी दल दस बार उस क्षेत्र में गए, पर उन तोपों के डुबाये जाने के स्थान का सही पता न लगा सके । अब फिलाडेल्फिया की प्रकृति विज्ञान एकेडेमी के एक खोजी दल ने उस स्थान को ढूँढ़ निकाला और छहों तोपें सुरक्षित रूप से प्राप्त कर ली गई हैं । अब अगला कदम उन स्थानों का पता लगाने का है जहाँ बड़ी धनराशि मिलने की सम्भावना है ।

इन सन्दर्भ में मिन्स्क गवर्नर की खोज रिपोर्ट में नये तथ्यों पर प्रकाश डाला गया है । कुछ समय पूर्व नोवोग्रुदोक के एक सैनिक ने अपने बड़े अधिकारी को सूचना दी थी कि एलेग्जानुर रोमानोविच नामक एक ग्रामीण के पास प्राचीन वस्तुओं का बहुमूल्य संग्रह है । छापा मारने पर उसके पास सोने की कीमती छड़ें, जंजीरें और रत्न जड़ित अंगूठियाँ पायी गईं । ये वस्तुतः नेपोलियन द्वारा जमा किए खजाने की ही एक अंश थीं । शेष खजाना कहाँ गया इसकी पूछताछ उसी किसान से की गई तो पता चला कि उसके पूर्वजों के समय हुए बँटवारे का आधा भाग पड़ौस के गाँव में रहने वाले मुखा नामक व्यक्ति के बाप-दादों को मिला था । शायद उसके पास जमा हो । मुखा ने बताया कि महायुद्ध के समय जब गाँव खाली करना पड़ा था तो वह चीजों को एक लोहे के सन्दूक में बन्द करके जमीन में गाढ़ गया था, पर जब लड़ाई बन्द होने पर वापस लौटा तब किसी ने उन सन्दूकों को ही गायब कर दिया था । उसका अनुमान है कि—इस धन की जानकारी केवल पैट्रिक को थी और उसे गायब करने में उसी का हाथ हो सकता है ।

पैट्रिक के साथ पुलिस ने कड़ाई की तो उसने बात स्वीकार कर ली । साथ ही यह भी कहा उसे सुरक्षित रखने में झंझट की बात सोचकर एक पुलिस अफसर को सस्ते मूल्य में बेच दिया था और नगदी ले ली थी । वह पुलिस अफसर कहाँ है ? यह ढूँढ़ा गया तो पता चला कि वह रूस छोड़कर वारसा में जा बसा है । अब वह ढूँढ़-खोज यहीं रुकी पड़ी है आगे का पता नहीं चल रहा है । यदि वह सारी दौलत मिल सके तो रूसी सरकार के दरिद्र पार हो सकते हैं ।

एक तीसरा खजाना और भी इन दिनों चर्चा का विषय बना हुआ है । स्पेन का शासन अठारहवीं सदी के प्रथम चरण में अमेरिका के एक बड़े भाग पर था । उन उपनिवेशों से शोषित सम्पत्ति निरन्तर स्पेन भेजी जाती रही थी । २४ जुलाई, १७१५ को पन्द्रह बड़े जहाज अरबों रुपयों की सम्पत्ति लेकर हवान बन्दरगाह से स्पेन के लिए रवाना हुए

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

थे । उनमें १६६ पेटियाँ सोने-चाँदी तथा रत्नों और मोतियों से भरी हुई थीं । एक सप्ताह की यात्रा ही वे कर पाये होंगे कि भयानक समुद्री तूफान ने उन्हें धरदबोचा और प्रायः सभी जहाज गहरे पानी में डूब गए । हजारों यात्रियों और नाविकों के अतिरिक्त यह सम्पदा भी समुद्र के पेट में समा गई । मुट्ठी भर मल्लाह ही किसी प्रकार किनारे पर लगे, उन्हीं से दुर्घटना का विवरण विदित हो सका ।

स्पेन के गोताखोर उस सम्पत्ति को निकालने का प्रयत्न करते रहे । एक बार कुछ कहने लायक धन निकाला भी गया, पर उसे हमला करके समुद्री डाकू लूटकर ले गए । तब से खोजियों का उत्साह ढीला पड़ गया है, फिर भी लहरों के साथ बहकर आने वाले वे सिक्के जो तट की मिट्टी में सने हुए मिल जाते हैं अभी भी उस लालच को सजीव रखे रहते हैं और प्रयत्नों को मर-मरकर जीवित होने की प्रेरणा देते रहते हैं ।

वैगनर और कैल्सो नामक दो साहसी गोताखोरों ने आठ व्यक्तियों की एक व्यावसायिक संस्था बनाकर नये सिरे से प्रयत्न किए हैं । फ्लोरिया राज्य की सरकार ने अपने क्षेत्र में दबे इस खजाने को निकालने का अधिकार इस कम्पनी को इस शर्त पर दे दिया है कि उपलब्ध धन का चौथाई भाग सरकार को मिलेगा । सन् १९६७ में प्रथम बार इस स्थान से एक बड़ी राशि निकाली गई उसमें ६० हजार सोने के सिक्के थे । तब से अब तक और भी बहुत कुछ निकाला गया है, इससे प्रायः १०० किलो वजन की ४२ चाँदी की सिल्लियाँ और छोटी ६ किलो वजन की २० सिल्लियाँ मुख्य हैं, जो आभूषण तथा उपकरण निकलते हैं उन्हें संग्रहालयों द्वारा अच्छे मूल्य पर खरीद लिया जाता है । जो इन वर्षों में ढूँढ़ निकाला गया है उसकी तुलना में जो दबा पड़ा है, जो ढूँढ़ा जाना है वह सैकड़ों गुना अधिक है ।

एक चौथी घटना और है, उन दिनों अमेरिका नया-नया ही बसा था । लगभग सारे ही यूरोपियन देश वहाँ से दौलत लूट लाने के लिए धमाचौकड़ी मचाये हुए थे । उन्हीं में से एक दुस्साहसी का नाम था जान एवान मार्टिन । उसने सुन रखा था कि ब्राजील के सघन जंगलों में ढेरों सोने की खदानें बिखरी पड़ी हैं और लोग उन्हें खोद-खोदकर अनाप-शनाप दौलत बटोर रहे हैं । वह दुस्साहसी युवक भी यह लोभ संवरण न कर सका और उधर ही चल पड़ा । मार्टिन पिछले दस वर्षों से समुद्री सेना में काम कर चुका था, उसने बहुत देश देखे और तरह-तरह के अनुभव बंटोरे थे । जिन्दगी मौत की लड़ाई से वह कितनी ही बार जूझा था । उससे वह डरा नहीं वरन् दूना दुस्साहसी हो गया । ब्राजील से सोना बटोरने का साहस उसने अपने संग्रहीत जोखिम उठाने का आदत के अनुसार ही किया था ।

गोरे लोग ब्राजील के दक्षिणी इलाके में ही खोज करने जाते थे । उत्तरी इलाके में जाने की उनकी हिम्मत नहीं पड़ती था । यद्यपि सोना उधर ही अधिक था । कारण यह थी कि उत्तरी इलाके में जो आदिवासी बसे हुए थे, वे बहुत ही खूंखार थे । उधर से गुजरने वालों को पग-पग पर उनके आक्रमण का सामना करना पड़ता था और अधिकतर मौत के शिकार ही बन जाते थे । इसलिए उस क्षेत्र में कोई विरले ही जा पाये थे । मार्टिन ने उसी इलाके में जाने का निश्चय किया । आदिवासियों की आदतों और उनसे बचने की तरकीबों का अध्ययन करने के बाद उसने यही फैसला किया कि वह उनसे आँखमिचौनी खेलता हुआ अपना प्रयोजन पूरा करेगा । सो वह थोड़े से कुली साथ लेकर उत्तरी ब्राजील के सघन वनों में घुस ही पड़ा ।

कई हफ्ते इधर-उधर टक्करें खाते फिरने के बाद आखिर उसने वह क्षेत्र ढूँढ़ ही लिया जहाँ सोने की छोटी-छोटी खदानें बिखरी पड़ी थीं । अपने छोटे से साधनों से वह सोना समेटने लगा और दो महीने के भीतर ही उसने प्रायः साठ पौंड सोना इकट्ठा कर लिया । अधिक इकट्ठा करते जाने की अपेक्षा उसने यह अच्छा समझा कि जो कमाया है उसे कहीं सुरक्षित स्थान तक पहुँचा दें और तब आगे की खोज करें ।

पीठ पर साठ पौंड सोने के भारी थैले लादकर वह धीरे-धीरे चल पड़ा । रास्ते में यूरटोरी कोका के एक छोटे से होटल में उसे सुस्ताना पड़ा । इस होटल का मालिक ग्लवेज जाना-माना बदमाश था । दिखाने को तो वह कई जगह होटल, शराबखाने और जुआघर चलाता था, पर उसका असली काम सोने की खानें कुरेदने वालों का पता लगाना और उन पर हमला करके मौत के घाट उतार देना था । इस प्रकार उसने करोड़ों डालर की कमाई की थी और सैकड़ों आदमी इस तरह खत्म किए थे कि उनकी लाश का पता भी न चले और लोग यह तक पता न लगा सकें कि आखिर उनका हुआ क्या ?

मार्टिन की पीठ पर लदे हुए सोने को उसने भाँप लिया और अपनी पिस्तौल लेकर उसका पीछा करने लगा । ग्लवेज के बारे में मार्टिन ने सुन रखा था अब उसे अपनी मौत की जीती-जागती छाया अब तब दबोचती हुई दिखाई देने लगी । अब क्या हो सकता है ? इस पर उसने बारीकी से सोचा और निर्णय लिया कि वह सामने वाली कातर यानी कबीले के लोगों के गाँव में घुस पड़ेगा और उन्हें चकमा देकर किसी प्रकार अपनी जान बचायेगा । उसकी योजना फिट बैठी ।

शिकार हाथ से जाता देखकर ग्लवेज ने गोली चलाई । गोली की आवाज सुनकर कबाइली लोगों का पूरा गाँव अपने हथियार लेकर आ डटा और चारों ओर से घेरकर उसका सिर काट लिया । इसी बीच अवसर पाकर मार्टिन भाग खड़ा हुआ । पर भागने के लिए आवश्यक था कि वह वजन हल्का करे और सोने का मोह छोड़े निदान वह ऐसी झाड़ों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

में सोना छिपा कर अपने डेरे पर चल पड़ा । जिसे ढूँढ़ सकना फिर कभी उसके लिए सम्भव नहीं हुआ । यद्यपि वह कई बार बड़ी तैयारी के साथ उस स्थान तक पहुँचने का प्रयत्न करता रहा ।

इसके बाद भी मार्टिन ने कई प्रयत्न किए । कई बार कुछ पाया भी पर वह ऐसे ही किसी न किसी तरह हाथ से निकल जाता रहा । निढाल होकर वह अमेरिका छोड़कर आस्ट्रेलिया जा बसा और वहीं किसी तरह दिन काटने लगा ।

उपर्युक्त चार खजानों की चर्चा पढ़कर हममें से कोई भी यह सोच सकता है कि ऐसा ही कोई दबा, गढ़ा खजाना हमारे हाथ लग जाता तो कितना अच्छा होता । सचमुच इस धरती के गर्भ में दबे हुए ऐसे खजानों की संख्या हजारों-लाखों की संख्या में होगी जिन्हें मनुष्य ने किसी प्रकार उपार्जित तो किया, पर वह उनका न तो उपयोग कर सका और न उपभोग । उसने उसे फिर कभी के लिए संग्रह किया और जरूरत मन्दों की नजर से छिपाकर कहीं दबा छिपाकर रख दिया । जिस समय के लिए उसे संग्रह किया गया था, वह आया ही नहीं और वह सारी दौड़धूप जमीन के नीचे दबी रह गई । अब वह किसी के काम नहीं आ रही है । इससे पूर्व कम से कम किसी के काम तो आ रही थी । अब उसका काम एक ही है कि हर किसी के मन में मुफ्तखोरी का लालच उत्पन्न करे । जैसा कि इस दिशा में सोचने वाले किसी भी व्यक्ति के मन में उठता है, उठ सकता है ।

मनुष्य द्वारा संग्रहीत और छिपाये हुए खजानों की अपेक्षा प्रकृति के गर्भ में स्वाभाविक खजाना भी करोड़ों गुनी मात्रा में दबा पड़ा है । अन्न की वनस्पतियों के तथा विविध खनिज पदार्थों के रूप में हम उसे आदिकाल से प्राप्त कर रहे हैं और अन्त काल तक प्राप्त करते रहेंगे । पुरुषार्थी और अध्यवसायी इसे पहले भी प्राप्त करते रहे हैं और अब भी प्राप्त कर रहे हैं । प्रकृति का यह द्वार हर किसी के लिए खुला पड़ा है वह मुक्त हस्त से सबको अपना भण्डार लुटा रही है । बिना ईर्ष्या और लालच उत्पन्न किए इसे प्रत्येक पराक्रमी सरलतापूर्वक प्राप्त कर सकता है । अथक श्रम और सघन मनोयोग के उपकरण लेकर जहाँ भी खोदना आरम्भ किया जायेगा वहीं से सफलताओं के रत्न राशि ही उपलब्ध होने लगेगी ।

मनुष्य का अपना व्यक्तित्व भी किसी बड़े रत्न भण्डार से कम नहीं है । उसमें इच्छा शक्ति, बुद्धि शक्ति और क्रिया शक्ति के रूप में वे तिजोरियाँ भरी पड़ी हैं जिनकी तुलना संसार की समस्त सम्पदाओं के सम्मिलित रूप से भी नहीं की जा सकतीं । 'पराई पत्तल का भात मीठा और घर की खीर बेतुकी' लगने की बुरी आदत ही हमें दूसरों के कमाये छिपाये खजाने पाने के लिए ललचाती है जबकि उनसे कहीं अधिक बहुमूल्य राशि अपने में ही दबी हुई सड़ रही है ।

मुफ्त का धन जिन्होंने भी पाया उन्हें दूसरों की ईर्ष्या का भाजन तथा आक्रमण का शिकार होना पड़ा है । उसने अपने पीछे बुरी प्रेरणा और परम्परा छोड़ी है । हम भी यदि उसी मार्ग पर चाहे तो उन्हीं दुःखद परिणामों की पुनरावृत्ति होगी जो अब तक होती रही है । खजाना पाने का मन हो तो उसे व्यक्तित्व के समग्र निर्माण और उपलब्ध क्षमता के श्रेष्ठतम उपयोग के उपाय द्वारा ही ढूँढ़ने और पाने का निश्चय करना चाहिए । इस मार्ग पर चलते हुए इतनी बढ़ी-चढ़ी सफलताएँ मिल सकती हैं, जिसकी खजाना ढूँढ़ने वाले कल्पना भी नहीं कर सकते ।

अभिशप्त स्वर्ण भण्डार, जो अभी किसी के हाथ लगे नहीं

अकस्मात विपुल मात्रा में धन सम्पत्ति प्राप्त कर लेने का लालच में न जाने कितने व्यक्ति अब तक भारी प्रयत्न करते रहे हैं और हताश होते रहे हैं । इनमें से सफलता तो कदाचित ही किसी को मिली होगी, पर पश्चात्ताप अनेकों को करना पड़ा है ।

संसार की स्वस्थ अर्थ परम्परा यह है कि हर व्यक्ति कठोर शारीरिक और मानसिक श्रम करे और उस न्यायोपार्जित धन से अपनी उचित आवश्यकताएँ पूरी करने के अतिरिक्त लोक मंगल के लिए भी अनुदान प्रस्तुत करे । ऐसा समुचित दृष्टिकोण जिनका नहीं होता उन्हें किसी भी प्रकार विपुल मात्रा में धन कमाने की उतावली रहती है ऐसे ही लोगों से स्वर्ण खोजियों की मनोरंजक गाथाएँ भी जुड़ी हैं ।

ब्राजील की भूतकालीन राजधानी 'रियो-डि-डिनरो' के सम्बन्ध में पुरातत्व अभिलेखागार में सन् १७३४ का एक दस्तावेज रखा है । क्रमांक है इसका—५१२ इसका गम्भीर अध्ययन करने के लिए संसार के कौने-कौने में इतिहासज्ञ, भूगोलवेत्ता, पुरातत्व विशारद और वैज्ञानिक आते रहते हैं और इस निष्कर्ष पर पहुँचने का प्रयत्न करते हैं कि इस दस्तावेज में लिखे तथ्यों से लाभ किस प्रकार उठाया जा सकता है ।

इन दस्तावेजों में एक हिमाच्छादित पर्वत शृंखला के निकटवर्ती सघन वन में ऐसे ध्वंसावशेष नगर की चर्चा है जहाँ किसी समय सम्भवतः ब्राजील की राजधानी रही होगी और कोई सभ्य जाति शासन करती रही होगी । समय ने उस छोटी नगरी को खण्डहर बना दिया, किन्तु वहाँ अभी उन ध्वंसावशेषों में बहुमूल्य स्वर्ण खण्ड बिखरे पड़े हैं । अनुमान है कि खुदाई करने पर वहाँ सोने और चाँदी के बहुमूल्य भण्डार मिल सकते हैं । इस स्वर्ण भण्डार के सम्बन्ध में जो समय-समय पर खोजें होती रही हैं उन्हीं का क्रमबद्ध इतिहास उपर्युक्त दस्तावेजों में सांकेतिक भाषा में लिखा हुआ है । इन अभिलेखों के आधार पर नियत स्थान तक पहुँच

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सकना किस प्रकार सम्भव हो सकता है, ये विश्वस्त भी है या अविश्वस्त इसी उधेड़ बुन में अन्वेषकों की खोज-बीन जारी रहती है ।

दस्तावेजों के अनुसार वोलोविया और ब्राजील की सीमा के निकट हिमाच्छादित पर्वत माला के समीप एक विस्तृत पठार है । यह ऊँची पर्वत श्रृंखलाएँ सदा घने कुहासे से ढकी रहती हैं । इसलिए हवाई उड़ानों से केवल पहाड़ी चोटियाँ ही दिखती हैं । नीचे क्या है यह देखना उस धुन्ध के कारण कठिन हो जाता है ।

विवरण के अनुसार अठारहवीं सदी के प्रारम्भ में एक खोजी दल को इस क्षेत्र में जमीन में दबे हुए बहुमूल्य खजाने का आभास मिला और वह पता लगाने के लिए चला । उस क्षेत्र के सघन वनों में प्रवेश करने के कई महीनों के बाद उन्होंने उस क्षेत्र में कुछ ध्वंसावशेष देखे जो सम्भवतः वहाँ बसी किसी छोटी सी सुसम्पन्न नगरी के थे जो भूकम्प आदि दैवी विपत्ति के कारण नष्ट हो गई थीं । इसी के खण्डहरों में जहाँ-तहाँ सोने के सिक्के, सलाखें, बर्तन, शस्त्र आदि बिखरे पड़े थे । इससे प्रतीत होता था कि यहाँ सोने का कितना बाहुल्य है । यदि मलबे की खुदाई की जा सके तो इसके नीचे करोड़ों की सम्पत्ति निकल सकती है ।

खोजी दल आवश्यक जानकारी एकत्रित करके वापस लौटा तो उसने सहायता के लिए अपने साथियों को आने के लिए सन्देश भेजा । परागुआसु नदी के तट पर बसे आदिवासियों के हाथों उन्होंने एक पत्र भेजा । जिसमें उस स्वर्ण नगरी का नक्शा, वहाँ की सम्पदा, पहुँचने का मार्ग आदि के बारे में सांकेतिक भाषा में बहुत कुछ लिखा है । यही है वह ५१२ नम्बर का दस्तावेज जिसकी खोजबीन में भारी माथा-पच्ची की जाती रहती है ।

पत्र यथा स्थान पहुँच गया । सहायक दल पहुँचा भी पर उसे अग्रगामी खोजी टीम का कुछ पता नहीं चल सका । सम्भवतः वे उस क्षेत्र के बर्बर नर भक्षियों के शिकार हो गए होंगे । सहायक निराश वापस लौट आये पर उन्होंने उस जानकारी को दूसरों के लिए उपलब्ध कर दिया । तब से लेकर अब तक उस स्थान की खोज के लिए बहुत प्रयत्न हुए हैं पर एक में भी सफलता नहीं मिली ।

विश्व प्रसिद्ध ब्रिटिश अन्वेषी कर्नल पी. एच. फासेट अपने दो साथियों के साथ २० अप्रैल सन् १९२५ को उस खोज में निकले । रास्ते में वे अपने सन्देश सूचना केन्द्र तक पहुँचाते रहे । २९ मई को भेजा हुआ उनका अन्तिम समाचार मिला, उस दिन वे 'हेड हार्स केम्प' तक पहुँच गए थे । इसके बाद उनके समाचार आने बन्द हो गए और फिर कुछ पता न चल सका कि आगे उन पर क्या बीती ।

इसके कुछ समय बाद कमाण्डर जार्ज ड्योट की अध्यक्षता में एक खोजी दल रवाना हुआ । वह फोसेट के अन्तिम सन्देश वाले स्थान से आगे बढ़कर किलीस्यू नदी को पार करता हुआ एक आदिवासी गाँव पहुँचा जहाँ कलापलिस कबीले के लोग रहते थे । इतने समाचार आने के बाद उनका विवरण भी नहीं मिल सका । शायद किसी विपत्ति ने उनका भी अन्त कर दिया ।

इसके बाद १९४७ में लन्दन के एक प्रोफेसर ऐरिक हेमण्ड उस खोज पर निकले उन्होंने दस्तावेजों का अत्यन्त बारीकी से अध्ययन किया और ब्राजील के नक्शों के साथ उसकी संगति बिठाई । इसके उपरान्त वे हवाई जहाज, जीप, मोटर साइकिल आदि का सहारा जहाँ तक मिला वहाँ तक सवारी से और बाद में पैदल चल पड़े । वे इस वन प्रदेश में ईसाई धर्म के प्रचार में निरत पादरी जोनायन वेल्स से मिले । उन्होंने पिस्कोटो गाँव में एक छोटा गिरजा बना रखा था और बारह वर्ष से यह प्रयत्न कर रहे थे कि उस क्षेत्र के नरभक्षी आदिवासियों को ईसाई धर्म में दीक्षित करायें । पादरी ने इस विचित्र खोजी हैमण्ड की बात ध्यान से सुनी तो पर सलाह यही दी कि वह इस झंझट में न पड़ कर वापस लौट जाय, क्योंकि इस क्षेत्र के नरभक्षी आदिवासी असाधारण रूप से बर्बर हैं । एक बार ब्राजील सरकार ने उनसे निबटने के लिए २५० सैनिकों की सशस्त्र टुकड़ी भेजी थी पर आदिवासियों ने उनमें से एक को भी जीवित नहीं लौटने दिया । आगे यहाँ का वन प्रदेश इतना जटिल है कि उसमें घुसकर लौटना सम्भव नहीं रहता ।

बहुत समझाने-बुझाने पर भी हैमण्ड ने पीछे कदम हटाना स्वीकार न किया और, आगे ही बढ़ने के लिए चल पड़े । चलते समय पादरी ने उन्हें १३ पालतू कबूतर दिए और कहा एक-एक करके वह उनके पैरों में पत्र बाँधकर उन तक सन्देश पहुँचाते रहें ताकि इस जानकारी को शोध केन्द्र तक पहुँचाया जाता रहे । हैरण्ड ने सम्भवतः हर कबूतर के साथ आवश्यक सन्देश भेजे होंगे पर छटे, ग्यारहवें और तेरहवें नम्बर के तीन कबूतर ही पहुँचे और शेष दस कहीं रास्ते में ही भटक या मर गए । इन तीन कबूतरों द्वारा आये पत्रों से पता चला कि हैरण्ड उस खण्डहर प्रेत नगरी तक पहुँच गया है और वहाँ पहुँचने का रास्ता उसने बारहवें नम्बर के कबूतर के द्वारा भेजा है । पर दुर्भाग्य से वह कबूतर ही गायब हो गया और उस जानकारी पर पर्दा ही पड़ा रह गया । अन्तिम कबूतर के हाथों भेजे पत्र में हैरण्ड ने लिखा मैं बीमार पड़ गया हूँ, मेरा मृत्युकाल निकट है पर सन्तोष इस बात का है कि फार्सट द्वारा आरम्भ की गई खोज का अन्तिम चरण मैंने पूरा कर लिया । अब मैं शान्तिपूर्वक मर सकूँगा । इस क्षेत्र के स्वर्ण खण्डहरों का अस्तित्व काल्पनिक नहीं है ? पादरी ने वह तीनों पत्र उपयुक्त समय तक भेज दिए और दस्तावेजों की श्रृंखला में वे भी एक कड़ी बन गए ।

तेरहवें कबूतर के सन्देश को आधार मानकर पादरी जोनायन ने स्वयं बहुत खोजबीन की कि हैरण्ड का कुछ पता चल सके पर उन्हें सफलता न मिली । इसके बाद ब्राजील सरकार से अनुरोध करके हवाई जहाज से उस क्षेत्र के फोटो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

खिंचवाये पर उससे भी कुछ पता न चल सका कि वह ध्वंसावशेष आखिर कहाँ पर अवस्थित है ।

ऐसी ही एक और दूसरी घटना है—सन् १८३२ में पायीलीन वीवर नामक व्यक्ति की । कहीं से सुराग लगा कि एक समीपवर्ती सघन वन प्रदेश की पर्वत शृंखला में न केवल सोने का भण्डार गढ़ा दबा है वरन् रात्रि के समय वहाँ स्वर्ण कणों की वर्षा भी होती है । तथ्य का पता लगाने के लिए वह उस स्थान पर पहुँचा, खेमा गाढ़ा । रात्रि के समय उसने सचमुच स्वर्ण कणों की वर्षा होते देखी । सोना बटोरने के बाद जैसे ही उसने सिर ऊपर उठाया तो देखा कि पहाड़ की चोटी पर खड़ीं पंक्तिबद्ध छायाएँ खिलखिला कर हँस रही हैं मानो उसकी मूर्खता पर व्यंग्य कर रही हैं । डरे हुए पायीलीन ने पीछे मुड़कर देखा तो उसका खेमा गायब था । इस घटना ने उसे बुरी तरह डरा दिया और वह सोना छोड़ कर किसी प्रकार वापस लौट कर घर आया । ठीक इसी से मिलता-जुलता अनुभव मैक्सिको निवासी एक युवक 'डानपैरेलटा' भी कर चुका था । उसके साथी तो इसी कुचक्र में अपनी जान गँवा बैठे थे पर वह किसी प्रकार बच निकलने में सफल हो गया था । दोनों ने अपने सम्पर्क क्षेत्र के जो अनुभव सुनाये उनसे इस बात की पुष्टि होती रही कि उस क्षेत्र में सोना दबा पड़ा है और उन पहाड़ की चोटियों पर स्वर्ण कणों की फुहारें लावे की तरह ऊपर उछलती हैं ।

स्टेनले फर्नड को किसी प्रकार एक डायरी जेम्स नामक व्यक्ति की लिखी हुई हाथ लगी, जिसमें अमेरिका स्थित एक खूनी पहाड़ का वर्णन था जहाँ सोना दबा ही नहीं पड़ा है वरन् बरसता भी है वहाँ पहुँचने वाले के लिए अपना प्राण बचा सकना कठिन हो जाता है । डायरी लेखक उसी खोज में अपने प्राण गँवा बैठा था पर इससे पूर्व उसने उस स्वर्ण के बारे में बहुत-सी जानकारियाँ लिख दी थीं ताकि किसी को वह मिल जाय तो उस सम्पदा से कोई अधिक सुयोग्य व्यक्ति लाभ उठा सके । स्टेनले की खोज यात्रा का मूल आधार यह डायरी ही थी । ओरेजाना के अपेची स्टेशन पर उतर कर उसने अपने साथी बेंजामिन फरेश के साथ सौ मील लम्बे निस्तब्ध वनों को पार करने की तैयारी की ।

तीसरे पहर तीन बजे वे उस पर्वत के निकट पहुँच गए । एक घण्टे ठहरने के लिए उपयुक्त स्थान की तलाश में घूमते रहे । इतने में ही एक विपत्ति बरसी । फरेश के सिर में कहीं से आकर दो गोलियाँ लगीं और वह खून से लथपथ होकर वहीं गिर पड़ा । स्टेनले भाग तो आया पर वह पागल हो गया । उसी के द्वारा बताया गया सनसनी-खेज विवरण मैक्सिको और अमेरिका के समाचार पत्रों ने सविस्तार पूर्वक छापा । यह मामला अमेरिका खुफिया पुलिस के एफ. वी. आई. को सौंपा गया । उसी क्षेत्र में इसी प्रकार एक और व्यक्ति राबर्ट मेरे को कुछ ही समय पूर्व गोली लगी थी । घटनाक्रम की समानता के कारण पुलिस के लिए यह एक आवश्यक विषय बन गया, पर १३ वर्षों तक लगातार खोज करने के बाद भी कुछ पता न चल सका और मामला दाखिल दफ्तर कर दिया गया ।

उस क्षेत्र में इसी प्रयोजन के लिए निकले हुए लोगों की हत्याओं के अनेक मामले सामने आये हैं । ये सभी स्वर्ण खोज में गए थे और किसी न किसी प्रकार वहीं मर कर समाप्त हो गए । लवरेन रोअलो इस प्रकार मरा पाया गया था मानो किसी ने बिना घात पहुँचाये उसके शरीर का एक-एक बूँद रक्त चूस लिया हो । एक आस्ट्रेलियाई युवक फ्रेजहेरक का नर कंकाल इसी क्षेत्र में पाया गया । इस प्रकार की हत्याओं का सम्बन्ध उस क्षेत्र के आदिवासियों के साथ जोड़ने की कोशिश की गई पर इस सन्देह की भी न तो कोई तुक बैठी और न पुष्टि हो सकी । रहस्य ज्यों का त्यों अभी तक बना हुआ है ।

वाल्ज नामक युवक ने इस दिशा में अधिक गहरी खोज करने और अधिक बुद्धिमत्तापूर्ण कदम उठाने का निश्चय किया । उसने सोचा उस क्षेत्र के आदिवासियों को उस स्वर्ण भण्डार का पता हो सकता है और उस क्षेत्र में देर तक टिकने के लिए उनकी सहायता से सुविधा हो सकती है । उसके लिए वह उस क्षेत्र के आदिवासियों के साथ घनिष्ठता बढ़ाने में लग गया और उस प्रयास में सफलता उसे अपेची कबीले की एक आदिवासी युवती के साथ शादी कर लेने के रूप में मिली । बस जाने पर वह सोना समेटने और भेजने का काम तो करता रहा पर आदिवासियों से उद्गम की अधिक जानकारी प्राप्त करने में सफलता नहीं मिली । पीछे यह क्षेत्र 'गोडालूप हिल्गो संधि के अन्तर्गत मैक्सिको द्वारा अमेरिका को हस्तान्तरित कर दिया गया ।

सन् १८५० से लेकर अब तक सैकड़ों व्यक्ति उस क्षेत्र में स्वर्ण सम्पदा का पता लगाने गए हैं, उनमें से अधिकांश तो अपने प्राण गँवा बैठे जो वापस लौटे वे मन के अरमान मन में ही दबाये खाली हाथ आये । प्रथम महायुद्ध के पराक्रमी योद्धा बरेनी ने इस क्षेत्र में अधिक दिन रह कर अधिक गहरी खोजें कीं । उसका मत था कि इस क्षेत्र में सम्पत्ति है । इसका रहस्य अपेची कबीले के आदिवासी जानते हैं पर वे किसी को उस क्षेत्र में आने नहीं देते और तान्त्रिक पुरोहितों की आज्ञानुसार आगुन्तकों की हत्या कर देते हैं ।

उस क्षेत्र में सबसे अधिक दिन वाल्ज ही रहा और उसने ही अधिक खोजबीन भी की । अपने विवरणों के संदर्भ में उसने एक ऐसी सुरंग का उल्लेख किया है जिसमें सैकड़ों नर कंकाल भरे पड़े थे । सम्भवतः इस क्षेत्र में घुसने के पश्चात् यहाँ के रखवाले तूफानी देवताओं का अथवा तान्त्रिकों का शिकार उन्हें बनना पड़ा होगा । इस खोजबीन में वाल्ज का एक साथी जैकब मारा गया और वह अधूरी जानकारी लेकर ही अपनी जान बचाता हुआ वापस लौट आया ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दोनों की घटनाएँ यह बताती हैं कि यदि कहीं स्वर्ण राशि छिपी भी है तो प्रकृति यह नहीं चाहती है कि वह सहज ही किसी ऐसे व्यक्ति के हाथ लग जाय जो मुफ्तखोरी का लाभ उठाकर गुलछर्रे उड़ाये और घर परिवार वालों को हरामी, व्यसनी और अहंकारी बनाने के लिए कुबेर जैसी सम्पदा छोड़े । इसलिए लगता है प्रकृति ऐसे प्रयत्नों को असफल बनाने के लिए कुछ न कुछ अड़ंगा खड़ा कर देती है और उन्हें सफल नहीं होने देती ।

पदार्थों से जुड़े हुए अभिशाप

पदार्थों में गुण तो हैं पर चेतना नहीं । इतने पर भी वे चेतना के सम्पर्क से प्रभावित अवश्य होते हैं । इसलिए किन्हीं प्राणवान व्यक्तियों के उपयोग से आयी हुई वस्तुओं का विशेष महत्त्व माना और प्रभाव देखा जाता है ।

तीर्थों की, स्मारकों की संरचना प्रायः ऐसे स्थानों पर हुई है, जहाँ किन्हीं महाप्राणों द्वारा कोई प्रेरणा कार्य सम्पन्न किए गए । वहाँ असाधारण शक्ति का उद्गम उभरते देखा तो मूक-दर्शियों ने उस उभार में अनेकों को लाभान्वित करने की दृष्टि से ऐसी व्यवस्था बना दी जिसके सहारे जो भी उस सम्पर्क में आयें, नई चेतना प्राप्त करें ।

ऋषियों के आश्रमों में गाय, सिंह एक घाट पानी पीते थे । यह उस क्षेत्र में फैले हुए प्राण प्रवाह का ही चमत्कार था । महामानव के उपयोग में आयी हुई वस्तुओं में भी ऐसा प्रभाव पाया गया है, जो उसका सान्निध्य लाभ लें । वे भी कुछ विशेष अनुदान प्राप्त करें ।

एल्थिस अमेरिका के एक बैंक में पुलिस ने एक अँगूठी सुरक्षा पूर्वक जमा की है । यह बिकाऊ है । मूल्य जो भी तय हो जाय, पर देनी उसी को है जो इसे समझ-बूझकर ले और परिणामों की जिम्मेदारी स्वयं उठाये ।

इस अँगूठी के पीछे एक अजीब इतिहास जुड़ा हुआ है । वह अभिशप्त है । जहाँ भी गई, जिसके पास रही उसका पट्टाढार करके हटी । ऐसे अनेक चक्रव्यूहों में भ्रमण करते-करते वह अन्ततः पुलिस के कब्जे में जा पहुँची । उस विभाग की समझ में भी न आया कि इसका आखिर क्या किया जाय, कारण कि पुलिस के कब्जे में जो भी वस्तु पहुँचे वह कायदे से उसके मालिक को लौटाई जाय । मालिक के न मिलने पर वह नीलाम ही की जा सकती है । भले ही मूल्य कुछ भी क्यों न मिले । जो राशि मिलेगी वह सरकारी खजाने में जमा होगी ।

चर्चित अँगूठी चाँदी की बनी है । उसमें कुछ नगीने जड़े हैं । कहा नहीं जा सकता कि वे असली है या नकली । पर देखने में सुन्दर लगती है और मन पहनने को करता है । जिसने भी उसे पाया-खरीदा, पहना या पास रखा, उस पर मुसीबत ही टूटी । यहाँ तक कि अधिकार कर्त्ताओं में से कइयों को अपनी जानें गँवानी पड़ी ।

आरम्भ में वह सहज ही खरीदी और पहनी गई । पर जब उसके अभिशप्त होने की चर्चा फैली तो कई साहसी लोगों ने इसे अन्ध-विश्वास कहा और उस बहम को मिथ्या साबित करने के लिए हिम्मत के साथ खरीदा और डराने वाली चर्चा करने वालों को डरपोक, भ्रमग्रस्त सिद्ध करने के लिए जान-बूझकर पहना । इस इरादे को उन्होंने छिपाया भी नहीं वरन् घोषणा पूर्वक धारण किया और कहा—देखें, उनका किस प्रकार क्या कुछ बिगड़ता है ।

इसे आश्चर्य ही कहना चाहिए कि अँगूठी ने किसी को भी नहीं बख्शा । विश्वासी और अन्ध-विश्वासी दोनों पर उसने समान रूप से गाज गिराई । जितनों ने उससे सम्पर्क साधा वे आगे या पीछे हाथ मलते और पछताते ही रह गए । जब तक वे अपनी भूल समझते तब तक वे इस दुनिया से ही उठ गए ।

इस दुर्भाग्यपूर्ण घटनाक्रम की शृंखला इस प्रकार है—सन् १९२० में वह सेनफ्रांसिस्को के एक जौहरी के शो केस में रखी थी । उसे भी कोई अनजान आदमी सस्ते मोल में बेच गया था । जौहरी उसी दिन से बीमार रहने लगा था । बहुत दिन बाद होलीवुड के प्रसिद्ध अभिनेता रूडोल्फ वैले जौहरी के दुकान से उसे खरीद लाये । उन्हें वह न जाने क्यों बहुत पसन्द आयी थी अभिनेता की सभी फिल्मे 'हिट' होती थीं । पर उस अँगूठी को पहनकर जो फिल्म बनी थी, उसका भट्टा ही बैठ गया । बेचारे को दो वर्ष तक किसी कम्पनी ने कौड़ी मोल न पूछा । अँगूठी उतार कर जब बक्से में बन्द कर दी तब कहीं नये काम मिले ।

यह अँगूठी फिर रूडोल्फ ने पहनी । एक बार वह एक दावत में गया था । अचानक पेट में भयानक दर्द उठा और अस्पताल में पहुँचते-पहुँचते उसकी मृत्यु हो गई । रूडोल्फ ने मरने से पूर्व वह अँगूठी अपनी प्रेयसी पोला नैग्री को उपहार में दी थी । वह भी हॉलीवुड में अभिनेत्री थी । पहनने के कुछ ही दिन बाद वह भी बीमार पड़ी, कुछ ही दिन में वह भी मर गई । बीमारी किसी डॉक्टर के समझ में न आयी ।

पोला मरने से पूर्व वह अँगूठी अपने दूसरे प्रेमी संगीतज्ञ कोलवो को दे गई । उसे पहने एक सप्ताह भी न बीता था कि मोटर दुर्घटना में अचानक ही मर गया ।

दुर्घटना के उपरान्त यह अँगूठी उसके संगीतज्ञ के मित्र कोंसिलों ने ले ली । आशंकावश कुछ दिन तो उसने उसे ताले में बन्द रखा पर जब कोई अनहोनी बात नहीं हुई तो उसे पहन लिया । एक सड़क दुर्घटना में उसकी भी मृत्यु हो गई ।

इसके बाद वह कोंसिलों के भाई डेल के हाथ पड़ी । वहाँ अन्य सामान के साथ में उसे चोर चुरा ले गए । चोर की रास्ते में पुलिस से मुठभेड़ हो गई और वह गोली का निशाना बन गया ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

यह अँगूठी पुलिस के कब्जे में चली गई । भेद खुला और इतिहास प्रकाश में आया । संयोगवश रूडोल्फ पर एक फिल्म बनी । उसका पार्ट अदा करना था हैरी नामक अभिनेता को । पुलिस से जमानत पर माँगकर वह अँगूठी लायी गई और फिल्माने के लिए उसे हैरी को पहनाया गया । हैरी भी बीमार पड़ा और अस्पताल में दाखिल होने के बाद जीवित लौटकर घर नहीं आया ।

अन्ततः अँगूठी फिर पुलिस के पास वापस पहुँच गई । उसे नीलाम किया जाना है । कई बार पत्रों में विज्ञापन छपाये गए पर कोई खरीदने न पहुँचा तो पुलिस ने उसे थाने में भी नहीं रखा और बैंक के लॉकर में जमा कर दिया ।

कब कोई खरीददार आये और वह बैंक से बाहर निकले । इसकी न जाने कितने दिन प्रतीक्षा चलती रहेगी ।

जिस प्रकार अच्छे प्रभाव से वस्तुएँ अनुप्राणित होती हैं, उसी प्रकार बुरे लोगों के बुरे कृत्यों के सम्पर्क वाली वस्तुएँ भी उस माहौल से प्रभावित होती हैं और उपयोग करने वालों का अहित करती हैं । कई मृतात्मा की भी ऐसी ही मनोभूमि होती है कि वे अपनी उद्विग्नता, दुष्टता जिस वस्तु पर उड़ेल देती हैं वह अभिशप्त बनकर जहाँ भी जाती है संकट पैदा करती है । उनका जो भी उपयोग करता है दुःख पाता है । ऐसा विवरण एक अभिशप्त अँगूठी के बारे में उपलब्ध है ।

घटना स्पेन के विलमेज नगर की है । उस मकान में एक वृद्धा अपने परिवार सहित रहती हैं और सामान्य गृहस्थी जैसा जीवन गुजारती थी ।

सन् १९७१ का अगस्त का महीना था । दोपहर का भोजन बनाकर वृद्धा उठ ही रही थी कि उसे सामने के दीवार पर एक आकृति दिखाई पड़ी । भित्ति चित्र जैसी देखने में वह कुरूप और डरावनी थी । यह अचानक किसने बनायी ? क्योंकर बन गई । इस असमंजस में देर तक रहने की अपेक्षा वृद्धा ने यहा उपयुक्त समझा कि उसे गीले कपड़े से पोंछकर साफ कर दिया जाय । उसने वैसा ही किया । पर यह क्या, चित्र और भी अधिक साफ हो गया, मानो किसी ने धुँधले शीशे को साफ करके दृश्य और भी अधिक स्पष्ट कर दिया हो ।

तस्वीर को मिटाने के कई प्रयत्न किए, पर सफलता न मिली । निदान के लिए वृद्धा ने मकान मालकिन को सूचना दी । उसने भी इस आश्चर्य को देखा और मिटाने के प्रयत्न सफल न होते देखकर दीवार का पलस्तर उखाड़कर इसे नये सिरे से करा देने की व्यवस्था की । वैसा हो भी गया । पर यह क्या ? तस्वीर और भी दूने आकार की बन गई । न केवल आकार बढ़ा वरन् डरावनापन भी उभरने लगा । लगता था तस्वीर रो रही है और पीड़ा से आक्रान्त होकर छटपटाती भी है । मकान मालकिन भी इस अद्‌भुत प्रसंग से उद्विग्न थी । उसने इन अंकनों को मिटाने के और भी उपाय किए पर सफल न हुए । एक के स्थान पर कई आकृतियाँ उभरने लगीं । उनमें से कुछ पुरुषों की थीं, कुछ महिलाओं की ।

वृद्धा ने डरकर घर खाली कर दिया और वह अन्यत्र चली गई । मालकिन को डर था कि कहीं उसका घर भुतहा होकर बदनाम न हो जाय—यह बला कहीं उसके परिवार को तंग न करने लगे ।

चर्चा फैली । निकतवर्ती शहर कार्डोवा तक समाचार पहुँचा । कौतूहलवश अनेकों दर्शक आने लगे । पत्रकारों की मण्डली आयी । वे भी स्तब्ध थे । आकृतियाँ हिलने-डुलने तक लगी थीं । अपने दुःखी स्थिति का परिचय देने वाले मनोभाव प्रकट कर रही थीं। पत्रकारों ने वैज्ञानिकों, विशेषज्ञों और अधिकारियों तक खबर पहुँचाई, तो वे सब इस अचीज की वास्तविकता परखने के लिए दौड़ पड़े, जो सम्भव था, सो जाँचा और जाना गया पर कुछ हाथ न लगा ।

दीवारों पर अंकित होने वाली तस्वीरों का हिलना-डुलना देखकर विशेषज्ञों ने ऐसे यन्त्र लगाये जिनसे यदि वे कुछ वार्त्ता भी करती हों तो उसका आभास मिल सके । खुले कानों से तो वैसा कुछ सुनाई पड़ता नहीं था । यन्त्र रात्रि भर रखे रहे । सवेरे उन्हें ध्वनि बढ़ाकर सुना गया तो रोने, चीत्कार करने, गिड़गिड़ाने जैसी ध्वनियाँ थीं । वे कुछ कहते भी थे पर जो कह रहे थे वह समझा नहीं जा सका ।

निदान यह सोचा गयो कि पलस्तर उखाड़ने से परिवर्तन नहीं होता तो फर्श उखाड़कर देखा जाय, शायद उसके नीचे कोई कारण छिपा हो । खोदने पर एक दर्जन नर मुण्ड मिले । उनकी अवधि मध्ययुग के सामन्त काल की थी । अनुमान लगाया गया कि किन्हीं बर्बरों ने कोई नृशंस हत्याकाण्ड करके उनकी लाशें इस स्थान पर गाड़ दी होंगी । मुण्ड वहाँ से बीन कर अन्यत्र पहुँचाये गए । उन्हें विधिवत् दफनाया गया, इसके बाद दीवारों पर आकृतियाँ बननी बन्द हो गईं । सम्भवतः अन्त्येष्टि संस्कार-पिण्डदान-तर्पण के रूप में भारतीय परम्परा इसी कारण ऋषियों ने चलाई थी ।

पिलखुआ (मेरठ) के एक आर्य समाजी परिवार में ऐसा प्रेत उपद्रव देखा गया जिस पर सभी स्तब्ध थे । अचानक सबके सामने कपड़ों के सामान में आग जलने लगना और कीमती वस्तुओं का देखते-देखते भस्म हो जाना ऐसी घटना है, जिसकी सच्चाई को दर्शकों की भारी भीड़ ने बार-बार दिनदहाड़े देखा है । बन्द बक्सों के भीतर आग जलने लगना—पहने हुए कपड़ों में से शीलें टूटना, ऐसा दृश्य है जिस पर सहसा विश्वास नहीं किया जा सकता, पर वैसा होते अविश्वासियों और शंकाशीलों ने भी देखा है । उसके पीछे किसी की खुराफात तो नहीं हैं, इसके सभी सुरागों पर गुप्तचर विभाग ने हर सन्देह को ध्यान में रखा है पर जाना कुछ न जा सका ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मरण के उपरान्त भी जीवन की सत्ता बनी रहती है । न केवल सत्ता का अस्तित्व रहता है वरन् सम्बन्धियों के साथ किसी न किसी प्रकार सम्बन्ध बनाये रहने की भी उसकी इच्छा रहती है । कभी यह सम्बन्ध उदार होते हैं, उनमें सहयोग दृष्टिगोचर होता है, कभी आक्रोश प्रतिशोध । आमतौर से उद्विन आत्माएँ अपने विक्षोभ का डरावने या हानिकारक प्रसंगों के रूप में प्रकट करती हैं । हत्या, अपघात, दुर्घटना आदि से जो बिना पूर्व तैयारी का मरण होता है उसमें उद्विग्न रहने के अधिक सम्भावनाएँ रहती हैं और ऐसी आत्माएँ ही प्रायः दूसरों को डराती या त्रास देती जाती हैं । इसके विपरीत सन्तुष्ट, उदात्त और भावनाशील आत्माओं को सम्पर्क और सौजन्य एवं सहयोग ही प्रदान करता देखा गया है ।

अभिशप्त राजमहल

विश्व में ऐसे अनेकों स्थान, राजमहल, वस्तुएँ अथवा उपकरण हैं जिनके बारे में कहा जाता है कि वे अभिशप्त हैं । जिसने भी उन्हें अपने अधिकार क्षेत्र में करना और उपयोग में लाना चाहा या जिसके पास भी वे रहे उन्हें न केवल सुख शान्ति से वंचित होना पड़ा । वरन् कितनों को तो अपने जीवन से भी हाथ धोना पड़ा ।

एड्रीआटिक समुद्रतट पर ट्रिएस्ट नगर में खड़ा भव्य राजमहल—"केसल ऑफ मिरामर" एक ऐसा ही शापित राजभवन है जिसका निर्माण प्रथम विश्वयुद्ध से पूर्व आस्ट्रिया के तत्कालीन सम्राट ने अपने भाई आर्क ड्यूक मेकिस मिलेन के लिए करवाया था, किन्तु न जाने उस स्थान के साथ कौन से ऐसे चिर संस्कार जुड़े थे कि इस राजाप्रासाद में जिस किसी ने निवास किया वह चैन से न रह पाया और अन्ततः बेमौत मारा गया ।

सर्वप्रथम 'केसल ऑफ मिरामर' नामक इस भव्य भवन में ऑस्ट्रिया के सम्राट फ्रान्स जोसेफ ने अपने छोटे भाई आर्कड्यूक मेकिस को एक विशेष समारोह के साथ प्रवेश कराया था । इस अवसर पर नगर के गणमान्य लोग भी उपस्थित थे । राजमहल को देखकर सभी ने उसके स्थापत्य कला की भूरि-भूरि प्रशंसा की । उसमें हर प्रकार की सुख-सुविधा के साधन उपलब्ध थे, किन्तु मेकिस मिलेन को वहाँ एक दिन के लिए भी चैन नहीं मिला । वह रात को उसमें सो नहीं सकता था । हर समय एक प्रकार की बेचैनी रहती थी। स्वास्थ्य दिन-प्रतिदिन गिरता जा रहा था । जिसे देखकर सम्राट ने उसे स्थान परिवर्तन की सलाह दी और मेक्सिको उपनिवेश का सम्राट बनाकर भेजा, किन्तु वहाँ पहुँचने से पूर्व किसी अज्ञात व्यक्ति ने मार्ग में ही उसकी हत्या कर दी ।

उत्तराधिकार में वह राजाप्रासाद मेकिस मिलेन की भगिनी एलिजाबेथ को मिला । वह बड़े शान शौक से उसमें रहने आयी । अपने साथ, राजकुमार रूडोल्फ को भी लेती आयी । वहाँ आने के कुछ ही दिनों पश्चात् किसी ने रूडोल्फ एवं उसकी पत्नी की भी हत्या कर दी जिसके दुःख से एलिजाबेथ टूट-सी गई । वह उदास और पागल-सी रहने लगी । छठे वर्ष उसका भी किसी ने अन्त कर दिया ।

अब तो लोगों में इस राजमहल के अभिशप्त होने की आशंका होने लगी, लेकिन रूडोल्फ का चचेरा भाई आर्क ड्यूक फ्रान्सिस फरनान्डिस इस प्रकार की आशंकाओं को निर्मूल एवं अन्धविश्वास मानता था । वह उसमें निवास करने लगा । दुर्भाग्यवश ट्रिएस्ट नगर के समीप ही सर्जावा नामक ग्राम से प्रथम विश्वयुद्ध का सूत्रपात इसकी हत्या से ही आरम्भ हुआ इस युद्ध में राजमहल के सभी कर्मचारियों को मौत के घाट उतार दिया गया । साथ ही आस्ट्रिया पर इटली का आधिपत्य हो गया । मुसोलिनी ने इस राजभवन में अपने वफादार सैनिक अधिकारी ड्यूक एओस्टा को रहने के लिए भेजा । पर उसी बेचैनी और अदृश्य भय ने उसे भी दबोच लिया जिसके चंगुल में फंसकर अब तक कई राजकुमारों और कर्मचारियों ने अपनी जान गँवाई थी । विवश होकर मुसोलिनी को उसे इथियोपिया का वाइसराय बनाकर विदेश भेजना पड़ा, लेकिन दुर्भाग्य ने उसका पीछा यहाँ भी नहीं छोड़ा । रास्ते में ही ब्रिटिश ईस्ट अफ्रीका में वह युद्ध कैदी बना लिया गया और अमानवीय यातनाएँ देने के बाद उसे गोली मार दी गई ।

'केसल ऑफ मिरामर' नामक इस राजभवन में न केवल निवास करने वाले व्यक्तियों को अकाल मृत्यु का वरण करना पड़ा वरन् जिस राज्य के अधीनस्थ वह रहा उसे भी भारी क्षति उठानी पड़ी । द्वितीय विश्व युद्ध में यह नगर इटली से छिन गया और अमेरिका के आधिपत्य में आ गया । उस राजमहल में दो सैनिक अधिकारियों-मेजर जनरल पियन्ट मुर एवं बिरनिस को निवास करने का आदेश मिला और वे रहने भी लगे, किन्तु कुछ ही महीनों पश्चात् लोगों ने देखा कि दोनों की लाशें क्षत-विक्षत अवस्था में पड़ी थीं, किसी ने उनकी हत्या कर दी थी ।

केवल अर्ध शताब्दी जितने स्वल्प समय में ही इस राजमहल से जुड़े कितने ही शासनाध्यक्षों, अधिकारियों एवं कर्मचारियों को समय से पूर्व ही अकाल मृत्यु का वरण करना पड़ा । कितनों की हत्या की गई । आस्ट्रिया, इटली, अमेरिका आदि भिन्न-भिन्न राष्ट्रों के शासक इसमें रहे पर कोई भी उसमें चैन से रहने नहीं पाया । भय का केन्द्र बना हुआ जनशून्य वह भव्य राजभवन आज के बुद्धिजीवियों एवं वैज्ञानिकों के लिए एक चुनौती बना हुआ है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शापितों का प्यार जो शताब्दियों से अक्षुण्य है

मथुरा के कारीगरों ने हवा के दबाव का सिद्धान्त ध्यान में रखते हुए एक मनोरंजक खिलौना बनाया है "वासुदेव प्याला" । यह एक प्याला है जिसके बीचों बीच श्रीकृष्ण के पिता वासुदेव अपने छोटे बच्चे को गोदी में लिए बैठे हैं । इस प्याले में पानी भर दिया जाता है । आश्चर्य की बात यह है कि जब पानी श्रीकृष्ण के पैरों को छू लेता है तो वह सारे का सारा पानी एक छेद में होकर (हवा के दबाव से) नीचे चला जाता है ।

ठीक इसी प्रकार का एक मूर्तिमान जादू प्रकृति ने एक जगह खड़ा कर दिया है उसका खेल तो ऐसा ही है, एक उसका कारण उपर्युक्त खिलौने जैसा नहीं वरन् एक अजूबा है । उसका कारण तलाश करते-करते वैज्ञानिकों को मुद्दतें बीत गईं, पर अभी तक कोई सन्तोषजनक समाधान नहीं मिल सका कि आखिर ऐसा किस सिद्धान्त के आधार पर होता है ।

ऐविग्नॉन के समीप एक छोटा-सा ठण्डे पानी का कुण्ड है इसे 'बाडक्लुर्स का स्रोत कहते हैं । एक मझोली नदी सोरग्यू के तट पर करीब ६०० फुट ऊँची एक चट्टान है, समीप ही एक शान्त ज्वालामुखी विवर है । उसी के नीचे एक पतली-सी जलधारा का स्रोत रिसता रहता है । ठण्डे पानी का कुण्ड उसी पानी के जमा होते रहने के कारण बन जाता है ।

यह एक साधारण बात हुई कि असाधारण, बात यह है कि मार्च के महीनों में सोते की रिसते रहने वाली जलधारा अत्यन्त उग्र हो उठती है और इतने जोर से उफनती है कि एक भयंकर फब्बारा जैसा फूटता दिखाई पड़ता है । यह पानी इतना अधिक और इतना तीव्र होता है कि सोरग्यू नदी में बाढ़ जैसी स्थिति पैदा हो जाती है । यह क्रम प्रायः पाँच सप्ताह रहता है । पानी बढ़ता रहता है और बढ़ते-बढ़ते वहाँ तक पहुँचता है जहाँ दूसरे तट पर अंजीर का पेड़ उगा हुआ है । अंजीर की जड़ों तक पहुँचने के बाद पानी अपने आप घटना शुरू हो जाता है और फिर कुछ ही दिनों में रिसने वाली वही सोते की पतली धार वहाँ दिखाई पड़ती है ।

सरकारी रिकार्ड के अनुसार पानी हर साल नियत तारीख को ही बढ़ता उतरता है । उसमें अन्तर नहीं पड़ता । एक अनुमान होता था कि यह वर्षा का जल है जो पहाड़ों द्वारा सोख लिए जाने के बाद अन्य स्रोतों की तरह बहता है । कसौटी पर वह बात भी सही नहीं निकलती । कारण कि अन्य स्रोत वर्षा की अधिकता से अधिक पानी फैंकते हैं और सूखा पड़ने पर साल में भी सूखे रहते हैं, पर इस सोते के बारे में वह बात भी नही है । पानी न बरसने की साल में भी मार्च में उसका उसी वेग से उफनना और अंजीर की जड़ तक पहुँचना यथाक्रम जारी रहता है । ज्वालामुखी के विवरों में और सोते की तलहटी में बहुत गहराई तक खोजबीन करली गई है, पर इस अद्‌भुत प्रकृति लीला का कारण किसी की भी समझ में नहीं आया है ।

इस सोते के बारे में एक लोक-कथा है कि अंजीर कोई यक्ष और जलधारा कोई परी है जो शाप वश इस स्थिति में पड़े हैं । पर दोनों का प्रेम अभी भी यथावत मौजूद है । जलधारा अपने प्रेमी की जड़ें सींचने के लिए प्राणप्रण से प्रयत्न करती है और उफन कर फब्बारे की तरह उस तक पहुँचती है । अंजीर उस सूखे चट्टान पर साल भर तक इस आशा पर हरा बना रहता है कि अगला वर्ष फिर आयेगा और उसे अपनी प्रेमिका से मिलने का फिर अवसर मिलेगा भले ही वह चन्द दिनों क्यों न हो ।

एक शापित अप्सरा और यक्ष हैं जो जड़ योनि में रहकर भी अपने असीम प्यार को शताब्दियों से अक्षुण्ण रखे हुए हैं । एक हम हैं जिनका प्यार, मात्र शोषण और विश्वासघात की दुरभि सन्धि बनकर रह रहा है ।

उद्धत अहंकार की परिणति-विनाश

शाहजहाँ अपने समय का सुविख्यात प्रतिभावान व्यक्ति था । उसका पराक्रम, कौशल और व्यक्तित्व तीनों ही बढ़े-चढ़े थे । उसने अपना राज्य बढ़ाया और कई तरह की सफलताएँ पाईं । पर यहाँ चूक गया कि उपार्जित सम्पदाओं एवं सफलताओं का उपयोग कहाँ किया जाय ? "उसने अपने बैठने के लिए तख्त ताऊस" बनवाया और अपनी बीबी की कब्र के रूप में ताजमहल खड़ा किया । यह दोनों ही रचनाएँ अद्‌भुत थीं ।

शाहजहाँ का रत्न प्रेम प्रसिद्ध है । उसने विश्व प्रसिद्ध कोहिनूर हीरा भी ग्वालियर नरेश से प्राप्त किया था । मोर की आकृति का एक बहुमूल्य सिंहासन भी उसने अपने बैठने के लिए बनवाया था, जिसका नाम "तख्त ताऊस" था । उसकी लागत उस समय के १२ करोड़ रुपया थी । यह स्वर्णजड़ित था । बहुमूल्य रत्नों से वह जड़ा था । पन्ना के बने पाँच खम्भे उसमें थे । शाहजहाँ के बाद वह औरंगजेब के पास और अन्त में मुहम्मद शाह के कब्जे में रहा ।

ईरान के बादशाह नादिरशाह ने काबुल जीत लेने के बाद भारत पर चढ़ाई कर दी और मुहम्मदशाह को परास्त कर दिया । जो विपुल सम्पत्ति नादिरशाह ने लूटी उसमें तख्त ताऊस भी शामिल था । इसे लेकर वह वापस लौट ही रहा था कि कुर्दों ने उसकी हत्या कर दी और लूटी हुई सम्पत्ति भी उन लुटेरों ने आपस में बाँट ली । तख्त ताऊस के भी टुकड़े करके बाँट लिए । बहुत समय बाद नादिरशाह के वंशजों ने लुटेरों को पकड़ा और लूटी हुई सम्पत्ति उगलवा ली जिसमें तख्त ताऊस के टुकड़े भी शामिल थे । उन्हें

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जोड़-मोड़कर फिर लगभग पहले जैसा ही उसे बना लिया गया यद्यपि बहुत से बहुमूल्य रत्न उसमें से गायब हो चुके थे ।

अठारहवीं सदी में वह सिंहासन अंग्रेजों के हाथ लगा । उसे पूर्ण गोपनीयता के साथ लंका के त्रिकोणमाली बन्दरगाह से जलयान पर चढ़ाकर इंग्लैण्ड रवाना किया गया । वह जहाज सही सलामत इंग्लैण्ड नहीं पहुँच सका । ४ अगस्त, १७८२ को पूर्वी अफ्रीका के समुद्र में चट्टानों से टकराकर वह डूब गया, साथ ही वह उन दिनों बीस करोड़ रुपया कीमत का आँका गया सिंहासन भी ।

इसके बाद समुद्र तल से उसे निकालने के अनेकों प्रयत्न किए जाते रहे । १९६२ में कुछ रत्न, सोना और अवशेष प्राप्त कर लिए गए । इससे यह अनुमान तो लग गया कि वह किस क्षेत्र में डूबा पड़ा है, पर तब से अनेक प्रयत्न करने पर भी उसका पूरा पता कहीं भी नहीं चला वह रत्न राशि अभी भी कहीं अविज्ञात स्थान में डूबी पड़ी है ।

डूबा हुआ "तख्त ताऊस" अपनी मौन भाषा में अभी भी प्रतिभाशाली व्यक्तियों को एक सन्देश देता है कि आप लोग बड़े समझे जाते और समर्थ होते हुए भी इतनी अदूरदर्शिता का परिचय क्यों देते हैं ? जिसमें प्रतिभा, कला और सम्पदा का मात्र दुरुपयोग ही बन पड़ता है ।

जितना धन, श्रम और कौशल "तख्त ताऊस" के बनाने में लगाया गया उसका प्रयोजन इतना भर था कि एक राजा की बढ़ी-चढ़ी सफलता का, बढ़े-चढ़े भाग्यवान का अहंकारी प्रदर्शन कर सके । यह क्यों भुला दिया गया कि इस उद्धत अहंकार की पूर्ति में जितना श्रम लगाया गया था उतने से सार्वजनिक प्रगति के अनेकों उपयोगी कार्य चल सकते थे और उससे पीड़ा और पतन के निवारण में जनजीवन के परिष्कार में भारी मदद मिल सकती थी ।

उद्धत अहंकारी प्रदर्शन ने अनेकों के मस्तिष्क लालच से खराब कर दिए । उसे झपटने के लिए कितनों ने आक्रमण किए और कितनों को अपना विनाश देखना पड़ा । अनावश्यक मात्रा में संग्रहीत सम्पत्ति दुष्प्रवृत्तियों की कितनी बड़ी शृंखला रखकर खड़ी करती है और अन्त में किस प्रकार नष्ट होती है इसका जीता जागता उदाहरण "तख्त ताऊस" है ।

आस्तिक बनें : ताकि सुखी रहें

ईश्वरीय सत्ता की विधि व्यवस्था अथवा नियम मर्यादाओं का एकमेव उद्देश्य इस विराट् ब्रह्माण्ड का सुचारु संचालन है । प्रत्येक प्राणी और प्रत्येक घटक अपना जीवनक्रम निर्बाध रूप से चला सके इसीलिए विभिन्न नियम मर्यादाएँ हैं । इन नियम मर्यादाओं को ईश्वर का अधिनायकत्व नहीं उसकी परम उदारता ही कहा जाना चाहिए, क्योंकि यदि ये नियम मर्यादाएँ न रहें तो सृष्टि ब्रह्माण्ड पर मत्स्यन्याय के अनुसार शक्तिशाली का अस्तित्व ही बचा रहे । उन नियम व्यवस्थाओं के साथ परमात्मा की उदारता इस बात में भी देखी जा सकती है कि जीवनोपयोगी सारी आवश्यकताएँ आसानी से पूरी होती रहें, ऐसे साधन सृष्टि में सर्वत्र सहज सुलभ हैं ।

जीवन की उपयोगी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए इस सृष्टि में ऐसी व्यवस्था है कि सरलतापूर्वक पूरी हो जाया करें । साँस लिए बिना एक क्षण भी काम नहीं चल सकता सो प्राण वायु प्रचुर मात्रा में सर्वत्र मौजूद है । जल का उसके बाद नम्बर आता है वह भी थोड़ा प्रयत्न करने पर हर जगह मिल जाता है । अन्न की आवश्यकता उसके पश्चात् है, इसके लिए प्रयत्न भी करना पड़ता है और खर्च भी, इसी क्रम से जो आवश्यकताएँ अपेक्षाकृत हल्की होती जाती हैं उन्हीं का मिलना श्रम साध्य होता जाता है ।

जीवन धारण की प्रक्रिया को देखिए । भ्रूण अति दुर्बल होता है उसे वातानुकूलित और सर्व सुविधा सम्पन्न निवास चाहिए । माता का गर्भाशय उसके लिए अतिशय सुविधापूर्ण है । उतने दुर्बल और अपूर्ण प्राणी के लिए इतना साधन सम्पन्न स्थान संसार में अन्यत्र कहीं हो ही नहीं सकता । सो हर प्राणी को सरलतापूर्वक मिल जाता है । जितने समय भ्रूण पकता नहीं उतने समय निवास की वहाँ समुचित व्यवस्था है । यदि यह सब सरलतापूर्वक उपलब्ध न हुआ होता तो प्राणी की सर्वप्रथम और सर्वोपरि महत्त्व की आवश्यकता पूरी न हो सकने के कारण जन्म ही सम्भव न होता ।

इसके पश्चात् जन्म लेने के बाद सुपाच्य सुसन्तुलित आहार की आवश्यकता होती है और एक सहायक संरक्षक सेवक की जो उस नवजात असमर्थ शिशु की केवल सारी आवश्यकता पूरी करे वरन् उसे पर्याप्त स्नेह प्रदान कर मानसिक विकास भी सम्भव बनाये । इन सारी आवश्यकताओं को माता पूरा करती है । नवजात शिशु के लिए माता का दूध ही अमृत है । इससे बढ़िया खुराक इस धरती पर हो ही नहीं सकती । माता से बढ़कर स्नेही, सहायक, संरक्षक, सेवक भला कहाँ मिलेगा ? अरक्षित, असमर्थ और असहाय शिशु के लिए पालन-पोषण की आवश्यकता पूरी होना अनिवार्य है । इसके बिना जीवन धारण किए रहना कठिन है ।

जन्म तो हो जाय पर माता की सहायता न मिले तो बालक की कैसी दुर्गति होती है इसकी कल्पना कठिन नहीं । अन्य प्राणियों की अपेक्षा मनुष्य के बालक को तो और भी अधिक मात्रा में गहरी तथा लम्बे समय तक चलने वाली मातृ सहायता अपेक्षित होती है, पर प्रकृति से ऐसा प्रबन्ध सभी प्राणियों के लिए किया हुआ है । असली माता तो प्रकृति ही है । प्राणी को संसार में भेजती है तो उसकी व्यवस्थाएँ भी आदि से अन्त तक बनाना उसी का काम है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बालक बड़ा होता है । उसकी कोमलता सभी का जी हुलसाती है और उससे आकर्षित होकर हर कोई उस कोमल बालक की सहायता करना चाहता है । असमर्थता की पूर्ति इस उदार सहायता से पूरी होती है । दूसरों के बालक पास खेलते हों तो जी हुलसता है । उन्हें गोदी में लेने की, खिलाने की, प्यार करने की और पास में कुछ वस्तु देने की हो तो देने को जी करता है । माता-पिता, परिवार, पड़ौस, सम्बन्धी स्वजनों से इस प्रकार की सद्भावनाएँ और सहायताएँ उसे सर्वत्र मिलती हैं । गुरुजनों का अनुग्रह रहता है । अध्यापक उनसे क्षमा और उदारता का व्यवहार करते हैं । बड़ों के साथ जैसा बराबरी का, कठोरता का व्यवहार किया जाता है, वैसा कोई गुरुजन उनसे नहीं करता । बड़े आदमी की गलती, अशिष्टता पर क्रोध आता है और दंड प्रतिशोध के कदम उठते हैं पर बालकों की पग-पग पर होने वाली गलतियाँ ऐसे ही हँसी, मुस्कराहट के बीच भुला दी जाती हैं । कई बार तो उन गलतियों में रस भी लिया जाता है ।

सरकार बाल-कल्याण विभाग चलाती है प्रौढ़ कल्याण—वृद्ध कल्याण की उपेक्षा करके ही उसका ध्यान बालकों पर रहता है । सामाजिक संस्थाएँ भी इधर ही बहुत ध्यान देती हैं । सबकी स्वाभाविक सहानुभूति बालकों की ओर अनायास ही खिंची रहना, प्रकृति की उसी प्रेरणा के अनुसार है जिसमें उन्हें अपनी अविकसित स्थिति में सब ओर से अधिक सहायता एवं उदारता अपेक्षित हैं । यह सारी व्यवस्था मनुष्य एक स्वभाव में पहले से ही सम्मिलित है । मनुष्य ही क्यों अन्य प्राणियों में भी अपने ही नहीं विराने बच्चों के प्रति अधिक कोमल और उदार भावनाएँ पायी जाती हैं ।

जीवन विकास की क्रमिक यात्रा में यौवन आता है । पितृत्व की इच्छा कामवासना के रूप में जगती है । जोड़ी मिलाने की आवश्यकता अनुभव होती है । समयानुसार यह भी सहज ही बन जाता है । एक ऐसी उमंग मँहक उठती है जिसमें हर नर-मादा के अपने विपरीत लिंग वाले प्राणी को खोजने और आकर्षित करने में सफल हो जाता है । मनुष्य को तो बहुत सुविधाएँ प्राप्त हैं । बिना साधन, सुविधा वाले कीड़े-मकोड़ें, पतंगे, जलचर, पशु, पक्षी सभी को काम तृप्ति का अवसर मिलता है और सभी गर्भाधान प्रक्रिया पूरी कर लेते हैं । मनुष्यों के लिए भी यह सुविधा बन ही जाती है । प्रकृति की दयालुता को देखिए कि वास्तविक आवश्यकताओं का समाधान कितनी सरलता और सुन्दरता के साथ जुटाती है । इसके लिए उसने अपनी क्रम व्यवस्था बड़ी सरल और सुविधाजनक बनाकर रखी है और उसका प्रवाह अनादि काल से बहता चला आता है ।

रोग निरोध की जन्मजात शक्ति रक्त कणों में विद्यमान रहती है । असली चिकित्सक भीतर मौजूद है । बाहर के डॉक्टर तो उन भीतर चिकित्सकों की थोड़ी सहायता भर कर देते हैं । मरण से पूर्व मूर्छा आ जाती है और वह अति कष्ट साध्य ऑपरेशन बिना कष्ट के सम्पन्न हो जाता है । मरने के बाद शरीर की दुर्गति न हो इसलिए उसे खाने के लिए कृमि उसी में तत्काल पैदा हो जाते हैं, कौए, गिद्ध, चील, स्यार, कुत्ते आदि प्राणी मृत शरीर की गन्ध पाते ही उस गन्दगी को साफ करने दौड़ पड़ते हैं । सभ्य समाज में तो मुर्दे को जलाने, गाढ़ने या बहाने की प्रथा पहले से ही प्रचलित है । जीवन विकास का यह अन्तिम अध्याय भी ठीक तरह सम्पन्न हो जाय इसके लिए प्रकृति ने समुचित व्यवस्था जुटा कर रखी है ।

जो आवश्यक है वह यहाँ प्रचुर मात्रा में विद्यमान है और स्वल्प प्रयत्न से मिल सकता है, जो अनावश्यक है हानिकारक है उसी का मिलना दुर्लभ है । फल उपयोगी हैं वे सरलता से प्रचुर मात्रा में मिलते हैं । विष अनावश्यक और हानिकारक है, उसे प्राप्त करना हो तो बहुत ढूँढ़ खोज करनी पड़ेगी, पैसा और श्रम खर्च करना पड़ेगा तब यत्र-तत्र किंचित मात्रा में विष मिलेगा । गाय, घोड़ा, भेड़, बकरी आदि उपयोगी पशु सरलतापूर्वक उपलब्ध हैं, पर सिंह, व्याघ्र, चीता, रीछ आदि के दर्शन दुर्लभ हैं । वे दूरवर्ती सघन वनों में स्वल्प संख्या में ही होते हैं । अनुपयोगिता के कारण प्रकृति ने उन्हें ऐसी ही स्थिति में रखा है । उनकी सन्तान भी अधिक नहीं बढ़ती जबकि उपयोगी पशु अपनी संख्या वृद्धि निरन्तर करते रहते हैं ।

प्राणियों के लिए उपयोगी वनस्पति—घास, पौधे, वृक्ष स्वतः ही उगते-बढ़ते और फलते-फूलते रहते हैं । इसके अतिरिक्त और भी जो कुछ आवश्यक है, वह इस संसार में सरलतापूर्वक उपलब्ध है । दिन में सूरज की रोशनी जलती है, रात को चन्द्रमा चमकता है ताकि हमें अन्धकार में न भटकना पड़े । प्रकृति माता के इन अनुदानों को कहाँ तक गिनाया जाय जीवन की हर आवश्यकता और सुविधा को जुटाने में उसने कहीं कुछ भी कसर नहीं छोड़ी है ।

यह अनुदान शरीर यात्रा तक ही सीमित नहीं है । सामाजिक, मानसिक, आर्थिक और नैतिक क्षेत्र में भी ऐसी विधि-व्यवस्था इस विश्व में विद्यमान है कि प्रगति की हर उचित आवश्यकता सरलतापूर्वक पूरी हो सके । इच्छा हो और पूरा करने के लिए पुरुषार्थ जुटा दिया जाय तो लगभग हर उचित आवश्यकता पूरी होती चली जायेगी उसमें कोई बड़ा विघ्न न पड़ेगा । विघ्न यदि हैं भी तो वे बाहर नहीं भीतर हैं । मनुष्य के अपने दोष दुर्गुण ही उसकी प्रगति में बाधक होते हैं । आलस्य, प्रमाद, अनियमितता, असंयम, आवेश, अति स्वार्थ जैसे कारण ही असफलताओं और विपत्तियों के कारण बनते हैं अन्यथा सद्गुण, सत्कर्म और सत्स्वभाव से मनोभूमि परिष्कृत कर लेने पर परिष्कृत

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दृष्टिकोण और व्यवस्थित क्रिया-कलाप के आधार पर किसी भी क्षेत्र में सफलता पायी जा सकती है । किसी भी क्षेत्र में साधन सम्पन्न बना जा सकता है । जिस दिशा में भी कदम उठाले उधर ही प्रगति हो सकती है ।

बाधक बाह्य जगत नहीं, अवरोध प्रकृति गत नहीं स्वनिर्मित हैं और ऐसे हैं कि यदि उनकी हानियों को समझ लिया जाय और निरस्त करने के लिए कटिबद्ध हो जाया जाय तो उनका एक क्षण भर भी ठहरना नहीं हो सकता । आन्तरिक शत्रु लगते भर बलिष्ठ हैं, संकल्प शक्ति की एक चिन्गारी उन्हें नष्ट करके रख सकती है आज घोर दुर्गुणी दीखने वाला व्यक्ति कल पूर्ण परिष्कृत मनुष्य बन सकता है । व्यक्तित्व के विकास और मनःक्षेत्र से सम्बन्धित समस्त क्षेत्रों की प्रगति के लिए प्रकृति ने अपने सभी द्वार खुले रखे हैं । कोई चलना ही न चाहे या उल्टा चले तो इसमें विश्व क्रम का नहीं आदमी के अपने औंधें और ओंछे कर्तृत्व का ही दोष है । सुधारना चाहें तो उसका परिमार्जन भी अति सरल है । इतिहास में अगणित उदाहरण ऐसे विद्यमान हैं जिनमें संकल्प बल से अपनी हेय स्थिति को आमूलचूल परिवर्तन करके लोगों ने आशाजनक और आश्चर्यजनक परिवर्तन प्रस्तुत किए हैं ।

आत्मिक क्षेत्र सबसे ऊँचा है । उसमें भी प्रगति के लिए द्वार खुला पड़ा है और उसमें प्रवेश करना अति सरल है । ईश्वर हमारे चारों ओर घिरा हुआ है । हमारे रोम-रोम में समाया हुआ है । मछली के भीतर और बाहर पानी ही पानी भरा रहता है अपने अन्दर और बाहर ब्रह्म चेतना का भरा पूरा समुद्र ही लहलहा रहा है, जो इतना समीप हो, इतना प्रचुर हो, उसे प्राप्त करने में क्या कठिनाई हो सकती ।

पिता और पुत्र का सामीप्य दुरूह कैसे हो सकता है ? माता और बच्चे के सान्निध्य में अवरोध क्या होगा ? भाई से भाई बिछुड़ा रहे इसकी क्या आवश्यकता ? पति और पत्नी के मिलने में क्या बाधा ? प्रकृतिगत अवरोध इस प्रसंग में रत्ती भर भी बाधक नहीं है । आत्मा और परमात्मा के बीच पिता, पुत्र, मात, शिशु, भाई-भाई और पति-पत्नी के लौकिक रिश्तों की अपेक्षा भी कहीं अधिक सघन और स्वच्छ और प्रखर सम्बन्ध है । सांसारिक रिश्तों में दो स्वतन्त्र व्यक्तित्वों की बात रहने से कुछ भिन्नता और पृथकता भी रह सकती है पर आत्मा और परमात्मा तो अंश और अंशी हैं । उनमें तो अग्नि और चिन्गारी जैसा ही भेद है । कमल और उसकी पंखुड़ियों की—पदार्थ और उसके परमाणु की, सूर्य और उसकी किरणों की पृथकता आँकी भले ही जाय वस्तुतः वे तदात्म्य हैं । ईश्वर और जीव इतने ही घनिष्ठ हैं—आत्मा और परमात्मा के बीच ऐसा कोई व्यवधान नहीं है जिसे दूर करने के लिए, चिन्तित, दुखी, खिन्न, उद्विग्न या हताश होने की आवश्यकता हो । यह मिलन प्रक्रिया अति सरल है । ईश्वर प्राप्ति से अधिक आसान कार्य और दूसरा कोई हो ही नहीं सकता ।

शरीर और मन परस्पर ओत-प्रोत हैं । शरीर और मन को मिलाने के लिए कुछ बड़ा काम नहीं करना पड़ता । करना पड़ता है तो इतना ही कि जो नशा पी लिया था, उसे उतर जाने दिया जाय और फिर दुबारा न पिया जाय । नशा पीने से ही शरीर और मन का सम्बन्ध लड़खड़ा जाता है । चलना, करना, बोलना, सोचना अनियन्त्रित हो जाने की उपहासास्पद स्थिति इसलिए बनती है कि नशे की खुमारी शरीर और मन का सम्बन्ध गड़बड़ा देती है । दोनों अलग-अलग दिशा में जाते—स्वच्छन्द विचरते दीखते हैं । उसमें दोष नशे का है, परित्याग कर दिया जाय तो शरीर और मन की एकसूत्रता—एकरूपता में कोई अन्तर दिखाई न पड़ेगा । ईश्वर और जीव के बीच में माया का नशा ही प्रधान रूप से बाधक है । यह पर्दा हटा कि उसकी आड़ में बैठे भगवान के दर्शन हुए । बाधक तो यह झीना सा पर्दा ही है ।

निद्राग्रस्त हो जाने पर शरीर और मन के सम्बन्ध गड़बड़ा जाते हैं । शरीर कहीं पड़ा रहता है, मन कहीं घूमता है । विलगाव को देखकर यह नहीं मान लेना चाहिए कि शरीर और मन दूर हैं । असम्बद्ध हैं । इन्हें इकट्ठा करने के लिए कोई बहुत भारी प्रयास पुरुषार्थ करना पड़ेगा । दोनों की एकता अविच्छिन्न है । अन्तर तो निद्रा ने डाला है । शरीर को मृतक जैसा उसी ने बनाया है । मन को देह से असम्बद्ध करने के लिए यह निद्रा ही कारण है । यदि इसे हटा दिया जाय तो जागते ही दोनों की एकता फिर यथावत हो जायेगी । आत्मा और परमात्मा दोनों अभिन्न हैं भिन्नता तो अविद्या रूपी निद्रा ने उत्पन्न की है । इसे हटाना भगाना ही इस दुखदाई वियोग ने अंत करने का एकमात्र उपाय है ।

ईश्वर हमारे सबसे अधिक समीप है । संसार का कोई पदार्थ या व्यक्ति जितना समीप हो सकता है उसकी अपेक्षा ईश्वर की निकटता और भी अधिक है । वह हमारी साँस के साथ प्रवेश करता है और समस्त अंग अवयवों में प्राण वायु के रूप में जीवन का अनुदान प्रतिक्षण प्रदान करता है, यदि इसमें क्षण भर का भी व्यवधान उत्पन्न हो जाय तो मरण निश्चित है ।

हृदय की धड़कन उसी की रासलीला है । सम्भावित सोलह हजार नाड़ियों के साथ वही कृष्ण रमण करता है । माँस-पेशियों के आकुंचन-प्रकुंचन में गुदगुदी उसी के द्वारा उत्पन्न की जाती है । अन्तःकरण में उसी का गीता प्रवचन निरन्तर चलता रहता है । ज्ञान-विज्ञान की विशालकाय पाठशाला उसी ने हमारे मस्तिष्क में चला रखी है । उसका अध्ययन ऐसा है जो कभी बन्द ही नहीं होता ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

इतना सब होते हुए भी हम ईश्वर से अरबों-खरबों मील दूर हैं । उसकी समीपता की अनुभूति के साथ-साथ जिस परम सन्तोष और परम आनन्द का अनुभव होना चाहिए वह कभी हुआ ही नहीं । ईश्वर की समीपता को जीवन मुक्ति भी कहते हैं । उस स्थिति को सालोच्य, सामीप, सारूप्य और मायुज्य इन चार रूपों में वर्णन किया गया है । ईश्वर के लोक में रहना, उसके समीप रहना, उस जैसा रूप होना, उसमें समाविष्ट हो जाना यह चारों ही अवस्थाएँ उस स्थिति की ओर संकेत करती हैं जिसमें मनुष्य की भीतरी चेतना और बाहरी क्रिया उतनी उत्कृष्ट बन जाती है, जितनी कि ईश्वर की होती है ।

ईश्वर से दूर रहने और उस दूरी के कारण ईश्वर के सान्निध्य से मिलने वाले लाभों से वंचित रह जाने का कारण है उसकी नियम व्यवस्था को न समझना, या समझते हुए भी उसका पालन नहीं करना । अपनी चेतना को ईश्वरीय, चेतना में घुला देने अर्थात् उसकी व्यवस्था के अनुरूप स्वयं को ढाल लेने से वे सारे अवरोध समाप्त हो जाते हैं जो जीवनानन्द की प्राप्ति में रोड़ा बनते हैं । ईश्वर प्राप्ति की प्रथम सीढ़ी यही हो सकती है कि मनुष्य अपने आपको उसके अनुरूप बनायें । इस साधना द्वारा ही मनुष्य अपने आपको ईश्वर के साथ घुला-मिला सकता है और ससीम को असीम के समतुल्य बना सकता है ।

⌘⌘⌘

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ब्राह्मी चेतना का सुविस्तृत कार्य व्यापार

ब्रह्माण्डव्यापी तथ्य जिनका जीवन में भी स्थान है

हम क्रमशः विकसित हो रहे हैं—आगे बढ़ रहे हैं, यह एक तथ्य है । आदिम काल के वनवासी मनुष्य ने सभ्यता के वर्तमान चरण तक पहुँचने की लम्बी यात्रा में अपनी अग्रगामी चेष्टा को प्रखर रखा है । चेतना की अदम्य इच्छा आगे बढ़ने की प्रगति करने की है । यह उचित भी है और आवश्यक भी । अपूर्णता से पूर्णता की ओर बढ़ रही जीव आकांक्षा अपने लक्ष्य की ओर चलते हुए विकास-क्रम और अग्र-गमन के उत्साह का ही अवलम्बन ग्रहण करेगी । यह विकास-प्रक्रिया न केवल मानवी-चेतना में काम करती है, वरन् ब्रह्माण्ड-विस्तार के रूप में भी वह क्रम चल रहा है ।

ज्योति भौतिकी की महत्त्वपूर्ण खोजों से यह स्पष्ट हो चला है कि ब्रह्माण्ड का निरन्तर विस्तार हो रहा है । समस्त आकाश-गंगाएँ, समस्त सौर-मण्डल और ग्रह-नक्षत्र क्रमशः अपना आकाशीय-क्षेत्र आगे बढ़ाते चले जा रहे हैं । कहा जाता है कि अरबों वर्ष पूर्व सृष्टि के अन्तराल में 'घनीभूत' पदार्थ के मध्य एक भयंकर विस्फोट हुआ था । उसी के छिटक कर ग्रह नक्षत्र बने और वह छिटकना तब से लेकर अब तक क्रमशः आगे ही बढ़ता चला जा रहा है । सभी आकाश गंगाएँ एक-दूसरे से दूर हटती जा रही हैं और यही हाल सौर-मण्डलों का है । शून्य आकाश के उन्मुक्त क्षेत्र की विशालता इतनी बड़ी है कि अभी करोड़ों-अरबों वर्षों तक यह दौड़ ऐसे ही चलती रह सकती है, पर कभी न कभी इसका भी अन्त होगा और गोलाई की गति के अनुसार यह धावमान पदार्थ अन्तः अपने मूल उद्गम पर जाकर इकट्ठा हो जायेगा । उसी स्थिति को महाप्रलय कहा जा सकेगा ।

ब्रह्माण्डव्यापी आकाश को समझने-समझाने की दृष्टि से चार क्षेत्रों में बाँटा जा सकता है—

प्रथम क्षेत्र में हमारी धरती, उसका वायुमण्डल चुम्बकीय-क्षेत्र है । ऊपरी वायुमण्डल का अधिक भाग आवेशित परमाणुओं, अणुओं और इलेक्ट्रॉनों से बना हुआ है । आकाश के इस क्षेत्र में पदार्थ के अस्तित्व का पता आसानी से चल जाता है ।

दूसरा क्षेत्र है—सौर-मण्डल के ग्रहों के बीच में फैला हुआ भाग । यह क्षेत्र सूर्य के बाहरी परि-मण्डल (कोरोना) से निरन्तर निकलने वाली पतली और फैलने वाली गैस से भरा हुआ है, इसे 'प्लाज्मा' या सौर वायु कहते हैं । इसी हवा के कारण पुच्छल-तारों की पूँछें सदा सूर्य से विपरीत दिशा में रहती हैं । यही हवा पृथ्वी के चुम्बकीय क्षेत्र को भी पूँछ की शक्ल का 'पुच्छल-तारा' बना देती है ।

तीसरा क्षेत्र है—पृथ्वी और सूर्य के बीच की दूरी से प्रायः ५० गुना सौर-मण्डल से आगे हमारी आकाश-गंगा में जुड़े तारों के बीच का आकाश भाग । यहाँ भी तारों के बीच के भाग में पदार्थ के उदासीन और आवेशित कणों से बनी हुई पतली गैस है ।

चौथा क्षेत्र वह आकाश है—जिसमें हमारी आकाश-गंगा जैसी अन्य अगणित आकाश-गंगाएँ और उनसे सम्बद्ध असंख्य चित्र-विचित्र ग्रह-नक्षत्र भरे पड़े हैं ।

इस विशाल महा आकाश के सम्बन्ध में जितनी कुछ जानकारी अब तक मिली है उसका परिचय विशालकाय दूरबीनों, रेडियो, टैलिस्कोपी किरणों में उपलब्ध विकिरणों, ध्रुव-क्षेत्रों में उपलब्ध आवेशित कणों ध्रुवीय-प्रकाश आदि के साधनों का बड़ा योगदान है । उड़न रॉकेटों और अन्तरिक्ष यानों ने भी इस आकाश-ज्ञान में अभिवृद्धि की है ।

इस समस्त जानकारी के आधार पर यह तथ्य स्पष्ट है कि जन्म से लेकर प्रौढ़ता पर्यन्त हर पदार्थ में विकासक्रम जारी रहता है । अभी अपना ब्रह्माण्ड किशोरावस्था पार करके प्रौढ़ता की आयु में प्रवेश कर रहा है । इसलिए अधिकांश ग्रह-नक्षत्र अपना आयतन फुला रहे हैं, अपनी कक्षाएँ चौड़ी कर रहे हैं और एक-दूसरे से छिटक कर अनन्त आकाश में अविसात की ओर द्रुतगति से दौड़े जा रहे हैं, इसे हम सृष्टि का विकास-विस्तार या प्रगति कह सकते हैं ।

एक से अनेक बनने की ब्रह्म-इच्छा ने हिरण्यगर्भ का विस्फोट किया और उससे अगणित आकाश-गंगाओं, महातारकों, सौर-मण्डलों, ग्रह-उपग्रहों, उल्का और धूमकेतुओं का विशालकाय परिवार अस्तित्व में आया । जन्म के बाद विकास ही दूसरा चरण है, सो हम देखते हैं कि ब्रह्माण्ड में विकास के चरण द्रुतगति से आगे बढ़ रहे हैं । अधिकांश ग्रह-नक्षत्रों की गतिविधियाँ इन दिनों इसी स्तर की हैं । हमें अपनी गतिविधियों को विकासोन्मुख, प्रगतिशील रखते हुए प्रकृति की प्रेरणा का अनुगमन करना चाहिए ।

ग्रहों की स्थिति का बारीकी से अध्ययन करने पर अनेकों सृष्टि-नियम ऐसे दृष्टिगोचर होते हैं, जो क्या जड़, क्या चेतन सभी पर समान रूप से लागू होते हैं । अपनी पृथ्वी की अगणित विशेषताओं में से एक यह है कि उसकी ऊपरी परत में शीतलता और हल्कापन पर्याप्त मात्रा में हैं । इसी कारण उस पर जीवों की उत्पत्ति से लेकर शोभा-सुषुमा तक का सौन्दर्य विकसित हुआ है । जीवन पर भी यह नियम लागू होता है । यदि हल्के-फुल्के दृष्टिकोण को लेकर जीया जायेगा,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

संग्रहशीलता और अनियन्त्रित-महत्त्वाकांक्षाओं के भार से बचा जायेगा तो मनुष्य न केवल सुखी रहेगा, वरन् प्रगति भी करेगा । पर जिन्होंने अपने को भारी बोझों से लाद, जकड़ लिया है, उन्हें पग-पग पर जिन्दगी दूभर लगेगी और निरन्तर रोष, असन्तोष की स्थिति से अपने को घिरा पायेंगे । पृथ्वी के भीतरी पर्तों में गर्मी भी अधिक है और भारीपन का दबाव भी बढ़ा-चढ़ा है । अतएव वहाँ किसी सुन्दर और सुव्यवस्थित वस्तु का अस्तित्व नहीं बन पाता । सब कुछ आग्नेय-द्रव के रूप में है । भूकम्पों द्वारा समय-समय पर पृथ्वी की इस आन्तरिक स्थिति का परिचय भी मिलता रहता है ।

अब तक पृथ्वी को अधिक से अधिक ५ मील तक ही खोदा जा सका है, जबकि पृथ्वी के मध्य केन्द्र की गहराई लेगभग ४ हजार मील है । अधिक गहराई में क्या है, इसकी यत्किंचित जानकारी भूकम्पों के समय निकलने वाली भू-गर्भीय तरंगों से ही प्रतीत होती है ।

पृथ्वी की संरचना में ऑक्सीजन, सिलिकन, एल्युमिनियम, लोहा आदि भारी तत्वों का बाहुल्य है । ब्रह्माण्ड में प्रायः हाइड्रोजन, हीलियम जैसे हल्के पदार्थ ही अधिक भरे पड़े हैं, उसमें उनकी मात्रा ८० से ९९ प्रतिशत तक है, पर अपनी पृथ्वी में उनकी मात्रा $\frac{१}{१०}$ प्रतिशत से भी कम है ।

पृथ्वी के भीतरी भाग में दबाव बहुत अधिक है । जहाँ धरती का तरल भाग समाप्त होकर कड़ा आवरण शुरू होता है, वहाँ का दबाव प्रायः प्रति वर्ग इंच पर लगभग १० हजार टन है ।

यों अहंकारी स्थूल दृष्टि भारी-भरकमपन और उष्णता उग्रता को ही महत्त्व देगी, पर पृथ्वी की स्थिति ने स्पष्ट कर दिया है कि उसके भीतरी अन्तराल में जहाँ गर्मी और दबाव का बाहुल्य है, वहाँ केवल दाह की भट्टी ही जल रही है और उस विक्षोभ की उसासें भूकम्पों और ज्वालामुखियों के रूप में फूटकर शान्त वातावरण को विषाक्त और विकृत ही करती रहती हैं । इसके विपरीत धरती के ऊपरी वायुमण्डल में जहाँ हल्कापन और शीतलता का सन्तुलन है, वहीं जीवन, सौन्दर्य और सुविधा-साधनों के पनपने का अवसर मिला है । यह तथ्य यदि हम समझ सकें तो अपनी गतिविधियों में उपयोगी परिवर्तन करके सुख-सन्तोष भरी प्रगतिशीलता का रसास्वादन कर सकते हैं ।

यों हर किसी को स्वावलम्बी बनने का प्रयत्न करना चाहिए पर यह भी ध्यान रखना चाहिए कि अपने में जो बीज-रूप से विद्यमान क्षमताएँ हैं, उन्हें विकसित करने के लिए बाहर से भी बहुत कुछ सहयोग लेना पड़ता है । यह सारा समाज सहकारिता के सिद्धान्तों से जकड़ा हुआ है । हमारा विकास ही नहीं, जीवन भी पारस्परिक सहयोग के आधार पर ही गतिशील हो रहा है ।

ग्रह-नक्षत्रों का अस्तित्व और क्रियाकलाप भी पारस्परिक सहयोग और आदान-प्रदान पर ही चल रहा है । अपनी पृथ्वी को ही लें, वह सूर्य से बहुत कुछ ग्रहण करती, उसके अनुदान से अपना काम चलाती है । इसका अर्थ यह नहीं कि वह दूसरे ग्रहों को अपना अनुदान नहीं देती । निश्चित रूप से लेने के साथ, देने का भी अविच्छिन्न तथ्य जुड़ा हुआ है । जो लेता भर रहेगा और देने का नाम न लेगा, वह बेमौत मरेगा । पृथ्वी दूसरे ग्रहों को पर्याप्त अनुदान देती है, पर साथ ही अपनी विशेषताओं को अक्षुण्ण रखने के लिए सूर्य पर निर्भर भी रहती है ।

ब्रिटिश खगोलज्ञ और सुप्रसिद्ध दूरबीन विशेषज्ञ—'सर विलियमहर्शेल' ने सूर्य की स्थिति का धरती पर होने वाले प्रभावों का गहरा अध्ययन किया है और यह निष्कर्ष निकाला है कि वनस्पतियों के विकसित और फलित होने से लेकर प्राणियों के शरीर और मनुष्यों के मनःस्तर पर सूर्य-परिवर्तन का असाधारण प्रभाव पड़ता है । इसे देखते हुए यह प्रतीत होता है कि सूर्य से पृथ्वी के न केवल ऋतु-परिवर्तन प्रभावित होते हैं, वरन् प्राणियों का शारीरिक और मानसिक स्तर भी उठता-गिरता है । उजवेक (रूस) के विज्ञानी—'एन. केनोसरिन' ने सूर्य के धब्बों के साथ पृथ्वी पर दल-दल घटने-बढ़ने की संगति बिठाई है । मास्को के 'प्रो. शिझेब्की' ने पता लगाया है कि धरती के इतिहास में जब-जब सूर्य में तीव्र प्रतिक्रियाएँ हुई हैं, तब-तब हैजा, प्लेग, टाइफाइड आदि बीमारियों का संसार में भारी प्रकोप हुआ है । उसका कारण वे बैक्टीरिया जीवाणुओं पर होने वाली सौर-प्रतिक्रिया को मानते हैं । वे सूर्य के प्रभाव में घट-बढ़ होने के कारण मनुष्यों के स्वभाव में हेर-फेर होने की बात भी कहते हैं ।

ग्रहों के बीच परस्पर क्या सम्बन्ध है ? इसका निरूपण करते हुए इस निष्कर्ष पर पहुँचना होता है कि सभी एक दूसरे के सहयोगी हैं । कौन किसका पिता, पुत्र, भाई, भतीजा आदि है ? इसका विश्लेषण करने से कुछ काम नहीं चलता । कौन पुराना, कौन नया, कौन दानी, कौन ऋणी, कौन बड़ा, कौन छोटा इस झंझट में पड़कर न अहंकार को बढ़ाया जाना चाहिए और न किसी को हीनता का अनुभव कराना चाहिए । अच्छा यही है कि हम पारस्परिक सहकारिता और सहयोग भावना का महत्त्व समझें और यह मानें कि कोई किसी को एक तरह का सहयोग दे रहा है, तो दूसरा उसकी अन्य प्रकार से सहायता कर रहा है ।

ग्रह-नक्षत्रों के बीच भी अब इसी मान्यता को प्रधानता दी जा रही है। चन्द्रमा और पृथ्वी के बीच क्या रिश्तेदारी है ? इसका विश्लेषण बहुत समय तक किया जाता रहा, पर अब अन्त में इसी निष्कर्ष पर पहुँचा गया है कि कोई किसी को आश्रित नहीं, सभी का अपना स्वतन्त्र अस्तित्व है और इस ब्रह्माण्ड-परिवार में सभी ग्रह-नक्षत्र सहयोगी सदस्य बनकर रह रहे हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चाँद पृथ्वी का भाई है ? बेटा है ? या दोस्त, मेहमान ? यह पता लगाया जाना शेष है ।

'सर जार्जडार्विन' ने कहा है कि—प्रशान्त-महासागर की जमीन किसी खण्ड-प्रलय के कारण उखड़ पड़ी और उड़कर चाँद बन गई । जहाँ से वह मिट्टी उखड़ी । वहाँ का गड्ढा समुद्र बन गया । यह उखड़ी हुई जमीन आकाश में मँडराने लगी और धरती का चक्कर काटती हुई चन्द्रमा बन गई । इस प्रकार वह पृथ्वी का बेटा हुआ । इसी सन्दर्भ में यह भी कहा गया है कि जिन दिनों पृथ्वी की सतह लाल अंगारे की तरह तप रही थी, उन दिनों वह घूमती भी तेजी से थी, अपनी धुरी पर तब वह एक चक्कर तीन घण्टे में ही लगा लेती थी, सूर्य के आकर्षण का तब दबाव अधिक था और आये दिन गरम लावे के ज्वार-भाटे जैसे भूकम्प आते थे । उन्हीं दिनों कई विशालकाय उल्काएँ धरती से टकराईं और कई समुद्र तथा झील-सरोवर बन गए ।

फ्रेंच वैज्ञानिक बुफो ने चन्द्रमा को धरती का भाई माना है । वे कहते हैं—सारे ग्रह-उपग्रह एक ही समय एक ही साथ बने हैं । आरम्भ में अकेला सूर्य था । कहीं से एक और विशालकाय सूर्य आया और हमारे सूर्य से टकरा गया । टकराव से दोनों का बहुत बड़ा हिस्सा धूल बनकर अन्तरिक्ष में उड़ने लगा और जब वह सघन हुआ तो उसी से सौर-मण्डल के ग्रह और उपग्रह बन गए ।

खगोलज्ञ लाटलास वाईज सैकर, जेरार्डकुइपर, आदि विद्वानों का कथन है कि समस्त आकाश-गंगाएँ, तारक, सौर-मण्डल और उपग्रह, सृष्टि के आदि में प्रथम विस्फोट से छितराव से फैली हुई धूलि से बने हैं । वे आकर्षण-विकर्षण की धाराओं से परस्पर बँधे जरूर हैं और अपनी धुरी और कक्षा की भ्रमणशीलता भी परस्पर सम्बन्धों के आधार पर स्थिर किए हुए हैं—फिर भी कोई किसी से उत्पन्न नहीं हुआ । सभी ग्रह-उपग्रहों का जन्म स्वतन्त्र रूप से हुआ है और उनका मूल कारण आदि पदार्थ 'हिरण्यगर्भ' का विस्फोट ही था । इस प्रकार सभी ग्रह एक-दूसरे के मित्र, पड़ोसी मात्र हैं । यही बात पृथ्वी और चन्द्रमा के सम्बन्ध में भी लागू होती है ।

ब्रह्माण्ड-परिवार के सदस्य—ग्रह-नक्षत्र जहाँ विकास की दिशा में बढ़ रहे हैं, वहीं उनमें वृद्धता, मरण और पतन का क्रम भी अपने ढंग से चल रहा है । उसे देखते हुए यह सम्भावना स्पष्ट है कि इस विशाल ब्रह्माण्ड को भी एक दिन मरण के मुख में जाना पड़ेगा । तारक और आकाश-गंगाएँ स्वाभाविक वृद्धता के शिकार होकर मृत्यु के ग्रास होते रहे हैं और आगे होते रहेंगे । जब समस्त ब्रह्माण्ड बूढ़ा हो जायेगा तो महाकाल उसे भी अपनी कराल डाढ़ों से चबाकर रख देगा । जन्म के बाद विकास, विकास के बाद मरण का सिद्धान्त तो ब्रह्माण्ड को भी लपेट में लिए बिना छोड़ने वाला नहीं है ।

अपनी आकाश-गंगा की शक्ति जिस तेजी से क्षीण हो रही है, उसे देखते हुए वैज्ञानिक उससे सम्बद्ध सौर-मण्डलों के अवसान की आशंका करने लगे हैं । मेरीलेण्ड विश्वविद्यालय की खगोल शाखा ने बताया है कि वह दिन निकट आता चला जा रहा है, जब अपनी आकाश-गंगा के साथ जुड़े हुए ग्रह उससे छिटक कर दूर चले जायेंगे और अनन्त अन्तरिक्ष में स्वतन्त्र रूप से विचरण करने लगेंगे । इसका प्रभाव सौर-परिवार पर ही नहीं, ग्रहों के साथ भ्रमण करने वाले उपग्रहों पर भी पड़ेगा और एक विशृंखल अराजकता की ऐसी बाढ़ आयेगी कि सर्वत्र एकाकीपन दृष्टिगोचर होने लगेगा, पर अन्तर्ग्रहीय आदान-प्रदान की शृंखला टूट जाने से ऐसी स्थिति उत्पन्न होगी कि हर नक्षत्र विविधताओं के कारण बनी हुई विशेषताओं और सुन्दरताओं को खोकर अपने स्वरूप की तुच्छताओं से सीमाबद्ध, अपंग और कुरूप स्तर का दिखाई पड़ेगा ।

यहाँ सब कुछ जन्मता, बढ़ता और मरता है । ब्रह्माण्ड भी । मनुष्य यदि इस तथ्य को समझें तो उसे अपना मरण भी स्मरण रहे साथ ही यह सोचने का अवसर भी मिले कि इस बहुमूल्य मानव-जीवन का श्रेष्ठतम सदुपयोग क्या और कैसे किया जाना चाहिए ?

कितना विशाल विश्व, कितना तुच्छ अपना अस्तित्व

विश्व ब्रह्माण्ड की विशालता और अपनी क्षुद्रता की जब तुलना करते हैं तो अहम् सहज ही गल जाता है । हम क्या हैं, वे सम्पदाएँ क्या हैं जिन पर इतराते हैं और वह जीवन क्या है जिसे हम अमर समझते हैं, इसे ठीक तरह समझने के लिए उस ब्रह्माण्ड का स्वरूप भी जानना पड़ेगा जिसके हम एक नगण्य से अंग अवयव हैं ।

ब्रह्माण्ड कितना विशाल और उसकी तुलना में अपनी पृथ्वी कितनी क्षुद्र । अपनी पृथ्वी पर रहने वाले कोटि-कोटि प्राणियों के बीच बेचारे मनुष्य का एक नगण्य-सा अस्तित्व और चार सौ करोड़ मनुष्यों के बीच हमारी नगण्य-सी एक सत्ता । इन सबको तुलनात्मक दृष्टि से देखें तो प्रतीत होगा कि शरीर में रहने वाले खरबों कोशिकाओं में से एक की सत्ता जितनी स्वल्प है उससे भी असंख्य गुनी न्यून अपनी सत्ता है । ब्रह्माण्ड की तुलना में पिण्ड और पिण्ड की तुलना में अणु कितना क्षुद्र है । विशाल की तुलना में हम कितने तुच्छ हैं इस पर एक क्षण के लिए भी विचार कर सकें तो प्रतीत होगा कि अपने उपहासास्पद कलेवर में इतराने जैसी अहंकार में इठने जैसी कोई बात नहीं है ।

भगवान कितना विशाल है, विशाल ब्रह्माण्ड जैसा । भगवान कितना लघु है, अणु-परमाणु जैसा मनुष्य भी यदि अपनी आत्म सत्ता को समझे और आत्म विस्तार की भूमिका में उतरे तो वह भी विभु है, महान् है, पर यदि संकीर्ण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

स्वार्थपरता की, व्यक्तिवादी अहंता की तुच्छता में सीमाबद्ध होकर रह जाय तो वह वस्तुतः इतना क्षुद्र है जिसे महत्त्वहीन नगण्य एवं उपहासास्पद ही कहा जा सकता है ।

अपने सूर्य को ही लें उसका व्यास ८६५३८० मील है । उसकी कुल परिधि २७००००० मील है । अनुमानित भार १६ करोड़ ६८ लाख महाशंख टन । वह अपनी धुरी पर २५ दिन ७ घण्टे ४८ मिनट में एक चक्कर लगाता है । उसकी सतह पर ६०० डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान है और मध्य गर्भ में १५००००० डिग्री सेन्टीग्रेड । वह दो सौ मील प्रति सेकण्ड की उड़ान उड़ता हुआ महा ध्रुव की परिक्रमा में निरत है यह परिक्रमा २५ करोड़ वर्ष में पूरी होती है । इस परिक्रमा में उसके साथी और भी कई सूर्य होते हैं । जिनके अपने-अपने सौर-मण्डल भी हैं ।

पृथ्वी से सूर्य १०६ गुना बड़ा है । दोनों के बीच की दूरी ९३००००० मील है । यदि हम ६०० मील प्रति घण्टे की गति से उड़ने वाले अपने तीव्रतम वायुयानों में बैठकर लगातार उड़ें तो उस दूरी को पार करने में १८ वर्ष लगेंगे ।

सूर्य से पृथ्वी पर जो शक्ति बरसती है वह इतनी है कि एक वर्ग इंच की शक्ति से ६० हार्स पावर का इन्जन चल सके । पूरी पृथ्वी पर सूर्य जो ताप फेंकता है वह प्रति सेकण्ड इतना होता है जितना १२ हजार अरब टन कोयला जलाने पर ही पैदा किया जा सकता है । सूर्य का प्रकाश पृथ्वी पर प्रति वर्ग इंच इतना होता है जितना तीन लाख मोमबत्तियाँ जलाने से पैदा किया जा सके । सूर्य की शक्ति का २२० करोड़ वाँ भाग ही पृथ्वी पर पहुँच पाता है ।

वैज्ञानिकों की नवीनतम गणना के अनुसार ब्रह्माण्ड में लगभग १० करोड़ सौर-मण्डल और १० अरब तारे हैं । इन तारों में कोई-कोई कल्पनातीत विस्तार के हैं । अकेला जेष्टा ही इतना बड़ा है कि उसके पेट में अपने तीन करोड़ सूर्य घुस कर बैठ सकें । प्रख्यात 'एन्ड्रोमीडा' नीहारिका हमसे ८ लाख प्रकाश वर्ष दूर है । जबकि एक प्रकाश वर्ष को ५८ खरब मील माना जाता है ।

अपनी धरती का व्यास १२७०० किलो मीटर और वजन ६,६००,०००,०००,००० अरब टन है । वह ३० किलो मीटर प्रति सेकण्ड की उड़ान भरती हुई ३६५ दिन में सूर्य की एक परिक्रमा पूरी करती है । सूर्य और पृथ्वी के बीच की औसत दूरी ९ करोड़ ३० लाख मील रहती है । धरती का जन्म अब से ५ अरब वर्ष पूर्व हुआ । ३ अरब वर्ष पूर्व उस पर जीवन प्रारम्भ हुआ । इनसे मनुष्य का अस्तित्व १० लाख वर्ष पहले ही हुआ है । इससे पूर्व अन्य जलचर, थलचर, नभचर प्राणी उत्पन्न हो चुके थे । इनमें से २० लाख जातियों के प्राणी अभी भी पाये जाते हैं । पुराणों में बताई गई ८४ लाख योनियों में से अब सिर्फ ४ लाख जीव जातियाँ ढूँढ़नी शेष रह गई हैं ।

यह अपना सौर-मण्डल भी कितना विचित्र है । उपग्रहों की सदस्यता के बारे में हममें से बहुतों को यह भी नहीं मालूम है कि मंगल पर २, वृहस्पति पर १२, शनि पर ९, यूरेनस पर ५ और नेपच्यून पर २ चन्द्रमा भ्रमण करते हैं । मात्र हमारा एक चन्द्रमा ही सौर-मण्डल का एक उपग्रह नहीं है । कुल मिलाकर उनकी संख्या ३१ है ।

हमारा वर्ष ३६५ दिन का और दिन २४ घण्टे का होता है, किन्तु अन्य ग्रहों की स्थिति भिन्न है । धरती पर जितना बड़ा दिन होता है उसके हिसाब से लेखा-जोखा लिया जाय तो सूर्य का एक दिन हमारे १७६ दिनों के बराबर और वर्ष ८८ दिनों के बराबर होता है ।

बुध का दिन २४३ दिन का वर्ष २२५ दिन का है । मंगल का दिन पृथ्वी के लगभग बराबर है । उसका दिन २४.६ घण्टे का और वर्ष १.९ वर्ष का है । वृहस्पति का दिन १० घण्टे का और वर्ष १२ वर्ष का शनि का दिन १० घण्टे और वर्ष २९ वर्ष का, यूरेनस का दिन ११ घण्टे और वर्ष ८४ वर्षों का, नेपच्यून का दिन १६ घण्टे का और वर्ष १६५ वर्षों का, प्लूटो का एक दिन हमारे ६ दिन ९ घण्टों के बराबर और उसका एक वर्ष हमारे २४८ वर्षों के बराबर है । उनके आकार में भी भारी भिन्नता है । अपने मीलों के हिसाब से सौर-मण्डल का व्यास नापा जाय तो सूर्य का व्यास ८,६४,०००, बुध का ३१००, शुक्र का ७५००, पृथ्वी का ७९२०, मंगल का ४१५०, वृहस्पति का ८७,०००, शनि का ७१५००, यूरेनस का ३२०००, नेपच्यून का ३१०००, प्लूटो का ४५०० मील है । सूर्य से किस ग्रह की दूरी कितनी है इसका हिसाब लगाने के लिए अपने मील बहुत झंझट भरा विस्तार करेंगे इसलिए अपने १० लाख मील का एक सौर-मण्डलीय मील मानकर चला जाय यह ठीक रहेगा । तब उस अन्तरिक्ष मील के अनुसार सूर्य से उसके सौर परिवार की दूरी इस प्रकार नापी जा सकती है । बुध की ३६,२ शुक्र की ६६, ९ पृथ्वी की ९२, ९ मंगल की १४१,२ वृहस्पति की ४८३ शनि की ८८२, ६ यूरेनस की १७८३०७, नेपच्यून की २७८७ तथा प्लूटो की ३६२१,१ ।

अपने सौर-मण्डल का एक अनुमानिक नक्शा धरती पर बनाना हो तो पृथ्वी को एक इंच की गोली जितनी बनाना चाहिए । तब सूर्य उससे ३२२ गज दूर ९ फुट व्यास का बड़ा गोला होगा । सूर्य के १२४ गज दूर बुध, २३२ गज दूर शुक्र होंगे तब ३२२ गज दूर पृथ्वी बनानी पड़ेगी । इसके बाद मंगल ४८८, वृहस्पति १६७२, शनि ३०६७, अरुण ६१५९, वरुण ९६५६ और यम १३३०० गज दूर अंकित करने पड़ेंगे । बेचारा अपना चन्द्रमा तो पृथ्वी से ३० इंच दूर एक चने के दाने जितना होगा ।

प्रो. फ्रेड होयल डॉ. रूडोल्फ मिन्केवस्की आदि खगोल विद्या के मूर्धन्य विशेषज्ञों का कथन है कि अपने ब्रह्माण्ड की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आयु लगभग १० अरब वर्ष है । आरम्भ में ग्रह नक्षत्र उत्पन्न होने की गति धीमी थी पर अब ज्यों-ज्यों ब्रह्माण्ड बूढ़ा होता जाता है त्यों-त्यों उसकी सिकुड़न बढ़ रही है । गर्मी के कारण फैली हुई गैसों का तापमान घट रहा है । फलतः सिकुड़न उत्पन्न होने से ग्रह नक्षत्र उत्पन्न होने की चाल तेज हो गई है । हमारी अपनी आकाश गंगा ही लगभग एक नये सूर्य को हर वर्ष जन्म दे देती है । यह गति आरम्भिक काल की अपेक्षा आठ गुनी अधिक तेज है । ब्रह्माण्ड में सबसे अधिक मात्रा में हाइड्रोजन गैस से बना हुआ पदार्थ भरा पड़ा है ।

वाशिंगटन की नौ सेना अनुसंधान प्रयोगशाला ने आकाशीय पिण्डों में सबसे रहस्यमय तारे 'क्वासर' बताये हैं । वे बहुत बूढ़े और बहुत दूर होते हुए भी बहुत चमकीले हैं और सबसे खतरनाक एक्स किरणें प्रचण्ड मात्रा में समस्त ब्रह्माण्ड में बिखेरते हैं । वही अनुदान पृथ्वी को भी विपुल मात्रा में मिलता है । रॉकेट विज्ञानी डॉ हर्वर्ट फ्रीडमेन का कथन है कि इन क्वासरे ने समस्त ब्रह्माण्ड को एक्स किरणों का एक प्रकार से महासागर ही बनाया हुआ है । क्वासरों में से एक निकटवर्ती '३ सी १४७' को ६०० करोड़ प्रकाश वर्ष दूर माना गया है एक प्रकाश वर्ष अर्थात् १०००००० करोड़ किलोमीटर दूरी । किलोमीटरों के हिसाब से इन क्वासरों की दूरी कितनी अकल्पनीय है ।

अपनी नीहारिका बीस हजार प्रकाश वर्ष मोटी और एक लाख प्रकाश वर्ष लम्बी है । यह गोल आकार की होने से चौड़ाई भी लगभग इतनी ही है । उसके परिवार में लगभग सौ अरब ग्रह नक्षत्र हैं ।

अपनी मंदाकिनी नीहारिका जैसी इस ब्रह्माण्ड में करोड़ों हैं । उनमें से हमें अधिक समीप एन्ड्रोमेडा (देवयानी) है हमें उसी के बारे में कुछ अधिक जानकारी है । इसकी दूरी सबसे निकट होते हुए भी अपनी आकाश गंगा से बीस लाख प्रकाश वर्ष दूर है । उसे हम मृगसिर नक्षत्र में खुली आँखों से भी देख सकते हैं । पर वह प्रकाश जो दिखाई देगा बीस लाख प्रकाश वर्ष पुराना होगा, जबकि हमारी पृथ्वी का जन्म अथवा विकास का आरम्भ भी नहीं हुआ था । आज वहाँ क्या स्थिति है इसे जानना हो तो इतने ही समय प्रतीक्षा करनी पड़ेगी । समस्त ब्रह्माण्ड कितना विस्तृत है, उसका ठीक विवरण प्राप्त नहीं पर संसार की सबसे बड़ी रेडियो, दूरबीन जो अमेरिका के पालोमर पर्वत पर लगी है उससे पाँच अरब प्रकाश वर्ष दूरी की नीहारिकाओं को देख लिया गया है ।

यह नीहारिकाएँ अपने स्थान पर विद्यमान नहीं हैं वे एक-दूसरे से उसी तरह दूर भागती जा रही हैं जैसे दागने के बाद बन्दूक से उसकी गोली दूर भागती है । इस भगदड़ की चाल साठ हजार किलोमीटर प्रति सेकण्ड है । समस्त विश्व ब्रह्माण्ड का फुलाव विस्तार कितना गुना हो चुका होगा इसका अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि पिछले दो वर्ष में ही उसका पेट दूना फूल चुका है यह माप कर ली गई है । प्रगति के पथ पर सभी ग्रह नक्षत्र तेजी से भाग रहे हैं जिस दिन यह विकास स्पर्धा बन्द होगी उसी दिन ब्रह्माण्ड के सामने महाप्रलय आ उपस्थित होगी ।

अणोरणीयान् महतो महीयान्

कहते हैं रूस का मास्को शहर संसार का सबसे बड़ा शहर है । दो लाख एकड़ क्षेत्र में बसे इस भव्य नगर में ६५ लाख से भी अधिक नागरिक निवास करते हैं । प्रति वर्ष १ लाख २० हजार के हिसाब से नये फ्लैट बनते जा रहे हैं प्रति दिन ३५० परिवारों को नये मकान दिए जाते हैं । पूरे शहर में ३० नाट्यघर, १०० सिनेमाघर, ८० उच्चतर माध्यमिक विद्यालय हैं । इनमें ५ लाख छात्र शिक्षा पाते हैं । राजकीय लेनिनग्राड पुस्तकालय में २ करोड़ २० लाख पुस्तकें संग्रहीत हैं । इस विशालता में लन्दन जैसे ढाई शहर और पेरिस जैसे ८ शहर समा सकते हैं । मास्को शहर की विशालता का क्या कहना ?

हम जिस पृथ्वी में रहते हैं उसमें ऐसे-ऐसे ४ और विशाल शहर हैं । छोटों की तो कोई गणना ही नहीं । अकेले भारतवर्ष में ही ६ हजार के लगभग शहर हैं, दुनिया में तो उनकी संख्या लाखों होगी । इसी प्रकार गाँवों की संख्या और उनमें रहने वाले निवासी भी पृथ्वी में भरे पड़े हैं । १३००० किलोमीटर व्यास वाली पृथ्वी के सूखे भाग की इस व्यापक हलचल और कल्पना में न उतरने वाली विशालता को भला मनुष्य की एक-एक इन्च से भी छोटी आँखें कहाँ देखती हैं ।

पृथ्वी के जिस भाग का वर्णन किया जा रहा है जो सूखा और आबाद है वह तो कुल १/४ हिस्सा ही है ३/४ हिस्से में जल भरा हुआ है । समुद्र ही समुद्र है आइये देखें उसकी लम्बाई-चौड़ाई कितनी है ।

हिन्द महासागर का क्षेत्रफल २ करोड़ ८० लाख वर्गमील है जबकि भारतवर्ष और पाकिस्तान दोनों का कुल मिला कर १६२६१४८ ही वर्गमील क्षेत्रफल है । अफ्रीका के दक्षिणी सिरे से लेकर आस्ट्रेलिया के बीच तक इसकी लम्बाई ६२०० मील है । उसमें ३० लाख खरब टन जलराशि, ८० हजार खरब टन नमक और २० किलोवाट प्रति घण्टे की विद्युत शक्ति उसमें भरी हुई है । उसमें रहने वाले जीव-जन्तुओं की संख्या तो मनुष्य शरीर में जीन्स की तरह असंख्य है जबकि अभी ऐसे-ऐसे तीन और महासागर हैं । प्रशान्त महासागर जिसकी औसत गहराई १४०५० फुट है ६३८००००० वर्गमील, अटलांटिक महासागर १२८८० फीट गहरा ३१८३०००० वर्गमील, आर्कटिक महासागर ४२०० फुट गहरा और ५४४०००० वर्गमील में फैला हुआ है । सूखी धरती और वह जल भाग जो उसके अतिरिक्त है वाली धरती की विशालता का अनुभव मनुष्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

जैसा छोटा प्राणी कर भी कैसे सकता है ? वह तो मनुष्य को किसी का अभिशाप लग गया है जो वह अपनी शक्ति का इतना अहंकार करता है अन्यथा पृथ्वी की तुलना में ही वह इतना छोटा है जितना हिमालय पहाड़ की तुलना में चींटी के शरीर का सौवाँ भाग । १६ करोड़ ७० लाख वर्गमील की पृथ्वी और अधिक से अधिक ६ वर्ग फीट का मनुष्य यह तो नगण्य स्थिति हुई ।

विशालता की इस माप में पृथ्वी का क्षेत्रफल कोई अन्तिम दूरी नहीं है । उससे तो सूर्य ही कई हजार गुना बड़ा है । पृथ्वी का व्यास १३००० किलोमीटर है तो सूर्य १३६०००० किलोमीटर है । पर आप यह न समझें के यह सूर्य ही विशालता में सरताज हो गया । वह अपना एक सौर परिवार भी रखता है जिसमें ६ ग्रह बुध (मरकरी), शुक्र (वीनस), पृथ्वी (अर्थ), मंगल (मार्स), वृहस्पति (ज्यूपीटर), शनि (सेटर्न), वारुणी (उरैनस), वरुण (नेपच्यून) और यम (प्लूटो) और ६१ उपग्रह हैं । १५०० छोटे-छोटे ग्रह और भी हैं जिन्हें अवान्तर ग्रह या मध्यग्रह (एस्टोरोइड्स) कहते हैं । अन्तरिक्ष कीट और अनेक पुच्छल तारे भी इस सौर-मण्डल में आते हैं । इस सौर-मण्डल का व्यास ११८०००००००००० कि. मी. है । इन्हें मंदाकिनी (स्याइरल) नामक आकाश गंगा से प्रकाश मिलता है ।

आइये देखें सूर्य से भी बढ़कर कोई और बड़ा आकार आकाश में है या नहीं ? यदि उसकी खोज करना चाहते हैं तो रात में किसी एकान्त में खड़े होकर आकाश की ओर देखें । आपको असंख्य टिमटिमाते हुए तारे दिखाई देंगे । जुगुनू आँख से भी छोटे दिखाई पड़ने वाले इन तारों में से कई जैसे इतने बड़े हैं जिनकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते । एटारेस तारे का व्यास ६००००००० किलोमीटर, पृथ्वी से लगभग ५००० गुना बड़ा । बैगनर तारा समूह में एक और ऐसा ही तारा समूह में एक और ऐसा ही तारा देखने में आया है जिसका नाम एप्सिलान और व्यास ४००००००००० कि. मी. है । अब तक विशालता की पैमाइश करते-करते हम जिस स्थान पर पहुँचे हैं, वहाँ खड़े होकर देखें और कल्पना करें कि पृथ्वी इतनी छोटी हो गई है कि उसका व्यास कुल १/१० मिलीमीटर अर्थात् बाल की चौड़ाई के बराबर है तो आकाश में चमकने वाला सूर्य चने के दाने के बराबर होगा । एन्टारेस तारा एक साधारण-सी कटोरी जितना बड़ा है । बैगनर तारा समूह का एप्सिलान ६ मंजिले मकान जितना लगेगा । सौर-मण्डल की स्थिति अधिक से अधिक एक फुटबाल के मैदान जैसी दिखाई देगी ।

अभी तक जितना संसार ऊपर देख चुके वह भी कोई सम्पूर्ण नहीं है । बैगनर तारा समूह की तरह के ८८ और तारा-समूह वैज्ञानिकों की दृष्टि में अब तक आ चुके हैं । अनुमान है कि यह सब ६०००००००००००००००० किलोमीटर व्यास वाली आकाश गंगा से प्रकाश लेते हैं । इस क्षेत्र को आकाश गंगा विश्व (गैलेक्सी) कहते हैं । इस आकाश गंगा का आकार अस्पतालों में गर्म सिर को ठण्डा करने वाली गोल बरफ की थैली या फूली हुई पूरी जैसा है और दूरी इतनी बड़ी है कि १८६००० मील प्रति सेकण्ड की गति से कोई जहाज या मनुष्य दौड़े तो एक छोर से दूसरे छोर तक पहुँचने में उसे लगभग १ करोड़ ६६ लाख ५० हजार वर्ष लग जायेंगे । इस आकाश गंगा में सूर्य जैसे ग्रहों की ही संख्या १० × १० × १० × १० × १० × १० × १० × १० × १० × १० × १० (१० खरब) है यदि विश्व की सभी आकाश गंगाओं में पाये जाने वाले ताराओं का अनुमान इस हिसाब से करें तो यह संख्या १० घात २४ अर्थात् १० को २४ बार गुणा करने से जो संख्या आयेगी उतनी होगी, जबकि यह अनुमान उस जगत का है जिसके सम्बन्ध में अब कुछ न कुछ जानकारी मिल चुकी है । वैज्ञानिकों का अनुमान है कि जो नहीं जाना जा सकता वह इससे कई अरब गुना बड़ा है । इंग्लैण्ड की जोर्डेल वेधशाला में दुनिया का सबसे बड़ा दूरदर्शी लगाया गया है जिसके एरियल का मुँह २५० फुट चौड़ा और वजन तीन सौ टन है । इसे साधने के लिए विशाल गर्डर स्तम्भ लगाये गए हैं । ऊपर जो अन्तरिक्ष सम्बन्धी जानकारी दी गई है वह अधिकांश इसी वेधशाला की उपलब्धि है जबकि वैज्ञानिकों का कथन है कि विराट् ब्रह्माण्ड की वास्तविक जानकारी करनी हो तो सूर्य जितनी प्रचण्ड इलेक्ट्रॉनिक शक्ति ऊँचाई और व्यास वाला दूरदर्शी होना चाहिए । तात्पर्य यह कि न इतना बड़ा दूरदर्शी बन सकता है और न अनन्त आकाश की विशालता का निश्चित पता लगाया जा सकता है । वैज्ञानिकों ने केवल सैद्धान्तिक अनुमान लगाया है उनके अनुसार सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का व्यास १०००००००००००००००००००००००० किलोमीटर होना चाहिए । स्मरण रहे यह संख्या अनुमान मात्र है अन्तिम सत्य नहीं ।

भगवान ने इतना विशाल ब्रह्माण्ड रच कर तैयार कर दिया । हतभाग्य मनुष्य उस सबको घूम कर देख भी नहीं सकता । गाँवों में सबसे बढ़ा दुर्भाग्य उसका माना जाता है जो कोई बड़ा शहर नहीं देख पाता । जो शहरों की खाक छान चुके होते हैं उनमें से अग्रणी वे माने जाते हैं जो सारे देश का भ्रमण कर लेते हैं । उनमें से एक ही ऐसे निकलते हैं जो समुद्री या हवाई रास्ते से दुनिया के प्रमुख शहरों और देशों का भ्रमण कर लेते हैं । अब कोई चन्द्रमा पर जाता है तो उसका नाम अखबारों में बड़े शीर्षक देकर छपता है । जब कि वैसे ही करोड़ों मनुष्य इस पृथ्वी पर हैं जिन्हें चन्द्रमा तो क्या पृथ्वी से दस मील ऊपर की भी कल्पना नहीं । आखिर मनुष्य को भगवान ने इतना असमर्थ क्यों बनाया ? इस पर विचार करते हैं तो लगता है उसने यदि अपनी इच्छा से संसार बनाया तो मनुष्य के साथ न्याय क्यों नहीं किया ? उसे ऐसी शक्ति क्यों नहीं दी कि वह भी विराट् ब्रह्माण्ड में विहार का आनन्द ले पाता ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इसके लिए भगवान को कोसने के पहले उसके न्याय का अध्ययन कर लेना आवश्यक है, पर उसके लिए आप ब्रह्माण्ड की तुलना में जितने छोटे हैं अपनी तुलना में उतना ही छोटा और बनना पड़ेगा । अपना अहंकार नष्ट करना पड़ेगा । जितने छोटे हो सकते हैं होते चले जाइये । आप देखेंगे कि भगवान ने जो विराट् सृष्टि दृश्य जगत में बनाई है अदृश्य जगत में, सूक्ष्म रूप से वह पूरी-पूरी विद्यमान है । उसको खोजने, उसे पाने, उसमें भ्रमण का आनन्द लेने के लिए अन्यत्र जाने, पैसा खर्च करने या भाग्य को कोसने की आवश्यकता नहीं । अपने आप में छोटे होते चले जाइये आपको उस विराट् के दर्शन अपने में ही हो सकते हैं ।

सूर्य-चन्द्रमा आदि ग्रह-नक्षत्र जितने बड़े हैं 'अमीबा' उतना ही छोटा ०.८ मिलीमीटर का जीव है । जीवाणु विज्ञान के अनुसार सूक्ष्म जीवाणु १/२५००० इन्च का बाल की नोंक से भी छोटा होता है । बैक्टीरिया (जीवाणु) में भी अपनी तरह की चेतना गुण-कर्म-स्वभाव विद्यमान है और अपनी सृष्टि में वह सन्तुष्ट होने के साथ ही उसकी गति ऐसी है जो एक सेकण्ड में पृथ्वी के ओर-छोर की यात्रा मजे में सम्पन्न कर सकता है, जो जितना छोटा उतना ही गतिमान ।

यह छोटापन अभी अन्तिम नहीं है । संसार के सब पदार्थ परमाणुओं से बने हैं । एक परमाणु का व्यास ०.०००००० १ मिलीमीटर होता है और उसमें पाये जाने वाले इलेक्ट्रॉन, प्रोटॉन, न्यूट्रॉन सब सूर्य-चन्द्रमा की तरह शक्ति सम्पन्न हैं । परमाणु विज्ञान में उसे कोई आश्चर्य नहीं माना जाता, जबकि परमाणु की शक्ति को नागासाकी और हिरोशिमा में अच्छी तरह देखा जा चुका है ।

परमाणु के अन्दर उसका नाभिक सृष्टि का सबसे बड़ा आश्चर्य है । यह एक चेतन और मनोमय शक्ति है और उसके अन्दर सम्पूर्ण सृष्टि-सी विद्यमान लगती है जबकि उसका छोटापन उसी तरह कल्पनातीत है जितना ब्रह्माण्ड की विशालता । परमाणु के नाभिक का व्यास ०.०००००००००००१ मिलीमीटर है ब्रह्माण्ड उससे एक सेप्टिलियन गुना बड़ा है । एक सेप्टिलियन १ के बाद ४२ शून्य रखने से बनेगा । ब्रह्माण्ड की तरह यह केवल सैद्धान्तिक अनुमान है जिस तरह ब्रह्माण्ड के विस्तार का अन्तिम निर्णय नहीं किया जा सका उसी तरह परमाणु के 'नाभिक' की लघुता का भी निर्णय नहीं किया जा सकता । यह तो बिन्दु में सिन्धु की अणु में विभु की स्थिति है अर्थात् ब्रह्माण्ड ही परमाणु नाभिक है और परमाणु नाभिक ही ब्रह्माण्ड । यदि हम अपने भीतर बैठे चेतन परमाणु को देख लें तो विराट् ब्रह्माण्ड को देख सकते हैं यदि ह ा अपनी चेतना के 'नाभिक' या मूल को पहचान लें तो विश्व में जो कुछ भी है उसके स्वामी हो सकते हैं ।

इस लघुता तक पहुँचने के लिए दीर्घकालीन अभ्यास और साधनाएँ अपेक्षित हैं क्योंकि उनकी अनुभूति में समय लगाना आवश्यक है । ब्रह्माण्ड की तुलना की तरह चेतन परमाणु इतना छोटा है कि यदि उसके नाभिक का व्यास १/१० मिलीमीटर मानें तो पूरा परमाणु एक भव्य इमारत जैसा लगेगा और बैक्टीरिया जिसका व्यास ऊपर दिया है इतना बड़ा लगेगा जितनी लन्दन से बर्लिन की दूरी । अमीबा जो सबसे छोटा एक कोशीय जीव है इतना बड़ा होगा कि उसे पृथ्वी की गोलाई में दो बार आसानी से लपेटा जा सकेगा । उस तुलना में मनुष्य इतना बड़ा होगा कि पृथ्वी में खड़ा होकर बड़े आराम से सूर्य को पकड़ ले तब पृथ्वी इतनी बड़ी होगी कि दोनों ध्रुवों के बीच की दूरी प्रकाश की गति से चलकर पूरी की जाय तो पूरे दो वर्ष लग जायें । एक ओर ब्रह्माण्ड की यह विशालता एक ओर जीवन की यह लघुता दोनों पर विचार करते हैं तो ऋषियों की 'अणोरणीयान महतो महीयान' वह अणु से भी छोटा और ब्रह्माण्ड के समान विशाल है, की उक्ति को ही शिरोधार्य करना पड़ता है और तब विराट् के दर्शन के लिए उपाय एक ही रह जाता है कि हम अपनी लघुता को अन्तःकरण की गहराई तक अनुभव करें ।

परमाणु-संसार की खोज करते समय जो शक्ति कण पाये गए हैं वह ब्रह्माण्ड के एक नक्शे की तरह हैं । केन्द्रक (न्यूक्लियस) उसका मुख्य भाग है उसके आस-पास शून्य (आकाश) है । उस पोले स्थान में इलेक्ट्रॉन चक्कर लगाते हैं । इनकी संख्या प्रत्येक पदार्थ के परमाणु में अलग-अलग तरह की होती है । चक्कर काटते हुए इलेक्ट्रॉन ठीक उसी प्रकार है जिस प्रकार सौर-मण्डल के ग्रह-उपग्रह । केन्द्रक या नाभिक (न्यूक्लियस) सूर्य की तरह है जो सेन्ट्रीफ्यूगल फोर्स के द्वारा इलेक्ट्रॉनों को नियमित किए रहता है । इलेक्ट्रॉन स्वयं सेन्ट्रीफ्यूगल फोर्स के द्वारा केन्द्रक की ओर खिंचे रहते हैं । यह व्यवस्था भी ब्रह्माण्ड में गुरुत्वाकर्षण सिद्धान्तों की तरह है । यह दृश्य सौर-मण्डल भी ब्रह्माण्ड का एक परमाणु ही है जिसका केन्द्रक सूर्य और इलेक्ट्रॉन अनेक ग्रह-उपग्रह हैं ।

ब्राह्मी चेतना का विस्तार कार्य व्यापार

अपने सूर्य जैसे लगभग ५०० करोड़ ताराओं सौर-मण्डल तथा अकल्पनीय विस्तार वाले धूल तथा गैस वर्तुलों के मेघों के मिलने पर एक आकाश-गंगा बनती है । ऐसी १० करोड़ से अधिक आकाश गंगाओं तथा उनके मध्य के अकल्पनीय आकाश को एक ब्रह्माण्ड कहा जाता है । यह ब्रह्माण्ड कितने हैं ? इस प्रश्न के उत्तर में प्रश्नकर्त्ता से ही उल्टा प्रश्न पूछना पड़ेगा । आपके नगर में रेत के कण कितने हैं ? मनुष्य की बुद्धि एवं कल्पना इस स्थान पर थक जाती है । इसीलिए दर्शन में उसे 'नेति' 'नेति' एवं विज्ञान ने उसे 'अनन्त' कहा है । अध्यात्मवाद ने इस समस्त रचना को ही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नहीं उसके स्वामी, नियन्ता, क्षरक को भी 'अनन्त' नाम से सम्बोधित किया है ।

खगोल विज्ञानियों के अनुसार अपनी पृथ्वी को एक गैस बादल से समुद्र का, पिण्ड गोलक का, रूप धारण प्रायः ११ अरब वर्ष हुए हैं । सौर-मण्डल के अन्य सदस्यों का जन्म भी प्रायः एक साथ हुआ इससे उनकी आयु भी वही मानी जायेगी इसके अपवाद भिन्न-भिन्न ग्रहों में भिन्न-भिन्न संख्या में देखे गए । चन्द्रमा हो सकते हैं जो बाद में बनते रहे हैं । पृथ्वी के चन्द्रमा के सम्बन्ध में कहा जाता है कि समुद्र वाले गड्ढ़े से टूट कर अन्तरिक्ष में विचरण करने वाला पदार्थ भर है । जो गिर तो पड़ा पर पृथ्वी की गुरुत्वाकर्षण परिधि को लाँघ न सकने के कारण उसी के इर्द-गिर्द परिभ्रमण करने लगा । यही बात अन्य ग्रहों के चन्द्रमाओं के सम्बन्ध में भी लागू होती है ।

पृथ्वी की परिधि भूमध्य रेखा पर ४०७६ कि. मी. और ध्रुवों पर ४०००० कि. मी. है । उसका व्यास भूमध्य रेखा पर १२७५३ कि. मी. है । धरातल क्षेत्रफल ५१ करोड़ २ लाख वर्ग कि. मी. है । सूर्य की परिक्रमा करते हुए उसकी गति १००१६१ कि. मी. प्रति घण्टा है । इतनी विशाल हमारी पृथ्वी सौर-मण्डल के मध्य में नहीं है वरन् एक कोने में पड़ी है । ठीक इसी प्रकार अपना सौर-मण्डल भी मन्दाकिनी आकाश गंगा के ठीक मध्य में अवस्थित न होकर एक कोने में पड़ा है । सूर्य प्रति सेकण्ड २२० किलोमीटर की गति से अपने सौर-मण्डल सहित आकाश गंगा केन्द्र की परिक्रमा करता है । इस सन्दर्भ में समझा जा सकता है कि जब से धरती पर मनुष्य का जन्म हुआ है तब से लेकर अब तक उस केन्द्र की एक परिक्रमा भी पूरी नहीं हो पायी है । अपनी आकाश-गंगा केन्द्र से यह सौर-मण्डल ३० हजार प्रकाश वर्ष हटकर है ।

अपनी आकाश गंगा ध्रुव दीप की १६ आकाश गंगाओं में से एक है । पर ऐसे ध्रुव द्वीप भी विराट् में असंख्य बिखरे पड़े हैं । माउण्ट पैलोमर पर लगी हुई २०० इंच व्यास के लेंस वाली संसार की सबसे बड़ी हाले दूरबीन से पता लगाया गया है कि विराट् में कम से कम एक अरब आकाश-गंगाएँ हैं ।

विशालता की माप का पैमाना क्या लिया जाय, यह मानवी बुद्धि की समझ में सहज ही नहीं आता । १३००० किलोमीटर व्यास वाली हमारी पृथ्वी के मुखिया सूर्य का स्वयं का व्यास १३,९०,००० किलोमीटर है एवं उसकी कुल परिधि २७००००० मील है । अनुमानित भार १९ करोड़ ९८ लाख महाशंख टन । वह अपनी धुरी पर २५ दिन ७ घण्टे ४८ मिनट में एक चक्कर लगाता । उसकी सतह पर ६०० डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान है और मध्य गर्भ में १५००००० डिग्री सेन्टीग्रेड । वह दो सौ मील प्रति सेकण्ड की उड़ान उड़ता हुआ महा ध्रुव की परिक्रमा में निरत है यह परिक्रमा २५ करोड़ वर्ष में पूरी होती है । इस परिक्रमा में उसके साथी और भी कई सूर्य होते हैं जिनके अपने-अपने सौर-मण्डल भी हैं ।

पृथ्वी से सूर्य १०९ गुना बड़ा है । दोनों के बीच की दूरी ९३००००० मील है । यदि हम ६०० मील प्रति घण्टे की गति से उड़ने वाले अपने तीव्रतम वायुयानों में बैठकर लगातार उड़ें तो उस दूरी को पार करने में १८ वर्ष लगेंगे ।

एक और उदाहरण वृहस्पति का लें । वृहस्पति का व्यास ८८ हजार मील है । उस पर हजारों मील मोटी गैस के बादलों की परत छाई हुई है । सूर्य से ४८ करोड़ ३० लाख मील दूर होने के कारण वहाँ गर्मी पहुँचाने वाली किरणें बहुत स्वल्प मात्रा में पहुँचती हैं इसलिए वह अत्यधिक ठण्डा है । अन्य ग्रह सूर्य के समीप हैं । हमारी पृथ्वी मात्र सवा नौ करोड़ मील दूर है । मंगल १४।।। करोड़ मील, शुक्र ६।।। करोड़ मील और बुध ३।। करोड़ मील है । अत्यधिक दूरी होने के कारण सूर्य साम्राज्य में रहते हुए भी वृहस्पति बहुत बातों में आत्म निर्भर है । उसे पूरा औपनिवेशिक स्वराज्य मिला हुआ है । कामनवेल्थ का वह सम्मानित सदस्य होते हुए भी अपने बलबूते पर ही अपना क्रिया-कलाप चलाता है ।

हमारे सौर परिवार में ९ ग्रह, ६१ उपग्रहों के अतिरिक्त १५०० छोटे-छोटे ग्रह पिण्ड और भी हैं जिन्हें मध्य ग्रह अथवा एस्टेराइड्स कहते हैं । पुच्छल तारे, उल्काएँ एवं अन्तरिक्षकीय इन्हीं के अन्तर्गत आते हैं । इस समूचे सौर-मण्डल का व्यास १ शंख, १८ अरब किलोमीटर है । ये सभी मन्दाकिनी आकाश-गंगा से प्रकाश पाते हैं ।

जिसे आकाश कहा गया है, जिसमें ब्रह्माण्ड समाया हुआ है, उसे समझने-समझाने की दृष्टि से चार मूल विभाजनों में बाँटा जा सकता है ।

प्रथम क्षेत्र में तो हमारी धरती, उसका वायुमण्डल, चुम्बकीय क्षेत्र आता है । ऊपरी वायुमण्डल का अधिक भाग आवेशित परमाणुओं, अणुओं और इलेक्ट्रॉनों से बना हुआ है । आकाश के इस क्षेत्र में पदार्थ के अस्तित्व का पता आसानी से चल जाता है ।

दूसरा क्षेत्र है—सौर-मण्डल के ग्रहों के बीच में फैला हुआ भाग । यह क्षेत्र सूर्य के बाहरी परिमण्डल (कोरोना) से निरन्तर निकलने वाली पतली और फैलने वाली गैस से भरा हुआ है । इसे 'प्लाज्मा' या सौर वायु कहते हैं । इसी हवा के कारण पुच्छल-तारों की पूँछें सदा सूर्य से विपरीत दिशा में रहती हैं । यही हवा पृथ्वी के चुम्बकीय क्षेत्र को भी पूँछ की शक्ल का पुच्छलतारा बना देती है ।

तीसरा क्षेत्र है—पृथ्वी और सूर्य के बीच की दूरी से प्रायः ५० गुना—सौर-मण्डल से आगे हमारी आकाश गंगा में जुड़े तारों के बीच का भाग । यहाँ भी तारों के बीच के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भाग में पदार्थ के उदासीन और आवेशित कणों से बनी हुई पतली गैस है ।

चौथा क्षेत्र वह आकाश है—जिसमें हमारी आकाशगंगा जैसी अन्य अगणित आकाश-गंगाएँ और उनसे सम्बद्ध असंख्यों चित्र-विचित्र ग्रह-नक्षत्र भरे पड़े हैं । तारे व नक्षत्र दोनों भिन्न-भिन्न हैं । जहाँ तारे अपनी रोशनी से चमकते हैं, वहाँ नक्षत्रों में अपनी रोशनी नहीं होती । वहाँ तारकों की धूप के प्रकाश में आते हैं, तभी प्रकाशवान होते हैं एवं हमें वैसे टिमटिम करते दिखाई पड़ते हैं ।

उस आकाश जिसमें हम ब्रह्माण्ड को संव्याप्त मानते हैं, अर्से से भिन्न-भिन्न मान्यताओं के कारण भिन्न रूपों में देखा जाता रहा है । आज यदि उन्हें हम सुनें तो हँसी आ जायेगी । आकाश के बारे में अतीतकाल के यूनानी लोगों की मान्यता थी कि बादलों में निवास करने वाले देवताओं का सारे आकाश पर राज्य है । वह लोहे की तरह कड़ा है और धरती के कन्धों पर टिका है ।

मैक्सिकोवासी २२ आकाश मानते थे धरती से ऊपर १३ आकाश स्वर्ग हैं जिनमें से सिर्फ पहला ही आँखों से दीखता है । धरती के नीचे ९ आकाश हैं जो नरक हैं ।

दक्षिण अमेरिका के रैड इण्डियन सात आकाश मानते हैं जिनमें से पाँच पृथ्वी के ऊपर तथा दो नीचे हैं । वे इनके रंग भी भिन्न बताते हैं क्रमशः नीला, हरा, पीला, लाल, सुनहरा, बैंगनी और सफेद । इन सबके अधिपति अलग-अलग आकृति-प्रकृति के देवता लोग हैं ।

इसी प्रकार धरती व उसका अन्यान्य ग्रहों से क्या सम्बन्ध है, यह भी विवाद का विषय रहा है । प्रतिपादन के विरोध में भाँति-भाँति के आन्दोलन हुए हैं, प्रतिपादन कर्त्ताओं को यातनाएँ भी सहनी पड़ी थीं । कोपर्निकस अन्यान्यों की अपेक्षा प्रत्युत्पन्न मति होने के कारण बच गए परन्तु मरणोपरान्त उन पर अनेकों अभियोग लगाए गए । पहली बार पृथ्वी के भ्रमणशील होने का प्रतिपादन पोलैण्ड निवासी कापर्निकस ने किया और इसके प्रमाण तर्क का प्रतिपादन उसने अपने ग्रन्थ 'आकाश मण्डल में भ्रमण पथ पर' नामक ग्रन्थ में किया । उसे अनुमान था कि इस प्रतिपादन से पुरातन पंथी ईसाई समाज उसका घोर विरोध करेगा इसलिए उसने चतुरता से काम लिया, उसे रोम के पोपपाल तृतीय को समर्पित किया और ऊपर से ऐसी लीपा-पोती की, प्राचीन प्रतिपादन का खण्डन होते हुए भी कटुता उत्पन्न नहीं हुई । पोप की आढ़ में कुछ दिन तो यह चाल सफल रही पर पीछे जैसे ही उसे लोगों ने बारीकी से पढ़ा वैसे ही ईसाई धर्म के दोनों ही वर्ग प्रोटेस्टेन्ट और रोमन कैथोलिक उसके विरोध में हाथ धोकर पीछे पड़ गए । अन्ततः पोप के आदेश से उस पुस्तक को जब्त कर लिया गया । प्रतिपादन कर्त्ता पर वे अपराध लगाये गए जिनका फल उसे मृत्यु दण्ड ही भुगतना पड़ सकता था । अच्छा इतना ही हुआ अपराध लगाये जाने से ७३ वर्ष पूर्व ही कापर्निकस मर चुका था । अन्यथा उसे भी धरती को भ्रमणशील बताने वाले एक अन्य खगोलज्ञ ब्रूनी की तरह जीवित जला दिया जा सकता था । ऐसे ही प्रतिपादनों पर गैलीलियों को भारी उत्पीड़न सहने पड़े थे । ऐसे अनेकों वैज्ञानिकों ने सोलहवीं से उन्नीसवीं शताब्दी तक ज्योतिर्विज्ञान सम्बन्धी अपनी मान्यताओं पर प्रतिवाद के थपेड़े सहे हैं, पर अन्ततः इस विकासक्रम में ब्रह्माण्ड भौतिकी का ढाँचा भली प्रकार उभर कर आ सका । इसका श्रेय पूरी तरह मानवी अन्वेषण बुद्धि को जाता है जो विराट के दर्शन अनुसन्धान में सतत् लगी रही ।

ब्रह्माण्ड का ९९ प्रतिशत भाग शून्य है । एक प्रतिशत भाग को ही ग्रह-नक्षत्र घेरे हुए हैं । अनुमान है कि आकाश में सूर्य जैसे अरबों तारकों का अस्तित्व है । वह तारे आकाश-गंगाओं से जुड़े हैं । वे उसी से निकले हैं और उसी से बँधे हैं । मुर्गी अण्डे देती है, उन्हें सेती है और जब तक बच्चे समर्थ नहीं हो जाते उन्हें अपने साथ ही लिए फिरती है । आकाश-गंगाएँ ऐसी ही मुर्गियाँ हैं जिनके अण्डे-बच्चों की गणना करना पूरा सिरदर्द है । हमारी आकाश-गंगा एक लाख प्रकाश वर्ष लम्बी और २० हजार प्रकाश वर्ष मोटी है । सूर्य इसी मुर्गी का एक छोटा चूजा है, जो अपनी माता से ३३००० प्रकाश वर्ष दूर रहकर उसकी प्रदक्षिणा १७० मील प्रति सेकण्ड की गति से करता है । आकाश-गंगाएँ भी आकाश में करोड़ों हैं । वे आपस में टकरा न जायें या उनके अण्डे-बच्चे एक-दूसरे से उलझ न पड़ें इसलिए उन्होंने अपने सैर-सपाटे के लिए काफी-काफी बड़ा क्षेत्र हथिया लिया है । प्रायः ये आकाश-गंगाएँ एक-दूसरे से २० लाख प्रकाश वर्ष दूर रहती हैं ।

अनन्त आकाश में गतिशील आकाश-गंगाओं में एक अपने-अपने सौर-मण्डल की भी है, जिसकी चाल २४,३०० मील प्रति सेकण्ड नापी गई है । इस तरह ब्रह्माण्ड चेतन तो है ही, निरन्तर फैल भी रहा है, इसकी हर इकाई गतिशील है । निष्क्रियता कहीं भी दृष्टिगोचर नहीं होती ।

इसी कारण वैज्ञानिक कहते हैं कि अन्यान्य ग्रह-नक्षत्रों की तरह ही अपने इस सौर-मण्डल का भी सृजन हुआ है । वाष्पीय महामेघ न केवल अपने केन्द्र में फटा वरन् उसके टुकड़े भी उसी क्रम से फटते चले गए । अपने-अपने उद्गम केन्द्र के इर्द-गिर्द उसकी आकर्षण शक्ति के कारण परिभ्रमण करने की स्थिति में फँसते चले गए । विस्फोट के जिस क्रम से वितरण विकिरण फैलता है उसी अनुपात से आकर्षण भी उत्पन्न होता है । वह अपने परिकर को एक सीमा तक ही बिखरने देता है । इसके बाद सभी को एक सूत्र में समेट लेता है और परिवार क्रम के अनुरूप निर्वाह करने लगता है । ब्रह्माण्ड में विद्यमान अनेकानेक सौर-मण्डलों के सम्बन्ध में यह घटनाक्रम घटित हुआ है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इसका स्पष्टीकरण देते हुए वैज्ञानिक कहते हैं कि परमाणु के इलेक्ट्रॉन जिस प्रकार चक्कर लगाते-लगाते स्थान बदलते रहते हैं, उसी प्रकार ब्रह्माण्ड में भी जो गतिशीलता के साथ-साथ परिवर्तन क्रम दृष्टिगोचर होता है, वह "ला ऑफ काजेशन" से परे होता है । अर्थात् विद्युत जहाँ एकबद्ध तत्व है, वहाँ उसकी अपनी इच्छा और चेतनता भी है, भले ही वह विद्युत तत्व से कोई सूक्ष्मतर स्थिति हो और अभी उसका अध्ययन एवं जानकारी वैज्ञानिकों को नहीं हो पायी हो । इस मौलिक स्वाधीनता को "ला ऑफ इन डिटरमिनेसी" के नाम से पुकारा जाता है और उसी के आधार पर अब वैज्ञानिक भी कहने लगे हैं कि विश्व की सभी वस्तुएँ एक दूसरे में सम्बद्ध, परस्पर अवलम्बित और एक ही संगठन में पिरोई हुई हैं । सारा संसार अर्थात् पृथ्वी से लाखों दूर के नक्षत्र तक गणित के सिद्धान्तों से बँधे हुए हैं, वैज्ञानिक तब यह मानने को विवश हुए कि सम्पूर्ण जगत एक ही रेशनल सिस्टम के द्वारा संचालित है । प्रकृति में पूर्ण व्यवस्था और नियम बद्धता है और वह सब किसी विश्वव्यापी, स्वयं-भू, शक्तिमान सत्ता के ही अधीन है ।

वेद और विज्ञान : ब्रह्माण्ड-विकास का तुलनात्मक अनुसन्धान

"संसार में जो कुछ भी है वह सापेक्ष है । (१) समय या काल (टाइम), (२) ब्रह्माण्ड (स्पेस), (३) गति (मोशन) और (४) कारण (काजेशन) नाम की कोई मूल वस्तुएँ नहीं हैं वरन् यह परस्पर तुलनाएँ हैं, जो ज्ञान, भावना, विचार या अनुभूति में सन्निहित हैं ।"

(१) समय क्या है ?—कोई घटना प्रारम्भ होती है, फिर वह कहीं-न-कहीं जाकर समाप्त होती है । इन दोनों की अनुभूति के अन्तर का नाम समय है । (२) चन्द्रमा कोई स्वतन्त्र ब्रह्माण्ड नहीं । जिस तरह अनेक प्रकार के तत्वों से पृथ्वी बनी है, वैसे ही तारामण्डल के समस्त तारागण पदार्थ से बने हैं । इन सबके बीच समान वस्तुओं में आकर्षण का सिद्धान्त काम करता है । इसलिए प्रत्येक ब्रह्माण्ड में दूसरे की तुलना में कुछ तत्व अधिक, कुछ कम होते हैं । पृथ्वी में धूल के कण अधिक हैं, सूर्य में हीलियम अथवा अग्नि के । परमाणुओं की तुलना में ब्रह्माण्डों की स्थिति का पता चलता है । यदि परिमाणुओं में समान-जातीय गठबन्धन न होता तो ब्रह्माण्ड ही नहीं पदार्थों की भी अनुभूति नहीं होती । (३) इसी प्रकार गति भी सापेक्ष है । कलकत्ते से हवाई जहाज उड़ता है और लन्दन तक पहुँचने में ३६ घण्टे लेता है । यह हमारी पार्थिव माप है । यदि हम सूर्य में बैठे हुए हों, तो चूँकि सूर्य भी अपने सौर-मण्डल को लेकर चल रहा है, इसलिए वहाँ की गति भी हमें प्रभावित करेगी । तब यह ३६ घंटे का समय हमें आँख मिचकने जितना कम लगेगा ।

ऐसे (४) कारण सिद्धान्त भी हैं । अब वैज्ञानिक भी मानने लगे हैं कि संसार में जो भी पदार्थ हैं वह सब शक्ति हैं और संगठित होकर पदार्थ बनाने वाले प्रोटॉनों एवं इलेक्ट्रॉनों की संख्या यदि कम या अधिक की जा सके, जो कि प्रकृति में अपने आप होता रहता है, तो एक पदार्थ को दूसरे पदार्थ में भौतिक रूप से भी बदल कर दिखाया जा सकता है । उदाहरण के लिए आवर्ती सारणी (पीरियोडिक टेबुल) में इरीडियम, प्लैटीनम, गोल्ड (सोना) और मरकरी (पारा) का परमाणु क्रमांक या प्रोटॉनों की संख्या क्रमशः ७७, ७८, ७९, और ८० होती है । यदि ८० प्रोटॉनों वाले मरकरी (पारा) परमाणु से एक प्रोटॉन कम कर दें तो वही परमाणु सोने का परमाणु हो जायेगा । अब यदि उसमें से भी एक प्रोटॉन निकाल बाहर करें तो वही सोना प्लेटीनम में प्लेटीनम, इरीडियम में रीडियम, क्रमशः ओस्मियम, रीनियम, टंगस्टन आदि में बदलते-बदलते हाइड्रोजन तक अर्थात् कुल एक प्रोटॉन वाले सबसे हल्के तत्व में बदल जायेगा ।

हाइड्रोजन से भी हल्का कोई तत्व संसार में है, यह वैज्ञानिकों को ज्ञात नहीं । इन तत्वों की मूल स्थिति ही सर्वोच्च कारण होनी चाहिए जैसा कि ऊपर के विश्लेषण से पता चलता है । पर वैज्ञानिक उसे अन्तिम रूप से स्थिर नहीं कर सके ।

यहाँ तक जो कुछ लिखा गया वह आइन्स्टीन के सापेक्ष सिद्धान्त का खुलासा मात्र है । इससे सृष्टि के विकास-प्रक्रिया की गहराई में प्रवेश करने का बहुत-सा मसाला मिल जाता है । सच कहा जाय तो महावैज्ञानिक आइन्स्टीन ने भारतीय तत्व दर्शन की भौतिक सीमाएँ पार कर ली थीं, पर भाव-दर्शन की उन्हें जानकारी थी नहीं अन्यथा लोग देखते कि सम्पूर्ण विज्ञान भारतीय अध्यात्मवाद पर ही उतर आया है ।

१९२२ में सोवियत वैज्ञानिक अलेक्सान्देर फ्रीडमैन ने आइन्स्टीन के उपरोक्त सिद्धान्त का गहन अध्ययन कर यह बताया कि इस सिद्धान्त का अर्थ यह हुआ हि ब्रह्माण्ड फैल रहा है अर्थात् पहले कभी सारा संसार किसी छोटे से छोटे व्यास वाले बिन्दु में समाया था—इतने दिनों बाद वह फैलता-फैलता १० करोड़ नीहारिकाओं (नोबुला) और ५० करोड़ प्रकाश वर्ष के घेरे में आ पहुँचा और वह अभी भी तब तक बढ़ता जायेगा जब तक कि पुनः प्रलय नहीं हो जायेगी ।

रूस के ही दूसरे भौतिक शास्त्री क्रुत्सोव ने फ्रीडमैन का लिखा हुआ यह परिपत्र आइन्स्टीन को दिखाया तो वही आइन्स्टीन, जिन्होंने इतने बड़े सिद्धान्त को जन्म दिया था, उक्त धारणा से इन्कार कर बैठे, किन्तु उसके एक वर्ष बाद ही आइन्स्टीन को अपनी भूल मालूम पड़ गई । उन्होंने गणितीय व्याख्या के आधार पर यह सिद्ध कर दिखाया कि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

सचमुच ब्रह्माण्ड फैल रहा है । प्रारम्भ में वह एक बहुत सघन पीटे हुए वजनदार गोले की तरह था और अब जो संसार है, वह भी अनन्त नहीं अर्थात् ब्रह्माण्ड (स्पेस) की कहीं पर सीमा है ।

संसार सीमित है, संसार असीम है । संसार एक है, संसार अनेक है, संसार प्रकाश है, संसार सघन अन्धकार है । इस तरह के परस्पर विरोधाभास कथन भ्रमोत्पादक अवश्य हैं, पर हैं सत्य । वस्तुतः संसार ऐसा ही है । विद्युत न गर्म है न सर्द और गर्म व शीत दोनों धाराएँ उसमें हैं ।

इन चक्कर में डालने वाले सिद्धान्तों ने वैज्ञानिकों को ब्रह्माण्ड-विकास की सही जानकारी प्राप्त करने के लिए उकसाया । तब से अब तक लगातार असंख्य खोजें हुई हैं और फ्रीडमैन की उक्त कल्पना की ही पुष्टि नहीं करतीं वरन् अब उससे भी आगे निकलकर भारतीय अध्यात्म के प्रतिपादनों को छूने लगी हैं । यह पाठक अगली पंक्तियों में स्पष्ट देखेंगे ।

ब्रह्माण्ड के विकास की जानकारी के लिए आजकल अनेक विशालकाय और साधन सम्पन्न वेधशालाएँ अध्ययन और प्रयोगरत हैं । अनजाने 'क्वासार' प्रकाश तरंगों से यह अनुमान लगाया जा रहा है कि अत्यन्त सूक्ष्म अवस्था में अनेक तत्व गैस की स्थिति में बहती हुई नीहारिकाएँ (नोबुला) किसी न चुकने वाले ऐसे प्रकाश स्रोत से आ रही हैं जो सम्पूर्ण सृष्टि का केन्द्र बिन्दु है, उसके वर्तमान स्वरूप का अभी पता नहीं है, पर वैज्ञानिक उसकी पूर्व स्थिति का पता लगाने में अवश्य जुटे हैं ।

अभी इस क्षेत्र में अधिकांश परिकल्पनाएँ ही काम कर रही हैं । कोई तो कहता है कि जिन प्रारम्भिक कणों से ब्रह्माण्ड की रचना हुई वह इतने गर्म थे कि ब्रह्माण्ड का जब विस्तार प्रारम्भ हुआ तब उसके कुल दस मिनट बाद तापमान एक अरब डिग्री सेन्टीग्रेड था । उसमें स्थूल कण न होकर केवल न्यूट्रॉन थे । रूस के वैज्ञानिक डॉ. चाकोब जेल्डोविच का विचार इससे भिन्न है । उनका कहना है कि सृष्टि के मूल विकास की प्रक्रिया हाइड्रोजन से प्रारम्भ होती है । उसमें भाग लेने वाले अणुओं में अकेले न्यूट्रॉन ही नहीं थे वरन् प्रोट्रॉन, इलेक्ट्रॉन भी थे । अत्यधिक शीत के कारण हाइड्रोजन एक जमे हुए पदार्थ के रूप में था । वही टूट-टूट कर बूंद और परमाणुओं के रूप में फैलता चला गया और तापमान तथा वायु दाब (प्रेशर) आदि की विभिन्न परिस्थितियों में आवर्ती सारणी के अनेक पदार्थों में बदलता चला गया । आज जो अनेक तारागण, पृथ्वी आदि दिखाई देते हैं वह सब इस जमे हुए हाइड्रोजन के ही परिवर्तित और परिवर्द्धित रूप हैं ।

ब्रह्माण्ड-विकास की इस वैज्ञानिक जानकारी को जब सृष्टि-उत्पत्ति विषयक ऋषि प्रणीत वेद से तुलना करते हैं तो पता चलता है कि हमारी जानकारियाँ कितनी अत्याधुनिक तथा दर्शन कितना विज्ञानसम्मत रहा है । विज्ञान की दिनों-दिन बढ़ती प्रगति निरन्तर भारतीय सिद्धान्तों की ही पुष्टि करती चली जा रही है, जो लोग यह सोचते हैं कि भारतीयों ने केवल भावनाओं की ही महत्ता प्रतिपादित की, उन्हें अब यह भी जानना चाहिए कि हमारा प्रत्येक प्रतिपादन भौतिक विज्ञान की ही आधारशिला पर रहा है ।

ऋग्वेद के (१०।९०) पुरुष सूक्त और दसवें मण्डल में प्रयुक्त कई सूक्त, मन्त्र या ऋचाओं में सृष्टि विकास विषयक जो भी निर्देशन है वह न केवल उपर्युक्त वैज्ञानिक अनुसन्धानों से मेल खाता है वरन् उससे भी परिमार्जित शुद्ध ज्ञान है । साथ ही उसमें आत्मा के उत्थान और विकास का विज्ञान भी संयुक्त होने के कारण वह मनुष्य मात्र के लिए लाभदायक भी है ।

भौतिक शास्त्रियों ने हाइड्रोजन सरीखे किसी पदार्थ को ब्रह्माण्ड-विकास का मूल माना है । इस सम्बन्ध में सभी वैज्ञानिकों में मतभेद है जबकि हमारे सभी प्राचीन ग्रन्थकार इस सम्बन्ध में एकमत रहे हैं कि यह सम्पूर्ण जगत एक ही पुरुष या परमात्मा की इच्छा या आदि तत्व में क्षोभ के कारण उत्पन्न हुआ । पुरुष शब्द का अर्थ मनुष्य से जान पड़ता है । पर वस्तुतः पुरुष का अर्थ 'सम्पूर्ण जीव जगत में व्याप्त चेतना' से है, जो अव्यक्त, अक्षर, अविनाशी और अनादि है । उसे ही परब्रह्म कहा है । श्वेताश्वर उपनिषद् के ऋषि से एक जिज्ञासु प्रश्न करता है—

'कालः स्वभावो नियतिर्यदृच्छा भूतानि योनिः पुरुष इति चिन्त्यम्' १।२

महात्मन् ! काल, स्वभाव, नियति, यदृच्छा, पंचभूत, प्रकृति तथा पुरुष में प्रधान कौन है ?

इस पर उपनिषद्कार उत्तर देता है—'सतं परं पुरुषं उपैति दिव्यम्'—वह दिव्य पुरुष ही प्रधान है ।

आइन्स्टीन ने सृष्टि के मुख्य मानक (फैक्ट्स) चार ही माने थे । पर सच बात यह है कि—'मनुष्य के स्वभाव और विराट् चेतना की कार्य-प्रणाली प्रकृति के स्वभाव और क्रिया की जानकारी' भी उसमें पाँचवीं संयुक्त होनी चाहिए । संसार जितना दृश्य है उतना ही मानसिक और आत्मिक भी । आत्मा और मन के विज्ञान को छोड़ा नहीं जा सकता ।

चेतना जो पुरुष रूप में थी वह 'हिरण्यगर्भ' तथा 'प्रजापति' रूप में थी । हिरण्यगर्भ का अर्थ 'प्रकाश व अग्नि स्वरूप' और प्रजापति का अर्थ 'उसमें भरी हुई चेतना, इच्छा व विचार शक्ति' से ही है । फिर जब उस पुरुष में क्षोभ उत्पन्न हुआ, तो उसने अपने तेजस् कणों से शीत कणों की उत्पत्ति की (पुरुष भी तत्व है) उन्हें आपः कण कहा गया । इन आपः, जिनका अर्थ सलिल होता है, को हाइड्रोजन ही मानना चाहिए । क्योंकि आपः का अर्थ स्थूल जल से नहीं, सूक्ष्म जल से है और हाइड्रोजन भी जल बनाने वाला ही तत्व है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यहाँ से भारतीय विज्ञान व पाश्चात्य में तुलना प्रारम्भ हो जाती है—अपां सघातो विलयनञ्च तेजः संयोगात्'—वैशेषिक दर्शन ५।२।८ । इन आपः कणों में संपीड़न (प्रेसर) उत्पन्न होने से क्रमशः एक परमाणु एक अणु (हाइड्रोजन) द्वयणुक अर्थात् दो प्रोटॉन या इलेक्ट्रॉन वाला (हीलियम) त्रसरेणु अर्थात् तीन इलेक्ट्रॉन वाला (लीथियम) आदि अनेक गैसों, धातुओं, खनिजों आदि प्रकृति की उत्पत्ति होती चली गई ।

यह क्रम आवर्ती सारणी के अनुसार ही है, पर हमारे यहाँ आपः (जल), अग्नि और वायु की स्थिति को मुख्य माना है । धातुओं और खनिजों में उनकी उपस्थिति अनिवार्य रूप से रहती है । इसलिए यह सब तत्व नहीं माने गए जो ठीक भी है । तत्व तो वह जो है रासायनिक क्रिया में भाग लेते हैं । रासायनिक क्रिया में मूल रूप से अग्नि, जल, वायु (एअर, प्रेसर और टेम्परेचर) ही भाग लेते हैं, इसलिए उन्हीं को तत्व कहा जाना ठीक है । यदि अग्नि आपः और दबाव आदि न हों तो रासायनिक क्रिया कभी हो ही नहीं सकती ।

इस तरह सृष्टि-विकास की मूल प्रक्रिया अग्नि और जल-कणों से ही गैस रूप में होती है । नीहारिका एक प्रकार की गैस ही है जो वायु के संसर्ग में आते ही दूसरे-दूसरे भौतिक तत्वों की उत्पत्ति और अनेक ब्रह्माण्डों का सृजन करती है । शतपथ ब्रह्माण्ड के छठवें काण्ड में लिखा है—

सोऽयं पुरुषः प्रजापतिरकामयत् ब्रह्मैव प्रथममसृजत त्रयीमेव विद्याम् ॥ ८॥ सोऽपोऽसृजत । वाच एव लोकात् वागेवास्य सासृज्यत् । सेदं सर्वम् आप्नोद यदिदं किं च यदाप्नोत् तस्मादायः यदवृणोत् तस्माद्वा ॥ ९॥

अर्थात् प्रारम्भ अग्नि रूप-पुरुष-प्रजापति ने अपने आपको एक से बहुत होने की इच्छा की । तब उससे आपः उत्पन्न हुए, उसने ही सर्वप्रथम शब्द उत्पन्न कर इन आपः कणों को उससे आच्छादित किया ।

यत्र वै यज्ञस्य शिरोऽछिद्यत तस्य रसो द्रत्वापः प्रविवेश तेनैवैतद् रसेन आपः स्यन्दन्ते ।

अर्थात् प्रजापति का सिर छिन्न हुआ, उसका रस बहकर आपों में प्रविष्ट हुआ । वह रस ही आता है, जो आपः बहते हैं ।

यह आपः ही गैस अवस्था में जल परमाणुओं वाली नीहारिकाएँ हैं, जो ब्रह्म से बहती हुई अनेक ब्रह्माण्डों की रचना करती हैं । इससे यह सिद्ध होता है कि जहाँ विज्ञान वाला भाग वेद और भौतिक विज्ञान दोनों में मिलता-जुलता है, वह पुरुष का अर्थात् ईश्वर का सिद्धान्त गलत नहीं होना चाहिए ।

भारतीय तत्व-दर्शन की पुष्टि में साइन्स का यह सिद्धान्त बड़ा सहायक सिद्ध हुआ है कि आपः में शब्द को आच्छादित किया । अन्तरिक्षे दुन्दुभयो वितना बदन्ति—अधिकुम्भाः पर्यायन्ति । (जैमिनी २।४०४) । अर्थात् अन्तरिक्ष में दुन्दुभि के समान विस्तृत और सर्वव्यापी परम वाक्-ध्वनि होती रहती है । अब तक यह बात समझ में आने न वाली थी पर जब सूर्य की खोज करते-करते सन् १९४२ में मक्क्रिय ने इस तरह की ध्वनि सचमुच सुनी तो वह अश्चर्यचकित रह गया । उसने अपनी 'फिजिक्स ऑफ दि सन एण्ड स्टार्स' पुस्तक के ८३ पेज पर लिखा है कि—'श्री जे. एस. दे द्वारा वर्णित सूर्य से आने वाली ध्वनि (सोलर न्वाइज) गलत नहीं है वरन् सूर्य की ध्वनि की तरह ही और भी तारा-मण्डलों (ग्लैक्सीज) से ध्वनि-तरंगें आ रही हैं । वह सौर-घोष रसोलर न्वाइजे के समान ही हैं । उनका अनुसन्धान किया जाना बहुत आवश्यक है ।'

इस कथन से यह सिद्ध होता है कि आकाश कहीं भी शून्य नहीं है । यदि ऐसा होता तो ध्वनियाँ नहीं आतीं । शब्द-कम्पन किसी-न-किसी माध्यम से ही चलते हैं । वैज्ञानिकों की यह खोजें जब उस आदि केन्द्र तक पहुँचेंगी, जहाँ से ब्रह्म प्रकीर्ण होता है, तब न केवल समय व ब्रह्माण्ड सीमित हो जायेंगे वरन् समस्त वाक् भी 'ॐ' जैसी किसी विराट् ध्वनि में समाये दिखाई देंगे । वहाँ सापेक्ष कुछ भी नहीं होता, सब कुछ अमर आनन्दमय और परिपूर्ण होता है । उसे प्राप्त करने का भाव विज्ञान भी आइन्स्टीन और दूसरे वैज्ञानिक प्रकट कर सकें, संसार का दिक्भ्रम तभी दूर हो सकता है ।

उस मूल निरपेक्ष, अव्यक्त और अक्षर, चेतना तक आत्म-चेतना की गति का वैज्ञानिक विश्लेषण अन्यत्र करेंगे । उसके लिए यह जानकारी बहुत सहायक होगी ।

विराट् को पढ़ें ही नहीं कुछ अर्थ भी निकालें

डॉ. विकी नामक प्रसिद्ध खगोलज्ञ से एक बार एक पत्रकार ने प्रश्न किया आप बता सकते हैं अति सूक्ष्म से अति विशाल कितना बड़ा है ? डॉ. विकी ने खड़िया उठाई और एक बोर्ड में लिखा १०००००००००००००० ०००००००००००-०००००००००००००० (१० से आगे ४१ शून्य) गुना । जबकि यह मात्र अनुमान है सत्य में विराट् जगत कितना विराट् है उसकी कोई माप जोख नहीं है ।

उसी प्रकार अणु इतना सूक्ष्म है कि उसकी सूक्ष्मता की सही माप कठिन है । परमाणु के नाभिक का व्यास ०००००००००००००१ मिली मीटर होता है । इस नगण्य जैसी स्थिति को आँखें इलेक्ट्रॉनिक सूक्ष्मदर्शी से भी कठिनाई से ही देख पाती हैं । दोनों परिस्थितियाँ देखते ही ऋषियों का "अणोरणीयान महतोमहीयान" अर्थात्—"वह अणु से अणु और विराट् से भी विराट् है" वह पद याद आता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

"मनुष्य इन दोनों के मध्य का एक अन्य विलक्षण आश्चर्य है ?" यह कहने पर डॉ. विकी से प्रश्नकर्त्ता ने पूछा—सो क्यों ? इसका उत्तर देते हुए उन्होंने बताया, मनुष्य जिन छोटे-छोटे कोशों (सेल्स-शरीर की सूक्ष्मतम इकाई का नाम सेल है यह जीवित पदार्थ का परमाणु होता है) से बना है उनकी संख्या भी ऐसी ही कल्पनातीत अर्थात् ७०००००००००००००००००००००० । इसमें आश्चर्य यह है कि इन सभी अणुओं में प्रकाशमान् नाभिक की संगति आकाश के एक-एक तारे से जोड़ें तो यह देखकर आश्चर्य होगा कि समस्त ब्रह्माण्ड इस शरीर में ही बसा हुआ है । डॉ. विकी के इस कथन और ऋषियों के "यत् ब्रह्माण्डे तत्पपिण्डे" जो कुछ ब्रह्माण्ड में है वह सब मनुष्य देह में है । ऐसी विलक्षण और विराट् देह प्राप्त करके भी मनुष्य जब क्षुद्र जीव-जन्तुओं का सा जीवन जीता है तो ऐसा लगता है कि मनुष्य को इस शरीर की देन देकर भगवान ने ही भूल की अथवा मनुष्य ने स्वयं ही उस सौभाग्य को अपने अज्ञान द्वारा आप नष्ट कर लिया ।

मनुष्य सूर्य मण्डल के जीवन चक्र हैं । सूर्य से सवा नौ करोड़ मील दूर रहने वाली हमारी पृथ्वी को ग्रह कहते हैं । ग्रह इसलिए कहते हैं क्योंकि इसका अपना प्रकाश नहीं है यह सूर्य की द्युति से चमकती है । शुक्र, मंगल, वृहस्पति, शनि, यूरेनस, प्लूटो सभी सूर्य से उधार प्रकाश पाकर चमकते हैं । इसलिए इन्हें ग्रह-उपग्रह कहते हैं, जो अपनी चमक से चमकते हैं उन्हें तारा कहते हैं । सूर्य इस परिभाषा के अन्तर्गत एक तारा ही है । इसके आठ ग्रह हैं । आठों ग्रहों के अपने-अपने चन्द्रमा हैं । कम से कम १५०० छोटे उपग्रह भी सौर परिवार के सदस्य हैं । अपने सौर-मण्डल में दो विशाल उल्का पुंज और पुच्छल तारे भी हैं ।

अन्य तारे, सूर्य और उसके अन्य सदस्य ग्रह-उपग्रहों सें मिलकर बना संसार एक आकाश गंगा कहलाता है । हम जिस 'स्पाइरल' आकाश गंगा में रहते हैं उसमें विभिन्न गैसों की बनी १९ नीहारिकाएँ हैं । अपना सौर-मण्डल उन्हीं में से एक है । प्रत्येक नीहारिका में २५ खरब तारों के होने का अनुमान है । इस तरह अपनी आकाश गंगा में ही २५ × १९ = ४७५ खरब तारागण होंगे ।

१९ नीहारिकाओं वाली आकाश गंगा का क्षेत्रफल १००००० × ३२००० = ३२०००००००० वर्ग प्रकाश वर्ष है । १ प्रकाश वर्ष में १८६००० × ६० × ६० × २४ × ३६५ $\frac{१}{४}$ = ५८६९७१३६००००० मील होते हैं फिर ३२०००००००० वर्ग प्रकाश वर्षों की दूरी का तो कोई अनुमान ही नहीं हो सकता ४७५ खरब तारामण्डल तो इस क्षेत्र के केवल १ प्रतिशत भाग में बसते है शेष ९९ प्रतिशत भाग तो शून्य है । देखने में ऐसा लगता है कि तारागण बहुत पास-पास हैं यदि वे चलते होंगे तो प्रतिक्षण आपस में टकराते रहते होंगे पर आकाश में कोई भी तारा परस्पर २५०००००००००००० मील दूरी से कम नहीं ।

आकाश की गहराई की सीमा यहीं समाप्त नहीं हो जाती । अभी तक तो अपनी आकाश गंगा में ही चक्कर काट रहे हैं । हमें अपनी पृथ्वी स्थिर और सूर्य को उसके इर्द-गिर्द चक्कर काटते दिखाई देता समझ में आता है पर खगोलज्ञों ने सिद्ध कर दिया है कि सूर्य नहीं पृथ्वी ही सूर्य की परिक्रमा करती है । यह सब सीमित दृष्टिकोण की बातें हैं जिस प्रकार मनुष्य अपने आपको एक गाँव, एक प्रान्त, एक देश का ही निवासी मानकर रहन-सहन, खान-पान, वेशभूषा, भाषा, संस्कृति के प्रति संकुचित दृष्टिकोण अपनाता है पर जब वैज्ञानिकों के यह सन्दर्भ सामने आते हैं तब पता चलता है कि अनन्त आकाश के क्षुद्रजन्तु मनुष्य-मनुष्य में कोई भेद नहीं । समस्त मनुष्य जाति एक है । उसे एक नियम व्यवस्था के अन्तर्गत परस्पर मिल-जुलकर रहना चाहिए । यदि वह परस्पर बैर-भाव रखता, स्वार्थ और संकीर्णता की बात सोचता और करता है तो यह उसकी अबुद्धिमत्ता ही कही जायेगी ।

इस सम्बन्ध में वैज्ञानिकों के कथन भी पूर्ण सत्य नहीं । उनके द्वारा प्रतिष्ठापित मान्यताएँ अभी हमारी दार्शनिक मान्यताओं और हमारे ऋषियों की उपलब्धियों के सामने वैसी ही हैं जैसे अन्त आकाश में आकाश-गंगा और नीहारिकाओं के सिद्धान्त हमें जीवन की वास्तविकता को भौतिक दृष्टि से ही नहीं निरीक्षण करना चाहिए वरन् जैसा वेद कहते हैं—

पतंगमक्तमसुरस्य मायया हृदा पश्यन्ति मनसा विपश्चितः।
समुद्रे अन्तः कवयो वि चक्षते मरीचीनां पदमिच्छन्ति वेधसः ॥

—ऋग्वेद १०/१७७/१

परमात्मा की अद्भुत इच्छा द्वारा शरीर धारण करेक प्रकट हुए मनुष्यों ! अपने आपको ज्ञान भक्ति और मनन द्वारा प्राप्त करो । संसार समुद्र के बीच प्रत्येक पदार्थ को कवि की दिव्य दृष्टि से देखना चाहिए, जो ध्यान में स्थित होकर तेज के मूल स्थान को ढूँढ़ते हैं वही आत्मा का पूर्ण रहस्य प्राप्त करते हैं ।

विज्ञान और ब्रह्माण्ड की गहराइयाँ उसी ओर लेकर चल रही हैं । अब यह निश्चित हो चुका है कि सूर्य भी अपने समस्त परिवार के साथ अपनी आकाश गंगा के केन्द्र से ३३००० प्रकाश वर्ष को दूरी पर रहकर १७० मील प्रति सेकण्ड की गति से उसकी परिक्रमा कर रहा है । इस तरह हम सौर-मंडल-नीहारिका से आकाश-गंगा के सदस्य हो गए । जितना यह विराट् बढ़ा हम और छोटे हो गए उसी के अनुसार हमारे विचार और व्यवहार का तरीका भी बदलना चाहिए, तब तक जब हम सम्पूर्ण अस्तता को प्राप्त नहीं कर लेते ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

अमेरिका की माउन्ट पैलोमर वेधशाला में सबसे बड़े २०० इंच व्यास वाली दूरबीन है इसे वैज्ञानिक हाले ने बनाया था । बड़े दृष्टिकोण से संसार की असलियत का सबसे अधिक स्पष्ट और सही अनुमान होता है । इस दूरबीन से देखने पर पता चला कि अपनी आकाश-गंगा से ३००००००००० प्रकाश वर्ष अर्थात् लगभग २०००००००००००-०००००००००० मील की दूरी पर सूर्य मण्डल जैसे १००००००००० और सौर-मण्डल या नीहारिकाएँ हैं । ऊपर दिए आँकड़ों के अनुसार इन नीहारिकाओं में तारागणों की संख्या २५०००००००००० खरब होनी चाहिए । जबकि इन तारागणों द्वारा घेरे जाने वाला क्षेत्र कुल १/१०० ही होगा अर्थात् सम्पूर्ण विस्तार इन तारागणों के क्षेत्रफल से कहीं ९९ गुना अधिक होगा ।

इस सारे नक्शे को एक कागज में उतारना पड़े और दूरी का मापक १ प्रकाश वर्ष को १ इंच के बराबर माना जाय तो भी कागज की लम्बाई कई नीहारिकाओं की लम्बाई से बढ़कर होगी । ज्यामिति शास्त्र (ट्रिगनोमेट्री) के अनुसार चन्द्रमा की दूरी निकालने के लिए चार हजार मील की लम्बी आधार रेखा चाहिए । फिर इन नीहारिकाओं में बसने वाले तारे तो इतनी दूर हैं कि उनकी दूरी निकालनी पड़ जाय तो २० करोड़ मील लम्बी तो आधार रेखा ही चाहिए इतनी बड़ी पटरी (फुटा) बनानी सम्भव हो जाय तो उसका एक छोर पृथ्वी में रखकर नापने से भी सूर्य की आधी दूरी तक की ही माप हो सकेगी । सूर्य को पाने के लिए उसके दो गुने से भी अधिक लम्बाई आवश्यक होगी ।

अनन्त विस्तार के यह सन्दर्भ संकेत करते हैं कि मनुष्य अणु से ही उलझा न रहकर विराट् का अर्थ भी निकाले और विराट् बने भी भगवान ने उसे जो सर्व शक्ति सम्पन्न देह और बुद्धि दी है वह भी इसीलिए कि उसे तुच्छ जीवों की सी स्थिति में ही पड़े न रहकर आत्मा का उत्थान और कल्याण करना चाहिए ।

क्षुद्रता छोड़ें : महानता की ओर बढ़ें

खगोल विद्या के अनुसार यह ब्रह्माण्ड निरन्तर बढ़ और फैल रहा है । बिराट् की पोल में प्रत्यक्ष ग्रह-नक्षत्र किसी असीम अनन्त की दिशा में द्रुतगति से भागते चले जा रहे हैं । यों यह पिण्ड अपनी धुरी और कक्षा में भी घूमते हैं पर हो यह रहा है कि वह कक्षा, धुरी और मण्डली तीनों ही असीम की ओर दौड़ रहे हैं । सौर-मण्डल एक-दूसरे से दूर होते जा रहे हैं । यह दौड़ प्रकाश की गति से भी कहीं अधिक है, जो तारे कुछ समय पूर्व दीखते थे वे अब अधिक दूरी पर चले जाने के कारण अदृश्य हो गए ।

इसे विस्तार भी कह सकते हैं—विघटन भी और यह भी कह सकते हैं कि इसका अन्त एकता में होगा । गोलाई का सिद्धान्त अकाट्य है । प्रत्येक गतिशील वस्तु गोल हो जाती है । स्वयं ग्रह नक्षत्र इसी सिद्धान्त के अनुसार लौकोर, तिकोने, आयताकार न होकर गोल हुए हैं । यह ब्रह्माण्ड भी गोल है । नक्षत्रों की कक्षाएँ भी गोल हैं । इस गोल वृत्त की लपेट में आगे यह दौड़ अन्त में किसी न किसी बिन्दु पर पहुँच कर मिल ही जायेगी और इस वियोग प्रक्रिया को संयोग में परिणत होना पड़ेगा ।

सौर-मण्डल इसलिए व्यवस्थित, जीवित और गतिशील है कि वहाँ प्रत्येक ग्रह अपनी मर्यादाओं में चल रहा है और एक-दूसरे के साथ अदृश्य बन्धनों में बँधा हुआ है । यदि यह प्रकृति इन ग्रहों की न होती तो वह न जाने कब का बिखर गया होता और टूट-फूटकर नष्ट हो गया होता ।

मानव समाज को सौर-मण्डल से ऊर्जा ही नहीं, प्रेरणा भी ग्रहण करनी चाहिए । हम सब अपनी मर्यादाओं में रहें । कर्तव्य और उत्तरदायित्वों को समझें और उस तरह का उद्धत आचरण न करें जिससे दूसरों के साथ अन्याय होता हो, उनके उचित अधिकारों का हनन होता हो ।

स्वार्थवादी अलगाव की वृत्ति मोटी दृष्टि से लाभदायक प्रतीत होती है, क्योंकि हम किसी के प्रति स्नेह सद्भाव रखें, क्योंकि हम किसी की सेवा सहायता की बात सोचें, क्यों अपना समय और ध्यान दूसरों के हित चिन्तन में लगायें ? अपनी योग्यता का लाभ स्वयं ही क्यों न उठायें । यह सोचना अदूरदर्शिता पूर्ण है, क्योंकि इससे उस परम्परा का व्यतिरेक होता है जिसको अपनाकर मनुष्य जाति को इतना आगे बढ़ सकने का अवसर मिला है । हम सब स्वार्थरत रहें और दूसरे लोग हमारे प्रति सहयोग सद्भाव रखें, यह कैसे होगा । क्रिया की प्रक्रिया नितान्त स्वाभाविक है, हम जितने स्वार्थी होते जायेंगे, उसका असर समीपवर्ती लोगों पर सुनिश्चित रूप से पड़ेगा । वे भी इसी प्रकार की संकीर्णता का परिचय देंगे और अपने लिए किसी का सहयोग सद्भाव प्राप्त कर सकना सम्भव न रहेगा । मनुष्य कितना ही बुद्धिमान या सक्षम क्यों न हो उसकी भौतिक प्रगति और आन्तरिक प्रसन्नता दूसरों के सहयोग के बिना एक कदम भी आगे चल नहीं सकती । स्वार्थपरायण होने में अपनी शक्ति दूसरों के लिए खर्च न करने का जितना लाभ है उससे हजार गुनी हानि दूसरों के सहयोग और सद्भाव से वंचित हो जाने की है इसलिए यदि विशुद्ध गणित के आधार पर लौकिक दृष्टि रख कर ही विचार करें तो भी स्वार्थपरायणता की रीति-नीति अपनाना प्रत्यक्ष घाटे का सौदा है । आत्मिक प्रगति तो निश्चित रूप से मर्यादा पालन और उदार दृष्टिकोण पर पूर्णतया अवलम्बित है । अपने आपकी दृष्टि में, दूसरों की दृष्टि में केवल उदात्त रीति-नीति अपनाने वाला ही सम्मानास्पद हो सकता है । जड़ दीखने वाले ग्रहों में भी चेतन जगत में भी प्रयुक्त होने वाले आदर्श विद्यमान है ऐसा न हो तो वे इतनी विशालता लेकर-विशाल ब्रह्माण्ड में शान्ति और स्वच्छन्दतापूर्वक विचरण न कर सकते ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सौर परिवार अति विशाल है । सूर्य की गरिमा अद्भुत है । सौर परिवार के समस्त ग्रह-उपग्रहों के सम्मिलित वजन से उसका वजन ७५० गुना अधिक है । नौ ग्रहों के अतिरिक्त उसके ३ हजार क्षुद्र ग्रह भी हैं । कई हजार धूम केतु और असंख्य उल्का समूह इस परिवार में सम्मिलित हैं ।

सौर परिवार के ग्रहों को यदि दूरी के हिसाब से क्रमबद्ध किया जाय तो उस शृंखला में क्रमशः बुध, शुक्र, पृथ्वी, मंगल, वृहस्पति, शनि, यूरेनस, नेपच्यून और प्लूटो को बिठाना पड़ेगा । इनमें बुद्ध सबसे छोटा है और वृहस्पति सबसे बड़ा । बुध पृथ्वी से एक तिहाई है और वृहस्पति ११ गुना बड़ा है ।

बुध ८८ दिनों में सूर्य की परिक्रमा करता है उसका सूर्य के सम्मुख रहने वाला भाग पृथ्वी से नौ गुना अधिक गरम रहता है और पृष्ठ भाग अत्यधिक शीतल । पृथ्वी के सबसे समीप शुक्र है । उसका वर्ष २२५ दिन का होता है ।

पृथ्वी सूर्य से ९ करोड़ ३० लाख मील दूर है । पृथ्वी का लगभग ८४ प्रतिशत भाग समुद्र में डूबा है और १६ प्रतिशत जमीन है । पृथ्वी के चारों ओर वायु-मण्डल है जो ऊपर उठते-उठते झीना होता जाता है । दो हजार मील ऊपर जाकर तो नाम मात्र की वायु ही शेष रह जाती है ।

मंगल का वर्ष ६८७ दिन का होता है । उसका व्यास पृथ्वी से आधा है और सूर्य से दूरी १४ करोड़ २० लाख मील ।

वृहस्पति सूर्य की परिक्रमा १२ वर्ष में पूरी करता है, पर उसकी अपनी धुरी पर घूमने की चाल बहुत तेज है । १० घण्टे में ही उसका एक चक्कर पूरा हो जाता है । यह ग्रह बहुत ठण्डा है । हिमांक से भी २०० डिग्री कम उसका तापमान है । पृथ्वी की अपेक्षा वृहस्पति का गुरुत्वाकर्षण बहुत अधिक है । अपने यहाँ की १८ किलो भारी वस्तु का वजन वृहस्पति पर ४२० किलो बैठेगा । उसके १२ चन्द्रमा हैं ।

शनि को सूर्य की परिक्रमा करने में साढ़े उन्तीस वर्ष लगते हैं अपनी धुरी पर १।। घण्टे में चक्कर पूरा कर लेता है । सूर्य से ८८ करोड़ ६० लाख मील दूर है । यह भी बहुत अधिक ठण्डा है, शनि के आस-पास तीन छल्ले घूमते हैं । यह छोटे पत्थरों, धूलि कणों, बर्फ के टुकड़ों से बने हैं । इन छल्लों की मोटाई २० मील से ज्यादा नहीं पर व्यास १ लाख ७० हजार मील है । शनि पर ९ चन्द्रमा उदय होते हैं ।

यूरेनस की सूर्य परिक्रमा ८४ वर्ष में पूरी होती है । उसके ५ चन्द्रमा हैं । वरुण १६५ वर्ष में परिक्रमा करता है और २ चन्द्रमा हैं ।

प्लूटो, पृथ्वी से आधा है पर सूर्य से बहुत दूर ३ अरब ६७ करोड़ मील होने के कारण उसकी परिक्रमा २४८।। वर्ष में पूरी होती है ।

ब्रह्माण्ड के विस्तार और दूरी की चर्चा ऊपर हुई । अब समय की दृष्टि से जरा विचार करें । उपलब्ध दूरबीनों से जो दूरस्थ नक्षत्र देखे जा सके हैं । उनका प्रकाश पृथ्वी तक पहुँचने में ५० करोड़ वर्ष लगते हैं । वह दूरवर्ती तारा आज हमें उस रूप में दीख रहा है जैसा कि वह ५० करोड़ वर्ष पहले था ।

इतना विशाल सौर परिवार कैसे बन गया ? यह आत्म विस्तार की ही प्रक्रिया है । एक से अनेक बनने की, अपनी क्षुद्रता को महानता में विकसित करने की हलचल ने ही इस ग्रह परिवार को इतना विशाल बनाकर खड़ा कर दिया । चिर अतीत में सूर्य एकाकी था । उसे अपने 'अहम्' को एकाकी रहना सहन न हुआ । सोचा 'मैं' नहीं 'हम सब' में आनन्द और उल्लास सन्निहित है । इसलिए अपनी सत्ता को केन्द्रित संग्रहीत नहीं रखा जाना चाहिए वरन् उसे बिखेर देना चाहिए । सूर्य में विस्फोट हुआ, वह टुकड़े-टुकड़े छितर गया । मोटी आँख वालों को उस सूर्य की क्षति और अबुद्धिमत्ता कहा जा सकता है । अपने वैभव को उसने बिखेरा क्यों ? पर तात्विक दृष्टि से देखने पर यही निष्कर्ष निकलता है कि यह सूर्य की बुद्धिमत्ता थी । सौर-मण्डल का सुशोभित, सराहनीय और सुविस्तृत क्षेत्र पर अधिकार किए हुए जो स्वरूप आज है वह सूर्य के स्वार्थी बने रहने पर कदापि सम्भव न हो सका होता ।

सूर्य ही क्यों सारा ब्रह्माण्ड इसी आधार पर बना और विकसित हुआ है । ब्रह्माण्ड के प्रारम्भ में एक ही पिण्ड था उसमें विस्फोट होने से आकाश-गंगाओं और ग्रह-नक्षत्रों का सृजन हुआ । यह फैलाव अभी भी चल रहा है । हर ग्रह-नक्षत्र के पथ पर बढ़ रहा है, विस्तार कर रहा है आगे बढ़ रहा है ; लगता है उनकी दूरी फैल रही है और अनन्त में अज्ञात लक्ष्य की ओर वे दौड़े जा रहे हैं । यह अज्ञात लक्ष्य, एकता ही है । जितना ही हम स्वार्थ की परिधि से आगे बढ़ते हैं उतना ही ऐक्य का प्रेम-स्नेह सहयोग का लक्ष्य समीप आता चला जाता है ।

सृष्टि निर्माण के कारणों पर प्रकाश डालने वाले अनेक सिद्धान्तों में से आज दो को ही मान्यता प्राप्त है । एक है जार्ज गैमोव का 'महाविस्फोट सिद्धान्त' जिसमें कहा गया है कि—१० अरब वर्ष पूर्व एक विशाल अग्निपिण्ड का विस्फोट हुआ उसके मलवे से छितरकर आकाश-गंगायें, ग्रह-नक्षत्र, गैस, मेघ आदि बन कर तैयार हो गए । दूसरा प्रतिपादन है प्रो. फ्रेड हायल का 'सतत सृष्टि सिद्धान्त' जिसमें उन्होंने सिद्ध किया है कि यह ब्रह्माण्ड अनादि काल से ऐसा ही था और अनन्त काल तक वैसा ही बना रहेगा । तारकों का जन्म-मरण होता रहता है, पर इससे स्थिति में कोई विशेष अन्तर नहीं आता । नष्ट स्वार्थ होता है । जहाँ परमार्थ की प्रवृत्ति विद्यमान है वहाँ अमृत और अमरत्व का ही बोलवाला रहेगा । ब्रह्माण्ड की आत्म विस्तार प्रवृत्ति उसे अजर-अमर ही बनाये रहेगी ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बड़ों का बड़प्पन इस बात पर निर्भर है कि वे छोटों को भी सँजोये सँभाले रहें । क्षुद्र ग्रहों की भी एक बड़ी शृंखला अपने सौर-मण्डल में विद्यमान है । इन बालकों को मंगल और वृहस्पति ने अपने अंचल में सँभाल कर रखा है, वे उनकी साज सँभाल यथावत् रखते हैं । सौर-मण्डल केवल विशाल ग्रह और उपग्रहों का ही सुसम्पन्न परिवार नहीं है उसमें छोटे और नगण्य समझे जाने वाले क्षुद्र ग्रहों का अस्तित्व भी अक्षुण्य है और उन्हें भी समान सम्मान एवं सुविधाएँ उपलब्ध हैं । मानव समाज का कल्याण भी उसी राह पर चलने में है । यह क्षुद्र ग्रह बने कैसे ? बात मोटी-सी थी । दो समर्थ ग्रह परस्पर टकरा गए । टकराहट किसी को लाभान्वित नहीं होने देती । उसमें दोनों का ही विनाश होता है विजेता का भी और पराजिता का भी । यह विश्व सहयोग पर टिका हुआ है । संघर्ष पर नहीं, संघर्ष की उद्धत नीति अपनाकर बड़े समझे जाने वाले भी क्षुद्रता से पतित होते हैं । यह क्षुद्र ग्रह यह बताते रहते हैं कि हम कभी महान् थे पर संघर्ष के उद्धत आचरण ने हमें इस दुर्गति के गर्त में पटक दिया ।

मंगल और वृहस्पति के बीच करोड़ों मील खाली जगह में क्षुद्र ग्रहों की एक बहुत बड़ी सेना घूमती रहती है । सीरिस, पैलास, हाइडाल्गो, हर्मेस, वेस्ट, ईरास आदि बड़े हैं । छोटों को मिलाकर इनकी संख्या ४४ हजार आंकी गई है । इनमें कुछ ४२७ मील व्यास तक के बड़े हैं और कुछ पचास मील से भी कम ।

कहा जाता है कि कभी मंगल और वृहस्पति के बीच कोई ग्रह आपस में टकरा गए हैं और उनका चूरा इन क्षुद्र ग्रहों के रूप में घूम रहा है पर यह बात भी कुछ कम समझ में आती है क्योंकि इन सारे क्षुद्र ग्रहों को इकट्ठा कर लिया जाय तो भी वह मसाला चन्द्रमा से छोटा बैठेगा । दो ग्रहों के टूटने का इतना कम मलवा कैसे । एक कल्पना यह है कि सौर-मण्डल बनते समय का बचा खुचा फालतू मसाला इस तरह बिखरा पड़ा है और घूम रहा है ।

वैज्ञानिकों का इन क्षुद्र ग्रहों पर बड़ा दाँत है । योजना यह है कि इनमें से जो कीमती हैं उनको पकड़ कर धरती पर लाया जाय और उनमें से धातुएँ निकाली जायें । एक योजना यह है कि इनमें से कइयों को पकड़ कर एक साथ बाँध दिया जाय ताकि अन्तर्ग्रही यात्रा के लिए जाने वाले यानों के लिए उस पर दिव्य स्थल बनाया जा सके ।

विशाल ग्रह उपग्रहों से धातुएँ निकालने, उनका पुल के पत्थरों की तरह प्रयोग करने या जंगली हाथियों की तरह पकड़ कर घसीट लाने की कोई वैज्ञानिक योजना नहीं है । किसी ने ऐसा सोचा भी नहीं कि शनि या वृहस्पति को पकड़ कर धरती के किसी अजायबघर में रखा जाना चाहिए पर बेचारे क्षुद्र ग्रहों के लिए कितनी ही तरह के जाल बुने जा रहे हैं । क्षुद्रता एक प्रकार की विपत्ति ही है, हमें आत्म-विस्तार की बात सोचनी चाहिए कि व्यक्तिवाद की, निजी लाभ की, स्वार्थ भरी संकीर्णता की परिधि छोड़कर आत्म विस्तार की दिशा में आगे बढ़ना चाहिए । निखिल विश्व में यही क्रम चल रहा है ग्रह-नक्षत्र इसी रीति-नीति का अनुसरण कर रहे हैं, क्योंकि हम भी इसी श्रेय पथ पर चलने के लिए कदम बढ़ायें ?

ब्रह्माण्ड अभी बच्चा है, बूढ़ा नहीं हुआ !

ब्रह्माण्ड के विकास के सम्बन्ध में तरह-तरह के सिद्धान्त, परिकल्पनाएँ प्रस्तुत किए जाते रहे हैं, पर कोई भी यथार्थता के समीप नहीं लगता क्योंकि ब्रह्माण्ड अति विराट् एवं व्यापक है । धरती पर तो दूरियाँ समय व गुरुत्वाकर्षण की समस्याएँ भौतिकी के सामान्य नियमों व साधारण ज्यामिती के आधार पर समझी जा सकती हैं, परन्तु जब हम ब्रह्माण्ड का अध्ययन करते हैं, तो पाते हैं कि ये दूरियाँ अरबों, खरबों मील व समय करोड़ों-अरबों वर्षों में नापने पर भी समझ से बाहर है । इन्हें आँखों से देखा भी नहीं जा सकता ।

ब्रह्माण्ड के विभिन्न मॉडल इसके विकास को समझने के लिए वैज्ञानिकों ने बनाये हैं । इसके मूल में यह परिकल्पना है कि ब्रह्माण्ड की संरचना अन्दर से बाहर तक एक समान है यदि इसे एक गेंद मान लिया जाय, तो यह भी सम्भव है कि इसका मात्र वह ही भाग "यूनिफार्म" हो, जिसे हम देख पाये हैं । यदि खगोल का अविज्ञात भाग किसी भी रूप में ज्ञात भाग से भिन्न है तो सभी बनाये गए मॉडल गलत ही माने जायेंगे । वैज्ञानिक यह भी परिकल्पना करते हैं कि ब्रह्माण्ड की संरचना सभी दिशाओं में एक सी है, किन्तु हो सकता है कि ऐसा न हो । सम्भव है विभिन्न दिशाओं में उसकी संरचना असम हो । विश्वविख्यात ज्योतिर्विद् जार्ज ऐबल अपन पुस्तक "ड्रामा ऑफ द यूनिवर्स" में लिखते हैं कि उपर्युक्त सभी आशंकाओं, उलझनों का समाधान अध्यात्म ही दे सकता है ।

ब्रह्माण्ड के विकास का सिद्धान्त सापेक्षवाद से अविच्छिन्न रूप से जुड़ा हुआ समझा जाना चाहिए । वैसे गुरुत्वाकर्षण के सामान्य सिद्धान्तानुसार तो उत्पत्ति के थोड़े ही समय बाद विभिन्न तारों, नीहारिकाओं आदि को गुरुत्व बल के कारण खिंचकर परस्पर समीप आ जाना तथा परस्पर टकराकर खत्म हो जाना चाहिए था । चूँकि ऐसा नहीं हुआ । इसलिए स्पष्ट न्यूटन के सिद्धान्त ब्रह्माण्ड के परिप्रेक्ष्य में गलत हो जाते हैं । सापेक्षवाद कहता है कि समस्त सृष्टि में कोई भी गति प्रकाश की गति से अधिक नहीं हो सकती । यहाँ तक कि गुरुत्वाकर्षण की गति भी प्रकाश के वेग से चलती है अर्थात् उसका वेग ससीम है, असीम नहीं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

किन्तु यह नहीं भूला जाना चाहिए कि धरती की दूरियाँ ब्रह्माण्डीय दूरियों से अगणित गुना छोटी हैं । ब्रह्माण्डीय दूरियाँ करोड़ों-अरबों प्रकाश वर्ष होती हैं, अतः यदि वहाँ गुरुत्वाकर्षण की गति असीम मान ली गई तो बहुत बड़ी गल्ती होगी । वस्तुतः गुरुत्वाकर्षण की गति का ससीम होना ही सामान्य सापेक्षवाद के सिद्धान्त की मूलभूत मान्यता है । इसी थ्योरी को यदि स्पेशल थ्योरी ऑफ रिलेटिवटी से जोड़ दिया जाय तो यह सिद्ध किया जा सकता है कि अन्तरिक्ष सपाट या समतल नहीं, वक्राकार है । धरती हमें मैदान सी नजर आती है, किन्तु है गोलाकार । इसी प्रकार यदि हमें विराट् रूप मिल जाय एवं हम अन्तरिक्ष में खड़े होकर इसका अध्ययन करें तो हमें ज्ञात होगा कि जब हम धरती की सतह पर चल रहे थे तो एक वक्राकार सतह पर चल रहे थे । वैज्ञानिक इसी प्रकार यह निष्कर्ष निकालते हैं कि प्रकाश या कोई भी अन्य विद्युत्चुम्बकीय तरंग जब अन्तरिक्ष में चलती है तो उसका मार्ग सीधा न होकर वक्राकार होता है ।

हमारे ज्ञान की एक सीमा है । फिर भी अन्तः से उद्भूत जिज्ञासा एवं वैज्ञानिक गवेषणाएँ हमें इसी निष्कर्ष पर पहुँचाती हैं कि ब्रह्माण्ड की यह शैशव अवस्था है । अभी वह सतत फैलता जा रहा है । इसकी पुष्टि भौतिकी की उन गणनाओं से मिलती है जो विश्लेषण कर बताती हैं कि प्रकाश जो हम तक पहुँचता है वह अति दूरवर्ती तारों व नीहारिकाओं से करोड़ों प्रकाश वर्षों की दूरी तय करके धरती पर आ रहा है । प्रकाश एक सेकण्ड में एक लाख छियासी हजार मील चलता रहा है । इस तरह ६०× ६० × २४ × ३६५·७५ अर्थात् एक वर्ष तक चलने में प्रकाश जो दूरी तय करता है उसे एक प्रकाश वर्ष कहा जाता है ।

कुछ खरबों मील जैसे जब करोड़ों प्रकाश वर्षों की दूरी निरन्तर पार की जा रही हो तो सहज ही अन्दाज लगाया जा सकता है कि इस ब्रह्माण्ड का विस्तार कितना है व हमारी हस्ती कितनी नगण्य । हमारे सौर-मण्डल के अधिपति सूर्य को ही लिया जाय । उसके व धरती के बीच की दूरी ९ करोड़ ८ लाख मील एवं दूसरी परिभाषा के अनुसार सवा आठ प्रकाश मिनट है क्योंकि इस दूरी को तय करने में प्रकाश को सवा आठ मिनट लगते हैं । इस आधार पर कोई एक प्रकाश वर्ष एवं फिर करोड़ों प्रकाश वर्ष की दूरी का अनुमान लगाने का प्रयास करे तो हतप्रभ होकर रह जायेगा ।

ऐसी अकल्पनीय दूरियों से धरती पर आते हुए प्रकाश का अध्ययन करने के बाद खगोल वैज्ञानिकों ने यह पाया है कि ये दूरियाँ निरन्तर हजारों किलोमीटर प्रति सेकण्ड की गति से बढ़ती चली जा रही हैं । जैसे-जैसे ये दूरियाँ बढ़ रही हैं ऐसा अनुमान है कि जब कोई दूरी दस लाख प्रकाश वर्ष बढ़ जाती है तो उसके विस्तार की गति भी पचास किलोमीटर प्रति सेकण्ड बढ़ जाती है । इस पचास किलोमीटर की संख्या को "हबल स्थिरांक" (Hubble Constant) नाम दिया गया है । इस स्थिरांक का मान मात्र पचास किलोमीटर होना बताता है कि हमारा ब्रह्माण्ड विकास की दृष्टि से अभी लड़कपन में ही है । आज से पचास वर्ष पूर्व इस स्थिरांक का मान त्रुटिवश साढ़े पाँच सौ किलोमीटर प्रति सेकण्ड, प्रति दस लाख प्रकाश वर्ष मान लिया गया था । इस मान को आधार मानकर गणना करने वाले वैज्ञानिक यह अनुमान लगाने लगे थे कि ब्रह्माण्ड अब बूढ़ा हो चला । इसका अन्त अब समीप है, किन्तु आधुनिक यन्त्रों एवं संकल्पनाओं ने शोध को नये आयाम दिए हैं और अब यह प्रमाणित हो चुका है कि ब्रह्माण्ड अभी शिशु से किशोरावस्था में भी प्रवेश नहीं कर पाया है । विस्तार होते-होते बूढ़ा होने व उसके नष्ट होने की कल्पना तो करनी ही नहीं चाहिए ।

नीहारिकाओं का एक निश्चित गति से दूर हटना व क्रमशः दूर हटते जाने की गति बढ़ते जाने के "हबल सिद्धान्त" को समस्त ब्रह्माण्ड पर लागू होते देखा जा सकता है । खगोल वैज्ञानिक हबल यह भी कहते हैं कि जो नीहारिकाएँ अब दूर हटती जा रही हैं, वस्तुतः कभी हमारे समीप ही अवस्थित थीं, किन्तु उनके दूर हटते जाने की अवधारणा ने ब्रह्माण्ड के निरन्तर फैलने के सम्बन्ध की अब पुष्टि कर दी है, किन्तु इस फैलाव की कुछ तो सीमा होनी चाहिए । इसे समझाने के लिए वैज्ञानिकों ने परिकल्पनाओं के आधार पर एक मॉडल बनाया है ।

वे कहते हैं कि ब्रह्माण्ड का उद्भव एक अति सघन पदार्थ के विस्फोट (बिग बैंग) से हुआ । हो सकता है कि इसके बाद यह असीम पदार्थ अपनी अनन्त यात्रा पर चल पड़ा हो एवं विस्फोट की परिणति स्वरूप इस पदार्थ के अनेक टुकड़े एक-दूसरे से दूर भागने लगें । कोई तारे, कोई ग्रह, कोई उपग्रह तथा कोई नीहारिकाओं में परिवर्तन हो गए । एक ओर गुरुत्व की शक्ति इन्हें समीप खींचती हैं एवं दूसरी ओर विस्फोट की शक्ति इन्हें दूर करती जा रही है । कितना विचित्र सृष्टा का खेल है यह । एक दूसरी विलक्षणता यह है कि स्पेस की वक्रता के कारण ब्रह्माण्ड एक नियत स्थान पर प्रकाश या पदार्थ को वापस लौटा देता है । पृथ्वी पर हम चलें तो चक्कर लगाते हुए वापस वहीं आ जायेंगे । इसी प्रकार ब्रह्माण्ड की संरचना इस प्रकार की है कि ब्रह्माण्ड फैलते-फैलते अन्ततः एक ऐसे स्थान पर पहुँच जायेगा जहाँ स्थान-काल की वक्रता के कारण वह वापस मुड़ गया है । इस प्रकार ब्रह्माण्ड इस चरमावस्था में पुनः सिकुड़कर उसी स्थिति में पहुँच जायेगा जो विस्फोट से पूर्व थी । पुनः यह विस्तार-क्रम चालू होगा और वही अनन्त यात्रा पुनः चल पड़ेगी ।

ब्रह्माण्ड की यह विकास यात्रा क्या हमें अनवरत चलने की प्रेरणा नहीं देती ? विराट् को ही हम परब्रह्म मानते हैं जो कि अचिन्त्य, अगोचर, असीम है, उसी की अनुकृति यह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पिण्ड है । हम सभी उस विराट् की तरह अपना यात्रा पथ बनाएँ, सदैव स्फूर्तिवान बने रह कर इस अनन्त यात्रा का आनन्द लेते रहें ।

चला चली की दुनिया में अविचल की प्राप्ति करें

जीवन और मरण के चक्र में घूमते हुए, इस विशाल ब्रह्माण्ड के ग्रह-नक्षत्र आये दिन उत्पन्न होते और मृत्यु के मुख में चले जाते हैं । उनका जीवन काल अरबों, खरबों वर्ष का है । उनका विस्तार अपनी पृथ्वी से लाखों, करोड़ों गुना बड़ा है तो भी जन्म-मरण के बन्धनों में वे भी बँधे हुए हैं । क्या छोटे क्या बड़े सभी काल के ग्रास बने हुए हैं । प्राणी ही नहीं ग्रह-नक्षत्र भी इसी नियति क्रम के आधार पर उदय और अन्त होते रहते हैं ।

ब्रिटेन के खगोल विज्ञानी फ्रेड हायल का कथन है कि ब्रह्माण्ड अनादि काल से लेकर अनन्त काल तक फैलता ही चलेगा । ग्रह-नक्षत्र आपस की दूरी बढ़ाते हुए आगे ही आगे दौड़ते चले जाते हैं । बीच में जो जगह खाली जगह रह जाती है उसमें अपने आप हाइड्रोजन गैस उत्पन्न हो जाती है और फिर उससे नये पिण्ड बनने आरम्भ हो जाते हैं ।

केम्ब्रिज के अन्तरिक्ष शोधक मार्टिन राइल का कथन है कि चिर अतीत में एक भयंकर विस्फोट हुआ था । उसी से विरल गैसों के छाये बादलों में गर्मी और तेजी आयी, वे दौड़ने लगे और सघन बने । विल्सन तथा पालोमर ने सृष्टि का अन्त कैसे होता है । इस प्रश्न पर प्रकाश डालते हुए कहा है—द्रुतगति से फुलाव की ओर दौड़ते हुए ग्रह-नक्षत्र अन्ततः थक जाते हैं । उनकी दौड़ शिथिल हो जाती है । तब उनका गुरुत्वाकर्षण उभर कर आयेगा और बूढ़े तारों में से सब एक-दूसरे को निकट खींचने लगेंगे । तारे एक दूसरे से लड़ पड़ेंगे और प्रलय का दृश्य उपस्थित करेंगे । उसके बाद उस टकराव से उत्पन्न हुई गरम धूलि द्वारा पुनः नवीन सृष्टि का क्रम चल पड़ेगा ।

इनकी दूरी तथा विस्तार परिधि को हम खुली आँखों से नहीं देख सकते । उनकी जानकारी प्राप्त करने के लिए उन सूक्ष्मग्राही यन्त्रों का सहारा लेना पड़ता है जो दूरवर्ती तारकों से निःसृत होने वाली प्रकाश किरणों को पकड़ने और परखने में समर्थ होते हैं ।

यह ग्रह-नक्षत्र न केवल तरंगें फेंकते हैं वरन् उनका शक्ति प्रेषण जो सैकड़ों प्रकार का है उनमें एक प्रेषण रेडियो शक्ति तरंगों का भी है । हमें उनकी जानकारियाँ इस रेडियो तरंगों के आधार पर ही होती हैं । पिछले दशक में डेनिश खगोलवेत्ता मार्टेन रियाडट ने प्रचण्ड शक्तिशाली क्वासर किरणों का पृथ्वी पर आगमन का पता लगाया था । उनका उद्गम आठ अरब प्रकाश वर्ष माना गया है । किन्तु इनका प्रवाह भी स्थिर नहीं वह ज्योति हम से प्रति सेकण्ड २,४०,००० किलोमीटर की चाल से दूर हटती चली जा रही है । इसका कारण वह फुलाव विस्तार की भगदड़ प्रक्रिया ही है ।

विस्तार, संकुचन, जन्म-मरण, सक्रियता, विश्राम जैसी परस्पर विरोधी लगने वाली पर वास्तविक पूरक क्रिया-कलाप के आधार पर ही सृष्टि की गतिविधियाँ चल रही हैं इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए हमें यह मानकर चलना चाहिए कि अपनी स्थिति भी सदा एक जैसी नहीं रह सकती । आज की समर्थता कल की असमर्थता में परिणत हो सकती है । इसलिए वर्तमान का श्रेष्ठतम सदुपयोग करने की ही बात सदा सोचनी चाहिए । इस पश्चात्ताप का अवसर नहीं आने देना चाहिए कि अमुक समय हमें ऐसे सत्कर्म करने का अवसर था, पर हम उस समय आलस्य, प्रमाद अथवा लोभ-मोह वश वैसा नहीं कर सके । आज का जीवन कल मृत्यु में परिणत होना ही है, जब इतने विशालकाय ग्रह-नक्षत्र एक जैसी स्थिति में नहीं रह सकते तो हम तुच्छ प्राणी कैसे सदा विकसित एवं समर्थ रह सकते हैं ।

ब्रह्माण्ड को देखने और समझने के लिए मानवी जिज्ञासा अब इस प्रयास में संलग्न है कि सौर-मण्डल से बाहर निकल कर विश्व ब्रह्माण्ड की झाँकी की जाय और अनुमान को प्रत्यक्ष में परिणत करके देखा जाय कि आखिर यह सारा प्रसार है क्या ? है कैसा ?

सौर-मण्डल से बाहर निकलने के लिए हमें तीव्रतम गति की आवश्यकता होगी और दीर्घकालीन जीवन अभीष्ट होगा अन्यतम अकल्पित दूर तक पहुँचना और लौटना सम्भव ही कैसे हो सकेगा । इस सन्दर्भ में वैज्ञानिकों के जो प्रयास चल रहे हैं, उनमें आशा की क्षीण किरण दिखाई पड़ने लगी है ।

अब तक प्रकाश की गति को ही सर्वोपरि गति माना जाता रहा है । प्रकाश एक सेकण्ड में १ लाख ८६ हजार मील चलता है । आइन्स्टीन कहते थे, इससे तीव्रगति नहीं हो सकती । पर अब 'कर्क' नीहारिका की—गतिविधियों का विश्लेषण करते हुए इस गतिशीलता का नया कीर्तिमान सामने आया है । ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय के डॉ. एल. एल. और डॉ. ज्याफे एनडीन ने इस नीहारिका के विद्युतीय चुम्बकीय क्षेत्र की चल रही गतिशीलता को प्रति सेकण्ड ५,६५,२०० मील नापा है जो प्रकाश गति की तुलना में लगभग चार गुना अधिक है । इस नीहारिका के मध्य एक छोटा सूर्य ऐसा पाया गया है जिसका तापमान अपने सूर्य से १०० गुना अधिक है । वह अपनी धुरी पर प्रति सेकण्ड ३३ बार परिक्रमा कर लेता है, यह भ्रमण गति भी अब तक की कल्पनाओं से बहुत आगे है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

काकभुशुण्डि, अगस्त, नारद आदि ऐसे पुराण पुरुषों का उल्लेख मिलता है जो अन्तरिक्ष यात्राएँ करते रहते थे और दीर्घजीवी थे । अन्तरिक्ष यात्रा के लिए यों दीर्घजीवी होना अनिवार्य मालूम पड़ता है ताकि द्रुतगामी यानों पर सवार होकर जाने पर भी लम्बा फासला पूरा करने में जो समय लगता है उतनी अवधि तक जीवित रहा जा सके । पर अब स्पष्ट हो गया है कि सामान्य स्वास्थ्य और सामान्य जीवन अवधि के लोग भी लम्बी अन्तरिक्ष यात्राएँ करने में सफल हो सकते हैं । आइन्स्टीन द्वारा प्रतिपादित सापेक्षवाद के अनुसार प्रकाश की गति से जरा कम वेग से चलने वाले नक्षत्र यान में समय की प्रवाह गति, पृथ्वी पर समय की प्रवाह गति की अपेक्षा धीमी होती है । इसी बात को अधिक सरलतापूर्वक समझने के लिए यों भी कहा जा सकता है कि अति तीव्रगामी यान में पृथ्वी की अपेक्षा समय धीमी गति से गुजरता है । प्रकाश की गति एक लाख छियासी हजार मील प्रति सेकण्ड है । यदि अन्तरिक्ष यान की गति इसकी ९६ प्रतिशत हो तो पृथ्वी पर जितना समय १०० वर्ष में गुजरेगा उतना समय अन्तरिक्ष यान से १४ वर्ष के करीब ही होगा । पृथ्वी निवासी ३० वर्ष का युवक १०० वर्ष में १३० वर्ष का जराजीर्ण हो जायेगा, किन्तु अन्तरिक्ष यात्री की आयु १४ वर्ष ही बढ़ेगी दोनों युवक जब १०० वर्ष बाद मिलेंगे तो एक १३० वर्ष का होगा और दूसरा ४४ वर्ष का । इस सुविधा का लाभ उठाकर नारद आदि अन्तरिक्ष यात्री यदि दीर्घजीवी रहे हों तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है ।

सीमित ज्ञान को असीम तक पहुँचाने की जिज्ञासा की तरह सीमित व्यक्तित्व को असीम बनाने के लिए, अपूर्णता को पूर्णता में परिणत करने के लिए भी मानवी अन्तःक्षेत्र में प्रबल उमंगें उठनी चाहिए । महत्त्वपूर्ण उपलब्धियों के लिए तीव्रता की अनिवार्य आवश्यकता है । मन्दगति से किसी प्रकार जीवन शकट को लुढ़काते रहने में कोई बड़ी सफलता नहीं मिल सकती थी । आगे बढ़ने और अधिक पाने के लिए हमारी चेतना को, क्रियाशीलता को उसी प्रकार तीव्रगामी बनाया जाना चाहिए जिस प्रकार कि सौर-मण्डल से आगे के क्षेत्र में प्रवेश करने के लिए अधिक तीव्र गति प्राप्त करने की चेष्टा की जा रही है । संकल्पों ने असम्भव समझी जाने वाली बातों को सम्भव करके दिखाया है, भूतकाल की तरह भविष्य में भी वैसा होता रहेगा ।

सहकारिता और आदान-प्रदान का ब्रह्माण्डव्यापी तथ्य

सामान्य दृष्टि से ऐसा प्रतीत होता है कि ब्रह्माण्ड के ग्रह-नक्षत्र अपना-अपना अस्तित्व बनाये हुए, अपनी कक्षाओं पर भ्रमण करते हुए अपना निर्धारित क्रिया-कलाप चला रहे हैं । किसी का किसी से कोई परस्पर सम्बन्ध नहीं है । यह बात मोटी समझ से ही सही हो सकती है । वास्तविकता कुछ और ही है । वस्तुतः यह सारे ग्रह-नक्षत्र एक ही सत्ता सूत्र में, धागों में मनकों की तरह पिरोये हुए हैं और यह ग्रह-नक्षत्र की माला एक ही दिशा में, एक ही नियन्त्रण में गतिशील हो रही है, इतना ही नहीं उनका परस्पर भी अति घनिष्ठ सम्बन्ध है । सूर्य और चन्द्रमा के पृथ्वी पर पड़ने वाले प्रभाव को हम प्रत्यक्ष देखते हैं । अमावस्या और पूर्णमासी को आने वाले ज्वार-भाटे कृष्ण पक्ष में वनस्पतियों का कम और शुक्ल पक्ष में अधिक बढ़ना, चन्द्रमा के पृथ्वी पर पड़ने वाले प्रभाव का ही परिणाम है । सूर्य के उदय होने पर गर्मी, रोशनी ही नहीं, सक्रियता भी बढ़ती है । हवा की चाल तेज हो जाती है, वनस्पतियों में हलचल शुरू हो जाती है और रात्रि की जो निद्रा सबको सताती थी वह अनायास ही समाप्त हो जाती है । शरीरों की रात्रि वाली शिथिलता प्रातःकाल होते ही क्रियाशीलता में बदल जाती है । ऐसे-ऐसे अनेक परिवर्तन सूर्य के निकलने से लेकर अस्त होने के बीच होते रहते हैं । परोक्ष परिवर्तनों का तो कहना ही क्या ? उनकी शृंखला को देखते हुए वैज्ञानिक चकराने लगते हैं और सोचते हैं कि जो कुछ इस धरती पर हो रहा है वस्तुतः सूर्य की ही प्रतिक्रिया मात्र है ।

यह सूर्य और चन्द्रमा के द्वारा पृथ्वी पर पड़ने वाले प्रभाव की बात हुई । आगे चलकर इसी प्रक्रिया को समस्त ग्रह-नक्षत्रों के बीच परस्पर पड़ने वाले प्रभावों के आदान-प्रदान के रूप में देखी, समझी जा सकती है । सूर्य की चमक चन्द्रमा पर घटने-बढ़ने से वह कितना अतिशय ठण्डा और कितना अतिशय गरम हो जाता है, उसकी नवीनतम जानकारियाँ चन्द्रशोधों ने स्पष्ट कर दी हैं । पृथ्वी पर चाँदनी भेज सकना चन्द्रमा के लिए सूर्य के अनुदान से ही सम्भव होता है । अन्य ग्रह भी परस्पर ऐसे ही आदान-प्रदान की व्यवस्था बनाये हुए हैं । एक-दूसरे पर अनेक स्तरों के आकर्षण-विकर्षण फेंकते और ग्रहण करते हैं । इसी आधार पर उनका वर्तमान स्तर और स्वरूप बना हुआ है । यदि इस प्रक्रिया में अन्तर उत्पन्न हो जाय तो ग्रहों की वर्तमान स्थिति में भारी अन्तर आ जायेगा और उनका कलेवर मार्ग स्वरूप आदि में अप्रत्याशित परिवर्तन उत्पन्न हो जायेगा । यह थोड़ा-सा भी अन्तर अपने सौर-मण्डल की स्थिति ही बदल सकता है और फिर उस हलचल से अन्य सौर-मण्डल भी प्रभावित हो सकते हैं और उसका अन्त इतनी बड़ी प्रतिक्रिया के रूप में हो सकता है, जिससे सारा विश्व-ब्रह्माण्ड ही हिल जाय ।

अपने सौर-मण्डल के ग्रहों और उपग्रहों का परस्पर क्या सम्बन्ध है और एक-दूसरे को कितना प्रभावित करते हैं इसकी थोड़ी-बहुत जानकारी खगोलवेत्ताओं को उपलब्ध हो चली है । वे इस अनन्त ब्रह्माण्ड में बिखरे हुए असंख्य सौर-मण्डलों के परस्पर पड़ने वाले प्रभाव को भी स्वीकार करते हैं और लगता है एक ही परिवार के सदस्य जैसे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

मिल-जुलकर कुटुम्ब का एक ढाँचा बनाए रहते हैं, उसी प्रकार समस्त ग्रह-नक्षत्र एक-दूसरे के पूरक बने हुए हैं और परस्पर बहुत कुछ लेने-देने का क्रम चलाते हुए ब्रह्माण्ड की वर्तमान स्थिति बनाये हुए हैं । यह सब एक विश्व-व्यापी प्रेरक और नियामक सत्ता द्वारा ही सम्भव हो रहा है ।

वस्तुतः इस संसार में 'अकेला' नाम का कोई पदार्थ नहीं । यह सब कुछ सुगठित और सुसम्बद्ध है । पदार्थ की सबसे छोटी इकाई परमाणु भी, अपने गर्भ में कितने ही घटक संजोये हुए एक छोटे सौर-मण्डल परिवार की तरह प्रगतिशील रह रहा है । इलेक्ट्रॉन आदि घटकों की भी पर्तें खुलती जा रही हैं और पता लग रहा है कि उनके गर्भ में भी और कितने ही समूह वर्ग विराजमान हैं । शरीर एक इकाई है । पर उसके भीतर जीवाणुओं की इतनी संख्या है जितनी इस समस्त संसार में जीवधारियों की भी मिली-जुली संख्या भी नहीं होगी । हर मनुष्य का व्यक्तित्व असंख्य अन्यों के सहयोग एवं प्रभाव को लेकर विकसित हुआ है, उसमें अपना कम और दूसरों का अधिक है ।

सृष्टि चक्र में सर्वत्र 'अन्योन्याश्रय' का सिद्धान्त काम कर रहा है । जड़-चेतन से विनिर्मित यह समूचा विश्व ब्रह्माण्ड एकता के सुदृढ़ बन्धनों में बँधा हुआ है । एक से दूसरे का पोषण होता है और हर किसी को दूसरों का सहयोगी होकर रहना पड़ रहा है । यह पारस्परिक बन्धन ही सृष्टि के शोभा सौन्दर्य का, उसकी विभिन्न हलचलों का, उत्पादन विकास एवं परिवर्तन का उद्गम केन्द्र है ।

पृथ्वी की आकर्षण शक्ति पदार्थ सम्पदा एवं प्राणि सम्पदा को शान्तिपूर्वक रहने और विकसित होने का अवसर दे रही है । अन्तर्ग्रही आकर्षण शक्ति से बँधे हुए ग्रह-नक्षत्र अपनी कक्षाओं और धुरियों पर परिभ्रमण कर रहे हैं । यह तो मोटी जानकारी हुई । वास्तविकता यह है कि ग्रहों के बीच इतना अधिक आदान-प्रदान चल रहा है, मानो विनिमय बाजार की धूम मच रही हो । उत्तरी ध्रुव में होकर अन्तर्ग्रही शक्तियाँ धरती पर अवतरित होती हैं । जितनी आवश्यक होती है उतनी पृथ्वी द्वारा पचा ली जाती हैं और अनावश्यक को दक्षिणी ध्रुव के द्वारा अन्तरिक्ष में फेंक दी जाती हैं । उत्तरी ध्रुव पृथ्वी का मुख है और दक्षिणी ध्रुव मल द्वार । यदि पृथ्वी को अन्तर्ग्रही अनुदानों का आहार न मिले तो उसे भूखे रह कर प्राण त्यागना पड़ेगा ।

ध्रुव क्षेत्रों के अतिरिक्त अन्य कितने ही छिद्र भी ऐसे हैं जिनके माध्यम से ग्रहों के बीच आदान-प्रदान होता रहता है । उन्हें रोम-कूप अथवा स्वेद छिद्र कह सकते हैं । हम इन छेदों से भी साँस लेते और भाप छोड़ते हैं । पृथ्वी पर कितने ही ऐसे छिद्र हैं जिनमें होकर सूक्ष्म ही नहीं स्थूल भी धँसता और निकलता देखा जा सकता है ।

५ दिसम्बर, १९४५ । ५ टी. बी. एम. अमेरिका बमवर्षक वायुयान प्रशिक्षण उड़ान पर रवाना हुए । ईंधन, दिशासूचक यन्त्रों तथा संचार साधनों से सभी सुसज्जित थे, उड़ाके भी अनुभवी व योग्य थे । उन्हें पहले पूर्व की ओर जाना था, फिर उत्तर की ओर अन्त में दक्षिण पूर्व होकर लौटना था । पहले जहाज को चला रहे थे स्क्वाड्रन लीडर । कन्ट्रोल टावर के निर्देश पर वह उड़ा । ५ मिनट के अन्तर से शेष चार विमान भी उड़ चले । पहले वायुयान में दो लोग थे, शेष चारों में तीन-तीन । रेडियो सम्पर्क जारी था । सन्देश लगातार मिल रहे थे—अब हम २०० मील प्रति घंटे की निश्चित गति से उड़ते हुए अटलांटिक महासागर के पूर्वी तट की ओर बढ़ रहे हैं । कुछ समय बाद तीन बजकर ४५ मिनट पर सहसा खतरे का संकेत मिला । स्क्वाड्रन लीडर का स्वर था—"अचानक हम लोग कहाँ आ गए, कुछ पता नहीं चल पा रहा । यन्त्रादि सब ठीक हैं, पर नीचे देखते हैं तो समुद्र है न जमीन ।"

कन्ट्रोल टावर से कहा गया, नक्शा देखकर अपना 'ग्रिडरिफरेन्स' दो । उत्तर था, "यहाँ भौगोलिक स्थिति के बारे में निश्चित रूप से कुछ कहा नहीं जा सकता ।" और सहसा सम्पर्क टूट गया । जिधर से सन्देश आया था, उसी दिशा में १३ दक्ष कर्मचारियों और उत्तम यन्त्रों से लैस मार्टिन हवाई जहाज खोज के लिए भेजा गया । ५ मिनट तक तो वह अपने सन्देश देता रहा, फिर उसकी भी आवाज आनी बन्द हो गई । समुद्र रक्षक जहाज को रात भर उसी ओर देखते रहे । सुबह होते ही इक्कीस जहाज सागर में, ३०० वायुयान अन्तरिक्ष में मँडराने लगे । चप्पा-चप्पा छान मारा । पृथ्वी तल पर १२ खोजी दल खोज करते रहे । न तो धरती पर किसी भी जहाज का एक भी इंच कोई टुकड़ा मिला, न समुद्र तल पर एक भी बूँद तेल का निशान । न कोई शव, न कलपुर्जे, न चिन्ह । खोजी मार्टिन जहाज जो भेजा गया था, उसका सन्देश प्रसारक यन्त्र अत्यधिक सशक्त था और अन्य देशों को भी उससे सन्देश भेजे जा सकते थे । पर कहीं, कोई भी संकेत तो ग्रहण नहीं किया गया था । अन्त में खोज से थककर अधिकारियों ने रिपोर्ट छापी—"हम कुछ कल्पना भी नहीं कर पा रहे कि यह सब क्या हुआ ? क्यों हुआ ?"

इस स्थान का नाम रखा गया—'प्वाइन्ट ऑफ नो रिटर्न' ऐसा बिन्दु जहाँ पहुँचकर आज तक कोई वापस नहीं आ सका । यह स्थान फोर्टलैडरले (फ्लोरिडा) के निकट है । यहाँ की उड़ान विचित्र होती है । एक छोटा तिकोना चक्कर काटकर विमान को बढ़ाना होता है ।

पहली घटना के तीन वर्ष बाद २८ जनवरी १९४८ । चार इन्जनों वाला ब्रिटिश जहाज 'स्टार टाइगर' जा रहा था किंग्स्टन । इसमें कर्मचारियों समेत कुल २६ लोग थे । विमान का सम्पर्क बारम्पुड़ा विमान तल से था । पहली खबर मिली मौसम साफ है, हम ठीक तरह से उड़ रहे हैं । तभी वायुयान उस 'प्वाइन्ट' के पास पहुँचा और फिर बस । कहीं कोई अता-पता नहीं । न धरती पर, न सागर में ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इसी बारम्पुड़ा विमान तल से जमैका के लिए 'सिरयल' वायुयान चला । पूरी तरह सुसज्जित, भरपूर ईंधन के साथ । पौन घण्टे बाद कैप्टेन जे. से. मैक्फी ने सन्देश भेजा । "हम ठीक समय पर जमैका पहुँच रहे हैं ।" फिर कोई सन्देश नहीं आया । वही दौड़-धूप, खोज-बीन सब व्यर्थ । कुछ पता नहीं, क्या हुआ ? क्यों हुआ ?

आज तक इन भयंकर घटनाओं का कारण व परिणाम ज्ञात नहीं हो सका है । एक अनुमान यह लगाया गया है कि उस जगह सम्भवतः किसी ग्रह का प्रचण्ड विकिरण होने से विमान पहुँचते ही भस्म होकर गैस बन जाते हैं । प्राप्त जानकारी के अनुसार इस बिन्दु पर पहुँचते ही जमीन दिखाई देना बन्द हो जाती है । एक अनन्त गहराई ही सामने, ऊपर नीचे चारों ओर होती है । यदि मनुष्य उस स्थान पर सकुशल पहुँचकर आ सके, तो अनुमान है कि पृथ्वी और अन्तरिक्ष की कई नई जानकारियाँ मिलें ।

सम्भव है वहाँ किसी ग्रह का प्रचण्ड गुरुत्वाकर्षण वायुयानों को खींच ले जाता है । अथवा किसी ग्रह से प्रवाहित विद्युतधाराएँ विमानों को किसी अन्य ग्रह की ओर धकेल देती हों ।

पहले माना जाता था कि पृथ्वी का मौसम सूर्य के ही द्वारा मुख्यतः प्रभावित होता है, पर अब जाना गया है कि ऐक्स विकिरण के अनेक तारे अनन्त आकाश में हैं । छः वर्षों में ऐसे तीस तारे खोजे जा चुके हैं । पहला तारा १९६२ में प्रक्षेपास्त्रों के परीक्षण के दौरान खोजा गया, जिसकी पृथ्वी से दूरी १ हजार प्रकाश वर्ष है । पाया गया है कि यह वर्तमान सौर एक्स विकिरण की अपेक्षा दस लाख गुनी तीव्र गति से एक्स विकिरण कर रहा है । इसका नाम रखा गया—स्को एक्स वन । अभी विशिष्ट प्रभाव सम्पन्न अनेक तारे हैं, जिनकी विविध प्रकार की अति महत्त्वपूर्ण किरणें हैं । वैज्ञानिक अभी इनकी बावत में नहीं जान पाये हैं ।

वैज्ञानिक अन्वेषक निरन्तर इस तथ्य की पुष्टि कर रहे हैं कि हमारी धरती का भाग्य ऊपर लोकों तथा ग्रहों से सीधा सम्बद्ध है । सूर्य में एक विशेष प्रकार के ज्वाला प्रकोप फूटते हैं, तो धरती पर प्रचण्ड चुम्बकीय तूफान उठते हैं और मानसिक दृष्टि से क्षीण व्यक्ति अस्त-व्यस्त हो उठते हैं, उनकी कमजोरी, खीझ और परेशानी बढ़ जाती है । इससे शराबखोरी, झगड़े-टंटे, सड़क दुर्घटनाएँ, आत्म-हत्याएँ आदि की संख्या कई गुनी बढ़ जाती है क्योंकि मस्तिष्कीय क्रिया क्षमता की अल्फाएनर्जी पृथ्वी के चुम्बकीय क्षेत्र से सम्बद्ध है और धरती का चुम्बकीय क्षेत्र आकाशीय पिण्डों से जुड़ा है । इस तरह आकाशीय पिण्ड हमारे जीवन को सीधे प्रभावित करते हैं । पदार्थ में ऊर्जा कम्पन के रूप में होती है । तीव्रतम कम्पन की स्थिति में पदार्थ ऊर्जा में परिवर्तित हो जाते हैं । जड़-पदार्थों की सक्रियता का कारण इलेक्ट्रॉनिक शक्तियाँ हैं । ये सौर-मण्डल की ही शक्तियाँ हैं ।

विगत २२ फरवरी, १९५६ की रात्रि में सूर्य में प्रचण्ड विस्फोट हुआ और सौर-कण धरती की ओर तेजी से दौड़े । उन्हीं सौर-कणों की वायु-मण्डल से, टकराहट से कई एशियाई देशों और आस्ट्रेलिया में भयानक आँधी-तूफान आये ।

विश्व-ब्रह्माण्ड के कण-कण में संव्याप्त इस पारस्परिक निर्भरता और सहकारिता के सिद्धान्त को समझने का प्रयत्न किया जाय तो इस निष्कर्ष पर पहुँचना पड़ेगा कि यहाँ अकेला कोई नहीं, 'मैं का कोई अस्तित्व नहीं, जो कुछ है वह सामूहिक है ।' हम सबकी भाषा से ही सोचा जाय और उसी प्रकार का क्रिया-कलाप अपनाया जाय तो समझना चाहिए कि सृष्टि के उस रहस्य और निर्देश से अवगत हुए, जिससे आधार सुव्यवस्था रह सकती है और प्रगति का चक्र अग्रगामी रह सकता है ।

सौर परिवार जैसी रीति-नीति, मानव परिवार भी अपनायें

समस्त ब्रह्माण्ड की कल्पना कर सकना तो कठिन है पर यदि हम अपने सौर-मण्डल और उससे सम्बद्ध ग्रह-नक्षत्रों की गतिविधियों पर दृष्टिपात करें तो न केवल विश्व की विशालता और उसके निर्माता की महानता समझने का अवसर मिले वरन् यह भी सूझे पड़े कि इस सारी क्रम-व्यवस्था का संचालन किस आधार पर हो रहा है ?

समस्त ग्रह-नक्षत्र निरन्तर क्रियाशील हैं । इस गतिशीलता पर ही उनका जीवन निर्भर है । समस्त पिण्ड अपनी धुरी पर परिक्रमा करते हैं और साथ ही उस केन्द्र का भी ध्यान रखते हैं जिसके साथ वे जुड़े हुए हैं । जिससे शक्ति प्राप्त करते हैं और जिस परिवार में बँधे रहने के कारण उन्हें सुरक्षा एवं स्थिरता प्राप्त है । वे उस केन्द्र सूर्य की भी परिक्रमा करते हैं ।

इस प्रक्रिया पर ध्यान दिया जाय तो परम नियन्ता की उस इच्छा का आभास मिलेगा जिसका पालन करने के लिए सबको सहर्ष तत्पर रहना पड़ता है । ग्रह-उपग्रह अपनी धुरी पर नियमित रूप से घूमते हैं । व्यक्तिगत जीवन की सुव्यवस्था, सतर्कता, नियमितता और क्रमबद्धता को ग्रहों के अपनी धुरी पर घूमने के सदृश्य समझना चाहिए, यदि यह गति न हो तो फिर उन्हें घोर दुर्गति में पड़ना पड़े । मनुष्य के लिए भी यही बात है यदि वह अकर्मण्य अव्यवस्थित और अनियमित गतिविधियाँ अपनाये तो यह सृष्टा की इच्छा का उल्लंघन ही होगा और उसका दण्ड मिले न रहेगा । क्षुद्र ग्रह कीटकी की एक ऐसी शृंखला भी इस ब्रह्माण्ड में मारी-मारी फिरती है जिन्होंने निर्धारित मर्यादा का उल्लंघन करने का दण्ड अपने अस्तित्व को छिन्न-भिन्न करने के रूप में भोगा है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अपनी धुरी पर घूमते रहना, अपने ही गोरख-धन्धे में उलझे रहना पर्याप्त नहीं । समाज रूपी केन्द्र का भी ध्यान रखा जाना चाहिए । सभी ग्रह अपने केन्द्र सूर्य की परिक्रमा में प्रमाद रहित तत्परता बरतते हैं । समाज के प्रति अपना कर्तव्य पालन करने के लिए भी मनुष्य को सजग और सक्रिय रहना चाहिए । सौर-मण्डल के ग्रह सूर्य से बहुत कुछ प्राप्त करते हैं, यदि वह उपलब्धि बन्द हो जाय, तो उन्हें मृत स्थिति में जाना पड़े । समाज का अनुदान बन्द हो जाय तो मनुष्य का एक दिन भी जीवित रहना कठिन है । सुख-सुविधाएँ व्यक्ति की एकाकी उपलब्धियाँ नहीं हैं । समाज के सहयोग से ही व्यक्ति का विकसित, सुखी और समृद्ध रह सकना सम्भव है । अस्तु उपलब्धियाँ प्राप्त करने के साथ-साथ उस केन्द्र के पोषण का उत्तरदायित्व भी उस पर आता है । सौर-मण्डल का सहयोग न हो तो फिर सूर्य का अस्तित्व भी खतरे में पड़ जायेगा । इसलिए नियति की व्यवस्था यही है कि ग्रह-सूर्य की परिक्रमा करके उसकी क्षमता बनाये रखे और सूर्य इन ग्रहों का अनेक अनुदान देकर पोषण करें । यह अन्योन्याश्रित प्रक्रिया ही सौर-मण्डल की स्थिरता की रीढ़ है । जिसके टूटने का खतरा होने पर यह सारा सुन्दर सौर-परिवार ही बिखर जायेगा ।

व्यक्ति और समाज के बीच ऐसी ही सुदृढ़ विधि-व्यवस्था चलनी चाहिए । समाज का ढाँचा व्यक्तियों को विकसित करने में समर्थ रहे और व्यक्ति समाज को प्रखर और सशक्त बनाने में निरन्तर योगदान करे । यही क्रम व्यवस्था मण्डल में चल रही है और यही क्रम व्यक्ति और समाज के संगठन में ठीक तरह बरता जाना चाहिए ।

हम कितने भाग्यशाली हैं कि चारों ओर बिखरी जीवन हीन या स्वल्प जीवन वाली ऊबड़-खाबड़ ग्रह परिस्थितियों के बीच, अपनी इस सुन्दर पृथ्वी पर रह रहे हैं । जिसमें जीवन का अमृत ही हिलोरें नहीं ले रहा वरन् प्रकृति प्रदत्त ऐसी सुविधाओं का भी बाहुल्य है जो अन्य ग्रहों में उपलब्ध नहीं हैं । इसी पृथ्वी के वासी सुख-सुविधाओं के उपभोक्ता होने के नाते हमारा और भी अधिक कर्तव्य एवं उत्तरदायित्व हो जाता है कि अपने उदार एवं सहृदय निर्माता की इच्छा का पालन करते हुए व्यक्ति एवं समाज की महान् मर्यादाओं को बनाये रखने में पूरा-पूरा सहयोग करें ।

अब आइये अपनी धरती, सूर्य तथा सौर परिवार के सदस्यों की गतिविधियों पर दृष्टिपात करें—

७९०० मील व्यास वाली अपनी पृथ्वी लट्टू की तरह अपनी धुरी में अधर आकाश में लटकी तेजी से घूम रही है । २३ घण्टा ५६ मिनट में वह अपनी धुरी पर एक परिक्रमा कर लेती है जिसके फलस्वरूप दिन और रात होते हैं, किन्तु हम हैं पृथ्वीवासी जो सिद्धान्ततः तो यह बात मानते हैं पर प्रायोगिक तौर पर पृथ्वी घूमते हुए देखने में आती नहीं । अतएव मानना पड़ेगा कि केवल दृष्टिगत व्यवहार ही सत्य नहीं है विवेक और विचार की कसौटी पर खरे उतरने वाले सिद्धान्तों की भी सत्यता स्वीकार करनी चाहिए ।

संसार का अणु-अणु गतिमान है । गति केवल वहाँ नहीं होती जहाँ इच्छाएँ और अभिलाषाएँ जड़ और मृत हो जाती हैं फिर यदि संसार में हर वस्तु गति कर रही हो तो हमें उस अदृश्य सत्य के कारण और गन्तव्य की भी जान-पहचान करनी ही होगी । पृथ्वी अपनी परिक्रमा करके ही सन्तुष्ट नहीं । वह सूर्य के गुरुत्वाकर्षण से बँधी है और उसी के फलस्वरूप स्वयं नाचते हुए वह सूर्य की भी परिक्रमा करती है यह परिक्रमा वह ३६५ $\frac{१}{४}$ दिन में पूरी करती है । दिन का १/४ भाग परिक्रमा में अधिक लग जाने के कारण ही हर चौथा वर्ष लोंद वर्ष (लीप ईयर) मनाया जाता है जिसमें फरवरी २८ के बजाय २९ दिन की होती है ।

यह थी अपनी पृथ्वी की बात अब और आगे चलते हैं तो सूर्य के सबसे समीप एक नवग्रह में सबसे छोटा ३००० मील वाला बुध दिखाई देता है । सूर्य से ३६००००० मील सूर्य की परिक्रमा कर रहा है अपनी परिक्रमा वह ८८ दिन में करता है थोड़ा सुस्त है न ! अर्थात् बुध का दिन पृथ्वी के ४४ दिनों के बराबर और रात भी ४४ दिनों के अर्थात् ५२८ घण्टों के बराबर । हम एक परिस्थिति में रहने के आदी हो गए हैं इसलिए दूसरी परिस्थितियों को भी ध्यान में लायें तो इतनी लम्बी रात और इतने लम्बे दिन पर कौतूहल हुए बिना न रहे और फिर यह विचार भी उठे बिना न रहे कि क्या संसार में कोई ऐसा बिन्दु भी है जहाँ न कभी रात होती हो न कभी दिन सम्पूर्णतः दृष्टा बिन्दु ।

बुध की तरह शुक्र भी अन्तर्ग्रह है । अन्तर्ग्रह का अर्थ है जो सूर्य पृथ्वी के मध्य स्थित है । शुक्र भी एक गतिशील पिण्ड है, रूढ़िवादी भारतीयों के समान वह अन्ध परम्पराओं से बँधकर जीना नहीं चाहता । अपनी धुरी में ३० दिन की और अपने शक्तिदाता सूर्य की परिक्रमा वह पृथ्वी के पूरे दिन में एक परिक्रमा करता है । कल्पना कीजिए वहाँ ११२ $\frac{१}{२}$ दिनों की अर्थात् ३ माह २२ $\frac{१}{२}$ दिनों की रात कितनी भयंकर होती होगी भगवान ने पृथ्वीवासी के लिए कितना उपयुक्त वातावरण बनाया है प्राकृतिक सुविधाएँ दी हैं यह कल्पना करते ही श्रद्धा से सर झुक जाता है बावरे तो वे लोग हैं जिनकी दृष्टि में सृष्टि की इस व्यापकता की कोई कल्पना नहीं वे अपने स्वार्थों से ही दबे मरे जा रहे हैं ।

अब थोड़ा अपनी पृथ्वी से बाहर की ओर चलना चाहिए । कदाचित हवा में दूर तक उड़कर चलना सम्भव हो और आप सूर्य से विपरीत दिशा में उड़ें तो पृथ्वी से ४९००००० मील दूर एक ग्रह मिलेगा । इस ग्रह से कोई १००० मील ऊपर ठहर जाइये तो आप देखेंगे कि वह भी घूम रहा है, अपनी धुरी पर । अपने आपकी परिक्रमा वह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

२४ घण्टा ३७ मिनट में करता है । अर्थात् वहाँ के ही दिन व रातें लगभग पृथ्वी के समान हैं ।

यह मंगल है जो सूर्य की प्रदक्षिणा ६८७ दिन में करता है, तो उससे आगे वाला भीमकाय ग्रह वृहस्पति जिसमें अपनी पृथ्वी की तरह की हजारों पृथ्वियाँ भरी जा सकती हैं । सूर्य की परिक्रमा करने में योग १२ वर्ष का समय लेता है । इन १२ वर्षों में वहाँ का मौसम अर्थात् हरियाली रहती होगी तो पूरे ४ वर्ष तक गर्मी और ४ वर्ष तक घनघोर घटाओं की धूम । ४ वर्ष का जाड़ा सम्भव ।

इतना भयानक ग्रह-पृथ्वी की इतनी परिक्रमा, किन्तु स्वयं का उसका वेग कितना तीव्र होगा थोड़ा कल्पना करें कि वह कुल ९ घण्टे ५० मिनट में ही अपनी धुरी पर एक बार घूम जाता है । कुल ४ घण्टे ५५ मिनट का दिन और इतने ही समय की रात । पर वह छोटी-सी रात भी कितनी विचित्र कि १२-१२ चन्द्रमा एक साथ ही वहाँ उजाला फैलाते हैं ।

शनि-बेचारा बुरा ग्रह माना जाता है पर सार्वभौमिक नियमों का पालन तो वह भी करता है १० घण्टा १४ मिनट में अपनी धुरी पर घूमने के अतिरिक्त वह २९ $\frac{१}{२}$ वर्ष में सूर्य की भी परिक्रमा करता है । यूरेनस पृथ्वी की ८४ वर्ष में तो अपनी निज की १० घण्टा ४८ मिनट में नेपच्यून १६५ वर्ष में एक बार सूर्य की प्रदक्षिणा करता है तो अपनी १५ घण्टा ४८ मिनट में । प्लूटो अपनी परिक्रमा ६ $\frac{१}{२}$ दिन में करता है तो उसकी गति कुछ ऐसी मन्द है कि अपने जीवन दाता की परिक्रमा करने में उसे पूरे २४८ वर्ष लग जाते हैं ।

इस महान् सौर-मण्डल के महान् सदस्यों के अतिरिक्त कुछ ऐसे क्षुद्र भी हैं जो पिछड़े और छोटे होने का परिचय निरन्तर देते रहते हैं । कभी-कभी कक्ष बदलते हैं कभी गतिविधियाँ । नियम और मर्यादाओं के उल्लंघन की चेष्टा करने में इन्हें अपनी चतुरता अनुभव होती होगी पर पाया इन्होंने क्या ? अस्त-व्यस्त और अव्यवस्थित प्रतिक्रिया ही इन्हें भुगतनी पड़ती । उपहासास्पद बनते हैं और क्षुद्र कहलाते हैं । प्रकृति इन्हें भी रखती तो नियन्त्रण में ही है अन्यथा वे अपने को नष्ट करें और दूसरों को संकट पैदा करें । इसलिए उन्हें छूट भी एक सीमा तक ही मिलती है । इस उपलब्ध स्वतन्त्रता का दुरुपयोग करके ये क्षुद्र ग्रह किस तरह अपनी गरिमा खो चले । महानता से च्युत होकर क्षुद्र परिस्थितियों में रहने लगे । इस तथ्य को यदि समझा जा सके तो मनुष्य महानता की गरिमा को ही स्वीकार करे और क्षुद्र ग्रहों जैसी दुर्दशा में पड़ने से बचा रह सके ।

क्षुद्र ग्रहों की पहचान के लिए खगोल शास्त्रियों ने इनके नम्बर नियुक्त कर रखे हैं । ये हैं भी वस्तुतः बहुत वाचाल, चंचल और शरारती । ४३३ नम्बर का क्षुद्रग्रस्त ईरोस कई करोड़ मील दूर है पर घूमते-घामते यह पृथ्वी के डेढ़ करोड़ मील पास तक चला आता है । १५६६ नम्बर के इकारस, जिसने सन् १९६८ में पृथ्वी में तहलका मचा दिया था, कहा जाता था कि उसके पृथ्वी से टकरा जाने की सम्भावना है, इस तरह का दुस्साहसी ग्रह है कि सूर्य और बुध के मध्य वाले अत्यन्त भीषण गर्म स्थान की भी परिक्रमा कर आता है ।

हर्मेस नामक ग्रह भी इकारस की तरह सन् १९३७ में पृथ्वीवासियों को डरा गया था अब तो वह न जाने कहाँ चक्कर काट रहा होगा । वेस्टायों पृथ्वी से औसतन २२ करोड़ मील दूर का बौना ग्रह है पर वह भी शान्त नहीं, सूर्य की परिक्रमा करते हुए वह पृथ्वी के १० करोड़ मील पास तक चला आता है । वह सूर्य भगवान के आस-पास ३/१/२ वर्ष में चक्कर काट लेता है जबकि अपनी ही धुरी पर वह १० घण्टे ४५ मिनट में घूम लेता है । घूमने में हाइडाल्गो की अपनी शान है वह कभी-कभी ९ चन्द्रमा वाले शनि देवता से भी बिना डरे उनके आकाश तक घूम आता है । सूर्य स्वयं भी अपनी परिक्रमा कर अपने स्वत्व की रक्षा करता है साथ ही विराट् परमात्मा के प्रति अपनी निष्ठा की अभिव्यक्ति के लिए वह अपने समस्त परिवार के साथ दण्डवती परिक्रमा के लिए निकला हुआ है । यह विराट् की परिक्रमा वह २५ करोड़ वर्ष में पूरी करता है इसके लिए उसे प्रति सेकण्ड दो सौ मील की गति से चलना पड़ रहा है जबकि वह अपनी धुरी का चक्कर भी २५ दिन ७ घंटे और ४८ मिनट में लगाता चल रहा है ।

न केवल सूर्य वरन् विराट् ब्रह्माण्ड का हर पिण्ड गतिशील है । हमारा सूर्य जिस आकाश-गंगा से जीवन ले रहा है वह और उससे दूर की आकाश-गंगायें भी प्रकाश की सी भयंकर गति से कहीं जा रही हैं । समस्त सृष्टि का उद्गम किसी एक ही बिन्दु से हुआ वहीं अनन्त ब्रह्माण्ड की नाभि होगी । विराट् चेतना भी उसी का अंश है उस सार्वभौमिक चेतना के दर्शन ही जब निर्जीव ग्रहों का लक्ष्य है तो मानवीय चेतना उसे जानने पहचानने की चेष्टा क्यों न करें ?

आकाशस्थ ग्रह-नक्षत्र मात्र हीरे, मोती, जैसी शोभा सुषमा ही नहीं-बिखेरते वे महत्त्वपूर्ण शिक्षण भी देते हैं । यदि उस शिक्षण को हृदयंगम किया जा सके तो हम भी एक ज्योतिर्मय पिण्ड की तरह अपने अस्तित्व को सफल बना सकते हैं और नियंता की इच्छा पूरी कर सकते हैं ।

प्रकृति ही नहीं, पुरुष भी

लाखों करोड़ों वर्ष पुरानी बात है । वैज्ञानिकों के अनुसार उस काल में एक बदली इस अनन्त आकाश में छाई हुई थी । लम्बे समय तक वह इसी प्रकार कुछ हलचलें करती हुई, अपने समीपवर्ती क्षेत्र में घूमती रही फिर अचानक उसके

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

भीतर से एक तीव्र ऊर्जा उत्पन्न हुई । वह असाधारण थी । गर्मी की अति ही जाने पर वह फूट पड़ी । विस्फोट अति भयानक था । इतने जोर का कि उसके पीछे काम करने वाली शक्ति की प्रचण्डता का अनुमान भी नहीं लगाया जा सकता । बदली बड़ी थी । आगे बढ़ी तो उसके खपच्चे उड़ गए । समूचे अन्तरिक्ष में वे छा गए । इनमें से प्रत्येक अत्यन्त ऊँचे स्तर के आवेश से भरे थे । सो आगे की ओर बढ़ते गए । इस तीव्रता में थोड़ी न्यूनता आयी तो उन्होंने अपनी-अपनी धुरी पर घूमना आरम्भ कर दिया । जो इनमें अधिक बड़े और बलिष्ठ थे उन्होंने अपने प्रभाव क्षेत्र को दूर-दूर तक फैलाया और उस परिधि में जो भी पिण्ड आ गए । उन्हें अपने परिकर में जकड़ कर एक मण्डल बना लिया ।

एक बदली के स्थान पर अन्तरिक्ष में अनेक नक्षत्र मण्डल बने और जिन्होंने पकड़ स्वीकार कर ली वे उस परिवार के स्थायी सदस्य बन गए । अपना सौर-मण्डल ऐसे नवग्रहों और ४३ उपग्रहों का एक छोटा-सा समुदाय है । ऐसे-ऐसे असंख्यों हैं । कुछ तो इतने बड़े हैं, जिनमें से एक-एक के पेट में हमारे सौर-मण्डल जैसे लाखों घटकों के समा जाने जैसी स्थिति है । सूर्य से लाखों गुने सूर्य भी नक्षत्र परिवार के बीच पाये गए हैं ।

कहा जाता है कि आरम्भ में सभी पिण्ड अग्नि, जैसे तप्त थे । कुछ समय बाद उनकी ऊपरी परत ठण्डी होने लगी । इस ठण्डक और गर्मी के संयोग ने हवा पानी को जन्म दिया और हमारी पृथ्वी पर घटाटोप वर्षा होने लगी । अन्य गोलकों का क्या हुआ ? इसका अनुमान लगाने के कोई प्रत्यक्ष एवं विश्वसनीय प्रमाण नहीं हैं । पृथ्वी की पर्तों की खोज कर और समुद्र की गहराई में घुसकर समीपवर्ती वातावरण का विश्वस्त आधारों पर निरीक्षण-परीक्षण करके जाना जा सका है कि भूमण्डल की स्थिति क्या है ? किन्तु अन्य तारक बहुत दूर हैं इसलिए उनकी स्थिति का पर्यवेक्षण उतनी अच्छी तरह उगाया नहीं जा सका है । केवल अनुमान के आधार पर ही कुछ मान्यता बनती है ।

पर पृथ्वी के बारे में ऐसी बात नहीं है । उन्हें प्रत्यक्ष इन्द्रिय-ज्ञान, बुद्धि-कौशल और उपकरणों के सहारे बहुत कुछ समझा गया और ज्ञान वृद्धि के साथ-साथ क्रमशः अधिकाधिक जाना जाता रहेगा । पृथ्वी के सम्बन्ध में उपलब्ध और संचित जानकारी में बहुत कुछ यथार्थता है । यों उन मान्यताओं में नये प्रमाणों के आधार पर आये दिन सैद्धान्तिक परिवर्तन भी होते रहते हैं ।

विषयवस्तु यह है कि प्रकृति का मूल पिण्ड और उसके घटक सभी जड़ पदार्थों के बने थे । उनकी संरचना पंचतत्वों के आधार पर थी । फिर जीवधारियों की उत्पत्ति कैसे हुई ? जड़ से इच्छा-ज्ञान और स्वतन्त्र-ज्ञान वाला प्राणी कैसे उत्पन्न हुआ ? जड़ और चेतन के बीच मौलिक भिन्नता है । जड़ के भीतर हलचल है पर बुद्धि नहीं । इच्छा, कल्पना, भावना और ऐसी चेष्टा भी नहीं जो प्रतिकूलताओं को अनुकूल बनाने के लिए प्रयत्न कर सके । प्रकृतिगत विशेषताओं से जन्मने, बढ़ने और परिवर्तित होने की क्रियाशक्ति तो है पर वह परिस्थितियों को अधिक अनुकूल एवं उन्नत बनाने के लिए नीति निर्धारण करने और उनमें समय-समय पर हेरफेर करने का गुण जड़ में नहीं है । इस विशेषता और भिन्नता के कारण ही उसे चेतन कहा जाता है । जड़ चेतन एक-दूसरे की सहायता तो करते हैं पर कोई किसी को जन्म नहीं दे सकता । उसका निमित्त कारण नहीं बन सकता । इसलिए दार्शनिकों ने जड़ चेतन के अस्तित्वों को पृथक और स्वतन्त्र माना है । द्वैतवाद इसी को कहते हैं जिसमें ईश्वर और प्रकृति को सहचरी भर माना गया है । किसी को किसी का जन्मदाता नहीं ।

भौतिक विज्ञान की मान्यता अलग और अनोखी है । उसका कहना है कि वस्तु की सड़न और हवा पानी के सम्मिश्रण से ऐसे रसायनों का जन्म होता है जो सचेतन स्थिति को अपने अस्तित्व का स्वतंत्र परिचय देने लगते हैं । इसका सीधा अर्थ हुआ कि प्रकृति के गर्भ से ही चेतन की उत्पत्ति हुई । वही उसकी अधिष्ठात्री है । इस कथन पर जोर देते हुए भी विज्ञान इस प्रश्न पर निरुत्तर है कि माता स्वयं ही बालक को जन्म नहीं दे लेती । उसमें पिता की दूसरी सत्ता का भी सहयोग एवं अंशदान है । प्रकृति को यदि माता माने और उसी के रासायनिक घटकों से जीवों की उत्पत्ति की मान्यता हो तो फिर पिता की जरूरत नहीं रह जाती । ऐसा तो फूलों में भी नहीं होता । वे नर मादा स्तर के परागों के मिलन का सुयोग बिठाते हैं, तब फलते-फूलते हैं । प्राणियों के प्रजनन में तो यह तथ्य और भी स्पष्ट है । उनमें नर-मादा का संयोग विशेषतः आवश्यक होता है । इसी आधार पर प्रजातियाँ जन्म लेतीं और क्रमिक विकास के पथ पर आगे बढ़ती हैं ।

वैज्ञानिक आग्रह यह अभी भी बना हुआ है कि पृथ्वी पर पाये जाने वाले रासायनिक पदार्थ ही विशेष परिस्थितियों में बदलकर प्राणी बन जाते हैं । इसलिए पृथक सचेतन स्तर की मान्यता देने की कोई विशेष आवश्यकता नहीं रह जाती । प्रकृति ही सर्वेसर्वा है ।

सहस्राब्दियों से चली आने वाली इस मान्यता का-खोज के नये चरणों ने खण्डन करना शुरू कर दिया है । अन्य ग्रह तारकों से टूट-टूट कर जो उल्का पिण्ड धरती पर गिरे हैं, उनका विश्लेषण करने पर पता चलता है कि उनमें मात्र प्रकृति पदार्थ ही नहीं वरन् सचेतन जीवाणु भी मौजूद हैं । साथ ही वे इस स्थिति में भी हैं कि किसी भी जटिल स्थिति में रहकर अपना निर्वाह कर सकें । चट्टानों के भीतर ऐसे जीवन पाये गए हैं, जो हवा पानी का प्रत्यक्ष प्रवेश न होने पर भी लम्बी अवधि तक जीवन धारण किए रह सकें । उन पर शीत ग्रीष्म का प्रभाव भी नहीं पड़ता । घोर शीत और

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अत्यधिक उष्णता के बीच भी वे अपना क्रिया-कलाप चलाते रह सकते हैं । उन्हें प्रकृति की किसी वस्तु की आवश्यकता नहीं पड़ती और न किसी पदार्थ का सहयोग पाने की अनिवार्यता रहती है । ग्रह निर्माण से बचा हुआ कचरा घूमकेतुओं को समझा जा सकता है । निरीक्षण ने उनमें भी जीवाणु पाये हैं । इतना ही नहीं अति शीतल और अति उष्ण ग्रहों के मध्य भी जीवन सत्ता का अस्तित्व देखा गया है।

यह अन्वेषण फिर विज्ञान को उसी द्वैतवाद की ओर ले जाता है जिसके अनुसार सीताराम, उमा महेश, राधा कृष्ण, शची पुरन्दर आदि के युग्मों को साथी सहचर तो माना गया है पर अभिन्न नहीं । प्रकृति में उत्पादन की क्षमता तो हो सकती है पर उनका बीज तंत्र परमात्मा को ही मानने के लिए विवश होना पड़ता है । परमात्मा प्रकृति में विलीन नहीं है और न ही जोड़ा जा सकता है । उसकी स्वतन्त्र सत्ता मानने के अतिरिक्त और कोई चारा नहीं । वस्तुतः प्रकृति और पुरुष के संयोग से ही जीव का जन्म हुआ है । यह जानते हुए ही मूल सृष्टा परमात्मा को ही मानकर चलना पड़ेगा ।

सृष्टि के कण-कण में जगमगाती दिव्य ज्योति

एक से अनेक का अध्यात्म सिद्धान्त विश्व ब्रह्माण्ड में संव्याप्त ग्रह-नक्षत्रों पर पूर्ण तथा लागू होता है । वे सभी एक महाअणु के विस्फोट के बिखराव मात्र हैं । पदार्थ की मूल सत्ता परमाणुओं के रूप में अपनी धुरी पर, कक्षा में तथा अग्रगामी क्रम से निरन्तर आगे ही बढ़ने का प्रयत्न कर रही है । ग्रह नक्षत्र अपने केन्द्रीय तारकों की तारक, महा तारकों की परिक्रमा कर रहे हैं । इतना ही नहीं वे सब इस विशाल आकाश में फैलते भी जा रहे हैं । गणित शास्त्री कहते हैं कि यह फैलाव गोलाई का परिभ्रमण लौटकर अपने स्थान में लौट आने के सिद्धान्त का अनुगमन करेगा और जहाँ से चला था वहाँ जाकर सुस्तायेगा, भले ही इसमें कितना ही विलम्ब लगे । गणित यह भी बताता है कि जीव जिस ब्रह्म से प्रादुर्भूत हुआ है उसी के पास लौट जाने के लिए प्रयत्न कर रहा है और देर सवेर में अपने उद्गम तक जा पहुँचने का लक्ष्य प्राप्त कर ही लेगा ।

एक ही ब्रह्माण्ड से अनेक पिण्ड अण्डों की, ग्रह नक्षत्रों से लेकर परमाणुओं की उत्पत्ति न केवल अध्यात्म मानता है वरन् विज्ञान भी उसी बात को स्वीकार करता है ।

अन्तरिक्ष विद्या विशारदों ने नीहारिकाओं और तारक, ग्रह, उपग्रहों के बारे में कई प्रकार के निष्कर्ष और प्रतिपादन प्रस्तुत किए हैं । काण्ट, न्यूटन, चैम्बरलिन, मोल्टन, जेम्स, जीन्स, जैफरे, हाएल, लिटिलटन आदि के सिद्धान्तों का थोड़े हेर-फेर के साथ निष्कर्ष यह है कि सृष्टि के आदि में एक तारे से दो तारे हुए । उन दो तारकों की आपसी खींचतान एवं लड़झगड़ के कारण उनके खण्ड होते चले गए वे घूमे, सिकुड़े, सघन हुए, हलचलों में उतरे और ग्रह उपग्रहों का विशाल ग्रह परिवार बनकर खड़ा हो गया ।

अनन्त तारक मण्डल में हमारा सूर्य भी एक छोटा सा तारा है, इस ब्रह्माण्ड में ऐसे भी अनेक तारे विद्यमान हैं जो सूर्य से भी अनेक गुने बड़े हैं । सूर्य परिवार में ९ मुख्य ग्रह लगभग एक सहस्र अवान्तर ग्रह, अनेक पुच्छल तारे एवं उल्का समूह हैं । सूर्य तारे का यह सम्पूर्ण परिवार, उसके मध्य का विशाल आकाश तथा अपनी-अपनी कक्षाओं में गमन करने हेतु उन सबके द्वारा घेरा गया आकाश यह सब मिलकर एक सौर-मण्डल कहलाता है ।

सौर-मण्डल के ग्रहों का आकार सूर्य से उनका अन्तर एवं उनके सूर्य का परिभ्रमण में लगने वाले समय का विवरण इस प्रकार है—

अपने सूर्य जैसे लगभग ५०० करोड़ ताराओं सौर-मण्डल तथा अकल्पनीय विस्तार वाले धूल तथा गैस वर्तुलों के मेघ मिलकर एक आकाश-गंगा बनती है । ऐसी १० करोड़ से अधिक आकाश-गंगाओं तथा उनके मध्य के अकल्पनीय आकाश को एक ब्रह्माण्ड कहा जाता है यह ब्रह्माण्ड कितने हैं ? इस प्रश्न के उत्तर में प्रश्नकर्त्ता से ही उल्टा प्रश्न पूछना पड़ेगा—आपके नगर में रेत के कण कितने हैं ? मनुष्य की बुद्धि एवं कल्पना इस स्थान पर थक जाती है । इसलिए विज्ञान ने उसे 'अनन्त' कहा है । अध्यात्मवाद ने इस समस्त रचना को ही नहीं उसके स्वामी, नियन्ता, रक्षक को भी 'अनन्त' नाम से ही सम्बोधित किया है ।

अनन्त आकाश में स्थित ग्रह तारकों की विशालता और उनकी परिभ्रमण कक्षा के विस्तार की कल्पना करने से पूर्व हमें अपने सौर-मण्डल में स्थित नव ग्रहों पर दृष्टि डालनी चाहिए और देखना चाहिए कि असंख्य सौर-मण्डलों में से छोटा सा तारा अपना सूर्य आदित्य कितने बाल परिवार को अपने साथ लिए फिरता है ।

बुध—व्यास ३००० मील, सूर्य से दूरी ३ करोड़ ६० लाख मील, सूर्य की परिक्रमा में लगने वाला समय ८२ दिन ।

शुक्र—व्यास ७८०० मील, दूरी ६ करोड़ ७० लाख मील, अवधि २२४ $\frac{१}{२}$ दिन ।

पृथ्वी—व्यास ७९२० मील, दूरी ९ करोड़ ३० लाख मील अवधि ३६५ $\frac{१}{४}$ दिन ।

मंगल—व्यास ४२०० मील, दूरी १४ करोड़ १० मील, परिभ्रमण ६८७ दिन ।

गुरु—व्यास ८७०० मील, दूरी ४८ करोड़ ३० लाख मील, परिभ्रमण समय १२ वर्ष ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शनि—व्यास ७४०० मील, दूरी ८८ करोड़ ६० लाख मील, परिभ्रमण २९ $\frac{१}{२}$ वर्ष ।

यूरेनस—व्यास ३१००० मील, दूरी १८० करोड़ मील, परिभ्रमण समय ८४ वर्ष ।

नेपच्यून—व्यास ३३००० मील, दूरी २८० मील, परिभ्रमण समय १६४ $\frac{१}{२}$ वर्ष ।

यम—व्यास ३००० मील, दूरी ३७० करोड़ मील, परिभ्रमण समय २४८ वर्ष ।

अपने सौर-मण्डल की एक सदस्य अपनी पृथ्वी भी है । उसकी स्थिति का विहंगावलोकन करते हुए सामान्य बुद्धि हतप्रभ होती है । फिर अन्य विशालकाय ग्रह-नक्षत्रों की विविध विशेषताओं पर ध्यान दिया जाय तो प्रतीत होगा कि इस संसार में छोटे से लेकर बड़े तक सब कुछ अद्‌भुत और अनुपम ही है । सृष्टि कर्त्ता की कृति-प्रतिकृति को समझने के लिए मानवी बुद्धि का प्रयास सराहनीय तो है पर निश्चित रूप से उसकी समस्त चेष्टाएँ सीमित ही रहेंगी । अपनी पृथ्वी के भीतर तथा बाहर जो रहस्य छिपे पड़े हैं अभी उनमें से कण मात्र ही जाना समझा जा सका है, जो शेष है वह इतना अधिक है कि शायद उसे जानने में मानवजाति की जीवन अवधि ही समाप्त हो जाय ।

पृथ्वी का मध्य केन्द्र बाह्य धरातल से ६४३५ किलो मीटर है, पर उसके भीतर की स्थिति जानने में अभी प्रायः २८०० मीटर तक ही पृथ्वी तक का ही पता चलाया जा सका है । मध्य केन्द्र का तापमान ६०००० शतांश होना चाहिए । ६२ मील की गहराई पर तापमान ३००० अंश शतांश होगा । इस तापमान पर किसी पदार्थ का ठोस अवस्था में रहना सम्भव नहीं । अस्तु यह निर्धारित किया गया है कि ६२वें मील से लेकर ३९६० मील पर अवस्थित भूगर्भ केन्द्र तक का सारा पदार्थ पिघली हुई स्थिति में होगा । समय-समय पर फूटने वाले ज्वालामुखी और भूकम्प इसी तथ्य की पुष्टि करते हैं ।

भूगर्भ केन्द्र के पदार्थ पिघली हुई-लचीली स्थिति में होने चाहिए इसका एक कारण यह भी है कि पृथ्वी के धरातल के एक मील नीचे ऊपर की पृथ्वी का दबाव प्रायः ४५० टन प्रतिवर्ग फुट पड़ता है । बढ़ते-बढ़ते यही दबाव पृथ्वी केन्द्र पर २० लाख टन प्रति वर्ग फुट हो जायेगा । दबाव का यह गुण होता है कि वह पदार्थ के आयतन (विस्तार) को घटाता है । रुई के ढेर को दबाने से उसका विस्तार छोटा रह जाता है । यों भीतर का ताप आयतन बढ़ने का प्रयत्न करेगा पर साथ ही बाहरी दबाव उसे रोकेगा भी । इन परस्पर विरोधी शक्तियों के कारण भीतर एक प्रकार के तनाव की स्थिति बनी रहेगी और उस स्थान का पदार्थ लचीला ही रहेगा ।

पृथ्वी की आयु कितनी है इसका निष्कर्ष पाँच आधारों पर निकाला गया है—(१) प्राणियों का विकास परिवर्तन का सिद्धान्त (२) परत चट्टानों के निर्माण की गति (३) समुद्र का खारापन (४) पृथ्वी के शीतल होने की गति (५) रेडियोधर्मी तत्वों का विघटन के आधार तक पृथ्वी की आयु लगभग २०० करोड़ वर्ष ठहरती है, पर यह अनुमान मात्र ही है । इस सन्दर्भ में मतभेद बहुत हैं उनमें १२ करोड़ वर्ष से लेकर ९०० करोड़ तक की पृथ्वी की आयु होने की बात कही गई है ।

पृथ्वी का यह घोरताप युक्त हृदय केन्द्र बहुत विशाल है । इसकी त्रिज्या २१०० मील है । इस भाग को 'बेरी स्फियर' कहते हैं ।

भूगर्भ विज्ञान के अनुसार पृथ्वी गोल है । केवल ध्रुवीय क्षेत्रों में कुछ पिघली हुई है । भूमध्य रेखा क्षेत्र में कुछ उभरी हुई है । पृथ्वी का व्यास ७९०० मील है । पर्वतों की सर्वोच्च चोटी प्रायः ५ $\frac{१}{२}$ मील ऊँची और समुद्र की अधिकतम गहराई ७ मील है ।

यह तो मात्र पृथ्वी की बनावट सम्बन्धी जानकारी हुई उससे सम्बन्धित समुद्र, पर्वत, वायुमण्डल, ऊर्जा, चुम्बकत्व आदि की चर्चा इतनी बड़ी है कि अब तक की जानकारियाँ न्यूटन के शब्दों में सिन्धु तट पर बालकों द्वारा बीने गए सीप घोंघों की तरह ही स्वल्प है ।

सृष्टि के अन्तर्गर्भ में छिपे हुए ज्ञात और अविज्ञात रहस्यों की ओर जब दृष्टिपात करते हैं तो प्रतीत होता है कि उसका रचयिता सचमुच ही 'महतो मही यान' है । उसका महत्तत्व इस सृष्टि के रूप में अपनी लीलाविलास से मानवी बुद्धि को चकित चमत्कृत कर रहा है । यदि उस महत्ता के समुद्र जीव भी अपनी सत्ता को विसर्जित कर दें तो अगले ही क्षण आज का अणु बन सकता है और पुरुष से पुरुषोत्तम बन सकता है ।

उपकारिणी धरती माता

वेदों और उपनिषदों में भगवती पृथ्वी को माता कहा है । पृथ्वी ही समस्त प्राणियों का जीवन-विकास और रक्षा करती है । पंच तत्वों में पृथ्वी की प्रतिष्ठा सर्वप्रथम की गई है । प्राणियों के अत्यधिक समीप होने के कारण हम पृथ्वी की गतिविधियों से जितना अधिक प्रभावित होते हैं, उतना और किसी देव और तत्व से नहीं । स्थूल होकर भी सम्पूर्ण सूक्ष्मताएँ और शक्तियाँ पृथ्वी में विद्यमान हैं इसलिए वेदों ने पग-पग पर उनकी उपासना और ऋचागान किया है ।

हम कई स्थानों पर कह चुके हैं कि भारतीय तत्वदर्शन में प्रत्येक वस्तु को चेतन रूप में देखने की प्रथा रही है । इसलिए स्थूल दिखाई देने वाले पदार्थों, पत्थरों को भी मानवीय चेतना के रूप में पूजा गया । कुछ दिन तक यह विषय लोगों के लिए उपहास का विषय रहे पर अब विज्ञान भी बताता है कि संसार में पदार्थ कुछ है ही नहीं, जो कुछ भी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दृश्य-अदृश्य है सब परमाणुओं की अवस्थाएँ हैं । जहाँ परमाणु विरल हैं वहाँ आकाश, जहाँ सघन हैं वहीं पदार्थ दृष्टिगोचर होने लगता है । पर पदार्थ कोई वस्तु नहीं, वहाँ भी एक निरन्तर की क्रियाशीलता काम करती रहती है । आत्म-चेतना को पदार्थ चेतना के साथ मिलाकर ऋचाओं द्वारा—शब्द शक्ति के द्वारा उन शक्तियों से लाभान्वित होने का विज्ञान ही मन्त्र-विद्या है । उसे हम एक प्रार्थनामय रूप में भी देखते हैं । अन्तर्विज्ञान सबमें एक ही है । उसकी आधुनिकतम जानकारी ऋषियों-महर्षियों को हो रही है । इसका प्रमाण इन पंक्तियों में आगे मिलेगा ।

इन दिनों "आपनिक थिरैपी" अपन-चिकित्सा की तेजी से शोध हो रही है और उससे चिकित्सा जगत् में क्रान्तिकारी परिवर्तन होने की आशा है । यह पद्धति धूल-कणों में व्याप्त विद्युत् शक्ति के द्वारा सम्पन्न होती है । इसलिए यह बात बिना किसी संकोच के कही जा सकती है कि पृथ्वी न होती तो न केवल हम शरीर धारण किए रहने में असमर्थ होते वरन् यह कि पृथ्वी ही हमें रोगों से बचाती है । पृथ्वी के कण अज्ञात रूप से हमारे शरीर की सैकड़ों बीमारियों को मारते रहते हैं । यह विषय मिट्टी द्वारा प्राकृतिक चिकित्सा से भिन्न है ।

अभी तक लोग इतना ही जानते थे कि स्वस्थ रहने के लिए स्वच्छ वायु आवश्यक है, पर अब यह कहा जाता है कि स्वस्थ रहने के लिए वायु में धूलि कणों की उपस्थिति अनिवार्य है । यह धूलिकण प्राकृतिक रूप से वायु में फैले रहते हैं । इन्हें कोई अलग करना चाहे तो भी अलग नहीं किया जा सकता । इन कणों में कई कण विद्युत्-आवेश युक्त होते हैं । कुछ कण धन-आवेश (पाजिटिव चार्ज) और कुछ कण ऋण आवेश (निगेटिव चार्ज) होते हैं । धन आवेश वाले कण यद्यपि मनुष्य के लिए उपयोगी नहीं होते पर वे वायुमण्डल में छाई हुई दुर्गन्ध और बुरे तत्वों को निष्क्रिय बनाते रहते हैं जबकि ऋण आवेश वाले कण हमें रक्तचाप और गले की बीमारियों से बचाते रहते हैं । श्वास नली के रोमों द्वारा यही आवेश शरीर में नाड़ी की गति, ताप, कार्यक्षमता को स्थिर रखता है । पशुओं में यही दूध देने की क्षमता बढ़ाते हैं । पौधों के २५ से ७३ प्रतिशत विकास में यह आवेशित धूलिकण ही मददगार होते हैं ।

इन आवेशित कणों को ही अपन कहते हैं । यद्यपि इनकी संख्या १० खरब ($१०^{१२}$) कणों में एक या दो भर होती है तथापि इनके बहुमूल्य प्रभाव को आंकना सम्भव नहीं । इन्हीं स्वल्प कणों की मदद से 'आपनिक थेरैपी' का जन्म हुआ ।

पृथ्वी की मिट्टी में यह गुण बहुतायत से पाये जाते हैं । प्रातःकाल ओस गिरी शुद्ध भूमि में नंगे पाँव टहलने से एक विद्युत शक्ति का शरीर में संचार होता है जिससे सारा शरीर दिन भर तरोताजा रहता है । पहलवान लोग मिट्टी में लोटते हैं । उससे शारीरिक विष का शोषण हो जाता है । कई रोगों में पेट की, सिर की पीड़ा में मिट्टी थोपने से बड़ा आराम मिलता है । यह सब मिट्टी के कणों में व्याप्त विद्युत शक्ति का ही प्रभाव है और यह सूक्ष्म जानकारी आर्ष-ग्रन्थकारों को आधुनिक भूगर्भ वेत्ताओं से कहीं अधिक स्पष्ट रही है ।

पृथ्वी की उत्पत्ति के बारे में गैस्मो आदि पश्चिमी विद्वानों और भारतीय मान्यताओं में काफी कुछ अन्तर है । हम उस विवाद में पड़ना नहीं चाहते, हम तो यह देखते हैं कि उसके बाद की जानकारियाँ बहुत मिलती-जुलती हैं तब जबकि भारतीय शोधें बिना आधुनिक यन्त्रों की मदद के हुईं, यदि अब की शोधों से बहुत बढ़िया जानकारी दे सकती हैं तो हमारी जानकारियों को ज्येष्ठ और प्रामाणिक मानने में कोई आपत्ति न होनी चाहिए ।

काठक संहिता में पृथ्वी को जल प्रधान बताते हुए लिखा है—

आपो वा इदमासन् सलिलमेव । स प्रजापतिः पुष्करः वर्णो वातो भूतोऽलेलीयत । स प्रतिष्ठां नाविदन्त । स एतमपां कुलायमपश्यत् । स एतं प्रजापतिरयां मध्येऽग्निमचिनुत । सैयमभवत् । ततः प्रत्यतिष्ठत इयं वाव अग्निः ।

—काठक सं. २२/६

आप सलिल रूप थीं । वह प्रजापति कमल पत्र में बात की तरह लहलहाता था, उसे ठहरने का स्थान न मिला । उसने इन आपों के कुलायम (जाल) को देखा । तब प्रजापति ने आपों के मध्य में अग्नि चिना तब पृथ्वी बनी और ठहर गई यह पृथ्वी ही अग्नि है और अब जब धरती के कणों का आण्विक विश्लेषण किया गया तो पता चलता है कि वस्तुतः प्रत्येक तत्व में ऊपरी अणु अग्नि के रूप में और नीचे जल के रूप में है । वायु उनके मध्य में अवस्थित है । मृत्तिका कणों की यह आण्विक संरचना भारतीय मत के अनुसार ही है जबकि पूर्व पुरुषों के पास माइक्रोस्कोप जैसा कोई यन्त्र पढ़ने के लिए नहीं था ।

शतपथ ब्राह्मण में पृथ्वी को—

पृथ्वी वै सर्वेषां देवानाम् आयतनम् ।
सूर्यो वै सर्वेषां देवानाम् आत्मा ॥

—१४/३/२/४ और ६

अर्थात् पृथ्वी भी अन्य देवों की तरह आयतन वाली है सूर्य उसकी आत्मा है ।

"अयस्मयी पृथ्वी"—यह पृथ्वी लौह आदि धातुओं से परिपूर्ण । ऋग्वेद में पृथ्वी को आपसी (लोहयुक्त) कहा है । लौह तत्वों की अधिकता के कारण आकाशगत मरुत्तों की विद्युत शक्ति के संयोग से चुम्बकत्व धारण करती है । ऐसा लिंकन बार्नेट ने भी माना है । विष्णु पुराण में सूर्य के परिक्रमा पथ को भूरेखा के नाम से पुकारा है—

तदा चलति भूरेखा साद्रि द्वीपाब्धिकानना ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अर्थात् वह पर्वत द्वीपों, समुद्रों और वनों के साथ चल पड़ती है ।

इयं (पृथिवी) वै सर्पराज्ञी अर्थात् वह सर्पणशील (रेंगने वाली) है जैसे साँप आदि रेंगते हैं, पृथ्वी अन्तरिक्ष में रेंगती है । यह बात जेमिनीय ब्राह्मण के इस मन्त्र से और भी स्पष्ट हो जाती है—

स एष प्रजापतिः अग्निष्टोमः परिमण्डलो भूत्वा अनन्तो भूत्वा शये । तदनुकृतीदम् अपि अन्या देवताः परिमण्डलाः ॥ परिमण्डल आदित्य ····· परिमण्डला इयं पृथिवी ।

—१।२५७

अर्थात् वह प्रजापति अग्निष्टोम परिमण्डल (अग्नि-गोले के समान) रूप होकर अनन्त (गोल) होकर ठहरा । देवता भी उसी प्रकार परिमण्डल है । आदित्य, द्यौ, अन्तरिक्ष और पृथ्वी सभी परिमण्डल हैं । (परिमण्डल का अर्थ यह है कि यह आकाश में स्थित है ।)

इसके बाद सूर्य आदि लोकों से विकीर्ण होने वाले परमाणु आकाश में आइनोस्फिर की पर्तें किस प्रकार कितने बनाते हैं, उसका भी उल्लेख ब्रह्माण्ड पुराण में मिलता है—

पृथिव्यां, मण्डलं कृत्स्नं घनतोयेन धार्यते ।
घनोदधि परेणाथ धार्यते घनतेजसा ॥ २५ ॥
वाह्यते घनतेजश्च तिर्यगूर्ध्वं तु मण्डलम् ।
घनवातं तथाकाशम् आकाशं च महात्मना ॥ २६ ॥

अर्थात् पृथ्वी मण्डल के चारों ओर घन तोय (जलवाष्प) उससे ऊपर की पर्त घन तेज, उसके ऊपर तिर्यग और ऊर्ध्व घनवात (क्षीण ऑक्सीजन वाले पवन) उससे ऊपर आकाश और अन्तरिक्ष है । इस तथ्य को हम आयनोस्फिर लेख में, अखण्ड-ज्योति में पहले प्रकाशित कर चुके हैं ।

शतपथ ब्राह्मण में पृथ्वी 'अग्निगर्भा पृथिवी' (१४।६।४।२१) अर्थात् पृथ्वी के गर्भ में अग्नि दाह है । 'माता पुत्रं यथोपस्थे साग्निं विभर्तु गर्भ आ' (यजुर्वेद ११।५७) अर्थात् जिस प्रकार माता अपने गर्भ में पुत्र को धारण करती है, पृथ्वी ने अग्नि को धारण किया है । यह तथ्य कितने सत्य हैं इसका प्रमाण प्रसिद्ध भूगर्भशास्त्री श्री गैस्मो ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'पृथ्वी की आत्मकथा' (बायोग्राफी ऑफ दी अर्थ) के पेज नं. २७-२८ में इस तरह किया है—

"पृथ्वी कभी पिघली चट्टानों का गोला थी । पृथ्वी के अन्दर के अध्ययन से पता चलता है कि भीतर का अधिकांश भाग अभी भी पिघली दशा में है । ऊपर की ठोस भूमि पतली चादर की तरह है । यह चादर एक प्रकार से पिघले तरल पदार्थ पर तैर रही है । जितना पृथ्वी के भीतर धँसते जायें तो प्रति १००० फुट नीचे का ताप १६ डिग्री फारेनहाइट तक बढ़ जाता है । दक्षिण अफ्रीका की रोबिन्सन खान अब तक सबसे अधिक गरम पायी गई है । उसकी दीवारों की गर्मी मनुष्य को भाड़ में चने की तरह भून सकती है । पृथ्वी का ९७ प्रतिशत भाग पिघली दशा में है ।"

यह अग्नि ही कभी-कभी ज्वालामुखी के रूप में फूट पड़ती है तो विनाश के दृश्य भी दिखाई देने लगते हैं । अन्यथा यह अधिकांश प्राणियों की जीवन रक्षा में ही प्रयुक्त होती है । समुद्र से बनाकर वर्षा कराना तथा वनस्पतियों को जन्म देना इसी भूमिगत ऊष्मा का ही काम है ।

कपिष्ठल ४१।७ में—

तस्मादग्निर्मध्यत औषधीः प्रविष्टः ।

इस अग्नि से ही औषधियाँ उपजती हैं । शतपथ ब्राह्मण २।२।४।५ में भी बताया गया है कि पृथ्वी के आग्नेय परमाणुओं को ग्रहण करके ही वृक्ष और वनस्पतियाँ उगते और बड़े होते हैं । सभी वृक्षों में आग्नेय परमाणु और जल परमाणु पाये जाते हैं । जल परमाणु हवा में विस्तृत हो जाते हैं तब काठ अधिक ज्वलनशील और अग्निकणों की उपस्थिति के कारण ही हो जाता है ।

यह व्याख्याएँ यह बताती हैं कि पृथ्वी को देवता और पंचतत्व के रूप में पूजा-प्रतिष्ठा देने में भारतीयों ने केवल श्रद्धा ही नहीं, विज्ञान का भी पूर्ण सहारा लिया है पर प्रत्येक वस्तु की चेतना के लाभ को सर्वोपरि महत्त्व देने के कारण इन स्थूल विवेचनाओं की ओर उतना ध्यान नहीं दिया गया जितना भावनात्मक प्रसंगों की ओर । शक्ति के उपादानों की ओर बढ़ता हुआ आज का विज्ञान हमारी इस धारणा का समर्थन ही करता है क्योंकि उसके पीछे हमारी दृष्टि स्थूल नहीं, विराट् रही है और विज्ञान भी अब विराट् की ओर ही बढ़ रहा है ।

अपनी पृथ्वी तक के बारे में हम कितना कुछ जानते हैं

जिस पृथ्वी पर हम रहते हैं उसका व्यास ८००० मील है । उसकी परिधि २५००० मील है । ऐसी-ऐसी मोटी बातें ही हम अपनी इस धरती के बारे में जानते हैं । जिस पर हम मनुष्य लाखों वर्षों से रहते चले आ रहे हैं और जिस पर अपना अधिकार माने बैठे हैं । धरती की खोज-बीन बहुत हुई है उसके बारे में बौद्धिक ऊहापोह और यान्त्रिक निरीक्षण के आधार पर बहुत कुछ जानने का प्रयत्न किया गया है—बहुत कुछ जाना भी है पर जो कुछ जाना गया है वह अत्यन्त स्वल्प है । अभिनव खोजों से पता चलता है कि भू-तत्व के सम्बन्ध में अब तक की, लाखों वर्ष की जानकारी बहुत स्वल्प थी । अगले दिनों उसके सम्बन्ध में बहुत कुछ जानना शेष है ।

यों पृथ्वी का व्यास और परिधि का जो माप किया गया है वह स्थिर नहीं है । पृथ्वी क्रमशः फूल रही है । उसका फुलाव यों बहुत मन्द गति से है पर वह चलता रहा तो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वर्तमान माप से सैकड़ों मील की वृद्धि करनी पड़ेगी । समुद्र क्रमशः सूख रहा है । फलस्वरूप थल भाग बढ़ता जा रहा है । अनुमान है कि पाँच लाख वर्ष बाद पृथ्वी का थल क्षेत्र अब की अपेक्षा दूना हो जायेगा । जन्म के बाद वृद्धि का जो क्रम प्राणधारी वनस्पतियों तथा प्राणियों पर लागू होता है, वही पृथ्वी के बारे में भी है । पृथ्वी भी तो एक देवी है—इसकी सजीवता के कारण ही तो इसे धरती माता कहते हैं ।

मनुष्य भले ही निःचेष्ठ बैठे—भले ही उदास, निराश दिखाई पड़े पर धरती उछलती-कूदती—नाचती, थिरकती अपनी मोद-विनोद भरी जीवन-यात्रा पर अनवरत गति से चलती चली जा रही है । हम साधारणतया इतना ही समझते हैं कि पृथ्वी सूर्य का चक्कर काटती है और अपनी धुरी पर घूमती है; पर बहुत ही उसकी चाल में नृत्य जैली की कुटकन-फुटकन भी शामिल है इसे अभी-अभी ही जाना गया है ।

सूर्य अपने ग्रह-उपग्रहों के विशाल परिवार को साथ लेकर एक महासूर्य की परिक्रमा करता है । पृथ्वी भी सौर परिवार के साथ बँधी, जकड़ी उस महायात्रा में घिसटती चली जाती है । इतना ही नहीं वह महासूर्य भी हमारे सौर-मण्डल जैसे अनेक तारक समूहों को साथ लेकर किसी महाध्रुव की परिक्रमा में संलग्न है । बेचारी पृथ्वी उस यात्रा में भी अपने छोटे अस्तित्व के साथ भाग लेती है । यह सूर्य, महासूर्य, महा-महासूर्य का सिलसिला कितना बड़ा है और परिक्रमाओं का विस्तार कितना विस्तृत है इसे सोचते, खोजते वैज्ञानिकों की बुद्धि भी चकराती है ।

पृथ्वी की एक गति और भी है जिसे 'थिरकन' कहा जा सकता है । वह अपनी धुरी पर सर्वथा स्थिर नहीं है । उसकी अक्ष और सिरे अपना स्थान बदलते रहते हैं । १४ महीने की अवधि में यह विचलन प्रायः ७२ फीट तक होता पाया गया है । यों सवा चार करोड़ फीट व्यास वाली पृथ्वी के कलेवर को देखते हुए ७२ फीट नगण्य है तो भी उससे उसकी गति और स्थिति का पता तो चलता ही है । इंग्लैण्ड के खगोल वेत्ता जेम्स ब्रेडले ने इस थिरकन की सम्भावना व्यक्त की थी जो अब विधिवत् यन्त्रों द्वारा नापी जाने लगी है । ध्रुव जिन्हें स्थिर मानकर ही उनका नामकरण किया गया था अब पता चला है कि उनका भी तन-मन डोलता है और वे भी इधर-उधर भटकते हैं, एक जगह छोड़ते और दूसरी पकड़ते रहते हैं ।

यह थिरकन क्यों होती है इसका सही पता तो नहीं चला पर कुछ अनुमान ऐसे लगाये गए हैं जिन्हें सारगर्भित कहा जा सकता है । यथा ध्रुव क्षेत्रीय बर्फ पिघलने से उत्पन्न सन्तुलन, समुद्रीय जल का भटकाव, भूगर्भ में भरे हुए गरम लावे का पुनर्वितरण एवं उद्वेलन आदि ।

इस थिरकन के सम्बन्ध में अधिक जानकारी प्राप्त करने के उद्देश्य से उत्तरी ध्रुव के चारों ओर ४० अक्षांश पर पाँच वेधशालाएँ स्थापित की जा रही हैं—(१) जापान में मिजुसावा (२) समरकन्द के निकट केताव (३) इटली में सार्डीनिया द्वीप का कार्लीफोर्ते (४) अमेरिका में गैदर्ज वर्ग तथा (५) यूक्रिया, इन पाँचों केन्द्रों का संचालन इन्टरनेशनल पोलरमोशन सर्विस द्वारा किया जा रहा है । इनमें लगे शोध यन्त्र अत्यन्त सम्वेदनशील हैं । इसलिए उन तक गर्मी एवं रोशनी का कम से कम प्रभाव पड़े ऐसी व्यवस्था बनायी गई है । वहाँ बत्तियाँ अत्यन्त क्षीण ज्योति की जलती हैं जिनके सहारे अँधेरे में टटोलने की कठिनाई हल हो सके । खिड़कियाँ हर समय खुली रखी जाती हैं ताकि कार्यकर्त्ताओं के शरीर की गर्मी जमा होकर यन्त्रों को प्रभावित न करने लगे ।

अपनी धरती को हम धूलि-मिट्टी की बनी ऊबड़-खाबड़ कुरूप मात्र देखते हैं । यह अति निकटता की अवज्ञा है । वस्तुतः वह बहुत ही सुन्दर और सुसज्जित है इस शोभा, सौन्दर्य को थोड़ा-सा ही दूर हट कर देखा जा सकता है । वह साज-सज्जा युक्त नववधू की तरह अथवा किसी अति सुन्दर रंग-बिरंगे वस्त्रों, आभूषणों से सुसज्जित देव प्रतिमा की तरह किसी चतुर कारीगर द्वारा गढ़ी गई सी प्रतीत होती है । अपोलो ८ पर यात्रा करते हुए अन्तरिक्ष यात्रियों ने बताया कि उन्होंने अन्तरिक्ष में पृथ्वी को इस तरह देखा मानो काली मखमल की चादर पर किसी ने रंग-बिरंगे रत्नों से जगमगाता हुआ प्रकाशवान थाल लटका दिया हो । चन्द्रमा हमें एक ही सुनहरे रंग का दीखता है पर चन्द्र तल से पृथ्वी रंग-बिरंगी दीखती है । वनस्पतियों का रंग हरा, समुद्र का नीला और रेत का भूरा, बर्फ का सफेद स्पष्ट दीखता है । लगता था कई रंगों से सजा हुआ विशालकाय प्रकाश पिण्ड आकाश पर अपना साम्राज्य स्थापित किए हुए है ।

बाहर से शान्त, निश्चेष्ट पड़ी दीखने वाली धरती के भीतर निरन्तर उद्वेग भरी हलचलें होती रहती हैं । अपूर्णता से पूर्णता की ओर बढ़ने के लिए उसका व्यग्र असन्तोष कभी-कभी फूट पड़ता है तो हम काँप उठते हैं । भूकम्पों के रूप में वह अक्सर प्रकट होता रहता है । आन्तरिक विक्षोभ ही कान्तिकारी हलचलों के रूप में फूटते हैं । धरती ज्यों की त्यों नहीं पड़ी रहना चाहती । वह अपनी वर्तमान स्थिति में परिवर्तन और परिष्कार चाहती है । इसके लिए उसके भीतर ही भीतर चलने वाली हलचलें अक्सर विस्फोट बनकर बाहर आती रहती हैं । कई बार तो यह विस्फोट भूकम्प बहुत ही भयानक होते हैं और अपनी असाधारण भली-बुरी प्रतिक्रियाएँ उत्पन्न करते हैं ।

पृथ्वी के गर्भ में २५ मील गहरे उतरने पर इतनी गर्मी है कि उसमें पत्थर भी पिघल जाय । वहाँ सब कुछ पिघले हुए लोहे की तरह द्रव रूप में है । अपने जन्म काल में पृथ्वी भी सूर्य की तरह आग का गोला थी । वह क्रमशः ठण्डी होती गई । ऊपर की पर्तें इतनी ठण्डी हो गईं, कि उस पर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

वनस्पतियों और प्राणियों का जीवन सम्भव हो सके, किन्तु भीतर की आग अभी भी बहुत गरम है । ठण्डक जैसे-जैसे भीतर घुसती जाती है वैसे ही वैसे गरम पर्तों का विस्तार सिकुड़ता है और वहाँ उत्पन्न होने वाली भाप पर्तें फोड़कर ऊपर निकलने का प्रयास करती हैं । इसी विस्फोट को ज्वालामुखियों के रूप में देखा और भूकम्पों के रूप में अनुभव किया जाता है ।

सन् १९६७ में ११ दिसम्बर को महाराष्ट्र के कोयना नगर के समीपवर्ती क्षेत्र में जो भूकम्प हुआ उसमें ८० किलोमीटर लम्बी और छः फुट चौड़ी एक दरार ही जमीन में फट गई थी । जान-माल का विनाश भी रोमांचकारी था । पूरा नगर खण्डहर में परिणत हो गया था ।

कोयना भूकम्प के बारे में भूगर्भ शास्त्री डॉक्टर कृष्णन का अनुमान था कि बाँध बनाकर उस क्षेत्र में जो शिव सागर झील बनाई गई है उसका पानी धरती के नीचे की पर्तों में उतर कर इस भूकम्प का कारण बना होगा ।

कभी-कभी भूकम्पों का परिणाम वरदान जैसा भी होता है । सन् १९५६ में मैक्सिको के दक्षिणी रेगिस्तान में एक भयंकर भूकम्प आया था जिसके कारण वहाँ मीठे पानी का एक विशालकाय फव्वारा फूट पड़ा और पानी की एक-एक बूँद के लिए तरसने वाला वह क्षेत्र हरा-भरा उपजाऊ और मनुष्यों के रहने योग्य बन गया ।

सन् १९२३ में १ दिसम्बर को जापान की राजधानी टोकियो में ऐसा भूकम्प आया था जिसने प्रायः सारे नगर को उजाड़ दिया । बुरी तरह आग लगी और लगभग ढाई लाख मनुष्यों की जानें गईं । सन् १९०६ में १२ अप्रैल को सेनफ्रांसिस्को में भी ऐसा ही भूकम्प आया था जिसने तीन लाख मनुष्यों को बेघर-वार बना दिया और हजारों की जानें ले लीं ।

भारत में १७३७ का भूकम्प इतिहास प्रसिद्ध है जिसने तीन लाख मनुष्य मारे थे । सन् १९५० में आसाम के भूकम्प में करीब ६० झटके लगे थे और डेढ़ हजार जानें गई थीं । १९३४ का बिहार भूकम्प का आतंक दूर नहीं हो पाया था कि एक वर्ष बाद ही क्वेटा में एक और भूकम्प हुआ जिसने ३० हजार मनुष्यों को उदरस्थ किया । काँगड़ा का भूकम्प भी बहुत विनाशकारी था ।

अब से कोई दो हजार वर्ष पूर्व इटली का विसूवियस भाग एक ऐसे ज्वालामुखी के रूप में फूटा था जिसमें आग की नदी बहने लगी थी । विस्फोट से ७ मील दूर बसा पीम्पियाई शहर पूरी तरह विस्मार हो गया था । ऐसा ही एक भयंकर विस्फोट प्रशान्त महासागर के शुन्डा द्वीप में सन् १८९३ में हुआ था । उसने उस द्वीप का अता-पता ही मिटा दिया ।

धरती के आरम्भिक जीवन में भूकम्पों और ज्वालामुखियों की भरमार थी पर अब जैसे-जैसे ठण्डक गहराई तक घुसती जा रही है विस्फोटों का सिलसिला घट रहा है । इतने पर भी प्रायः डेढ़ लाख छोटे-बड़े भूकम्प अभी भी पृथ्वी पर अनुभव किए जाते हैं । जिनमें से कम से कम दस तो महाविनाशकारी अवश्य ही होते हैं ।

पृथ्वी के गर्भ में क्या-क्या भरा पड़ा है इस सम्बन्ध में केवल १५ प्रतिशत की ही जानकारी हमें है । भू-गर्भ का ८५ प्रतिशत भाग ऐसा है जिसके बारे में हम सर्वथा अनजान हैं । धरती से जो लाभ अब तक उठाया जाता रहा है उससे मनुष्य को सन्तोष नहीं । वह चाहता है कि क्यों न उसकी समस्त सम्पदा का पता लगा लिया जाय और उससे क्यों न भरपूर लाभ उठाया जाय ?

इसके लिए धरती की गहरी खुदाई करनी होगी तभी भीतरी पर्तों के बारे में यथार्थ जानकारी प्राप्त की जा सकेगी अभी तो इस सम्बन्ध में जो जाना गया है वह अनुमानों पर ही आधारित है ।

इसके लिए होनोलूलू का उत्तर पश्चिमी प्रशान्त महासागर का १७० मील का क्षेत्र चुना गया है । यहाँ पनडुब्बीनुमा ६ मकान बनाए जा रहे हैं जो समुद्र में १८००० फुट गहराई में रहा करेंगे । इसमें एक शक्तिशाली 'ड्रिलिंग संयन्त्र' रहेगा । यह 'टर्वो कोरक' यन्त्र लगातार २०३ घण्टे चलने और दो मील गहरा छेद करने में सफल हो चुका है इसकी नोंक बहुमूल्य हीरों से बनाई गई है जो गरम और कठोर पर्तों में भी छेद करती चली जायेगी । यह छेद गहरे समुद्र तल से ही आरम्भ करना उचित समझा गया है ताकि १८ हजार फुट तक की गहराई का छेद करने का परिश्रम एवं व्यय बचाया जा सके ।

यों सन् १९५२ में गार्डनलिल ने इस सन्दर्भ में बहुत दौड़-धूप की थी और काफी गहराई तक खुदाई भी की पर जितना आवश्यक था उतना कार्य न हो सका, सन् १९६१ में वैस्कम योजना के अन्तर्गत कैलिफोर्निया समुद्र तट पर यह प्रयत्न फिर आरम्भ हुआ और समुद्र तल से ६०० फुट गहराई तक जाने में सफलता प्राप्त कर ली । अब वे प्रयत्न और अधिक तेज किए गए हैं ।

एक बार ऐसा भी सोचा गया था कि जमीन के आर-पार छेद कर दिया जाय । पर उसका खतरा जल्दी ही समझ लिया गया । समुद्र का पानी धरती की गरम पर्तों में समा कर न केवल सूख ही जायेगा वरन् उसकी भाप से भयंकर ज्वालामुखी उठेंगे और धरती की ऊपरी पर्तों के चिथड़े उड़ जायेंगे । इन विभीषिकाओं को ध्यान में रखते हुए धरती में गहरा छेद करने के उत्साह के अगले कदम फूँक-फूँक कर ही उठाये जा रहे हैं । अब तक ११ हजार फुट की गहराई में खोदी जा चुकी है पर उतना पर्याप्त नहीं । आवश्यक ज्ञान प्राप्त करने के लिए २० हजार फुट गहराई तक तो जाना ही पड़ेगा ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पृथ्वी के रहस्य इतने अधिक हैं जिन्हें पूरी तरह जानने में कदाचित् ही कभी मानवी बुद्धि समर्थ हो सके; फिर भी धरती माता उदारतापूर्वक अपनी आन्तरिक स्थिति का थोड़ा-थोड़ा परिचय हमें अनायास ही देती रहती है । माता अपने बच्चों को सहज ही बहुत कुछ सिखाती रहती है, पृथ्वी भी अपनी अविज्ञात सम्पदाओं के बारे में हम मनुष्यों को इशारा करती रहती है और बताती रहती है कि वे चाहें तो इन संकेतों को समझकर बहुत हद तक लाभान्वित होते रह सकते हैं ।

भूमिगत खनिजों के सम्बन्ध में उस क्षेत्र में उगे हुए पेड़-पौधों का विश्लेषण करके भी जानकारी प्राप्त कर सकना सम्भव हो गया है । अमुक खनिज अथवा रसायन का बहुल्य होने से अमुक वृक्ष या वनस्पति अधिक उगते और बढ़ते हैं । इस विज्ञान का क्रमशः अधिकाधिक विकास होता जाता है ।

ब्रिटिश कोलम्बिया के पहाड़ी प्रदेश में ऐसे वृक्ष पाये गए जिनके तनों तथा पत्तों में स्वर्ण मिश्रित रसायन पाये गए । इन वृक्षों के नाम हैं—डग्लसफर, ड्वार्फ ज्युनियर, लार्जपोल पाइन, फीलेपाइन, इन वृक्षों के समीपवर्ती क्षेत्र की तलाश करने पर वहाँ सोने की खदानें पायी गईं । इसी प्रकार न्यू मैक्सिको में पाये जाने वाले प्रिंस ब्लूम, ढबल, मस्टर्ड, पेप्पर ग्रास आदि पौधों में गन्धक की अधिक मात्रा देखकर उस क्षेत्र में गन्धक की खदानें ढूँढ़ ली गईं । कैलीफोर्निया में पायी गई ताँबे की खदानों का सुराग वहाँ पाये जाने वाले 'पोपी' वृक्ष के विश्लेषण से ही चला था ।

भगवान का बनाया हुआ यह विश्व ब्रह्माण्ड चमत्कारी और रहस्यों से भरा पड़ा है । उसकी एक छोटी-सी गुड़िया अपनी धरती है । उसे कितनी कारीगरी से बनाया गया और कितने रहस्यों से सँजोया गया है इसे देखकर अपनी बुद्धि चकित रह जाती है । धरती की भीतरी और बाहरी गतिविधियों का थोड़ा-सा परिचय जानने पर हम अवाक् रह जाते हैं और सोचते हैं जो जाना गया है उससे असंख्य गुना जानने के लिए शेष है ।

इस जगत में जड़ के नाम से जाना गया भाग भी वस्तुतः चेतन है । उसमें चेतन की सारी विशेषताएँ विद्यमान हैं । अपनी धरती जड़ समझी जाती है पर थोड़े गहन निरीक्षण से पता चलता है कि उसमें, चेतन में पाये जाने वाले समस्त गुण मौजूद हैं । ब्रह्माण्ड के पिण्ड के रहस्य कितने असीम हैं और मानव बुद्धि कितनी ससीम है; इसका थोड़ा-सा आभास तब मिलता है जब हम अपनी चिरसंगिनी धरती माता के अद्भुत रहस्यों के सम्बन्ध में मिलती आ रही जानकारी पर विचार करते हैं ।

अपने बुद्धि बल पर इतराने वाले मनुष्य को प्रकृतिगत रहस्य व्यग्यंपूर्वक मुस्कराहट के साथ देखते हैं और कहते हैं परमेश्वर की संरचना के रहस्य तुम्हारी परिधि से बहुत अधिक और बहुत बड़े हैं । उदाहरण के लिए धरती सम्बन्धी जो जानकारियाँ मिल रही हैं वे भी हमें आश्चर्यचकित कर देने के लिए कम नहीं हैं ।

मोटी दृष्टि से तो धरतीमाता भी धूल मिट्टी मात्र है

देखने में कुछ वस्तुएँ बिलकुल सामान्य लगती हैं, पर उन्हें सूक्ष्म दृष्टि से देखा जाय तो प्रतीत होता है कि वे असामान्य हैं । उनका मूल्य मोटी कसौटी पर जितना स्वल्प आँका गया था; वस्तुतः वैसा नहीं वरन् कहीं अधिक था ।

मिट्टी को ही लें वह अपने चारों ओर असीम मात्रा में बिखरी पड़ी है । मुफ्त में चाहे जहाँ से उसे उठाया जा सकता है । वह निर्जीव मालूम पड़ती है, किन्तु जब उसे वैज्ञानिक कसौटी पर कसा जाता है; तो प्रतीत होता है कि उसका प्रत्येक कण बहुमूल्य रासायनिक पदार्थों से बना है । बीज तो नगण्य से निमित्त मात्र हैं वस्तुतः पौधे और वृक्ष जमीन की रासायनिक स्थिति के कारण ही उपजते और बड़े होते हैं । प्राणियों का आहार मुख्यतया वनस्पति ही है । माँस भी वनस्पति का ही एक उत्पादन है । इन्हीं के सहारे शाकाहारी और माँसाहारी प्राणी अपनी जीवनचर्या चलाते हैं । भूमि की रासायनिक जीवन शक्ति ही प्राणियों के शरीर को प्राण धारण करने में समर्थ बनाती है । संसार में छाई हरितमा ही इस संसार का शोभा शृंगार है । प्राण वायु और वर्षा जैसे बहुमूल्य उपहार इन वृक्ष वनस्पतियों से ही मिलते हैं । ईंधन, छाया, फल, फूल आदि अनेकों लाभ उनके हैं । यह सब इस मिट्टी धूल का ही चमत्कार है जो मोटी दृष्टि से निरर्थक और महत्त्वहीन प्रतीत होती है ।

वस्तुओं, व्यक्तियों और परिस्थितियों का मूल्यांकन मोटी दृष्टि से नहीं हो पाता इसलिए जो कुछ इर्द-गिर्द बिखरा पड़ा है वह अपर्याप्त एवं असन्तोषजनक लगता रहता है, पर यदि उन पर गहरी दृष्टि डाली जाय और सूक्ष्म पर्यवेक्षण किया जाय तो प्रतीत होगा कि हमारे भीतर और बाहर सब कुछ महत्त्वपूर्ण ही भरा पड़ा है । हमारी मोटी बुद्धि उसका मूल्यांकन नहीं कर पाती ।

वृक्ष वनस्पतियों की उत्पत्ति और वृद्धि किसी क्षेत्र की भूमि के स्तर पर निर्भर रहती है । भूमि की विशेषताओं के आधार पर अमुक वनस्पतियाँ, धान्य एवं वृक्ष उत्पन्न होते हैं । उनके स्वाद और गुणों में भी अन्तर रहता है । बम्बई का केला और नागपुर का सन्तरा, लखनऊ का खरबूजा अपनी-अपनी विशेषताएँ रखते हैं । उन्हीं पौधों को, उन्हीं बीजों को अन्यत्र बोया, लगाया जाय तो वैसी पैदावार न होगी जो उपयुक्त स्थानों पर सम्भव होती है । यह भूमि की, उसमें रहने वाले रसायनों की विशेषता का ही परिणाम है । ऊसर भूमि में तो कुछ भी पैदा नहीं होता । रेगिस्तानों में और चट्टानों पर तो हरियाली का एक तिनका भी नहीं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

जमता । किसी-किसी क्षेत्र में, दलदलों में, घास तो जमती है, पर वह ऐसी अनुपयुक्त होती है कि उसे कोई नहीं खाता, जलाने के अलावा और किसी काम नहीं आती । इसमें दोष घास का नहीं जमीन का है, यदि उस क्षेत्र में कोई अच्छी घास बोई जाय तो भी कुछ आशाजनक परिणाम नहीं निकलेगा ।

भूमि की महत्ता को प्रथम गिना जाता रहेगा । यदि वह उर्वर है तो कुछ न बोने पर भी प्रकृति क्रम से उसमें घास उग आयेगी और पक्षियों के बीट द्वारा जा पहुँचे बीज उग कर वह क्षेत्र हरा-भरा और फला-फूला बन जायेगा । वन्य क्षेत्रों में मनुष्य की पहुँच से बाहर के अनेक स्थान ऐसे होते हैं जहाँ की हरितमा, जलवायु और शोभा सुषमा देखते ही बनती है । इसे भूमि का एकाकी प्रयास कह सकते हैं । मनुष्य की बुद्धि और साधनों का इन क्षेत्रों में समन्वय हो जाय तब तो कहना ही क्या, पर यदि वैसा न हो सके तो भी वह भूमि अपने बलबूते पर ही अपने क्षेत्र को शोभा, सुषमा और प्रकृति सम्पदा से भरा-पूरा बनाये रह सकने में समर्थ बनी रहेगी ।

पृथ्वी बाहर से उपेक्षणीय धूलि, मिट्टी मात्र मालूम पड़ती है, पर उसका विश्लेषण जब प्रयोगशाला में किया जाता है तो प्रतीत होता है कि उसी धूल मिट्टी में कितने बहुमूल्य रासायनिक, खनिज भरे पड़े हैं एवं कितने उपयोगी जीवाणुओं का निवास हो रहा है । इन्हीं सब पदार्थों से वनस्पतियाँ बनती हैं वे सीधी अथवा पशु शरीरों में होकर दूध आदि द्वारा हमारे पेट में पहुँचती हैं । वह आहार ही शरीर और मन के रूप में चलता-फिरता, हँसता-बोलता और सोचता-समझता दिखाई पड़ता है । प्रकारान्तर से यह सब धरती का ही अनुदान है । वनस्पतियों की, प्राणियों की, मनुष्यों की सत्ता वस्तुतः परोक्ष रूप से पृथ्वी का ही रूपांतरण है ।

बाहर से ठण्डी दीखने वाली पृथ्वी अपने भीतर कितना प्रचण्ड तापमान दबाये बैठी है इसे मोटी दृष्टि से नहीं वरन् विशेष उपकरणों से ही देखा जाना जा सकता है । धरती के अन्तराल में छिपी शक्ति का यदाकदा परिचय तब मिलता है जब ज्वालामुखी फूटते और भूकम्प आते हैं । पृथ्वी की आकर्षक शक्ति उसे अपने स्थान पर टिकाये हुए है और अन्य ग्रह-नक्षत्रों के साथ सन्तुलित सम्बन्ध जोड़े हुए है । यह सब सामान्य बुद्धि और मोटी दृष्टि से नहीं जाना जा सकता । जो महत्त्वपूर्ण है उसे जानने के लिए सूक्ष्म दृष्टि चाहिए । उसी के सहारे यह जाना जा सकता है कि यहाँ नगण्य नहीं सब कुछ महत्त्वपूर्ण ही चारों ओर भरा पड़ा है ।

पृथ्वी का अर्धव्यास ४ हजार मील है । उसकी ऊपरी चट्टानी पर्त ४०-५० मील मोटी है । इसे एक पतली झिल्ली ही कह सकते हैं । जैसे-जैसे पृथ्वी के भीतर उतरते हैं वैसे-वैसे वह अधिक गरम दिखाई पड़ती है । हर सौ फुट पर प्रायः एक सेन्टीग्रेड तापमान बढ़ता जाता है । ९९ डिग्री तापमान पर पानी उबल कर भाप बनने लगता है । इससे सिद्ध है कि ४०-५० मील गहरे उतरने पर कोई वस्तु ठोस रूप में नहीं हो सकती जो कुछ होगा वह पिघले रूप में या गैस रूप में ही होगा । ऊपरी परत धीरे-धीरे ठण्डी होकर सिकुड़ती जाती है । इस सिकुड़न से भीतरी गैसों पर दबाव पड़ता है और उसमें से विस्फोट होते रहते हैं जहाँ भी झिल्ली पतली या कमजोर होती है वहीं से यह विस्फोट सुगमतापूर्वक बाहर आ जाते हैं । इन्हें ज्वालामुखियों के रूप में देखा जाता है ।

पृथ्वी की गहराई में प्रवेश करें तो बहुमूल्य खनिज सम्पदाएँ उपलब्ध होती हैं । सोना, चाँदी, ताँबा, लोहा आदि धातुएँ हीरा, पन्ना आदि रत्न—कोयला, पेट्रोल आदि उपयोगी साधन धरती को खोदकर ही निकाले जाते हैं । परिचित ऊपरी पर्तों से, अपरिचित गहरी पर्तें किसी भी प्रकार कम महत्त्व की नहीं हैं । भूमि के नीचे दबा हुआ जल ही कुओं, सरोवरों में भरा पड़ा है । इन्हीं से हमें शरीर की, खेतों की तथा कारखानों की प्यास बुझानी पड़ती है । बादल तो थोड़े दिन बरसते हैं हम सबका गुजारा तो उसी पानी से होता है जो धरती ने अपने अँचल में समेट कर रखा होता है । धरती के उपकारों और अनुदानों पर जब विचार करते हैं तो अपनी सहज श्रद्धा फूट पड़ती है और धरती माता की जन्मदात्री माता की भाँति ही उसके चरणों में मस्तक झुक जाता है ।

लेकिन यह दिव्य अनुभूतियाँ भावनात्मक क्षेत्र में प्रवेश करने के उपरान्त ही होती हैं । मोटी दृष्टि से तो उपेक्षणीय धूलि मिट्टी केवल पैरों तले मुद्दतों से रौंदी जाने वाली नगण्य वस्तु मात्र है । भारत माता के रूप में, धरती माता के रूप में तो भाव भरी पुलकन ही प्रस्तुत करती है । धरती की अपनी महत्ता है, पर वह प्रकट प्रस्फुटित तभी होती है जब उस पर सूक्ष्म दृष्टि का प्रकाश पड़ता है ।

एक सुसम्पन्न सागर हमारे भीतर भी भरा पड़ा है

इस पृथ्वी का दो तिहाई भाग जल में डूबा हुआ है और एक तिहाई पर थल दिखाई पड़ता है । थल में जो जीवन सौन्दर्य और वैभव दिखाई पड़ता है वह भी जल का ही अनुदान है । समुद्री पानी भाप बनकर बादलों की तरह आकाश में उड़ता है और फिर वही बरस कर वृक्ष, वनस्पति, अन्न, फल आदि उत्पन्न करता है । जीव उसी पर जीवित हैं । जल देवता का यह अनुग्रह यदि थल पर न हो, पानी न बरसे तो सर्वत्र श्मशान जैसी भयंकरता दीख पड़े, फिर न कहीं पेड़-पौधे, घास-पात दिखाई पड़ें और न जीव-जन्तु ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

तबे की तरह जलती हुई जमीन तब केवल रेतीले आँधी तूफानों की गर्द गुबार से ही भरी रहे ।

समुद्र में अपार सम्पदा भरी पड़ी है । जितना सोना, चाँदी, रत्न राशि, धातुएँ, रसायनें पृथ्वी पर दिखाई पड़ती हैं उनसे सैकड़ों गुनी अधिक सागर तल में दबी पड़ी हैं । मनुष्य उन्हें जानता नहीं, या अभी ढूँढ़ नहीं पाया इससे उस अपार सम्पत्ति भण्डार की गरिमा कम नहीं होती ।

इस पृथ्वी पर जितना पेट्रोलियम है उसका ४० प्रतिशत भाग समुद्र के गर्भ में है । उसे निकालने का थोड़ा-सा प्रयत्न अभी सिर्फ कम्युनिस्ट देशों में आरम्भ हुआ है । वह जब बड़े पैमाने पर निकाला जाने लगेगा तो पेट्रोल की कोई कमी नहीं रहेगी । लगभग ४० प्रकार के उपयोगी खनिज एवं रसायन समुद्र में प्रचुर मात्रा में मौजूद हैं उन्हें जब बाहर लाया जायेगा तो उनसे भी सम्पत्ति एवं सुविधाएँ बढ़ाने में बड़ी सहायता मिलेगी ।

शोध कर्त्ताओं के अनुसार अकेले प्रशान्त महासागर में ही १० अरब टन सोना, ५० करोड़ टन चाँदी, २० अरब टन यूरेनियम और अरबों टन मैगनीज भरा पड़ा है । इन सम्पदाओं के भण्डार में हर वर्ष करोड़ों टन की वृद्धि हो जाती है । यह आँकड़े तो एक समुद्र के हैं, संसार के अन्य समुद्रों का भी लेखा-जोखा लिया जाय तो प्रतीत होगा कि इस समुन्नत कही जाने वाली परिस्थिति में भी धरती की सम्पदा की तुलना में समुद्र का वैभव कहीं अधिक है ।

बढ़ती हुई आबादी को खुराक देने के लिए अब समुद्र का द्वार खटखटाने की तैयारी की जा रही है । लॉक्डीह एयर क्राफ्ट कॉरपोरेशन के अध्यक्ष श्री ए. कार्ल कोशियन का कथन है अगले दिनों धरती मनुष्य की आवश्यकताओं को पूर्ण कर सकने में असमर्थ हो जायेगी तब जीवित रहने के लिए समुद्र का आश्रय लेने के अतिरिक्त और कोई चारा न रहेगा ।

जो समुद्री अनुसंधान इन दिनों चल रहा है उसे देखते हुए कहा जा सकता है कि समुद्र से मीठा पानी प्राप्त करने के, खाद्य सामिग्री उगाने के, खनिज तथा बिजली प्राप्त करने के इतने उपाय अगले दस वर्षों में ही खोज निकाले जायेंगे जिनके आधार पर भावी पीढ़ी को जीवन निर्वाह की आवश्यक साधन सामिग्री उपलब्ध हो सके ।

यदि जनसंख्या वर्तमान क्रम से बढ़ती रही और उसे जीवित रखना भी आवश्यक प्रतीत हुआ तो खाद्य समस्या का हल समुद्रीय वनस्पतियों से ही निकलेगा । अन्न की तो वर्तमान आबादी के लिए भी कमी पड़ती है । रासायनिक खादों, जल व्यवस्थाओं एवं यन्त्रों द्वारा समुन्नत कृषि करने पर भी खाद्य उत्पादन में इस क्रम से वृद्धि नहीं हो सकती है जिस क्रम से कि जनसंख्या बढ़ रही है । इस अन्न संकट को दूर करने के लिए समुद्र की शरण में जाने के अतिरिक्त और कहीं आश्रय नहीं मिल सकता ।

समुद्र से लेकर छोटे से छोटे पोखर जोहड़ों तक में कई प्रकार की वनस्पतियाँ उगती हैं । काई को हर कोई जानता है, पर एक काई ही नहीं, जल में उत्पन्न होने वाली वनस्पतियों का व्यापक क्षेत्र है, जिनके अन्तर्गत उनके लाखों आकार-प्रकार और वंश वर्ग आते हैं । आमतौर से वह जलचरों का आहार रही है मनुष्य के लिए धरती पर उपजने वाली वनस्पतियाँ ही काफी थीं, वह उन्हीं से गुजारा कर लेता तो उन जल वनस्पतियों की बात क्यों सोचता । पर अब तो स्थिति ही बदल गई । जनसंख्या की वृद्धि ने नये आधार खोजने के लिए विवश कर दिया है । इस विवशता में वरुण देवता का दरवाजा खटखटाने के अतिरिक्त और कोई चारा नहीं ।

जल वनस्पतियों में मनुष्य के खाये जाने योग्य सबसे उपयुक्त वनस्पति ढूँढ़ निकाली है—नाम है उसका—क्लोरेला । यह बहुत छोटे प्रकार की एक काई की ही किस्म है पर जो तत्व पाये जाते हैं वे मनुष्य ही नहीं अन्य थलचरों की—पशु-पक्षियों की भी खुराक बन सकने योग्य है । क्लोरेला में—प्रोटीन ५० प्रतिशत, चिकनाई ७ प्रतिशत होती है । पके नीबू की तुलना में विटामिन और उपयोगी किस्म के कार्बोहाइड्रेड उसमें पर्याप्त मात्रा में होते हैं ।

भावी आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए संसार के प्रमुख दस देशों ने इसकी कृषि करनी आरम्भ की है । बड़े पैमाने पर इस प्रयोग को हाथ में लेने वालों में अमेरिका, जापान, हालैण्ड, जर्मनी और इसराइल मुख्य हैं । यह कृषि बड़ी सरल और कम खर्च की है । एक किसान बिना किसी मदद के अकेला ही १०० एकड़ इस कृषि की देखभाल तथा बुवाई, कटाई कर सकता है । इसकी वृद्धि आश्चर्यजनक है १२ घण्टे में इसका वजन चौगुना हो जाता है । एक एकड़ में एक साल में ४० टन फसल काटी जा सकती है । इसके लिए खादें तैयार की जा रही हैं ताकि इस 'काई' को और भी अधिक गुणकारी बनाया जा सके ।

वनस्पति शास्त्री डॉ. सिडनी ग्रीन फील्ड का कथन है कि अन्तरिक्ष यात्रियों के लिए क्लोरेला आदर्श खुराक की तरह काम में लायी जा सकती है, वह यान में रखे, पानी के टैंक में रोज उगाई और रोज खाई जा सकती है । उसकी कृषि अन्तरिक्ष यानों में भी हो सकती है । उसे खाद आदि की सहायता से और भी उन्नत किस्म की बनाया जा सकता है ।

समष्टि जगती का आधार जिस प्रकार समुद्र है उसी प्रकार व्यक्ति की निजी सत्ता का अस्तित्व एक निजी सागर पर ठहरा हुआ है । यह सागर रक्त के रूप में हमारे समस्त शरीर में व्याप्त है । मोटी आँख से देखने पर यह लाल पानी भर दीखता है पर बारीकी से देखने पर उसमें वे समस्त विशेषताएँ और सम्पदाएँ मौजूद हैं जो दृश्य मान सागर में दिखाई पड़ती हैं । प्राणि जगत का जीवनाधार सागर जल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

है और जीवधारा का व्यक्तिगत अस्तित्व उसके रक्त पर निर्भर है । जीवात्मा एक प्रकार का ह्वेल मछली है जो रक्त रूपी शरीर में स्वच्छन्द विचरण करती है और उसी से अपने लिए सभी सुविधा सामिग्री प्राप्त करती है । रक्त की महत्ता यदि हम समझें उसे शुद्ध और सशक्त बनाये रहें तो शारीरिक स्वास्थ्य की दृष्टि से ही नहीं आत्मिक प्रगति की दृष्टि से भी हम उन्नति के उच्च शिखर पर पहुँच सकते हैं ।

हमारे शरीर में पानी की मात्रा अत्यधिक है । देह के पूरे वजन में दो तिहाई भाग पानी और एक तिहाई में दूसरी चीजें हैं । रक्त मुख्य रूप से पानी ही है । शरीर में प्रायः ५ लीटर रक्त होता है, उसमें ९० प्रतिशत तो पानी ही होता है । अन्य तत्व तो उसमें बहुत कम ही रहते हैं । ठोस और कठोर दीखने वाली हड्डी में भी पानी की काफी मात्रा रहती है ।

औसतन हर मनुष्य को ढाई तीन लीटर पानी हर रोज पीना पड़ता है । अधिक मेहनत करने वाले अधिक और बैठे ठाले लोग कम पीते हैं । गर्मी में प्यास अधिक लगती है और सर्दियों में कम । गर्मी के कारण शरीर का बहुत-सा पानी पसीना तथा भाप बनकर बाहर निकल जाता है इसी की पूर्ति के लिए उन दिनों अधिक प्यास लगती है । पेशाब और साँस में होकर भी पानी बाहर निकलता रहता है । साँस द्वारा प्रायः २५० ग्राम पानी बाहर निकलता है । पसीने में होकर प्रायः एक लीटर पानी बाहर निकलता है । यह निकासी अन्दरूनी सफाई के लिए ही नहीं—शरीर को शीतल रखने की दृष्टि से भी आवश्यक है ।

स्वस्थ मनुष्य के शरीर में उसके वजन का चौदहवाँ भाग वजन रक्त का रहता है । इसे डेढ़ गैलन माना जा सकता है । स्त्रियों में मासिक धर्म तथा प्रजनन के कारण उसकी मात्रा कुछ कम रहती है । औसत महिला में एक गैलन से कुछ कम ही खून होता है । रक्त में जल की मात्रा ७० प्रतिशत रहती है ।

यों ठोस दीखने वाली भी कोई वस्तु ऐसी नहीं जिसमें पानी का अंश न हो । हड्डियों तक में २५ प्रतिशत पानी होता है चर्बी के कोशों में जरूर जलांश २० प्रतिशत रहता है बाकी सर्वत्र उसका बाहुल्य है । गुर्दों में ८१ प्रतिशत और मस्तिष्क में उसकी मात्रा ८५ प्रतिशत रहती है ।

रक्त का एक महत्त्वपूर्ण भाग है—प्लाज्मा । यह मटमैले पीले रंग का एक तरल पदार्थ है । रक्त का ५५ प्रतिशत आयतन प्लाज्मा से और ४५ प्रतिशत अन्य कणों से भरा रहता है । प्लाज्मा के तैरते रहने वाले तैराकों को रक्त के लाल कण, सफेद कण तथा सफेद पपड़ियों में वर्गीकृत किया जा सकता है ।

रक्त के मुख्य कार्य पाँच हैं—(१) विभिन्न अवयवों के तन्तु कोशों तक उपयुक्त आहार पहुँचाना तथा उन कोशों में उत्पन्न मल को उस स्थान से हटाना ।

(२) विभिन्न अवयवों में जल तथा अम्ल की मात्रा का नियन्त्रण तथा शारीरिक तापमान की स्थिरता रखना ।

(३) होरमोन आदि ग्रन्थियों से उत्पन्न अतिरिक्त रसों को अपने में मिलाकर उनका लाभ समस्त शरीर को, तथा उनकी अपेक्षा रखने वाले अंग विशेष तक को पहुँचाना ।

(४) प्रत्येक कोश को ऑक्सीजन पहुँचाना और वहाँ से उत्पन्न कार्बन डाइ ऑक्साइड को बाहर निकालना ।

(५) रोग कीटाणुओं से लड़कर शरीर की सुरक्षा का प्रबन्ध रखना ।

रक्त में उपस्थित कणों पर लाल रंग चढ़ा होता है । इस रंग को 'हीमोग्लोबिन' कहते हैं । यह प्रोटीन जैसा पदार्थ है । इसके एक अण्ड में कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन, नाइट्रोजन के कितने ही परमाणुओं के साथ-साथ एक लौह कण भी रहता है । लाल रंग इस लौह कण के कारण ही होता है । समुद्री जीव जन्तुओं में रक्त नीले रंग का होता है । क्योंकि उनके रक्त कणों में लोहा न होकर ताँबा रहता है । नीले रक्त का नाम शरीर शास्त्र में हेमोस्यनिक दिया गया है ।

प्लाज्मा में तैरने वाले ठोस कणों को ही रक्त का सार भाग माना जाता है । उन्हीं के द्वारा शरीर के कोशों को ऑक्सीजन तथा आहार मिलता है। इन लाल कणों की बनावट गोल चपटी तश्तरी जैसी होती है । किनारे मोटे, बीच का भाग पतला और व्यास ७.२ माइक्रोन होता है ।

यों रक्त का भण्डार हृदय माना गया है पर इन लाल कणों की उत्पत्ति का केन्द्र सिर की हड्डी के खोखले भाग में और रीढ़ की हड्डी में होता है । हाथ पाँव की हड्डियों के अन्तिम छोरों पर भी यह लाल कण बनते हैं । इन लाल कणों की औसत आयु १२५ दिन है । इसके बाद वे मरने लगते हैं । मृतकों की यह लाश 'हेमोकोमियाँ' कहलाती है । इन लाशों को हटाने का काम तिल्ली के जिम्मे है । तिल्ली में प्रचुर संख्या में मैकरोफ्लेजेज कोशिकाएँ होती हैं । इनका काम है मृत लाल कणों की लाशों को जलाकर उस राख को अपने में आत्मसात कर लेना ।

साधारणतया यह लाल कण प्रति सेकण्ड २३,००,००० की संख्या में मरते रहते हैं । सन्तोष की बात इतनी ही है कि बुढ़ापे और बीमारी की स्थिति को छोड़कर उनकी जन्मसंख्या, मृत्यु संख्या की तुलना में कुछ अधिक ही रहती है ।

रक्त में अशुद्धि अभक्ष्य आहार से उत्पन्न होती है । रोगों का प्रारम्भ यहीं से होता है । मिर्च, मसाले, माँस-मदिरा, तले-भुने तामसिक पदार्थ एक तो पचते ही कठिनाई से हैं, फिर वे पच भी जायें तो अशुद्ध रक्त ही उत्पन्न करते हैं । जिस प्रकार गन्दगी डालने से स्वच्छ सरोवरों का जल भी दुर्गन्ध युक्त हो जाता है उसी प्रकार अभक्ष्य योजना से उत्पन्न अशुद्ध रक्त अनेक रोगों का केन्द्र बना

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रहता है । मनोविकार भी रक्त को विषैला बनाते हैं । क्रोध, भय, शोक, चिन्ता, निराशा जैसी मनःस्थिति का प्रभाव धीरे-धीरे रक्त में सन्निहित जीवनी शक्ति को नष्ट करता चला जाता है और उसकी दुर्बलता देखकर कितनी ही बीमारियाँ चढ़ाई कर देती हैं ।

रक्त केवल रंगीन पानी नहीं है । उनमें चेतना के कण कोशिकाओं के रूप में भरे पड़े हैं । इन्हीं की सम्मिलित शक्ति हमारी वैयक्तिक चैतन्य सत्ता के रूप में दृष्टिगोचर होती है । यह रक्त के चेतन कण उस आहार और सम्पर्क से प्रभावित होते हैं जो खाया या अपनाया जाता है । यदि अनीति उपार्जित, दुष्ट प्रकृति वालों के द्वारा पकाया या परोसा हुआ होगा तो उसके साथ जुड़े हुए संस्कार रक्त कणों को प्रभावित करेंगे और मनुष्य की मनःस्थिति वैसे ही दुष्टता और निष्कृष्टता से घिरती भरती चली जायेगी । सम्पर्क का अर्थ है समीपता । जैसे लोगों के साथ या समीप रह जाता है उसकी विद्युत चेतना भी अपना प्रभाव छोड़ती है । शारीरिक या मानसिक घनिष्ठता जितनी गहरी होगी यह प्रभाव भी उतना ही गहरा पड़ेगा । नर-नारी का यौन सम्पर्क तो पारस्परिक चेतना का अत्यन्त सघन प्रत्यावर्तन करता है । इसलिए जहाँ कुसंग से बचने, दुष्टों से दूर रहने के लिए कहा जाता है वहाँ रक्त की उच्च स्तरीय सशक्तता की रक्षा के लिए निकृष्ट स्तर के व्यक्तियों से दाम्पत्य सम्बन्ध नहीं स्थापित करना चाहिए । विवाह सम्बन्ध में यदि ऐसा ध्यान न रखा जाय, काम सेवन का कुत्सित स्तर अपनाया जाय तो न केवल घृणित मूत्र रोग उठ खड़े होते हैं वरन् चेतना स्तर की उत्कृष्टता को भी भारी आघात पहुँचता है । इसलिए साथी के चुनाव में रंग रूप का नहीं वरन् उसके चेतनात्मक स्तर का ध्यान रखना आवश्यक होता है । अन्यथा कुसंग से प्रभावित रक्त अपनी आत्मिक विशिष्टता और प्रतिभा सम्पदा को गँवा बैठेगा ।

ब्रह्मचर्य से रक्त कणों में चेतन्यता और ऊर्जा अक्षुण्य बनी रहती है, यही शक्ति एकत्रित होकर चेहरे पर ओजस्, मस्तिष्क में कुशाग्रता, व्यक्तित्व में प्रतिभा, वाणी में प्रखरता और अन्तःकरण में महानता के रूप में प्रतिबिम्बित होती है । कामसेवन में अति रुचि रखने वाले एवं अश्लील चिन्तन में निरत रहने वाले शारीरिक, मानसिक सम्भोग से क्षति उठाते रहते हैं ।

समुद्र के गर्भ में छिपी हुई सम्पदा की तरह रक्त कणों में रत्न मणियों से अधिक वैभव छिपा हुआ है । जिस तरह उपलब्ध करने का ज्ञान और साधन न होने के कारण समुद्र जैसे महान् भाण्डागार के समीप रहकर भी बच्चे कुछ लाभ नहीं उठा पाते, खेलने के लिए सीप, घोंघे भर बटोरते रहते हैं वैसे ही हम रक्त रूपी चेतना के समुद्र में निवास करते हुए भी उन सम्पदाओं से लाभान्वित हो नहीं पाते जिनसे सिद्ध, योगी और तपस्वी सम्पत्तिवान बनते हैं ।

गरम करके सस्ती और विषैली पारा-धातु को कुशल चिकित्सक मकरध्वज जैसी संजीवनी रसायन में बदल देते हैं । तपस्वी लोग तितीक्षा और साधना की योगाग्नि में अपनी रक्त सम्पदा को प्रचण्ड विद्युत शक्ति सम्पन्न बना लेते हैं और इस हाड़ माँस के शरीर से प्रचण्ड विद्युत शक्ति संवाहक यन्त्र का प्रयोजन पूरा करते हैं । हमारे रक्त सागर में अपार सम्पदाएँ दबी पड़ीं हैं । साधना विज्ञान की क्रिया-पद्धति यही सिखाती है उस अविज्ञात को कैसे जाना जाय और उस अनुपलब्ध को कैसे प्राप्त किया जाय जो हमें दिव्य सम्पदाओं से सुसम्पन्न बना सकता है । बाहर भटकने की अपेक्षा यदि हम अपने भीतर ही तलाश करें तो विभूतियों भरा 'आपा' हमें वह सब कुछ प्रदान कर सकता है । जिसकी हमें आवश्यकता है और उन सब समस्याओं को हल कर सकता है जिनके कारण हम उद्विग्न हैं ।

मनुष्य जीवन : समुद्र से भी अधिक गहरा और विस्तृत

मनुष्य जीवन मोटी दृष्टि से देखने पर समुद्र जैसा स्थिर और सीमित दीखता है । कमाने, खाने और सोने, जागने का उसका एक निश्चित निर्धारित ढर्रा है, उसी पर उसकी जीवनचर्या लुढ़कती प्रतीत होती है, पर गम्भीरतापूर्वक देखने से उसकी गहराई और विस्तीर्णता समुद्र जैसी ही विशाल है जो मोटी बुद्धि से समझ में नहीं आती उसके लिए गम्भीर चिन्तन और तात्विक सर्वेक्षण की आवश्यकता पड़ती है ।

पृथ्वी के अन्तराल में कितनी आग और कितनी सम्पदा भरी पड़ी है इसे बिना गहराई में उतरे ऐसे ही मोटी बुद्धि से नहीं जाना जा सकता । इसी प्रकार समुद्र एक स्थिर तालाब जैसा लगता है उसमें ज्वार-भाटे ही थोड़ी हलचल उत्पन्न करते हैं, पर वास्तविकता इससे कहीं अधिक बढ़ी-चढ़ी है । समुद्र का अन्वेषण करने पर लगता है उसमें निर्जीव स्थिरता नहीं घोर सक्रियता काम कर रही है । उसकी सम्पदा की विस्तीर्णता का क्षेत्र उससे कहीं अधिक है जितना कि चर्मचक्षुओं और मोटी बुद्धि से देखा, समझा जा सकता है। जीवन की स्थिति भी ऐसी है । हम सामान्य रीति से खाते, सोते हैं । यह स्थूल परिचय है । वस्तुतः इतनी अधिक विभूतियाँ और सम्भावनाएँ मनुष्य में भरी पड़ी हैं जिन्हें पृथ्वी और समुद्र के अन्तराल में सन्निहित क्षमता एवं सम्पदा से किसी भी प्रकार कम नहीं आँका जा सकता ।

समुद्र पृथ्वी पर भरा हुआ एक तालाब जैसा प्रतीत होता है, पर वस्तुतः थल की तुलना में जल कहीं अधिक है । मनुष्य जीवन में स्थूलता जड़ता की अपेक्षा सरस सम्भावनाओं से भरा-पूरा जलीय अंश ही अधिक है ।

पृथ्वी का क्षेत्रफल १,९६,९४,००० वर्ग मील है । इस क्षेत्रफल का १३९,७१५,००० वर्ग मील भाग में समुद्र जल भरा है । इसका अर्थ यह हुआ कि ७१ प्रतिशत भू-भाग

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समुद्र में डूबा पड़ा है । संसार के सब छोटे-बड़े समुद्रों में ३३ करोड़ घन मील यही खारा पानी भरा है । गहराई का औसत इतना है कि जितने में थल भाग ऊँचे से ऊँचे पर्वतों समेत पूरी तरह डूब जाय । थल भाग यदि किसी कारण समुद्र में डूब जाय तो वह १२००० फुट गहराई में डूबा हुआ दिखाई पड़ेगा । विशालता को दृष्टि से रखकर यदि किसी ने पृथ्वी का नामकरण किया होता तो उसे महासमुद्र कहना पड़ता । थल भाग तो बीच-बीच में उठे हुए छोटे-बड़े टापुओं की तरह है ।

मानवी जीवन को जड़ सम्पत्ति के आधार पर विकसित-अविकसित माना जाता है, पर वस्तुतः उसकी चेतनात्मक सरस सम्वेदनाओं का क्षेत्र ही बड़ा है । उसकी सम्वेदनाओं का मूल्य महत्त्व ही अधिक है ।

अनादि काल से मनुष्य समुद्र को देखता तो रहा है, पर उसकी स्थिति को सही रूप से इतनी लम्बी अवधि में कभी भी नहीं जाना जा सका । जानकारियों का विस्तार अन्वेषण के बिना हो ही नहीं सकता । वस्तुओं का जितना मूल्य है उससे कहीं अधिक महत्त्व अन्वेषण प्रक्रिया का है । किसी समय एक ही समुद्र समझा जाता था, पर अब उसका विस्तार क्षेत्र चार गुना हो गया है, एक नहीं चार महासागर हैं ।

स्थूल दृष्टि से मनुष्य चलता-फिरता पेड़-पौधा है पर सूक्ष्म दृष्टि से उसे सत, रज, तम के तीन गुणों में—सत्यं शिवं सुन्दरम् भी तीन महानताओं में—सत् चित आनन्द के तीन वर्गों में—स्थूल, सूक्ष्म और कारण के तीन स्तरों में विभक्त किया जा सकता है ।

धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की चतुर्विधि विभूतियाँ प्राप्त कर सकना उसके लिए पूर्णतया सम्भव है । आकाश की ही चार दिशाएँ नहीं हैं । मनुष्य जीवन की भी चार स्थितियाँ हैं—पिशाच, पशु, मनुष्य और देव । इन पर चारों वेदों में विस्तारपूर्वक विवेचन किया गया है । जीवन विकास के लिए भारतीय धर्म में चार वर्ण और चार आश्रमों का विधि-विधान किया गया है । एक ही जीवन का तीन या चार भागों में विभाजन करना उसी तत्वान्वेषी दृष्टि को अपनाने से सम्भव हो सका जिसके आधार पर एक समझा जाने वाला समुद्र अब चार महासागरों की जानकारी के रूप में हमारे समाने प्रस्तुत है ।

समुद्रों का वर्गीकरण चार महासागरों और अनेकों सागरों के रूप में किया गया है । महासागर चार हैं—(१) हिन्द महासागर, (२) प्रशान्त महासागर, (३) अटलांटिक महासागर, (४) आर्कटिक महासागर ।

समुद्र में मनुष्य की दिलचस्पी यों सदा से ही रही है, पर कुछ समय से उस ओर अधिक ध्यान दिया जाने लगा है । इस सन्दर्भ में सबसे पहली और खोजपूर्ण पुस्तक अंग्रेज रसायन शास्त्री रावर्ट वायल ने लिखी । यह सन् १६७० में प्रकाशित हुई । बेंजामिन फ्रेंकलिन ने भी कुछ महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष निकाले । मेथ्यूमोरी ने सारे संसार के समुद्रों का चक्कर लगाया और समुद्र विज्ञान पर प्रामाणिक पुस्तक लिखी । लुइस अगेसिज, अलेक्जेण्डर, एडवर्ड, फारब्स ने इन खोजों को और आगे बढ़ाया । चार्ल्स डार्विन ने और भी अधिक प्रकाश डाला । सर्वांगपूर्ण समुद्र विज्ञान के अन्वेषण का कार्य केप्टिन सी. डब्ल्यू. थामसन ने किया । उसे ब्रिटेन की नौ सेना का एक जलयान 'चेलेंजर' मिल गया । उसके सहारे उसने ६८८६० मील की यात्रा साढ़े तीन वर्ष में पूरी की । इस बीच जो शोध सामग्री उसने एकत्रित की उसका विश्लेषण करने में पूरे बीस वर्ष लगे । वे सब निष्कर्ष पचास मोटी जिल्दों में प्रकाशित हुए हैं । समुद्र विज्ञान का इसे प्रथम विश्व कोष कह सकते हैं ।

इसके बाद संयुक्त राष्ट्र संघ के तत्वावधान में हिन्द महासागर की खोज सन् १९६३ में की गई । जिसमें १३ देशों के जलयानों ने योगदान दिया ।

समुद्र की आन्तरिक सक्रियता ही उसे महत्त्वपूर्ण बनाये हुए हैं । यदि उसमें निष्क्रियता होती तो अब तक वह कब का गन्दा तालाब बनकर सड़ गया होता और इस सारी धरती पर दम घोंटने वाली विष भरी सड़ांद के अतिरिक्त और कुछ दिखाई न देता । सक्रियता ही चेतना प्रदान करती है और उसी के आधार पर अपनी गरिमा बनाये रहना तथा सम्पर्क क्षेत्र को महत्त्वपूर्ण अनुदान दे सकना सम्भव होता है । समुद्र की भी यही स्थिति है और यही मनुष्य जीवन की भी ।

धरती घूमती है और अपनी हलचल से हर जड़ चेतन को प्रभावित करती है । समुद्र भी अपवाद नहीं हो सकता । उसमें भी क्रिया विश्रान्ति की अनवरत हलचलें होती हैं । मनुष्य को विश्राम की, सुखोपयोग की इच्छा तो होती है, पर यह भी स्पष्ट है कि सक्रिय श्रमशीलता का ही दूसरा पक्ष प्रगतिशीलता है । ठण्ड और गर्मी का सन्तुलन इस धरती पर समुद्र की गहराई में अनेकानेक हलचलों का और सुखद सम्भावनाओं का सृजन कर रहा है ।

धरती सूर्य के इर्द-गिर्द चक्कर लगाती है और अपनी धुरी पर भी घूमती है । भूमध्य रेखा के आस-पास वाले भाग में पृथ्वी पर सूर्य का प्रकाश अधिक पड़ता है । अस्तु वह क्षेत्र अधिक गरम रहता है । समुद्री पानी भी वहाँ काफी गर्म हो जाता है और गर्म जल के हल्के होने के कारण उसका प्रवाह उत्तर एवं दक्षिण ध्रुवों की ओर चल पड़ता है ।

ध्रुव प्रदेशों के पानी की स्थिति इसके विपरीत है । वहाँ ठण्डक अधिक रहने से पानी भारी हो जाता है । अधिक ठण्डा, अधिक भारी पानी तली में बैठ जाता है । यह तली में बैठा पानी भूमध्य रेखा पर गरम पानी बहने के कारण खाली हुई जगह को भरने के लिए दौड़ता है । इस प्रकार तालाब की तरह बन्द दिखाई पड़ने वाले समुद्र में भी नदियों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जैसा प्रवाह बना रहता है और उसमें सड़न उत्पन्न नहीं होने पाती ।

अन्तः प्रवृत्तियाँ बाह्य जीवन में सक्रियता उत्पन्न करती हैं । भीतर की हलचलें दृश्यमान नहीं होतीं, भीतरी गतिशीलता का परिचय भी नहीं मिलता । लगता है मनुष्य बाहर से ही सक्रिय है, भीतर स्थिरता रहती होगी, पर वस्तुतः ऐसा नहीं है वे मन्द समझी जाने वाली आकांक्षाएँ और प्रेरणाएँ ही हमें सक्रिय सुयोग्य एवं सफल बनाती हैं । भीतर का भारीपन ही ऊपर के हल्के-फुल्के जीवन में स्फूर्ति भरे रहता है ।

समुद्र की ऊपरी सतह में अधिक हलचल रहती है, क्योंकि ऊपर खारीपन कम और नीचे अधिक है । यों यह भारी जल भी रेंगता है, पर उसकी गति ऊपरी सतह की अपेक्षा कहीं कम होती है ।

बेंजामिन, फ्रेंकलिन के जमाने में ही इन समुद्री जलधाराओं का कुछ-कुछ पता चल गया था । ब्रिटेन से अमेरिका जाने वाले जहाजों को दो सप्ताह अधिक लगते थे कि अमेरिकी जहाज दो सप्ताह पहले ब्रिटेन जा पहुँचते थे । चाल को घटाने और बढ़ाने में समुद्री जल धाराओं का सीधा या उल्टा प्रवाह ही इस अन्तर का मुख्य कारण था । कुशल नाविकों ने इन जलधाराओं का नाम 'गल्फ स्ट्रीम' रखा था और उनके नक्शे बनाये थे । जलधाराएँ उथली, गहरी, चौड़ी, सँकरी पायी जाती हैं । उनकी चाल का अनुपात प्रति घण्टा ६०८० फुट आंका गया है । मोटे तौर पर सतही प्रवाह द्रुतगामी और गहराई में प्रवाह मन्द गति वाला होता है ।

इस प्रवाह के तीन कारण माने जाते हैं— (१) ज्वार-भाटा से उत्पन्न, (२) समुद्री हवाओं में धकेले जाने के कारण, (३) खारे पानी के घनत्व में अन्तर आते रहने से यह जलधाराएँ प्रवाहित होती हैं । उनकी गति में मन्दी एवं तीव्रता भी इन्हीं कारणों से घट-बढ़ होते रहने से उत्पन्न होती है । यह जलधाराएँ अपने समीपवर्ती क्षेत्रों को बहुत तरह प्रभावित करती हैं । मानसून की कमीवेशी, दौड़ने की गति तथा दिशा का निर्धारण, तूफानों की उत्पत्ति, जलयानों की यात्रा में सरलता एवं रुकावट ।

लहरों का सम्बन्ध विशेषतया हवा से है । वे प्रायः १०० फुट से कम ही ऊँची रहती हैं । यों मनीला से सेनडिगो जाते हुए, "रैमेयो" जलयान के कप्तान ने ७ फरवरी, १९३३ की रात में प्रशान्त महासागर में उठती हुई लहरों की ऊँचाई ११२ फुट तक आँकी थी, पर ऐसा कभी-कभी ही होता है । लहरें तट से सीधी नहीं टकरातीं वे कोण बनाकर भूतल का स्पर्श करती हैं ।

बाह्य परिस्थितियों का प्रभाव यदि कभी आन्तरिक स्थिति को उद्विग्न कर दे तो उसके परिणाम बड़े घातक होते हैं, यह विपत्ति समुद्रों पर भी आती है कभी-कभी सूर्य, चन्द्र आदि के प्रभावों का सामना वे नहीं कर पाते फलतः अपने को तूफानी परिस्थितियों में फँसा लेते हैं और विनाशकारी घटनाएँ उत्पन्न करते हैं । असन्तुलित और उद्विग्न मनःस्थिति वाले मनुष्य भी यही करते हैं ।

ज्वार-भाटे, सूर्य और चन्द्र की गुरुत्वाकर्षण शक्ति से उत्पन्न होते हैं । उनके कारण समुद्र का समूचा पानी ऊपर उठ आता है । इतना ही नहीं पृथ्वी का थल भाग भी फैलता, सिकुड़ता है । धरती के चारों ओर भरा हुआ वायुमण्डल भी मीलों ऊपर उठता है, नीचे आता है । इतना ही नहीं हमारे शरीर का भार विस्तार भी इनसे प्रभावित होता रहता है ।

सन् १९१२ की वह दुर्घटना समुद्री इतिहास में कभी भुलाई नहीं जा सकती जिसमें अमेरिकी जहाज टाइटैनिक समुद्र में तैरते हुए एक हिमि पर्वत से जा टकराया था और हजारों यात्रियों समेत डूब गया था । ग्रीनलैण्ड के समुद्र में अभी भी ऐसे दर्जनों हिम खण्ड तैरते रहते हैं । उधर से निकलने वाले जहाजों को इस टकराव से बचने के लिए बहुत सतर्कता बरतनी पड़ती है ।

एशिया का पूर्वीतट इन कबन्ध तूफानों का देश है । जापान को यह दैत्य तरह-तरह से धमकाते, झकझोरते रहते हैं और भी कितने ही द्वीप समूह उनसे प्रभावित होते हैं । अमेरिकी तटों से टकराने वाले तूफान 'हरीकेन' कहलाते हैं । भारत पर हमला करने वाले तूफान चीनी सागर में उठने वाले टायफ्रन्स के चेले-चपाटे हैं वे इधर चले आते हैं और बंगाल की खाड़ी के इलाके में बहुत हानि पहुँचाते हैं ।

कभी-कभी समुद्र सतह पर छाया रहने वाला हवा का दबाव अचानक घट-बढ़ जाता है इससे पानी में हलचल मचती है और हवा में उथल-पुथल पैदा होती है । तूफान इन्हीं परिस्थितियों में पैदा होते हैं । पृथ्वी अपनी धुरी पर घूमती है तो उससे एक विशेष शक्ति उत्पन्न होती है जिसे 'कोरिओली' कहते हैं । तूफानों को इस 'कोरिओली' की दिशा और सहायता मिल गई तब तो वे और भी भयंकर हो उठते हैं ।

समुद्री तूफान कई बार तटवर्ती लोगों के लिए भारी विपत्ति सिर पर लादकर लाते हैं । पिछले दिनों उड़ीसा में जो तूफान आया था उसने दस लाख व्यक्तियों का सर्वस्व अपहरण करके उन्हें असहाय बना दिया । कटक तथा वालासोर जिलों की १२०० वर्ग मील जमीन भी पूरी तरह बर्बाद हो गई । एक हजार से ऊपर मनुष्य उसमें भरे थे ।

दक्षिण रामेश्वरम् के तूफान ने और भी अधिक कहर ढाया था । सौ फुट ऊँची लहरें एक सवारी रेलगाड़ी को ही बहा ले गईं उसमें सवार यात्रियों में से एक भी जीवित न बच सका । रामेश्वरम् द्वीप को मुख्य भूमि से जोड़ने वाले ६७०० फुट लम्बे फुल को उखाड़ कर समुद्र में बहुत दूर फेंक दिया ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अक्सर बंगाल में खाड़ी में तीन-चार बड़े तूफान हर साल आ ही जाते हैं । इनकी चाल १५० मील से ५०० मील तक प्रतिदिन की होती है । इन समुद्री तूफानों को कबन्ध भी कहा जाता है ।

कबन्ध उस क्षेत्र में पैदा होते हैं जिनका तापमान २६-२७ डिग्री सेन्टीग्रेड से ऊपर हो ठण्डे समुद्रों तक पहुँचते-पहुँचते वे स्वतः समाप्त हो जाते हैं । सामान्यतया कबन्ध की जिन्दगी ६ दिन से १० दिन तक की होती है ।

यह विनाशकारी उथल-पुथल, हवा, सूर्य आदि के प्रभावों का सामना न कर सकने की असन्तुलित स्थिति में ही उत्पन्न होती है । सामान्यतया समुद्र अपनी स्थिरता को बनाये रहता है तभी तो संसार की क्रम व्यवस्था चलती है । मनुष्य भी जब तक अपनी आन्तरिक दृढ़ता विवेकपूर्वक बनाये रहते हैं, तब तक वे शालीन, सज्जन, और महापुरुषों के स्तर पर बने रहते हैं । आकर्षणों और उत्तेजनाओं से ग्रसित होकर जब वे असन्तुलित होते हैं तभी विनाशकारी विभीषिकाएँ उपस्थित होती हैं । यह समुद्र की भी हेय स्थिति है और मनुष्य की भी ।

आर्कटिक और एटार्कटिक समुद्र पर जमी हुई बर्फ की मोटाई औसतन ७५०० फुट है । कहीं-कहीं वह मोटाई १३००० फुट तक पहुँच गई है । एक जगह तो यह मोटाई तीन मील से भी अधिक है यह सारी बर्फ यदि पिघल जाय तो संसार भर के समुद्रों का पानी सैकड़ों फुट ऊँचा उठ आयेगा । हर साल बादल जितना पानी बरसाते हैं यदि इस बर्फ से वह काम लिया जाय तो ५० साल तक वर्षा कराने के लिए यही बर्फ काफी है ।

मनुष्य की महानता ध्रुव प्रदेश में जमी हुई बर्फ की तरह है वह जब तक स्थिर है तभी तक यह संसार स्थिरता प्रगति एवं सुख-शान्ति से लाभान्वित हो सकता है । यदि वह मानवी गरिमा और शालीनता अपनी शीतलता छोड़कर उद्दण्ड उत्तेजना अपनाने और पतन की दिशा में बह चले तो समझना चाहिए कि अब सर्वनाश की घड़ी आ पहुँची उसमें वह स्वयं भी नष्ट होगा और इस सुन्दर संसार को भी नष्ट-भ्रष्ट करके रहेगा ।

हम समुद्र जैसे गम्भीर और महान् बनें

समुद्र अपनी गौरवमयी भौतिक गरिमा और विशालता के साथ उन प्रेरणाओं को भी अपने में भरे हुए है जिन्हें यदि ध्यानपूर्वक देखा समझा जाय तो मनुष्य भी वैसी ही अगाध महानता से सम्पन्न हो सकता है ।

परिवर्तनों के फलस्वरूप ही समुद्रों का निर्माण हुआ है और उन्हें इस स्थिति तक पहुँचाने का श्रेय उन उथल-पुथल को ही है जो देखने में अनावश्यक लगती हैं और कष्ट कर भी, किन्तु सर्वतोमुखी ऊहापोह के पश्चात् इसी निष्कर्ष पर पहुँचना पड़ता है कि बिना उथल-पुथल के नवजीवन का संचार कहीं भी नहीं हो सकता । यथा स्थिति में पड़े रहने से तो श्मशान जैसी निस्तब्धता ही बनी रह सकती है ।

जर्मन वैज्ञानिक एल्फ्रेड बैगनर ने विश्व के विभिन्न भागों में पाये जाने वाले प्राणि अवशेषों के विश्लेषणात्मक अध्ययन से पता लगाया है कि चिर अतीत से लेकर अब तक संसार की जलवायु में अत्यन्त विशाल परिवर्तन हुए हैं । ध्रुव प्रदेशों में ऐसे प्राणियों के अवशेष मिलते हैं, जो इन दिनों उष्ण प्रदेशों में पाये जाते हैं । इसी प्रकार किसी समय के हिमाच्छादित प्रदेश आजकल हरे-भरे मैदान हैं और किसी समय के मैदान आजकल बर्फ से ढके हुए हैं । इसी प्रकार समुद्रों का स्थान घनी आबादी ने ले लिया है और किसी समय का प्राणधारियों का निवास क्षेत्र आजकल समुद्र बना हुआ है । इसी प्रकार बैगनर का यह भी कहना है कि सुदूर अतीत में एक ही महाद्वीप का भूभाग था और एक ही समुद्र था । पीछे उन्हीं के कटते-फटते, टूटते-फूटते टुकड़े कई महाद्वीपों और समुद्रों में बदल गए । इसी प्रकार ध्रुव प्रदेश भी चलता फिरता रहा है । कभी उत्तर ध्रुव १४° उत्तर अक्षांश तथा १२४° पश्चिम देशांश पर था पर अब वह ५१° उत्तर अक्षांश और १५३° देशांश पर आ गया है । भविष्य में यह प्रदेश और भी आगे बढ़ेंगे और अब जहाँ हरी-भरी उपजाऊ भूमि लहराती है वहाँ अगम्य हिम प्रदेश दिखाई देंगे । पिछले हिमयुग के बाद तो ऐसी उथल-पुथल बहुत ही हुई है । वह बर्फ पिघलने से समुद्र तल लगभग ६५ मीटर ऊँचा उठा फलतः किसी समय का हरा-भरा भू-भाग समुद्र गर्त में विलीन हो गया ।

हिमयुग न आता तो जहाँ किसी समय निरुपयोगी स्थल थे वहाँ आज हरे-भरे मैदान और समुन्नत नगर कैसे दिखाई पड़ते । किसी भूमि का भाग सदा चमके और कुछ स्थान सदैव अन्धकारमय स्थिति में पड़े रहें तो सृष्टि में सर्वांगीण सुन्दरता कैसे गतिशील रहेगी । खण्ड प्रलय के रूप में चिर अतीत के साथ ऐसे हिमयुगों का इतिहास भी जुड़ा हुआ है । जिन्होंने भूखण्डों की स्थिति में आश्चर्यजनक परिवर्तन करके रख दिया । कई बार हिम क्रान्तियाँ भी आग्नेय क्रान्तियों की अपेक्षा अधिक प्रभावी सिद्ध होती हैं । भूतकाल के हिमयुग इसी प्रकार के थे उन्होंने न केवल भूखण्डों के भाग्य को उल्टा पल्टा वरन् प्राणियों की कमजोर नस्लों को भी समाप्त कर दिया ।

पृथ्वी की अनुमानित आयु २०० करोड़ वर्ष है । जीवों के रहने लायक तथा उपलब्ध पदार्थों के लगभग वर्तमान रूप में पाये जाने का काल १० लाख वर्ष पूर्व से आरम्भ होता है । भूगर्भ विद्या के अनुसार इससे पूर्व का समय वह है जो कि इस तप्त पिण्ड को ठण्डा होने और जलवायु वनस्पति जैसे जीवनोपयोगी माध्यम उत्पन्न और विकसित करने में लगा ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भू-गर्भीय भाषा में १० लाख वर्ष पूर्व से आरम्भ होकर विगत १५ हजार वर्ष तक चला आने वाला युग 'होलोसीन' काल है । १५ हजार वर्ष पूर्व से अब तक चला आने वाला समय 'प्लीस्टोसीन' काल कहलाता है ।

प्लीस्टोसीन काल के आरम्भिक दिनों में पृथ्वी पर शीतलता की अत्यधिक मात्रा बढ़ने लग गई थी । अस्तु अप्रत्याशित रूप से 'हिम युग' आरम्भ हो गया । अमेरिका यूरोप, एशिया तथा दक्षिणी ध्रुव प्रदेश हिमावरण से ढक गए । उत्तरी अमेरिका में तो यह हिमावतरण एक बार नहीं चार-चार बार भिन्न-भिन्न समयों पर हुआ ।

हिमयुग के अवतरण के कारण वैज्ञानिकों ने खोजे हैं और बताया है कि—(१) साधारणतया सूर्य विकिरण का एक अंश ही पृथ्वी को प्राप्त होता है । सूर्य में अनेक धब्बे हैं । सहस्रों वर्ष बाद जब कुछ धब्बे पृथ्वी के सम्मुख आ जाते हैं तब पृथ्वी को प्राप्त होने वाले आंशिक विकिरण की मात्रा और कम हो जाती है । फलतः धरती का तापमान घट जाने से हिमयुग आरम्भ हो जाता है । (२) पृथ्वी अपनी कक्षा में एक निश्चित कोण पर झुकी स्थिति में सूर्य का परिभ्रमण करती है । इस कक्षा या कोण में कभी अन्तर पड़ता है, तो जलवायु में आश्चर्यजनक परिवर्तन होते हैं । तापमान गिरता है और हिमयुग आरम्भ हो जाता है । (३) प्राचीन काल में अमेरिका, अफ्रीका, भारत सहित एशिया, आस्ट्रेलिया समेत एक ही महाद्वीप था । प्राकृतिक शक्तियों की असाधारण हलचलों ने समुद्र में भारी हलचल उत्पन्न की और वह विशाल भूखण्ड टुकड़े-टुकड़े हो गया, बहुत-सी भूमि समुद्र में चली गई और समुद्र तल के रूप में उभर आया । इसी हलचल में तापमान भी घट गया और हिमयुग आरम्भ हो गया । (४) जर्मन भूगर्भ वेत्ता ने सिद्ध किया है कि उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव चलते बदलते रहे हैं । सिलूरियन काल में उत्तरी ध्रुव १४° उत्तरी अक्षांश पर था । कार्बोनीफेरस काल में वह ३६ डिग्री उत्तरी अक्षांश तक बढ़ आया और मायोसीन काल में वह ५१ डिग्री अक्षांश पर आ पहुँचा । इस चल बदल से विश्व की जलवायु में विशाल परिवर्तन आ गया और हिमयुग प्रारम्भ हो गया । (५) भूगर्भीय शक्तियों के कारण पृथ्वी का धरातल इतना ऊपर उठा दिया गया कि वह आकाश की हिम रेखा तक जा पहुँचा और बर्फ से ढक गया । कहा जाता है कि आजकल जहाँ हिमालय है वहाँ कभी 'टिथिस' सागर था । समुद्र गर्भ ने उस परिवर्तन से अपना स्थान बना लिया । ऐसी उथल-पुथल के दिनों में तापमान में भी अप्रत्याशित गिरावट उत्पन्न हो जाना कोई आश्चर्य की बात नहीं है ।

जो हो यह निश्चित है कि प्लीस्टोन काल में पृथ्वी के अधिकांश भाग पर हिम आवरण पड़ गया था । उसने २ करोड़ ५ लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्र हिमाच्छादित कर लिया था । उत्तरी गोलार्द्ध में कहीं-कहीं बर्फ की मोटाई ६१५ मीटर तक जा पहुँची थी, दक्षिणी गोलार्द्ध अपेक्षाकृत कम क्षेत्र में हिमाच्छादित हुआ था ।

जहाँ अपेक्षाकृत हल्की बर्फ थी और जीवन रक्षा के साधन शेष थे वहीं प्राणी जीवित रह सके । अन्यथा हिम युग से पूर्व का जीव जगत एक प्रकार से समाप्त ही हो गया । इसमें भी एक विशेषता यह रही कि उस काल के विकसित जीव जिनमें विशाल कार्नीवोरस हाथियों की कितनी ही जातियाँ भी सम्मिलित हैं एक प्रकार से लुप्त ही हो गए । हिमयुग से पूर्व के उनके शरीर तो पाये जाते हैं पर पीछे उनका वंश ही समाप्त हो गया, किन्तु कम विकसित जीव अपना अस्तित्व बनाये रहे और उनकी नस्लें हिमयुग से पूर्व की तरह अभी भी मौजूद हैं ।

प्रकृति चाहती है कि दुर्बलताग्रस्तों का कूड़ा-कचरा साफ होता रहे । कमजोर रोते कराहते सृष्टि का सौन्दर्य बिगाड़ें यह उसे उपयुक्त नहीं लगता है । फसल के समय चतुर किसान अच्छे अनाज को बीज बोने के लिए सँभाल कर रख लेते हैं और शेष हल्के गेहूँ को चक्की में पिसने और पेट की आग का ईंधन बनने के लिए डाल देते हैं । प्रकृति भी समर्थ और बलवानों के अस्तित्व को बनाये रखकर अपने गौरव की वृद्धि करना चाहती है । इसके लिए वह समय-समय पर आकस्मिक विपत्तियाँ लाकर सामने खड़ी करती रहती हैं ताकि छाँट-फटक का प्रयोजन पूरा हो जाय । हिमयुगों ने न केवल जल को थल में, थल को जल में बदला वरन् दुर्बल प्राणधारियों का सफाया करने की प्रक्रिया भी पूरी कर ली । मजबूत स्थिति के जीवों को तो इस हिम क्रान्ति में भी अपना अस्तित्व बनाये रहने का अवसर मिल गया ।

स्थूल बुद्धि से दीखने पर धरती के वातावरण में जीवों की उत्पत्ति होती है और आहार के साधन भी धरती पर ही उगते प्रतीत होते हैं । पर बारीकी से देखा जाय तो समुद्र की उर्वरा शक्ति पृथ्वी से अधिक है और धरती जितने जीवों का निर्वाह करती है उससे कहीं अधिक को प्रश्रय समुद्र देता है । जीवन का आदि तत्व प्रोटोप्लाज्म आरम्भ में समुद्रों से ही उत्पन्न हुआ था और सर्वप्रथम जल जीवों का ही अस्तित्व इस संसार में दृष्टिगोचर हुआ था ।

समुद्री जीवों को तीन भागों में विभक्त किया गया है—(१) प्लैंकटन—जो स्वयं चल फिर नहीं सकते, लहरें, धाराएँ और ज्वार-भाटे इन्हें इधर-उधर घुमाते फिरते हैं । समुद्री पौधे और बहुत छोटे कीड़े इसी वर्ग में आते हैं, (२) नैक्टन—स्वतः चल फिर सकने में समर्थ, (३) वेन्थस—समुद्र की गहराई में एक स्थान पर ही रहने वाले विचित्र बनावट वाले जल जन्तु । इनमें कितने ही ऐसे भी हैं जिनकी विचित्रता स्तब्ध कर देती है । हाथी की सी सूँड़ों वाला जलदैत्य, भीमकाय ह्वेल, शार्क जैसे आक्रमणकारी मगरमच्छ अपने ढंग के अलग हैं और छोटे अमीबा बैक्टीरिया

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सरीखे सहज ही न दिखाई देने वाले जन्तु भी कम नहीं हैं । संख्या की दृष्टि से थलचरों की तुलना में जलचर अनेक गुने अधिक होंगे । मछलियों का तो एक प्रकार से समुद्र में ऐसा ही साम्राज्य है जैसा धरती पर मनुष्यों का । आँख से जलराशि के भीतर की सम्पदा भले ही दीख न पड़े पर अनुभव बताता है कि आँख की जानकारी ही सब कुछ नहीं है, न दीखने वाली दुनिया की, विशालता और सम्पदा दृश्यमान की अपेक्षा कहीं अधिक है ।

समुद्री कीड़ों में 'प्रवाल' अपने ढंग का अनोखा है । उन्होंने विशाल महासागरों में सहस्त्रों द्वीपों का निर्माण कर दिया । आमतौर से वे २३ डिग्री—२९ डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान पर क्रियाशील रहते हैं । जल मग्नता ही उन्हें पसन्द है । ज्वार की लहरें जितनी ऊपर उठती हैं यह प्रवाल कीट पर्वत भी उतने ही ऊँचे उठते हैं । वे समुद्र में पायी जाने वाली 'चाक' मिट्टी खाते हैं । उनके शरीरों से एक विशेष प्रकार का द्रव पदार्थ निकलता है उससे एक कड़ा आवरण बनता जाता है । वे उसी स्वनिर्मित भवन कलेवर के भीतर रहते हैं । यह कलेवर भी विचित्र है केले की जड़ों में से अपने आप निकलते रहने वाले पौधों की तरह नये अंकुर उपजाना है और प्रवाल में से शाखा-प्रशाखाएँ बारहसिंगा के सींगों की तरह फूटने लगती हैं । उन्हीं में से नये प्रवाल कीड़े उत्पन्न होते हैं ।

दक्षिण पश्चिम हिन्द महासागर में प्रवाल निर्मित एक शृंखला है । इस शृंखला की ऊँची चोटियों पर मालदीव, लंकादीव, चागोज, सिचेलीज, आर्कपेला गोज द्वीप माला स्थित है ।

कितने ही व्यक्ति प्रवाल कीड़ों की तरह शान्त चित्त से दृढ़ निश्चय और अनवरत श्रम के साथ अपने लक्ष्य में तन्मय रहते हैं । हलचलों की उथल-पुथल को देखने वाले उन्हें निष्क्रिय कह सकते हैं पर समय बताता है कि कुछ क्षण उछल-कूद करके फिर हाथ पैर ढीले कर बैठने वालों की अपेक्षा धैर्य के साथ निरन्तर किया जाने वाला पुरुषार्थ समय पर कितना विशालकाय बनकर सामने आता है ।

मिट्टी खाकर मूँगा पैदा करने वाले यह प्रवाल कीड़े मधुमक्खी को भी मात करते हैं जो फूलों को शहद में बदलने के लिए प्रसिद्ध है । सन्त, सज्जन समाज से न्यूनतम अनुदान लेकर बदले में एक से एक बढ़कर सेवा-साधना के कार्य सम्पन्न करते रहते हैं । उनकी प्रतिभा, बुद्धि, सामर्थ्य, सम्पदा सब कुछ शाखा-प्रशाखा फोड़ती हैं । प्रवाल कीड़ों की यह विशेषता भी सज्जनों में पायी जाती है कि वे संकटों के सागर में डूबे रहते हुए भी अपना मस्तिष्क विक्षुब्ध न होने दें ।

नदियाँ धरती का नमक लेकर समुद्र में ही फेंकती रहती हैं । समुद्र उसे पचा जाता है । अपने तक ही सीमित रखता है । बादलों को वह निर्मल, मधुर जल ही प्रदान करता है ।

प्रति किलोग्राम सागर जल में प्रायः ३५ ग्राम नमक घुला होता है । इसमें खाने योग्य नमक २७ ग्राम और अखाद्य नमक ८ ग्राम है । नदियों द्वारा भूखण्डों से जल प्रवाह के साथ लाये गए नमक समुद्रों में जमा होते चले जाते हैं । इस प्रकार यह मात्रा बढ़ती चली जाती है । उन लवणों से तो कुछ तो समुद्री जीव अपनी शरीर रचना और आहार की पूर्ति में खर्च कर लेते हैं फिर भी वह मात्रा बढ़ती ही रहती है ।

यों नदियों ने खारीपन ही समुद्र को दिया है । पर उसका भी वह उपयोगी पदार्थ बनाकर लोगों को देता है । समुद्री नमक से लोग कितने ही उपयोगी पदार्थ बनाते हैं और उनसे कितनी सम्पदा उपार्जित करते हैं यह किसी से छिपा नहीं । समुद्र की तरह ही सज्जन भी अपनी हर सम्पदा को लोकोपयोगी बनाने में तत्पर रहते हैं ।

समुद्र की गहराई में जितना नीचे उतरा जाय उतना ही उसका तापमान घटा हुआ मिलेगा । २०० मीटर गहराई में १६ डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान पाया जाता है पर वह ६०० मीटर पर ७ डिग्री, १२०० पर ३,१८०० पर २ और ३००० मीटर पर १.८ डिग्री रह जाता है । आर्कटिक महासागर के दक्षिण में स्थित महासागरीय तलियों में तापमान शून्य सेन्टीग्रेड अर्थात् जल जमने जितना पाया जाता है इसी प्रकार ऊँचा तापमान प्रशान्त महासागर तथा पश्चिमी हिन्द महासागर के प्रवाल द्वीपों के समीप सागर तली में २१° सेन्टीग्रेड लगभग पीने के पानी तुल्य तापमान का रहता है । ५८५० मीटर से नीचे तो सर्वत्र ही शून्य तापमान पाया जाता है ।

बाह्य जीवन की विभिन्नता एवं विक्षोभकारी परिस्थितियों के साधारणतया हर किसी को उद्विग्नता होती है और उस उत्तेजना में समस्याओं के समाधान का हल निकलता है फिर भी वे महापुरुष जिनका व्यक्तित्व समुद्र जैसा विशाल है अपने अन्तःक्षेत्र की गहराई में बर्फ जैसी शीतलता भी भरे रहते हैं । वस्तुतः न तो वे उद्विग्न होते हैं और न क्रुद्ध । क्रिया-कलाप से, विपन्नता से निपटने वाला आवेश भले ही हो पर वे मानसिक सन्तुलन की दृष्टि से सदा शान्त और शीतल ही पाये जाते हैं ।

समुद्र भौतिक दृष्टि से जो भी हो आत्मिक दृष्टि से हमें बहुत कुछ शिक्षा और प्रेरणा दे सकने में समर्थ है । यदि हम उन पर ध्यान दें तो निःसन्देह समुद्र जैसे ही गम्भीर और महान् बन सकते हैं ।

समुद्री लहरों की तरह हमारा जीवन उछले, गरजे और आगे बढ़े

देखा जाता है कि समुद्र तल पर लहरें उठती और गिरती रहती हैं । इसका कारण जानना हो तो उनकी उस ग्रहण शक्ति पर ध्यान देना होगा जो वे पवन से ऊर्जा प्राप्त करने से सम्वेदनशील होती हैं । जल कोमल होता है, द्रव और सरल । उड़ती हुई पवन अपने प्रचण्ड वेग की ऊर्जा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

का अंश इस श्रद्धालु जल को दे जाती है और तरंगें उठने लगती हैं ।

यदि किसी एक खूँटी से रस्सी का एक सिरा बाँध दें और दूसरा सिरा अपने हाथ में रखें । रस्सी को हिलाएँ तो देखेंगे कि रस्सी में लहरें उठती हैं वे हाथ से आरम्भ होकर खूँटी में बँधे सिरे पर जाकर समाप्त होती हैं । यह हाथ के द्वारा रस्सी को दी गई ऊर्जा का चमत्कार है । पवन की ऊर्जा जल को इसी प्रकार हिलाती है । हिलने की हलचल ऊँचे उठने और नीचे गिरने के रूप में दिखाई पड़ती है । गतिशीलता की दो ही दिशा हैं उत्थान और पतन । पवन का काम यहीं समाप्त हो गया अब तरंगों का काम आरम्भ हुआ वे एक-दूसरे को अपना सहयोग प्रदान करती हैं— अपनी गति पड़ौस वाली तरंग को प्रदान करती हैं । इसी प्रकार एक का अनुदान दूसरे को मिलते रहने पर सहज ही एक अग्रगामी नई हलचल पैदा होती जाती है और तरंगें जहाँ उत्पन्न हुई थीं वहीं न रहकर धीरे-धीरे बहुत आगे तक, वहाँ तक बढ़ती जाती हैं जहाँ समुद्र का छोर आने से उनका आगे का रास्ता बन्द नहीं हो जाता ।

समुद्री लहरें कई बार बड़ी प्रचण्ड और उग्र देखी गई हैं । कई बार तो वे जहाजों को उलट देती हैं और कई बार तटों से टकरा कर वहाँ भारी तोड़-फोड़कर डालती हैं । आमतौर से समुद्री तूफानों में १५ मीटर ऊँची लहरें उठती हैं पर कई बार वे इससे भी कहीं ऊँची देखी गई हैं । जल वैज्ञानिकों ने ३६ मीटर तक ऊँची लहरें नापी हैं और उनके शृंग आज तो इससे भी कई मीटर ऊँचे उठते पाये गए हैं । कभी-कभी असाधारण तूफानों में तो और भी ऊँची उठ जाती हैं ।

तरंगों की ऊँचाई में जितना महत्त्व पवन प्रदत्त ऊर्जा का है उससे अधिक लहरों के पारस्परिक सहयोग का है । छोटी-छोटी तरंगें जब आपस में मिलती हैं तो उस मिलन के फलस्वरूप अधिक बड़ी और अधिक सशक्त लहर का उदय होता है । पर यदि वे विपरीत दिशा से आ रही हों तो एक-दूसरे से लड़ पड़ेंगी और फिर वह गृह युद्ध दोनों का ही अन्त कर देगा । यदि दो प्रतिपक्षी तरंगों का आयाम समान हो तो फिर दोनों का मरण निश्चित है, पर यदि उनमें एक छोटी एक बड़ी हो तो नष्ट छोटी ही होगी, बड़ी की भी शक्ति तो घट जायेगी पर उसका अस्तित्व बना रहेगा और वह अपनी दिशा में किसी प्रकार चलती रहेगी ।

यदि छोटी लहरें आपस में घुल-मिल जाने की नीति अपना लेती हैं तो उनकी संख्या अवश्य घट जाती है पर जो नई तरंगें उत्पन्न होती हैं उनकी ऊँचाई, गति और आकृति तीनों में ही असाधारण उन्नति होती है । ये लहरें फिर लम्बी यात्रा करती हैं और इतनी तेज चलती हैं कि तूफान को भी पीछे छोड़ देती हैं । कुछ दिन पूर्व ब्रिटेन के तट पर ऐसी लहरें पायी गई थीं जो १८०० किलो मीटर दूर अमेरिका में एक समुद्री तूफान के कारण उत्पन्न हुई थीं और तूफान को पीछे छोड़कर उससे काफी समय आगे आ गई थीं ।

शक्तिशाली लहरों के थपेड़े गजब के होते हैं । थपेड़ों में ५० टन प्रति वर्ग गज की शक्ति से अपने अवरोधों के साथ टकराने की शक्ति होती है । एक बार अमेरिका के समुद्र तट पर इन थपेड़ों ने एक भारी चट्टान को ऐसा उछाला कि वह ३० मीटर ऊँचे प्रकाश स्तम्भ से जा टकराई और उसमें छः मीटर व्यास का छेद कर दिया ।

लहरों का पूरी तरह पारस्परिक सम्मिश्रण प्रायः तभी होता है जब वे ऊँचाई और आकृति में समान होती हैं । छोटी-बड़ी तरंगें भी कुछ हद तक संयोग तो करती हैं पर स्तर की बाधा उन्हें पूरी तरह आत्मसात नहीं होने देती ।

समुद्रों में निरन्तर उठने वाली तरंगों में प्रकृति के विधान का कुछ परिचय हमें मिलता है वह इतना महत्त्वपूर्ण है कि यदि उसे समझा और अपनाया जा सके तो उससे अपने जीवन-क्रम में भी समुद्री लहरों जैसी ऊँची और शक्तिशाली क्षमताएँ उत्पन्न हो सकती हैं ।

पवन की ऊर्जा अनवरत रूप से सर्वत्र विद्यमान रहती है और अपना प्रभाव छोड़ती है पर चट्टानों पर इसका कुछ प्रभाव नहीं पड़ता । वे सघन जड़ता के कारण किसी का प्रभाव ग्रहण नहीं करते, अपनी स्थिति में सन्तुष्ट बने रहते हैं और हलचल उत्पन्न करने के लिए उत्सुक नहीं होते । धूलि भरी मिट्टी में थोड़ी हलचल होती है । वृक्ष वनस्पतियों के पत्ते भर हिलते हैं, किन्तु समुद्री जल उनका अधिक प्रभाव ग्रहण कर लेता है और गरजती, उछलती हलचलों से अपनी शोभा बढ़ाता है । मनुष्यों में भी ऐसी ही मनोभूमि के लोग होते हैं । कुछ बिल्कुल जड़, मूढ़ और अपरिवर्तनशील, कुछ स्वल्प और क्षणिक चेतना वाले, ऐसे लोगों को पवन जैसी ईश्वरीय प्रेरणा या महापुरुषों के अनुग्रह का कुछ अतिरिक्त लाभ नहीं मिलता । उनकी आन्तरिक जड़ता कुछ ग्रहण ही न करे तो बेचारा अनुदान क्या करेगा । घड़े का मुँह ओंधा करके रखा गया हो तो भारी वर्षा होने पर भी उसके पेट में एक बूँद पानी भी नहीं जायेगी । पवन का समुद्र पर कुछ पक्षपात नहीं हैं और न पर्वत से द्वेष । उनकी अपनी कोमलता, सरसता द्रवित होने के गुणों में न्यूनाधिकता ही वह कारण है जिससे समुद्र को लहरों की सम्पदा मिली प्रतीत होती है और पर्वत को पवन ने कुछ नहीं दिया ऐसा समझा जाता है । वस्तुतः यहाँ पक्षपात नहीं ग्रहण करने का पात्रत्व ही प्रधान कारण है ।

जहाँ हलचल होगी वहाँ दो ही क्रम चलेंगे उत्थान या पतन । शक्ति घटती जायेगी, पतन की सम्भावनाएँ बढ़ेंगी । दृढ़ता और स्फूर्ति बनी रहेगी, बल अक्षुण्ण रहेगा और प्रगति का वातावरण बना रहेगा । ढील पड़ी, उदासी आयी, अस्त-व्यस्तता उत्पन्न हुई कि उत्थान की सम्भावनाएँ भी गिरीं । समुद्र की लहरों में जितनी ऊर्जा भरी उमंग रहती

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

है उतनी ही वे ऊँची उठती हुई, उफनती और गरजती दिखाई देती हैं, पर जब उनकी अन्तःप्रेरणा स्फूर्ति घटी तो फिर बाहर क्रिया-कलाप भी शिथिल हो जाता है । ऊर्जा खोदने के बाद लहरें मरी-गिरी सी किसी प्रकार दिखाई भर देती रहती हैं उनमें कुछ जान नहीं रहती । मनुष्य के आत्मबल, उत्साह और पुरुषार्थ की ऊर्जा ही उसे ऊँचा उठाये रहने में समर्थ रखती है । जहाँ दृढ़ता गिरी वहाँ फिर पतन की परिस्थितियाँ ही उत्पन्न होती चली जाती हैं सारा वैभव और चमत्कार न जाने कहाँ तिरोहित हो जाता है ।

परस्पर का सहयोग अनेक गुनी शक्ति उत्पन्न करता है । सूत के धागों से बँटकर बनाये हुए रस्से, कमजोर सींकों से बनी बुहारी रोज यही स्मरण दिलाते हैं कि एकाकी व्यक्ति नगण्य है । अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ता । ढाई चावल की खिचड़ी नहीं पकती । महत्त्वपूर्ण कार्यों की भूमिका ईंट और चूने के मिलन सहयोग की तरह ही आरम्भ होती है । जहाँ व्यक्तित्व अहंता महत्त्वाकांक्षा मिटाकर सहयोग और समर्पण की महत्ता को समझ लिया जायेगा वहाँ हजार गुना अधिक प्रयोजन सधने की सम्भावना बनेगी । जहाँ अपनी ढपली अपना राग बजाते हुए लोग अपने-अपने पद, यश और वर्चस्व के लिए लुभाते, ललचाते फिरेंगे वहाँ ऐसी ही विडम्बना में शक्ति नष्ट होती रहेगी काम कुछ भी न हो सकेगा । पति-पत्नी के सहयोग से गृहस्थ की सुरम्य व्यवस्था बनती है और गृह-उद्यान फला-फूला दिखाई पड़ता है, पर यह होता तभी है जब पति-पत्नी सच्चे मन से एक होते हैं । यदि दोनों अपना अहंकार, स्वार्थ अलग-अलग सँजोये रहें तो फिर उस गृहस्थ में हर घड़ी नारकीय दृश्य ही उपस्थित रहेंगे । जीवन विकास में, महत्त्वपूर्ण प्रयोजन की सिद्धि में यह पारिवारिक सहयोग की, अनिवार्य आवश्यकता यदि समुद्र की लहरों की तरह हम भी हृदयंगम कर लें और अपने व्यक्तिगत अहंता को सामूहिक प्रयोजनों में घुला देने का प्रयत्न करें तो निःसन्देह अति महत्त्वपूर्ण प्रयोजन सिद्ध होगा । लहरें आकाश चूमेंगी और थपेड़ों से चट्टानों को उछाल देने जैसी क्षमता उपलब्ध होगी ।

पूर्ण मिलन समान गुण कर्म स्वभाव के लोगों में होता है । इसलिए उच्च स्तर के लोगों को न केवल अपने स्तर के व्यक्तित्व तलाश करने चाहिए वरन् उनमें घनिष्टता बढ़ाने का भी प्रयत्न करना चाहिए । यों सहयोग तो सर्वत्र ही सराहनीय है। यदि सदुद्देश्य के लिए सहयोग इकट्ठा किया गया है तो स्तर की भिन्नता रहते हुए भी उसका लाभ मिलेगा, किन्तु चमत्कार समान मानसिक स्तर के लोगों के मिलने पर ही उत्पन्न होता है । समान ऊँचाई की लहरें जब परस्पर घुलती हैं तो उनका वेग और स्तर दोनों ही असाधारण रूप से बढ़ते हैं । इस दिशा में भी हमें प्रयत्नशील रहना चाहिए ।

उत्थान के प्रति सुदृढ़ संकल्प और कठिन पुरुषार्थ में जब भी कमी आयेगी पतन की परिस्थितियाँ पैदा होंगी । जीवन के अभाव का नाम ही मृत्यु है । प्रकाश बुझ जाने को ही अन्धकार कहते हैं । प्रगति की दिशा में निष्क्रिय होना, उत्कृष्टता को उच्चस्तरीय बनाने की चेष्टा में आलस्य या शिथिलता बरतना इसी का नाम पतन है । पतन कोई अलग वस्तु नहीं । उष्कृष्टता की उपेक्षा ही पतन बनकर सामने आती है । हमें लहरों की तरह ऊँचा उठे रहने में ही अनवरत रूप से प्रयत्नशील रहना है अन्यथा निःचेष्ट होते ही पतन के गर्त में गिरना पड़ेगा ।

परस्पर टकराना तो प्रत्यक्ष ही अपने अस्तित्वों को समाप्त कर लेना है । शक्तिशाली लहरें यदि प्रातेकूल दिशा में चलती हैं और एक-दूसरे के ऊपर चढ़ने का प्रयत्न करती हैं तो भले ही वे इसे महत्त्वाकांक्षाओं की पूर्ति के लिए आवश्यक समझें पर होता उल्टा ही है । परस्पर लड़ने में खर्च की गई शक्ति केवल खोखलापन ही शेष छोड़ती है । सार तत्व तो उस द्वन्द्व में ही जलकर नष्ट हो जाता है ।

तूफान बड़ा है, पर उससे यदि सागर की सत्पात्र लहरें समुचित शक्ति ग्रहण कर लें तो उनकी गति और भी अधिक बढ़ जाती है । तूफान पीछे रह जाता है और लहरें आगे जा पहुँचती हैं । ग्रहणशीलता और पातृत्व का अभाव न हो तो हम ईश्वर से, देव शक्तियों से और महामानवों से इतना अधिक प्राप्त कर सकते हैं कि लहरें आगे निकल जायें और तूफान पीछे ही रह जाय ।

काश ! हमारा व्यक्तित्व भी समुद्र जैसा गरिमायुक्त होता

सूर्य की गर्मी से समुद्र जल की ऊपरी सतह गरम हो जाती है और वह गरम पानी ध्रुवों की आकर्षण शक्ति से खिंचकर उत्तर या दक्षिण की ओर भागने लगता है । नमक की मात्रा इस ऊपरी सतह से नीचे खिसक कर तली वाले पानी में बढ़ जाती है । वह इतना गाढ़ा और भारी हो जाता है कि एक तरह से अचल बनकर ही रहता है । जिस प्रकार धनीमानी और सुविधा सम्पन्न वर्ग के लोग सम्पत्ति पाकर अचल हो जाते हैं । उनकी प्रगतिशीलता, नम्रता और गर्मी समाप्त हो जाती है । ऐसी ही जड़ता, यह अधिक नमक घुला नीची सतह का पानी भी पकड़ लेता है । ऊपरी सतह में गर्मी रहती है—श्रमशीलता और कर्मठता की गर्मी मनुष्य को भी हल्का-फुल्का और गतिवान बनाये रहती है यही बात समुद्र की ऊपरी सतह के जल के बारे में भी है ।

धरती पर जल ७० प्रतिशत है । थल केवल ३० प्रतिशत है । हम इस थल की उधेड़-बुन में ही लगे रहते हैं । उसी को जो आँखों से दिखाई पड़ता है, सब कुछ मान बैठे हैं । चमकीला चन्द्र खिलौना हमारे आकर्षण का केन्द्र बना और पर्वत जितनी धनराशि खर्च करके वहाँ तक पहुँचने का प्रयत्न किया गया । विडम्बना यह है कि जो आँखों से दिखाई नहीं पड़ता वह समुद्र गर्भ अत्यधिक उपयोगी, बहुमूल्य

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और निकटवर्ती होते हुए भी रक्षा पात्र बना रहा । यदि उसके सम्बन्ध में भी आकाश की तरह खोज की गई होती तो मनुष्य ने अब की अपेक्षा कहीं अधिक सुविधा एवं सम्पत्ति को करतलगत कर लिया होता । पर इस मानवी बुद्धि स्थूलता को क्या कहा जाय जो प्रत्यक्ष पर ही ध्यान देती है और उसे महत्त्वहीन समझती है जो आँखों से ओझल है । आन्तरिक जीवन-विचार सम्पन्नता का वैभव भी कब हमारी समझ में आता है । मात्र कागज के नोट बटोरने में ही जिन्दगी का बहुमूल्य भाग ऐसे ही अस्त-व्यस्त और नष्ट-भ्रष्ट हो जाता है ।

समुद्र की गहराई और उसकी भीतरी बनावट आश्चर्यजनक है । उसके भीतर प्रायः ४० हजार मील लम्बी तो पर्वत शृंखलाएँ ही फैली हुई हैं । दूसरी ओर सामान्य तल से काफी गहरी और ८ से ३० मील तक चौड़ी खाइयाँ भी सर्वग्रासी मुँह फाड़े सहस्रों मील जगह घेरे पड़ी हैं । मनुष्य का अन्तरंग भी कितनी ही विकासोन्मुख पर्वत शृंखलाओं से भरा पड़ा है और साथ ही उसमें ऐसी पतन की महागर्त दुष्प्रवृत्तियों का विस्तार भी कम नहीं है ।

सन् १८७३ में अन्वेषक 'चैलेंजर' ने अटलांटिक महासागर का एक नक्शा तैयार किया था उन दिनों वह सर्वांगपूर्ण माना गया था अब उसमें बहुत सुधार कर दिए गए हैं । प्राचीन काल में मानवी चेतना के सम्बन्ध में बहुत कुछ कहा जा चुका है, पर उसे अन्तिम नहीं कहा जा सकता । क्रमिक विकास की प्रक्रिया ने अब चेतना तत्व सम्बन्धी ऐसे रहस्यों का उद्घाटन किया है जिससे पूर्व प्रतिपादनों में चार चाँद ही लगे हैं ।

अटलांटिक सागर यों एक है पर उसके गर्भ में फैली हुई शृंखलाओं ने भीतर ही भीतर दो भागों में विभक्त कर रखा है । इस विभाजन का प्रभाव उस समुद्र के जल बहाव को भी प्रभावित करती है । यद्यपि यह विभाजन आँखों से या साधारण उपकरणों से समझ में नहीं आता तो वह है तो है ही । मनुष्य सत्ता यों एक है पर उसके भीतर देवता और असुर का विभाजन स्पष्ट है । इन दोनों में जिसकी जितनी ऊँचाई चौड़ाई होती है । उसी आधार पर जीवन दिशा प्रभावित एवं गतिशील होती है । उन्नति अवनति का, दिशा निर्धारण का, सारा आधार इसी भीतरी स्थिति पर ही निर्भर रहता है यों देखने में यही लगता है कि परिस्थितियों ने एवं चेष्टाओं ने ही सब कुछ करके रख दिया है । समुद्र की पर्वत शृंखलाएँ जल प्रवाह को गति देती हैं और मानवी अन्तरंग की शुभ-अशुभ स्थिति उसे किसी दिशा में विशेष में बढ़ने के लिए बाध्य कर देती है ।

शोध कर्त्ता हैरी हेस ने प्रशान्त महासागर का सर्वेक्षण करते हुए उस समूह के गर्त में ऐसे द्वीप ढूँढ़े हैं जो कभी पानी से ऊपर थे, किन्तु धरातल की उथल-पुथल के कारण वे समुद्र में डूब गए । ऐसे हजारों अभागे द्वीपों के सम्बन्ध में प्रमाण प्राप्त हो रहे हैं जो कभी भूतल की शोभा बढ़ा रहे थे, किन्तु अब अतल की गहराई में जाकर सबकी दृष्टि से ओझल हो गए और अपनी प्राकृतिक सौन्दर्य सुषमा से वंचित बन गए । ठीक इसी तरह आज के कितने ही भूखण्डों को किसी समय का समुद्र तल घोषित किया जा चुका है । ऐसे कितने ही हिमाच्छादित पर्वत हैं जो कभी समुद्र में डूबे पड़े थे । प्रवृत्तियों के उछाल प्रबल परिस्थिति बनकर सामने आते हैं और व्यक्तियों को नीचे से ऊपर उठाते अथवा ऊपर से नीचे गिराते देखे जाते हैं । प्रकृतिगत उथल-पुथल थल को जल में और जल को थल में बदल सकती है । आन्तरिक उथल-पुथल भी यदि कल्पना मात्र न रहकर प्रचण्ड संकल्प शक्ति के रूप में उदय हो तो आज की अपेक्षा कल का जीवन क्रम आश्चर्यजनक रीति से बदला हुआ पाया जा सकता है और उसके दूरगामी परिणामों को देखकर अजनबी दर्शक अवाक् रह सकता है ।

हिन्द महासागर में ८ हजार फुट ऊँची और ३६०० मील लम्बी एक पर्वत शृंखला है । यह अण्डमान द्वीप समूह के समानान्तर चलती है। यह इण्डोनेशिया और भारत तक फैले हुए समुद्र को भीतर ही भीतर दो भागों में विभक्त करती है और अफ्रीका तक चली गई है । इसे ढूँढ़ निकालने वाले नाविक अलफानमी निकितिन का दावा था कि यह पर्वत शृंखला अति प्राचीन काल में भूभाग थी और आस्ट्रेलिया, अफ्रीका तथा एशिया को एक ही थल भाग बनाये हुए थी । इस भूखण्ड के समुद्र तल में डूब जाने के कारण यह तीनों महाद्वीप अलग-अलग बने । पहले इतनी बड़ी भूमि एक ही विस्तार वैभव की शृंखला में जुड़ी हुई थी ।

समाज और परिवारों की संयुक्त प्रक्रिया कितनी सुविधाजनक एवं कितनी शक्तिशाली है इसे मानने में किसी को कोई आपत्ति नहीं हो सकती । संगठन की, एकता की शक्ति इस संसार की मूर्धन्य सामर्थ्यों में से एक है, किन्तु दुर्भाग्य इसे कहीं भी अक्षुण्ण नहीं रखता । आये दिन बँटवारे होते रहते हैं और इसका दुखदायी परिणाम दुर्बलता एवं विशृंखलता के रूप में सामने आते रहते हैं । असुविधाएँ बढ़ती हैं और अड़चनें खड़ी होती हैं जैसी कि अफ्रीका, एशिया और आस्ट्रेलिया की अर्वाचीन पृथकता और प्राचीन एकता की तुलना करने से स्पष्ट हो जाती है । थोड़ा-सा भूखण्ड डूबा-स्वयं मरा और पीछे वालों के लिए अड़चनें खड़ी कर गया । ठीक इसी प्रकार कुछ स्वार्थी तत्व व्यक्तिगत महत्त्वाकांक्षाओं के लिए एकता को नष्ट करने पर उतारू हो जाते हैं । समझते हैं सबके साथ रहने में नहीं उछल कर चलने और अलग रहने में लाभ है । इसका परिणाम क्या हो सकता है यह इस पर्वत शृंखला से पूछना चाहिए जिसने सामान्य से असामान्य बनने की उछल-कूद की और छब्बे बनाने की इच्छा वाले चौबे के दुबे रह जाने वाली उक्ति चरितार्थ करके रह गई । वह स्वयं डूब गई, अपनी स्थिति दयनीय बना गई साथ ही उन भूखण्डों के लिए चिरकालीन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

विपन्नता खड़ी कर गई जो पृथक-पृथक उपर्युक्त तीन महाद्वीपों के रूप में दिखाई पड़ते हैं और जिनका अलगाव असंख्यों के लिए असंख्य समस्याएँ उत्पन्न कर रहा है । भारत पाकिस्तान का विभाजन भी इसका एक दुर्भाग्यपूर्ण उदाहरण है ।

हिन्द महासागर की सबसे अधिक गहराई पाँच मील नापी गई है जो दक्षिण पश्चिम आस्ट्रेलिया के समीप है । इस क्षेत्र में समुद्र तल में काली मैगनीज, लोहा, ताँबा, टिन, निकिल, जस्ता, मॉलिब्डेनम आदि धातुओं का प्रचुर भण्डार जमा पड़ा पाया गया है । मलेशिया और इण्डोनेशिया के बीच टिन धातु का इतना बड़ा भण्डार है जितना सारी पृथ्वी पर भी नहीं है । यह धातु सम्पदा उथले समुद्रों में अपेक्षाकृत कम अनुपात में पायी जाती है ।

गहराई और सम्पदा का सीधा सम्बन्ध है । उथले, ओछे मनुष्य अपनी तड़क-भड़क दिखाते फिरते तो हैं पर उनका व्यक्तित्व दिवालिए, कंगालों जैसा रहता है । जिसमें गम्भीरता, गहराई, शालीनता, गरिमा और दूरदर्शिता है उन्हीं भारी-भरकम कहे जाने वाले महान् समझे जाने वाले व्यक्तियों में अनेकों स्तरों की सम्पदाएँ एवं विभूतियाँ पायी जाती हैं । वैभव दिखाई भले ही न पड़े पर आवश्यकतानुसार उसका उपयोग कभी भी हो सकता है । अगले दिनों जब धरती वालों को धातुओं की कमी पड़ेगी तब निश्चित रूप से इसी समुद्र तल में छिपे भण्डार को ऊपर लाया जायेगा । परिष्कृत व्यक्तित्व गहरे समुद्रों की तरह है । उनकी महानता यों विज्ञापित भले ही न होती हो पर अवसर आने पर उसका बहुमूल्य उपयोग हो सकता है और उस उपयोग से संसार को असंख्य प्रकार के लाभों से लाभान्वित होने का अवसर मिल सकता है ।

जड़ और चेतन की एकता सिद्ध करने वाला एक अद्‌भुत प्राणी समुद्र में पाया जाता है जिसे 'कोरल पालिप्स' कहते हैं । बोतल जैसी आकृति का लिवलिबा यह प्राणी किसी समुद्री चट्टान को पकड़ कर बैठ जाता है । कहीं आता जाता नहीं । उसमें विचित्र आकर्षण शक्ति होती है । उसी से उस क्षेत्र में बिखरी रहने वाली कोरेलिनेसी नामक समुद्री वनस्पति खिंचती चली आती हैं और उस कीटक के शरीर में लिपट कर आत्मसात होती रहती हैं । कीड़ा बढ़ता रहता है और मूँगे की चट्टान बनती रहती है । यह चट्टानें बढ़ते-बढ़ते ऐसे मजबूत और विशालकाय द्वीपों का रूप धारण करती रहती हैं जिनका भारी तूफान और भूकम्प भी कुछ नहीं बिगाड़ सकते । मूँगा बहुमूल्य पदार्थ है जो सस्ते रत्नों में गिना जाता है और चाव पूर्वक गरीब अमीरों द्वारा आभूषणों के साथ धारण किया जाता है ।

मूँगा जड़ भी है और चेतन भी । चेतन इसलिए कि उसकी उत्पादक सत्ता सजीव है । जड़ इसलिए कि उसे निर्जीव चट्टान की तरह देखा और काम में लाया जा सकता है । यह समस्त विश्व जड़-चेतन सत्ता से उसी प्रकार समन्वित है जैसा कि मूँगा । जड़ के बिना चेतन की अनुभूति नहीं होती और चेतन के बिना जड़ की हलचलें सम्भव नहीं । इसलिए जड़ बुद्धि संसार को पदार्थ मात्र मानती है और सचेतन प्रज्ञा के लिए यह समस्त पसारा चेतन ब्रह्म सत्ता के अतिरिक्त और कुछ नहीं है ।

परिस्थितियों और साधनों की प्रगति के लिए आवश्यकता असंदिग्ध है पर साथ ही यह भी स्पष्ट है कि यह सहायता व्यक्तिगत चुम्बकत्व के बिना किसी के भी पास खिंचती हुई नहीं आ सकती । मूँगा कीट कहीं जाता नहीं अपने आकर्षण से ही आहार के उपर्युक्त वनस्पतियों को घसीट कर पास बुला लेता है, और वे सहज ही अपनी वरमाला उस प्रचण्ड पुरुषार्थी के गले में डालकर समर्पित होती चली जाती है । घास के समर्पण और मूँगा के चुम्बकत्व को अन्योन्याश्रित देखा जा सकता है और यह अनुभव किया जा सकता है कि दोनों पक्ष एकाकी रहने पर नितान्त दुर्बल थे पर उस एकाकार स्थिति ने कैसा चमत्कार परिणाम प्रस्तुत किया । तुच्छ-सी घास मूँगा जैसी बहुमूल्य बन गई और अपने में चुम्बकत्व उत्पन्न करके वह तुच्छ सी कीटक विशालकाय एवं प्रशंसा पात्र रत्न द्वीप बन गया । जिन व्यक्तियों ने अपने में मूँगा कीट जैसा चुम्बकत्व उत्पन्न किया वे स्वयं धन्य बने और अपने साथी सहयोगियों को धन्य बनाया । इस रहस्यमय प्रशिक्षण को मूँगा कीट उन बुद्धिमान कहलाने वाले मनुष्यों के सामने प्रस्तुत करते रहते हैं जो समुन्नत बनने के इच्छुक तो हैं पर प्रगति के मूल्यवान सिद्धान्तों से प्रायः अपरिचित ही बने रहते हैं ।

छोटा द्वीप बड़े तथ्य

साठ वर्ग मील क्षेत्रफल का ईस्टर द्वीप सन् १८८८ में चिली सरकार के कब्जे में था । चिली (अमेरिका) की राजधानी सेन्टियागो से १०३० मील दूर प्रशान्त महासागर में मात्र १२०० मनुष्यों की आबादी वाला यह द्वीप अपने भीतर ऐसे अजूबे छिपाए बैठा है, जिन्हें देखने के लिए संसार भर के हजारों पर्यटक, पुरातत्ववेत्ता तथा नृवंश विज्ञानी वहाँ अपनी कौतूहल भरी जिज्ञासाओं का समाधान करने के लिए पहुँचते रहते हैं । पर्यटकों की उत्सुकता शान्त करने के लिए उस द्वीप में एक हवाई अड्डा भी है जिस पर छोटे तथा मँझोले जहाजों के उतरने की समुचित सुविधा है । इस पूरे द्वीप में केवल एक ही कस्बा है—हंगारोआ । सभ्य नागरिक इसी में रहते हैं । स्वच्छन्द आदिवासी तो जहाँ-तहाँ उपलब्ध विशालकाय गुफाओं में अपना अड्डा जमाए रहते हैं ।

इस द्वीप का सबसे वड़ा आकर्षण है वहाँ बहुत बड़ी संख्या में जहाँ-तहाँ बिखरी हुई दैत्याकार मूर्तियाँ, जिनकी ऊँचाई ३० से ७० फुट तक की है । वे टुकड़ों से जोड़कर नहीं बनाई गई हैं, वरन् प्रत्येक एक समूचे चट्टान की है ।

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

इनकी कलाकृति तो बहुत महत्त्वपूर्ण नहीं है, पर आश्चर्य इस बात का है, जहाँ विशालकाय पत्थरों वाले पहाड़ हैं वहाँ से बहुत दूरी पर ये खड़ी हुई हैं । जहाँ वे हैं वहाँ इस प्रयोजन के उपयुक्त पहाड़ नहीं हैं । फिर इतनी दूर, इतनी भारी और विशालकाय चट्टानों को उस जमाने में कैसे लाया गया होगा जिसमें कि यान्त्रिक बुद्धि तथा साधन सामग्री का सर्वथा अभाव था । यह प्रतिमाएँ अब से प्रायः एक हजार वर्ष पुरानी तक हैं । देखने वाले आश्चर्यचकित होकर इस द्वीप को देखने के बाद लौटते हैं । जिन जिज्ञासाओं को लेकर वे जाते हैं, उनका समाधान होना तो दूर उल्टे अधिक चकित होकर वापस लौटते हैं ।

प्रशान्त महासागर के बीचों-बीच बसे-समुद्र तट से हजारों मील दूर इस छोटे से द्वीप पर मनुष्य कब पहुँचे ? क्यों पहुँचे ? उस जमाने में इतनी लम्बी यात्राएँ कर सकने योग्य नौकाएँ इन लोगों ने कैसे बनाईं ? यहाँ वे किस आकर्षण से आकर बसे ? इतनी विशालकाय मूर्तियाँ किस प्रयोजन के लिए—किन साधनों से गढ़ीं । इन्हें बनाने, उठाने और खड़ी करने के साधन किस प्रकार जुटाये । मूर्तियों से भी अधिक आश्चर्यजनक है, उनके सिर पर रखे हुए टोपे जो अलग से बने हैं और मूर्तियों के ऊपर उनके गढ़े जाने के बाद रखे गए हैं । यह टोपे भी पत्थर के हैं और उनका वजन तीन टन तक है । मूर्ति की आश्चर्यजनक ऊँचाई और उस पर भी इतने भारी टोपों को स्थापित किया जाना सचमुच आश्चर्यजनक है और इस बात की साक्षी देता है कि साधनहीन स्थिति में भी मनुष्य की संकल्प शक्ति कितने चमत्कारी सृजन कर सकती है ।

अब से ढाई सौ वर्ष पूर्व तक किसी को यह पता भी नहीं था कि इतने छोटे समुद्र तट से इतनी दूर, किसी द्वीप में कोई प्रवीण मनुष्य जाति निवास कर रही होगी । सन् १६२२ में एक डच नाविक रोजीवीन अपने जहाज सहित उधर जा निकला । उसका मन उस द्वीप में थोड़ा विश्राम करने का था । वह उतरा तो वहाँ निवास करने वाले योरोपियनों की तरह बिल्कुल गोरे तथा कुछ साँवले रंग के आदिवासियों को योजनाबद्ध जीवन जीते हुए पाया । वे लोग प्रायः नंगे रहते थे । शरीर पर गुदने गुदे थे । जिन्होंने कानों में छेद करके लकड़ी के गुटके पहन रखे थे वे लम्बकर्ण और जिनके कान नहीं छिदे थे वे लघुकर्ण थे । इनका वर्ण विभाजन इसी कर्ण आकृति के आधार पर किया जा सकता था । वे सूर्य पूजक थे । प्रातःकालीन उदय होते हुए सूर्य को साष्टांग दण्डवत प्रणाम करते थे और पीछे मूर्तियों के सामने पवित्र अग्नि जलाकर हवन करते थे ।

रोजीवीन को कौतूहल तो जरूर हुआ पर उसे निष्प्रयोजन समझा और उपेक्षापूर्वक चला आया । उसके उतरने के दिन ईसाइयों का ईस्टर त्यौहार था इसलिए उसका नाम ईस्टर रख दिया गया । यों उसका पुराना नाम तोतिहेनुआ था । इसके पचास वर्ष बाद एक स्पेनी नाविक डान फिलिप गोजालिस वहाँ पहुँचा । उसने वहाँ स्पेनिश झण्डा गाढ़ा और अपने सम्राट के नाम पर इस द्वीप का नाम सान कार्लोज रख दिया । इसके बाद वहाँ अंग्रेज नाविक कुक पहुँचा । तत्पश्चात् फ्रान्सीसी नाविक ला पिरोजे वहाँ उतरा इन लोगों ने घूम-घूमकर वहाँ की स्थिति को देखा और वहाँ का अनोखापन योरोप वालों का बताया ।

उन्नीसवीं सदी के आरम्भ में अमेरिकी गोरे यहाँ पहुँचे और यहाँ के आदिवासियों को पकड़ कर गुलाम बनाने के लिए प्रयत्न करने लगे । पेरू से सात जहाज इसी प्रयोजन के लिए गए थे । उन्होंने जो पकड़ में आ गए उन ६०० को कैद किया और शेष को गोली से उड़ा दिया । सन् १८७७ में वहाँ स्त्री-बच्चों की आबादी मात्र १११ रह गई । तब से चिली सरकार के आधिपत्य में यह द्वीप है । वहाँ शिक्षा, चिकित्सा, शासन, उत्पादन, व्यवसाय के आधार खड़े किए गए हैं और बढ़ती हुई सुविधा के कारण आबादी बढ़ी है । यहाँ पेड़ तो कम हैं, पर घास बहुत होती है इसलिए भेड़ें पालने के उद्योग ने वहाँ की समृद्धि में बहुत योगदान दिया है । पीने का पानी कुछ ही तालाबों में ही मिलता है ।

पुरातत्ववेत्ताओं ने इस द्वीप का इतिहास जानने के लिए जो खुदाई कराई है उसमें विनायू नामक स्थान में पाया गया आहू मन्दिर का ध्वंसावशेष बहुत महत्त्वपूर्ण है । उसकी कलाकृति देखते ही बनती है । निष्कर्ष निकाला गया है कि किसी समय अमेरिका में मय सभ्यता फैली हुई थी । वहाँ इनकी जाति के बड़े पुरुषार्थी और बुद्धिमान लोग रहते थे । वे ही अपनी हल्की नावें लेकर यहाँ पहुँचे थे और इस प्राकृतिक सौन्दर्य से भरे-पूरे द्वीप में बस गए थे ।

पुरातत्ववेत्ताओं को खुदाई में तथा गुफाओं में जो प्रमाण आधार मिले हैं उनसे स्पष्ट होता है कि चिरकाल पूर्व वहाँ सभ्य और कुशल लोग रहते थे उनकी सभ्यता, कारीगरी और सांसारिक जानकारी बढ़ी-चढ़ी थी । आहू मन्दिर के इर्द-गिर्द ऐसे प्रमाणों का बाहुल्य है । रानी रारावू की घाटी में वे विशालकाय मूर्तियाँ गढ़ी जाती थीं वहाँ से उठाकर आहू मन्दिर तक प्राण-प्रतिष्ठा के लिए लायी जाती थीं फिर उन्हें जहाँ उचित समझा जाता था वहाँ पहुँचाया जाता था । क्रेनों का आविष्कार उन दिनों तक नहीं हुआ था, फिर भी वे आदिवासी जानते थे कि स्वल्प मानवी श्रम एवं सामान्य रस्सों से किस कौशल के साथ पचास टन भारी शिलाखण्डों को मीलों की दूरी तक सरलतापूर्वक कैसे पहुँचाया जा सकता है ?

इस द्वीप निवासियों की प्राचीन बोली और लिखी जाने वाली भाषा 'रंगो-रंगो' रही है । उसका उल्लेख शिलाखण्डों में अब भी उपलब्ध है ।

छोटा-सा ईस्टर द्वीप अपने गर्भ में छिपे इस रहस्य का उद्घाटन करता चला जा रहा है कि अमेरिका में कुछ शताब्दी पूर्व 'इन्का' नामक बहुत ही सुविकसित सभ्यता वाली

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जाति बसी हुई थी उसी के सदस्य इस छोटे से शान्त द्वीप में जा बसे थे वहाँ कि विषम परिस्थितियों में भी उन्होंने इतनी विशालकाय मूर्तियाँ गढ़ी थीं जिनकी तुलना संसार भर में अन्यत्र कहीं नहीं है । अभावग्रस्त और कठिन परिस्थितियों में भी मानवी पौरुष और कौशल चमत्कारी सफलताएँ प्राप्त कर सकता है इस तथ्य का जीता जागता प्रमाण ईस्टर द्वीप है । 'इन्का' जाति अमेरिका में बसी थी, पर वह मूलतः भारत से गई थी । 'मय' सभ्यता विशुद्ध रूप से भारतीय सभ्यता थी ।

अमेरिका और ईस्टर के ध्वंसावशेष एक और भी घोषणा करते हैं कि एक बार सफलता के उच्चस्तर पर पहुँचकर फिर निश्चिन्त हो जाना, सुरक्षा, प्रगति के लिए अनवरत प्रयास जारी न रखना, स्वल्प सन्तोष और आलसी प्रमादी बन बैठना इतना घातक है कि प्रगतिशील लोग भी क्रमशः नीचे गिरते-गिरते दुर्गति के गर्त तक पहुँच सकते हैं । किसी समय के विश्व विजयी आज अमेरिका में पिछड़े हुए 'रेड इण्डियन' आदिवासी बनकर पिछड़ी स्थिति में रह रहे हैं और उन्हीं के वंशज ईस्टर द्वीप में भी अपना दयनीय अस्तित्व बनाए हुए हैं ।

भूखण्ड भी खिसक और बिखर रहे हैं

नृतत्व वेत्ता रावर्ट रिएज और जान होल्डेन की संयुक्त खोजों और निष्कर्षों के अनुसार प्रागैतिहासिक काल में आस्ट्रेलिया, दक्षिण एशिया, अफ्रीका और दक्षिण अमेरिका के इन दिनों अलग-अलग दीखने वाले महाद्वीप कभी एक थे । उस विशाल भूखण्ड की यात्रा बिना किसी समुद्र के बीच में बाधा उत्पन्न किए पैदल भी हो सकती थी । पृथ्वी एक विशाल महाद्वीप थी । कटाव और बिखराव तो बहुत बाद में पैदा हुआ ।

एक समुद्र एक धरातल की स्थिति पृथ्वी के जन्म के बाद ५० लाख वर्ष तक यथावत बनी रही । बिखराव का सिलसिला चला तो वे कटकर दो हो गए । एशिया को उत्तरी और अमेरिका को दक्षिणी खण्ड माना गया है । यह स्थिति भी अधिक दिन न रही । विभाजन चलता रहा और स्थिति यहाँ तक आ पहुँचती जैसी कि इन दिनों अनेक खण्ड उपखण्डों के रूप में दृष्टिगोचर होती है । समुद्रों का विभाजन भी इसी प्रकार चलता रहा । वे भी इतने टुकड़ों में बँट गए जितने कि इन दिनों दीख पड़ते हैं ।

ऐसा क्यों होता है ? इसका कारण समझने के लिए पृथ्वी की संरचना पर ध्यान देना होगा । आरम्भ में वह आग के गोले की तरह गरम थी । धीरे-धीरे ठण्डी होने लगी । ऊपर की परत पर मिट्टी जमी, पानी बरसा, समुद्र बने और वनस्पतियों तथा प्राणियों का उद्भव आरम्भ हुआ, किन्तु भीतरी गर्भ में अभी भी वह पिघले हुए गरम लोहे जैसी स्थिति बनी हुई है । उसके ऊपर यह ठण्डी पर्त तैरती रहती है जिससे हम उपयोगी पदार्थ खोद निकालते हैं जिसकी उर्वरता पर निर्वाह चलाते हैं ।

स्थिति को और अच्छी तरह समझने के लिए ऊँचे पहाड़ों की उपमा दी जा सकती है । उन पर चिर पुरातन काल से बर्फ की एक ठोस पर्त जमी है । इसके बाद हर वर्ष सर्दी के मौसम में नई बर्फ जमती है । वह मुलायम होती है । गर्मी आने पर पिघलने लगती है और उपकरण उसकी चट्टानें कटने और फिसलने लगती हैं । ठीक ऐसा ही पृथ्वी के मध्य में प्रायः ८० किलोमीटर मोटी गरम पर्त के बारे में समझा जा सकता है । उसके ऊपर ठण्डी मिट्टी की पर्त तैरती रहती है । क्रमशः गरम भाग ठण्डा होता और सिकुड़ जाता है । इस सिकुड़न के फलस्वरूप ठण्डी पर्त फटने और बिखरने लगती है । जिधर भी उसे ढलान मिलता है उसी ओर खिसक जाती है । वजन का भारीपन भी हल्की दिशा में धकेलता रहता है ।

इस ठेलम पेल में कई बार ऊपरी पर्त के टुकड़े आपस में टकराने भी लगते हैं । दबाव जिधर का अधिक होता है उधर का मलवा दूसरे कोमल कमजोर पक्ष को दबोच लेता है । दबाव अधिक और पोल गुंजाइश कम रहने की स्थिति में कूबड़ उभर आता है । इन्हीं को पर्वत शृंखलाएँ कहते हैं । हिमालय जैसे पर्वतों को ऐसे ही कूबड़ समझा जा सकता है जो एक भूखण्ड के दूसरे पर चढ़ बैठने के कारण उभरे हैं ।

भूखण्डों की भगदड़ और फिसलनें अभी भी समाप्त नहीं हुई हैं । ऐसे आधार बन रहे हैं जिनसे प्रतीत होता है कि यह विभाजन अभी और होगा और जितना महाद्वीप भूखण्ड इन दिनों दृष्टिगोचर होते हैं उसकी तुलना में अधिक बनेंगे । वैज्ञानिकों के एक वर्ग का कथन है कि अगले दिनों न केवल बिखराव की वरन् एकीकरण की भी सम्भावना है । उत्तर अफ्रीका का भूखण्ड भूमध्य सागर को दौड़ता हुआ यूरोप से जा मिलेगा । तब भूमध्य सारग एक छोटी झील जैसा रह जायेगा । इसी प्रकार यह भी सम्भावना है कि आस्ट्रेलिया, इण्डोनेशिया आदि चीन के साथ जुड़कर एक नया विशाल महाद्वीप विनिर्मित करें । तब अमेरिका उतना लम्बा न रहेगा जैसा कि अब नक्शे में दीखता है । उस परिवर्तन के प्रभाव से उसका भू-भाग गोला या आयताकार बन जायेगा ।

बढ़ने और सिकुड़ने की प्रकृति प्रक्रिया ने अपनी धरती को भी टूटने और सिमटने के लिए बाधित कर दिया है ।

ऊँचे उठें और असामान्य के सम्पर्क में आयें

जैसे-जैसे हम ऊँचे उठते हैं वैसे ही वैसे सामान्य से आगे की असामान्य स्थिति का अनुभव करते हैं । जमीन पर खड़े होकर देखने से मात्र थोड़े से क्षेत्र की थोड़ी-सी वस्तुएँ दीखती हैं, पर वायुयान में ऊँचे पहुँच कर जब देखते

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हैं तो बहुत बड़ा क्षेत्र अनेकानेक पदार्थ और प्राणी दृष्टिगोचर होते हैं । अपना परिचय क्षेत्र बहुत बड़ा हो जाता है ।

भूतल से ऊँचा उठते-जाने पर हमें एक से एक बढ़-चढ़ कर चित्र-विचित्र अनुभव होते हैं । धरती की ऊपरी परत पर रखे हुए पदार्थ ठोस हैं, किन्तु ऊपर भाप रूप में इससे भी असंख्य गुनी बहुमूल्य सम्पदा उछलती-उमड़ती फिर रही है । वहाँ शक्तियों के भरे पूरे समुद्र लहलहा रहे हैं । धरती का वैभव इस अन्तरिक्षीय सम्पदा का ही एक छोटा अनुदान है ।

व्यक्ति जब चेतना क्षेत्र में ऊँचा उठता है तो उसे प्रतीत होता है कि पशु जीवन में जो पाया जाना था उसकी अपेक्षा इस विकसित जीवन क्रम के साथ कहीं अधिक मात्रा में जुड़ा हुआ है । उच्च जीवन की चमत्कारी स्थिति ऐसी है जिसे देखकर मनुष्य सोचता है कि क्यों न आरम्भ में ही उत्कृष्टता अपनाई गई और क्यों ऊँचा उठने में इतना विलम्ब किया गया ?

आकाश कितने हैं ? इसकी प्राचीन मान्यताएँ सात की संख्या बताती हैं । अपने यहाँ भू-लोक, भुवः लोक, स्वः लोक, तपः, महः जनः सत्य लोक हैं । जमीन से नीचे सात पाताल लोकों की भी मान्यता है । मुसलमानी धर्म में भी सात आसमान बताए गए हैं । अन्तिम में अल्लाह रहते हैं । ईसाई धर्म में भी इसी से मिलती-जुलती बात कही गई है । यूनानी ब्रह्माण्ड को एटलस देवता के कन्धों पर रखा गोला मानते थे । कोलम्बस जब अमेरिका पहुँचा तो वहाँ के आदिवासी भी पाँच ऊपर और दो नीचे कुल सात आकाश मानते थे ।

आधुनिक विज्ञान ने इतने आकाशों के झंझट से बचने के लिए उसमें कटौती करके सिर्फ ४ ही स्वीकार किए हैं । पृथ्वी के ऊपर १००० मील तक अनुभव में आ सकने वाली हवा है । इस हवा के दायरे में ही वैज्ञानिकों ने अपने चारों आकाश सीमित कर लिए हैं । विशाल ब्रह्माण्ड का अनन्त अन्तरिक्ष इनसे भिन्न है ।

पहला आकाश ट्रोस्योफीयर—क्षोभ मण्डल है । जो समुद्र तल से ३५००० फुट ऊँचाई तक फैला हुआ है । यह अपने ऊपर के अन्य तीनों आकाश की अपेक्षा सबसे अधिक घना है । पूरी हवा का तीन चौथाई वजन इसी क्षेत्र में है । हम अपना जीवनयापन इसी क्षेत्र में करते हैं ।

हमें भारी हवा में रहने की आदत है । उसी हिसाब से अपने श्वास-प्रश्वास यन्त्र बन गए हैं । आकाश में ऊपर उठने पर हवा क्रमशः हल्की होती जाती है और उसमें साँस लेने में कठिनाई बढ़ती जाती है । जो ऊँचे पहाड़ों पर जन्में हैं और वहाँ रहने के अभ्यस्त हैं उनकी बात दूसरी है, पर जो धरती की नीची सतह पर रहने के आदी हैं उनको ऊँचे पहाड़ों की चोटियों पर पहुँचते हुए साँस लेने में भारी कठिनाई अनुभव होती है । पर्वतारोही अक्सर ऑक्सीजन की पेटियाँ पीठ पर लाद कर, मुखौटे पहन कर ही उन दुर्गम चोटियों तक पहुँचते हैं ।

छः मील ऊँचाई तक उड़ना हो तो ऑक्सीजन की पेटी लेकर जा सकते हैं, पर वहाँ और कई कठिनाइयाँ सामने खड़ी होंगी । बर्फानी हवाएँ हमारे चेहरे की धज्जियाँ उड़ा दे सकती हैं उस हवा में परस्पर बात करना भी कठिन होगा । हमारे गले में कम्पन्न होते हैं वे हवा से टकरा कर ध्वनि तरंगें आगे बढ़ाते हैं और वे तरंगें कान के पर्दे से टकराने पर सुनाई देती हैं । यदि हवा पतली हो तो उससे गले के कम्पन्नों की प्रतिक्रिया इतनी हल्की होगी कि दूसरे के कान उसे सुन ही न सकेंगे । यह कठिनाई अपने से पहले सबसे नजदीक वाले साथी ट्रास्पोफ्यिर की ऊपरी सतह पर पहुँचते-पहुँचते आरम्भ हो जाती है ।

दूसरा आकाश स्टैटोस्फीयर समताप मण्डल है । यह ३५००० फुट ऊँचाई से आरम्भ होकर ६५ मील ऊपर तक चला जाता है । इसमें हवा की ठण्डक शून्य से भी ६७ डिग्री नीचे है । इतनी ठण्डक हम खुले शरीर पर किसी तरह बर्दाश्त नहीं कर सकते । इतना ही नहीं वहाँ की हवा में दबाव और भार बहुत ही कम है । उसमें जा पहुँचे तो शरीर की नसें फट जायेंगी, दिमाग सन्तुलित न रह सकेगा । सर्वविदित है कि समुद्र की गहराई में रहने वाले जलचरों को यदि पानी से निकालकर जमीन पर रख दिया जाय तो वे गुब्बारे की तरह फट जायेंगे । कारण यह है कि वे प्राणी पानी का हजारों टन भार अपने शरीर पर वहन करने के अभ्यस्त होते हैं उनका रक्त संचार, श्वास संस्थान इसी हिसाब से बना होता है और वे प्रसन्नतापूर्वक वहाँ रहते हैं । धरती पर हवा का दबाव भिन्न है । उसे सहन करने लायक शरीर न होने से वे प्राणी धरती पर आते ही मर जाते हैं यही हाल स्टैटोस्फीयर सतह पर पहुँच कर हमारा भी होगा ।

४५ हजार फुट से ऊपर जाने पर जेट या वी. ३६ किस्म के जहाज में जाना पड़ता है । वह भी ऐसा जो एयरकण्डीशन हो । सह्य तापमान बनाए रहे और अभ्यस्त स्तर की प्राण वायु सप्लाई कर सके ।

उन्नीस मील ऊपर उड़ने के पश्चात् ही 'ब्रह्माण्ड रश्मियों' के नाम से जानी जाने वाली एक विचित्र प्रकार की किरणें बौछार करती दिखाई पड़ती हैं । वे इतनी घातक हैं कि क्षण भर में मनुष्य को मृत्यु के मुख में धकेल सकती हैं । ईश्वर को धन्यवाद है कि उसने पृथ्वी को एक हवा का सुदृढ़ कवच पहना रखा है जो कि उस घातक वाण वर्षा से हमारी रक्षा करता है अन्यथा उन्होंने अब तक पूरी पृथ्वी को श्मशान बना दिया होता । उनके कारण अपने इस सुन्दर लोक का जीवन समाप्त हो गया होता । ये किरणें सूर्य से ही नहीं अन्य ग्रह-नक्षत्रों से भी आती हैं और उनका मिला-जुला पथराव पृथ्वी की ओर होता रहता है । हम लोग मजबूत छत के नीचे बैठे उनका तमाशा देखते रहते हैं, पर किसी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रकार की चोट नहीं सहते । हवा के अंचल में छिपे हुए हम चैन की वंशी बजाते रहते हैं ।

ओजोनोस्फीयर—ओजोन मण्डल इसी दूसरे आकाश का ऊपर वाला भाग है । यह पृथ्वी से प्रायः २५ मील की ऊँचाई पर है । यहाँ पहुँचते-पहुँचते नीचे के भाग की शून्य से ६७ डिग्री नीचे की असह्य ठण्ड अचानक भयंकर गर्मी की परत में बदल जाती है । वहाँ १७० डिग्री फारेनहाइट की गर्मी है । यहाँ गाढ़ी ऑक्सीजन है जो ब्रह्माण्ड रश्मियों और उनकी सहेली अल्ट्रावायलेट परा बैंगनी रश्मियों को अपने में सोख लेती हैं । इस शोषण के कारण ही इतनी भयंकर गर्मी उस क्षेत्र में छाई रहती है । पृथ्वी की आवाजें इस मण्डल तक तो पहुँच जाती हैं, पर इसके आगे नहीं बढ़ पातीं । यह मण्डल उन्हें वापस लौटा देता है, यही कारण है कि अणुबम-ज्वालामुखी आदि फटने जैसे जोरदार धमाके उस मण्डल से टकराकर धरती पर वापस लौट आते हैं और सैकड़ों मील दूरी तक सुने जाते हैं ।

चालीस मील ऊपर उठने पर कभी प्रभात काल या संध्याकाल दृष्टिगोचर नहीं होता । सूर्य का उदय-अस्त बिजली का बटन दबाने की तरह होता है । क्षण भर में घोर अन्धेरा—क्षण भर में घोर प्रकाश । तारे अपेक्षाकृत और भी अधिक झिलमिलाते हैं ।

तीसरा आकाश आयनोस्फीयर—अयन मण्डल है । यह ६५ मील से ऊपर है । यह बहुत ही डरावना और दैत्यों का जादुई प्रदेश मालूम देता है । वहाँ अत्यन्त तीव्र हवाएँ ९० अंश कोण पर तीर की तरह चलती हैं । कुछ बादल भी वहाँ देखे जाते हैं, पर वे ऊँचे से गिरने वाले प्रपात में ऊँचे उठने और भीतर घुसने वाले झाग की तरह उथल-पुथल करते रहते हैं, कहीं रुकते क्षण भर भी नहीं । इस क्षेत्र में सघन अन्धकार छाया रहता है जिसमें रह-रहकर बिजली की विशालकाय लपटें भभकती रहती हैं । कहीं लाल रोशनी का तूफान उठता दिखाई पड़ता है तो कहीं नीली, कहीं हरी बिजलियाँ कुलाचें भर रही होती हैं । रंग-बिरंगी आतिशबाजी भी इतने बड़े पैमाने पर, इतने भयंकर डरावने रूप में, इस दैत्यों के जलते हुए श्मशान को देखकर हममें से कोई भी डरकर काँपने लगेगा ।

इस क्षेत्र में पहुँचने पर ओजोन मण्डल वाली भयंकर गर्मी की पर्त समाप्त हो जाती है और फिर ठण्ड का दौर शुरू हो जाता है । यहाँ शून्य से २८ डिग्री नीचे की ठण्डक पायी जाती है, पर वह पर्त भी बहुत मोटी नहीं है । उसकी मोटाई कुछ ही मीलों की है । जिस तरह केले के तने में—या प्याज की गाँठ में एक के बाद दूसरी पर्त निकलती है, उसी तरह ऊपर आकाश में हवाओं की ही नहीं सर्दी और गर्मी की भी परतें हैं । इस क्षेत्र की ठण्डक कुछ ही देर रहती है और आगे चलकर वह भयंकर गर्मी में बदल जाती है ।

अन्तिम चौथा आकाश है एक्साफीयर—वहिः मण्डल—यह पृथ्वी से ४०० मील की ऊँचाई से आरम्भ होकर १००० मील की ऊँचाई तक चला गया है । यहाँ हवा है तो पर वह उस तरह नहीं बहती वह अपनी धरती पर नदी के पानी की तरह बहती है । वहाँ उसकी धज्जियाँ भर उड़ती रहती हैं । कहीं हवा, कहीं बिना हवा के क्षेत्र हैं । हवा के टुकड़े भी बहुत झीने और हल्के हैं वे इधर से उधर उड़ते फिरते हैं और आपस में नटखट बच्चों की तरह टकराते भी रहते हैं । उनके बीच में वायु रहित शून्य भी रहता है । वह इतनी अधिक पतली है कि आवाज को एक जगह से दूसरी जगह इतना भी नहीं ले जा सकती कि दूसरा उसे सुन सके । वहाँ पहुँचने पर पास में छोड़ी गई बन्दूक की आवाज भी हम नहीं सुन सकेंगे ।

इस क्षेत्र में पहुँचने पर एक विचित्र दृश्य और दिखाई पड़ता है । उस क्षेत्र में उल्काओं का पथराव होता रहता है । यह उल्काएँ क्या हैं ? इन्हें किन्हीं टूटे ग्रहों का बिखरा हुआ कूड़ा-कचरा कह सकते हैं जो अनन्त अन्तरिक्ष में इधर से उधर निरुद्देश्य उड़ता रहता है । यह टुकड़े कभी पृथ्वी के निकट से गुजरते हैं तो उसकी आकर्षण शक्ति उन्हें खींच लेती है । जब वे टुकड़े पृथ्वी की परिधि में घुसते हैं तो उनके खिंचने की चाल भी अत्यन्त भयंकर होती है । वे प्रायः १७० हजार मील प्रति घण्टे की चाल से पृथ्वी के वातावरण में घुसते हैं । घुसने को तो घुस आते हैं, पर पृथ्वी को हवा के साथ उनकी जो रगड़ होती है उसे वे सहन नहीं कर पाते और गरम होकर माचिस की तरह जलने लगते हैं । असंख्य उल्काएँ चना, मटर की तरह होती हैं । वे बन्दूक की गोलियों की तरह सनसनाती हुई आती तो हैं, पर जलकर धुआँ बन जाती हैं । इनमें से कोई-कोई बड़े आकार की होती हैं तो उनका जलना पृथ्वी तल से भी दिखाई पड़ता है । अक्सर हम रात को "तारे टूटते" देखते हैं ।

मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार का अन्तःकरण चतुष्टय ऐसे ही आश्चर्यजनक वैभवों से भरा पड़ा है । हम केवल मंच भौतिक स्थूल शरीर के साथ जुड़ी हुई वासनाओं और तृष्णाओं की तुच्छ सी ललक भर से परिचित हैं । इन्द्रिय लिप्सा की दाद जैसी खुजली खुजाते रहने का सुख हमने जाना है और अहंकार को भड़काने वाले ठाट-बाट एवं संग्रह को सन्तोष का केन्द्र समझा है । लोभ और मोह की पूर्ति ही हमारी अभ्यस्त मनोकामना है । यह कृमि-कीटकों जैसा और पशु-पक्षियों जैसा हेय स्तर है । पेट और प्रजनन के कोल्हू में तो सृष्टि के क्षुद्र प्राणी भी पिसते रहते हैं । यदि मनुष्य भी उसी स्तर का जीवनयापन करता रहे तो उस सुरदुर्लभ ईश्वरीय वरदान की महत्ता ही क्या रही ?

ऊँचा उठना ही मनुष्य जीवन की सफलता का चिन्ह है । मन को निग्रहीत, बुद्धि को परिष्कृत, चित्त को उदात्त और अहंकार को निर्मल बनाकर इसी शरीर में दिव्य शक्तियों का अवतरण किया जा सकता है और उन विभूतियों से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लाभान्वित हुआ जा सकता है जो देवताओं में सन्निहित मानी जाती हैं । भूतल के ऊपर चार सुविस्तृत और सुसम्पन्न आकाश हैं । व्यक्तित्व को ऊँचाई की ओर उठाते चलने पर अन्तरिक्ष से कहीं अधिक वैभव अन्तःकरण में फैला हुआ दृष्टिगोचर हो सकता है ।

ऐसा बड़प्पन किस काम का ?

जन-साधारण के साथ रहने को—उनके साथ मिल-जुलकर चलने को प्रकृति यों 'सामान्य' स्तर की मानी जाती है और उसमें बड़प्पन का आभास नहीं होता तो भी वह अपने लिए और दूसरों के लिए अत्यधिक उपयोगी होती है । इसके विपरीत वह सम्पन्नता जो व्यक्ति विशेष को असाधारण सिद्ध करते हुए जन सम्पर्क से दूर रखती है । सौभाग्य का चिन्ह समझी जाने पर भी वस्तुतः खोखली और नीरस ही होती है ।

कितने ही व्यक्ति अपने अहंकार की पूर्ति के लिए सर्व साधारण की अपेक्षा कहीं अधिक ऊँचे एवं भिन्न बनने के लिए प्रयत्नशील रहते हैं और सोचते हैं इससे उनका मान-गौरव बढ़ेगा । विशिष्ट व्यक्ति समझा जायेगा और लोग चकित होकर अपनी तुलना में कहीं अधिक ऊँचा उठा हुआ समझेंगे, तदनुरूप उस बड़प्पन का लोहा मानेंगे । यह मान्यता अत्यन्त भ्रामक है । सर्वसाधारण की अपेक्षा अपनी आन्तरिक महानता अधिक हो, गुण, कर्म, स्वभाव की उच्चस्तरीय विभूतियाँ जुड़ी हों, यह ठीक है पर बाह्य जीवन में सबसे मिलकर, सबके साथ रहकर ही आनन्द, उल्लास का उपयोग किया जा सकेगा । बड़प्पन की हविस में जो असाधारण बनने का उद्धत प्रयास करेगा वह अचम्भे—अजूबे जैसा भले ही प्रतीत हो वस्तुतः वह उपेक्षा एवं अवमानना का ही पात्र बनेगा ।

क्या यह आकांक्षा—मान्यता सही है ? क्या बड़े और ऊँचे बनने की तृष्णा में जन साधारण का स्तर छोड़ देने से वह गौरवास्पद बनने का उद्देश्य पूरा हो सकता है ? इस प्रश्न का उत्तर पृथ्वी के इर्द-गिर्द फैली हुई वायुमण्डल की पर्तों की स्थिति पर विचार करने से सहज ही समझा जा सकता है ।

पृथ्वी अपने चारों ओर हवा का बना एक ऐसा कवच धारण किए हुए है जिससे उसकी समृद्धि सुरक्षित बनी रहती है । यह कवच न होता तो आकाश में घूमने वाली उल्काओं के प्रहार से उसकी वैसी ही दुर्गति हुई होती जैसी चन्द्रमा की हुई है । चन्द्रमा पर हवा का आवरण नहीं है । इसलिए अन्तरिक्ष में उड़ने फिरने वाले उल्कापिण्ड उससे जा टकराते हैं और सैकड़ों मील लम्बे-चौड़े गहरे भयंकर गर्त प्रस्तुत कर देते हैं । चन्द्रमा का तल ऐसे ही खड्डों से भरा ऊबड़-खाबड़ है । वायु रहित अनन्त शून्य अन्तरिक्ष से पृथ्वी की सत्ता को पृथक एवं सुरक्षित रखने का श्रेय इस वायु आवरण को ही है ।

हमारे वायुमण्डल में कई प्रकार की गैसों का सम्मिश्रण है । २१ प्रतिशत ऑक्सीजन, १७ प्रतिशत नाइट्रोजन, १ प्रतिशत कार्बन डाइ-ऑक्साइड तथा थोड़ी-थोड़ी मात्रा में भाप, नियॉन, हीलियम, क्रिप्टॉन, ऐनोन आदि गैसें हैं । यह सम्मिश्रण पृथ्वी की सतह पर सबसे अधिक होता है फिर ऊपर जितने चढ़ते जायें उतनी ही हवा गैसों से रहित पतली होती जायेगी । अधिक ऊँचाई पर हवा रहती तो है पर वह इतनी पतली होती है कि उसमें प्राणी जीवित नहीं रह सकते । दस हजार फुट ऊँचे पहाड़ों पर चढ़ते ही ऑक्सीजन की कमी अनुभव होने लगती है और साँस लेने में कठिनाई पड़ती है । बीस हजार फुट ऊँचे पर्वत शिखर पर तो बिना ऑक्सीजन की पेटी साथ लिए साँस ले सकना और जीवित रह सकना ही सम्भव न रहेगा ।

पृथ्वी का वायुमण्डल कई पर्तों में बाँटा जा सकता है । पहली पर्त समुद्र तल से लेकर ८ मील (४२ हजार फुट) ऊँचाई का है, पृथ्वी का मौसम इसी में विनिर्मित होता है । इसे ट्रोपोस्फीयर कहते हैं ।

इस पतली पर्त में जितनी अधिक सामर्थ्य और सम्पदा भरी पड़ी है ऊपर की पर्त में—उसकी तुलना में नगण्य जितना वैभव है, यद्यपि उनका क्षेत्र विस्तार अत्यधिक है । निचली पर्त में ही जीवधारी साँस लेते हैं, पेड़-पौधे जीवन प्राप्त करते हैं, वर्षा-बादलों की विशेषता उसी में है । महत्त्वपूर्ण गैस सम्पदा इसी क्षेत्र में है । रेडियो संचार, दूरदर्शन, विद्युत-प्रवाह एवं अन्यान्य अति महत्त्वपूर्ण अन्तरिक्षीय शक्तियों का बाहुल्य इसी में है । वह प्राणियों के साथ घुली रहने वाली यह पर्त इस संसार में जीवन संचार करती है और समस्त प्रकार की समृद्धि, सुन्दरता का अभिवर्धन करती है । हर दृष्टि से पृथ्वी के लिए उस पर निवास करने वालों के लिए निचली पर्त इतनी अधिक उपयोगी है कि अन्य तीनों मिलकर भी उतनी नहीं बैठतीं ।

हवा की दूसरी पर्त ८ मील ऊँचाई से लेकर ६० मील ऊँचाई तक फैली हुई है । इसमें १२ से २१ मील की परिधि में ओजोन गैस की प्रचुर मात्रा है । पृथ्वी की निचली पर्त पर पायी जाने वाली ऑक्सीजन और सूर्य की अल्ट्रावायलेट किरणों के टकराव से ओजोन बनती है । यह ओजोन सूर्य को प्रचण्ड ताप को अपने में सोख लेती है और धरती पर उतनी ही मात्रा आने देती है जितनी कि आवश्यक है । यदि यह ओजोन आवरण हमारे इर्द-गिर्द न होता तो सूर्य की सीधी किरणें धरती की समस्त जीवन सम्पदा को कब का भूनकर रख देतीं । यह गर्मी जब घटती-बढ़ती है तो उसका प्रभाव पृथ्वी के मौसम पर भी पड़ता है । स्ट्रेटोस्फीयर आवरण में नीचे और ऊपर के हिस्से में तापमान की दृष्टि से असाधारण अन्तर पाया जाता है । ओजोन पर्त की निचली

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

तह शून्य से ६७ डिग्री फारेनहाइट नीचे रहती है जबकि उसकी ऊपरी पर्त शून्य से १७० डिग्री फारेनहाइट ऊपर तक चली जाती है । इस पर्त में चलने वाली हवाएँ प्रायः २०० मील प्रति घण्टे की चाल से चलती हैं । कभी-कभी वे ५० मील नीचे के क्षेत्र में भी उतर आती हैं ।

६० मील से लेकर १२० मील तक ऊपर का क्षेत्र आइनोस्फीयर कहलाता है । इस आवरण में जब सूर्य किरणें प्रवेश करती हैं तो ऑक्सीजन तथा नाइट्रोजन के परमाणु उनके प्रहार से टूट-टूटकर बिखरने लगते हैं और विद्युत शक्ति सम्पन्न अणुओं का रूप धारण कर लेते हैं । इन्हें 'चार्ज्ड एटम अथवा मोलेक्यूल' कहते हैं । यों यह प्रक्रिया ३० मील ऊँचाई से भी किसी कदर आरम्भ हो जाती है पर अन्त उसका १२० मील पर ही जाकर होता है । यह पर्त रेडियो संचार की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है । रेडियो ध्वनि तरंगें जब अनन्त आकाश में फैलती हैं तो यह 'चार्ज्ड एटम्स' ही उन्हें रोक देते हैं और डरा धमका कर वापस लौटा देते हैं । यही कारण है कि हमारे रेडियो सन्देश पृथ्वी की निचली पर्त में घूमते रहते हैं और हम उन्हें सुन सकते हैं । यदि यह पहरेदार पर्त न होती तो हमारे प्रसारण अनन्त अन्तरिक्ष में खो जाते और हम उन्हें पकड़ या सुन न सकते ।

आइनोस्फीयर पर्त के ऊपर भी यों कहने भर को हवा मौजूद है पर उसका कोई उपयोग नहीं । उसमें अणु-परमाणु भर यहाँ-वहाँ उड़ते-फिरते हैं । इसे एक्सोफीयर कहते हैं । अनन्त अन्तरिक्ष यहीं से आरम्भ होता है ।

इन ऊपर की पर्तों के लिए हम उनके विस्तार के कारण कृतज्ञ नहीं है वरन् इसलिए हैं कि वे छतरी की छाया करके सूर्य की प्रचण्ड ऊर्जा से हमारी पृथ्वी को बचाती हैं और आक्रमणकारी उल्काओं को जलाकर भस्म कर देती हैं । रचनात्मक प्रत्यक्ष अनुदान न सही, संरक्षण एवं सुरक्षात्मक सही । कुछ उपकार वे ऊपरी पर्तें करती ही हैं । उस सीमा तक भूतल के निवासियों को उनका भी अभारी रहना पड़ता है । यदि यह दो विशेषताएँ भी न होतीं तो उन अत्यधिक ठण्डे अत्यधिक गरम और साँस लेने में अयोग्य सुविस्तृत क्षेत्र की ओर अपना ध्यान भी नहीं जाता और उनकी चर्चा करने की भी किसी को फुरसत न होती भले ही वे पर्तें अपनी ऊँचाई, क्षेत्र विस्तृतता पर गर्व करतीं हुईं अपने घर में दबी बैठी रहतीं ।

जन-जीवन से दूर रहने वाले अपने को असाधारणता के वैभव से सुसज्जित करने वाले कौतुक कौतूहल के पात्र चमत्कारी समझ जा सकते हैं पर उन्हें लोकश्रद्धा से सदा वंचित ही रहना पड़ता इसके बिना इनका बड़प्पन नितांत निरर्थक एवं भारभूत बनकर ही रह जाता है । हवा की निचली पर्त की तरह हम लोकोपयोगी जीवन 'जीयें । जन-सम्पर्क एवं जनसेवा की नीति अपनायें तो हम सम्मानास्पद भी हो सकते हैं और महामानव भी । खजूर की तरह निरुपयोगी ऊँचाई किस काम की, हवा की ऊँची पर्तें सेवा और सहयोग के आधार पर मिल सकने वाले गौरव को कहाँ प्राप्त कर पाती हैं ।

अन्तरिक्ष एक सूक्ष्म शक्ति-प्रवाह

एक बार महात्मा चित्र ने यज्ञ करने की इच्छा की । उन्होंने अरुण के पुत्र महर्षि उद्दालक को प्रमुख ऋत्विक बनाया, परन्तु उद्दालक मुनि ने स्वयं उपस्थित न होकर अपने पुत्र श्वेतकेतु को भेज दिया । श्वेतकेतु यज्ञाचार्य के उच्च-पद पर जा बैठे । इससे महात्मा चित्र को आश्चर्य हुआ । उन्होंने पांडित्य की परीक्षा के तौर पर प्रश्न किया—

संवृत लोके यस्मित्राधास्यस्यहो बोचदहवा लोके यास्यसीति ।
स होवाच नाहमेतद्वेद हन्ताचार्य पृच्छानीति ।

—कौष तकि ब्राह्मणोपनिषद् ॥ १॥

हे श्वेतकेतु ! क्या इस लोक में कोई आवरण वाला ऐसा स्थान है, जहाँ मुझे स्थित करोगे अथवा उससे भिन्न किसी आवरण रहित अद्‌भुत स्थान में मुझे रखोगे ।

श्वेतकेतु उस प्रश्न का उत्तर न दे सके । महर्षि उद्दालक को भी उसका पता न था तब वे स्वयं महर्षि चित्र के सम्मुख उपस्थित हुए और उक्त प्रश्न का रहस्य जानना चाहा । महर्षि चित्र ने बताया कि—"चन्द्रमा के नाम से जो प्रसिद्ध है वही स्वर्ग-लोक का द्वार है । निष्काम भावना वाला पुरुष वहाँ पहुँचकर लोक-सेवा की इच्छा से पृथ्वी पर भी लौट सकता है और ब्रह्मलोक को भी जा सकता है ।·····जो परमेश्वर की उपासना करता है, वह देव यान मार्ग द्वारा प्रथम अग्नि-लोक में पहुँचता है फिर वायु-लोक में, वहाँ से सूर्य-लोक, वरुण और इन्द्र-लोक को गमन करता है । इन्द्र-लोक से प्रजापति लोक और वहाँ से ब्रह्म-लोक को पहुँचता है । इस यात्रा-पथ पर अनेक आश्चर्यजनक संस्थान हैं, वहाँ पहुँचकर जीवात्मा को विचित्र अनुभूतियाँ होती हैं ।

महाभारत में भी इसी प्रकार का एक कथन पितामह भीष्म का है, उन्होंने दुर्योधन को बुलाकर कहा था—"दक्षिणायन हुए सूर्य के समय यदि मैं प्राण त्याग करता हूँ तो निश्चय ही, मेरी दुर्गति होगी इसलिए तब तक मैं अपने प्राणों का त्याग नहीं करूँगा ।"

इन दोनों उपाख्यानों से एक बात निश्चित रूप से मालूम होती है कि पृथ्वी और अन्य लोकों को मिलाने वाली कुछ अदृश्य शक्तियों की सूक्ष्म धाराएँ हैं, जो जीव की ऊर्ध्व या अधोगामी लोकों तक पहुँचाने में समर्थ हैं । वरुण, इन्द्र, अग्नि, आदि तत्वों की विशिष्टता और बहुलता वाली यह शक्ति धाराएँ पृथ्वी के समीप भी हो सकती हैं और किसी ऐसे स्थान पर भी जहाँ पृथ्वी निर्धारित समय पर घूमते-घूमते पहुँचती हो और उस शक्ति धाराओं के समीप हो जाती हो पर एक बात यह निश्चित है कि यह शक्ति धाराएँ

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भू-गुरुत्वाकर्षण (ग्रैविटेशन) नहीं हो सकती, क्योंकि यदि ऐसा होता तो जिन घटनाओं द्वारा उक्त शक्ति-पथों को निश्चिन्तता अगली पंक्तियों में प्रमाणित कर रहे हैं, वैसी घटनाएँ कहीं भी किसी भी स्थान में हो सकती थीं ।

विज्ञान यह मानने लगा है कि आकाश में कुछ विशिष्ट प्रकार के नक्षत्र ऐसे हैं, जो कुछ एक ही प्रकार की किरणें या ऊर्जा प्रवाहित करते हैं और उनकी शक्ति एवं प्रचण्डता इतनी तीव्र होती है कि वे सृष्टि के किसी भी स्थान में व्यापक हलचल उत्पन्न करती रहती हैं । १९६२ के रॉकिट अभ्यास के समय यह पाया गया कि सूर्य से बहुत दूर हमारी आकाश-गंगा में ही एक तारा है जो वर्तमान सौर एक्स विकिरण की अपेक्षा दस लाख गुनी तीव्र रफ्तार से एक्स-विकिरण कर रहा है । यह तारा पृथ्वी से १००० प्रकाश वर्ष दूर है और इसका नाम 'स्को एक्स वन' रखा गया है ।

तात्पर्य यह कि अब तक की यह मान्यता कि पृथ्वी के जलवायु में केवल सूर्य का ही हस्तक्षेप है, गलत है । एक्स-विकिरण के ही तीस तारे छः वर्षों में ढूँढ़े गए हैं, अभी अन्य महत्त्वपूर्ण किरणों के तारे जो अपना विशिष्ट प्रभाव रखते हैं, अनन्त आकाश में हैं और उनकी जानकारी वैज्ञानिकों को नहीं है पर कुछ घटनाएँ अवश्य सामने आई हैं, जिनसे भारतीय दर्शन की उक्त मान्यता सत्य सिद्ध होती है कि आकाश में सूक्ष्म प्रवाह हैं अवश्य जो लौकिक जीवन में ही नहीं पारलौकिक जीवन को भी प्रभावित करते हैं ।

५ दिसम्बर, १९४५ को ५ टी. बी. एम. बम वर्षक हवाई जहाज हवाई अड्डे से प्रशिक्षण उड़ान पर रवाना हुए । उन्हें पहले पूर्व की ओर जाना था, फिर उत्तर की ओर, अन्त में दक्षिण-पूर्व होकर लौटना था । सब वायुयान पेट्रोल, ईंधन, दिशा निर्देशक यन्त्रों और संचार साधनों से पूरी तरह सुसज्जित थे । उड़ाकों में कोई नया नहीं था, सब पुराने योग्य और अनुभवी उड़ाके । किसी प्रकार की घटना की रत्ती भर भी सम्भावना नहीं थी ।

कन्ट्रोल टावर के निर्देश पर पहला जहाज जिसे स्क्वाड्रन लीडर चला रहे थे, उड़ा उसके ५ मिनट के अन्तर से शेष चार आकाश में गड़गड़ाने लगे । प्रथम वायुयान में दो व्यक्ति शेष चारों में तीन-तीन व्यक्ति थे । सब जहाज मजे में उड़ते गए । रेडियो सन्देश मिला हम २०० मील प्रति घण्टा की रफ्तार से ठीक तरह उड़ रहे हैं । अब हम अटलांटिक महासागर के पूर्वी किनारे की ओर बढ़ रहे हैं ।

दोपहर ढल चुकी थी । तीन बजकर पैंतालीस मिनट हुए थे कि एकाएक खतरे का संकेत मिला । जहाजों को उतरने का सन्देश देने की तैयारी की जाने लगी पर तभी स्क्वाड्रन लीडर की आवाज सुनाई दी—हम लोग एकाएक कहाँ आ गए, कुछ पता नहीं चल रहा, यन्त्र ठीक हैं पर जब नीचे की ओर देखते हैं तो न समुद्र है न कहीं जमीन । पूछा गया—नक्शा देखकर अपना ग्रिड रिफरेन्स (स्थान का पता) दो-तो उत्तर मिला—"यहाँ भौगोलिक स्थिति के बारे में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता ।"

यह आखिरी शब्द थे । इसके बाद जहाज कहाँ गए आज तक किसी को पता नहीं चल पाया । चलते-चलते अनुमानित सन्देश मिला था, उत्तर-पूर्वी किनारे से कोई २२५ मील दूर ····। उसी के आधार पर १३ कर्मचारियों और अच्छे से अच्छे यन्त्रों से सुसज्जित मार्टिन हवाई जहाज को खोज के लिए भेजा गया । ५ मिनट तक उसने अपने उड़ने की खबर दी पर उसके बाद ही उधर से भी कोई आवाज आना बन्द हो गई । रात भर समुद्र के रक्षक जहाज़ों ने उधर निगाह रखी । प्रातःकाल होते ही २१ जहाज समुद्र में दौड़ाये गए । ३०० जहाज आकाश का चप्पा-चप्पा छानने लगे । १२ खोजी दल जमीन में खोज करते रहे । दिन भर खोज चलती रही पर न तो समुद्र तल पर एक बूँद तेल का निशान मिला न जमीन पर जहाज का एक इंच टुकड़ा । किसी के शव मिले न कोई पुर्जे । मार्टिन जहाज तो समुद्र तल पर भी आराम से उतर सकता था । उसका सन्देश प्रसारक यन्त्र इतना जबर्दस्त था कि उससे दूसरे देशों को भी सन्देश भेजे जा सकते थे पर उसका भी कहीं कोई सुराग न मिला ।

नौसैनिक अधिकारियों ने बहुत खोज की पर वे किसी कारण का पता न लगा सके । उन्होंने रिपोर्ट प्रकाशित करते हुए कहा—"यह सब क्या हुआ हम इसकी कल्पना तक नहीं कर सकते ।" इस स्थान का नाम 'प्वाइन्ट ऑफ नो रिटर्न' रखा गया । वहाँ जो भी गया आज तक नहीं लौट पाया ।

हमने विज्ञान में इतनी उन्नति की है कि चन्द्र और मंगल ग्रहों तक पहुँच रहे हैं । हमारा भूगोल इतना समृद्ध हो चुका है कि ध्रुवों तक के बारे में अच्छी तरह जानने लगे हैं । ऐसी योजना बनाई जा रही है कि समुद्र के भीतर घुसकर धरती को छेद दिया जाय ताकि उत्तर और दक्षिण की दूरी न्यूनतम रह जाय पर उन पारलौकिक तथ्यों का पता लगाने में हमारी बुद्धि बिल्कुल काम नहीं करती जो इस तरह की अविज्ञात घटनाएँ घटित किया करते हैं ।

हमारी पृथ्वी संसार के शून्य-महाचक्र में कहाँ घूम रही है, कहाँ से कैसा विकिरण किस समय हो रहा है, यह रहस्य सुलझने को नहीं आ रहे हैं । बड़े-बड़े भौतिक उपकरण और मानवीय बुद्धि कौशल भी इस तरह के अज्ञात कारणों का पता लगाने में असफल हैं, घटनाएँ ज्यों की त्यों होती रहती हैं ।

इस घटना के ठीक तीन वर्ष बाद ही २८ जनवरी, १९४८ को एक चार इंजनों वाला ब्रिटिश जहाज 'स्टार-टाइगर' किंग्स्टन जा रहा था । उसका सम्बन्ध बारम्पुड़ा हवाई अड्डे से था । हवाई जहाज में कर्मचारियों सहित २६ यात्री सवार थे । जहाज से खबर मिली मौसम

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

साफ है हम ठीक तरह से उड़ रहे हैं, इसके बाद जैसे ही वायुयान उस प्वाइन्ट के स्पर्श में आया, न जाने कहाँ लुप्त हो गया । समुद्र में कोई निशान नहीं, धरती का कहीं मुख चौड़ा न हुआ । क्या उसे फिर आकाश निगल गया इसका आज तक कुछ पता नहीं चल पाया ।

'स्टार-टाइगर' की तरह एक दिन 'एरियल' ने उड़ान भरी । कैप्टन जे. सी. मैक्फी चालक थे, उन्हें बारम्पुड़ा से जमैका जाना था । फोर्टलैडरले (फ्लोरिडा) के निकट वह स्थान आता है, जहाँ की उड़ान काफी विचित्र होती है । वहाँ एक छोटा तिकोना चक्कर काटकर बढ़ना होता है । एरियल की तेल टंकियों में दस घण्टे तक उड़ने के लिए पर्याप्त तेल था, हवाई अड्डा छोड़ने के पौन घण्टा बाद कैप्टन मैक्फी ने खबर दी जमैका ठीक समय पर पहुँच रहे हैं । इसके बाद न कोई आवाज ही आयी और न यही पता चला कि एरियल कहाँ स्वाहा हो गया ।

यह तीनों घटनाएँ एक से एक भयंकर घटित हुईं पर आज तक इस बारे में सही तथ्यों का पता नहीं लगाया जा सका । न वहाँ से कोई संकेत मिले और न ही उस रहस्य का पता लगाया जा सका कि उस स्थान पर पहुँच कर वायुयानों का क्या हो जाता है । वैज्ञानिकों का अनुमान है कि सम्भवतः उस स्थान पर किसी ग्रह का इतना तेज विकिरण होता हो कि जहाज जलकर गैस बन जाते हैं । उस स्थान पर यदि मनुष्य सकुशल रह सके तो अनुमान है कि पृथ्वी और आकाश के अनेक रहस्यों का पता चले ।

पृथ्वी के अक्ष के सम्बन्ध में नई जानकारियाँ मिल सकती हैं, क्योंकि उस बिन्दु पर पहुँचते ही जमीन दिखाई देना बन्द हो जाती है, एक अनन्त गहराई रह जाती है । यह भी सम्भावना है कि वहाँ किसी ग्रह का अति प्रखर गुरुत्वाकर्षण हो जो वायुयानों को अपनी ओर खींच लेता हो । ऐसा भी सम्भव है कि किसी ग्रह से वहाँ विद्युत धाराएँ प्रवाहित होती हों, जो जहाजों को चुम्बक बनाकर किसी शक्तिशाली ग्रह या क्षुद्र ग्रह की ओर ढकेल देती हों ।

अनुमानों में कहाँ कितनी सत्यता है, कहा नहीं जा सकता पर यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि मानवीय विधान की अपेक्षा ईश्वरीय विधान अधिक शक्तिशाली है । वहाँ न मनुष्य की भौतिक सामग्री साथ देती है, न बुद्धि-कौशल, न तकनीक काम देती है न साइन्स । उसे जानने के लिए तो अपने जीवन के दृष्टिकोण को ही बदलना पड़ता है । अपनी तुच्छता स्वीकार करनी पड़ती है और महाकाल की महाशक्तियों पर विश्वास करना पड़ता है, जब इस तरह की ज्ञान-बुद्धि जाग्रत होती है तो मनुष्य (जीवात्मा) के कल्याण का मार्ग भी निकलने लगता है ।

प्राणियों के पोषण और रक्षण में रत मरुत देवता

३३ देवताओं और पंच तत्वों में वायु की बड़ी प्रतिष्ठा की गई है । प्राणवायु मरुद्गण, पवमान सोम के रूप में जिस जीवन तत्व की प्रार्थना वेद-उपनिषदों में की गई है, वह हवा के ही विभिन्न रूप हैं । ४९ गैसें ४९ मरुद्गण ही हैं, जो भिन्न-भिन्न स्थानों पर भिन्न-भिन्न प्रकृति के पदार्थों से संयुक्त होकर विविधतापूर्ण संसार बनाते हैं । यदि मरुद्गण न होते तो अनेक तत्वों का सामंजस्य न हो पाता और पृथ्वी पर तब जीवन का आविर्भाव पोषण और रक्षण भी नहीं हो सकता था ।

वायु को यदि गैसों का ही पुंजीभूत स्वरूप कहें तो भी वह स्थूल पदार्थ (धातुएँ, खनिज, लवण) और सूक्ष्म शक्तियों (विद्युत, ताप और प्रकाश कणों) का ही मिश्रित रूप होना चाहिए । इस रूप में भी उनसे संसार की जितनी सेवा हो रही है, उसे आज वैज्ञानिक भी मानने लगे हैं जबकि उनकी जानकारियाँ सीमित प्रयोगों पर ही आधारित हैं ।

जिस प्रकार आजकल मौसम-विशेषज्ञ गुब्बारे और सर्वे-प्रक्षेपण यन्त्र छोड़कर वायुमण्डल और मौसम का अध्ययन करते हैं उसी प्रकार महर्षि स्यूमररश्मि भार्गव ने बहुत काल तक मरुतः देवता का अध्ययन किया । उस अध्ययन से उन्होंने जो सूक्ष्म जानकारियाँ उपलब्ध कीं, उनका वर्णन उन्होंने ऋग्वेद म. १० म. ६ के ७७-७८ सूक्तों में किया है । लिखा है—

अभ्रपुषो न वाचा प्रुषा वसु हविष्मन्तो न यज्ञा विजानुवः ।

स्तुतियों द्वारा प्रसन्न हुए मरुद्गण मेघ से जलबिन्दु रूप वैभव की वृष्टि करते हैं । वही हवि सम्पन्न यज्ञ के समान विश्व के रचयिता हैं—

प्रये दिवः पृथिव्या न बर्हणात्मना रिरिच्रे अभ्रान्न सूर्यः ।
पाजवस्वन्तो न वीराः पनस्यवोरिशादसो मर्या अभिद्यवः ॥
युष्माकं बुध्ने अपां न यामनि विद्युर्यति न महीश्रथर्यति ।
विश्वप्सुर्यज्ञो अर्वागयं सु वः प्रयस्वन्तो न सन्नाच आगत ॥

—ऋग्वेद १०/६/७७-३,४

अर्थात्—पृथ्वी और स्वर्ग में यह मरुद्गण स्वयं प्रवृद्ध हुए हैं सूर्य के मेघ से बाहर निकलने के समान ही मरुद्गण प्रकट हुए हैं । यह वीर पुरुषों के समान प्रशंसा की कामना करते हैं, शत्रुओं का संहार करने वाले मनुष्यों के समान तेजस्वी हैं । हे मरुद्गण ! जब तुम पृथ्वी पर वृष्टि करते हो तब पृथ्वी न तो व्याकुल होती है न बलहीन होती है ।

विलक्षण-सी लगने वाली इन ऋचाओं को जब विज्ञान की कसौटी पर कसते हैं तो पता चलता है कि वायु के सम्बन्ध में ऋषियों की जानकारी कितनी आधुनिक थी । अपने दृष्टिकोण को थोड़ा व्यापक बनायें तो पता चलेगा कि हमारे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आस-पास जो हवा पूर्व से पश्चिम, पश्चिम से पूर्व, उत्तर से दक्षिण, दक्षिण से उत्तर भागती दिखाई देती है, वह केवल भ्रम है । हम रेलगाड़ी पर बैठे होते हैं तो लगता है कि गाड़ी स्थिर है और रेलवे लाइन के किनारे खड़े हुए पेड़-पौधे और जमीन चल रही है । उसी प्रकार हवा की कोई दिशा नहीं है, वह तो एक गोलाकार लिफाफा या समुद्र जैसा है जिसने पृथ्वी के चारों ओर घेरा डाल रखा है ।

उसकी उत्पत्ति के सूक्ष्म रहस्यों की खोज विज्ञान अभी तक नहीं कर सका । विज्ञान की आधुनिक जानकारी पृथ्वी से १२० मील ऊँचाई तक की है । इससे ऊपर के क्षेत्र को यद्यपि 'एक्सोस्फियर' नाम दे दिया गया है पर वैज्ञानिक उसके बारे में इतना ही जानते हैं कि वहाँ उसके अणु-परमाणुओं की संख्या बहुत ही कम है । यह क्षेत्र बाद में अनन्त आकाश तक चला जाता है । यहाँ वायु के स्वयं प्रवृद्ध होने की बात यों सत्य होती है कि आकाश में स्थित अनेक प्रकार के ऊर्जा कण यहाँ एकत्रित होते हैं । ज्ञात नहीं उनकी किस क्रिया से वायु का प्राकट्य होता है, पर हमारी मान्यता को समर्थन अवश्य मिल जाता है कि आकाश से ही वायु की उत्पत्ति है । यह आकाश कोई स्वतन्त्र वस्तु नहीं, केवल मात्र आकाशीय पिण्डों का सूक्ष्म विकिरण मात्र है ।

इस १२० मील के नीचे ६० मील तक ६० मील की पट्टी मनुष्य जीवन की सुरक्षा का सबसे बड़ा कवच और रहस्य है । इसे वैज्ञानिक भाषा में 'आइनोस्फियर' कहते हैं । 'आइन' कहते हैं विद्युतकणों को और 'आइनोस्फियर' को विद्युतीकरण कहते हैं । यह पट्टी मनुष्य-जीवन की सुरक्षा पट्टी है । यदि यह न होती तो आकाश से होने वाली तत्व वर्षा, विकिरण और उल्कापात का प्रभाव सीधे पृथ्वी पर पड़ता और उस मार को झेलना किसी भी प्राणी के लिए सम्भव न होता ।

यह वह क्षेत्र है जहाँ रासायनिक प्रक्रियाएँ बड़ी तेजी से चलती रहती हैं । सूर्य की किरणें इस क्षेत्र में प्रवेश करती हैं तो ऑक्सीजन और नाइट्रोजन गैस के परमाणु तेजी से नाचने लगते हैं । इस उछल-कूद में वे एक-दूसरे से टकराते हैं और इसी कारण उनमें विद्युत आवेश आ जाता है । इसे एक प्रकार से सीधे वायु और प्राणशक्ति का सांघातिक सम्मिश्रण कहना चाहिए । वायु यहाँ से प्राणवायु में परिवर्तित होकर एक ओर मनुष्य की सुरक्षा करती है और दूसरी ओर प्राणियों के विकास की सम्भावनाएँ पैदा करती है । इसी बात को महर्षि स्यूमरश्मिभार्गव ने यों कहा है—

प्रयद्वहध्वे मरुतः पराकाद्यूयं महः संवरणस्य वस्वः ।
विदानासो वसवो राध्यस्याराच्चिद् द्वेषः सनुतर्युयोत ॥

—१०/६/७७-६

हे मरुद्गण ! बहुत दूर से तुम अभीष्ट धन लाते हो । द्वेष करने वाले शत्रुओं को दूर भगाते हुए तुम उनके सब धनों को प्राप्त कर लेते हो ।

यह विद्युत या प्राणशक्ति ही प्रकीर्ण होकर सारे संसार के प्राणियों के भीतर प्राणवायु रूप से गमन करती है । इसकी तेजस्विता भी असंदिग्ध है । वायुमण्डल में यह क्रिया सम्पन्न होने के कारण ही संचार व्यवस्था का इतना आधुनिक रूप सामने आया । आज रेडियो में हम अमेरिका और इंग्लैण्ड के प्रसारण सुन लेते हैं वह इस वायु पट्टी (आइनोस्फियर) के फलस्वरूप ही है । रेडियो स्टेशनों से होने वाले प्रसारण यहीं आकर टकराते हैं और फिर सारी पृथ्वी में फैल जाते हैं । तब मरुद्गणों को प्राप्त कर लेने से भारतीय ऋषि बिना किसी यन्त्र के संसार के किसी भी कोने में होने वाली हलचल को इसी कारण देख-सुन सकते थे । आज की अपेक्षा उन्हें मौसम का ज्ञान बहुत पहले हो जाता था, क्योंकि यह सब मानसिक प्रक्रिया से सम्पन्न होता था ।

जल देवता का वर्णन करते हुए हमने एक स्थान पर लिखा था कि उनमें सचेतन क्रियाशीलता होने का प्रमाण यह है कि जल प्रकृति के परिवर्तनों के साथ स्थूयं के परिवर्तन के लिए उतने बाध्य नहीं, जितने दूसरे-स्थल पदार्थ ।

इस रहस्य को समझना हो, तो हमें आइनोस्फियर की नीचे वाली वायु पट्टी का अध्ययन करना होगा । इसका प्रारम्भ ओजोन गैस से होता है, इस पट्टी में आइनोस्फियर की विद्युत और अल्ट्रा वायोलेट किरणों के प्रभाव के कारण तापशक्ति इतनी बढ़ जाती है कि यदि वह पृथ्वी तक सीधी चली आने दी जाती तो सारी पृथ्वी आग के एक गोले के रूप में धधक रही होती । जिस प्रकार बिल्ली और बन्दर चलते हुए, ऊपर-नीचे चढ़ते-उतरते अपने बच्चों को पेट से लगाये रहते हैं । हृदय से लगे रहने से बच्चे की सुरक्षा ही नहीं होती वरन् माता के स्नेह का आदान-प्रदान भी होता है । हमारे यहाँ मित्रों से हृदय से हृदय मिलाकर मिलने की परम्परा है । उसमें इस तरह के स्नेह के आदान-प्रदान का सिद्धान्त ही काम करता है । ठीक ऐसे ही इस स्थान पर वायुदेव का उदार हृदय मनुष्य के लिए काम करता है । वह यहाँ ऐसी प्रक्रिया उत्पन्न करते हैं जिससे मनुष्य की रक्षा होती है और पोषण के तत्व भी वायु में घुलकर हम तक पहुँचते हैं ।

शून्य डिग्री से १७० डिग्री फारेनहाइट की इस गर्मी को यह पट्टी सोख लेती है और अधिक-से-अधिक ६७ डिग्री फारेनहाइट गर्मी ही नीचे आने देती है । यह वह स्थान होता है जब वायु देवता सबसे तीव्र गति से प्रकम्पित करते हैं । इसी मण्डल के ७८ सूक्त के १, २ और ३ मन्त्रों में इस रहस्य का बड़ा सूक्ष्म विवेचन हुआ है । यहाँ वायु का वेग २०० मील प्रति घण्टा तक रहता है । वैज्ञानिकों को यह भी आश्चर्य है कि जहाँ ५० मील नीचे के क्षेत्र में वायु पूर्व से पश्चिम की ओर चलती है, वहाँ इससे ऊपर के इस क्षेत्र में वह उल्टा अर्थात् पश्चिम से पूर्व की ओर चलती है और इसका कोई रहस्य ज्ञात नहीं कि ऐसा क्यों होता है ? यह क्षेत्र १२ मील से २१ मील की ऊँचाई का माना गया

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

है और उसे 'स्ट्रेटोस्फियर' नाम दिया गया है । यहाँ मरुतदेव को वस्तुतः मनुष्य जाति की सेवा के लिए प्राकृतिक नियमों का उल्लंघन और तप करना पड़ता है । इसलिए उनकी महानता की जितनी स्तुति की जाय, कम मानी जानी चाहिए ।

देबोर्त नामक फ्रांसीसी वैज्ञानिक ने मौसम सम्बन्धी अध्ययन के समय वायु के अनेक विलक्षण गुणों का पता लगाया । उन्होंने देखा कि ८ मील की ऊँचाई के क्षेत्र में वायुमण्डल में कभी मौसम सम्बन्धी स्थिरता नहीं रहती । इसलिए इस क्षेत्र का नाम 'ट्रापोस्फियर' रखा गया है । यहाँ से ताप और शीत के घटने-बढ़ने के परिणामस्वरूप मौसम का आविर्भाव होता है, जिससे हम लोग प्रभावित होते रहते हैं ।

सबसे मुख्य शोध भारतीय योग की वह क्रिया है, जिसके द्वारा वायु में पायी जाने वाली उन समस्त अदृश्य शक्तियों का हमें लाभ मिलता है, उसे प्राणायाम कहते हैं । प्राणायाम से शरीर के दूषित मलों का शोधन होकर चित्तवृत्तियों का विकास होता है जिससे हमें मौसम का पूर्वाभास, शरीर में तेज की वृद्धि, प्राणविद्युत की प्राप्ति, दूसरों के मन की बातें जानना, अपने साथ होने वाली घटनाओं का पूर्वाभास आदि चमत्कार प्राप्त होते हैं । प्राणायाम से भीतर भरी हुई हवा शरीर में आकाश तत्व को शुद्ध करती है । उसी से सूक्ष्म ग्रहणशीलता बढ़ती है और एक समय वह आ सकता है जब हम बिना किसी यन्त्र के पृथ्वी के किसी भी भाग में होने वाली हलचल को समीप हो रही घटना की भाँति देख-सुन सकते हैं । यह सब वायु द्वारा प्राणशक्ति के सम्वर्द्धन और शारीरिक यन्त्रों के शुद्धीकरण का परिणाम होता है । उसके लिए भारतीय योगियों ने अनेक तरह की प्राणायाम-विधियाँ ढूँढ़ निकाली हैं । उसका अपना एक स्वतन्त्र इतिहास ही बन गया है । यह विद्या प्राणविद्या के नाम से विख्यात है । भारतवर्ष के अतिरिक्त तिब्बत और जापान के लोग भी इसे जानते और लाभ उठाते हैं ।

वायु हमारे प्राण को धारण कर हम तक पहुँचाने वाला महान् तत्व है, देव है । हम उन्हें यज्ञों व आहुतियों के द्वारा शुद्ध और परिपुष्ट रखा करते थे, साथ ही प्राणायाम के अभ्यास से स्वास्थ्य ही नहीं, अनेक सूक्ष्म चमत्कार मेधा और ऋतम्भरा, प्रज्ञा आदि प्राप्त किया करते थे । जब से यह बातें भूल गए, हमारी उन्नति के द्वार बन्द हो गए । हमें मरुत देवता की कृपा प्राप्त करने के लिए यज्ञों का प्रसार, प्राणायाम की शोध और उसका अभ्यास तो करना होगा ही । धूम्रपान, यन्त्रीकरण आदि को भी रोकना होगा, जिससे मरुत देवता की कृपा का अधिक-से-अधिक लाभ ले सकें ।

शक्ति शृंखला की एक और कड़ी लेजर किरणें

शक्ति के कितने ही स्थूल स्रोत ढूँढ़ निकाले गए हैं पर वे सभी हल्के और उथले हैं । आग, भाप, तेल, रसायन एवं बिजली आदि के माध्यम से इन दिनों यांत्रिक शक्ति प्राप्त की जाती है और उससे विविध प्रयोजन पूरे किए जाते हैं । यन्त्र युग से पूर्व यह शक्ति मानवी श्रम और पशु श्रम के आधार पर प्राप्त की जाती थी । स्पष्टतः माध्यम जितने स्थूल होंगे उतनी ही उनकी क्षमता भी स्वल्प रहेगी ।

आकाशस्थ अदृश्य शक्ति धाराओं को पकड़ने और प्रयुक्त करने में जितनी सफलता मिलती जा रही है उतनी ही अरिगम शक्ति करतलगत होती जा रही है । रेडियो विकिरण, ऊर्जा तथा प्रकाश कम्पनों के वर्ग की एक उच्चस्तरीय शक्ति कुछ ही दिनों पूर्व लेजर किरण के रूप में प्राप्त हुई है । इस माध्यम से एक से एक बढ़कर ऐसे आश्चर्यजनक कार्यसम्पन्न किए जा रहे हैं जो कुछ दिन पूर्व तक अन्ततः कठिन या असम्भव माने जाते थे ।

आकाशव्यापी 'लेजर' किरणें एक नये शक्ति स्रोत के रूप में मनुष्य के हाथ आयी हैं । उनका प्रयोग करके असम्भव जैसे कार्यों को सम्भव बनाने की बात सोची जा रही है । अणुबमों के विस्फोट और उद्जन शक्ति के उत्पादन में अभी प्रायः १० लाख डिग्री तापमान उत्पन्न करने की जरूरत पड़ती है । यह बहुत बड़ा और बहुत कठिन चरण है । इसके पूरा किए बिना अभी अणु विस्फोट में उत्पन्न शक्ति का प्रयोग नहीं किया जा सकता । पर कुछ ही दिनों में लेजर किरणों के प्रयोग से यह कार्य सरल बना लिया जायेगा ।

अभी तक लेजर किरणों का उत्पादन बाहरी शक्ति तथा किरणों की शोध द्वारा किया जाता था पर अब उन्हें रासायनिक क्रियाओं द्वारा उत्पन्न किया जा सकेगा और उनकी क्षमता को भी बढ़ाया जा सकेगा । कारनेल विश्वविद्यालय न्यूयार्क में भारी उद्जन गैस, फ्लोरिन गैस और कार्बन डाइ ऑक्साइड गैस के सम्मिश्रण से लेजर किरणें उत्पन्न करने में सफलता प्राप्त कर ली है ।

लेजर किरणों को इन दिनों कई उपयोगी कार्यों में प्रयोग किया जा रहा है । भूगर्भ की गहरी खुदाई, टांका लगाना, बहुत बारीक नाप जोख, जैसे कार्य इससे लिए जाते हैं । हीरा संसार का सबसे कठोर पदार्थ है, लेकिन लेजर किरणों द्वारा उसे अमरूद की तरह तराश कर फेंक दिया जाता है । सुरंगों की खुदाई में उनके द्वारा बहुत महत्त्वपूर्ण आवश्यकताएँ पूरी की गई हैं । इसका प्रभाव इतना सही, सूक्ष्म और सधा हुआ होता है कि बाल में भी छेद किया जा सके । संचार, नौकानयन, खोजखबर और अन्तरिक्ष यात्रा से लेकर नपे तुले बहुत सावधान वाले खतरनाक ऑपरेशनों में इन किरणों का

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उपयोग किया जा रहा है । ग्रहों की दूरी नापने के सबसे सही पैमाने के रूप में उन्हीं का प्रयोग किया जा रहा है । अगले दिनों वे सम्भवतः अन्धों के लिए आँखों का काम दे सकें लेजर किरणों से प्रभावित एक छड़ी हाथ में लेकर यह अन्धे लोग चला करेंगे और वह जादू की छड़ी आस-पास के वातावरण की पूरी जानकारी उन्हें दे दिया करेगी फिर उन्हें नेत्रहीनता के कारण उत्पन्न कठिनाइयों में से अधिकांश का हल मिल जायेगा ।

लेजर किरणों का मुख्य कार्य है प्रकाश की शक्ति को असंख्य गुना कर देना । उसके प्रयोग से सूर्य के धरातल पर जितनी असह्य चमक पृथ्वी तल पर उत्पन्न की जा सकती है भले ही उससे धरती भाप बनकर अन्तरिक्ष में ही विलीन क्यों न हो जाय ।

यह भौतिक जगत में संव्याप्त एक भौतिक शक्ति किरण की बात हुई । ऐसी अनेक धाराएँ आकाश में भरी पड़ी हैं और वैज्ञानिक उनकी सम्भावनाओं तथा उपलब्धियों की पूर्व कल्पना करके यह आशा करते हैं कि अगली शताब्दी में मनुष्य के पास इतनी असीम शक्ति होगी कि वह प्रकृति के साधारण क्रम प्रवाह को इच्छानुसार बदल कर पलट सके ।

धरती और सूरज जरा-जीर्ण हो चुके अब मरने ही वाले हैं

परिवर्तन प्रकृति का अटल नियम है । कोई वस्तु एक स्थिति में नहीं रह सकती । देर-सवेरे में उसका परिवर्तन होना निश्चित है । प्राणी जन्म लेते हैं, बढ़ते हैं और अन्त में मृत्यु के ग्रास बन जाते हैं । सुदृढ़ इमारतें धराशायी होती हैं । विशाल वृक्ष ईंधन मात्र शेष रह जाते हैं । एक समय के सर्वशक्ति सम्पन्न व्यक्ति दूसरे समय धूलि चाटते और विस्मृति के गर्त में तिरोहित होते देखे जाते हैं ।

अजर-अमर जैसी लगने वाली सत्ताएँ भी बदलती, मरती रहती हैं । सूरज और धरती तक इस चक्की में पिसने वाले हैं । धरती को ही लें वह खण्ड प्रलय के आघातों से कई बार मरते-मरते बची है; किन्तु बकरे की माँ कब तक खैर मनायेगी । एक दिन तो अपने इस पूरे भूलोक का अस्तित्व ही महाकाल के पेट में सदा सर्वदा के लिए समा जायेगा ।

अन्तरिक्ष विज्ञानी एमिलियानी का कथन है—इन दिनों हम उष्ण युग में रह रहे हैं और तापमान बढ़ रहा है । यह तीन हजार वर्ष तक चलेगा । बढ़ी हुई गर्मी से ध्रुवों की बर्फ पिघलेगी और समुद्री बाढ़ से तटवर्ती क्षेत्रों की बुरी तरह बर्बादी होगी । इतना ही नहीं बची-खुची जमीन पर शीत प्रकोप का शिकंजा कसता चला जायेगा और उस उथल-पुथल में आज के जीवधारियों के लिए फिर प्राण संकट आ खड़ा होगा ।

मियामी विश्वविद्यालय के भू-गर्भ विज्ञानी 'सीजाके एमिलियानी' ने समुद्र तल से तथा पर्वतों के उच्च शिखरों से प्राप्त चिर प्राचीन प्राणि कंकालों की शोध करके यह निष्कर्ष निकाला है कि पृथ्वी पर प्राणियों की सृष्टि होने के समय से लेकर अब तक ७ बार खण्ड प्रलय हो चुकी है । इनमें चार शीत प्रधान और तीन उष्णता प्रधान थीं । यह दोनों ही प्रायः एक-एक लाख वर्ष की होती रही हैं । इनमें विकसित प्राणी नष्ट होते रहे हैं केवल जीवाणुओं के रूप में ही जीवन शेष रहा है और फिर सह्य तापमान होने पर नये आकार-प्रकार के प्राणी विकसित होते रहे हैं । जीवाणु हर बार अवसर के अनुरूप नये रूप में विकसित होकर पिछली प्रलय से भिन्न स्तर के बनते रहते हैं ।

पृथ्वी की आयु कितनी हो सकती है इस सन्दर्भ में कैलीफोर्निया के पुरातत्ववेत्ता जान एच. रेनाल्ड ने डकोटा राज्य के रिचार्डटन नामक स्थान में मिली एक पुरानी उल्का के आधार पर यह सिद्ध किया है कि धरती की आयु लगभग पाँच अरब वर्ष है । इसी निष्कर्ष पर संसार के अन्य भू-गर्भ वेत्ता, प्राणिशास्त्री एवं पुराविद भी पहुँचे हैं । उन्होंने अपने-अपने ढंग से जो अनुमान लगाये हैं । उनसे थोड़े बहुत अन्तर के बाद लगभग इतनी ही आयु अपनी धरती की बैठती है ।

पहले पृथ्वी दो ही गोलार्द्धों में बँटी थी । एक उत्तरी दूसरा दक्षिणी । पीछे धरती जैसे-जैसे अधिक ठण्डी होती गई और वातावरण बदलता गया समुद्रों ने करवटें लीं और धीरे-धीरे वह शक्ल बनती गई जो आजकल सामने है ।

भूगोलवेत्ता ग्राहमडिथ्ये का कथन है—धरती क्रमशः ठण्डी होती जा रही है और सूरज बूढ़ा । दोनों ही आधी उम्र पार कर चुके । अब वे उतने दिन और नहीं जी सकते जितने दिन कि जी लिए । अब वे ढलती आयु को पार करके मृत्यु के मुख में जाने की तैयारी कर रहे हैं ।

मनुष्य को भी यदि यह विश्वास हो जाय कि उसे कल नहीं तो परसों निश्चित रूप से मरना है तो उसे वे अकर्म करने की इच्छा न रहे जिनमें वह दिन-रात लगा रहता है । संसार की हर वस्तु को बदलते, मरते देखकर हम अपने अन्त का अनुमान लगा सकें और उसकी शानदार तैयारी का उपक्रम बना सकें तो कितना अच्छा हो ।

जड़ और चेतन सूर्य की समानान्तर गतिविधियाँ

आत्मा की तुलना सूर्य से की गई है जीवात्मा का स्वरूप प्रकाशबिन्दु के रूप में वर्णित किया गया है । ब्रह्मरंध्र स्थित सूर्य सदृश तेजस्वी परब्रह्म का ध्यान करने की ध्यान पद्धति प्रख्यात है । अणु का नाभिक एक छोटा सूर्य है । अणुपरिवार की तुलना सौरपरिवार से की जाती है । दोनों की रीति-नीति

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

एवं क्रिया-प्रक्रिया प्रायः एक सी हैं । जीव और ब्रह्म की सत्ता भी इसी प्रकार तद्भव-तत्सम कही गई हैं ।

सौर-मण्डल, महासूर्य और ध्रुवसूर्य की परिक्रमा करते हुए ४,३२,००० वर्ष पश्चात् उसी स्थान पर लौट कर आता है । यदि उस पुराने समय की ग्रह गणना किसी के पास सही हो तो द्वितीय आवृत्ति में भी वह ज्यों की त्यों मिलेगी । इसमें किंचित भी अन्तर न होगा । वर्ष गणना का अभी पूर्णतया सही हिसाब बन नहीं सका है । वर्ष और दिन की पूर्ण संगति न बैठने से कोई पंचांग सर्वांग पूर्ण नहीं बन सकता । जो अन्तर पड़ता है उसे सुधारने के लिए बार-बार घट बढ़ करनी पड़ती है । फिर भी वह कमी पूरी नहीं होती और जितना-जितना समय बीतता जाता है, उतना ही पूर्व निर्मित ग्रहगणित पिछड़ जाता है और नये सिरे से उसकी गणना ग्रहों की स्थिति देखकर सही करनी पड़ती है । सही खाँचा ४,३२,००० वर्ष बाद ही बैठता है । इसलिए इस अवधि को एक युग माना गया है । वर्तमान युग की गणना भी इतने ही वर्ष की इसी आधार पर कही गई है ।

जीवात्मा का चौरासी लाख योनियों में भ्रमण करना सर्वविदित है । इस भ्रमण परिचय को पूरा करने के उपरान्त जीव फिर मनुष्य योनि को प्राप्त करता है । मनुष्य को यह विशेष अवसर मिला हुआ है कि वह चाहे तो इस कुचक्र को तोड़कर अपने उद्गम केन्द्र परमात्मा में लीन-लय हो सकता है । भौतिकसूर्य प्रकृतिगत नियम बन्धनों से बँधा है पर जीव सूर्य को यह सुविधा प्राप्त है कि वह अपने पुरुषार्थ के बल पर भव-चक्र की बन्धना रज्जु से मुक्ति प्राप्त कर अपना यात्रा प्रयोजन जल्दी पूरा कर ले ।

मोटी दृष्टि से सूर्य, चन्द्रमा एवं तारक बहुत छोटे दीखते हैं पर उनका यथार्थ स्वरूप एवं विस्तार विदित होने पर आश्चर्यचकित रह जाना पड़ता है ।

मनुष्य की सत्ता और महत्ता सूर्य के समान ही असीम है । उसका वास्तविक विस्तार विश्व ब्रह्माण्ड के ही समकक्ष है । व्यक्ति का काय कलेवर सीमित हो सकता है पर उसका प्रभाव परिणाम असीम क्षेत्र को आच्छादित करता है । सम्पर्क में आने वाले प्राणी तथा पदार्थ तो प्रखर व्यक्तित्व की ऊर्जा से प्रभावित होते ही हैं । उनकी संकल्प शक्ति एवं विचारधारा आकाश में प्रवाहित होकर असीम क्षेत्र पर अपना प्रभाव डालती है । सूर्य का क्रियाकलाप भी आत्मसत्ता के सदृश ही है ।

सूर्य देखने में ही छोटा लगता है वैसे है वह बहुत बड़ा । धरती पर खड़े होकर देखें तो दिन में सूर्य और रात में चन्द्रमा दोनों ही लगभग एक सी गोलाई के लगते हैं पर इनमें अन्तर बहुत है । चन्द्रमा का व्यासमान २१६० मील है जबकि सूर्य का घेरा ८,६४,००० मील का है इस सूर्य के इर्द-गिर्द भी उसकी कई परिधियाँ हैं । दूरबीन से देखने पर सूर्य के इर्द-गिर्द पीले गुलाबी रंग का एक वलय सा दिखाई पड़ता है । १०-१५ हजार किलोमीटर की इस पट्टी को सूर्य का वर्ण मण्डल, क्रोमोस्फियर कहते हैं । लगभग १०,००० तापमान के इस क्षेत्र में कभी-कभी नुकीली ज्वालाएँ उछलती हैं इनकी ऊँचाई १०,००० किलोमीटर तक उभरती देखी गई हैं ।

सूर्य के प्रकाश का हम बहुत छोटा अंश ही देख समझ पाते हैं । अपनी पृथ्वी की ओर उसकी न्यूनतम किरणें ही आती हैं । वे बहुत अधिक मात्रा में तो अन्य दिशाओं में ही प्रवाहित होती रहती हैं । परमात्मा का एक स्वल्प सामर्थ्य अंश ही मनुष्य को, अपने भूलोक को मिला है । उसकी समग्र सत्ता जो अगणित ब्रह्माण्डों में बिखरी पड़ी है, इतनी अधिक है कि उसे ठीक प्रकार सोच सकना भी अपने लघुकाय मस्तिष्क के लिए सम्भव नहीं । फिर भी अपनी सत्ता को तो जाना समझा ही जा सकता है । आत्मस्वरूप का यदि बोध हो सके तो प्रतीत होगा कि परम चेतना की एक छोटी किरण होते हुए भी मानवी सत्ता कितनी प्रचण्ड है । इस प्रचण्डता का स्वरूप और उपयोग यदि समझा जा सके तो पुरुष से पुरुषोत्तम बनने की सम्भावना मूर्तिमान होकर सामने आये ।

धरती पर सूर्य के समान प्रकाश का एक $\frac{१}{१०}$ लाखवाँ भाग ही आता है । ६ लाख ६६ हजार, ६६६ भाग तो दूसरी दिशाओं में वह प्रकाश बिखरता है और यहाँ उसकी सीमा का हमें कुछ पता ही नहीं है । सूर्य का किरीट, कोरोना कितना विस्तृत और कितना प्रभावी है इसे जानने के लिए 'कोरोना ग्राफ' नामक यन्त्र कुछ समय पूर्व ही विनिर्मित हुआ है वह अथाह सूर्य सागर की थाह लेने का प्रयत्न कर रहा है ।

सूर्य में समय-समय पर उठती रहने वाली ज्वालाएँ अपने आप में एक आश्चर्य है । एक विशिष्ट सूर्य ज्वाला २६ जुलाई, १९४६ को देखी गई थी । यह १०-१२ मिनटों में लगभग तीन लाख मील फैल गई और कुछ सेकण्डों के लिए उसके कारण सूर्य का प्रकाश तीस गुना अधिक हो गया । वह ज्वाला फिर वापस लौटी और सूर्य में ही समा गई । १३ दिसम्बर सन् १९७२ को भी एक ऐसा ही विस्फोट हुआ जिसमें सूर्य के पृष्ठ भाग में प्रभामण्डल से निकलते हुए भीमकाय बादल दिखाई पड़े । यह गैसों का विस्फोट पृथ्वी की अपेक्षा २० से लेकर ४० गुना तक बड़ा था और उसकी गति प्रति सेकण्ड ९६० किलोमीटर थी । ऐसी ज्वालाएँ अक्सर उठती रहती हैं । सन् १९४९ में तो वे ४० बार उठी थीं । खगोल विद्या विशारदों का मत है कि सूर्य के आलोक का जो क्षेत्र है वह भी नियमित और निश्चित नहीं जब ज्वालाएँ उभरती हैं तो वह बढ़कर १०० गुना तक अधिक विस्तृत हो जाता है । सूर्य का वर्णमण्डल एक प्रकाश क्षेत्र ही नहीं चुम्बक क्षेत्र भी है । उसी में तो वह अपने सौरपरिवार के ग्रहों को बाँधे जकड़े हैं । परिवार के दूरवर्ती प्लेटों प्रभृति ग्रहों तक प्रकाश स्वल्प पहुँचता है पर चुम्बकत्व

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

वहाँ भी काम करता है और उस परिधि के ग्रह पिण्डों को पकड़े रहता है । इस प्रकार सूर्य का प्रभाव क्षेत्र बहुत बढ़ा और चूँकि सूर्य पृथ्वी की सीमा में आता है इसलिए उसका किरीट आलोक एवं चुम्बकत्व वाला क्षेत्र भी पृथ्वी का हुआ । गाय खरीदी जाती है तो उसका छोटा बच्चा और रस्सा भी साथ ही आता है, उसका मोल भाव अलग से नहीं करना पड़ता ।

सूर्य की तुलना में असीम अगणित शक्ति सम्पन्न परमात्मा की चर्चा तो कौन करे, आत्म सूर्य को भी यदि ठीक तरह समझा जा सके तो प्रतीत होगा कि भौतिक ऊर्जा तथा प्रभा बिखेरने वाला सूर्य जितना बड़ा है—जितना सशक्त है उससे आत्मा की सीमा और गरिमा किसी प्रकार कम नहीं । आत्मा जब अपने स्वरूप में अवस्थित होकर शक्ति किरणें बिखेरता है और विस्फोटक कदम उठता है तो उसका स्वरूप देखते ही बनता है । महामानव, ऋषि, देवदूत और अवतारी आत्माओं को ज्योतिर्मयी स्थिति आश्चर्यजनक लगती अवश्य है पर वह मूलतः होती हर मनुष्य में समान रूप से है । उसे जो चाहे प्रयत्नपूर्वक चाहे जितनी मात्रा में विकसित कर सकता है ।

सूर्य की तरह ही पृथ्वी का क्षेत्रफल भी निरन्तर बढ़ता हुआ अंकित किया गया है । सर्वतोमुखी प्रगति ही अन्ततः पूर्णता के रूप में परिणत होती है ।

लन्दन के न्यूकैसेल्स विश्वविद्यालय में भौतिक विज्ञान विभाग के अध्यक्ष प्रो. के. एम. क्रोर ने अपने शोध प्रबन्ध में यह सिद्ध किया है कि पृथ्वी रहस्यमय ढंग से गुब्बारे की तरह फूलती चली जा रही है । जब वह बनी थी तब उसका जो आदि रूप था उसकी अपेक्षा वह अब तक लगभग दूनी फूल चुकी है और भविष्य में उसका यह फुलाव क्रम तीव्र ही होता जाने वाला है ।

ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय के खगोल विज्ञानी इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि सौर-मण्डल का फुलाव बढ़ रहा है । इतना ही नहीं यह समस्त ब्रह्माण्ड अपना विस्तार कर रहा है उसके क्षेत्रफल में आश्चर्यजनक वृद्धि हो रही है ।

सर्वत्र विस्तार और विकास की ही हलचलें चल रही हैं फिर मनुष्य का आत्म विस्तार संकीर्ण स्वार्थपरता में सीमाबद्ध क्यों रहे ?

सतत गतिशील उस विराट् की एक झाँकी

मोटी आँखों से जब हम अपने चारों ओर नजर उठा कर देखते हैं तो जमीन, पेड़, खेत, आसमान, सूरज, तारे जैसी मोटी वस्तुएँ ही देखकर रह जाते हैं, पर जब बारीकी के साथ खोजबीन करते हैं तब पता चलता है कि हम प्रचण्ड शक्ति से भरे-पूरे एक ऐसे समुद्र में मछली की तरह रह रहे हैं जिसके एक-एक कण को अद्‌भुत और आश्चर्यजनक कहा जा सकता है ।

मिट्टी का एक ढेला छदाम से भी कम कीमत का होता है, जिसमें अणु परमाणुओं की एक अगणित संख्या रहती है, ऐसी दशा में मूल्य और महत्त्व की दृष्टि से उसकी कीमत नगण्य ही होगी । छोटे ढेले के प्रहार का परिणाम स्वल्प-सा होता है, फिर हाथ से छूने और आँख से देखने तक में न आने वाले परमाणु की प्रतिक्रिया कितनी हो सकती है, उसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती ।

यह मोटी दृष्टि हुई । शक्ति के अनन्त भाण्डागार की प्रत्येक छोटी इकाई अपने आप में इतनी महत्ता संजोये बैठी है कि दाँतों तले उँगली दबानी पड़ती है । जब एक कण का यह हाल है तो फिर इन अगणित इकाइयों के पुंज की सत्ता और महत्ता को किस प्रकार समझा और आँका जाय ।

अति लघु से अति विशाल कितना बड़ा है । इसकी गणना तो दूर, कल्पना कर सकना भी मानवी बुद्धि से बाहर की बात है । परमाणु भी अब सबसे छोटी इकाई नहीं रही । उनके भी भेद-उपभेद हैं । वह भी एक सौर-मण्डल है और इस सबसे छोटी इकाई की सूक्ष्मता के अन्त में अपना एक अलग संसार भरा और बसा पड़ा है । उसकी अद्‌भुतता विराट् ब्रह्माण्ड की विलक्षणता से कम रहस्यमय है ?

फिर विराट् कितना बड़ा है ? इसकी थोड़ी कल्पना करने के लिए पहले उस दूरी का नाप लेने के फीते का स्वरूप समझना चाहिए । प्रकाश एक सेकण्ड में एक लाख छियासी हजार मील चलता है । यह प्रकाश समस्त पृथ्वी का एक चक्कर एक सेकण्ड के सातवें हिस्से जैसे स्वल्प समय में लगा लेता है । पृथ्वी से चन्द्रमा तक पहुँचने में डेढ़ मिनट और सूर्य तक पहुँचने में आठ मिनट लगते हैं । यह है प्रकाश की चाल । इस चाल से चलते हुए एक वर्ष में प्रकाश जितनी दूरी तक पहुँच सके, वह हुआ एक प्रकाश वर्ष । खगोल भौतिकी में गणना का माप यह प्रकाश वर्ष ही है ।

ब्रह्माण्ड और पृथ्वी की तुलना करना, अपनी चिन्तन परिधि से कल्पना शक्ति से बाहर की चीज है । इसलिए उस कल्पना की तुक बिठाने के लिए सूर्य को एक मध्यवर्ती आधार मानकर चलें तो उस तुलना को करने में थोड़ी सहायता मिलेगी । यद्यपि ब्रह्माण्ड में करोड़ों सूर्य अपने ग्रह-उपग्रहों के साथ अपना-अपना सौर-मण्डल बनाकर भ्रमण करते रहते हैं फिर वे स्वयं भी किसी महाकेन्द्र की परिक्रमा में संल ते हैं तो भी अपने सौर-मण्डल के केन्द्र सूर्य का ही ऊहापोह इतना विशाल हो जाता है कि उसकी कल्पना करने से ही मानवीय बुद्धि एक प्रकार से हताश होकर स्तब्ध रह जाती है । फिर करोड़ों सूर्यों की सम्मिलित शक्ति एक विशालता की कल्पना किस तरह की जाय ?

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ज्वलनशील गैसों के पिण्ड, सूर्य का व्यास पृथ्वी से १०९ गुना बड़ा है । व्यास ८६५३८० मील, परिधि २७००००० मील और उसका क्षेत्र ३३९३००० अरब वर्गमील है । यदि वह पृथ्वी से ९ करोड़ ३० लाख मील की दूरी पर न होकर कुल १० लाख मील दूर होता तो हमें आकाश में एक मात्र सूर्य ही दिखाई देता ।

सूर्य की शक्ति का कोई पारावार नहीं । उसकी सतह का तापक्रम ६०० डिग्री सेन्टीग्रेड है तो अन्दर का अनुमानित ताप १५००००० डिग्री सेन्टीग्रेड । १२ हजार अरब टन कोयला जलाने से जितनी गर्मी पैदा हो सकती है उतनी सूर्य एक सेकण्ड में निकाल देता है । अनुमान है कि सूर्य का प्रत्येक वर्ग इंच क्षेत्र ६० अश्वों की शक्ति (हार्स पावर) के बराबर शक्ति उत्सर्जित करता है । उसके सम्पूर्ण ३३९३०००००००००००० वर्गमील क्षेत्र में शक्ति का अनुमान करना हो तो इस गुणन खण्ड को हल करना चाहिए—३३९३०००००००००००० × १७६० × ३× १२ । इतने हार्स पावर की शक्ति न होती तो यह जो इतनी विशाल पृथ्वी और विराट् सौर जगत आँखों के सम्मुख प्रस्तुत है वह अन्धकार के गर्त में बिना किसी अस्तित्व के डूबा पड़ा होता ।

इस प्रचण्ड क्षमता का अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि यदि ९३००००० मील लम्बी और ८८० गज मोटी बर्फ की सिल्ली के ऊपर उसको केन्द्रित कर दिया जाय तो सारी बर्फ एक सेकण्ड में गलकर बह निकलेगी । सूर्य के १ वर्ग इंच में जिस ऊर्जा व प्रकाश की कल्पना की गई है वह ५ लाख मोमबत्तियों के एक साथ जलाने की शक्ति के बराबर होता है । यदि यह सारी शक्ति एक साथ पृथ्वी पर फेंक दी जाती तो यहाँ की मिट्टी भी जलने लगती । जलने ही नहीं लगती, यह भी एक प्रकार का सूर्य पिण्ड हो जाती । जबकि सामान्य स्थिति में पृथ्वी को सूर्य शक्ति का २२० करोड़वाँ हिस्सा ही मिलता है । ३ अरब अबादी मनुष्यों की, १०० अरब आबादी पक्षियों की, १००० अरब आबादी अन्य जीव-जन्तुओं की और पृथ्वी पर पाये जाने वाले विशाल वनस्पति जगत तथा ऋतु संचालन का सारा कार्य उस २२० करोड़वें हिस्से जितनी शक्ति से सम्पन्न हो रहा है । पूरी शक्ति जो सौर-मण्डल के करोड़ों ग्रहों-उपग्रहों, क्षुद्र ग्रहों का नियमन करती है, प्रकाश और गर्मी देती है । अपने १९ करोड़ ९८ लाख महाशंख भार को २०० मील प्रति सेकण्ड की भयानक गति से २५ करोड़ वर्ष में पूरी होने वाली विराट् आकाश की परिक्रमा भी वह महासूर्य अपनी इसी शक्ति से पूरी करता है । उस सम्पूर्ण शक्ति और सक्रियता को क्रूता जाना सम्भव नहीं । उसे तो भावनाओं की परिधि में केवल उतारा जाना भर ही सम्भव है ।

वह तो पृथ्वी से उसकी उतनी दूरी है, जो जीव जन्तुओं को हँसने-कुदकने का अवसर दे रही है यदि यह दूरी घट जाय तो जीवन रूप हो जाय अर्थात् जो चेतना अब दिखाई दे रही है वह सूर्य के गहरे कराल अग्नि ज्वाल में समा जाय । कल्पना करें कि, कदाचित किसी तेज से तेज रफ्तार वाली रेलगाड़ी से सूर्य तक जाना सम्भव हो जाय तो वहाँ तक पहुँचते-पहुँचते एक मनुष्य को ८५-८५ वर्ष के दो जीवन धारण करने पड़ जायें इसमें मृत्यु और पुनर्जन्म के बीच की निद्रा के ५ वर्ष अभी जोड़े ही नहीं गए । ध्वनि से भी तीव्र रफ्तार वाले सुपरसोनिक जेट एवं रॉकेट्स को ही वहाँ पहुँचने तक २० वर्ष लग सकते हैं और इस बीस वर्ष में तो सारी पृथ्वी का खाका ही बदल सकता है ।

शक्ति की विशालता की, कर्तृत्व की, वैभव की थोड़ी-सी झाँकी अपने सूर्य के सम्बन्ध में ऊपर दी है । इससे भी हजारों गुने बड़े सूर्य करोड़ों की संख्या में अपने सौर-मण्डलों सहित उस ब्रह्माण्ड में घूम रहे हैं । उन सबकी गरिमा का लेखा-जोखा कैसे लिया जाय ? पर देखते हैं कि वे समस्त शक्ति केन्द्र अपने-अपने कार्य में नियमितता व्यवस्था और मर्यादा लेकर चल रहे हैं । कहीं न उद्धतता है, न उच्छृंखलता । निर्धारित कर्तव्य-कर्म को अणु से लेकर महत् तक सभी पालन कर रहे हैं । यदि ऐसा न होता तो यह इतना बड़ा ब्रह्माण्ड-व्यवसाय एक क्षण में बिखर जाता है । ग्रह-नक्षत्र आपस में टकरा जाते या शक्ति का व्यतिक्रम करके सारी ईश्वरीय व्यवस्था को नष्ट-भ्रष्ट करके रख देते ।

"खगोल भौतिकी की महत्त्वपूर्ण खोजों से यह स्पष्ट हो चला है कि ब्रह्माण्ड का निरन्तर विस्तार हो रहा है । समस्त आकाश-गंगाएँ, समस्त सौर-मण्डल और ग्रह-नक्षत्र क्रमशः अपना आकाशीय-क्षेत्र आगे बढ़ाते चले जा रहे हैं । कहा जाता है कि अरबों वर्ष पूर्व सृष्टि के अन्तराल में 'घनीभूत' पदार्थ के मध्य एक भयंकर विस्फोट हुआ था । उसी के छिटक कर ग्रह-नक्षत्र बने और वह छिटकना तब से लेकर अब तक क्रमशः आगे ही बढ़ता चढ़ता चला जा रहा है । सभी आकाश-गंगाएँ एक-दूसरे से दूर हटती जा रही हैं और यही हाल सौर-मण्डलों का है । शून्य आकाश के उन्मुक्त क्षेत्र की विशालता इतनी बड़ी है कि अभी करोड़ों-अरबों वर्षों तक यह दौड़ ऐसे ही चलती रह सकती है ।

भारतीय मनीषियों की भी यही मान्यता रही है कि सृष्टि के आरम्भ में एक मूल द्रव्य हिरण्यगर्भ था । उसी के विस्फोट से आकाश-गंगाएँ विनिर्मित हुईं । इस विस्फोट की तेजी कुछ तो धीमी हुई है, पर अभी भी उस छिटकाव की चाल बहुत तीव्र है ।

विश्व ब्रह्माण्ड के समस्त ग्रह-नक्षत्र अपनी सूत्र-संचालक आकाश-गंगाओं के साथ जुड़े हैं और आकाश-गंगाएँ महात्व हिरण्यगर्भ की उँगलियों में बँधी हुई कठपुतलियाँ भर हैं । अगणित सौर-मण्डल की भी एक-दूसरे का परिपोषण करते हुए अपना क्रिया-कलाप चला रहे हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सूर्य ही अपने ग्रहों को गुरुत्वाकर्षण में बाँधे हो और उन्हें ताप प्रकाश देता हो सो बात नहीं है, बदले में ग्रह परिवार भी अपने शासनाध्यक्ष सूर्य का विविध आधारों पर पोषण करता है । सौर-परिवार के ग्रह अपनी जगह से छिटक कर किसी अन्तरिक्ष में अपना कोई और पथ बना लें तो फिर सूर्य का सन्तुलन भी बिगड़ जायेगा और वह आज की स्थिति में न रहकर किसी चित्र-विचित्र विभीषिका में उलझा हुआ दिखाई देगा ।

सौर-परिवार का ग्रह मण्डल एवं निहारिकाएँ एक सुव्यवस्थित क्रम से सतत क्रियाशील हैं, भ्रमणशील हैं । लगता है कोई विशाल तन्त्र इस पूरे विराट् तत्व का सुसंचालन कर रहा हो । ब्रह्माण्ड की गति और विस्तार का क्रम सर्वत्र एक-सा है । हर ग्रह-नक्षत्र अपनी धुरी पर घूमता है । पृथ्वी २४ घण्टे में अपनी एक परिक्रमा पूरी करती है जबकि चन्द्रमा ३३६ घण्टे में । अर्थात् वहाँ के दिन और रात में हमारी पृथ्वी के दिन व रात से १४ गुने बड़े दिन और १४ गुनी बड़ी रात होती है । बुध की परिस्थितियाँ भिन्न हैं । अर्थात् उसका एक भाग निरन्तर सूर्य की ही ओर बना रहता है दूसरा अन्धकार में, पर अपने आप में गतिशील वह भी है । हम समझते हैं सूर्य स्थिर है, पर ऐसा नहीं वह भी १ सेकण्ड में १३ मील की गति से घूमता है, मन्दाकिनियाँ भी अपने सौर-परिवारों को लेकर किसी विराट् परिक्रमा में संलग्न हैं, अपनी "स्पाइरल" आकाश गंगा की स्वयं की गति २०० मील प्रति सेकण्ड है । इसी तरह ब्रह्माण्ड १५० मील प्रति सेकण्ड की गति से विकसित हो रहा है । यह गति हर जगह है । एक प्रकार से मानव के लिए एक शिक्षण है कि हर शक्ति को अपनी एक आचार संहिता ऐसी निर्धारित करनी चाहिए, जिससे समाज में गतिशीलता तो रहे पर किसी की सीमा, किसी के अधिकारों का अतिक्रमण न हो । हर ग्रह अपने मुखिया की परिक्रमा में लगा है । हर चन्द्रमा अपने ग्रह का, ग्रह सौर-परिवार का, सौर-मण्डल मन्दाकिनियों की परिक्रमा करते रहते का अपना कर्तव्य बखूबी निभाते देखे जा सकते हैं । मनुष्य क्यों नहीं मर्यादा में बना रह अपना कर्तव्य पूरा कर सकता है ?

ब्रह्माण्डीय चेतना की सबसे बड़ी विशेषता है—सतत विकास । जड़ समझे जाने वाले ब्रह्माण्ड में बैठे जुगनू रूपी तारे-ग्रह नक्षत्रादि अपनी-अपनी निहारिकाओं के साथ सतत और अधिक विकसित होते जा रहे हैं । फैलाव की यह सीमा अपरिमित है, अनन्त है ।

चेतना और उसके परिणामस्वरूप उत्पन्न होने वाली गति विकास की प्रक्रिया को पृथ्वी, सूर्य, चन्द्रमा से लेकर अखिल ब्रह्माण्ड में देखा जा सकता है । उदाहरण के लिए पिछले दिनों वैज्ञानिकों ने अपने अन्तरिक्ष उपकरणों और खगोलीय शोधों के आधार पर कहा कि सारा ब्रह्माण्ड निरन्तर फैलता जा रहा है । इन खगोल वैज्ञानिकों में विख्यात् नक्षत्रविद् डॉ. हबल, फ्रेड हायल, सर एडिंग्टन, कार्ल सांगा आदि का नाम लिया जाता है । आज से कोई ६० वर्ष पूर्व की बात है—विश्वविख्यात नक्षत्रविद् डॉ. हबल अपने दूरदर्शी स्पेक्ट्रोमीटर सुइर नक्षत्रों से आने वाले प्रकाश के वर्णक्रम का अध्ययन करते थे । सूर्य का श्वेत प्रकाश सात रंगों के मेल से बना है । स्पेक्ट्रोमीटर एक ऐसा यन्त्र है जिसमें एक त्रिपार्श्व काँच लगा रहता है जब प्रकाश की एक किरण को उसमें कुदाया जाता है तो इस काँच के गुण के अनुसार वह अपने सातों रंगों में फूट पड़ता है । इन रंगों के वर्णक्रम से प्रकाश की स्थिति अन्तरंग खनिज स्रोतों की जानकारी भी की जाती है पर यहाँ जो प्रयोग चल रहा था उसका प्रयोजन एक आकाश-गंगा की दूरी की जाँच करना था जो उस समय ब्रह्माण्ड की सीमा पर प्रतीत हो रही थी ।

जाँच के समय एक बिल्कुल की नया तथ्य प्रकाश में आया । वर्णक्रम का लाल रंग निरन्तर सरकता और क्षीण होता प्रतीत हो रहा था, जिसका अर्थ था कि आकाश गंगा परे हट रही है । उससे आने वाला नाद भी क्रमशः मन्द पड़ता जा रहा था, उससे भी उपर्युक्त तथ्य की पुष्टि हो रही थी । इस परिवर्तन को "डॉप्लर प्रभाव" की संज्ञा दी गई और एक नये दर्शन ने जन्म लिया कि ब्रह्माण्ड निरन्तर बढ़ रहा है । यह चौंका देने वाली जानकारी थी, जिसने वैज्ञानिकों के सामने विचार के लिए सैकड़ों प्रश्न छोड़े हैं ।

फ्रीडमैन से लेकर आइन्स्टीन तक अब संसार के सभी प्रमुख अन्तरिक्ष विज्ञानी यह स्वीकार करते हैं कि ब्रह्माण्ड निरन्तर फैल रहा है । सभी खगोलीय पिण्ड एक-दूसरे से दूर हटते जा रहे हैं । अभी कुछ दिनों पूर्व एक अन्य ज्योतिर्विद डॉ. जेम्स क्लार्क भारतवर्ष आये थे, विज्ञान भवन में उपर्युक्त प्रश्न का उत्तर देते हुए उन्होंने कहा, अन्तरिक्ष की गहराइयाँ जितनी अनन्त की ओर बढ़ेगी, उसमें झाँककर देखने से मानवीय अस्तित्व का अर्थ और प्रयोजन उतना ही स्पष्ट होता चला जायेगा । शर्त यह रहेगी कि हमारी अपनी अन्वेषण बुद्धि का भी विकास और विस्तार हो । यदि हमारी बुद्धि, विचार और ज्ञान मात्र पेट प्रजनन, तृष्णा अहन्ता तक ही सीमित रहता है, तब तो हम पड़ोस भी नहीं जान सकेंगे । पर यदि इन सबसे पूर्वाग्रह मुक्त हों तो ब्रह्माण्ड इतनी खुली और अच्छे अक्षरों में लिखी चमकदार पुस्तक है कि उससे हर शब्द का अर्थ, प्रत्येक अस्तित्व का अभिप्राय समझा जा सकता एवं अनुभव किया जा सकता है ।

वस्तुतः चेतना का मुख्य गुण है—विकास । जहाँ भी चेतना या जीवन का अस्तित्व विद्यमान दिखायी देता है, वहाँ अनिवार्य रूप से विकास, वर्तमान स्थिति से आगे बढ़ने की हलचल दिखाई देती है । इस दृष्टि से मनुष्यों, जीव-जन्तुओं और पेड़-पौधों को ही जीवित माना जाता है, परन्तु भारतीय अध्यात्म की मान्यता है कि जड़ कुछ है ही नहीं, सब कुछ चैतन्य ही है । सुविधा के लिए स्थिर, निष्क्रिय और यथास्थिति में बने रहने वाली वस्तुओं को जड़ कहा जाता है, परन्तु

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

वस्तुतः वे प्रचलित अर्थों में जड़ है नहीं । इस तत्वदर्शन को भली-भाँति हृदयंगम किया जाना चाहिए ।

हमारे जीवन का सूर्य अस्त तो होगा ही

आमतौर से लोग सदा जीवित रहने भर की बात सोचते हैं, मरण तो एक प्रकार से विस्तृत ही हो जाता है । यदि जीवन इकाई के दोनों सिरे ध्यान में रहें तो ही मध्यवर्ती भाग का श्रेष्ठतम सदुपयोग करने की बात को महत्त्व दिया जाता रहेगा, और ऐसा कुछ किया जाता रहेगा जिसके आधार पर मनुष्य जन्म जैसी महान् उपलब्धि को सार्थक बनाया जा सके ।

हम समर्थ हों, स्वस्थ हों, सो ठीक है पर कल नहीं परसों मृत्यु का वरण तो करना ही पड़ेगा । सूर्य जैसी समर्थ सत्ता के भी मरण की रूपरेखा दैवज्ञों ने बनाकर रख दी है फिर हमारी तो हस्ती ही क्या है ?

अपने सूर्य का, भूत, वर्तमान और भविष्य जानने के लिए खगोलवेत्ताओं ने गहरे अनुसन्धान किए हैं । इस सन्दर्भ में जार्ज गेमो, एडिंग टन, फीडलर, हेनवेथे, फान विसकर के निष्कर्षों को अधिक प्रामाणिक माना गया है ।

उन खगोलवेत्ताओं के अनुसार सूर्य में हाइड्रोजन का विशाल भण्डार है । उसके भीतरी भाग में जो जटिल हलचलें हो रही हैं उनके कारण प्लाज्मा स्थिति के अन्तर्गत प्रोटीन कणों की मात्रा बढ़ रही है । वे ही प्रकाश और ऊर्जा के रूप में धरती पर पहुँचते हैं सूर्य में भरा हाइड्रोजन धीरे-धीरे हीलियम में बदलता जा रहा है ।

सूर्य की आयु लगभग ५०० करोड़ वर्ष है । उसमें तो परिवर्तन हुए हैं उससे धरती की स्थिति में भारी परिवर्तन हुए हैं । वे शीत, ताप, वर्षा, वनस्पति एवं प्राणियों की स्थिति से ही सम्बन्धित नहीं है वरन् प्राणियों के विशेषतया मनुष्यों के मानसिक स्तर को भी उसने बहुत प्रभावित किया है । मनुष्यों के चिन्तन एवं उत्साह का विस्तार ही नहीं स्तर भी और हलचलों से प्रभावित हुआ है ।

ठण्डे होते चलने पर नक्षत्रों का रंग प्रायः लाल हो जाता है । अपना सूर्य भी भविष्य में लाल दानव की तरह अत्यन्त भयावह दिखाई देगा । इसके बाद बूढ़ा सर्य समझना आरम्भ करेगा । वृद्ध मनुष्य जिस तरह कुरूप कंकाल भर रह जाते हैं वही दुर्गति सूर्य की होगी । वह एक कठोर प्लाज्मा पिण्ड की शक्ल में जा पहुँचेगा । घनत्व हमारे पानी की तुलना में पच्चीस लाख गुना अधिक होगा । सिकुड़ते-सिकुड़ते वह पृथ्वी से भी छोटा रह जायेगा । ऐसी स्थिति में उसकी गणना ब्रह्माण्ड के एक नगण्य पिण्ड की स्थिति में बहुत समय तक भले ही बनी रहे, किन्तु उसका कुछ मान महत्त्व न रह जायेगा । उस स्थिति में पृथ्वी निरन्तर ठण्डी होते-होते शून्य में ३२५ फारेनहाइट से नीची स्थिति में चली जायेगी । तब सूर्य और पृथ्वी पर नीरवता भरी मृत्यु का साम्राज्य छाया होगा ।

यों मनुष्य को शतायु कहा गया है पर वर्तमान स्थितियों में कौन उतने समय तक जी पाता है । आमतौर से लोग आधी पौनी आयु ही भोग पाते हैं । इस बहुमूल्य अवसर का सुदपयोग करने के लिए यह दृष्टिकोण सजग रहना चाहिए जीवनकाल तेजी से समाप्त हो रहा है और मरण तेजी से निकट दौड़ता चला आता है जो समय बीत गया सो गया उसके लिए पछताने से कुछ लाभ नहीं । जो शेष है उसी के सदुपयोग पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए । यह सम्भव तभी है जब हम सूर्य के मरण की जैसी मरण कुण्डली दैवज्ञों ने बनाई है उसी तरह अपने मरण को भी मूर्तिमान देखें और जो समय बना है उसके सदुपयोग के लिए आतुरता उत्पन्न करें ।

महानता के साथ अवरोध भी जुड़े हुए हैं

ढर्रे का—बेजोखिम का जीवन क्रम बिताते रहना सरल तो है पर उससे यह हानि भी है कि ऊँचे उठने और आगे बढ़ने की संभावना समाप्त हो जाती है । ढीले-पोले और साहस रहित व्यक्ति जोखिम उठाने से डरते हैं । उनका यह डर कठिनाइयों से शायद किसी हद तक बचा भर देता हो पर नई कठिनाई यह उत्पन्न करता है कि नीरस, निर्जीव और हेय स्थिति को पार करने के सारे द्वार प्राय बन्द ही हो जाते हैं । यों कठिनाइयों से सर्वथा बचे रहना तो डरपोक लोगों के लिए भी सम्भव नहीं, क्योंकि प्रकृति हर किसी में नव जीवन और नव स्फूर्ति भरने के लिए उठक-पटक को आवश्यक समझती है । सीधी उँगली से घी कहाँ निकलता है । दुस्साहस के बिना कोई अग्रगामी कहाँ रहता है ।

भू-गर्भ शास्त्रियों के अनुसार विशाल हिमालय का जन्म थोड़ा-थोड़ा करके तीन बार में हुआ है । मुख्य हिमालय जिसे हिमालय का हृदय भी कहते हैं । अब से ५ करोड़ वर्ष पूर्व 'टीथिस' समुद्र की तली से उभरा । इसके बाद २ करोड़ वर्ष पश्चात् लघु हिमालय और उसके २ करोड़ वर्ष बाद बाह्य हिमालय उस स्थान पर उभरा जहाँ आजकल देहरादून, हरिद्वार, शिमला, नैनीताल प्रकृति नगर बसे हुए हैं ।

महान् हिमालय पर्वतमाला का विस्तार २४०० किलोमीटर है । इसे चार खण्डों में विभक्त किया जा सकता है—(१) पंचाब हिमालय—गिलगिट के समीप सिन्धु नदी के मोड़ से सतलज नदी तक ५६० किलोमीटर लम्बा खण्ड इसकी सबसे ऊँची चोटी नागा शिखर २६६२० फीट ऊँची है । (२) 'कुमायूँ हिमालय'—सतलज से लेकर काली नदी तक ३२० किलोमीटर लम्बा खण्ड, इसके पाँच बड़े शिखर

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हैं । गंगोत्री शिखर २१७०० फीट, केदारनाथ २२७७० फीट । बद्रीनाथ २३१६० त्रिशूल २३१६०, नन्दादेवी २५६४५ फीट (३) नेपाल हिमालय—काली नदी से तीस्ता नदी तक ८०० किलोमीटर लम्बा है । इसके चार बड़े शिखर हैं गोसि अनथक २६२६१, धौलागिरि २६७६५, कंचन जंगा २८१४०, गौरीशंकर (एवरेस्ट) २६१४१ फीट । (४) आसाम हिमालय—तीस्ता नदी से नामचा बरवा के समीप ब्रह्मपुत्र नदी तक ७२० किलोमीटर लम्बा । इसके दो शिखर ऊँचे हैं कुलाकांगड़ी २४७८४, नामचा बरवा २५४४५ फीट ।

पर्वतो को यह ऊँचाई अनायास ही नहीं मिल गई । इसके लिए उन्हें प्रकृति की उठक पटक का सामना कर सकने का दुस्साहस ही अपनाना पड़ा है ।

पर्वत, धरती आदि से ही उत्पन्न नहीं हुए हैं । वे बीच-बीच में बढ़ते, उगते और नष्ट होते रहे हैं । आदि काल में धरती का जो स्वरूप था उसमें अब भारी अन्तर आ गया है । पृथ्वी पर निरन्तर काम करने वाली प्राकृतिक शक्तियाँ, प्रवाहमान जल, ज्वालामुखी, भूकम्प तथा विभिन्न दिशाओं में क्रियाशील अकल्पनीय दबाव यह सब प्राचीन पर्वतों के विलीन और नये पर्वतों के जन्म के लिए उत्तरदायी हैं । उदाहरणार्थ ५ करोड़ वर्ष पूर्व जहाँ "टिथिस" सागर लहराता था अब वहाँ उन्नत मस्तक हिमालय पर्वत खड़ा है । कितने ही पर्वत विशाल ज्वालामुखी विस्फोटों के साथ निकले हुए लावा से बने हैं । धरती में दरारें पड़ने से नीची कमजोर मिट्टी धुल जाती है और मजबूत खड़ी रहती है इस प्रकार बने पर्वतों को अवरोधी वर्ग का माना जाता है । चट्टानों के साथ जुड़ी मिट्टी जब जल प्रवाह में बह जाती है तो स्थिर चट्टानें खड़ी रह जाती हैं इन्हें 'विभक्त' वर्ग के पर्वत कहते हैं । वायु और जल की प्रवाही हलचलों से पूर्व धरातल पर अन्यत्र की मिट्टी तथा रोड़ों की तह जमा होती चली जाती है इन्हें परतदार पर्वत कहते हैं । पर्वत रचना इतिहास में ३ पर्वत निर्मात्री भयंकर हलचलों की चर्चा विशेष रूप से उल्लेखनीय है । ३७$\frac{१}{२}$ करोड़ वर्ष पूर्व की कैलोडीयन हलचल, ३० करोड़ वर्ष पूर्व की हरसीनियन हलचल और १२$\frac{१}{२}$ करोड़ वर्ष की अल्पाइन हलचल ऐसी विकट थी कि उन्होंने पिछले सहस्रों पर्वतों को विस्मृति के गर्त में धकेल दिया और उनको जन्म दिया जो आज हमें उभरे उठे हुए दिखाई पड़ते हैं ।

प्रगति के पथ पर जोखिम भी हैं । उसमें हानि भी सहनी पड़ती है और खतरा भी उठाना पड़ता है । दुस्साहसी लोग सदा इसके लिए तैयार रहते हैं । जोखिम से जूझना भी उन्हें एक उत्साहवर्धक खेल प्रतीत होता है ।

कोमलता को कठोरता में परिणत करने की प्रक्रिया ही साधारण मिट्टी को पर्वतीय चट्टानों के रूप में परिणत करती है । प्रौढ़ता की दिशा में इसी प्रकार चला जाता है कि सरलता की अपेक्षा कठोरता का स्वागत किया जाय और उसे अपनाया जाय ।

धरती भिन्न-भिन्न प्रकार के भूखण्डों से मिलकर बनी है । कहीं सुदृढ़ आग्नेय चटटानें हैं तो कहीं दुर्बल परतदार चट्टानें । अभी कितनी चट्टानों का रूप अधपका है और वे क्रमशः अपनी कच्चाई दूर करने प्रौढ़ता की दिशा में विकसित हो रही हैं । इसके कारण भीतर ही भीतर कई तरह की घट-बढ़ होती रहती हैं । पाँच करोड़ वर्ष में कम आयु वाली पर्वतमालाओं के क्षेत्र में अधिक भूकम्प आते हैं क्योंकि वहाँ अभी कच्चेपन को पक्केपन में बदलने की प्रक्रिया चल रही है । भारत का हिमालय, यूरोप का आल्पस, अमेरिका का राकेज—जापान का फ्युजीयामा पर्वत अभी किशोरावस्था में है । यौवन और प्रौढ़ता प्राप्त करने के लिए अभी इन्हें बहुत ऊँचा उठना और आगे बढ़ना है । तब तक उनके नीचे भूकम्प के लिए उत्तरदायी हलचलें होती ही रहेंगी । इन्हें भू-रचना भूकम्प के वर्ग में गिना जा सकता है ।

जिन्हें महानता के उत्तरदायित्व सँभालने का उत्तरदायित्व उठाना पड़ता है उन्हें प्रकृति के आकर्षण विकर्षण का भी सामना करना पड़ता है । मित्रों और शत्रुओं की बाढ़ समान रूप से बढ़ती है । समुद्रों को भी उस स्थिति का सामना करना पड़ता है । सूर्य और चन्द्रमा, समुद्र की अथाह जलराशि को देखकर विक्षुब्ध होते हैं, और उसे प्रभावित करने का प्रयत्न करते हैं । प्रतिभाएँ एक कोने में चुपचाप पड़ी नहीं रह सकतीं । वे पड़ी रहना चाहें तो प्रकृति उन्हें वैसा नहीं करने देती । सुदूर आकाश में रहने वाले सूर्य चन्द्र अकारण ही समुद्र जल को प्रभावित करते हैं और उसकी सतह पर ज्वार-भाटा उठते रहते हैं । इतना सब होते हुए भी समुद्र अपना सन्तुलन नष्ट नहीं होने देता महान् व्यक्तियों पर जहाँ महान् कार्य सम्पन्न करने के उत्तरदायित्व रहते हैं वहाँ उन्हें अनुकूलता प्रतिकूलता सहने के लिए भी कटिबद्ध रहना पड़ता है ।

समुद्र जल का निश्चित समय पर, नियमित रूप से ऊपर उठना 'ज्वार' और नीचे उतरना 'भाटा' कहलाता है । खुले सागरों में प्रायः सभी तटों पर पूरे दिन में दो बार हल्के ज्वार-भाटा आते हैं । पूर्णिमा और अमावस्या को वे विशेष रूप में उग्र होते हैं । सप्तमी अष्टमी के दोनों पक्षों में उन्हें मध्यम स्तर के ढंग में देखा जा सकता है ।

सूर्य और चन्द्रमा की आकर्षण शक्ति इस उतार-चढ़ाव का मूल कारण है । सूर्य की आकर्षण शक्ति यद्यपि चन्द्रमा की आकर्षण शक्ति से ढाई करोड़ गुनी अधिक है तो भी चन्द्रमा की अपेक्षा प्रायः ४०५ गुनी दूर होने के कारण सूर्य की अपेक्षा पृथ्वी पर प्रायः दूना आकर्षण चन्द्रमा का ही होता है । अस्तु सागरों में अपने अंगों से आप सन्तानें उत्पन्न करते रहने वाला यह कीड़ा अपनी वंश वृद्धि इसी प्रकार

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

करता रहता है और उनका विशाल कुटुम्ब परिवार धीरे-धीरे एक द्वीप के—फिर द्वीपसमूह के रूप में बढ़ता चला जाता है । भारी होने पर वे समुद्र की तली में बैठते जाते हैं और प्रवाल पर्वत सुदृढ़ चट्टानों का रूप धारण कर लेते हैं । ज्वार-भाटे तथा पवन द्वारा उनकी सतह पर कीचड़, रेत, बीज, वनस्पति पटकते रहते हैं फलस्वरूप वे हरे-भरे पेड़-पौधों से आच्छादित साधारण समुद्री द्वीपों की तरह दिखायी पड़ते हैं । भारतीय प्रायः द्वीप के दक्षिणी छोर पर—आस्ट्रोलिया के उत्तर पूर्व तट पर, हवाई द्वीप के समीप विकनी द्वीप में अच्छे प्रवाल देखे जा सकते हैं । छुट-पुट उनका अस्तित्व तो अनेक स्थानों पर है ।

अमावस्या तथा पूर्णिमा को चन्द्र, पृथ्वी एवं सूर्य प्रायः एक ही रेखा पर रहते हैं । इन दो तिथियों को सूर्य तथा चन्द्रमा की आकर्षण शक्ति अपेक्षाकृत अधिक सशक्त होती है फलतः अधिक ऊँचे ज्वार-भाटे आते हैं । कृष्ण पक्ष तथा शुक्ल पक्ष को सप्तमी अष्टमी तिथियों को सूर्य पृथ्वी रेखा चन्द्र पृथ्वी रेखा से ९० अंश का कोण बनाता है, तब भी ज्वार-भाटा आते तो हैं पर अधिक ऊँचे नहीं होते । पृथ्वी तथा चन्द्रमा दोनों के घूमने के कारण आवृत्ति छः-छः घंटे की न होकर ६ घंटा १२$\frac{१}{२}$ मिनट की होती है । इस प्रकार दो ज्वार और दो भाटे कुल ४ क्रियाएँ २४ घंटे ५० मिनट में सम्पन्न होती जाती हैं । अर्थात् ज्वार-भाटे के दैनिक समय में ५० मिनट की देरी होती जाती है । यदि आज ज्वार ८ बजे आया है कल ८ बजकर ५० मिनट पर, परसों ९ बजकर ४० मिनट पर यही क्रम आगे भी चलेगा । सब जगह ज्वार-भाटा एक ही समय पर नहीं आते आकर्षण शक्ति के प्रभाव की घट-बढ़ से विभिन्न स्थानों पर उनके समय अलग-अलग रहते हैं । ज्वार का प्रधान कारण चन्द्रमा ही है ।

पृथ्वी का जो क्षेत्र चन्द्रमा के समीप है वहाँ चन्द्रमा की आकर्षण शक्ति पृथ्वी के केन्द्रापसारी बल से अधिक होती है अतएव चन्द्रमा की दिशा में समुद्र तल पर खिंचाव बढ़ जाता है । पृथ्वी का जो क्षेत्र चन्द्रमा से दूर है वहाँ चन्द्रमा की आकर्षण शक्ति पृथ्वी के केन्द्रापसारी बल से कम होती है फलतः चन्द्रमा से विपरीत दिशा में खिंचाव क्रियाशील हो जाता है । इस प्रकार एक ही समय में दो विपरीत दिशाओं में ज्वार उठते हैं । एक पूर्वी गोलार्द्ध में दूसरा पश्चिमी गोलार्द्ध में । सुविस्तृत जलराशि में इस प्रकार की परस्पर विरोधी दो सक्रियता और परिणाम वह होता है जो हमें ज्वार-भाटे के रूप में दिखाई पड़ता है । इस प्रकार प्रत्येक २४ घण्टे ५० मिनट में दो विपरीत दिशाओं में दो बार ज्वार-भाटा आते हैं ।

समुद्र को ज्वार-भाटों का निरन्तर सामना करना पड़ता है वह न कभी उनसे खिन्न होता है न असन्तुलित वरन् अपने कन्धों पर आये हुए अनेक उत्तरदायित्वों में से एक भार, ज्वार-भाटों का सामना करने का, अनुकूलताओं और प्रतिकूलताओं से जूझने का भी और जोड़ लेता है और परिस्थितियों से धैर्य, साहस एवं सन्तुलन के साथ निपटता रहता है ।

समुद्र की तरह ही थलभूमि को भी आन्तरिक विग्रह और बाह्य प्रतिरोधों का सामना करना पड़ता है । इसका प्रमाण भूकम्पों के रूप में आये दिन हम देखते रहते हैं । इन भूकम्पों से जहाँ पृथ्वी को हानि सहनी पड़ती है वहाँ उन्हीं से ऐसी परिस्थितियाँ भी बन जाती हैं जिन पर से हानि के गर्भ में छिपे लाभ का भी आभास प्राप्त किया जा सके ।

सूर्य ताप, शीतलता, पवन, हिमिनद आदि कारणों से जमीन के भीतर और बाहर की वस्तुएँ इधर से उधर हटती, गिरती रहती हैं, इससे वजन का पूर्व सन्तुलन बिगड़ जाता है जैसे कि तराजू के पलड़ों का वजन घटने बढ़ने से वे ऊपर नीचे होते रहते हैं । इसे ही भूकम्प का रचना परिवर्तन कारण कहते हैं ।

अत्यन्त भार ढोने वाली मालगाड़ियाँ उनकी तीव्र गति, परमाणु बमों का विस्फोट आदि मानवकृत आघात है । उल्कापात, वज्राघात जैसे कई प्रकृतिगत आघात भी ऐसे भयंकर होते हैं कि उनके कारण भूकम्प उत्पन्न हो जाते हैं । भूकम्प मापक यन्त्र—सीस्मोग्राफ से यह जाना जा सकता है कि पृथ्वी पर भूकम्प कहाँ हुआ उसकी गति क्या थी, क्या कारण था और उसका उद्गम स्रोत धरती के किस परत में कितनी गहराई पर था ।

जिस प्रकार हवा से पेड़ों के पत्ते हिलते रहते हैं उसी प्रकार भूकम्पों से धरती का कोई न कोई भाग प्रायः हिलता रहता है । औसतन प्रत्येक मिनट में पृथ्वी पर कहीं न कहीं एक भूकम्प आ जाता है । सौभाग्य से सभी भूकम्प विनाशकारी नहीं होते । भूगर्भ स्थित चट्टानों के अचानक इधर-उधर हट जाने से जो आघात पृथ्वी की भीतरी गहराइयों में उत्पन्न होते हैं उन्हीं के झटके धरती के बाह्य धरातल को झकझोरते हैं यही भूकम्प है, धरती जैसे-जैसे ठण्डी होती जाती है वैसे ही वैसे भूगर्भ में सिकुड़न पैदा होती है, उसके कारण पड़ने वाली दरारें पदार्थों को इधर से उधर करती हैं । गहराई के भीतर होने वाली उठक-पटक को हम भूकम्प के रूप में अनुभव करते हैं ।

पिछले ३०० वर्षों का विनाशकारी इतिहास रोमांचकारी है । सृष्टि के आदि से अब तक निरन्तर चलती आ रही इस भूकम्पों की शृंखला ने कितनी धन जन की हानि की होगी यह अकल्पनीय है । पिछले कुछ ही दिनों की भूकम्प प्रतिक्रिया का विवरण इस प्रकार है—

सन् १७९५ लिस्वन (पुर्तगाल) ५००० व्यक्ति मरे पूरा नगर नष्ट । सन् १८१७ नेपल्स (इटली) १२००० व्यक्ति मरे । १८९१ मिनोओवरी (जापान) ७००० व्यक्ति मरे । दोनों नगर नष्ट । १८९७ शिलांग (आभास) १०००

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मरे । १९०५ काँगड़ा २०००० मरे । १९०८ सिसली ७६००० मरे । १९१५ मध्य इटली ३०००० मरे ३७० ग्राम तथा नगर नष्ट । १९२३ टोकियो (जापान) १४००० मरे । १९२३ कॉसू (चीन) १००००० मरे । १९३४ उत्तरी बिहार १२००० मरे । १९३५ क्वेटा (विलोचिस्तान) ६०००० मरे । घायल मनुष्यों की संख्या मृतकों से कम से कम चार गुनी आँकी जानी चाहिए पशु धन का भी भारी विनाश हुआ । इसके अतिरिक्त मकान, कारखाने तथा दूसरी प्रकार की जो आर्थिक क्षति हुई उसका ठीक से अनुमान लगाया जा सकना कठिन है । निश्चित रूप से सम्पदा अत्यन्त विशाल परिमाण में होगी । यह अत्यन्त विशालकाय भूकम्पों की बात है । छुटपुट रूप से तो वे कहीं न कहीं आते ही रहते हैं और उनके कारण धन जन की हानि होती ही रहती है ।

मानव जाति सृष्टि के आदि काल से ही ऐसे प्रकृति प्रकोपों का सामना करती रही है । फिर भी साहस, धैर्य और ध्वसं के खण्डहरों पर निर्माण की मानवी प्रकृति ने कुछ ही समय में उस ध्वंस की क्षति पूर्ति कर ली है । कोई आघात ऐसा नहीं होता जिसकी क्षति पूर्ति नहीं हो सके । अधीर मनुष्य उसका मूल्य चुकाने और प्रतीक्षा करने को तैयार ने होने के कारण निराश हो बैठते हैं पर जहाँ शौर्य और साहस है वहाँ ध्वंस का ताण्डव समाप्त होते ही सृजन का प्रयास द्रुतगति से आरम्भ हो जाता है ।

न धरती घात प्रतिघातों से बच सकी है और न समुद्र की जलराशि । प्रकृति के हिंडोलों में झूलने वाले हर किसी को आगे और पीछे बढ़ने हटने के झोंटे लेने पड़ते हैं । अधीर और क्षुद्र उससे बेतरह भयभीत होकर रोते-चिल्लाते हैं पर बहादुर लड़के मेले ठेलों में आने वाले चरखे पर झूलने की तरह ऊपर नीचे आने-जाने का आनन्द उत्साहपूर्वक उठाते हैं । महत्त्वाकांक्षी, प्रगतिशील एवं बड़े उत्तरदायित्व वहन करने के लिए समुद्यत लोगों को तो भूकम्पों, ज्वार-भाटों का सामना अनिवार्य रूप से करना पड़ता है । पर्वतों के उच्च शिखरों का, व्यक्तिगत महत्ताओं का निर्माण भी इस प्रक्रिया का सामना करने पर भी सम्भव होता है ।

भूतकालीन प्रतिपादनों के लिए दुराग्रह न करें

भूतकाल में जो माना जाता है वह भविष्य में भी माना जायेगा या माना जाना चाहिए ऐसा सोचना व्यर्थ है । हमारे ज्ञान की सीमा बढ़ रही है और परिस्थितियाँ बदल रही हैं तदनुसार ज्ञान के आधार भी बदलते जा रहे हैं । विकास का तथ्य स्वीकार किया जाना चाहिए । सत्य अति विशाल है, उसकी पर्तें धीरे-धीरे खुलती चली जा रहा हैं । इस विकासोन्मुख सत्य को स्वीकार करने के लिए हमें अपना मस्तिष्क खुला रखना चाहिए ।

जो भूतकाल में कहा गया वह पूर्ण सत्य था, उसमें हेर-फेर की गुंजाइश नहीं ऐसा दुराग्रह हमें सत्य के नवीनतम प्रकाश से वंचित कर देगा और दकियानूसी कूपमंडूक बन कर रह जायेंगे । सत्य किसी सीमा बन्धन में बँधा हुआ नहीं है । मनुष्य सर्वांगपूर्ण नहीं हैं और न उसके मस्तिष्क की परिधि ही इतनी बड़ी है कि इस विशाल विश्व में संव्याप्त सत्य की समस्त किरणों का एक ही समय अन्तिम रूप से अवगाहन कर सके ।

इस विश्व का क्रमिक विकास हुआ है । धरती किसी समय में वायुभूत अग्नि पुंज मात्र थी । ठण्डी होने पर वह प्राणियों के रहने योग्य हुई, एक कोशीय जीवों से विकसित होते-होते प्राणियों की अनेक जातियाँ बनीं और उन्होंने बौद्धिक एवं शारीरिक स्थिति पार करते हुए वह स्थिति प्राप्त की जो आज है । मानव प्राणी ने भी अपना विकास यकायक नहीं कर लिया उसे वर्तमान स्थिति तक पहुँचने में लाखों वर्ष लगे हैं । ज्ञान का विस्तार भी इसी क्रम से हुआ है । भूतकाल की अनेक मान्यताएँ अब झुठला दी गईं । विज्ञान ने सत्य की नई पर्तें खोलीं और उन्हें स्वीकार करना पड़ा । पूर्व मान्यताओं के लिए दुराग्रह किए रहना बुद्धिमत्ता नहीं है ।

पूर्व सत्य तक पहुँचने की मंजिल क्रमशः ही पार की जायेगी । चलने वाला पथिक अभी एक स्थान पर पैर रखे हैं, अभी दूसरा पग दूसरी जगह रखेगा । जो स्थान अभी पैरों के नीचे है, जो दृश्य अभी आँखों के सामने है वह अगले क्षण बदल जायेगा । यात्रा क्रम में ऐसा होना स्वाभाविक है । इस परिवर्तन पर अप्रसन्नता व्यक्त करना उचित नहीं । बचपन में जो वस्त्र पहने जाते थे उन्हें युवावस्था में भी पहना जाय यह आग्रह असंगत और अनुचित ही कहा जायेगा ।

मान्यताएँ पत्थर की लकीर नहीं हैं । आज जिस आधार पर हम एक बात को सत्य मानते हैं । कल आधार बदल जाने पर परिभाषा बदल जायेगी और पुराने प्रतिपादन को छोड़ने के लिए विवश होना पड़ेगा । इसमें भूतकाल के प्रतिपादन कर्त्ताओं का अपमान नहीं है । उन्होंने अपने समय की परिस्थितियों के अनुरूप जो सर्वोत्तम सत्य समझा उसे कहा । पर किसी ने भी यह नहीं कहा कि जो उनके द्वारा कहा जा रहा है वह अन्तिम है या पूर्ण सत्य है । 'नेति नेति' का घोष करते हुए तत्वदर्शियों ने सदा यह कहा है कि जो बताया जा रहा है वह अन्तिम नहीं है, पूर्ण नहीं है । 'स्याद्वाद' दर्शन में इसी तथ्य को स्वीकार किया गया है और भावी अन्वेषण एवं विचार परिवर्तन के लिए पुरी गुंजाइश रखी गई है ।

भूतकालीन मान्यताओं को ही पूर्ण सत्य मान बैठना दुराग्रह है । सत्याग्रह में यह गुंजाइश रखी जाती है कि सत्य का प्रामाणिक और तथ्यों के आधार पर परिष्कृत रूप सामने आयेगा तो उसे सहर्ष स्वीकार करेंगे । ज्ञान के विकास का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

क्षेत्र खुला रखा जाना चाहिए और मान्यताओं को तथ्यों के आधार पर बदलने का उदात्त दृष्टिकोण अपनाना चाहिए ।

चन्द्रमा के सम्बन्ध में मनुष्य ने न जाने कब-कब से क्या-क्या स्वप्न सँजो कर रखे थे । कितनी मधुर कल्पनाएँ उसके साथ जोड़ कर रखी थीं । विज्ञान ने उन्हें अस्त-व्यस्त करके रख दिया ।

पाश्चात्य साहित्य में उसे चन्द्रमुखी महिला के रूप में चित्रित किया गया है । राहु के आक्रमण से पड़ने वाला चन्द्रग्रहण हमारे लिए चिन्ता का विषय था और उसे विपत्ति से छुड़ाने के लिए जप, दान किए जाते थे ।

चन्द्रमा अमृत का घट है । उसकी चन्द्रिका अमृत बरसाती है । चन्द्र प्रकाश में शीतल किया हुआ दूध—शान्तिदायक होता है । शरद पूर्णिमा के चन्द्र प्रकाश में खीर का भोजन करते हुए उसमें अमृत मिश्रण की आशा की जाती है । किसान शुक्ल पक्ष में चन्द्रमा को साक्षी बनाकर बीज बोते हैं । चन्द्रमुखी का ज्यों-ज्यों रूप निखरता है त्यों-त्यों समुद्र कोटि-कोटि हाथ पसारकर उसे अपने अंक में आबद्ध करने के लिए व्याकुल होता है । ज्वार-भाटे की यही साहित्यिक कल्पना है । स्त्रियों के मासिक धर्म की चन्द्र कलाओं के साथ संगति बिठाई जाती है ।

पौराणिक गाथा के अनुसार चन्द्रमा की उत्पत्ति समुद्र मन्थन से उत्पन्न रत्नों के रूप में हुई । उसे शिवाजी के मस्तक पर निवास करते रहने का स्थान मिला । दक्ष प्रजापति की २७ कन्याएँ चन्द्रमा को विवाही गईं । इनमें से रोहिणी को अधिक प्यार करने से रुष्ट अन्य २६ पत्नियों ने जब अपने पिता से शिकायत की तो इस पक्षपात के लिए उसे दक्ष के शाप से कलंकी होना पड़ा । इन्द्र के द्वारा अहिल्या के साथ छल करने में सहयोग के कारण गौतम ऋषि के शाप से उसे कलंकी बनना पड़ा । मणि चुराने के अभियोग में शाप लगने के कारण भाद्र पद शुक्ल चतुर्थी को चन्द्र दर्शन हेय घोषित किया गया । स्त्रियाँ गणेश चतुर्थी को चन्द्र दर्शन के उपरान्त ही कुछ खाती हैं और चन्द्र देवता से सुहाग वरदान माँगती हैं । रजनी पति निशा नाथ चन्द्रमा को काम उमंग उत्पन्न करने वाला बताया गया है । प्रेयसी की चन्द्र मुख से तुलना कवि न जाने कब से करते रहे हैं ।

मुसलमान ईद का चाँद देखकर अपना व्रत उपवास पूर्ण करते हैं । ज्योतिष शास्त्र के अनुसार चन्द्रमा एक पूर्ण ग्रह है । उसे शास्त्राधार का मध्य बिन्दु मानकर ग्रह गणित आगे चलता है । यात्रा मुहूर्तों में चन्द्रमा की दिशा स्थिति को ध्यान में रखा जाता है । मनुष्यों पर जब चन्द्र दशा आती है । अथवा जब अन्तर प्रत्यन्तर आते हैं तब शुभ लाभ का फलित बताया जाता है । सप्ताह का एक दिन चन्द्रमा के नाम पर ही निर्धारित है उस दिन को मंगलमय माना गया है । बच्चे उसे चन्दा मामा मानते रहे हैं और माताएँ उस चन्द्र खिलौने को ला देने का आश्वासन न जाने कब से नन्हे शिशुओं को देती रही हैं ।

आधुनिक विज्ञान के अनुसार चन्द्रमा २००० मील व्यास का एक वर्तुलाकार निर्जीव पिण्ड है जो सूर्य के प्रकाश से चमकता है । उसका बोझ पृथ्वी की तुलना में ८१वाँ अंश ही है । उसकी गुरुत्वाकर्षण शक्ति पृथ्वी के छःवें भाग के बराबर है । वहाँ न पानी है न हवा । न कोई जीव, न वनस्पति । शब्द का सर्वथा अभाव । नीरव निस्तब्धता का साम्राज्य । विश्व किरणों की, उल्काओं की, अणु किरणों की, निरन्तर वर्षा होती रहने से वहाँ की चट्टानें धूल बन गई हैं । उंसकी पर्तों में नाइट्रोजन, गन्धक, फॉस्फोरस, कार्बन डाइ ऑक्साइड तथा कतिपय धातुएँ विद्यमान हैं । रात को वहाँ अति शीत होता है और दिन को अति ताप । वह पृथ्वी की परिक्रमा २४०००० मील दूर रहकर करता है ।

चन्द्रमा के सम्बन्ध में अब तक मान्यताएँ प्रतिपादित और प्रचलित रही हैं । डार्विन का कथन है—पुरातन में पृथ्वी तप्त द्रव थी । उसमें अनेक विस्फोट होते थे । वह तप्त रस सूर्य की परिक्रमा कर रहा था । इसी बीच पृथ्वी के विस्फोट और सूर्य के आकर्षण से पृथ्वी का एक टुकड़ा उचट कर अलग हो गया और स्वतन्त्र रूप से घूमने लगा यही चन्द्रमा है । पृथ्वी के जिस स्थान से यह टुकड़ा टूटा वहाँ प्रशान्त महासागर का गड्ढा बन गया ।

डॉ. वाईज ने भी थोड़े हेर-फेर के साथ इसी मत की पुष्टि की । उन्होंने धूमकेतु, विश्व किरणें तथा अणु शक्ति आघातों के कारण चन्द्रमा में अनेक खड्ड बन जाने की बात कही ।

जेम्स जीव्स और डॉ. वफुन्स का मत है कि कभी कोई विशाल तारा सूर्य के समीप होकर गुजरा । उसके और सूर्य के गुरुत्वाकर्षण में रस्साकशी हुई । इस संघर्ष में सूर्य का एक बड़ा भाग महा भयंकर विस्फोट के साथ टूट गया । उस टूटे भाग से सौर-मण्डल के अन्य ग्रह बने और उसी मलवे में से चन्द्रमा बन गया । चन्द्रमा पृथ्वी के समीप होने के कारण धरती के गुरुत्वाकर्षण में जकड़ गया और उसी की परिक्रमा करने लगा ।

डॉ. फेड हायल का कथन है—अनन्त आकाश में प्रचण्ड ज्योति को फेंके हुए वायु कणों को सूर्याकर्षण ने खींचा और वह धूलि, सघन होकर चन्द्रमा बन गई ।

अब चन्द्रमा के सम्बन्ध में यह नये तथ्य स्वीकार कर लिए गए । प्राचीन मान्यताओं की साहित्य में चर्चा भले ही होती रहे, पर उन्हें सही मानने के लिए कोई आग्रह नहीं करता । यही उचित भी है ।

यूनान का खगोलवेत्ता अनेग्जागोरस बड़े दावे के साथ कहता था कि सूर्य का विस्तार इतना है जितना यूनान का दक्षिण भाग । उन दिनों यह प्रतिपादन पूरी तरह गप्प माना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

गया था । जरा-सा सूरज भला कहीं यूनान के दक्षिण भाग जितना बड़ा हो सकता है ?

पीछे दूसरे खगोलवेत्ता और भी आगे बढ़े । उन्होंने हिसाब लगा कर बताया कि सूर्य का विस्तार पृथ्वी से भी बड़ा है । सुनने वालों ने इसे और भी बड़ी अतिशयोक्ति माना । यह ग्रह गणित आगे भी जारी रहा और ज्योतिर्विद पोसिडोनियस ने सूर्य का विस्तार और भी बड़ा बताया उसका प्रतिपादन वर्तमान मान्यता से लगभग आधा था ।

मध्य काल में ब्रह्माण्ड की सुविकसित कल्पना करने वाला पुराना दैवज्ञ 'दान्ते' है । उसने अपनी पुस्तक 'पैराडाइसो' में कहा है—सूर्य, चन्द्र, स्वर्ग, स्थिर नक्षत्र इन सबका एक केन्द्र मण्डल है । चौबीस घण्टे में उसका एक चक्कर पूरा होता है । आज की ब्रह्माण्ड मान्यता की तुलना में उसे बचपन की कल्पना ही कहा जा सकता है ।

अब ब्रह्माण्ड के विस्तार की मान्यता पुरातन की अपेक्षा बहुत आगे और बहुत विस्तृत है । तारे आसमान की छत में लटके हुए अब झाड़ फानूस नहीं रहे । वर्तमान खगोल विद्या के अनुसार सबसे निकट दीखने वाला तारा भी सूर्य से बहुत बड़ा और बहुत दूर है । सूर्य का प्रकाश पृथ्वी तक आठ मिनट में आ जाता है पर उस निकटवर्ती तारे का प्रकाश हम तक आने में लगभग चार साल लगते हैं । खुली आँखों से जितने तारे हमें दीखते हैं वे सब अपनी आकाश-गंगा 'मन्दाकिनी' के ही अण्डे-बच्चे हैं और उसी से बँधे हैं उसी की गोद में खेलते हैं । हमारी मन्दाकिनी आकाश-गंगा की तरह ब्रह्माण्ड में करोड़ों आकाश-गंगाएँ हैं ।

अपनी आकाश-गंगा में लगभग ३ अरब तारे हैं । इनमें निकटवर्ती नक्षत्र की दूरी २५० खरब मील है । ऐसी ऐसी आकाश-गंगाएँ करोड़ों हैं और वे एक दूसरे से इतनी दूर हैं कि एक का प्रकाश दूसरी तक पहुँचने में २ करोड़ वर्ष लगते हैं ।

सूर्य का वजन २ अरब टन है । अपनी आकाश-गंगा अपने सूर्य से ६० अरब गुना भारी है । ऐसी-ऐसी करोड़ों आकाश-गंगाओं के तारा मण्डल ने जो जगह घेर रखी है । उसे सिर में एक बाल के बराबर ही समझना चाहिए । शेष ब्रह्माण्ड तो बिल्कुल पोला, सूना, खाली, नीरव ही पड़ा हुआ है ।

अपना सूर्य, अपनी मन्दाकिनी आकाश-गंगा का एक छोटा-सा तारा है । ऐसे लगभग १ खरब तारे उसमें गुँथे हुए हैं और अपने सूर्य की तुलना में ६० हजार गुने तक बड़े हैं । इनकी दूरी का अनुमान इससे लगाया जा सकता है कि यदि कोई प्रकाश की गति से एक सेकण्ड में १,८६,००० मील की चाल से चले तो उसे अपनी आकाश-गंगा में सबसे निकटतम तारे पर पहुँचने के लिए प्रकाश गति से ४ वर्ष लगेंगे और दूर वाले पर पहुँचने के लिए ८० हजार वर्ष चलना पड़ेगा । ऐसी-ऐसी असंख्य आकाश-गंगाएँ इस अनन्त ब्रह्माण्ड में बिखरी पड़ी हैं । उसकी परिधि और सीमा की कल्पना कर सकना भी मानवी बुद्धि से बाहर की बात है ।

कोई समय था जब समझा जाता था कि सृष्टि का केन्द्र यह पृथ्वी ही है । यह स्थिर है और सूर्य चन्द्र तथा तारे इसके आस-पास घूमते हैं । तब धरती को चौकोर या चपटी समझा जाता था । कुछ इसे स्वर्गादपि गरीयसी मानते रहे कुछ ने माना उसे जन्म-मरण के कुचक्र में बाँधने वाला भव सागर ।

दार्शनिक फिरसौदी ने उसे असीम सौन्दर्य की देवी कहा और बताया है कि यदि स्वर्ग कहीं है तो इस धरती पर ही है ।

वैज्ञानिक भी इसी निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि यह धरती अन्य ग्रह नक्षत्रों की तुलना में अत्यधिक सौभाग्यशाली है । इसकी सूर्य से दूरी तथा कला इतनी उपयुक्त है कि उससे प्राणियों का जन्म, ऋतु अनुकूलता तथा अगणित शोभा, सुविधा का सृजन सम्भव हो सका । यह स्थिति अन्य ग्रह नक्षत्रों की नहीं है । उनका तापमान, शीतमान इतना भयंकर है कि जीवन की सम्भावना का कोई लक्षण नहीं दीखता ।

चूँकि हम इस धरती पर रहते हैं और निकटवर्ती वस्तु की शोभा, उपयोगिता न दीख पड़ती है, न समझ में आती है । उसे देखने समझने के लिए दूरी का अन्तर होना चाहिए । अपोलो ११ अन्तरिक्ष यान के यात्रियों ने दूर से इस धरती की शोभा को देखा तो वे गद्‌गद् हो उठे । उन्होंने उस सौन्दर्य की अभिव्यक्ति को अनिर्वचनीय और अकल्पनीय बताया ।

अब पृथ्वी भूतकाल के ज्योतिषियों की मान्यता के अनुरूप स्थिर नहीं है । वह एक नहीं कई चाल चलती है । पृथ्वी की कुछ चालें पहले से ही विदित थीं । पृथ्वी सूर्य मण्डल की परिक्रमा एक वर्ष में पूरी करती है । वह अपनी धुरी पर २४ घण्टे में घूम लेती है । सूर्य पृथ्वी समेत अपने सौर-मण्डल को साथ लिए महा सूर्य की परिक्रमा के लिए दौड़ा जा रहा है । इनके अतिरिक्त पृथ्वी की एक और गति का पता चला है । जिसे 'थिरकन' कह सकते हैं ।

पृथ्वी की अक्ष और उसके मिरे अपने स्थान में फेरबदल करते रहते हैं । १४ मास में यह विचलन ७२ फीट तक होता रहता है ।

पिछली शताब्दियों के खगोलवेत्ता जेम्स ब्रंडले और मौलीनो ने यह आशंका व्यक्त की थी कि ध्रुव अपना स्थान बदलते हैं उसका कारण पृथ्वी की एक गति 'थिरकन' भी हो सकती है ।

ऐसा क्यों होता है, इसके कारणों की खोज करते हुए कई तथ्य सामने आये हैं । अक्ष की विस्थापना, ध्रुव प्रदेशों में बर्फ का पिघलना, समुद्रों की विशाल जल राशि का भटकाव भू-गर्भ के तप्त लाये का उद्वेलन और पुनर्वितरण जैसे कारण इस थिरकन के सोचे गए हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

तथ्यों का सही निरूपण करने के लिए इन्टरनेशनल पोलर योशन सर्विस (अन्तर्राष्ट्रीय ध्रुव चलन सेवा) की ओर से उत्तरी ध्रुव के चारों ओर ४० डिग्री अक्षांश पर पाँच वेधशालाएँ स्थापित की गई हैं और उनमें व्यवस्थित रूप से शोध कार्य हो रहा है । यह वेधशालाएँ (१) भिजु सावा (जापान) में, (२) समर कन्द के निकट 'केताब' में, (३) इटली के निकट सार्डीनिया के कार्लोफोर्ते में, (४) अमेरिका के गैदर्जवर्ग तथा (५) यूक्रिया स्थानों में कार्य संलग्न है । रात्रि के छः घण्टे आकाश निरीक्षण के आधार पर इनमें कार्य होता है और निष्कर्ष भिजुसावा केन्द्र में भेज दिया जाता है । इन सभी वेध शालाओं के यन्त्रों की सम्वेदनशीलता में कोई दोष उत्पन्न न होने देने के लिए वहाँ का तापमान न बढ़ने देने की कठोर व्यवस्था है । रात्रि में अति मन्द रोशनी, सर्दियों में हीटर तक न जलाना, खिड़कियाँ खुली छोड़ना, कार्यकर्त्ताओं की शारीरिक गर्मी तक बाहर न आने देने जैसी अनेकों सावधानियाँ बरती जाती हैं ।

सोचा जाता है कि जिस प्रकार शारीरिक हलचलों का प्रभाव मन पर पड़ता है ऐसे ही पृथ्वी की स्थूल हलचलों का प्रभाव उसकी भी मनःस्थिति पर पड़ता होगा और उसका हृदय आन्दोलन इस प्रकार थिरकने की गति धारण करता होगा ।

ब्रह्माण्ड विस्तार की तरह मनुष्य की चिन्तन परिधि बढ़ती जा रही है । उसकी क्षमताओं का विकास हो रहा है । सम्पर्क, सम्बन्ध, अपनत्व और उत्तरदायित्व भी इसी प्रकार बढ़ रहा है । हमें उसे समझना चाहिए और अपने मनः क्षेत्र को उस विस्तार को स्वीकार कर सकने योग्य उदात्त दृष्टिकोण से युक्त करना चाहिए । चन्द्रमा के सम्बन्ध में चिर अतीत काल से ही कितनी सुखद कल्पनाएँ की जाती रही हैं उसे भारतवासी अमृत बरसाने वाला शान्ति और शीतलता का देवता मानते रहे हैं । पाश्चात्य देशों में उसे अत्यन्त रूपवान अप्सरा समझा जाता है । कवियों ने उसे विरह और प्रेम के बीच का एक सुखद सेतु माना है । योगी और भोगी उसे अपनी-अपनी भावनाओं के अनुरूप अपने कार्य में सहायक-बाधक मानते रहे हैं । सोमरस का अधिपति, वनस्पतियों का राजा न जाने वह क्या-क्या कहा जाता रहा है और उसके साथ न जाने कितनी पौराणिक आख्यायिकाएँ—किंवदन्तियाँ जुड़ी हुई हैं । समुद्र मन्थन से निकले हुए चौदह रत्नों में से एक—शम्भुललाट पर टँगा हुआ दीप्तिमान आभूषण—कुकर्म में इन्द्र का सहयोगी बनने के कारण कलंकित आदि विविध रूपों में धार्मिक जनता उसे जानती मानता रही है । ज्योतिषियों के लिए चन्द्र दशा की गणना के आधार पर विविध मनुष्यों पर उसका भला-बुरा प्रभाव आता जाता गिना कहा जाता है । चन्द्रदर्शन की कितने लोग उत्सुकतापूर्वक प्रतीक्षा करते हैं । देवज्ञों के खगोलग्रन्थ उसे नवग्रहों में सूर्य के बाद दूसरे स्थान की प्रतिष्ठा देते रहे हैं । वे सारे प्रतिपादन आज की वैज्ञानिक शोधों ने एक कोने पर उठा कर रख दिए । बालकों का चन्द्र खिलौना लेने के लिए मचलना और चन्दा मामा के सामने विविध प्रकार की फरमाइशें करना, जैसा सुखद चिन्तन रहा है लगता है चन्द्रमा देवता के सम्बन्ध में गाई जाती रही, भूतकाल की गाथाएँ लगभग वैसी ही मृदुल कल्पनाएँ भर रही हैं ।

चन्द्रशोध से पता चला है कि चन्द्रमा में दिन और रात होने के अतिरिक्त और किसी प्रकार की हलचलें नहीं । न वहाँ हवा है न आँधी-तूफान । न वर्षा होती है न बादल दीखते हैं । न कोई नदी है न सरोवर । ऊबड़-खाबड़ चट्टानों और उड़ सकने में असमर्थ धूल के अतिरिक्त और वहाँ कुछ भी नहीं है । सर्वत्र नीरवता, सर्वत्र भयानक सुनसान ही वहाँ भरा पड़ा है ।

चन्द्रमा पर हमारे दो हफ्ते जितने समय तक उजेला रहता है और उतने ही समय तक अँधेरा । यही वहाँ के दिन-रात हैं धूप निकलती है तो पानी को उबाल सकने में जितनी गर्मी पड़ती है । दिन का तापमान २२० डिग्री फारेनहाइट रहता है । रात में इतनी सर्दी पड़ती है कि यदि धरती पर उतनी पड़े तो हवा और पानी विकृत होकर पहाड़ों को भी फाड़ देने जैसे संकट उत्पन्न कर दें । रात को वहाँ तापमान शून्य से भी २५० डिग्री नीचे चला जाता है । वहाँ विशाल पहाड़, गहरे गर्त, पथरीली धूलि का रेगिस्तान ही वहाँ है । हरियाली के नाम पर एक तिनका भी कहीं नहीं है । न पानी है न हवा ।

चन्द्रमा का व्यास २१६० मील है । वजन में इतना कम है कि पृथ्वी के बोझ पर ८१ लेकिन आयतन में पृथ्वी ४९ गुनी ही बड़ी है !

जैसे धरती पर चन्द्रमा निकलता है उसी तरह रात को चन्द्रमा पर पृथ्वी चमकती है । चन्द्रमा की चमक जितनी हम देखते हैं, उसकी तुलना में चन्द्रमा पर पृथ्वी ६० गुनी अधिक चमकती है । १०० केण्डिल पावर के बल्ब की रोशनी जितनी २२ गज पर नजर आती है, चन्द्रमा की धरती पर पृथ्वी की रोशनी उतनी ही होती है । उस प्रकाश में पुस्तकें पढ़ने का काम मजे में हो सकता है । हमें चन्द्रमा जितना बड़ा दिखाई देता है, उससे चार गुने बड़े आकार की चन्द्रलोकवासियों को हमारी पृथ्वी दिखाई पड़ती है, आकाश वहाँ नीला नहीं काला दिखाई देता है । क्योंकि नीलापन हवा के कारण ही होता है । हवा के अभाव में रात के समय वहाँ तारे चमकते भी हैं टिमटिमाते नहीं ।

चांद में बहुत से खड्डे हैं । इनमें सबसे बड़ा खड्ड ६४ मील चौड़ा है । पर्वत शृंखलाएँ ८ हजार से १६ हजार फीट तक ऊँची हैं । यह गड्ढे कैसे बने ? समझा जाता है कि भूतकाल में वहाँ भयंकर ज्वालामुखी फटते रहे होंगे और आकाश में उड़ने वाली विशालकाय उल्काएँ टकरा कर यह गड्ढे बनाती रही होंगीं । अपनी पृथ्वी के चारों ओर का वातावरण उल्काओं को जलाकर खाक कर देता है । फलतः

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

धरती उस विपत्ति से प्रायः अछूती रही है । पर चन्द्रमा पर वायुमण्डल न होने से उल्काओं के जा टकराने का रास्ता खुला पड़ा है । चन्द्रमा पर बिखरी धूलि के नीचे ठोस चट्टानें हैं पर कई जगह वह धूलि की पर्त सैकड़ों मील गहराई तक हैं ।

चन्द्रमा प्रायः पृथ्वी से २ लाख ४० हजार मील दूर रहता है । वह सूर्य से ४०० गुना छोटा है पर साथ ही एक अनौखा संयोग यह भी है कि उसकी दूरी भी सूर्य की अपेक्षा ४०० गुनी ही कम है । इसी संयोग के कारण हमें चन्द्रमा और सूर्य प्रायः एक ही आकार के दीखते हैं ।

चन्द्रमा का सामने वाला भाग ही हम देख पाते हैं, पीठ वाला भाग तो कभी भी दिखाई नहीं पड़ता । इसका कारण यह है कि चन्द्रमा जितने समय में पृथ्वी की परिक्रमा करता है उतने ही समय में अपनी धुरी पर भी साढ़े उन्नीस दिन में घूम जाता है । यही कारण है कि धरती वालों को चन्द्रमा की पीठ देखने का अवसर कभी भी नहीं मिला । सौर-मण्डल के अन्य ग्रहों के भी अपने-अपने उपग्रह हैं पर चन्द्रमा उस उपग्रह की बिरादरी से बहुत बड़ा है । मंगलग्रह के उपग्रह, मात्र दस-दस मील व्यास के ही हैं ।

चन्द्रमा के धरातल का गुत्वाकर्षण, पृथ्वी की तुलना में छठा भाग भर है । पृथ्वी पर पाँच फुट कूद सकने वाला आदमी चन्द्रमा पर आसानी से तीस फुट कूद सकता है । इस प्रकार यहाँ का ६० किलो भारी मनुष्य वहाँ दस किलो वजन का ही बैठेगा । पृथ्वी पर जिस तरह प्रायः २० मील इसी का क्षितिज दिखाई पड़ता है, किन्तु चन्द्रमा का क्षितिज सिर्फ दो मील दूरी का ही होता है । बात करने पर होठ ही चलते दिखाई पड़ेंगे पर हवा के अभाव में कोई शब्द उच्चारण कर सकना सम्भव न होगा ।

ऐसे अनेकों नवीन तथ्य सामने आये हैं, जिनसे भूतकाल की चन्द्र सम्बन्धी मान्यताओं को आघात पहुँचता है, और भावुक व्यक्ति अपने पूर्वाग्रहों को झुठलाया जाना देखकर खिन्न होता है पर इससे क्या ? स्वीकार तो तथ्य और सत्य को ही करना पड़ेगा । सत्य की शोध का महाप्रयाण चलता ही रहना चाहिए उसमें पूर्वाग्रहों को अस्वीकृत करना पड़े तो भी करना चाहिए । उसके लिए तत्पर रहना ही चाहिए ।

चन्द्रमान्यताएँ कितनी वास्तविक कितनी अवास्तविक

रजनी पति चन्द्रमा कभी रात्रि की देवी चन्द्रमुखी का दीप्तिमान चेहरा भी माना जाता था । राम उसे खिलौना समझते थे और पाने के लिए मचलते थे । कृष्ण की चन्द्रमा पाने की बालहठ को शान्त करने के लिए पानी में उसकी छवि दिखाकर किसी प्रकार बहलाया । प्रजापति दक्ष ने अपनी २७ कन्याएँ चन्द्रमा को ब्याह दीं । उसने उनमें से एक सर्वांग सुन्दरी रोहिणी को अपनाया और शेष २६ को उपेक्षित रखा है । दक्ष को समाचार मिला तो वे बहुत कुपित हुए और शाप देकर चन्द्रमा को नष्ट ही कर दिया । लड़कियों ने अपना वैधव्य दुःख दूर करने की पिता से प्रार्थना की । उन्होंने उसे घटती-बढ़ती कलाओं वाला बनाकर और अमावस्या को पूर्ण नष्ट रहने की व्यवस्था कर दी इस पर साँप भी न मरा और न लाठी भी टूटी वाली कहावत सध गई ।

चन्द्रमा का दर्शन करने पर उपवास तोड़ने वाले कितने ही व्रत उपवास हैं । मुसलमानों की ईद तो चन्द्र दर्शन पर ही टिकी हुई है । कुकर्म में इन्द्र का साथ देने के कारण चन्द्रमा को भी शाप लगा और उसे कलंकी बनना पड़ा । स्यामंत मणि चुराये जाने के झंझट में भी चन्द्रमा पर ही दोष थोपा गया और उसके मत्थे अभी तक कालिमा चिपकी हुई है । कामदेव की पत्नी रति का निर्माण प्रजापति ने चन्द्रमा का ही एक भाग तोड़कर किया था । वही गड्ढा कालिमा जैसी दीखता है ।

सौन्दर्यमयी कल्पनाओं से लदा चन्द्रमा कितना सुन्दर कितना कलात्मक और कितना दिव्य है । जब कि उसका भौतिक रूप सर्वथा अवांछनीय और अनुपयुक्त है । न हवा, न पानी, न वनस्पति, न सह्य तापमान । संसार का स्थूल रूप भी ऐसा ही कर्कश है । उसकी सारी शोभा तो कल्पना और भावना की कलात्मक सम्वेदनाओं से सुसज्जित की जाती है । वैज्ञानिक प्रयोगशाला में ले जाकर खड़ा कर देने पर तो मनुष्य हाड़-माँस का पुतला और शोभायमान पदार्थ, मात्र अणु यौगिकों का अन्धड़ मात्र बनकर रह जाता है न उसमें कहीं शोभा है और न सरसता ।

चन्द्रमा में बड़े-बड़े क्रेटर ३३००० के लगभग हैं । इनके अलावा छोटे खड्ड अगणित हैं । इसमें पाये जाने वाले पदार्थों को देखते हुए वैज्ञानिक ऐसी सम्भावना व्यक्त करते हैं चन्द्रमा कभी पूर्ण ग्रह रहा है । उस पर कभी कोई विकसित सभ्यता रही है । उसके निवासियों ने अणु युद्ध छेड़ा है फलतः वहाँ का समस्त वायुमण्डल और जल वैभव उड़कर अन्तरिक्ष में छितरा गया । गुरुत्वाकर्षण भी घट गया । फलतः पृथ्वी ने उसे अपनी कक्षा में घसीट लिया और वह परिक्रमा करने वाला नगण्य-सा उपग्रह मात्र बनकर रह गया । उस पर लानत की तरह उल्काएँ बरसने लगीं, इसी से उसकी सतह खाड़-खड्डों से भर गई । वायुमण्डल बना रहता तो उल्काएँ उसमें प्रवेश न कर सकतीं और कम से कम सतह बनी रहती ।

मोटे रूप में सरसरी दृष्टि से देखने पर चन्द्रमा की संरचना ऐसी प्रतीत होगी जिसे हम निरर्थक और उपहासास्पद कह सकते हैं, पर जब गहराई में प्रवेश करते हैं और सूक्ष्म दृष्टि से विश्लेषण करते हैं तो उस निरर्थकता के भीतर भी बहुमूल्य सार्थकता दृष्टिगोचर होती है । जीवन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की तरह चन्द्रमा की ऊपरी सतह निराशाजनक है, पर बारीकी के साथ गहराई में प्रवेश करने पर न चन्द्रमा निस्सार है और न मानव जीवन दोनों के ही अन्तराल में बहुमूल्य सम्पदाएँ छिपी पड़ी हैं ।

चन्द्रमा रसायनों और खनिजों की दृष्टि से बहुत सम्पन्न है । 'साइन्स' पत्रिका में प्रकाशित अन्वेषणकर्त्ताओं के अनुसार उसमें सिलीकान, टाइटेनियम, एल्यूमीनियम, फैरस, मैग्नीशियम, कैल्शियम, सोडियम, पोटेशियम, फॉस्फोरस आदि रसायनों का बाहुल्य है और खनिजों में ताँबा, लोहा, कोहेनाइट, स्कवेराइट, पोटाश फेल्सपार, क्वार्टज, स्पाइनेट, रूटाइल, ट्राइलाइट, एपेटाइट, पायरोक्नीन, इल्मेनाइट, ओलोवाइन, ट्रिडिनाइट आदि प्रचुर मात्रा में विद्यमान हैं ।

चन्द्र से लायी गई धूलि का विश्लेषण करके वैज्ञानिकों ने बताया है कि वह अपनी मिट्टी की अपेक्षा कहीं अधिक उपजाऊ है । उस पर फसलें जल्दी और ज्यादा उगेंगी । उस मिट्टी से उपजे पौधों में कीड़े लगने का भी डर नहीं है ।

चन्द्रमा पूरी तरह मरा नहीं है । उसकी ऊपरी सतह ही निर्जीव हुई है । भीतरी पर्तों में अभी वैसी ही ऊष्मा और क्षमता मौजूद है जैसी कि पृथ्वी की भीतरी पर्तों में । इसका स्पष्ट प्रमाण यह है कि वहाँ अभी भी ज्वालामुखी फूटते हैं और अपने ढंग का लावा उगलते हैं ।

चन्द्रमा समुद्र जल को प्रभावित करके जिस प्रकार ज्वार-भाटे उत्पन्न करता है, उसी तरह वह पृथ्वी की चमड़ी को भी खींचता है और वनस्पतियों को झकझोरता है । पूर्णिमा को पृथ्वी का फुलाव पौन इंच अधिक मोटा हो जाता है और उस दिन वनस्पतियों के बढ़ने तथा फूलने के सामान्य क्रम में काफी बढ़ोत्तरी रहती है ।

मनुष्यों की शारीरिक, मानसिक स्थिति पर चन्द्रमा का प्रभाव पड़ता है । मस्तिष्क और रीढ़ उसके प्रभाव को अधिक खींचते हैं । पुरुषों में अमावस को और स्त्रियों में पूर्णिमा को अक्सर आवेश की मात्रा में बढ़ी रहती है । इन्हीं दिनों उनके उन्माद अधिक उभरते देखे गए हैं ।

कोई अपने सौन्दर्य को देख समझ नहीं पाता । हर किसी को दूर के ढोल सुहावने लगते हैं । हमें चन्द्रमा अमृत वर्षा करने वाला परम सौन्दर्य का मनोरम प्रतीक मालूम पड़ता है और अपनी धरती धूलि-मिट्टी बनी बेकार और ऊबड़-खाबड़ लगती है । चन्द्रमा पर जाकर देखने वालों को वहाँ की स्थानीय स्थिति पूर्णतया कुरूप और अवांछनीय प्रतीत होती है, किन्तु उदय हुई पृथ्वी ऐसी लगती है मानो ब्रह्माण्ड सबसे सुन्दर, रंगीन और अत्यन्त शोभा-सुसज्जा युक्त एकमात्र केवल वही है ।

चन्द्रमा से सम्पूर्ण आकाश घना काला दीखता है । तारे बहुत ही चमकदार दीखते हैं । हमें चन्द्रमा जितना चमकदार दीखता है, चन्द्र तल में पृथ्वी उसकी तुलना में बीस गुनी अधिक चमकदार दिखाई पड़ती है । हमें चन्द्रमा जितना बड़ा दीखता है, उसकी तुलना में चन्द्रमा पर से देखने पर पृथ्वी चार गुनी अधिक बड़ी दीखती है । चन्द्रमा का एक दिन इतना बड़ा होता है जितने के पन्द्रह दिन । दिन-रात को मिलाकर हमारा एक महीना पूरा हो जाता है ।

हमें चन्द्रमा पर सिर्फ कुछ काले धब्बे दीखते हैं । पर चन्द्र तल पर महाद्वीपों के भूखण्ड, समुद्र, रेगिस्तान, पर्वत, हरियाली, नदियाँ, बादल, बर्फ, आँधी, तूफान आदि की स्थिति भली-भाँति देखी जा सकती है । स्थानीय विशेषताओं के अनुरूप कई प्रकार के रंगों का हल्का गहरा उभार भी दीखता है । पृथ्वी पूरे रंगीन चित्र जैसी गोल-मटोल और हलचलों से भरी हुई दिखाई पड़ती है ।

नोबेल पुरस्कार विजेता डॉ. हेराल्ड सी. उरे का कथन है कि सूर्य के विस्फोट से छितराये हुए पदार्थ से उसके ग्रह परिवार का निर्माण हुआ । उसी में से कुछ बचा हुआ पदार्थ पृथ्वी के इर्द-गिर्द घूमने लगा और वह चन्द्रमा बन गया । चन्द्रमा पृथ्वी का टुकड़ा नहीं वरन् सूर्य का बेटा है । डॉ. उरे द्वारा चन्द्र सम्बन्धी शोध ग्रन्थ "ओरिजिन एण्ड हिस्ट्री ऑफ मून" में उन्होंने यह सिद्ध किया है कि चन्द्रमा वस्तुतः पृथ्वी का जुड़वाँ भाई और एक स्वतन्त्र ग्रह है जो अपने छोटे अस्तित्व के कारण और परिस्थितियों के दबाव से पृथ्वी का परिक्रमाकारी भृत्य बन गया है ।

छितराव में क्षुद्रता ही पल्ले पड़ती है और स्थिति दयनीय होकर रह जाती है । बड़ा ग्रह जब भरा-पूरा और एक था तो उसका स्थान सौर-मण्डल में दूसरे नम्बर का था, पर जब वह टूट कर बिखर गया तो उसके अवशेष क्षुद्र ग्रहों की उपहासास्पद स्थिति में चक्कर काट रहे हैं और चन्द्रमा पृथ्वी का भृत्य होकर रह रहा है । यदि चन्द्रमा को स्वतन्त्र ग्रह भी माना जाय तो भी यह स्वीकार करना पड़ेगा कि हर किसी को अपनी सत्ता सुविकसित करनी चाहिए । पिछड़ेपन की स्थिति में पड़े रहना किसी न किसी पराधीनता के चंगुल में जकड़े बिना नहीं रह सकता । पिछड़े अफ्रीकनों को गोरे अमेरिकी पकड़ ले गए थे और शताब्दियों तक गुलाम बना कर रखा । चन्द्रमा भले ही सहोदर भाई रहा हो पर उसकी असमर्थ और तुच्छ स्थिति ने पृथ्वी का गुलाम बन कर रहने के लिए विवश बना दिया । यही तथ्य न केवल ग्रह उपग्रहों में वरन् मनुष्यों में भी पूरी तरह लागू होता है ।

चन्द्रमा अपनी धुरी पर २७$\frac{१}{३}$ दिन में एक चक्कर पूरा करता है । पृथ्वी की परिक्रमा करने में भी लगभग इतना ही समय लगता है । फलस्वरूप उसका ५९ प्रतिशत एक ही ओर का भाग पृथ्वी पर से दिखाई पड़ता है । समान गति के कारण चन्द्रमा का एक ही भाग हमें दीख पाता है । पृष्ठ भाग को हम कभी भी नहीं देख पाते । चन्द्रमा की परिक्रमा कक्षा अण्डाकार है अतएव उसकी न्यूनतम दूरी ३५६५०० किलोमीटर और अधिकतम दूरी ४०६८६३ किलोमीटर हो जाती है । चन्द्रमा का अपना प्रकाश नहीं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है । वह या तो सूर्य की रोशनी से चमकता है या फिर पृथ्वी के प्रकाश से प्रकाशवान रहता है तापमान दिन में २५० डिग्री फारेनहाइट और रात्रि में घट कर माइनस १७२ डिग्री सेन्टीग्रेड तक पहुँच जाता है ।

चन्द्र विजय क्या वस्तुतः उतनी ही आवश्यक थी जितनी कि समझी गई है । इस सम्बन्ध में प्रतिपक्ष की अभिव्यक्तियाँ भी विचारणीय हैं । रूस के एक किसान ने उस देश के प्रमुख अखबार 'प्रावदा' के नाम एक पत्र लिख कर पूछा था—अन्तरिक्षयान भेजने से मुझ जैसे सामान्य व्यक्ति को क्या लाभ ? अगर यह स्पूतनिक न बनते तो सरकार कपड़े के दाम आधे कर सकती थी और इससे मुझे आधे ही मूल्य में एक ओवरकोट मिल सकता था जिसके बिना मुझे इस कड़ाके की ठण्ड में दिन काटने पड़ते हैं ।

अमेरिकी किसान के सामने भले ही ओवरकोट की समस्या न हो पर यदि इतना खर्च न करना पड़ता तो वहाँ का उत्पादन भी सस्ता पड़ सकता था और उससे संसार को सस्ते मूल्य में वस्तुएँ मिलतीं तथा अमेरिका में उद्योग-धन्धे बढ़ने से उस देश को आज जैसी बेकारी का सामना न करना पड़ता ।

'न्यू साइंटिस्ट' के अनुसार अन्तरिक्ष में एक पौण्ड वजन फेंकने पर अमेरिकी लागत ५०००० डालर है । रूसी लागत इससे अधिक है । अमेरिका अब तक इस मद में १०० अरब डालर से अधिक खर्च कर चुका । रूस को उससे भी अधिक करना पड़ा है ।

परमाणु ऊर्जा समिति के अध्यक्ष—शेट हालीफील्ड ने चन्द्र यात्रा को 'मून मेड नैस' की संज्ञा दी थी और कहा था । 'जब खाद्यान्न परीक्षण के लिए हमें ६ लाख डालर भारी पड़ रहे हैं, तो चन्द्रयात्रा पर इतना खर्च करने की क्या जरूरत पड़ गई ?'

'सिनेटर विलयम फुल ब्राइट' ने कहा था—चन्द्र यात्रा उतनी जरूरी नहीं है जितनी गरीबी, बेकारी, बीमारी, अशिक्षा की चुनौती । इसी प्रकार के मत डॉ. वारेन वीवर अल्फेड नोवेल आदि मूर्धन्य लोगों ने व्यक्त किए हैं । 'साइंस' पत्रिका ने २००० विशिष्ट व्यक्तियों के पास एक प्रश्नावली भेज कर चन्द्रयात्रा की उपयोगिता के बारे में पूछा, तीन चौथाई ने यही उत्तर दिया कि यह प्रयास बिल्कुल निरर्थक है । यों चन्द्र विजय का प्रचार विज्ञापन खूब हुआ पर संसार के प्रमुख बुद्धिजीवियों ने इस पर अपना मौन ही रखा । इतिहास निष्णात आर्नाल्ड टायन्वी ने कहा अन्तरिक्ष खोज की अपेक्षा समुद्र की खोज ज्यादा आवश्यक थी जिससे कुछ अधिक उपयोगी हाथ लगता । 'न्यू साइंटिस्ट' पत्रिका ने एक अंक में रायल सोसायटी के अनेक फैलो वैज्ञानिकों के विचार छापते हुए यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया था कि चन्द्रयात्रा कोई बुद्धिमत्तापूर्ण कदम नहीं है । ब्रिटिश ऐसोसियेशन फॉर एडवांस मेल्ट ऑफ साइंसेज की अध्यक्ष डेम कैथिमीने लांसडेल ने लिखा है—यह धन संसार से दुःख दारिद्रय को हल्का करने में लगाया गया होता तो उसका प्रतिफल चन्द्र विजय की अपेक्षा कहीं बढ़कर होता है ।

चन्द्र विजय के उपरान्त अन्य लोकों के जीतने के लिए आतुर मनुष्य को न जाने यह समझ कब आयेगी कि वह आत्म विजय एवं धर्म विजय की भी आवश्यकता अनुभव करें और उसके लिए कुछ प्रयत्न करने की दिशा में भी थोड़े से कदम बढ़ायें ।

आइये ! अपनी विस्मृत धरोहर का स्मरण करें

पिण्ड और ब्रह्माण्ड का, चेतना और जड़ का पृथ्वी और अन्तरिक्ष का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध दर्शाने वाले अनेकों मन्त्र, सूत्र धर्म ग्रन्थों में मिलते हैं । वेद में वर्णन है—

"सूर्यो मे चक्षुर्वातः प्राणोऽन्तरिक्षमात्मा पृथ्वी शरीरम् । अस्तृतोनामाहमयस्मि स आत्मानं, निदधैद्यावापथिव्यां गोपीथाय ॥"

—अथर्व ५/८/७

अर्थात्—सूर्य मेरा नेत्र है, वायु मेरा प्राण है, अन्तरिक्ष मेरी आत्मा (हृदय) और धरती मेरा शरीर है । मैं अपने आपको अपराजित समझकर द्यु लोक और धरती के मध्य सुरक्षित रखता हूँ ।

इसी प्रकार यजुर्वेद में भी कहा गया है—

"शीर्ष्णोद्यौः समवर्तत् यस्य वातः प्राणाप्राणौः नाभ्याऽसीदन्तरिक्षं दिशः श्रोत्रं पदभ्या भूमिः ।"

अर्थात्—द्यौ मेरा सिर, वायु, प्राण, अन्तरिक्ष नाभि, दिशा कान और भूमि मेरे पैर हैं ।

इन ऋचाओं में जहाँ पिण्ड की असीम ब्रह्माण्डीय शक्ति का परिचय मिलता है वहीं शरीर, पृथ्वी, अन्तरिक्ष की विभिन्न शक्तियों के आपसी तारतम्य पर प्रकाश डाला गया है । मन्त्रों के उद्गाता ऋषि इस तथ्य से भलीभाँति परिचित थे कि मनुष्य का एकाकी पुरुषार्थ ही सब कुछ नहीं है । न ही पृथ्वी पर उपलब्ध सम्पदाएँ उसकी स्वयं की हैं । अपनी धुरी पर घूमती अपनी कक्षा में दौड़ लगाती आत्म निर्भर दीखती भर है, पर वास्तविकता वैसी है नहीं । सौर परिवार के सदस्यों की आकर्षण शक्ति उसे एक व्यवस्था क्रम में जकड़े रहती है । उनमें असन्तुलन उत्पन्न होते ही किसी भी ग्रह-नक्षत्र के एक-दूसरे से टकरा जाने से स्वयं मरने और दूसरे का मारने का खतरा उत्पन्न हो जायेगा । यों तो सौर परिवार के प्रत्येक सदस्य परस्पर एक-दूसरे से न्यूनाधिक अनुदान प्राप्त करते हैं । एक दृष्टि से पराश्रित तो सभी ही हैं, पर पृथ्वी की जो स्थिति है उसमें उसके स्वयं का उपार्जन कम और अन्तर्ग्रही अनुदान अधिक है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भू-वेत्ताओं का मत है कि अन्तरिक्ष से अनुदान उत्तरी ध्रुव से होकर आता है । उत्तरी ध्रुव का विचित्र चुम्बकत्व अपने उपयोग की आवश्यक वस्तुएँ अनन्त अन्तरिक्ष से खींचता रहता है । यदि यह अनुदान का क्रम रुक जाय तो पृथ्वी अपनी निज की सम्पदा द्वारा प्राणियों एवं वनस्पतियों की रक्षा कर पाने में भी अक्षम सिद्ध होगी । पृथ्वी पर जीवन, ऊर्जा, ताप, प्रकाश, प्राण जैसी विशेषताएँ सूर्य से प्राप्त होती हैं । ऋतुओं का आना उनमें परिवर्तन सौर गतिविधियों द्वारा संचालित है । सूर्य अपने अनुदान समेट ले तो भू-तल पर बिखरा वैभव देखते-देखते तिरोहित हो जायेगा और श्मशान की निस्तब्धता छा जायेगी ।

उपर्युक्त विश्लेषण से यह रहस्योद्घाटन होता है कि व्यक्ति और समाज की भाँति ग्रह-नक्षत्र भी एक-दूसरे पर आश्रित है और पारस्परिक आदान-प्रदान द्वारा अपना काम चलाते हैं । सौर-मण्डल ही नहीं समूचा ब्रह्माण्ड ही इस नियम व्यवस्था में जकड़ा गतिशील है और अपना अस्तित्व बनाये हुए है ।

वेद की ऋचाओं से यह पता चलता है कि प्राचीन काल में ऋषि न केवल पिण्ड और ब्रह्माण्ड की एकता से सुपरिचित थे वरन् उन्हें यह भी मालूम था कि ग्रह नक्षत्रों की गतिविधियाँ और उनमें समय-समय पर होने वाले हेर-फेर पृथ्वी के वातावरण और प्राणी जगत को प्रभावित करते हैं । ज्योतिर्विज्ञान ज्ञान की एक विज्ञान सम्मत शाखा थी जिसका उपयोग अन्तर्ग्रही गतिविधियों और प्रभावों की खोजबीन करने के लिए किया जाता था । फलतः अन्तर्ग्रही अनुदानों से लाभ उठा सकना और आने वाले विक्षोभों से पूर्व सुरक्षा व्यवस्था बना लेना ज्योतिर्विज्ञान की गणनाओं द्वारा सुलभ था ।

अब वह सारगर्भित और अति महत्त्वपूर्ण विद्या के ध्वंसावशेष ही दृष्टिगोचर होते हैं, पर जिन तथ्यों पर प्राचीनकाल के ज्योतिषाचार्य पहुँचे थे उस ओर अब विज्ञान का भी ध्यान आकर्षित हुआ है । अब यह स्वीकार किया जाने लगा है कि ग्रह-नक्षत्रों का प्रभाव पृथ्वी के वातावरण और जीवधारियों पर पड़ता है । विशेषतया सूर्य में तनिक-सा भी अन्तर पड़ने पर उसकी प्रतिक्रिया तुरन्त धरातल पर दिखाई पड़ती है । तापमान घटने और बढ़ने का प्रत्यक्ष और परोक्ष प्रभावों से सभी परिचित हैं अन्तरिक्ष में संव्याप्त सूक्ष्म तरंगों की स्थिति में हुए परिवर्तन पृथ्वी के अनेकों क्षेत्रों को प्रभावित करते हैं, उसका प्रकृति सम्पदा तथा प्राणियों के शारीरिक मानसिक स्थिति पर असाधारण प्रभाव पड़ता है । सूर्य और चन्द्रग्रहण के समय थोड़ा हेर-फेर होते ही उसका दूरगामी परिणाम दृष्टिगोचर होता है । चन्द्रमा की कलाएँ घटने-बढ़ने से समुद्र में आने वाले ज्वार-भाटों से सभी परिचित हैं । प्रकृति विक्षोभों, मानसून, तूफान साइक्लोन आदि की घटनाओं में धरती की परिस्थितियाँ इतना बड़ा कारण नहीं होती जितना कि सौर-मण्डल के साथ पृथ्वी के साथ चल रहे तालमेल के व्यतिक्रम ।

वाराहमिहर की गणना भारतीय मूर्धन्य ज्योतिर्विदों में होती है । उनका मत था कि चन्द्रमा की गति एवं स्थिति का मनुष्य मन के साथ घना सम्बन्ध है । चन्द्र कलाओं के उतार-चढ़ाव से मनःस्थिति प्रभावित होती है । मार्च १९८० के रीडर्स डाइजेस्ट पत्रिका में एक लेख "डज मून कन्ट्रोल योर मूड" नामक शीर्षक से प्रकाशित हुआ । लेखक थे 'मियामी' के प्रसिद्ध मनोचिकित्सक डॉ. लीवर । उन्होंने अपनी खोजों द्वारा जो निष्कर्ष प्रस्तुत किया वह भारतीय ज्योतिषाचार्यों के मत की ही पुष्टि करता है डॉ. लीवर के अनुसार मानवीय मन की उग्रता का चन्द्र की कलाओं से घना सम्बन्ध है । यह जानना अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होगा कि पृथ्वी की तरह मानव शरीर में भी ८० प्रतिशत पानी और २० प्रतिशत ठोस पदार्थ है । पृथ्वी के ८० प्रतिशत पानी से आच्छादित समुद्र में जिस तरह चन्द्रमा के प्रभाव से ज्वार-भाटे आते हैं ठीक उसी प्रकार मनुष्य के मन-मस्तिष्क में भी उथल-पुथल होती है । सामान्यतया विशाल महासागरों में ज्वार-भाटे का प्रभाव कुछ फुट तक ही होता है जबकि खाड़ियों में उसका प्रभाव अत्यधिक देखा जाता है । इसी प्रकार सामान्य-सन्तुलन मनःस्थिति वालों पर प्रभाव तो कम पड़ता है पर असन्तुलित और अपराधी विक्षुब्ध मनःस्थिति वालों पर प्रभाव अधिक पड़ता है ।" इस तरह के निष्कर्ष की पुष्टि अनेकों मनःचिकित्सकों ने की है कि अपराध की घटनाएँ पूर्णिमा और अमावस्या के दिन सर्वाधिक घटती है पागलों की उग्रता इन्हीं दिनों बढ़ जाती है ।

न केवल चन्द्रमा बल्कि सौर-मण्डल के अन्यान्य-ग्रह भी विभिन्न प्रकार के प्रभाव पृथ्वी के वातावरण पर डालते हैं, जिनकी भली-बुरी प्रतिक्रियाएँ आये दिन दृष्टिगोचर होती हैं । जब सौर-मण्डल ही नहीं ब्रह्माण्ड के प्रत्येक घटक परस्पर प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से जुड़े हुए हैं तो उनके प्रभावों का एक-दूसरे पर पड़ना भी स्वाभाविक है . इस सन्दर्भ में काफी पूर्व अन्तरिक्ष वैज्ञानिक पैरा सेल्सस कह चुके हैं कि "ग्रह-नक्षत्र हमारे इर्द-गिर्द पृथ्वी से आबद्ध हैं । उनकी गतिविधियाँ एवं प्रभावों की उपेक्षा नहीं की जा सकती । उपेक्षा का अर्थ होगा मानवी भविष्य का निर्धारण करने वाली एक महत्त्वपूर्ण कड़ी को छोड़ देना ।" 'पास्कल' जैसे विद्वान का मत है कि मैं ब्रह्माण्डीय एकता तथा 'डाइसिमेट्रिक प्रभाव' पर विश्वास करता हूँ जो प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से हर घटक को प्रभावित करते हैं ।

विज्ञान के बढ़ते हुए चरण के अन्तरिक्ष को भी अपने शोध का लक्ष्य बनाया है । ज्योतिर्विज्ञान का अधिष्ठाता भारत रहा है । इस विद्या की खोई कड़ियों को एकत्र करे और अध्ययन पर्यवेक्षण का क्रम चल पड़े तो समस्त मानव जाति के विकास के लिए एक महत्त्वपूर्ण सूत्र हाथ लग सकता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चन्द्रमा देवता, कुल ६९ मील दूर

२४ दिसम्बर, १९६८ को भारतीय समय के अनुसार रात दो बजे पहली बार मनुष्य ने विशाल ब्रह्माण्ड के किसी दूसरे उपग्रह के गुरुत्वाकर्षण में प्रवेश किया । प्रातःकाल ६ बजने तक अमेरिका के तीन अन्तरिक्ष यात्री फ्रैंक बोरमैन, विलियम एन्डर्स और जेम्स लाबेल ने चन्द्रमा से कुल २५५६० मील दूर थे । अब वे पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण से पूर्णतया मुक्त थे, इस अवस्था में यदि अन्तरिक्ष-यान में कोई खराबी आती तो वह पृथ्वी में न लौटकर चन्द्रमा की सतह में जा गिरता । यह यात्रा जितनी साहस भरी मानवीय इतिहास में क्रान्ति लाने वाली थी, उतनी ही खतरनाक भी थी ।

अनेक कीर्तिमानों के साथ ही इन अनोखी उपलब्धि ने मनुष्य के उस मिथ्या अभिमान को भी तोड़ा है कि वही सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ प्राणी और मुखिया है । माना उसे बुद्धि कौशल प्राप्त है, किन्तु तीन यात्रियों ने ऊपर पहुँच कर ब्रह्माण्ड के, सूर्योदय और चन्द्रमा आदि उपग्रहों के जिस रूप में दर्शन किए उससे उन्हें भी सर्वप्रथम यही सूझा कि इतने बड़े व्यवस्थित संसार को गढ़कर तैयार करने वाला, उसका नियमन और संरक्षण करने वाला विराट् पुरुष तो कोई और ही है । शेष संसार केवल उसके हाथ की कठपुतली है, इसलिए इन अन्तरिक्ष यात्रियों को भी वहाँ परमात्मा नहीं भूले, उन्होंने प्रार्थना की, "हे प्रभु ! तू मनुष्य को ज्ञान और सद्बुद्धि दे जिससे पृथ्वी पर सुख-शान्ति बढ़े, राग-द्वेष और युद्ध की विभीषिकाएँ मिटें ।"

अन्तरिक्ष उड़ान का क्रम पिछले कई वर्षों से चल रहा है । सबसे पहले एलेन शेपर्ड अन्तरिक्ष में १५ मिनट २२ सेकण्ड रहे इसके बाद १९६५ में ४ दिसम्बर से १८ दिसम्बर तक की उड़ान का सबसे बड़ा रिकार्ड भी अमेरिका का ही था । इस अवसर पर जेमिनी-१० लावेल और वार्मन कोलेकर उड़ा था । इस उड़ान में ३३० घण्टे का समय अन्तरिक्ष में रहने को मिला था । तब यह घोषणा की गई थी कि अब वह दिन अधिक दूर नहीं, जब मनुष्य चन्द्रमा पर कदम रख देगा, यही नहीं एक दिन ऐसा भी आ जायेगा, जब सौर्य-कुल के दूसरे ग्रह भी मनुष्य के लिए पास-पास बसे गाँवों की तरह हो जायेंगे । अन्य सौर-मण्डलों और अनेक प्रकाश वर्षों की दूरी वाले ग्रह-नक्षत्र भी पृथ्वी के विभिन्न महाद्वीपों, देशों, प्रान्त और जिलों की तरह हो जायेंगे ।

सचमुच विज्ञान की यह बड़ी भारी उपलब्धि होगी, किन्तु उस दिन तक मनुष्य जीवन के सम्बन्ध में अब तक का सारा दृष्टिकोण उसी तरह बदल जायेगा, जिस तरह अब वह यह सोचने लगा है कि मनुष्य अनन्त अन्तरिक्ष की तुलना में चींटी, मक्खी, मच्छर जैसा ही है । तब अन्तरिक्ष में अनेक शक्ति स्रोतों में विकसित जीवन और ऐसी क्षमताओं से संयुक्त लोक-लोकान्तरों का भी परिचय मिल सकेगा, जो स्वर्गीय सुखों से परिपूरित होंगे और इस भारतीय दर्शन की प्रामाणिकता ही बढ़ेगी । अन्तरिक्षीय विमान विज्ञान तो उसके लिए सदैव से ही सामान्य बात रही है । महाभारत युग तक ऐसी यात्राएँ बिना रोक-टोक होती थीं, महाभारत युद्ध के दौरान स्वयं अर्जुन और भगवान श्रीकृष्ण के चन्द्रारोहण का वर्णन पौराणिक ग्रन्थों में मिलता है ।

अपोलो ८ की यात्रा पुरातन इतिहास की आधुनिक आवृत्ति मात्र है और वह जितना अधिक वैज्ञानिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है, उससे कहीं अधिक आत्मिक दृष्टि से भी क्योंकि तब मनुष्य अमरत्व की कल्पना के और भी समीप पहुँचेगा । चन्द्रमा में पहुँच कर भी यदि मनुष्य की मृत्यु हो सकती है, शुक्र पहुँच कर यदि मनुष्य धरती पर लौट कर न आया तो उस हँसती-बोलती, चलती-फिरती चेतना का अगला इतिहास क्या होगा, यह सोचने का अवसर मिलेगा । अध्यात्म की यह पहली सीढ़ियाँ हैं और इसीलिए इस यात्रा को हम अध्यात्म के पुनर्गठन की पहली सीढ़ी मानते हैं ।

अपोलो-८, एक ३६ मंजिला दानवाकार चन्द्रायान २१ दिसम्बर, १९६८ को विशाल क्षमता वाले सैटर्न-५ बूस्टर रॉकेट के द्वारा आकाश की ओर उछाला गया । ३६३ फुट ऊँचा और ३१०० टन वजन का विशालकाय यान अपोलो ८·७५ लाख पौंड शक्ति से ६००० मील प्रति घण्टा की रफ्तार से आकाश की ओर उड़ चला । इस यान में ५० लाख छोटे-बड़े पुर्जे लगे थे । कोई भी पुर्जा खराब हो जाता तो चन्द्रयान या तो कहीं बीच में ही ध्वस्त हो जाता, आग लग जाती या फिर वह पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण से भटक कर सूर्य में चला जाता और जलकर भस्म हो जाता या फिर किसी और ग्रह में खिंचा चला जाता । भगवान जाने वह स्थिति कैसी होती, पर तो भी मनुष्य की वीरता की सराहना ही की जायेगी जो वह अपने जीवन की परवाह न करके सत्य और तथ्य को खोज में निकल पड़ता है । माया-मोह, आसक्ति, राग-द्वेष के बन्धनों से मुक्त ऐसे ही साहसी विज्ञानियों के लिए भगवान ने 'ज्ञानी से कोहिं प्रिय विज्ञानी' कहकर स्नेह किया है ।

एक निश्चित ऊँचाई पर पहुँचकर अपोलो-८ की शक्ति ने ह्रास अनुभव किया तब द्वितीय चरण के ५ इन्जनों का विस्फोट हुआ, जिससे ११ लाख २५ हजार पाउण्ड की नई शक्ति मिली, यान की आकृति कुछ छोटी हो गई पर अब वह १४००० मील प्रति घण्टा की उड़ान से उड़ रहा था, ४ मील की दूरी तय करने में उसे १ सेकण्ड के लगभग समय लग रहा था । इस गति से वह ११९ मील की ऊँचाई पार करने में समर्थ हुआ । अब तीसरे चरण के ईंधन का विस्फोट हुआ और उससे २ लाख २५ पाउण्ड की नई शक्ति पाकर वह १७४०० मील प्रति घण्टा की गति से आगे बढ़ने लगा । बीच निर्धारित यात्रा पथ से एक डिग्री के हजारवें हिस्से के लगभग अन्तर पड़ा होगा, यदि पृथ्वी का नियन्त्रण केन्द्र (कन्ट्रोल) उसे नियन्त्रित नहीं करता, तो इतनी विषमता ही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

चन्द्रयान को कहीं और पहुँचा देती । जब सब कुछ ठीक हो गया तो पृथ्वी से सन्देश दिया गया, 'तुम लोग ठीक यात्रा कर रहे हो' उत्तर में नियन्त्रण अधिकारियों को धन्यवाद भी मिला । अन्तरिक्ष यात्रियों और नियन्त्रण अधिकारियों के बीच संचार व्यवस्था ठीक काम कर रही थी ।

तीसरा चरण समाप्त होने के साथ यान पृथ्वी के परिक्रमा पथ पर पहुँच चुका था । एक बार फिर से चन्द्रयान की यान्त्रिक परीक्षा की गई । इस बीच वह पृथ्वी की परिक्रमा करता रहा । जब सब ठीक पाया गया तो चौथे चरण के इन्जन चालू किए गए । यह सबसे नाजुक समय था, जब चन्द्रयान ने झटका खाया और २४२०० मील प्रति घण्टा की गति से पृथ्वी की गुरुत्वाकर्षण शक्ति से बाहर शून्य गुरुत्वाकर्षण (न्यूट्रल पाइन्ट) में पहुँच गया ।

२३ दिसम्बर को १२०००० मील से भी अधिक दूर पहुँचे हुए चन्द्रयान के टेलीविजन दृश्य दिखाए गए । चन्द्रयात्री पृथ्वी पर उल्टे खड़े दिखाई दे रहे थे । यात्रा-वार्ता (रनिंग कमेन्ट्री) में बोरमैन ने बताया—"वे भोजन तैयारी में है, देखिए वह चाकलेट का पैकेट निकाल रहा और आप देख ही रहे होंगे यहाँ कैसी भारहीनता है, यह लो चॉकलेट का टुकड़ा हवा में तैर रहा है । जैसे इसमें बिल्कुल वजन नहीं है । तभी 'एण्डर्स' ने अपना टूथ ब्रुश उछाला, वह भी हवा में तैरने लगा । बोरमैन ने कहा—"आप यह खेल देख रहे हैं ।" इसी बीच लावेल कैमरे के सामने आया और उसने अपनी माँ को उनके ७५वें जन्म दिन के उपलक्ष में शुभकामनाएँ भेंट कीं ।"

जोखिम के क्षणों में ही हास-परिहास का यह क्रम भी मनुष्य की एक अहं-समस्या का संकेत है । हम कुछ भी करें कहीं भी रहें पर आनन्द और सुख की इच्छा से वंचित नहीं हो पाते । अन्तरिक्ष में भी जब उसकी खोज हुई तो ऐसा लगा कि मनुष्य की तमाम समस्याओं का कारण उसकी सुखी और आनन्दित रहने की इच्छा ही है । इसे सब जानते हैं पर सुख का स्रोत कहाँ है, यह बहुत कम लोग ढूँढ़ते और ढूँढ़ने वालों में बहुत कम उसे पाते हैं, अधिकांश तो बाह्य-विज्ञान में ही भटकते हैं । दरअसल जब तक मनुष्य अपने आपको नहीं जानता शरीर के स्थूल हव्यों से ध्यान हटाकर चेतन-आत्मा की शोध और विकास नहीं करता, तब तक यह इच्छा अधूरी और भटकाने वाली ही रहती है । सम्भव है, यह अन्तरिक्ष यात्रा कुछ लोगों को यह आत्म-प्रबोध भी कराए ।

पर यहाँ तो अब चन्द्रयान अपनी यात्रा के सर्वाधिक जटिल मुहाने पर आ चुका था । चौथे चरण का विस्फोट हुआ, इस इन्जन से यान ५० फुट आगे जाकर उलट गया और दोनों आमने-सामने आ गए, इन्जन के बचाने वाले यन्त्र (पेनले) अलग हो गए और उसके आगे रखा हुआ 'डमी ल्यूनर माड्यूक' सामने आ गया । अन्तरिक्ष यात्रियों ने उसका अध्ययन किया । संसार बड़ा विचित्र लग रहा था । सूर्योदय का दृश्य कुछ और ही था किसी ने पूछा तो उन्होंने बताया—'अभी नहीं पृथ्वी पर लौटेंगे तो एक निबन्ध लिखेंगे ।" तात्पर्य यह कि जो कुछ अन्तरिक्ष यात्रियों के मस्तिष्क में है, वह सबका सब यहाँ लिखा और बताया न जा सकेगा, क्योंकि वहाँ सब कुछ स्थूल और शाब्दिक ही नहीं भावनात्मक भी होगा, जिसे चाह कर भी अन्तरिक्ष यात्री शब्दों में व्यक्त न कर सकेंगे ।

८००० फीट आगे बढ़ने पर अपोलो उसी वेग से अलग हो गया, तब चौथे इन्जन का शेष ईंधन भी काम आ गया और इन्जन सूर्य का ही उपग्रह बनकर चक्कर काटने लगा और अपोलो-८ अकेले ही चन्द्रमा की ओर आगे बढ़ा । उसके कई खण्ड अलग हो जाने से अब वह काफी हल्का भी हो गया था । चन्द्रमा के गुरुत्वाकर्षण में उससे ३०००० मील दूरी पर पहुँच जाने पर यान गति कुल २१७० मील प्रति घण्टा रह गई थी, गुरुत्वाकर्षण के भीतर पहुँच जाने के कारण वह फिर बढ़ी और पश्चिम छोर तक पहुँचने पर ५७२० मील प्रति घण्टा हो गई । पृथ्वी अभी भी दिखाई दे रही थी, वह हरे-भरे नखलिस्तान सी दिखाई दे रही थी । यहाँ क्या हो रहा है, उसकी कल्पना भी न की जा सकती थी, क्योंकि हजारों मील व्यास वाली पृथ्वी अब एक छोटी-सी गेंद भर लग रही थी । तीनों अन्तरिक्ष यात्री अनुभव कर रहे थे कि मनुष्य का ज्ञान भी कितना सीमित है कि अब तक हम जहाँ रह रहे थे, अब वही ऐसी दिखाई दे रही है, जैसे वहाँ कुछ हो ही नहीं । न जाने ऐसे कितने विलक्षण जगत इस ब्रह्माण्ड में विद्यमान होंगे ।

यान के इन्जन फिर चालू हुए और उसने चन्द्रमा की परिक्रमा करना प्रारम्भ कर दी, पहली बार जब यान चन्द्रमा के पृष्ठ भाग पर पहुँचा तो एक बार पृथ्वी की उत्सुक निगाहों में स्तब्धता छा गई, क्योंकि अच्छे से अच्छे संचार-प्रबन्ध के बावजूद भी अब कुछ न दिखाई दे रहा था, न कुछ दूर संचार (टैलीपैथी) का ही क्रम बन रहा था । सारा संसार स्तब्ध था । चन्द्रमा के पृष्ठ भाग में यान की पता नहीं क्या स्थिति है घण्टे भर की व्याकुल प्रतीक्षा के बाद जैसे ही यान के दृश्य भाग पर आया रेडियो सम्बन्ध फिर स्थापित हुए । अमेरिकन ही क्या सारी मानव-जाति इस प्रसन्नता पर नाच उठी । यान ने २० घण्टे में ऐसे १० चक्कर चन्द्रमा के लगाए और उसे निकटतम ६९ मील की दूरी से देखा ।

२५ दिसम्बर को प्रातःकाल ११-४० पर चन्द्रयान ने पुनः दूसरा इन्जन चालू कर पृथ्वी की ओर यात्रा की । ६०-६० मील प्रति घण्टा की रफ्तार से यान पृथ्वी की ओर चल पड़ा ५७ घण्टे बाद यान ने २४७६५ मील प्रति घण्टे की रफ्तार से पृथ्वी के वायुमण्डल में प्रवेश किया । यह वेग ऐसा था कि यान से चिन्गारियाँ उठती जान पड़ती थीं । वायु घर्षण से इतनी ताप पैदा हो गई थी, जो प्लास्टिक की मोटी चादर को गलाकर पानी कर सकती थी । १०००

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

फुट की ऊँचाई पर यान के मुख्य पैराशूट खुल गए और तीनों अन्तरिक्ष यात्री प्रशान्त महासागर पर सकुशल उतर आये । ६ दिन में यह महाअभियान पूरा हुआ ।

जिस समय यह पंक्तियाँ लिखी जा रही हैं, रूस अपने सोयूज-५ के करतब दिखाकर अन्तरिक्ष में प्रयोगशाला स्थापित करने में सफल हो गया है । शीघ्र ही चन्द्रमा में उतर कर एक घण्टे में वहाँ की मिट्टी और कंकड़-पत्थर उठाकर लाने की उनकी योजना है । अमेरिका अपोलो-६ के द्वारा अप्रैल ६६ में ही चन्द्रमा में उतरने की योजना बना रहा है । अपोलो-८ की ७वीं चन्द्र-परिक्रमा के दौरान उसने सम्भावित स्थानों (जहाँ चन्द्रयान उतरेंगे) की खोज कर ली है । वहाँ के बहुत स्पष्ट फोटो भी वे साथ लाये हैं । तात्पर्य यह कि चन्द्रमा और पृथ्वी दोनों दो पड़ोसी रियासतों की तरह पास-पास आ गए हैं । पता नहीं किसी दिन यह आवागमन और भी सुविधाजनक और सरल हो जाय, जिससे सामान्य लोग भी वहाँ जाने लगें ।

चन्द्रमा की इन चर्चाओं के साथ भारतीय मान्यताओं की चर्चाएँ और जुड़ रहीं हैं, लोग उपहास में कहते हैं यह लो हिन्दुओं के देवताओं के सिर मनुष्य जा चढ़ा है । यों बात कोई भी कुछ करे पर इस यात्रा से भारतीय दर्शन और उसके विराट् तत्वज्ञान की ही पुष्टि हुई ।

देवता—(जो निरन्तर कुछ देता रहे) के रूप में सुविख्यात जिगर ने भी चन्द्रमा को जीवन का स्रोत मानते हुए लिखा है कि "यह जल हर आधिपत्य रखता है और जीवधारियों का पोषण करता है । 'मिथ्स एण्ड सिम्बिल्स इन इण्डियन आर्ट एण्ड सिविलिजेशन पृष्ठ ६०' में लिखा है, धरती में ओस-कण चन्द्रमा के प्रकाश की ही देन है, उससे वनस्पतियों को पोषण मिलता है, वनस्पति दूध का और दूध मनुष्य के शरीर में रक्त का निर्माण करता है । जीवन दान की इसी कल्पना के रूप में चन्द्रमा को देवता माना गया है, स्थूल रूप में तो पंच-भौतिक प्रकृति के अतिरिक्त वहाँ कुछ भी नहीं है ।

अपोलो-८ के कमाण्डर फ्रेंक बोरमैन ने इस यात्रा के दौरान चन्द्रमा को बहुत निकट से देखकर बताया—"यह चन्द्रमा गहन स्तब्ध सन्नाटे से भरा बीहड़ मात्र है । इसमें कुछ नहीं है, भद्दी चट्टानों से बना बादलों का पुंज लगता है ।" सहयोगी चालक लावेल ने भी उसकी पुष्टि करते हुए बताया—"चन्द्रमा पास से बड़ा भयोत्पादक है ।" एण्डर्स—"चन्द्रमा बड़ा वीभत्स है, मीलों गहरे अन्ध-क्रेटर, वनस्पति जहाँ कुछ भी नहीं धूसर मरु-विस्तार, डरावनी ऊबड़-खाबड़ पहाड़ियों का अस्तित्व जहाँ से दीखने वाले तारे और सूर्य और भी भयंकर लगते हैं ।" इस कथनों में जहाँ यह बात सिद्ध होती है कि चन्द्रमा पंच-महा-भौतिक प्रकृति का घनीभूत स्थल है, वहाँ उसकी महत्ता केवल प्रकाश की है, जो कहीं और स्थान से आता है और जिसके सम्बन्ध में माण्डूक्य उपनिषद (२।१।४) तथा गीता में क्रमशः 'चक्षुषी चन्द्र सूर्यो'—चन्द्रमा विराट् पुरुष परमात्मा का दाहिना नेत्र और 'अनन्त बाहुँ शशि सूर्य नेत्र'—अनन्त बाहुओं वाले मुझ परमात्मा के सूर्य और चन्द्रमा नेत्र हैं—कहा है । संयोग से विराट् दर्शन का श्रीगणेश भी चन्द्रमा से ही होता है । प्रकाश के सम्बन्ध में व्यापक खोंजे हुईं तो चन्द्रमा के भारतीय स्वरूप की और भी पुष्टि होगी तथा विराट्-पुरुष की खोज में विलक्षण जानकारियाँ भी मिलेंगी । अभी वैज्ञानिकों का ध्यान केवल स्थूल चन्द्र की ओर है ।

सौर-मण्डल : कितना विस्तृत कितना सम्पन्न

कोई जमाना था जब आकाश में एक ही चन्द्रमा चमकता था । समझा जाता था कि सौर-मण्डल के ग्रह सूर्य के बेटे हैं और चन्द्रमा की गणना पोते के रूप में हो सकती है ।

अब तक तीन बेटे बिछुड़े रहे । यूरेनस, नेपच्यून और प्लूटो के बारे में धरतीवासियों को जो भी कुछ अता-पता था वह यही कि उसके यह बिछुड़े भाई हैं, जो दूरी में रहने के कारण दीखते नहीं पर अब इन्हें देख और पहचान लिया गया है । साथ ही उनकी गतिविधियों और सम्पदाओं के सम्बन्ध में भी बहुत कुछ अता-पता लगा लिया गया है ।

अब प्रश्न पोतों का आता है अर्थात् चन्द्रमाओं का । अब तक एक को ही जाना गया है, जबकि वे अब तक की जानकारी के अनुसार ६० हो चुके हैं । हो सकता है कि अगली नई जानकारियों में इनकी संख्या और भी बढ़ जाय ।

ग्रह परिकर में बुध और शुक्र ये दो ऐसे हैं जिनके कोई पोते नहीं हैं । वे बूढ़े भी हैं, और गरम मिजाज भी । इसलिए उन्हें अकेले-अकेले ही जिन्दगी काटनी पड़ रही है । शेष सभी के बच्चे हैं, पोते नाती यानी चन्द्रमा भी ।

मंगल के दो चन्द्रमा हैं । इनमें से एक अपने ग्रह से मात्र २७ किलोमीटर और दूसरा १४ किलोमीटर है । अपने पिता की बहुत नजदीक से परिक्रमा करने में वे लगे रहते हैं ।

मंगल और वृहस्पति के बीच में किसी ग्रह का चूरा घूमता है । इनमें से कुछ टुकड़े छोटे और कई तो कई-कई मील के हैं । अपने समय पर वे भी एक सीमा तक चमकते होंगे, तो उन्हें परपोते माना जा सकता है । इनकी जानने योग्य संख्या गिनी जाय तो लाखों में पहुँचेगी ।

वृहस्पति के छोटे बड़े १२ चन्द्रमा हैं । इनमें से कई तो थोड़े फासले पर घूमते हैं और कई आगे पीछे भी निकल जाते हैं । एक साथ कितने ही चन्द्रमाओं का आकाश में चमकना बहुत सुन्दर लगता होगा । शनि के १६ चन्द्रमा हैं । इनमें से कई तो पृथ्वी के चन्द्रमा से भी बहुत बड़े हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यूरेनस के १५ चन्द्रमा हैं । नेपच्यून के तीन और प्लूटो का एक चन्द्रमा ही दीख पड़ता है पर खोजी उपकरणों की स्थिति को देखते हुए उनके भी कुछ अधिक चन्द्रमा बढ़ सकते हैं ।

शनि के इर्द-गिर्द एक समझी जाने वाली पट्टियाँ वस्तुतः तीन हैं । इनमें वाष्पीकृत पदार्थ कुहासे की तरह भरा हुआ है और ग्रह के साथ-साथ ही घूमता रहता है । एस्ट्रोफिजिक्स की खोजों से पता चला है कि यूरेनस और नेपच्यून दोनों की स्थिति मिलती-जुलती है । दोनों अमोनिया और मीथेन से घिरे हुए हैं । यह चमकदार बर्फ की तरह दृष्टिगोचर होते हैं । यदि उनकी चट्टानें काटी जायें तो उनकी कठोरता, चमक और पारदर्शक स्थिति ऐसी पायी जायेगी जिससे उस पदार्थ को हीरा के समतुल्य कहा जा सके ।

इस क्षेत्र में पास जाने वाली सम्भावित पदार्थ की गहरी जाँच इन्फ्रारेड फोटोग्राफी से विलियम हर्वर्ड ने की है और उस पदार्थ में पाये जाने वाले अणु दबाव को देखते हुए कहा है कि इसकी तुलना पृथ्वी पर पाये जाने वाले हीरे से भली प्रकार की जा सकती है ।

पुरातन ज्ञान को ही पर्याप्त या सब कुछ मान बैठना अबुद्धिमत्ता पूर्ण है । प्रकृति के रहस्यों में से अभी हम बहुत थोड़ा ही जान पाये हैं । अभी इस शोध प्रसंग को चलते रहना चाहिए ।

हमारी बुद्धि सर्व ज्ञाता नहीं है

ऋग्वेद की एक ऋचा है—

'इह ब्रवीतु य उतच्चिकेतत्'

अर्थात्—इस विश्व के सब रहस्यों को यदि कोई जानता है तो वह यहाँ आकर बताये ।

तैत्तिरीय ब्राह्मण की एक श्रुति है—"यह विश्व किससे उत्पन्न हुआ यह कौन जानता है ? इसके रहस्यों को कौन कह सकता है ? देवता भी तो पीछे जन्मे हैं, वे अपने उद्भव से पूर्वकाल के वृत्तान्त कैसे जान पाये ? जिसका एक फल यह पृथ्वी है, उस ब्रह्माण्ड वृक्ष का जन्म किस आरण्यक में हुआ इसे कौन जानता है ? इस सबका जो अधिष्ठाता है उसे कौन जानता है ? वह अधिष्ठाता भी अपने विस्तार का सम्पूर्ण रहस्य जानता है या नहीं इसे कौन जाने ?"

कापर्निकस भी सत्य की शोध में एक सीमा तक ही बढ़ सका । उसने पृथ्वी को विश्व का केन्द्र तो नहीं माना, पर वह सेहरा सूर्य के सिर बाँध दिया । वह कहता था ब्रह्माण्ड का मध्य केन्द्र सूर्य है । उसी के इर्द-गिर्द समस्त ग्रह-नक्षत्र परिक्रमा करते हैं । उसे क्या पता था कि बेचारा सूर्य भी कभी अनन्त ब्रह्माण्ड की परिभ्रमण प्रक्रिया का एक नन्हा-सा बाल-पथिक ही माना जाने लगेगा ।

प्राचीन ज्योतिष शास्त्र की मान्यता यही रही है कि पृथ्वी स्थिर है और सूर्य चल एवं ग्रह-नक्षत्र उसकी परिक्रमा करते हैं । पृथ्वी को चपटी तश्तरीनुमा माना जाता था । यों पीछे पाइथागोरस, अलबेरुनी, आर्य भट्ट आदि ने पृथ्वी को गोल तो माना पर उसे भ्रमणशील वे भी नहीं मानते थे ।

पहली बार पृथ्वी के भ्रमणशील होने का प्रतिपादन पोलेण्ड निवासी कापर्निकस ने किया और इसके प्रमाण तर्क का प्रतिपादन उसने अपने ग्रंथ 'आकाश मंडल के भ्रमण पथ पर' नामक ग्रन्थ में किया । उसे अनुमान था कि इस प्रतिपादन से पुरातन पंथी ईसाई समाज उसका घोर विरोध करेगा । इसलिए उसने चतुरता से काम लिया, उसे रोम के पोपपाल तृतीय को समर्पित किया और ऊपर से ऐसी लीपा-पोती की जिससे प्राचीन प्रतिपादन का खण्डन होते हुए भी कटुता उत्पन्न नहीं हुई । पोप की आड़ में कुछ दिन तो यह चाल सफल रही, पर पीछे जैसे ही उसे लोगों ने बारीकी से पढ़ा वैसे ही ईसाई धर्म के दोनों ही वर्ग प्रोटेस्टेण्ट और रोमन कैथोलिक उसके विरोध में हाथ धोकर पीछे पड़ गए । अन्ततः पाप के आदेश से उस पुस्तक को जब्त कर लिया गया । प्रतिपादनकर्त्ता पर वे अपराध लगाये गए जिनका फल उसे मृत्यु दण्ड ही भुगतना पड़ सकता था । अच्छा इतना ही हुआ अपराध लगाये जाने से ७३ वर्ष पूर्व ही कापर्निकस मर चुका था । अन्यथा उसे भी धरती को भ्रमणशील बताने वाले एक अन्य खगोलज्ञ बूनी की तरह जीवित जला दिया जा सकता था । ऐसे ही प्रतिपादनों पर गैलीलियो को भारी उत्पीड़न सहने पड़े थे ।

गैलीलियो ने खगोल का दूरदर्शन कर सकने योग्य दूरबीन सबसे पहले १६०९ में बनाई । इससे पूर्व जितना तारामण्डल आँखों से देखा जा सकता था उसी की खोज सम्भव थी और की गई । आचार्य लगध, आर्य भट्ट, वराहमिहिर, भास्कराचार्य और टालमी, कोपर्निकस, केपलर आदि ज्योतिर्विदों ने आँखों से जो देखा जा सकता था उसी आधार पर खगोल विद्या की खोज-बीन की है ।

समस्त ब्रह्माण्ड के बारे में जानना तो बहुत दूर की बात है हम अपने सौर-मण्डल के बारे में ही बहुत कम जानते हैं । पृथ्वी के बारे में हमारी जानकारी का क्रमिक विकास हुआ है । चन्द्रमा को प्राचीनकाल में एक स्वतन्त्र और पूर्ण ग्रह माना जाता था अब वह मान्यता बदल दी गई है और माना गया है कि वह पृथ्वी का उपग्रह मात्र है ।

चन्द्रमा पृथ्वी से ३,८०,००० किलोमीटर दूर है । प्रकाश की किरणें उस दूरी को सवा सेकण्ड में पूरी कर लेंगी । सूर्य से पृथ्वी १४,९५,००००० किलोमीटर दूर है । इतनी दूरी पूरी करने में प्रकाश किरणों को साड़े आठ मिनट लगते हैं । अपने सौर-मण्डल का अन्तिम ग्रह प्लूटो, सूर्य से ५९० करोड़ मील कि. मी. है । इस दूरी को प्रकाश किरणें साड़े पाँच घंटे में पूरा करती हैं । इसी से हम अनुमान लगा सकते हैं कि 'प्रकाश समय' का क्या अर्थ होना चाहिए ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

एक सेकण्ड में प्रकाश किरणें १,८६०० मील अर्थात् ३,००,००० किलोमीटर की यात्रा करती हैं । ग्रह-नक्षत्रों की दूरी नापने में इस आधार पर बनाई गई समय इकाई के प्रकाश वर्ष बनाये गए हैं । एक प्रकाश वर्ष अर्थात् १,००,००,००० करोड़ किलोमीटर दूरी ।

मंगल को भौम—भूमिपुत्र आदि नामों से पुकारा जाता है और कहा जाता है कि वह अति प्राचीनकाल में पृथ्वी का ही एक अंग था । प्रकृति के विग्रह से यह टुकड़ा कटकर अलग हो गया और स्वतन्त्र रूप से ग्रह बनकर अपनी कक्षा में भ्रमण करने लगा । इतने पर भी उसमें ऐसी अनेकों विशेषताएँ मौजूद हैं जो पृथ्वी से मिलती-जुलती हैं । उस पर प्राणियों की उपस्थिति पर जो विश्वास किया जाता रहा है उसमें कमी नहीं आयी वृद्धि एवं पुंष्टि ही हुई है ।

सोवियत खगोलवेत्ता मिरवाइल यारोव ने अभी हाल में रूस तथा अमेरिका द्वारा भेजे गए मंगल खोजयानों की रिपोर्टों का अध्ययन करके यह निष्कर्ष निकाला है, कि वहाँ जीवन होने की बहुत सम्भावना है । वे कहते हैं मंगल मृत ग्रह नहीं है । उसमें पिछले दिनों ऐसी उथल-पुथल होती रही हैं जिनका प्राणियों की उत्पति में प्रधान हाथ रहता है । अगले दिनों वहाँ के ध्रुवों के पिघलने की पूरी सम्भावना है इससे कुछेक केन्द्रों में संग्रहीत और ठोस स्थिति में रहने वाला पानी नदी-नालों और बादलों के रूप में जगह-जगह पहुँचने लगेगा । उस स्थिति में स्वभावतः ऐसे प्राणी उत्पन्न होने लगेंगे जो वहाँ की जलवायु में भली प्रकार जीवनयापन कर सकें ।

मंगल में पानी तो है, पर वह वहाँ फटते रहने वाले ज्वालामुखियों द्वारा हवा में भाप बनाकर बुरी तरह उड़ाया जा रहा है । उसके भूतल का प्रायः एक लाख गैलन पानी भाप बनकर आकाश में उड़ जाता है । इसी से सघन बादल जो उसके ऊपर छाये हुए हैं और भी अधिक सघन बनते जाते हैं ।

अन्तरिक्ष खोजी मैनियर ने जो सूचनाएँ भेजी हैं उनका विश्लेषण करते हुए डॉ. मासूरस्की ने एक निष्कर्ष यह भी निकाला है कि मंगल जब सूर्य की परिक्रमा करते हुए उसके निकटतम पहुँच जाता है तो गर्मी की अधिकता से उसके ध्रुव प्रदेशों की बर्फ पिघल कर नई नदियों तथा झीलों का निर्माण करती हैं । जब वह बहुत दूर निकल जाता है तो गर्मी की कमी से हिमि प्रलय भी होती है । इन हिम युगों के बीच प्रायः २५००० वर्षों का अन्तर रहता है ।

हम पृथ्वी निवासियों की शरीर रचना डिऑक्सीराइबो न्यूक्लीक एसिड (डी. एन. ए.) रसायन से सम्भव हुई है । यह जलीय स्तर का तत्व है । उसका विकास जहाँ जल की उपस्थिति होगी वहाँ सम्भव हो सकेगा । पर यह अनिवार्य नहीं कि यह एक ही रसायन सभी ग्रह-नक्षत्रों की स्थिति में जीवन उत्पन्न करता हो, उसके और भी बहुत से आधार हैं ।

अमेरिका की नेशनल साइन्स कांग्रेस ने मंगल-ग्रह की नवीनतम स्थिति को ध्यान में रखते हुए भी यह आशा व्यक्त की है कि वहाँ जीवन का अस्तित्व हो सकता है । डी. एन. ए. के अतिरिक्त भी जीवन के अन्य आधार हो सकते हैं । पृथ्वी पर भी ऐसे बैक्टीरिया पाये गए हैं जो मंगल जैसी परिस्थितियों में रखे जाने पर जीवित रह सकते हैं । उन्हें ऑक्सीजन की जरा भी जरूरत नहीं पड़ती यहाँ तक कि ऑक्सीजन में उल्टे दम तोड़ने लगते हैं ।

रूस की साइन्स एकेडेमी के अन्तर्गत चलने वाले माइक्रो बायोलॉजिकल इन्स्टीट्यूट ने एक ऐसी प्रयोगशाला विनिर्मित की है जिसमें मंगल-ग्रह जैसा वातावरण है । इसमें पृथ्वी पर उत्पन्न होने वाले पिग्मेन्टे बैक्टीरिया भली प्रकार विकसित हो रहे हैं । घातक अल्ट्रावायलेट विकिरण भी उन्हें कुछ हानि नहीं पहुँचा सकता । ऐसे ही कुछ पौधे भी हैं जो उस वातावरण में जीवनयापन कर रहे हैं ।

मैरीनर-६ यान द्वारा भेजी गई सूचनाओं का जेट प्रोपल्शन लेबोरेटरी में अध्ययन करके यह निष्कर्ष निकाला गया है कि वहाँ के दक्षिण ध्रुव पर हिमाच्छादित वातावरण है । डॉ. रूडोल्फ हैनेल ने इन्हीं सूचनाओं से यह भी नतीजा निकाला है कि वहाँ की हवा में भाप का भी अच्छा अंश है । ऊपर के वातावरण में तेज गर्मी अवश्य है, पर मंगल के धरातल का तापमान सह्य है । मंगल के दो चन्द्रमा उसकी परिक्रमा करते हैं ।

तब अमेरिका अपना मंगल यात्रा पर जाने वाला चार यात्रियों सहित एक यान १ मई, १९८६ को भेजने की सम्भावना घोषित कर चुका था । सूर्य, मंगल और पृथ्वी की चाल को देखते हुए वह दिन ऐसा होगा जिसको चलने से कम से कम यात्रा करने पर भी लक्ष्य तक पहुँचा जा सकेगा । यों मंगल की न्यूनतम दूरी पृथ्वी से ६२० लाख और अधिकतम दूरी ६५० लाख मील है । इस यान के लौटने की तारीख २५ जुलाई, १९८७ निर्धारित की गई थी और अनुमान लगाया था कि इस यात्रा पर ७५० खरब डालर खर्च आयेगा ।

पोलिश खगोल विज्ञानी जान गाडोमिस्की ने ब्रह्माण्ड में जीवन की सम्भावनाओं पर प्रकाश डालने वाली एक महत्त्वपूर्ण पुस्तक लिखी है—'मेनुअल आल स्टेलर एको-स्फियर्स' उसमें उन्होंने अपने निकटवर्ती तीन ऐसे ग्रहों का उल्लेख किया है जिनमें जीवन होने की पूरी-पूरी सम्भावना है । वे हमसे दस-ग्यारह प्रकाश वर्ष की दूरी पर हैं ।

सन् १९५० में एक उल्काश्म पृथ्वी पर गिरा था । उसका विश्लेषण करने में अमेरिका के मूर्धन्य विज्ञानवेत्ता जुटे । डॉ. सिसलर की अध्यक्षता में चली उस शोध का निष्कर्ष यह था कि इसमें अमीनो नाइट्राइड, हाइड्रोकार्बन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जैसे जीव रसायन मौजूद हैं और जहाँ से यह आया है वहाँ जीवन की सम्भावना है । कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय ने डॉ. काल्विन के नेतृत्व में इसी उल्काश्म की दूसरे ढंग से खोज कराई । उन्होंने भी सिसलर की जीवन सम्भावना वाली बात को पुष्ट कर दिया ।

पृथ्वी से पचास मील ऊपर कितनी ही उल्काएँ उड़ती रहती हैं । प्रयत्न यह किया जा रहा है कि इनमें से कुछ को गिरफ्तार करके लाया जाय और उनके मुँह से ब्रह्माण्ड के छिपे हुए रहस्यों को उगलवाया जाय । यों धरती पर से भी एस्ट्रोरेडियो सिस्टम के सहारे संसार की कितनी ही वेधशालाएँ इस दिशा में खोजें-बीन करने में निरत हैं । ओजमा प्रोजक्ट का रेडियो टेलिस्कोप इस दिशा में कितनी ही महत्त्वपूर्ण खोजें प्रस्तुत करने में सफल हो चुका है ।

अपने सौर-मण्डल में ९ ग्रह ३१ उपग्रह और जो गिन लिए गए ऐसे २० हजार क्षुद्र ग्रह हैं । यह सभी अपनी-अपनी कक्षा मर्यादाओं में निरन्तर गतिशील रहने के कारण ही दीर्घजीवन का आनन्द ले रहे हैं । यदि वे व्यतिक्रम पर उतारू हुए होते तो इनमें से एक भी जीवित न बचता । कब के वे परस्पर टकराकर चूर्ण-विचूर्ण हो गए होते ।

इन नौ ग्रहों में से छः पुराने हैं और तीन नये । बुध, शुक्र, राहु (पृथ्वी), मंगल, वृहस्पति, शनि, यूरेनस, नेपच्यन, प्लूटो । इनमें जो ग्रह सूर्य के जितना समीप है उसकी परिक्रमा गति उतनी ही तीव्र है । बुध सबसे समीप होने के कारण प्रति सेकण्ड ४८ किलोमीटर की गति से चलता है और एक परिक्रमा ८ दिन में पूरी कर लेता है । पृथ्वी एक सेकण्ड में २८.६ किलो मीटर की चाल से चलती हुई ३६५.२५ दिन में परिक्रमा पूरी करती है । प्लूटो सबसे दूर है वह सिर्फ ४.३ कि.मी. प्रति सेकण्ड की चाल से चलता है और १४८.४३ वर्ष में एक चक्कर पूरा करता है ।

इनमें से बुध और शुक्र में अतिताप है । मंगल मध्यवर्ती है । वृहस्पति, शनि, यूरेनस, नेपच्यून, प्लूटो बहुत ठण्डे हैं । पृथ्वी का तापमान सन्तुलित है ।

सूर्य से पृथ्वी की ओर चलें तो पांचवाँ और पृथ्वी से सूर्य की ओर चलें तो तीसरा ग्रह वृहस्पति है । वह अपने नौ ग्रहों में सबसे बड़ा है । शेष ग्रहों का सम्मिलित रूप भी वृहस्पति से कम पड़ेगा । उसकी दूरी सूर्य से भी उतनी ही है जितनी पृथ्वी से, अर्थात् कोई साठ करोड़ मील अधिक से अधिक और छत्तीस करोड़ मील कम से कम । उसका मध्य व्यास ८८,७०० मील है । सामान्यतया उसे पृथ्वी से १० गुना बड़ा कहा जा सकता है । गैस के बादलों की १० हजार से लेकर २० हजार मील मोटी पर्त उस पर छाई हुई है । पानी और हवा का अस्तित्व मौजूद है । वृहस्पति के इर्द-गिर्द १२ चन्द्रमा चक्कर काटते हैं । इनमें से चार का तो विस्तृत विवरण भी प्राप्त कर लिया गया है । वृहस्पति का गुरुत्व पृथ्वी से ढाई गुना अधिक है । वहाँ दिन १० घण्टे का होता है, किन्तु लगभग १२ वर्ष में पूरा होता है । उसकी चाल धीमी है एक सेकण्ड में आठ मील । जबकि अपनी पृथ्वी एक सेकण्ड में अठारह मील चल लेती है ।

विश्व जीवन का कीर्तिमान २१०° फारेनहाइट तक जीवित रह सकने का बन चुका है । उतनी गर्मी सहन करने वाले जीवधारी वृहस्पति जैसे दूसरा सूर्य समझे जाने वाले हाइड्रोजन गैस प्रधान ग्रहों पर आसानी से निर्वाह कर सकते हैं ।

वैज्ञानिक यहाँ तक कहते हैं कि सूर्य के विस्फोट से जिस प्रकार सौर-मण्डल के अन्य ग्रह बने हैं, उस तरह वृहस्पति नहीं बना । वह अपने बारहों उपग्रहों समेत एक स्वतन्त्र नक्षत्र है । किसी प्रकार सूर्य की पकड़ में आकर उसकी अधीनता स्वीकार करने में विवश हो गया है । तो भी उसमें स्वतन्त्र तारक जैसी विशेषताएँ बहुत अंशों में विद्यमान हैं । यदि वृहस्पति स्वतन्त्र तारक रहा होता तो उसके बारह उपग्रहों में चार को प्रधानता मिलती । इन प्रधान चन्द्रमाओं को गैलिलियो ने अपनी दूरबीनों से देख लिया था और उनके नामकरण आई. ओ. यूरोपा—गैनीमीड—कैलिस्टो कर दिया था । अन्य आठ उपग्रह इसके बाद देखे पहचाने गए ।

सौर-परिवार के ग्रह पिण्ड अपनी पृथ्वी के सहोदर भाई हैं । हम उनके बारे में जो जानते हैं वह इतना कम है जिसे बालकों जितना स्वल्प ज्ञान ही कह सकते हैं । सौर-परिवार जैसे अरबों-खरबों तारक मण्डल जिस ब्रह्माण्ड में भरे पड़े हैं उसकी विशालता की कल्पना तक कर सकना अपनी बुद्धि के लिए सम्भव नहीं है ।

हम अपनी ज्ञानपरक उपलब्धियों पर गर्व करें तो ठीक है, पर साथ ही यह भी ध्यान रखें कि अनन्त ज्ञान की तुलना में हमारी जानकारियाँ अत्यन्त ही स्वल्प और नगण्य हैं । इतनी तुच्छ जानकारी के आधार पर हमें सर्वज्ञाता बनने का दुस्साहस नहीं करना चाहिए और ईश्वर एवं आत्मा के अस्तित्व तक से इन्कार करने की इसलिए धीठता नहीं बरतनी चाहिए कि हमारी बुद्धि उसे प्रत्यक्षवाद की प्रयोगशाला में प्रकट नहीं कर सकी ।

ऊँची उड़ानें पर लक्ष्य विहीन

मनुष्य गतिशील हो रहा है, उसकी प्रगति, आकांक्षाएँ रॉकिटों की तरह दूरगामी छलाँगें भर रही हैं । वह आगे बढ़ना चाहता है और ऊँचा उठना चाहता है, सीमा बन्धनों को तोड़कर असीम के साथ सम्बन्ध जोड़ने की उसकी महत्त्वाकांक्षा है । इस महत्त्वाकांक्षा की पूर्ति के लिए उसने विज्ञान का सहारा लिया है और बिना पंखों के उड़ने वाले रॉकिटों के रूप में अभिनव उपकरण तैयार किए हैं । ये रॉकिट गजब के हैं । वे एक शक्तिशाली धक्के के साथ अन्तरिक्ष में धकेल दिए जाते हैं । निर्धारित गति के अनुसार वे उड़ते हैं और निर्दिष्ट लक्ष्य तक जा पहुँचते हैं । लक्ष्यवेध

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की आकांक्षा भौतिक जगत में एक सीमा तक पूरी हो सकी, इसकी साक्षी देता हुआ रॉकेट विकास हमारे सामने गर्वोन्नत मस्तक-सा खड़ा है ।

द्वितीय महायुद्ध में जर्मनी के बी. १ और बी. २ रॉकेटों ने मित्र राष्ट्रों की नाक में दम कर दिया था । एक बार तो ऐसा लगने लगा था कि इंग्लैण्ड का पूर्ण विनाश करके ही यह रॉकेट दम लेंगे । पाशा पलटा मित्र शत्रु हुए और शत्रु मित्र । रूस और जर्मनी में खटकी । फलस्वरूप रूस के उसी प्रकार के रॉकेटों ने जर्मनी की चमड़ी उधेड़ कर रख दी और लड़ाई का नक्शा ही बदल गया । विजय की सम्भावना पराजय में और पराजय की आशंका विजय में बदल गई ।

युद्ध की दृष्टि से यह रॉकेटों का युग है । अब आमने-सामने खड़े होकर तीर, तलवार या तोप, बन्दूक चलाने की आवश्यकता नहीं रही । प्रयोगशाला में बटन दबते ही रॉकेटों के दैत्य आकाश में उड़ने लगते हैं और शब्दवेधी वाण की कथा गाथा को साकार करते हुए निर्धारित लक्ष्य पर जा गिरते हैं और अपनी प्रचण्ड विस्फोट शक्ति से महाविनाश के दृश्य उपस्थित करते हैं । भविष्य में तीसरा महायुद्ध हुआ तो उसका प्रधान आयुध रॉकेट ही होगा । उस पर लाद कर अणुबम, गैस बम, कीटाणु बम, बारूद बम, मृत्यु-किरणबम अथवा जो कुछ भी भेजे जाया करेंगे वे प्रति पक्षी को महामरण के—महाविनाश के श्मशान में जलाया करेंगे । इन युद्धरत पक्षों में से किसको जीवित रहने का सौभाग्य मिलेगा यह पीछे की बात है, पर इतना निश्चय है कि अब युद्ध में बाहुबल अथवा शौर्य, साहस की आवश्यकता नहीं पड़ेगी । वैज्ञानिक उपकरण और उनके संचालक का कौशल ही भावी युद्ध में निर्णायक फैसला कर देंगे ।

रॉकेट जिसने युद्धकला की परम्परागत समस्त परम्पराओं और सम्भावनाओं को उलट कर रख दिया आखिर है क्या ? उसमें शक्ति कहाँ से आती है ? वह अपना क्रिया-कलाप कैसे सम्पन्न करता है ? इसकी जिज्ञासा जनसाधारण को हो तो यह उचित ही है । मनुष्य जाति के भाग्य का फैसला करने की क्षमता जिस महादैत्य ने अपनी मुट्ठी में समेट ली है, उसका सामान्य परिचय और क्रिया-कलाप हमें विदित रहें यह उचित भी है और आवश्यक भी ।

यान्त्रिकी विद्या के विद्यार्थी 'क्रिया की प्रतिक्रिया' का प्रकृति नियम भली प्रकार जानते हैं । जीवधारियों के सामान्य शारीरिक क्रिया-कलाप तक इसी आधार पर होते हैं । नाव का खेना, पानी में तैरना, पक्षियों का उड़ना जैसे क्रिया-कलापों में क्रिया की प्रतिक्रिया से उत्पन्न होने वाली शक्ति ही काम करती है । न्यूटन ने पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण का ही विवेचन नहीं किया है उसने यह भी सिद्ध किया है कि प्रत्येक क्रिया की एक समान और विरोधी प्रतिक्रिया भी होती है । रॉकेट का निर्माण भी इसी सिद्धान्त के आधार पर हुआ है ।

रॉकेट सिद्धान्त को विकसित करने का श्रेय रूसी वैज्ञानिक सलकोब्सकी को है । उनके बताये आधारों को रॉकेट सूत्र कहते हैं । उन्होंने रॉकेट निर्माण के लिए दो तथ्य प्रस्तुत किए थे—(१) इंजन से निकलने वाली गैस की धारी की गति (२) रॉकेट के कलेवर और उसमें भरे ईंधन का अनुपात । ईंधन जितना अधिक और आवरण जितना हल्का होगा उसी अनुपात से रॉकेट की गति बढ़ेगी और वह अधिक ऊँचाई तथा अधिक दूरी तक जा सकेगा ।

जर्मनी का बी. २ रॉकेट ४७ फुट लम्बा ६ फुट चौड़ा होता था । उसकी नोंक में करीब एक टन वाष्प भरी रहती थी । उसमें ईंधन ६ टन था और कलेवर ४ टन इस स्थिति में वह एक सेकिण्ड में एक मील की चाल से चलता था । ईंधन में ४ टन शुद्ध पेट्रोल और शेष वजन ऑक्सीजन का था । गैस में आग लगते ही रॉकेट का दबाव भार ठीक दूना हो जाता था और वह उछल कर आकाश में उड़ने लगता था । विस्फोट के आरम्भिक क्षण में वह एक मिनट के भीतर ही प्रायः ३० मील ऊँचा उछल जाता था । बस ईंधन समाप्त । इस उछाल से उत्पन्न हुई गति को निर्धारित दिशा में मोड़ने और अभीष्ट लक्ष्य पर नीचे गिराने का काम उसमें लगे अन्य यन्त्र करते थे । नीचे गिरते ही वह जमीन से टकराता था और फूटकर विनाश उत्पन्न करता था । यह रॉकेट युग की आरम्भिक उपलब्धि थी अब उसमें भारी सुधार हुए हैं । उसकी क्षमता और बहुमुखी प्रक्रिया कहीं आगे बढ़ गई है इतने पर भी उसका सूत्र सिद्धान्त वही है, जो सलकोब्स्की ने प्रतिपादित किया था । वे कहते रहते थे ईंधन की मात्रा जितनी अधिक होगी और कलेवर जितना हल्का होगा रॉकेट की क्षमता उतनी ही तीव्र की जा सकेगी ।

पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण की पकड़ से छूट निकलने के लिए प्रति सेकण्ड सात मील की गति चाहिए । इसे 'मुक्ति गति' कहते हैं । युद्ध में काम आने वाले रॉकेटों में उतनी गति नहीं होती किन्तु अन्तर्ग्रही रॉकेट इस मुक्ति गति से अधिक सामर्थ्यवान होते हैं अस्तु कुछ ही समय में पृथ्वी की सामान्य पकड़ से बाहर निकल कर अपनी विशिष्ट कक्षा में घूमने लगते हैं । इससे भी अधिक सामर्थ्य प्राप्त करने पर वे कक्षा भ्रमण की पकड़ से भी छुटकारा पा लेते हैं और जिस ग्रह की ओर उन्हें उड़ना है उधर ही उन्मुक्त आकाश में उड़ान भरने लगते हैं ।

इस प्रकार की अन्तर्ग्रही गति प्राप्त करने के लिए चरण रॉकेटों की शृंखला का आविष्कार किया गया । एक के साथ जुड़े हुए दूसरे और दूसरे के साथ जुड़े हुए तीसरे रॉकेटों के निर्माण का उद्देश्य यह था कि पहले की शक्ति चुक जाय तो आगे का प्रयोजन पूरा करने में दूसरे की शक्ति काम आये ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

दूसरा अपना कार्य पूरा कर चुके तो आगे का मोर्चा तीसरा सम्भाले । भूमि से सीधा उड़कर अन्तर्ग्रही गति पकड़ने वाला । रॉकिट बनना कठिन था । उसमें इतने अधिक ईंधन की जरूरत पड़ती और भार इतना अधिक हो जाता कि लक्ष्य पूर्ति उसके लिए असम्भव हो जाती ।

पिछली अन्तर्ग्रही उड़ानों में यही होता रहा । वे तीन चरण वाले बनाये जाते रहे । रॉकिट के प्रथम चरण में जो विस्फोट हुआ उसने उसे एक दूरी तक उड़ सकने के लिए उछाल दिया और स्वयं बिछुड़ कर पृथक हो गया । इससे पूरे रॉकिट का एक बहुत बड़ा भार भाग हट जाने से वह हल्का हुआ और कम शक्ति से अधिक ऊँचाई तक उड़ सका । पहले चरण द्वारा दी हुई शक्ति चुकने पर दूसरे का विस्फोट किया गया और उसे भी हटाकर अलग कर दिया गया । अब भार और भी अधिक हल्का हो गया केवल तीसरा भाग अधिक छोटा और अधिक हल्का रहने से लम्बी उड़ान भर सकने के उपयुक्त रह गया । पृथ्वी का गुरुत्वाकर्षण क्षेत्र और उसका परिभ्रमण वातावरण इन दोनों पर्तों से ऊपर निकल जाने पर भार रहित अन्तरिक्ष आ जाता है, उसमें न्यूनतम शक्ति से अधिकतम लम्बी यात्राएँ कर सकना और स्वल्प साधनों से इच्छानुसार गति घटा या बढ़ा लेना सम्भव होता है । इसी आधार पर मनुष्य चन्द्रमा की यात्राएँ करके वापस लौटा है । मनुष्य रहित रॉकिटों ने तो कई ग्रहों की यात्राएँ की हैं । इन सब में यही चरण विभाजन सिद्धान्त काम करता रहा है ।

चन्द्रमा की यात्रा करके लौटे अमेरिकी और रूसी अन्तरिक्ष यानों ने रॉकिटों की अद्‌भुत शक्ति का परिचय दिया है । आकाश में मध्यवर्ती स्टेशन बनाने का प्राथमिक परीक्षण पूरा हो चुका है । भावी महायुद्ध में इन रॉकिटों की ही प्रधान भूमिका होगी । वे एक घण्टे के भीतर ही लाखों वर्षों की संचित मानवी सभ्यता और करोड़ों वर्ष पुरानी इस धरती को तहस-नहस करके रख देंगे । यदि वे रचनात्मक दिशा में चल पड़े तो सौर परिवार तथा ब्रह्माण्ड विस्तार में बिखरे हुए तारकों के साथ सम्बन्ध बनाने वाले माध्यम स्तर का विकास करेंगे ।

चन्द्रमा पर एक अन्तरिक्ष यान भेजने पर अमेरिका ने औसतन लाखों, करोड़ों डालर खर्च किया है । ऐसे लगभग एक दर्जन यान उस ग्रह पर प्रयाण कर चुके हैं । अभी आगामी योजनाओं पर कुल मिलाकर कितना खर्च होगा यह आश्चर्यचकित करने वाला है । रूस को भी लगभग इतना ही धन खर्च करना पड़ा होगा । आगे अन्तरिक्ष यानों पर खर्च बढ़ने ही वाला है । सम्भव है अन्य देश भी इस दौड़ में सम्मिलित हो जायें और अपने अलग-अलग यान छोड़ने आरम्भ करें ।

अब तक छोटे यान ही उड़े हैं क्योंकि अन्तरिक्ष में रहने वाले मनुष्यों के लिए आहार, जल, वायु तथा अन्य आवश्यक वस्तुओं की अधिक मात्रा में व्यवस्था करनी पड़ेगी । इससे यान का भार बढ़ेगा और उसे उड़ाने के लिए अधिक ईंधन की आवश्यकता पड़ेगी ।

चन्द्रमा का क्षेत्रफल अपने अफ्रीका महाद्वीप के बराबर है, इतने बड़े क्षेत्र की ढूँढ़-खोज करने के लिए काफी समय लगेगा । फिर वहाँ जो कुछ उपयोगी मिलेगा उससे लाभान्वित होने के लिए अनेक साधन जुटाने पड़ेंगे । यह समय साध्य है—श्रम साध्य और साधन साध्य । यह सब जुटाने के लिए चन्द्रमा पर ऐसी परिस्थितियाँ पैदा करनी पड़ेंगी जिनमें न केवल अधिक समय ठहरना ही वरन् सुविधापूर्वक काम करते रह सकना भी सम्भव हो सके । पृथ्वी से चन्द्रमा तक पहुँचने का कार्य जितना कठिन था उससे कम कठिन यह चन्द्र निवास की समस्या भी कम जटिल नहीं है ।

प्लास्टिक फोम की एक ऐसी किस्म ढूँढ़ी गई है जिसके बने मकान चन्द्रमा पर पाये जाने वाले अत्यधिक ताप और शीत से मनुष्य की रक्षा कर सकेंगे । इन मकानों को 'एयर कन्डीशन' बनाया जायेगा । उनमें कृत्रिम ऑक्सीजन पैदा की जाती रहेगी । बिजली, रोशनी आदि पाने में वहाँ सुविधा रहेगी । वहाँ एक गज जमीन पर पड़ने वाली धूप की ऊष्मा से ही दो हार्सपावर जितनी बिजली उत्पन्न करने की सम्भावनाएँ मौजूद हैं । मल को पुनः खाद्य पदार्थ में और मूत्र को पुनः पेय जल में बदल लेने में अब प्रायः पूर्ण सफलता मिल चुकी है । एक बार का खाया-पिया ही उलट-पुलट कर मुद्दतों काम देता रहेगा । नित नये अन्न-जल तलाश करने की कठिनाई से अब सहज ही बचा जा सकता है ।

चन्द्रमा पर मनुष्य का मजबूत अड्डा जम जाने के बाद वहाँ से अन्य ग्रहों की यात्रा कर सकना बहुत ही सरल हो जायेगा । पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण से पिण्ड छुड़ाने के लिए अन्तरिक्ष यान की प्रारम्भिक गति २४८०० मील प्रति घण्टा की होनी चाहिए । चन्द्रमा का गुरुत्वाकर्षण पृथ्वी की अपेक्षा छठा भाग पात्र है इसलिए वहाँ से उड़ने के लिए अन्तरिक्ष यानों की चाल मात्र ५३०० मील प्रति घण्टा हो तो भी काम चल जायेगा । ईंधन पृथ्वी से भेजना भी आवश्यक नहीं । चन्द्रमा पर बनी अणु भट्टियाँ मनचाही मात्रा में ऊर्जा उत्पन्न करती रहेंगी ।

चन्द्रमा के बाद किस ग्रह पर पहुँचा जाय । इस योजना के अन्तर्गत अगली सूची में मंगल ग्रह के दो बच्चे उपग्रह नोट किए गए हैं । समूचे मंगल पर चढ़ाई करने से पहले उसके इन बच्चों की नब्ज जाँचना ठीक समझा गया है । इन भौम उपग्रहों के नाम हैं—'फी बोस' और 'डीमोस' ।

मंगल का व्यास ४२०० मील है । यह पृथ्वी की तरह अपनी धुरी पर घूमता है, उसका दिन इतना ही बड़ा है जितना धरती का । धरती पर २४ घण्टे का दिन होता है वहाँ २४ घण्टा २१ मिनट का । मंगल पर जीवधारियों की

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सम्भावना सौर-मण्डल के अन्य ग्रहों की तुलना में कहीं अधिक है । मैरियर-४ ने सूचनाएँ दी थीं कि उससे वहाँ वायु-मण्डल को उत्साहवर्धक आशा बँधी है । आये हुए चित्रों ने वहाँ के ध्रुव प्रदेश पर ऐसी सफेद पर्तें दिखाई हैं जो सर्दी में गहरी होती हैं और बसन्त में हल्की पड़ जाती हैं । समझा गया है कि यह बर्फ हो सकती है जो ऋतु के अनुरूप जमती और पिघलती है । हरियाली एवं वनस्पति के भी प्रमाण मिले हैं ।

गुब्बारे, ग्लाइडर एवं वायुयान अब खिलौने भर रह गए हैं । पलक मारते पृथ्वी के किसी भी कोने तक जा पहुँचने वाले रॉकेटों और अन्तर्ग्रहीयानों के रूप में अब मनुष्य की उड़ान कल्पना साकार होने जा रही है । निःसन्देह मनुष्य शक्ति पुंज है । उसकी कल्पना जब संकल्प एवं पुरुषार्थ के साथ समन्वित महत्त्वाकांक्षा के रूप में प्रचण्ड होती है तो वे साधन सामने आ खड़े होते हैं जिन्हें देखकर नेपोलियन की वह उक्ति याद आती है जिसमें वह 'असम्भव' शब्द के अस्तित्व से ही इन्कार करता था ।

काश ! यही महत्त्वाकांक्षा यदि मनुष्य का और संसार का स्तर ऊँचा उठाने में सुख-शान्ति की सौन्दर्य सुषमा के विकास में नियोजित हो सकी होती तो आज हमें उस परिस्थिति में न रहने पड़ता जिसमें वह आज बुरी तरह दुख-दरिद्र के—पतन पराभव के नरक में पड़ा हुआ सड़ रहा है ।

विज्ञान ने इतनी उन्नति की इस प्रगति पर हमें गर्व करने के अधिकार है, पर तब वह गर्व हर दृष्टि से सन्तोषजनक और आनन्ददायक कहा जा सकता था जब यही महत्त्वाकांक्षा, भावनात्मक आकाश में उड़ती और ऐसे प्रयास रॉकेटों का निर्माण करती जो सद्भावनाओं के स्वर्ग-लोक की सैर हर किसी को करा सकने में समर्थ होती । न जाने ऐसे विज्ञान का आविष्कार अवतरण करने वाले अध्यात्म विज्ञानवेत्ताओं का युग कब अपनी धरती पर आयेगा ?

क्षुद्रता अपनाकर, हम पाते कुछ नहीं खोते ही हैं

प्रकृति एक सारगर्भित पुस्तक है, उसे खुली आँखों से देखें तो हम उन तथ्यों के निकट पहुँच सकते हैं जो मनुष्य के वैयक्तिक और सामाजिक जीवन के लिए अति महत्त्वपूर्ण और मार्गदर्शक निष्कर्ष प्रस्तुत करते हैं ।

मनुष्यकृत पुस्तकों में भ्रान्त धारणाओं का प्रतिपादन हो सकता है, किन्तु प्रकृति की पुस्तक ऐसे महान् लेखक द्वारा लिखी गई है जो इस विश्व का मूल सृजेता है । वह हम जीवधारियों को जो सिखाया समझाना चाहता है वह सब कुछ उस स्थान ग्रन्थ में लिखकर रख दिया है जिसके पन्ने हमारे चारों ओर बिखरे पड़े हैं । आवश्यकता उन सूक्ष्मदर्शी नेत्रों की है जो उन संकेतों को देख समझ सकें और उन्हें हृदयंगम करके समुचित लाभ उठा सकें ।

अनन्त अन्तरिक्ष पर जब हम दृष्टिपात करते हैं तो करोड़ों नीहारिकाओं और उनके इर्द-गिर्द घूमने वाले अरबों तारकों का अस्तित्व देखते हैं । खुली आँखों से तो आकाश में कोई तीन हजार ही तारे दीखते हैं, पर दूरबीनों और रेडियो दूरबीनों से उनकी संख्या सहस्रों गुनी अधिक दीखती है ।

अपने सौर-मण्डल में जो ग्रह हैं उनके बारे में सहस्रों वर्षों से खोजा और जाना जा रहा है । पर कुछ ही समय पूर्व क्षुद्र ग्रहों की एक पट्टी देखने में आयी है जो अपने बिल्कुल समीप है और जिनकी संख्या आश्चर्यजनक है । उनकी जो जानकारियाँ मिली हैं वे जितनी आश्चर्यजनक हैं उतनी ही शिक्षाप्रद भी ।

सूर्य के समीपवर्ती ग्रहों में बुध, शुक्र, पृथ्वी और मंगल को गिना जा सकता है । दूरवर्ती, शनि, यूरेनस और नेपच्यून हैं । वृहस्पति मध्यवर्ती है । दूरवर्ती वर्ग के तीनों ग्रह अपेक्षाकृत समीप हैं इसी प्रकार निकटवर्ती चार ग्रहों का फासला भी आपस में कम है । इन्हें दो गुटों में बँटा हुआ कह सकते हैं । वृहस्पति बीच में अकेला पड़ता है । उसकी दूरी दोनों ही वर्गों से काफी अधिक है । बीच के सुविस्तृत अन्तरिक्ष में वह अकेला ही अपना आधिपत्य जमाये हुए है ।

समीपवर्ती वर्ग के ग्रहों में अन्तिम मंगल है । उससे वृहस्पति की दूरी पेंतीस करोड़ मील है । इस सुविस्तृत क्षेत्र को पहले खाली पड़ा हुआ समझा जाता था, पर अब जान लिया गया है कि उस विशाल विस्तार वाले आकाश पर सूर्य के बौने बेटों का अधिकार है और वे वहाँ आनन्दपूर्वक निवास करते हैं । सूर्य के इन बौने बेटों को क्षुद्रग्रह, लघुग्रह, अवान्तर ग्रह अथवा एस्ट्रायड कहा जाता है ।

इनका पता पहले-पहल सिसली की वेधशाला ने सन् १८०१ में लगाया उसके अध्यक्ष प्रो. पियाज्जी ने एक छोटा तारा मंगल और वृहस्पति के बीच में घूमते देखा और उसका नाम सिसली की देवी के नाम पर 'सैरस' रखा दिया । इसके बाद दूरबीनों से एक के बाद दूसरा लघुग्रह पहचानना आरम्भ कर दिया । हेनरिख, ओल्बेर्स, प्लास, जूनो, वेस्ता आदि नाम उन्हें दिए गए हैं । जो पकड़ में आते गए उन्हें रोमन, ग्रीक, जर्मन, नार्वेजियन देवी-देवताओं के नाम पर सम्बोधित किया जाता रहा पीछे वे इतनी बड़ी संख्या में देखे गए कि नामकरण का उत्साह ही ठण्डा पड़ गया । खगोलशास्त्री रिचर्डसन के समय तक वे ४४ हजार की संख्या में गिन लिए गए थे । अब रूसी वैज्ञानिकों ने उनकी संख्या एक लाख से भी अधिक सिद्ध कर दी है ।

यह लघुग्रह कौन हैं ? क्या हैं ? कैसे बने ? आदि प्रश्नों का सही उत्तर ढूँढ़ने में खगोलशास्त्री गम्भीरतापूर्वक संलग्न

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

हैं । इस शोध में संलग्न ओल्वेर्स, हाइडेलवर्ग एवं ओर्ट का कथन है कि अति प्राचीन काल में मंगल और वृहस्पति के बीच दो पूर्ण ग्रह भ्रमण करते थे वे एक बार आपस में टकरा गए और उनका चूरा छितरा कर इन लघुग्रहों के रूप में बिखर गया और एक नियत कक्षा में सूर्य की परिक्रमा करने लगा ।

सहयोग-संघर्ष के भले-बुरे परिणाम हमारे सामने हैं । पारस्परिक सहयोग के बल पर सौर-मण्डल के ग्रह कितने सुन्दर समुन्नत हैं और फल-फूल रहे हैं । सूर्य का सहयोग पाकर पृथ्वी कितनी सुसम्पन्न है । यदि उसे सविता देवता का अनुदान न मिला होता तो ठण्डे और अँधेरे किसी अविज्ञान ग्रह पिण्ड के रूप में वह उपेक्षित जीवन जी रही होती । सूर्य भी यदि सहयोग देकर सौर-मण्डल के ग्रहों को सँभालने का उत्तरदायित्व वहन न करता तो उसे वह श्रेय न मिलता जो आज उपलब्ध है । तब वह अन्य किसी सूर्य की परिक्रमा में निरत एक छोटा तारक मात्र रह जाता और उसकी गरिमा का किसी को लाभ मिलना तो दूर परिचय भी प्राप्त न होता । सहयोग देकर और लेकर सूर्य ने कुछ खोया नहीं पाया ही है । स्वयं ही लाभान्वित हुआ है और दूसरों को भी लाभान्वित किया है ।

दूसरी ओर वे मूर्ख दो ग्रह थे जो आवेशग्रस्त हुए, भटके और परस्पर टकरा गए। यदि वे जीवित रहे होते तो नवग्रहों की अपेक्षा ग्यारह ग्रहों वाला अधिक समृद्ध अपना सौर-मण्डल होता और वे स्वयं भी अपनी गरिमा से ब्रह्माण्ड की शोभा बढ़ाते । उनके अस्तित्व का लाभ न जाने कितने प्राणियों और ग्रह पिण्डों को किस-किस प्रकार मिलता, पर टकरा कर उन्होंने पाया कुछ नहीं खोया ही खोया । अब उनका चूरा बुरादा उपहासास्पद स्थिति में छितराया हुआ भ्रमण कर रहा है और अपने पूर्वजों की मूर्खता के इतिहास का वर्णन कर रहा है ।

ये लघुग्रह बहुत छोटे-छोटे हैं । इनमें कुछ बड़े भी हैं सीरीज का २५०० और प्लास का व्यास ५०० किलोमीटर है । सैरस का ४२७, वेस्ता का ४००, जूनो का २०० और ईरोस का १५ मील व्यास है । इससे भी छोटों में आमीर ५ मील का एलवर्ट और जेवी का तीन-तीन मील है । एक-एक मील के व्यास के तो हजारों हैं । इनसे भी छोटों को ठीक तरह गिना और नापा नहीं जा सकता है, जो जितना छोटा है उसकी अपनी आकर्षण शक्ति भी कम है और वह दूसरों के खिंचाव से उतना ही कम बँधा होता है । अस्तु इनकी उच्छृंखलतापूर्वक किधर भी दौड़ पड़ने की आशंका सदा ही बनी रहती है अक्सर वे अपना नियत निर्धारित मार्ग छोड़कर पथ-भ्रष्ट रहते हैं ।

इन्हीं में से एक मनचला सूर्य का बौना बेटा सन् १९०८ में धरती की सैर करने चल पड़ा था । बेचारा पृथ्वी के वायुमण्डल में घुसते ही बुरी तरह जल गया और उसका ढाँचा साइबेरिया के जंगल में जा गिरा । यह कंकाल एक हजार फुट व्यास के एक उल्कापिण्ड के रूप में था । वह जहाँ गिरा वहाँ गहरा खड्ड बना दिया और समीपवर्ती क्षेत्र में भयंकर अग्निकाण्ड खड़ा कर दिया ।

इनमें से कुछ क्षुद्र ग्रहों ने अपनी विचित्र भ्रमण कक्षाएँ बना ली हैं । ईरोस पृथ्वी के पास डेढ़ करोड़ मील तक समीप आ पहुँचता है और उसकी प्रचण्ड आकर्षण शक्ति से डर कर फिर वापस लौट जाता है । किसी दिन आगे बढ़ने की हिमाकत की तो उसकी भी वही दुर्गति होगी, किन्तु पृथ्वी को भी उस टक्कर से कम नुकसान नहीं पहुँचेगा । हाइडाल्गो को शनि का धाई छूने का शौक चर्राया है वह वहाँ तक पहुँचता तो है, पर उस महादैत्य द्वारा निगल लिए जाने की आशंका से डरकर वह भी वापस लौट आता है । इकारस इन सबसे ढीठ है, वह सूर्य बुध के बीच के भयंकर गरम क्षेत्र में घुस पड़ता है । किसी दिन उसकी भी शामत आयी ही रखी है । एकबार तो उसने पृथ्वी से टकराकर आत्म-हत्या करने की ही ठान ली थी सन् १९६८ का मुहूर्त उसे इसके लिए अच्छा नहीं लगा और कुछ सोच-समझकर वापस लौट गया । इससे पूर्व सन् १९३७ में हर्मेस भी पृथ्वी के बिल्कुल नजदीक पाँच लाख मील पर ही आ धमका था पर उसकी अकाल मृत्यु भी किसी प्रकार टल गई ।

क्षुद्रता उच्छृंखलता के रूप में विकसित होती है और दूसरों के लिए ही नहीं अपने लिए भी संकट उत्पन्न करती है जो महान् हैं वे इस तथ्य को समझते हैं और मर्यादा में रहकर अपनी शालीनता का परिचय देते हैं । क्षुद्रता का अनाचार बरतने और उद्धत आचरण करने में ही मजा आता है । उस स्तर की सत्ताएँ अपनी बहादुरी आतंकवादी गतिविधियों के रूप में प्रदर्शित करती हैं । उनका अहंकार इस रूप में प्रकट होता है कि सब लोग कमजोर थे इसलिए वे सीधी राह पर चले और वे अधिक साहसी थे इसलिए उच्छृंखलता, स्वेच्छाचार बरतने लगे । सोचने का यह तरीका बचकाना ही नहीं हानिकारक भी है इसे न वे क्षुद्र ग्रह ही समझते हैं और न उसी स्तर की मनोवृत्ति वाले हममें से अधिकांश लोग ।

चन्द्रमा पर वायुमण्डल नहीं है, इसलिए जलने का खतरा न देखकर ये क्षुद्र ग्रह उल्काओं के रूप में जा पहुँचते हैं । उनका जो हस्र होता है वह प्रत्यक्ष है । उन्होंने टकराकर चन्द्रमा में गहरे खड्ड किए हैं उसे कुरूप बनाया है साथ ही अपना अस्तित्व भी सदा के लिए समाप्त कर लिया है ।

चन्द्रमा को कुरूप उन्होंने बनाया, इतने दुस्साहस पर वे प्रसन्न भी हो सकते हैं; पर बिगाड़ने में भी भला क्या कोई बड़प्पन है, इसे वे नहीं सोच पाते । दूसरे का बिगाड़ करने में उन्होंने सफलता जरूर पायी, पर साथ ही अपना अस्तित्व तो खो बैठे । चन्द्र तल को कुरूप बनाने की सफलता के लिए उनकी कौन प्रशंसा करेगा । बड़े से बड़ा बिगाड़

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अग्निकाण्ड तो यह छोटी दियासलाई भी कर सकती है, बड़प्पन बनाने में है । किसने क्या बनाया, इसी आधार पर महानता नापी जाती है इस तथ्य का यदि इन अभागे क्षुद्र ग्रहों को पता रहा होता तो चन्द्र तल से टकराकर आत्म-हत्या करने की अपेक्षा उन्होंने कोई रचनात्मक गतिविधि अपनायी होती और अपनी गतिविधियों से कहीं किसी को लाभान्वित किया होता और स्वयं श्रेय पाया होता ।

धरती वाले इन पर पैनी निगाह लगाये हुए हैं । जिस प्रकार चिर प्राचीनकाल में मनुष्य ने पशुओं को जंगल में से पकड़ा, अपना वशवर्ती बनाया और उनसे तरह-तरह के लाभ लिए । ठीक इसी प्रकार अब इन क्षुद्र ग्रहों की बारी है । इनका गुरुत्वाकर्षण बहुत क्षीण है । वे अन्य साथियों के साथ भी मजबूती से बँधे हुए नहीं हैं । कोई बड़ा ग्रह भी उन्हें अपनी छत्रछाया में जिम्मेदारी के साथ सँभालता नहीं है । अस्तु वे एक प्रकार से अनाथ और असहाय की स्थिति में रह जाते हैं । जंगली हाथियों को जिस प्रकार मजबूत रस्सों से पकड़ कर वशवर्ती बना लिया जाता है उसी प्रकार इनमें से भी कुछ को पकड़ा घसीटा और अभीष्ट प्रयोजन के लिए जीता जा सकेगा, ऐसा वैज्ञानिकों का विश्वास है । आकाश सागर में विचरण करते इन मगरमच्छों को पकड़ने के लिए मानवी प्रयोगशालाओं में ऐसे रस्से बँट जा रहे हैं जिनसे इनकी मुश्के बाँधी जा सकें और नाक में नकेल डाली जा सकें ।

सोचा यह गया है कि इन क्षुद्र ग्रहों को अन्तर्ग्रही यात्राओं में पड़ाव की तरह इस्तेमाल किया जा सकेगा । उन पर सराय खड़ी की जा सकेगी । कुछ पर उपयोगी प्रयोगशालाएँ बनाई जा सकेंगी । वहाँ से पृथ्वी की संचार व्यवस्था को सुलभ बनाया जा सकेगा । सौर-मण्डल की परिधि में तथा उससे बाहर की सीमा में दूर-दूर तक देख सकने वाली आँखें भी इनमें फिट की जा सकेंगी, जो पृथ्वी वालों को आवश्यक जानकारियाँ प्रदान करती रहें । इनमें से कुछ को पकड़ कर धरती पर लाया जायेगा और उनको चीर-फाड़कर यह पता लगाया जायेगा कि वे आखिर हैं क्या ? और किसलिए आकाश में उच्छृंखल मटरगश्ती कर रहे हैं ।

धरती वाले जो सोचते हैं सो नीति युक्त ही है । क्षुद्रता को नियन्त्रण में रखने के लिए चेष्टा होती ही है । उच्छृंखलता बरतने वाले बाँधे और पकड़े जाते हैं । जिन्होंने अपनी गरिमा छोड़ दी, महानता नहीं रखी और क्षुद्रता को अपनाया उनकी दुर्गति होनी ही है । जैसी कि निकट भविष्य में इन क्षुद्र ग्रहों की होनी सम्भव है । ऐसा न भी हो सके तो वे बौने उपहासास्पद तो बने ही रहेंगे और अपनी तथा अपने पूर्वजों की क्षुद्रता का प्रमाण ही प्रस्तुत करते रहेंगे । यही सब हेय उपलब्धियाँ वे लोग प्राप्त करते हैं जिन्होंने महानता का राजमार्ग छोड़कर क्षुद्रता की उच्छृंखलता को अपनाया ।

प्रदर्शन और उद्वेग से बचना ही बुद्धिमत्ता है

कोई अपने मन में कितना ही बड़ा क्यों न हो, उसके साधन कितने ही अधिक क्यों न हों, उसका वह बड़प्पन उसके अपने तक ही सीमित रहेगा । दूसरे अपने कामों में व्यस्त हैं किसी का बड़प्पन नापने और उससे प्रभावित होने की किसी को फुरसत नहीं, इस तथ्य को यदि लोग समझ लें तो कम से कम प्रदर्शन और ठाट-बाट के नाम पर जो धन, समय एवं चिन्तन नष्ट होता रहता है । उसकी सहज ही बचत हो सकती है और उस क्षमता को शान-वान की, बड़प्पन प्रदर्शन की मूर्खता से बचाकर किसी उपयोगी काम में लगाया जा सकता है ।

अपने सौर-मण्डल के प्रायः सभी ग्रह हमें दिखाई देते हैं सूर्य को छोड़कर वे जरा-जरा से जुगनू जैसे दीखते हैं । यद्यपि वे पृथ्वी से भी बहुत बड़े हैं । उनका बड़प्पन देखने की न तो हमारी रुचि है और न आवश्यकता । वे अपनी जगह बड़े या छोटे जैसे भी हों वैसे बने रहें हम अपने कार्यों में व्यस्त हैं, अपनी समस्याओं में उलझे उनके बड़प्पन को देखने, जानने पर भी हम क्यों और किसलिए प्रभावित होंगे ?

वृहस्पति सौर-मण्डल का सबसे बड़ा ग्रह है । इतना बड़ा कि सभी ८ ग्रह उस अकेले में भी समा जाय । वह पृथ्वी से १३०० गुना बड़ा है और उससे ६० करोड़ मील दूर है । इस दूरी की तुलना में बेचारा चन्द्रमा जो सिर्फ २ लाख मील है बगल में बैठा हुआ प्रतीत होगा ।

वृहस्पति की आकर्षण शक्ति इतनी है कि धरती पर रहने वाला कोई डेढ़ मन वजन का मनुष्य वहाँ जाकर ४ मन भारी हो जायेगा । वह अपनी धुरी पर अत्यन्त द्रुतिगति से घूमता है । यह चाल अन्य सब ग्रहों से अधिक है वहाँ पाँच घंटे का दिन और पाँच घंटे की रात होती है । वहाँ पहले अन्तरिक्ष यात्री चन्द्रमा 'सीरस' पर सवारी गाँठेंगे और वहीं से खोजबीन आरम्भ करेंगे । जब आवश्यक जानकारियाँ प्राप्त हो जायेंगी तभी वृहस्पति पर उतरेंगे ।

वृहस्पति का व्यास ८८ हजार मील है । उस पर हजारों मील मोटी गैस के बादलों की परत छाई हुई है । सूर्य से ४८ करोड़ ३० लाख मील दूर होने के कारण वहाँ गर्मी पहुँचाने वाली किरणें बहुत स्वल्प मात्रा में पहुँचती हैं इसलिए वह अत्यधिक ठण्डा है । अन्य ग्रह सूर्य के समीप हैं । हमारी पृथ्वी मात्र सवा नौ करोड़ मील दूर है । मंगल १४$\frac{३}{४}$ करोड़ मील, शुक्र ६$\frac{३}{४}$ करोड़ मील और बुध ३$\frac{१}{२}$ करोड़ मील है । अत्यधिक दूरी होने के कारण सूर्य साम्राज्य में रहते हुए भी वह बहुत बातों में आत्म निर्भर है । उसे पूरा औपनिवेशिक स्वराज्य मिला हुआ है । कामनवेल्थ का वह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सम्मानित सदस्य होते हुए भी अपने बलबूते पर ही अपना क्रिया-कलाप चलाता है ।

गैस बादलों की मोटी परत के नीचे वृहस्पति पर बर्फ को मोटी पर्त जमी है । उस पर कभी-कभी ३० हजार मील लम्बे और ७ हजार मील चौड़े लाल धब्बे दिखाई पड़ते हैं । अनुमान यह है कि यह उसमें ज्वालामुखी फटते रहने और उनके लावा उगलने के कारण दिखाई पड़ते हैं ।

वृहस्पति के अनेक छोटे-बड़े चन्द्रमा हैं । इनमें से अभी १२ ही देखे जाने जा सके हैं । इनके नाम कोलस्टा, जेनिमेद्र, इव, यूरोपा, एमस्थिया आदि हैं । सोचा जा रहा है कि जब सौर-मण्डल की यात्रा पर निकला हुआ मनुष्य वृहस्पति की खोज पर जायेगा तब पहले उसे इन्हीं में से किसी चन्द्रमा पर रुक कर अपनी खोज आरम्भ करनी होगी और वस्तुस्थिति का पता लगाने के बाद उस धरती पर पैर रखने की हिम्मत करनी होगी । शनि के ९, यूरेनस के ५, नेपच्यून के २ चन्द्रमा हैं । २० खरब ७७९ करोड़ मील की यात्रा का साधन जुटाकर जब सौर-मण्डलीय यात्रा आरम्भ होगी तब यह चन्द्रमा ही मूल ग्रहों पर उतरने के प्रथम सोपान होंगे । उस यात्रा का सबसे अन्तिम ग्रह प्लूटो होगा, वह आकार में तो पृथ्वी के ही बराबर है, पर सूर्य से इतनी अधिक दूर है कि वहाँ से उसका प्रकाश टिमटिमाती मोमबत्ती जितना ही दिखाई देगा । हमारी पृथ्वी का जीवन प्राण सूर्य, प्लूटो को अपने अस्तित्व भर की जानकारी देने वाला एक छोटा-सा दीपक भर लगेगा ।

ऊपर की पंक्तियों में वृहस्पति की विशालता की उपलब्ध जानकारी का थोड़ा-सा अंश दिया गया है । अभी और भी बहुत कुछ ऐसा जानना, बताना शेष है जो उस विशाल ग्रह के वैभव को प्रकट कर सके ।

यदि हमारी ही तरह ओछी बुद्धि का वृहस्पति ग्रह होगा तो सोचता होगा सौर-मण्डल के सारे ग्रह उसकी धाक मानेंगे और पृथ्वी आदि ग्रहों पर रहने वाले प्राणी निरन्तर उसका नमन वन्दन करेंगे, पर ऐसा होता कहाँ है । हमें किसी के बड़प्पन या छोटे होने से क्या लेना देना हमारी अपने छोटेपन या बड़प्पन की समस्याएँ ही क्या कम सिर दर्द हैं जो दूसरों का लेखा-जोखा लेने में माथापच्ची करें ।

कल्पना की जा सकती है कि जिस प्रकार वृहस्पति का बड़प्पन हमें थोड़ा कौतूहल भर देता है उसके वैभव से हम तनिक प्रभावित नहीं हैं । इसी प्रकार कोई व्यक्ति धन वैभव का प्रदर्शन करने के लिए खर्चीला ठाट-बाट बनाये और सोचे कि देखने वाले उसकी शान-शौकत देखकर अवाक् रह जायेंगे तो इस प्रकार का सोचना सर्वथा ओछेपन और वचकानापन ही कहा जायेगा । लोग अपने कामों में व्यस्त हैं हमें अपने महत्त्वपूर्ण कार्यों में उस शक्ति को नियोजित करने में लगा रहना चाहिए जो खर्चीला और बेकार का आडम्बर बनाने में अकारण नष्ट होती रहती है ।

इसी प्रकार विपत्तियों की भावी सम्भावनाओं की कल्पना करके हमें उद्विग्न होने की आवश्यकता नहीं है । काली घटाएँ आती हैं—घुमड़ती, गरजती हैं और हवा के प्रवाह से इधर से उधर छितराती चली जाती हैं । बरसती तो कोई-कोई और कभी-कभी ही हैं । अस्तु भविष्य की अनिष्ट सम्भावनाओं का विचार करके मानसिक सन्तुलन डगमगाने की कोई जरूरत नहीं है । कुछ वर्ष अष्टग्रही योग आया था । दैवज्ञ उसके कारण संसार पर आने वाली भयंकर विपत्तियों की भविष्यवाणी करते थे, पर वैसा कुछ हुआ नहीं । अभी भी सन् ७५ में ऐसी ही अन्तर्ग्रही विभीषिका की भविष्यवाणी की जा रही है । जिस पर यदि गम्भीरता से विचार किया जाय तो भयभीत होने का कारण विद्यमान है, पर वैसा करने से कुछ बनेगा नहीं ।

खगोलशास्त्री जान गौरविन और स्टीवन प्लेजमान की संयुक्त रूप से लिखित पुस्तक 'वृहस्पति का प्रभाव' में सन् १९८२ में सौर-मण्डल की एक विशेष स्थिति होने का उल्लेख है । ऐसा संयोग १७९ वर्षों में एक बार आता है ।

लेखक द्वय ख्यातिनामा विज्ञानी हैं । गौरविन प्रख्यात ब्रिटिश पत्रिका 'नेचर' के सम्पादक हैं और प्लेजमान हैं गोडार्ड अन्तरिक्ष केन्द्र के अनुसन्धानकर्त्ता । वे बाजारू ज्योतिषियों की गणना में नहीं आते । इन लोगों का कहना है, सन् १९८२ में यूरेनस, नेपच्यून, प्लेटो जैसे दूरवर्ती ग्रहों समेत सौर-मण्डल के अन्य ग्रह सूर्य के इर्द-गिर्द अपेक्षाकृत अधिक निकट एकत्रित हो जायेंगे इससे सूर्य की चुम्बकीय गतिविधियाँ बहुत बढ़ जायेंगी । उसके धब्बों से विशाल तूफान उठेंगे और सुविस्तृत ज्वालाओं को लपटें फैलेंगी । इसका भयंकर प्रभाव पृथ्वी पर पड़ेगा । रेडियो संचार व्यवस्था टूट जायेगी । उत्तरी गोलार्द्ध में प्रकाश बहुत चमकेगा । गर्मी बढ़ेगी और ऊपरी सतह की हवाओं के रुख में भारी हड़बड़ी पैदा होगी । संसार के कितने ही भागों में भूकम्प होंगे और तूफान आयेंगे ।

जो हो, अष्टग्रही योग चला गया । चला सन् १९७५ भी गया । विभीषिकाएँ आती और चली जाती हैं । उस ओर अधिक ध्यान न देकर यदि हम अपने सामने प्रस्तुत कार्यों में ही लगे रहें तो चिन्ता, आशंका और उद्विग्नता से सहज ही बचे रह सकते हैं । डरने की अपेक्षा करने में लगे रहना अधिक बुद्धिमत्तापूर्ण है ।

कान व आँख खुले रखें

जो प्रत्यक्ष रूप से दीख पड़ता है, वही सब कुछ नहीं है । इसके अतिरिक्त भी अपने इर्द-गिर्द ऐसा बहुत कुछ भरा हुआ है, जिसकी जानकारी सूक्ष्म निरीक्षण, परीक्षण एवं अन्वेषण से ही जानी जा सकती है । इस विधा को यदि विकसित न किया जाय तो हमारा ज्ञान पुरातन मान्यताओं और किंवदन्तियों तक ही सीमित रह जायेगा ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

खुली आँखों से सौर-मण्डल के पाँच ग्रह हमें दीखते हैं । बुध, शुक्र, मंगल, वृहस्पति और शनि । सूर्य इनका केन्द्र है । पृथ्वी पर हम रहते हैं, इसलिए उसकी उतनी ही भूमि देख पाते हैं, जो आँखों या दूरबीनों की पकड़ में आती है । चन्द्रमा पूर्ण ग्रह नहीं है, पृथ्वी का उपग्रह मात्र है । इसकी जानकारी बहुत पहले से ही उपलब्ध हो चुकी है ।

अब पिछली शताब्दी में और इस शताब्दी में तीन और नये ग्रह खोज निकाले गए हैं—(१) यूरेनस (२) नेपच्यून (३) प्लूटो । इस प्रकार सौर-मण्डल में तीन नये सदस्य और शामिल हुए । इन सभी के अपने-अपने चन्द्रमा हैं । इसकी जानकारी खोजी उपग्रह 'वायजर-दो' ने दी है । अब समूचे सौर-मण्डल में ६० चन्द्रमा हो गए हैं । कोई अपने चन्द्रमा से छोटे कोई बड़े ।

यूरेनस पृथ्वी से बहुत दूर है । यह दूरी सूर्य और पृथ्वी की दूरी की अपेक्षा १९ गुनी अधिक है । यूरेनस का भार पृथ्वी से १४ गुना अधिक है । वह ८४ वर्ष में सूर्य की एक परिक्रमा करता है । इसलिए ४२ वर्ष सर्दी और ४२ वर्ष गर्मी रहती है । वह अपनी धुरी पर तेजी से चक्कर लगाता है इसलिए उसके दिन-रात हमारी अपेक्षा १५ गुने अधिक बड़े होते हैं । यूरेनस की चाल अन्य ग्रहों की तुलना में उल्टी समझी जाती है । वहाँ पश्चिम में सूर्य उदय होता है और पूर्व में अस्त । उसके ऊपर २० किलोमीटर ऊँचा हाइड्रोजन और मीथेन का मिश्रित वायुमण्डल है । साथ ही उसके १५ चन्द्रमा भी है, जो बारी-बारी से निकलते हैं और कभी-कभी एक साथ भी ।

उल्काओं में न केवल धातुएँ चट्टान और रसायन मिले हैं, वरन् ऐसे जीवकोष भी पाये गए हैं, जो जीवन को स्वतन्त्र रूप से अस्तित्व में लाने के आधार हो सकते हैं । पृथ्वी पर जीवन समुद्र से एक कोशीय जीवों के रूप में विकसित हुआ । इस मान्यता को यह उल्काएँ काटती हैं, जिनमें समग्र जीवन के विकसित जीवाणु पाये गए हैं । इन्हें शरीरधारी कैसे बताया जा सकता है यही पेचीदा प्रश्न है ।

यह भी कहा जाता है कि धूमकेतु जब किसी ग्रह तारक के समीप पहुँचते हैं तो वे भी जीवाणुओं और विषाणुओं की बौछार फेंकते हैं । उनमें जीवन का अस्तित्व पाया गया है । यह सुविधा पाकर कहीं अपनी सत्ता का स्वतन्त्र परिचय भी दे सकता है और प्राणियों की उत्पत्ति कर सकता ।

ग्रीनलैण्ड में एक निकिल और लोहे जैसी मिश्रित धातु का उल्का पिण्ड गिरा । वह ६७ टन का था । वायु का घर्षण उसे गरम भर कर सका, जला नहीं सका है ।

उत्तरी कनाडा में एक उल्कापात के कारण ७० फुट गहरा क्रेटर बना । उसकी लम्बाई एक सिरे से दूसरे सिरे तक ६ मील थी ।

हम जो कुछ जानते और समझते रहे हैं, उसी को सब कुछ न मानते हुए हमें यह भी सोचना चाहिए कि जानने योग्य अभी बहुत कुछ बाकी है । उसे जानने के लिए हमें अपने कानों और आँखों को खुला ही रखना चाहिए ।

हमारा ज्ञान बढ़ा है और साथ में संसार भी

यह संसार विकसित हो रहा है; क्योंकि हम विकास की ओर अग्रसर हो रहे हैं । अति प्राचीनकाल में यह धरती एक फर्श की तरह थी, उस पर नीले आसमान की चाँदनी टँगी थी, जिससे छोटे-छोटे सितारों के जुगनू चमकते थे और सूर्य, चन्द्रमा के रूप में दो झाड़-फानूस टँगे थे । समुद्र एक छोटे तालाब की तरह था; पर अब बात बहुत आगे बढ़ गई । अब हमारी पृथ्वी विशालकाय ब्रह्माण्ड की एक राई-रत्ती जितनी छोटी सदस्या है । उसके जैसे असंख्य पिण्ड इस अनन्त आकाश में छितरे पड़े हैं । समूचे ब्रह्माण्ड का विस्तार मनुष्य की कल्पना शक्ति से बाहर है । अपनी धरती पर भी जितना दृश्य पदार्थ है उससे असंख्य गुना विस्तृत और शक्तिशाली वह है जो विद्यमान रहते हुए भी अदृश्य है । प्राचीन और अर्वाचीन कल्पनाओं में कितना विचित्र अन्तर है अपने इसी विश्व ब्रह्माण्ड के बारे में । हम बढ़े हैं—हमारे ज्ञान एवं साधन क्षेत्र का विस्तार हुआ है । तद्नुसार यह विश्व भी अधिकाधिक विस्तृत होता चला गया है । भविष्य में जिस गति से हम बढ़ेंगे हमारा विश्व भी उसी अनुपात से अधिक विकसित होता चला जायेगा ।

यूनान के लोग मानते थे कि पृथ्वी हरक्यूलस देवता के खम्बे पर टँगी है । हम लोग शेषनाग के फन पर, गाय के सींग पर एवं कुछुए की पीठ पर उसे टिकी मानते थे । सूर्य देवता के रथ में सात घोड़े जुते होने और अरुण सारथी द्वारा हाँके जाने की मान्यता को अब सूर्य किरणों के सात रंग और अरुण को प्रभात कालीन रक्ताभ आलोक कहकर सामयिक समाधान करना पड़ा है ।

किसी समय चटाई की तरह चपटी बिछी रहने वाली पृथ्वी को हिरण्याक्ष कागज की तरह लपेट कर भाग गया था और समुद्र में जा छिपा था तथा विष्णु भगवान ने वाराह बनकर उससे छीनकर छुड़ाया था । आज वे बातें बाल कल्पना हैं । पृथ्वी के लपेटे जाने की और उसी पर भरे हुए समुद्र में छिपा लेने की बात अब समझ की परिधि से बाहर है, पर किसी समय यही मान्यता शिरोधार्य थी । विद्वान आर्य भट्ट ने पाँचवीं शताब्दी में पहली बार उसे गोल गेंद की तरह बताया । पीछे बारहवीं शताब्दी में भास्कराचार्य ने उसमें आकर्षण शक्ति होने की बात भी जोड़ दी । प्राचीन ज्योतिष विज्ञान धरती को स्थिर और सूर्य को बल मानता था, सहज बुद्धि वही बता सकती थी । पर पीछे पृथ्वी को भी भ्रमणशील बताया गया, तो बताने वालों को उपहासास्पद ही नहीं माना गया वरन् उन्हें नास्तिकता के अपराध में शूली पर भी चढ़ा दिया गया ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अब हम अनन्त विश्व के एक नगण्य से घटक बन कर रह रहे हैं । अपने विश्व में असंख्य नीहारिकाएँ हैं । वे इतनी बड़ी हैं कि उनके एक कोने में करोड़ों सूर्य पड़े रह सकें । वे हमसे इतनी दूर हैं कि उनका प्रकाश पृथ्वी तक आने में लाखों प्रकाश वर्ष लग जाते हैं जबकि प्रकाश एक सेकण्ड में एक लाख छियासी हजार मील की चाल से चलता है । आसमान में जो तारे दिखाई पड़ते हैं उनमें से कई तो अपने सूर्य से भी हजारों गुने बड़े महासूर्य हैं । उनके अपने-अपने सौर-मण्डल तथा ग्रह-उपग्रह हैं जो अपनी आँखों को दिखाई नहीं पड़ते । वे आपस में नजदीक दीखते भर हैं वस्तुतः उनके बीच का फासला अरबों-खरबों मील है । वे सभी एक-दूसरे के साथ पारस्परिक आकर्षण शक्ति के रस्सों से बँधे हैं । आकाश से नीचे गिरने या ऊँचे उछलने जैसी कोई शक्ति नहीं है । उस पोल में हर वस्तु अधर में सहज ही लटकी रह सकती है । हलचल तो नक्षत्रों की अपनी आकर्षण शक्ति के कारण उत्पन्न होती है । उसी के प्रभाव से वे अपनी धुरी पर तथा कक्षा में घूमते हैं । यह बातें सुनने में विचित्र लगती हैं, पर हैं सत्य । अब से कुछ सौ वर्षों तक इन बातों पर कोई विश्वास नहीं कर सकता था, पर अब हम बढ़े हैं और हमारा विश्व बढ़ा है । अस्तु इन मान्यताओं को स्वीकार करने में कोई आपत्ति नहीं होती ।

अपने सौर-मण्डल का केन्द्र सूर्य है । उसका व्यास पृथ्वी से १०९ गुना, वजन तीन लाख तीस हजार गुना और घनफल तेरह लाख गुना बड़ा है । उसके एक वर्ग इंच स्थान में तीन लाख मोमबत्तियों से मिलकर उत्पन्न होने जितना प्रकाश है, गर्मी छैः हजार डिग्री; जिसकी तुलना में अपनी धरती की आग को बर्फ जैसी ठण्डी माना जा सकता है । इतनी अधिक गर्मी के कारण सूर्य का सारा पदार्थ पिघला हुआ है । उसमें सदा भयंकर तूफान उठते रहते हैं । जिनके कारण कभी-कभी तो इतने बड़े खड्ड हो जाते हैं जिनमें अपनी कई धरती समा सकें । यही खड्ड सूर्य में काले धब्बे दिखायी पड़ते हैं ।

पिछले जमाने में सूर्य को ठण्डा माना गया था । उसे आतप कहा गया था । आतप वह जो स्वयं तो ठण्डा हो, पर दूसरों को प्रकाश दे । यह मान्यता इसलिए थी कि हम जितने ही ऊँचे चढ़ते हैं, ठण्डक बढ़ती है । पहाड़ों पर बर्फ जमी रहती है जितनी ऊँचाई उतनी ठण्डक—इस सिद्धान्त ने सूर्य को ठण्डा होने की कल्पना दी थी । पर अब उस बात पर कोई विश्वास नहीं करता । ताप के संचालन, संवाहक एवं विकिरण गुणों के बारे में पदार्थ विज्ञान के प्रारम्भिक छात्र भी बहुत कुछ जानते हैं । संचालन वह प्रक्रिया है जिसके अनुसार किसी ठोस पदार्थ का एक हिस्सा गरम करने पर दूसरा भी गरम हो जाता है । जैसे लोहे की छड़ का एक सिरा तपाने से पूरी छड़ गरम हो जाती है । संवाहन वह है जिसके अनुसार गरम हुआ पदार्थ स्वयं ही भागने लगता है । जैसे भाप । तीसरी क्रिया विकिरण वह है जिस पारदर्शी पोल को चुपचाप पार करती हुई गर्मी अन्त में जहाँ टकराती है उसी जगह को गरम करती है । सूर्य की गर्मी ९ करोड़ मील की पोली हवा रहित जगह को पार करती हुई चुपचाप चली आती है, पर जब पृथ्वी से वे किरणें टकराती हैं तो भूतल गरम हो उठता है । धरती को छूकर जो ताप उत्पन्न होता है । वह ऊँचाई की दिशा में धीरे-धीरे कम होता जाता है और ऊँचे पहाड़ों की चोटियों पर बर्फ जमने लगती है । भूतकाल में यह जानकारियाँ उपलब्ध न रहने से सूर्य को 'आतप' अर्थात् मात्र दूसरों को गर्मी देने वाला कहकर सन्तोष करना पड़ा होगा ।

सौर परिवार का सबसे निकटस्थ ग्रह बुध है । इसके बाद शुक्र, इसके बाद हमारी पृथ्वी । फिर मंगल इसके बाद क्षुद्र ग्रहों की एक पूरी पट्टी है जिसमें हजारों अवान्तर पिण्ड चक्कर काट रहे हैं । इनमें बड़े से बड़ा ४८० मील का और छोटे से छोटा ५५० गज का नापा गया है । इससे छोटे भी कुछ हो सकते हैं, जो अभी देखे नहीं जा सके । इसके बाद पृथ्वी, फिर शनि । प्राचीनकाल में यही अन्तिम ग्रह था । सूर्य से बहुत दूर पड़ जाने के कारण उसकी प्रदक्षिणा बहुत देर में अर्थात् साढ़े उन्तीस वर्ष में पूरी हो पाती है । उसकी चाल पृथ्वी से अधिक है तो भी दूरी के कारण देरी तो हो ही जाती है । इस देरी की चाल को कभी समझा गया और उसे शनैः शनैः चर एवं मन्द कहा गया । इन शब्दों का अर्थ होता धीमे हैं चलने वाला ।

पीछे सौर-मण्डल के तीन सदस्य और भी ग्रह खोज लिए गए—(१) यूरेनस-वारुणी जो पृथ्वी से वजन में पन्द्रह गुना, घनफल में चौसठ गुना बड़ा है । यह सूर्य की परिक्रमा ८४ वर्ष में पूरी करता है । (२) नेपच्यून-वरुण—यह पृथ्वी से १७ गुना भारी है । यह १६५ वर्ष में परिक्रमा करता है । (३) प्लेटो-यम—यह सूर्य की परिक्रमा ३०० वर्षों में पूरी करता है । अपने ही सौर-मण्डल के यह तीन सदस्य अब और बढ़ गए हैं । इसका अर्थ यह नहीं कि वे पहले थे ही नहीं । हम बढ़े हैं—हमारा ज्ञान साधन बढ़ा है—तो फिर हर क्षेत्र में नये आधार मिलेंगे ही । उदाहरण के लिए अपने सौर परिवार में तीन और बड़े-बड़े सदस्य आ मिले ।

चन्द्रमा किसी जमाने में पूर्ण ग्रह था । उसे तारा पति माना था । सौर-मण्डल के सदस्यों का ही नहीं आकाश में चमकने वाले समस्त तारकों का वह अधिनायक था । अब नये तथ्य सामने आये हैं । चन्द्रमा पूर्ण ग्रह नहीं, पर सूर्य की नहीं पृथ्वी की परिक्रमा करता है, इसलिए उसी का उपग्रह है । बहुत समीप मात्र ढाई लाख मील दूर होने के कारण ही वह बड़ा लगता है । सूर्य की तुलना में तो वह उसका करोड़वाँ हिस्सा भी नहीं है । आकार में पृथ्वी का ४९वाँ और वजन में ८१वाँ भाग है । उसका मात्र २१६० मील जितना उपहासास्पद है । वह पृथ्वी की परिक्रमा भर करता है, अपनी धुरी पर नहीं घूमता इसलिए हमें सदा उसका

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लगभग आधा भाग ही दीखता है । उसकी जमीन बहुत ऊँची-नीची है, सबसे ऊँची चोटी २७ हजार फुट और तीन हजार ज्वालामुखी फटने से बने बड़े-बड़े खड्ड हैं । वहाँ न हवा है, न पानी, न हरियाली । दिन में खौला देने वाली गर्मी और रात में जमा देने वाली सर्दी पड़ती है । परिक्रमा करते समय जब वह हमारी पृथ्वी की आड़ में हो जाता है । तब अमावस्य के दिन दीखना बन्द हो जाता है । क्रमशः यह आड़ जब कम-ज्यादा होती जाती है तो उसी अनुपात से शुक्ल पक्ष में बढ़ना और कृष्ण पक्ष में घटना शुरू हो जाता है । पृथ्वी, सूर्य और चन्द्रमा की अपनी-अपनी अलग-अलग गतियाँ हैं । इस चक्र में कई बार सूर्य का प्रकाश चन्द्रमा के ऊपर पड़ने के मार्ग में पृथ्वी आ जाती है तो चन्द्र-ग्रहण दीखता है । पृथ्वी और सूर्य के बीच चन्द्रमा आ जाता है तो सूर्य-ग्रहण पड़ता है । कौन कितना आड़े आया इसी हिसाब से ग्रहण की छाया न्यूनाधिक दीखती है ।

अब राहु, केतु राक्षस चन्द्र, सूर्य पर आक्रमण नहीं करते । पुरानी मान्यताओं का यह कहकर समाधान करना पड़ता है कि वे राक्षस मात्र इन ग्रहों की छाया ही समझे जाने चाहिए । चन्द्रमा का दर्जा तारापति से, पूर्ण ग्रह से उतार कर छोटे उपग्रह का कर दिया गया । आक्रमणकारी राक्षस विदा कर दिए गए । इतना ही नहीं मानवी प्रगति ने ऐसी-ऐसी कितनी ही पुरातन मान्यताओं को अस्वीकार कर दिया है और वह कड़वी गोली किसी प्रकार पुरातन पंथियों को भी गले उतारनी पड़ी है ।

अपनी पृथ्वी उत्तर से दक्षिण को ७८९६ मील और पूर्व से पश्चिम को ७९२६ मील है । उसका ७१ प्रतिशत भाग समुद्र में डूबा पड़ा है । समुद्रों की अधिक से अधिक गहराई ३५ हजार फुट है । भूतल के ऊँचे से ऊँचे पहाड़ २९ हजार फुट तक के हैं । उस सूर्य की एक परिक्रमा करने में ५८ करोड़ ४६ लाख मील की यात्रा एक वर्ष में पूरी करनी पड़ती है । उसकी चाल ६६६०० मील प्रति घण्टा है । अपनी धुरी पर २४ घण्टे में घूम लेती है । पोले आकाश में साँस लेने योग्य हवा कुछ ही दूर तक है । इससे आगे बन्द रॉकेटों में साँस लेने का अतिरिक्त प्रबन्ध करके ही जाया जा सकता है । प्राचीनकाल में लोग अन्यान्य लोकों में ऐसे ही विचरण करते थे, ऐसे कथा, प्रसंगों के पुराण, साहित्य भरा पड़ा है । वैसा करना या मानना अब नितान्त असम्भव हो गया है ।

अपने पंचांगों में राहु, केतु नामक दो ग्रहों का वर्णन है और वे अन्य ग्रहों की तरह ज्योतिष गणना में अपना सुनिश्चित स्थान बनाये हुए हैं, पर वे हैं क्या ? हैं कहाँ ? यह ठीक से नहीं कहा जा सकता । राहु को पृथ्वी की छाया मान लिया गया है । केतु की व्याख्या पुच्छल तारों के रूप में करते हुए काम चला लिया गया है । पर वे पुच्छल तारे न तो किसी स्थान पर टिकते हैं, न इनका आकार निश्चित है । वे घुमक्कड़ सेलानियों की तरह घूमते हैं और अपनी आकृति को घटाते-बढ़ाते रहते हैं केतु एक नहीं वरन् अनेकानेक होते हैं । वे गैस के बने होते हैं । छोटे-छोटे कंकड़-पत्थर भी उनमें रहते हैं । धुएँ के बादलों की तरह एक पारदर्शी बहुत लम्बी पूँछ कभी-कभी आकाश में दिखाई पड़ती है यह पुच्छल तारे कहे जा सकते हैं । यह पूँछ करोड़ों मील लम्बी होती है । उसका एक सिरा पृथ्वी पर और दूसरा सूर्य पर हो सकता है । वे पृथ्वी से लाखों गुने बड़े होते हैं । पर वजन में वे धरती के लाखवें हिस्से के बराबर भी नहीं होते । उस पूँछ के बीच में से पृथ्वी मजे से पार हो जाती है और हममें से किसी को उसका आभास तक नहीं मिलता है । उनकी पूँछ कटती और उगती रहती है । कई केतु सूर्य की अनियमित परिक्रमा करते हैं, कई अनन्त आकाश में ऐसे ही जहाँ-तहाँ स्वेच्छापूर्वक भ्रमण करते रहते हैं । कुछ तो अपनी पुरानी जगह कभी लौटकर नहीं आते और कुछ बहुत दिन बाद फिर अपनी पुरानी जगह की खोज-खबर लेने आ धमकते हैं । अपने सौर-मण्डल में एक केतु है जिसे हैली कहते हैं । पिछले १८०० वर्षों में २१ बार प्रदक्षिणा कर चुका है । वह सन् १९१० में देखा गया था । अब १९८६ में फिर लौटने वाला है । अब हम इन्हीं घुमक्कड़ों गैसीय बादलों को केतु ग्रह मानकर पुरानी मान्यताओं के साथ कुछ तुक बिठाने का प्रयत्न करते हैं ।

उल्कापात किसी समय देवताओं अथवा प्रेतात्माओं की हलचलों के रूप में माना समझा जाता था । किसी महापुरुष के मरने पर एक तारा टूटता है । देवता लोग उल्कापात के माध्यम से पृथ्वीवासियों पर विपत्ति भेजते हैं । यह मानकर लोग भयभीत होकर देव तुष्टि के कर्मकाण्ड रचा करते थे । उल्कापात अब प्रकृति की एक साधारण-सी घटना है ।

अनन्त आकाश में किन्हीं ग्रह-नक्षत्रों के टूटे-फूटे टुकड़े कंकड़-पत्थरों के रूप में रहते हैं । वे कभी पृथ्वी के वायुमण्डल में घुस पड़ते हैं तो हवा के घर्षण से वे जलकर खाक हो जाते हैं । यह जलना और दौड़ना ही उल्कापात है । कभी-कभी एक साथ सैकड़ों कंकड़ घुसते हैं तो आकाश में आतिशबाजी जैसी जलने लगती है । कुछ पिण्ड बहुत बड़े और अधिक कठोर होते हैं, तो उनकी ऊपरी परत ही जल पाती है और अधजला हिस्सा धरती पर आ गिरता है । ऐसी उल्काएँ संसार भर में जब तब गिरती रहती हैं । उनके छोटे-बड़े नमूने अजायबघरों में प्रदर्शनार्थ रखे गए मिलते हैं । उत्तर-प्रदेश के जालौन जिले में सन् १९२८ में एक पचास मन की उल्का गिरी थी और उससे दो किसान तत्काल मर गए थे । उसकी आवाज बीस मील तक सुनी गई थी । आरिजोना अमेरिका में गिरी एक उल्का ने एक मील चौड़ा और सात सौ फुट गहरा गड्ढा कर दिया था । साइबेरिया में ३० जून १९०८ में सबसे प्रचण्ड उल्का गिरी थी, उसने पचास मील का जंगल जलाकर खाक कर दिया था । हजारों मनुष्य और पशु-पक्षी मरे थे । अब इन उल्काओं को प्रकृति

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

का साधारण-सा खेल माना जाता है, देवात्मा का आतंक नहीं ।

पृथ्वी आरम्भ में आग के गोले की तरह थी, उसकी ऊपरी पर्त धीरे-धीरे ठण्डी होती गई है और उस पर प्राणियों तथा वनस्पतियों का निवास सम्भव हुआ है तो भी उसके भीतर अभी भी प्रचंड गर्मी है । सारा पदार्थ पिघला हुआ है और कड़ाही में खौलते तेल की तरह खुदबुद करता रहता है । इसकी भाप अक्सर धरती के ऊपरी परत वेधकर निकलती रहती है । जिधर से वह निकलती है वहाँ या तो ज्वालामुखी फटते हैं या मामूली भूकम्प आते हैं । यह हलचलें निरन्तर होती रहती हैं । औसतन हर तीसरे दिन एक बड़ा और हर दस मिनट बार एक हल्का भूकम्प पृथ्वी पर कहीं न कहीं आता ही रहता है । इनके अनेक कारण होते हैं । समुद्री की तली से पानी रिसकर उस आग्नेय द्रव पदार्थ तक जा पहुँचता है तो उसकी भाप विस्फोट करती हुई ऊपरी सतह को फाड़ती है । नये पहाड़ों के भीतर जहाँ-तहाँ गुफाओं की तरह बड़ी-बड़ी पोल हैं, वे धंसकती रहती हैं । पृथ्वी की ऊपरी पपड़ी सिकुड़ती रहती है । ऐसे-ऐसे अनेकों कारण ज्वालामुखी फटने अथवा भूकम्प आने के हैं । कभी-कभी समुद्र के भीतर भी ऐसे विस्फोट होते हैं । उससे नये टापू निकलते, पुराने डूबते तथा भयंकर समुद्री तूफान आते हैं । संसार में ऐसी पट्टियाँ भी मौजूद हैं जिनके क्षेत्र में अक्सर भूकम्पों का तांता लगा रहता है । उन्हें भू-गर्भ की सामान्य हलचलों में से एक सहज प्रक्रिया मान लिया गया है ।

हम प्रगति के पथ पर क्रमशः बढ़ रहे हैं । हमारा ज्ञान बढ़ रहा है साथ ही पुरानी मान्यताओं के स्थान पर नये प्रतिपादनों की स्थापना करनी पड़ रही है । यह क्रम अनादिकाल से चला आ रहा है और अनन्त काल तक चलता रहेगा । आज की अपनी स्थापनाओं में भी भविष्य में विकास-क्रम के अनुरूप परिवर्तनों की शृंखला चलती ही रहेगी ।

हमें दुराग्रही होना चाहिए और पूर्वजों के प्रति पूर्ण आस्थावान रहते हुए भी यह मानकर चलना चाहिए कि भूतकाल में जो माना या कहा जाता रहा है वही अन्तिम नहीं है । विकास-क्रम के साथ-साथ मान्यताओं का हर क्षेत्र में विकास उसी तरह होता रहेगा जैसा कि अपनी पृथ्वी और सौर-मण्डल सम्बन्धी प्रतिपादनों के सन्दर्भ में हुआ है ।

⌘⌘⌘



Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विनोदप्रिय भगवान का मनोरंजन दरबार

इस संसार में सब कुछ चेतना ही है

"न जड़ं क्वचित सर्व चिन्मात्र मेव हि"

अर्थात्—"संसार में जड़ कुछ है ही नहीं सब कुछ चेतना मात्र है ।" शास्त्रकार की यह बात सामान्य मनुष्य की समझ में नहीं आयी । योग की सिद्धावस्था तक पहुँचे हुए, महर्षि रामकृष्ण जब भावावेश में आते थे, वह दक्षिणेश्वर की काली की मूर्ति से माँ-माँ कहते हुए लिपट जाते थे । मूढ़ और जड़ बुद्धि लोगों के लिए यह भावाभिव्यक्ति भ्रान्तिपूर्ण लगी होगी, उन्हें अपनी बुद्धिशीलता का गर्व हुआ होगा, उमड़ती हुई भावनाओं में उसे कुछ भी दिखाई नहीं दिया होगा पर आज का वैज्ञानिक कहता है, सचमुच संसार में जड़ता कुछ नहीं है । चेतना ही चेतना, भाव ही भाव है, सब कुछ ।

स्थूल आँखों से देखने में यह बात आधी सच लगती है । सूर्य, चन्द्रमा, तारे, रेल, मोटर, बसें और चलने-फिरने वाले पक्षी, जीव-जन्तुओं में तो कुछ चेतनता, कुछ हलचल दिखाई भी देती है, पर पृथ्वी, मकान, वृक्ष, लोटाथाली बर्तन, पुस्तकें, पौधे, यह तो सब स्थिर लगते हैं । यह भी चंचल और गतिशील रहे होते तो हम रात मकान नं. ३१३ कलेक्टरगंज में सोते और प्रातःकाल जब जागकर उठते, तो अपने आपको मकान नं. ३१२ की बगल में नहीं, १६८५ मुहल्ला रामदास मंडी में पाते ।

इससे शास्त्रकार की बात असत्य नहीं हो गई । हमारी समझ मात्र का अन्तर है, अन्यथा वस्तुतः संसार में जड़ता कुछ है ही नहीं, जड़ता हमारी मानसिक स्थिति के कारण है, जितनी स्थूल बुद्धि होगी, उतनी ही स्थूलता सृष्टि में दिखाई देगी । यदि हम भावनाओं की गहराई से संसार को देखने और परखने लगें तो अपने दिखाई देने वाले शरीर, मकान, शहर, खेत, पेड़-पौधे तक अपने साथ रहने के लिए तैयार नहीं, सब चेतन, गतिशील अपने-अपने उद्देश्य की पूर्ति में संलग्न दिखाई देने लगें । सृष्टि का प्रत्येक परमाणु चंचल है । अपना लक्ष्य प्राप्त करने के लिए सब अशान्त हैं, न जाने क्यों यह मूढ़ता तो मनुष्य के पल्ले आ पड़ी, कि वह समय और पदार्थों की स्थूलता के आगे की बात सोच ही नहीं पाता । अपने आपको वस्तुओं से आसक्त, बाँधे हुए, माया-मोह के चक्कर में पड़ा हुआ, कामनाओं और वासनाओं में घिरा हुआ, कष्टपूर्ण जीवन जीता रहता है ।

एक वैज्ञानिक ने एक लोहे की एक शलाका ली, उसका एक सिरा आग में लगाया, दूसरा हाथ में पकड़े रहा, थोड़ी ही देर से दूसरा सिरा भी गर्म हो गया । शलाका हाथ से फेंक देनी पड़ी । पूछा गया शलाका क्यों फेंकदी ? गर्म हो गई इसलिए, उन्होंने बताया । कैसे गर्म हो गई ? अगला प्रश्न पूछा—जिज्ञासु ने, तो वैज्ञानिक ने बताया कि अग्नि चेतन है, उसके कण जब लोहे की शलाका के स्थूल लौह परमाणुओं से टकराये, तो उन परमाणुओं में विद्यमान चेतनता (लोहे के परमाणु में भी इलेक्ट्रॉन्स चक्कर काटते रहते हैं) ने अपना नियमित मार्ग बदल दिया । इलेक्ट्रॉन जो अब तक परमाणु की सीमा में बँधे थे, आग की गर्मी लगते ही ऐसे भागे जैसे ज्ञान के उदय होने पर राग-द्वेष और वासनाएँ भाग खड़ी होती हैं । अग्नि की ताप सारे परमाणुओं में यह हलचल उत्पन्न करती चली गई और दूसरा सिरा भी गर्म हो गया । वैसे बाहर से देखने में शलाका में अब भी कोई अन्तर नहीं आया था । चेतना शक्ति है, जब तक वह रहती है, मनुष्य या कोई भी वस्तु स्निग्ध प्राणवान, गर्म और प्रकाशवान दीखती है पर जड़ता के आते ही यह गुण समाप्त हो जाते हैं, इसलिए निश्चयपूर्वक भावनाशील व्यक्ति को अधिक शक्तिशाली कहा जा सकता है ।

चेतना के सूक्ष्मतम स्वरूप का चिन्तन न करने के कारण ही हमारी बुद्धि जड़तावादी हो गई है । पृथ्वी हमें इसीलिए जड़ दिखाई देती है, क्योंकि हमने अपनी भावनात्मक चेतना के द्वारा उसे देखने का प्रयत्न नहीं किया । अब आप यह मानिये कि आप एक छोटे बच्चे हैं । आपके एक हाथ में एक हथौड़ा है, दूसरे में पृथ्वी छोटे से मिट्टी के गेंद के समान । हथौड़े से पृथ्वी को पीस डालिए । देखिये पहाड़, नदियाँ, समुद्र, वृक्ष-वनस्पतियाँ सब रेत हो गए । इस रेत के किसी टुकड़े को एक छोटी-सी चिमटी से पकड़कर प्रकाशीय सूक्ष्मदर्शी (माइक्रोस्कोप) से देखिए शायद कुछ साफ न दिखाई दे, तो न्यूक्लियर माइक्रोस्कोप से देखिए । परमाणु के भी टुकड़े न्यूट्रॉन, प्रोटॉन, इलेक्ट्रॉन, पाजिट्रॉन, क्रोमोसोम, जीन्स आदि का अध्ययन इसी सूक्ष्मदर्शी से किया जाता है । आप देखेंगे उस टुकड़े में जो पृथ्वी का सबसे लघुतम टुकड़ा होगा, कैसी हलचल मची हुई है । आप उस छोटाई का अनुमान नहीं कर सकते हों तो एक सेन्टीमीटर में उन परमाणुओं को बिछाकर देख लें, इतनी सी जगह में एक करोड़ परमाणु आराम में बैठे मिलेंगे । इतना छोटा कि जिसकी कल्पना भी न की जा सके ।

अब इसका नाभिक (न्यूक्लियस) देखते हैं तो लगता है, यह तो और भी छोटा है । एक सेन्टीमीटर स्थान में १०००००००००० (एक नील) नाभिक मजे में समा सकते हैं । इस छोटी से छोटी स्थिति में भी कितनी हलचल है, यदि आप उसे देख पायें तो आप भी यही कहें—

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आकाशो भूजलं वायुरग्निर्ब्रह्मा हरिः शिवः ।
यत्किंचिघन्नं किंचिच्च सर्वं चिन्मात्र मेवहि ॥

—तेजबिन्दुपनिषद १।२८

आकाश, पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि, ब्रह्मा, विष्णु, महेश जो कुछ हैं और नहीं हैं, वह सब चैतन्य ही हैं । 'न जड़ं क्वचित्' जड़ तो कुछ है ही नहीं ।

योगवाशिष्ठ के ३।६४।२० से लेकर ३।६४।२६ तक इस गूढ़ रहस्य को स्पष्ट करते हुए महर्षि वशिष्ठ कहते हैं— जिस प्रकार जल में लहरों की चंचलता है, जलते हुए दीपक में प्रकाश किरणों की स्फुरणा, अग्नि में चिन्गारियाँ, चन्द्रमा में किरणें, वृक्ष में फूल-पत्तियों की शोभा है, उसी प्रकार सृष्टि के अणु-अणु में व्याप्त परम-चेतना को जो देखते और अनुभव करते हैं, वही ईश्वर की सच्ची जानकारी प्राप्त कर सकते हैं । यथैतत्प्रतिभा मात्रं जगत्सगविभासनम्' अर्थात् जगत में जो भी पदार्थ हैं, वे सब इसी चेतना से उदय होते हैं ।

अनुभव में न आने वाली यह चेतना जितनी सूक्ष्म है, उतनी ही विराट् भी । पानी का एक परमाणु एक सेकण्ड में ३० खरब टक्करें लेता है, उसकी एक परिक्रमा की दूरी इंच के दस करोड़वें भाग जितनी होती है । पर इतनी सशक्त कि यदि उसे छेड़ दिया जाय तो इसी परमाणु की चेतना सम्पूर्ण पृथ्वी को जलाकर खाक कर सकती है । बमों की रचना में इसी शक्ति वाले भाग को छेड़ा जाता है । उसके वीभत्स परिणाम लोग नागासाकी के विध्वंस के रूप में देख चुके । मनुष्य की भावनात्मक चेतना में उससे भी कई गुनी प्रचण्ड और चमत्कारिक शक्ति होती है, जो कभी-कभी ही प्रभाव में आती है ।

कोल्हापुर में एक परमहंस सन्त हुए थे । वे जब भावनाओं के आवेश में आते थे तो कोई कुछ भी देता जाता था, वह खाते चले जाते थे । एक बार कुछ बुरे व्यक्तियों को शरारत सूझी—उन्होंने दो भरी बोतलें शराब की दे दीं, परमहंस उन्हें पी तो गए पर सम्भवतः उस प्रभाव से उनकी व्याकुलता बढ़ी होगी और उसकी प्रतिक्रिया यह हुई, कि उन दुष्ट लोगों को तत्काल कुष्ठ रोग हो गया ।

सामान्य अवस्था में यह शक्ति प्रसुप्त अवस्था में होती है, इसलिए वह समझ में नहीं आती या उसका प्रभाव दिखाई नहीं देता, किन्तु यदि साधना तपश्चर्या द्वारा अपने ही भीतर की भावनात्मक चेतना को जाग्रत कर लिया जाय, तो मनुष्य सूर्य चेतना की तरह सर्वसमर्थ और शक्तिशाली हो सकता है । सामान्य और सुषुप्त अवस्था की चेतना शक्ति सूर्य की चेतना के समान ही दृष्टिगोचर नहीं होती पर वह शक्ति है असंदिग्ध ।

प्रकाश सूर्य से चलकर पृथ्वी पर पहुँचने में कुल ८ मिनट समय लेता है । प्रकाश के परमाणु एक सेकण्ड में १८६००० मील की गति से चलते हैं । यह कण सूर्य की सतह से नहीं आते, वरन् सूर्य में एक त्रिज्या की स्थिति विद्यमान है, उससे आते हैं, यह त्रिज्या ४२०००० मील की है, यही सूर्य की आत्मा है, इसी से शक्ति और ताप का स्फोट होता है । यदि सामान्य प्रकाश की गति काम करती तो वह गर्मी इस त्रिज्या को ढाई सेकण्ड में ही पूरा कर लेती और फिर तुरन्त पृथ्वी और अन्य ग्रहों की ओर प्रवाहित होकर उन्हें कुछ ही क्षणों में जलाकर नष्ट कर देती । इसलिए सामान्य अवस्था में इसे सुषुप्त और अनियमित रखा गया है ।

अणुओं की चाल अनियमित होती है, इसलिए त्रिज्या को पार करके सूर्य की सतह तक पहुँचने में ही उसे कई वर्ष लग जाते हैं । सूर्य ताप के धन और ऋण अणु जब टकराते हैं, तब उनमें केवल एक सेन्टीमीटर की ही उछाल होती है, इसलिए वे अणु कितनी ही तेजी से उछलें सतह तक पहुँचने में उन्हें काफी समय लग जाता है, इस बीच वह कई प्रकार की किरणों में बँटकर चारों ओर प्रकीर्ण हो जाता है, इस तरह ताप शक्ति की थोड़ी-सी ही मात्रा व प्रकाश पृथ्वी तक आ पाता है और उतने से ही पृथ्वी की गतिविधियाँ चलती रहती हैं । शक्ति वाला अंश धीरे-धीरे प्रवाहित होता रहता है ।

यह चेतना शक्ति ही समुद्र, वायु, वृक्ष-वनस्पतियों और मनुष्यों तक में काम करती रहती है । दरअसल पृथ्वी में दिखाई देने वाली हलचल बिल्कुल स्तब्ध रही होती, यदि यह चेतना उतरकर न आयी होती, यह चेतना ही अनन्त स्वरूपों में विभक्त होकर विलक्षण सृष्टि उत्पन्न कर रही है । वही जब सिमट कर अलग हो जाती है, तो मनुष्य का शरीर खाक होकर नष्ट हो जाता है ।

हम जो भी बोलते-सुनते, खाते-पीते, भाव, अहंकार, आकांक्षाएँ, इच्छाएँ रखते हैं, वह सब चेतना के गुण हैं, शरीर नष्ट हो जाने पर भी चेतना में इनकी वासनाएँ और संस्कार बने रहते हैं, इसीलिए शास्त्रकार ने बार-बार आत्म-चेतना को जानने और उसे शुद्ध करने के लिए सावधान किया है । चेतना कभी मरती नहीं, रूपान्तर भर होता है । इसलिए भावनात्मक चेतना में ढँके लोगों की अमरता का अविश्वास करने का कोई कारण नहीं रह जाता ।

यह सृष्टि किस कुशल कारीगर द्वारा बनाई गई है

'अकस्मात' तो दुर्घटनाएँ हुआ करती हैं, सृजन नहीं । सुव्यवस्था एवं सन्तुलन का होना इस बात का परिचायक है कि उसे बनाने और नियन्त्रण करने वाली कोई बुद्धिमान एवं समर्थ सत्ता है । यह विराट् अद्भुत और सुव्यवस्थित सृष्टि अपने आप बनकर तैयार हो गई । स्वसंचालित है, यह प्रतिपादन बुद्धि के पल्ले नहीं पड़ता । संयोगवश अपने आप न तो मकान बनकर तैयार हो जाता है और न ही मोटर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आदि । जिन मशीनों, कम्प्यूटर आदि यन्त्रों को ऑटोमेटिक कहा जाता है, उन पर भी नियन्त्रण रखना होता है । संयोगवश अपने आप धूल के कणों को एकत्रित होकर ईंटों में परिवर्तित होते, एक के ऊपर एक सजकर मकान में बदलते किसने देखा है ? मोटर में प्रयुक्त होने वाले विभिन्न यन्त्र एकत्रित होकर स्वयंमेव मोटर में परिवर्तित हो गए हों और गतिशील बन गए हों ऐसा उल्लेख संसार भर में कहीं नहीं मिलता । कोई इन्जन, कल-कारखाना किसी ऑटोमेटिक प्रक्रिया द्वारा स्वतः चलता एवं बन्द होता रहे, ऐसा सम्भव नहीं है । इनके सुसंचालन के लिए सदा नियन्त्रण बनाये रखना होता है ।

वह समय अब पीछे छूटता जा रहा है, जब विज्ञान अपनी बाल-बुद्धि के सहारे यह कहता था, कि सृष्टि अपने आप बनकर तैयार हो गई और ऑटोमेटिक प्रक्रिया द्वारा गतिशील है । संसार के मूर्धन्य वैज्ञानिकों ने अपनी सूक्ष्म खोजों के उपरान्त यह घोषणा की है कि "सृष्टि रचना एक संयोग नहीं बुद्धि का चरम आविष्कार है" उसका सुसंचालन कोई अदृश्य किन्तु सर्व समर्थ मस्तिष्क कर रहा है । खोजने पर उस समर्थ सत्ता के अनेकों प्रमाण हमारे चारों ओर बिखरे मिल जायेंगे ।

डॉ. ए. क्रेसी मोरिसन इन्हीं मूर्धन्य वैज्ञानिकों में से एक हैं, जिन्होंने किसी सृष्टि संचालक सत्ता पर विश्वास करने के अनेकों कारण बताये हैं । 'क्रेसी' न्यूयार्क विज्ञान अकादमी के अध्यक्ष भी रह चुके हैं ।

डॉ. क्रेसी का कहना है, कि "गणित शास्त्र के नियमों से यह प्रमाणित होता है कि "इस संसार का नक्शा किसी कुशल तथा बुद्धिमान इन्जीनियर द्वारा खींचा गया है । विश्व की रचना निष्प्रयोजन नहीं प्रयोजन युक्त है । इसका प्रमाण है, जीव जगत के लिए पृथ्वी पर अनुकूल वातावरण का होना । उनका कथन है कि "पृथ्वी अपनी धुरी पर एक हजार मील प्रति घण्टे की रफ्तार से घूमती है, यदि उसकी गति सौ मील प्रति घण्टा हो जाय तो दिन और रात अब की तुलना में दस गुने लम्बे हो जायेंगे । दिन के समय सूर्य की गर्मी इतनी अधिक होगी कि पृथ्वी की समस्त वनस्पतियाँ जल जायेंगी । रात्रि को भयंकर ठण्ड पड़ेगी जिसके कारण अधिकांश जीव मर जायेंगे ।

"चन्द्रमा की दूरी पृथ्वी से दो लाख बत्तीस हजार मील है । यदि उसकी दूरी मात्र पचास हजार मील होती तो सागरों में भयंकर ज्वार उठते । फलस्वरूप समस्त महाद्वीप जलमग्न हो जाते । सूर्य जीवन का स्रोत है । उसका सतही तापक्रम बारह डिग्री फारेनहाइट है । सूर्य से पृथ्वी की दूरी एवं प्राप्त होने वाला ताप का सामन्जस्य जीवन के अनुकूल है । यदि सूर्य का ताप घटकर आधा अवशेष रह जाय तो पृथ्वी के सभी प्राणी जम जायेंगे । तापक्रम आधा और बढ़ जाय तो सब जल-भुन कर समाप्त हो जायेंगे । पृथ्वी २३ डिग्री के कोण पर झुकी है । इस कारण अनुकूल ऋतुएँ मिलती हैं । यह झुकाव न होता तो समुद्री भाप उत्तर से दक्षिण तक फैल जाती और सर्वत्र बर्फ के महाद्वीप बन जाते । वायु में ऑक्सीजन एवं कार्बन डाइ ऑक्साइड गैस के सन्तुलन में सागरों की गहराई का हाथ है । यदि सागर अधिक गहरे होते तो इन गैसों के अभाव में वनस्पतियों का अस्तित्व नहीं बचता । अन्तरिक्ष वायु सुरक्षा कवच पतला अथवा हल्का होता तो अगणित उल्काएँ नित्य ही जलती हुई पृथ्वी से आ टकराती और समस्त भू-सम्पदा को भस्मीभूत कर देतीं । हर दृष्टि से पृथ्वी पर अनुकूल, सुरक्षित एवं सुव्यवस्थित वातावरण का होना इस बात का प्रमाण है, कि कुशल हाथों से किसी समर्थ सत्ता ने इस सृष्टि की रचना की है । संचालन एवं नियन्त्रण की बागडोर भी उसी के हाथों में है ।

डॉ. क्रेसी का कहना है, कि सर्वत्र वह सत्ता शक्ति के रूप में क्रियाशील है । जीवन उसका ही स्वरूप है । भार, लम्बाई, चौड़ाई अथवा ऊँचाई से रहित होते हुए भी जीवन शक्ति से ओत-प्रोत है । वृक्ष की बढ़ती हुई जड़ के रूप में वह चट्टान को भी तोड़ देता है । जीवन एक मूर्तिकार है, जो सभी जीवित तत्वों को आकृतियाँ प्रदान करता है । मनुष्य और मनुष्येत्तर प्राणी, नन्हें जीव-जन्तु उसी की विभिन्न कला-कृतियाँ हैं । जीवन एक चित्रकार है जो वृक्ष वनस्पतियों को एक सुनिश्चित रूप देता, पुष्पों में रंग भरता, अपने सुरभ से उन्हें सुरभित करता । वह एक संगीतकार है, जिसका संगीत चिड़ियों के माध्यम से गुंजित होता है । वह एक रसायन तत्वज्ञ है, जो फलों में, अन्नों एवं सब्जियों में विविध प्रकार का स्वाद भरता है ।

क्षुद्र प्रोटोप्लाज्म अपने अन्दर जीवन की असीम सम्भावनाएँ छिपाये हुए हैं । वृक्ष वनस्पतियों से लेकर क्षुद्र जीव-जन्तु, पशु-पक्षी और मनुष्य तक इसी नगण्य द्रव से अपना स्वरूप प्राप्त करते हैं । क्षुद्र और महान् सभी प्राणी इससे ही जीवन ग्रहण करते हैं । एक जैसा दीखते हुए भी यह जीवद्रव्य के लिए जीव जगत में विविध रूपों को भरता, वृक्ष, वनस्पतियों, जीव-जन्तुओं को एक निश्चित आकृति प्रदान करता है ।

परमात्मा पर विश्वास करने और श्रद्धा रखने का तीसरा प्रमुख कारण है, जीव जगत की अद्भुत संरचना । प्रत्येक प्राणी को सृष्टा ने उसकी आवश्यकता के अनुरूप ऐसी विशेषताएँ दे रखी हैं, जिससे वह जीवनयापन कर सके और आने वाली कठिनाइयों से अपनी सुरक्षा कर सके । वैज्ञानिक भाषा में इस विशेषता को 'सहज ज्ञान' कहते हैं । वैज्ञानिकों ने इस सम्बन्ध में अनेकों प्रयोग किए हैं । 'सालमन' नामक एक विशेष प्रकार की मछली को उसके जन्म स्थान से दूर समुद्र में ले जाकर छोड़ दिया जाय, तो कुछ समय बाद वह पुनः नदी समुद्र से जुड़ी नदियों के सहारे अपने मूल स्थान

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

पर वापस लौट आती है । निश्चित स्थान पर पहुँचने में उससे कभी भूल नहीं होती ।

'ईल' नामक मछली के भीतर यह विशेषता और भी अधिक मात्रा में पायी जाती है । यह जीवन-पर्यन्त प्रवासी जिन्दगी व्यतीत करती है, किन्तु निर्धारित समय पर अपने दायित्वों को पूरे कर अण्डे देती है, जहाँ कि टिड्डी का सुरक्षित माँस रखा होता है । अण्डे से निकलने वाले बच्चों को ताजा माँस खाने के लिए अपने निकट ही मिल जाता है । यदि 'वैकल्प' टिड्डे को अचेत न करके पूर्णतया मार दे तो कुछ ही समय बाद टिड्डे का माँस विषाक्त हो जायेगा और इस योग्य नहीं बचेगा कि उसे अण्डे से निकलने वाले खा सकें । यह सहज ज्ञान की प्रकृति प्रदत्त विशेषता इस बात का परिचय देती है, कि कोई समर्थ सत्ता ने समझ-बूझकर उनकी रचना की है और जीवनयापन के लिए आवश्यक विशेषताएँ प्रदान की हैं ।

इसी प्रकार असंख्यों मनुष्येत्तर जीव अपने सहज ज्ञान के कारण ढर्रे का जीवन व्यतीत करते । खाने-पाने, और प्रजनन तक उनकी चेष्टाएँ सीमित रहती हैं, जबकि मनुष्य को विचारणा की बौद्धिक शक्ति अतिरिक्त रूप से मिली है । इसी का अवलम्बन लेकर मनुष्य विकास की वर्तमान स्थिति तक पहुँच सका है ।

प्रत्येक जीव के लिए समुचित आहार की पूर्व व्यवस्था का होना भी इस बात का प्रमाण है, कि किसी अदृश्य सत्ता ने प्रत्येक जीव की आवश्यकता के अनुरूप ऐसी सुविधाएँ दे रखी हैं, जिससे वह भली-भाँति अपना भरण-पोषण कर सके । माँ के गर्भ में पलने वाले असहाय अबोध शिशु तक को पोषण अपने आप प्राप्त होता रहता है । शाकाहारी और माँसाहारी जीव प्रकृति सम्पदा से अपने-अपने अनुरूप आहार प्राप्त करते रहते हैं । नभचर, जलचर और पृथ्वी पर रहने वाले समस्त जीव-जन्तुओं को उनके अनुरूप भोजन प्राप्त हो जाता है ।

प्रकृति के कार्य भी यह प्रमाण देते हैं कि सृष्टि की रचना किसी दूरदर्शी सत्ता ने की है । वह मात्र रचना ही नहीं करती वरन् समय-समय पर नियमन और सन्तुलन का दायित्व भी सँभालती है । उपयोगी के अभिवर्धन और अनुपयोगी के कांट-छाँट की प्रक्रिया भी सृष्टा द्वारा प्रकृति में चलती दिखायी पड़ती है । बहुत समय पूर्व आस्ट्रेलिया के विभिन्न स्थानों पर बाड़ लगाने के लिए नागफनी के पौधे लगाये गए । ये पौधे व्यापक क्षेत्र में फैल गए । स्थिति यहाँ तक जा पहुँची कि वहाँ के निवासियों के लिए कृषि करना भी कठिन हो गया । फसलों को ये पौधे नष्ट कर देते और अपना आधिपत्य जमा लेते । आस्ट्रेलिया के नागरिकों के समक्ष जीवन संकट उपस्थित हो गया । जीव वैज्ञानिकों ने अपने गहन अध्ययन के उपरान्त एक ऐसे कीड़े की खोज की जो मात्र नागफनी के पौधों को खाता था । एक कीड़े को लाकर उस क्षेत्र में छोड़ दिया गया । ये कीड़े भी द्रुतगति से बढ़ने लगे । कुछ ही समय में कीड़ों ने नागफनी पर विजय प्राप्त कर ली, किन्तु साथ ही इनका विस्तार भी अपने आप रुक गया ।

रोकथाम एवं सन्तुलन की यह व्यवस्था सर्वत्र कार्य करती दिखाई पड़ती है । जिन कीड़ों की सन्तानोत्पादन की क्षमता जितनी अधिक है, वे उतनी ही शीघ्र समाप्त भी हो जाते हैं । उनके विस्तार एवं अभिवृद्धि पर प्रकृति का नियन्त्रण न हो तो कुछ ही समय में समस्त भू-मण्डल पर वे छा जायेंगे, किन्तु ऐसा कभी नहीं होता । प्रकृति की कठोर नियमन व्यवस्था उनके विस्तार को रोकती है ।

नियामक सत्ता के ऐसे अनेकों प्रमाण हमारे चारों ओर बिखरे पड़े हैं, जिनके द्वारा उसके अस्तित्व का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है । प्रत्यक्ष दिखाई न पड़ना ही उसके न होने का प्रमाण नहीं है, दिखाई तो स्थूल वस्तुएँ पड़ती हैं—शक्तियाँ नहीं । परमात्मा एक शक्ति है कोई व्यक्ति अथवा वस्तु नहीं । बिजली ऊष्मा, गुरुत्वाकर्षण, चुम्बकत्व जैसी शक्तियाँ प्रत्यक्ष कहाँ दिखाई पड़ती हैं ? उनकी प्रतिक्रियाओं द्वारा उनका प्रमाण मिलता है । दिखाई न पड़ने मात्र से कोई इनके अस्तित्व से इन्कार नहीं करता । परमात्मा भी शक्ति के रूप में सर्वत्र क्रीड़ा-कल्लोल कर रहा है । सृष्टि की सुव्यवस्था और सुसंचालन उसी सत्ता का अकाट्य प्रमाण है ।

क्या पृथ्वी भी प्लूटो बनने जा रही है ?

सूर्य-मण्डल का सबसे दूरवर्ती ग्रह प्लूटो, शनि के इर्द-गिर्द घूमने वाला एक छल्ला, मंगल और वृहस्पति के बीच उल्का खण्डों की एक भ्रमणशील माला, नेपच्यून के एक कोने पर उठा हुआ कूबड़, इन सब विलक्षणताओं की एक साथ संगति बिठाते हुए, अन्तरिक्ष विज्ञान के एक मूर्धन्य दल ने एक संगति बिठाई है कि मानवी सभ्यता के उत्कृष्ट अवशेष, और विकसित विज्ञान के चिन्ह उस पर पाये जाने चाहिए, क्योंकि वह सौर-मण्डल का सबसे विकसित ग्रह किसी समय रहा है और उसकी प्राकृतिक परिस्थितियाँ पृथ्वी की अपेक्षा कम नहीं वरन् अधिक सुखद थीं । फलतः सौर-मण्डल का मनुष्योपम प्राणी उस पर जन्मा और फला-फूला हो तो आश्चर्य नहीं । प्रगति का मूल आधार प्रकृति के रहस्यों की खोज है । मनुष्य को आदिमकाल से लेकर अद्यावधि जो सुविधा साधन मिले हैं, वे प्रकृति की ही देन हैं । अस्तु यह भी निश्चित है, कि उस छिन्न-भिन्न हुए पुरातन सौर-मण्डल सदस्य ग्रह ने विज्ञान की बढ़ी-चढ़ी खोज की हो ।

वैज्ञानिकों ने उस अविज्ञात ग्रह का कल्पित नाम फैथान रखा है । उनका अनुमान है, कि उस पर रहने वाले लोगों

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ने परमाणु रहस्य खोज लिए थे और उसका विस्फोट करके ऊर्जा का एक बड़ा स्रोत हस्तगत करने का प्रयत्न किया था ।

इसी खोज के बीच परस्पर युद्ध छिड़ गया या किसी तकनीकी भूल से परमाणु शक्ति भण्डार में विस्फोट हो गया और उसके अत्यन्त भयावह परिणाम हुए ।

उस ग्रह की स्थिति, मंगल और वृहस्पति के बीच जब वह फटा तो उसकी उखड़ी पर्त छर्रों के रूप में बिखर गई । वे छर्रे ही क्षुद्र ग्रहों की माला के रूप में मंगल और वृहस्पति के रूप में घूम रहे हैं ।

इसके फैथान का भीतरी ठोस द्रव्य भीतर शक्ति के बल पर आगे बढ़ा, उसने शनि के एक बड़े चन्द्रमा को टक्कर दी और उसे भी धूलि के रूप में बदल दिया । वह धूलि ही शनि के चारों ओर एक छल्ले के रूप में घूमती रहती है । इस धूलि में फैथान का भी कुछ अंश क्षत-विक्षत होकर मिल गया । इसके उपरान्त भी उसका वेग रुका नहीं । तेजी कुछ कम तो हुई पर इतनी कम नहीं कि स्थिरता पकड़ ले । तब वह नेपच्यून से जा टकराया । उस पर उभरा हुआ कूबड़ प्लूटो का कोई टुकड़ा हो सकता है अथवा वही पिचक कर एक ओर पहाड़ की शक्ल में बदल गया हो ।

इतने में फैथान ने लम्बी यात्रा कर ली थी और उसकी गर्मी कम और चाल शिथिल हो गई । सूर्य की आकर्षण शक्ति की पकड़ में वह आ गया और अन्य ग्रहों की तुलना में अतिशय दूर होते हुए भी सौर-मण्डल का सदस्य माना गया । औरों की भाँति प्लूटो भी सूर्य की परिक्रमा लगाने लगा । पर इतने पर भी अपनी सम्पदा का बहुत बड़ा अंश उसने गवाँ दिया था और आकार में प्रायः एक चौथाई अंश रह गया । यह अंश वह है, जो उसके मध्य भाग में पिघली हुई धातु के रूप में कठोर स्थिति का बचा हुआ था ।

प्लूटो पृथ्वी पर से खुली आँखों से नहीं देखा जा सकता । उसका पता अब से प्रायः ५५ वर्ष पहले दूरदर्शन यन्त्रों की सहायता से लगाया । हमारी पृथ्वी सूर्य से १५ करोड़ किलोमीटर दूर है पर प्लूटो की दूरी उससे ४० गुनी अधिक है अर्थात् १५×४० =६०० करोड़ मील दूर । उसका सूर्य परिक्रमा वर्ष पृथ्वी के २५० वर्षों के बराबर होता है । दिन रात भी प्रायः $5\frac{1}{2}$ गुने अधिक लम्बे होते हैं । सूर्य से पृथ्वी को जितना प्रकाश मिलता है, उसकी तुलना में १६०० गुना कम प्रकाश ही उस तक पहुँच पाता है । वहाँ सदा सर्दी रहती है । शून्य से २०० डिग्री सेन्टीग्रेड कम वहाँ का मौसम रहता है । उतने कड़ाके की ठण्ड में पृथ्वी पर पाये जाने वाले प्राणियों में से किसी का गुजारा नहीं हो सकता ।

इतना दूर और इतना छोटा होते हुए भी पृथ्वी के वैज्ञानिक उस तक पहुँचने और वहीं पर सम्भावित मानवी सभ्यता तथा वैज्ञानिक प्रगति का पता लगाने के लिए बहुत उत्सुक हैं । अन्तर्ग्रही आवागमन की बात सोचने वालों के लिए सौर-मण्डल के एक सदस्य की खोज-बीन असम्भव नहीं होनी चाहिए । इतनी लम्बी यात्रा पर मनुष्य का जाना लौटना असम्भव है । पर स्व-संचालित रॉकिट में संचालक 'रोबोट' तथा उसके साथ खोज-बीन के आवश्यक उपकरण भेजा जाना सम्भव है । रेडियो तरंगों द्वारा उसका संचालन भी पृथ्वी से हो सकता है ।

फैथान ग्रह जैसे सुविकसित ग्रह की ऐसी दुर्दशा कैसे हुई ? इसका कारण वैज्ञानिक एक ही बताते हैं कि उन लोगों ने अणु शक्ति का उपयोग जान-बूझकर युद्ध रूप में किया होगा अथवा किसी भूल से वह शक्ति भण्डार अनायास ही फट पड़ा होगा । इसका परिणाम यही हो सकता था, जो होकर रहा ।

आज के पृथ्वी निवासी भी उसी आग से खेल रहे हैं । वैज्ञानिक अपरिमित शक्ति के अणु आयुध तैयार कर रहे हैं और शासनाध्यक्ष उनके विपुल भण्डार जमा कर रहे हैं । आत्म-रक्षा का बहाना भर किया जाता है । वस्तुतः यह प्रयास प्रतिपक्षी को नष्ट करके उसकी भूमि तथा सम्पदा हथिया लेने भर का है । पर यह मनोरथ जो भी कर रहे हो, उन्हें इतिहास से शिक्षा लेनी चाहिए । अब जापान की तरह एक पक्षीय हमला नहीं हो सकता । सामने वाला प्रतिशोध की समाग्री से सुसज्जित होने के कारण चूकेगा क्यों ? वह भी प्रत्याक्रमण करेगा । आगामी लड़ाई ऐसी नहीं होगी, जिसमें कुछ मरें कुछ बच जायें । होना है तो सर्वनाश ही होगा और उस सुन्दर धरती का समुन्नत सभ्यता का उसी प्रकार होगा, जैसाकि तथाकथित फैथान का हुआ । उसने अनेक विपन्नता सौर-मण्डल में उत्पन्न कीं और स्वयं सबसे पिछली पंक्ति में दयनीय स्थिति में जा बैठा । अगला परमाणु युद्ध हुआ तो पृथ्वी का भी ऐसा ही दुर्भाग्य भरा अन्त होना निश्चित है ।

समय भविष्य की ओर ही नहीं चलता, भूतकाल की ओर भी लौटता है

आवश्यक नहीं कि जो बात एक समय सही मानी जाती है, वही दूसरे समय भी उसी प्रकार मानी जाती रहे । इसी प्रकार यह भी आवश्यक नहीं कि जिस बात को आज अप्रामाणिक माना जाता है उसे भविष्य में भी वैसा ही समझा जाय । उदाहरण के लिए अपने समय के सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक गेलीलियो ने ब्रह्माण्डीय गुरुत्वाकर्षण का सिद्धान्त मानने से इन्कार किया था । वे पृथ्वी की आकर्षण शक्ति को तो मानते थे, पर यह स्वीकार नहीं करते थे कि ग्रहपिण्ड की आकर्षण शक्ति दूसरों को भी प्रभावित करती है और इसी आधार पर वे एक-दूसरे के साथ बँधे हुए हैं । न्यूटन तक ने ग्रहों के आपस में बँधे रहने वाले गुरुत्वाकर्षण को बहुत पीछे और बड़ी कठिनाई के बाद स्वीकार किया था, पर आज वे विरोध

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

ठण्डे पड़ गए और ग्रहों के बीच गुरुत्वाकर्षण की बन्धन-शृंखला की वास्तविकता स्वीकार करने में किसी को कोई आपत्ति नहीं है ।

मात्र एक महत्त्वपूर्ण खोज किस तरह विज्ञान में कई प्रतिष्ठित मान्यताओं को गलत सिद्ध कर देती है, यह सुविदित तथ्य है । हमारा यह विश्व कब अस्तित्व में आया, इसके बारे में कुछ वर्ष पहले तक खगोलविदों की धारणा थी कि इस विश्व की उम्र लगभग १० अरब वर्ष है, पर १९७१-७२ में दूरस्थ ज्योति-पुंजों के प्रकाश को ग्रहण करने वाले यन्त्रों द्वारा ऐसा प्रकाश ग्रहण किया गया, जो अपने स्रोत स्थान से २० अरब वर्ष पहले चला था । इससे स्पष्ट हुआ कि ज्ञेय विश्व कम से कम २० अरब वर्ष पुराना है । इसी से यह भी स्पष्ट है कि कोई भी नई जानकारी किसी भी क्षण इस मान्यता को लाँघ सकती है, कि विश्व सचमुच कितना पुराना तथा कितना बड़ा है, यह अज्ञात एवं अनिश्चित है ।

इस समय विश्व की उत्पत्ति के बारे में वैज्ञानिकों की मुख्य-मुख्य परिकल्पनाएँ ये हैं—

एक परिकल्पना के अनुसार अरबों वर्ष पूर्व, सम्पूर्ण विश्व का द्रव्य एक पुन्जीभूत महापिण्ड के रूप में था । नाभिकीय कणों का सघन सम्पुन्जन किया जाय तो एक घन सेन्टीमीटर स्थान में करोड़ों टन द्रव्य समा सकता है । इसीलिए सम्पूर्ण विश्व द्रव्य का महापिण्ड में सम्पुन्जन सम्भव है ।

इस महापिण्ड का विस्फोट हुआ और विस्तार होने लगा । उसी से मन्दाकिनियाँ, नीहारिकाएँ बनीं ग्रह-नक्षत्र बने, यह विस्तार अभी जारी है । इसकी पुष्टि इस तथ्य से होती है, कि दूरस्थ आकाश-गंगायें हमसे लगातार दूर भाग रही हैं । उनमें पृथ्वी से दूर हटने की गति, पृथ्वी से उनकी दूरी के अनुपात में है । इससे स्पष्ट है, कि ब्रह्माण्ड का विस्तार हो रहा है ।

मन्दाकिनियों के लगातार दूर भागने की बात की पुष्टि विख्यात वैज्ञानिक प्रो. फ्रेड हायल के एक परीक्षण से हुई है । सुदूरस्थ आकाश-गंगाओं से पृथ्वी तक आने में प्रकाश-तरंगों का कम्पन बढ़ जाता है । दूर से आने वाले प्रकाश का झुकाव, वर्णपट प्राप्त करने पर, नीले रंग की ओर होता है और दूर जाने वाले प्रकाश स्रोत के प्रकाश का झुकाव लाल रंग की ओर होता है । आकाश-गंगाओं से आने वाली प्रकाश-तरंगों के प्रकाश का वर्णपट प्राप्त करने पर, उस वर्णपट का झुकाव लाल रंग की ओर पाया गया । इससे पता चला कि आकाश-गंगायें दूर जा रही हैं । माउण्ड पोलोयर वेधशाला की दूरबीन से भी आकाश-गंगाओं की दूर हटने की प्रक्रिया देखी गई ।

एक सिद्धान्त यह है कि विश्व जैसा अभी है, वैसा ही आरम्भ से है । आकाश-गंगायें दूर भाग रही हैं, तो पास भी आ रही होंगी, जो अभी हमें दीखती नहीं । वस्तुतः यह सिद्धान्त प्रो. हायल का है, जिसे 'समतुलित अवस्था सिद्धान्त' कहते हैं । प्रो. फ्रेड हायल ने ही सर्वप्रथम यह खोजा था कि आकाश-गंगायें पृथ्वी से दूर हट रही हैं । इससे जहाँ कुछ वैज्ञानिकों ने यह निष्कर्ष निकाला, कि ब्रह्माण्ड का विस्तार हो रहा है । लेकिन स्वयं प्रो. हायल का निष्कर्ष यह था कि पुरानी मन्दाकिनियाँ जो दूर भागती दीखती हैं, अस्तित्वहीन होती रहती हैं और नई मन्दाकिनियाँ जन्म लेती रहती हैं । इससे ब्रह्माण्ड की पिण्ड संख्या स्थिर रहती है और घनत्व अपरिवर्तित ।

टामस गोल्ड, हर्मन वांडो, वेरोजोफ, वेत्मामिनोफ आदि भी इसी सिद्धान्त को मानते हैं ।

एक मत यह है, कि प्रारम्भ में प्लाज्मा रूप में विश्व का समस्त द्रव्य एकत्र था । वह सन्तुलन की स्थिति थी । धीरे-धीरे असन्तुलन का आरम्भ हुआ । प्लाज्मा के कणों तथा प्रतिकणों के विस्फोट हुए । इससे फोटोन कण निकले । फोटोन कणों यानी प्रकाश के कणों से परमाणु बने । समय बीतने पर परमाणु बादल बने, उन्हीं से क्रमशः विविध आकाशीय पिण्ड अस्तित्व में आये । यह परिकल्पना आल्फवेन तथा क्लाइन की है । इसका आधार कणों तथा प्रतिकणों की खोज है ।

कणों तथा प्रतिकणों के ही आधार पर द्रव्य और प्रतिद्रव्य की धारणा परिकल्पित की गई है । गोल्डहानर ने एक परिकल्पना प्रस्तुत की है, कि पुंजीभूत द्रव्य का महापिण्ड विखण्डित हो गया और विखण्डित होते ही दो विश्वों में बँट गया, एक द्रव्यमय विश्व, दूसरा प्रतिद्रव्यमय विश्व ।

गोल्डहानर व अन्य कुछ वैज्ञानिक एक सर्वथा भिन्न प्रति द्रव्यमय विश्व की परिकल्पना करते हैं तो कुछ वैज्ञानिकों के अनुसार इसी ज्ञेय विश्व में प्रतिद्रव्य वाली आकाश-गंगायें अस्तित्व में हैं, किन्तु हमें उनका ज्ञान अभी सम्भव नहीं, क्योंकि हम तो मात्र आकाशीय पिण्डों से उत्सर्जित विकिरण द्वारा ही उन पिण्डों के बारे में जान पाते हैं और द्रव्य तथा प्रतिद्रव्य का विकिरण एक जैसा ही होता है । इसलिए हम उसे अलग से पहचानने में असमर्थ हैं ।

विज्ञानी फेयन मां के अनुसार ब्रह्माण्डव्यापी 'प्रति पदार्थ के अति सूक्ष्म घटक, पॉजिट्रोन काल से पीछे की ओर भी चलते हैं और उनका प्रवाह भविष्य की ओर न होकर भूतकाल की ओर लौटता है । ठीक इसी प्रकार अन्तरिक्षवेत्ता फ्रेड हायल का कथन है, कि समय आमतौर पर जिस प्रकार वर्तमान से भविष्य की ओर चलता है, उसी प्रकार सिद्धान्ततः वह भूतकाल की ओर गतिशील हो सकता है ।

अन्तरिक्ष विज्ञान के शोधकर्त्ता इस तथ्य का समर्थन कर रहे हैं, कि अपने सौर-मण्डल में तो नहीं, पर अनन्त आकाश में ऐसे कितने ही ग्रह हैं, जो पदार्थ से नहीं प्रतिपदार्थ से बने हैं । वहाँ भरे हुए परमाणुओं को 'टेकयोन' नाम

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दिया गया है । उनकी चाल प्रकाश से भी तीव्र तथा गति भविष्य की ओर न होकर भूतकाल की ओर चल रही है ।

साधारणतया हम वर्तमान को भविष्य के साथ जोड़ते हैं । भविष्य की तैयारी के लिए वर्तमान को नियोजित करते हैं । कल्पनाएँ और योजनाएँ भविष्य निर्धारण के लिए जुटी रहती हैं । आकांक्षाओं की पूर्ति आगे चलकर होने की ही बात सोची जाती है और उसी पर विश्वास किया जाता है । अपनी परिस्थितियों में यही सम्भव भी है । जल की धारा जिस दिशा में बह रही हो, हवा जिस ओर उड़ रही हो, उसी में प्रगति की उपलब्धियों की आशा करना सहज स्वाभाविक है । भूतकाल से तो इतना ही लाभ लिया जाता है, कि उसके आधार पर संग्रह किए गए अनुभवों से लाभ उठाया जाय और भावी गतिविधियों के निर्धारण में उनका ध्यान रखा जाय । मीठी-कड़वी स्मृतियाँ सँजोये रह कर उनके दृश्य-चित्रों से अठखेलियाँ करते रहने के अतिरिक्त और कोई बड़ा प्रयोजन उनके द्वारा सिद्ध नहीं किया जा सकता ।

किन्तु तथ्य इससे भिन्न भी है । समय की गति पीछे की दिशा में लौट सकने की बात आज तो ठीक से समझ में भी नहीं आती और उस पर विश्वास करने को भी जी नहीं करता । इतने पर भी तथ्य तो अपने स्थान पर बने ही रहेंगे । अन्य प्राणी वर्तमान तक ही सीमित रहते हैं । उनकी भविष्य कल्पना आज का आहार पाने के सम्बन्ध में कुछ अनुमान भर लगा सकती है । वे हमारी तरह भविष्य कल्पना नहीं कर सकते । ठीक इसी प्रकार हम भी भूतकाल की कुछ अधिक प्रभावोत्पादक घटनाओं की स्मृति तक ही सीमित रहते हैं । यदि भविष्य कल्पना में भूतकाल के अनुभव अपना समुचित योगदान दे सकें, तो भविष्य निर्धारण सही भी होगा और सरल भी । किन्तु भूत के अनुभवों का लाभ तो हम यत्किंचित ही उठा पाते हैं ।

मोटर और रेलगाड़ी प्रायः आगे की ओर ही चलती हैं, पर उन्हें पीछे की दिशा में लौटाते हुए भी कोई विशेष कठिनाई नहीं होती । इसी प्रकार समय का आगे की तरह पीछे लौट सकना भी सम्भव हो सकता है । आमतौर से नदी में प्रवाह की दिशा में ही तैरा और बहा जाता है, किन्तु कुशल तैराक के लिए यह भी सम्भव है कि वह उल्टी दिशा में धारा को चीरता हुआ तैर सके । विज्ञान ने तथ्यों के आधार पर यह सिद्ध किया है, कि भूत भी सर्वथा नहीं हो जाता । वह मस्तिष्क स्मृति पटलों की तरह धुँधला भर होता है, अपना अस्तित्व बनाये ही रहता है । इसी प्रकार भूत गुजर भले ही गया है, पर उसका अस्तित्व इस ब्रह्माण्ड में अपनी सत्ता अक्षुण्ण रखे हुए है । राम और हनुमान के शरीर अब नहीं रहे, पर उनका व्यक्तित्व और कर्तृत्व अभी भी इस संसार में मौजूद है । यदि कोई मार्ग खोजा जा सके तो हम उल्टी दिशा में तैरने वाले तैराक की तरह उन महामानवों के सम्पर्क का, उसी प्रकार लाभ उठा सकते हैं, जैसा कि उनके सहचर उठाया करते हैं ।

देव भक्ति का मूल सर्वविदित है, पर यदि हम भूत भक्ति में निष्णात हो सकें । भूत विद्या सिद्ध कर सकें तो उसका लाभ भी कम नहीं है । कहते हैं, तुलसीदास को किसी भूत ने ही हनुमान और राम से उनका मिलना सम्भव बनाया है । वही भूत हमें कृष्ण के मुख से गीता सुनने का आनन्द दिला सकता है । तत्वदर्शी ऋषियों के आश्रमों में निवास करने से लेकर पृथ्वी की जन्म कथा देखने तक, हमारे लिए वह सब सम्भव हो सकेगा । जो भविष्य की सुखद कल्पनाओं से भी अधिक सुखद, उत्साहवर्धक एवं उपयोगी है ।

वैज्ञानिकों ने भूत की सत्ता और उपस्थिति को स्वीकार किया है । अब इतना ही शेष है, कि उसे वशवर्ती कैसे किया जाय ? साधना ने हमें भविष्य के निर्धारणकर्त्ता का श्रेय दिया है । विज्ञान के बढ़ते चरण हमें भूत के अनुग्रह से मिल सकने वाली सिद्धियों और उपलब्धियों से भी लाभान्वित कर सकेंगे, ऐसी सम्भावना की नींव पड़ चुकी, अब उसके मूर्तिमान होने पर ही विश्वास किया जा सकता है ।

बच गए हम-आप अन्यथा जून १९६८ में ही अन्तरिक्ष से दौड़ता हुआ आने वाला इकारस सारे पृथ्वी-वासियों को एक क्षण में ही कुचल कर रख देता । पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण से थोड़ा दूर रह जाने के कारण वह क्षुद्र ग्रह अन्तरिक्ष में ही कहीं विलीन हो गया । पर यदि वह पृथ्वी से टकरा जाता तो सैकड़ों हाइड्रोजन बमों की क्षमता वाली ऊर्जा पैदा करता । उससे पृथ्वी में भूचाल आ जाता, समुद्र उफन कर पहाड़ों तक को डुबोकर रख देता, हजारों उद्योगों के प्रश्रय देने वाले नगरों के अस्तित्व का भी पता न चलता । सन्देह है, कि तब तक मानव-प्राणी पृथ्वी पर शेष रहता भी अथवा उसका भी अन्त हो जाता ।

बत्तीस वर्ष पूर्व १९३७ में एक बार ऐसा ही तहलका मचा था । तब इकारस का ही एक दूसरा भाई हर्मेस अपनी आँखें लाल करके दौड़ा था । खगोलशास्त्रियों ने निश्चित आशंका व्यक्त की थी, कि वह भी पृथ्वी से टकरा सकता है, यदि तब वह घटना घटित हो गई होती, तो आज पृथ्वी की कुल आबादी एक और दस हजार के बीच होती । एक नये इतिहास की प्रस्तावना इन दिनों चल रही होती । पर बेचारा हर्मेस पृथ्वी से पाँच लाख मील पास तक ही आया और जब उसने देखा पृथ्वीवासी बहुत डर गए, तो उसे भी दया आ गई और उसने अपना मार्ग बदल दिया । पृथ्वीवासियों ने सन्तोष की साँस ली ।

जो वैज्ञानिक गणित के लम्बे-लम्बे सूत्र हल कर यह जान लेते हैं, कि अन्तरिक्ष यान को इस गति से अमुक दिशा की ओर इतने डिग्री कोण (बियरिंग) पर प्रक्षेपित किया जाय तो वह उतने समय में चन्द्र, शुक्र या मंगल पर पहुँच जायेगा ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

गणित के नियन्त्रण से वह स्थान (ग्रिड रिफरेन्स) तक जान लेते हैं, जहाँ चन्द्रमा को उतारा जा सकता है । वही वैज्ञानिक इकारस और हर्मेस जैसे ग्रहों की पृथ्वी से टकराने की भी भविष्यवाणी करते हैं । पर वह गलत हो जाती है तो लगता है कि विराट् जगत में गणित ही सब कुछ नहीं, कोई सर्वशक्तिमान सत्ता भी काम कर रही है, जो गणित को फेल करके अपनी इच्छानुसार वर्त सकती है । उसका इस प्रकार क्षुद्र ग्रह भेज कर लोगों को डराना तो उसका मनोविनोद मात्र लगता है । जिस प्रकार माता-पिता बच्चे को किसी असहाय स्थिति में छोड़ कर उसकी दीनता का आनन्द लिया करते हैं, उसी प्रकार भगवान भी अपने मनोविनोद और लोकवासियों को सीख देने का एक मिला-जुला कार्यक्रम इन क्षुद्र ग्रहों के द्वारा रचता रहता है ।

उसकी यह मनोरंजक दुनिया भी बड़ी विलक्षण है । १९३२ में भी एक नन्हा-सा ग्रह भटक कर पृथ्वी से ६५ लाख मील की दूरी तक चला आया था । तब तक खगोलशास्त्रियों को यह अनुमान था, कि इस तरह के क्षुद्र ग्रह अन्तरिक्ष में दो-चार ही होंगे । अनुमान था कि कोई ग्रह चटक गया होगा और उसके उपखण्ड ठीक उसी प्रकार अन्तरिक्ष में संतरण करने लगे होंगे, जिस प्रकार प्लूटो एक दिन नेपच्यून से अलग होकर एक स्वतन्त्र ग्रह ही बन गया । प्लूटो का व्यास तो पृथ्वी के व्यास से लगभग तीन गुना, पर अन्तरिक्ष के यह क्षुद्र ग्रह, जिन्हें वर्तमान वैज्ञानिक भाषा में 'अन्तरिक्ष कीट' कहा जाता है, बहुत ही छोटे आकार के होते हैं ।

प्रसिद्ध ब्रिटिश खगोलशास्त्री पैट्रिक मूर के अनुसार इन क्षुद्र ग्रहों में "सीरीस" ४८० मील व्यास, "पालास" ३०६ मील, २४१ मील व्यास का वेस्टा और १२१ मील व्यास का "जूनों" यह सबसे बड़े क्षुद्र ग्रह हैं । लगभग २०० ग्रह कुल २५ से ६० मील व्यास वाले और कोई १९० क्षुद्र ग्रह तो १० से २५ मील व्यास वाले ही होंगे । एक ऐसा ग्रह भी मिला है, जिसका व्यास कुल ३ मील का ही है । इसमें मनुष्यों को बसाया जाना सम्भव हो तो अधिक से अधिक ५० हजार आदमी ही उसमें समा सकेंगे । उनके लिए खेती या उद्योगों की समस्या तब भी बनी रहेगी कि उसके लिए स्थान कहाँ से लायें ? मंगल और वृहस्पति के बीच पाये जाने वाले इन समस्त ग्रहों को जोड़ा जा सके तो भी वह पृथ्वी से काफी छोटे रहेंगे । किन्तु उनकी स्थिति न केवल अन्तरिक्षयानों के लिए खतरनाक है, वरन् उनसे किसी भी ग्रह से टकरा जाने का भय हर घड़ी विद्यमान रहता है । यह आवश्यक नहीं कि वे केवल पृथ्वी से टकरायें तभी हमारी हानि हो । सच बात यह है, कि यदि इनमें से कोई भी क्षुद्र ग्रह किसी भी ग्रह से टक्कर खा जाय तो अन्तरिक्ष से लेकर पृथ्वी तक में प्रलयंकारी दृश्य उपस्थित हो सकते हैं । ऐसा लगता है, प्रलय की शुरूआत इन 'कीट-ग्रहों' से ही होती होगी ।

यह अनुमान निराधार नहीं है, क्योंकि इनकी कोई स्वतन्त्र कक्षाएँ नहीं हैं । यह तो सूर्य की कृपा है जो इन्हें अपने आकर्षण में बांधे हुए हैं । वेस्टा जो इनमें सबसे चमकीला है और जो पृथ्वी से लगभग २२ करोड़ मील दूर है । वह सूर्य की परिक्रमा करता है और ३.६ वर्ष में उसकी परिक्रमा पूरी कर लेता है । अपनी धुरी पर भी वह १० घण्टे ४५ मिनट की परिक्रमा पूरी कर लेता है । पर इनकी इस नियमितता का कोई दावा नहीं है । अधिकांश क्षुद्र ग्रह स्वच्छन्द शैलानी हैं, कहीं के कहीं घूमते रहते हैं । उदाहरणार्थ 'इकारस' ही सूर्य और बुध के भयंकर गर्मी वाले क्षेत्र में आनन्दपूर्वक घूमता रहता है । अभी कुछ समय पूर्व तो उसने यहाँ के लोगों की नींद ही हराम कर दी थी । ईरोस भी पृथ्वी के निकट तक आ जाता है और ६४४ नम्बर वाले हाइडालगों तो कभी-कभी शनि के ग्रह पथ को भी पार कर दूसरे क्षेत्र में निकल जाता है । अब ५० हजार के लगभग ऐसे छोटे-छोटे कीट-ग्रह ढूँढ़े गए हैं, जिनकी बनावट चाल-ढाल में बड़ी विलक्षणताएँ हैं ।

छोटे और सूर्य के समीप होने के कारण इनकी तमाम हाइड्रोजन गैसें और पानी आदि उड़ कर कहीं जाकर सूख गया होगा । इनका यदि कुछ उपयोग हो सकता है, तो इतना ही कि अन्तरिक्ष जाने वाले यात्री कभी इनसे स्टेशन का काम ले सकें । सम्भव है, इन्हें इन्हीं ग्रहों की नियमित कक्षाओं में प्रस्थापित करने का भी प्रयत्न किया जाय । अनुमान है, कि इनमें धातुएँ प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हो सकती हैं । इसलिए कुछ दिन में ही अन्तरिक्ष क्रेनें भेजी जा सकती हैं और उनसे इन्हें पकड़ कर पृथ्वी में लाने का प्रयत्न किया जा सकता है । पर ऐसा करने में राक्षसी शक्ति की आवश्यकता होगी । गुरुत्वाकर्षण के अभाव के कारण वहाँ जहाजों को सुविधापूर्वक उतारा जाना और वहाँ से ताजा उड़ानें भरना भी सम्भव हो सकता है । पर यह सब खिलवाड़ यदि गणितीय व्यवस्था को भी भंग कर देगा तो वर्तमान अन्तरिक्ष यात्रा सुविधाएँ बढ़ाने के स्थान पर विश्वविनाश का भी कारण बन सकती है ।

भगवान ने इन अनियमित क्षुद्र ग्रहों को लगता है, बेकार नहीं बनाया । उन्हें वह अपनी नाराजी प्रकट करने के अस्त्र के रूप में भी प्रयुक्त कर सकता है, यह कल्पना विवादास्पद नहीं है । सन् १९६२ के 'अष्ट ग्रह योग' से सम्भव है बचाव के कुछ साधन हों भगवान इतने बड़े अनिष्ट को अच्छा न समझ कर उसे टाल देता हो । पर सबक देने के लिए उसने कई बार पृथ्वी को ऐसे दण्ड दिए हैं, जो ग्रहयोग ही कहे जा सकते हैं । उदाहरणार्थ अभी कुछ समय पहले कनाडा के म्यूषेक प्रान्त में एक ऐसा ही क्षुद्र ग्रह पृथ्वी से आ टकराया था । उससे वहाँ ११५०० फुट लम्बा और १३०० फुट गहरा गड्ढा बन गया था । डॉ. फ्रड चव ने उसका विस्तृत अध्ययन करने के बाद बताया, यह उल्का लगभग १ मील व्यास की थी और जब वह पृथ्वी से टकराई थी तब

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उसकी गति (वेलासिटी) ३०००० से लेकर १५०००० मील प्रति घण्टा के लगभग रही होगी । उसकी यह प्रचण्ड भिड़न्त के कारण ही इतना बड़ा गड्ढा बन गया । यह तो खतरे का एक छोटा-सा संकेत मात्र था । ग्रीनलैण्ड में गिरा एक ही क्षुद्र ग्रह पिण्ड न्यूयार्क में अब भी प्रदर्शनार्थ रखा हुआ है ।

आस्ट्रेलिया में २० लाख मील का एक ऐसा क्षेत्र है जिसमें काँच के टुकड़े बिखरे पड़े हैं । इस क्षेत्र में कोई ज्वालामुखी नहीं है । फिर यह काँच कहाँ से आया उसके बारे में वैज्ञानिकों का अनुमान है कि किसी समय यहाँ कोई भयंकर उल्का टूट कर गिरी होगी, उसकी सतह पर जल नहीं रहा होगा । दूसरी धातुओं के साथ काँच बहुतायत से पाया जाता होगा । वह जब पृथ्वी से आ टकराया होगा तो उससे उस क्षेत्र में जीवन के लक्षण भी समाप्त हो गए होंगे । यह काँच के टुकड़े उसी से छितर गए होंगे । कई लोग यद्यपि उसे अन्तरिक्ष लोक की किसी बुद्धिमान जाति द्वारा प्रक्षेपित शस्त्र भी मानते हैं, पर अब यह सिद्ध हो गया है कि वह कोई उल्का ही थी ।

६१ वर्ष पूर्व ३० जून, १९०८ की प्रातःकाल साइबेरिया तुंगूस बनखण्ड (साइबेरिया) में एक उल्का पिण्ड प्रबल वेग से आ टकराया । २५ वर्गमील क्षेत्र में सर्वत्र आग की लपटें फैल गईं । ३० वर्गमील क्षेत्र के भीतर जो भी मनुष्य, जीव-जन्तु और वृक्ष थे, उनका नाम-निशान तक नहीं बचा था । अनुमान है कि वह एक हजार टन से भी बजनदार उल्का रही होगी । ३९ वर्ष बाद उसी घटना की पुनरावृत्ति तायगा क्षेत्र में हुई, १२ फरवरी को सबेरे के १० बजकर ४० मिनट हो रहे थे, तभी एक क्षुद्र ग्रह सूहोते आलिन की पहाड़ी पर आ टकराया । उस आघात के फलस्वरूप ढाई वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में एक भी वृक्ष खड़ा दिखाई नहीं देता था । ऐसी विनाश लीला देखने को मिली । यहाँ से प्राप्त उल्का खण्ड १७४५ किलोग्राम की थी । वैज्ञानिकों ने अनुमान लगाया कि वह २५०० मन से भी अधिक की उल्का थी । अधिकांश क्षुद्र ग्रह छोटे होते हैं, इसलिए वे पृथ्वी पर आते-आते या तो जलकर राख हो जाते हैं या फिर वह इस तरह टूट-फूट कर छितर जाते हैं, कि उन्हें बीन कर इकट्ठा किया जाना भी सम्भव नहीं होता । कुछ बड़े आकार के ही पिण्डों के अवशेष बच पाते हैं और उन्हीं से आकाश की स्थिति के बारे में कोई अनुमान करना सम्भव होता है । इस दृष्टि से ३६$\frac{१}{२}$ टन वजन की टूटी एक उल्का ग्रीनलैण्ड के अजायबघर में सुरक्षित है, उसका आयतन ११ × ७ × ५ फुट है । यह उल्काएँ अधिकांश वह क्षुद्र ग्रह ही होते हैं, जो अपनी कक्षा से विचलित हो-होकर समीपवर्ती ग्रह-नक्षत्रों को उत्पीड़ित किया करते हैं ।

अभी भी जब कभी आकाश में धूमकेतु तारे उदित होते हैं, तो मनुष्य-जाति किसी भयंकर विस्फोट की आशंका से भयभीत हो उठती है । पर हम यह नहीं जानते कि सूर्य के भण्डार में ऐसे क्षुद्र ग्रह जिन्हें "एस्टरॉयड" कहते हैं, असंख्य मात्रा में भरे हैं । वे भले ही छोटे-छोटी आँखों से दिखाई न देते हों, पर दूरबीनों ने उनकी उपस्थिति को असंदिग्ध सिद्ध कर दिया है और इस तरह एक प्रलय का खतरा हर क्षण हमारे मस्तिष्क पर मँडराया करता है, और मनुष्य है कि ऊपरी दुनिया की इस भयानक हलचल की बात सोचता तक नहीं, केवल अपने पार्थिव सुखों की मृगतृष्णा में ही भटकता रहता है । अनिमित ग्रह-कीटों की रचना भगवान ने लगता है, मनोविनोद में पृथ्वीवासियों को समय-समय पर डराने के लिए और यह समझाने के लिए की है कि हमारा दृष्टिकोण अभी क्षुद्र वासनाओं तक ही सीमित न रहे । बड़े ग्रह तो अपनी नियमितताओं और मर्यादाओं में बँधे हैं, इसलिए मनुष्य उनसे आँख मूँद सकता है, पर इन स्वेच्छाचारी विदूषकों से तो उसे डरना ही पड़ेगा । ये कभी भी हमला बोल सकते हैं और पृथ्वी को समूची नष्ट-भ्रष्ट कर सकते हैं ।

इन क्षुद्र ग्रहों की उत्पत्ति और जीवन काल के सम्बन्ध में वैज्ञानिकों में उतना ही मतभेद है, जितना मनुष्य की उत्पत्ति और जीवन काल के सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद है । कुछ का अनुमान है कि दो ग्रहों की झड़प में हुए टूट-फूट के कारण यह क्षुद्र ग्रह बने हैं, क्योंकि यह गोलाकार ही नहीं । पेंदेनुमा और पहाड़ों की तरह के ऊबड़-खाबड़ किस्म के भाग हैं । इनमें आकार-प्रकार की तरह आयु और कक्षा का भी कोई नियमित स्वरूप नहीं है । कुछ खगोल शास्त्रियों का मत है, कि मंगल और वृहस्पति के बीच कोई ग्रह रहा होगा, उसके विघटन से यह सब बने होंगे । उनमें पाये गए तत्वों से अनुमान लगाया गया है, कि अरबों वर्ष पूर्व भी आकाश में यह क्षुद्र ग्रह थे । अभी यह निश्चित नहीं हो सका कि उनकी संख्या केवल घटती है या बढ़ती भी है । पर वैज्ञानिक उस लालच में अवश्य हैं कि जिस तरह मंगल ने फोबोस और डेइमोस नामक दो क्षुद्र ग्रहों को, जो कुल १० या २० मील व्यास वाले ही होंगे अपनी आधीनता में रखकर शोभा बढ़ाई है । उसी प्रकार कुछ क्षुद्र ग्रहों को लाकर पृथ्वी में "पार्ट टाइम" सूर्य या चन्द्र प्रकाश की व्यवस्था की जाय । ऐसे अधीनस्थ ग्रह शनि के पास भी हैं, वृहस्पति के पास तो उनकी संख्या सात है ।

अन्तरिक्ष की विलक्षण दुनिया में इन अन्तरिक्ष-कीटों की विलक्षणता और भी रहस्यमय है । जब उनके अस्तित्व के बारे में कोई तुक नहीं बैठती तो यही मानना पड़ता है कि यह सब भगवान का मनोरंजन है और इस मनोरंजन में ही वह लोगों को दुष्कर्म न करने के लिए डराता भी रहता है, दण्ड भी देता रहता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दिन में दीखने वाले तारे

अब से कोई साढ़े तीन सौ वर्ष पूर्व सन् १६०७ में जर्मन विज्ञानी कैपलर ने दिन-दोपहर एक तारे को चमकते देखा था । यह उसका मस्तिष्कीय भ्रम तो नहीं है, यह जानने के लिए उन्होंने उसे सैकड़ों अन्य दर्शकों को दिखाया था । दिन में तारे दीखना या बोलचाल की भाषा में किसी बड़ी कठिनाई से सामना करने के अर्थ में प्रयुक्त होता है, पर वैसा प्रत्यक्ष हो भी सकता है । इस पर कदाचित ही विश्वास किया जा सके, पर ऐसा हुआ है और होता रहा है । सन् १५७८ में भी टाइको ब्राहे नामक एक विज्ञानी ने दिन में तारा निकला हुआ देखा था ।

इतिहास में यह क्रम पहले भी चलता रहा है । चीन की पुरानी पुस्तकों में लिखा है कि ४ जुलाई, १०५४ में एक चमकदार तारा उगा था, जिसकी रोशनी शुक्र ग्रह के समान थी और जो २३ दिनों तक रात में तो चमका ही, दिन में भी उसे देखा ही जाता रहा फिर उसकी ज्योति हल्की पड़ते-पड़ते दो वर्ष में पूर्णतया विलुप्त हो गई । सीरिया के ज्योतिष ग्रन्थों में उस प्रकार का एक तारा सन् १००६ में उदय हुआ था, ऐसा उल्लेख है । अरब देश के ज्योर्तिविदों ने सन् ८२७ में दिन में उगा हुआ तारा देखा था और उसका शुभ-अशुभ की दृष्टि से विचार किया था ।

ये दिन में निकलने वाले तारे क्या हैं ? खगोलवेत्ता इन्हें "सुपरनोवा" कहते हैं । यह नवोदित वर्ग के तारक हैं इनमें कुछ अपेक्षाकृत हल्की द्युति के होते हैं, उन्हें 'नोवा' मात्र कहा जाता है ।

अनन्त अन्तरिक्ष में विचरण करने वाले तारकों के आकार-प्रकार यों एक जैसे लगते हैं, पर बारीकी से देखने पर अपनी धरती पर रहने वाले प्राणियों की तरह उनकी भी आकृति प्रकृति अगणित प्रकार की होती है सामान्य वर्गीकरण की दृष्टि से इन्हें नीली सफेद रोशनी वाले—ह्वाइट डूबार्फस और लाल, पीले रंग के रैड डैमेस कहते हैं । कुछ तारक इन दोनों के बीच की मिली-जुली स्थिति के होते हैं । इस वर्गीकरण के अन्तर्गत ९७ प्रतिशत तारे आते हैं । इनके अतिरिक्त ३ प्रतिशत तारे ऐसे हैं, जिन्हें नवोदित कह सकते हैं । ये अपनी आकृति-प्रकृति, कक्षा और स्थिति की अस्थिरता से स्थिरता की ओर ले जा रहे हैं । अभी इनका जीवन क्रम ऐसे ही अस्त-व्यस्त है । वैज्ञानिक इनकी हरकतों को बारीकी से देखते रहते हैं, ताकि तारकों की जन्म शैशव एवं किशोरावस्था सम्बन्धी तथ्यों की जानकारी प्राप्त हो सके । इन्हीं नवोदित तारकों में से जो दुर्बल पतले और मध्यवर्ती हैं, वे नोवा कहलाते हैं और जिनका आकार एवं आवेश दैत्याकार है, उन्हें सुपर नोवा कहा जाता है । दिन में दीखने वाले तारे 'सुपर नोवा' ही होते हैं ।

इन 'नोवा' और 'सुपर नोवा' तारकों की आकृति और द्युति आश्चर्यजनक ढंग से घटती-बढ़ती है । उनके आकार दस प्रतिशत तक सिकुड़ते फैलते हैं और रोशनी का तो कहना ही क्या, वह कुछ समय के लिए सैकड़ों गुनी बढ़ जाती है ।

इस विशालता के साथ मनुष्य यदि अपने क्षेत्र, शरीर और अस्तित्व की कल्पना करे तो प्रतीत होगा कि पदार्थों की दृष्टि से इसके साधन नगण्य हैं और प्राणधारियों की सत्ता से उसकी चेतना क्षुद्रतम है । अपनी तुच्छता और विश्व ब्रह्माण्ड की विशालता की यदि तुलना की जाय, तो मनुष्य को अपना अस्तित्व विशाल समुद्र के आगे एक बूँद जल से भी कम दिखाई पड़ेगा । इस क्षुद्रता पर यदि विचार करें, तो किसी का भी गर्व गल सकता है और अहंकार की भ्रान्ति का सहज निराकरण हो सकता है ।

सीमित साधनों से असीम की खोज का दुस्साहस

खोज, खबर इसलिए भी उपयोगी है, कि 'एकाकीपन' नामक कोई तत्व अगले दिनों शेष नहीं रहने वाला है । इस विश्व का कण-कण एक-दूसरे से अत्यन्त सघनता और जटिलता के साथ जुड़ा हुआ है, उन्हें पृथक करने से किसी की सत्ता अक्षुण्ण नहीं रह सकती । सब एक-दूसरे के साथ इतनी मजबूत जंजीरों से बँधे हुए हैं, कि पृथकता की बात सोचना दूसरे अर्थों में मृत्यु को आमन्त्रण देना ही कहा जा सकता है ।

शरीर में कोशिकाओं की स्वतन्त्र सत्ता अवश्य है पर वह अपने आप में पूर्ण नहीं है । एक से दूसरे का पोषण होता है और दूसरे-तीसरे को बल मिलता है । हम सभी एक-दूसरे पर निर्भर हैं । यहाँ न कोई स्वतन्त्र है, न स्वावलम्बी । साधन सामूहिकता ही विभिन्न प्रकार के क्रियाकलापों, अस्तित्वों और तथ्यों की जननी है । मानवी प्रगति का यही रहस्य है । प्रकृति प्रदत्त समूह संरचना का उसने अधिक बुद्धिमत्तापूर्वक लाभ उठाकर समाज व्यवस्था बनाई और सहयोग के आधार पर परिवार निर्माण से लेकर शासन सत्ता तक के बहुमुखी घटक खड़े किए हैं । एक-दूसरे के लिए वे किस प्रकार उपयोगी सिद्ध होंगे । पारस्परिक सहयोग से किस प्रकार एक-दूसरे की सुख-सुविधा बढ़ायें ? इसी रीति-नीति के अभिवर्धन को अग्रगामी बनाने के लिए धर्म, अध्यात्म तत्व-ज्ञान की आधारशिला रखी गई । भौतिक विज्ञान की खोज और प्रगति ने प्रकृतिगत परमाणुओं की इसी रीति-नीति का परिचय दिया है । जड़ अथवा चेतन किसी भी पक्ष को देखें, इस विश्व के समस्त आधार परस्पर सम्बद्ध प्रतीत होते हैं और उनकी सार्थकता एक-दूसरे के साथ जुड़े हुए रहने से ही सिद्ध होती है । एकाकी इकाइयाँ तो इतनी नगण्य हैं, कि वे अपने अस्तित्व का न तो परिचय दे सकती हैं और न उसे सुरक्षित रख सकती हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यह सिद्धान्त ग्रह-नक्षत्रों पर भी लागू होता है । विश्व-ब्रह्माण्ड के समस्त ग्रह-नक्षत्र अपनी सूत्र संचालक आकाश-गंगाओं के साथ जुड़े हैं और आकाश-गंगायें महातत्व हिरण्य गर्भ की उँगलियों में बँधी हुई कठपुतलियाँ भर हैं । अगणित सौर-मण्डल भी एक-दूसरे का परिपोषण करते हुए अपना क्रिया-कलाप चला रहे हैं । सूर्य ही अपने ग्रहों को गुरुत्वाकर्षण में बांधे हो और उन्हें ताप, प्रकाश देता हो सो बात नहीं है, बदले में ग्रह परिवार भी अपने शासनाध्यक्ष सूर्य का विविध विधि आधारों से पोषण करता है । सौर-परिवार के ग्रह अपनी जगह से छिटक कर किसी अन्तरिक्ष में अपना कोई और पथ बना लें, तो फिर सूर्य का सन्तुलन भी बिगड़ जायेगा और वह आज की स्थिति में न रहकर किसी चित्र-विचित्र विभीषिका में उलझा हुआ दिखाई देगा ।

तारे और नक्षत्र में यह अन्तर है कि तारा अपनी रोशनी से चमकता है, जबकि नक्षत्रों में अपनी रोशनी नहीं होती वे तारकों की धूप के प्रकाश में आते हैं, तभी चमकते हैं । अपने सौर-मण्डल में केवल एक ही सूर्य है, शेष ९ नक्षत्र हैं । ब्रह्माण्ड की तुलना में अपने सूर्य का सीमा क्षेत्र बहुत छोटा है, पर पृथ्वी की तुलना में वह बहुत बड़ा है । नक्षत्रों के अपने उपग्रह होते हैं, जैसे पृथ्वी का उपग्रह चन्द्रमा । ग्रह स्थिति के १२ चन्द्रमा हैं ।

जिस प्रकार अपने सौर-मण्डल के नव-ग्रह सूर्य-तारक के साथ जुड़े हैं, उसी प्रकार ब्रह्माण्ड के अगणित तारक अपनी-अपनी नीहारिका के सदस्य हैं । ऐसी नीहारिकाएँ अरबों की संख्या में हैं । उनमें भीतर ही भीतर कुछ ऐसी हलचल चलती रहती है जिसके कारण कुछ समय बाद भयंकर विस्फोट होते हैं और अन्तर्भूत पदार्थ में से कुछ टुकड़े बाहर छिटक कर स्वतन्त्र तारक के रूप में विकसित होते हैं । इन्हीं नवोदित तारकों का नाम 'नोवा और सुपर नोवा' दिया गया है । जिस प्रकार बिल्ली हर साल कई-कई बच्चे देती है । इसी प्रकार से नीहारिकाएँ भी थोड़े-थोड़े दिनों बाद प्रसूता होती हैं और विस्फोट जैसी भयानक प्रसव पीड़ा के साथ नव-तारकों को जन्म देती हैं । बच्चों की सारी हरकतें बे-सिलसिले होती हैं, ऐसा ही कुछ ऊट-पटाँग यह नवोदित तारे भी करते रहते हैं । जब वे घिस-पिट कर ठीक हो जाते हैं । शैशव से आगे बढ़कर किशोरावस्था में प्रवेश करते हैं, तब उनकी व्यवस्था क्रमबद्ध हो जाती है । तब तक उनका फुलाव सिकुड़न, रुदन, उपद्रव, शयन सब कुछ अचम्भे जैसा ही होता है । छोटे बच्चे जैसे बार-बार टट्टी कर देते हैं, उसी प्रकार इन नवोदित तारकों की गरमा-गरम गैस भी फटती चिटखती रहती है और उससे भी ग्रह, उपग्रह, उल्का, धूमकेतु आदि न जाने क्या-क्या अन्तरिक्षीय फुलझड़ियों का सृजन-विसर्जन होता रहता है । इनके अतिरिक्त इन बच्चों में लड़-झगड़ और मारपीट भी कम नहीं होती । निश्चित व्यवस्था का कार्यक्षेत्र न बन पाने के कारण उनके टकराव भी होते रहते हैं और कभी-कभी तो यह टकराव ऐसे विचित्र होते हैं, कि दोनों पक्ष अपना अस्तित्व गँवा बैठें और फिर उनके ध्वंसावशेष से कुछ-कुछ और नवीन संरचना सामने आये ।

आकाश की नापतोल मीलों की संख्या में करना कौड़ियाँ बिछाकर मुहरों का हिसाब करते बैठने की तरह उपहासास्पद होगा । इस प्रकार तो इतनी बिन्दियाँ प्रयोग करनी पड़ेंगी कि ज्योतिर्विदों को बाध्य बिन्दियों से ही भरने पड़े ।

सूर्य की दूरी पृथ्वी से सवा नौ करोड़ मील है । इसके बाद का सबसे निकटवर्ती तारा २,५०,००,००,००,००,००० मील की दूरी पर है । अन्य तारे तो इससे भी लाखों गुनी दूरी पर है । इस दूरी का हिसाब रखने के लिए 'प्रकाश वर्ष' का नया पैमाना बनाया गया है । प्रकाश की किरणें एक सेकण्ड में एक लाख छियासी हजार मील की चाल से चलती हैं । इस गति से चलते हुए प्रकाश एक वर्ष में जितनी दूरी तय कर ले, उसे एक प्रकाश वर्ष कहा जायेगा । इस पैमाने के हिसाब से पृथ्वी से सूर्य की दूरी सिर्फ सवा आठ प्रकाश सेकण्ड रह जाती है । इसके आगे किसी और तारे की खोज में आगे बढ़ा जाय तो सबसे निकटवर्ती तारा सवा चार प्रकार वर्ष चल लेने के बाद ही मिलेगा ।

ब्रह्माण्ड का ९९ प्रतिशत भाग शून्य है । एक प्रतिशत भाग को ही ग्रह-नक्षत्र घेरे हुए हैं । अनुमान है कि आकाश में सूर्य जैसे १०० अरब तारकों का अस्तित्व है । यह तारे आकाश-गंगाओं से जुड़े हैं । वे उसी से निकले हैं और उसी से बँधे हैं । मुर्गी अण्डे देती है, उन्हें सेती है और जब तक बच्चे समर्थ नहीं हो जाते उन्हें अपने साथ ही लिए फिरती है । आकाश-गंगायें ऐसी ही मुर्गियाँ हैं, जिनके अण्डे-बच्चों की गणना करना पूरा सिर दर्द है । हमारी आकाश-गंगा एक लाख प्रकाश वर्ष लम्बी और २० हजार प्रकाश वर्ष मोटी है । सूर्य इसी मुर्गी का एक छोटा चूजा है, जो अपनी माता से ३३००० प्रकाश वर्ष दूर रहकर उसकी प्रदक्षिणा १७० मील प्रति सेकण्ड की गति से करता है । आकाश-गंगायें भी आकाश में करोड़ों हैं । वे आपस में टकरा न जायें या उनके अण्डे-बच्चे एक-दूसरे से उलझ न पड़ें, इसलिए उन्होंने अपने सैर-सपाटे के लिए काफी-काफी बड़ा क्षेत्र हथिया लिया है । प्रायः ये आकाश-गंगायें एक-दूसरे से २० लाख प्रकाश वर्ष दूर रहती हैं ।

अब तक खोजे गए तारकों में सबसे बड़ा 'काला तारा' है । यह अपने सूर्य से २० अरब गुना बड़ा है । यहाँ यह भूलना नहीं चाहिए, कि सूर्य अपनी पृथ्वी से १३ लाख गुना बड़ा है । उस हिसाब से पृथ्वी की तुलना में काला तारा कितना बड़ा होगा इसे कागज पर जोड़ लेना तो सरल है, पर उस विस्तार को मस्तिष्क में यथावत् बिठा सकना बहुत ही कठिन है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सृष्टि के आरम्भ में एक द्रव्य हिरण्य गर्भ था । उसी के विस्फोट से आकाश-गंगायें विनिर्मित हुईं । इस विस्फोट की तेजी कुछ तो धीमी हुई है, पर अभी भी उस छिटकाव की चाल बहुत तीव्र है । अनन्त आकाश में यों आकाश-गंगायें अपनी-अपनी दिशा में द्रुतगति से दौड़ती जा रहीं हैं । इस सन्दर्भ में अपनी आकाश-गंगा की चाल २४,३०० मील प्रति सेकण्ड नापी गई है ।

यह विश्व अनन्त है और उसके सम्बन्ध में जानकारियाँ प्राप्त करने का क्षेत्र भी असीम है । इस असीम और अनन्त की खोज के लिए बिना निराश हुए मनुष्य की ससीमता किस उत्साह के साथ अग्रगामी हो रही है, यह देखकर यह विश्वास होता है कि मानवी महत्ता अद्भुत है और यदि वह सही राह पर चले तो न केवल प्रकृति के रहस्यों का उद्घाटन करने में वरन् उन्हें करतलगत करने में भी समर्थ हो सकती है ।

अणु में विभु, लघु में महान् !

काया में विद्यमान उस विराट् का अनुमान करना हो तो इसके लिए स्थूल जगत पर एक दृष्टि आवश्यक है । इससे सहज ही अन्दाज लगाया जा सकता है कि यह ब्रह्माण्ड कितना विशाल है । हम जिस नीहारिका के अंग हैं, उसे देवयानी कहा गया है । प्रत्येक नीहारिका में लाखों करोड़ों सौर-मण्डल हैं । प्रत्येक के अनेक ग्रह, उपग्रह हैं । हम जिस सौर-मण्डल में रह रहे हैं । उसमें सूर्य को छोड़कर कुल नौ ग्रह हैं—बुध, शुक्र, पृथ्वी, मंगल, वृहस्पति, शनि, यूरेनस, नेपच्यून, प्लूटो । ये सभी ग्रहपति सूर्य की परिक्रमा करते हैं । इनमें से प्रत्येक के पुनः कई-कई उपग्रह हैं । पृथ्वी का एक, मंगल के दो, वृहस्पति के १६, शनि के १६, यूरेनस के ५, प्लूटो का १, नेपच्यून के २ । इस प्रकार अपने सौर-मण्डल में कुल ४३ चन्द्रमा हैं जो अपने-अपने ग्रहों के इर्द गिर्द परिभ्रमण करते हैं । सूर्य से इनकी दूरियाँ क्रमशः २९७,१०९०, १५२१, २४९१, ८९५७, १५०७०, ३००४०, ४५३७०, ७३७५० लाख कि.मी. है । अर्थात् मोटेतौर पर अपने सौर-मण्डल का विस्तार लगभग ७३७५० लाख वर्ग कि.मी. माना जा सकता है । यह तो सिर्फ अपने सौर-मण्डल की एक सामान्य-सी झलक-झाँकी हुई । इस प्रकार के अनेकानेक सौर परिवार देवयानी में हैं । देवयानी जैसी अरबों नीहारिकाओं के मिलने से आकाश-गंगा बनती है । ब्रह्माण्ड में ऐसी अगणित आकाश-गंगायें हैं । अपने सूर्य जैसे करीब ५०० करोड़ ताराओं के सौर-मण्डल तथा अकल्पनीय विस्तार वाले धूल एवं गैस वर्तुलों के मेघ मिलकर एक आकाश-गंगा बनाते हैं । ऐसी १० करोड़ से भी अधिक आकाश-गंगाओं व उनके मध्य के अनन्त आकाश को एक ब्रह्माण्ड कहा गया है ।

अपनी आकाश-गंगा ध्रुव द्वीप की १९ आकाश-गंगाओं में से एक है । इसमें लगभग एक खरब सूर्य हैं, जिसके पृथ्वी जैसे असंख्य ग्रह-उपग्रह हैं । इन ताराओं में से कई तो अपने सूर्य से अनेक गुना बड़े हैं । व्याध तारा सूर्य से विस्तार में २१ गुना अधिक है । ज्येष्ठा तो इससे भी कई गुना बड़ा है । उसका विस्तार इतना अधिक है, कि उसमें लगभग ७०० खरब पृथ्वी समा सकती हैं । अन्तरिक्ष में ऐसे द्वीपों की संख्या भी कोई कम नहीं है । माउण्ट पैलोमर में लगी २०० इंच व्यास वाली विशाल दूरबीन से अनन्त अन्तरिक्ष में अब तक कम से कम ऐसी एक अरब आकाश गंगायें खोजी गई हैं । मूर्धन्य अमेरिकी खगोलविद् ई. पी. हब्बल के अनुसार आकाश-गंगायें इससे भी कई गुना अधिक अस्तित्व में हो सकती हैं । वैज्ञानिकों का कहना है कि परिमित सामर्थ्य वाली दूरबीनों से अपरिमित आकाश का पर्यवेक्षण सम्भव नहीं हो सकता । उनका विश्वास है कि अब तक अन्तरिक्ष की जितनी ढूँढ़ खोज की जा चुकी है, वह विराट् का एक नगण्य-सा भाग है । इससे कई गुना अधिक अविज्ञात के गर्त में अभी भी पड़ा हुआ है, जिसका अन्वेषण प्रायः असम्भव है । इसी से विराट् ब्रह्माण्ड की विशालता का अनुमान लगता है । यदि इन आँखों से अपने ही सौर-मण्डल की हलचलें देख लें, तो हम चकराये बिना न रहेंगे, इससे भी करोड़ों गुने विराट् के दिग्दर्शन की तो कल्पना ही नहीं की जा सकती ।

आत्मवेत्ताओं का विचार इससे भिन्न है । उनका कहना है कि यह बात भले ही भौतिक जगत के लिए शत-प्रतिशत सही हो, किन्तु आत्मिकी के क्षेत्र में ऐसी कोई बात नहीं, जो असम्भव प्रतीत हो । वे काया को ब्रह्माण्ड का लघु संस्करण मानते हैं, और कहते हैं, कि ब्रह्माण्ड में जो-जो संरचनाएँ हैं वह सब कुछ इस काया में देखी जा सकती हैं, मगर वह सब इस शरीर में माइक्रोफिल्म की तरह हैं । जिस प्रकार माइक्रोफिल्म में अंकित चित्रों और अक्षरों को सीधे आँखों द्वारा देख सकना सम्भव नहीं, उसी तरह भीतर की सूक्ष्म सृष्टि को इन चर्म-चक्षुओं की सीमित सामर्थ्य देख-समझ नहीं पाती । इसके लिए ज्ञान-चक्षु, दिव्य-चक्षु की आवश्यकता पड़ती है, जिसे पराक्रमपूर्वक विकसित करना पड़ता है ।

ऐसी बात नहीं कि आत्मविदों का यह कथन मात्र कपोल-कल्पना और चर्चा भर है, वरन् इसमें सच्चाई भी है । हमारे धर्म ग्रन्थों में इसकी अनेक साक्षियाँ उपलब्ध हैं । रामचरित मानस में इस सन्दर्भ में दो आख्यायिकाएँ हैं ।

माँ कौशल्या अपने पुत्र राम को पय-पान कराने की इच्छा से शिशुग्रह में प्रवेश करती हैं । राम सोते हुए मिलते हैं, सो कौशल्या वापस लौट आती है, तो वही राम पाकशाला में बैठे अन्न ग्रहण करते दिखाई देते हैं । कौशल्या को भय, भ्रम और विस्मय होता है । वह फिर भागकर शिशुग्रह पहुँचती हैं, तो वहाँ राम पूर्ववत निद्रालीन दिखाई पड़ते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आश्चर्य से माता का सिर चकरा जाता है । उसी अवस्था में भगवान राम अपना विराट् रूप दिखाते हैं—अगणित ब्रह्माण्ड, उनके अपने लोकपाल, दिक्पाल, खरबों नक्षत्र, अरबों लोक, सर्वत्र जीवन-पालन प्रगति, सर्वत्र मरण और सर्वत्र प्रलय के विनाशकारी दृश्य । कौशल्या परेशान हो उठती हैं । राम अपनी माया समेट लेते हैं । जननी को पिण्ड में ब्रह्माण्ड की उपस्थिति और विराट् ईश्वरीय सत्ता का बोध हो जाता है फिर वे सुस्थिर चित्त अपने कर्तव्यपालन में निरत हो जाती हैं ।

दूसरे प्रसंग में काकभुशुण्डि को इसका दिव्य-दर्शन हुआ । किसी ने उनको बताया कि राम ईश्वरीय-सत्ता के प्रतीक-प्रतिनिधि हैं, आपको उनके दर्शन करना चाहिए । इसी इच्छा से वे अयोध्या पहुँचे । मुँडेर पर बैठे-बैठे वे राम को आँगन में सामान्य बालकों जैसी क्रीड़ा करते, खाते-पीते, हँसते-बोलते देखकर भ्रमित हो जाते हैं । सोचते हैं—यह कैसा अवतार, जो साधारण बालकों जैसी अठखेलियाँ करे ? राम उनकी मनःस्थिति भाँप लेते हैं और मुँह फाड़कर उन्हें उदरस्थ कर लेते हैं । उनके उदर में काकभुशुण्डि जी को विराट् विश्व के दर्शन होते हैं । उस अनुभूति का वर्णन वे बड़े ही सुन्दर ढंग से गरुड़ जी से करते हैं—"हे गरुड़ जी ! मैंने राम के मुँह में अनेक ब्रह्माण्ड देखे, अनेक लोक, अनेक रचनाएँ, अनेक शक्तियाँ, देवी-देवता, कोटि-कोटि तारागण, सूर्य-चन्द्र, अगणित भूखण्ड, सागर, सर, वन और तरह-तरह की सृष्टियाँ जो कुछ इस पृथ्वी पर नहीं है, वह सब भी देखा, जिसका वर्णन करना भी कठिन है । एक-एक ब्रह्माण्ड में मैंने सौ-सौ वर्ष बिताये । ऐसे अनेक ब्रह्माण्डों में मैं कुल दो घड़ी में घूम आया । उस विराट् को देखकर मैं अत्यन्त भ्रमित हो उठा हूँ ।"

श्रीकृष्ण ने ऐसा ही विराट् स्वरूप अपनी माँ यशोदा तथा सखा अर्जुन को भी दिखाया था और लोगों को बता दिया था कि यदि व्यक्ति चाहे तो इस व्यष्टि सत्ता में ही उसे समष्टि के दर्शन हो सकते हैं, पर इसके लिए दिव्य दृष्टि चाहिए । हमारी स्थूल आँखें उतनी समर्थ नहीं, कि उस विराट् को देख सकें । इसीलिए भगवान ने अर्जुन को यह कहते हुए दिव्य चक्षु प्रदान किया कि—

न तु मां शक्यसे द्रष्टुमनेनैव स्वचक्षुषा ।
दिव्यं ददामि ते चक्षुः पश्यम योगमैश्वरम् ॥

—गीता ११/८

अर्थात्—हे अर्जुन ! तू मेरे विराट् स्वरूप को इन सामान्य आँखों से नहीं देख सकता । इसलिए मैं तुझे दिव्य चक्षु प्रदान करता हूँ । उससे तू मेरे विस्तार प्रभाव और योग शक्ति को देख । सचमुच इसके बाद अर्जुन ने जो कुछ भी देखा उससे हतप्रभ रह गए । एक अन्य अवसर पर महाभारत से पूर्व जब दुर्योधन श्रीकृष्ण को बाँधने चले थे, तब भी उन्होंने अपने विराट् स्वरूप का प्रदर्शन किया था, जिसे देख वह चकरा गए थे ।

इन आख्यायिकाओं में जिस तथ्य की ओर संकेत किया गया है, वह है ब्रह्माण्ड की विराट् संरचना । इतनी बड़ी रचना को और उसके नियन्ता को स्थूल आँखों से देख सकना सम्भव नहीं । इसलिए ज्ञान की परिधि को विराट् तक चौड़ा तो किया जाय, पर अन्ततः उस मूल चेतना को मानवीय अस्तित्व के रूप में स्वीकारा जाय । विराट् को देख सकना सम्भव नहीं, पर अणु को, आत्मा को देख सकना शक्य है । इस आवश्यकता को पूरा कर लिया जाय, तो अणु में ही विराट् के दर्शन और अनुभूति सम्भव है । इतना ही नहीं, सांसारिक जीवन में कर्तव्य-कर्म से बँधे रह कर भी उस मूल सत्ता को प्राप्त करने की आकांक्षा को पूरा किया जा सकता है, पर इसके लिए व्यक्तित्व में उत्कृष्टता और कर्तत्व में परमार्थ परायणता का एक आवश्यक अनुबन्ध पूरा करना पड़ता है । यदि यह सम्भव हो सके, स्वयं को सामान्य स्तर से कुछ ऊँचा उठाकर भावनाओं को उच्चस्तरीय बनाया जा सके तो इसी काय-पिण्ड में विशाल ब्रह्माण्ड की अनुभूति की जा सकती है । मानव जीवन का लक्ष्य और उद्देश्य भी यही है ।

प्रकृति के रहस्य अपने अन्तराल में खोजें

हम प्रकृति के असीम समुद्र में एक छोटी मछली की तरह रह रहे हैं । हम उसके मध्यान्तर में रहने वाले प्राणी हैं और वह वायुमण्डल की तरह हमारे चारों ओर घिरी है । इतना होते हुए भी हम उसके रहस्यों को अत्यन्त स्वल्प मात्रा में ही जान पाये हैं । मछली जन्म से लेकर मरणपर्यन्त जिस जलाशय में रहती है, उसके सम्बन्ध में वह नगण्य जानकारी से अवगत होती है । उस जल का निर्माण किन गैसों से हुआ है ? उसमें क्या रासायनिक पदार्थ घुले हैं ? बेचारी को इतनी तक जानकारी नहीं होती ।

प्रकृति के अनेकों रहस्य हमने जान लिए हैं और उस आधार पर कितने ही, वैज्ञानिकों ने आविष्कार करके अपने को सुविज्ञ कहलाने संसार के सुविधा साधन बढ़ाने एवं दर्शकों को चमत्कृत करने में सफलता पायी है । इतने पर भी जो जानना शेष है, वह असीम है उसे समझ पाने में सीमाबद्ध मानव इन्द्रिय शक्ति एवं बुद्धि की दौड़-धूप की मर्यादा में रहकर ही जो जान सकता था, जान पाया है या जान सकेगा । इसके अतिरिक्त भी जो असीम जानने योग्य बच रहेगा उन्हें पूरी तरह समझ पाना कभी सम्भव हो सकेगा, इसकी आशा नहीं के बराबर है ।

हम धरातल के बारे में बहुत कुछ जानते हैं क्योंकि उसी पर रहते हैं और वायुयानों से उसकी स्थिति को हस्तामलकवत देख पाते हैं, किन्तु इस पर भी उस पर निर्वाह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

करने वाले अगणित कृमि कीटक जैसे प्राणियों की अतीन्द्रिय क्षमता के सम्बन्ध में बहुत ही कम जान सके हैं । जीवन के संचालन में सहायक बैक्टीरिया और मरण के अग्रदूत वायरसों की विचित्रता और बहुलता के सम्बन्ध में अत्यल्प जान पाते हैं ।

दाम्पत्य जीवन का निर्वाह करने का आदिम काल से अभ्यास है । प्रजनन के सन्दर्भ में भी बहुत कुछ जाना जा सका है, किन्तु यह सफलता अभी भी हस्तगत नहीं हुई है कि पुत्र या पुत्री में से जिसे चाहे उसे जन्म दे सकें ।

ऊपर आसमान में दृष्टि उठाकर देखने से बादलों के उठाव तो दीखते हैं पर यह नहीं कहा जा सकता कि वे कब, किस स्थान पर कितनी मात्रा में जल बरसायेंगे । आँधी-तूफान कब आ धमकें, और कितनी उखाड़-पछाड़ करने के बाद कहाँ जाकर बुलबुले की तरह समाप्त हो जाय, इसे कौन जानता है ? किस क्षेत्र में किस महामारी का कितना प्रकोप होगा और वह चिकित्सा प्रयोजन को झुठलाकर कितनों को काल का ग्रास बना लेगा, इस तक की तो समग्र जानकारी मिल नहीं पायी है । निश्चित और सफल चिकित्सा की बात तो और भी आगे की है ।

समुद्र की गहराइयों में कहाँ, क्या भरा है ? इसके सम्बन्ध में जो ज्ञान उपलब्ध हो सका है, वह नगण्य है । अन्तरिक्षों की शून्यता में क्या पदार्थ, कितनी मात्रा में, कहाँ भरा रहता है ? इसकी जानकारी कुछेक मील तक ही विदित हो सकी है । अनन्त आकाश में बिखरे हुए ग्रह तारकों और नीहारिकाओं की वास्तविक स्थिति क्या है ? इस सम्बन्ध में जो कुछ कहा जाता है, वह सब अनुमान के आधार पर है । कौन जाने उन कल्पनाओं में कितनी सच्चाई है ?

अपने ब्रह्माण्ड के ठीक पीछे उतना ही सशक्त और समग्र एक प्रति विश्व चलता है । एण्टी यूनिवर्स एन्टी मैटर, एन्टी एटम आदि की अस्तित्व मान्यता प्राप्त कर सकता है, किन्तु काया के साथ लगी रहने वाली इस छाया के सम्बन्ध में हम कितना कम जानते हैं । यदि उसे जान सकें तो इन लोक-लोकान्तरों में, वहाँ के वातावरण में आमूल-चूल स्तर का परिवर्तन हो सकता है ।

इससे भी अधिक स्पष्ट अन्तर्जगत है । जिसमें मृतात्माएँ निवास करतीं और मनुष्य के साथ भले-बुरे व्यवहार करती रहती हैं । उनके क्रिया-कलापों के परिचय हमें एक निश्चित वास्तविकता की तरह मिलते रहते हैं । इतने पर भी यह नहीं कहा जा सकता कि वे किस स्थिति में कहाँ रहते और किस प्रकार निर्वाह करते हैं ? विभिन्न धर्म सम्प्रदायों में यहाँ तक कि परामनोविज्ञानियों ने भी उनकी सत्ता के प्रमाण परिचय उपलब्ध कर लेने पर भी, उनके निर्वाह एवं कार्यक्षेत्र के बारे में कोई निश्चित बात नहीं कही है । मरणोत्तर जीवन अभी भी उतना ही रहस्यमय बना हुआ है, जितना कि पहले कभी था । बुद्धिवाद और प्रत्यक्षवाद ने यों उन मान्यताओं को बहुत कुछ सीमाबद्ध कर दिया है, फिर भी अभी तक ऐसे प्रमाण मिलते रहते हैं जो सर ओलियर लॉज जैसे वैज्ञानियों को अध्यात्मवादी बना देते हैं ।

वर्षा में यों पानी ही बरसता है । पर घटनाएँ साक्षी हैं कि उनमें कई बार शक्कर घुली हुई पायी गई है और ऐसी लालिमा वर्षी है जो कपड़ों और जमीन को रंग दे । आसमान से जीवित मछलियों, मेंढ़कों जैसे जीवित जन्तुओं का बरसना तो और भी अधिक आश्चर्यजनक है ।

कई रेगिस्तान में अभी भी संगीत सुनाते रेत के कण पाये जाते हैं । खारे समुद्रों में मीठे पानी के फव्वारे उछलते पाये गए हैं । रबड़ की तरह मोड़े-मरोड़े जाने वाले और पानी पर तैरने वाले पत्थर यह बताते हैं, कि प्रकृति के विभिन्न पक्षों के सन्दर्भ में जो निष्कर्ष निकाले गए हैं, वे आंशिक रूप से ही सही हैं ।

ब्रह्माण्ड में अनेक ब्लैक होलों के अस्तित्व विद्यमान हैं, जिनके बारे में किन्हीं साधनों से निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता है । पर वे अन्तरिक्ष में अवस्थित इतने भयंकर भँवर हैं जो अपनी चपेट में आने वाले धरती आकाश के अनेक भारी भरकम घटकों को उदरस्थ कर जाते हैं और यह पता नहीं चलता कि उनका हड़पा हुआ पदार्थ किस लोक को चला गया । कहा इतना भर जाता है कि मरे हुए तारों के प्रेत पिशाच हैं ।

मनुष्य यों एक सीधा सादा-सा प्राणी है पर उसका मस्तिष्कीय रहस्यवाद कभी-कभी इतना विलक्षण पाया जाता है कि आश्चर्यचकित रह जाना पड़ता है । मोटे ग्रन्थों को स्मृति पटल पर सुस्थिर कर लेना । छोटी आयु में ही संगीत आदि की विलक्षण प्रतिभाओं का परिचय देना चकित कर देता है, कि बिना किसी क्रमबद्ध प्रशिक्षण के यह विभूतियाँ किस प्रकार जाग पड़ीं ।

अतीन्द्रिय क्षमताओं के क्षेत्र में कई मनुष्य ऐसे पाये गए हैं, कि जो दूरदर्शन, दूर-श्रवण, भविष्य कथन, विचार सम्प्रेषण आदि विशेषताओं से सम्पन्न होते हैं और अविज्ञात बातों को बिना किन्हीं सहायता के इस प्रकार बताते हैं, मानो उन्होंने वह सब प्रत्यक्ष देखा हो । उड़न तश्तरियाँ अभी भी रहस्य बनी हुई हैं । उन्हें बुद्धि, भ्रम और प्रकृति घटकों की विलक्षणता कहकर समाधान किया गया है, फिर भी उनके द्वारा छोड़े अवशेषों या साथ ले जाय गए पदार्थों की यथार्थता का पता लगाने पर इन समाधानकर्त्ताओं को स्वयं असमंजस होता है, कि लोकान्तरों से आवागमन का यह कोई माध्यम ही तो नहीं है ।

रेगिस्तानों में जहाँ पानी का कोई आधार नहीं, उगने वाले 'कैक्टस' पौधों को हरे-भरे देखकर यह आश्चर्य होता है कि इन परिस्थितियों में वे जीवन जल किस प्रकार और कहाँ से प्राप्त करते हैं ?

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अपनी धरती तोप के गोले से भी अधिक तेजी से सूर्य की परिक्रमा करती है, अपनी धुरी पर घूमती है, लहराती है । इतने पर भी उस पर रहने वाले हम मनुष्यों को उससे तनिक भी प्रभावित नहीं होना पड़ता, यह कैसे आश्चर्य की बात है । सभी ग्रह अधर में लटके हुए हैं और द्रुतगति से दौड़ते हैं फिर भी नीचे नहीं टपक पड़ते । यह कैसी मजबूत पारस्परिक आकर्षण की मजबूत रस्सियाँ उन्हें आपस में बांधे हुए हैं यह कैसे आश्चर्य की बात है ?

कई बार मनुष्यों के शरीर से झटका देने वाली बिजली या अग्निकाण्ड खड़ा कर देने वाली ज्वाला फूट पड़ती देखी गई है । ६० प्रतिशत पानी वाले इस शरीर का ज्वालामुखी की तरह फूट पड़ना कितना अचरज भरा है ।

मनुष्य ने अनेकों कल-कारखाने, पुल, बाँध आदि बनाये हैं । पर वह अपने जाति वालों को एक धर्म, एक संस्कृति, एक कानून और एक देश बनाकर रहने के लिए सहमत न कर सका । उसके बुद्धि वैभव को इतना भी न कर पाने पर किस आधार पर सराहा जाय । अपराधी आतंकवादियों को काबू में रखना और युद्धों की अपेक्षा पंच फैसले से जो समस्याओं का हल न निकाल सकी । सर्वमान्य समता का सिद्धान्त मात्र पुस्तकीय प्रतिपादन बनकर रह रहा है, यह कैसी बिडम्बना है । करोड़ों को गरीबी, बीमारी, अशिक्षा और पिछड़ेपन की चक्की में पिसते रहने पर भी सभ्यता विकास के दावे कितने थोथे हैं ? इसका अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है, कि मनुष्य की बुद्धिमत्ता में कोई सन्देह न होते हुए भी उसके हाथ नगण्य जितना ही लगा है ।

न्यूटन के आविष्कारों की जिस मण्डली में भूरि-भूरि प्रशंसा हो रही थी । उनमें वक्ताओं की सदाशयता के प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हुए भी उसने सच्चे मन से इस वास्तविकता को स्वीकारा था, कि वह एक छोटे बच्चे की तरह समुद्र के किनारे चक्कर लगाकर तुच्छ मूल्य के सीप, घोंघे ही ढूँढ़ पाया है । जो जानना बाकी है, वह इतना असीम है कि उसके ढाँचे की कल्पना तक नहीं की जा सकती ।

सही बात भी यही है । हमारी सत्ता कितनी विलक्षण क्यों न हो पर वह शरीर में आबद्ध और मानसिक दृष्टि से प्रतिबन्धित है । हम अपने मस्तिष्क का सात प्रतिशत भाग काम में ला पाते हैं और ६३ प्रतिशत ऐसे ही प्रसुप्त एवं अविज्ञात स्थिति में पड़ा रहता है । शरीर संरचना और उसके अनुरूप तालमेल बिठाते हुए जीवनचर्या बनाने तक में हम समर्थ नहीं हो सके अन्यथा उसे सौ वर्ष ही नहीं, सैकड़ों वर्षों तक तपस्वियों की तरह जीया जा सकता था ।

विज्ञान के भौतिक पक्ष पर ही यत्किंचित अन्वेषण करने और थोड़े से चमत्कार प्रस्तुत करने में ही हमने सफलता पायी है, सो भी आधी-अधूरी । क्योंकि ब्रह्म और प्रकृति के सभी कार्य सुव्यवस्थित और सुनियोजित रीति से चल रहे हैं । जब हम इसमें देखते हैं तो उस अचम्भे को अपने ज्ञान की अपूर्णता न कहकर प्रकृति के अपवाद कहकर अपने को समग्र सिद्ध करने का प्रयत्न करते हैं ।

भौतिक बुद्धि और भौतिक उपकरणों की सहायता से किए गए अन्वेषण और निकाले गए सिद्धान्त सदा अपूर्ण और विवादास्पद ही बने रहेंगे । यथार्थता तक पहुँचाने के लिए हमें अपने ब्राह्मी चेतना जगानी होगी और सृष्टा के साथ योग द्वारा एकात्मता स्थापित करने के आधार पर यह जानना होगा कि प्रकृति के रहस्यों में से जो अभी अविज्ञात बने हुए हैं, उनका तात्विक कारण क्या है ?

जो खिलौने हाथ लग गए हैं, उनसे मन बहलाने या किसी दूसरे के सिर में दे मारते हुए उसे लहू-लुहान कर देने की विद्या सरल है । समुद्र की ऊपरी सतह पर तो नाव में बैठकर या हवा भरी रबड़ की कुप्पी पेट में बाँधकर भी तैरा जा सकता है पर लम्बी साँस ले सकने की क्षमता अर्जित करके पनडुब्बी की तरह समुद्र की तली में मोती ढूँढ़ निकालना कितना कठिन है, इसे उस प्रकरण में पुरुषार्थ करने के अभ्यस्त लोग ही जान सकते हैं ।

यदि हमारी अभिरुचि अविज्ञात को विज्ञात बना सकने की बुद्धिमत्ता अपनाने में हो तो उसका सही तरीका एक ही है, कि अपने को अन्तर्मुखी बनाने का अभ्यास डालें कि अपने भीतर कितना तिलस्म भरा हुआ है । योगी तपस्वी इन्हीं अनुभूतियों को अर्जित करने और रहस्यमय अदृश्य क्षेत्र में प्रवेश करने का प्रयत्न करते हैं । चक्रों, कोशों, ग्रन्थियों, उपात्यिकाओं में समाहित रहस्य ऐसे हैं, जिनकी क्षमता और स्थिति समझ लेने पर मनुष्य बाह्य जगत में प्रकृति के रहस्यों को जानने में समर्थ हो सकता है ।

चेतना का केन्द्र मस्तिष्क और सम्वेदना का स्रोत हृदय है । यदि इन दोनों चेतना केन्द्र के साथ अपनी अनुभूतियों का तादात्म्य किया जा सकता है, तो ब्राह्मी चेतना के साथ ही अपना सम्बन्ध जुड़ सकता है । सच्चे सम्बन्धी परस्पर अपने रहस्यों को भी साक्षी पर प्रकट कर देते हैं । प्रकृति की अधिष्ठात्री मातृ शक्ति और चेतना के निकटवर्ती केन्द्र परब्रह्म के साथ सम्बन्ध जोड़ा जा सके, तो समझना चाहिए कि सभी रहस्यों के उद्घाटन की चाबी हस्तगत हो गई ।

मनुष्य की अपनी आवश्यकता, मर्यादा और क्रियाशीलता की परिधि सीमित है । उतने भर से ही कार्यरत रहा जाय तो उतना समग्र रूप से उपलब्ध हो सकता है जो सरल जीवन को सुखपूर्वक जीने के लिए आवश्यक है । इतना हस्तगत हो सके तो मनुष्य हँसती-हँसाती, उठती-उठाती जिन्दगी जी सकता है ।

कदाचित किसी को रहस्योद्घाटन में ही रुचि हो और प्रकृति के अविज्ञात आधारों को समझने की उत्कण्ठा हो, तो उसके लिए आवश्यक है कि आत्म-संरचना और उससे सम्बन्धित रहस्यों को जानने का प्रयत्न करें । जैसा कि हमारे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

पूर्ववर्ती ऋषि तपस्वी करते रहे हैं । इस आधार पर विज्ञान के वे रहस्य भी हस्तगत हो सकते हैं जो भौतिक उपकरणों से, बौद्धिक उछल-कूद से एक सीमा तक ही सम्भव है । रहस्यों की चाबी तो उस प्रकृति पुरुष के हाथ में है, जिसके साथ सम्बन्ध जोड़ने में हम प्रायः कतराते ही रहते हैं ।

१५ करोड़ मील लम्बी पूँछ वाले ब्रह्मकीट : धूमकेतु

प्रकाश की लम्बी रेखा, बुहारी की तरह पूँछ वाला एक तारा कभी आकाश में दिखाई दे जाता है तो भारतवर्ष ही नहीं, सारे विश्व में बेचैनी फैल जाती है । यह तारा जिसे धूमकेतु या पुच्छल तारा कहते हैं, अशुभ और अनिष्ट का सूचक समझा जाता है । जब भी यह निकलता है, लोग युद्ध, अकाल, महामारी जैसी आशंकाओं से भयभीत हो उठते हैं । पुच्छल तारा मानव जाति के लिए व्याधि और विनाश का ही प्रतीक माना जाता है ।

इस विश्वास के पीछे कितना कुछ सत्य है, यह तो बहुत दिन बाद पता चलेगा, किन्तु यह तारा सृष्टि का एक विलक्षण आश्चर्य अवश्य है । कहते हैं, प्राचीनकाल में योगियों और सिद्ध महात्माओं के शरीर से 'ब्रह्मकीट' नामक एक कीड़ा निकला करता था, वह चाहे जहाँ जाकर किसी को भी नष्ट कर दिया करता था । महासती गौरी एक बार अपने पिता दक्ष प्रजापति के घर यज्ञ देखने गई थीं । वहाँ उन्होंने अपने पति शंकर का अपमान देखा था, यज्ञकुण्ड में ही जल मरी थीं । यह समाचार जब शंकर भगवान को मिला तो उन्होंने भी ऐसे ही 'वीरभद्र' नामक एक जन्तु अपनी जटाओं से निकालकर भेजा था, जिसने दक्ष का यज्ञ विध्वंश कर उसका सिर काट लिया था ।

सम्भव है तब मानसिक शक्तियों के संहारक उपयोग का योगियों को ज्ञान रहा हो और इस तरह का कोई ज्योति-पुरुष उत्पन्न करना सम्भव रहा हो, जिस तरह यह पुच्छल तारा या धूमकेतु सूर्य भगवान के शरीर से अचानक प्रकट होता है और पृथ्वी पर रहने वाले लोगों को डरा-धमका देता है ।

यह पुच्छल तारा साधारण मनुष्यों के लिए ही भय और आश्चर्य का विषय नहीं रहा, वैज्ञानिकों ने भी उसे बड़े कौतूहल की दृष्टि से देखा है । अनेक वैज्ञानिक उसकी विशद जानकारी करने के लिए प्रयत्नशील रहे हैं । प्रसिद्ध खगोलविद् न्यूटन, जिनका मस्तिष्क पिण्डीय जगत में सदैव भ्रमण किया करता था, गुरुत्वाकर्षण जैसा सिद्धान्त उन्होंने ही बनाया था, उन्होंने ही धूमकेतुओं के अनेक आश्चर्यों की खोज की । टाइकोब्राहे और डॉ. हेली ने धूमकेतु ताराओं का विशेष अध्ययन किया और कहा—प्रकृति के अनेक रहस्यपूर्ण करतबों में से एक यह धूमकेतु भी है । इसकी आकृति, प्रकृति, गुण, कर्म और निवास-विश्राम का उसी प्रकार कुछ ठिकाना नहीं, जिस प्रकार आज के भारतीय साधुओं का । चाहे जब, चाहे जहाँ निकल पड़ते हैं और निरोद्देश्य इधर-उधर लोगों से टकराते रहते हैं ।

कभी-कभी दिखाई देने वाले इन धूमकेतुओं की संख्या कम नहीं । हजारों की संख्या में है तथा सूर्य के आस-पास और सौर-मण्डल के बाहर भी चक्कर काटते रहते हैं । हमें जो धूमकेतु दिखाई देते हैं, वह सब शंकर की जटाओं से एकाएक प्रादुर्भूत पुत्रों की तरह सूर्य की सन्तानें हैं । वह किस तरह पैदा हो जाते हैं, इस सम्बन्ध में कोई निश्चित जानकारी नहीं है, पर अब तक सूर्य के ऐसे ३२ प्रकाश पुत्रों का पता चला है । आज्ञाकारी पुत्र की तरह यह भी सूर्य की ही परिक्रमा लम्बे वृत्त में किया करते हैं । हेली, फाये, ओल्बेरस, ब्रोरसेन, इन्के, टूटल आदि धूमकेतु ३ वर्ष से लेकर १०० वर्ष की अवधि में सूर्य की परिक्रमा कर लेते हैं । कुछ धूमकेतु १५० वर्ष तक में सूर्य की परिक्रमा पूरी करते हैं । जब कभी ये पृथ्वी के वायुमण्डल में आ जाते हैं, हमें दिखाई देने लगते हैं । हैले, धूमकेतु तो हर ७६ वर्ष बाद आता रहता है । अनुमान है कि १७ वर्ष बाद १९८६ में फिर उदित होगा । इससे पहले वह १९१० में आया था । द्वितीय विश्व युद्ध की तैयारियाँ तभी हुई थीं । इसी से लोग अनुमान लगाते हैं, कि अगले दिनों तृतीय विश्व युद्ध की तैयारियाँ हों तो कुछ आश्चर्य नहीं । सम्भव है तब मानव जाति पर बड़े संकट आये, पर यदि ऐसा हुआ ही तो आगे का संसार एक नये अध्याय से ही प्रारम्भ होगा, जिसमें सब लोग प्रेम, मैत्री, सहयोग और सहानुभूति का व्यवहार करते हुए सुखी रहेंगे । अनैतिकता और अनाचार का कूड़ा-करकट इस दाह-क्रिया में ही जल-बल जायेगा, विनाश की आशंका के साथ यह शुभ शकुन भी निश्चित रूप से जुड़ा अनुभव किया जाना चाहिए ।

यों धूमकेतु कोई ऐसा दानव नहीं, जो मनुष्यों की तरह मारकाट मचाता हो । यह भी गैस, खनिज, चट्टानों तथा हिमकणों से बने विचित्र प्रकार का तारा ही है । सबसे आश्चर्यजनक इसकी पूँछ है, जिसकी लम्बाई लाखों-करोड़ों मील तक नापी गई है । १८११ में धूमकेतु दिखाई दिया था, उसकी पूँछ १० करोड़ मील लम्बी थी, जबकि १८४३ में जो धूमकेतु दिखाई दिया था । खगोलशास्त्रियों के अनुसार उसकी पूँछ की लम्बाई १५ करोड़ मील से भी बड़ी थी ।

कई धूमकेतु कई पूँछ वाले भी होते हैं । आकाश में इतनी दूर तक फैली हुई पूँछ के बीच से फाड़कर पृथ्वी और दूसरे ग्रह अपनी परिक्रमाएँ करते रहते हैं । सम्भव है पूँछ में पायी जाने वाली गैसें अदृश्य रूप से लोगों के मस्तिष्क और शरीर में ऐसी प्रतिक्रियाएँ उत्पन्न करती हों, जिनसे शरीर और सामाजिक जीवन में दूषित तत्वों की अभिवृद्धि होती हों और इसी से यह अनिष्टकारक समझे जाते हों, पर ऐसा कोई कारण दिखाई नहीं देता जो बलात् मनुष्य की इच्छाशक्ति को मोड़ सकता हो या विध्वंस उपस्थित कर

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सकता हो । इसकी आकृति ही भयंकर होती है । भार तो बहुत ही कम होता है, इसलिए इनसे टकराने का कोई डर नहीं रहता । दक्षिण अफ्रीका में कुछ ऐसे जन्तु पाये जाते हैं जो दुश्मन को देखकर ऐसी भयंकर आकृति बना लेते हैं, कि दुश्मन उसे देखते ही भयभीत हो जाता है और वहाँ से भाग जाता है । अपनी इस डराने वाली कला के द्वारा वह अपनी जीवन रक्षा कर लेता है, सम्भव है प्रकृति ने धूमकेतु नामक इस ब्रह्मकीट को इसीलिए उत्पन्न किया हो, कि उसकी दानवी आकृति से लोग डरें और सनातन नियमों की यथा दया, क्षमा, उदारता आदि की रक्षा करें, एक-दूसरे के प्रति द्वेष-दुर्भाव और मलिनताएँ न रखा करें । वैसे इसका भार पृथ्वी के भार से करोड़ों गुना कम अर्थात् नगण्य जैसा ही होता है, जबकि लम्बाई के अनुपात में उन्हें कई अरब टन का होना चाहिए था ।

खगोलशास्त्रियों ने अनुमान लगाकर बताया है कि एक कमरे की एक घन इंच हवा में जितना पदार्थ होता है । धूमकेतु की पूँछ में उतना पदार्थ एक घन मील में होता है । चमक तो गैसों की होती है । इसका सिर भी उतने भार का नहीं होता, जितना दिखाई पड़ता है । यह छोटी-छोटी गोली के आकार जैसे धूल-कणों से बना होता है और यह टुकड़े भी एक घन मील में कोई सौ-पचास की ही संख्या में होते हैं ।

सिरा सूर्य की ओर और पूँछ विपरीत दिशा में । ऐसा लगता है जैसे सूर्य अपनी इच्छा-शक्ति से उसे धकेल रहा हो । सूर्य से वह बहुत दूर रहकर चक्कर काटता है । यह दूरी ४० करोड़ मील तक होती है । सन् १८४३ में जो धूमकेतु दिखाई दिया था, वह सूर्य के ४९ हजार मील पास तक चला गया था । इससे पहले ३ करोड़ मील की दूरी तक ही वह आ पाया था । धूमकेतु जब सूर्य के पास आता है, तभी उसकी पूँछ चमकती और लम्बी होती दिखाई देती है । सूर्य का प्रकाश पड़ने के कारण ही ऐसा होता है । जैसे-जैसे वह दूर हटता है, पूँछ छोटी होती हुई बाजीगर के खेल की तरह सिर में ही लुप्त हो जाती है । कई बार यह पूँछें दूसरे ग्रह-पिण्डों के सम्पर्क में आकर उधर ही आकर्षित होकर नष्ट हो जाती हैं । इससे यदि यह कहा जाय कि धूमकेतुओं के विकिरण का अदृश्य प्रभाव प्राणीय जीवन पर पड़ सकता है, तो उसे नितान्त असत्य नहीं मानना चाहिए ।

धूमकेतु केवल सूर्य की सन्तान हों, ऐसी बात नहीं, नवग्रहों में कई के पास यह सन्तानें हैं । शनि धूमकेतुओं की संख्या ६, नेपच्यून की ८ है । इसी प्रकार वृहस्पति के घर में अनुमानतः १८ पुच्छल तारे चक्कर काटते रहते हैं ।

वैज्ञानिकों के अनुसार इनमें किसी प्रकार के जीवन की सम्भावना नहीं है, क्योंकि इनका घनत्व इतना विरल है कि उसमें प्राणियों का रहना सम्भव ही नहीं है । यहाँ गुरुत्वाकर्षण वायुमण्डल की सुरक्षा नहीं रख सकता, प्राणी और पौधे वहीं रह सकते हैं, जहाँ ऑक्सीजन और कार्बन डाइ ऑक्साइड पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हों, यह दोनों गैसें वहीं रह सकती हैं, जहाँ गुरुत्वाकर्षण कम न हो । इसलिए यह एक प्रकार की प्राणी विहीन आकाश की सन्तरण नौकाएँ भर हैं, जो इधर-से-उधर चक्कर काटती रहती हैं ।

कुछ भी हो यह प्रकृति का आश्चर्य ही है । प्रकृति ने इन्हें यदि किसी उद्देश्य से बनाया होगा तो वह उद्देश्य सचमुच कम आश्चर्यजनक न होगा । सम्भव है आगे का विज्ञान इस सम्बन्ध में कुछ अधिक जानकारी दे सके ।

वस्तुतः धूमकेतु सौर-परिवार का ही एक सदस्य है, जो प्रायः प्रति ७६ साल के अन्तर से उदय होता रहता है । इसकी बनावट ऐसी है जो पृथ्वी के वातावरण को विशेष रूप से प्रभावित करती है । इसकी चर्चा करना यहाँ प्रासांगिक इसलिए होगा कि इस सदी में दूसरी बार सन् १९१० के बाद अब अगले वर्ष १९८६ में यह पुनः पृथ्वीवासियों को दिखाई दिया । इसके अन्तर्ग्रही प्रभाव अभी से धरित्री को प्रभावित करने लगे हैं ।

भारतीय शास्त्रों में ३३ धूमकेतुओं का वर्णन है । वे सभी दैत्य राहु के पुत्र समझे जाते हैं । इनके प्रकट होने का अर्थ होता है—विनाश की सम्भावनाएँ सन्निकट होना । एक यहूदी इतिहासकार जेसफी ने तो इसे "अभिशिप्त क्षेत्र के ऊपर ईश्वर की तलवार" का नाम दिया है । जब कभी भी धूमकेतु का उदय धरती पर हुआ, तभी युद्ध, अकाल, भय, बीमारी तथा अन्यान्य प्रकार की विभीषिकाएँ प्रकट हुई हैं ।

धूमकेतु को दूसरे शब्द में पुच्छल तारा नाम से भी जाना जाता है । इसके प्रकट होने की समयावधि ७६ वर्ष बाद की है । जुलाई १९१० में यह निकला था । इसके बाद जनवरी १९८६ में निकला है । इसकी पूँछ की लम्बाई साढ़े आठ करोड़ किलोमीटर है । यह पूँछ कहीं दिन में तो कहीं रात में चमकती हुई दिखाई दी ।

अब प्रश्न उठता है कि यह पुच्छलतारा है क्या ? आज से लगभग ७० करोड़ वर्ष पहले सूर्य असंख्य टुकड़ों में फैलता चला गया । गुरुत्वाकर्षण के सिद्धान्त के अनुसार सूर्य से पृथक हुए ये टुकड़े वायुमण्डल में मँडराते हुए पुनः जब सूर्य के पास पहुँचे, तो इनकी लम्बाई करोड़ों मील तक फैलती चली गई । इन्हीं को ज्योतिर्विदों ने पुच्छल तारे के नाम से पुकारा है ।

नवम्बर १९८५ से परोक्ष रूप में एवं जनवरी ८६ से दृश्य रूप में निकलने वाले धूमकेतु की पृथ्वी की ओर आने की गति ५८०० किलोमीटर प्रति घण्टे की थी । अमेरिका के एक ज्योतिर्विद का कहना है कि इस पुच्छल तारे की पूँछ की लम्बाई पहले की अपेक्षा एक लाख गुना अधिक होगी । इसके दुष्परिणामों की ओर इंगित करते हुए, उन्होंने यह भी बताया कि "पक्षी अपने घौंसलों से बाहर मुँह नहीं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

निकालेंगे । जंगलों में रह रहे जानवर अपनी भाषा में इसे देखकर बुरी तरह चीत्कार की ध्वनि में रो पड़ेंगे ।" २७ दिन तक यह तारा विश्व के किसी न किसी स्थान पर अवश्य बना रहेगा । यदि रोमन ग्रन्थों का अध्ययन किया जाय तो पता चलेगा, कि ये धूमकेतु अपनी धुरी पर सूरज के इर्द-गिर्द चक्कर काटते हैं । ठीक ७६ वर्ष बाद ये धूमकेतु सूर्य की भीतरी सीमा से निकलकर बाहर आते हैं, तो पृथ्वी से चमकते हुए दीखते हैं ।

दुनिया का सबसे पहला धूमकेतु ईसा से २५० वर्ष पूर्व चमका । चीन के वैज्ञानिकों ने इसका रिकॉर्ड रखा है । उनके अनुसार यह धूमकेतु देवताओं द्वारा छोड़ी गई दुर्गन्धि का प्रतीक था । जिससे युद्ध, महामारी, दुर्भिक्ष जैसी विनाश की सम्भावनाएँ स्पष्ट दृष्टिगोचर होने लगीं । वैस्पीसियान नाम के रोमन सम्राट की मृत्यु धूमकेतु के प्रकट होने के समय ही हुई । उसी समय महामारी का दौर फैला । सन् १०६६ में धूमकेतु दिखाई देने का परिणाम विलियम कौन्करर के आक्रमण का था ।

अमेरिका के वैज्ञानिकों के अनुसार धूमकेतु पृथ्वी के सन्निकट आते समय उसका मलवा सड़ने लगता है, जिसके फलस्वरूप विभिन्न प्रकार की विषैली गैसें उत्सर्जित होती हैं । यह गैस पृथ्वी पर बसे प्राणियों के लिए प्राणघातक सिद्ध हो सकती है ।

बड़ी तेजी से पृथ्वी की ओर चल पड़े इस हैली धूमकेतु का विराट् रूप मार्च १९८६ में पृथ्वीवासियों को दीखा था । तब मात्र भारत ही नहीं विश्व के अनेक अन्य राष्ट्रों में पृथ्वी पर इसके प्रभावों के अध्ययन की जोर-शोर से तैयारी की थी । रूस ने तो इसके अध्ययन के लिए एक विशेष अन्तरिक्ष यान की योजना बनाकर इसे अगस्त १९८४ में हैली के पुच्छल तारे की ओर छोड़ा था, जो इसके प्रभावों का अध्ययन-परीक्षण अति निकट से करने के लिए था । वह दूरगामी लेसर यन्त्रों से युक्त यान कई जानकारियाँ पृथ्वी पर भेजता रहा ।

कार्डिफ यूनीवर्सिटी के खगोलज्ञों ने 'हरास-अराकी-एलकौक' धूमकेतु की आन्तरिक स्थिति का विगत वर्षों में बड़ी गहनता के साथ अवलोकन किया, तदुपरान्त इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं, कि इसके द्वारा फेंका गया सूक्ष्म जीव रसायन पृथ्वी के वातावरण में पूरी तरह समा जाता है और आगे चलकर यही सूक्ष्म रसायन वायरस आदि को जन्म देकर महामारी जैसी व्याधियों का स्वरूप धारण करता है ।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का अवलोकन करने से पता चला है, जब कभी भी धूमकेतुओं का प्रकटीकरण हुआ तभी प्लेग, ब्लैक डैथ, चेचक जैसी बीमारियाँ फैली हैं । इसकी जानकारी 'डिसीज फ्रौम स्पेस' के लेखक प्रो. चन्द्र विक्रमा सिंघे की पुस्तक से मिलती हैं । उन्होंने लिखा है कि धूमकेतु की पूँछ में एक विशिष्ट प्रकार के रोगाणु पाये गए हैं, जो इन बीमारियों को फैलाने का मूल कारण बन जाते हैं ।

१३ मई, १९८३ को खगोल-विज्ञानियों ने अपने तथ्यों को जनता के सम्मुख प्रस्तुत करते हुए बताया था, कि हैली धूमकेतु पृथ्वी के ऊपर ५० लाख किलोमीटर के क्षेत्र को घेरते हुए चमकेगा । जिससे उत्तरी और दक्षिणी गोलार्द्ध में फ्ल्यू, एपडैमिक आदि रोगों का प्रकोप पूरी तरह फैलता चला जायेगा । यही नहीं कई नये ऐसे वायरसजन्य रोग जन्म ले सकते हैं, जिनका निदान एवं उपचार चिकित्सकों की सीमा के बाहर होगा ।

विश्व के मूर्धन्य ज्योतिर्विदों के अनुसार हैली धूमकेतु जब कभी सूर्य के नजदीक से गुजरेगा तो एक विशिष्ट प्रकार की विषैली गैस और धूल कण निकाल फेंकेगा । जिसके फलस्वरूप सौर विकिरण निरन्तर फैलता चला जायेगा । धूमकेतुओं की मुख्य विशेषता यह होती है कि वे १ करोड़ किलोमीटर की लम्बाई वाले हाइड्रोजन युक्त बादलों से चारों ओर घिरे रहते हैं । इन्हीं बादलों से निकले अवशिष्ट कण पृथ्वी पर बरसते हैं । इस धूमकेतु को देखने के लिए २०० इन्च वाली टेलिस्कोप प्रयुक्त की जाती है ।

जापान ने हैली धूमकेतु तक पहुँचने के लिए प्लेनेट 'ए' का निर्माण किया है, जो अन्य की अपेक्षा जल्दी पहुँचेगा । इसे देखने के लिए दक्षिणी अक्षांश को अधिक उपयुक्त समझा गया है । वैज्ञानिकों का कहना है कि इसके मलवे से पृथ्वी के पश्चिमी गोलार्द्ध को काफी जोखिम उठानी पड़ सकती है । वैज्ञानिक गणनानुसार नवम्बर १९८४ में हैली का धूमकेतु पृथ्वी से ४८ करोड़ ३६ लाख ६ हजार मील दूर था । पृथ्वी से इसकी सबसे निकटतम दूरी अगले दिनों ३ करोड़ ६० लाख मील होगी ।

हेली धूमकेतु से जुड़ी हुई आशंकाएँ

हेली धूमकेतु ७६ वर्ष बाद सन् १९८६ में प्रकट हुआ था । इससे पूर्व वह १४५६, १५३१, १६०७, १६८२, १७५८ में प्रकट होता रहा था । इसके सम्बन्ध में दैवज्ञ हेली ने बहुत खोज-बीन की थी, इसलिए उन्हीं के नाम पर इस पुच्छल तारे का नामकरण किया गया । उनकी मृत्यु के पश्चात् दूसरे वैज्ञानिक उसकी कक्षा एवं गति का सही पता लगाने का प्रयत्न करते रहे हैं, पर अभी उस सन्दर्भ में उतनी सुनिश्चित जानकारी नहीं मिली है, जिस पर सन्तोष किया जा सके ।

धूमकेतु की संरचना ठोस, द्रवों एवं वाष्पीय पदार्थों से हुई है पर वह परिभ्रमण करते हुए जब सूर्य के निकट पहुँचता है तो बढ़ी हुई ऊर्जा का दबाव पड़ता है । जिस भाग पर यह दबाव पड़ता है । वह वाष्पीकृत होकर फूलने और फैलने लगता है । इसी को धूमकेतु की पूँछ कहते हैं । इस पूँछ

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की विशेषता के कारण ही प्राचीन ज्योतिषी उसे पुच्छल तारा कहते थे ।

मंगल ग्रह के परिक्रमा पथ के निकट पहुँचने पर दुम का यह विस्तार विशेष रूप से बढ़ने लगता है । कभी-कभी सूर्य के गुरुत्वाकर्षण के कारण यह दुम छोटे-छोटे कई खण्डों में बँट भी जाती है । खगोलशास्त्रियों के गणितानुसार औसत धूमकेतु का वजन १६ विलियन टन होता है । उसकी परिक्रमा ७६.१ वर्ष में पूरी होती है । अपनी धुरी पर वह १०.३ घण्टे में घूम लेता है ।

२४० वर्ष पूर्व ज्योतिर्विदों की दृष्टि इस पर गई थी । तब से अब तक उसके सम्बन्ध में नई जानकारियाँ जुड़ती आयी हैं । इसकी लम्बाई १० करोड़ कि. मी. आँकी गई है । इस बार यों इसी वर्ष के क्रिसमस के एक दिन पूर्व में वह दीखने लगेगा । पर बिना दूरबीन की सहायता से उसे खुली आँखों से ११ अप्रैल, सन् १९८६ को देखा जा सका । उस दिन यह पृथ्वी से मात्र ८०७ करोड़ कि.मी. दूर था । ग्रह नक्षत्रों की गणना के हिसाब से इतनी दूरी निकटवर्ती ही मानी जाती है ।

बम्बई की नेहरू वेधशाला के निर्देशक का कथन था कि सन् ८५-८६ में पृथ्वी को हेली लहर प्रभावित करेगी और उसके कारण धरती के स्वाभाविक क्रम में कई प्रकार की अस्त-व्यस्तताएँ उत्पन्न होने की सम्भावना है ।

तब हेली धूमकेतु के सम्बन्ध में कितनी ही अभिनव जानकारियाँ एकत्रित करने की तैयारी अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग से की गई थी । जापान, रूस, फ्रांस आदि के सहयोग से एक उपग्रह उन दिनों भेजा गया था । उद्देश्य था कि वह १००० कि.मी. दूर रहकर उसकी परिस्थितियों का पता लगायेगा और चित्र खींचेगा । इसे जुलाई १९८५ में भेजने का प्रस्ताव था जो कि पुच्छल तारे को दूरबीनों के सहारे जनवरी १९८६ से ही देखा जाने लगा । धूमकेतु के पृथ्वी के निकट से निकलना किसी संकट की आशंका उत्पन्न करता है । सन् १९०८ में साइबेरिया क्षेत्र में एक भयंकर विस्फोट हुआ था उसने धरती के सुदूर क्षेत्रों को प्रभावित किया था । इसके सम्बन्ध में खगोलवेत्ताओं का एक अनुमान यह भी है कि यह धूमकेतु की किसी आड़ी-टेड़ी चपेट के कारण हुआ था । आवश्यक नहीं कि इसकी समीपता कोई संकट खड़ा ही करे, पर यह आशंका अवश्य है कि उसकी धूल उड़कर पृथ्वी की ओर आने लगे तो सूर्य को अन्धेरे में बदल देने वाले अन्धड़ भी आ सकते हैं । कई प्रकार के ऐसे रोग कीटाणु भी पृथ्वी पर उतर सकते हैं, जिनका अस्तित्व अभी पृथ्वी पर नहीं देखा गया । यह अवतरण किन्हीं असाध्य महामारियों की उत्पत्ति का निमित्त कारण हो सकता है । इस थोड़े से टकराव में हिम युग लौट पड़ने की सम्भावना का भी अनुमान लगाया जा सकता है ।

पुरातन मान्यता के अनुसार धूमकेतुओं का उदय देवताओं द्वारा छोड़ी गई क्रोध सूचक दुर्गन्ध से होता है जो कि पृथ्वी निवासियों का अनिष्ट करता है । इस मान्यता की आंशिक पुष्टि केपलर, गैलीलियो, कोपरनिक्स, न्यूटन, प्लेटो आदि वैज्ञानिकों ने भी की है और कहा है, कि इनका पृथ्वी के निकट आना चिन्ताजनक ही हो सकता है । आधुनिक वैज्ञानिक ऐसा तो नहीं मानते, पर इस नवागन्तुक द्वारा उत्पन्न हो सकने वाले खतरों से बेखबर भी नहीं हैं । वैज्ञानिक फ्रेड हायल का कथन है कि उसकी पूँछ पृथ्वी पर कई प्रकार के नये अविज्ञात रोग कीटाणु बिखेर सकती है ।

सन् १९८६ में धूमकेतु का वजन अन्यों की अपेक्षा १० हजार विलियन टन आँका गया था । वह १० नवम्बर, १९८५ से २६ अप्रैल, १९८६ तक पृथ्वी के निकट था । उस बीच कभी-कभी वह दूरबीनों से ही नहीं नंगी आँखों से भी देखा गया था । संसार के अनेक देश, अपने पृथक साधनों से भी और संयुक्त साधनों से भी उसकी जाँच पड़ताल करने में जुटे थे । अमेरिका, रूस, ब्रिटेन, फ्रांस आदि इसमें अग्रणी रहे हैं । उसकी कुछ धूलि बटोर कर पृथ्वी पर भी लाने के भी प्रयत्न किए गए थे, ताकि उसके इतिहास और प्रभाव का अधिक अच्छा मूल्यांकन हो सके ।

अन्तरिक्ष में छोटे-बड़े प्रायः १ खरब धूमकेतु विचरते खोजे गए हैं । इनमें सबसे बड़ा वर्तमान धूमकेतु 'हेली' है । पिछले छोटे धूमकेतु जब कभी पृथ्वी के निकट आये हैं, तब भारी उथल-पुथल करते रहे हैं । उन्होंने पृथ्वी का नक्शा बदला और विशालकाय प्राणियों की नस्लों का अन्त कर दिया । सन् १९०८ में ३० जून को आये एक छोटे से धूमकेतु ने साइबेरिया की भूमि पर एक भयंकर विस्फोट तो किया ही था आकाश को चमकती धूलि से भी भर दिया था । प्रथम विश्व युद्ध इसी की परिणति रूप में माना जाता रहा है ।

धूमकेतु अध्ययन के लिए उसके निकट १० किलोमीटर रहने पर भी किसी दुर्घटना की आशंका की जाती है, ऐसी दशा में उसे दूर भगा देने के लिए शक्तिशाली अणु आयुध तैयार रखे गए थे, जो उसका शीर्ष भाग उड़ा देने या रास्ता बदल देने में समर्थ हो सकें । इतने पर भी यह आशंका बनी ही रही थी, कि धकेले जाने पर सौर-मण्डल के किसी अन्य ग्रह का सन्तुलन न बिगड़े । अच्छाई इतनी ही है, कि वह निकटतम होते हुए भी पृथ्वी से ६५० लाख किलोमीटर दूर था, उसकी पूँछ ८ करोड़ किलोमीटर लम्बी थी जो दूर रहते हुए भी पृथ्वी को प्रभावित करने के लिए पर्याप्त थी ।

परन्तु उक्त सभी कल्पनाएँ निराधार निकली और वह विपत्ति भी उसी तरह टल गई, जिस प्रकार कि इन परिस्थितियों में पहले भी "स्काई लैब" जैसी एवं अनेकों विपत्तियाँ, प्रकृति प्रकोप टलते रहे हैं अथवा कम हानि पहुँचाकर ही इतिश्री करते रहे हैं । इतने पर भी आने वाले

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दस वर्ष विश्व वसुधा की भविष्य की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सिद्ध होंगे । इन दिनों मानवता को एक नहीं, अनेकानेक विभीषिकाओं का सामना करना पड़ सकता है । परीक्षा की घड़ी तो है ही यह । ऐसे में सामूहिक धर्मानुष्ठानों का वातावरण परिशोधन की दृष्टि से सर्वोपरि महत्त्व है । धरती को यदि मँझधार पार करनी है तो सभी या तो एक साथ पार होंगे या डूबेंगे । आशा करनी चाहिए कि सब विपत्तियों के निवारण हेतु संघबद्ध होंगे ।

इस उच्छृंखलता के कान कल-परसों पकड़े ही जाने वाले हैं

अन्तरिक्ष में भ्रमण करती उच्छृंखल उल्काएँ इतनी विचित्र हैं कि अपनी जिन्दगी मौत का विचार किए बिना उस यात्रा पर निकल पड़ती हैं, जहाँ जाय बिना उनका काम बराबर चलता रह सकता है । किन्तु उच्छृंखलता तो उच्छृंखलता ही है । 'छोटा-सो बड़ा खोटा' वाली कहावत इन पर पूरी तरह लागू होती है । अपनी और दूसरों की हानि का विचार किए बिना जिन्हें कुछ भी कर गुजरने का जोश उठता है उन्हें कौन समझा सकता है वे किसकी सुनते हैं ?

यूनान की पौराणिक गाथाओं में एक ऐसे दुस्साहसी युवक का उल्लेख है जो नकली पंख लगाकर सूर्य से मुलाकात करने निकल पड़ा था । बहुत ऊँचा उड़ने पर उसके मोम से चिपके पंख गल-जल गए और औंधे मुँह समुद्र में आ गिरा तथा उसी में उसका अन्त हो गया । इस युवक का नाम था—इकोरस ।

ठीक ऐसा ही एक उल्का पिण्ड इन दिनों खगोलवेत्ताओं ने देखा है, जो कभी सूर्य के और कभी पृथ्वी के इतना निकट आ पहुँचता है कि अब मरा तब मरा ही होती रहती है । चपेट में आया तो यह बुध, मंगल अथवा शुक्र से भी टकरा सकता है । यह कई बार इनकी कक्षाओं में भी जा घुसता है । सूर्य के सबसे निकट जा पहुँचने वाले पिण्डों में इस अकेले ने ही कीर्तिमान स्थापित किया है । उस परिधि में पहुँचकर वह तपता हुआ आग का गोला ही बन जाता है । कभी वह इतनी दूर चला जाता है, जहाँ शीत की अति ही होती है ।

आस्ट्रेलिया के खगोलशास्त्रियों ने इकोरस की गतिविधियों को देखते हुए, उसके पृथ्वी से जा टकराने की आशंका व्यक्त की थी । यदि वह भविष्यवाणी सही निकलती तो लाखों वर्ग मील जमीन में गहरा गड्ढा होकर भयंकर आग लग जाती है और करोड़ों मनुष्यों का सफाया हो जाता है । सन् १९०८ में मात्र हजार फुट व्यास की एक उल्का पिण्ड साइबेरिया के जंगल में जा गिरी थी और उसने अणुबम विस्फोट जैसे दृश्य उपस्थित किए थे । इकोरस का कलेवर तो इससे हजारों गुना बड़ा है ।

इस उच्छृंखलता के कुचक्र में फँसी हुई और भी कई उल्काएँ इससे भी पहले भी देखी गई हैं ।

हिडालमो—इरोस, अलवर्ट, अलिण्डास एयोर, अपोलो, एडोरस, हर्मेस उल्काओं की गतिविधियाँ भी ऐसी ही पायी गई हैं । उनके ऊपर वैज्ञानिकों का ध्यान बराबर बना रहता है । वे पृथ्वी के इतनी निकट आ पहुँचती हैं और ऐसी विचित्र कक्षाओं में घूमती हैं, कि सदा टकराव का खतरा बना रहता है ।

करोड़ों वर्ष पूर्व मंगल और वृहस्पति के बीच में एक विशालकाय ग्रह था वह भी ऐसे ही अपनी शालीनता छोड़ कर किसी ग्रह से जा टकराया और चूर-चूर हो गया था । यह उल्का पिण्ड उसी की टूटी-फूटी हड्डियों से उपजे भूत-प्रेत हैं और अपने बाप की तरह ही किसी से भी सिर फोड़ने के लिए उतावले फिरते हैं ।

इनमें से इगेस की लम्बाई १५ मील और चौड़ाई ५ मील नापी गई थी । इसी से थोड़ी न्यूनाधिक मात्रा में उपर्युक्त उल्का पिण्ड थी । सन् १९३८ में हर्मेस जब धरती के निकट से गुजरा था तो संसार भर के अखबारों ने उसकी आशंका डरावने शीर्षकों में व्यक्त की थी, जैसे 'संसार के सर्वनाश में पाँच घण्टे की देर', 'पृथ्वी से टकराने के लिए चल पड़ा एक क्षुद्र ग्रह' आदि ।

समझा जाता है कि इकारस पृथ्वी वालों को तो डराता, धमकाता भर ही रहेगा, पर किसी दिन सूर्य को जीभ निकाल कर और अँगूठा दिखाकर चिढ़ाने वाला यह धीठलु उद्दण्ड उसकी पकड़ में आ गया तो फिर भुर्ता बनकर ही रहेगा । उच्छृंखलता सदा दुहल नहीं रह सकती । समय उसके कान पकड़ कर करारे तमाचे कल नहीं तो परसों लगा देगा और उसकी सारी शेखी धूल में मिल जायेगी ।

संघबद्धता एक ऐसा तत्व है, जिससे न केवल जीवित प्राणी क्रमिक विकास की दिशा में अग्रसर होते हैं वरन् निर्जीव समझे जाने वाले तत्वों में भी सुव्यवस्था रहती है । विशृंखलित, विसंगठित होने पर मनुष्य जाति को कब-कब कितने संकटों और दुर्भाग्यों का सामना करना पड़ा है, इसकी साक्षी इतिहास का हर पृष्ठ देता है ।

मानवी विशेषताओं में उसकी प्रधान विभूति चिन्तन परायणता विचारशीलता नहीं वरन् सहयोग भावना है । उसके आधार पर मिल-जुलकर काम करना, साथ-साथ पारस्परिक स्नेह सौजन्य प्रदान करना सम्भव हो सका है । यही वह आधार है, जिसके कारण विविध विधि प्रगति की सम्भावनाएँ सामने आयी हैं ।

सहयोग से अनुशासन का विकास होता है और हर किसी को अपनी मर्यादा में रहने के लिए स्वेच्छापूर्वक अथवा नियन्त्रण में आबद्ध रहना पड़ता है । यहाँ से समाज व्यवस्था आरम्भ होती है और यहीं से प्रगति की विभिन्न सम्भावनाओं का पथ प्रशस्त होता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

एकाकी उच्छृंखलता में अहन्ता का पोषण हो सकता है, पर उससे स्वयं के लिए और अन्य सभी के लिए विपत्ति ही उत्पन्न होती है । अकेलेपन की स्वार्थ भरी संकीर्णता मनुष्य जाति को असीम क्षति पहुँचाती रही है और उससे वांछनीय तत्वों को, अपराधी ध्वंसात्मक प्रवृत्तियों को प्रश्रय मिलता रहा है । यह दृश्य अन्य प्राणियों में भी देखे जाते हैं जिनमें असहयोग पनप रहा होगा वे अपने अस्तित्व को संकट में डाल रहे होंगे, इतना ही नहीं, जहाँ कहीं, उनका सम्पर्क होगा, वहाँ भी विपत्ति उत्पन्न कर रहे होंगे । दृष्टि विस्तार करके इस तथ्य को कहीं भी प्रत्यक्ष देखा जा सकता है ।

आकाश की दुनिया में स्वच्छन्द विचरण करने वाली उल्काओं को इसी श्रेणी में गिना जा सकता है । उन्हें स्वेच्छाचारिता पसन्द है । मिल-जुलकर एक बड़े पिण्ड के रूप में सम्मिलित बड़ा अस्तित्व बनाना उन्हें स्वीकार नहीं । इससे उनकी अहन्ता पर आघात तो आता है । समूह का श्रेय सबको मिलता है । पर जिन्हें एकाकी श्रेय लेने की अभिलाषा है, उन्हें तो अपनी आपाधापी का ही ध्यान रहता है और अपनी ढाई चावल की खिचड़ी अलग पकाने में ही अच्छा लगता है । आकाश में आवारागर्दी करती हुई जहाँ तक स्वच्छन्द विचरण करने वाली यह स्थिति है, उनका आकार ही नहीं, लक्ष्य भी छोटा होता है । अतएव वे परिस्थितियों के एक झौंके में उलट-पुलट हो जाती हैं और न केवल अपना अस्तित्व गँवा बैठती हैं वरन् जहाँ भी उनके चरण पड़ते हैं वहीं विनाश उत्पन्न करती हैं ।

रात में कभी-कभी तेजी से कोई तारा टूटता सा लगता है । वह प्रकाश की लकीर बनाता हुआ एक स्थान से दूसरे स्थान की ओर दौड़ता है और कुछ ही सेकण्ड की चमक दिखाकर एक छोर से दूसरे छोर पर पहुँचते-पहुँचते लुप्त हो जाता है । इन्हें प्रायः अशुभ माना जाता है और किसी अनिष्ट की सूचना अथवा किसी महामानव की मृत्यु के साथ उनका सम्बन्ध जोड़ा जाता है । और भी कई तरह की अटकलें लगाई जाती हैं, पर वस्तुतः यह उल्काएँ हैं जो स्वभवतः आकाश में अपने ढंग से अपनी कक्षा में भ्रमण करती रहती हैं, पर उनमें से कभी कोई भूल भटक कर पृथ्वी के समीप आ जाती है तो पृथ्वी गुरुत्वाकर्षण से खिंचकर अपने वायुमण्डल में चली आती है । इस वायुमण्डल के घर्षण से वह अग्निवर्ण होकर जल भुनकर खाक हो जाती है । यही वह दृश्य है, जिसमें चमकीली लकीर करती हुई आतिशबाजी की तरह हमें दीखती हैं और जिसे तारा टूटना कहते हैं ।

अधिकांश उल्काएँ छोटी होती हैं और हमारे वायु मण्डल में प्रवेश करते ही जल जाती हैं, पर उनमें से कुछ बहुत बड़ी होती हैं । अस्तु पूरी तरह वे नहीं जल पातीं और अधजली धरती से आ टकराती हैं । ऐसे उल्का पिण्ड जहाँ तहाँ म्यूजियमों में एवं शोधशालाओं में संग्रहीत हैं । अब तक उपलब्ध उल्काओं में से सबसे बड़ी ग्रीनलैण्ड में पायी गई थी उसका भार ३६.५ टन और आयतन ११× ७× ५ फुट है ।

पिछले दिनों धरती पर सबसे बड़ा उल्कापात ३० जून, १९०८ को प्रातः ७ बजे साईबेरिया के त्यूंगूस वन प्रदेश में हुआ । इसकी अग्निशिखा आकाश में २५ मील तक फैली । उसके कारण ४०० वर्गमील का प्रदेश पूर्णतया जल गया । उसमें न कोई प्राणी बचा न पेड़-पौधा । यह अग्नि पिण्ड कोई एक हजार टन भारी था ।

इसके उपरान्त एक और विकट उल्कापात १२ फरवरी, १९४७ को प्रातः १० बजकर ३८ मिनट पर तायगा वन प्रदेश में हुआ । यह अग्निपिण्ड घोर गर्जन करता हुआ उत्तर से दक्षिण की ओर दौड़ता चला आया और आलिन की पर्वत शृंखला से जा टकराया । फलस्वरूप ढाई वर्ग किलोमीटर क्षेत्र का पूरी तरह चूरा हो गया और वह उल्कापिण्ड भी टुकड़ों में बँटकर छितरा गई । जगह-जगह गहरे गड्ढे बन गए । उसका वजन १०० टन के लगभग था । छितराए हुए टुकड़े जहाँ-तहाँ मिले, उनमें से बड़ा टुकड़ा १७४५ किलोग्राम का था ।

उल्काओं को दो भागों में विभक्त कर सकते हैं पाषाण प्रधान, लौह प्रधान । किसी में मृतकांश अधिक होता है किसी में धातु अंश की बहुलता होती है । धातुओं में लौह अधिक होता है । फिर भी निकिल, ऐल्यूमीनियम, मैगनीज, ताँबा, क्रोमियम, मैग्नीशियम, कोबाल्ट, ऑक्सीजन, सल्फेट, फॉस्फोरस, कार्बन आदि पदार्थ पाये जाते हैं । कुछ खनिज तथा रसायन उनमें ऐसे भी होते हैं, जो अपनी धरती पर नहीं पाये जाते इसलिए उनका नामकरण भी नहीं किया गया है ।

जो उल्काएँ पृथ्वी के समीप हैं, वे या तो खुद भटक जाती हैं या फिर पृथ्वी ही कभी उल्का समूह के पथ के समीप जा पहुँचती है तो उसका टकराव होता है, साधारणतः उल्काएँ अपने पथ पर घूमती रहती हैं और पृथ्वी अपनी कक्षा में । एक दूसरे के क्षेत्र में प्रवेश करने पर भी वह विभीषिका उत्पन्न होती है, जिसे उल्कापात के नाम से देखा या जाना जाता है ।

सन् १८८९ में पृथ्वी के समीप से 'इरोस' नाम की उल्का धरती के बहुत पास से गुजरी थी, उसकी लम्बाई २० मील और चौड़ाई १० मील थी । १५ जून, १९६८ को 'इकोरस' नामक ऐसी उल्का पृथ्वी के निकट से गुजरी थी जो यदि धरती से टकरा जाती तो एक हजार हाइड्रोजन बमों के एक साथ विस्फोट होने जैसा विध्वंस होता और भूलोक का अस्तित्व खतरे में पड़ जाता ।

यह उल्काएँ जब छोटी होती हैं तो पृथ्वी के वातावरण में आकर घर्षणजन्य ऊर्जा से जलकर नष्ट हो जाती हैं पर जब वे अधिक बड़ी और अधिक कठोर होती हैं तो जलते

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

झुलसते हुए भी अपना अस्तित्व बनाये रहती हैं और धरती से टकरा कर उसे भारी क्षति पहुँचाती हैं ।

भूतकाल में ऐसी आठ उल्काएँ समय-समय पर पृथ्वी से टकराकर उसे भारी क्षति पहुँचा चुकीं हैं । हडसन की खाड़ी के किनारे का प्रख्यात गोल गड्ढा जर्नमी में १७ मील चौड़ा राइन केसल का गड्ढा इन उल्काओं से उत्पन्न हो सकने वाली विभीषिकाओं का परिचय देते हैं । यदि ऐसी उल्काएँ ध्रुवीय क्षेत्र पर गिर पड़ें तो पृथ्वी का सत्यानाश ही हो जायेगा । ध्रुवों की सतह पिघल पड़ेगी और समुद्र में बाढ़ आने से धरती के अनेक भागों में जल प्रलय का दृश्य उपस्थित होगा । चन्द्रमा पर वायुमण्डल झीना है, इसलिए वहाँ उल्काएँ आसानी से गिरती रहती हैं अस्तु उन्होंने सुन्दर चन्द्रमा को खाड़-खड्डों वाला बना दिया है ।

उच्छृंखल एकाकीपन उल्काओं का, हर दृष्टि से भयानक है । संघबद्ध अनुशासन से ही नभ नक्षत्र अपनी गतिविधियाँ शान्तिपूर्वक चला रहे हैं यह मानव समाज की व्यवस्था बनी हुई है । प्रगति और शान्ति के लिए सहयोग और अनुशासन का सार्वभौम नियम सदा से ही अपना महत्त्व प्रतिपादित करता रहा है और वह तथ्य अनन्त काल तक अपनी उपयोगिता सिद्ध करता रहेगा ।

अन्तरिक्ष की अनन्त गहराइयों में झाँकता मानवीय प्रतिबिम्ब

कोई ६ दशक पूर्व की बात है, विश्वविख्यात नक्षत्रविद् डॉ. हवल अपने दूरदर्शी स्पेक्ट्रोमीटर पर सुदूर नक्षत्रों से आने वाले प्रकाश के वर्णक्रम का अध्ययन करते थे । सूर्य का श्वेत प्रकाश सात रंगों के मेल से बना है । स्पेक्ट्रोमीटर एक ऐसा यन्त्र है, जिसमें एक त्रिपार्श्व काँच लगा रहता है जब प्रकाश की एक किरण को उसमें कुदाया जाता है तो इस काँच के गुण के अनुसार वह अपने सातों रंगों में फूट पड़ता है । इन रंगों के वर्णक्रम से प्रकाश की स्थिति अन्तरंग खनिज स्रोतों की जानकारी भी की जाती है । पर यहाँ जो प्रयोग चल रहा था, उसका प्रयोजन एक आकाश-गंगा की दूरी की जाँच करना था जो उस समय ब्रह्माण्ड की सीमा पर प्रतीत हो रही थी ।

जाँच के समय एक बिल्कुल ही नया तथ्य प्रकाश में आया । वर्णक्रम का लाल रंग निरन्तर सरकता और क्षीण होता प्रतीत हो रहा था, जिसका अर्थ था कि आकाश गंगा परे हट रही है । उससे आने वाला अनहद नाद भी क्रमशः मन्द पड़ता जा रहा था, उससे भी उपर्युक्त तथ्य की ही पुष्टि हो रही थी । इस परिवर्तन को "डॉप्लर प्रभाव" की संज्ञा दी गई और एक नये दर्शन ने जन्म लिया कि ब्रह्माण्ड निरन्तर बढ़ रहा है, यह चौंका देने वाली जानकारी थी, जिसने वैज्ञानिकों के सामने विचार के लिए सैकड़ों प्रश्न छोड़े हैं । प्रश्नों में एक यह भी है कि मानवीय अस्तित्व का उद्गम क्या है, क्या वह बुदबुदों की तरह से मात्र बनते-बिगड़ते रहने वाला रासायनिक अस्तित्व मात्र है, अथवा उसमें जीवन अमरता के भी कोई द्रव्य विद्यमान हैं ।

अभी कुछ दिन पूर्व एक अन्य वैज्ञानिक डॉ. फ्रेड हायल भारतवर्ष आये थे, विज्ञान भवन में उपर्युक्त प्रश्न का उत्तर देते हुए उन्होंने कहा था—अन्तरिक्ष की गहराइयाँ जितना अनन्त की ओर बढ़ेंगी, उसमें झाँककर देखने से मानवीय अस्तित्व का अर्थ और प्रयोजन उतना ही स्पष्ट होता चला जायेगा । शर्त यह रहेगी हमारा अपना भी विकास और विस्तार हो । यदि हमारी बुद्धि, विचार और ज्ञान मात्र पेट प्रजनन, तृष्णा अहंता तक ही सीमित रहता है तब तो हम पड़ोस भी नहीं जान सकेंगे, पर यदि सबसे पूर्वाग्रह युक्त हों तो ब्रह्माण्ड इतनी खुली और अच्छे अक्षरों में लिखी चमकदार पुस्तक है, कि उससे हर शब्द का अर्थ, प्रत्येक अस्तित्व का अभिप्राय समझा जाता और अनुभव किया जा सकता है ।

ब्रह्माण्ड के निरन्तर विकास का अर्थ यह हुआ कि सृष्टि में जो कुछ भी है, चाहे वह पदार्थ हो, ऊर्जा हो, चुम्बकत्व हो, प्रकाश हो, अथवा विचार सत्ता जो भी स्थूल या सूक्ष्म अस्तित्व में है, वह सब एक ही केन्द्र बिन्दु पर समाहित था । इस सन्दर्भ में भारतीय दर्शन और वैज्ञानिक दोनों की धारणाएँ एक जैसी हैं, प्रारम्भ में एक महापिण्ड था । यह विज्ञान की मान्यता है कि उस महापिण्ड में किसी समय विस्फोट हुआ । विस्फोट से समस्त दिशाओं में आकाश-गंगाओं के रूप में पदार्थ बह निकला, अब तक की शोधों के अनुसार ब्रह्माण्ड में १९ अरब आकाश-गंगायें हैं और हर आकाश-गंगा में १० अरब तारे हैं । एक आकाश-गंगा की परिधि या व्यास लगभग एक लाख प्रकाश वर्ष अर्थात् ३०००० × ६० × ६० × २४ × ३६५$\frac{१}{४}$ प्रकाश की गति × १ मिनट में × १ घण्टे में × १ दिन में × १ वर्ष में = १ से. में कि.मी. ६५२५६०००००००० किलोमीटर दूरी १ प्रकाश वर्ष की हुई, इससे १ लाख गुना बड़ा व्यास अपनी आकाश-गंगा का है, जबकि उसके परिवार के दूर-दूर तक छिटके तारों की दूरी भी अरबों प्रकाश वर्ष में है । अतएव इस भयंकरतम विस्तार का तो कुछ पता नहीं चलता ।

सूर्य और पृथ्वी के बीच की दूरी सवा नौ करोड़ मील है, वहाँ से यहाँ तक प्रकाश आने में सवा ८ मिनट लगते हैं । यदि किसी तारे का प्रकाश पृथ्वी तक ८ हजार वर्षों में आता है, उसका अर्थ यह हुआ कि वह पृथ्वी से ४७ पद्म मील दूर है । लेकिन इन से कुछ तारे तो इतनी दूर हैं कि उनका प्रकाश पृथ्वी तक आने में ही अरबों वर्ष लग जायेंगे अर्थात् उस दूरी का तो अनुमान ही असम्भव है । इस तरह सृष्टि की अनन्त गहराई में अनन्त प्रकृति, अनन्त रूपों में विद्यमान है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भारतीय दर्शन की मान्यता चेतन को मूल मानकर ज्यों की त्यों है, प्रारम्भ में एक ही तत्व परमात्मा पिण्ड रूप में था, उसके नाभि देश से 'एकोऽहं बहुस्याम्' मैं एक हूँ बहुत हो जाऊँ । इस तरह की स्फुरणा, भावना या विचार उठा, इससे वह फट पड़ा और महा प्रकृति की रचना हुई, उसमें सत, रज, तम तीनों गुणों का सम्मिलन था । इन्हीं से सृष्टि में जीवन का निर्माण हुआ और सृष्टि के विस्तार की तरह ही ८४ लाख जीव योनियों का निरन्तर विस्तार होता चला गया । जिस तरह ब्रह्माण्ड विकसित हो रहा है । नाना प्रकार की जीवन सृष्टि का भी विकास होता जा रहा है । यह सब अत्यधिक करुणा मूलक, स्नेहजनक, मातृसंज्ञक रूप में चल रहा है । भौतिक या आध्यात्मिक दोनों ही दृष्टियों से आकाश-गंगायें माता का हृदय कही जा सकती हैं । इनसे एक और भौतिक जगत को आवश्यक जीवन और प्रकाश मिलता है, तो दूसरी ओर जीवन सत्ता उसी से प्राण और पोषण पाती है । ब्रह्माण्ड के समान हमारी सामाजिक व्यवस्थाएँ भी मातृ सत्ता प्रधान बनी रहें तो इन महापिण्डों की सुचारु व्यवस्था शान्ति और सामूहिकता के आधार पर अपने सामाजिक जीवन में भी निःस्वार्थ प्रेम, परोपकार, दया, करुणा, उदारता और सहकारिता का समावेश तथा फल स्वास्थ्य सुख-शान्ति, समृद्धि और सुव्यवस्था प्रतिष्ठित बनी रह सकती है ।

चेतना कहीं भी प्रकृति से भिन्न नहीं है । किसी न किसी अवस्था में दोनों अन्योन्याश्रित हैं, "गिरा अरथ जल बीचि सम कहियत-भिन्न न भिन्न" वाली स्थिति है । यदि दोनों में से कोई इस सन्तुलन को बिगाड़ने का प्रयास करते हैं, वहीं संकट पैदा हो जाता है । महापिण्ड या परमात्मा ने अपनी शक्ति स्वरूपा सहचरी आकाश-गंगाओं को विपुल शक्ति देकर व्यवस्था के लिए भेज दिया । मन्दाकिनियाँ उस अनुदान को प्रत्येक मण्डल के एक-एक मुखिया सूर्य को आवश्यक सम्पदाएँ सौंपती चली जाती हैं । यह सूर्य उन आद्य शक्ति से अपनी माँ से पोषण और बल लेकर अपने समस्त सौर-मण्डल को जीवित और जाग्रत रखते हैं । सबको शक्ति, प्रकाश, गर्मी, वायु, जल, वर्षा, प्रकृति, अन्न आदि देते हैं, इन सबका प्रयोजन चेतना को, इच्छा शक्ति को जीवित रखना ही तो हो सकता है । यदि परिवार संस्थाएँ प्रेम, सद्भावना और सहकारिता के इस चुम्बकत्व को स्वयं भी धारण कर लें विशाल सौर-परिवार की तरह करोड़ों जीवों का समुदाय एकत्र हो जाने पर भी सभी आनन्द और उल्लास का जीवन जीते रह सकते हैं ।

अनेक ग्रह नक्षत्रों का परिवार, जिन्हें अनुशासित, मर्यादित, पोषित और संरक्षित रखने का काम निरन्तर तप कर सूर्य भगवान करते हैं । सौर-परिवार या सौर-मण्डल कहलाता है । सूर्य उन सबका मुखिया है देखने में वह आग का गोला लगते हैं, पर उनमें सोडियम, लोहा, मैग्निशियम, कैल्शियम, आदि सब कुछ है । १८५९ में डॉ. मेघनाद साहा ने अपनी खोजों से यह सिद्ध किया था कि सूर्य के प्लाज्मा में दृश्य जगत का हर तत्व विद्यमान है । लोगों को सूक्ष्म अस्तित्व में भी आत्मिक आनन्द की सभी सामग्री बताई जाती है, तो लोग विश्वास नहीं करते । उनकी स्थूल दृष्टि में दृश्य जगत और स्थूल पदार्थ ही प्रसन्नता के मूल हैं, पर हमारी अनुभूतियाँ जितनी सूक्ष्म और विशाल होती जाती हैं, रस और आनन्द के तत्व भी उसी अनुपात में असीम तृप्ति वाले बनते चले जाते हैं ।

सूर्य ने भी शक्तियों पर एकाधिकार, परिग्रह नहीं किया वह अपनी शक्तियाँ निरन्तर बाँटते रहते हैं, इससे वे रिक्त नहीं हुए वरन् परमात्मा का मातृ हृदय उन्हें यथावत बनाए रखे हैं । जब मनुष्य समाज ने संग्रह का पाप लाद कर कितनी अव्यवस्थाएँ बढ़ा दी हैं, यह हर कोई भली प्रकार अनुभव करता है ।

सूर्य की तरह हर तारे का अपना भी एक परिवार होता है, उसके अपने चन्द्रमा होते हैं, उसका अपना वातावरण होता है उसी के अनुरूप वह शक्ति का आवश्यक अंश ग्रहण करता रहता है । मनुष्य समाज विभिन्न इकाइयों, वर्गों में बँटा रह कर भी यदि नियम व्यवस्था का पालन करते रहें तो वह इस विशाल परिवार की तरह ही जीवन्त और गतिशील, समृद्ध और व्यवस्थित बने रह सकते हैं । उन्हें अपने को एकाकी और अधिकतम अधिकार, स्वेच्छाचारिता की प्रवंचना नहीं बरतनी चाहिए अन्यथा इकोरस जैसे उन क्षुद्र ग्रहों की तरह, जो मर्यादाएँ तोड़ कर स्वच्छन्द निकल पड़ते हैं, न केवल दूसरों को डराते और भयभीत करते रहते हैं, अपितु स्वयं भी लड़-लड़कर टूटते (उल्कापात इन्हीं क्षुद्र ग्रहों का होता है) रहते हैं । आकाश में जाने वाले उपग्रहों को इनसे बचाने की खास सावधानी बरतनी पड़ती है । जेलें, पुलिस और दण्ड विधान ऐसे ही स्वेच्छाचारियों के लिए हैं, जिन्हें सामाजिक और पारिवारिक मान-मर्यादाएँ प्रिय नहीं होतीं ।

परम ब्रह्माण्ड से लेकर मन्दाकिनी परिवारों के विराट् जगत, सौर-मण्डल, तारा-मण्डल से लेकर प्रकृति के सूक्ष्म परमाणु तक सर्वत्र नियम, क्रम-व्यवस्था और अनुशासन हैं । यह तत्व शान्ति और प्रगति के मूल आधार हैं, उनकी उपेक्षा कहीं भी उचित और सह्य नहीं, ब्रह्माण्ड का यह विधान समान रूप से मनुष्य जीवन पर भी लागू है ।

तारों को एक प्रकार से ताप-नाभिकीय भट्टियों की संज्ञा दी जा सकती है, इस उच्च ताप में ही तत्वों का निर्माण होता रहता है, किन्तु कहीं भी विखण्डन की स्थिति नहीं आती अन्यथा महाविस्फोट हो जाय और किसी भी एक तारे की मर्यादा भंग से सारी सृष्टि का सर्वनाश हो सकता है । सामाजिक व्यवस्था की दृष्टि से जिन्हें बड़े उत्तरदायित्व, जिम्मेदारियाँ दी जाती हैं । उन्हें असीमित अधिकार देने की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

परम्परा प्रकृति में भी है । मनुष्य समाज में भी प्रकृति अपना सन्तुलन निरन्तर बनाये हुए है । इसी से संसार में सुव्यवस्था कायम है, जबकि मनुष्य इन अधिकारों का हनन करके अपने लिए देश, समाज, संस्कृति सभी के लिए संकट पैदा करता रहता है । शेक्सपियर ने सम्भवतः इसी तथ्य की ओर संकेत करते हुए जूलियस सीजर में लिखा है—"दोष अपने तारों में नहीं स्वयं मनुष्य में है ।"

ब्रह्माण्ड की गति और विस्तार का क्रम सर्वत्र एक-सा है, हर ग्रह-नक्षत्र अपनी धुरी पर घूमता है । पृथ्वी २४ घण्टे में अपनी एक परिक्रमा पूरी करती है जबकि चन्द्रमा ३३६ घण्टे में । अर्थात् वहाँ के दिन और रात में हमारी पृथ्वी के दिन व रात से १४ गुने बड़े दिन और १४ गुनी बड़ी रात । बुध की परिस्थितियाँ भिन्न हैं, अर्थात् उसका एक भाग निरन्तर सूर्य की ही ओर बना रहता है, दूसरा अन्धकार में पर अपने आप में । गतिशील वह भी है हम समझते हैं । सूर्य स्थिर है, पर ऐसा नहीं । वह भी १ सेकण्ड में १३ मील की गति से घूमता है, मन्दाकिनियाँ भी अपने सौर-परिवारों को लेकर किसी विराट् परिक्रमा में संलग्न हैं, अपनी "स्पाइरल" आकाश-गंगा की स्वयं की गति २०० मील प्रति सेकण्ड है । इसी तरह ब्रह्माण्ड १५० मील प्रति सेकण्ड की गति से विकसित हो रहा है । यह गति हर जगह है । इसी तरह प्रत्येक व्यक्ति को अपनी एक आचार संहिता ऐसी निर्धारित करनी चाहिए, जिससे समाज में गतिशीलता तो रहे पर किसी की सीमा और किसी के अधिकारों का अतिक्रमण न हो । हर ग्रह अपने मुखिया की परिक्रमा में लगा है । हर चन्द्रमा अपने ग्रह का, ग्रह सौर-परिवार का, सौर-मण्डल मन्दाकिनियों की परिक्रमा करते और मनुष्य को अपने देश, जाति, समाज के प्रति कर्तव्यनिष्ठ बने रहने की प्रेरणा देते रहते हैं ।

सृष्टि निरन्तर विकसित हो रही है । ब्रह्माण्ड फैल रहा है, कहने को तो हम सबके साथ भी ऐसा ही हो रहा, कह सकते हैं, पर यह फैलाव भौतिक दिशा में ही हो रहा है । जिस तरह प्रकृति विरल होते हुए निरन्तर विकसित हो रही है, अपनी भावनाओं से, तात्विक दृष्टि से अपनी आत्मा का भी विस्तार आवश्यक है । मनुष्य जीवन की सम्भावनाएँ अनन्त और अपार हैं । ठीक ब्रह्माण्ड की तरह यदि प्रकृति के प्रत्येक प्रस्ताव को हम अपने जीवन में धारण कर सकें तो हमारा जीवन ब्रह्माण्ड जैसा ही विराट् हो सकता है । अनन्त अन्तरिक्ष एक दर्पण है । हमें उसमें अपना प्रतिबिम्ब निरन्तर देखते रहना चाहिए, ताकि शरीर पर लगे दाग-धब्बे छुटाये जाते रह सकें, अपना शरीर, मन अपनी भावनाएँ पवित्र की जाती रहें, जिससे हम भी ब्रह्माण्ड जैसे ही महान्, सुन्दर और सुखी बन सकें ।

विराट् जगत में मनुष्य की हस्ती ही क्या है ?

व्यक्ति अपने सम्बन्ध में न जाने किन-किन भ्रान्तियों और अतिरंजित मान्यताओं की कल्पना किए रहता है । इस तरह की मान्यताओं और धारणाओं के पीछे अपने आपको सर्वश्रेष्ठ, सबसे सही, सबसे प्रामाणिक और सबसे ऊँचा मानने का मिथ्याभिमान ही है । कोई व्यक्ति अपने सम्बन्ध में क्या धारणाएँ रखता है और उनके सन्दर्भ में दूसरों से क्या अपेक्षा रखता है ? यही उसे सुखी अथवा दुःखी बनाता है । उदाहरण के लिए कोई व्यक्ति अपने को सर्वाधिक योग्य समझता है तो स्वाभाविक ही उसकी यह आकांक्षा रहती है, कि दूसरे लोग उसकी योग्यता का लोहा मानें और उसे सम्मान दें । अपनी योग्यता और क्षमता का गुमान अथवा मिथ्याभिमान कुछ अधिक ही अपेक्षाएँ करने लगता है, और जब वे अपेक्षाएँ पूरी नहीं होतीं, तो दुःखी, क्लान्त तथा उदास होता है ।

इस तरह की मनःस्थिति को बड़े-चढ़े अहं के सिवा कुछ नहीं कहा जा सकता । अहंकार का एक रूप यह भी है कि व्यक्ति परिस्थितियों और संसार के घटना-क्रमों में अपने को केन्द्र मानकर उनकी समीक्षा करता है । कोई घटना या परिस्थिति मन को खिन्न करने वाली है, तो यह संसार नर्क, नीच और निकृष्ट है तथा अनुकूल है तो स्वर्ग, श्रेष्ठ और महान् है । वस्तुतः ऐसा कुछ नहीं होता । परिस्थितियाँ, जिन्हें प्रवाह कहा जा सकता है और जो अपने ढंग से बनती व बहती हैं, किसी व्यक्ति विशेष को दृष्टिगत रखते हुए नहीं चलतीं । व्यक्ति का अपनी दृष्टि में कितना ही मूल्य क्यों न हो, पर विराट् जगत को देखते हुए उसका अस्तित्व समुद्र में एक बूँद के बराबर भी नहीं है ।

इस पृथ्वी पर ही, जिस पर हम निवास करते हैं, हमारे जैसे चार अरब दूसरे लोग भी रहते हैं । मनुष्यों के अतिरिक्त छोटे-बड़े कीड़े-मकोड़ों से लेकर विशालकाय प्राणियों की संख्या तो गिनी ही नहीं जा सकती । इतने विराट् प्राणी, परिवार और उसके असंख्य सदस्यों में एक व्यक्ति या एक घटक का क्या अस्तित्व हो सकता है और क्या महत्त्व ? ऐसा नहीं है कि कोई भी व्यक्ति नितान्त मूल्यहीन और महत्त्वहीन है । लेकिन अपना मूल्यांकन समग्र जगत को दृष्टिगत रखते हुए करना चाहिए और उसी के अनुरूप परिस्थितियों की समीक्षा करनी चाहिए, यदि इतना किया जा सके तो इस संसार में सुखी रहने के असंख्यों आधार हैं ।

इस विराट् जगत के नियम और रहस्य समझ पाना अभी तक किसी के लिए सम्भव नहीं । इसलिए उन्हें अपने अनुकूल बनाने या स्वयं को उनके अनुरूप ढालने की बात ही नहीं सोची जा सकती । रास्ता एक ही है कि उपलब्ध परिस्थितियों में सन्तुष्ट रहा जाय तथा उन्नति के लिए शक्ति भर प्रयास किया जाय । अपने सम्बन्ध में बनाई गई

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

धारणाओं और मान्यताओं में कितनी सच्चाई है, यह इस जगत के विराट् स्वरूप को देखने, समझने के बाद स्पष्ट हो जाना चाहिए । जब इस विराट् जगत के वास्तविक स्वरूप को ही अभी नहीं समझा जा सका तो किस आधार पर उसमें अपना स्थान एवं अस्तित्व अपनी कल्पना के अनुरूप महत्त्वपूर्ण बनाया जा सकता है । इस विराट् जगत के सम्बन्ध में अब तक जो जानकारियाँ प्राप्त की जा सकी हैं, यद्यपि वे पूर्ण नहीं हैं फिर भी वे बहुत चमत्कारी, आश्चर्यजनक और अद्‌भुत हैं । उदाहरण के लिए जिस पृथ्वी पर हम रहते हैं, वही कम रहस्यों और चमत्कारों से भरी हुई नहीं है ।

आदिकाल से मनुष्य पृथ्वी के रहस्यों को जानने के लिए प्रयत्न करता रहा है । उसने अपने इन प्रयत्नों में काफी सफलता भी प्राप्त की है, फिर भी समुद्र की अथाह सम्पदा उसकी रहस्यमय गहराइयों के साथ अज्ञात, अगम्य बनी हुई हैं । समुद्र तो पूरी पृथ्वी के तीन चौथाई हिस्से में फैला हुआ है । एक चौथाई पृथ्वी पर जहाँ आबादी और वृक्ष, वनस्पतियाँ हैं, वही अभी पूरी तरह मनुष्य के जानने में नहीं आयी हैं । पृथ्वी ऊपर जिस तरह की दिखाई देती है, अन्दर वैसी नहीं है । इसकी ऊपरी पर्त लगभग ४० मील मोटी है जिसमें मिट्टी, पत्थर, कोयला तथा अनेक प्रकार के खनिज पदार्थ हैं । इस पर्त के नीचे भूरस नामक एक तरल पर्त है, जिस पर ऊपरी पर्त तैरती रहती है । यह पर्त पिघली हुई गर्म चट्टानों की है । स्मरणीय है पृथ्वी आरम्भ में सूर्य के समान आग का तपता हुआ गोला थी । वैज्ञानिकों की मान्यता है कि कालान्तर में यह धीरे-धीरे ठण्डी होती गई और इसकी ऊपरी पर्त ठोस बनती गई । अभी ऊपरी पर्त ही जमकर कड़ी हो सकी है जो करीब ४० मील मोटी है । इसके नीचे आज भी गर्म पिघली हुई तरल चट्टानें हैं । उससे भी नीचे वाला ७०० मील मोटा भाग शिलावरण कहलाता है, जिसके नीचे लोहे और पत्थर की मिली-जुली पर्तें हैं, जो लगभग ग्यारह सौ मील मोटी हैं । पृथ्वी के ठीक मध्य में ४३ सौ मील मोटा भू-गर्भ है, उसमें अनेक धातुएँ पिघली हुई अवस्था में हैं । अभी इन पर्तों तक पहुँच पाना मनुष्य के लिए सम्भव नहीं हो सका है ।

पृथ्वी के गोलाकार रूप को चादर की तरह फैलाया जाय तो वह १९ करोड़ ७० लाख वर्ग मील स्थान घेरेगी अर्थात् पृथ्वी का क्षेत्रफल १९७० लाख वर्ग मील है । इसमें ५३० लाख वर्ग मील जमीन और १३१० लाख वर्ग मील समुद्र है । शेष भाग में झीलें और टापू हैं । पृथ्वी का ध्रुवीय व्यास ७९ हजार मील तथा विषुवत् वृत्तीय व्यास ७९२७ वर्ग मील है । इसकी परिधि २५ हजार मील है और वजन ६६० खरब करोड़ टन है । अकेले पृथ्वी के सन्दर्भ में ही मनुष्य अपने अस्तित्व और अस्मिता का मूल्य आँके तो इतनी विशाल पृथ्वी पर उसका अस्तित्व कितना बड़ा सिद्ध हो सकता है ? यह तो केवल पृथ्वी की ही बात हुई । पृथ्वी के वायु-मण्डल बाहर निकल कर खोज करने पर सर्वप्रथम चन्द्रमा के दर्शन होते हैं । चन्द्रमा पृथ्वी से करीब २४० हजार मील दूर स्थित है इसका व्यास २१६० मील है । यद्यपि वहाँ जीवन का अस्तित्व तो नहीं है फिर भी पृथ्वी पर से दिखाई पड़ने वाले आकाश के विभिन्न तारकों में वह सबसे सुन्दर दिखाई देता है ।

अपने सौर-मण्डल के सूर्य परिवार के ज्ञात सदस्यों की संख्या नौ है । पृथ्वी उनमें से एक है । इस तथ्य को यों भी कहा जा सकता है कि हमारी पृथ्वी के समान आकाश में और भी पृथ्वियाँ हैं, जिन्हें ग्रह कहते हैं । इन ग्रहों में बुध सूरज के सबसे पास है और यम सबसे दूर । यम आकार में अन्य सब ग्रहों से छोटा है । बुध और यम दोनों की स्थिति एक दूसरे से सर्वथा उल्टी है । बुध सबसे ज्यादा गर्म है तो यम सबसे अधिक छोटा ।

पृथ्वी का निकटवर्ती ग्रह शुक्र है । यह हमारी धरती के पड़ोस में कुल २ करोड़ ६० लाख मील दूर है । इतनी दूरी के बीच में अन्य कोई ग्रह नहीं आता इसलिए उसे ही अपना पड़ोसी ग्रह कहना पड़ेगा । पृथ्वी पर तो एक फर्लांग, एक मील की आठवें भाग की दूरी भी किसी घर को दूरवर्ती और अपरिचित बना देती है, परन्तु अनन्त ब्रह्माण्ड के विस्तार को देखते हुए यह दूरी दो कदम दूर स्थित घर से भी कम कही जायेगी । इस ग्रह का व्यास ७७०० मील माना गया है । पृथ्वी से सूर्य की ओर यात्रा करने पर यही ग्रह सबसे समीप पड़ता है । चूँकि यह पृथ्वी की अपेक्षा सूर्य के अधिक निकट है, इस कारण वहाँ का वातावरण भी पृथ्वी से गर्म है । इतना गर्म कि पृथ्वी का कोई प्राणी वहाँ जाय तो जलकर भस्म हो जाय । इतनी गर्मी में वहाँ जीवन के अस्तित्व की कोई सम्भावना नहीं समझी जाती ।

मंगल, शुक्र के बाद समीप पड़ने वाला ग्रह है । यह पृथ्वी से सूर्य की उल्टी दिखा में यात्रा करने पर आता है अर्थात् मंगल पृथ्वी की अपेक्षा सूर्य से अधिक दूर है । सूर्य से इसकी दूरी १३ से १५ करोड़ मील है । यह पृथ्वी की अपेक्षा काफी ठण्डा है । इसका व्यास करीब ४२२५ मील है । अपने सौर-परिवार में यदि सबसे बड़ा और वजनदार सदस्य है तो वह है—वृहस्पति । यह शेष आठों ग्रहों के सम्मिलित भार से भी अधिक भारी है । पृथ्वी से यह करीब ३२५ गुना वजनदार है तथा व्यास करीब ग्यारह गुना । इस ग्रह के चार उपग्रह हैं या कहा जा सकता है कि वृहस्पति के आकाश में चार चन्द्रमा उगते और चमकते हैं ।

शनि, सूर्य से ८८ करोड़ ६४ लाख मील दूर है । करीब २९ वर्षों में सूर्य का एक चक्कर करता है । सुन्दरता की दृष्टि से इसे सौर-परिवार का सर्वाधिक सुन्दर ग्रह कहा जा सकता है । शनि के बाद वारुणि अथवा यूरेनस आता है, जो सूर्य से १७८ करोड़ मील दूर स्थित है । इसका व्यास ३२ हजार मील है । डेढ़ सौ वर्ष पहले तक तो वैज्ञानिकों को इसका अता-पता ही नहीं था । यह सूर्य की परिक्रमा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

८४ वर्षों में करता है । कहा जा सकता है कि वहाँ का एक वर्ष पृथ्वी के ८४ वर्षों के बराबर होता है । यदि मनुष्य की आयु में वारुणि के समयमान से समझना चाहें तो वारुणि पर रहने की दशा में आदमी जन्म लेने के वर्ष भर बाद ही बूढ़ा होकर मर जाता है । इस ग्रह के पाँच चन्द्रमा हैं । वारुणि के बाद वैज्ञानिकों को वरुण ग्रह दिखायी दिया जो सूर्य से २७९ करोड़ मील दूर है । वहाँ यदि मनुष्य को जीना पड़े तो शायद छः महीने में ही वह बूढ़ा होकर मर जाय, क्योंकि पृथ्वी के मान से वह १६५ वर्ष में सूर्य की परिक्रमा लगाता है अर्थात् पृथ्वी के १६५ वर्ष बराबर होते हैं वरुण के एक वर्ष के । वरुण के बाद अन्तिम ज्ञात ग्रह वरुण है, जिसका पता सन् १९३१ में लगा । अनुमानतः इसका व्यास ४००० मील है और यह तीन सौ वर्ष में सूर्य की परिक्रमा करता है ।

ऐसा नहीं है कि अपने इस सौर परिवार के केवल ५ सदस्य ही हों, हो सकता है और भी कोई ग्रह हों जिनका अभी तक पता नहीं चला हो । लेकिन यदि ग्रहों की संख्या मात्र नौ ही मानी जाय तो भी सूर्य के कुनवे में ग्रहों के अलावा अनेकानेक धूमकेतु हैं । जो ग्रहों के साथ-साथ में धूमकेतु भी सूर्य की परिक्रमा करते रहते हैं । इन धूमकेतुओं में से कुछ तो पाँच वर्ष में ही सूर्य की परिक्रमा कर लेते हैं और कुछ को सैकड़ों वर्ष लग जाते हैं । इन पुच्छल तारों के अलावा अन्तरिक्ष में कई छोटी-छोटी उल्काएँ भी घूमती रहती हैं । कई बार ये उल्काएँ किसी ग्रह के गुरुत्वाकर्षण क्षेत्र में आ जाती हैं और उनके धरातल पर जा गिरती हैं । इसे उल्कापात कहते हैं ।

यह विराट् जगत, ब्रह्माण्ड इतना विस्तृत है कि इसके दो घटकों के बीच की दूरी नाप पाना सरल काम नहीं है, क्योंकि विभिन्न ग्रहों या सितारों के बीच इतनी दूरी होती है, कि उसे संख्या में व्यक्त कर पाना अति दुष्कर है । इसलिए अन्तरिक्ष में दूरी मापने के लिए सरल तरीका अपनाया गया है और वह है प्रकाश वर्ष । प्रकाश एक सेकण्ड में १८६ हजार मील चलता है । एक वर्ष में इस गति से प्रकाश जितनी दूरी तय करता है उस दूरी को एक प्रकाश वर्ष कहते हैं । दूसरे शब्दों में, एक प्रकाश वर्ष करीब ५८८० अरब मील के बराबर होता है । कोई ग्रह या तारा इतनी दूरी पर स्थित है तो उसकी दूरी व्यक्त करने के लिए कहा जायेगा कि यह पृथ्वी से एक प्रकाश वर्ष दूर है ।

ऐसा भी नहीं है कि आकाश में दिखाई देने वाले सभी तारे दो-चार या दस-पाँच प्रकाश वर्ष दूर हो, इनमें से कई तो सैकड़ों, हजारों और लाखों प्रकाश वर्ष दूर हैं । बहुत से तारे तो लाखों वर्ष पूर्व नष्ट हो चुके पर उनका प्रकाश अभी भी पृथ्वी पर दिखाई देता है ।

अब अनुमान लगाया जा सकता है, कि यह ब्रह्माण्ड कितना विराट् और विस्तृत है ? अपना यह सौर-मण्डल आकाश-गंगा का एक नगण्य-सा घटक है । अपनी इन आकाश-गंगा में लगभग एक खरब सूर्य हैं, जिनके पृथ्वी जैसे असंख्य ग्रह और उपग्रह इन सूर्यों अथवा तारों में से कई तो अपने सूर्य से अनेक गुना बड़े हैं । उदाहरण के लिए व्याध तारा सूर्य से २१ गुना बड़ा है । ज्येष्ठा नामक तारे में अपनी पृथ्वी के बराबर ७०० खरब पृथ्वियाँ समा सकती हैं ।

यह ब्रह्माण्ड कितना बड़ा और कितना फैला हुआ है इसका ठीक-ठीक अनुमान नहीं लगाया जा सकता । लेकिन यह सच है, कि सारा ब्रह्माण्ड एक निश्चित नियम के अनुसार चल रहा है । उसके क्रिया-व्यापार की अपनी मर्यादाएँ हैं । उन मर्यादाओं के आगे, उस विराट् के आगे मनुष्य की क्या बिसात ? वह तो हाथी के सामने चींटी बराबर की हस्ती भी नहीं रखता । स्थूल अर्थों में यह सच है, कि मनुष्य इस सृष्टि का नगण्य, नगण्य भी नहीं, कुछ हस्ती वाला घटक है । उसके अहं आधार पर मिथ्या ही नहीं अपने आपके साथ प्रवंचनापूर्ण भी है ।

लोकोत्तर जीवन श्रद्धाभूत ही नहीं विज्ञान-भूत भी

महर्षि उद्दालक ने अपने पुत्र श्वेतकेतु को महर्षि चित्र का यज्ञ सम्पन्न कराने को भेजा । चित्र स्वयं महान् विद्वान थे, उन्होंने श्वेतकेतु से जीवात्मा की गति सम्बन्धी कुछ प्रश्न किए । किन्तु श्वेतकेतु से उन प्रश्नों का उत्तर न बन पड़ा । उन्होंने कहा—"हमारे पिताजी, अध्यात्म-विद्या के पण्डित हैं, उनसे पूछकर उत्तर दूँगा ।"

श्वेतकेतु पिता उद्दालक के पास आये । सारी बात कह सुनाई । महर्षि चित्र ने जो प्रश्न किए थे, वे भी सुनाये । किन्तु उद्दालक स्वयं भी उन बातों को नहीं जानते थे, इसलिए उन्होंने श्वेतकेतु से कहा—तात्, तुम स्वयं चित्र के पास जाकर इन प्रश्नों का समाधान करो । प्रतिष्ठा का अभिमान नहीं करना चाहिए । विद्या या ज्ञान छोटे बालक से भी सीखना चाहिए ।

श्वेतकेतु को अपने पिता की बात बहुत अच्छी लगी । वे चित्र के पास निरहंकार भाव से गए और विनीत भाव से पूछा—"महर्षि हमारे पिताजी भी उन प्रश्नों का उत्तर नहीं दे सकते । उन्होंने आपसे ही वह विद्या जानने को भेजा है ।" तब चित्र ने विनीत श्रद्धा से प्रसन्न होकर जीवात्मा की परलोक गति का विस्तृत अध्ययन कराया । कौषीतकि ब्राह्मणोपनिषत में महर्षि चित्र ने जीव की गति और लोकोत्तर जीवन की व्याख्या करते हुए लिखा है—

"तनेतं देवयजनं पन्थानमासाद्याग्नि लोक भागच्छति । स वायुलोकं स वरुण लोकं स आदित्यलोकं स इन्द्रलोकं स प्रजापति लोकं स ब्रह्मलोकम् । तं ब्रह्मा ह्याभिधावत् मम यशभा वरजां पालयन्नदीं प्रापं न वाऽयंजिगीष्यतीति ।"

—कौषीतकि ब्राह्मणोपनिषत् /३/

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अर्थात् जो परमेश्वर की उपासना करता है, वह देवयान मार्ग द्वारा प्रथम अग्निलोक को प्राप्त होता है । फिर वायु-लोक में पहुँचता है, वहाँ से सूर्य-लोक में गमन करता, फिर वरुण-लोक में जाकर इन्द्र-लोक में में पहुँचता है । इन्द्र-लोक से प्रजापति-लोक, प्रजापति-लोक से ब्रह्म-लोक को प्राप्त होता है । इस ब्रह्म-लोक में प्रविष्ट होने वाले मार्ग पर 'आर' नामक एक वृहद् जलाशय है । उससे पार होने पर काम-क्रोध आदि की उत्पत्ति द्वारा ब्रह्म-लोक प्राप्ति की साधना और यज्ञादि पुण्य कर्मों को नष्ट करने वाले 'येष्टिह' नामक मुहूर्ताभिमानी देवता निवास करते हैं, उनसे छुटकारा मिलने पर विरजा नाम की नदी मिलती है, जिसके दर्शन-मात्र से वृद्धावस्था नष्ट हो जाती है । इससे आगे इला नाम की पृथ्वी का स्वरूप इह्म नामक वृक्ष है, उससे आगे एक नगर है, जिसमें अनेकों देवता निवास करते हैं । उसमें बाग-बगीचे, नदी-सरोवर, बावड़ी, कुएँ आदि सब कुछ है..... ।

इन आख्यानों को आज का प्रबुद्ध समाज मानने को तैयार नहीं होता । उन्हें काल्पनिक होने की बात कही जाती है । सम्भव है उपर्युक्त कथन में जो नाम प्रयुक्त हुए हों, वह काल्पनिक हों पर आज का विज्ञान यह तो स्पष्ट मानने को तैयार हो गया कि पृथ्वी के अन्यत्र लोक भी हैं, वहाँ भी नदियाँ, पर्वत, खार-खड्ड, प्रकाश, जल, वायु, ऊष्मा आदि हैं । चन्द्रमा के एक पर्वत का नाम शैलशिखर रखा गया है । इस तरह के अनेक काल्पनिक नाम रखे गए हैं । मंगल के चित्र में कुछ उभरती हुई रेखाएँ दिखाई दी हैं, जिनके नहर या सड़क होने का अनुमान लगाया जाता है । यदि इस तरह का विज्ञान अन्य लोकों में सम्भव है, तो वहाँ भी सभ्य और सांस्कृतिक जीवन हो सकता है । इसमें सन्देह की गुंजाइश नहीं रह जाती ।

अब तक जो वैज्ञानिक खोजें हुई हैं, उनमें बताया गया है कि हमारी आकाश-गंगा में लगभग १०००००००००० नक्षत्र हैं । ग्रह परिवारों से युक्त नक्षत्रों की संख्या १०००००००००० है । जीवों के निवास योग्य ५००००००००० नक्षत्र हैं, जिनमें जीव हैं उन ग्रहों की संख्या २५००००००००० बतायी जाती हैं । ऐसे ग्रह जिनके प्राणी काफी समुन्नत हो चुके हैं, उनकी संख्या ५००००००००० है । जिन ग्रहों के जीव संकेत भेजना चाहते हैं और जिनके संकेत भेज रहे हैं, उनकी संख्या क्रमशः १०,००००००० और १००००००० है । यह आँकड़े ब्रिटेन के प्रसिद्ध अन्तरिक्ष शास्त्री 'डेस्मांड किंग हेली' द्वारा विस्तृत अध्ययन, खोज और अनुमान के आधार पर प्रस्तुत किए गए हैं ।

कुछ ग्रह ऐसे हैं, जहाँ जल व ऑक्सीजन की मात्रा इतनी कम है कि वहाँ जीवन की कल्पना ही नहीं की जा सकती । चन्द्रमा का धरातल दिन में इतना गर्म रहता है कि धातुएँ पिघल जायें, इसलिए किसी मानव जैसे देहधारी का वहाँ होना नितान्त असम्भव है । इसी तरह रात में चन्द्रमा का तापमान शून्य से भी बहुत नीचे गिर जाता है, इसलिए भी प्राणियों का अस्तित्व का होना सम्भव नहीं दिखायी देता । चन्द्रमा का एक दिन पृथ्वी के सात दिन के बराबर होता है, इतने लम्बे समय तक सूर्य की 'अल्ट्रावायलेट' किरणों को सहन करना मानव शरीर के वश की बात नहीं । शुक्र ग्रह की स्थिति भी ऐसी ही है, कि वहाँ जीवन की सम्भावना नहीं हो सकती ।

किन्तु कुछ ऐसे कारण और परिस्थितियाँ भी हैं, जिनसे सौर-मण्डल के कुछ ग्रहों में जीवन होने का स्पष्ट प्रमाण मिल जाता है । यह हम सब जानते हैं कि पदार्थ समान परिस्थिति के अणुओं से मिलकर बनता है । अणु ही शरीर रचना के आधार पर होते हैं । वैज्ञानिकों को इन बातों के प्रमाण मिले हैं कि जिस तरह के अणु पृथ्वी में पाये जाते हैं, उस तरह के अणु लाखों मील दूर के ग्रहों में भी विद्यमान हैं । वह शरीर रचना की स्थिति में होते हैं । अलबत्ता चेतनता उन ग्रहों में पहुँच कर उन अणुओं से बने शरीर के कारण ज्ञान, आत्म-सुख, सन्तोष, शान्ति आदि की परिस्थितियाँ पृथक अनुभव कर सकती हैं । उनके बोलने और समझने के माध्यम अलग हो सकते हैं । शरीरों की आकृति भी भिन्न हो सकती है । चूँकि प्राकृतिक नियम और रासायनिक तत्व ब्रह्माण्ड के सभी ग्रहों पर अपरिवर्तित रहते हैं, इसलिए वैज्ञानिकों को यह भी आशा है, कि रासायनिक तत्वों के मिश्रण से जैसी चेतनता तथा प्रतिक्रिया पृथ्वी पर अनुभव होती है, वैसी कल्पना से परे दूरियों पर बसे अगणित ग्रहों पर भी अवश्य होती होगी ।

इटली के ब्रूनो कहते थे—"असंख्य ग्रहों पर जीवन का अस्तित्व है । विश्व में जीवन की अभिव्यक्ति असंख्य और अलग-अलग रूपों में हैं । किसी ग्रह के निवासियों के हाथ पाँच, सात किसी के पाँव नहीं होते होंगे । कहीं दाँतों की आवश्यकता न होती होगी, कहीं पेट की । आकृतियाँ कहीं-कहीं कल्पनातीत भी हो सकती हैं । पृथ्वी अनन्त विश्व में एक छोटे से कण के बराबर है । यह सोचना हास्यास्पद है कि केवल पृथ्वी पर ही बुद्धि वाले जीव रहते हैं ।"

बाद में इंग्लैण्ड के न्यूटन, जर्मनी के कैपलर और लैब्नीत्सा, गैलीलियो रूस के लोमोनासोव फ्रांस के देकार्त और पास्कल आदि ने भी स्वीकार किया कि ब्रह्माण्ड के ग्रहों में जीवन है । वे वेदों के इस विश्वास को भी मानने को तैयार थे कि पृथ्वी से दूर आकाशीय पिण्डों में जीव की कर्मगति के अनुसार पुनर्जन्म होता है । यह जन्म कुछ समय के बाद भी हो सकते हैं और लम्बे समय के बा.. ी । मनुष्य अपने सारे जीवन के बाद मृत्यु के क्षणों तक जैसी मानसिक स्थिति विकसित कर लेता है, उसका प्राण शरीर और कारण शरीर भी उसी के अनुरूप परिवर्तित हो जाता है । फिर जहाँ उस शरीर के अनुरूप परिस्थितियाँ होती हैं, वह उसी आकाश पिण्ड की ओर खिंच जाता है और वहाँ सुख-दुःख

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की वैसी ही अनुभूति करता है, जिस तरह कि इस भौतिक जगत में ।

सम्पूर्ण विश्व ब्रह्माण्ड मनुष्य शरीर की तरह ही एक स्वतन्त्र पिण्ड जैसा है, उसमें जीवों की गति उसी प्रकार सम्भव है, जिस तरह शरीर में अन्न-कणों की गति होती है ।

अब इस मान्यता का खण्डन करना सम्भव हो गया है, कि अन्य ग्रहों की तापमान की स्थिति में प्राणी का रहना सम्भव नहीं । यह ठीक है कि शरीर का जो स्वरूप (हाथ-पाँव, नाक-मुँह, पेट आदि) पृथ्वी पर है, वह अन्यत्र न हो । वातावरण के तापमान और दबाव की स्थिति में भी जीव प्राणी अपने आपको वातावरण के अनुकूल बना लेते हैं । इस दृष्टि से वृहस्पति, शनि, यूरेनस (उरण), नेपच्यून (वरुण), प्लूटो (यम) आदि ग्रहों को देखें तो जान पड़ता है कि वहाँ जीवन नहीं है वहाँ मीथेन गैस की अधिकता है । वृहस्पति ग्रह पर घने बादल छाये रहते हैं ।

बादलों का विश्लेषण करने पर वैज्ञानिकों ने पाया, उनमें हाइड्रोजन का सम्मिश्रण रहता है । अमोनिया और मीथेन गैसें भी अधिकता से पायी जाती हैं । बादलों में सोडियम धातु के कण भी पाये जाते हैं, इससे वृहस्पति के बादल चमकते हैं । इन परिस्थितियों में यद्यपि जीवाणुओं की शक्ति नष्ट हो जाती है, पर जिस तरह पृथ्वी पर ही विभिन्न तापमान और जल-ऊष्मा की विभिन्न स्थितियों में मछली, साँप, मगर, कीड़े-मकोड़े, वनस्पति, फल-पौधे, स्तनधारी गोलकृमि और टारडीग्राडों जैसे जीव पाये जाते हैं, तो अन्य ग्रहों पर इस तरह की स्थिति सम्भाव्य है और इस तरह सूर्य, चन्द्रमा आदि पर भी जीवन सम्भव हो सकता है, भले ही शरीर की आकृति और आकार कुछ और ही क्यों न हो ?

इस तथ्य की पुष्टि में अमेरिका वैज्ञानिक मिलर का प्रयोग प्रस्तुत किया जाना आवश्यक है । मिलर ने एक विशेष प्रकार के उपकरण में अमोनिया, मीथेन, पानी और हाइड्रोजन भर कर उसमें विद्युत-धारा गुजारी । फिर उस पात्र को सुरक्षित रख दिया गया । लगभग १० दिन बाद उन्होंने पाया की कई विचित्र जीव-अणु उपज पड़े हैं, कुछ तो 'एमीनो एसिड' थे । इससे यह सिद्ध होता है, वातावरण की विभिन्न परिस्थितियों में विभिन्न प्राणियों का जीवन होना सम्भव है । यह भी सम्भव है कि उनमें से कुछ इतने शक्तिशाली हों, कि दूर ग्रहों पर बैठे हुए अन्य ग्रहों जिन में पृथ्वी भी सम्मिलित है के लोगों पर शासन कर सकते हैं, उन्हें दण्ड दे सकते हों अथवा उन्हें अच्छी और उच्च स्थिति प्रदान कर सकते हों । लोकोत्तर निवासी पृथ्वी के लोगों को अदृश्य प्रेरणाएँ और सहायताएँ भी दे सकते हैं ।

इस दृष्टि से यदि हम अपने आर्ष ग्रन्थों पर दिए गए सन्दर्भों और अनुसन्धानों को कसौटी पर उतारें, तो यह मानना पड़ेगा कि वे सत्य हैं, आधारभूत हैं । अच्छे-बुरे कर्मों के अनुसार जवात्मा को अन्य लोकों में जाना पड़ता होगा और वहाँ वह अनुभूतियाँ होती होंगी, जो कौषीतकि ब्राह्मणोपनिषद् में दी गई हैं ।

इन वैज्ञानिक तथ्यों को देखते हुए, यदि कोई कहे कि मनुष्यों को शुभ और सत्कर्म करना चाहिए, ताकि वह ऊर्ध्व लोकों का आनन्द ले सके तो उसे हास्य या उपेक्षा की दृष्टि से नहीं, वैज्ञानिक दृष्टि से तथ्यपूर्ण अनुभव करना चाहिए । शास्त्रकार का यह वचन सबके लिए शिरोधार्य होना चाहिए—

सोपानभूतं स्वर्गस्य मानुष्यं प्राप्य दुर्लभम् ।
तथात्मानं समाधत्स्व भ्रश्यसेम पुनयथा ॥

यह मनुष्य शरीर पाना बड़ा दुर्लभ है । बड़े पुण्यों से यह प्राप्त किया जाता है । यह स्वर्ग की प्राप्ति का साधन है, इसलिए इस मनुष्य शरीर को प्राप्त करके इसे शुभ कर्मों में लगाना चाहिए, जिससे अवनति को प्राप्त न हो, पथ-भ्रष्ट न हो ।

जीवात्मा की अमरता को स्वीकार कर हमें भी ऊर्ध्व लोकों (स्वर्ग) और ब्रह्मानन्द की प्राप्ति के प्रयत्न करने चाहिए । सत्कर्मों द्वारा आत्मा को विकसित करना उसका सर्वोत्तम और सरल उपाय है ।

सहकारिता और आदान-प्रदान एक ब्रह्माण्डव्यापी सत्य

सृष्टि चक्र में सर्वत्र अन्योन्याश्रय का सिद्धान्त काम कर रहा है । जड़-चेतन तत्वों से मिलकर बना यह समूचा ब्रह्माण्ड एकता के सुदृढ़ बन्धनों में बँधा हुआ है और हर किसी को दूसरों का सहयोगी तथा दूसरों पर आश्रित होकर रहना पड़ रहा है । यह पारस्परिक बन्धन ही सृष्टि की शोभा सुन्दरता का, उसकी विभिन्न हलचलों का तथा उत्पादन विकास एवं परिवर्तन का उद्गम केन्द्र है । पृथ्वी की आकर्षण शक्ति पदार्थ सम्पदा एवं प्राणी सत्ता को शान्तिपूर्वक रहने और विकसित होने का अवसर दे रही है । अन्तर्ग्रही आकर्षण शक्ति से खींचे बँधे रह कर ही ग्रह-नक्षत्र अपनी-अपनी कक्षाओं और धुरियों पर परिभ्रमण करते हैं । यह तो मोटी जानकारी हुई, वास्तविकता यह है, कि ग्रहों के बीच आदान-प्रदान का क्रम इतनी तीव्र गति से चल रहा है कि मानो विनिमय बाजार की धूम मची हुई हो ।

उत्तरी ध्रुव में होकर अन्तर्ग्रही शक्तियाँ धरती पर अवतरित होती हैं । जितनी आवश्यक होती हैं उतनी पृथ्वी द्वारा पचा ली जाती हैं और अनावश्यक को दक्षिणी ध्रुव द्वारा अन्तरिक्ष में फेंक दिया जाता है । उत्तरी ध्रुव को पृथ्वी का मुख कहा जाता है तो दक्षिणी ध्रुव को मल द्वार । यदि पृथ्वी को अन्तर्ग्रही अनुदानों का आहार न मिले तो उसे भूखे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ही रहना पड़ेगा । इन ध्रुव क्षेत्रों के अतिरिक्त अन्य स्थानों पर भी कितने ही ऐसे छिद्र हैं, जिनके माध्यम से अन्तर्ग्रही आदान-प्रदान का क्रम सुचारु रूप से चलता रहता है । इन्हें रोम कूप अथवा स्वेद छिद्र भी कहा जा सकता है । शरीर इन छिद्रों द्वारा भी साँस लेते और साँस छोड़ते हैं । पृथ्वी पर कितने ही ऐसे छिद्र हैं जिनमें होकर सूक्ष्म ही नहीं स्थूल भी धँसता और निकलता देखा जा सकता है ।

पृथ्वी का ऐसा ही एक रोम छिद्र अटलांटिक महासागर में मियामी के हिस्से में है । यह क्षेत्र त्रिकोण जैसा सैकड़ों वर्ग मील आकार में फैला हुआ है । ५ दिसम्बर, १९४५ की घटना है । अमेरिका वायु सेना के पाँच टी. बी. एफ. अमेरिका बमवर्षक वायुयान प्रशिक्षण उड़ान पर रवाना हुए । ये सभी यान दिशा सूचक यन्त्रों तथा संचार साधनों से सुसज्जित थे, उड़ाके भी काफी अनुभवी और योग्य थे । इस उड़ान का नेतृत्व कर रहे थे, लेफ्टिनेण्ट चार्ल्स टेलर । यान ठीक समय पर उड़े और बमबारी का अभ्यास कर पूर्व निर्धारित मार्ग से वापस लौटने के लिए बढ़ने लगे । इस कार्य में उन्हें लगभग ७० मिनट लगे । २० मिनट बाद पाँचों विमान फोर्टलाउरबेल के उड़ान केन्द्र पर उतरने थे । वहाँ के नियन्त्रण कक्ष पर आशा की जा रही थी कि दो-पाँच मिनट के भीतर ही उड़ान भर रहे विमानों से कोई सम्पर्क स्थापित होगा । नियन्त्रण कक्ष में अधिकारी इसी आशा से यन्त्रों के पास बैठे हुए थे, तभी एक अप्रत्याशित सन्देश मिला जो लेफ्टिनेण्ट चार्ल्स टेलर ने प्रेषित किया था कि हम खतरे में है·····ऐसा प्रतीत होता है कि हम दिशा भटक गए हैं·····फिर बीच में ही आवाज आना बन्द हो गई । नियन्त्रण कक्ष से यह जानकारी चाही गई कि वे लोग कहाँ और किस स्थिति में हैं लेकिन उसका कोई उत्तर नहीं मिला, उल्टे सन्देश आया—'हमें कुछ पता नहीं कि हम कहाँ है—शायद हम खो गए ।' प्रेषित सन्देश में अचरज और घबराहट का स्वर स्पष्ट झलक रहा था । ढाई हजार घण्टों की उड़ान का अनुभव रखने वाले कुशल यान चालक चार्ल्स टेलर की यह घबराहट भरी आवाज कम चिन्ताजनक नहीं थी ।

नियन्त्रण कक्ष से बमुश्किल सम्पर्क स्थापित हुआ और कुछ निर्देश दिए गए तो और भी निराशाजनक सूचनाएँ मिली कि—"हमारे कुतुबनुमा यन्त्र काम नहीं कर रहे हैं·····विमानों में कुछ ही मिनटों का ईंधन शेष है·····दिशा सूचक यन्त्र बेकार हो गए हैं ।" इसके बाद रेडियो सम्पर्क पूरी तरह टूट गया और कुछ ही मिनटों बाद पाँचों बमवर्षकों के खो जाने की घोषणा कर दी गई ।

इन खोये हुए बमवर्षकों को खोजने के लिए कई विमानों ने अविलम्ब उड़ानें भरीं । उनमें सबसे बड़ा विमान था । पी. बी. एम. मार्टिन मैरीनर बमवर्षक विमान । यह विमान नवीनतम आधुनिक यन्त्रों और उपकरणों से सुसज्जित था तथा तेरह अनुभवी एवं दक्ष विमान चालक सवार थे । इस बीच उड़ान नम्बर १९ के लेफ्टिनेन्ट चार्ल्स टेलर तथा कैप्टन स्टीवर की आपसी बातचीत रेडियो पर कुछ देर के लिए सुनायी दी । जिससे कुछ अन्दाज लगाया गया है कि वे पाचों विमान किस क्षेत्र में हैं ।

उसी के अनुसार मार्टिन मैरिनर को निर्देश दिए गए । निर्दिष्ट दिशा में उड़ान का रुख करने के कुछ ही मिनट बाद मार्टिन मैरिनर के एक चालक लेफ्टिनेण्ट कोम ने नियन्त्रण कक्ष को सूचित किया कि, छः हजार फुट के ऊपर हवा के प्रबल झोंके हैं । मार्टिन मैरिनर का यह सन्देश ही अन्तिम सन्देश सिद्ध हुआ और इसके बाद उसका कुछ भी पता नहीं चला ।

इस प्रकार ५ दिसम्बर, १९४५ को एक साथ छह बमवर्षक विमानों के खो जाने की सनसनीखेज घटना एक साथ दुनिया भर के समाचार-पत्रों में छपी । आश्चर्य की बात यह है कि उस समय न तो कोई युद्ध चल रहा था कि शत्रु राष्ट्र उन विमानों का अपहरण कर ले तथा न ही मौसम खराब था कि विमान भटक जायें । छह विमानों के एक साथ खो जाने की यह घटना वायु सेना के इतिहास में अपने ढंग की अनोखी घटना थी । उन खोये हुए विमानों की खोजबीन के लिए व्यापक स्तर पर प्रयास किए गए, पर न कहीं विमानों की पता चला न ही उनके अवशेषों का कोई चिह्न मिला ।

कई सूत्रों से इस बात की पुष्टि हुई कि यह छहों विमान 'डेविन्स ट्रायऐंगिल' क्षेत्र में ही खोये हैं । इससे पूर्व उक्त क्षेत्र में प्रायः जलयानों के ही खोने की घटनाएँ घटी थीं । सर्वप्रथम १८४० में रोत्रेजी नामक फ्रान्सीसी जलयान के खोने का विवरण मिलता है । इसके चालीस वर्ष बाद अंग्रेजी जहाज फ्रिगेट अटलाण्टा, १९०२ में जर्मनी के बार्कक्रिया, १९१८ में अमेरिका जहाज यू. एस. एस. साइक्लॉफ, १९२४ में रायफ्रूक नामक जापानी जलयान तथा इसी प्रकार छोटे-बड़े जलयानों के उस क्षेत्र में खो जाने की घटनाओं के विवरण मिले हैं । उनके सम्बन्ध में तो यह भी मान लिया जाता रहा कि ये जहाज किन्हीं समुद्री तूफानों में फँसकर नष्ट हो गए होंगे, पर जब विमानों के खो जाने और रहस्यमय ढंग से उनके अवशेषों का भी कोई पता न चलने के विवरण सामने आये तो सहज ही विश्वास नहीं करते बनता और न ही उन्हें अविश्वसनीय कहा जा सकता है ।

खासतौर से इसी क्षेत्र में विमान या जलयान क्यों खोते हैं ? इसका कोई स्पष्ट कारण अभी तक खोजा नहीं जा सका है । इतना जरूर है, कि अब तक १०० से अधिक विमानों तथा जलयानों के खो जाने के प्रामाणिक विवरण प्राप्त हुए हैं । किंवदन्तियों के अनुसार तो उनकी संख्या और भी अधिक हो जाती है ।

इस समुद्री क्षेत्र में जो भी जलयान, विमान और व्यक्ति, पहुँच जाते हैं, उनमें से कोई प्रायः वापस नहीं आता । उनके

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कोई अवशेष चिह्न भी कहीं नहीं मिलते । फिर भी कुछ भाग्यशाली व्यक्ति हैं, जो बड़ी मुश्किल से अपने यान को अथवा स्वयं को इस शैतानी पंजे से छुड़ा सके । इन व्यक्तियों द्वारा मिलने वाले विवरण विस्मय विदग्ध कर देते हैं । सन् १९६४ में मियामी की सनलाइन एविएशन नामक कम्पनी के एक विमान चालक चक बेफली को विमान लेकर नासाऊ तक जाना था । चक वेफली अपने यान सहित इस त्रिकोण में फँस गए और सौभाग्य से बचकर अपनी यात्रा पूर्ण कर सके । चक वेफली ने उन संघर्षपूर्ण क्षणों का विवरण इस प्रकार बताया है—"मौसम बहुत बढ़िया और साफ था । रात्रि को ९-३० बजे के करीब एकाएक मुझे अजीब-सी अनुभूति हुई । मुझे लगा कि विमान के पंख एक अजीब-सी रोशनी के साथ चमकने लगे हैं । कुछ ही क्षणों में यह चमक इतनी तेज हो गई कि यन्त्रों को पढ़ने में कठिनाई महसूस होने लगी ।"

"यकायक यान के कुतुबनुमा की सुई तेजी से गोलाई में घूमने लगी । यान के इंजन में ईंधन की स्थिति बताने वाली सुई कभी तो शून्य पर आ जाती और कभी पूरा ईंधन भरा होने का संकेत देती । उस समय मैं अवश किंकर्तव्यविमूढ़ ही रह गया, जब स्वचालित चालक (आटो पायलट) यन्त्र ने यान को दाहिनी ओर मोड़ दिया तथा इसके बाद वायुयान के सभी यन्त्र विचित्र सूचनाएँ देने लगे । किसी प्रकार मैंने स्वयं का इतना सन्तुलन बनाये रखा कि विमान को उड़ाये जा रहा था । चमक इतनी बढ़ गई थी, कि मुझे कुछ भी दिखाई देना बन्द हो गया । फिर भी मैंने अपना सन्तुलन नहीं खोया । थोड़ी देर बाद चमक अपने आप कम होने लगी । जैसे-जैसे चमक कम होती गई वैसे-वैसे यन्त्र ठीक तरह से काम करने लगे ।"

"किसी तरह वायुयान को हवाई पट्टी पर उतारने में सफल हो सका तो मैं तुरन्त उसके निरीक्षण में जुट गया । उस समय मेरे आश्चर्य की सीमा नहीं रही, जब मैंने पाया कि वायुयान की हर चीज बिल्कुल ठीक थी ।"

इसी प्रकार जीवित लौटे जिम रिचर्डसन और दूसरे वायुयान चालकों ने भी अपने रोमांचकारी अनुभव बताये हैं । "उनके यानों में भी इसी प्रकार की गड़बड़ियाँ उत्पन्न हुई—दिशासूचक यन्त्र बिगड़ गया—रास्ता भूल गए—नीचे ऊपर भयंकर धुँध छायी हुई थी और समुद्र में तूफानी लहरें उठ रही थीं । धुंध में कुछ भी दिखाई नहीं पड़ता था । यह संयोग ही कहा जाना चाहिए, कि दिशा ज्ञान न रहने पर भी वापस लौटना और बचना सम्भव हो सका ।"

उक्त क्षेत्र १८४० से जहाजों के लापता होने के विवरण प्राप्त हैं । परन्तु निरन्तर सम्पर्क और सूचनाओं के आदान-प्रदान की व्यवस्था न होने के कारण उन्हें किसी दुर्घटना का शिकार मान लिया जाता रहा । १९४५ से जब विमानों ने इस क्षेत्र में उड़ना आरम्भ किया तो उन्हें वास्तविकता का कुछ आभास होने लगा । इसके बाद तथ्य का पता लगाने के लिए सम्बंन्धित राष्ट्रों की सरकारों ने व्यापक स्तर पर प्रयास किए, लेकिन कुछ भी नहीं पता लगाया जा सका । सन् १९५५ में जापान के वैज्ञानिकों का एक दल उस क्षेत्र में गया । यह दल आधुनिकतम यन्त्रों, सुरक्षा उपकरणों तथा आपात्कालीन व्यवस्थाओं से सुसज्जित "कातिमार फाइव यार" नामक जहाज पर सवार था । इसके बावजूद भी तथ्यों का पता लग पाना तो दूर रहा, उल्टे 'कातिमार' का यह जहाज भी गायब हो गया । बरमूडा क्षेत्र में जहाजों के गुम हो जाने का यह क्रम भी जारी है । कुछ शोधकर्त्ताओं का कहना है, कि बरमूडा त्रिकोण पृथ्वी के उन १२ स्थानों में से एक है, जो पूरी पृथ्वी पर निश्चित दूरियों मान में स्थित है, भौगोलिक कारणों से इन स्थानों पर विशेष चुम्बकीय लहरें पैदा होती रहती हैं और इसी कारण इन यानों के दिशासूचक यन्त्र विद्युत उपकरण गड़बड़ा जाते हैं परन्तु कुछ ऐसी भी घटनाएँ हुईं जिनसे यह व्याख्या अधूरी ही सिद्ध होती है सम्भावना बताई जाती है, कि उन क्षेत्रों में किसी ग्रह का प्रचण्ड गुरुत्वाकर्षण वायुयानों को खींचकर ले जाता है अथवा किसी अन्य ग्रह से प्रवाहित विद्युत धाराएँ विमानों को किसी अन्य ग्रह की ओर धकेल देती हैं ।

वास्तविक कारण चाहे जो भी हों, पर अन्तर्ग्रही आदान-प्रदान की व्यवस्था से इन्कार नहीं किया जा सकता है । विश्व ब्रह्माण्ड के कण-कण में संव्याप्त पारस्परिक निर्भरता या एक-दूसरे से प्रभावित होने के नियम को देखते हुए इसी निष्कर्ष पर पहुँचना पड़ता है कि यहाँ अकेला कोई नहीं है । एकाकी कोई अस्तित्व नहीं है, जो कुछ है, सब सामूहिक है । प्रकृति की इस व्यवस्था में बरमूडा के गुप्त जलयानों को दुर्घटना ही कहा जायेगा, परन्तु अन्तर्ग्रही आदान-प्रदान से होने वाले लाभों की तुलना में वह क्षति एक पैसे बराबर भी नहीं है । सृष्टि के इस रहस्य और निर्देश को समझा जा सके तो प्रगति का वह चक्र अग्रगामी रह सकता है, जिसके आधार पर सुव्यवस्था बनती और स्थायी रहती है ।

हमारा जीवन असीम पर निर्भर है

छोटी परिधि में जीवनयापन की कल्पना अवास्तविक है । कोई सोचता भर रहे, कि हम छोटे से घर परिवार में रह कर दो चार रोटी खाकर जरा-सी आवश्यकताएँ पूरी करते हुए सरल-सा छोटा-सा स्वावलम्बी जीवन जीते हैं । पर यह मान्यता थोड़ी-सी अधिक गहराई में उतर कर विचार करने से गलत सिद्ध होती है । हम अत्यधिक विशाल परिवार के सदस्य हैं और हमारी आवश्यकताएँ इतनी अधिक और इतनी मूल्यवान हैं, कि उनके साधन जुटाने के लिए अतिदूरवर्ती ग्रह-नक्षत्रों को अपनी क्षमता का एक महत्त्वपूर्ण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अंश भेजना पड़ता है । यदि वह अनुदान न मिले तो हमें उतना अभावग्रस्त रहना पड़े कि जीवन को धारण किए रहना भी न बन पड़े ।

अन्न, जल और वायु पर हमारा त्रिविध आहार निर्भर है । मोटे-तौर पर अन्न खेत में, जल कुएँ और हवा आकाश में विद्यमान दीखती है । हवा अनायास ही मिलती रहती है, जल थोड़े प्रयत्न परिश्रम से मिल जाता है और अन्न भी थोड़ा पैसा खर्च करने या कृषि क्रिया करने से मिल जाता है । पर इन तीनों की उत्पत्ति का मूल कारण जो परमाणु हैं, उनकी गतिशीलता अदृश्य रेडियो तरंगों पर निर्भर रहती है । यदि वे तरंगें पृथ्वी पर उचित मात्रा में उपलब्ध न हों तो परमाणुओं की जीवन निर्मात्री गतिशीलता समाप्त हो जाय और अन्न, जल, वायु तीनों ही इस रूप में न रह सकें, जिस रूप में इस समय मिलते हैं । तब आधार-विहीन जीवन की स्थिरता भी न रहेगी । मनुष्य तो क्या पशु-पक्षियों और जीव-जन्तुओं का भी जीवन सम्भव न हो और वृक्ष-वनस्पतियों का स्वरूप यदि बन भी गया तो वह वर्तमान स्वरूप से सर्वथा भिन्न अत्यन्त भोंड़े और विकृत रूप में ही शेष रहेगा । उस स्थिति में पृथ्वी धीरे-धीरे अन्य ग्रहों की तरह निर्जीव होती चली जायेगी ।

धरती पर जीवनोपयोगी परिस्थितियों का आधार जिन रासायनिक हलचलों और आण्विक गतिविधियों पर निर्भर है । वे अन्तरिक्ष से आने वाली रेडियो तरंगों पर अवलम्बित हैं । शक्ति के स्रोत उन्हीं में हैं । विविध विधि हलचलों की अधिष्ठात्री इन्हीं को कहना चाहिए । हमारा परिवार, हमारा शरीर, हमारा अस्तित्व सब कुछ प्रकारान्तर से इन रेडियो तरंगों पर निर्भर हैं, जिन्हें हम आत्मा की तरह जानते भले ही नहीं, पर निश्चित रूप से अवलम्बित उन्हीं पर हैं । जीवन लगता भर अपना है । पर उसमें समाविष्ट प्राण इसी अदृश्य सत्ता पर निर्भर हैं, जिन्हें विज्ञान की भाषा में रेडियो तरंग पुंज कहते हैं ।

चेतन जगत में जिस तरह ब्रह्म की सत्ता व्याप्त है उसी तरह पदार्थों के अस्तित्व और क्रिया-कलाप में इन रेडियो तरंगों की सत्ता प्राण की तरह समाई हुई है । यह तरंगें कहाँ से आती हैं ? क्या यह धरती की अपनी सम्पत्ति या उपज है ? इस प्रश्न का उत्तर विज्ञान इस रूप में देता है, कि धरती के पास जो जीवन सम्पदा है, वह पूरी की पूरी ली हुई है । सूर्य की ऊर्जा धरती पर एक सन्तुलित मात्रा में बिखरती है । रोशनी और गर्मी के रूप में उसे हम अनुभव करते हैं । अप्रत्यक्ष रूप से उसमें जीवन तत्व भी सम्मिलित हैं । सूर्य यदि न हो, अधिक दूर या अधिक पास हो, तो फिर पृथ्वी भी अन्य ग्रहों की तरह किसी प्राणधारी के निवास के लिए सर्वथा अनुपयुक्त बन जायेगी । सूर्य की ऊर्जा को बहुत बड़ा श्रेय इस धरती को जीवन प्रदान करने का है ।

सूर्य से उपलब्ध होने वाली ऊर्जा जिस रूप में पृथ्वी पर आती है, वह भी अकेले सूर्य की सम्पत्ति नहीं है । उसके साथ अन्य ग्रह-तारकों का अनुदान भी मिला-जुला होता है । रेडियो तंरगों का अति महत्त्वपूर्ण भाग तो सूर्य की अपेक्षा अन्य ग्रहों से ही अधिक आता है । पृथ्वी पर विद्यमान रेडियो शक्ति का स्रोत तलाश करने पर उसका उद्गम अति दूरवर्ती क्वासर तारकों में और अति निकटवर्ती 'पल्सर' पिण्डों से आता है । यदि उनका अनुदान बन्द हो जाय तो फिर यहाँ सब कुछ सुनसान ही दिखाई पड़ने लगे और वह अन्न, जल, वायु भी उपलब्ध न हो, जिसे हम तुच्छ और स्वल्प श्रम साध्य समझते हैं । यह वस्तुएँ सस्ती कितनी ही हों पर उनकी उत्पादक क्षमता उन दूरवर्ती अति कृपालु पिण्डों की उदारता पर निर्भर है, जिनके बारे में हम कुछ भी नहीं जानते ।

इस संसार में प्रचुर मात्रा में रेडियो तरंगें बरसाते 'क्वासर' तारक हमारी पृथ्वी से सबसे दूरी पर हैं । इनकी खोज डच खगोल विज्ञानी मार्टिन स्मिड नामक व्यक्ति ने की । कैलीफोर्निया के पालोयर शिखर पर लगी २०० इंच व्यास वाली विशालकाय दूरबीन के आधार पर लम्बे समय तक अनुसन्धान करते रहने पर यह इन तारकों का पता लगाने में समर्थ हुआ ।

क्वासर का प्रकाश पृथ्वी तक आने में १० करोड़ प्रकाश वर्ष लगते हैं । दूरबीनों ने जो कुछ इन तारों के बारे में दिखाया है, वह १० करोड़ वर्ष पुराना दृश्य है । हो, सकता है कि इस बीच वे नष्ट भी हो गए हों और प्रकाश किरणें, उस समय से चलती रह कर अब कहीं धरती तक आ पहुँची हों ।

सन् १९६० में अत्यन्त तीव्र रेडियो तरंगें प्रसारित करने वाले चार तारे देखे गए । यों इनका प्रकाश क्षीण था पर रेडियो तरंगों का प्रसारण अत्यधिक था । पहचानने के बाद उनका नाम क्वासी स्टेलर सोर्सेज (क्वासर) रखा गया ।

रेडियो टेलिस्कोप-एक्स-रे टेलिस्कोप प्रभृति शक्तिशाली यन्त्रों के क्वासर नक्षत्रों के द्वारा पृथ्वी पर आने वाले प्रभावों को जाना गया है और इस निष्कर्ष पर पहुँचा गया है, कि ईथर में संव्याप्त रेडियो तरंगों की प्रस्तुत क्षमता को बहुत बड़ा अनुदान इन क्वासर तारकों से मिलता है ।

क्वासर हमसे बहुत दूर हैं और इतनी अधिक तेजी के साथ हमसे दूर हट रहे हैं, जिसे अकल्पनीय ही कहना चाहिए । क्वासर तारकों में से एक तो २८००० मील प्रति सेकण्ड के हिसाब से हमारी आकाश-गंगा का छोड़कर शून्य आकाश में दौड़ता चला जा रहा है । इन दूरवर्ती क्वासरों के अतिरिक्त इसी प्रयोजन में सहायक निकटवर्ती पल्सर पिण्ड भी हैं । रेडियो किरणें उनसे भी हमें प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होती हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आकाश में छोटे-छोटे कितने ही पिण्ड छितरे पड़े हैं । इन्हें 'पल्सर' नाम से जाना जाता है । इनका व्यास प्रायः १० मील का पाया गया है । अब तक इनकी संख्या ३७ खोजी जा चुकी है और भी रेडियो दूरबीनों की पकड़ में आने वाले हैं । यह सर्वथा सुनिश्चित अवधि के अन्तर से अति तीव्र रेडियो तरंगें छोड़ते हैं । इस अन्तर को एक सेकण्ड के तीसवें भाग से लेकर ३ सेकण्ड तक पाया गया है । इस अन्तर को 'बीच-बीच' की ध्वनि के साथ सुना जाता है । पहले अनुमान था कि किसी अन्य ग्रह के प्राणी एक निर्धारित क्रम प्रक्रिया के साथ टेलीग्राम की डैमी से निकलने वाले 'गरगट्ट' प्रवाह की तरह कुछ सन्देश संकेत भेज रहे हैं । इस सन्दर्भ में भी बहुत खोज हुई, पीछे यह निष्कर्ष निकला कि पल्सर जितने छोटे हैं उतने ही तीव्र रेडियो तरंगों के संचारक भी । पृथ्वी पर फैली हुई रेडियो क्षमता की समर्थता में इनका भी बड़ा हाथ है ।

सन् १०५४ में एक अति भयंकर तारा विस्फोट हुआ । क्रैब नीहारिका के मध्य में हुए इस विस्फोट का, जिसका प्रकाश आकाश के सुदूर क्षेत्र में भारी चमक के रूप में देखा गया । उसका अवशेष सुपर नोवा के रूप में अभी भी मौजूद है । पल्सर उसी के मलवे से बने हैं और वे प्रकाश ही नहीं गामा-किरणें और एक्स-किरणें भी बड़ी मात्रा में धरती पर भेज रहे हैं । देवज्ञ किप थार्न ने इन्हें भीमकाय आकाशी लट्टू बताया है ।

एकाकी जीवन की कल्पना व्यर्थ है । वस्तुतः हम अत्यन्त विशालकाय ब्रह्माण्ड के एक तुच्छ से घटक हैं । जीवन के उद्भव से लेकर उसे गतिशील रखने वाले साधनों के लिए न केवल पृथ्वी पर फैले मंनुष्य, जानवरों और वनस्पतियों पर निर्भर रहना पड़ता है, वरन् अन्तरिक्ष के सुदूर निवासी ग्रहपिण्ड भी हमारी जीवन यात्रा के आधार हैं ।

न हम क्षुद्र हैं न हमारा जीवन छोटा है । यह छोटा कुछ नहीं जो कुछ है सो विराट् और विशाल ही है । हमें अपने को विराट् मानना चाहिए और विशाल दृष्टिकोण रखते हुए विश्व नागरिक का कर्तव्य उत्तरदायित्व को समझना चाहिए । क्षुद्रता नहीं विशालता ही हमारी वास्तविकता है ।

अविज्ञात से डरकर पीछे न हटें वैज्ञानिक

अन्यान्य ग्रहों पर जीवन है, यह तथ्य पूर्णतः सत्य न होने पर भी ऐसे अनेकानेक घटनाक्रम यह सोचने पर मानवी अन्वेषण बुद्धि को विवश करते हैं, कि यदि ऐसा है तो दूसरी ओर से मनुष्य से सम्पर्क साधने का प्रयास क्यों कर किया जाता है ? मात्र मनुष्य ही उनके सम्बन्ध में जानने को उत्सुक हो, यह बात नहीं । उड़नयानों का अचानक प्रकट होकर लुप्त हो जाना व ऐसी घटनाएँ संयोग की सीमा से परे होते रहना इस तथ्य का द्योतक है कि अन्य लोकों के वासी यदि वे हैं, पृथ्वी-वासियों के साथ मिल-जुलकर प्रगति की दिशा में कदम उठाने के उत्सुक हैं । विनाश अथवा पृथ्वी पर कब्जा जमाना उनका लक्ष्य नहीं है ।

अभी तक तो यही कहा जाता रहा है कि ये किवंदन्तियाँ मात्र हैं, किन्तु उड़न तश्तरियों के आवागमन के जो प्रमाण मिले हैं, वे ऐसे हैं कि झुठलाये नहीं जा सकते । सन् १९४७ की गर्मी का एक प्रसंग है, अमेरिका के पश्चिमी तट पर साक्रामेण्टों के समीप मोटरबोट पर बैठे दो तट-रक्षक एच. ए. डुहल तथा फ्रैड क्रैसवेल समुद्र की निगरानी कर रहे थे । अचानक उन्हें आकाश में दो हजार फीट की ऊँचाई पर गोल आकृति की प्रकाशमान छः वस्तुएँ दिखायी दीं जो स्वचालित मशीन जैसी लग रही थीं । एक मशीन मध्य में थी जिसके चारों ओर अन्य पाँचों चक्कर लगा रही थीं । धीरे-धीरे नीचे उतर कर छहों आकृतियाँ ५०० फुट की ऊँचाई पर रुक गईं । डुहल ने उनके फोटो लेने के लिए अपने कैमरे का स्विच दबाया ही था कि अचानक उनकी मोटरबोट की टंकी विस्फोट के साथ फट गई । डर के मारे वे दोनों तुरन्त छलांग लगा कर पास की एक गुफा में घुस गए । पर उनका सहायक एक कुत्ता बाहर ही रह गया और मारा गया । कुछ देर बाद बाहर निकलने पर उन्होंने देखा कि एक तश्तरी नुमा मशीन के चमकीले टुकड़े तट पर बिखरे थे जो अभी भी गर्म थे । नौका में लगे ट्रांसमीटर जाम हो गए थे । वैज्ञानिकों ने उक्त टापू पर फैले २० टन धातु के टुकड़ों को एकत्र करके परीक्षण किया तो ज्ञात हुआ कि ये टुकड़े १६ धातुओं के सम्मिश्रण से बने हैं । जिस पर कैल्शियम की मोटी चादर चढ़ी है । वैज्ञानिकों के लिए यह एक आश्चर्य ही बना रहा कि इन धातुओं में से एक भी धातु पृथ्वी पर नहीं पायी जाती । वे इनके नाम तक बता पाने में असमर्थ रहे ।

धरती पर उड़न तश्तरियों के आवागमन के अनेकों प्रमाण मौजूद हैं । एनिड ओकला होमा के पुलिस स्टेशन में २६ जुलाई, १९५२ को सिड यूनैक नामक एक व्यक्ति ने प्रवेश किया । डर के मारे वह थर-थर काँप रहा था । पुलिस अधिकारी को उसने बताया कि एक उड़न तश्तरी उसका अपहरण करना चाहती थी । वाइसा और वाकोमिस के मध्य ८१ हाइवे पर वह अपनी कार चला रहा था कि एक उड़नतश्तरी बड़े वेग से कार के ऊपर झपटी । इस झपट के कारण हवा का इतना तीव्र झोंका आया कि कार थपेड़ा खाकर सड़क से बाहर जा गिरी । उड़न तश्तरी थोड़ी देर तक कार से चिपकी रही फिर एकाएक आसमान में उड़ गई ।

सन् १९५२ में ही अगस्त माह की १३ तारीख को वाशिंगटन-अमेरिका के आकाश पर एक साथ ६८ उड़न तश्तरियाँ मँडरा रही थीं । अमेरिकी राडार सिस्टम ने भी इन अपरिचित यानों को अंकित किया था । अनेक वैज्ञानिकों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

एवं बुद्धिजीवियों ने भी इसकी पुष्टि की थी । इसी तरह ५ अगस्त, १९५३ को ब्लैकहाक, साउथ डैकोटा में वायुयान चालकों ने रात्रि में आकाश से अपनी ओर आते हुए चमकदार अद्‌भुत वस्तुएँ देखीं । वे उनके यान से दो गुनी गति से उड़ रही थीं । वायु सेना के अड्डे पर स्थित राडार ने इन उड़न तश्तरियों को देखा । पीछा करने पर वे आकाश में कहीं अदृश्य हो गईं ।

१९५४ में पश्चिमी जर्मनी के ऊपर अनेक तश्तरीनुमा प्रकाशवान वस्तुएँ देखी गईं । इनमें से कुछ के वहाँ धरती पर उतरने के भी प्रमाण मिले हैं । जर्मन अन्तरिक्ष विशेषज्ञों ने परखने पर पाया कि ये उड़न तश्तरियाँ बाह्य अन्तरिक्ष के किसी अन्य ग्रह से आती हैं । इनके चालक हमसे अधिक बुद्धिमान एवं उन्नतिशील हैं । जर्मनी के मेयोट हेरलिंक ने अपनी आँखों देखे विवरण में बताया है, कि दिन के प्रकाश में एक तश्तरीनुमा चमकीला यान धरती पर उतरा, जिसमें लगभग साढ़े तीन फीट लम्बा-ठिगना एक व्यक्ति चमकीले सूट पहने और सिर पर पारदर्शी हेलमेट लगाये बैठा था । उसकी पोशाक से नीली रोशनी निकल रही थी । कुछ मिनटों बाद वह व्यक्ति अपना यान लेकर उड़ गया ।

इसी तरह २३ अगस्त, १९५४ को पेरिस से कोई ५० मील दूर वरनान नगर में पुलिस स्टेशन पर कितने ही व्यक्तियों ने, जिनमें सेना का एक इन्जीनियर, दो सिपाही, तीन महिलाएँ एवं वर्नाड माहसरे आदि सबने एक ही प्रकार की रिपोर्ट लिखाई । सभी भिन्न स्थानों पर थे, किन्तु एक ही वस्तु को सबने एक स्थान पर एक जैसा देखा । रात्रि के अँधेरे में बारह बजे के लगभग शहर से डेढ़ फर्लांग दूर १०० गज लम्बी कोई वस्तु आकाश में लटक रही थी । उसमें से हरा प्रकाश फूट रहा था । उसके पैंदे में एक तश्तरीनुमा कोई वस्तु निकली और नदी की ओर गई । वहाँ वर्नाड पर झपट्टा मार कर गायब हो गई । अन्य लोगों ने देखा कि वह बेलनाकार ट्यूब में प्रवेश करने के पश्चात् यान सहित आकाश में ऊपर चली गई । इस रहस्यमय यान की खोज वैज्ञानिक अभी तक नहीं कर पाये हैं ।

६ नवम्बर, १९५७ को रात्रि के ९ बजे थे कि ओटावा के वास्काटांग झील के पास एक उड़न तश्तरी देखी गई जिसकी उपस्थिति के कारण रेडियो की शार्ट एवं मीडियम वेव फ्रीक्वेंसी ने काम करना बन्द कर दिया था । एक इलेक्ट्रॉनिक इन्जीनियर ने अपने रिसीवर को पुनः चालू करने के अनेक प्रयत्न किए पर तीव्र किट-किट की आवाज के अतिरिक्त कुछ न सुनाई पड़ा वह आवाज उड़न तश्तरी के माध्यम से किसी अन्य लोक के नियन्त्रण केन्द्र का संकेत थी या और कुछ इसकी कोई भी जानकारी प्राप्त नहीं की जा सकी ।

एरियल फेनामिना रिसर्च आर्गनाइजेशन के डायरेक्टर श्री कोरल लारेन्जन के कथनानुसार १७ अगस्त, १९५९ को डबरलैण्डिया के पावर हाउस की चार स्वसंचालित चाबियाँ अचानक खुल गईं और पूरे शहर की विद्युत सप्लाई बन्द हो गई । निरीक्षण करने पर पावर हाउस अथवा लाइनों में कोई खराबी नहीं मिली । गहराई से छानबीन करने पर ज्ञात हुआ कि एक विचित्र चमकदार उड़न तश्तरी उसके ऊपर चक्कर काट रही थी, जिससे विद्युत प्रवाह बन्द हो गया था । उसके वहाँ रहने तक बिजली चालू करने के सभी प्रयत्न विफल हो गए थे, किन्तु जैसे ही वह गायब हुई, विद्युत लाइनों में फिर से दौड़ने लगी और सब कुछ पहले जैसा हो गया ।

ऐसे घटना क्रम भारत में भी घटे हैं । जन-संचार माध्यमों की कमी एवं अज्ञानतावश सभी प्रकाश में न आ पाये हों, यह सम्भव है । लगभग बारह वर्ष पूर्व एक ऐसा ही चुम्बकीय तूफान दिल्ली में आया था, जिसमें सड़क पर चलते वाहन मकान की छतों पर पहुँच गए । हाई टेंशन लाइन के भीमकाय स्तम्भ मुड़-तुड़ कर जमीन पर आ गिरे । वैज्ञानिकों ने प्रत्यक्षदर्शियों से चर्चा करने पर पाया कि सभी ने सिगारनुमा एक चमकीला वाहन आकाश में तेजी से जाता उसी अवधि में देखा था । जिन स्थानों पर यह घटना घटी थी, वहाँ अतिसघन परिमाण में रेडियो धर्मिता पायी गई । भौतिकविदों का यही निष्कर्ष था, कि यह अन्य ग्रहों से आया कोई यान ही था, जो तूफान का कारण बन गया ।

अमेरिकी कमाण्डर मैक्लाफलिन ने अपने खोज निष्कर्ष में कहा है, कि उड़न तश्तरियाँ निश्चय ही किसी अन्य ग्रहों से प्रेषित की जाती हैं, जहाँ के निवासी हमसे कहीं अधिक बुद्धिमान हैं । उनके अन्तरिक्ष यान का औसत आकार ४० फीट चौड़ा, १०० फीट लम्बा होता है । २५ हजार मील प्रति घण्टे की तीव्र गति से दो लाख फीट की ऊँचाई तक उन्हें उड़ते देखा गया है । कितने ही बार इन्हें झपट्टा मार कर भी उड़ते देखा गया है । सन् १९६१ में केप कैनेडी अन्तरिक्ष केन्द्र पर उड़न तश्तरी ने इसी प्रकार झपट्टा मारा । १८ जून, १९६३ को कैलीफोर्निया हवाई अड्डे पर उड़ते एक लड़ाकू विमान का उसने पीछा किया । आस्ट्रेलिया तथा लिस्वन की वेधशाला ने भी इनके आक्रमण नोट किए हैं ।

विश्व के अनेक मूर्धन्य वैज्ञानिकों, इन्जीनियरों, रक्षा-विशेषज्ञों, अन्तरिक्ष वैज्ञानिकों आदि ने इस तरह के विभिन्न स्वरूपों और आकारों वाले अद्‌भुत यानों को देखा है । अपना अभिमत प्रकट करते हुए उन्होंने कहा है, कि ये अन्तरिक्षवासी हमसे सम्पर्क बनाने के लिए ही यहाँ आते-जाते रहते हैं । प्रायः देखा गया है कि ये उड़न तश्तरियाँ रक्षा संस्थानों, संचार केन्द्रों, औद्योगिक इकाइयों के इर्द-गिर्द मँडराती हैं और कहीं-कहीं उतरती भी हैं । इससे स्पष्ट होता है कि ये पृथ्वी का सर्वेक्षण करती हैं और यहाँ की प्रगति का रहस्य जानना चाहती हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सांताआना, कैलीफोर्निया में ३ अगस्त, १९६५ को एक उड़न तश्तरी देखी गई । रोड इन्स्पेक्टर रेक्स हैफ्लिन के अनुसार वह बायीं ओर से आकर सड़क पर देर तक इस तरह चक्कर लगाती रही, मानो किसी वस्तु को ढूँढ़ रही हो । इसके बाद दाएँ ओर मुड़कर खेतों का चक्कर लगाने लगी । इसी मध्य रेक्स ने उसकी फोटो खींच ली, जो कई पत्रिकाओं में प्रकाशित भी हो चुकी है ।

१५ अगस्त, १९६६ को नार्थ डेकोटा में एक वायु सेना अधिकारी को रेडियो तरंगों द्वारा सन्देश भेजने में अचानक बाधा का सामना करना पड़ा । खोजबीन करने पर पता चला कि इसी समय गहरे लाल रंग का प्रकाश बिखेरती कोई तश्तरीनुमा वस्तु ऊपर-नीचे उड़ रही थी, जिसकी सूचना राडार ने भी दी थी । थोड़ी देर बाद वह दक्षिण की ओर चली गई और कोई १५ मील की दूरी पर पृथ्वी पर उतर गई । जब उस स्थान पर वायु सेना का एक खोजी दल पहुँचा तो ज्ञात हुआ कि आठ मिनट पहले ही वह वहाँ से गायब हो चुकी थी । इसी बीच दूसरी तश्तरी उत्तर की ओर दिखाई दी । उसे भी राडार ने देखा, पर जब तक खोजी दस्ता उधर दौड़े, वह आँखों से ओझल हो गई ।

इसी तरह कनाडा के समुद्री तट पर तटरक्षकों के अतिरिक्त शाकहार्बर के सैकड़ों निवासियों ने ४ अक्टूबर, १९६७ की शाम को आकाश में कोई चमकदार उड़ती हुई वस्तु देखी । देखते-देखते ही वह समुद्र में जाकर विलीन हो गई । पुलिस कर्मचारी २० मिनट के अन्दर ही उस स्थान पर पहुँच गए परन्तु वे समुद्र के एक स्थान से मात्र पीला झाग ही देख सके । उड़न तश्तरी का कहीं कोई पता नहीं चला ।

अमेरिका के मूर्धन्य रेडियो खगोलवेत्ता प्रो. कोनाल्ड ब्रैसवेल का कहना है, कि उड़न तश्तरियाँ किसी विकसित सभ्यता वाले ग्रह से सूचना यान के रूप में आती हैं । सम्भव है वे यहाँ की स्थिति की जानकारी अपने उद्गम स्थान को रेडियो सन्देशों एवं टेलीविजन चित्रों के रूप में संप्रेषित करती हों ।

एक विचित्र संयोग यह है, कि उड़न तश्तरियों की खोज करने वाले वैज्ञानिकों में से प्रायः सभी की तारीख २४ को मृत्यु होती है । एडवर्ड, क्वीथम, आर्थर, रिचर्ड, फ्रेन्च सकली, पियेंजी सभी इस विषय के शोधकर्त्ता थे । प्रत्यक्षदर्शी विलियम आँखों देखा वर्णन छापने ही वाले थे, कि उनका हार्टफेल हो गया । डॉ. टैमेण्ड ने कुछ विवरण छापे थे, कि वे अचानक लुप्त हो गए, कुछ पता न चला कि वे कहाँ गए ?

कुछ भी हो, ये सभी घटनाक्रम रहस्यों के घेरे में तब तक बने रहेंगे, जब तक सत्य का उद्घाटन नहीं होता । विज्ञान का प्रथम पाठ यह है कि जब तक खण्डन कर सकने योग्य समुचित प्रमाण न मिलें, किसी तथ्य को नकारना नहीं चाहिए । ऐसा न कर अपनी ही बात कहने वाले दुराग्रही-पक्षपाती-हठधर्मी ही कहे जायेंगें । फिर उनमें व पुरातन मान्यताओं की दुहाई देने वाले शास्त्रार्थिओं में अन्तर ही क्या रहा ? विवेकशील का तकाजा है कि हम पूर्वाग्रहों से ग्रसित न होकर सत्य की शोध निरन्तर करते रहें । अन्तर्ग्रही आवागमन की घटनाएँ भी उस अविज्ञात की परिधि में आती हैं, जिसे अभी जाना नहीं जा सका है । पर इसका यह मतलब तो नहीं, कि उनका अस्तित्व ही नहीं है ।

पदार्थ और प्राणियों की सामर्थ्य का उद्गम

पृथ्वी क्या है ? इसका उत्तर रसायन शास्त्री उसका रासायनिक विश्लेषण करके इतना ही कह सकते हैं, कि वह विभिन्न पदार्थ घटकों एवं तत्वों का समुच्चय मात्र है । बड़े ढेले की तरह वह भी इस विशाल ब्रह्माण्ड की एक नन्ही-सी इकाई भर बनकर अपना गुजारा कर रही है ।

जीव विज्ञानी के लिए पृथ्वी की स्थिति अधिक जटिल और रहस्यपूर्ण है । पदार्थ और चेतन के समन्वय से बने हुए प्राणी दृष्टिगोचर तो असंख्यों होते हैं, पर यह विदित नहीं होता कि जीवन का उद्गम स्रोत क्या है ? धरती पर भरा हुआ पदार्थ जिन घटकों से बना है, उनमें हलचल भर है । उनमें जीवन का कोई लक्षण नहीं है । फिर यह जीवन है क्या ? आता कहाँ से है ? पदार्थों के साथ क्यों जुड़ता बिछुड़ता है ? प्राणियों की सत्ता पदार्थ मूलक है या चेतना मूलक है ? आदि प्रश्नों की एक सुविस्तृत शृंखला ऐसी है जिसके सम्बन्ध में चिरकाल से दार्शनिक एवं वैज्ञानिक माथा-पच्ची करते रहे हैं, किन्तु अभी तक किसी निर्विवाद तथ्य तक पहुँच सकना सम्भव नहीं हुआ है ।

विज्ञानियों का कहना है कि पदार्थ ही अमुक परिस्थितियों में जीवन के रूप में विकसित हो जाता है । किन्तु प्रयोगों से अभी तक इस मत की पुष्टि नहीं हुई । विशुद्ध पदार्थ से किसी प्राणी का सृजन सम्भव नहीं हो सका । चेतना का, जहाँ पहले से ही अस्तित्व मौजूद है उसी को घटा-बढ़ाकर रूपान्तरण सम्भव हो सका है । नये सिरे से एक भी जीवाणु की संरचना सम्भव नहीं हो सकी । प्रयोग क्षेत्र की इस निराशा से इस निष्कर्ष पर पहुँचना पड़ता है कि चेतना एक स्वतन्त्र सत्ता है । पदार्थ उसका उपकरण है, उद्गम नहीं ।

अब प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि जीवन यदि स्वतन्त्र है तो उसका धरती पर अस्तित्व किस रूप में है ? अध्यात्म दर्शन के समाधान अलग हैं । पदार्थ विज्ञानी किसी प्रत्यक्ष तथ्य के बिना सन्तुष्ट नहीं हो सकते । उनका अनुमान है, कि जीवन सूर्य का अनुदान है, जो पृथ्वी को अनुग्रहपूर्वक उपलब्ध हुआ है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जीवन है क्या ? इसके उत्तर में तत्व-दर्शन और विज्ञान एक प्रकार से सहमत जैसे दीखते हैं कि जीवन एक प्रकार का विशिष्ट विद्युत प्रवाह है, जिसमें जड़ और चेतन की दोनों विशेषताएँ विद्यमान हैं । इसकी परिकल्पना विचारशील चुम्बकत्व के रूप में की गई है । अध्यात्म भाषा में इसी को प्राण कहा जाता रहा है । प्राण का चेतन पक्ष पदार्थ को अपने चुम्बकत्व से प्रभावित करता है, उस पर अधिकार जमाता और उपयोग करता है । इतने पर भी उसकी निजी सत्ता मौलिक एवं स्वतन्त्र है । वह पदार्थ के वशवर्ती नहीं है ।

प्राण की विवेचना दार्शनिकों ने परब्रह्म की शक्ति प्रवाह के रूप में लगभग वैसी ही की है जैसी कि विज्ञानी पदार्थ की मूल सत्ता परमाणुओं के रूप में नहीं, तरंगों एवं कम्पनों के रूप में मानते हैं । किन्तु विज्ञानी प्रमाण के अभाव में किसी प्रतिपादन को मान्यता नहीं देते । उनका प्रत्यक्षवाद अब तक इतना ही जान सका है, कि जीवन सूर्य से उतरता है और वह पदार्थ को चुम्बकत्व के रूप में और जीवधारियों को संकल्प के रूप में उपलब्ध होता है । पदार्थों में हलचल और प्राणियों के संकल्प की गतिविधियाँ अलग-अलग हैं, फिर भी उनके मध्य बहुत कुछ प्रवाह साम्य देखा जा सकता है ।

जहाँ तक चुम्बकत्व का सम्बन्ध है, उसे कई दृष्टियों से पदार्थ जगत पर छाया हुआ विशिष्ट अनुशासन कह सकते हैं । धरती की भीतरी और बाहरी गतिविधियाँ उसी पर निर्भर हैं । अपनी धुरी पर घूमना, कक्षा में परिभ्रमण करना अनायास ही नहीं होता रहता । इसमें उसका वह चुम्बकत्व ही कारण है जो भीतर से गति उभारता है और उसे अग्रगामी रहने के लिए आगे धकेलता है । पृथ्वी की सूर्य परिक्रमा और उसके परमाणुओं की अन्तःसंरचना में उसी स्तर की भ्रमणचर्या का चलना यह बताता है, कि यह उसी चुम्बकत्व की करतूत है । पृथ्वी के शक्ति प्रवाहों का पर्यवेक्षण करने पर जाना जाता है, कि पृथ्वी एक विशाल चुम्बक है । उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव उसके मध्य केन्द्र हैं । यह चुम्बक ऊपरी पर्त पर ही छाया हुआ नहीं है वरन् उसके अन्तराल में भी भरा पड़ा है, और जब भी उसे अवसर मिलता है ऊपर आकर अपने अस्तित्व का परिचय देता है ।

पिछले दिनों जो ज्वालामुखी पृथ्वी पर फूटे हैं और उनके लावे में लोहे के कण बहकर जम गए हैं । उनमें चुम्बक के वह गुण विद्यमान हैं, जिनसे पृथ्वी के ६००००००० वर्षों तक के चुम्बकीय इतिहास का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है । मारशैक अलेक्जैण्डर ने अपनी पुस्तक में लिखा है, भू-तत्ववेत्ता जितना अधिक ज्ञात करते जाते हैं, उनका यह विश्वास उतना ही पुष्ट होता जाता है, कि पृथ्वी के अनेक रहस्यों का उत्तर चुम्बकत्व में निहित प्रतीत होता है ।

काफी समय तक वैज्ञानिकों की यह धारणा रही है कि चुम्बकत्व का केन्द्र उत्तरी तथा दक्षिणी ध्रुव हैं, किन्तु पिछली शताब्दियों में जिन दिनों नौ सेना का तेजी से विकास हुआ, समुद्रों में तैरने वाले जहाजों ने पाया कि पृथ्वी के विषुवत वृतीय क्षेत्र में जाने पर दिक् सूचक (कम्पास) की सुई बिल्कुल सीधी सिर के बल खड़ी हो जाती है । इस तथ्य की खोज ने यह सिद्ध किया कि पृथ्वी स्वयं में एक चुम्बक है उसके गर्भ में उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव को जोड़ती हुई एक ऐसी चुम्बक धारा प्रवाहित होती रहती है, जिस तरह मनुष्य शरीर में उत्तरी ध्रुव मस्तिष्क और दक्षिणी ध्रुव मूलाधार को सुषुम्ना शीर्षक का विद्युत् चुम्बकीय जीवन प्रवाह ।

पिछले दिनों जब-जब पृथ्वी पर भयंकर चक्रवात या तूफान उमड़े, यह पाया गया कि उस समय पृथ्वी का चुम्बकीय क्षेत्र बहुत बुरी तरह से अस्त-व्यस्त हुआ । उस स्थिति में न केवल मनुष्य अपितु जीव-जन्तु तक बुरी तरह प्रभावित होते हैं । भूकम्पों की सबसे अधिक अच्छी भविष्यवाणी उस क्षेत्र के पक्षियों तथा जीव-जन्तुओं की हलचलों से मिलती है । भूकम्प आने से पूर्व पक्षियों, यहाँ तक कि सर्प जैसे जीवों का पलायन इस बात की पुष्टि करता है कि पृथ्वी के चुम्बकीय क्षेत्र की सूक्ष्म हलचलें, जीवों के उस चुम्बकीय क्षेत्र को जिससे चिन्तन प्रादुर्भूत होता है, प्रभावित करती हैं । अतएव पृथ्वी में व्याप्त चुम्बकत्व से जैव चुम्बकत्व में कोई न कोई साम्य अवश्य होना चाहिए ।

इस दिशा में भूगर्भ शास्त्री गिल्वर्ट और मैक्सवेल के प्रयोगों का जिक्र करते हुए डॉ. अलेक्जैण्डर मारशैक ने अपनी पुस्तक "पृथ्वी और अन्तरिक्ष" के पृष्ठ १२१ में यह स्वीकार किया है कि पृथ्वी के चुम्बकीय क्षेत्र पर नित्य सूर्य के किसी अज्ञात विकिरण का प्रभाव पड़ता है । यह प्रभाव जिस क्रम में घटता-बढ़ता है, उसी क्रम में पृथ्वी के जीवन में भी हल्के-भारी परिवर्तन होते हैं, अतएव कहना न होगा कि प्रत्यक्षतः मनुष्य की, जीवधारियों की अन्तर्चेतना को भी सूर्य ही प्रभावित करता है ।

सूर्य के सीधे अनुदान भी पृथ्वी को कम नहीं मिलते, पर उससे भी बड़ी उपलब्धि ब्रह्माण्ड किरणों की है । यह ब्रह्माण्ड किरणें यों अन्तर्ग्रही मानी जाती हैं, फिर भी उनका अनुदान पृथ्वी को सूर्य के माध्यम से ही मिलता है । बिजली उत्पादन केन्द्र से ट्रान्सफार्मर और मीटरों में होती हुई चलने वाले उपकरणों तक पहुँचती है । इसी प्रकार ब्रह्माण्डीय किरणें भी सीधी समस्त पृथ्वी पर अनियन्त्रित रूप से बरस कर महाविनाश का खतरा उत्पन्न नहीं करतीं वरन् क्रमिक गति से भूलोक पर अवतरित होती हैं । यह अवतरण सर्वप्रथम ध्रुव क्षेत्र में होता है और फिर वहाँ से आवश्यकतानुसार प्राणियों और पदार्थों के लिए वितरित होता रहता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उत्तरी ध्रुव पर दृष्टिगोचर होने वाले मेरु प्रकाश को सूर्य का प्राण, अनुदान एवं ब्रह्माण्डीय किरणों के उपयोगी अवतरण का प्रतीक प्रतिनिधि कह सकते हैं । ब्रह्माण्ड किरणों और सूर्य अनुदानों का विशिष्ट पर्यवेक्षण करने पर पृथकता रहते हुए उनके भीतर अद्‌भुत साम्य पाया गया है । इससे प्रतीत होता है कि ब्रह्माण्डीय किरणें धरती से सम्पर्क साधने से पूर्व सूर्य के सरोवर में स्नान कर लेती हैं और उसके रंग में रंगी हुई साड़ी पहन कर इस लोक में प्रवेश करती हैं । यदि वे निर्वस्त्र होकर बरसने लगें तो उस जुगुप्सा को सहन करना ही कठिन हो जाय ।

मेरु प्रकाश ध्रुवों पर सर्वाधिक रहता है । पूर्वी ग्रीनलैण्ड का वह भाग जहाँ एस्किमो लोग रहते हैं, वहाँ का आकाश ही पृथ्वी के सामान्य आकाश से सर्वथा भिन्न है । वहाँ जाड़े के दिनों में प्रायः प्रतिदिन आकाश में रंग-बिरंगी दीपिवलियाँ देखते ही बनती हैं । दर्शक इस तरह आत्मविभोर हो उठते हैं, मानो वह कोई स्वप्नों का स्वर्ग हो । ऐसे मेरु प्रकाश भूमध्य सागर में भी जब-तब अनायास देखने को मिल जाते हैं । अलास्का, उत्तर कनाडा, एन्टार्कटिका, उत्तरी साइबेरिया तथा नार्वे में भी यदा-कदा देखने को मिलते हैं । वह दृश्य कितना विलक्षण होता है । उसका वर्णन करते हुए रोमन इतिहास कार लिवी ने लिखा है—उस क्षण आकाश एकाएक करोड़ों अदृश्य अग्नि शिखाओं से दमकने लगा—लोग भयभीत ही उठे और आँख मूँदकर ईश्वर का भजन करने लगे रोमन सम्राट ने तो यह समझा कि शहर में आग लग गई है अतएव उसने अतिशीघ्र अग्नि शामक दस्ते भेज दिए । यूनानी दार्शनिक अरस्तू ने इस मेरु प्रकाश को देखकर लिखा था—'आकाश में विलक्षण आकृतियाँ, खाइयाँ और भीषण अन्तराल लाल-लाल रंग की दूर तक फैली चादर किसी इन्द्रजाल से कम नहीं लगती थी ।'

मेरु प्रकाश का जब-जब सम्पर्क स्थापित हुआ ऐसी मनोरम ध्वनियाँ सुनाई दीं जो अद्‌भुत थीं । उन्हें नक्षत्रों की ध्वनियाँ माना गया है, पर उनका अध्ययन सौर सक्रियता में ही अब तक सम्भव हो पाया है ।

इस मेरु प्रकाश की संरचना के मूल में भी सूर्य ही है जिसके लिए सूर्य-संक्रान्ति काल को अध्ययन के लिए सर्वाधिक उपयुक्त पाया गया है ।

मेरु प्रकाश अनेक प्रकार के होते हैं, प्रकाश की उद्दीप्ति, ज्वाला किरणों की चाप तथा पहियों जैसा कुछ अदृश्य कुछ दृश्य और कहीं-कहीं उभयनिष्ठ अर्थात् मरुस्थल की-सी बनती बिगड़ती झिलमिल । रंग बड़े विलक्षण एकदम सफेद जैसे आतिशबाजी सुर्ख पीलापन लिए हरे-नीले, बैंगनी तथा भूरे रंग के भी । जिस समय यह अस्तित्व में आते हैं, पृथ्वी का चुम्बकीय क्षेत्र पूरी तरह अस्त-व्यस्त हो उठता है । उस समय वायुयानों के दिक् सूचक यन्त्र काम करना बन्द कर देते हैं ऐसी उड़ान को "अन्धी उड़ान" की संज्ञा दी गई है वायुयान चालक उससे हमेशा सावधान रहते हैं ।

वैज्ञानिकों ने व्याख्या की है कि यह अलौकिक संरचना सूर्य के अति सूक्ष्म उत्सर्जित कणों इलैक्ट्रॉन तथा प्रोटॉनों की गति में अनायास परिवर्तन का प्रतिफल है । सामान्य अवस्था में यह कण १००० मील प्रति घण्टे की चाल चल सकते हैं जबकि असामान्य अवस्था में उनकी गति सूर्य प्रकाश की गति अर्थात् १८६००० मील प्रति सेकेण्ड की गति से होती है । पृथ्वी की ओर चलते हुए वे अपने चुम्बकीय गुणों के कारण ध्रुवों की ओर मुड़ते हैं यह सामान्य प्रकाश की दिशा में हस्तक्षेप, होता है, इसी कारण इस तरह के दृश्य दिखाई देने लगते हैं ।

सूर्य द्वारा पृथ्वी पर बरसने वाले अनुदान का दृश्य रूप ध्रुवों का मेरु प्रकाश और अदृश्य रूप में बरसने वाले चुम्बकत्व हैं । यह विभिन्न किरणों के रूप में धरती पर आता है और पदार्थों को विद्युत एवं प्राणियों को संकल्प का अनुदान देता है । इन अनुदानों का एक उदाहरण पराबैंगनी किरणों का है । वे ही प्राणियों के निर्वाह के लिए आवश्यक रसायन विटामिन डी. का उत्पादन करतीं तथा हानिकारक उत्पादनों को निरस्त करने में लगी रहती हैं ।

सूर्य के माध्यम से धरती को जो मिलता है, भविष्य में मानवी प्रयत्नों से उसमें घट-बढ़ हो सकेगी, ऐसी मान्यता है । जहाँ तक प्राण-प्रवाह का सम्बन्ध है, वहाँ तो और भी बड़ी सम्भावनाएँ एवं आशाएँ विद्यमान हैं । ब्रह्माण्डीय किरणें धरती को सीमित मात्रा में सीमित गति से प्राप्त होती हैं, पर यदि सूर्य को अनुकूल बनाया जा सके तो उसकी सिफारिश से विश्व भण्डार से इतने बड़े अनुदान मिल सकते हैं, जिससे मनुष्य सृष्टा का युवराज न रहकर स्थानापन्न भी बन सकता है । सूर्य के प्रकाश को जितनी यात्रा पूरी करने में दो दिन लगते हैं, उतनी यात्रा ब्रह्माण्डीय किरणें दस मिनट में पूरी कर सकती हैं, इनकी अनुमानित गति १८६००० × १०००००००००० (दस अरब) इलेक्ट्रॉन वोल्ट प्रति मील प्रति सेकण्ड की है । इस गति से चल सकना यदि किसी के लिए सम्भव हो तो वह समय की गति का अवरोध समाप्त कर सकता है और भूतकाल की परिस्थितियों के उस समय के प्राणियों के साथ रह सकने का आनन्द ले सकता है । ब्रह्माण्ड के एक छोर से दूसरे छोर तक पहुँचने में उसे कुछ ही समय लगेगा । सूर्य अक्षांश पर प्रायः २७ दिन में एक बार इन किरणों का विशेष प्रभाव पड़ता है । उस दिन इस तारक को पसीना छूटता और कँपकपी आती है !

पृथ्वी के अस्तित्व का विश्लेषण करते हुए इस निर्जीव ढेले में पायी जाने वाली अगणित विशिष्टताओं का प्रधान आधार सूर्य ही सिद्ध होता है । सूर्य ही निमित्त है । उसे भी उपलब्ध ऊर्जा ब्रह्माण्डीय किरणों से मिलाती है । इतना जानने के बाद अन्तिम निष्कर्ष तक पहुँचने का एक ही कदम

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शेष रह जाता है कि यह ब्रह्माण्डीय किरणें आखिर क्या हैं और कहाँ से आती हैं इसका उत्तर देर-सबेर में यही स्वीकार करना है कि जिस प्रकार सूर्य की सप्त किरणें होती हैं और उसी प्रकार ब्रह्म की ऊर्जा तरंगें ब्रह्माण्डीय किरणों के रूप में न केवल धरती का, सूर्य का, वरन् समस्त ब्रह्माण्ड का अस्तित्व बनाये रहने एवं अग्रगामी बनने के लिए अनुग्रहपूर्वक अभीष्ट सामर्थ्य प्रदान करती हैं प्राण उन्हीं से बरसता है । स्वरूप और बल ज्ञान और सम्वेदन उसी के अनुदान हैं ।

पृथ्वी की सत्ता, सूर्य का अनुदान, ब्रह्माण्डीय किरणों का वैभव समझ सकने वाले ब्रह्म सत्ता की महत्ता भी स्वीकार कर सकते हैं । शोध प्रयत्नों की सर्वोच्च स्थिति नहीं हो सकती है, कि परब्रह्म से सम्बन्ध साधा जाय, उसका अनुग्रह पाया जाय और अपनी सत्ता को उसी महत्ता के अनुरूप बनाया जाय, जैसी कि उन क्षमताओं के महान् भाण्डागार परब्रह्म परमेश्वर की है ।

ब्रह्माण्ड में पदार्थ की तरह चेतन भी भरा पड़ा है

विज्ञान की आकाश में गहरी रुचि और अध्ययन, अनुसन्धान जिन रहस्यमय तथ्यों का उद्घाटन कर रहे हैं, वे भारतीय तत्वदर्शन के निष्कर्षों को ही पुष्टि कर रहे हैं । बीसवीं शताब्दी के पहले तक भौतिक विज्ञान भारतीय तत्वदर्शन की वैदिक काल से चली आ रही इस मान्यता का उपहास उड़ाता था, कि आकाश पोला नहीं है, बल्कि हमारे शरीर की और पृथ्वी की संरचना में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तत्व है तथा वह ईश्वरीय चेतना के सर्वाधिक निकट है ।

सर्वप्रथम बीसवीं सदी की शुरूआत में यानी १९०१ में रेडियो संसार के अन्वेषक मारकोनी द्वारा तरंगों की खोज और प्रमाण द्वारा उसकी पुष्टि से ही वैज्ञानिकों ने जाना की वायुमण्डल के अतिरिक्त भी कुछ शक्ति तरंगें विद्यमान हैं । अब विज्ञान अपना बचपन पूरा कर किशोर हो चुका है और तरुणाई का दिन आने की प्रतीक्षा की जा रही है ।

इधर वैज्ञानिकों का ध्यान तेजी से आकाश की गहराइयों की ओर गया है । ब्रह्माण्डीय किरणों तथा आकाश के उच्च ऊर्जा सम्पन्न व अदृश्य गुणों वाले सूक्ष्म कणों के अध्ययन से प्रकृति के गूढ़तम रहस्यों के उद्घाटन की सम्भावना है । इससे माइक्रोसोम्स के गुणों की जानकारियाँ मिल सकेंगी तथा गैलेक्सी में एवं सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में चल रही कई गतिविधियों को समझा जा सकेगा ।

भौतिकीविद् प्राथमिक कणों की लगातार खोज कर रहे हैं । क्योंकि उनकी मान्यता है कि प्राथमिक कणों के गुण-धर्मों के बोध से ही विश्व की उत्पत्ति तथा विकास-क्रम को समझा जा सकेगा । प्राथमिक कण का अर्थ है, द्रव्य की वह सबसे छोटी इकाई या वह मूल कण, जिससे सभी बड़ी इकाइयों का संयोजन हो सका है । स्पष्ट है कि प्राथमिक कण केवल कोई एक विशेष कण ही हो सकते हैं, इस अर्थ में अभी तक किसी प्राथमिक कण की खोज नहीं की जा सकी है । इसलिए अभी तो भौतिकवेत्ता, प्रोटॉन, न्यूट्रॉन आदि सौ से भी अधिक कणों को प्राथमिक कण कहते हैं ।

बीसवीं सदी के प्रारम्भ में द्रव्य की सबसे छोटी इकाई परमाणु (एटम) को माना जाता था । जो एक इंच के २० करोड़वें भाग के बराबर होते हैं । ये भी कई प्रकार के थे, प्रत्येक तत्व के पृथक-पृथक परमाणु । इनमें सर्वाधिक सरल परमाणु हाइड्रोजन तत्व का है, जिसके नाभिक में एक प्रोटॉन होता है और एक इलेक्ट्रॉन उसकी परिक्रमा करता है । अन्य तत्वों के केन्द्रक में प्रोटॉन तथा न्यूट्रॉन होते हैं और इलेक्ट्रॉन उनके चक्कर काटता है । परमाणु के विखण्डन द्वारा प्रोटॉन, इलेक्ट्रॉन का पता लगते ही यह तो स्पष्ट हो ही गया कि परमाणु प्राथमिक कण नहीं है ।

न्यूट्रॉन की खोज होने पर ही परमाणु-ऊर्जा और परमाणु-बम दोनों बने । 'न्यूट्रॉन-भौतिकी' नामक नई विज्ञान शाखा चल पड़ी ।

इधर वैज्ञानिक अन्वेषणों से ज्ञात हुआ है कि परमाणु के सूक्ष्म विश्व में प्रत्येक कण का एक प्रतिकण विद्यमान है । ऐसे ऋणावेशी कण इलेक्ट्रॉन है, तो उसका विरोधी, धनावेशी कण है—पोजिट्रॉन । उसी तरह प्रत्येक कण का एक प्रतिकण है ।

कण और प्रतिकण सब परस्पर पास आते हैं, तो विस्फोट होता है और ऊर्जा का उत्सर्जन होता है ।

इस ऊर्जा की इकाई है, इलेक्ट्रॉन वोल्ट । किसी वस्तु को पेन्सिल की नोंक से हल्के से टक-टक करने से उस वस्तु के परमाणु को एक इलेक्ट्रॉनिक वोल्ट ऊर्जा मिल जायेगी । पर इस परमाणु में कोई गति या चंचलता नहीं आ सकेगी । १ हजार से १० हजार तक इलेक्ट्रॉन-वोल्ट ऊर्जा पाकर परमाणु के इलेक्ट्रॉन चंचल हो उठते हैं । इसी से रासायनिक द्रव्यों का संयोजन होता है, पर परमाणु का नाभिक अभी भी गतिशील नहीं होता । वह १ लाख से १०० लाख इलेक्ट्रॉन-वोल्ट ऊर्जा से ही गतिशील होता है ।

लाखों रुपयों की लागत से साइक्लोट्रोन, सिंकोट्रोन आदि विशेष प्रकार के त्वरण यन्त्र बनाये जाते हैं जो प्रोटॉन आदि कणों को करोड़ों, अरबों इलेक्ट्रॉन वोल्ट ऊर्जा प्रदान करते हैं । प्रोटॉन धनावेशी कण है, ऋणावेशी इलेक्ट्रॉन इनका चक्कर काटते हैं ।

जब न्यूट्रॉन का बीटा-विखण्डन होता है तब प्रोटॉन, इलेक्ट्रॉन तथा न्यूट्रिनो ये तीन कण उत्सर्जित होते हैं । वैज्ञानिक इस दिशा में तेजी से काफी काम कर रहे हैं । किन्तु प्राथमिक कणों की खोज अभी भी जारी है । अभी तक सात प्राथमिक कणों को वैज्ञानिकों ने कुछ वर्गों में बाँट दिया है—जैसे लेप्ट्रोन, मेसॉन, बोरिओन आदि । इनमें से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

फोटॉन, न्यूट्रिनो, इलेक्ट्रॉन और पोजिट्रॉन स्थायी कण हैं । शेष अस्थायी कण हैं । फोटोन तथा न्यूट्रिनो का स्थिर द्रव्यमान शून्य है । इलेक्ट्रॉन और पोजिट्रॉन का १ स्थिर द्रव्यमान है । प्रोटॉन का १८३६ तथा न्यूट्रॉन का १८३८ है ।

न्यूट्रिनों का स्थिर द्रव्यमान शून्य है, इसका तात्पर्य यह है कि स्थिर न्यूट्रिनो नाम की कोई वस्तु नहीं । न्यूट्रिनों कण जन्म के साथ ही प्रकाश की गति से यानि ३ लाख किलोमीटर प्रति सेकण्ड के वेग से दौड़ने लगते हैं । ये न्यूट्रिनो अन्य द्रव्य कणों के साथ बहुत मन्द परस्पर क्रिया दर्शाते हैं । इसीलिए ये अन्य द्रव्य कणों से सामान्यतः टकराते नहीं अतः न्यूट्रिनो, पृथ्वी पिण्ड से आर-पार हो जाते हैं । यहाँ तक कि सूर्य में से भी आर-पार हो सकते हैं । इन न्यूट्रिनों के भी प्रतिकण विद्यमान हैं, जिन्हें प्रति न्यूट्रिनो कहते हैं ।

खोजों से यह भी पता चला है कि आकाश में विद्युत कणों की अनेक पर्तें हैं । इन अनेक पर्तों को आयन-मण्डल (आइनोस्फीयर) कहते हैं । हमारी पृथ्वी आकाश में स्थित है । आयन-मण्डल पृथ्वी को सभी ओर से घेरे हुए है । विद्युत कणों की इन अनेक पर्तों में तीन मुख्य हैं । एयल्टन ने इन्हें "ई", "एफ" और "डी" पर्तें कहा है ।

धरती की ऊँचाई पर कम वायुमण्डलीय दबाव वाले क्षेत्र में अणु-परमाणु अपना ऋणाणु (इलेक्ट्रॉन) खो देते हैं । सूर्य इलेक्ट्रॉनों को तोड़ता है । यह क्रिया जितनी तीव्र होती है, आयन-मण्डल उतनी ही तीव्रता से पृथ्वी में मौसम आदि का नियन्त्रण करता है । साथ ही आयन-मण्डल लोगों के मन, हृदय और गुणों को भी प्रभावित करता है । इलेक्ट्रॉन के तोड़ लिए जाने के बाद अणु-परमाणुओं में केन्द्रक शक्ति शेष रहती है । आयन-मण्डल में विद्यमान यह केन्द्रक शक्ति ही लोगों के गुणों को, मन और हृदय को प्रभावित करती है । इससे पता चलता है, कि केन्द्रक कोई मनोमय शक्ति है, मात्र भौतिक शक्ति नहीं ।

पृथ्वी की ओर नीचे आने पर इन कणों की शक्ति घट जाती है । जैसे-जैसे वायुमण्डलीय दबाव बढ़ता है, आयन-मण्डलीय दबाव घटता है । क्योंकि पृथ्वी तक आते-आते उन कणों में धूलि कण व गैसों के कण मिल पाते हैं । अधिक ऊँचाई पर अधिक स्वच्छ वायु ही स्वास्थ्य को पुष्ट नहीं करती । प्रत्युत, मनोमय शक्ति वाले तथा अत्युच्च ऊर्जा वाले ये प्रकाश कण चित्त को प्रसन्नता, स्फूर्ति व शक्ति देते हैं । इस प्रकार ऊँचे स्थानों पर उत्तम स्वास्थ्य का, शुद्ध वायु से भी बड़ा कारण ये सूक्ष्म कण होते हैं । 'फोटोन' की विलक्षण कर्तृत्व-शक्ति ज्ञात हो चुकी है । फोटोन तथा न्यूट्रिनो दोनों निरन्तर गतिशील रहते हैं । इनके प्रति-कणों के भी गुण, धर्म जाने जा सके तो कई नये रहस्य सामने आयेंगे । इसीलिए इसी दिशा में तेजी से वैज्ञानिक कण अन्वेषण कर रहे हैं । क्योंकि अनुमान है, कि विश्व की उत्पत्ति व विकास विस्तार में न्यूट्रिनो एवं प्रति न्यूट्रिनो कणों का महत्त्वपूर्ण योगदान है । स्मरणीय है कि कुछ ही वर्षों पूर्व रूसी और अमेरिकी वैज्ञानिकों की खोजों से पता चला, कि प्रकृति में अत्युच्च ऊर्जा वाले कण विद्यमान हैं ।

एक एक्सीलरेटर से दस लाख इलेक्ट्रॉन वोल्ट तक की ऊर्जा के कण उत्पन्न किए जा सकते हैं । इसी क्रम में सायक्लोट्रॉन और वीटाट्रॉन का निर्माण हुआ है, जिनसे डेढ़ करोड़ इलेक्ट्रॉन वोल्ट की ऊर्जा वाले कण उत्पन्न किए जा सकते हैं । इतनी शक्ति से विशाल अन्तरिक्ष यानों को ढोया और सुदूर नक्षत्रों तक पहुँचाया जा सकता है ।

पर प्रकृति के ऊर्जा कणों की शक्ति तो इससे बहुत अधिक है । आकाश की 'कॉस्मिक' किरणों में मेसान, हायपरान आदि अस्थिर कण हैं, जिनमें प्रचण्ड ऊर्जा है ।

'गैलेक्सी' के केन्द्रीय क्षेत्र में सूर्य जैसे प्रायः १० खरब नक्षत्र पुंज हैं । अब तक इस क्षेत्र में ज्ञात कुल तारों की संख्या दस घात चौबीस है । यह सम्पूर्ण विस्तार ही गैलेक्सी कहलाता है ।

ज्योतिषी भौतिकीविदों (एस्ट्रा फिजिसिस्ट्स) के अनुसार इस केन्द्रीय क्षेत्र में कणों का विघटन तेजी से होता है । तारों के अदृश्य कण निकल कर प्लाज्मा के रूप में पीले दीखने वाले आकाशीय क्षेत्र में फैल जाते हैं । इनके इस फैलाव से ही विद्युत चुम्बकीय क्षेत्र तथा गुरुत्वाकर्षण आदि की क्रियाएँ सम्पन्न होती हैं । ऐसे फैले हुए प्लाज्मा को आयनीकृत प्लाज्मा (आइनोस्फेरिक प्लाज्मा) कहते हैं । आइनोस्फेरिक प्लाज्मा द्वारा कई तरह के क्षेत्र बनते हैं । आइनोस्फेरिक प्लाज्मा के रूप में फैले ये कण ही विभिन्न विचारों, प्रक्रियाओं, घटनाओं, दृश्यों वाले हलचल पूर्ण जगत का कारण हैं तथा उसे प्रभावित नियन्त्रित करते हैं । लाखों वर्षों से आवारागर्दी करते-करते ये कण भूल ही गए हैं, कि वे कहाँ से आये हैं ।

ये भूले हुए कण ही कॉस्मिक कणों के रूप में पृथ्वी की ओर भी आते रहते हैं । इन कणों में उच्च गति वाले प्रोटॉन तथा कई तत्वों के परमाणु होते हैं, इनमें अत्यधिक ऊर्जा होती है । वायुमण्डल में इनके प्रवेश करते ही हलचल मच जाती है । इसी हलचल में एक्सटेन्डेड एयर शावर्स (फैले हुए वायु—शावरों) का निर्माण होता है । पृथ्वी की स्थूल हलचल इस प्रकार इन अनेक स्वभाव तथा गुणों वाले कणों के कारण ही होती है ।

विचार तरंगें पैदा करने वाले आकाशस्थ कण अति सूक्ष्म होते हैं । इनका जीवनकाल सेकण्ड का भी अत्यल्प अंश ही होता है । उनका उद्भव और विनाश अनुमान में भी नहीं आ पाता । ये कण धन तथा ऋण दोनों आवेशों वाले होते हैं ।

विचार तरंगें पैदा करने वाले अत्युच्च ऊर्जा सम्पन्न कणों का संचय ध्यान-धारणा द्वारा सम्भव है । जिस देव-शक्ति (चेतन-शक्ति) की ध्यान-धारणा करेंगे, उसी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रकार की क्षमताओं वाले सूक्ष्म ऊर्जास्वी कण व्यक्तित्व में संचित हो जायेंगे । इस तरह जो शक्तियाँ जितनी बलवान होती हैं, वे अपने उपासक को उतनी ही अधिक सिद्धि व सामर्थ्य दे पाती हैं । ये चित्-शक्तियाँ वस्तुतः नाभिकीय चेतनाएँ (न्यूक्लिअर एक्टिबिटिज) हैं । इनका कारण क्यू-मेसॉन, न्यूट्रिनो और पायी-मेसान जैसे अत्यन्त सूक्ष्म कणों में से कोई भी हो सकते हैं । इन कणों तथा नाभिकीय-चेतनाओं पर गैलेक्सी के चुम्बकीय क्षेत्र भी प्रभाव नहीं डाल सकते हैं ।

बम्बई के टाटा इन्स्टीट्यूट के प्रख्यात वैज्ञानिक डॉ. प्राइस की खोजों से प्राप्त निष्कर्षों के अनुसार ये ऊर्जस्वित कण तथा ब्रह्माण्डीय किरणें जब ठोस पदार्थों से गुजरती हैं तो उन पर अपना प्रभाव छोड़ जाती हैं । इस प्रभाव को सूक्ष्मदर्शी यन्त्रों द्वारा देखा, परखा जा सकता है । जड़ पदार्थों से करोड़ों वर्ष पूर्व का इन चेतन किरणों का प्रभाव अभी भी विद्यमान है । इसका अर्थ है कि इन चेतन किरणों के अध्ययन, विश्लेषण तथा उनसे सम्पर्क की विधि ज्ञात हो गई, तो ब्रह्माण्ड में अतीत में घटित, वर्तमान में घट रही या कि भविष्य में करोड़ों वर्षों तक घटित होने वाली घटनाओं का दृश्य देखा, जाना जा सकता है । इन ब्रह्माण्डीय किरणों के वर्ग भी अधिक नहीं हैं ।

'काल' तत्व की गम्भीर विवेचना डब्ल्यू. एच. डन ने अपने ग्रन्थ "एक्सपेरीमेन्ट विथ टाइम" में बताया है, कि आमतौर से मनुष्य की चेतना समय के उस छोटे से केन्द्र पर जुड़ी रहती है, जिसे वर्तमान कहते हैं । बन्धन की इसी जकड़न के कारण मन में इतना ही बन पड़ता है, कि वह वर्तमान की समस्याओं और अनुभूतियों के क्षेत्र में अपनी हलचलें केन्द्रित रखें । किन्तु ऐसी भी स्थिति प्राप्त की जा सकती है, जब चेतना को वर्तमान के बन्धन शिथिल करने का अवसर मिल जाय । गहरी सुषुप्ति भी ऐसी स्थिति हो सकती है । उस स्थिति में समय के अन्य दो आयाम भूत और भविष्य भी उसी तरह अनुभव की परिधि में आ सकते हैं, जिस तरह कि आमतौर से वर्तमान अनुभव में आता है ।

इसी प्रकार एयर शावर्स (वायु शावरों) में लाखों, करोड़ों अत्युच्च ऊर्जा सम्पन्न कण हैं, जिनकी हजारवें हिस्से की शक्ति ही विशाल अन्तरिक्षयानों को किसी भी ग्रह-नक्षत्र तक पहुँचाने में समर्थ है ।

वायु शावरों के अध्ययन से पता चला कि उनमें इलेक्ट्रॉन और पाजिट्रॉन कण भी सम्मिलित हैं । कॉस्मिक किरणों के वायुमण्डल में पहुँचने से विभिन्न भौतिक पदार्थों की रचना होती है । इन भौतिक पदार्थों की मानसिक क्रियाएँ भी अब अध्ययन का विषय है । वैज्ञानिकों को विश्वास है कि सृष्टि के आविर्भाव काल से अब तक ब्रह्माण्ड के विस्तार के मूल तत्व इन स्थूल भौतिक पदार्थों में बीज रूप में विद्यमान हैं । उनका अध्ययन अनेक क्रियाएँ उद्घाटित करेगा तथा असंख्य रहस्यों का भेदन करेगा ।

विचारों की तरंगें वही तत्व पैदा करते हैं । जिस दिन इस तथ्य का उद्घाटन होगा कि विचार तरंगें आकस्मिक नहीं पैदा हो जातीं, बल्कि वे गणितीय नियमों के अनुसार तथा संकल्प के कारण निःसृत तथा विस्तृत होती हैं, उस दिन ब्रह्माण्डव्यापी चेतन-शक्तियों की भी जानकारी हो जायेगी तथा उन चेतन-शक्तियों से मानसिक सम्पर्क की जरूरत महसूस होगी । क्योंकि इस मानसिक सम्पर्क से अनेक प्रकार की उपलब्धियाँ सम्भव हैं । इन चेतन-शक्तियों को ही देव गण तथा उनके समन्वय को ईश्वर कहा जाता है ।

लो ! अब पदार्थ ही मर गया

मनुष्य ने जब से सोचना, समझना आरम्भ किया तभी से उसने अपने आस-पास की चीजों को कौतूहल की दृष्टि से देखना और उनका रहस्य उघाड़ने का प्रयास शुरू किया । कौतूहल और रहस्य जानने की उत्कट लालसा तथा प्रयत्नों से ही ज्ञान विज्ञान का इतना विपुल और विस्तृत विकास सम्भव हुआ । कभी लगता है कि मनुष्य ने अमुक रहस्य या गुत्थी सुलझा ली, लेकिन दूसरे ही क्षण पता चलता है कि सच्चाई कुछ और है तथा रहस्य अभी ज्यों की त्यों बना हुआ है । यही नहीं, उसने रहस्य को जानने के लिए जो प्रयास किए, उन प्रयासों से जो तथ्य सामने आये उनसे और भी कई रहस्यपूर्ण गुत्थियाँ सामने आ गईं । कुल मिलाकर यह कि दो हजार साल के ज्ञात-अज्ञात वैज्ञानिक अनुसन्धानों, उनकी ऐतिहासिक उपलब्धियों और प्राप्त ज्ञान भण्डार के उपरान्त भी मनुष्य किसी क्षेत्र में यह दावा नहीं कर सकता, कि उस क्षेत्र में उसने पूरी जानकारी प्राप्त कर ली है ।

ज्ञान के विकास और रहस्यों को सुलझाने के इस दौर में कई बार ऐसा लगा कि अब सब कुछ जान लिया गया है और कुछ भी जानने को बाकी नहीं बचा । उदाहरण के लिए डार्विन ने जब विकासवाद के सिद्धान्तों को खोज निकाला और उसकी पुष्टि में अनेकों प्रमाण खोज लिए गए तो समझा जाने लगा कि पृथ्वी पर जीवन का विकास कैसे सम्भव हुआ, यह पूरी तरह जान लिया गया है, लेकिन आगे चलकर यह पता चला कि यह खोज तो बहुत ही आधी-अधूरी है । इसके न केवल अपवाद मिले, वरन् ऐसे तथ्य भी मिले जिनसे विकासवाद के सिद्धान्त ही संशयास्पद बन गए । जॉन डार्विन ने परमाणु सिद्धान्त की व्याख्या की तो लगने लगा, पदार्थ की छोटी-से छोटी इकाई के सम्बन्ध में जान लिया गया । लेकिन जल्दी ही यह धारणा नितान्त भ्रम सिद्ध हो गई और परमाणु के सम्बन्ध में नये-नये तथ्य प्रकाश में आये । डाल्टन का परमाणु सिद्धान्त धराशायी हो गया और जहाँ यह मान लिया गया था कि परमाणु के सम्बन्ध में अब कुछ भी जानने को बाकी नहीं बचा है, वहीं अब यह माना जा रहा है कि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

परमाणु के सम्बन्ध में एक प्रतिशत भी पूरी जानकारी प्राप्त नहीं हुई है ।

पिछले बीस-तीस वर्षों में इतनी अधिक वैज्ञानिक जानकारियाँ एकत्रित की गई हैं, जितनी अब तक कभी भी नहीं हुई । इन अनुसंधानों और जानकारियों के आधार पर गत दो तीन दशकों को वैज्ञानिक प्रगति का युग कहा जा सकता है । लेकिन आश्चर्य की बात यह है कि इन दो-तीन दशकों में विज्ञान अपने आपको जितना अपूर्ण और अधूरा अनुभव करने लगा है उतना पहले कभी नहीं था । वैज्ञानिकों की वर्तमान पीढ़ी निस्संकोच भाव से यह कह रही है, कि हमने अब तक जितने रहस्य सुलझाये हैं, रहस्यों को सुलझाने की इस प्रक्रिया में उससे कहीं अधिक रहस्य पैदा हो गए हैं और कह नहीं सकते कि प्रकृति के ये रहस्य कभी सुलझ भी सकेंगे अथवा नहीं । रहस्यों के उलझते जाने की इस प्रक्रिया का मूल कारण चेतना के नियमों से अनभिज्ञता है या यों कह सकते हैं, कि चेतना के सम्बन्ध में कुछ भी नहीं कहा जा सकता कि वह कब किस तरह का व्यवहार करेगी ? इसलिए किसी व्यक्ति या चेतन प्राणी के सम्बन्ध में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता ।

भीड़ या व्यक्तियों और वस्तुओं के समुदाय के बारे में तो फिर भी अनुमान लगाये जा सकते हैं और वे अनुमान करीब-करीब सही होते हैं । लेकिन व्यक्ति विशेष अथवा वस्तु विशेष के सम्बन्ध में अनुमान लगाना तो दूर रहा, कल्पना तक नहीं की जा सकती । उदाहरण के लिए बम्बई, कलकत्ता, दिल्ली, मद्रास जैसे शहरों में प्रतिदिन दस-पाँच दुर्घटनाएँ होती हैं । २०-२५ व्यक्ति इन दुर्घटनाओं में मर भी जाते हैं । इस आधार पर कहा जा सकता है कि एक वर्ष में तीन-चार हजार दुर्घटनाएँ होंगी और पाँच-सात हजार व्यक्ति मरेंगे । इस तरह के आँकड़े इकट्ठे किए भी जाते हैं, उनकी घोषणा भी की जाती है कि इस वर्ष इतनी दुर्घटनाएँ घटने की सम्भावना है । ये आँकड़े करीब-करीब सही होते हैं । लेकिन व्यक्ति विशेष या वाहन विशेष के सम्बन्ध में विचार किया जाय कि वह किसी दुर्घटना का शिकार होगा अथवा नहीं, तो इस सम्बन्ध में कुछ भी नहीं कहा जा सकता । यह भी नहीं कहा जा सकता कि इन दुर्घटनाओं में से कौन-सी दुर्घटना किस व्यक्ति के साथ या किस वाहन की घटेगी ।

विज्ञान जब तक अपना शोध-अनुसंधान पदार्थ को जड़ मानकर करता रहा, तब तक वह दावे के साथ कहता रहा कि सच्चाई यह है । लेकिन पदार्थ का विश्लेषण करते-करते वैज्ञानिक अब वहाँ तक पहुँच गए हैं, कि पदार्थ का अस्तित्व ही समाप्त हो गया है । अब पदार्थ बचा ही नहीं है । पदार्थ की परिभाषा यही की जाती है कि वह जड़ होता है, उसका आकार होता, वजन होता है, निश्चित स्वरूप होता है । लेकिन पदार्थ का सूक्ष्मतम विश्लेषण करने के बाद यह परिभाषा ध्वस्त हो गई है । उदाहरण के लिए पदार्थ के सम्बन्ध में निश्चित धारणा थी कि अमुक परिस्थितियों का पदार्थ पर अमुक तरह का प्रभाव पड़ेगा और उस पर अमुक तरह की प्रतिक्रिया होगी । लेकिन अब इस सम्बन्ध में नये तथ्य सामने आये हैं और कहा जा रहा है कि सब कुछ अनिश्चित है ।

पिछले दिनों कण भौतिकी (पार्टिकल फिजिक्स) के क्षेत्र में हाइजन वर्ग के अनिश्चय सिद्धान्त की बड़ी चर्चा हुई । उनके अनुसार एक ही समय में एक साथ एक ही तरह के कण किस तरह का व्यवहार करेंगे । यह नहीं जाना जा सकता । कण विशेष की गति और परिस्थिति के सम्बन्ध में भी कुछ कह पाना सम्भव नहीं है । केवल अनुमान ही लगाया जा सकता है और कोई अनुमान सही निकले, यह कोई जरूरी नहीं है । अनेक प्रयोग किए गए कि किन परिस्थितियों में कौन-से कण किस तरह का व्यवहार करते हैं ? एक ही परिस्थिति में एक ही प्रक्रिया से एक ही तरह के कणों का हजारों बार अध्ययन किया गया । लेकिन यह जान कर हैरानी हुई कि प्रत्येक बार हर कण का व्यवहार अनुमान से भिन्न था । यही नहीं पिछली प्रतिक्रिया भी नहीं दोहराई गई । इस आधार पर घोषणा की गई कि पदार्थ की जैसी परिभाषा की जाती रही है वैसा कोई पदार्थ इस जगत में है ही नहीं । दूसरे शब्दों में, यह घोषणा की गई कि पदार्थ मर गया है । पहले कभी नास्तिकतावादी विचारक नीत्से ने यह घोषणा की थी कि ईश्वर मर गया है । लेकिन अब विज्ञान को यह घोषणा करनी पड़ रही है, कि पदार्थ मर गया है । अब वैज्ञानिक को यह कहना पड़ रहा है, कि पदार्थ विज्ञान से बाहर भी एक अत्यन्त विशाल दुरूह और अज्ञात क्षेत्र रह जाता है जिसे खोजने के अभी तक कोई उपाय नहीं ढूँढ़े जा सके हैं । लेकिन वह क्षेत्र विज्ञान की सभी ज्ञात धाराओं का मूल स्रोत और नियन्त्रणकर्त्ता है ।

वैज्ञानिक मैकब्राइट का कथन है कि, "विश्व के परोक्ष में किसी ऐसी सत्ता के होने की पूरी और निश्चित सम्भावना है, जो ज्ञानयुक्त और इच्छायुक्त हो । उसी के कारण विश्व की गतिविधियाँ अनियन्त्रित और अनिश्चित रूप से चल रही हैं ।" डॉ. मोर्डेल का कहना है, कि अणु और पदार्थ के सूक्ष्मतम कणों के इस विचित्र व्यवहार से यही सिद्ध होता है, कि कोई चेतन शक्ति है अवश्य, जिसके प्रभाव से ही अणु अथवा कणों का स्वभाव पकड़ में नहीं आता ।

वह कौन-सी शक्ति है और किस प्रकार काम करती है ? उसके क्या नियम हैं ? कैसे वह पदार्थों को प्रभावित करती है ? आदि प्रश्नों का उत्तर विज्ञान के पास अभी नहीं है । इस सन्दर्भ में विख्यात वैज्ञानिक इंगोल्ड का कथन है कि, "जो चेतना इस सृष्टि में काम कर रही है, उसका वास्तविक स्वरूप समझने में अभी हम असमर्थ हैं । इस सम्बन्ध में हमारी वर्तमान मान्यताएँ अधूरी, अप्रामाणिक और असन्तोषजनक हैं ।"

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस प्रकार की तमाम रहस्यपूर्ण वैज्ञानिक गुत्थियों का संकलन करते हुए प्रख्यात विज्ञान लेखक एफ. एल. बोश्के ने एक पुस्तक लिखी है—"दं अनएक्सप्लेंड" । इस पुस्तक में बोश्के ने जो प्रतिपादन दिए हैं, उनसे यही निष्कर्ष निकलता है कि एक सच्चा वैज्ञानिक सब कुछ जान लेने का दावा कभी नहीं करता । बल्कि जैसे-जैसे वह अपनी शोध साधना के क्षेत्र में गहरा उतरता जाता है, उसे एक से एक रहस्यमय गुत्थियों का पता लगता है और अनुभव होता है कि प्रत्यक्षतः जगत जैसा प्रतीत होता है, वैसा तो वास्तव में कुछ भी नहीं है । बल्कि सब कुछ रहस्यपूर्ण है । यह बात और है कि भीड़ की सम्भावनाओं के समान पदार्थ के स्थूल नियमों का पता लगाकर विज्ञान उससे यत्किंचित लाभ उठाने की स्थिति में पहुँच गया है । परन्तु सच्चाई कुछ और ही है । इन स्थूल नियमों से लाभ उठाने के कारण यह भ्रम हो सकता है कि विज्ञान ने शायद सत्य को जान लिया हो । पर वैसा नहीं है । मोटी बातें जो दिखाई देती हैं । उनका थोड़ा-सा परिचय भी पर्याप्त लाभ दे सकता है, लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि उनकी वास्तविकता जान ली गई । सूर्य रोज उगता है, प्रकाश देता है, उस प्रकाश से सौर ऊर्जा के रूप में लाभ उठाया जा सकता है, यह जान लेना ही पर्याप्त है । इसमें यह जानने से कोई अन्तर नहीं पड़ता कि सूर्य पृथ्वी का चक्कर लगा रहा है अथवा पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा कर रही है ।

प्रकृति की स्थूल गतिविधियों का अनुकरण करते हुए ही अब तक दिखाई पड़ने वाली मशीनी सुविधाएँ जुटाई जा सकी हैं । लेकिन विज्ञान के विभिन्न सैद्धान्तिक पहलुओं पर अभी भी मतभेद है । 'द अन ऐक्सप्लैड' के लेखक एफ. एल. वोश्के ने लिखा है, कि विज्ञान के क्षेत्र में परस्पर विरोधी सिद्धान्तों का द्वन्द्व अनवरत चलता रहता है और सच्चाई क्या है ? यह अभी भी अज्ञात है । उनके अनुसार चाहे दूरबीन से देखी जा रही आकाश-गंगा हो, अथवा माइक्रोस्कोप से देखे जाने वाले, अन्वेषित किए जाने वाले जीवाणु-परणाणु । वैज्ञानिक किसी भी क्षेत्र में एक निष्कर्ष पर नहीं पहुँच सके हैं ।

विज्ञान अपने शैशव से क्रमशः विकसित होता हुआ किशोरावस्था में प्रवेश कर रहा है । उसके अनुभव, निष्कर्ष और ज्ञान नित्य निरन्तर विकसित परिमार्जित होते जा रहे हैं । अभी उसे प्रौढ़, वृद्ध एवं परिपक्व होने में बहुत समय लगेगा । फिलहाल तो उसे अपनी पिछली गलतियाँ सुधारने से ही फुरसत नहीं है । अभी तक जिस बात का जोर-शोर से प्रतिपादन किया जाता है, अब उन्हीं के सम्बन्ध में मान्यताएँ बदलने की घोषणा करनी पड़ती हैं । जैसे-जैसे नये तथ्य सामने आते जायेंगे, नये निष्कर्ष और नये सत्यों तक विज्ञान पहुँचता जायेगा, वैसे-वैसे वर्तमान की कई नयी मान्यताएँ बदलेंगी । और उन तथ्यों का समर्थन होता जायेगा, जिन्हें भारतीय ऋषि-मुनियों ने पहले ही जान लिया था । भारतीय मनीषियों ने हजारों वर्ष पूर्व चेतन की सर्वव्यापकता, ब्रह्म की सत्यता को उद्घोषित किया था ।'सर्व खल्विद ब्रह्म' "आत्मै वेद सर्व" "एको ब्रह्म द्वितीयोनास्ति" आदि घोषणाओं में इन्हीं सत्यों की घोषणा की गई है । कोई आश्चर्य नहीं कि कल को चलकर विज्ञान भी इन घोषणाओं का समर्थन करने लगे और इसकी पुष्टि के प्रमाण जुटाने लगे।

जो भी हो, इतना सही है कि प्रकृति और उसके अधिपति परमात्मा का पूर्ण ज्ञान प्राप्त करना हर किसी के लिए सम्भव नहीं है । दोनों ही रहस्यपूर्ण हैं, दोनों का या कहें दोनों के समुच्चय एक ब्रह्म का क्षेत्र इतना व्यापक है कि उसे स्थूल और सीमित साधनों, उपकरणों द्वारा नहीं जाना जा सकता । न ही मनुष्य की सीमित सामर्थ्य के यह वस में है, कि वह वस्तुस्थिति को जान सके । अस्तु, यह कहने में कोई संकोच नहीं होना चाहिए कि अपने आस-पास का यह सारा जगत अनेक रहस्यों के आवरण में लिपटा हुआ है । उसे जानना पूरी तरह समझना शायद ही कभी सम्भव हो सके । पूर्ण ज्ञान की कुंजी बताते हुए ऋषि ने यही गाया है, "अपने को जानो, अपने को देखो ।" अपने अस्तित्व में अवश्य ही विराट् परमात्मा की झाँकी देखी जा सकती है ।

पदार्थ और प्रति-पदार्थ, गुरुत्वाकर्षण और प्रति-गुरुत्वाकर्षण

ब्रह्माण्ड की रचना और विकास सम्बन्धी डॉ. हापल की खोजों का आज सारे संसार में तहलका मचा हुआ है, किन्तु हापल ही नहीं दूसरे वैज्ञानिकों का भी मत है कि संसार केवल भौतिक पदार्थों या प्रकृति की ही रचना है । उसके मूल में कोई ऐसी चेतन या विचारशील सत्ता नहीं है, जिसे हम ईश्वर, जीव या आत्मा कहें ।

भारतीय तत्वदर्शन में इन शब्दों को वैज्ञानिक भी बनाकर रखा गया है, इसलिए चेतना की कल्पना असंदिग्ध नहीं है । कठोपनिषद् के पदार्थ से भी सूक्ष्म सत्ता का ज्ञान कराते हुए उपनिषद्कार लिखता है—

इन्द्रियेभ्यः परा ह्यर्था अर्थेभ्यश्च परं मनः ।
मनसस्तु परा बुद्धिर्बुद्धेरात्मा महान् परः ॥
महतः परमव्यक्तमव्यक्तात् पुरुषः परः ।
पुरुषात् न परं किंचित् सा काष्ठा सा परागतिः ॥

—१/३/१०, ११

अर्थात् इन्द्रियों से सूक्ष्म उनके विषय और इन्द्रियों के अर्थ से भी मन सूक्ष्म है । मन से बुद्धि और बुद्धि से भी आत्मा सूक्ष्म है, अव्यक्त अचिन्त्य आत्मा से भी परे अर्थात् सूक्ष्म पुरुष है, पुरुष से परे कुछ भी नहीं है । वही अन्तिम स्थान और परे से भी परे की गति है ।

पैंगिरहस्य ब्राह्मण में, शंकर ब्रह्मसूत्र, मानव धर्मशास्त्र तथा गीता में उसे अज और क्षेत्रज्ञ दो नामों से पुकारा है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वास्तव में ईश्वर की व्याख्या के लिए यही दो शब्द सर्वाधिक वैज्ञानिक हैं । प्रकृति का कार्य है ब्रह्माण्ड की रचना, यदि आत्म चेतना को प्रकृति का ही गुण मान लिया जाय तो फिर वैज्ञानिक प्रत्येक तारा में जीवन क्यों नहीं मानते ? फिर तो किसी भी रूप में प्रत्येक पिण्ड में जीवन होना चाहिए, पर ऐसा अभी वैज्ञानिक उपकरणों के ज्ञान में नहीं आया है । यद्यपि वह प्रकृति के कण-कण में समाविष्ट है, पर वह दृश्य नहीं, क्षेत्रज्ञ है, अर्थात् प्रत्येक क्षेत्र को अच्छी प्रकार जानने वाला है । "आनन्दीवातं स्वधया तदेकम्" (ऋग्वेद १०/१२६/२)—वह बिना प्राण-वायु के जीवित, प्रकृति से संयुक्त किन्तु अद्वितीय है ।

उपनिषद्कारों की यह मान्यताएँ कपोल कल्पित कर दी गई होतीं, वेद के ज्ञान को सचमुच ठुकरा दिया गया होता, यदि विज्ञान उस सूक्ष्मता के अध्ययन की ओर अग्रसर नहीं होता ।

संसार के सभी पदार्थ मूलभूत दो प्रकार के कणों से बने हैं—१. नाभिक कण (न्यूक्लियस)—इसमें अब तक जो जानकारियाँ मिली हैं वह प्रोटॉन जिसमें घन विद्युत आवेश होता है और दूसरी कण न्यूट्रॉन है जिसमें कोई चार्ज नहीं होता । इससे अधिक नाभिक की कोई जानकारी नहीं थी । यह उल्लेखनीय है कि प्रयोग के समय गणितीय निष्कर्ष सत्य निकलते हुए भी यह केवल परिकल्पनाएँ हैं, इन्हें आज तक किसी ने देखा नहीं । दूसरे नम्बरों के कणों को इलेक्ट्रॉन कहते हैं, जो ऋण विद्युत के कण होते हैं और नाभिक के किनारे-किनारे चक्कर लगाते हैं ।

सन् १९३० के एक दिन एक फ्रेंच वैज्ञानिक डॉ. पाल एन्ड्रियेन मारिस डीराक के मस्तिष्क में एक विचार आया कि क्या ऐसा भी हो सकता है कि नाभिक (न्यूक्लियस) में पाये जाने वाले धनावेश द्रव्य के साथ की ऋणावेश द्रव्य भी हो और इलेक्ट्रॉन के साथ कोई ऐसा भी इलेक्ट्रॉन हो जो ऋण विद्युत आवेश न होकर धनावेश हो ।

वास्तव में यह कल्पना नितान्त गप्प लगती थी, इसीलिए इस वैज्ञानिक ने अपना विचार किसी पर प्रकट नहीं किया, फिर भी उसके मस्तिष्क में उतनी वह काल्पनिक ध्वनि चुप न रह सकी । वह निरन्तर विचार करता रहा तो एक दिन वही कल्पना सत्य सिद्ध हो गई और १९३३ में ही एक नया कण 'प्राजिट्रॉन' सामने आ गया जो था तो इलेक्ट्रॉन पर उसमें ऋण विद्युत आवेश न होकर धन विद्युत आवेश था, इसी पर मारिस डीराक को 'नोबेल पुरस्कार भी मिला ।

उसके बाद भी खोजें चलती रहीं । १९५५ में ओवेन चैम्बरलेन तथा एमोलियो जे. सेग्रे ने 'प्रति-प्रोटॉन' की भी खोज कर ली । यह प्रति-प्रोटॉन है तो प्रोटॉन ही पर उसका उल्टा अर्थात् ऋणावेश कण है । इस खोज के साथ ही प्रकृति के साथ एक नये तत्व की खोज का क्रम चलता है, उसे प्रति-पदार्थ या एण्टी-इलेमेन्ट कहते हैं । यह प्रति-पदार्थ कोई स्थूल द्रव्य न होकर वास्तव में, वैसा दर्शन या अनुभूति मात्र है, जिसमें समय, गति और पदार्थ समासीन दिखाई देता है । वास्तव में, यदि इस नये निष्कर्ष को क्षेत्रज्ञ के साथ तुलना करें तो स्पष्ट हो जाता है कि ऐसी निराकार सत्ता की स्थिति अकाट्य है, जो स्वयं पदार्थ में होकर भी पदार्थ से परे-अद्वितीय है । इसे जीव, आत्मा, विचार, ज्ञान, अनुभूति, मन, बुद्धि इस तरह की कोई संज्ञा कह सकते हैं ।

इससे भी महत् कल्पना तो प्रति ब्रह्माण्ड की है । अब वैज्ञानिक यह विश्वास करने लगे हैं कि ब्रह्माण्ड के निर्माण में, जिससे हम परिचित हैं, केवल वही द्रव्य या पदार्थ काम नहीं कर रहा वरन् एक उसी के गुणों वाला किन्तु उससे ठीक विपरीत एक और भी तत्व होना चाहिए, उसका नामकरण अभी से कर दिया गया है पर उसकी जानकारी और खोज अभी तक अधूरी है । इसका मूल कारण परमाणुओं में प्रति-परमाणु की उपस्थिति है । ऋण और धन आवेश पास-पास आते ही एक-दूसरे को रद्द कर देते हैं । उसी प्रकार यह दोनों प्रकार के तत्व होकर भी एक-दूसरे से विपरीत पड़ने के कारण परस्पर इस प्रकार आलिंगनबद्ध हो जाते हैं कि उन्हें अलग करना कठिन हो जाता है ।

तुलसीदास ने भी यही लिखा है—

गिरा अरथ जल-बीचि सम, कहियत भिन्न न भिन्न ।
बन्दौ सीताराम पद जिनहिं परम प्रिय खिन्न ॥

जो केवल दुःखियों के दुःख दूर करने में निरन्तर रत हैं, उन प्रकृति और परमेश्वर को एक-दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता । वे वाणी में, भाव और जल में तरंग की भाँति इस तरह गुँथे हैं कि उन्हें अलग-अलग कदापि नहीं किया जा सकता ।

जो वस्तु है, पर दिखाई नहीं देती, उसके अस्तित्व को कैसे स्वीकार किया जाय, किस प्रकार उसे देखा और उसकी अनुभूति की जाय, यह एक जटिल समस्या है । भारतीय तत्वदर्शन के आधार पर ऐसी योग-पद्धतियाँ विकसित की गई हैं, जिनके अभ्यास से इन सूक्ष्म तत्वों की अनुभूति की जा सकती है । यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्वनि, समाधि आदि साधन ऐसे ही हैं, जिनसे आत्म-चेतना के विभिन्न स्तरों का क्रमिक विकास होता है और उनसे अन्न या पदार्थों की क्रमशः सूक्ष्म होती अवस्था—रस, रक्त, माँस, अस्थि, वीर्य, मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार आदि का तात्विक ज्ञान होता चला जाता है, पर यह ऐसी कष्ट साध्य, समय साध्य तथा श्रद्धा और विश्वासभूत प्रक्रियाएँ हैं, जिन पर आज का बुद्धिमान या पढ़ा-लिखा व्यक्ति सहज आस्था प्रकट नहीं कर सकता । तर्क की कसौटी पर यह मान्यताएँ सही नहीं उतरतीं । आज की प्रत्येक बात विज्ञान के तरीके से स्वीकार की जाती है । यद्यपि उपर्युक्त तरीके आत्म-विकास के वैज्ञानिक प्रयोग ही हैं, पर उनका वैज्ञानिक विश्लेषण न हो पाने से ही तथाकथित तार्किक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

व्यक्ति सन्तुष्ट नहीं हो पाते, उन्हें ईश्वरीय उपस्थिति और आत्म कल्याण के सूत्र वैज्ञानिक ढंग से ही समझाए जा सकते हैं । अब विज्ञान इस स्थिति में आ भी गया है, जब भारतीय तत्वदर्शन को हल्का बनाकर उन्हें भी इन सत्यों से परिचित कराया जा सके ।

न्यूटन बगीचे में बैठा था । ऊपर पेड़ से एक सेब गिरा तो न्यूटन चकित हो गया । सामान्य व्यक्ति के लिए इसमें क्या आश्चर्य हो सकता था, पर न्यूटन के मस्तिष्क में उसी बात ने एक भिन्न दिशा पकड़ी । उसने सोचा, यह सेब नीचे ही क्यों आया, आकाश में क्यों नहीं चला गया ? इस तर्क ने गुरुत्वाकर्षण सिद्धान्त को जन्म दिया, जो आज तक विज्ञान-जगत का एक विशिष्ट सिद्धान्त माना जाता रहा है ।

अब उसे सार्वभौमिक नियम बनाने में कठिनाई हो रही है । फ्रांस के वैज्ञानिक पाल काउडर्क ने अपनी पुस्तक 'ब्रह्माण्ड विस्तार' पेज १६६ (एक्सपैंशन ऑफ दि यूनिवर्स) में लिखा है कि—तारा-मण्डल (गैलेक्सीज) का दूरगमन न्यूटन के सिद्धान्त को तोड़ता है । गुरुत्वाकर्षण के अनुसार तो पदार्थ को सीमित होना चाहिए, वह फैलता क्यों है ? आइन्स्टीन का भी मत है कि 'न्यूटन का गुरुत्वाकर्षण कोई शक्ति नहीं, वरन् पार्थिव आकर्षण मात्र है' । वस्तुतः न्यूटन को जो श्रेय मिला वह तो हमारे भीष्म पितामह को मिलना चाहिए जो आइन्स्टीन से कहीं अधिक समीप हैं । भूत पदार्थों के गुण का वर्णन करते हुए उन्होंने युधिष्ठिर से कहा—

भूमैः स्थैर्य गुरुत्वं च काठिन्यं प्रसवात्मता ।
गन्धो भारश्च शक्तिश्च संघातः स्थापना धृतिः ॥

—महाभारत शा. प. २६१

हे युधिष्ठिर ! स्थिरता, गुरुत्वाकर्षण, कठोरता, उत्पादकता, गन्ध, भार, शक्ति, संघात, स्थापना आदि भूमि के गुण हैं ।

यह गुण भूमि में ही नहीं, संसार के सभी पदार्थों में है कि वे अपनी तरह के पदार्थों को आकर्षित और प्रभावित करते हैं, भले ही वह दूरी कितनी ही क्यों न हो । इसका सबसे अच्छा विश्लेषण कई हजार वर्ष पूर्व महामुनि पातंजलि ने 'सादृश्य और आन्तर्य' सिद्धान्त से कर दिया था । गुरुत्वाकर्षण सादृश्य का ही उपखण्ड है । समान गुणों वाली वस्तुएँ परस्पर आकर्षित होती हैं । उससे आन्तर्य पैदा होता है अर्थात् एक स्थान की वस्तुएँ दूसरे स्थानों की ओर गमन करती रहती हैं । इसी से सृष्टि विकास की प्रक्रिया निरन्तर चल रही है—

'अचेतनेष्वपि, तद् यथा-लोष्ठ क्षिप्तो बाहुवेगं गत्वा नैव तिर्यग् गच्छति नोर्ध्वमारोहति पृथिवीविकारः पृथिवीमेव गच्छति-आन्तर्यतः । तथा या एता आन्तरिक्ष्यः सूक्ष्माआपस्तासां विकारो धूमः । स आकाश देशे निवाते नैव तिर्यग् गच्छति नावागवरोहति । अब्विकारो ऽप एव गच्छतिआन्तर्यतः । तथा ज्योतिषो विकारो अर्चिराकाशदेशो निवाते सुप्रज्वलितो नैव तिर्यग् गच्छति, नावागवरोहति । ज्योतिषो विकारो ज्योतिरेव गच्छति आन्तर्यतः ।

—१।१।५०

'चेतन-अचेतन सब में आन्तर्य सिद्धान्त काम करता है । मिट्टी का ढेला आकाश में जितनी बाजुओं की ताकत से फैंका जाता है, वह उतना ऊपर चला जाता है, फिर न तो ऊपर जाता है न ही तिरछा जाता है वह तो पृथ्वी का विकार होने के कारण पृथ्वी में ही आ गिरता है । इसी का नाम आन्तर्य है । इसी प्रकार अन्तरिक्ष में सूक्ष्म आपः (हाइड्रोजन) की तरह का सूक्ष्म जल तत्व ही उसका विकार धूम है । यदि पृथ्वी में धूम होता है तो वह पृथ्वी में क्यों नहीं आता ? वह आकाश में जहाँ हवा का प्रभाव नहीं, वहाँ चला जाता है, न तिरछे जाता है, न नीचे आता है । इसी प्रकार ज्योति का विकार "अर्चि" है, वह भी न नीचे आता है, न तिरछा जाता है । फिर वह कहाँ जाता है ? ज्योति का विकार ज्योति को ही जाता है ।'

इस आन्तर्य के सिद्धान्त से शरीर के स्थूल और सूक्ष्म सभी तत्वों का विश्लेषण कर सकते हैं । इनमें सभी स्थूल द्रव्य आदि अपने-अपने क्षेत्र को चले जाते हैं, पर प्रत्येक क्षेत्र का अनुभव कराने वाला अर्चि कहाँ जाता है । उसे भी आन्तर्य के सिद्धान्त से कहीं जाना चाहिए । उसका भी कोई ब्रह्माण्ड और ठिकाना होना चाहिए, जहाँ वह ठहर सके । जब इस प्रकार का ध्यान किया जाता है तब एक ऐसी उपस्थिति का बोध होता है जो समय ब्रह्माण्ड और गति से भी परे होता है । वह कारण चेतना ही ब्रह्म है । योग का उद्देश्य शरीरस्थ क्षेत्रज्ञ को उस कारण सत्ता में मिला देने का है । आन्तर्य सिद्धान्त ध्यान की इसी स्थिति को सिद्ध करता है । इसीलिए उसे प्रति गुरुत्वाकर्षण कहा जा सकता है अर्थात् मन को अन्य सभी विकारों का परित्याग कर केवल चेतना को चेतना से ही, प्रकाश को प्रकाश से ही मिलाने का अभ्यास करना चाहिए । इसी से पदार्थ से परे, राग-द्वेष आदि पार्थिव विकारों से परे उस शुद्ध बुद्ध, निरंजन आत्मा और परमात्मा की अनुभूति की जा सकती है ।

एक नई दुनिया अब हाथ लगने ही वाली है

मनुष्य की सम्भावनाएँ असीम होते हुए भी उसे ससीमता अपने बन्धन में जकड़े रहती है और प्रकृति के रहस्यों का ज्ञान प्राप्त करने के लिए आतुर होते हुए भी वह विशाल समुद्र में से कुछ सीपियाँ और घोंघे ही ढूँढ़ पाता है ।

पिछले दो सौ वर्षों में विज्ञान के क्षेत्र में हम बहुत आगे बढ़े हैं । अन्तरिक्षीय खोजें अपने समय की विशेष उपलब्धियाँ हैं । इससे पूर्व अणु विस्फोट भी चकित कर चुका है । अब हम अद्यावधि प्राप्त जानकारियों से भी कहीं अधिक जिस

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विस्मयजनक क्षेत्र में, विस्मयजनक उपलब्धियों के क्षेत्र में प्रवेश करने जा रहे हैं, वह है प्रति पदार्थ से बनी हमारे साथ-साथ रह रही एक समान्तर दुनिया । इसका ज्ञान प्राप्त करके हम जानेंगे कि काया और छाया की तरह दो संसार न जाने कब से साथ-साथ जुड़े हुए हैं और एक-दूसरे पर निर्भर रह रहे हैं ।

अपनी परिचित अणु सत्ता से इस अपने विश्व में दीख पड़ने वाले पदार्थ बने हैं । उन्हीं के उपयोग से अपना काम चलता है । अब यह पता चला है कि अणु का प्रतिद्वन्द्वी एक और प्रति अणु है । पदार्थ के प्रतिद्वन्द्वी प्रति पदार्थ का भी अस्तित्व मौजूद है । इतना ही नहीं इनसे बनी हुई एक अनोखी प्रतिद्वन्द्वी दुनिया भी मौजूद है । अब तक हम इस सबसे परिचित नहीं रहे यह ठीक है, पर इससे क्या, स्थिति तो हमारी जानकारी होने न होने की परवाह किए बिना यथावत् बनी ही हुई है ।

एण्टीमैटर, एन्टीयूनिवर्स की चर्चा अब कोई कल्पना या सम्भावना नहीं रही वरन् एक ऐसी यथार्थता बन गई है, जिस पर तेजी से खोज की जा रही है और यह पता लगाया जा रहा है कि इन दोनों प्रतिद्वन्द्वी संसारों के बीच आदान-प्रदान का दरवाजा किस तरह खुल सकता है ।

इस दिशा में यदि थोड़ी और सफलता मिल गई तो पौराणिक उपाख्यानों में वर्णित देवलोक और असुर लोक की गाथाओं को हम साकार देखेंगे और अनुभव करेंगे कि भगवान और शैतान की तरह चिरन्तन काल से दो प्रतिद्वन्द्वी संसार आपस में गुँथे हुए चले आ रहे हैं । उनके सामान्य सहकार को बढ़ाना सम्भव हो सके तो दुनिया इतनी बड़ी सामर्थ्य करतलगत कर लेगी जिसके सहारे मात्र पृथ्वी तो क्या ब्रह्माण्ड के विशाल क्षेत्र पर अधिकार कर लेना और बिखरी सम्पदाओं से लाभ उठा सकना उसके लिए सम्भव हो जायेगा । फिर मनुष्य विश्व का मुकुटमणि नहीं, ब्रह्माण्ड का अधिनायक बनकर रहेगा ।

इस सुखद सम्भावना के साथ-साथ यह विभीषिका भी मौजूद है कि प्रति पदार्थ की सत्ता डायनामाइट, बारूद और अणु विस्फोट से निकलने वाली ऊर्जा से भी अधिक खतरनाक है । इस क्षेत्र में एक चिन्गारी गलत-सलत ढंग से पड़ गई तो फिर किसी की खैर नहीं । न पृथ्वी की, न सौर-मण्डल की और न समूचे ब्रह्माण्ड की । उस विस्फोट से पूरे ब्रह्माण्ड का आकार ही बदल सकता है और प्रस्तुत जड़-चेतन की स्थिति में आमूल चूल परिवर्तन हो सकता है । यदि विभीषिका कभी साकार हुई तो उस महाक्रान्ति के बाद की स्थिति कल्पनातीत होगी । तब प्राणधारी भी अबकी अपेक्षा सर्वथा भिन्न प्रकार के होंगे और उनकी आकृति एवं प्रकृति की हम लोगों के साथ कोई समानता न होगी । तब ज्ञान-विज्ञान के आधार भी उलट जावेंगे अभी तो उस महाप्रलय का स्वरूप समझना ही कठिन पड़ रहा है, फिर महाक्रान्ति के बाद होने वाले अभिनव सृजन और उसमें प्राणियों की स्थिति का स्वरूप किस प्रकार सोचा जा सकता है ।

प्रति पदार्थ की खोज बड़ी सावधानी किन्तु तत्परता के साथ हो रही है । अन्तरिक्ष पर अधिकार करने के लोभ का संवरण न किया जा सका तो फिर 'प्रति विश्व' की सत्ता को जानने और उसके साथ तालमेल बिठा कर और भी बहुत कुछ पाने की सम्भावना को आँख से ओझल किया ही कैसे जा सकता है ? 'प्रति पदार्थ' 'प्रति विश्व' आज के विज्ञान जगत का सर्वोपरि आकर्षण है । उसकी खोज में अत्यन्त गम्भीर प्रयास सावधानी के साथ किए जा रहे हैं ।

पदार्थ के प्रति पक्षी "प्रति पदार्थ" की कल्पना तो सन् १९२८ में ही सापेक्षतावादी सिद्धान्त के अन्तर्गत ही कर ली गई थी, पर तब उस सम्बन्ध में वैसे प्रत्यक्ष प्रयोग सम्भव न थे, जैसे कि आज हो गए हैं । जिस प्रकार क्रिया की प्रतिक्रिया और ध्वनि की प्रतिध्वनि होती है उसी प्रकार 'पदार्थ' के साथ-साथ 'प्रति पदार्थ' भी काम करता है । इन उभयपक्षीय अस्तित्वों से ही विश्व में विविध प्रकार की गतिविधियाँ सम्भव हो रही हैं । यदि किसी डिब्बे में गोलियाँ खचाखच भर दी जायें तो फिर उनका हिलना-डुलना भी सम्भव न हो सकेगा; इसी प्रकार यदि संसार में सर्वत्र परमाणु ही ठसे पड़े हों तो फिर उनका हिलना-डुलना ही बन्द हो जायेगा और सर्वत्र निस्तब्ध नीरवता एवं स्थिरता दिखाई पड़ेगी । यह प्रति पदार्थ ही है जो अणुओं को अपनी हलचलें जारी रखने का अवसर दे रहा है ।

रूस और अमेरिका के वैज्ञानिक इस प्रति पदार्थ को प्राप्त करने का जी तोड़ प्रयत्न कर रहे हैं । नाभिकीय कणों को तीन हजार करोड़ इलेक्ट्रॉन वोल्ट की गर्मी देकर एक नया प्रतिकण प्राप्त किया गया है—'ड्यूटॉन' । हाइड्रोजन और हीलियम के प्रतिकण प्राप्त करने की आशा अब बलवती होती जा रही है । पर अभी इस कठिनाई का हल नहीं निकला है, कि इन्हें सुरक्षित कैसे रखा जाय ? इनकी एक बुरी आदत यह है कि वे अकेले अपना अस्तित्व बनाये रहने में असमर्थ होते हैं । उत्पन्न होते ही अन्य कणों के साथ घुलते हैं और अपना अस्तित्व खो बैठते हैं । यदि इसे सुरक्षित रखा जा सकना सम्भव हो गया तो पदार्थ और प्रतिपदार्थ का घर्षण सम्भव हो जायेगा और उस प्रक्रिया से इतनी अधिक ऊर्जा प्राप्त की जा सकेगी कि संसार भर में सस्ती बिजली की कमी कहीं भी अनुभव न की जाय । तब जहाँ-तहाँ छोटे-छोटे सूर्य उगाये जा सकेंगे और उनसे आवश्यक ऊर्जा इच्छानुसार और सुविधानुसार ग्रहण करते रह सकना सम्भव हो जायेगा ।

अन्तरिक्ष से प्राप्त रेडियो तरंगें बताती हैं कि किसी क्षेत्र में प्रति द्रव्य बड़े परिमाण में उत्पन्न हो रहा है । यह उत्पत्ति कहाँ हो रही है, इसके सम्बन्ध में विज्ञानी आल्फवेन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

का कथन है, कि वह 'साइग्लेस' और 'विर्गो' नीहारिकाओं में उबल रहा है और उससे नये-नये ऐसे ग्रह-नक्षत्रों का सृजन हो रहा है, जो इस प्रति पदार्थ से ही बने हैं । वे उसका नाम चतुर्थ आयाम स्तर का प्लाज्मा बताते हैं और कहते हैं उसकी सामर्थ्य अपने लोक में पाये जाने वाली आण्विक ऊर्जा से कहीं अधिक सशक्त है ।

कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय में सन् १९७० में सबसे पहले "प्रतिकण" के अस्तित्व को कल्पना क्षेत्र से आगे बढ़ाकर प्रामाणिक स्तर पर खड़ा किया था । न्यूक्लियर इन्टर एक्शन के दौरान 'प्रतिकण' का फोटो खींचा गया था । इसके लिए एक सेकण्ड के पन्द्रह अरबवें भाग में फोटो खींच सकने वाला यन्त्र विशेष रूप से बनाया गया था और उस प्रामाणित प्रतिकण का नाम 'सेन्टी ओमेगा माइनस' दिया गया था । तब से अब तक इन पाँच वर्षों में और भी कई प्रतिकण खोजे जा चुके हैं ।

यह खोज तीन सिद्धान्तों के आधार पर सम्भव हुई है—(१) सापेक्षिता सिद्धान्त द्वारा शक्ति के निगेटिव होने का प्रमाण प्रस्तुत करने से (२) क्वाण्टम मिकैनिक्स के समीकरण का हल प्रस्तुत करने से (३) वेवमिकैनिक्स के इलेक्ट्रॉन के गुणों की अभिनव विवेचना करने से ।

सन् १९२८ में जब डिराक ने क्वाण्टम मिकैनिक्स के समीकरण का हल करते हुए एनर्जी के निगेटिव रूप की नई व्याख्या की और प्रति इलेक्ट्रॉन, पाजिट्रॉन के अस्तित्व का प्रतिपादन किया, तो तत्कालीन मूर्धन्य विज्ञानवेत्ताओं ने उनका उपहास उड़ाया । पर पीछे खोज जारी रही । सन् १९३२ में जब प्रति इलेक्ट्रॉन के फोटो खिंचकर सामने आये तो वह बात प्रामाणिक ठहरा दी गई । सर्वविदित है, कि ट्रांजिस्टर का आविष्कार 'होल' और 'इलेक्ट्रॉन' प्रक्रिया के सहारे ही सम्भव हुआ है । इसमें 'होल' वस्तुतः प्रति इलेक्ट्रॉन का ही एक रूप है ।

प्रति इलेक्ट्रॉन के सम्बन्ध में एक सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि उसका जीवन काल अत्यन्त स्वल्प है । वह जन्म लेते ही इलेक्ट्रॉन के साथ संयुक्त हो जाता है और उस विलय से 'गामा विकिरण' उत्पन्न होता है ।

प्रति पदार्थ एवं प्रति विश्व की खोज के आरम्भिक दिनों में केवल इलेक्ट्रॉन का प्रतिद्वन्द्वी, प्रति इलेक्ट्रॉन ही खोजा जा सकता था, पर यह सम्भावना तो ध्यान में बनी ही रही कि इसी प्रकार अन्य कणों के भी प्रतिपक्षी, प्रतिद्वन्द्वी, प्रतिकण हो सकते हैं । सन् १९५५ में इसका भी समाधान मिल गया । 'वेवाट्रान' नामक सूक्ष्मदर्शी यन्त्र की सहायता से न्यूट्रॉन और प्रोटॉन के प्रतिपक्षी भी खोज लिए गए हैं । इससे सिद्धान्ततः प्रति पदार्थ और प्रतिविश्व के अस्तित्व को स्वीकार कर लिया गया है और यह आशा बँध गई है कि कभी न कभी मनुष्य इस महादैत्य को अपना वशवर्ती बनाकर न केवल अपनी पृथ्वी का वरन् लोक-लोकान्तरों का अधिपति बन सकने का स्वप्न साकार कर सकेगा ।

अभी तक पदार्थ के सम्बन्ध में हमारा अनुभव बहुत स्वल्प है । अभी अपने हाथ केवल खण्डन क्रिया फिशन हाथ लगी है । यह कितनी कठिन और कितनी जटिल है, इसे वे लोग जानते हैं जो परमाणु विस्फोट के साधन जुटाते हैं । उस कार्य में अत्यधिक ऊर्जा प्रयुक्त करनी पड़ती है । खण्डन से अधिक कठिन संश्लेषण फ्यूजन है । इससे खण्डन की तुलना में कहीं अधिक शक्ति को प्रयोग के लिए जुटाना पड़ेगा । इससे भी बड़ी कठिनाई यह है कि संश्लेषण के लिए प्रयुक्त ऊर्जा और क्रिया से उत्पन्न प्रति ऊर्जा और प्रतिक्रिया इतनी सशक्त होगी, जिसे नियन्त्रित रख सकना कम से कम आज की स्थिति में तो किसी भी प्रकार सम्भव नहीं है । प्रति परमाणु के संश्लेषण में अनुमानतः दसलाख डिग्री ताप उत्पन्न होगा । यह कितना भयंकर होगा इसका अनुमान इस बात से लग सकता है कि पानी केवल १०० डिग्री गर्मी से ही उबलने और भाप बनकर उड़ने लगता है ।

प्रति अणु की शक्ति अपने जाने-माने गुण की तुलना में सहस्रों गुनी अधिक होगी । यदि वह हाथ लग जाय तो केवल हीलियम गैस से भी हम नया सूर्य बना सकेंगे और उसका मनचाहा उपयोग कर सकेंगे ।

प्रति पदार्थ में एक और बुरी आदत है कि वह जन्म लेते ही 'पदार्थ' में घुस पड़ता है और उसी में विलीन हो जाता है । यदि 'प्रति परमाणु' बन गया तो उसे वर्तमान परमाणु में घुस पड़ने से कैसे रोका जा सकेगा ? यह एक और भी बड़ा सिरदर्द है । संयोग से नई चीज की उत्पत्ति का सिद्धान्त सर्वविदित है । प्रस्तुत परमाणुओं के साथ सम्भावित प्रति परमाणु जब संयुक्त होंगे तो न जाने किस नई शक्ति का उदय हो जाय । यदि वह सृजनात्मक न होकर ध्वंसात्मक हुई तो फिर अपनी पृथ्वी तो उससे माचिस की तीली की तरह खाक हो ही जायेगी । पूरे सौर-मण्डल और अपनी सम्पूर्ण आकाश-गंगा का ही नक्शा बदल सकता है । तब जो कुछ आज दिखाई पड़ रहा है उससे सर्वथा भिन्न प्रकार के दृश्य सामने आ खड़े हो सकते हैं ।

प्रति पदार्थ का अस्तित्व अब असंदिग्ध रूप से जान और मान लिया गया है और इस बात पर वैज्ञानिक जगत में पूर्ण सहमति हो गई है, कि इस ब्रह्माण्ड के अनेक क्षेत्र प्रति पदार्थ से बने हुए हैं और उनकी भौतिक स्थिति अपनी पृथ्वी की परिस्थितियों से सर्वथा भिन्न, लगभग उल्टी है । जिस प्रकार अपनी दुनिया है 'प्रति पदार्थ' तनिक-सी झांकी देकर लुप्त हो जाता है । ठीक उसी प्रकार उन प्रति पदार्थ से बने लोकों में अपने क्षेत्र का पदार्थ हल्की-सी झलक दिखाकर वहाँ की संरचना में घुलता और समाप्त होता रहता होगा ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तन्त्र साधना में 'छाया पुरुष' साधना का विस्तृत विवरण मिलता है । यह छाया पुरुष क्या है ? जीवित मनुष्य का एक सशक्त प्रतिबिम्ब । जिसे साधन प्रयोगों द्वारा अपने वशवर्ती बनाया जाता है और वह किसी भिन्न सत्ता वाले अदृश्य व्यक्ति की तरह आज्ञानुसार काम करता है । इसकी क्षमता साधनकर्त्ता की अपेक्षा कहीं अधिक होती है ।

छाया पुरुष का अस्तित्व भले ही संदिग्ध हो, पर छाया विश्व पदार्थ की सिद्धि अब वैज्ञानिक जगत में मान्यता प्राप्त कर चुकी है और उसे पकड़ने, वशवर्ती करने के लिए प्रबल चेष्टा हो रही है ।

दर्पण के सामने खड़े होने पर एक अपने ही जैसा मनुष्य दीखता है, पर वह होता है उल्टा । जिधर हमारा दाहिना हाथ होता है उधर उसका बायां हाथ । अन्य अंग भी उल्टे होते हैं । फोटोग्राफी की प्लेट पर भी यही होता है । अपने काले बाल सफेद होते हैं और सफेद दाँत काले । इसे निगेटिव प्लेट कहते हैं । इसे उलट कर फिर फोटो खींचा जाता है, तब कहीं सीधी तस्वीर आती है । बिम्ब का प्रतिम्बि उल्टा होता है । इसे मिराइमेज कहते हैं—काया और छाया का, छाया और प्रतिछाया का यही क्रम चलता है । विपरीतता के लिए अंग्रेजी में 'एन्टी' शब्द का प्रयोग होता है ।

पदार्थ की सबसे छोटी इकाई परमाणु है । इस परमाणु के भी कई अंग-प्रत्यंग हैं । इस परमाणु परिवार को ही पदार्थ का सूक्ष्मतम अंग माना जाता था, पर अब इसके साथ एक सहोदर भाई और जुड़ गया है, वह है 'प्रति पदार्थ' । पार्टिकल्स अब अकेले नहीं हैं उनके साथ 'एन्टी पार्टिकल्स की चर्चा भी जोरों पर है ।

परमाणु कितना बड़ा होता है इसका मोटा अनुमान इस प्रकार लगा सकते हैं कि चीनी के एक दाने में लगभग एक हजार शंख परमाणु होंगे । जो ठोस नहीं हैं । उनके भीतर मध्य भाग में नाभिक होता है, नाभिक न्यूक्लियस को केन्द्र मानकर उसके चारों ओर पार्टिकल्स उसी प्रकार चक्कर लगाते हैं, जिस प्रकार सूर्य के इर्द-गिर्द उसके ग्रह-उपग्रह । नाभिक का निर्माण प्रोटॉन और न्यूट्रॉन कणों के संयोग से बना होता है, उसके चारों ओर चक्कर लगाने वाले कण इलेक्ट्रॉन कहलाते हैं । इलेक्ट्रॉनों में विद्युत का ऋण आवेश और प्रोटॉनों में धन आवेश होता है न्यूट्रॉनों पर कोई विद्युत आवेश नहीं होता । अब कुछ और कण भी खोज निकाले गए हैं उन्हें मेसॉन, न्यूट्रिनो, फोटॉन, सिगमा प्लस, सिगमा माइनस, सिगमा जीरो आदि नाम दिए गए हैं ।

मौटेतौर से सभी परमाणु एक जैसे होते हैं, पर उनकी भीतरी रचना में प्रोटॉन, इलेक्ट्रॉन आदि की संख्या का जो अन्तर रहता है, उसी आधार पर उनकी भिन्नता रहती है और भिन्न स्तर के परमाणुओं का समूह विभिन्न प्रकार के पदार्थों के अस्तित्व रूप से सामने आता है ।

छाया पुरुष की साधना तान्त्रिक उपासना के क्षेत्र में बहुत समय से प्रचलित है । छाया लोक की चर्चा बहुत समय से कही-सुनी जाती रही है । अब यह सम्भावना प्रामाणिक स्तर पर स्वीकार की जा रही है कि एक दिव्यलोक हमारे साथ-साथ ही रह रहा है; उसमें न केवल पदार्थ भी भरा है वरन् प्राणी भी निवास कर रहे हैं । वे प्राणी देव दानवों की कल्पना से मिलते-जुलते हो सकते हैं और जीवाणुओं, विषाणुओं जैसे भी । हम मनुष्यों से वे समर्थ अपरिचित उदासीन भी हो सकते हैं और सम्बद्ध सहचर बनकर हमारी परस्थितियों के निर्माण में भारी योगदान करते हुए भी पाये जा सकते हैं । कहा नहीं जा सकता कि इस अविज्ञात संसार में भरा हुआ जड़ चेतन हमारे लिए सम्पर्क बढ़ाने योग्य है या अयोग्य । इन रहस्यों का उद्घाटन भविष्य में होगा । आज तो उसका स्वरूप समझने का प्रारम्भिक कदम ही उठाया जा सकना सम्भव है, सो ही उठ भी रहा है ।

प्रकृति के रहस्यों के पर्त जैसे-जैसे खुल रहे हैं वैसे-वैसे मानव बुद्धि अधिकाधिक हतप्रभ होती जा रही है और अपनी असीमता की गर्वोक्ति पर पुनर्विचार कर रही है । खोज किसी भी सीमा तक बढ़ जाय, हाथ कुछ भी लग जाय तब भी विराट् विश्व और मानव प्राणी की तुलनात्मक स्थिति देखते हुए 'नेति-नेति' की उक्ति दुहराई जाती रहेगी ।

प्रतिविश्व-प्रतिपदार्थ : शक्ति का अजस्र स्रोत

धूप के साथ छाया जुड़ी रहती है । ध्वनि की प्रति-ध्वनि होती है, रबड़ की गेंद को दीवार पर मारने से लौट कर वह वापस आती है । प्रकाश का प्रतिद्वन्द्वी अन्धकार मौजूद है । पेण्डुलम एक ओर चला देने से उसके आगे-पीछे चलने की क्रिया अनायास ही चलने लगती है । हृदय की धड़कन, श्वास-प्रश्वास, आकुंचन-प्रकुंचन जैसे परस्पर विरोधी क्रिया-कलाप ही शरीर को जीवित रखते हैं । समुद्र में ज्वार-भाटे के कारण ही लहरों की तरंग शृंखला चलती है । 'पिस्टन' द्वारा गति तभी उत्पन्न होती है, जब वह आगे-पीछे चलने का क्रम अपनाता है । शक्ति तरंगों के कम्पन्न आगे-पीछे बढ़ने हटने की हलचल पर ही निर्भर है । क्रिया की प्रतिक्रिया पर ही इस विश्व का सारा क्रिया-कलाप चल रहा है । पुण्य का प्रतिद्वन्द्वी पाप, देव विरोधी दानव, भगवान विरोधी शैतान, सत् विरोधी तम, स्वर्ग का प्रतिद्वन्द्वी नरक । इसी विरोध विपक्ष के आधार पर अध्यात्म जीवन की गतिविधियाँ कार्यान्वित हो रही हैं ।

अब पता चला है कि विश्व का प्रतिद्वन्द्वी भी एक प्रति विश्व है । जिसका अस्तित्व उस विश्व के समान ही मौजूद है, जिससे कि हमारा निरन्तर काम पड़ता है और जिसकी शक्तियों से अवगत मानव समाज ने पदार्थ विज्ञान की शोध

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की है और उसी आधार पर विविध आविष्कारों के द्वारा अनेकों सुविधाओं की, शक्ति और सामर्थ्य की, उपलब्धियाँ प्राप्त की जा सकी हैं ।

प्रति विश्व का अन्वेषण होना भी अभी बाकी है । उसकी शक्तियों का जानना और उन्हें प्रयोग में लाने का श्री गणेश अगले दिनों करना होगा, क्योंकि वर्तमान उपलब्धियाँ एकांगी एवं एकांकी हैं । उनकी अपूर्णता को पूर्णता में तभी परिणत किया जा सकेगा जब प्रति विश्व की शक्तियों को प्राप्त कर लिया हो । फिर एक की कमी दूसरी से पूरी होगी और एक का ईंधन दूसरी से मिलेगा । तब विविध यन्त्रों के संचालन के लिए तेल, कोयला, भाप, बिजली, एटम शक्तियों के द्वारा ईंधन प्राप्त करने की आवश्यकता न पड़ेगी । विश्व और प्रतिविश्व का परस्पर संतप्त समन्वय हो जाने से पदार्थ और प्रतिपदार्थ एक दूसरे का अभाव पूरा कर दिया करेंगे और लगभग सभी प्रयोजन स्वसंचालित पद्धति द्वारा पेण्डुलम प्रक्रिया की भाँति अपने आप चलते रहेंगे और जब जिस कार्य की आवश्यकता होगी, उसे पदार्थ और प्रतिपदार्थ का ताल-मेल बिठा देने की प्रणाली संचालित कर देने मात्र से सब कुछ गतिशील हो जाया करेगा ।

प्रतिविश्व की, प्रतिपदार्थ की ओर जब से वैज्ञानिकों का ध्यान गया है तब से एक नई हलचल, एक नई उमंग सर्वत्र दिखायी पड़ने लगी है । उसकी खोज के लिए सिद्धान्त और आधार तलाश किए जा रहे हैं, क्योंकि जिन सिद्धान्तों के आधार पर प्रस्तुत पदार्थ विज्ञान का ढाँचा खड़ा किया गया है, वे प्रतिपदार्थ के लिए लागू न किए जा सकेंगे वरन् उसमें लगभग उल्टे आधारों का कहीं-कहीं तिरछे लहराते सिद्धान्तों का प्रयोग करना पड़ेगा, जब उसकी रूपरेखा बन जायेगी, तब आशा की जाती है कि एक ऐसी प्रति विद्युत शक्ति का आविष्कार किया जा सकेगा जो उपलब्ध विद्युत से कहीं अधिक शक्तिशाली होगी । उसके माध्यम से प्रस्तुत विद्युत उत्पादन के लिए जो साधन जुटाने पड़ते हैं उनमें से किसी की भी आवश्यकता न रहेगी । बटन दबाने भर की देर होगी कि आकाशव्यापी विद्युत और प्रति विद्युत परस्पर मिलकर प्रचुर परिमाण में बिजली पैदा करने लगेंगी और यह क्रम तब तक चलता रहेगा तब तक उन दोनों को पृथक न किया जाय ।

यह ब्रह्माण्ड अणु गठित पदार्थ से भरा है, जिसे मैटर कहते हैं । पंच तत्व और उनसे बने अनेक जड़ चेतन इस पदार्थ वर्ग में ही आते हैं । प्रकाश किरणें, रेडियो किरणें, विद्युत किरणें, ध्वनि किरणें अणु कम्पनी सहित पदार्थजन्य क्रिया-कलाप में गिनी जाती हैं । जो शून्य या रिक्त दिखाई पड़ता है उस पोले भाग में वायु, ईथर आदि आँख से न दीखने वाले पदार्थ भरे पड़े हैं । यहाँ खाली कुछ नहीं है । विज्ञान की पिछली मान्यता यही रही है ।

पर अब विज्ञान ने एक और तत्व खोज निकाला है । प्रति पदार्थ अर्थात् पदार्थ का प्रतिद्वन्द्वी । जैसे क्रिया की प्रतिक्रिया होती है, ध्वनि की प्रतिध्वनि, इसी प्रकार पदार्थ का प्रतिद्वन्द्वी एक प्रतिपदार्थ भी है, जो सामर्थ्य में कम नहीं वरन् अधिक ही बैठता है ।

जब केम्ब्रिज विश्वविद्यालय के गणित प्राध्यापक डिराक ने ब्रिटेन की रायल सोसायटी के सम्मुख अपना एक निबन्ध सुनाते हुए यह तथ्य प्रतिपादित किया तो उस गोष्ठी में उपस्थित संसार भर के वैज्ञानिक अवाक् रह गए । डिराक ने क्वाण्टम भौतिकी, सापेक्षतावाद के सिद्धान्तों पर अणु के प्रतिद्वन्द्वी प्रति अणु का प्रतिपादन जिन अकाट्य तथ्यों के आधार पर किया था, उसे झुठलाया भी नहीं जा सकता है । जिस प्रकार ईश्वर का प्रतिद्वन्द्वी शैतान, धर्म का विरोधी पाप, देवता का प्रतिपक्षी असुर है, उसी प्रकार यह प्रति अणु प्रति पदार्थ न केवल अपना अस्तित्व ही सिद्ध करता है । वरन् प्रतिपक्षी होने के कारण सामर्थ्यवान भी अधिक बैठता है । कितने आश्चर्य की बात है यह विश्व अपने साथ एक प्रति विश्व भी सँजोये हुए है । पदार्थ के साथ-साथ प्रति पदार्थ भी अपना काम कर रहा है ।

बहुत दिनों से विज्ञान में परमाणु की जानकारी थी । पीछे वह भी एक इकाई नहीं रहा । वरन् इलेक्ट्रॉन, प्रोटॉन, न्यूट्रॉन आदि का समूह माना गया । पीछे उसके भीतर और भी एलीक्वेन्टरों पार्टिकल मेसॉन, न्यूट्रिनो आदि मिले । यह सभी अपने-अपने ढंग से गतिशील हैं । पर गति करने को तो जगह चाहिए, खाली जगह हो तो गति कहाँ और कैसे होगी ? यह खाली जगह ही प्रतिपदार्थ है ।

यदि एक डिब्बे में खचाखच गोलियाँ भर दी जायें तो फिर न तो वह हिलडुल सकेंगी और न गिनी जा सकेंगी । इसी प्रकार यदि विश्व में अणु खचाखच भरे हों तो वे वैसी गति नहीं कर सकते, जैसी कि अब करते हैं और न उनका अस्तित्व ही अनुभव किया जा सकेगा । गतिशील अणु और उसके साथ जुड़ा हुआ अवकाश दोनों के परस्पर संयोग-वियोग का जो क्रम निरन्तर चलता है, उसी से शक्ति उत्पन्न होती है और चुम्बकत्व भरी ऊर्जा का जो प्रवाह सर्वत्र दृष्टिगोचर होता है, वह उसी उद्गम से प्रादुर्भूत होता है । इसका जितना श्रेय अणु को है, उनता ही उसे गतिशील रहने का अवसर देने वाले प्रति अणु को । दोनों में से एक का अस्तित्व यदि समाप्त हो जाय तो विश्व में फिर किसी प्रकार की कोई हलचल दिखाई न पड़ेगी । तब अणु गतिशील न रहकर स्थिर बने बैठे होंगे । इलेक्ट्रॉन के इस प्रतिद्वन्द्वी को ऐन्टी-इलेक्ट्रॉन या पाजिट्रॉन कहते हैं ।

डिराक के इस प्रतिपादन के आधार पर यह सोचा गया कि अणु के प्रत्येक अवयव का प्रतिद्वन्द्वी हो सकता है । प्रकृति के प्रत्येक भौतिक पदार्थ का—तत्व का—प्रतिद्वन्द्वी यह है, तो फिर सचमुच ही पदार्थ की तुलना में एक उतना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

ही सशक्त प्रतिपदार्थ भी मानना पड़ेगा । इस शोध की वैज्ञानिक ने जोर-शोर से खोज आरम्भ की और आइरीन, फेडरिक, क्यूरी दम्पत्ति ने उसे एक वास्तविकता के रूप में पाया । एण्डरसन ने ब्रह्माण्ड किरण सम्बन्धी अपने अनुसन्धान में इसी आधार पर सफलता प्राप्त की ।

प्रति पदार्थ कणों के बारे में एक बात ध्यान रखने योग्य है कि वे अकेले अपना अस्तित्व बनाये नहीं रह सकते, उत्पन्न होते हैं और अन्य कणों के साथ संयोग करके स्वयं विलुप्त हो जाते हैं । उनकी इस आँखमिचौनी के कारण ही विद्युत चुम्बकीय विकिरण की ऊर्जा इस विश्व को प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हो रही है । अब ब्रह्माण्ड का प्रतिद्वन्द्वी प्रति ब्रह्माण्ड, एन्टी यूनिवर्स के सम्बन्ध में खोजें चल रही हैं । इस सन्दर्भ में यह जानकारी भी मिली है कि 'साइग्लेस' और 'विर्गो' नीहारिकाओं में पदार्थ और प्रतिपदार्थ के बीच युद्ध चल रहा है । सम्भव है यह अपना ब्रह्माण्ड भी अपने प्रतिद्वन्द्वी प्रति ब्रह्माण्ड के साथ संघर्ष निरत हो ।

अध्यात्म जगत में दक्षिण मार्ग और वाम मार्ग—योग और तन्त्र की द्विविध परस्पर विरोधी आत्मबल उत्पादक साधना पद्धतियाँ प्रचलित हैं । दोनों ही विधाएँ अपने-अपने स्थान पर महत्त्वपूर्ण हैं । तन्त्र की प्रत्यक्ष शक्ति योग से अधिक है इसलिए असुर वर्ग उसे अपनाता रहेगा । जहाँ तक शक्ति उत्पादन का सम्बन्ध है, वहाँ तक तन्त्र अधिक क्षमता सम्पन्न और जल्दी परिणाम उत्पन्न करने वाला है, पर उसमें दोष एक ही है कि योग सम्बन्धित सतोगुण का सर्वथा प्रतिकूल तमोगुण उत्पन्न होता है । पाप वृत्तियाँ भड़कती हैं और उपलब्धियों को असुर कर्मों में लगा देने का क्रम चल पड़ता है । इसीलिए विचारशील लोगों ने उसे विष मिश्रित मक्खन की तरह हेय ठहराया है ।

परमात्मा और जीव को पदार्थ, प्रति पदार्थ का युग्म कह सकते हैं । दोनों जब मिल जाते हैं तो परस्पर पूरक होते हैं । एक के अभाव की पूर्ति दूसरे से होती है और जीव अपने में स्वसंचालित शक्ति प्रवाह का स्रोत उमड़ता देखता है; ऐसा स्रोत जो न तो कभी समाप्त होता है और न जिसकी क्षतिपूर्ति के लिए कुछ साधन जुटाने की आवश्यकता होती है ।

सामान्यतया रयि और प्राण की एकांगी स्थिति की पूर्ति प्रति पक्षी लिंग वाले के सान्निध्य से पूरी होती है । पति-पत्नी मिलन से न केवल भावनात्मक अभाव और इन्द्रिय जन्य अतृप्ति तृप्त होती है वरन् प्रजनन प्रक्रिया से सम्बन्धित वंश वृद्धि का क्रम भी चलता है । यह प्रचलित एकपक्षीय पदार्थ क्रम है । शक्ति उत्पादन के लिए ईंधन चाहिए । इस ईंधन की पूर्ति नर के लिए मादा से, और मादा के लिए नर से पूरी होती है । रयि को चेतना प्राण से और प्राण की तृप्ति रयि से होती है । प्रचलित स्थूल क्रम यही है ।

अगले दिनों पदार्थ और प्रतिपदार्थ की परस्पर पूरक उपलब्धि एक ही शरीर से पूरी हो जाया करेगी । प्राचीन काल में यह विज्ञान कुण्डलिनी योग के नाम से प्रचलित था, उसमें एक ही शरीर को अवस्थित रयि और प्राण को उभार कर आत्म-रति का उच्च स्तरीय आनन्द लिया जाता है । इतना ही नहीं आत्मा और प्रति आत्मा के संयोग से वे सभी उपलब्धियाँ मिल जाती हैं जिन्हें ऋद्धि-सिद्धि के नाम से पुकारा जाता है । भारतीय आत्म विज्ञानी-चेतन विश्व में पदार्थ और प्रति पदार्थ के आधार सिद्धान्तों से न केवल परिचित ही रहे हैं वरन् उनका प्रयोग भी करते रहे हैं । यदि इस सन्दर्भ में सुविस्तृत शोध की जाय तो भौतिक विज्ञान और आत्मिक विज्ञान के क्षेत्र में इतनी बड़ी उपलब्धियाँ हाथ लग सकती हैं, जिनके आधार पर मनुष्य को धरती का देवता कहा जा सकेगा ।

विश्व शक्ति का उद्गम प्रति-पदार्थ और प्रति-व्यक्तित्व

पदार्थ की सूक्ष्मतम इकाई कभी परमाणु को माना जाता था, पर अब वैसी मान्यता नहीं रही । ढेले के भीतर असंख्यों कण होते हैं, उसी प्रकार परमाणु अब एक ढेला भर है । उसके अन्तराल में अनेकों सूक्ष्म और उसके अन्तर्गत भी अति सूक्ष्म कण प्रतिकण मिलते चले जा रहे हैं । इलेक्ट्रॉन प्रोटॉन के नाम अब बहुचर्चित हैं । अब उनके भी अन्तराल में खोजी गई नई इकाइयाँ ही चर्चा का विषय बनी हुई हैं और शक्ति का उद्गम इन्हीं अति सूक्ष्मों के सम्मिलन, सम्मिश्रण एवं परिभ्रमण के क्रम को ठहराया जा रहा है । शक्ति का प्रकटीकरण ही अनुभव में आता है, उसका उद्भव कहाँ से होता है । इसके लिए अधिकाधिक गहराई में लगातार उतरते जाने की आवश्यकता पड़ती जाती है ।

यूरोप के १२ विभिन्न राष्ट्रों ने आधुनिक युग की सबसे महत्त्व की अनुसन्धान के लिए ३८५ करोड़ रुपये की लागत का एक 'सुपर प्रोटॉन सिक्रोट्रॉन' (एस. पी. एस.) के नाम से प्रसिद्ध संरचना बनायी है जिसकी परिधि ७ किलोमीटर और २.२ किलोमीटर चौड़ाई है, जिसमें १८ टन के चुम्बक लगे हुए हैं । इसमें से एक स्टेनलेस स्टील की वैकुअम ट्यूब लगी है, जिसके अन्दर करोड़ों एटामिक पार्टीकल्स को बड़ी तीव्रगति से ले जाया जाता है । यह संयन्त्र जेनेवा में स्विटजरलैण्ड एवं फ्रान्स की सीमा पर बनाया गया है । वह १२ यूरोपीय राष्ट्रों की संस्था (सी. ई. आर. एन) सर्न कौन्सिल यूरोपियन फॉर रिसर्च न्यूक्लियर) नाम से प्रसिद्ध है ।

सन् १९३० से लेकर एक नया युग भौतिक विज्ञान में प्रारम्भ हुआ है । इसी के फलस्वरूप इलेक्ट्रॉन, प्रोटॉन, न्यूट्रॉन आदि छोटे कणों से भी सूक्ष्म २०० से अधिक सब न्यूक्लियर पार्टीकिल्स पाये गए हैं जिन्हें वैज्ञानिक प्रायः "जू ऑफ स्ट्रेन्ज बीस्ट्स" कहते हैं ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इन सूक्ष्म कणों को प्रायः दो प्रमुख वर्गों में विभाजित किया गया है—

(१) हेड्रान्स जिसका अभिप्राय है बड़े और मजबूत जैसे न्यूट्रॉन, प्रोटॉन, मेसॉन आदि ।

(२) लेप्टन्स—सूक्ष्म एवं कमजोर जैसे इलेक्ट्रॉन्स, म्यूकान्स एवं न्यूट्रिनोस, सन् १९६४ में जेलमान एवं सहयोगी जार्ज ज्विग को ओमेगा माइनस नामक सूक्ष्म कण के क्वार्क परिकल्पनानुसार भविष्य कथन करने पर नोबेल पुरस्कार मिलता था ।

इन कणों के साथ-साथ अन्य प्रतिकणों का भी अनुसन्धान से पता लगा है । क्वार्क ऐन्टीक्वार्क नाम के सूक्ष्मतम कणों से मिल कर ही हेड्रान्स एवं लेप्टन्स बनते हैं । प्रत्येक हेड्रान दो या तीन क्वार्क और (या) एन्टीक्वार्क मिलकर बना होता है ।

पदार्थ की संरचना की पहेली का समाधान करने में भौतिक विज्ञानी कहाँ तक सफल होंगे । इसके बारे में सर्न के रिसर्च डायरेक्टर जनरल डॉ. लियोन वान होव कहते हैं कि हमारा अनुसन्धान प्रौढ़ावस्था में है लेकिन हम अनेकों जटिल समस्याओं की उलझन में फँस गए हैं ।

जिन उलझनों में पार्टीकल फिजिक्स के मूर्धन्य विज्ञानी फँस गए हैं, उनमें प्रमुख हैं—प्रति पदार्थ एण्टीमैटर । पदार्थ के शक्ति कण विदित हैं । उसका सामान्य परिचय, अणु विखण्डन से उत्पन्न ऊर्जा द्वारा मिलती है यों इस ऊर्जा का जो आकलन मापक यन्त्रों द्वारा किया जाता है वह समग्र नहीं आंशिक ही होते हैं । विखण्डन और आकलन के मध्य जो अवधि और परिधि रहती है उतने से ही उत्पन्न ऊर्जा का तीन चौथाई भाग अन्तरिक्ष में तिरोहित हो जाता है । आकलन प्रायः एक चौथाई का ही हो पाता है । इसलिए आँकी जाने वाली क्षमता वस्तुस्थिति की अपेक्षा कहीं कम ही होती है ।

अब प्रश्न यह है कि अणु परिवार की नितान्त क्षुद्र इकाइयाँ इतनी सामर्थ्य लाती कहाँ से हैं और उन्हें धारण कैसे, कहाँ और किस रूप में और किस प्रकार करती हैं । इस प्रश्न का एक नया तथ्य उभर कर सामने आया है—प्रतिकण । यह पदार्थ कणों के साथ-साथ रहते हैं । वे छाया की तरह ही साथ बनकर रहते हैं । घुले हुए हैं और परिस्थिति विशेष में उठते-बैठते रहते हैं । यही है वह प्रसंग जिसमें डॉ. होव के कथनानुसार पार्टीकल फिजिक्स उलझनों के दल-दल में फँस गई है ।

अब इस निष्कर्ष पर पहुँचा जा रहा है कि कण का प्रतिकर्षण प्रतिद्वन्द्वी होते हुए भी पूरक है । ऋण और धन प्रवाह या एक-दूसरे के प्रतिद्वन्द्वी हैं, तो भी उनके मिलने पर ही शक्ति का प्रवाह उत्पन्न होता है । अन्यथा उनकी प्रतिद्वन्द्वता कुछ कर नहीं पाती है । दोनों अगति में ही पड़े रहते हैं । गतिशील होने के लिए कुछ उपलब्धि नियोजित करने के लिए उन्हें मिल-जुलकर कुछ प्रयास करना पड़ता है, भले ही वह रचनात्मक न सही प्रतिद्वन्द्वात्मक ही क्यों न हों । देव और दैत्यों की लड़-झगड़ का उस युद्ध में नाश-विनाश का इतिहास कथा-पुराणों में प्रचुरतापूर्वक भरा पड़ा है । साथ ही वह कथानक भी महत्त्वपूर्ण है, जिसमें दोनों ने मिलकर समुद्र मन्थन किया था और बहुमूल्य रत्न राशि वैभव कमाया था । कण और प्रतिकण के सम्बन्ध भी कुछ ऐसे ही हैं, जैसे देव और दैत्यों के । दोनों का जन्म का दिति और अदिति, दो सगी बहिनों से हुआ था । दोनों के पिता भी एक ही थे । इतने पर भी उनके अस्तित्व और पारस्परिक सम्बन्ध ऐसे थे, जिसे विचित्र ही सकते हैं । न मित्र न शत्रु । साथ ही प्रगाढ़ मित्र और प्रचण्ड शत्रु भी । पदार्थ और प्रतिपदार्थ का अस्तित्व, स्वभाव और उपक्रम भी प्रायः ऐसा ही विचित्र है । दोनों साथ-साथ रहते हैं, एक दूसरे को गति सहयोग देते हैं । साथ ही परस्पर विरोधी होने के कारण एक-दूसरे को आघात पहुँचाने से भी नहीं चूकते, घड़ी के पेण्डुलम से चलती रहने वाली क्रिया-प्रतिक्रिया के समतुल्य उसे समझा जाता रहता है । साथ रहते हुए भी सहयोग और संघर्ष का समन्वय किस प्रकार सम्भव है । यह इस पेण्डुलम के उदाहरण से समझा जा सकता है और पदार्थ प्रतिपदार्थ एक-दूसरे के सहयोगी, विरोधी साथ-साथ कैसे रह सकते हैं, इसका अनुमान लगाया जा सकता है ।

शरीर और आत्मा का परस्पर सहयोग भी है और संघर्ष भी । सहयोग इस अर्थ में कि जीवन क्रम दोनों मिल-जुलकर चलाते हैं । संघर्ष इस अर्थ में अपने-अपने स्वार्थ के लिए खींचतान बनी रहती है । भले-बुरे पुरुषार्थों का प्रकटीकरण इस संघर्ष से ही होता है ।

अभी तक प्राप्त जानकारी के आधार पर वैज्ञानिक यही कहते थे, कि प्रतिकण केवल प्रयोगशालाओं में ही प्राप्त किए जा सकते हैं, क्योंकि उनकी उत्पत्ति इलेक्ट्रॉन और न्यूट्रॉन के टकराव से ही होती है, किन्तु न्यूमैक्सिको विश्वविद्यालय के वरिष्ठ वैज्ञानिक डॉ. राबर्ट गोल्डेन जिनके नेतृत्व में दो युवा वैज्ञानिक अनुसन्धान कर रहे हैं, ने टेक्सास से २१ जुलाई, १९७९ को एक गुब्बारा छोड़ा, जिसमें ५ हजार पौण्ड के वजन के यन्त्र थे जिसमें ३०० पौण्ड वजन का एक तीव्र सम्वेदन शक्ति चुम्बक भी था । ३५ किलोमीटर की ऊँचाई तक उड़ने पर गुब्बारे के सूक्ष्म उपकरणों में चुम्बकीय क्षेत्र के माध्यम से २८ 'एन्ट्री प्रोटॉन की मौजूदगी अंकित की, अभी तक एन्ट्री प्रोटॉन केवल प्रयोगशालाओं में ही देखे गए थे, किन्तु यह प्रथम अवसर है, जबकि खुले अन्तरिक्ष में उन्हें देखा गया ।

अब तक की मान्यता यह थी कि पृथ्वी पर भारी मात्रा में जो ब्रह्माण्ड किरणें बरसती हैं, उनका उद्गम स्रोत किन्हीं तारकों सौर-मण्डलों या नीहारिकाओं में रहा होगा । यह भूली-भटकी किरणें किसी अविज्ञात की ओर चलती होगीं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और रास्ते में पड़ने वाली पृथ्वी को अपने अस्तित्व का परिचय तथा यत्किंचित उपहार, अभिशाप देती जाती होंगी । पर अब प्रतिपदार्थ की सत्ता और प्रक्रिया को समझाने पर उस पूर्व मान्यता में आमूलचूल परिवर्तन करना आवश्यक हो गया है । नये निष्कर्ष यह बताते हैं, कि ब्रह्माण्ड किरणें दूरगामी यात्रा करती हुई पृथ्वी पर नहीं आतीं वरन् अणु परिवार के घटकों में विद्यमान गतिशीलता ही यह उपार्जन करती हैं । यह बाहरी अनुदान नहीं वरन् अपना निजी उत्पादन ही है जो टकराने, सहयोग देने की समन्वित नीति के कारण उद्भूत होता और प्रचण्ड शक्ति स्रोत की भूमिका सम्पादन करता है ।

प्रतिपदार्थ की खोज एक प्रति प्रकृति के अस्तित्व की ओर संकेत करती है । प्रतिकण, प्रतिपदार्थ, प्रतिविश्व की मान्यता अब एक कल्पना नहीं रही, उसे वास्तविकता के रूप में अपनाया जा रहा है । ऐन्टी नैटर, ऐन्टी यूनीवर्स कभी उपहासास्पद चर्चा के रूप में वैज्ञानिकों के विनोद भर प्रयुक्त होती थी । अब उस सन्दर्भ में गम्भीरता और जिम्मेदारी के साथ एक वास्तविकता से विचार किया जाता है । पदार्थ की संरचना के बारे में अभी भी कोई मतभेद नहीं है । पर शक्ति का उद्गम उसे न मानने की बात चल पड़ी है । परमाणु परिवार में जो समर्थ होती प्रतीत है, वह उसके माध्यम से प्रकट तो होती है, किन्तु वह उपयोग मात्र है । उत्पादन या आधार नहीं । इस तथ्य को शरीर और आत्मा के उदाहरण से अधिक अच्छी तरह समझा जा सकता है । हलचलें शरीर में होती हैं और विभिन्न किया-कलाप उसी के द्वारा सम्पन्न होते हैं । इतने पर भी शरीर जीवन नहीं है । प्राण ही सामर्थ्य का उद्गम है । उसी की सत्ता तथा प्रेरणा शरीर को जीवित एवं गतिशील बनाती है । प्रतिपदार्थ को प्रकृति की आत्मा और पदार्थ को उसकी काया कहा जाना चाहिए । नई खोजें इसी निष्कर्ष तक इन दिनों भौतिक विज्ञान को ले पहुँची हैं ।

प्रतिपदार्थ के अस्तित्व को स्वीकार करने और उसे प्रकृति की समस्त गतिविधियों एवं शक्तियों का उद्गम मानने के उपरान्त एक जटिल प्रश्न यह है कि उस क्षेत्र का तनिक भी अनुभव न होने के कारण प्रवेश के लिए की गई छेड़-छाड़ उपयोगी होगी भी या नहीं ? श्रम निरर्थक जाने तक का खतरा उठाया जा सकता है पर डाइनामाइट की छड़ी से फुलझड़ी का खेल, खेलने का साहस कौन सँजोये ? इस प्रकार कर्त्ता का ही नहीं, इस समूचे भूमण्डल सौर-परिवार का यहाँ तक कि ब्रह्माण्ड का भी प्रचलित प्रवाह उलट सकता है और जिस प्रति विश्व की अभी कल्पना मात्रा की जा रही है वह दृश्यमान ब्रह्माण्ड को विस्मृति के गर्त में धकेल कर स्वयं सिंहासनारूढ़ हो सकता है । तब भौतिकी प्रकृति के वर्तमान नियम और आधारों का कहीं पता भी न चलेगा । उस स्थान पर प्रति प्रकृति अपनी नई रचना और नई व्यवस्था के अनुरूप इस ब्रह्माण्ड का नया ढाँचा खड़ा करती, नया शासन चलाती दृष्टिगोचर होगी ।

यह पदार्थ और प्रतिपदार्थ के स्वरूप और सम्बन्ध का प्रसंग है । ठीक इसी प्रकार की आश्चर्यजनक, कौतूहल भरी एक सत्ता व्यक्ति और प्रति व्यक्ति की भी समझी जा सकती है । व्यक्ति अर्थात् शरीर, मन सहित । प्रति व्यक्ति अर्थात् प्राण, महा प्राण सहित । हमें अभ्यास मात्र शरीर की इच्छा, आदतें और रसानुभूति भर का है । जो निकटवर्ती क्षेत्र में होता है उसी के अनुकरण का जो आकर्षण है उसी का अनुगमन मन करता है और उसी प्रवाह में जीवन संकट ज्यों-त्यों करके किसी अनिश्चित दिशा में बढ़ता भटकता रहता है । शरीर यात्रा की समग्र प्रकृति क्रम के साथ बिठाई जा सकती है । शक्ति आत्मा की है । इस शक्ति के साथ सम्पर्क बनाने से मन डरता है कि कहीं इसका आधिपत्य काय जगत पर भौतिक जीवन पर न हो जाय । यह डरावनी स्थिति है । अन्तस में विद्रूप उठ पड़े तो उसका स्वरूप पशु की परिधि को पार करता हुआ, पिशाच तक पहुँच सकता है, यदि उसमें विशिष्ट जग पड़ें तो देवत्व और स्वर्ग के प्रकटीकरण में भी कोई अड़चन शेष नहीं रहेगी ।

प्रति पदार्थ की तरह यदि व्यक्ति भी चर्चा और शोध का विषय बने, उसकी मात्र सामर्थ्य के सदुपयोग का सूत्र हाथ लगे, तो प्रचलन व्यवस्था में आमूलचूल परिवर्तन हो सकता है । तब मनुष्य को देवता और संसार को स्वर्ग के रूप में परिणत होने में भी देर न लगेगी । भौतिक चेतना की गतिविधियाँ पशु प्रवृत्तियों के प्रकटीकरण तक सीमित हैं । इसके स्थान पर आत्मिक चेतना का आधिपत्य मानवी सत्ता पर जम सके तो ऐसे अप्रत्याशित परिवर्तन की पूर्ण सम्भावना विद्यमान है, जिसमें सतयुग की स्वर्गीय परिस्थितियों को इसी धरती पर विद्यमान देखा जा सके ।

सब कुछ नहीं : उपयोगी और सीमित ही

प्रकृति अनन्त है । उसके अन्तराल में जो कुछ भरा पड़ा है वह सबका सब मनुष्य के लिए उपयोगी एवं आवश्यक ही नहीं है । उसमें विनाशकारी और पतनोन्मुख तत्व भी प्रचुर परिमाण में विद्यमान हैं । रोग कीटाणुओं को ही लें, उनकी जातियाँ और क्षमताएँ विचित्र हैं, पर उन्हें समेटने में नहीं, वरन् बचने और भगाने में ही बुद्धिमत्ता है । मक्खी, मच्छर, पिस्सू, खटमल, जुएँ, उदरस्थ कृमि आदि सहोदरों की तरह निवास करते हैं, पर उन्हें पालने की चेष्टा कोई नहीं करता । ठीक इसी प्रकार ज्ञान और विज्ञान के अनेक क्षेत्र ऐसे हैं, जिन्हें उपयोगिता की कसौटी पर बिना कसे ही जो मिले उसे पकड़ने की नीति अपनायी गई तो उससे हानि ही होगी ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यह संसार केवल मनुष्य के लिए ही नहीं है, इसकी साधन सामग्री ऐसी भी है जो मनुष्य विरोधी तत्वों के लिए काम की है । उत्थान के साधन बहुत हैं, पर पतन और संकट उत्पन्न करने वाले तत्व भी कम नहीं है । हमें उत्पादन एवं संकलन का श्रम करने से पूर्व औचित्य का सर्वप्रथम ध्यान रखना चाहिए । अन्यथा किए गए प्रयत्न आत्मघात की तरह महाविनाशक सिद्ध होंगे ।

प्रकृति का जो अंश अपने लिए उपयोगी है, उसी की वैज्ञानिक खोज की जाय और उपयोगी से ही सन्तुष्ट रहा जाय, तो यह बुद्धिमतापूर्ण है । इन दिनों असीम शक्ति लिप्सा ने ऐसे शोध क्षेत्र में दिलचस्पी पैदा कर दी जिसके लिए किए गए प्रयत्न निकट भविष्य में अब तक की मानवी प्रगति का सर्वनाश कर सकते हैं ।

ऐसी शोधों में एक है ब्रह्माण्ड का एक अंश खोया हुआ माना जाना और उसकी तलाश करना । समझा जाता है कि इस निखिल ब्रह्माण्ड में जितना कुछ पदार्थ संसार देखता है, वह सृष्टि के आरम्भ में जो कुछ था उसका एक अंश ही है । लगभग आधा अंश उसमें से गायब है । इसका क्या हुआ ? यह कहाँ चला गया ? इसका अता-पता क्यों नहीं लगता ? यदि वह कहीं छिपा है तो वहाँ चुपचाप बैठा है या कुछ कर रहा है ? यह प्रश्न आज के नवीनतम और उच्चस्तरीय खोज-बीन का मूर्धन्य प्रश्न बना हुआ है । उस सम्बन्ध में कुछ दिन पूर्व तक सम्भावना ही व्यक्त की जाती थी और अनुमान भर लगाया जाता था कि एक अविज्ञात दुनिया हमारे ही इर्द-गिर्द कहीं छिपी है । उसकी क्षमता और चाल प्रस्तुत प्रचलन से उल्टी है । अब वह कल्पना अनुसन्धानों के आधार पर तथ्य बनकर सामने आ गई है और यह स्वीकार कर लिया गया है कि एक ऐसे अविज्ञात का अस्तित्व इस संसार में मौजूद है जो विज्ञान के न केवल समतुल्य है, वरन् अधिक शक्तिशाली भी है । इतने पर भी इसकी खोज में फूँक-फूँककर कदम बढ़ाया जा रहा है, क्योंकि आशंका यह भी है कि यदि यह आग्नेय सम्पदा उभर पड़ी और नियन्त्रण से बाहर हो गई तो फिर न केवल मनुष्य को वरन् सम्पूर्ण प्राणियों को महा विनाश का सामना करना पड़ेगा । इतना ही नहीं इस ब्रह्माण्ड की प्रचलित गतिविधियाँ भी उलट सकती हैं । आधुनिक सृष्टि विज्ञानी लम्बे समय से इस तथ्य से व्यग्र रहे हैं कि सृष्टि का एक अंश विलुप्त-सा है, उसका पता नहीं लग पा रहा है, जिससे कि सृष्टि-सम्बन्धी जानकारी में एक बड़ी अपूर्णता विद्यमान थी ।

पिछले दिनों भारतीय वैज्ञानिक संस्थान, बैंगलोर के तीन नक्षत्र विज्ञानियों प्रो. के. पी. सिन्हा, डॉ. शिवराम और प्रो. ई. सी. जी. सुदर्शन ने इस दिशा में नई खोज की ।

सृष्टि-विज्ञानी यह कहते रहे हैं कि एक नक्षत्र पिण्ड से दूसरे को पृथक करने वाला जो 'शून्य' है, वह वस्तुतः रिक्त नहीं है । अपितु उसी में यह अज्ञात सृष्टि-अंश समाया हुआ है ।

१९वीं सदी में यह स्थापना की गई थी कि इस 'शून्य' में 'ईथर' नामक तत्व विद्यमान है । यह 'ईथर' प्रकाश के संचरण के लिए वैसा ही अनिवार्य है, जिस प्रकार की ध्वनि के लिए वायु ।

किन्तु आइन्स्टीन के बाद से 'ईथर' का यह सिद्धान्त अस्वीकृत किया जा चुका था । अब इन तीन भारतीय वैज्ञानिकों ने अपनी खोज के अनुसार यह प्रतिपादित किया है कि ईथर का अस्तित्व वास्तविक है । यह ईथर, इलेक्ट्रॉन और प्रोटॉन जैसे कणों तथा उनके प्रतिकणों का समुद्र है । इसी समुद्र में सृष्टि का वह "खोया हुआ" अंश छिपा हुआ है । यह अंश उपर्युक्त कणों तथा प्रति कणों के ही रूप में है । ये कण तथा प्रतिकण जोड़े में इस समुद्र में तैरते रहते हैं और कण-प्रतिकण में इस संयुक्त प्रभाव से यह समुद्र 'अदृश्य द्रव्य' बन गया है, जिसे विज्ञान में 'सुपरफ्ल्यूडिटी' की स्थिति कहते हैं । यह 'सुपरफ्ल्यूडिटी' इलेक्ट्रॉन की ही तरह के एक अन्य प्रकार के कणों की विशेषता है, जिन्हें 'फर्मियान्स' कहते हैं । ईथर का यह समुद्र जिन कणों तथा लक्षणों से भरपूर है, वे सृष्टि-विकास के उस "समतुलित अवस्था" (या 'यथावत-दशा) सिद्धान्त की पुष्टि करते हैं, जिसका प्रतिपादन प्रख्यात भारतीय वैज्ञानिक डॉ. जयन्त विष्णु नार्लीकर एवं अमेरिकी वैज्ञानिक श्री फ्रेड हायल ने किया है ।

खोये हुए पदार्थ का अता-पता लगाने के सन्दर्भ में १५ वर्ष पूर्व कुछ वैज्ञानिकों में इस धारणा को बल मिला कि हमारे प्रत्येक कण का प्रतिकण, परमाणु का प्रति परमाणु विद्यमान है । इसी आधार पर आगे यह तर्क प्रतिपादित हुआ कि प्रकृति में सर्वव्यापी सन्तुलन है । इस सर्वव्यापी सन्तुलन के आधार पर कहा जा सकता है कि मानव-ब्रह्माण्ड के चारों ओर इससे बिल्कुल उल्टे ब्रह्माण्ड की सत्ता है । जीवन और समय की गति वहाँ उल्टी है । हमारे ब्रह्माण्ड में काल की गति अतीत से वर्तमान और वर्तमान से भविष्य की ओर है । प्रति ब्रह्माण्ड में काल भविष्य से वर्तमान तथा वर्तमान से अतीत की ओर दौड़ रहा होगा । यहाँ प्रति पिण्ड, प्रति आकाश-गंगायें, प्रति नीहारिका यूथ, प्रति प्राणी तथा प्रति मानव विद्यमान होंगे । वे हमारे लिए वर्तमान में अनुभूतिगम्य नहीं हो सकते हैं ।

केम्ब्रिज विश्वविद्यालय के प्राध्यापक डिराक ने इंग्लैण्ड की रायल सोसायटी के सामने प्रस्तुत अपने शोध प्रबन्ध में आइन्स्टीन के सापेक्षता सिद्धान्त और क्वाण्टम भौतिकी का हवाला देते हुए सिद्ध किया था कि जिस तरह क्रिया की प्रतिक्रिया होती है, उसी तरह पदार्थ का प्रतिद्वन्द्वी प्रति पदार्थ भी होता है । उस समय तो इस प्रतिपादन पर विस्मय मात्र ही व्यक्त किया गया था, पर अब प्रति इलेक्ट्रॉन, प्रति

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रोटॉन, प्रति न्यूट्रॉन आदि के अस्तित्व की जानकारियाँ मिली हैं । कोलम्बिया विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों ने, जिनका नेतृत्व डॉ. सैम्युडालटिंग तथा डॉ. लियन एम. लेडरमैन कर रहे थे, प्रति ड्यूटिकियम की खोज की । प्रति-हीलियम, प्रति न्यूरेनियम आदि की सम्भावना भी स्पष्टतर हो रही है । अमेरिका की ब्रूक हेवेन प्रयोगशाला के अन्वेषी वैज्ञानिक इस सम्भावना के प्रति बहुत ही उत्साही हैं कि प्रति पदार्थ से आधुनिक भौतिक क्रान्तिकारी परिवर्तन आयेगा ।

वैज्ञानिकों की प्रारम्भ में उद्भूत नई खोज से यह स्पष्ट होता है कि प्रतिविश्व ईथर का ही अंश है । वैज्ञानिक इस प्रतिविश्व की यात्रा हेतु सम्भव उपकरणों पर गम्भीरतापूर्वक विचार कर रहे हैं ।

वैज्ञानिकों की परिकल्पना है कि प्रति परमाणुओं और प्रति ब्रह्माण्ड में काल की गति भविष्य से भूत की ओर है । साथ ही वहाँ प्रकाश का अवशोषण होता है । जबकि हमारे ब्रह्माण्ड में प्रकाश का विकिरण या उत्सर्जन होता है ।

प्रतिविश्व की यात्रा के लिए प्रति-केमेसान-रॉकेट बनाए जायेंगे । अभी हमारे इस ब्रह्माण्ड में यात्रा के लिए फोटोन-रॉकेटों की योजना चल रही है । फोटोन किरणों की गति प्रकाश वेग के तुल्य रहती है । अतः उन पर काल-गति का कोई प्रभाव नहीं पड़ता, यानी अतीत, वर्तमान और भविष्य में फोटोन कणों के लिए कोई अन्तर नहीं है । फोटोन रॉकेटों पर सवार होने पर अन्तरिक्ष यात्रा करते समय, समय का कोई व्यवधान ही नहीं आयेगा ।

इसी तरह प्रति-केमेसान-रॉकेटों पर सवार होने पर हम प्रतिविश्व में पहुँच जायेंगे, जहाँ समय भविष्य से भूत की ओर भाग रहा होगा, अतः मृत्यु का कोई भय नहीं रहेगा ।

केमेसान तथा प्रति-केमेसान कणों की खोज हो चुकी है । केमेसान कणों की गति प्रकाश से थोड़ी कम होती है । प्रति केमेसानों की भी गति वैसी ही होती है, पर उनमें समय का प्रवाह भविष्य से वर्तमान और वर्तमान से अतीत की ओर होता है । केमेसान तथा प्रति केमेसान कणों की एक विशेषता यह है कि वे विशेष परिस्थितियों में एक-दूसरे में रूपान्तरित होने की क्षमता रखते हैं । अतः कल्पना यह है कि इनसे बने वाहनों में यात्रा करते समय मनुष्य इच्छानुसार दृश्य या अदृश्य हो सकेगा । क्योंकि केमेसान से प्रति केमेसान होने पर दृश्य से अदृश्य हो जायेगा तथा फिर इसका विपरीत भी हो सकेगा ।

वैज्ञानिकों की एक नई खोज यह भी है कि शरीर में द्रव्यों के साथ प्रतिद्रव्य भी है । उनका अन्योन्याश्रय सम्बन्ध, परस्पर प्रतिक्रिया लेने पर, बिना किसी वाहन या कैप्सूल में बैठे ही मनुष्य शरीर अदृश्य हो सकता है । न्यूट्रिनों, एन्ट्री न्यूट्रिनों, केमेसानों, एन्ट्री केमेसानों तथा अन्य अद्भुत कणों, ब्रह्माण्डीय विकिरणों और ईथर का पूरा-पूरा भेद खुलने पर ही मानव-शरीर के लिए सूक्ष्म अदृश्य रूप धारण करना सरल हो सकेगा ।

इस परिकल्पना पर विचार करते हुए वैज्ञानिकों के सम्मुख एक नई शंका आ उपस्थित हुई है । यह मान लिया गया है कि अदृश्य सूक्ष्म शरीरधारी प्रति-मानव हमारे शरीर में घुसता हुआ उसके आर-पार जा सकता है । साइक्रेस और विर्गो नीहारिकाओं से जो सन्देश धरती पर आ रहे हैं, उनसे ज्ञात होता है कि उन क्षेत्रों में पदार्थ और प्रति पदार्थ के बीच देवासुर संग्राम जैसा रोमांचक युद्ध छिड़ा हुआ है । तब क्या यह भी हो सकता है कि प्रति मानव हमारे शरीर में घुसकर अभी भी आर-पार चले जाते होंगे और हम जान भी नहीं पाते होंगे ? यहाँ पर आकर वैज्ञानिक अभी कोई उत्तर ढूँढ़ नहीं पा रहे हैं ।

प्रतिविश्व में हमारे शरीर के परमाणु प्रति परमाणु के रूप में क्रियाशील हो चुकेंगे, तभी तो हम वहाँ पहुँच और ठहर पायेंगे । अब आशंका यह है कि वे प्रति परमाणु जो भविष्य से भूत की ओर भाग रहे होंगे, हमारे अस्तित्व को सुरक्षित ही रहने देंगे, इसकी सम्भावना नहीं ही माननी चाहिए । हम मृत्यु से जन्म की ओर भाग रहें होंगे, अभी इतनी ही कल्पना वैज्ञानिक कर पा रहे हैं । पर जन्म से पूर्व जन्म, पूर्व योनि, पूर्व दशा और वनस्पति, जड़-जगत (प्रति द्रव्य) के रूप में नहीं पहुँच जायेंगे, इसका क्या ठिकाना है ?

शक्ति के अनेक स्रोत हमारे हाथ लग चुके हैं । यह भी स्पष्ट है कि प्रकृति के अन्तराल में अभी ज्ञात से असंख्य गुनी अधिक अविज्ञात शक्तियाँ सन्निहित हैं । मानवी प्रयासों में वे सम्भावनाएँ विद्यमान हैं, जिनके आधार उनमें से भी बहुत कुछ और सब कुछ पाया जा सकता है । अग्रगामिता सदा ही सराही जानी चाहिए । पर प्रगति की इस तत्परता और तन्मयता का पूरक तत्व कर्तृत्व निर्वाह और उत्तरदायित्वों का पालन भी भुलाया नहीं जाना चाहिए ।

आज पदार्थ विज्ञान की धूम है और प्रत्यक्ष को ही मान्यता मिल रही है । पर प्राचीनकाल के तत्वदर्शियों ने इन्द्रिय बोध से आगे की चेतना को भी तथ्य माना था और उस सन्दर्भ में अनेक अनुसन्धान किए थे । खोए हुए ब्रह्माण्ड का प्रति पदार्थ भी उनके ध्यान में था और उसका सीमित उपयोग करने की भी उन्होंने चेष्टा की थी । योगशास्त्र के दक्षिण और वाम दो मार्ग प्रसिद्ध हैं । दक्षिण मार्गी साधनाएँ वे हैं, जो प्रस्तुत प्राणियों, पदार्थों एवं परिस्थितियों को परिष्कृत करते हुए उन्हें जीवन-विकास के लिए प्रयोग करने का पथ-प्रशस्त करती हैं । वाममार्गी साधनाएँ वे हैं, जिनकी विज्ञान और विधान का परिचय करने के लिए तन्त्र विज्ञान की रचना की है । इसमें विघातक तत्व उभरते हैं । कहना न होगा कि सत्साधनों की-अभिवर्धन की तरह ही अवांछनीयताओं का उन्मूलन भी आवश्यक है । वाममार्गी तन्त्र साधनाओं द्वारा जो उन्मूलनपरक कार्य होते थे, उनके

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मूल में प्रकृति का वह खोया पदार्थ ही सीमित मात्रा में प्रयुक्त होता था, जिसे आज प्रति-पदार्थ की संज्ञा दी गई है । कार्य कुछ भी क्यों न हो—कदम किसी भी दिशा में क्यों न बढ़े, पर उसमें औचित्य और उपयोगिता का समुचित ध्यान रखा ही जाना चाहिए ।

पूर्व मान्यताओं के प्रति दुराग्रह उचित नहीं

यह संसार क्या है ? किन पदार्थों से बना है ? उनके गुण, धर्म क्या हैं ? आदि प्रश्नो का ऊहापोह विचार शक्ति के विकास-क्रम के साथ ही होता चला आया है । इनका दार्शनिक प्रतिपादन कई प्रकार से होता रहा है ।

वेदान्त दर्शन ने सचेतन परब्रह्म को इस संसार का एकमात्र तत्व माना है । फ्रान्सीसी दार्शनिक वेर्गसां ने विश्व को चेतन और अचेतन से ऊपर माना है । सांख्यकार ने उसे प्रकृति और पुरुष के जड़ और चेतन के दो भागों में विभक्त किया है । योरोप का प्रख्यात दार्शनिक लॉक भी भारतीय त्रैतवादियों की तरह ईश्वर, जीव और प्रकृति के तीन आधार मानता रहा है । चार्वाक और यूनानी दार्शनिक एम्पेदीकल ने चार तत्व माने हैं—पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु । अन्य भारतीय दर्शनों ने इनमें एक आकाश को और जोड़कर पाँच कर दिए हैं । पंचभूत की मान्यता हम सबकी जवान पर चढ़ी रहती है । इस्लामी दार्शनिक अजीजुद्दीन राजी ने भी तत्वों की संख्या पाँच ही मानी है, पर वे हैं भिन्न—ईश्वर, जीव, प्रकृति, दिशा और काल । जैन दर्शन ने छै तत्व माने हैं—जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, काल, आकाश । वैशेषिक उन्हें नौ मानता है । पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश के अतिरिक्त उसने काल, दिशा, आत्मा और मन को भी तत्व गिना है ।

प्राचीन काल में इन मान्यताओं का अपने-अपने समय और क्षेत्र में जोर-शोर से प्रतिपादन होता रहा है । उन पर विवाद, शास्त्रार्थ और खण्डन-मण्डन भी होते रहे हैं । उनके भेद-उपभेद और सम्प्रदाय-उपसम्प्रदाय बनते रहे हैं । पर प्रगति क्रम पर बढ़ते हुए हमें जानकारियाँ एवं मान्यताएँ भी बदलने के लिए विवश होना पड़ा है । विवेचन और विश्लेषण ने पिछली दार्शनिक पृष्ठभूमि में ऐसे परिवर्तन प्रस्तुत किए हैं, जिन्हें मानने में भारी असमंजस होता है, पर किया क्या जाय, प्रस्तुत प्रत्यक्ष प्रमाणों के साथ जुड़े हुए तर्कों और प्रतिपादनों को अस्वीकार भी तो नहीं किया जा सकता ।

अब पँच तत्वों को 'तत्व' नहीं माना जाता, वे मूल तत्वों की अवस्था मात्र रह गए हैं । प्रत्येक पदार्थ ठोस, तरल एवं भाप के रूपों में बदला जा सकता है । अस्तु आकार को देखकर जो मान्यताएँ स्थापित की गई थीं, वे अब परीक्षा की कसौटी पर गलत ठहरा दी गई हैं । ठोस धातुएँ तक अत्यधिक तपाये जाने पर भाप बनकर आकाश में उड़ जाती हैं और अपना मूल स्वरूप समाप्त कर देती हैं । अग्नि अपने आप में कोई वस्तु नहीं, वह परमाणुओं के तीव्र गति से भ्रमण करने की प्रतिक्रिया भर है । पानी ऑक्सीजन और हाइड्रोजन नामक दो गैसों का सम्मिश्रण भर है । गैसें अपने आप में कुछ रासायनिक एवं आण्विक तत्वों के मिलने से बनती हैं । इस प्रकार अब पृथ्वी, जल, अग्नि और वायु कोई मूल तत्व नहीं रह गए हैं ।

अब विश्व की मूल सत्ता 'एनर्जी' मानी गई है । इसके दो भाग हैं—एक ऋण, दूसरा धन । ऋण शक्ति इलक्ट्रॉन और धन शक्ति प्रोटॉन कही जाती है । प्रोटॉन बड़ा और इलक्ट्रॉन छोटा होता है । परमाणु इन्हीं दोनों के मिलने से बने हैं । किन्तु वे भी ठोस नहीं हैं । उनके बीच में बहुत-सी पोल है । उस आकाश के मध्य एक नाभिक रहता है । जिसकी तुलना अपने सूर्य से कर सकते हैं । सौर-मण्डल में कई ग्रह हैं जो सूर्य की परिक्रमा करते हैं । ठीक इसी प्रकार 'नाभिक' में प्रोटॉन होते हैं और उसके इर्द-गिर्द इलेक्ट्रॉन परिक्रमा करते हैं । प्रत्येक परमाणु अपने आप में एक पूरा सौर-मण्डल है । प्रत्येक परमाणु में इलेक्ट्रॉनों की संख्या अलग-अलग होती है और उनके भ्रमण करने की कक्षा में अन्तर पाया जाता है । इसी भिन्नता के कारण जो भिन्न-भिन्न तत्व उत्पन्न होते हैं, वे ही सृष्टि के बिखरे हुए पदार्थों के मूलभूत आधार होते हैं । साधारणतया परमाणु की सत्ता अभेद्य मानी जाती थी और उसमें दूसरा कोई परमाणु प्रवेश नहीं कर सकता ऐसा कहा जाता था, पर कुछ समय पूर्व परमाणु विस्फोट की विधि ढूँढ़ निकाली गई है और उसे भी विकेन्द्रित कर दिया गया है । ऐसी दशा में परमाणु सत्ता भी पंच तत्वों की तरह ही शाश्वत नहीं रह गई है । तो भी जहाँ तक तत्वों की आधुनिक मान्यता है, वह परमाणुओं की स्थिति भिन्नता के आधार पर ही मानी जाती है । यह मान्यता भविष्य में कब तक स्वीकार करने योग्य बनी रहेगी, यह नहीं कहा जा सकता ।

पिछले दिनों इन तत्वों की संख्या ९२ थी । अब एक-एक करके नई खोजों के कारण उसमें और वृद्धि होती चली जा रही है । अणु तोल लिया गया है तथा वह कितनी गर्मी पर पिघलता है । यह भी जान लिया गया है तथा कितने ताप पर भाप बनकर उड़ जाता है, यह भी पता चला लिया गया है । भार, द्रवणांक, क्वथनांक भी अणु विश्लेषण के साथ जाने जा सकते हैं । हाइड्रोजन, हीलियम, लीथियम, बेरीलियम आदि इनके नाम हैं । इनमें सबसे भारी यूरेनियम और सबसे हल्का हाइड्रोजन है ।

एनर्जी का प्रत्यक्ष स्वरूप गर्मी है । गर्मी नापने के दो तरीके हैं—फारेनहाइट और सेन्टीग्रेड । शरीर की गर्मी आदि नापने में फारेनहाइट और वस्तुओं का लेखा-जोखा लेने में सेन्टीग्रेड काम में आता है । सेन्टीग्रेड में बर्फ जमने की स्थिति को शून्य मान-कर चलते हैं और पानी उबलने के ताप को १०० अंश कहते हैं । फारेनहाइट पद्धति के अनुसार

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

३२ डिग्री पर बर्फ जमता है और २१२ पर पानी उबलता है । दूसरे शब्दों में, १०० सेन्टीग्रेड को १८० डिग्री फारेनहाइट मान सकते हैं । यों मोटे तौर पर गर्मी का आरम्भ बर्फ जमाने वाली स्थिति से होता है, पर वस्तुस्थिति इससे भी आगे है । बर्फ भी पूर्णतया ताप रहित नहीं है । उससे भी ठण्डी दूसरी चीज है । लिक्विड एयर, तरल वायु इतनी ठण्डी होती है कि उसकी तुलना में बर्फ भी आग की तरह गर्म है । गर्मी का पूरा अभाव २७३ सेन्टीग्रेड शीत की दिशा में नीचे उतर जाने पर आता है । परमाणुओं की गर्मी नापने में इसी आत्यन्तिक शीत बिन्दु को अंक मानकर चला जाता है । उतना शीत आने पर परमाणु का भ्रमण रुक जाता है और वह स्थिर बनकर खड़ा हो जाता है ।

यह आधुनिक मान्यताएँ उन पुरानी मान्यताओं को झुठलाती हैं, जो किसी समय अकाट्य समझी जाती थीं । इसमें गर्व करने की कोई बात नहीं, कि हम ज्ञान क्षेत्र में पूर्वजों से आगे हैं । क्रमिक विकास की गति अपने रास्ते, अपने ढंग से चलती ही रहेगी । कुछ समय उपरान्त अपना समय भी दकियानूसों और अनाड़ियों का युग समझा जा सकता है । तब नई खोजें, नई मान्यताओं और नये साधनों को सामने ला सकती हैं । इस प्रवाह में किसी काल या तथ्य से बँध कर नहीं रहा जा सकता । हम पूर्ण सत्य की खोज में अपने साधनों से चल रहे हैं । बहुत कुछ चल चुके और बहुत कुछ चलना बाकी है । यहाँ दुराग्रह की गुन्जाइश नहीं है । किसी मान्यता की प्रतिष्ठा का प्रश्न बनाकर नहीं चला जा सकता । पूर्वजों की मान्यताएँ ही शाश्वत थीं, वे जो सोचते थे वही सनातन था, ऐसा आग्रह नहीं होना चाहिए । हमारी आज की मान्यताएँ भी शाश्वत कहाँ हैं—उनमें कल परिवर्तन हो सकते हैं । इसलिए पूर्ण सत्य का दावा करना तो सर्वथा निरर्थक है । अधिक वास्तविकता जानने के लिए हमारा मस्तिष्क सदा खुला रहना चाहिए । आग्रह तो प्रगति के आधार को ही नष्ट करके रख देता है ।

यों प्रत्येक परमाणु की सत्ता स्वतन्त्र है फिर भी ये सजातीय और विजातीय आकर्षणों से खिंचकर अणु गुच्छ बन जाते हैं । उन्हीं के कारण आँखों से दीख पड़ने वाले विविध पदार्थ बनते हैं । इस मिलन की ऐसी विचित्र प्रतिक्रियाएँ भी होती हैं, जो उन मूल तत्वों से भिन्न एवं विपरीत होती हैं, जिनसे मिलकर वे बने हैं । जैसे ऑक्सीजन और हाइड्रोजन दोनों ही जल उठने वाले तत्व हैं, पर उनके मिश्रण से पानी बनता है जो जलना तो दूर उल्टे आग को बुझाने के काम आता है । क्लोरीन एक विषैली गैस है, पर सोडियम के साथ मिलकर वह नमक बन जाती है, जिसे हम रोज ही खाते हैं ।

जब आग के गोले की स्थिति से आगे चलकर पृथ्वी ठण्डी हुई तो फैले हुए हाइड्रोजन और ऑक्सीजन के परमाणु मिलकर जलाणु बने और बादल बरसने लगे । धरती समतल नहीं थी । गर्म से ठण्डी होने के चक्र में उसमें विस्फोट होते रहे और कहीं छै मील तक गहरे समुद्र और कहीं साढ़े पाँच मील तक ऊँचे पहाड़ बन गए । जहाँ खड्डे थे वहाँ वर्षा का पानी भरता गया । आरम्भ में समुद्र खारी नहीं था । पर जब नदियाँ धरती का नमक अपने में घुला कर समुद्र तक पहुँचाने लगीं, तो वह क्रमशः अधिकाधिक खारी होता चला गया । समुद्र से बादल उठते हैं वे नमक साथ लेकर नहीं जाते, इसलिए उसका खारी पानी कम होने का कोई रास्ता नहीं उल्टे नदियों द्वारा जो ६२२४ घन मील पानी हर साल समुद्र में पहुँचता है । वह ढेरों नया नमक और उसमें बढ़ा देता है, इस तरह उसका खारीपन बढ़ता ही जा रहा है ।

पानी की ऐसी अनेक विशेषताएँ हैं जो अन्य पदार्थों में नहीं होतीं । सब चीजें ठण्डी होने पर सिकुड़ती हैं और भारी हो जाती हैं, पर बर्फ उल्टे हल्की हो जाती है और हिम पर्वत समुद्र में भली प्रकार तैरते रहते हैं । भाप बनने पर वह १६५० गुने क्षेत्र में फैल जाता है । हवा में भी पानी घुला रहता है और प्रत्येक पदार्थ में न्यूनाधिक मात्रा में उसकी उपस्थिति पायी जाती है । प्राणियों के शरीर तो एक प्रकार से जल बहुल ही कहे जा सकते हैं । ४५ से ८० प्रतिशत तक जलीय अंश उनमें रहता है । वनस्पतियों तथा शाक, फलों में उसका अनुपात ६० से ६५ प्रतिशत तक पाया जाता है । इसलिए जीवधारियों के लिए भोजन में भी अधिक जल की आवश्यकता रहती है ।

हवा अपनी पृथ्वी की बहुमूल्य सम्पदा है, तो भी वह तत्व नहीं है । वह जमीन से लेकर ५०० मील की ऊँचाई तक फैली हुई है । सूर्य की गर्मी को सीमित मात्रा में आने देने में उसी की भूमिका है । अन्तरिक्ष में भ्रमण करने वाली उल्काओं को वही जला कर खाक करती है, अन्यथा चन्द्रमा की तरह धरती पर भी आये दिन उन पत्थरों की बौछार होती रहती और निरन्तर बड़े-बड़े खड्डे बनते रहते ।

अनेक तत्वों के मिलने से हवा बनती है । नाइट्रोजन ७८ प्रतिशत, ऑक्सीजन २१ प्रतिशत तथा थोड़ी-थोड़ी मात्रा में आर्गन, हीलियम, कार्बन डाइ-ऑक्साइड, क्रिप्टॉन, जीनॉन आदि के अंश मिले हुए हैं । हवा में पानी का अंश तथा धूलि कण भी मिले रहते हैं । एक इन्च स्थान में ५ हजार से लेकर ४० हजार तक धूलि कण पाये जाते हैं । इन्हीं की वजह से आकाश नीला दीखता है । यदि वे न होते तो चन्द्रमा तल की भाँति भू-तल से भी आसमान काला दीखता । धूलि कणों के अतिरिक्त उसमें कीटाणु भी उड़ते रहते हैं । हवा का वजन भी है । साधारणतया एक वर्ग इन्च जगह में हवा का वजन सोलह पौण्ड होता है । इस तरह हमारे शरीर पर बारह टन हवा का बोझ लदा रहता है । उसे उठाये रहना शरीर के भीतर वाली हवा के कारण ही सम्भव होता है । जितना ही ऊपर उठते हैं उतनी ही हवा हल्की होती जाती है । संसार भर में जितना पानी है, उससे हवा का वजन १२७० गुना अधिक है । पृथ्वी के कुल बोझ से हवा का बोझ १२७० गुना अधिक है ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भू-तल पर नाइट्रोजन की मात्रा ऑक्सीजन की तुलना में चार गुनी है । ऊँचे चलने पर क्रमशः नाइट्रोजन बढ़ती और ऑक्सीजन घटती जाती है । ७० मील ऊँचाई तक पहुँचते-पहुँचते यह दोनों ही समाप्त हो जाती हैं और मात्र हाइड्रोजन बन जाता है । जमीन पर फैले बादल कुहरा कहलाते हैं । बिजली कड़कने वाले बादल सिर्फ १ मील तक पाये जाते हैं । इसके बाद भी बादल होते तो हैं, पर बहुत पतले । चार मील ऊपर जाने पर आँधी तूफान कुछ नहीं दीखते । इतनी सब विशेषताओं के रहते हुए भी हवा एक सम्मिश्रण मात्र है, उसे तत्व नहीं कह सकते ।

मोटे तौर पर पोली जगह को आकाश माना जाता है और उसका गुण शब्द कहा जाता है, पर दोनों ही मान्यताएँ प्रामाणिक नहीं हैं । पोल खाली नहीं है उसमें हवा आदि बहुत-सी चीजें भरी हैं । आकाश को व्यापक माना गया है, पर उसका गुण शब्द तो टकरा सकता है, फिर व्यापकता कहाँ रही ? शब्द हवा के सहारे चलता है । चन्द्रमा पर हवा नहीं तो वहाँ पूर्ण निस्तब्धता का साम्राज्य है । शब्द एक तरंग है जो पदार्थों के टकराव से उत्पन्न होती है । उसे कान तक पहुँचने में देर लगती है । प्रकाश की गति एक सेकण्ड में १ लाख ८६ मील है, पर शब्द तो मात्र १०६० फुट ही एक सेकण्ड में चल पाता है । यही कारण है दृश्य और शब्द का सम्मिश्रण हो तो दिखाई पहले देगा सुनाई बाद में पड़ेगा । दूरी पर तोप चले तो पहले धुआँ दिखाई देगा और धड़ाका बहुत बाद में सुना जायेगा । बिजली के सहारे शब्द तो तेजी से दौड़ाया जा सकता है, टेलीफोन तथा रेडियो बिजली के सहारे ही शब्दों को जल्दी दौड़ाते हैं । शब्दों की लहरें विभिन्न लम्बाई की होती हैं । इसी कारण एक ही समय में अनेकों रेडियो स्टेशन अपनी अलग-अलग लम्बाइयों की लहरें छोड़ते हैं और किसी की आवाज किसी से न टकराकर अपना काम करती रहती है । सुनने वाले जिस लम्बाई की लहरें सुनना चाहते हैं, उसी पर अपनी सुई घुमा कर सुनने लगते हैं । हमारे कान उन्हीं शब्द तरंगों को सुन सकते हैं, जिनमें एक सेकण्ड में न्यूनतम सोलह बार और अधिकतम २० हजार कम्पन उठ रहे हों । इससे कम या ज्यादा वालों को हम सुन नहीं सकते ।

अग्नि, जल, वायु और आकाश की चर्चा ऊपर हो चुकी है और यह बताया जा चुका है, कि इनमें से एक भी पदार्थ उस स्तर का नहीं है, जिसे 'तत्व' कहा जा सके । वे सभी तत्वों में मिश्रण एवं हलचलों के प्रतिफल हैं । पृथ्वी के बारे में यह बात और भी अधिक स्पष्ट है । मिट्टी का मोटा विश्लेषण करने पर उसमें ऑक्सीजन ४६ प्रतिशत, सिलिकॉन २६ प्रतिशत, एल्युमीनियम ७, लोहा ४, कैल्शियम ३, सोडियम २, पोटेशियम २, मैग्नीशियम २, हाइड्रोजन १ तथा टिटैनियम, क्लोरीन, कार्बन आदि ८० तत्व उसमें और भी मिले हुए हैं । कहीं की मिट्टी में किन्हीं पदार्थों की और कहीं किन्हीं की न्यूनाधिकता रहती है, पर समस्त पृथ्वी का मिला-जुला अनुपात प्रायः इसी स्तर का है । इन सम्मिश्रणों को देखते हुए पृथ्वी को भी तत्व कैसे कहा जा सकता है ?

हम बढ़ रहे हैं, साथ ही बदल भी रहे हैं, यह एक सुनिश्चित और ऐसा तथ्य है, जो सभी को प्रभावित करता है । बच्चा छोटा है, किशोर बनता है, फिर युवक, फिर अधेड़, फिर वयोवृद्ध और अन्ततः वह पके फल की तरह डाली से टूट कर बीज बन जाता है और नये पौधे की तरह नया जन्म धारण करता है । चौरासी लाख योनियों का क्रम पूरा करते हुए प्राणी मनुष्य योनि में आता है और फिर क्रमशः महात्मा, देवात्मा, विश्वात्मा, परमात्मा की दिशा में बढ़ते-बढ़ते अपूर्णता से पीछा छुड़ाता हुआ पूर्णता का परम लक्ष्य प्राप्त कर लेता है । यह प्रगति यात्रा अनवरत गति से चल रही है । प्राणी इसी प्रवाह में अमीबा जैसे एककोशीय पूर्वजों से बढ़ते विकसित होते-होते वर्तमान स्थिति तक पहुँचे हैं । जल पदार्थों के भी विकास-क्रम का इतिहास भी इसी प्रकार बनता बढ़ता चला आया है ।

विचारों और मान्यताओं के बारे में यही बात है । सामाजिक परम्पराओं में भी इसी नियम का निर्वाह होता आया है । समय-समय पर स्मृतियाँ बदली हैं, दर्शनशास्त्र में परिवर्तन हुए हैं और प्रथा परम्पराओं में सुधार होता चला आया है । पूर्व मान्यताओं को तत्कालीन स्थिति के अनुरूप समझ कर उनका समुचित आदर किया जा सकता है, पर यह नहीं मानना चाहिए कि भूतकाल में जो कहा, किया या माना जाता था, वही शाश्वत सत्य है और उसमें परिवर्तन नहीं किया जाना चाहिए । पंच तत्वों के सम्बन्ध में भूतकालीन मान्यता तक में जब परिवर्तन करना पड़ रहा है, तो फिर अन्यान्य मान्यताओं के सम्बन्ध में भी दुराग्रह नहीं बरता जाना चाहिए ।

हम विवेक को प्रधान मानकर चलें । सत्य की शोध का अपने आपको एक विनम्र विद्यार्थी मानें । तर्क और प्रमाण का आश्रय लें । विवेक एवं औचित्य की कसौटी पर वस्तुस्थिति को परखें और जो न्याय-युक्त, प्रामाणिक एवं तथ्यपूर्ण दिखाई पड़े, उसी को स्वीकार करें । इसी राह पर चलते हुए तथ्य और सत्य तक पहुँचने का लक्ष्य अधिक सुगमता से प्राप्त किया जा सकता है । परम्पराओं के प्रति दुराग्रह बरतने से तो प्रगति पथ में व्यवधान ही उपस्थित होता है ।

विश्व-शान्ति का वैज्ञानिक आधार सहयोग और सामूहिकता

अलबर्ट का मनोविज्ञान वस्तुतः मानवीय चेतना का मनोविज्ञान न होकर पाशविक वृत्तियों का तोड़ा-मरोड़ा इतिहास मात्र है । वह कहता है—"मनुष्य श्रेष्ठ पशु है (मैन इज दि सुपर एनिमल) अर्थात् मनुष्यों में जो पाशविक वृत्तियाँ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हैं वह कोई दोष-दुर्गुण नहीं वरन् प्राकृतिक हैं ।'' और इस सृष्टि से उसकी जो भी स्वाभाविक आकांक्षाएँ हैं वह अनुचित नहीं हैं । भले ही उसे उसके लिए अन्य प्राणियों का भी शोषण और उत्पीड़न करना पड़ता है । जो जितना उपयोगी है वह उतने ही अधिक अधिकारों का पात्र है । भले ही इस स्वायत्तता का उपयोग वह अपने निजी सुख और स्वार्थों के लिए करता हो । उपयोगितावाद की यह संक्षिप्त व्याख्या हुई । आज योरोप ही नहीं संसार के प्रायः सभी देशों के पढ़े-लिखे लोग इसी मान्यता का आचरण व्यवहार कर रहे हैं, भले ही कहने-सुनने को उनके सिद्धान्त चाहे कितने ही आदर्शवादी क्यों न हों ।

उपयोगिता का समर्थन भी जिस ढंग से किया गया है, वह कम हास्यास्पद नहीं । बड़ी मछली छोटी मछली को खा जाती है । इसलिए कम शक्ति वालों का शोषण कोई पाप नहीं, एक प्राकृतिक प्रक्रिया हुई । जीव-हिंसा, पशु-उत्पीड़न और बढ़ता हुआ माँसाहार इसी दुष्ट सिद्धान्त की देन है । इस मान्यता का प्रतिपादन है कि—''जो अधिक ताकतवर होता है वही बन्दर अपने समूह का मुखिया होता है ।'' खरगोश, हिरन, भेड़ और बकरियों की शक्ति न्यूनतम है, उन्हें भेड़िये, बाघ, शेर और चीते आदि शक्तिशाली जन्तु खा जाते हैं । यदि सहयोग, सादगी, सहानुभूति और सदाचार ईश्वरीय आदेश हुए होते तो शाकाहारी भेड़ें और बकरियाँ कमजोर न होतीं और न ही वह हिंसक जन्तुओं द्वारा भक्षण कर ली जातीं । बड़ा वृक्ष अपने घेरे में दूसरे वृक्ष को पनपने नहीं देता । हर शक्तिशाली, कम शक्ति वाले को खा जाता है । यदि इन प्राकृतिक सिद्धान्तों को मनुष्य भी अपने व्यवहार में आचरण में लाता है, तो यह कोई दोष नहीं ।

उपयोगितावाद सच पूछा जाय तो शक्तिवाद—'जिसकी लाठी उसकी भैंस' और सामन्तवाद का ही दूसरा नाम है । इस सिद्धान्त ने ही संसार को नास्तिक और स्वच्छन्दतावादी बनाया है । भावनाओं का अन्त इस सिद्धान्त ने ही किया है । ठीक भी है जहाँ केवल शक्ति और उपयोगिता को ही महत्त्व देना हुआ वहाँ परस्पर प्रेम, उदारता, सहयोग, सौजन्य, स्नेह, सामूहिकता का क्या मूल्य रहा ? जहाँ उत्कृष्टता की भावनाएँ न होंगी वहाँ क्यों तो व्यवस्था रहेगी और क्यों विश्व-शान्ति जिन्दा रहेगी । आज उपर्युक्त प्रकार की मान्यताओं के कारण ही सारा विश्व अशान्ति-असन्तोष, कलह-क्लेश और शोषण के जाल में उलझता चला जा रहा है ।

इस जड़वादी मान्यता का जो भी परिपोषण करते हों उन्हें, मनुष्य शरीर की आन्तरिक स्थिति पर एक बार भावनापूर्वक विचार करने की आवश्यकता है । हमारे शरीर का प्रत्येक कोश एक स्वतन्त्र मानव बीज है । उसमें मनुष्य की सारी स्थूल और चेतन क्रियाएँ विद्यमान हैं । 'कोश' साँस लेता है, खाता है, पीता है, चलता है, डरता है, बचाव करता है, भागता है, मल विसर्जन करता है । 'अमीबा' एककोशीय जीव है । उसका नाभिक जब दो भागों में बँट जाता है तो वह दो अमीबा बन जाते हैं और दोनों अपनी-अपनी तरह से उक्त क्रियाएँ और अनुभूति करने लगते हैं । दो विभाज्य अमीबा, दो अलग गुणों वाले अमीबा आत्मा (न्यूक्लियस) की दृष्टि से एक ही हैं और उदाहरण के लिए जब दो अमीबा अपनी शक्ति में ह्रास अनुभव करते हैं तो वह एक-दूसरे में मिलकर दो नाभिक (न्यूक्लियस) से एक नाभिक (न्यूक्लियस) वाला एक अमीबा बन जाते हैं । उस स्थिति में वह नवजात अमीबा की सी शक्ति अनुभव करता है । इससे सिद्ध हो जाता है कि शरीर के अनेक कोशों (सेल्स) में बँट जाने पर भी उनकी आत्मिक चेतना एक ही है । मनुष्य इस बात का ध्यान रखे या न रखे, वह उपयोगितावाद जैसे खण्डनात्मक तथ्य को माने तो मानता रहे, पर लघु कोशीय जीव यह भूल करने को तैयार नहीं ।

मनुष्य शरीर के विचित्र अवयव एक ही कोश ''स्पर्म'' से पैदा होते हैं । स्थान की आवश्यकता के अनुरूप वे अपना आकार बदल कर मस्तिष्क, हृदय, जिगर, तिल्ली, नसें, माँसपेशियाँ आदि बनाते हैं । पर उन्हें पता है कि विभिन्न स्थिति में काम की जिम्मेदारियाँ उठाते हुए भी वह सब एक ही पिता की सन्तान, भाई-भाई हैं और इसीलिए वे बराबर प्रेम, दया, सहयोग, सहानुभूति, श्रम, सामूहिकता आदि का व्यवहार करते रहते हैं, इसी कारण शरीर स्थिर है ।

जिस प्रकार बहुत से कोशों (लगभग २ अरब) से मिलकर शरीर बना, उसी प्रकार बहुत से मनुष्यों से समाज, देश और विश्व बना । स्थान की स्थिति और जलवायु की भिन्नता के कारण वर्ण-भेद, स्वभाव-भेद होते हुए भी सब एक ही आत्मा के अंग हैं, यह मानकर जो शरीर की सहयोग-भावना का पालन करते हैं वह विश्व-शान्ति बढ़ाने और ईश्वरीय मर्यादाओं का पालन करने का पुण्य करते हैं । जो उसके विपरीत जड़वादी आचरण करते हैं, प्रकृति उन्हें दण्ड देती है । इसी सूक्ष्म न्याय प्रणाली पर सृष्टि की व्यवस्था अब तक विद्यमान है । यदि प्रेम, दया, उदारता, करुणा आदि सद्गुणों का अन्त हो गया होता, तो सृष्टि का भी अन्त हो गया होता ।

मनुष्य-शरीर मानवीय सद्गुणों का जिस रीति से परिपालन करता है उसका वक्तव्य बड़ा ही रोचक है । आन्तरिक क्रिया-शास्त्र (फिजियोलॉजी) का गहन अध्ययन किया जाय तो पता चलेगा कि व्यक्ति और समाज को सुखी-सन्तुलित और सुव्यवस्थित बनाने वाले जो भी गुण हैं, वह दूध से नवनीत काढ़ने की तरह से ही निकाले गए हैं ।

उदाहरण के लिए सहयोग और सहानुभूति को ही ले लें । मनुष्य इतना कठोर हृदय हो सकता है कि अपने भाई, अपने पड़ोसी को कष्ट और पीड़ित अवस्था में देखकर भी चुप रह जाय, पर हमारे शरीर के सदस्य ऐसे हृदयहीन नहीं । परस्पर सहयोग और दूसरे के दुःख में हाथ बँटाना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ही उनका जीवन है । उदाहरणार्थ यदि एक गुर्दा खराब हो जाय, जैसा कि पथरी की बीमारी के समय होता है, तो अच्छा गुर्दा दूसरे पीड़ित गुर्दे का सारा कार्य भार स्वयं सँभाल लेता है । जब तक वह ठीक न हो जाय स्वयं कष्ट सहेगा, किन्तु शरीर की साधारण क्रिया में कोई अन्तर न आने देगा ।

धमनियाँ (आर्ट्रीज) शरीर को रक्त पहुँचाती हैं । बड़ों के साथ छोटे-छोटे लोग भी रहते हैं और तब उनका कोई विशेष महत्त्व जान नहीं पड़ता । जैसा कि बड़ी धमनियों के साथ कुछ पतली धमनियाँ भी बनी रहती हैं । मनुष्य अपने छोटों को कष्ट दे सकता है, उनका शोषण और उत्पीड़न कर सकता है । पर धमनियों को पता है कि छोटे से छोटे जीव का भी कितना महत्त्व है, इसलिए वह पतली धमनियों को भी पोषण देती रहती हैं । कभी कोई धमनी (आर्ट्रीज) कट जाय तो उस स्थिति में पतली धमनियाँ (एनास्टोमोसेस) रक्त प्रवाह के किनारे फूल कर आगे जोड़ देती हैं और रक्त परिभ्रमण क्रिया को तब तक साधे रहती है, जब तक घाव अच्छा न हो जाय । इससे आने वाला हिस्सा काम करता रहता है । यदि ऐसा न भी हो तो भी पतली धमनियाँ (एनास्टोमोसेस) आजीवन काम करती हैं ।

'नेमोनेक्टामी' के अनुसार यदि एक फेफड़ा काटकर निकाल देना पड़े तो दूसरा फेफड़ा साधारण स्थिति के सारे काम सँभाल लेता है । यह सहयोग और सहानुभूति क्रियाएँ बताती हैं, कि हम जिस समाज में रहते हैं उसमें आये दिन दुर्घटनाएँ घटती हैं । उनसे कुछ लोग पीड़ित होते हैं उनके प्रति भी हमारे कर्तव्य वैसे ही हैं जैसे स्वयं अपने प्रति । व्यवस्था, विश्व-शान्ति और मानवता ऐसे ही अक्षुण्ण रहती हैं ।

आज लोगों ने इन बातों को भुला दिया । स्वार्थ और प्रवंचनाएँ प्रबल हो उठी हैं । सारा समाज उन प्रवंचनाओं में धू-धू कर जल रहा है । सर्वत्र शोषण, लूट-पाट, बेईमानी, छल-कपट, कलह के बाहरी शत्रु आक्रमण कर समाज की भलाई को धराशायी करते जा रहे हैं, पर हममें से मुकाबले की शक्ति भी जाग्रत नहीं होती । शरीर के छोटे-छोटे कोशों को पता है कि जब बुराइयों, बीमारियों की तीव्रता बढ़ जाती है तो शरीर का सम्बन्धित अंग ही नहीं सारा शरीर बेचैन हो उठता है । इसलिए वे सब के सब एक जुट प्रयत्न करते हुए बुराइयों के उन्मूलन में लग जाते हैं ।

कई बार चमड़ी खुल जाने या चोट लग जाने के कारण कोई कीटाणु बाहर से आकर शरीर में घुस जाते हैं और लोगों को सताना, काटना, लूटना, भक्षण करना प्रारम्भ कर देते हैं तब शुद्ध रक्ताणु दौड़ पड़ते हैं । (१) सूजन, (२) उस स्थान की चमड़ी का लाल हो जाना, (३) उस हिस्से का गर्म हो जाना, (४) तनाव बढ़ने से नस पर दबाव पड़ता है और दर्द बढ़ता है । इससे पता चलता है कि अच्छे कोशों की सेना एकत्रित हो गई और बुराइयों का निष्कासन प्रारम्भ हो गया । दरअसल जिस मनुष्य समाज में बुराई के प्रति इतनी सजगता और तत्परता नहीं बरती जाती वह समाज उसी तरह सड़ जाते, निकम्मे हो जाते हैं, जैसे शरीर का कोई हिस्सा जहाँ कीटाणु हमला कर देते हैं । ऐसे विषाक्त वातावरण को जितनी जल्दी साफ कर दिया जाता है शरीर की तरह समाज उतना ही शीघ्र चैन अनुभव करता है ।

कई बार बुराई की मात्रा काफी बढ़ जाती है । रक्त में हानिकारक कीटाणु (इनफैक्टिव बैसिलाई) पैदा हो जाते हैं, उनसे रोग और विकृति पैदा होती है । उसके मुकाबले के लिए रक्त के श्वेत अणु (ह्वाइट ब्लड कारपेसल्स) पहुँचते हैं और शरीर रक्षा का पूर्ण प्रयत्न करते हैं, पर बेचारों की शक्ति बुराई के मुकाबले हुई कम तो हार जाते हैं और मार दिए जाते हैं, किन्तु त्याग और बलिदान की उपयोगिता समझने वाले ये अणु मरते-मरते भी कुछ न कुछ उपकार कर जाते हैं । मरे हुए श्वेत अणु प्रोटियोलाइटिक एन्जाइम बन जाते हैं और (१) शरीर के मरे हुए कोश (बैक्टीरिया) (२) एवं नष्ट हुए श्वेत अणु को घोल कर पीव बना देते हैं और उन्हें बाहर निकाल देते हैं इससे दर्द कम हो जाता है ।

आजकल बुराइयाँ अधिक बढ़ गई हैं । इसलिए असामान्य परिस्थितियाँ पैदा की जा रही हैं । यह परिस्थितियाँ असामान्य इसलिए कही जायेंगी कि इनमें समाज के सभी विचारशील लोग अपना ध्यान निजी हितों से हटा कर पूरी तरह समाज सुधार और दुष्प्रवृत्तियों के उन्मूलन में लगाते हुए चले जायेंगे, तब समाज-शरीर उसी तरह अच्छा हो जायेगा जिस तरह शरीर के बुरे तत्व नष्ट कर देने पर । टी. बी. के जीवाणु (बैक्टीरिया) जब एसिड फास्ट बैसिलाई बन जाते हैं । अर्थात् एसिड्स भी उसका मुकाबला नहीं कर पाते, उस समय श्वेत अणुओं के ५ प्रकार के कोश (सेल्स) (१) पोलियोमोपर्स ७० से ७५% (२) लिम्फोसाइड्स २० से ३० प्रतिशत, (३) मोनोसाइड्स ५ से १० प्रतिशत, (४) ईजिनोफिल ५ से ६ प्रतिशत और (५) वेसोफिल्स आधा प्रतिशत तैयार होते हैं । लड़ाई के दिनों में जिस तरह सेनापति परस्पर ऐसी योजनाएँ बनाते हैं, कि दुश्मन को हर तरह से मात दी जाय, उसी तरह शारीरिक बुराई के प्रति यह संघर्ष भी बड़ा प्रेरक होता है । सर्वप्रथम पोलियोमोपर्स आते हैं, यदि वे अपने आपको मुकाबला करने में असमर्थ पाते हैं, तब लिम्फोसाइड्स की टुकड़ी आगे बढ़कर दुश्मन को ललकारती है, यदि तब भी टी. बी. के कीटाणु सशक्त हुए और लिम्फोसाइड्स हार गए तो कई-कई इपिथेलाइड्स कोश मिलकर दैत्याकार कोश (जाइन्टसेल्स) बनाकर टी. बी. के कीटाणुओं को खा जाते हैं । शरीर की यह सुरक्षा-शक्ति आह्वान करती है कि जब कभी सामाजिक बुराइयाँ, पाप, अपराध, अनैतिकता का कुछ ऐसा बाहुल्य हो जाय कि अग्रगण्य लोग भी उन्हें भी दूर न कर पायें, तब संगठित प्रयत्नों द्वारा उन्हें नष्ट करने के लिए अपनी सारी शक्ति जुटा देनी चाहिए ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

गुर्दे के ऊपर एक सुप्रारीनल ग्रन्थि (ग्लैण्ड) होती है, वह एड्रिनलीक एवं कार्टिको स्टराइड्स निकालती है जो शरीर को उसी प्रकार विषम स्थिति में कार्य करने की शक्ति देती है जैसे महापुरुष अपने अनुयायियों को देकर बुराइयों का अन्त कराते हैं । उदाहरण के लिए सामने कोई जंगली जानवर आ जाय तो एड्रिनिलीन रक्त चाप बढ़ाकर पैरों को अधिक कार्य करने के लिए अधिक शक्ति दे देती है । उतनी ही शक्ति मस्तिष्क को मिलती है, जिससे वह तुरन्त कोई निर्णय ले सके । दौड़ते समय फेफड़े माँसपेशियों (मसल्स) को ऑक्सीजन की बहुत मात्रा अनुदान दे देते हैं, दौड़कर आने के बाद काफी देर तक तेज हाँफी चलती रहती है इस तरह फेफड़े अपनी खोई शक्ति पुनः अर्जित कर लेते हैं । सम्भवतः यह व्यवस्था भगवान ने इसलिए की, कि मनुष्य यह जान ले कि औरों की भलाई में उत्सर्ग की हुई शक्ति और क्षमताएँ नष्ट नहीं होतीं वरन एक नई चेतना लेकर भगवान के वरदान की तरह पुनः मिलती हैं । मनुष्य अपने उपकार का पुण्य फल उसी प्रकार प्राप्त करता है, जिस तरह स्वतन्त्रता संग्राम के सिपाही अपने महत्त्वपूर्ण पदों का आनन्द ले रहे हैं ।

वस्तुतः शरीर रचना की आधारभूत शिक्षाएँ यदि सम्पूर्ण रूप से मनुष्य समाज में ढाल दी जायें तो विश्व शान्ति के लिए बाह्य साधनों की खोज ही न करनी पड़े । हम समता के सिद्धान्त पर धरती में जीवित हैं और एक-दूसरे के प्रति त्याग भावना से सुरक्षित हैं । केवल स्वार्थ ही स्वार्थ और अहंमन्यता मात्र रहे होते तो मानवीय संस्कृति का जीवित बने रहना कठिन हो जाता । पहले यह परिस्थितियाँ नहीं थीं पर अब उनकी मात्रा बढ़ रही है, अब हर व्यक्ति स्वार्थी होता जा रहा है । खुदगर्जी के कारण ही लोभ-लालच, बेईमानी और संग्रहवृत्ति पनप रही है । इससे सामाजिक विषमता पैदा होती है और लोगों में अविश्वास की भावनाएँ भड़कती हैं । इस स्थिति का मुकाबला त्याग और उदारता के बल पर ही किया जा सकता है ।

हमारे शरीर की व्यवस्था ऐसी ही है, जिसके संग्रह तो हैं पर एक अच्छे सहयोग के लिए, त्याग और उदारतापूर्वक, औरों की सुविधाएँ बढ़ाने के लिए हैं । (१) हर हड्डी के पोले भाग में, (२) प्लीहा (स्लीन) (३) जिगर (लिवर) में रक्त की मात्रा संग्रहीत रहती है । कभी चोट या घाव हो जाने पर यह संस्थान अविलम्ब रक्त पहुँचा कर उस स्थान को ठीक रखने और कमजोर न होने देने का प्रयत्न करते हैं । सामूहिकता की इसी भावना पर समाज की सुख-शान्ति अवलम्बित है ।

रक्त ही नहीं शरीर में चर्बी का भी स्टोर रहता है । चमड़ी और माँस के बीच चर्बी सुरक्षित रहती है । कई दिन तक भोजन न मिले तो भी सब अंग काम करते रहते हैं । चमड़ी पीली पड़ जाती है तो भी किसी की मृत्यु नहीं होने दी जाती । मृत्यु तो हृदय और मस्तिष्क को पोषण न मिलने से होती है पर शरीर-संस्कृति जानती है, कि भावनाशील और चरित्रवान लोगों के मिट जाने से समाज की सुख-शान्ति मिट जाती है, इसलिए यह अपनी सुरक्षित शक्ति उनके लिए खुशी-खुशी दान कर देती है ।

यह भलाई की शक्तियाँ ही मनुष्य को जीवन दान देती हैं । डॉक्टर जानते हैं कि शरीर में शक्ति ग्लूकोज के टूटने से प्रसारित होती है । जब कोई माँसपेशी या कोश (सेल) काम करता है, तो ग्लूकोज लैक्टिन एसिड में परिवर्तित होकर शक्ति प्रदान करता है । जिगर का ग्लाइकोजन ग्लूकोज में परिवर्तित होता है । यह माँसपेशियों में ए. टी. पी. (एडिनो ट्राइ फॉस्फेट) टूट कर ए. डी. पी. (एडिनो डाइ फॉस्फेट) एवं फॉस्फोरस में बदलता है । यह फॉस्फोरस क्रियेटिंग फॉस्फेट से मिलता है, जो अपनी शक्ति ग्लाइकोजन से लेता है । विश्राम के समय यही ग्लाकोजन फिर जिगर में संग्रहीत हो जाता है । सामान्य स्थिति में वह रक्त में भी संचारित होता रहता है । हमारे साधन, सत्कार्यों में निरन्तर लगते रहें और आवश्यकता पड़ने पर तो दूसरी बातों को गौण मानकर भी अपनी तमाम शक्तियाँ, प्रतिभाएँ और योग्यताएँ सामाजिक भाई के कार्यों में लग जायें, यह प्रेरणा हमें उक्त क्रिया से मिलती हैं ।

मनुष्य शरीर एक समाज है । इस समाज में अनेक कोश होते हैं, हमारे समाज में अनेक मनुष्य हैं । हम मनुष्य-समाज को किस तरह सुखी-शान्त और समृद्ध रखें, किस तरह उसकी सुरक्षा रखें, इस सबकी जानकारी हमें शरीर क्रिया प्रणाली (फिजियोलॉजी) से सीखनी पड़ेगी । हम उन नियमों पर चलकर ही मानवीय संस्कृति को जीवित रख सकते हैं ।

प्रगति का एकमेव आधार प्रतिभा, सहकार

'पेस-मेकर' एक बैटरी चालित यन्त्र है, जो असाध्य हृदय रोगियों के लिए 'संजीवनी' का सा आविष्कार है यह एक प्रकार का लघु जनरेटर होता है । जिसे एक विशेष प्रकार के ऑपरेशन द्वारा चमड़े के अन्दर फिट कर देते हैं और एक अत्यधिक सम्वेदनशील कोमल तार (कनेक्टिंग केबुल) द्वारा हृदय-कर्ण तक जोड़ देते हैं । ऐसे रोगी, जिनके हृदय अत्यधिक दुर्बल हो जाते हैं, दौरे पड़ते हैं और किसी भी दौरे से जिनका प्राणान्त हो सकता है, उनके लिए यह यन्त्र पुनर्जन्म से कम नहीं । हृदय को ऊर्जा और धड़कन देने की जिम्मेदारी यह सम्भाल लेता है फिर तीन वर्ष तक के लिए खतरे की आशंकाएँ टल जाती हैं । तीन वर्ष बाद छोटा-सा ऑपरेशन कर दूसरी बैटरी डाल देते हैं । यन्त्र पुनः सक्रिय हो उठता है । इस समय अकेले जर्मनी में २००० से अधिक लोग इसे धारण किए हुए हैं, अन्यत्र किसी भी देश में यह उपलब्ध नहीं है ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

असाध्य रोगों के निवारण और ऐसी ही अनेक संकट पूर्ण परिस्थितियों में जीवन को बचाये रखने की दिशा में सर्वोपरि प्रगति अमेरिका ने की है । हृदय, फेफड़ों, यकृत तथा कृत्रिम रुधिर संचार की अच्छी से अच्छी यांत्रिकी और जीवनदायिनी मशीनों और उपकरणों के लिए सारा संसार अमेरिका का आश्रित है । इसका कारण इस देश में विपुल सम्पत्ति और साधन नहीं है, अपितु एक ऐसा सहयोग है, जिसकी ओर दुनिया के बहुत कम लोग ध्यान देते हैं । ज्ञान-विज्ञान के अनेकों क्षेत्रों के विशेषज्ञ यदि सहकार और सहयोग की भावना से एक स्थान पर मिलें, बैठें और परस्पर विचार विनिमय करें तो ऐसी अनेकों उपलब्धियाँ अर्जित की जा सकती हैं, जो औरों के लिए आश्चर्यजनक सी लगती हों ? ऊपर जिस यन्त्र 'हृदय मशीन' (पेसमेकर) से सहयोग के सत्परिणाम की गाथा प्रारम्भ होती है, वह किसी अकेले एक व्यक्ति, कम्पनी या विभाग की उपलब्धि नहीं, अपितु कई विभागों की संयुक्त योग्यताओं के एक स्थान पर संगठित होने का परिणाम है । पेश मेकर के निर्माण में अमेरिकन कम्प्यूटर टेक्नालॉजी, विद्युत विभाग तथा स्वास्थ्य विशेषज्ञों का सम्मिलित प्रयास लगा हुआ है । यदि यह तीनों ज्ञान की धाराएँ अलग-अलग दिशाओं में बहती, रहतीं तो सम्भवतः त्रिवेणी संगम की तरह पुण्य फलदायक इस यन्त्र का निर्माण ही सम्भव नहीं होता ।

सहयोग की भावना में प्रथम लाभ तो यह है कि आदमी की अहं भावना मिटती है । एक का ज्ञान, एक की क्षमता सीमित, दस का ज्ञान दस की क्षमता असीमित । सीमित क्षमता से असाधारण उपलब्धियाँ सम्भव नहीं, उसके लिए असाधारण सामूहिक योगदान ही शक्य और समर्थ है । पीछे तो अमेरिका की जनरल इलेक्ट्रिक कम्पनी भी इस सहकार में सम्मिलित हो गई । तभी इतना उपयोगी यन्त्र विकसित हो सका कि अब उसे धारण करने वाले न केवल सामान्य जीवन प्रक्रिया चला लेते हैं अपितु खेलकूद भी सकते हैं, उछल भी सकते हैं, तेज गति से दौड़ भी सकते हैं ।

अमेरिका की भौतिक समुन्नति का श्रेय भी इसी बात को है कि वहाँ ज्ञान सारे विश्व से आकर्षित किया गया और उसका ध्रुवीकृत लाभ अमेरिकी प्रशासन ने प्राप्त किया । यह परम्परा चाहे देश हो या समाज जहाँ भी सहकारिता पनपती है, वहीं समुन्नति फलती-फूलती है । 'जहाँ सुमति तहँ सम्पति नाना' कहावत इसी बात को सिद्ध करती है । सुमति का अर्थ ही—सामूहिक सद्भाव का विस्तार है, उपचार के क्षेत्र में बने संगणक अमेरिका के लाकहीड कं. के इन्जीनियरों के सहयोग से बना यह कम्पनी लड़ाकू विमान स्टार फाइटर्स बनाती है । मेडिकल का तो उसे ज्ञान है, यह मार्ग दर्शन उसे मेयोक्लीनिक से मिला । डिजाइनर्स मेडिकल प्रोफेसरों के सुझाव पर 'एक्पेंसेमा बेल्ट' जो वास्तविक शोध और फेफड़े की बीमारी पर साँस लेने में सुविधा प्रदान करती है । 'नार्थ अमेरिकन एविएशन' के सहयोग से सम्भव हुआ ।

विश्व को 'महा प्रपंच' और प्रकृति को विविध रूपा कहा गया है । हमारे शरीर में ताप विज्ञान भी विद्यमान है, रसायनशास्त्र भी, फोटोग्राफी भी, फिजियोलॉजी भी, इन्जीनियरिंग का इसमें कमाल है तो यह मनोविज्ञान का जादुई पिटारा भी है । इतना सब होते हुए भी मनुष्य जीवन के अस्तित्व पर एक सुनिश्चित निर्णय आज तक नहीं हो पाया । पन्थों, सम्प्रदायों और नित्य नये दर्शनों का उदय इसी कारण हुआ । यदि ज्ञान-विज्ञान के समूचे क्षेत्र को एक स्थान पर एकत्र किया जा सका होता तो सम्भवतः बहुत समय पूर्व किसी सर्वमान्य सिद्धान्त की वैसे ही स्थापना हो चुकी होती, जैसी कि इन मेडिकल मशीनों के प्रति किसी को कोई आशंका नहीं । यह तो कुछ उदाहरण मात्र हैं । जो न केवल चिकित्सा अपितु जीवन के अनेक क्षेत्रों में सहयोग के चमत्कार की सम्भावनाओं का संकेत करते हैं ।

ऊपर जिस 'बेल्ट' का जिक्र किया गया है । वह अन्तर्ग्रहीय यानों पर उल्कापिण्ड गिरने के प्रभाव का अध्ययन करने के लिए बनाया गया था । नासा स्पेश अधिकारियों से कुछ डॉक्टरों की मैत्री थी । एक दिन दोनों प्रकार के अनुभवों का एकीकरण हुआ, तो एक नये आविष्कार ने जन्म लिया । इसी तरह मानव जीवन की अनेक समस्याओं का, राजनैतिक उथल-पुथल, अकाल और युद्ध जैसी मानवीय विभीषिकाओं का भी मिल-जुलकर जितना अच्छा समाधान हो सकता है, कोई अकेला तमाम उम्र वैसा नहीं कर सकता । यदि ज्ञान की समस्त धाराओं को एकत्र किया गया होता, अपने-अपने अनुभवों का पंजीकरण विद्वान लोग कर सकते होते, तो सब मिलकर अनात्मवादी आस्था को समाप्त करने में सफल हो गए होते, जबकि इसके अभाव में आज दर्शन टकराते हैं, सभ्यताओं और सम्प्रदायों में संघर्ष है, मान्यताओं को लेकर मनुष्य-मनुष्य में खींचतान है । 'सत्य' एक है, दो नहीं पर उसकी पहचान एक नहीं अनेकों ज्ञान धाराओं के संगम से ही सम्भव है ।

चन्द्रमा के गुरुत्वाकर्षण में उतरने वाला चन्द्रयान यदि तेजी से उतर कर ध्वस्त नहीं हो सकता तो पृथ्वी पर वाहनों के बीच की दुर्घटनाएँ क्यों नहीं टल सकतीं ? यह विचार आते ही, हवाई जहाजों में प्रयुक्त 'हनीकूम्ब' चद्दरें अत्यन्त हल्की तथा मजबूत होती हैं । उनका उपयोग कर यात्राएँ सस्ती और वाहन हल्के क्यों नहीं किए जा सकते, इस विचार से कुछ मोबाइल कम्पनियाँ नये यातायात साधनों की खोज में लग गई हैं । कपड़ा उद्योग मौसम विभाग की जानकारी प्राप्त न करे तो उसका उत्पादन आधा हो जाय, रसायनशास्त्री अपने रासायनिक विश्लेषण देकर अपराधियों को पकड़वाने में मदद देते हैं । इस तरह जीवन के विभिन्न क्षेत्रों के ज्ञान यदि कहीं ही एकत्र किए जा सकें, तो एक अभिनव सामाजिक क्रान्ति हो सकती है और मानव-कल्याण का मार्ग प्रशस्त हो सकता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ज्ञान और अनुभवों का क्षेत्र बड़ा विस्तृत और विशाल है, पर वह अनेक दिशाओं में बिखरा पड़ा है । सूर्य की करोड़ों किरणें सैकड़ों दिशाओं में फैली हुई हैं, उनसे प्राणी जगत को चेतना तो मिलती है, पर यदि उस शक्ति का चमत्कार देखना हो तो एक आतिशी-शीशे में उन असंख्य किरणों को एक करना पड़ेगा । नई दिशाएँ, नई उपलब्धियाँ, नये निर्गाण खड़े करने हों तो अनेक तरह की प्रतिभाओं का संकलन आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य होगा । ज्ञान का अर्थ प्रतिभा, प्रतिभा का अर्थ क्षमतावान मनुष्य । यदि विचारशील व्यक्तियों को अपने तक ही सीमित रहने की संकीर्ण मनोवृत्ति दूर हो सके तो इसी तरह के मनुष्य जीवन को लाभान्वित करने वाले असंख्य चमत्कार प्रस्तुत किए जा सकते हैं ।

प्रत्यक्ष ही नहीं, परोक्ष भी समझें

यह जगत दो हिस्सों में बँटा हुआ है । एक प्रत्यक्ष और दूसरा परोक्ष । दृश्य पदार्थों के भीतर एक प्रेरक शक्ति काम करती है, जिसे आँखों से नहीं देखा जाता, उसकी क्षमता एवं गति को देखकर अनुमान लगाया जाता है, कि प्रकृति के अन्तराल में शब्द, ताप और प्रकाश की तरंगें काम करती हैं । उन्हें परोक्ष ही कहा जा सकता है । शरीर सारे काम करता है, पर उसके भीतर चेतना की परोक्ष प्राण शक्ति काम करती है । भ-ूमण्डल के सम्बन्ध में भी यही बात है । वह जल, थल और नभ के तीन भागों में विभक्त है । किन्तु उसका थोड़ा-सा भाग ही दृष्टिगोचर होता है । भ-ूगर्भ में क्या हलचलें चल रही हैं, समुद्र तल में क्या हो रहा है, आकाश में कितना पदार्थ वायुभूत होकर उड़ रहा है ? इसकी जानकारी सामान्य बुद्धि या साधनों से प्राप्त नहीं होती । वह सभी एक प्रकार से परोक्ष या अदृश्य हैं ।

प्रत्यक्ष के सम्बन्ध में ही हमें हल्की-फुल्की जानकारी होती है । उतने पर भी प्रत्यक्ष की तुलना में परोक्ष की क्षमता असंख्य गुनी है । एक चुटकी धूलि का कोई महत्त्व नहीं, किन्तु एक परमाणु की परोक्ष शक्ति का विस्फोट गजब ढा देता है । समुद्र के खारे जल में ज्वार-भाटे मात्र उठते हैं, पर इसे बहुत कम लोग जानते हैं कि धरातल के कोने-कोने में जल पहुँचाने के लिए उसकी अदृश्य प्रकृति एवं हलचलें ही महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं । यही बात आकाश के सम्बन्ध में भी है । वह पोला, खाली दृष्टिगोचर होता है, किन्तु पवन पर्जन्य, प्राण जैसे अति महत्त्वपूर्ण तत्व प्रचुर परिमाण मे उसी में भरे पड़े हैं । यदि उनका लाभ प्राणियों को न मिले तो किसी का भी जीवन शकट एक कदम आगे न बढ़े ।

चर्चा परोक्ष जगत की हो रही है । प्रत्येक प्रयोजन के लिए यों हमें प्रत्यक्ष से ही पाला पड़ता है और उसी को सब कुछ मानने तथा बढ़ाने-बदलने का अभ्यास रहता है फिर भी विचारशील यह भी भूलते नहीं, कि परोक्ष की सत्ता असाधारण है और उसकी उपेक्षा करके खिलौने से खेलने की तरह मात्र छोटे बच्चों जैसी स्थिति हमारी बनी रहती है । एक अविकसित वनवासी मात्र घास-पात की सम्पदा पर ही निर्भर रहता है, किन्तु एक वैज्ञानिक प्रकृति पर आधिपत्य जमाता और असीम शक्ति का अधिष्ठाता बनता है । इसे परोक्ष सामर्थ्य की जानकारी एवं उपलब्धि का चमत्कार ही कह सकते हैं ।

यहाँ चर्चा अदृश्य जगत की हो रही है । धरातल के पदार्थों प्राणियों की हलचलों, सम्पदाओं सुविधाओं को हम देखते हैं । उस क्षेत्र की प्रतिकूलताओं को अनुकूलताओं में बदलने के लिए प्रयत्न भी करते हैं पर यह भूल जाते हैं, कि प्रत्यक्ष के पीछे परोक्ष कारण भी महत्त्वपूर्ण भूमिका सम्पन्न कर रहे होते हैं और उन्हें समझने और निपटने के लिए भी कुछ किया जाना चाहिए । इस भूल का परिणाम है कि प्रयत्न करने पर भी समस्याएँ सुलझने में नहीं आतीं और श्रम निरर्थक चला जाता है । थकान, निराशा और खीझ ही पल्ले पड़ती है । हमें गहराई में उतरने की आदत डालनी चाहिए और समझना चाहिए कि मोती बटोरने के लिए गहरी डुबकी लगाने के अतिरिक्त और कोई चारा नहीं । किनारे पर भटकते रहने से सीप और घोंघों के अतिरिक्त और कुछ पल्ले नहीं पड़ सकता ।

रोग प्रत्यक्ष और औषधि भी । दोनों आपस में सुलझते समझते भी रहते हैं । एक-दूसरे को चुनौती चिरकाल से देते आ रहे हैं, किन्तु औषधियाँ हारतीं और बीमारी जीतती चली आ रहीं हैं । यह क्रम तब तक चलता ही रहेगा, जब तक कि असंयम से शक्तियों के अपव्यय और विषाक्तता के उद्भव अदृश्य का कारण न समझा जाय और उसके निवारण के लिए चटोरेपन की आदत का परिमार्जन न किया जाय । यह बात अर्थ संकट, मानसिक तनाव, परिवार विग्रह, समाज विक्षोभ जैसी समस्याओं के सम्बन्ध में भी लागू होती हैं । मनःस्थिति बदलने से परिस्थिति बदलती हैं, इस सूत्र की जब तक उपेक्षा होती रहेगी, झंझट, संकट, अभाव एवं विग्रह अपने स्थान पर यथावत् जड़ जमाये रहेंगे हटने का नाम नहीं लेंगे ।

इन दिनों प्रत्यक्ष जगत में वैयक्तिक एवं सामाजिक जीवन में पतन पराभव का माहौल है । पिछले दिनों आर्थिक, बौद्धिक एवं वैज्ञानिक क्षेत्र में असाधारण प्रगति हुई है । उस आधार पर सुविधा साधनों की इतनी अभिवृद्धि हुई है, जितनी कि सृष्टि के इतिहास में अद्यावधि कभी भी नहीं हुई । इतने पर भी व्यक्ति हर दृष्टि से घटता और घुटता जा रहा है । समाज का कोई क्षेत्र ऐसा नहीं, जिसमें गतिरोध न अड़ गए हों । संकटों के चक्रवात न रहे हों । मिल-जुलकर समाधान खोजने की प्रवृत्ति को तिलांजलि दी जा रही है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

अस्तीनें ऊँची करने, ताल ठोंकने, घूँसा दिखाने के अतिरिक्त और किसी को कुछ सूझता ही नहीं । अपराधों का आश्रय लेने और अन्यायों को नीचा दिखाने के अतिरिक्त चिन्तन और प्रचलन में कहीं कोई तत्व दिखाई नहीं पड़ते, जिसमें व्यक्ति को सुखी, सुसंस्कृत एवं समाज को समृद्ध समर्थ बनाने का आशा बंध सके । बुद्धिमानों की कमी नहीं । मूर्धन्य प्रतिभाएँ भी हर क्षेत्र में विद्यमान और सक्रिय हैं, फिर भी दो गज जुड़ने के साथ-साथ चार गज टूटने जैसी विपन्नता बढ़ती जा रही है । मनुष्यकृत उत्पात का प्रतिफल किसी भी दिन विश्व विनाश की स्थिति उत्पन्न कर सकता है । युद्धोन्माद किसी भी दिन मनुष्य समुदाय की सामूहिक आत्म-हत्या के लिए विवश कर सकता है । जनसंख्या की अनियन्त्रित अभिवृद्धि, प्रदूषणों और विकिरणों के घटाटोप—अपराधों के तूफानी चक्रवात, सन्निपात जैसा युद्धोन्माद ऐसा है, जिसके कारण सर्वनाश की घटाएँ घुमड़ती दीखती हैं ।

गुत्थियों को सुलझाने के लिए कड़वे-मीठे प्रयत्न न हो रहे हों सो बात नहीं । विनाश से बचाव और उत्कर्ष के आधार पर ढूँढ़ने के लिए अपने-अपने ढंग से सभी प्रयत्नशील हैं, पर समाधान निकट आने के स्थान पर दूर ही हटते जा रहे हैं । इन परिस्थितियों में कई बार तो वह निराशा सिर पर सवार होती है, कि मनुष्य नियति के सम्मुख असहाय जैसा है । पुरुषार्थों का माहात्म्य अतिशयोक्तिपूर्ण है ।

यहाँ सहज ही परोक्ष पर दृष्टि जाती है और लगता है कि कोई किसी मर्म स्थल में ऐसा काँटा तो नहीं घुसा बैठा है, जो नासूर बनकर रिसते रहने की स्थिति बनाये रहे । किसी उपचार को सफल न होने दे । तत्वज्ञानी इस सृष्टि से सदैव भावनाशील रहे हैं । पर प्रत्यक्ष को जड़ एवं आवरण मानते हैं । परोक्ष को उन्होंने चेतन प्रेरणा माना है और चेतना को ही वातावरण का, मनःस्थिति को ही परिस्थिति का जन्मदाता कहा है । तथ्यतः यह प्रतिपादन शत-प्रतिशत सच है । मानवी चिन्तन, चरित्र और व्यवहार को प्रभावित करने वाली 'आस्था' विकृत हो जाने से हर क्षेत्र में अनेकानेक संकट खड़े हुए हैं । आत्यंतिक समाधान के लिए तब तक प्रतीक्षा ही करती रहनी पड़ेगी जब तक कि आस्था संकट से निपटने के लिए कारगर नहीं किए जाते । इस सम्बन्ध में एक छोटे से प्रयत्न अन्धेरे में टिमटिमाते दीपकों की तरह प्रज्ञा अभियान का मूल्यांकन भी किया जा सकता है ।

परोक्ष जगत की परिधि में मानवी आस्था को महत्त्व तो दिया जा सकता है फिर भी वह समग्र नहीं है । दृश्य जगत की पीठ पर एक अदृश्य जगत भी है और उसमें चल रही हलचलों और गतिविधियों से प्रत्यक्ष जगत पूरी तरह प्रभावित होता है । देखना यह भी है कि अदृश्य जगत में कहीं अवांछनीय तत्व तो नहीं घुस पड़े हैं और उनके प्रभाव से प्रत्यक्ष का वातावरण तो विषाक्त नहीं हो रहा है ।

ऋतुओं के प्रभाव को सर्दी, गर्मी, नमी के रूप में अनुभव किया जाता है, किन्तु वस्तुतः वे सूर्य और पृथ्वी के परिभ्रमण से उत्पन्न होने वाली परिणतियाँ भर हैं । इसे समझे बिना ऋतु परिवर्तन के रहस्य से अपरिचित ही बने रहना पड़ता है । अन्तरिक्ष से इतना कुछ बरसता है, जिसे जल और थल की संयुक्त उपलब्धियों की तुलना में भी कहीं अधिक कहा जा सके । अदृश्य की शक्ति पर कभी तथाकथित प्रत्यक्षवादी अविश्वास करते थे । पर बढ़ते हुए विज्ञान का समूचा आधार ही अप्रत्यक्ष को समझने और हस्तगत करने में केन्द्रीभूत हो रहा है ।

पदार्थ विज्ञान के साथ अध्यात्म विज्ञान को जोड़ने से ही समग्र तत्व ज्ञान का सृजन होता है । उसी समन्वय के आधार पर जो जानने योग्य है, उसे जाना जा सकता है और जो पाने योग्य है, उसे पाया जा सकता है । इस दिनों की विकट समस्याओं में यदि परोक्ष जगत की विकृतियों को समझने सुधारने का प्रयत्न किया जाय तो उसे दूरदर्शी विवेकशीलता ही कहा जायेगा । फुन्सियाँ अच्छी न हो रही हों तो रक्त विकार खोजने तक दृष्टि दौड़नी चाहिए । मच्छरों को भगाते न बन रहा हो तो सड़ी कीचड़ के खोजने और हटाने का प्रयत्न करना चाहिए । पतन और पराभव वस्तुतः भ्रान्तियों और विकृतियों की परोक्ष गड़बड़ का ही प्रतिफल होता है ।

जिनको परोक्ष पर, अदृश्य पर विश्वास कर सकने योग्य समझ मिल सकी है, उन्हें वर्तमान की न सुलझाने योग्य गुत्थियों के पीछे अदृश्य में संव्याप्त विषाक्तता खोजनी होगी । इसी का प्रभाव है कि लोक चिन्तन में अवांछनीयता बढ़ रही है और प्रकृति प्रकोपों का दौर चल पड़ा है । वर्षा होती है तो धरती पर हरी चादर बिछती है । जल जंगल एक होते हैं । सर्दी का पतझड़ और गर्मी की जलन का सामना करते समय उसका कारण अदृश्य में ही खोजना पड़ता है । दृश्य के प्रत्यक्ष से निपटने की सामर्थ्य जब कुण्ठित हो तो परोक्ष की ओर दृष्टि डालनी चाहिए । रिसते नासूर के मूल में घुसे हुए काँटे को कुरेदना चाहिए । कठपुतली स्वयं कहाँ नाचती है उनसे कौतूहल कराने में बाजीगर की उँगलियाँ ही चमत्कार दिखाती रहती हैं ।

इन दिनों के प्रकृति प्रकोप एवं पतन-पराभव, विनाश-विग्रह के पीछे अदृश्य जगत की स्थिति को समझने का प्रयत्न होना चाहिए । साथ ही उसे सुधारने और सन्तुलित करने का भी । व्यक्ति का स्तर और सृष्टि का भविष्य जिस प्रकार चिन्तनीय बनता जा रहा है, उसे महामारी प्रवाह की तरह किसी अदृश्य विष वमन का परिणाम समझा जा सकता है । अच्छा हो प्रत्यक्ष को ही सब कुछ न समझकर परोक्ष की ओर भी दृष्टि दौड़ाई जाय और उस क्षेत्र में संव्याप्त अशुभ से निपटने तथा शुभ का परिपोषण करने के लिए उपाय सोचे और प्रयास किए जायें । न सुलझने वाली गुत्थियों को

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सुलझाने के लिए हमारा ध्यान परोक्ष की ओर मुड़े और अदृश्य के सन्तुलन का प्रयास चले तो उसे यथार्थ का अवलम्बन ही कहा जायेगा ।

देवत्व दुर्बल न पड़े, असुरता पर हावी रहें

सृष्टि की प्रत्येक रचना का कोई न कोई रचनाकार होता है । कापी पर बनी व्यवस्थित ड्राइंग देखते ही पहला प्रश्न यह होता है, इसे किसने बनाया ? कार्टून देखकर बड़ी प्रसन्नता होती है, पर उस प्रसन्नता से सर्वप्रथम प्रसूत जिज्ञासा यह होती है कि उसे बनाया किसने ? कोने में दृष्टि डालने से उसका समाधान नाम पढ़ने से हो जाता है, किन्तु परमात्मा को किसी ने नहीं बनाया इसलिए उसकी सत्ता स्वयंभू कहलाती है ।

उसकी सृष्टि के विकास के साथ अनेकों प्रकार के तत्व, यौगिक और उनसे विनिर्मित मनुष्य, जीव जगत, वनस्पति आदि जनमें । दृश्य प्रकृति में जो कुछ भी है अच्छी और बुरी दो प्रवृत्तियों में बँटा हुआ है । जीवन की सूक्ष्मतम अवस्था जीवाणु का अध्ययन करें तो एक दूसरा तथ्य भी उपस्थिति होता है वह यह कि अच्छाइयाँ और बुराइयाँ किसी और की देन नहीं यह भी स्वयम्भू हैं । मनुष्य का अपना देवत्व ही अच्छी प्रवृत्तियाँ विकसित कर लेता और उनके सत्परिणामों से लाभान्वित होता है, जबकि उसका अन्तः ही दुष्प्रवृत्तियों के रूप में प्रकट हो उठता और न केवल उसे अपितु दूसरों का भी सर्वनाश करके छोड़ता है । जीवाणु अर्थात् देवत्व की शक्ति, प्रति जीवाणु या विषाणु असुरता का प्रतीक है ।

सैल्यूलोग आवरण से आच्छादित तरल प्रोटोप्लाज्मा से बने जीवाणु किसी भी स्थान पर नमी, आदि पाकर स्वयं ही जन्म ले लेते हैं । यह इतनी सूक्ष्म सत्ता है कि एक इंच ही लम्बी लकीर में इन्हें पंक्तिबद्ध खड़ा किया जाय तो २५००० जीवाणु बड़े मजे में खड़े हो जायेंगे । इतने आदमी एक पंक्ति में खड़े किए जायें और यह माना जाय कि एक व्यक्ति औसतन १ फुट जगह लेगा तो कुल आदमियों के लिए ५ मील लम्बी सड़क आवश्यक होगी । देवत्व सूक्ष्म तत्व है । अनुभूति के लिए वैसी ही सूक्ष्म बुद्धि दूरदर्शी समीक्षा चाहता है । यह न हो तो मनुष्य सामान्य स्वार्थ को ही इस श्रेणी में मानकर उसके लाभों से वंचित हो सकता है ।

विषाणु तो उससे भी सूक्ष्म और प्रभावी सत्ता है । एक इंच में यह १४१००० आसानी से बैठ सकते हैं—अर्थात् यदि वह एक आदमी बराबर हों और यह माना जाय कि उनमें से प्रत्येक को १ फुट ही जगह चाहिए तो २६ मील सड़क की आवश्यकता होगी । तात्पर्य यह हुआ कि बुराई की शक्ति अत्यन्त सूक्ष्म है । वह कब आ धमके यह पता लगाना भी कठिन है, जब तक कि उतनी ही पैनी और सूक्ष्म निरीक्षण बुद्धि न रखें ।

जीवाणु जल में भी होते हैं और इस रूप में वे लोक सेवी हमारे जीवन के पोषण के रूप में काम करते हैं । मिट्टी में पड़े मल और सड़न को बैक्टीरिया ही खाकर उसे अच्छी मिट्टी में बदलते रहते हैं । देव-प्रवृत्तियाँ भी इसी तरह अपने को बढ़ाने में सहायक होती हैं । साथ ही वह सृष्टि के उच्छिष्ट तत्व सड़ाकर नष्ट कर पवित्र वातावरण बनाती हैं । जिससे सर्वत्र सुख-शान्ति और प्रसन्नता बढ़ती है । जीवाणु १० या २० मिनट में ही अन्य जीवाणुओं को जन्म देने लगते हैं और २४ घण्टे में १७०००००० जीवाणुओं में परिणत हो जाते हैं । देवत्व एक क्षण के लिए भी उदित हों तो दूरगामी शान्ति और व्यवस्था की नींव गहरी जमा जाता है ।

दूसरी ओर विषाणु हैं जो जीवाणु के ही पैरों में लगा चला आता है । बुराइयाँ सदैव छद्म वेश में देवत्व के बहाने में आती हैं अन्यथा उन्हें स्थान ही न मिले, इसलिए अच्छाइयाँ जहाँ हमारे जीवन की अभीष्ट हैं । वहीं सतर्कता भी उतनी ही आवश्यक है । इस बात का सदैव ध्यान रखना चाहिए कि अतिथि और मित्र बनकर आये परिजनों में ही कहीं कोई अपनी द्विविधा और भ्रम का लाभ उठाकर कोई चोर उचक्का तो नहीं आ धमकता ।

दूध में पड़ा बैक्टीरिया उसे दही बना देता है देवत्व और श्रेष्ठ व्यक्तियों की संगति समाज को भी उसी तरह सुन्दर बना देती है; जैसे दूध की अपेक्षा दही अधिक सुपाच्य हो जाता है । अपने जीवन में छोटी से छोटी वस्तु का उपयोग है । यदि हम भलाई के हर कण को अपनाने की कला सीख जायें तो हर किसी के आदर और विश्वास के पात्र बन सकते हैं, पर विषाणु जहाँ भी पहुँच जायें, वहीं बीमारी पैदा कर दें अर्थात् बुराई के कर्म ही नहीं, विचार भी हमारे पतन का आधार बन जाते हैं ।

जीवाणु तथा विषाणु दोनों की ही संचार और विस्तार व्यवस्था बड़ी व्यापक है, पक्षियों के परों में लिपटे जहाजों में चढ़ कर यात्रियों के माध्यम से भी ये एक स्थान से, एक देश से दूसरे स्थान से दूसरे देश पहुँच जाते हैं और सर्वत्र महामारी की स्थिति पैदा कर देते हैं कुछ न मिले तो हवा ही उनके लिए उपयुक्त वाहन है । इसी से यह कहीं भी जा पहुँचते हैं । अच्छाइयों और बुराइयों का क्षेत्र भी उसी तरह सर्वत्र खुला पड़ा है । स्वाध्याय के माध्यम से हम अर्वाचीन युग के देवत्व को भी अपने वर्तमान जीवन में बुला सकते हैं और नाटकों, फिल्मों से भी अच्छे बनने की प्रेरणा ले सकते हैं । दूसरों के अच्छे आचरण हमारे जीवन दीप बन सकते हैं और उनकी शिक्षाएँ भी वही प्रेरणा दे सकती हैं । बुराइयों के लिए भी ठीक यही स्थिति है बुलायें तो मन ही मन से करोड़ों मनोविकार आमन्त्रित करलें दृढ़ता हो तो दृष्टि में पड़ने वाली कुत्सा भी अन्दर झाँकने न पाये ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हमारे भीतर आसुरी प्रवृत्तियाँ जड़ न जमा पायें उसके लिए उन्हें मारने की मुहीम जाग्रत रखनी चाहिए । एण्टीबायटिक औषधियाँ जिस तरह शरीर में पहुँच कर वहाँ के विषाणुओं को चारों ओर से घेर कर रसद मार्ग काट कर उन्हें आत्मघात को विवश करती हैं । उसी तरह आत्म सुधार के लिए हमें प्रलोभनों को मार भागने का, बुराइयों से लड़ने का माद्दा अपने अन्दर से ही पैदा करना चाहिए । यदि ऐसा कर लें वह हमारी उसी तरह हानि नहीं कर सकतीं जिस तरह हॉस्पिटलों में टी. बी., कैन्सर आदि के मरीज भरे पड़े रहते हैं । स्वाभाविक है कि वहाँ विषाणुओं का सरोवर लहरा रहा हो किन्तु, उसी वातावरण में डॉक्टर लोग दिन-दिन भर काम करते रहते हैं । फिर भी उनका रत्ती भर भी अहित नहीं हो पाता ।

दैवी अंश प्रबल हों तो वह शसक्त जीवाणुओं की तरह शरीर की ढाल का कार्य करते हैं । उससे असुरता हावी नहीं होने पाती, आत्म सुधार की सबसे अच्छी प्रक्रिया यह है कि हम निरन्तर रचनात्मक विचारों को मस्तिष्क में विकसाएँ, रचनात्मक कार्य करते रहें, उससे बुराइयाँ अपने आप ही झाँक कर लौट जाती हैं । जिस घर में पहले ही समर्थ लोग रहते हों वहाँ चोर उचक्के झाँक कर ही लौट जाते हैं ।

लेकिन यदि सीलन, सड़न, गलन अपने भीतर ही हो तो कमजोर भले मानस को भी शसक्त बदमाशों द्वारा सताये जाने की तरह बुराइयों को पनपने का भीतर ही आधार मिल जायेगा । बाहर के विषाणु शरीर में आयें पर शरीर सशक्त हो, पाचन यन्त्र ठीक काम करते हों, रुधिर में श्वेताणुओं की कमी न हो तो विषाणु रत्ती भर असर नहीं डाल पायेंगे । उल्टे नष्ट हो जायेंगे पर भीतर विजातीय द्रव्य भरा हो, आदमी में आकर्षणों की सड़न भीतर-भीतर बुश रही हो तब तो वे अपनी शक्ति भीतर ही बढ़ाकर हमारे विनाश का कारण बन जायेंगे । यही नहीं विजातीय द्रव्य के बाद वे शरीर की कोशाओं को भी खाने लगेंगे, तब फिर जीवन का अन्त होगा ही ।

प्रकाश में विषाणुओं को मार देने की शक्ति है । हमारे जीवन में प्रकाश तत्व बना रहे—विवेक बना रहे तो न केवल भलाई की शक्ति देवत्व का विकास और उसके फलितार्थों से लाभान्वित होते रह सकते हैं । आसुरी तत्व वे चाहे कितने ही अदृश्य और शक्तिशाली क्यों न हों, जानकारी में आते रहें और उन्हें नष्ट करने, मारकर भगा देने का साहस हमारे जीवन में बना रहना चाहिए ।

परिस्थितियाँ भौतिक, कारण आत्मिक

बुद्धि की प्रखरता के साथ एक कमजोरी यह जुड़ी है कि वह तर्क एवं प्रत्यक्षवाद के आधार पर ही सब कुछ जानने एवं घटनाओं के कारणों को ढूँढ़ने का प्रयत्न करती है । घटनाओं के कारणों की खोज में भौतिक अवयवों की खोज करती रहती है । अपने इस प्रयत्न में वह जैसे-जैसे आगे बढ़ती है, जंजीर में गुथी कड़ियों के समान अनेकों कारणों की शृंखला दिखायी पड़ती है । जो परस्पर एक दूसरे से जुड़ी हैं । आगे बढ़ने तथा अधिक गहराई में प्रविष्ट करने पर उन कारणों की संख्या ही नहीं, स्वरूप भी परिवर्तित होने लगता है । दूसरे शब्दों में, कारणों की संख्या बढ़ जाती है तथा सूक्ष्म में परिवर्तित हो जाती है । यह समस्या भौतिक न रहकर अभौतिक हो जाती है । एक सीमा पर जाकर भौतिक कारण स्पष्टीकरण देने में असमर्थ हो जाते हैं । कारणों की इस शृंखला में उथले ढंग से सोचने एवं ढूँढ़ने वालों की पकड़ में जो बात आती है उसी को वे सर्वस्व समझते तथा घटना का मूलभूत कारण मान लेते हैं । इस दुराग्रहपूर्ण एकांगी मान्यता के कारण ही वे सत्य तक पहुँच पाने में असमर्थ रहते हैं ।

उदाहरणार्थ बन्दूक की गोली चली । एक व्यक्ति गोली लगने से तत्काल मर गया । कारणों की खोज आरम्भ करें तो अनेकों कारण उभर कर सामने आयेंगे । इनमें किसी एक को उक्त घटना का अकेला कारण नहीं माना जा सकता । मरे हुए व्यक्ति से गोली चलाने वाले का वैमनस्य एक कारण हो सकता है; किन्तु यह भी सत्य है कि बन्दूक चालक के पास यदि बन्दूक न होती तो गोली न चलती । वह व्यक्ति नहीं मारा जाता । स्पष्ट है कि उसकी मृत्यु में बन्दूक का तथा गोली का होना एक कारण है । आगे बढ़ने तथा खोज जारी रखने पर पता चलता है कि बन्दूक का निर्माण करने वाली फैक्ट्री भी मृत्यु का एक कारण है । फैक्ट्री को भी दोष नहीं दिया जा सकता । वह तो जड़ है । प्रत्यक्ष दोष तो फैक्टरी निर्माता पर जाता है; किन्तु उसके ऊपर भी दोष मढ़कर सन्तोष नहीं किया जा सकता । निर्माण में लगे मजदूर एवं आविष्कारक इंजीनियर भी अछूते नहीं बचते । अन्ततः बात बुद्धि पर जाकर अटक जाती है । जिसकी प्रखरता ने विध्वंसात्मक शोधों को बढ़ावा दिया । प्रश्न यहाँ ही समाप्त नहीं हो जाता वरन् नये तथ्यों को साथ लेकर पुनः खड़ा हो उठता है और समाधान की अपेक्षा करता है । बुद्धि ने ध्वंश का मार्ग क्यों अपनाया ? अध्ययन करने पर स्पष्ट होता है कि कारणों की खोज में प्रश्न का स्वरूप भी परिवर्तित हो गया । समस्या भौतिक न रहकर अभौतिक हो गई । स्पष्ट है कि स्थूल विश्लेषणों एवं भौतिक उपादानों में आधारभूत कारण नहीं ढूँढ़ा जा सकता । प्रश्न भौतिक से निकल कर अभौतिक, आध्यात्मिक बन गया । इस कारण समाधान के लिए आध्यात्मिक क्षेत्र में ही प्रवेश करना होगा । अनेकों कारणों की शृंखला जो भौतिक अन्वेषण के रूप में सामने आयी थी; वे सभी लुप्त हो जाते हैं तथा मात्र एक ही आध्यात्मिक कारण अवशेष बचता है वह है नैतिक बुद्धि का अभाव ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मानसिक भ्रमों का कारण यह है कि जिन घटनाओं को अपने जीवन में जैसा देखते एवं ग्रहण करते हैं उन्हें वैसा ही मान लेते हैं । समीपवर्ती मान्यताओं के आधार पर तो यह एक सीमा तक ठीक हो सकता है; किन्तु दूरवर्ती सम्पूर्ण सृष्टि की दृष्टि से देखा जाय तो स्पष्ट होगा कि मान्यताएँ कितनी अपूर्ण एवं भ्रमयुक्त थीं । यह बात केवल इन्द्रिय भ्रमों के बारें में ही नहीं वरन् समस्त निरीक्षणों के सम्बन्ध में देखी जाती है । वस्तुतः निरीक्षण वातावरण एवं निर्देश व्यवस्था के सापेक्ष होते हैं । सापेक्ष मान्यताओं के आधार पर जो तथ्य उभर कर आते हैं उनको बदल देने पर नये अनेकों कारण निकलकर सामने आ जाते हैं ।

उदाहरण के लिए रेजरब्लैड को लें । अपनी निर्देशन व्यवस्था में रेजर की धारा निरन्तर सीधी दिखायी पड़ती है—सूक्ष्मदर्शक में देखने पर वही धार टूटी-फूटी ठोस दिखाई पड़ती है । इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोप से वह बहुत बड़ा यन्त्र दिखाई पड़ता है । रसायनशास्त्री धार में लोहे और कार्बन के पतले टुकड़े देखते हैं । भौतिकशास्त्री अपनी पदार्थवादी व्याख्या करता है । विभिन्न प्रकार धन एवं ऋण आवेश युक्त कणों का समुच्चय मानता है । हजारों मील प्रति घण्टा के रूप में तीव्र वेग से दौड़ने वाले विभिन्न प्रकार के कणों से विनिर्मित पदार्थ के रूप देखता है । रेजर की तेज धार के कर्णों की खोज में रसायनशास्त्री भौतिक शास्त्री के पास पहुँच जाय तो उनका उत्तर अलग-अलग अपनी मान्यताओं के अनुरूप होगा । इन्जीनियर उसे इन्जीरियरिंग का कलाकौशल एवं निर्माण करने वाली मशीनों की कुशलता को बतायेगा । इस प्रकार अनेकों भौतिक कारण उभर कर सामने आते हैं इनमें किसी को पूर्ण नहीं कहा जा सकता है । न ही किसी को गलत सिद्ध किया जा सकता है । ढूँढ़ने पर इन सभी कारणों में एक ही अभौतिक कारण का पता चलता है । वह है—बुद्धि की रचनात्मक प्रवृत्ति । जिसके कारण अनेकों सरंजाम जुड़ने से ब्लैड का निर्माण सम्भव हो सका ।

इन विश्लेषणों से एक महत्त्वपूर्ण बात हाथ लगती है, किसी भी घटना के कारणों की खोज में जैसे-जैसे आगे बढ़ते हैं । भौतिक जगत की सीमाएँ समाप्त हो जाती हैं, उनके स्थान पर आध्यात्मिक कारण दृष्टिगोचर होने लगते हैं जो सही समाधान के कारण होते हैं । इतनी गहराई तक प्रवेश न करने एवं स्थूल अन्वेषणों में उलझे रहने के कारण ही वास्तविकता से दूर हटते चले जाते हैं, जो भौतिक कारण हाथ लगते हैं, उन्हीं को पूर्ण मान लेने का दुराग्रह करते हैं । फलस्वरूप सत्य तक पहुँच सकना सम्भव नहीं हो पाता ।

बुद्धि के तार्किक स्थूल परिणामों के आधार पर वस्तुओं, घटनाओं के स्वरूप एवं उनके कारणों को आदर्श स्वरूप दे देना, मस्तिष्क की कमजोरी है । जिनकी मान्यताएँ स्थूल पर टिकी हैं, उनमें अधिकतर यह कमजोरी देखी जाती है । मानव विचार की प्रक्रिया प्रायः दृश्य के निरीक्षण एवं सामान्य बुद्धि पर आधारित है । इस कारण बुद्धि पर पूर्ण विश्वास नहीं किया जा सकता । न ही उसके सहारे यथार्थ तक पहुँच सकना सम्भव है ।

संसार की घटनाओं एवं प्रकृति को जानने के लिए प्रायः ज्ञानेन्द्रियों एवं तर्क शक्ति का प्रयोग किया जाता है । जिन भौतिक कारणों का पता लगता है, वे प्रायः घटनाओं के मूलभूत कारण को बता पाने में असमर्थ होते हैं । यह सम्भव भी नहीं है । घटनाओं एवं प्रकृति के मूल कारण अभौतिक हैं । उन्हें जानने एवं अनुभव करने से ही वास्तविक समाधान हो सकता है । इसके लिए आध्यात्मिक क्षेत्र में प्रविष्ट कर चेतन विज्ञान का ही अवलम्बन लेना होगा । सबका कारण वह परम सत्ता है, उसे जानने से ही प्रकृति के रहस्यों को समझ सकना सम्भव है ।

अपनी सामर्थ्य पहचानें : सुदृढ़ बनें

अभावग्रस्तता, असमर्थता, अन्तर्बोध के अभाव के कारण अनुभव होती है । कीमती वस्तुएँ तिजोरी में रखी जाती हैं । प्रकृति प्रदत्त बहुमूल्य रत्न भी भू-गर्भ में छिपे रहते हैं । जिन्हें पुरुषार्थी शूरवीर ही प्राप्त कर पाते हैं । दुर्लभ कीमती मोती समुद्र की अथाह गहराई में पड़े रहते हैं, जिन्हें दुस्साहसी गोताखोर जान हथेली पर रखकर प्राप्त करते हैं । इन भौतिक उपलब्धियों को प्राप्त करने का सुअवसर कर किसी के लिए सुलभ है, किन्तु आत्म-विश्वासी, साहसी ही उनका लाभ उठा पाने में सफल होते हैं । प्रकृति प्रदत्त बहुमूल्य अनुदानों की भाँति परमात्मा ने प्रत्येक मनुष्य को अन्तःविभूतियों से सुसम्पन्न करके भेजा है । अन्तरतम केन्द्र आत्मा में एक से बढ़कर एक विशेषताएँ विद्यमान हैं, किन्तु अपने आपे से अनजान होने के कारण उसमें सन्निहित विशेषताओं का मनुष्य लाभ नहीं उठा पाता और उसकी स्थिति वही होती है जो गले में बँधे हीरे से अपरिचित भीख माँगने वाले बालक की हुई थी ।

अपने को असहाय, असमर्थ, अयोग्य, अभावग्रस्त महसूस करने एवं दूसरों से सहयोग, सहकार, अनुदान, वरदान की याचना करने और आगे बढ़ने ऊँचे उठने की बात सोचते रहने वालों के साथ एक ही मानसिक तत्व काम करता है कि उन्हें अपनी शक्तियों-विशेषताओं का भान नहीं होता । अपने को वे क्षुद्र हेय मानते रहते हैं और यह सोचते हैं कि वे अमुक कार्य के लिए अयोग्य हैं । सन्त इमर्सन कहा करते थे कि मनुष्य जैसा भी दिखायी पड़ता है अपने प्रति बनाई गई मान्यता का प्रतिफल मात्र है । मनोवैज्ञानिक क्षेत्र में भी इस तथ्य की पुष्टि हो चली है, कि व्यक्तित्व को गढ़ने में मनुष्य की अपने प्रति बनायी गई मान्यताओं का बहुत बड़ा योगदान है ।

तत्वदर्शी ऋषि इस सूक्ष्म रहस्य से पूर्णरूपेण परिचित थे । वे आरम्भ से ही यह उद्घोष करते आये हैं कि जीव अपना स्वरूप बना सकने में पूर्णतः सक्षम, विभूति सम्पन्न

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है । जिन वैचारिक रहस्यों पर मनोवैज्ञानिक आज शोध कर रहे हैं, उनके मनोवैज्ञानिक प्रभावों से ऋषि बहुत समय पूर्व से ही परिचित थे । विडम्बना तो यह है कि प्रत्यक्षवाद की दुहाई देने तथा मनुष्य को सर्वोपरि घोषित करने वाले भौतिकवादी जब यह कहते हैं, कि मनुष्य जीवन और कुछ नहीं जड़ अणुओं का संयोग मात्र है । जिनके बिखरते ही जीवन का अस्तित्व भी समाप्त हो जाता है तो भारी निराशा होती है । मनुष्य भी जड़ तत्वों का संयोग मात्र है प्रचलित मान्यता यह होगी, तो भला चैतन्य विशेषताओं, आत्म विभूतियों का लाभ उठा सकना किस प्रकार सम्भव हो सकेगा ? अपना आपा कितना समृद्ध—कितना सामर्थ्यवान है, यह तथ्य रहस्य के गर्त में ही पड़ा रहेगा और उन विशेषताओं से लाभ उठा सकना भी सम्भव न हो सकेगा ।

समर्थता भौतिक शक्ति को ही नहीं कहते, वरन् उन विशेषताओं को भी कहते हैं, जिनके सहारे मनुष्य अपने को अधिकाधिक सन्तुष्ट पाता हो । हमारी अन्तरात्मा शुद्ध, बुद्ध, शान्त, पूर्ण, एवं प्रचण्ड शक्ति से ओत-प्रोत है । यह विश्वास स्वयं में से सर्वोपरि शक्ति है तथा हर प्रकार की परिस्थितियों में मनुष्य को बल प्रदान करती है । इसके विपरीत जड़वादी मान्यताएँ मनुष्य को सदा अतृप्त, अशान्त ही बनाये रखती हैं । भले ही उसके पास कितनी भी भौतिक शक्ति क्यों न एकत्रित हो गई हो । साधन एवं शक्ति का संचय सुख-शान्ति की प्राप्ति के लिए किया जाता है । समस्त विश्व में इसी के निमित्त विभिन्न प्रकार की मानवी चेष्टाएँ चल रही हैं, किन्तु वह स्थिति भी किसी से नहीं छिपी है कि जितने अधिक शक्ति साधन जुटते जा रहे हैं, मनुष्य शान्ति एवं सन्तोष की उपलब्धियों से उतना ही दूर हटता जा रहा है । अतृप्ति, असन्तोष एवं अशान्ति की स्थिति उतनी ही अधिक बढ़ती जा रही है ।

यह आत्म विस्मृति का ही परिचायक है जिसके रहते मनुष्य आत्म विभूतियों से सदा अपरिचित ही बना रहता है । यह जड़वादी दृष्टिकोण की ही परिणति है कि वह जड़ तत्वों में, साधन सुविधाओं में विषयों के सेवन में तृप्ति, संतुष्टि एवं शान्ति की खोज करता है । जीवन के प्रति इस भौतिकवादी दृष्टिकोण को बदलना होगा तथा ऋषियों के उसी उदात्त उद्घोष को दुहराना होगा जिसमें वे कहा करते थे—'सोऽहम्', 'सच्चिदानन्दोहम्' 'अहं ब्रह्मास्मि' । हमारे भीतर ब्राह्मी शक्ति का, चेतना का सागर लहलहा रहा है । "बाह्य परिस्थितियों के निर्माता हम स्वयं हैं ।"

विस्मृति को हटाने एवं आत्म शक्ति से परिचित होने के लिए आत्म विश्वास के साथ दूसरा चरण उठाने की आवश्यकता होगी साधना पुरुषार्थ करने की । समुद्र में से मोती निकालने में सफल दुस्साहसी गोताखोर होते हैं, जबकि समुद्र के अन्तराल में मोती होने के तथ्य से सुपरिचित होते हुए भी साहस एवं पुरुषार्थ के अभाव में गहराई में मोती के लिए गोता लगाते नहीं बनता । अपने आपे का स्वरूप जानने एवं उसमें सन्निहित शक्तियों को प्राप्त करने के लिए जो साधना पुरुषार्थ का अवलम्बन लेकर दृढ़ता से आगे बढ़ने के लिए कटिबद्ध होते हैं, वे क्रमशः एक से बढ़कर एक विभूतियों को करतलगत करते जाते हैं । वे यह अनुभव करते हैं, कि उस दयालु परम पिता परमात्मा ने एक से बढ़कर एक विभूतियों से सुसम्पन्न करके जीवात्मा को भेजा है । यह मनुष्य के ऊपर निर्भर करता है कि विस्मृति की चादर ओढ़कर असहाय असमर्थ स्थिति में जीवन व्यतीत करे अथवा आत्म गठरी को खोलने का पुरुषार्थ करके उसमें छिपी आत्मिक विभूतियों का लाभ उठाये । विस्मृति से आत्म जागृति की दिशा में अग्रगमन करते ही मनुष्य की दरिद्रता, असमर्थता के दूर होते एवं समर्थ सम्पन्न बनते देरी नहीं लगती ।

अध्यात्म दर्शन का अवलम्बन मनुष्य को सदैव यही प्रेरणा देता आया है कि वह अपने अन्दर झाँके, अपनी सम्पदाओं के भाण्डागार को टटोले, याचना न कर अपने ही पुरुषार्थ से प्रगति के पथ पर चलता रहे । महापुरुषों ने भी सदैव यही मार्ग अपनाया है व स्वयं को और सारी मानवता को कृतार्थ किया है । सामर्थ्य को पहचानते ही हनुमान जब समुद्र पार करने के समान दुस्साहस कर सकते हैं, अर्जुन अपने अभिन्न सखा का परामर्श मानकर मोह की विडम्बना से मुक्त हो अजेय, अमर बन सकते हैं, तो मनुष्य अपने व्यावहारिक जीवन में दीख पड़ने वाली समस्याओं को क्यों नहीं सुलझा सकता ? वह भी उठते-उठते उसी स्तर पर पहुँच सकता है, जहाँ देवदूत, ऋषि महामानव पहुँचकर इस वसुधा को गौरवान्वित करते रहे हैं ।

पृथकता के अन्तराल में एकत्व का सत्य

सृष्टि की ओर सूक्ष्म दृष्टि से देखने पर वह एक इकाई के रूप में प्रतीत होती है । विभेद तो स्थूल जगत तक सीमित है । सूक्ष्म में पहुँचने पर एकता का ही दिग्दर्शन होता है । इस तथ्य को संसार के सभी प्रमुख दर्शन एकमत से स्वीकार करते हैं । एकता के सूत्र में गुँथी प्रकृति में विभिन्नता उसके अवयवों में दिखाई पड़ती है । किन्तु मूलतः वे सभी एकत्व के सूत्र में बँधे हुए हैं ।

शरीर के सभी अंग एक समान नहीं होते । हाथ, पैर, नेत्र, नासिका तथा अन्य शरीर के अंगों में मात्र रचना, आकार-प्रकार की ही भिन्नता नहीं होती वरन् उनके कार्यों में भी भिन्नता स्पष्ट दिखाई पड़ती है । एक अंग का जो कार्य है, दूसरे का उससे सर्वथा भिन्न है । अंगों की रचना एवं उनके कार्य में भिन्नता होते हुए भी लक्ष्य की एकता स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है । वह है शरीर को स्वस्थ एवं सन्तुलित बनाये रखना । शरीर के सर्वांगीण विकास के लिए यह व्यवस्था आवश्यक है । इस विषमता को देखकर विभिन्न अंगों की स्वतन्त्र सत्ता एवं परस्पर एक-दूसरे से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भिन्न होने की मान्यता बना ली जाय, तो यह भारी भूल होगी । सहयोग-सहकार का यह सिद्धान्त ही सृष्टि को सन्तुलित बनाये हुए है । प्रकृति के विभिन्न अंगों में अन्तर उनकी रचना एवं कार्य-पद्धति का हो सकता है लक्ष्य का नहीं । सूर्य, चन्द्रमा, पृथ्वी, ग्रह-नक्षत्र, नदी, पहाड़ सभी मिल-जुलकर सृष्टि-चक्र को सन्तुलित तथा उसके प्रवाह को सुव्यवस्थित बनाये रखने में महत्त्वपूर्ण भूमिका सम्पादित करते हैं देखा जाय तो न उनकी रचना में एकरूपता होती है और न ही कार्यों में । किन्तु इस भिन्नता में भी एक तथ्य अनिवार्य रूप से जुड़ा है, वह है—सम्पूर्ण सृष्टि को सन्तुलित रखना । प्रकृति द्वारा सौंपे गए दायित्व का निर्वाह उसके विभिन्न अंग-प्रत्यंग भली भाँति करते देखे जाते हैं ।

असन्तुलन की स्थिति तब उत्पन्न होती है जब एकांगी वर्चस्व सिद्ध करने की ललक उठती है, कई बार क्षुद्र ग्रह-नक्षत्र संकीर्णता की भावना से प्रेरित होकर दूसरों से असहयोग और अपना स्वतन्त्र स्थान बनाते एवं पृथक मार्ग अपनाते हैं । इस क्षुद्रता का कुछ लाभ तो मिलता नहीं, उल्टे टकराकर चकनाचूर हो जाते हैं । विराट् सृष्टि का सन्तुलित प्रवाह सहयोग के ही सिद्धान्त पर चल रहा है । जड़ प्रकृति ही नहीं समस्त चेतन प्राणी भी एकता के सूत्र में आबद्ध हैं । विश्व का प्राणि मात्र का आश्रय एवं प्रकाश एक चेतन सत्ता है । जड़ प्रकृति में उसका प्रवाह ही सौन्दर्य उत्पन्न करता तथा समर्थता प्रदान करता है । चेतन जगत उसी से प्रकाशित है । मानव मात्र में उसी की सत्ता विद्यमान है । शरीर के कलेवर की भिन्नता में भी सब में मूल सत्ता की एकता है । मनुष्य-मनुष्य के बीच उनके स्वभाव एवं क्रियाकलाप की दृष्टि से भिन्नता दिखायी पड़ती है ।

व्यक्तिगत एवं सामूहिक विकास की दृष्टि से इस भिन्नता का होना आवश्यक है, किन्तु इसको ही सत्य मानकर जब मनुष्य सबमें विद्यमान चेतन सत्ता के तथ्य को भुला बैठता है तो ऐसी स्थिति में ही संघर्ष उत्पन्न होता है । विषमता की दीवार संकीर्णता उत्पन्न करती हैं । अपने पराये की भेद दृष्टि पनपती है । फलस्वरूप 'एकत्व' दर्शन कर पाना सम्भव नहीं हो पाता ।

मनुष्य-मनुष्य के बीच, वर्ग-वर्ग के बीच, राष्ट्र-राष्ट्र के बीच भिन्नता देखी जा सकती है । उनके क्रियाकलाप में अन्तर दिखाई पड़ सकता है, किन्तु उपयोगिता की दृष्टि से यह भिन्नता आवश्यक है । समाज में रहने वाले व्यक्तियों के कार्य एकसमान नहीं होते । किसान अन्न पैदा करता है । जुलाहा कपड़ा बुनता है । कारीगर मकान बनाता है । मजदूर दैनिक जीवन की वस्तुओं का उत्पादन कारखाने में करता है। अध्यापक बच्चों को पढ़ाता है । कर्मचारी शासन व्यवस्था का दायित्व सम्भालते हैं । व्यक्ति-व्यक्ति के कार्यों में यह भिन्नता ही सामाजिक विकास का कारण बनती है । एक के कार्य दूसरे के लिए उपयोगी होते हैं । एकता के सूत्र में आबद्ध रहने के लिए कार्यों में विषमता का होना आवश्यक है । हर व्यक्ति यदि अन्न उत्पादन करने लगे तो अन्यान्य आवश्यकताओं की पूर्ति न हो सकेगी । व्यवस्था-अव्यवस्था के रूप में परिवर्तित हो जायेगी । सामाजिक विकास अवरुद्ध हो जायेगा ।

एकत्व के सूत्र में जड़-चेतन सभी आबद्ध हैं । इस तथ्य को हृदयंगम करते हुए प्रत्येक मनुष्य को सहकारिता की आदान-प्रदान की रीति-नीति को अपनाना चाहिए । बाह्य भिन्नता में भी एकता की अनुभूति कर सकना तथा उससे मिलने वाले दिव्य आनन्द का लाभ उठा पाना तभी सम्भव है ।

आत्मा और परमात्मा का योग परम पुरुषार्थ

परब्रह्म अत्यन्त विशाल है । ब्रह्माण्डव्यापी अनेकानेक व्यवस्थाओं और शक्तियों का वह सूत्र संचालक है । इतना बड़ा उत्तरदायित्व उसे एक सुनियोजित-सुव्यवस्थित योजना के अन्तर्गत सम्पन्न करना पड़ता है । सामान्य व्यक्तियों या छोटे राजा, सामन्तों की तरह उसके लिए हर व्यक्ति के हर काम में तथा प्रकृति के अगणित विधि व्यवस्थाओं में दखल देना सम्भव नहीं । उसका व्यवस्था क्रम ही सर्व साधारण के लिए उपास्य है । उसके अनुशासन में रहा जाय तो अन्य प्राणियों की तरह मनुष्य भी अपनी परिधि में सुखी, सन्तुष्ट रहकर जीवन सम्पदा का आनन्द लेता रह सकता है । समस्याएँ और विपत्तियाँ तो उच्छृंखलता पर उतरने के कारण ही उत्पन्न होती हैं । उसकी व्यवस्था का, दिशाधारा का ध्यान रखना ही ईश्वर स्मरण का वास्तविक उद्देश्य है । उद्देश्य पूर्ण प्रभु स्मरण की ही सार्थकता, प्रशंसा और श्रेयस्कर परिणति भी होती है ।

प्रभु स्मरण को ब्रह्मविद्या व तत्व दर्शन कहते हैं । स्वाध्याय सत्संग, चिन्तन मनन के आधार पर इस दिशा में अनुगमन सम्भव होता है । ईश्वर भक्ति का दूसरा-अगला क्षेत्र है—उपासना । जिसका अर्थ होता है इष्ट की निकटता । उसके साथ अधिकाधिक घनिष्ठ होना । यहाँ तक कि विलय विसर्जन की प्रक्रिया सम्पन्न करते हुए तादात्म्य बनाना-एकाकार होना-अद्वैत स्तर तक पहुँचना । निराकार सर्वव्यापी सत्ता के साथ यह प्रक्रिया उस तरह सम्पन्न नहीं हो सकती, जैसी कि मनुष्य-मनुष्यों के बीच मैत्री होने पर दृष्टिगोचर होती है । मनुष्यों की मैत्री एक-दूसरे के साथ विनोद मनोरंजन करने, मन की बातें कहने तथा उपहारों का आदान-प्रदान करने के रूप में प्रकट होती देखी जाती है, पर चूँकि परमात्मा सर्वव्यापी होने के कारण निराकार है । ध्यान धारणा की सुविधा के लिए उनकी प्रतिमाएँ कल्पित करके काम चलाना एक उपयोगी मनोवैज्ञानिक प्रयोग है । पर उसे तथ्य की संज्ञा नहीं दी जा सकती । उसे व्यक्ति मानकर चलना और उसी प्रकार का मनुहार उपक्रम चलाना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

एक भावनात्मक व्यायाम अभ्यास अध्यवसाय तो है, पर तथ्यों का पर्यवेक्षण करना हो तो पूजा के लिए उपचार विनिर्मित किए गए इस मनुष्यकृत निर्धारण से एक कदम और आगे बढ़ना होगा । एक मीटर और ऊँचा उठना पड़ेगा । यथार्थतावादी नया दृष्टिकोण अपनाना होगा, जिसका अर्थ होता है, उस महातत्व को आत्मसात करना, जिसे परमात्मा कहते हैं ।

परम के दो अर्थ हैं—एक व्यापक दूसरा उत्कृष्ट । परमात्मा की व्यापकता जितनी मनुष्य के समझने और विचार करने योग्य है, उसे समष्टि कहते हैं अर्थात् प्राणिजगत विशेषतया मानव समाज । यही विराट् है । अर्जुन ने, यशोदा ने, कौशिल्या ने, काकभुशुण्डि ने इसी का ज्ञानचक्षुओं से दर्शन किया था । वेदान्त इसी को "सर्वखिल्विदं ब्रह्म" कहता है और भक्त उसी का वर्णन "सिया राम मय सब जग जानी" के रूप में करता है । इन सबका सार तत्व इतना ही है, कि व्यक्ति समाज के प्रति अपने को समर्पित करे । लोक सेवी बनकर रहे । संकीर्ण स्वार्थपरता को सामूहिक प्रगति के लिए उत्सर्ग कर दे । 'स्व' का 'पर' के साथ एकात्म भाव विकसित करे । साधु-ब्राह्मण, वानप्रस्थ आदि अध्यात्म परायण-ईश्वर भक्त-वर्गों को अपनी क्षमताएँ लोक-मंगल के लिए नियोजित करनी पड़ती हैं यही है—व्यापक 'परम' की उपासना की क्रिया पद्धति के पीछे झाँकता हुआ तत्व दर्शन ।

'परम' का दूसरा अर्थ है उत्कृष्ट, ऊँचा, महान् । इसका अर्थ हुआ भावना और क्रिया क्षेत्र में जो कुछ श्रेष्ठ है उसका चयन, वरण । भगवान विश्व के कण-कण में संव्याप्त हैं । इस दृष्टि से उन्हें भली और बुरी सभी विधि-व्यवस्थाओं में सम्मिलित समझा जा सकता है । इस स्तर का भगवान मनुष्य का उपास्य, इष्ट, आराध्य नहीं हो सकता । वैसा करने पर तो भलाई की तरह बुराई अपनाने को भी ईश्वर के साथ आत्मसात कहा जाने लगेगा । समझा जाना चाहिए कि ईश्वर का वही पक्ष अपनाने योग्य है जिसे परम श्रेष्ठ कहते हैं । इसका अर्थ हुआ सद्भावनाएँ, सद्विचारणाएँ, सद्प्रवृत्तियाँ अपनाना । आदर्शों का आचरण-मर्यादाओं का परिपालन ।

संक्षेप में, भगवान को 'सत्प्रवृत्तियों का समुदाय' भी कह सकते हैं । उपासना इसीकी की जाती है । व्यक्तिगत जीवन में—दृष्टिकोण, रुझान एवं कृत्य में जो जितनी सत्प्रवृत्तियों का समावेश करता है, वह उसी अनुपात का उसी स्तर का, भगवद् भक्त कहा जायेगा । इसी का दूसरा पक्ष है—समाज में सत्प्रवृत्तियों का संवर्धन । जो इस प्रयास में जितनी तत्परता के साथ लगा है उसे भी ईश्वर परायण माना जायेगा । सत्प्रवृत्ति संवर्धन का ही दूसरा पक्ष है—दुष्प्रवृत्ति उन्मूलन । प्रकाश प्रज्ज्वलन को अन्धकार का उच्छेदन भी कह सकते हैं । समृद्धि संवर्धन अर्थात् दरिद्रता को निरस्त करना । सद्ज्ञान अर्थात् अज्ञान का निवारण ।

समाजगत सत्प्रवृत्तियों का संवर्धन और दुष्प्रवृत्ति का उन्मूलन भी वस्तुतः परमात्मा की, विश्वात्मा की, विराट् की आराधना ही है । उसका उज्ज्वल पक्ष ही ग्राह्य है । इसीलिए परब्रह्म की अचिन्त्य, अगोचर, अनुज्ञेय, अनिर्वचनीय, अबुद्धिगम्य इन्द्रियातीत आदि शब्दों से व्याख्या विवेचना की जाती है । उसकी आराधना विश्व-व्यवस्था के अन्तर्गत मनुष्य के अपनी मर्यादाओं में रहने भर से हो जाती है । यदि उस महान् के साथ अपने क्षुद्र की घनिष्ठता अभीष्ट है और तद्रूप बनने के रूप में चरम प्रगति तक पहुँचने की अन्तः प्रेरणा उमंगें तो फिर पूजा उपचार के मनौवैज्ञानिक प्रयोगों से आगे बढ़कर यर्थाथतावादी सही निर्धारण अपनाना होता है । समष्टि सेवा को लक्ष्य बनाया जाय और अन्तः क्षेत्र में तथा लोक विस्तार में सत्प्रवृत्तियों का अधिकाधिक संवर्धन किया जाय ।

ईश्वर प्राप्ति को परम पुरुषार्थ कहा गया है । महान् के साथ तुच्छ की घनिष्ठता स्थापित करने पर लाभ अधिक है । इस प्रक्रिया के आधार पर नगण्य को भी महान् बनने का अवसर मिलता है । नाला नदी में मिलकर नदी बनता है । बूँद का विसर्जन उसे सरोवर बना देता है । उपेक्षणीय ईंधन देखते-देखते प्रचण्ड अग्नि का रूप धारण करता है । पाणिग्रहण के उपरान्त पत्नी तत्काल अपने पति की समस्त सम्पदा पर सहज अधिकार प्राप्त कर लेती है । पेड़ से लिपटकर दुबली कमर वाली बेल उतनी ही ऊँची उठ जाती है । वादक के होठों से सटने पर पोले बाँस की नली को मनमोहक वंशी के रूप में श्रेय सम्मान मिलता है । कठपुतली का नाच वस्तुतः उन लकड़ी के टुकड़ों का कलाकार की उँगलियों के साथ बँध जाने के अतिरिक्त और कुछ नहीं है । ऊँचे तालाब और नीचे तालाब के बीच एक सम्बन्ध नाली बना दी जाय तो दोनों की सतह एक हो जाने तक ऊँचे का प्रवाह नीचे की ओर बहता रहेगा । जनरेटर के साथ सम्बन्ध सूत्र जुड़ते ही बल्ब, पंखे आदि उपकरण तत्काल गतिशील होते हैं । यही सब उदाहरण हैं, जो बताते हैं कि परमात्म सत्ता के साथ घनिष्ठता स्थापित करने वाले भगवत भक्त क्यों कर देवात्मा माने गए ? किस कारण अपना और समस्त संसार का कल्याण कर सकने में समर्थ हुए हैं । महामानवों, परमार्थ परायणों, ऋषियों, युग प्रवर्तक अवतारियों की अगणित कथा गाथाएँ इसी तथ्य की यथार्थता सिद्ध करने में प्रामाणिक साक्षी की भूमिका निभाती हैं । प्रगति का उच्चतम सम्बन्ध भी यही है कि आत्मा-परमात्मा स्तर तक जा पहुँचे और सर्वोत्कृष्ट शिखर पर अवस्थित होकर दूसरों के और अपने बीच का आकाश-पाताल जैसा अन्तर देखे ।

तत्व ज्ञान का—कर्म योग, ज्ञान योग का इतना ही सार संक्षेप है, कि मनुष्य प्रगति पथ पर द्रुतगति से अग्रसर होने के इस ईश्वर प्रदत्त अनुदान का पूरा लाभ उठाये, पशु प्रवृत्तियों में भटकते रहकर-पिछड़ेपन का परिचय न दे ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रगति यदि सचमुच ही अभीष्ट है तो उसे वैभव में न तलाश करके वर्चस् में खोजे । दिव्य-सम्पदाओं के भण्डागार को अन्तर्मुखी होकर कुरेदे । जिसे यह दिशा-धारा उपयुक्त जँचे, उसके लिए एक ही उपाय का अवलम्बन करना होता है—महान् के साथ क्षुद्र को जोड़ देना । कामना का भावना में, संकीर्णता का व्यापकता में, नर का नारायण में विलय विसर्जन उसी परम पुरुषार्थ का सुनिश्चित स्वरूप है जिसे ईश्वर प्राप्ति कहते हैं । जिसे प्राप्त कर लेने के उपरान्त और कुछ पाना शेष नहीं रहता, ऐसा मानते हैं ।

इसके लिए करना क्या होता है ? इसका सार संक्षेप समझना हो तो ईश्वर प्राप्ति के योगाभ्यास की एक ही प्रक्रिया सामने आती है—'सत्प्रवृत्ति-संवर्धन' । इसे व्यक्तिगत जीवन में गुण, कर्म, स्वभाव में आदर्शों का समावेश कह सकते हैं । दृष्टिकोण को स्वकेन्द्रित न रहने देकर समष्टिगत बनाने का परिशोधन-परिष्कार भी यही है । इसी प्रगति क्रम को जब परिवार क्षेत्र में प्रयुक्त किया जाता है तो उस परिवार के प्रत्येक सदस्य को, स्वावलम्बी, सद्गुणी सुसंस्कारी बनाने की बात सूझती है । तब परिजनों के लिए सुविधा-संवर्धन से भी अधिक महत्त्वपूर्ण यह लगता है—उनके लिए कितनी सुविधा, कितनी सम्पदा जुटायी जाय, किस कीमत पर उनकी प्रसन्नता अर्जित की जाय, इस बाल-बुद्धि का समय जब टल जाता है और प्रौढ़ों जैसा विवेक उत्पन्न होता है तो एक मात्र उपाय यही शेष रह जाता है कि परिवार की संख्या या सम्पदा बढ़ाने के स्थान पर उसे छोटा रखा जाय और सद्गुणों को दैवी सम्पदा में सुसंस्कारित किया जाय । इसके लिए पारिवारिक पंचशीलों के निर्धारण में आने वाली श्रमशीलता, शिष्टता और सहकारी उदारता का अभ्यास अपने सभी प्रियजनों को कराने के लिए प्राण-प्रण से प्रयास बरता जाता है । आत्म-निर्माण के लिए भावना विचारण और क्रिया के तीनों पक्षों में उत्कृष्टता और आदर्शवादिता का समावेश करने के लिए अभ्यस्त ढर्रे के साथ कट-कट कर जूझना पड़ता है । समर्थकों, सहायकों का अभाव रहते हुए एकाकी साहस के बल-बूते लक्ष्य की दिशा में बिना थके, बिना निराश हुए अनवरत क्रम से आगे बढ़ना होता है ।

परिवार हो या समाज दोनों ही क्षेत्रों में उत्कृष्टता का संस्थापन और निकृष्टता का निराकरण करने के लिए दुहरे मोर्चे पर एक साथ दुधारी तलवार से लड़ना पड़ता है । एक आँख दुलार की, दूसरी सुधार की रखना कहने में सरल किन्तु बरतने में अति कठिन है । इसके लिए विवेकी, धैर्यवान, और निष्पक्ष मानस चाहिए । जो इतना कर सकेगा वही रोग को मारने और रोगी को बचाने का चमत्कारी कला कौशल दिखा सकेगा ।

गीता में इसी कर्म योग की आद्योपान्त शिक्षा है । भगवान अर्जुन को योगी बनाना चाहते हैं और कहते हैं—'तस्मात् योगी भवार्जुन' अतएव हे अर्जुन ! तू योगी बन । यह योग नेति धोति वास्ति आसन प्राणायाम् समाधि कुण्डलिनी वाला नियत समय पर नियत विधान के साथ हो सकने वाला कृत्य विशेष नहीं है, वरन् जीवनयापन में प्रयुक्त होने वाली रीति-नीति है । इसे हर विचार तरंग में घुला रहना चाहिए, इसे हृदय की हर धड़कन में उछलना चाहिए, इसे प्रत्येक क्रिया-कलाप में सम्मिलित रहना चाहिए । आस्था उसी को कहते हैं जो अन्तराल पर, श्रद्धा विचार तन्त्र पर, प्रज्ञा और काय कलेवर पर निष्ठा बनकर चढ़ी रहे और अपने कार्य क्षेत्र को अंकुश में रखे । जीवन नौका को सनसनाते सरिता में चीरता हुआ पार ले चले, ऐसे व्रतशील निश्चय और कर गुजरने के संकल्पवान साहस को योग कहते हैं । योग जुड़ने को कहते हैं । जुड़ना किसका किससे ? आत्मा का परमात्मा से । इसी को दूसरे शब्दों में, जीवन को आदर्श के साथ जुड़ जाना भी कह सकते हैं । मनोगत चिन्तन, शरीरगत चरित्र और समाजगत व्यवहार का आदर्शवादी निर्धारण और उन तीनों का जीवनचर्या का अविच्छिन्न अंग बन जाना ही योग का एक मात्र उद्देश्य है । प्रचलित क्रिया-कृत्यों में से जो इस प्रयोजन की पूर्ति में जितना सहायक सिद्ध होते हैं, उन्हें उतने ही अंश में सार्थक मानना चाहिए । शेष को बाजीगरों जैसा छलावा या बिना पंखों की मीलों कल्पना उड़ान उड़ने वाले बालकों जैसा भुलाव भी कह सकते हैं । यह गिरह बांधने की बात है कि योग कोई जादू नहीं है, जिसके सहारे मिट्टी से रुपया बनाकर दिखाया जा सके । देवताओं को पकड़ने वाला जाल और उनसे मनमर्जी का चाहे जो करा लेने वाला हण्टर यदि ऐसा कोई किसी ने माना होगा तो वह भारी भ्रम में भटकने वाला माना जायेगा । तरह-तरह के दिवास्वप्न दिखाना देवी-देवताओं के दर्शन कराना, चित्र-विचित्र अनुभूतियाँ करना, यल. एस. डी. जैसे मादक-द्रव्यों का काम है । योग का काम नहीं । योग के प्रचलनों में धूर्त भटकाते और मूर्ख भटकते हैं, किन्तु जो उसके यथार्थ स्वरूप को समझते हैं जीवन को आदर्शों के साथ जोड़ते हैं वे पौराणिक ऋषि-महार्षियों की तरह और इतिहास प्रसिद्ध बुद्ध, गाँधी, विवेकानन्द, समर्थरामदास आदि की तरह जीवन को आदर्शों के साथ जोड़कर सच्चे अर्थों में योगी बनते हैं । स्वयं कृत-कृत्य होते और असंख्यों को कृतार्थ करते हैं ।

⌘⌘⌘

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भविष्य का धर्म : वैज्ञानिक धर्म

विज्ञान से भी अधिक उपयोगी अध्यात्म

इस विश्व-ब्रह्माण्ड के प्रत्येक घटक की संरचना में दो तथ्य अविच्छिन्न रूप से जुड़े हुए हैं । एक प्रत्यक्ष, दूसरा परोक्ष । प्रत्यक्ष वह जो इन्द्रियगम्य है । परोक्ष जिसे इन्द्रियातीत कहा जा सकता है । इन्द्रियातीत अर्थात् बुद्धिगम्य । प्रत्यक्ष को ज्ञान कहते हैं और परोक्ष को विज्ञान । इन्हीं दो पक्षों को अध्यात्म की भाषा में स्थूल एवं सूक्ष्म भी कहा जाता है ।

हर घटक की प्रत्यक्ष क्षमता एवं उपयोगिता स्वल्प है । उसका वर्चस्व परोक्ष में छिपा है । समग्र क्षमता एवं उपयोगिता समझने पर ही समुचित लाभ उठाया जाना सम्भव हैं अन्यथा इस दुनिया में सर्वत्र मिट्टी बिखरी पड़ी है । पानी के गड्ढे और पेड़-पौधे भर दृष्टिगोचर होते हैं । चाबीदार खिलौनों की तरह कुछ जीवधारी चित्र-विचित्र हलचलें करते दिखाई पड़ते हैं । इतने भर से सन्तोष होता और काम चलता होता तो मनुष्य भी अन्य प्राणियों की भाँति अपने निर्वाह की आवश्यकता जुटाने भर तक सीमाबद्ध रहा होता । प्रस्तुत प्रगति की न आकांक्षा उठती है और न आवश्यकता प्रतीत होती है ।

जमीन पर बिखरी धूलि की कोई कीमत नहीं, पर उसके छोटे से परमाणु की परोक्ष शक्ति की जो जानकारी रहस्य का पर्दा उठने पर मिलती है उसे देखकर आश्चर्यचकित रह जाना पड़ता है । आकाश नीले शामियाने जैसा दीखता है, पर इस प्रत्यक्ष से आगे बढ़कर जब इन्द्रियातीत रहस्यों का पता चलता रहता है कि उस पोल में उससे भी अधिक सम्पदा भरी पड़ी है जितनी कि इस धरती पर इन्द्रियों के सहारे बिखरी हुई लगती है । यह रहस्य लोक ही है जिसे इन्द्रियातीत या बुद्धिगम्य कहते हैं । परोक्ष भी प्रत्यक्ष के साथ ही गुथा हुआ है, पर उसे जानने, पकड़ने और करतलगत करने के लिए इन्द्रियों की क्षमता से काम नहीं चलता उसके लिए बुद्धि क्षेत्र की प्रखरता उभार कर उसके सहारे गहराई में प्रवेश करने और मोती ढूँढ़ निकालने का पुरुषार्थ करना पड़ता है । प्रत्यक्ष जानकारी को ज्ञान और परोक्ष के रहस्योद्घाटन को विज्ञान कहते हैं । ज्ञान सब प्राणियों को समान मिला है । विज्ञान मनुष्य की अपनी उपलब्धि है ।

प्रत्यक्ष की क्षमता नगण्य है । परोक्ष में सामर्थ्य के असीम भाण्डागार भरे पड़े हैं । जमीन पर उगी घास प्रत्यक्षतः हरे-भरे कालीन जैसी दीखती है और छूने में ठंडी कोमल भर लगती है, पर विश्लेषण करने पर उनमें कितनी ही अमृतोपम जड़ी-बूटियाँ सिद्ध होती हैं । उनमें पाये जाने वाले रसायनों का विश्लेषण करने पर जो उपयोगिता हाथ लगती है, उसके अनुसार उस घास का महत्त्व असंख्य गुना बढ़ जाता है । खनिज पदार्थ अपने प्रकृत रूप में भारी मिट्टी जैसे होते हैं । उनमें तनिक से रंग-भेद का अन्तर पाया जाता है, किन्तु विश्लेषण करने पर उनमें से एक लोहा दूसरा सोना सिद्ध होता है । यह परोक्ष के विश्लेषण की उपलब्धि है ।

विज्ञान ने मनुष्य के हाथ इन दिनों तक इतनी सामर्थ्य प्रदान कर दी है कि उसे पौराणिक महादैत्यों के समतुल्य मानने में कोई अत्युक्ति नहीं । पाँचों देवता उसकी सेवा में नियुक्त हैं । अग्नि देव खाना पकाते हैं । वरुण देव नल में विराजमान आज्ञा की प्रतीक्षा करते हैं । पवन पंखा झलते हैं । अनन्त (आकाश) रेडियो सुनाते हैं । धरती अपनी उदर दारी को छिपी हुई सम्पदा की तिजोरी खोल-खोल कर उसका वैभव बढ़ाती चली जाती है । प्राचीनकाल के पौराणिक महादैत्यों ने भी इसी प्रकार देवताओं को वशवर्ती करके उनके माध्यम से विपुल वैभव और वर्चस्व उपलब्ध किया था ।

अब तक जो मिला है वह आदि मानव को आश्चर्यचकित कर सकता है । भविष्य में जो मिलने वाला है उसे भी इतना ही महत्त्वपूर्ण और रहस्यमय समझा जा सकता है कि आज का मनुष्य हजार वर्ष बाद फिर लौटकर इस धरती पर आये तो देखे कि वह सन् १९९५ के युग को करोड़ों मील पीछे छोड़कर किसी देव मानवों के लोक में आ पहुँचा । यह पदार्थ विज्ञान की देन है विज्ञान अर्थात् परोक्ष । परोक्ष अर्थात् इन्द्रिय शक्ति से परे बुद्धिगम्य । पदार्थ की प्रकृति सत्ता और मनुष्य की जिज्ञासाजन्य तत्परता समन्वय का चमत्कार ही है जिसके कारण हम इस समूचे ब्रह्माण्ड को कदाचित सर्वश्रेष्ठ लोक में निवास करने का गौरव पा रहे और आनन्द ले रहे हैं । विज्ञान ही है जिसके कारण यह कूड़े-कचरे जैसा यह भूलोक अपने सौर-मण्डल के साथियों को पीछे छोड़कर नन्दन वन जैसा सुरम्य लग रहा है और स्वर्ग जैसा सम्पदाओं से भर गया है ।

पदार्थ जगत के साथ विज्ञान की प्रखरता जुड़ जाने से जो सम्पदा हस्तगत हुई है, होने वाली है उस पर हम सभी प्रसन्न हैं, गौरवान्वित और भविष्य में इससे भी अधिक पाने की अपेक्षा लगाए बैठे हैं । इस प्रकार विज्ञान को जितना सराहा जाय उतना ही कम है । उसे देवादि देव न कहा, दैत्यादि दैत्य तो कहा ही जा सकता है । दैत्य शक्ति को

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कहते हैं और देव सम्पदावानों को । इसलिए विज्ञान को देव न कहकर दैत्य नाम देना ही ठीक है ।

अब सृष्टि संरचना के दूसरे पक्ष का प्रसंग आता है । वह है—चेतना । चेतना प्राणियों में पायी जाती है । इसलिए उसे प्राण भी कहते हैं । प्राण होने से प्राणी कहे गए या प्राणियों की आधारभूत सत्ता होने के कारण उस चेतना को प्राण कहा गया । इस विवाद में न पड़कर इतना मान लेने से ही काम चल जायेगा कि प्राणियों की काया देखने में जैसी भी लगती हो, करने को जो कुछ भी करती हो, पर यह उनका निर्वाह पक्ष भर है । उनकी रहस्यमय क्षमता इन्द्रियातीत है परोक्ष—बुद्धिगम्य । मनुष्य की सामान्य हलचलें उसी सीमा तक सीमित हैं । जिसके सहारे वह अपना निर्वाह करता है । निर्वाह क्षेत्र में ही आजीविका और परिवार को जोड़ा जा सकता है । अन्य प्राणियों के पेट प्रजनन की सीमा छोटी है । मनुष्य जीवन में उन्हीं दो आवश्यकताओं ने थोड़ा विस्तार करके आजीविका एवं परिवार क्षेत्र तक विस्तार कर लिया है । व्यक्तिगत विशेषता देखनी हो तो उसकी वाणी, भाषा, सज्जा, शिल्प, कला आदि की गणना हो सकती है । इन्द्रिय लिप्सा की प्रबलता उसे और कुछ प्रपंच रचने सरंजाम जुटाने को वांछित करती रहती है । इसके अतिरिक्त मूर्धन्य समझे जाने वाले मनुष्य का भी क्या विवेचन विश्लेषण किया जाय ? औरों की तरह वह भी खाता, सोता और साँसें पूरी करके मौत के मुँह में चला जाता है । सामान्यतया मनुष्य की व्याख्या और क्या की जाय ? उसकी विशेषता और क्या बताई जाय ? इन्द्रियगम्य उसका प्रत्यक्ष स्वरूप इतना ही तो है । अन्य प्राणियों की तुलना में मनुष्य की प्रत्यक्ष विशेषता इतनी ही आँकी जा सकती है कि उसकी चतुरता एवं सम्पन्नता की दृष्टि से कुछ अधिक सुविधाएँ उपलब्ध हैं । जहाँ वह इतना आगे है वह ह्वेल की तरह आकार में, हाथी की तरह भार वहन में, घोड़े की तरह दौड़ने में, कुत्ते की तरह सूँघने में, बन्दर की तरह उछलने में, पक्षी की तरह उड़ने में असमर्थ भी होता है । उसकी गणना थलचरों में है । जलचर एवं नभचर तो अपने-अपने क्षेत्रों में उससे कहीं आगे हैं । जीवाणुओं, कृमि-कीटकों की उपेक्षित दुनिया भी कम विचित्रताओं से भरी-पूरी नहीं है । मनुष्य उनकी समता किस बूते पर करेगा ? हम मनुष्य मिल-जुलकर आपस में एक-दूसरे की प्रशंसा करके 'अहो रूप, अहो ध्वनि' की डींग हाँक लेते और उतने भर से मोद मना लेते हैं तो बात दूसरी हुई ।

मनुष्य की वास्तविक विशेषता प्रत्यक्ष नहीं परोक्ष है । वह चतुरता और सम्पन्नता से बहुत आगे की वस्तु है । मानवी परोक्ष को अध्यात्म कहते हैं । यह वह उद्गम स्रोत है जहाँ से उसे सर्वतोमुखी प्रगति के लिए आधारभूत सामर्थ्य उपलब्ध होती है । असली व्यक्तित्व, हाड़-मांस की टोकरी में नहीं है वरन् उस लचीली तिजोरी में भरा हुआ बहुमूल्य रत्न भण्डार है । इतना बहुमूल्य जिसकी तुलना में इस वसुधा पर बिखरी हुई समूची सम्पदा भी कम पड़ती है । यदि मानवी बुद्धिमत्ता प्रकाश में न आयी तो इस धरती का यह स्वरूप ही न निखरता और उसकी रहस्यमयी क्षमता से अविज्ञान के पर्दे में ही छिपी पड़ी रहती है जैसा कि अन्य ग्रहों में उपेक्षित पड़ी हुई है । सृष्टि में क्या है, क्या नहीं, इस असीम, अनन्त और अचिन्त्य को कौन जाने ? जो प्रकाश में, उपयोग में आया वही तो सब कुछ बना और गौरवान्वित हुआ । इस दृष्टि से न केवल प्रकृति वैभव का वरन् परब्रह्म तक का सृजेता न सही उद्घाटन कर्त्ता तो मनुष्य ही ठहरता है । कान के समतुल्य किसी खन्दक में पड़े हीरे का अपना महत्त्व कुछ भी क्यों न हो, श्रेय तो उस जौहरी को ही मिलेगा जिसने उसे ढूँढ़ निकालने से लेकर खरादने और आभूषण का रूप देने की कला दिखाई । इस प्रकार सृष्टि का, सृष्टा का, उद्घाटन कर्त्ता होने का, श्रेयाधिकारी यदि मनुष्य को ठहराया जाय तो उसे अतिरंजित नहीं कहा जाना चाहिए ।

पदार्थ शक्ति की सम्भावनाओं का अनुमान लगाते-लगाते वैज्ञानिक पसीने-पसीने हो जाते हैं । दूसरे पक्ष चेतन की प्रत्येक तरंग का मूल्यांकन किया जा सके तो उसकी भूतकालीन उपलब्धियों और भावी सम्भावनाओं को देखते हुए वे चेतना क्षेत्र को सूक्ष्मदर्शियों को और भी अधिक आश्चर्यचकित हो जाना पड़ता है । मनुष्य जो न्यूनाधिक मात्रा में अपने तथाकथित वानर पूर्वजों से कुछ ही बात में विशिष्ट प्रतीत होता है जिन विभूतियों से भरा-पूरा है वे उसके काय संरचना एवं मस्तिष्कीय विशेषता तक सीमित नहीं है वरन् अन्तराल की गहन पर्तों में छिपी पड़ी है । व्यक्तित्व की परिभाषा शोभा, सज्जा, सम्पदा एवं चतुरता के रूप में नहीं हो सकती । इनके सहारे तो वह मात्र सुविधा सामग्री एवं इन्द्रियजन्य प्रसन्नता ही प्राप्त कर सकता है । जिस आधार पर वह महान् बनता है वे तत्व तो उसके अन्तःकरण की गहन गुफा में प्रसुप्त जैसी ही पड़ी होती है ।

महर्षि व्यास का कथन है—"मैं एक अद्भुत रहस्य का उद्घाटन करता हूँ कि इस विश्व में मनुष्य से श्रेष्ठ और कुछ नहीं है ।" इस रहस्य को प्रकट करते हुए वे यह बताना चाहते थे कि चेतना का उच्चस्तरीय प्रतिनिधित्व करने वाली क्षमता मनुष्य के अन्तराल में छिपी पड़ी है । उन्हें समझने, उभारने और प्रयोग में लाने की विद्या का नाम अध्यात्म है । प्रकृति परंगत अणु सत्ता और तरंग सत्ता की खोज एवं उपलब्धि को विज्ञान कहते हैं और चेतना की भावनात्मक विभूतियों के रहस्योद्घाटन एवं उपार्जन उपयोग को अध्यात्म ।

विज्ञान के स्वरूप एवं प्रयोग क्रमबद्ध होने से उसकी महत्ता सर्व साधारण के सम्मुख है, किन्तु अध्यात्म के सुनियोजित न किए जाने के कारण वह अनगढ़, अस्त-व्यस्त स्थिति में पड़ा रहा । इतना ही नहीं भ्रान्ति, प्रतिगामिता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और निहित स्वार्थों की कुचेष्टा का संयुक्त आक्रमण होने से वह उपयोगी सिद्ध होने के स्थान पर विकृत स्थिति में पहुँच जाने के कारण अवास्तविक उपहासास्पद एवं दयनीय भी बन गया । आज उसकी वही दुर्गति है । इतने पर भी तथ्य अपने स्थान पर जहाँ के तहाँ ही रहेंगे । बदली छा जाने से सूर्य और चन्द्रमा ढक जाते हैं फिर भी प्रखरता के कारण उनका अस्तित्व यथावत बना रहता है और बदली हटते ही वे पूर्ववत् फिर चमकने लगते हैं । विज्ञान की तरह अध्यात्म भी एक तथ्य है । विज्ञान ने प्रकृतिगत सम्पदा और समर्थता को मनुष्य के हाथ सौंपा है । अध्यात्म में वह क्षमता विद्यमान है कि चेतना के परोक्ष स्वरूप को प्रकाश में लाये और उसके वर्चस्व से शोधकर्त्ता साधक को समर्थ बनाये । साथ ही उसकी विशिष्टता से समूचा समुदाय लाभ उठायें ।

मनुष्य समुदाय की शरीर संरचना में कोई बड़ा अन्तर नहीं । कुछ अपंग अपवादों को छोड़कर मनः संस्थान भी एक जैसा है । साधनों में न्यूनाधिकता हो सकती है, पर परिस्थितियाँ सभी के लिए एक जैसी हैं । इतने पर भी किसी को पतित, पराजित, दीन-दुर्बल, दुखी-दरिद्र देखा जाता है । कोई चैन के दिन गुजारते हैं, किन्तु किन्हीं-किन्हीं की वरिष्ठता ऐसी होती है कि उसके सहारे वे न केवल प्रगति के उच्च शिखर पर पहुँचते हैं, न केवल आसाधारण सफलताएँ पाते हैं, वरन् अपनी प्रतिभा प्रखरता से असंख्यों का मार्गदर्शन करते हैं, अपने क्षेत्र एवं समय के वातावरण को प्रभावित परिवर्तित करने की भूमिका निभाते हैं । इन तीनों प्रकार के मनुष्यों में क्यों अन्तर है इसकी गहराई में उतर कर जाँच-पड़ताल करने पर एक ही निष्कर्ष पर पहुँचना पड़ता है कि साधन, सहयोग, परिस्थिति इन भिन्नताओं में कारण या बाधक उतनी नहीं रही है जितनी कि इन वर्गों की अपनी-अपनी मनःस्थिति । यही है वह उद्गम केन्द्र जो अन्तराल में सन्निहित रहने पर भी बाह्य जगत की परिस्थितियों को प्रभावित करता है और उपयुक्त सहयोगी तथा साधन अपने चुम्बकत्व के सहारे खींच बुलाता है । यही है उत्थान-पतन का रहस्य । श्रेय या दोष किसी को भी दिया जाता रहे, तथ्य इतना ही है कि मनुष्य स्वयं ही अपने उत्थान-पतन का कारण होता है । मनःस्थिति ही परिस्थितियों की जन्मदात्री है । मनुष्य अपने भाग्य का निर्माता आप है । इन तथ्यों को जितनी बार दुहराया जा सके, जितनी गहराई तक हृदयंगम किया जा सके उतना ही उत्तम है ।

वस्तु का स्वरूप देखने से ही काम नहीं चलता, उसकी विशेषताओं को समझना, उभारना एवं प्रयोग में लाना भी आवश्यक होता है । चेतना वस्तु नहीं शक्ति है । इसलिए उसके रहस्यों को जानने तथा करने में और भी अधिक सावधानी की आवश्यकता पड़ती है । ईंट-पत्थरों को इधर से उधर हटाया, पटका जा सकता है, किन्तु आग या बिजली की उलट-पुलट करने में अधिक जानकारी तथा सतर्कता की आवश्यकता होती है । पदार्थ को अनुपयुक्त रीति में प्रयोग करने में जितनी हानि है उससे कहीं अधिक बिजली जैसी शक्तियों के सम्बन्ध में अनजान या प्रमादग्रस्त रहने से होती है । मनुष्य के पास उसकी चेतना का अस्तित्व ही सर्वोपरि सम्पदा है । यह ईश्वर का प्रतिनिधित्व करती हुई काय कलेवर में विद्यमान है । इस वैभव के सम्बन्ध में अभीष्ट जानकारी एवं प्रयोग प्रक्रिया से मनुष्य को अवगत होना ही चाहिए । इसी को ब्रह्म विद्या, अध्यात्म विद्या आदि के रूप में तत्वदर्शियों ने विवेचन, निरूपण, निर्धारण किया है । इससे अनजान रहना या विकृत मान्यताएँ अपनाये रहना प्रत्येक सचेतन के लिए उतना ही हानिकारक है जितना कि कपड़े में आग छिपाये फिरना या अपने पैरों आप कुल्हाड़ी मारना ।

शस्त्र, पैट्रोल, बारूद, बिजली आदि शक्तिशाली पदार्थों का प्रयोग करने एवं सुरक्षा रखने में हर कोई समुचित ध्यान रखता है । चेतना महाशक्ति है । वह अपने अन्तराल में विद्यमान है । हर स्तर के शाप और वरदान देने की आज सामर्थ्य उसमें विद्यमान है । देवता अपमानित और असन्तुष्ट होने पर शाप देते, अनिष्ट करते हैं । प्रसन्न होने पर वरदान देते, ऋद्धि-सिद्धियाँ बरसाते और निहाल कर देते हैं ।

चेतना को ही आत्म देव कहते हैं । जीवनचर्या के साथ उसी प्रकार गुथा है जिस प्रकार कि जीव कोशों, अंग अवयवों एवं रस धातुओं के साथ । रक्त मांस की गतिविधियों में चेतनता की शक्ति ही काम करती है । प्राण निकल जाने पर समूची काया निश्चेष्ट हो जाती है, और देखते-देखते सड़ने लगती है । ठीक इसी प्रकार जीवन की अन्तरंग एवं बहिरंग गतिविधियों पर चेतना का प्रभाव रहता है । चिन्तन एवं चरित्र के रूप में उसी का अनुशासन चलता है । कहना न होगा कि अन्तराल की गहन गुफा में विद्यमान यह सचेतन, किन्तु अदृश्य व्यक्तित्व ही मनुष्य के भाग्य का निर्माण करता है । तिरस्कृत, विकृत, अस्त-व्यस्त, अव्यवस्थित, किए जाने पर उसी के शाप उभरते हैं और मनुष्य को दुःखी, दरिद्र, पतित, पराजित बनाकर दयनीय स्थिति में पटक देते हैं । उसी सत्ता को सम्मानित, सुसंस्कृत, समुन्नत, सुव्यवस्थित बनाने पर विभूतियाँ अन्तराल से उभरती हैं । उन्हीं के सम्बन्ध में यह समझा जाता है कि वे किसी अदृश्य लोक से दैवी शक्ति द्वारा सौभाग्य या वरदान की तरह अनुग्रह पूर्वक दी गई है ।

आत्म साधना का नाम अध्यात्म है । चेतना को किस प्रकार मल आवरण, विक्षोभों से बचाया जाय ? किस प्रकार उसे प्रगति पथ पर अग्रसर होने का अवसर दिया जाय ? किस प्रकार उसे बलिष्ठ, प्रखर और परिष्कृत बनाया जाय ? इसी विद्या का नाम 'अध्यात्म' है । वह विज्ञान से कनिष्ठ नहीं वरिष्ठ है । विज्ञान ने मनुष्य को अगणित सुविधा साधन दिए हैं, किन्तु यदि पदार्थ की ही तरह चेतन की भी शोध और साधना की जाय तो कोई कारण नहीं कि मनुष्य इसी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

जीवन में देवताओं जैसा अन्तराल प्राप्त न कर सके । कोई कारण नहीं कि वह सामान्य परिस्थितियाँ और सीमित साधनों के सहारे भी स्वर्गीय वातावरण में रहने का आनन्द न ले सके ।

आत्मसत्ता का अस्तित्व और वैभव

पदार्थ और प्राण का, जड़ और चेतन का, समन्वय ही काया का अस्तित्व बनाये हुए है । वे दोनों पृथक होते हुए भी परस्पर इतने अधिक गुँथे हुए हैं कि एक के बिना दूसरे की गति नहीं । प्राण निकलते ही शरीर न केवल निश्चेष्ट हो जाता है वरन् स्वयंमेव सड़ने में जुड़ पड़ता है और अपना अस्तित्व समाप्त कर लेने के लिए अन्त्येष्टि कर्म में अपनी रही बची विशेषता होम देता है । यह तो हुई प्राण के अभाव में शरीर की दुर्गति । दूसरा पक्ष भी ऐसा ही है । प्राण-सत्ता आकाश में वायुभूत होकर भले ही घुमड़ती रहे, पर दृश्य जगत में अपने अस्तित्व का परिचय देना या किसी प्रकार का अभीष्ट प्रयोजन पूरा कर सकना सम्भव नहीं होता । प्राण के बिना शरीर का और शरीर के बिना प्राण का प्रत्यक्ष उपयोग नहीं रह जाता । इस तथ्य को देखते हुए दोनों के मध्यवर्ती सम्बन्ध सूत्र को समझा जा सकता है ।

स्थूल और सूक्ष्म का, जड़ और चेतन का, यह समन्वय इसी ब्रह्माण्ड में व्यापक रूप से विद्यमान है । पदार्थ की सब छोटी इकाई तरंगें हैं । इन कम्पनों के अन्तराल में चेतना का अस्तित्व और अंकुश ढूँढ़ निकाला गया है । उसकी सूझ-बूझ भरी गतिविधियाँ 'इकोलॉजी' विज्ञान के आधार पर सृष्टि सन्तुलन के रूप में पग-पग पर अपना कार्य करती हुई देखी जा सकती हैं । ऐसे और भी अगणित प्रमाण हैं जिसमें पदार्थ जगत के साथ एक अत्यन्त शक्तिशाली, रहस्यमय एवं वरिष्ठ चेतना जगत गुथा हुआ देखा जा सकता है । पदार्थ में जिस प्रकार ऊर्जा और गति का अस्तित्व है उसी प्रकार प्राण में भावना एवं विचारणा का अनेक रूपों में अपने चित्र-विचित्र कृत्य करते हुए देखा जा सकता है ।

पदार्थ का स्वरूप और व्यवहार समझने पर स्थूल जगत में मनुष्य अपने विभिन्न प्रयोजन पूरे करता रहता है, किन्तु आश्चर्य इस बात का है कि जीवात्मा स्वयं सचेतन होते हुए भी, चेतना जगत में अपनी मूल सत्ता को अविच्छिन्न रूप से जुड़े हुए भी उस विधा से अपरिचित ही बना रहता है जो उसकी अपनी निजी सत्ता के उत्थान-पतन की जिम्मेदार है । शरीर पदार्थ है अस्तु उसकी सुविधा पदार्थ पर निर्भर समझी जा सकती है । अभीष्ट उपलब्धियों के लिए काम सत्ता की भौतिकी विद्या की आवश्यकता पड़ती है । इसके बिना उसका काम नहीं चलता, निर्वाह कठिन हो जाता है । ऐसी दशा में भौतिकी का महत्त्व समझा जाना और उसका उपयोग करना उचित ही है, किन्तु समझा जाना चाहिए कि जीवन की समस्त आवश्यकताएँ भौतिकी द्वारा पदार्थ को उपलब्ध कर लेने से ही तो पूरी नहीं हो जातीं । चेतना का अपना भी कुछ स्वरूप, उद्देश्य, कार्यक्रम, बल-वैभव है । उस सम्बन्ध में अनाड़ी बने रहने पर मात्र शरीर यात्रा ही चलती रहेगी । चेतना की अपनी निजी सामर्थ्य एक प्रकार से सोई ही पड़ी रहेगी उसका निर्वाहरत पक्ष ही जाग्रत रहेगा । जिसे समग्र चेतना का कठिनाई से शतांश ही कहा जा सकता है । शेष अंश प्रसुप्त, उपेक्षित या अनगढ़ स्थिति में पड़ा रहे तो उसे दुर्भाग्य ही कहा जायेगा ।

अध्यात्म शास्त्र में पग-पग पर एक उद्बोधन निर्देशन पूरा जोर देकर दिया जाता है कि 'अपने को जानो, उसे उठाओ ।' 'आत्मान' विद्धि—'आत्मावारे ज्ञातव्य' जैसे सूत्र संकेतों का आत्म क्षेत्र में प्रवेशार्थी को ध्यानपूर्वक मनन-चिन्तन करना पड़ता है । राजकुमार सिद्धार्थ का जिस क्षण आत्म-बोध उभरा उसी क्षण वे भगवान बुद्ध बन गए । जिस अश्वतरु के नीचे यह सुयोग बना वह भी 'बोधि वृक्ष' के रूप में श्रद्धास्पद बना, प्रख्यात हुआ, और कृत-कृत्य हो गया । आत्मज्ञान की महत्ता, प्रतिक्रिया एवं सिद्धि परिणिति का इतना अधिक प्रतिपादन हुआ है कि उससे बढ़कर इस संसार में और कोई बड़ी उपलब्धि मानी ही नहीं गई । गीताकार ने "अपने को ही अपना मित्र और अपने को ही अपना शत्रु बताते हुए कहा है कि अपना उद्धार आप करो, अपने को गिराओ मत ।"

सामान्यतया यह कथन कबीर को 'उल्टा मासी' और 'बच्चों की कौतुक पहेली' जैसी लगती है । क्योंकि अपने को कौन नहीं जानता । हर कोई अपना नाम, पता, वंश, धर्म, आयु, व्यवसाय, वैभव, ज्ञान, पद, पराक्रम, कौशल आदि पूछते ही बता सकता है । फिर अपने को न जानने की क्या बात रह गई ? शरीर से आत्मा के पृथक होने की उसे अजर अमर मानने जैसी कोई बात हो तो उस प्रसंग को भी स्वाध्याय सत्संग में हजारों बार पढ़ा सुना गया होता है फिर 'न जानने' जैसी क्या बात रह गई जिसके लिए 'आत्म-बोध' की बात को इस तरह सिर पर उठाया जाय और उसमें सफल होने पर सामान्य से असामान्य बन जाने का माहात्म्य सुनाया जाता रहे ?

बात की गम्भीरता को समझा जाना चाहिए । हम अपने सम्बन्ध में मात्र उतना जानते हैं जितना ही शरीर निर्वाह, परिपोषण या समाज व्यवहार के लिए दैनिक जीवन में काम आता है । कुशलता पदार्थ सम्बन्ध तक सीमित है कहा जा चुका है कि यह चेतना पक्ष समग्र चेतना का कठिनाई से शतांश होगा । इसके अतिरिक्त जो आत्म-वैभव शेष रह जाता है उसी से अनजान रहने की बात का बार-बार स्मरण कराया जाता है और कहा जाता है कि जिसके शतांश से जीवनचर्या का इतना बड़ा सरंजाम ढोया ढकेला जाता है उसके शेषांश को भी महत्त्वपूर्ण समझा जाना चाहिए । उसे उपेक्षा के गर्त से निकाला जाना चाहिए और ऐसा अवसर

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

देना चाहिए कि समान चेतना को अपने क्षेत्र की वे सभी प्रवीणताएँ प्राप्त हो सकें जिनके सहारे मनुष्य वस्तुतः नर पशु जैसे भव-बन्धनों से निकलकर ब्रह्म चेतना के स्वच्छन्द आकाश में विचरता है और वैसा दिव्य अनुभव करता है जिसे स्वर्ग लोक में निवास या जीवन मुक्ति जैसा हाथों हाथ रसास्वादन किया जा सके ।

उथली साँस लेने वालों के फेफड़ों का छोटा भाग काम में आता है और शेष ऐसे ही निष्क्रिय पड़ा रहता है । इसी क्षेत्र में क्या आटे के विषाणु पलते और प्राण संकट उत्पन्न करते हैं । चेतना का निष्क्रिय पक्ष यदि स्तरीय सक्रियता में संलग्न न होगा तो उस अँधेरी कोठरी में ऐसे तत्व पलेंगे जो पतन पराभव के गर्त में व्यक्तित्व को गिराते रहे और सड़ाँद उत्पन्न करके उस क्षेत्र को दुर्गन्ध से भरते रहे ।

व्यक्ति चेतना का कार्यक्षेत्र उससे कहीं अधिक व्यापक है जितना कि परिवार, समाज के छोटे दायरों में, बहिरंग जीवन में प्रयुक्त होता है । हाड़-मांस के स्थूल की अपनी हस्ती और क्षमता है, किन्तु इससे भी महत्त्वपूर्ण और अदृश्य शरीर आत्मा की उपलब्धि है और वे यदि सजग सक्रिय हो सके तो 'काय शरीर' की तुलना अत्यधिक महत्त्व के काम कर सकते हैं । स्थूल शरीर बोझिल होने के कारण धीमे चलता और जल्दी थकता है, पर सूक्ष्म शरीर का भार न होने से वह प्रकाश से भी अधिक गति के साथ एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँच सकता है । दूरदर्शन, दूर-श्रवण, जैसी अनेकों आश्चर्यजनक घटनाओं के उदाहरण सामने आते रहते हैं । भूत प्रेतों के अस्तित्व सिद्ध करने वाले प्रमाण मिलते रहते हैं । जीवित रहते हुए तन्त्र योगी अपनी ही एक अदृश्य प्रति कृति छाया पुरुष के रूप में गढ़ लेते हैं और उससे बिना चेतन की देव मानव जैसे सहायक सेवक का काम लेते हैं । यह सूक्ष्म शरीर के ही चमत्कार हैं । कितने ही स्वप्न अक्षरशः सत्य निकलते हैं और कइयों के महत्त्वपूर्ण संकेत रहते हैं । जाग्रत अवस्था में भी कई बार ऐसे दिवा स्वप्न देखे गए हैं जो किसी सामयिक घटनाक्रम की जानकारी देने वाले सिद्ध हुए ।

अन्तर्मुखी होकर अन्तर्जगत का अवलोकन और उसका परिष्कृतीकरण के लिए योगाभ्यास में कई प्रकार की ध्यान धारणाएँ कराई जाती हैं । षटचक्र, पंचकोश, तीन ग्रन्थियाँ, इड़ा, पिंगला, सुषुम्ना, उनकी सहायक नाड़ियाँ किस स्तर की हैं और उनकी प्रसुप्त स्थिति दूर हो जाने पर क्या कुछ उपलब्ध हो सकता है इसका सुविस्तृत वर्णन हठयोग-कुण्डलिनी जागरण आदि विद्याओं के अन्तर्गत सुना समझा जाता रहा है । यह कार्यक्षेत्र वैभव एवं अदृश्य विकृति भण्डार सूक्ष्म शरीर की परिधि में ही आता है । स्थूल शरीर के अवयव तो सर्वविदित हैं । उसकी संरचना में चक्रकोश आदि का कहीं कोई स्थान नहीं है । चक्र वेधन, कुण्डलिनी जागरण, शरीर सत्ता का अभीष्ट परिवर्तन, अचेतन मन की लगाम हाथ में आने पर मानसिक चेतना का इच्छित उपयोग जैसे कितने ही ऐसे काम हैं जिन्हें सूक्ष्म शरीर को समर्थ बनाने के उपरान्त सहज ही सम्पन्न किया जा सकता है । इन्द्रिय शक्ति से कहीं अधिक प्रखरता सम्पन्न मनुष्य की अतीन्द्रिय सामर्थ्य है । इसे कैसे जगाया बढ़ाया जाय ? यह सारा प्रकरण सूक्ष्म शरीर से सम्बन्धित है ।

कारण शरीर इन सूक्ष्म से भी अधिक उत्कृष्ट और अधिक रहस्यमय है । जिस प्रकार स्थूल शरीर आधा प्रकृति का और आधा प्राण चेतना के समन्वय से बना है । उसी प्रकार कारण शरीर आधा मानवी चेतना और आधा देव चेतना के समन्वय से बना है । अन्तःकरण की सूक्ष्म पर्तें इसी क्षेत्र में हैं । यह जग पड़े तो भीतर से ही देव शक्तियों का उदय हो सकता है । अध्यात्म शास्त्र में अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय, आनन्दमय पंचकोशों को प्रख्यात पंच देवों का प्रतीक प्रतिनिधि बताया गया है । इसी शरीर में समस्त लोक, देव ऋषि, तीर्थ सन्निहित माने गए हैं । बहुमूल्य रत्न भण्डारों का खजाना इसी में गढ़ा हुआ बताया गया है । अन्तःकरण ही व्यक्तित्व का मूलभूत स्वरूप है । उसकी स्थिति जैसी भी भली-बुरी है उसी के अनुरूप चिन्तन, चरित्र, सहयोग, वातावरण बनता है और इस प्रकार अपनी ही गढ़ी हुई दुनिया में मनुष्य अपने ढंग का निर्वाह करता है । अन्तःकरण की प्रेरणा से मन बुद्धि को काम करना पड़ता है । मन के निर्देशन पर काया काम करती है । संक्षेप में, बाह्य जीवन का जैसा भी स्वरूप है उसे अन्तःकरण का प्रतीक प्रतिबिम्ब ही समझा जाना चाहिए । यह अन्तराल ही कारण शरीर है । देव सान्निध्य इसी मिलन कक्ष में शक्य होता है । इष्टदेव का दर्शन, ईश्वर मिलन, स्वर्गानुभूति मुक्ति आनन्द, विभूति वैभव, सिद्धि चमत्कार आदि की जो उत्साह भरी चर्चा अध्यात्म प्रसंगों में होती रहती हैं उसका कारण शरीर स्थिति के रूप में भी विवेचन किया जा सकता है ।

स्थूल शरीर की क्षमता प्रखरता के आधार पर मिलने वाली प्रसन्नता, सम्पदा, सफलता जिन्हें प्राप्त है उन्हें उतना और भी जानना चाहिए कि स्थूल से सूक्ष्म और सूक्ष्म से कारण शरीर की सामर्थ्य से उत्तरोत्तर वृद्धि ही होती चली जा रही है । निरोग, परिपुष्ट, स्फूर्तिवान, सुन्दर, सुडौल शरीर के सहारे जो कुछ हो सकता है, उनसे अत्यधिक अनुपात में समुन्नत सूक्ष्म शरीर और सुसंस्कृत कारण शरीर के माध्यम से उपलब्ध किया जा सकता है । कारण शरीर की भावना को, सूक्ष्म शरीर की विचारणा को और स्थूल शरीर की क्रियाशीलता का केन्द्र माना गया है । इन्हें परिष्कृत करने के लिए क्रमशः भक्ति योग की—ज्ञान योग की—कर्मयोग की साधना की जाती है । उनकी प्रखरता मनुष्य को तेजस्वी, मनस्वी एवं ओजस्वी बनाती है । अध्यात्म क्षेत्र की साधनाएँ विभूतियों को करतलगत कराती हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

वैज्ञानिकों की दृष्टि में आत्मसत्ता

जीवात्मा आखिर है क्या ? उसका लक्षण, स्वरूप, स्वभाव और लक्ष्य क्या है ? इस प्रश्न पर विज्ञान अपने बचपन में विरोधी था, वह कहता था जड़ तत्वों के, अमुक रसायनों के, एक विशेष संयोग सम्मिश्रण का नाम ही जीव है । उसकी सत्ता वनस्पति वर्ग की है । अन्य प्राणियों की तरह मनुष्य भी एक चलता-फिरता पेड़ है । रासायनिक संयोग उसे जन्म देते, बढ़ाते और बिगाड़ देते हैं । ग्रामोफोन के रिकार्डों पर सुई का संयोग होने से आवाज निकलती है और वह संयोग-वियोग में बदलते ही ध्वनि प्रवाह बन्द हो जाता है । जीव अमुक रसायनों के अमुक मात्रा में मिलने से उत्पन्न होता है और वियोग होते ही उसकी सत्ता समाप्त हो जाती है । अणु अमर हो सकते हैं, पर शरीर ही नहीं, उसकी विशेष स्थिति चेतना भी मरण धर्मा है ।

यही था वह प्रतिपादन जो चार्वाक् मुनि के शब्दों को विज्ञान दुहराता रहा । उसकी दलील यही थी—'भस्मी भूतस्य देहस्य पुनरागमने कुतः' शरीर नष्ट होने पर आत्मा भी नष्ट हो जाती है । इस मान्यता का निष्कर्ष यही निकला कि जब शरीर के साथ ही अस्तित्व नष्ट होते हैं तो परलोक का भय क्या करना ? जितना सुख, जिस प्रकार भी सम्भव हो लूट लेना चाहिए इसी में जीवन की सार्थकता है । नास्तिकवाद ने जन-साधारण को यही सिखाया—'यावज्जीवेत् सुखं जीवेत् ऋणं कृत्वा घृतं पिवेत्' जब तक जियो सुख से जियो कर्ज से लेकर भी घी पियो । चूँकि अब घी भी हजम नहीं होता और वह तथा कथित सभ्यता का चिह्न भी नहीं है इसलिए आधुनिक चार्वाकों ने "कुकर्म करके धन कमाओ, नशा पियो और मजा उड़ाओ" के सूत्र रच दिए । इन दिनों जन-मानस इसी प्रेरणा का अनुगमन कर रहा है ।

बचपन से आगे बढ़कर विज्ञान जब किशोरावस्था में पहुँचा तो उसने जीव को एक स्वतन्त्र चेतना के रूप में मानना स्वीकार किया । मनः शक्ति को मान्यता दी गई । आरम्भिक दिनों में जीवाणु ही शरीर और मन का आधार था । पीछे माना गया मनः चेतना की अपनी सत्ता है वह अपने अनुकूल जीवाणुओं पर सवारी गाँठती है । उन्हें अपनी इच्छा आवश्यकतानुसार ढालती है । मरणोत्तर स्थिति में भी उसकी सत्ता बनी रहती है । इतने पर भी उसे बिजली, चुम्बक, ताप, प्रकाश, शब्द स्तर की एक भौतिक अदृश्य शक्ति ही माना गया । अब इस युग से विज्ञान आगे बढ़ रहा है उसकी प्रौढ़ता समीप है और थोड़ी हिचकिचाहट के साथ उसकी तैयारी इसी दिशा में कदम बढ़ाने की है कि जीवन को अणु निर्मित भौतिक जगत की तरह, चेतना जगत को स्वतन्त्र सत्ता का एक घटक मान लिया जाय । यह मान्यता लगभग उसी प्रकार की होगी जैसी कि अध्यात्म के क्षेत्र में जीवन के स्वरूप, लक्षण एवं गुण के सम्बन्ध में व्याख्या की जाती रही है ।

आशा की जानी चाहिए कि विज्ञान जब अपनी अधेड़ परिपक्वावस्था में पहुँचेगा तो उसे जीवन के लक्ष्य एवं विकास का वह स्वरूप भी मान्य हो सकेगा जो आत्मा के परमात्मा स्तर का बनाने के लिए योग और तप का अवलम्बन लेने के लिए तत्वदर्शियों ने अपनी सूक्ष्म दृष्टि से आधार पर कहा बताया था । विज्ञान की पदयात्रा क्रमशः नास्तिकता से आस्तिकता की ओर बढ़ रही है और प्रत्यक्ष है ।

पदार्थ को शक्ति के रूप में अब मान्यता मिल चुकी है और यह विज्ञान के प्रारम्भिक विद्यार्थियों को तो नहीं पर मूर्धन्य स्तर पर स्वीकार है कि यह विश्व एक शक्ति सागर भर है । शक्ति की दो धाराएँ मानी जाती रही हैं उसी परम्परा के अनुसार एक को भौतिक और दूसरी को प्राणिज माना गया है । दोनों आपस में पूरी तरह गुँथी हैं इसलिए जड़ में चेतन का और चेतन में जड़ का आभास होता है । वस्तुतः वे दोनों ज्वार-भाटे की तरह लहरों के मूल और ऊर्ध्व में निचाई-ऊँचाई का अन्तर दीखने की तरह हैं और एक अविच्छिन्न युग्म बनाती हैं । यद्यपि उन दोनों की व्याख्या अलग-अलग रूपों में भी की जा सकती है और उनके गुण, धर्म पृथक बताये जा सकते हैं । एक को जड़ दूसरी को चेतन कहा जा सकता है । इसी विभेद की चर्चा अध्यात्म ग्रन्थों में परा और अपरा प्रकृति के रूप में मिलती है ।

मस्तिष्कीय विद्या के, मनोविज्ञान के आचार्य—न्यूरोलॉजी, मैटाफिजिक्स, साइकोलॉजी आदि के सन्दर्भ में मस्तिष्कीय कोशों और केन्द्रों की दिलचस्प चर्चा करते हैं । उनकी दृष्टि में वे कोश ही अपने आप में पूर्ण हैं । यदि यही ठीक होता तो मृत्यु के उपरान्त भी उन कोशों की क्षमता उसी रूप में या अन्य किसी रूप में बनी रहनी चाहिए थी । पर वैसा होता नहीं । इससे प्रकट है कि इन कोशों में मनः तत्व भरा हुआ है जीवित अवस्था में वह इन कोशों के साथ अतीव सघनता के साथ घुला रहता है । जब इन दोनों का अलगाव हो जाता है तो उस मृत्यु की स्थिति में मस्तिष्क के चमत्कारी कोश सड़ी-गली श्लेष्मा भर बनकर रह जाते हैं ।

मनः शास्त्र के यशस्वी सोधकर्त्ता कार्ल गुस्ताजुंग ने लिखा है, मनुष्य के चेतन और अचेतन के बीच की शृंखला बहुत दुर्बल हो गई है । यदि दोनों के बीच सामंजस्य स्थापित किया जा सके तो प्रतीत होगा व्यक्ति की परिधि छोटे से शरीर तक सीमित नहीं है वरन् वह अत्यधिक विस्तृत है । हम हवा के सुविस्तृत आयाम में साँस लेते और छोड़ते हैं उसी प्रकार विश्व-व्यापी चेतन और अचेतन की संयुक्त सत्ता के समुद्र में ही हम अपना व्यक्तित्व पानी के बुलबुले की तरह बनाते, बिगाड़ते रहते हैं । जैसे हमारी अपनी कुछ रुचियाँ और आकांक्षाएँ हैं, उसी प्रकार विश्व-व्यापी चेतना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की धाराएँ भी किन्हीं उद्देश्य पूर्ण दिशाओं में प्रवाहित हो रही है ।

गैरल्ड हार्ड ने आइसोटोप ट्रेसर्स के सम्बन्ध में हुए नवीनतम शोधकार्य की चर्चा करते हुए कहा है कि जीव विज्ञान का निष्कर्ष है कि शरीर की कोशिकाओं और परमाणुओं पर मनःशक्ति का असाधारण नियन्त्रण है । चेतन और अचेतन के रूप में जिन दो धाराओं की विवेचना की जाती है वस्तुतः वे दोनों मिलकर मनः-शक्ति का निर्माण करती हैं । यह मनः चेतना सहज ही नहीं मरती वरन् एक ओर तो वंशानुक्रम विधि के अनुसार गतिशील रहती है दूसरी ओर मरणोत्तर जीवन के साथ होने वाले परिवर्तनों के रूप में उसका अस्तित्व अग्रगामी होता है । मनः चेतना का पूर्ण मरण पिछले दिनों सम्भव माना जाता रहा है अब हम इस निष्कर्ष पर पहुँचने ही वाले हैं कि चेतना अमर है और उसका पूर्ण विनाश उसी तरह सम्भव नहीं जिस प्रकार कि परमाणुओं से बने पदार्थों का ।

भौतिक विज्ञान के नोबल पुरस्कार विजेता श्री पियरे दि काम्ते टुनाऊ ने विज्ञान और व्यक्ति के बीच सामंजस्य स्थापित करते हुए लिखा है, अब हमें यह मानने में कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए कि मनुष्य में अपनी ऐसी चेतना का अस्तित्व मौजूद है जिसे आत्मा कहा जा सके । यह आत्मा विश्वात्मा के साथ पूरी तरह सम्बद्ध है । उसे पोषण इस विश्वात्मा से ही मिलता है । चूँकि विश्व चेतना अमर है इसलिए उसकी छोटी इकाई आत्मा को भी अमर ही होना चाहिए ।

'ह्यूमन डेस्टिनो' ग्रन्थ के लेखक 'लेकोम्ते टू नाउ' ने जीव सत्ता की स्वतन्त्र व्याख्या अगले कुछ ही दिनों में प्रचलित विज्ञान मान्यताओं के आधार पर ही की जा सकने की सम्भावना व्यक्त की है और कहा है कि हम इस दिशा में क्रमशः अधिक द्रुतगति से बढ़ रहे हैं ।

प्राणि का 'अहम्' उसके स्वतन्त्र अस्तित्व का सृजन करता है और जब तक वह बना रहता है तब तक उसकी अन्तिम मृत्यु नहीं हो सकती । स्वरूप एवं स्थिति का परिवर्तन होता रह सकता है । इस अहम् ईगो, सत्ता का स्वरूप निर्धारण अब इलेक्ट्रो डायनैमिक सिद्धान्तों के अन्तर्गत प्रामाणित किया जाने लगा है । इस व्याख्या के अनुसार यह मानने में कठिनाई नहीं होती कि जीव सत्ता जन्म-मरण के चक्र में घूमती हुई भी अपनी आकृति-प्रकृति में हेर-फेर करती रहकर भी अपनी मूल सत्ता को अक्षुण्ण बनाये रह सकती है ।

'दि सूट्स ऑफ कोइंसिडेन्स' ग्रन्थ के लेखक महा मनीषी आर्थर कोइंसिडेन्स ने जीव सत्ता के आयाम को स्वीकार किया है और कहा है कि प्राणी की सत्ता विशेषता को सर्वथा आण्विक या रासायनिक नहीं ठहराया जा सकता ।

'यू डू टेक इट विद यू' के लेखक श्री डिविट मिलर इस बात से सहमत हैं कि मस्तिष्कीय कोशों को प्रभावित करने वाली एक अतिरिक्त चेतना का उसी क्षेत्र में घुला-मिला किन्तु स्वतन्त्र अस्तित्व है ।

मृत्यु के उपरान्त प्राणी की चेतना शक्ति उसी प्रकार बनी रह सकती है जैसे कि अणु गुच्छक एक पदार्थ से टूट बिखर कर किसी अन्य रूप में परिणत होते रहते हैं ! शक्ति के समुद्र इस विश्व में प्राणियों की सत्ता बुलबुलों की तरह अपना स्वतन्त्र अस्तित्व बनाती है, विकसित करती है और समयानुसार अपने मूल उद्गम में लीन हो जाती है । जड़-चेतन मिश्रित इस शक्ति सागर को कहा जा सकता है । यदि इन्हें अलग से कहना आवश्यक हो तो एक को 'प्रकृति' और दूसरे को 'पुरुष' कह सकते हैं ।

अपने समय के मूर्धन्य खगोलवेत्ता डॉ. गुस्ताफस्ट्रोम वर्ग की पुस्तक 'दि सोल ऑफ यूनिवर्स' में जीवन क्या है ? विशेषतया मनुष्य क्या है ? इस प्रश्न पर प्रस्तुत वैज्ञानिक दृष्टिकोण की मार्मिक समीक्षा की है । वे विज्ञान से पूछते हैं, क्या मनुष्य ब्रह्माण्ड की कुछ धूलि का ताप और रासायनिक घटकों की ओंधीं-सीधी क्रिया-प्रक्रिया मात्र है ? क्या वह प्रकृति की किसी अनिच्छित क्रिया के अवशेष उच्छिष्ट से बना खिलौन मात्र है ? क्या मानव जीवन वस्तुतः लक्ष्यहीन अर्थहीन, बेतुका राग मात्र है ? क्या उसकी सत्ता आण्विक और रासायनिक हलचलों के बनने बिगड़ने वाले संयोगों की परिधि तक ही सीमित है ? अथवा वह इससे आगे भी कुछ है ?

इन प्रश्नों के सही उत्तर प्राप्त करने के लिए स्ट्रोम वर्ग ने तत्कालीन विज्ञान की दार्शनिक विवेचना करने वाले मनीषियों से भी परामर्श किया । उन्होंने इस सम्बन्ध में एफ. आर. मोस्टर, वास्टर आडम्स, आर्थर एडिंगटन, थामस हैट मार्गन, जान वूदिन, कारेलहूजर, ओ. एल. स्पोसलर आदि प्रख्यात मनीषियों के सामने अपना अन्तर्द्वन्द्व रखा और जानना चाहिए कि विज्ञान सम्मत दर्शन द्वारा क्या मानव चेतना की इतनी ही व्याख्या हो सकती है जितनी कि वह अब तक की गई है । अथवा उससे आगे भी कुछ सोचा जा सकता है ।

अपनी जिज्ञासा, दृष्टि, कठिनाई, समीक्षा और विवेचना का एक विचारणीय स्वरूप स्ट्रोमवर्ग के 'दि सोल ऑफ यूनिवर्स' ग्रन्थ में है । इस पुस्तिका की भूमिका लिखते हुए आइन्स्टीन ने प्रस्तुत जिज्ञासा को युग चिन्तकों के सामने अति महत्त्वपूर्ण चुनौती माना है और कहा है हमें किन्हीं पूर्वाग्रहों से प्रभावित हुए बिना सम्भावित सत्य के आधार पर ही इस प्रश्न पर विचार करना चाहिए ।

फ्रायड ने प्रेरणाओं का प्रधान स्रोत 'काम' को माना था और उसकी व्याख्या 'सेक्स' के रूप में की थी । इसके बाद उन्होंने अपने ही जीवन में उसे यौन लिप्सा से आगे बढ़ाकर कामना इच्छा तथा वासना तक पहुँचा दिया इसके

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बाद जुंग और एडलर ने उस काम वृत्ति की व्याख्या कामाध्यात्म के रूप में की और उसे आनन्द, उल्लास की सहज सुलभ प्रवृत्ति एक साथ जोड़ दिया ।

जुंग का कथन है कि आत्मा की अमरता को यद्यपि अभी भी प्रयोगशालाओं में सिद्ध नहीं किया जा सका फिर भी ऐसी अगणित अनुभूतियाँ मौजूद हैं जो भी यह बताती हैं कि आदमी मरण धर्मा नहीं है वह मौत के बाद भी जीवित रहता है ।

मनः शास्त्र का विकास क्रमिक गति से आगे बढ़ा है । आरम्भ में विज्ञान ने एक जाग्रत चेतन मन ही स्वीकारा था । पीछे अचेतन मन की खोज की गई । इस अचेतन की भी कई शाखा-प्रशाखाएँ खोजी गईं । सबकान्शास, अर्ध चेतन और रैशियल अनकान्शास, जातीय अचेतन, इसकी प्रमुख धाराएँ इन दिनों सर्वविदित हैं । फ्रायड की कल्पना पर सुपरईगो-उच्चतर अहं और सेन्सर-अंकुश तथ्य छाये रहे । उन्होंने इसी परिधि में मनःशास्त्र की संरचना की है । तब से अब तक पानी बहुत आगे बह गया और मनोविज्ञान ने कितने ही नये-नये रहस्यों का उद्घाटन किया है ।

जर्मनी के मनःशास्त्री हेन्सावेन्डर ने अतीन्द्रिय क्षमता के अनेकों प्रमाण संग्रह करके यह सिद्ध किया है कि मनुष्य की सूक्ष्म सत्ता उससे कहीं अधिक सम्भावनाओं से भरी-पूरी है जैसी कि अब तक जानी जा सकी है । टैलिपैथी के शोधकर्त्ता रेने वार्कोलियर ने मनः चेतना को ज्ञात भौतिकी से ऊपर वाले सिद्धान्तों पर आधारित बताया है । वे कहते हैं—"मन की व्याख्या पदार्थ विज्ञान के प्रचलित सिद्धान्तों के सहारे नहीं हो सकती ।"

विश्व विख्यात लेखक एच. जी. वेल्स ने अपनी पुस्तक "इन दि एज-ऑफ दि क्रामेट" में यह सम्भावना व्यक्त की है कि निकट भविष्य में मनुष्य का मन और दृष्टिकोण अधिकाधिक परिष्कृत होता चला जायेगा । तब मनुष्य में सहृदयता, सहयोग-भावना तथा दूरदर्शिता बढ़ती जायेगी । फलस्वरूप समाज का ढाँचा और मानवी आचार इतना उपयोगी बन जायेगा जिसे अब की अपेक्षा कायाकल्प जैसा कहा जा सके । तब कोई युद्ध का समर्थन न करेगा और चिन्तन की दिशा सहयोगपूर्वक शान्ति एवं प्रगति के लिए प्रयुक्त हो सकने वाले आधारों को ढूँढ़ने के लिए प्रयुक्त होगी ।

शंकराचार्य कहते थे स्व और पर का भेद भ्रान्ति है । हम सब भिन्न दीखते भर हैं वस्तुतः सब एकता के सघन सूत्र में पिरोये हुए मनकों की तरह हैं । ईसा कहते थे—'अपने पड़ौसी को प्यार करो ताकि तुम्हारा विकसित प्यार तुम्हें निहाल कर दे ।' बुद्ध ने कहा था—'करुणा से बढ़कर मनुष्य के पास और कोई दिव्य सम्पदा नहीं, जो ममता और करुणा से भरा है वही दिव्य है ।'

जीव चेतना का लक्ष्य और विकास-क्रम का पूर्णत्व इसी स्तर पर विज्ञान को भी पहुँचा देगा जो ऋषियों और तत्वदर्शियों ने बताया था । यदि विज्ञान का उद्देश्य सत्य की खोज है तो उसे आत्मा की वर्तमान स्वीकृति को परमात्मा स्तर प्राप्त करने तक भी पहुँचना होगा । इसके लिए कल न सही परसों की प्रतिक्षा तो की ही जा सकती है ।

आखिर आत्मा है क्या : नर या नारी

मनुष्य की मूल सत्ता न शरीर है और न उसकी इच्छाएँ आकांक्षा हैं । बल्कि इनका उत्स, आत्मा ही मनुष्य का मूल स्वरूप है । यह आत्मा न किसी प्राणी में कोई अतिरिक्त विशेषताएँ लिए रहती है, तथा न कोई न्यूनताएँ हैं । आत्मा की सभी विशेषताएँ समान रूप से सभी प्राणियों में विद्यमान रहती हैं और वह अपने मूल स्वरूप में रहते हुए ही विभिन्न शरीर धारण करती है ।

विशेषता और अविशेषता की दृष्टि से आत्मा में इतना भी भेद नहीं है कि उसका लिंग की दृष्टि से कोई निर्धारण किया जा सके । संस्कृत में 'आत्मा' शब्द नपुंसक लिंग है, इसका कारण यही है—आत्मा वस्तुतः लिंगातीत है । वह न स्त्री है, और न पुरुष ।

आत्म तत्व के इस स्वरूप का विश्लेषण करते हुए प्रायः प्रश्न उठता है कि आत्मा जब न स्त्री है, और न पुरुष तो फिर स्त्री या पुरुष के रूप में जन्म लेने का आधार क्या है ?

इस अन्तर का आधार जीव से जुड़ी मान्यताएँ ही हैं । जीव चेतना भीतर से जैसी इच्छा करती है, वैसे संस्कार उसमें गहरे हो जाते हैं । अपने प्रति जो मान्यता दृढ़ हो जाती है, वही व्यक्तित्व रूप में प्रतिपादित होती हैं । ये मान्यताएँ स्थिर नहीं रहतीं तो भी सामान्यतः इनमें एक दिशाधारा का सातत्य रहता है । किसी विशेष अनुभव की प्रतिक्रिया से मान्यताओं में आकस्मिक परिवर्तन भी आ सकता है या फिर सामान्य क्रम में धीरे-धीरे क्रमिक परिवर्तन भी होता रह सकता है ।

यह मान्यता अन्तःकरण से सम्बन्धित होती है । अन्तःकरण के चार अंग हैं—मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार । अहंकार का अर्थ है वह अस्मिता-भाव जिसके सहारे व्यक्ति सत्ता का समष्टि सत्ता से पार्थक्य टिका है । जब अहं-भाव का सम्पूर्ण नाश हो जाता है, तो समुद्र में बूँद की तरह व्यष्टि का समष्टि में लय हो जाता है । उसकी स्वतन्त्र सत्ता नहीं रह जाती है । स्वतन्त्र सत्ता अहं-भाव पर ही अवस्थित है । इसी अहं-भाव में जो मान्यताएँ अंकित संचित हो जाती हैं वे ही व्यक्तित्व की विशेषताओं का आधार बनती हैं । इन विशेषताओं में लिंग-निर्धारण भी सम्मिलित है । जीवात्मा पुरुष रूप धारण करेगी या स्त्री रूप यह इसी अहं-भाव की मान्यता पर निर्भर है । उसमें जैसी इच्छा उमड़ेगी जैसी मान्यताएँ जड़ जमा लेंगी, वैसा ही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लिंग-निर्धारण भी होगा । आधुनिक मनोवैज्ञानिक शब्दावली में अहंकार को अचेतन की अति गहन पर्त कह सकते हैं । इससे ही 'ईगो' और "सुपर ईगो" का स्वरूप निर्धारित होता है ।

'ईगो' के स्वरूप में रोज-रोज आमूल-चूल परिवर्तन असम्भव है । मान्यताएँ-आस्थाएँ बहुत गहरी जड़ें जमाये रहा करती हैं । उनमें आये दिन ऐसी फेर-बदल नहीं हो सकती कि पूरा ढाँचा ही बदल जाय । परन्तु जब भी मान्यताएँ बदलती हैं तो उनका प्रभाव स्वाभाविक ही बहुत गहरा और दूरगामी होता है । वाल्मीकि, अजामिल, अम्बपाली ने अपने बारे में मान्यता बदली तो उनका व्यक्तित्व ही बदलता चला गया । जिस स्तर तक मान्यताएँ परिवर्तित होती हैं, उसी स्तर तक व्यक्तित्व में हेर-फेर होता है । लिंग-परिवर्तन भी ऐसे ही गहरे हेर-फेर से सम्भव है । जब कोई आत्मा अपने वर्तमान लिंग के प्रति गहराई से असन्तुष्ट होती है या जब उसकी मूलभूत प्रवृत्तियों की दिशा ही बदल जाती हैं, तो लिंग-परिवर्तन समेत व्यक्तित्व में अनेक परिवर्तन हो सकते हैं । ऐसे परिवर्तन से इस जन्म की नारी अगले जन्म में पुरुष और इस जीवन का पुरुष अगले जीवन में नारी बन सकता है । कीड़े-मकोड़े जिस परिवेश में रहते हैं, उसका प्रभाव उनकी त्वचा के रंग तक पर पड़ता है । हरे पेड़ पर रहने से हरापन बढ़ जाता है, काले या भूरे वृक्षों, वनस्पतियों के बीच उनकी त्वचा का रंग भी वैसा ही चलता है । आत्मा भी मान्यताओं के जिस परिवेश में रहती है उसका उसके नर या नारी होने पर भी प्रभाव पड़ता है । चीते के शरीर पर घास के प्रभाव से पड़ जाने वाली भूरी-चितकबरी लकीरों-पट्टियों की तरह मान्यताओं और अनुभूतियों का प्रभाव आत्म-पटल पर पड़ता ही रहता है ।

व्यक्तित्व में जो प्रवृत्तियाँ प्रधान हो जाती हैं । जीवात्मा का वही लिंग बन जाता है । नारी-प्रवृत्तियों की प्रधानता से कोई लड़का अगले जन्म में लड़की बन सकता है, पुरुष-प्रवृत्तियों का प्राधान्य किसी लड़की के अगले जीवन में लड़का बनने का कारण बन सकता है । यों, सामान्य क्रम में भी हर व्यक्ति में दोनों ही लिंगों सम्बन्धी कुछ प्रवृत्तियाँ विद्यमान रहती हैं, किन्तु प्रधानता किसी एक की रहती है । ऐसे पुरुषों की कमी नहीं, जो पूरी तरह पुरुष होते हुए भी करुणा 'वात्सल्य' ममता मातृ-हृदय की कोमलता से सम्पन्न हों । ऐसी नारियाँ भी कम नहीं जो नारी की समस्त विशेषताओं के साथ आक्रामकता, लड़ाकूपन जैसी पुरुष प्रवृत्तियों से भी भरपूर हों ।

जब तक ये विशेषताएँ सीमित रहती हैं, प्रधानता अपने ही लिंग स्वभाव की बनी रहती है तब तक तो ये व्यक्तित्व के गुण और क्षमताएँ ही बनी रहती हैं । जब इनकी असामान्य वृद्धि होने लगती है, तब वे चर्चा का विषय बन जाती हैं । किसी पुरुष में स्त्री-सुलभ वृत्तियाँ अधिक हो जाने पर उसे स्त्रेण कहा जाता है । नारी में पुरुष-प्रवृत्ति की प्रधानता दीखने पर इसे मर्दानी कहते हैं । जब बात और आगे बढ़ती है तो दोनों को ही जनखा, हिजड़ा कहा जाता है । यह मनोवृत्तियों के परिवर्तन का परिणाम है ।

जब यह परिवर्तन मनोवृत्तियों से भी अधिक गहराई तक में होता है, संस्कार और मान्यताएँ उलट-पुलट जाती हैं, तब पूरा ढाँचा ही बदल जाता है तथा लिंग-परिवर्तन हो जाता है ।

ब्राजीलवासी श्रीमती इडा लारेन्स १२ बच्चों की माँ बन चुकी थीं और अब संतान प्रजनन की सम्भावना क्षीण ही हो गई थी । तभी उन्हें "सेयांस" में उनकी मृत पुत्री इमीलिया ने सन्देश दिया कि मैं पुनः तुम्हारे गर्भ से ही जन्म लेना चाहती हूँ, किन्तु इस बार पुत्र रूप में ।

इस लड़की इमीलिया को जब वह जीवित थी, अपने लड़की होने से घोर असन्तोष था । उसने विवाह करने से इन्कार कर दिया था और लड़की होने की ग्लानि से २० वर्ष की वय में विष खाकर मर गई थी ।

अपने सन्देश के कुछ ही दिनों बाद उसने अपनी पूर्व की मां श्रीमती लारेन्स के गर्भ में प्रवेश किया । यथासमय वह पुत्र रूप में पैदा हुई । माँ-बाप ने उसका पोलो नाम रखा । इस लड़के पोलो की अनेक प्रवृत्तियाँ अब भी इमीलिया जैसी थीं । लड़का हो जाने पर भी उसके व्यक्तित्व में अनेक नारी सुलभ विशेषताएँ विद्यमान थीं, किन्तु था वह पूरी तरह लड़का ही ।

श्रीलंका की एक दो वर्षीया लड़की ने बताया कि पूर्वजन्म में वह लड़का था । परामनोवैज्ञानिकों ने उसके बारे में सुना तो सम्पर्क किया और खोजें कीं । उसके बताये हुए पूर्व जन्म सम्बन्धी विवरण प्रामाणिक पाये गए । अपने पूर्वजन्म में 'तिलकरत्न' नामक लड़का होने की बात उसने बताई थी । उस लड़के की जो-जो प्रवृत्तियाँ, गतिविधियाँ बताईं छानबीन कर उनकी पुष्टि हो गई । पता चला कि तिलकरत्न में नारी-सुलभ विशेषताएँ उस जीवन में ही विद्यमान थीं ।

यों, विज्ञान का हर विद्यार्थी जानता है कि प्रत्येक मनुष्य के भीतर उभयलिंगों का अस्तित्व विद्यमान रहता है । नारी के भीतर एक नर सत्ता भी होती है, जिसे ऐनिमस कहते हैं । इसी प्रकार हर नर के भीतर नारी की सूक्ष्म सत्ता विद्यमान होती है, जिसे ऐनिमा कहते हैं । प्रजनन अगों के गह्वर में विपरीत लिंग का अस्तित्व भी होता है । नारी के स्तन विकसित रहते हैं, परन्तु नर में भी उनका अस्तित्व होता है ।

कभी-कभी किसी व्यक्ति के भीतर छिपा यह विपरीत लिंगी व्यक्तित्व प्रबल हो उठता है । ऐसी स्थिति में कुछ शल्य-क्रियाएँ किए जाने पर परिवर्तन लिंग वाला व्यक्तित्व पूरी तरह उभर आता है । उसमें कोई भी असामान्यता नहीं शेष रहती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

अतः स्पष्ट है कि आत्मा न नर है न नारी । वह एक दिव्य सत्ता भर है, समयानुसार, आवश्यकतानुसार वह तरह-तरह के रंग-बिरंगे परिधान पहनती बदलती रहती है । इसी को लिंग व्यवस्था समझना चाहिए । सर्दी की ऋतु में गरम और भारी कपड़े पहनने की आवश्यकता अनुभव होती है और गर्मी में हल्के वस्त्र पहनने या नंगे रहने की इच्छा होती है । नर-मादा रूपी दो आवरण दो ऋतुओं के लिए हैं । आत्मा की जब रुचि होती है तब वह वैसे वस्त्र पहन लेता है । कभी गरम भारी कभी ठण्डे-झीने । कभी खट्टा स्वाद चखने की इच्छा होती है कभी-मीठा ।

मादा के जीवन का अपना आनन्द है और अपना स्तर उसे देखे समझे और अनुभव किए बिना आत्मा की तृप्ति नहीं होती । सो सब स्नेह, वात्सल्य, समर्पण सेवा की प्रवृत्तियाँ उभारने की शिक्षा लेनी होती है तो नारी के शरीर में प्रवेश करके उस तरह का अध्ययन, अनुभव, अभ्यास करना होता है और जब शौर्य, साहस पुरुषार्थ श्रम की कठोरता का शिक्षण आवश्यक होता है तब उसे नर कलेवर पहनना पड़ता है ।

मृदुलता और कठोरता के उभयपक्षीय समन्वय से जीवधारी की समग्र शिक्षा हो पाती है यदि वह एक ही योनि में पड़ा रहे तो उसके आधे ही गुणों का विकास हो पायेगा और उस अपूर्णता के रहते सर्वांगीण पूर्णता का लक्ष्य प्राप्त न हो सकेगा । अस्तु भगवान ने यह व्यवस्था बना रखी है कि जीवधारी कभी मादा शरीर में रहा करे कभी नर में यह परिवर्तन धूप-छांह जैसे उभयपक्षीय आनन्द की अनुभूति कराता है और जीवन के दोनों पहलुओं से परिचित ही नहीं अभ्यस्त भी रखता है ।

यह सोचना ठीक नहीं कि नर जन्म-जन्मान्तरों तक नर ही रहेगा और नारी को नारी ही रहना पड़ेगा । अभ्यास और रुचि परिपक्व हो जाय तो एक ढर्रा भी कई जन्मों तक चलता रह सकता है, पर यदि तीव्र उत्सुकता-उत्कण्ठा हो तो वह परिवर्तन अगले ही जन्म में हो सकता है । नर यदि नारी जैसी मनोभूमि और गतिविधियाँ अपना कर उस तरह की उत्कंठा तीव्र करे तो अगला जन्म उसे नारी के रूप में भी मिल सकता है इसी प्रकार नारी के लिए यह सर्वथा सम्भव है कि वह पुरुषोचित गतिविधियाँ और मनोवृत्तियाँ अपनाकर अगला परिवर्तन अपनी अभिलाषा के अनुरूप कर ले । यों प्रकृति के नियमानुसार बिना किसी प्रयत्न के भी यह परिवर्तन होते रहते हैं ।

शरीर शास्त्री यह तथ्य भली प्रकार जान गए हैं कि हर जीवधारी में नर और नारी की उभयपक्षीय सत्ता बीज रूप में विद्यमान रहती है । उसका जो पहलू उभरा रहता है उसी को समर्थ एवं सक्रिय रहने का अवसर मिलता है और दूसरा पक्ष प्रसुप्त स्थिति में पड़ा रहता है । यदि उभार दूसरी दिशा में बह निकले तो सुप्त पक्ष जाग्रत हो सकता है और जाग्रत को सुषुप्ति में चला जाना पड़ता है ।

सृष्टि में ऐसे अगणित जीवधारी विद्यमान हैं जिनमें नर और नारी के दोनों पक्ष समान रूप से सक्रिय होते हैं । वे एक ही जीवन में कभी नर और कभी मादा बनते रहते हैं । जब उनका जी आता है अपने संकल्प बल से नर बन जाते हैं और जब उमंग उठती है नारी स्वभाव ही नहीं, बिना किसी कठिनाई के नारी अंगों का भी विकास अधूरा नहीं होता, वरन् इस सीमा तक प्रखर होता है कि सन्तानोत्पादन भी भली प्रकार से हो सके । आज का नर कल नारी बन कर अपने पेट में गर्भ धारण करेगा और परसों बच्चे जनेगा यह बात विचित्र लगती है, पर है सर्वथा सत्य । कितने जीवों में यही प्रवृत्ति है और वे एक ही जीवन में इस प्रकार के उभय-पक्षीय आनन्द की अनुभूतियाँ लेते रहते हैं । उनके जीवन समुद्र में कभी नर का ज्वार आता है तो कभी नारी का भाटा । प्रकृति ने उन्हें इच्छानुसार आवरण बदलने की जो सुविधा दी है वैसी ही यदि मनुष्यों को भी मिली होती तो वे भी इस प्रकार का आनन्द, लाभ करते । इतना ही नहीं नर और नारी के बीच असमानता की जो खाई बन गई है उनके बनने का कोई कारण न रहता । फिर न कोई छोटा समझा जाता न कोई बड़ा । किसी को किसी पर आधिपत्य जमाने की खुराफात भी न सूझती ।

गोल्ड इस्मिट, रोश, हरीसन आदि प्राणिवेत्ताओं में तितलियों की कलम एक-दूसरे को लगाकर उनका लिंग परिवर्तन कृत्रिम रूप से सम्भव बनाकर दिखाया है । विज्ञानी डब्ल्यू. हीरम्स ने मछलियों की कई जातियाँ उभयलिंगी पायी है और कुछ प्रयोगों में छोटे ऑपरेशन करके उन्हें परिवर्तित लिंग का बनाया है । पक्षियों में भी लिंग परिवर्तन के ऑपरेशन बड़ी मात्रा में सफल हुए हैं ।

कुछ कीड़े होते हैं जो एक ही शरीर में बार-बार उभयलिंगी परिवर्तन करते रहते हैं । वे कभी नर बन जाते हैं कभी मादा । कीट विज्ञानी प्रो. ओरटन ने ऐसे जीवों की खोज की थी जो एक जन्म में कभी नर रहते हैं कभी नारी । ओइस्टर ऐसे जन्तुओं में अग्रणी हैं । वे मादा की तरह अण्डे देने के बाद एक मास बाद ही नर बन जाते हैं और उभयपक्षीय लिंग में रहने वाली विभिन्नताओं का आनन्द लूटते हैं । आस्ट्रिना, गिवासा, स्लग लाइयेकस जाति के जल चर भी उभयलिंगी रसास्वादन का क्रम परिवर्तन करते रहते हैं लिमेष्ट्रिया पतंगा भी इसी स्तर का है । वह कभी नारी होता है तो कभी नर ।

आयस्टर वर्ग-जाति का 'मोलस्क' घोंघा अपने लिंग परिवर्तन करता रहता है । कभी वह मादा होता है तो कभी नर । ४० साल की पूरी आयु यदि वह जी सके तो प्रायः एक दर्जन बार वह अपना लिंग परिवर्तन करता है ।

सृष्टि में ऐसे जीव-जन्तुओं की संख्या कम नहीं जो उभयलिंगी होते हैं । एक ही शरीर में शुक्र और डिम्ब उत्पन्न करने वाली ग्रन्थियाँ होती हैं । जब उनमें प्रौढ़ता आती है

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

तो प्रजनन स्राव अपने आप प्रवाहित होते हैं और रक्त संचार के सहारे उनको आत्मरति का आनन्द प्रजनन का लाभ मिल जाता है । ड्रोसोफिला मक्खी, हैब्रो ब्रेकन ततैये, सिल्क, ब्रम मोथ, वैक्स मोथ, जिप्सी मोथ, अलोकेसपिस, जैसे अनेक पतंगे उभयलिंगी होते हैं ।

प्रजनन क्रिया के लिए योनि संयोग भी आवश्यक समझा जाता है पर वनस्पति जगत में ऐसा संयोग बहुत कम, लगभग नहीं ही होते हैं । उनमें भी नर और मादा तो रहते हैं, परन्तु नये पेड़ पौधों का विकास, उद्‌भव बीजों से ही होता है । बीज गलकर अंकुर और पत्र पल्लवों के रूप में विकसित होता है और एक से अनेक बनने का क्रम अपना कर वही पुष्ट पौधा बन कर कितने ही नये बीज हर साल उत्पन्न करता है । यह प्रजनन क्रिया वनस्पति जगत की सर्वविदित परिपाटी है ।

गन्ना, गुलाब आदि अगणित पौधे उनके टुकड़े करके गाढ़ देने पर अलग-अलग पौधे बन जाते हैं । बट, गूलर जैसे वृक्षों की बड़ी डालियाँ भी नये पेड़ का रूप धारण करती हैं विकसित पुष्पों के पराग हवा में उड़ कर एक से दूसरे तक पहुँचते हैं । मक्खियाँ और तितलियाँ भी उनका स्थानान्तर करती रहती हैं, इस प्रकार पराग युगल परस्पर योग संयोग मिलाकर बिना रति क्रिया के अपनी वंश वृद्धि करते रहते हैं ।

छोटे जीवों में भी यह गुण होता है कि वे अपने शरीर से अपने ही सरीखी नई संतति उत्पन्न कर सकें । यों दूसरी जाति की उत्पत्ति तो सहज ही हो जाती है । पेट में सड़ा अन्न मलकृमि बनकर विष्टा के साथ निकलता है, शरीर पर चिपका हुआ मैल जुएँ, चीलर बनता है, जीवित या मृत शरीर का सड़ा हुआ माँस आँख से देखे जा सकने वाले कीड़ों के रूप में अनायास ही बदल जाता है । सड़े हुए फल और तरकारियों में भी उसी रंग रूप के कीड़े रेंगते देखे जा सकते हैं । यह प्रजनन ही है । सड़न को रतिक्रिया तो नहीं कह सकते और न उससे सहधर्मी जीव उत्पन्न होता है फिर भी इसे जीव उत्पादन तो कह ही सकते हैं । कीचड़ और गन्दगी में मक्खी, मच्छरों और रेंगने वाले कृमियों का उत्पन्न होना इसी स्तर का प्रजनन है ।

जिनकी गणना जीवधारियों में की जाती है ऐसे प्राणी भी अपने शरीर के ही टुकड़े बिखेर कर अपनी जाति के नये प्राणी को जन्म देकर विधिवत वंश वृद्धि करते रहते हैं । इसलिए उन्हें जोड़ा, ढूँढ़ने या रतिक्रिया का सहारा लेने की जरूरत नहीं पड़ती । अपना शरीर ही इसके लिए पर्याप्त होता है और उसी से उभयपक्षीय मिलन संयोग से लेकर प्रजनन तक की सारी आवश्यकताएँ सुचारु रूप से सम्पन्न होती रहती हैं । 'अमीबा' और 'डायटम' जीव इसी स्तर के हैं । उनमें जब प्रौढ़ता आती है तो अपने ही शरीर को फुलाकर उसका आधा भाग अलग छिटका देते हैं और वह एक स्वतन्त्र प्राणी बनकर अपनी अलग वंश परम्परा का संचालन करता है ।

जीवित कहे जाने वाले प्रत्येक जीवधारी या जीवाणु में मेटाबोलिज्म उपापच्य प्रजनन शक्ति होती है । सृष्टि में जीवधारियों का उत्पादन अभिवर्धन कैसे उत्पन्न हुआ इसका युक्ति संगत एकमात्र उत्तर यही हो सकता है कि आदि जीवाणुओं में अपने आपको विखण्डित करके सन्तानोत्पादन करने की सरलतम योग्यता विद्यमान थी । उसी के आधार पर जीवधारियों की संख्या बढ़ी और परिस्थितियों के अनुरूप उन्होंने अपनी काया तथा चेतना का विकास परिष्कार किया । रतिक्रिया का प्रचलन तो बहुत बाद में तब हुआ जब प्राणधारी एकलिंगी न रहकर द्विलिंगी बन गए और उन नर-मादा की जननेन्द्रियाँ स्पष्ट उभरीं तथा गर्भ धारण के योग्य हो गईं । इससे पूर्व अपने शरीर से विखण्डित होकर ही पीढ़ियाँ बढ़ाने का प्रचलन था । इसके आगे मध्यकाल में उभयलिंगी अन्तःस्राव मात्र उभय और पुष्प-पराग की तरह जीवधारी नर-मादा परस्पर स्नेह आलिंगन का क्रिया-कलाप गन्ध मादकता के आधार पर करने लगे थे । उतने से ही उनमें प्रजनन उपयोगी हलचलें उठ खड़ी होती थीं और सन्तान होने लगती थी यौन संसर्ग तो बहुत बाद की प्रगतिशीलता है ।

सेलों के भीतर भरे न्यूक्लिक एसिड के माध्यम से पूर्वजों की शारीरिक, मानसिक विशेषताएँ सन्तान में हस्तान्तरित होती हैं । एडमोसिन फास्टेट रसायन का होना प्रजनन योग्यता के लिए आवश्यक है । इन तत्वों को यदि प्राणियों में घटाया-बढ़ाया जा सके तो उनकी प्रजनन क्षमता का स्तर भी बदल सकता है । यह असम्भव नहीं कि क्षुद्र-जीव अनभ्यस्त रतिक्रिया अपनाने लगे और सुविकसित प्राणी जिनमें मनुष्य भी सम्मिलित हैं, अकेला, बिना सहचर के, बिना रतिक्रिया के सुयोग्य सन्तान का उत्पादन कर सकें ।

पेप्टाइड रसायन का यह विदित गुण है कि गरम करने पर वह पानी में घुलता है और ठण्डा होने पर छोटे पिण्ड की शक्ल धारण कर लेता है । बाहर से उपयुक्त रासायनिक भोजन मिले और उपयुक्त ऊर्जा का वातावरण मिले तो उनमें विभाजन की प्रजनन प्रक्रिया आरम्भ हो जाती है । इसी आधार पर जीवशास्त्री कृत्रिम जीवाणु उत्पन्न करने और उनमें वंश-वृद्धि का उपक्रम कराने के लिए प्रयत्नशील हैं ।

आये दिन ऐसी घटनाएँ सामने आती रहती हैं जिनमें नर के भीतर नारी के अथवा नारी के भीतर नर के यौन चिन्ह विकसित होते चले गए और स्थिति यहाँ तक जा पहुँची कि ऑपरेशन करके उनका लिंग परिवर्तन करना पड़ा । यह परिवर्तन इतना सफल रहा कि उन्होंने जोड़ा बनाया और सफल दाम्पत्य जीवन जीते हुए सन्तानोत्पत्ति भी की ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

मनोविज्ञान और अध्यात्म विज्ञान के आधार पर यह सिद्धान्त मान्यता प्राप्त है कि लिंग परिवर्तन के लिए मानवी प्रयत्न बहुत हद तक सफल हो सकते हैं । बहुत कुछ परिवर्तन तो इस जन्म में भी हो सकते हैं अन्यथा अगले जन्म में तो वह सम्भावना शत-प्रतिशत साकार हो सकती है । पुराणों में इस प्रकार के अगणित उदाहरण भरे पड़े हैं जिनमें व्यक्तियों ने अपने संकल्प बल एवं साधना उपक्रम के द्वारा लिंग परिवर्तन में सफलता प्राप्त की है । इन दिनों भले ही वे उपचार विस्मृत हो गए हों, इससे क्या, तथ्य तो जहाँ के तहाँ ही रहेंगे । आत्मा के सुदृढ़ संकल्प और प्रयत्न यदि प्रखर होगें तो किसी भी आत्मा के लिए अपना वर्तमान लिंग बदल लेने की पूरी-पूरी सम्भावना हो सकती है ।

कभी-कभी किन्हीं पुरुषों में नारी प्रकृति और नारियों में पुरुष प्रकृति पायी जाती है । उनके हाव-भाव, स्वभाव एवं आचरण में इस प्रकार का अन्तर स्पष्ट दिखाई पड़ता है । इसका एकमात्र कारण यह है कि पिछले दिनों उनकी मन्द इच्छा लिंग परिवर्तन की तो रही पर उनमें प्रौढ़ता प्रखरता नहीं आयी । यदि उनका संकल्प बल और प्रयत्न बलशाली रहा होता तो उन्हें इस प्रकार के आधे अधूरे परिवर्तन का सामना न करना पड़ता । इतने पर भी उनका प्रवृत्ति परिवर्तन की दिशा में ही मन चलता रहे तो यह आशा की जा सकती है कि इस विराम के उपरान्त वे अपनी अभीष्ट मनोवांक्षा के अनुरूप लिंग परिवर्तन का लक्ष्य अगले जन्म तक पूरा कर लेंगे ।

कभी-कभी ऐसी घटनाएँ भी सामने आयीं हैं जिनमें पुरुष के शरीर से भी बच्चों का जन्म हुआ है । भले ही वे भ्रूण अविकसित रहे हों और भले ही वे जुड़वाँ भाई समझे जा सकते हों पर उत्पत्ति तो नर शरीर से हो ही गई । इन उदाहरणों से यह तो सिद्ध होता ही है कि मात्र नारी के शरीर में ही नहीं, नर कलेवर में भी वह क्षमता मौजूद है कि गर्भ धारण करने से लेकर गर्भ-पोषण तक की क्रिया सम्पादन कर सके । अवसर मिले तो इस सम्भावना का अधिक विकास भी हो सकता है और नारी की तरह ही नर भी प्रजनन कर्म कर सकने में समर्थ हो सकते हैं ।

फ्रांस के एक १७ वर्षीय लड़के जीन जैक्यूस लोरेन्ट को छाती के दर्द की शिकायत थी । डॉक्टरों ने फेफड़े का ट्यूमर पाया और उसका ऑपरेशन किया, डॉक्टरों के आश्चर्य का ठिकाना न रहा जब उन्होंने ट्यूमर के स्थान पर ३ पौण्ड १५ ओंस वजन का एक विकसित अंगों वाला बच्चा निकला ।

ब्रिटिश पैथोलोजिस्ट ऐसोसियेशन के एक भ्रूण को लड़के का जुड़वाँ भाई बताया है जो गर्भ-काल में किसी प्रकार उसके शरीर में प्रवेश कर गया और वहीं बढ़ता पलता रहा ।

इसी प्रकार की एक घटना बरेली (उ. प्र.) के जिला अस्पताल में हुई । बदायूँ निवासी एक दो वर्ष के बालक का ऑपरेशन पेट का ट्यूमर समझ कर किया गया । पेट खोलने पर उसमें एक विकसित भ्रूण पाया गया जिसे अधिक अन्वेषण के लिए सुरक्षित रख लिया गया ।

नर के शरीर से बच्चे की उत्पति की अनेकों घटनाएँ बहुचर्चित हैं और उनके विवरण पत्र-पत्रिकाओं में विस्तारपूर्वक छपे हैं । सन् १९५६ में टोक्यो अस्पताल में एक किशोर लड़के के पेट का ऑपरेशन करके उसमें से ११ ओंस का अपरिपक्व बच्चा निकाला था । बच्चे की टाँगें, बाल एवं शरीर के अन्य भाग स्पष्ट थे । उसी साल सन् १९५६ में उत्तर वियतनाम के हनोई अस्पताल में एक पुरुष का ऑपरेशन करके बच्चा निकाला था जो जन्मते समय रोया भी था ।

सन् १९५४ में पाकिस्तान के बहावलपुर नगर के विक्टोरिया अस्पताल में डॉक्टरों ने एक पुरुष का पेट चीर कर बच्चा निकाला था ।

इन तथ्यों पर गहराई से विचार किया जाय तो इस निष्कर्ष पर पहुँचना पड़ता है कि नर और नारी के कलेवर करती और बदलती रहने पर भी आत्मा की स्थिति दोनों से ऊपर है अथवा उभयपक्षीय सम्भावनाओं से भरपूर है जो आज नर है वह कल नारी बनना पड़ सकता है । इसी प्रकार नारी को नर की भूमिका सम्पादित करने का अवसर भी मिलता है । यह आवरण सामयिक है और आत्मा का कोई लिंग नहीं होता । एक ही जीवात्मा अपने संस्कारों और इच्छा के अनुसार पुरुष या नारी, किसी भी रूप में वैसी ही कुशलता के जीवन जी सकता है । नर नारी के भेद, प्रवृत्तियों की प्रधानता के परिणामस्वरूप शरीर मन में हुए परिवर्तनों में भेद हैं । उनमें से कोई भी रूप श्रेष्ठ या निकृष्ट नहीं, अपने व्यक्तित्व के वजन, यानी गुण क्षमताओं और विशेषताओं के आधार पर ही कोई व्यक्ति उत्कृष्ट या निकृष्ट कहा जा सकता है, लिंग के आधार पर नहीं । व्यक्तित्व का कोई लिंग नहीं होता, उसकी प्रवृत्तियाँ और प्रकृति हुआ करती हैं, जो अन्तःकरण की मान्यताओं और संस्कारों का ही परिणाम है और जिनमें यथेष्ट परिवर्तन भी सम्भव है ।

चाहें तो नर बन जायें चाहें तो नारी छूट इतनी भर है

मार्कण्डेय पुराण में अनुसुइया के तीन पुत्र—चन्द्रमा, दत्तात्रेय और महर्षि दुर्वासा के जन्म का विवरण आता है । यह तीनों ही देव शक्तियों के अंशावतार थे उनकी चेतना का सम्बन्ध ब्रह्माण्ड की अदृश्य शक्तियों के साथ था जबकि शरीरों का निर्माण रासायनिक ढंग से हुआ था ।

कथा इस प्रकार है । एक बार सती अनुसुइया ने ऋतु स्नान किया । प्राकृतिक जीवन में रहने के कारण उनका सौन्दर्य वैसे ही अपरिमित था । स्नान के बाद तो जैसे स्वयं

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कामदेव ही उनके शरीर में उतर आये । रजोदर्शन के उपरान्त शृंगार किए हुए अनुसुइया को देखकर एकाएक महर्षि अत्रि का मन कामोद्वेग से विचलित हो उठा । इससे उत्पन्न हुए विकार को व्यर्थ न जाने देने के लिए उन्होंने तीन प्रकार के रसायन—(१) सतोगुणी—जिसे विष्णु का अंश कहते हैं (२) रजोगुणी—ब्रह्मा का अंश और (३) तमोगुणी—शिव का अंश, तैयार किए । यह तीनों एक प्रकार से अण्ड थे जिनमें उहोंने अपने वीर्य कोश स्थापित किए । भ्रूण के विकास के लिए उचित परिस्थितियाँ आवश्यक होती हैं इसलिए इन तीनों को बाद में उन्होंने अनुसुइया के गर्भ में बिना सम्भोग के प्रतिष्ठित किया । यही गर्भ अन्त में क्रमशः चन्द्रमा, दत्तात्रेय और दुर्वासा के रूप में जन्मे । इन तीनों सन्तानों में अपने-अपने रसायनों के प्रकृति गुणों के साथ दैवी-गुणों की बहुतायत थी ।

तामस मनु की उत्पत्ति भी इसी प्रकार स्वराष्ट्र नामक राजा के प्रभाव से एक हरिणी के गर्भ से हुई थी । इनमें शारीरिक दृष्टि से पशुओं के लक्षण होते हुए भी मानसिक दृष्टि से प्रकाण्ड पांडित्य था । नृपति स्वराष्ट्र ने यह विद्या बहुत तप करके पायी थी । उन्होंने पंचाग्नि विद्या का गहन अध्ययन, अन्वेषण और प्रयोग किया था ।

रावण स्वयं बड़ा वैज्ञानिक था । उसने भी अपनी मन्दोदरी के उदर से एक ऐसे ही भ्रूण को जन्म दिलाया था; पर पीछे उसने उसे असफल मानकर समुद्र में फिकवा दिया । इस भ्रूण की विलक्षणता यह थी कि उसमें लाखों वीर्य-कोश एक साथ विकसित हो गए थे । गर्भ में यह सम्भव न था कि वे सब बच्चे हो जाते । दबे रहने के कारण अविकसित रह गए इसीलिए यह प्रयोग असफल हो गया था । यही भ्रूण बहते-बहते एक पीपल की जड़ों में अटक गया । वीर्य कोशों में जीवन तो था ही । सम्मिलित भ्रूण छितर गया और वे सब पीपल का दूध चूस-चूस कर उसी तरह बढ़ने लगे जैसे कोई एक कोशीय जन्तु (प्रोटोजोन) विकसित होता है । आखिर समुद्री आहार ले लेकर यह सब एक लाख पुत्रों में परिणत हो गए। उनमें सबसे प्रथम बालक "नारान्तक" नाम से प्रख्यात हुआ शेष सब भाइयों को लेकर उसने "विहवावल" राजधानी बनाकर स्वतन्त्र राज्य स्थापित किया । यह सभी एक लाख भाई जुड़वाँ भाइयों के समान इतने मिलते-जुलते थे कि बाहर का कोई भी व्यक्ति उनमें से किसी की भी पहचान नहीं कर सकता था ।

अरब में पाये जाने वाले फायनिक्स पक्षी (यह पक्षी वहाँ रेगिस्तान में ६वीं शताब्दी तक पाये जाते रहे) के सम्बन्ध में भी एक ऐसा ही पौराणिक आख्यान आता है, जिसमें यह बताया गया है कि रेगिस्तान में एक जगह राख पड़ी हुई थी । एक सन्त ने उसमें से ही युवा फायनिक्स को बनाया । ऐसा लगता है इस राख में प्रजनन वाले कोई अंश रहे होंगे और सन्त उनका जीव-विज्ञान से सम्बन्ध जानते रहे होंगे तभी उनके लिए यह सम्भव हुआ होगा ।

रघुवंश में "युवनाश्व" नामक राजा एक बार जंगल में भटक कर ऋषियों के आश्रम में पहुँच गए, उन दिनों इस आश्रम में इस तरह का एक प्रयोग चल रहा था । विविध रसायनों से भरा एक घड़ा यज्ञ वेदी पर रखा गया था । यज्ञ के माध्यम से ऋषिगण उसमें उतारने का प्रयत्न कर रहे थे । घड़े का अधिकांश भाग जल था (स्मरण रहे प्रोटोप्लाज्मा जिससे जीवित शरीरों का निर्माण होता है उसमें अधिकांश भाग जल का ही होता है) रात में सब लोग सो गए । युवनाश्व भी यज्ञ मंडप के समीप ही सोये थे । रात में उन्हें प्यास लगी । वहाँ कहीं पानी नहीं दिखाई दिया । प्यास रोक सकने की स्थिति में भी वे नहीं थे निदान उस घड़े से ही लेकर जल उन्होंने पी लिया । अभिमंत्रित जल उनके उदर में गर्भ के रूप में बढ़ने लगा । ऋषियों के लिए यह और भी कौतूहल की बात हो गई थी, इसलिए वे बराबर युवनाश्व की देखभाल करते रहे । अन्त में पूर्ण विकास होने पर युवनाश्व की दाहिनी कोख की शल्य-क्रिया करके बच्चे को जीवित निकाला गया । यह बालक ही मान्धाता नाम से विश्व विख्यात हुआ ।

सुद्युम्न की कथा अग्नि पुराण में आती है, वह पुरुष से स्त्री बन गया था । तब उसका नाम "इला" हो गया । इला एक दिन राजकुमारी के वेश में वन-विहार के लिए निकली । सोम के पुत्र "बुध" ने उसे देखा तो वे कामासक्त हो उठे । उन्होंने "इला" को वहीं स्वीकार कर लिया । "बुध" उसी प्रकार की नक्षत्रीय शक्ति है जिस प्रकार सूर्य और चन्द्रमा । वह कोई पुरुष नहीं था । बुध की चेतना शक्ति ने ही इला के गर्भ में प्रवेश किया था । इसी अमैथुनी सहवास से पुरुरवा नामक प्रतापी राजा का जन्म हुआ । भारतीयों में गोत्रों के नाम सूर्यवंशी, चन्द्रवंशी आदि नाम से चलते हैं । यह इन्हीं आख्यानों से प्रारम्भ हुए हैं । अर्थात् यहाँ अमैथुनी सन्तानों का प्रचलन किन्हीं दिनों में सामान्य बात थी । यहाँ का वैदिक युग और पुराण काल दोनों ही विज्ञान की चरम प्रगति के काल थे । उन दिनों देव-शक्तियों के आवाहन और धारण द्वारा अमैथुनी सन्तानें उत्पन्न करने के सैकड़ों सफल प्रयोग हुए । यदि भारतीय अपने आपको यों प्रत्यक्ष देव-वंश का मानें, तो इसमें आश्चर्य जैसी कोई बात नहीं होनी चाहिए । प्रारम्भ के "स्वयंभू" पुरुष की उत्पत्ति भी तो ईश्वरीय ही है । उस पद्धति के बीच में भी कभी भी पुनः नया रूप देना सम्भव हो पाये तो उसमें किसी को आश्चर्य नहीं करना चाहिए ।

आज विज्ञान इस दिशा में तेजी से प्रयोग कर रहा है और एक दिन आने वाला है जब प्रयोगशालाओं में बच्चे पैदा होंगे और उपर्युक्त पौराणिक गाथाओं की पुष्टि करेंगे । आज जो लोग वेद-पुराणों को कल्पना की उड़ान कहते हैं वही उन्हें सत्य सिद्ध होते अपनी आँखों से देखेंगे ।

वैज्ञानिकों ने जीवित शरीर की इकाई प्रोटोप्लाज्मा का विश्लेषण कर लिया उसमें हाइड्रोजन, नाइट्रोजन, ऑक्सीजन,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

सिलिकन, कार्बन, सोडियम, कैल्सियम, क्लोरीन, गंधक, फॉस्फोरस, मैग्नीशियम और आयोडीन तत्व पाये जाते हैं उन सबको प्रकृति से प्राप्त किया जाना सम्भव हो गया है अब उसमें चेतना डालना भर शेष रह गया है जिस दिन यह भी हो जायेगा उस दिन अमैथुनी सन्तानों का निर्माण भी होने लगेगा । तब सन्तान के लिए न स्त्री की आवश्यकता होगी न पुरुष की, किन्हीं प्रकाश किरणों से कृत्रिम सन्तानें उसी प्रकार तैयार कर ली जाया करेंगी जैसे घड़े से कुम्भज ऋषि को पैदा कर लिया गया था । पैतृक गुणों की दृष्टि से यह सन्तानें देव-शक्तियों का ही प्रतिनिधित्व करेंगी ।

कोश (सेल) जीवित पदार्थों द्वारा बनाये जाते हैं । पहले भोजन का प्रोटीन बनता है फिर प्रोटीन से "सेल" । भोजन को निर्जीवन कहें और कोश (सेल) को जीवित तो प्रोटीन को उनके बीच की इकाई कहेंगे । प्रोटीन ही सजीव "सेल्स" का निर्माण करते हैं इसके बिना हाथ-पाँव, पेट, मुँह, दाँत आदि कुछ नहीं बन सकते । मुर्गी के अण्डों में प्रोटीन आश्चर्यजनक रूप से बढ़ता पाया गया है । इससे यह आशा हो गई है कि जिस प्रकार अन्न से अमीनो एसिड और अमीनो एसिड २४ तत्वों में बदलता हुआ जीवित कोश बन जाता है उसी प्रकार प्रोटीन सीधे भी रासायनिक क्रियाओं से तैयार किया जा सकता है । विशेषज्ञों का अनुमान है कि वंश परम्परा और विकास के लिए यह प्रोटीन की बनावट और विशेषता ही सहायक है । कोर्नेल विश्वविद्यालय और फेलर इन्स्टीट्यूट न्यूयार्क आदि में यह पता लगाया गया है कि न्यूक्लिक [तेजाब (जो लक्षण बीज (जीन्स) के मूल होते हैं)] और अमीनों एसिड्स दोनों के अणु मिलकर ही शरीर का भवन और चेतना तैयार करते हैं । जीवित सेल में प्रोटीन के उत्पादन का पता लगते ही अमैथुनी सृष्टि का निर्माण प्रारम्भ हो जायेगा ।

मियामी (फ्लोरिडा) विश्वविद्यालय के आण्विक विकास संस्थान के डॉ. सिडनी फॉक्स और उनके सहयोगियों का ध्यान उस ओर गया है जब पृथ्वी में पहली बार जीवन का आविर्भाव हुआ होगा । उस समय तो यहाँ गैस, ताप और पानी ही रहा होगा । इसलिए एक ऐसा थियेटर तैयार करके डॉ. फॉक्स परीक्षण कर रहे हैं जिसमें वैसा ही वातावरण रहे जैसा जीवन के प्रादुर्भाव काल में रहा होगा । उन्होंने देखा गैसों को गर्म करने से अमीनों अम्ल बनते हैं । इस अम्ल को गर्म करने से वह प्रोटीनायड का रूप ले लेता है । यदि उसमें पानी मिला दें तो एक ऐसा जटिल तत्व बन जाता है जो हमारे कोषाणुओं से बहुत कुछ मिलता-जुलता है । यदि जीवित सेल की इस तरह रचना सम्भव हो गई तो केवल उस ढाँचे का निर्माण ही शेष रह जायेगा जिसमें भर कर मनुष्य, पशु-पक्षी, कुत्ते, बिल्ली कोई भी आकृतियाँ बना लेना सम्भव हो जायेगा ।

समझा जाता है कि नर और मादा का संयोग होना संतानोत्पादन के लिए आवश्यक है । पर यह मान्यता बड़े आकार वाले विकसित जीवों पर ही एक सीमा तक लागू होती है । छोटे जीवों में अगणित जातियाँ ऐसी हैं जिनमें प्रजनन के लिए साथी की सहायता लेने की आवश्यकता नहीं पड़ती । अपने शरीर में रहने वाली उभय योनियाँ समयानुसार आप ही संयोग बना लेती हैं और उस आत्मरति से ही प्रजनन का अध्याय पूरा हो जाता है ।

पुरुष प्रजनन कोश (स्पर्म) में स्त्री और पुरुष दोनों के ही गुण सूत्र सम्भाव्य हैं, उसी प्रकार बिना पुरुष के समायोजन के अकेले अंड (स्त्री का प्रजनन कोश) की निषेचन क्रिया से भी सन्तान उत्पन्न की जा सकती है । स्मरणीय है गुण-सूत्रों का दुगना हो जाना ही गर्भाधान की क्रिया का कारण होता है ।

संसार के इतिहास में ऐसे उदाहरण सैकड़ों की संख्या में भरे पड़े हैं, जब केवल स्त्री ने ही सन्तान को जन्म दिया हो, अथवा पुरुष ने अकेले ही कोई बच्चा पैदा किया हो । स्त्री पुरुषों में से किसी का भी सहयोग न हो, ऐसे प्राणियों के जीवन की सम्भावनाएँ भी अब सत्य सिद्ध होने जा रही हैं और इस तरह विकासवाद के सिद्धान्त की धीरे-धीरे धज्जियाँ उड़ने जा रही हैं ।

एक ही शरीर में विद्यमान नर और नारी

आस्ट्रिया की एक खिलाड़ी युवती एरिका का लिंग परिवर्तन ऐसे ही हुआ था । १९६६ में जब वह १८ वर्ष की थी, बर्फ पर फिसलने की ओलम्पिक प्रतियोगिता में वह विश्व-चैम्पियन बन गई थी । १९६७ में पुनः वह प्रतियोगिता में भाग लेने की तैयारी कर रही थी । उसी क्रम में, सभी प्रतियोगियों के साथ उसकी भी शारीरिक जाँच हुई । तब डाक्टरों ने बताया कि तुम्हारे भीतर का पुरुष-व्यक्तित्व विकसित हो चुका है ।

एरिका खिलाड़ी थी । साहस उसमें भरपूर था । उसने विचार किया कि इस स्थिति में लड़की ही बनी रहने पर जीवन में अनेक कठिनाइयाँ आयेंगी । एक कठिनाई तो सामने ही थी । उसे यह कह कर प्रतियोगिता में भाग लेने से रोक दिया गया कि डॉक्टरी रिपोर्ट के नतीजों के आधार पर अब तुम्हें लड़कियों वाली प्रतियोगिताओं में सम्मिलित होने के अयोग्य ठहरा दिया गया है ।

एरिका ने अपना ऑपरेशन कराने का निर्णय कर लिया । सात महीनों तक ऑपरेशन और उपचार का क्रम चला । इसके बाद उसकी अस्पताल से छुट्टी हुई । अब वह एरिक नामक का एक पूर्ण विकसित लड़का था । नया जीवन वह उसी कुशलता से जीने लगा । उसने रीनेट नामक एक लड़की से १९७५ में विवाह किया । १९७६ में एरिक एक बच्चे का पिता बन गया । अपनी पत्नी और सन्तान के साथ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वह आस्ट्रिया के सेंट अरबेन शहर में सुखी गृहस्थ जीवन जी रहा है और एक होटल तथा बर्फ में फिसलने का प्रशिक्षण देने वाला एक स्कूल चला रहा है ।

अपने देश में सोलन शहर के निवासी जियालाल सुनार की तीसरी लड़की सुनीता के चार वर्ष की उम्र में ऑपरेशन के उपरान्त पुरुष बन जाने की घटना ताजी है । सितम्बर ७८ के प्रारम्भ में उसका ऑपरेशन छः डॉक्टरों ने किया । यह लड़की ४ वर्ष की थी । डॉक्टरों ने देखा कि उसके मूत्रमार्ग को पुरुषों के मूत्रमार्ग में बदलना एक ऑपरेशन द्वारा सम्भव है । दूसरे सभी लक्षण उसमें पुरुषों के ही विद्यमान थे । ऑपरेशन के बात सुनीता लड़का हो गई ।

आत्मा न स्त्री है न पुरुष, यह इस घटना से स्पष्ट हो जाना चाहिए । जीवसत्ता जिस प्रकार की इच्छा आकांक्षा करती है उसी के अनुरूप नया शरीर मिलता है, भारतीय दर्शन की यह मान्यता है । अचेतन मन में, व्यक्ति जिसका विश्लेषण अपने आप भी नहीं कर सकता यदि इस तरह की आकांक्षा प्रबलतम रूप में घुमड़ रही हो तो यह परिवर्तन इसी जीवन में परिलक्षित हो जाता है ।

१६३४ में प्रकाशित अपनी उपलब्धियों के प्रसंग में फ्रान्सीसी सर्जन डॉ. एम्ब्रोज पारे और मान्तेग्ने ने जार्म गार्नायर नामक एक १५ वर्षीय लड़की के एकाएक पुरुष योनि में बदल जाने की घटना का उल्लेख किया है । जार्मे गार्नायर का जन्म विट्री ले फ्रान्स में हुआ । वह प्रायः सुअर चराने का काम करती थी । १५ वर्ष की आयु में एक दिन वह जंगल में सुअर चरा रही थी । उसके सुअर किसी किसान के खेत में घुस गए । खेत के किनारे-किनारे ऊँची खाई थीं । जार्मे गार्नायर को पता चला तो वह भागी और रास्ते में पड़ रही खाई को लाँघने के लिए जोर से कूदी । कूदने पर उसे पेडू में जोर का धक्का लगा, जिससे उसे यह जान पड़ा मानो उसकी आँतें फटकर बाहर निकल पड़ी हों । लड़की दर्द से चीख उठी । कुछ लोगों ने उसे उठाकर घर पहुँचाया । डॉक्टरों को बुलाया गया । उन्होंने परीक्षा की और बड़े आश्चर्य के साथ घोषित किया कि लड़की-लड़का बन गई है । डॉक्टर ने निरीक्षण करके बताया कि उसके पेडू में पुरुष जननेन्द्रिय का विकास काफी दिनों से हो रहा था । डॉक्टरों ने इस बात पर आश्चर्य किया कि मनुष्य शरीर की मूलभूत इकाई में दोनों प्रकार के गुणसूत्र किस प्रकार पाये जाते हैं । इस घटना से सारे नगर में तहलका मच गया और वहाँ एक विशेष गीत गाया जाने लगा, जिसका यह अर्थ होता था—"जोर से मत उछलो नहीं तो लड़का बन जाओगी ।" इस घटना के बाद जार्मे गार्नायर का एक पादरी द्वारा विधिवत् नाम संस्कार कराया गया और तब वह जर्मेमेरिया हो गया ।

इंग्लैण्ड से छपने वाले साप्ताहिक पत्र 'पियर्सन' में एक लेख छपा जिसका शीर्षक 'कुमारी कौव कोवा से श्री कौवेक' है । कु. जेकंन कौवकोवा चेकोस्लोवाकिया की प्रसिद्ध महिला खिलाड़ी थी । यौवन में प्रवेश करते समय नारियों के विशेष लक्षण उभरते हैं पर इनके साथ उल्टा ही हुआ । प्रारम्भ में स्तन थे, वह छोटे होने लगे । पेडू में उन्हें प्रायः दर्द हुआ करता । डॉक्टरों को दिखाने पर पता चला कि उनके शरीर में पुल्लिंग विद्यमान है, तब उन्होंने अपना ऑपरेशन कराया । आपरेशन में कोई कष्ट नहीं हुआ और वे विधिवत स्त्री से पुरुष बन गई ।

यह घटनाएँ यह बताती हैं कि मनुष्य के शरीर का विकास करने वाला पहल कोश (सेल) स्त्री-पुरुष दोनों की सम्भावनाओं से परिपूर्ण था । लिंग वाले लक्षण-बीज (जीन्स) में से पहले एक उभार में आया पीछे दूसरे ने उभार कर लिया और उस मनुष्य ने इसी शरीर में यौन परिवर्तन कर लिया ।

अनेक बार शारीरिक दृष्टि से यौन परिवर्तन नहीं होता शरीर पुरुष का ही रहता है पर गुणसूत्र (क्रोमोसोम्स) स्त्री के गुणों वाले विकसित हो जाते हैं, ऐसी अवस्था में पुरुष शरीर में रहने वाली चेतना भी स्त्रियों जैसे काम करती रहती है, उसे उसी में अच्छा लगता है, कदाचित यह पद्धति बदलनी पड़े तो उसमें उसे दुःख होता है । ऐसी अनेक घटनाएँ 'मिस्ट्रींग ऑफ सेक्स' नामक पुस्तक में श्री सी. जे. एस. टामस द्वारा दी गई हैं ।

पेरिस के एक सरकारी पदाधिकारी में यह गुण असाधारण रूप में था । वह अपनी ड्यूटी के घण्टों के अतिरिक्त जब घर में होता तो प्रायः हमेशा ही स्त्रियों के कपड़े पहनता, वैसी ही बातचीत करता, मुख के हाव-भाव भी बिल्कुल स्त्रियों जैसे ही होते । १६२६ में वह कई दिन तक घर से बाहर नहीं निकला तब पुलिस ने सन्देह में घर का ताला तोड़ा । उसने आत्म-हत्या कर ली थी । मृत्यु के कारणों का तो पता नहीं चला पर छत से लटकने तक वह जो वस्त्र पहने था, उनसे नारी-वृत्ति का गहरा परिचय मिलता है । अन्य वस्त्रों की बात तो दूर रही, उसने अण्डरवियर और मोजे दस्ताने भी स्त्रियों के ही पहने थे । बाल भी वह स्त्रियों जैसे ही सजाये हुए था ।

१६२३ में अमेरिका में एक दुर्घटना घटी । टेस्मर नामक दम्पत्ति पर किन्हीं बदमाशों ने आक्रमण कर दिया । आक्रमणकारियों में एक स्त्री भी थी, जिसे श्रीमती टेस्मर ने पहचान लिया । प्रयत्न करने पर पुलिस ने एक शोफर और उसकी पत्नी को गिरफ्तार कर लिया, गिरफ्तार स्त्री को श्रीमती टेस्मर ने पहचान भी लिया । जेल में रह रही वह स्त्री तब लोगों के आश्चर्य का कारण बनी, जब लोगों ने देखा कि उसके दाढ़ी मूँछें निकलनी प्रारम्भ हो गईं, पुलिस ने जाँच की तो पता चला वह बदमाश पुरुष है । उसे स्त्री वेश, हाव-भाव इतने पसन्द थे कि वह छोटी अवस्था से ही स्त्रियों जैसे रहता, इस पर घर वालों ने उसे निकाल दिया ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

१९१२ में उसने इण्डियाना के एक पुरुष से विवाह कर लिया । उसका गला बिल्कुल स्त्रियों जैसा था, इसलिए उसे कई बार स्त्रियों के मध्य गाने का भी अवसर मिला । १२ वर्ष बाद उसने एक लड़की से भी विवाह कर लिया इस पर उसका पति नाराज हुआ पर बाद में तीनों साथ-साथ रहने को सहमत हो गए । टामस नामक लेखक ने इस व्यक्ति के सम्बन्ध में लिखा है, उसमें पुरुषत्व के कोई भी लक्षण नहीं थे ।

इंग्लैण्ड की 'बैबीजेम्स' तो इतिहास की एक मनोरंजक घटना बन गई थी । बैवीजेम्स को पुरुषत्व के हाव-भाव बहुत पसन्द थे । उसने अपना स्त्रीत्व आजीवन छिपाये रखकर हॉस्पिटल में डॉक्टर का काम किया । कॉलेज के दिन भी उसने पुरुष वेश में ही बिताये । १८१९ में वह स्टाफ सर्जन के रूप में भरती हुई और उन्नति करते हुए, १८५१ में डिप्टी इन्स्पेक्टर जनरल, १८५८ में इन्स्पेक्टर जनरल के उच्च पद तक पहुँची । जब उसकी मृत्यु हुई तब जाकर पता चला कि आजीवन पुरुष का सफल अभिनय करने वाला इन्स्पेक्टर जनरल पुरुष नहीं, स्त्री था ।

इतिहास के यह पृष्ठ हमें यह सोचने के लिए विवश करते हैं कि शरीर का आत्मा के लिए कोई महत्त्व नहीं । चेतना मन और विचार है और वह इच्छानुसार स्त्री या पुरुष हो सकता है । इच्छाएँ यदि अविकसित रहें तो परिवर्तन एक शरीर में से ही दूसरे शरीर में हो सकता है ।

कुछ दिन पूर्व अमृत बाजार पत्रिका में एक समाचार छपा था कि हैदराबाद (सिन्ध) की शेरपुर रियासत में गम्बात के पास के छोटे से गाँव में काबू नामक १८ वर्षीय लड़का अचानक लड़की हो गया । इसे अब स्त्रियों की तरह मासिक धर्म भी होने लगा है और वह स्त्री के समान गर्भ धारण करने की क्षमता से भी परिपूर्ण है, जबकि जन्म से उसके शरीर में ऐसी कोई सम्भावनाएँ न थीं ।

विकासवाद में अंगों और जन्तुओं के लुप्त होकर दूसरे जीवों में क्रमिक रूप से विकसित हो जाने की समय-सारणियाँ बड़ी लम्बी हैं । कई-कई परिवर्तन तो एक-एक लाख वर्ष में होते बताये गए हैं, जिनकी सत्यता कभी भी प्रामाणिक नहीं हो सकती । उस समय का कोई जैविक (बायोलॉजिकल) इतिहास उपलब्ध न होने से यह नहीं कहा जा सकता कि विकास की कल्पना सत्य होगी ही । हड्डियों और ढाँचों के बारे में समय सम्बन्धी मान्यताएँ गलत भी हो सकती हैं पर यह प्रत्यक्ष घटनाएँ तो इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि आत्म-चेतना अपने आप में विलक्षण शक्ति है और वह इच्छानुसार शरीर धारण करने में समर्थ है । कई बार इच्छाएँ स्वयं अनिर्णीत रह जाती होंगी और इस तरह वह ऐसे गुणसूत्रों में फँस जाती होंगी, जिनमें स्त्री व पुरुष दोनों के वंश-बीज विद्यमान रहते होंगे । शरीर में आकस्मिक परिवर्तन इसी आधार पर होना सम्भव है । नील्स होयर ने 'मैन इन्टू वूमैन' नामक ग्रन्थ में ऐसी अनेक घटनाएँ प्रस्तुत की हैं और अपनी सम्मति देते हुए लिखा है—"यह घटनाएँ सचमुच मानव जीवन के अस्तित्व को और भी रहस्यपूर्ण बनाती हैं । लगता है कोई ऐसी सत्ता प्रकृति में काम कर रही है, जो अपने आप व्यक्त होने में समर्थ है उसका स्वरूप और शरीर विचारमय ही हो सकता है ।"

ऐसी घटनाएँ भारतीय संस्कृति के इतिहास में भी कम नहीं हैं, महाभारत में शिखण्डी के स्त्री से पुरुष में परिवर्तित होने का वर्णन आता है । पांचाल नरेश द्रुपद को रुद्र के आशीर्वाद से एक कन्या हुई । रुद्र की आज्ञानुसार राजा द्रुपद और उनकी रानी के अतिरिक्त यह भेद और किसी को भी प्रकट न हुआ । शिखण्डी का पालन-पोषण राजकुमारों की तरह ही हुआ । युवावस्था में पदार्पण करते ही राजा द्रुपद ने शिखण्डी का विवाह दशार्ण के सम्राट हिरण्यवर्मा की पुत्री से कर दिया, किन्तु राजकुमारी को शिखण्डी के सम्पर्क में आते ही पता चल गया कि वह स्त्री है । उसने यह बात अपने पिता तक पहुँचा दी । शिखण्डी को इस बात का पता चला तो उसने दुःखी होकर गृह-परित्याग कर दिया, वह वन में जाकर तप करने लगा । तप करते हुए शिखण्डी की व्यथा स्थूणाकर्ण नामक यक्ष को मालूम हुई । उसने शिखण्डी की शल्य चिकित्सा की और उसे पुरुष बना दिया ।

सूर्य पुत्र वैवस्वत मनु के पुत्र का नाम सुद्युम्न था । सुद्युम्न एक बार जंगल की ओर गए । वहाँ शिव व पार्वती एकान्तवास में थे । सुद्युम्न की उस समय स्त्रियों की तरह काम-वासना भड़की । यों पौराणिक कथा यह है कि शिव ने शाप देकर उसे स्त्री बना दिया पर ऐतिहासिक तथ्य यह है कि शिव ने औषधि द्वारा उसके प्रसुप्त नारीत्व के लक्षणों को जाग्रत कर दिया था । इससे वह लड़की बन गया और उसका नाम "इला" पड़ गया । महान् सौन्दर्यशाली राजकुमार पुरुरुवा का जन्म इस यौन परिवर्तित इला के गर्भ से ही हुआ था ।

यह पौराणिक गाथाएँ पढ़कर लोग भारतीय धर्म और उसकी आख्यायिकाओं को कल्पना की विलक्षण उड़ान कहकर हँसते और टालते हैं, पर जब वही बात विज्ञान और वर्तमान प्रमाणों के द्वारा सत्य होती दीख पड़ती है, तब वेदांग और पुराणों की वैज्ञानिकता को स्वीकार नहीं किया जाता । वही बातें भारतीय संस्कृति और अध्यात्म के लिए अन्ध-विश्वास बन जाती हैं, जबकि विज्ञान के लिए सत्य और तथ्य । बातें दरअसल दोनों ही एक हैं ।

इंग्लैण्ड में मिडिल ग्रेट स्ट्रीट पारमाउथ नगर की दो बहिनों की घटना बड़ी विलक्षण है । इनका नाम था मार्जोरी और डेजीफेरो । जार्जोरी तब १३ वर्ष की थी एक आर्ट-कॉलेज में पढ़ती थी, तभी उसे अपनी आवाज कुछ भारी और शरीर में विचित्र परिवर्तन से अनुभव हुए । विवश होकर उसे डॉक्टरों की शरण लेनी पड़ी । डॉक्टरों

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ने उनके शरीर में पुरुषत्व के लक्षण उभरते देखे । लन्दन के एक अस्पताल में उसकी चिकित्सा हुई और वह लड़की से लड़का बन गई । अब उसका नाम मार्क रखा गया ।

मार्क और डेजो फेरो कुछ दिन भाई-बहिन की तरह रहे पर इसी बीच मार्क वाली शिकायत उसे भी उठ खड़ी हुई और उसका भी डॉक्टरों को ऑपरेशन करना पड़ा । मार्क की तरह डेजी फेरो भी लड़का बन गई । उसका नाम डेविड रखा गया दोनों बहिनें, दो भाई हो गए और दोनों ने बाद में पुनः लड़कों के स्कूल में साथ-साथ शिक्षा ग्रहण की ।

इस घटना के पीछे भी वही रहस्य है, जो उन पौराणिक घटनाओं के पीछे । इन्हें कोई भी व्यक्ति अन्धविश्वास नहीं कहता, क्योंकि यह आधुनिक हैं । यदि यह घटनाएँ सत्य हैं तो भारतीय अध्यात्म की आख्यायिकाओं को भी सत्य ही मानना पड़ेगा । पुराणकाल विज्ञान के विकास का चरम काल था, उस समय इन घटनाओं द्वारा वही बातें प्रामाणित की गई थीं, जो आज की जा रही हैं । अमैथुनीं सृष्टि वस्तुतः आत्म-चेतना का यथार्थ इतिहास है, उसमें गहन आध्यात्मिक रहस्यों का प्रवेश है, जिन्हें विज्ञान क्रमशः खोलता चला जा रहा है ।

नर और नारी के बीच की खाई न्यायोचित नहीं

नर और नारी के बीच आज जो खाई और टीले जैसा अन्तर उत्पन्न कर दिया गया है उसमें तथ्य कम और आडम्बर बहुत हैं । दोनों ही प्रकृति के परम प्रिय परस्पर पूरक घटक और भगवान के दायें-बायें नेत्र हैं । उनमें मानवी विशेषताओं और अधिकारों की दृष्टि से कोई अन्तर नहीं है । एक मनुष्य प्राणी के दो अविच्छिन्न पहलू हैं । उनमें नीचे-ऊँचे या बड़े-छोटे होने का तो कोई प्रश्न ही नहीं उठता । दोनों की उपयोगिता और गौरव गरिमा अपने-अपने स्थान पर अग्रणी ही मानी जा सकती है उनके बीच विभेद की दीवारें खड़ी करना, नर को उपभोक्ता और नारी को उपभोग्या मानना किसी भी दृष्टि से न्यायोचित नहीं माना जा सकता है और न उन प्रथा परम्पराओं का समर्थन किया जा सकता है जो नर को वरिष्ठ एवं नारी को कनिष्ठ ठहरा कर उनके बीच अधिकारों का, कर्तव्यों का भेदभाव उत्पन्न करते हैं । दोनों को समान न्याय मिलना चाहिए और दोनों को समान मर्यादाओं एवं प्रतिबन्धों का पालन करना चाहिए । एक को विशेष छूट या सुविधा मिले, दूसरे को उससे वंचित रखा जाय यह सरासर पक्षपातपूर्ण अन्याय है ।

नारी को गर्भ धारण करना पड़ता है और उस पर पड़ने वाले इस अतिरिक्त भार को उसे अधिक सुविधा एवं सम्मान देकर उसकी भरपाई करता है, यह न्याय विभाजन है । इसमें नर का नारी पर कोई ऐसा अहसान नहीं है जिसके बदले उसे अपने को श्रेष्ठ कहने, अतिरिक्त सुविधा चाहने, धोंस-पट्टी दिखाने या अहसान जताने का अधिकार दिया जा सके । विवाह एक ऐसा पवित्र समझौता है जिसमें रतिक्रिया को वैध छूट इसी आधार पर मिलती है कि नारी यदि गर्भ धारण करेगी तो उस पर पड़ने वाले अतिरिक्त भार की क्षतिपूर्ति विशेष सहायता के रूप में नर को करनी पड़ेगी । यदि नारी गृह व्यवस्था सँभालती है तो नर को उपार्जन का उत्तरदायित्व वहन करना पड़ेगा । पृथ्वी पर अनेक क्षेत्र ऐसे भी हैं जहाँ नर गृह-व्यवस्था सँम्भालते हैं और नारी उपार्जन करती हैं । इस विभाजन के कारण किसी पक्ष को वरिष्ठ या निकृष्ट नहीं कहा जा सकता । आज नर-नारी के बीच जो भारी अन्तर खड़ा हो गया है उन्हें न्याय और विवेक को साक्षी देकर अविलम्ब विस्मार किया जाना चाहिए ।

लिंग भेद मनुष्य की सामयिक परिस्थिति है पत्थर की लकीर नहीं । प्रकृति आये दिन ऐसे परिवर्तन करती रहती है जिनमें नर को नारी एवं नारी को नर के रूप में बदलाव होता रहा है । जन्मान्तर में तो प्रकृति रुचि या रुझान के आधार पर लिंग परिवर्तन होता ही रहता है । इसी शरीर में—उसी जन्म में ऐसे परिवर्तन होते रहते हैं । पुराने जमाने में ऐसे हेर-फेर, लज्जा और संकोच के कारण छिपा कर रखे जाते थे इसलिए उनकी चर्चा नहीं होती थी । अब अस्पतालों की सुविधा तथा लिंग परिवर्तन को हेय अभिशाप माने जाने की बात नहीं रही इसलिए वैसी घटनाएँ आये दिन पत्र-पत्रिकाओं में छपती रहती हैं और सामने आती रहती हैं ।

कानपुर के यू. एच. ए. अस्पताल में बस्ती जिले के गंगनाही गाँव का एक अठारह वर्षीय युवक का यौन ऑपरेशन करके उसे स्त्री घोषित किया गया । उसने अपना नाम सद्दू से बदलकर साधनाकुमारी रखा । एक साल पहले से ही उसमें यौन परिवर्तन के लक्षण उत्पन्न हो रहे थे, जिससे उसे कष्ट रहता था । अस्पताल में भर्ती होने के बाद विशेषज्ञ डॉक्टरों ने वस्तुस्थिति को समझा और उसका यौन ऑपरेशन किया । ऑपरेशन के बाद उसके वक्षस्थल तथा दूसरे अंगों में नारी सुलभ परिवर्तन तेजी से आरम्भ हो गए ।

यों तो यौन परिवर्तन का प्रथम ऑपरेशन जनवरी १९५५ में अमेरिका में हुआ था, पर इसके उपरान्त वह सिलसिला तेजी से चला । जिन्हें यौन विकृतियाँ थीं, वे आज लज्जा वश अपनी बात किसी के सम्मुख प्रकट नहीं कर पाते थे, पर इस सफलता से अनेकों की हिम्मत बढ़ी और अनुमानतः संसार भर में अब तक ७० हजार लोगों ने अपने ऑपरेशन कराकर लिंग परिवर्तन किया है । इनमें से २० हजार अकेले अमेरिका में ही हुए हैं । डॉ. आर. विनियर ने इस सम्बन्ध में बहुत ख्याति प्राप्त की है ।

ऐसे ऑपरेशन मात्र उन्हीं के होते हैं जिनमें पहले से ही उभयपक्षीय चिन्हों का प्रकट अस्तित्व है । आवश्यक नहीं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

कि यह स्थिति जन्मजात ही हो । मनोभूमि बदलने अथवा शारीरिक ज्वार-भाटों में किसी विशेष प्रकार का उफान आने से प्रजनन अंग भी नई दिशा में विकसित होने लगते हैं । यह ढलान इन दिनों नारीत्व की ओर अधिक है । इसलिए परिवर्तन भी उसी दिशा में अधिक हुए हैं और ऑपरेशन के उपरान्त मात्र जननेन्द्रिय के परिवर्तन नहीं हुए वरन् सन्तानोत्पत्ति के तद्नुरूप उपक्रम भी चल पड़े हैं ।

शुक्राणुओं का डिम्बाणुओं में बदल जाना सरल है जबकि नये शुक्राणुओं का उत्पादन कठिन । जनखों में से अधिकांश में स्त्री प्रधान प्रवृत्तियाँ अधिक पायी जाती हैं जबकि उनमें पुरुषत्व प्रधान कम ही होते हैं ।

यहाँ एक विशेष रूप में आश्चर्यजनक बात यह है कि खिलाड़ी महिलाओं ने पुरुष बनने के प्रयास विशेष रूप से किए क्योंकि उनमें पौरुष की प्रवृत्ति पहले से ही अधिक परिपक्व हो चुकी थी और वे अपने को पुरुष वर्ग के अधिक निकट पाती थीं । चैकोस्लोविया की धावक टेन्डा काडव कोवा उत्तरी कोरिया की दौड़ चैम्पियन सिनाडेनडिन—ने इस सम्बन्ध में प्रयास किए और वे सफल रहीं । सन् १९७४ में भारत की हॉकी प्रतियोगिता में मूर्धन्य महिला बलजीत कौर को भी ऐसी ही सफलता मिली ।

विज्ञान इस सम्बन्ध में अधिक गम्भीरता से शोधरत है कि क्या नारी को पुरुष वर्ग में परिवर्तित करने में अधिक सफलता पायी जा सकती है । क्योंकि शारीरिक श्रम की दृष्टि से वे ही अधिक समर्थ और निडर पाये गए हैं, स्त्री दिशा में परिवर्तन होने के उपरान्त उनकी कार्यक्षमता में किसी सीमा तक घटोत्तरी ही होती है ।

इसी प्रकार अन्य कितनी ही प्रजातियाँ ऐसी हैं जो आवश्यकतानुसार लिंग परिवर्तन करती रहती हैं ।

इसका एक कारण मांस भक्षण के समय नर के हार्मोन नारी शरीर में और मादा पशु के हार्मोन नर शरीर में जा पहुँचना भी है । इस कारण ही असमय में ही वे उभार उठने लगते हैं जो परिपक्व आयु में उठने चाहिए, किन्तु समय से बहुत पहले ही परिवर्तन के चिन्ह प्रकट करने लगे ।

हार्मोनों में स्त्री-पुरुष को और पुरुष हार्मोन स्त्री को इन्जेक्ट करके उनकी प्रवृत्तियाँ एक सीमा तक परिवर्तन हो सकती हैं । विशेषतया मूँछ के बालों की घट-बढ़ और स्तनों का उभार अधिक सरलता से हो सकता है । जननेन्द्रिय में परिवर्तन उसी दशा में सम्भव हैं जब दोनों प्रकार के चिन्ह पहले से ही मौजूद हों । अब ये परिवर्तन उतने विचित्र नहीं माने जाते जितने कि तीन दशक पूर्व माने जाते थे ।

जम्मू-कश्मीर शिक्षा विभाग की एक अधिकारी श्रीमती लक्ष्मीदेवी का ४५ वर्ष की आयु में यौन परिवर्तन सम्बन्धी ऑपरेशन बम्बई में हुआ और उन्हें पुरुष घोषित कर दिया गया । तदनुसार उन्होंने अपना नाम लक्ष्मीकान्त बदल दिया । कुछ समय उपरान्त उन्हें विवाह की आवश्यकता अनुभव होने लगी अन्ततः उनका विवाह एक अध्यापिका के साथ धूमधाम से सम्पन्न हुआ जिसमें कितने ही सम्भ्रान्त लोग उपस्थित थे ।

जौहान्सवर्ग दक्षिणी अफ्रीका में रोविन एलवी नामक एक पत्रकार ने मुरीलपीटरसन नामक एक महिला के साथ विवाह किया था । वधू कुछ वर्ष पूर्व तक पुरुष थी । पीछे यौन परिवर्तन के चिन्ह प्रकट होने पर उसे ऑपरेशन कराना पड़ा और नारी वर्ग में सम्मलित होना पड़ा ।

इस विवाह समारोह में शरीनओजर नाम की महिला ने विशेष उत्साहपूर्वक भाग लिया वह स्वयं भी ठीक इसी प्रकार ऑपरेशन कराके पुरुष से नारी बनी थी ।

माधवापुर (दरभंगा) के निकटवर्ती ग्राम तुलस्थाही के एक युवक में क्रमशः युवती के सभी चिन्ह विकसित होते चले गए । यौन परिवर्तन के ऑपरेशन जैसी स्थिति तो नहीं आयी पर उसकी शारीरिक स्थिति को देखते हुए नारी वर्ग में ही सम्मिलित कर लिया गया और उसे गृह कार्य सौंप दिए गए ।

दक्षिण सालभारा (असम) से ८ मील दूर हमीदाबाद गाँव में एक ऐसे शिशु का जन्म हुआ जिसमें लड़की और लड़के जैसी दोनों ही प्रकार की जननेन्द्रियाँ मौजूद थीं । डॉक्टरों का कहना है कि समयानुसार एक जननेन्द्रिय इनमें से विकसित होगी और दूसरी अविकसित रह जायेगी । तभी निश्चित रूप से इसका लिंग घोषित किया जा सकेगा ।

आश्चर्य यह है कि इसी परिवार में ३० वर्ष पूर्व ठीक ऐसे ही उभयलिंगी बच्चे का जन्म हुआ था जोकि किशोर अवस्था तक तो लड़की रहा पीछे तेजी से स्वयंमेव यौन परिवर्तन शुरू हो गया और २० वर्ष की आयु तक पहुँचने पर वह पूर्ण पुरुष बन गया । पीछे उसका विवाह भी हुआ और बच्चे भी उत्पन्न हुए ।

लन्दन में प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय लिंग परिवर्तन गोष्ठी सम्पन्न हुई जिसमें संसार भर में बढ़ते हुए यौन परिवर्तन की समस्या पर गम्भीरतापूर्वक विचार किया गया । उपलब्ध आँकड़ों के अनुसार अब तक संसार भर में ऐसे ऑपरेशनों की संख्या दस हजार से भी ऊपर चली गई है । अमेरिका में यह उभार संसार भर में सबसे अधिक तेज है । वहाँ केवल इन्हीं ऑपरेशनों, उपचारों और परामर्शों के लिए छः अतिरिक्त स्वास्थ्य केन्द्र स्थापित करने पड़े हैं । रिपोर्ट में यह बताया गया है कि शारीरिक परिवर्तन से पूर्व मानसिक परिवर्तन की स्थिति उभरती है और भिन्न लिंग के लिए प्रयुक्त होने वाली पोशाक मन को भाने लगती है । ऐसे लड़के-लड़कियों की और लड़कियाँ लड़कों की पोशाक पहनना, वैसे ही शब्दोच्चर तथा हाव-भाव प्रकट करने में रुचि लेते हैं ।

प्राणि जगत में ऐसी अनेक जीव जातियों का अस्तित्व है जिन्हें उभयलिंगी कहा जा सकता है । बाहर से उनकी

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जननेन्द्रिय जिस लिंग की दिखाई पड़ती है भीतरी मर्म स्थलों में उससे ठीक विपरीत स्तर के प्रजनन अवयव पाये जाते हैं । भीतर और बाहर के उस विपरीत स्तर को देखते हुए उन्हें उभयलिंगी घोषित करना पड़ता है ।

नर के पौरुष का मूल कारण—टेस्टीज होती है जिसमें शुक्राणु उत्पन्न होते हैं । मादा के अन्दर ओवरी होती है जिसमें डिम्बाण्ड बनते हैं । इसी आधार पर उनके बीच नरमादा के लक्षणों का विकास होता है । पर उभयलिंगी प्राणी इसके अपवाद हैं । उनके भीतर टेस्टीज और वह मादा जननेन्द्रिय पायी जाती है इसी प्रकार भीतर ओवरी रहने पर नर आकृति की जननेन्द्रिय बनी होती है । इन प्राणियों की जननेन्द्रिय रतिक्रिया में विपरीत लिंगी भूमिका सम्पादित करती है, किन्तु प्रजनन की दृष्टि से दोनों समान स्तर के बने होते हैं । दोनों ही बच्चे जन सकते हैं । ऐसी दशा में बाहर से नर समझे जाने वाली को ही माता बनना पड़ता है और बाहर से मादा दीखने वाला जीव बिना बच्चों-कच्चों का झंझट सिर पर लादे हुए मौज करता रहता है ।

प्रचलित परम्परा के अनुसार पिता के शुक्राणु और माता के स्त्री बीज मिलने से सन्तान उत्पन्न होती है । अगले दिनों इस प्रक्रिया में यह परिवर्तन, पूर्ण सम्भव माना जा रहा है कि बिना नर की सहायता के नारी स्वयं ही अपनी सन्तान की माता और पिता दोनों बन सके ।

यह प्रयोग अन्य प्राणियों पर एक सीमा तक सफल भी हो चुका है । कुछ मुर्गियाँ बहुत समय से ऐसे अण्डे देती चली आ रही हैं जिनकी उत्पत्ति नर संयोग बिना ही होती हैं, किन्तु वे अण्डे निर्जीव इस अर्थ में होते हैं उनसे बच्चा उत्पन्न नहीं हो सकता यद्यपि अन्य गुण जीवोत्पादक अंडों की तरह ही होते हैं । अब उन मुर्गियों के उत्पादक रसों में थोड़ा हेर-फेर करके उन्हें इस योग्य बनाया गया है कि उन पितृ रहित अण्डों से बच्चे भी उत्पन्न हो सकें और मुर्गी अपनी सन्तान की एकमात्र स्वत्वाधिकारी सिद्ध हो सके । ऐसे प्रयोग बतखों पर भी सफल हुए हैं । उन्होंने स्वावलम्बी होकर अंडे देना आरम्भ किया है । इस परिवर्तन प्रयोग में शरीर का 'डिजार्किस राइट जोनुक्लिक' अम्ल प्रधान भूमिका प्रस्तुत करता है । उसकी कुछ मात्रा नर से लेकर मादा के शरीर में प्रवेश कराई जाय तो उसके भीतर नर पित्रैक (जीनी) उत्पन्न हो जाते हैं डी. एन. ए. रसायन की मात्रा में कृत्रिम परिवर्तन लाया जा सकना सम्भव होता जा रहा है फलस्वरूप आकृति से ही नहीं प्रकृति से भी वर्णसंकर नस्लें उत्पन्न की जा रही हैं । इनके गुण, कर्म, स्वभाव अपने पूर्ववर्ती वंशधरों से सर्वथा भिन्न होते हैं । पूर्ण शाकाहारी बिल्ली की नस्ल उत्पन्न हो सकना इस दिशा में एक महत्त्वपूर्ण सफलता मानी जा रही है ।

नर हार्मोन के टीके लगा देने पर मुर्गी की प्रकृति में भारी अन्तर हो जाता है वह बांग लगाती है, लड़ती है अकड़कर चलती है तथा नर जैसे अन्य आचरण करती है । गौरैया चिड़िया यों शान्त प्रकृति की होती है । उछल-कूद प्रायः नर चिडे ही करते हैं पर यदि गौरैया के शरीर में नर हार्मोन प्रवेश करा दिए जायें तो उसे काँपते स्वर में चीख-पुकार करते देखा जा सकता है । मछलियाँ लड़ाकू हो जाती हैं तथा उन्हें मदोन्मत्त जैसी स्थिति में देखा जा सकता है ।

मुर्गी हार्मोन के टीके मुर्गे के लगाये गए तो उसकी प्रकृति में मुर्गी जैसी लोच उत्पन्न हो गई । घोंसले में रखे अंडों को सेने के लिए वह मुर्गी के स्थान पर जा बैठा और लगातार कई दिन तक बैठा रहा । चूहों और खरगोशों पर भी ऐसे ही प्रयोग किए गए तो पाया गया कि उनमें भिन्न लिंग की विशेषताएँ उत्पन्न होने लगीं और उनकी प्रकृति में वह परिवर्तन स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगा ।

नर नारियों में बीस से तीस वर्ष की आयु तक कामोत्तेजना का उभार रहता है इससे आर्डीनल, अभिवृक्क ग्रन्थि में होने वाले हार्मोन स्रावों का विशेष हाथ रहता है । इन स्रावों के घटने-बढ़ने पर कामोत्तेजना की न्यूनाधिकता होती है । नपुंसकता में जननेन्द्रिय की दुर्बलता उतना कारण नहीं होती जितनी कि उपर्युक्त हार्मोन स्रावों की न्यूनता । यदि वे स्राव बढ़ जायें तो अवांछनीय मात्रा में वे उद्विग्नता भी उत्पन्न करते हैं ।

गर्भ धारण की सर्वमान्य व्यवस्था यह है कि मादा के पेट में गर्भाशय होता है उसमें अण्डे या गर्भ का विकास होता है, पर यह भी कोई पत्थर की लकीर नहीं है । बिना गर्भाशय के सामान्य मांसपेशियों की पोल में भी गर्भ स्थापित हो सकता है और उसका वृद्धि क्रम चल सकता है । ऐसे कितने ही उदाहरण सामने हैं जिनमें माता के गर्भ धारण काल के कुछ जीव कण बच्चे के शरीर से किसी प्रकार चले गए और उन्होंने जहाँ भी जगह पायी वहीं शिशु के रूप में विकसित होना आरम्भ कर दिया ।

कोलम्बो (श्रीलंका) में बीस महीने की बालिका प्रिमती के पेट का आपरेशन करके एक गाँठ सरीखा शिशु पिण्ड निकाला गया उस पिण्ड में बच्चे के सभी चिन्ह मौजूद थे ।

कोचीन के निकट एनाकुलम के जनरल अस्पताल में एक १६ वर्षीय युवक के पेट का ऑपरेशन करके एक शिशुपिंड निकाला है । डॉ. पी. ए. सुब्बाराव ने ऑपरेशन करके यह पिण्ड निकाला और बताया कि उसका विकास लगभग छः महीने के बालक जितना हो चुका है ।

आज यह अपवाद है । पर इनमें उन सम्भावनाओं से इन्कार नहीं किया जा सकता जिसमें विकसित विज्ञान के आधार पर लिंग परिवर्तन ही नहीं गर्भाशय के बिना भी गर्भ धारण सम्भव हो सकेगा । आज जो अपवाद हैं वे कल व्यावहारिक एवं ऐच्छिक भी हो सकते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

मनुष्य तत्व के दो विभाजन हैं—नर और नारी । ये दोनों मनःस्थिति और परिस्थिति के अनुसार एक से दूसरे पक्ष में बदलते रहते हैं । लहरें ऊँचे-नीचे क्रम से चलती हैं, समुद्र में ज्वार-भाटे आते हैं । एक समय की ऊँचाई दूसरे समय की नीचाई में बदल जाती हैं और फिर नीचाई-ऊँचाई का रूप धारण करती है । नर और नारी पक्ष भी इसी तरह उतरते-चढ़ते रहते हैं । जन्म-जन्मान्तरों से यह परिवर्तन प्रायः होता ही रहता है । इसका कारण प्रधानतया मनोवैज्ञानिक है । नर को नारी के प्रति अत्यधिक आकर्षण रहता है और नारी नर के प्रति खिंची रहती है यह खिंचाव उनके चिन्तन का केन्द्र बिन्दु विपरीत लिंग वाले पक्ष के साथ अटक जाता है । चिन्तन और रुझान में उत्पन्न तीव्रता के कारण मनःस्थिति विपरीत लिंग वाले वर्ग को महत्ता देने लगती है तदनुसार भविष्य में वैसा ही शरीर मिलने के आधार स्वयंमेव विनिर्मित होने लगते हैं । यदि यह आकर्षण कम हो तो दोनों अपने-अपने लिंग में कई जन्मों तक रह सकते हैं एक और तथ्य यह है कि यदि अपने लिंग की सजधज अधिक बनाये रखी गई है और उसी पर गर्व करते रहा गया है तो वह व्यामोह आगे भी उसी लिंग में आत्मा को रहने के लिए बाध्य कर सकता है । चिन्तन की प्रखरता के परिणाम सर्वविदित हैं, जो जैसा सोचता है, जैसा चाहता है, वैसा ही बन जाता है । यह तथ्य जीवन के हर पक्ष पर लागू होता है । यहाँ तक कि लिंग परिवर्तन भी मनःस्थिति में उफनने वाले लिंग वरिष्ठता के आधार पर बनी रहती है अथवा बदलती रहती है ।

कई स्त्रियाँ स्वभाव से पुरुष प्रकृति की होती हैं । उनके चेहरे की बनावट, आवाज चेष्टाएँ पुरुषों जैसी होती हैं । उनकी चाल-ढाल से पौरुष प्रकट होता है । कई बार तो दाढ़ी और मूँछ के स्थान पर थोड़े बहुत गहरे बाल भी उगते हैं । जननेन्द्रिय की बनावट तो नारी जैसी ही होती है पर काम चेष्टा में उन्हें सन्तोष तभी मिलता है जब उन्हें पुरुषों जैसे पक्ष की भूमिका प्रस्तुत करने का अवसर मिले । वस्त्र शृंगार में पुरुषों जैसी रुचि उनकी होती है और उच्चारण में अपने को पुल्लिंग शब्दों में व्यक्त करते हुए गौरव अनुभव करती है । उनमें कोमलता कम और कठोरता अधिक रहती है । इसी प्रकार कई पुरुष ऐसे होते हैं जिनकी बनावट, आवाज, चेष्टा ही नारी जैसी नहीं होती वरन् वस्त्र शृंगार में भी नारी जैसी रीति नीति अपनाने में प्रसन्नता होती है । समाज में नारी को छोटा और नर को बड़ा माना जाता है इस दृष्टि से उन्हें नारी अभिव्यक्तियों में लोक लाज अथवा उपहास का भय रहता है फिर भी उनकी अतृप्त आकांक्षा दबती नहीं और कहीं न कहीं से प्रकट या छुप कर,फूटती है । उनकी नारी प्रकृति का परिचय कोई भी प्राप्त कर सकता है । जननेन्द्रिय की बनावट भले ही पुरुष जैसी हो पर रतिक्रिया में उनका समाधान तभी होता है जब नारी की तरह उन्हें प्रयुक्त किया जाय । यह आकृति और प्रकृति का भेद तलाश करने पर अपने आस-पास भी बड़ी मात्रा में मिल सकता है ।

यह अधूरे परिवर्तन यह आभास देते हैं कि निकट भविष्य में इसी या अगले जन्म में लिंग परिवर्तन की प्रक्रिया का आरम्भ हो गया है । दोनों पक्षों में से कोई यदि अपना लिंग परिवर्तन करना चाहे तो वह उसी स्तर पर अपने चिन्तन तथा क्रिया-कलाप में हेर-फेर करके भविष्य की सम्भावना को सुनिश्चित कर सकता है ।

विज्ञान की दृष्टि से नर और नारी के बीच असमानता की खाई खड़ी करना सर्वथा अनुपयुक्त है । नैतिक और सामाजिक दृष्टि से भी उस अनीति का समर्थन नहीं किया जा सकता जिसके अनुसार आज नारी को पराधीन, पददलित, अधिकार रहित और उत्पीड़न की शिकार उपभोग्या बनाकर रखा गया है ।

नर और मादा का विभेद अकाट्य नहीं परिवर्तनशील है

मानवी संरचना को नर और नारी दो भागों में विभक्त किया गया है । यह दो विभाजन प्रकृति द्वारा विनिर्मित तो हैं, किन्तु उन्हें पत्थर की लकीर नहीं समझना चाहिए । इसके पीछे भी मानसिक मान्यता एवं परम्परागत अभ्यास ही आधारभूत कारण है । चिरकाल से जिस प्रकार का अभ्यास पड़ गया है उसी मान्यता के अनुरूप प्रजनन की भूमिका निभाने वाले परमाणु अपनी गतिविधियाँ अग्रसर बनाते हैं तथा नर और नारी में से जैसी भी परम्परा स्वभाव में आ गई हो उसी के अनुरूप लिंग बनाने लगते हैं । मान्यता के गहन क्षेत्र में किसी प्रकार अभ्यास क्रम में परिवर्तन किया जा सके तो लिंग परिवर्तन का असम्भव दीखने वाली प्रक्रिया सम्भव हो सकती है, नर-नारी बन सकता है और नारी प्रकृति से ही नहीं आकृति से भी नर बन सकती है । भ्रूण कई महीने तक उभयलिंगी स्थिति में होता है । आरम्भिक दिनों में यह पता नहीं लग सकता कि गर्भ में कन्या है या पुत्र । क्योंकि उस अवधि तक दोनों प्रकार के लक्षण विद्यमान रहते हैं । जब चेतना जोर मारने लगती है । अभ्यस्त प्रकृति उभरने लगती है तो एकलिंग के लक्षण बलिष्ठ होने और दूसरे के दबने लगते हैं । प्रसवकाल आने तक बालक का अभीष्ट पथ दब चुका होता है । इतने पर भी स्तन आदि के ऐसे चिन्ह शेष रह जाते हैं जो उभयपक्षीय संरचना की साक्षी देते हैं । समय आने पर नारी के स्तन विकसित होने लगते हैं, किन्तु नर में भी उसका स्थान बना रहता है । नारी की यौन रचना में 'भग' नासा को पुरुष शिश्न का छोटा रूप माना गया है । पुरुष के बाहर तो नहीं, किन्तु भीतरी संरचना में गर्भाशय का छोटा अस्तित्व पाया जाता है ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अनेक नर-नारियों की मनोवृत्ति अपनी सजातीय परम्परा से भिन्न पायी जाती है । पुरुषों की प्रकृति में नारी स्तर की उमंगें और नारियों में पुरुषों जैसा रुझान देखा गया है । जनखे प्रायः इसी मध्यवर्ती स्थिति के होते हैं । कइयों में यौन संरचना में प्रत्यक्ष अन्तर न दीखते हुए भी काम-कौतुक के सम्बन्ध में ही नहीं, स्वभाव की ऐसी भिन्नताएँ पायी जाती हैं जिन्हें विपरीत स्तर की कहा जा सके । छिपाये रहने पर भी वे उभरती रहती हैं । इस सन्दर्भ में यदि अतिरिक्त हलचलें उभरने लगें तो इसी जीवन में प्रत्यक्ष लिंग परिवर्तन हो सकता है । ऑपरेशनों से ऐसे कितने ही परिवर्तन हुए भी हैं ।

पूर्व जन्म की स्मृति के प्रामाणिक विवरण जिन बालकों ने बताये हैं उनमें से कितने ही ऐसे भी हैं जिनमें पूर्वजन्म का पुरुष अगले जन्म में स्त्री बना । इसी प्रकार स्त्री ने पुरुष रूप में जन्म लिया । ऐसे प्रकरणों में इच्छाशक्ति ही प्रधान कारण होती है । लक्ष्मीबाई जैसी नारियों के सम्बन्ध में यह अनुमान लगाया जा सकता है कि वे पूर्वजन्म में कोई पुरुष योद्धा रही होंगी । इसी प्रकार आकृति एवं प्रकृति से नारी स्वभाव के कितने ही पुरुष पाये जाते हैं । इनके स्वर, रहन-सहन एवं यौन आकांक्षाओं में नारी प्रकृति की विशेषताएँ अनायास ही उभरती रहती हैं । अचेतन मन में व्यक्ति अपने आपको नर या नारी में—जिस वर्ग का मान बैठता है और उसकी प्रकृति को स्वभाव का बना लेता है उसके वह अभ्यास ही कालान्तर में लिंग परिवर्तन का कारण होते हैं । वे एक वर्ग से दूसरे में बदलने की आधी-अधूरी प्रक्रिया के मध्य रह रहे होते हैं । आगे बढ़ना या पीछे हटना भी ऐसे प्रसंगों में उनकी इच्छा पर निर्भर रहता है । ऐसी घटनाएँ भारतीय संस्कृति के इतिहास में भी कम नहीं हैं ।

बेलग्रेड के सरबिया अस्पताल में कुछ वर्ष पूर्व एक किसान के पेट से दो बच्चों के जन्म की घटना समाचार पत्रों में प्रकाशित हुई थी । उसे पेट में शिकायत रहती थी । बाहरी परीक्षणों से फोड़े के होने के संकेत मिले । सरबिया अस्पताल में जब उसका ऑपरेशन किया गया तो उससे दो बच्चे निकले जिनकी शारीरिक रचना जन्म लेने वाले सामान्य बच्चों की तरह परिपूर्ण थी ।

अमेरिका की "नेशनल इन्स्टीट्यूट फॉर चाइल्ड एण्ड ह्यूमन डेवलपमेन्ट" संस्थान के सामने ऐसे बालकों के अनेकों उदाहरण हैं जिनकी यौन क्षमता असाधारण रूप से बढ़ी या समाप्त होती गई । ग्रीनवे की एक जैमिका नामक लड़की को तीन वर्ष की आयु में ही प्रजनन अंग स्तन आदि तेजी से परिपक्व हुए और वयस्कों जैसा मासिक धर्म आने लगा ।

एक घटना इण्डियाना की एक अपराधी महिला के सम्बन्ध में है वह जेल में बन्द हुई तब महिला थी । कुछ दिन बाद उसके दाढ़ी मूँछ उग पड़े । डॉक्टरों ने घोषित किया कि वह पुरुष बन चली । छूटने पर उसने एक पुरुष से विवाह किया । फिर कुछ ऐसी उलट-पुलट हुई कि उसका पुरुषत्व बढ़ा और किसी नारी के साथ विवाह बन्धन में बँध गई । इस विवाह झंझट में बँधे तीनों साथ-साथ रहे और नर-नारी की आवश्यकताएँ मिल जुलकर पूर्ण करते रहे ।

सन् १९१७ में शंघाई में एक ऐसे बच्चे ने जन्म लिया था जिसके तीन पैर थे, साथ ही उसका शरीर आधा पुरुष का था, आधा स्त्री का १८ वर्ष की आयु तक जीवित रहने के पश्चात् वह मर गया ।

साधारणतया यौन कर्म गोपनीय माना जाता है । मनुष्यों में वैसा प्रचलन नहीं है जैसा कि पशुओं में निर्लज्ज परम्परा है । बहुपति प्रथा, बहु पत्नी प्रथा में भी पर्दे की ओट रखी जाती है, किन्तु ऐसे उदाहरण भी हैं, जिनमें उस तरह की लज्जा परम्परा का परित्याग करने की आवश्यकता समझी गई और नये प्रचलन का नया मार्ग निकाला गया ।

थाईलैण्ड के मोकलांग गाँव में ११ मई सन् १८११ को दो ऐसे यमन बच्चों ने जन्म लिया जो अलग-अलग अस्तित्व रखते हुए भी सीने के दाएँ-बाएँ हिस्से से जुड़े हुए थे । यह तो अपने आप में कोई खास अनोखी बात नहीं है । आश्चर्य की बात तो यह है कि वे दोनों ६३ वर्ष आयु तक जीवित रहे, उन्होंने विवाह किया, घर बसाया और इसी तरह जुड़े रहकर सामान्य जीवन व्यतीत किया ।

इन दोनों भाइयों का सचित्र विवरण 'एनी वालेस' ने 'द टू' नामक पुस्तक में लिखा है—

चीनी पिता और थाइलैण्ड की निवासी माता से जन्म लेने वाले इन बालकों की विचित्रता को देखने के लिए दूर-दूर से लोग आते थे । उनमें कई डॉक्टर भी थे । डॉक्टरों ने उनके माता-पिता से उन्हें अलग करने का आग्रह एवं प्रस्ताव भी किए, किन्तु उनकी माँ गरम तार या रस्सी के द्वारा कटवाकर अलग कराने के लिए सहमत न हुई । उन दिनों चिकित्सा विज्ञान आज जैसा विकसित नहीं था ।

उन बच्चों के नाम रखे गए थे—चांग और इंग । माँ ने दोनों बच्चों को गिरते-पड़ते चलना भी सिखा दिया, साथ ही परस्पर सहयोग एवं सद्भावनापूर्वक जीवनयापन करने के लिए प्रशिक्षित भी किया ।

आरम्भ में चलने में उन्हें कठिनाई तो हुई, किन्तु धीरे-धीरे न केवल वे चलना सीख गए । वरन् तैरना और नाव चलाना भी सीख लिया । सन् १८२८ में नदी में तैरते देखकर एक अंग्रेज व्यापारी रावर्ट हन्टर आश्चर्यचकित रह गया । पहले तो वह उन्हें जल का कोई विचित्र जीव समझा परन्तु जब पानी से निकलकर नाव पर चढ़ते देखा तो समझ सका कि वे दोनों जुड़वाँ भाई हैं ।

हन्टर ने चांग और इंग के माता-पिता को कुछ दे दिलाकर उन्हें अपने साथ अमेरिका ले जाने पर सहमत कर लिया । अमेरिका ले जाकर हन्टर ने 'बोस्टन' के हारवर्ड

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मेडिकल कॉलेज के प्रो. जान वारेन तथा अन्य डॉक्टरों से परीक्षण कराया, उन्हें नैसर्गिक रूप से जुड़वाँ पाया । हन्टर ने अमेरिका और ब्रिटेन में चांग तथा इंग के प्रदर्शन करके लाखों की सम्पत्ति कमाई ।

समझ आने पर दोनों भाइयों ने हन्टर से सम्बन्ध तोड़कर स्वतन्त्र रूप से प्रदर्शन करके अपार धन कमाया । १८३३ से १८३६ तक अमेरिका में उन्होंने सैकड़ों प्रदर्शन किए । उन्हीं दिनों उनकी भेंट जार्जिया के एक समृद्ध किसान की लड़कियों 'एडलीस' और 'लैसी' से हुई । विवाह के लिए दोनों ने ऑपरेशन करवाकर अलग होने की बात सोची, परन्तु दोनों पक्षों के सहमत हो जाने पर उसी स्थिति में उनकी शादी सम्पन्न हो गई । चांग एवं इंग तथा एडलीस एवं लैसी के युगल दम्पत्ति ने विवाह के बाद २१ बच्चों को जन्म दिया जिनमें से १८ सामान्य आयु तक जीवित रहे । विवाहित जीवन बिताने के सम्बन्ध में उन्होंने अपने नियम और मर्यादाएँ बना लीं, आजीवन उनका पालन करते रहे । उनके जीवन में सबसे उल्लेखनीय बात यह रही कि वे आपस में बहुत कम बोलते थे, फिर भी बिना बोले ही एक-दूसरे के मन की बात समझ जाते थे । सन् १८७४ में उनकी सामान्य मृत्यु हो गई ।

पाश्चात्य देशों में नारी मुक्ति आन्दोलन के अन्तर्गत अब महिलाएँ इस प्रचलन को अपना रही हैं कि नारियाँ आपस में विवाह करके गृहस्थ चला लिया करें । पुरुषों के शोषण की शिकार न बनें । यह इस बात के चिन्ह हैं कि नर और नारी के बीच पाया जाने वाला विपरीत स्वभाव आकर्षण एवं गठन पत्थर की लकीर नहीं है, उनमें मनःस्थिति और परिस्थिति बदल जाने पर परिवर्तन भी हो सकता है । एक लिंग वाले प्राणी अपने विपरीत पक्ष में परिवर्तित हो सकते हैं ।

कृमि कीटकों में, जल जीवों में कितने ही ऐसे हैं जो एक ही शरीर में नर और मादा में हेर-फेर करते रहते हैं उन्हें प्रजनन के लिए किसी विपरीत प्रकृति के साथी का सहयोग नहीं लेना पड़ता है । इससे प्रकट है कि चेतना का मूल स्वरूप एक है । उसमें यौन निर्धारण एवं परिवर्तन की प्रक्रिया उनकी इच्छा, आकांक्षा, प्रकृति एवं आदतों पर निर्भर है ।

यौन परिवर्तन, कृत्रिम गर्भाधान

समाचार पत्रों में छपी कुछ और घटनाएँ इस प्रकार हैं । कैलाशनगर (अगरतल्ला) निवासी एक क्लर्क की ६ वर्षीया पुत्री सुमित्रा के शरीर में काफी दिन से ही विलक्षण शारीरिक परिवर्तन के चिन्ह प्रकट हो रहे थे । पिता ने अस्पताल में परीक्षण कराया । डॉक्टरों ने बताया कि बालिका का यौन परिवर्तन हो रहा है । बाद में लड़की पूर्ण लड़का बन गई ।

ड्रेसडन के शल्य चिकित्सक डा. वार्ने क्रुत्स ने जिस ईनर वेलरन नामक डेनिश चित्रकार को पुरुष से स्त्री बना दिया, उसका वृत्तान्त भी कम मनोरंजक नहीं । ईनर वेलनर जब बीस वर्ष का था तभी उसने अपने साथ पढ़ने वाली एक लड़की से गन्धर्व विवाह कर लिया । चित्रकार के हाव-भाव बहुत कुछ स्त्रियों जैसे थे यह देखकर पत्नी प्रायः मुस्कराया करती पर तब तक उनके दाम्पत्य जीवन के सुख में किसी प्रकार का अन्तर नहीं आया ।

एक दिन ईनर को उनकी स्त्री ने हँसी-हँसी में अपने कपड़े पहना दिए । इन कपड़ों में ईनर बिलकुल लड़कियों जैसा लगा । पीछे उसे स्त्रियों के वेश में देखकर उसके मित्रों ने उसका नाम भी स्त्रियों जैसा रख दिया । अब वह "लिली" नाम से पुकारा जाने लगा । यह नाम मानो उसके लिए ही चुना गया था । अन्त तक वह स्थायी रह भी गया क्योंकि उसके भीतर सचमुच एक नारी का व्यक्तित्व छिपा था । समय बीतने के साथ-साथ वह लक्षण और स्पष्ट होते गए । उसकी मानसिक प्रक्रियाएँ तो तेजी से नारी के स्वभाव में बदलती गईं । उसे अपने ही यौन-अंगों के प्रति विलक्षण आकर्षण होता । इसे कुछ लोग उसकी मूर्खता और बहम बताते । कई शल्य-चिकित्सकों ने तो उसे मूर्ख कहकर अपने यहाँ से भगा भी दिया ।

वर्तमान विज्ञान-वेत्ताओं का ध्यान प्रकृति की इस विलक्षणता की ओर गया होता कि उसके प्रत्येक कण में पुरुष और नारी भाव छिपा पड़ा है तो वे विकासवाद को यों ही गले का हार न बनाते । वे यह भी सोचते कि जिस प्रकृति में विलक्षण सत्यों के लिए स्थान है वह स्वतन्त्र पुरुष या स्त्री का अमैथुनी निर्माण भी कर सकती है ।

फरवरी १९३० में ईनर की अवस्था बहुत गम्भीर हो गई । उसने आत्म-हत्या करने तक का निश्चय किया । सौभाग्य से इन्हीं दिनों ड्रेसडेन डॉक्टर वार्नेक्रुत्स पेरिस आये हुए थे । सो ईनर के कई मित्रों ने उनसे परीक्षण कराने की सलाह दी । ईनर ने ऐसा ही किया । वार्नेक्रुत्स ने उसके शरीर की परीक्षा करके बताया कि उसके शरीर के भीतर स्त्री और पुरुष दोनों के ही लक्षण हैं पर दोनों में से पूर्ण विकास के लिए किसी को भी अवसर नहीं मिल रहा इसलिए यह कष्टपूर्ण स्थिति है । स्त्री होने की सम्भावनाएँ अधिक थीं वार्नेक्रुत्स ने उसे बर्लिन जाकर प्रोफेसर गेवहार्ड के पास शल्य चिकित्सा की सलाह दी ।

ईनर बर्लिन चला गया । वहाँ उसका कठिन ऑपरेशन किया गया । ऑपरेशन के कुछ ही समय बाद उसकी आवाज विलक्षण ढंग से बदलने लगी । अब उसकी आवाज कोमल और सुरीली हो रही थी । ऑपरेशन से उसकी पुरुष यौनि स्त्री यौनि में बदल ही चुकी थी । कुछ ही महीनों में उसके

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्तन भी उभर आये और इस तरह एक अच्छा हृष्ट-पुष्ट युवक कोमल भोली-भाली स्त्री में बदल गया । प्रकृति की इस विलक्षणता पर वैज्ञानिक कुछ भी प्रकाश डालने में असमर्थ हैं पर अब वे यह स्वीकार करते हैं कि प्रकृति में कोई विलक्षण मानसिक चेतना काम कर रही है और वह अपने आप ही ऐसे विलक्षण जीव और शरीर उत्पन्न करती रहती है । सम्भव है आरम्भ में मनुष्य का आविर्भाव भी ऐसी ही अमैथुनी स्थिति में हुआ हो । इसी प्रसंग में "अर्द्धनारीश्वर" के रहस्यों पर अलग प्रकाश डाला जायेगा जिसमें प्रकृति की सर्वशक्तिमत्ता का और भी विलक्षण प्रतिपादन होगा तथा उसमें ऐसे पुरुषों के उदाहरण भी पढ़ने को मिलेंगे जिन्हें स्त्रियों के समान ही मासिक धर्म भी होता था और जो दूध भी दे सकने की स्थिति में थे ।

मनुष्य अपने आप में पूर्ण है

इन घटनाओं के आधार पर यह कहा जा सकता है कि मनुष्य अपने आप में परिपूर्ण है और उसमें नर तथा नारी दोनों का अस्तित्व विद्यमान रहता है जो समय पाकर कभी भी प्रकट हो सकता है ।

यह कहा जाता है कि नर-नारी एक-दूसरे के पूरक हैं; एक के बिना दूसरे का काम नहीं चलता । दोनों के बीच का आकर्षण उन्हें घनिष्ठता के सूत्र में बाँधता है । इसलिए उन्हें एक-दूसरे से पृथक न रहकर साथ-साथ रहना चाहिए ।

यह प्रतिपादन एक सीमा तक ही ठीक है । माता-पिता की सहायता के बिना पुत्र या पुत्री का काम नहीं चलता । बहन-भाई के दुलार के बिना घर में उदासी रहती है । परिवार में चाची, ताई, बुआ, भाभी, बहिन, बेटी आदि का अपना पक्ष है और बेटे, पोते, भाई, चाचा, ताऊ आदि-आदि का अपना । दोनों पक्ष साथ-साथ मिल-जुलकर एक घर में रहते हैं तो उसमें नर-नारी के समन्वय से उत्पन्न एक पूरक स्थिति बनती है और उस द्विपक्षीय स्नेह, सहयोग से परिवार का वातावरण खिल पड़ता है । यह तथ्य ऐसा है जिससे इन्कार करने की कोई आवश्यकता नहीं है । सहयोग हर क्षेत्र में सुखद होता है नर-नारी का सहयोग इस दृष्टि से उचित भी है, आवश्यक भी और श्रेयस्कर भी ।

पर इस प्रतिपादन में कोई सार नहीं कि यौनाचार के लिए नर-नारी का सम्मिश्रण हुए बिना और विवाह बन्धन में बँधे बिना कोई अपूर्णता रहती है । मनुष्य की क्या सभी प्राणियों की रचना इस प्रकार हुई है कि वह अपने आप में पूर्ण है । उनके भीतर 'रयि' और प्राण दोनों ही तत्व विद्यमान हैं और वे अपने भीतर ही नर-नारी मिलन से जो शक्ति उत्पन्न होने की बात कही जाती है उसे अनायास ही पूरा करते रहते हैं । नारी पक्ष और नर पक्ष दोनों ही उसके भीतर विद्यमान हैं । उसमें से जो अधिक विकसित हो जाता है प्रधानता अवश्य उसी स्तर की होती है पर इसका अर्थ यह नहीं कि किसी तत्व की ऐसी कमी होती है जिसकी प्राप्ति के लिए नर को नारी से या नारी को नर से कामुक सम्बन्ध बनाये बिना काम ही न चले ।

छोटी जातियों के प्राणी प्रत्यक्षतया उभयलिंगी होते हैं । वे अपने आप में ही नर और नारी की दोनों ही विशेषताओं से युक्त होते हैं । उन्हें किसी एक जाति का घोषित नहीं किया जा सकता । वनस्पतियों में यही बात होती है, पुष्पों के माध्यम से उनका रजोधर्म होता है । खिलने का अर्थ है गर्भ धारण करने योग्य यौवन का उभार । हवा के साथ उड़कर या मक्खी, तितली आदि कीड़ों के सहारे पुष्पों का पराग एक-दूसरे तक पहुँचता है । उससे उनका निषेचन होता है और गर्भ धारण करके फल देने लगते हैं । फूलों में उभयपक्षीय पराग पाया जाता है । गर्भ धारण करने की और गर्भ धारण कराने की भी दोनों ही क्षमताएँ उनमें पायी जाती हैं । न्यूनाधिक मात्रा होने की बात दूसरी है, पर सभी पुष्प होते उभयलिंगी हैं, इनके परागों में दोनों लक्षण पाये जाते हैं । प्रयत्नपूर्वक उनके किसी भी पक्ष को उभारा जा सकता है । जिसे आज नारी जाति का पराग कहते हैं उसमें थोड़ा-सा प्रयत्न करके उन्हें नर जाति का बना दिया जाता है । अधिकांश वनस्पतियों में तो दूसरे पौधों का पराग पाने की आवश्यकता ही नहीं होती, उनके भीतर अपने आप ही अन्तर्मिलन का उपक्रम बनता रहता है और फूल, फल, बीज उत्पन्न होते रहने की प्रक्रिया चलती रहती है । दूब जैसी घास अपने आप में वंश वृद्धि की दृष्टि से पूर्ण है । उसे इसके लिए किसी बाहरी सहयोग की जरूरत नहीं पड़ती ।

बहुत से पौधे ऐसे हैं जिनकी लकड़ी काटकर अन्यत्र गाड़ देने पर नया पौधा उग आता है । गन्ना इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है । उसकी हर गाँठ में नर-नारी के उभयपक्षीय चिन्ह होते हैं और वे अपने पेड़ से अलग होने पर स्वतन्त्र वंश वृद्धि करने लगते हैं । गुलाब आदि कितने ही पुष्प जाति के पेड़-पौधे इसी प्रकार के हैं । बरगद, गूलर जैसे वृक्षों की डाली काटकर अन्यत्र लगा देने से नया पेड़ उत्पन्न होने लगता है । वनस्पति जगत प्रायः पूरा ही इस प्रकार का है कि प्रजनन की उभयपक्षीय आवश्यकताएँ अपने भीतर से ही उत्पन्न कर लें ।

एककोशीय 'अमीबा' जीवधारियों में सबसे पुरातन है । वह अपने शरीर के टुकड़े काट-काटकर पृथक करता रहता है और वे स्वयंमेव एक स्वतन्त्र जीव बनते रहते हैं ।

यौन आकर्षण को प्रजनन प्रेरणा के नाम से वैज्ञानिक जगत में पुकारा जाता है । उनका कहना है कि स्त्री और पुरुष के बीच जो भावनात्मक आकर्षण पाया जाता है, उसके पीछे प्रकृति की प्रजनन प्रेरणा ही काम करती है । उनकी बात इस सीमा तक ही ठीक है । इन दो वर्गों में एक में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

बामपक्षीय और दूसरे में दक्षिण-पक्षीय विद्युत शक्ति काम करती है और वे परस्पर मिलकर वंश वृद्धि का सरंजाम जुटाते हैं । इससे आगे बढ़कर यह कहना गलत है कि एक के बिना दूसरा अपूर्ण है और दोनों जब तक कामुक उद्देश्य से मिलेंगे नहीं, तब तक उनमें अभाव बना रहेगा एवं अतृप्ति अनुभव होगी । यह कहना इसलिए गलत है कि तृप्ति, उल्लास एवं अपूर्णता को पूर्णता में विकसित करने वाले आवश्यक तत्व हर प्राणी में मौजूद हैं । उनमें विकास की समस्त आवश्यकताएँ पूरी की जाती हैं, की जा सकती हैं । मनुष्य भी इनका अपवाद नहीं है ।

छोटी जाति के जीवधारियों में अधिकांश उभयलिंगी होते हैं और वे अपनी प्रजनन आवश्यकता आत्मरति से ही पूर्ण कर लेते हैं । इनमें डिम्ब कीट भी होते हैं और शुक्र कीट भी । एक स्थान से दूसरे स्थान तक रेंगकर वे भीतर ही भीतर निषेचन एवं गर्भ धारण का कार्य पूरा कर लेते हैं और वे जीव बिना दूसरे साथी की सहायता के अपनी वंश वृद्धि एकाकी पुरुषार्थ से करते रहते हैं ।

कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय के शोध विभाग ने छोटे जलचरों को ऐसी ३०० से अधिक जातियाँ ढूँढ़ निकाली हैं, जो प्रजनन के मामले में पूर्णतया आत्म-निर्भर हैं । जमीन पर रेंगने वाले और उड़ने वाले कीड़ों में भी हजारों ऐसे हैं जिनमें काम सेवन के योग्य अवयव नहीं होते उनका अपना यौवन ही उन्हें जनक एवं जननी दोनों का श्रेय प्रदान करने लायक रासायनिक द्रव्य अपने भीतर से ही उत्पन्न कर लेता है और वे स्वतन्त्र रूप से एकाकी संतानोत्पादक करते रहते हैं ।

'आर्कोपीडा' कीड़ा उस 'इनसेक्टा' वर्ग में आता है उसकी बिरादरी आये दिन अपना लिंग परिवर्तन करती रहती है । कभी नर और कभी नारी के अवयव विकसित होते और बदलते रहते हैं । कहा नहीं जा सकता कि वह कब तक नर रहेगा और कब तक नारी बन जायेगा । कब उसे पिता कहा जायेगा और कब उसे माती की श्रेणी में गिना जायेगा । उसके साथी ऐसी ही उलट-पुलट करते रहते हैं । पति कभी पत्नी बन जाता है और कभी पत्नी पति बनकर अकड़ती फिरती है । यह परिवर्तन कुछ अद्भुत नहीं है, क्योंकि उनके भीतर दोनों ही तत्व रहते हैं । थोड़ी प्रतिशत का ही अन्तर रहता है जिसे प्रकृति की छोटी सी हलचल ज्वार-भाटे की तरह घटा-बढ़ा देती है और वे कभी इधर कभी उधर लुढ़कते बदलते रहते हैं ।

बड़ी ...ति की मछलियों में यौन परिवर्तन तो नहीं पर प्रजनन तत्व आसानी से घटाये-बढ़ाये जा सकते हैं । बर्लिन के जल जीव शोध संस्थान ने मछलियों में कई प्रकार के विशिष्ट विद्युत प्रकाश देकर उनकी पिट्यूटरी ग्रन्थि में पाये जाने वाले स्टियुर्लिटिंग और लूटिनाइजिंग हार्मोनों की मात्रा बढ़ाने में सफलता प्राप्त कर ली है । इस प्रयोग से उन मछलियों में चार गुनी प्रजनन क्षमता बढ़ी और उन्होंने उसी अनुपात में अण्डे दिए । कैटफिश आमतौर से जुलाई और सितम्बर के बीच केवल एक बार अण्डे देती है, उसे विशेष वातावरण में रखकर और विशेष चारा देकर साल में चार बार अण्डे देने का अभ्यस्त बना दिया गया ।

प्रो. रिचार्ड गोल्ड स्मिथ ने जिप्सी नोथ पतंगे पर प्रयोग करके उसे नर से नारी और नारी से नर बना देने में सफलता प्राप्त की है । उनका कहना है कि इसमें कोई आमूल-चूल परिवर्तन नहीं करना पड़ा । इसमें दोनों ही क्षमताएँ विद्यमान थीं, उनके अनुपात को थोड़ा-सा घटाने-बढ़ाने में ही जरा-सा श्रम करना पड़ा है । ऐसा ही प्रयोग फ्रान्स के प्रो. बर्नाड जेम्स ने ड्रोसोफिला कीड़े पर किया है, वे भी लिंग परिवर्तन के अपने प्रयोगों में पूर्ण सफल रहे हैं ।

मनुष्यों में इस प्रकार के प्रत्यक्ष परिवर्तन अब बहुत बड़ी संख्या में प्रायः हर देश में सामने आ रहे हैं । नर में नारी के और नारी में नर के यौन चिन्हों का प्रकट, विकसित और परिपुष्ट होना—अस्पतालों में शल्य चिकित्सा द्वारा उनका पूर्णरूपेण लिंग परिवर्तन होना अब आश्चर्य कौतूहल का विषय नहीं रहा । ऐसी घटनाएँ आये दिन समाचार पत्रों में छपती रहती हैं । अब यह मान लिया गया कि ऐसा होना शरीर विकास का एक छोटा-सा दिशा परिवर्तन मात्र है कोई असम्भव या प्रकृति क्रम का व्यतिरेक या विपर्यय नहीं । अब ऐसी घटनाएँ जो अस्पतालों के रिकार्ड में दर्ज हैं हजारों की परिधि को लाँघ चली हैं ।

जोर्डन लेस्ले हाल तीस वर्ष की आयु तक एक प्रसिद्ध अंग्रेज लेखक के रूप में विख्यात थे । उनकी अमेरिका में धाक थी । सम्मानित पत्र-पत्रिकाओं में उनके लेख छपते थे और इसी आधार पर वे अच्छी आजीविका उपार्जित करते थे । रहस्य प्रकट होने से पूर्व कई वर्ष से वे अनुभव कर रहे थे कि उनका सैक्स बदल रहा है । वे नर से नारी के रूप में क्रमशः परिवर्तित हो रहे हैं । मूँछों पर पहले सामान्य लोगों की तरह बाल आते थे पीछे वे उगने बन्द हो गए । वक्षस्थल पर स्तन उभरने लगे और जननेन्द्रिय छोटी होते-होते मात्र मूत्र विसर्जन का माध्यम भर रह गईं । उन्हें लगने लगा कि भीतर ही भीतर एक नई जननेन्द्रिय उभर रही है जो नारी जैसी है ।

कुछ समय ऐसे ही छिपाये रहने के पश्चात् उन्होंने अपनी डॉक्टरी परीक्षा कराई तो विदित हुआ कि वे लगभग पूर्ण नारी की स्थिति में पहुँच चुके । इसके लिए एक छोटा ऑपरेशन कराना मात्र शेष है । वह कराया गया और वे सचमुच ही नारी बन गए । अमेरिका के चार्ल्सटन नगर के लोगों ने कौतूहलपूर्वक इस समाचार को सुना और समाचार-पत्रों में उनकी चर्चा हुई । बात इतने तक ही समाप्त नहीं हुई । उन्होंने अपना नाम बदला और एक नीग्रो युवक जानपाल सिमोन्स से अपना विवाह कर लिया यह

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विवाह भी बहुत चर्चा का विषय रहा और उसका भरपूर विरोध हुआ क्योंकि दक्षिणी अमेरिका अपेक्षाकृत रंगभेद की नीति में अधिक कट्टर है और वहाँ गोरी लड़की का काले लोगों के साथ विवाह को सामाजिक अपराध माना जाता है । इतने पर भी वह विवाह हुआ और उन्होंने सफल दाम्पत्य जीवन निबाहा ।

इन लिंग परिवर्तित व्यक्तियों के स्वभाव में तो बहुत पहले से ही अन्तर आ गया था पर परिवर्तित यौन उभार पीछे दिखाई पड़े । शल्य क्रिया के पश्चात् उनकी स्थिति परिपक्व होती चली गई और वे पिछली आदतों को भूलकर पूर्णतया नर से नारी की आकृति एवं प्रकृति में बदल गए । उन्होंने अपने विवाह किए और सुखी गृहस्थ भोगा । पिछले दिनों एक कमी थी कि ऐसे परिवर्तित लिंग वाले विवाह जोड़े सन्तानोत्पादन नहीं कर पा रहे थे अब यह बाँध भी टूट गया । कुछ वर्ष पूर्व चार्ल्सटन (दक्षिणी कैलीफोर्निया) में जान लेगलेपाल साइमन्स नामक महिला, नर-यौन परिवर्तन कराकर नारी बनी थी । उसने विवाह किया, गर्भिणी बनी और सन्तान को जन्म दिया । इस प्रकार की संसार में यद्यपि यह पहली घटना है तो भी यह सिद्ध तो हो ही गया कि परिवर्तन उस सीमा तक भी सम्भव है ।

यह परिवर्तन क्रम यों रिकार्ड में पिछले पचास वर्ष से ही आया है । पर इसका अर्थ यह नहीं कि भूतकाल में ऐसा होता नहीं रहा होगा । चूँकि यह विषय गोपनीय एवं लज्जास्पद माना जाता है इसलिए जहाँ ऐसे परिवर्तन हुए होंगे वहाँ छिपा कर रखा जाता रहा होगा । जनखे तो अभी भी हर देश में पाये जाते हैं । भारत में तो उनकी एक बिरादरी ही बन गई है । अरब देशों में भी वे इसी तरह होते हैं । अन्य देशों में वे विन्यास तो नहीं बदलते पर मनःस्थिति एवं आदतें तो अक्सर विपरीत लिंग वालों की तरह होती हैं । नपुंसकों का वर्ग ऐसा ही है । स्त्रियों जैसे वस्त्र आभूषण एवं शृंगार किए नाचने, गाने का पेशा कराने वाले उसी प्रकार के हाव-भाव व्यक्त करने वाले जनखे कहीं भी पाये जा सकते हैं । इनमें से अधिकांश ऐसे होते हैं जो पुरुष वर्ग के थे पर यौन व्यवधान ने उन्हें स्त्री बना दिया । मुगलकाल में उनके बहुत बड़े हरम जिनमें सैकड़ों बीबीयाँ रहती थीं यह जनखे उनकी पहरेदारी करते थे ।

नारियों में भी हर क्षेत्र में ऐसी अनेकों पायी जाती हैं जिनकी अधिकांश चेष्टाएँ पुरुषों जैसी होती हैं । उनमें से कितनी ही तो मर्दों जैसी पोशाक भी पहनती हैं और उसी ठसक से चलती, बोलती हैं । इनमें से कितनों की दाड़ी, मूँछ भी निकलती हैं ।

समलिंगी मैथुन एवं विपरीत रति का प्रकरण लज्जास्पद एवं अवांछनीय होने के कारण प्रायः पर्दे के पीछे ही छिपा रहता है पर यदि पर्दे को उघाड़ा जाय तो प्रतीत होगा कि ऐसे नर-नारी भी कम नहीं जिनकी यौन तृप्ति अपने वर्तमान लिंग से भिन्न प्रकार की चेष्टाओं से ही होती है । उनके कामुक चिंतन की धुरी प्रायः भिन्न वर्ग के अनुरूप होती है । ऐसे व्यक्तियों के बारे में यह अनुमान लगाया जाता रहा है कि वे पिछले जन्म में दूसरे लिंग के रहे होंगे अथवा जिस दशा में उनकी मनोभूमि चल रही है उसे देखते हुए वे अगले जन्म तक अपना लिंग बदल लेंगे । वैज्ञानिक विश्लेषण इस स्थिति का यह है कि हर मनुष्य में उभयलिंग के तत्व रहते हैं । सामान्यतया स्वाभाविक रूप से जो जिस संज्ञा का है उसमें उसी प्रकार की आकृति-प्रकृति पायी जाती है, पर सम्भव यह भी है कि भिन्न स्थिति जो प्रायः सुप्त स्थिति में पड़ी होती है क्रमशः जागती और प्रबल होती चली जाय । दोनों तत्वों में से जो बढ़ेगा वह दूसरे को झीना करेगा । लिंग भेद की स्थिति में जो विपरीत कामुक विचारणाएँ एवं चेष्टाएँ पायी जाती हैं उनका यही कारण है । यह सब अनायास आन्तरिक परिवर्तनों एवं उभारों के कारण भी होता है किन्तु यदि कोई चाहे तो संकल्पपूर्वक भी ऐसी विपरीत स्थिति में अपने को ढाल सकता है, क्योंकि मूलतः हर प्राणी में, हर मनुष्य में दोनों स्तर के तत्व मौजूद हैं । नारी तत्व को 'रयि' और नर तत्व को 'प्राण' कहते हैं । एक में ए. सी. करेन्ट की दूसरे में डी. सी. करेन्ट की प्रधानता है पर जिस प्रकार विद्युत यन्त्रों में परिवर्तन किया जा सकता है उसी प्रकार प्राणियों की शारीरिक व मानसिक स्थिति में भी हेर-फेर सम्भव है ।

उपर्युक्त विवेचन विश्लेषण के आधार पर हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि प्रत्येक प्राणी विशेषतया मनुष्य अपने आप में न केवल अन्य दृष्टियों से वरन् लिंग भेद की दृष्टि से भी पूर्ण है । आत्मा पूर्ण से पैदा होती है इसलिए पूर्ण है । "पूर्ण मदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्ण मुदच्यते" वाले श्रुति वचन में जिस तथ्य का प्रतिपादन किया गया है वह हर कसौटी पर खरा है । मनुष्य पूर्ण है उसकी दोनों इकाइयाँ नर और नारी के रूप में भिन्नता युक्त तो हैं, एक-दूसरे के लिए आवश्यक उपयोगी एवं सहयोगी भी हैं पर यह कहना उचित नहीं कि एक के बिना दूसरा अपूर्ण है । दूसरे पक्ष की सहायता बिना उसकी आत्मिक या भौतिक प्रगति रुकी पड़ी रहेगी । नारी कला, कोमलता का और नर शौर्य साहस का प्रतिनिधित्व करते हैं । इनकी विशेषता अधिकता जरूर रहती है पर इसका अर्थ यह नहीं कि दोनों पक्षों में से कोई ऐसी विशेषताओं से रहित है जो शारीरिक, मानसिक और आत्मिक पूर्णता में बाधा पहुँचती है । नर और नारी तथा नारी और नर परस्पर स्नेह सहयोग से रहें यह सब प्रकार से उचित, सराहनीय और मानवी गरिमा के उपयुक्त है, पर किसी को किसी की अनिवार्य रूप से ऐसी आवश्यकता है जिसके बिना गुजारा ही नहीं, यह सोचना व्यर्थ है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पार्थिनोजेनेसिस या अमैथुनी सृष्टि भी सम्भव है

प्रगति के पथ पर अग्रसर होते हुए जड़ तत्व चेतन बनने की दिशा में क्रमिक विकास कर रहे हैं । यह एक तथ्य है । सुविकसित प्राणी-चेतना प्रखर चेतन भले ही उनमें न हो, पर उनमें किसी मात्रा में वह स्फुल्लिंग विद्यमान अवश्य है जो चेतना का सूक्ष्म-सा परिचय देते हैं और अपनी दिशा जड़ता से मुक्ति पाकर चेतना के चरम लक्ष्य की ओर रेंगते चलने का आभास देते हैं ।

जड़ चेतन में भगवान की सत्ता के विद्यमान होने का परिचय इसी दृष्टि से प्राप्त किया जा सकता है कि चेतन के स्तर की न सही एक हल्की-सी झाँकी उसमें भी आगे बढ़ने की, ऊपर उठने की विकसित होने की आकांक्षा के रूप में पायी जाती है । इस अंश को ईश्वरीय चेतन सत्ता की विद्यमानता के रूप में लिया जा सकता है ।

हलचल धातु पाषाण जैसे जड़ पदार्थों में भी पायी जाती है । कोई भी वस्तु पूर्णतया निष्क्रिय नहीं है । उसके परिवर्तन आँखों से भी देखे जा सकते हैं । बारीकी से देखने पर अणु संरचना के भीतर चल रही अत्यन्त द्रुतगामी हलचलें तो धूलि के छोटे कण में भी पायी जा सकती हैं, इस सक्रियता को भी ईश्वरीय अंश माना जा सकता है ।

साधारणतया जीवन को वनस्पति वर्ग और प्राणि-वर्ग में बाँटा जाता है पर सर्वथा निर्जीव कहे जाने वाले धातु पाषाण जैसे पदार्थों में भी प्रसुप्त चेतना का एक अंश पाया जाता है, ऐसी दशा में असमंजस यह खड़ा हो गया है कि क्या जड़-पदार्थों को भी अल्पजीवन क्षमता सम्पन्न प्राणधारियों में ही गिना जायेगा । मनुष्य यों प्राणिवर्ग में ही आता है पर असाधारण बुद्धिमत्ता, मस्तिष्कीय संरचना, इन्द्रिय-चेतना और शरीर गठन को देखते हुए एक अतिरिक्त चतुर्थ चेतन वर्ग की गणना करने की आवश्यकता प्रतीत होती है । भोजन को ऊर्जा में बदल सकने की क्षमता वाले जीवधारी मानने वाली परिभाषा अब बहुत पुरानी हो गई ।

सेल में जीवन रस प्रोटोप्लाज्म भरा होता है । उस रस में १२ तत्व मिले होते हैं कार्बन, ऑक्सीजन, नाइट्रोजन, हाइड्रोजन, सल्फर, कैल्शियम, पोटेशियम, मैग्नीशियम, लोहा, फॉस्पोरस, क्लोरीन और सोडियम । इससे सिद्ध होता है कि जड़ पदार्थों का सम्मिश्रण जीवन तत्व की स्थिरता और प्रगति के लिए आवश्यक है । ऐसी दशा में इन रसायनों में भी जीवन की झाँकी की जाय तो कुछ अनुचित न होगा ।

एक जीवित प्राणी में अगणित जीवन तत्व क्यिमान रहते हैं । एक बूँद खून में हजारों सेल रहते हैं । रक्त में छोटी-छोटी लाल रक्त की कोशिकाएँ हैं । जिनमें हीमोग्लोबिन नामक लौह मिश्रण बहुलता से भरा होता है । इनसे कुछ कम संख्या में सफेद रक्त कोशिकाएँ हैं । ये रुग्णता के आक्रमण से लड़ती हैं । जिनमें आत्मरक्षा और प्रतिरोधी से लड़ने का ज्ञान विवेक मौजूद है उन्हें अचेतन कैसे कहें ? ऐसी दशा में जड़ माने जाने वाले शरीर की प्रत्येक कोशिका को एक स्वतन्त्र जीवधारी और जड़ माने जाने वाले शरीर को चेतन घटकों का समूह संगठन कहने से कोई अत्युक्ति नहीं है ।

केम्ब्रिज विश्वविद्यालय के अणु विज्ञानी फ्रेडहोयर्ले और प्रो. जेवी नार्बिकर इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं, विश्व रचना सम्बन्धी अणुओं और मनुष्य शरीर के जीवाणुओं की संरचना में कोई मौलिक अन्तर नहीं है । भले ही उनकी गतिविधियाँ भिन्न दिशाओं में चलती और भिन्न दशाओं में काम करती दिखाई दें । इस दृष्टि से अणु भी चेतना के निकट ही जा पहुँचता है ।

ईश्वरीय इच्छा का प्रतिफल

जीवन चेतना के अस्तित्व और विकास को लेकर वैज्ञानिक प्रायः विभिन्न मत, विवाद, प्रतिपादित किया करते हैं । इस सन्दर्भ में डार्विन और लैमार्क आदि के द्वारा प्रतिपादित विकासवाद (थ्योरी ऑफ एवोल्यूशन) को जो सिद्धान्त दिया है, यदि वह सत्य नहीं है तो पृथ्वी में मानव की उत्पत्ति को ईश्वरीय इच्छा का प्रतिफल कहा जायेगा ।

डार्विन और लैमार्क आदि ने विकासवाद (थ्योरी ऑफ एवोल्यूशन) का जो सिद्धान्त दिया है, यदि वह सत्य नहीं हो तो पृथ्वी में मानव की उत्पत्ति को आकस्मिक और ईश्वरीय इच्छा का प्रतिफल ही कहना होगा । ईश्वरीय सत्ता और उसकी सर्वशक्तिमत्ता को काल्पनिक कहने वाले लोग तब यह तर्क प्रस्तुत करते हैं कि यदि मनुष्य का प्रादुर्भाव आकस्मिक संयोग है और सबसे प्रथम ब्रह्मा का पुरुष वेश में जन्म हुआ तो उनके द्वारा सन्तानोत्पत्ति कैसे सम्भव हुई ? सन्तान की उत्पत्ति के लिए स्त्री और पुरुष का समायोजन आवश्यक है, फिर अकेले ब्रह्मा जी अमैथुनी सृष्टि उत्पन्न करने में किस प्रकार समर्थ हुए ?

अमैथुनी सृष्टि का मातृत्व पक्ष भी है, जिसमें केवल स्त्रियों द्वारा सन्तान पैदा करने की बात आती है । यह बात केवल भारतीयों में ही प्रचलित नहीं है वरन् प्रायः सभी धर्मों में ऐसे आख्यान मिलते हैं, जिनमें अमैथुनी प्रजा का यह दूसरा रूप अर्थात् बिना पुरुष के संयोग के स्त्री द्वारा सन्तानोत्पत्ति का विवरण मिलता है । सामान्य श्रेणी के व्यक्तियों के लिए यह दोनों ही प्रसंग अप्रामाणिक हैं । इस सम्बन्ध में समुचित जानकारी न होने से ही आज तक अति-मानवता के उत्तर में उत्पन्न हुई विभूतियाँ कलंकित हुई हैं ।

भगवान राम अपने भाइयों सहित पिता के संयोग के बिना जन्मे थे । इतिहास प्रसिद्ध घटना है कि जब दशरथ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की आयु ढलने लगी और उन्हें कोई सन्तान नहीं हुई तो उन्होंने गुरु वशिष्ठ के पास जाकर अपना दुःख प्रकट किया । वशिष्ठ ने तब शृंगी ऋषि को बुलाकर पुत्र्येष्टि यज्ञ कराया । इस यज्ञ में 'चरु' में देव शक्तियों का आह्वान कर उसे तीनों रानियों को बाँट दिया गया । एक-एक भाग मिलने के कारण कौशल्या और कैकयी को एक-एक और दो भाग मिलने के कारण सुमित्रा ने जुड़वाँ बच्चों को जन्म दिया । इस घटना ने सिद्ध कर दिया था कि देव-शक्तियों को कृत्रिम गर्भाधान द्वारा मानव आकृतियों में लाया जा सकता है । ऐसे जो भी शरीर पैदा हुए हैं, शारीरिक गुण धर्म से वह भले ही मनुष्य जैसे रहे हों पर उनकी अतीन्द्रिय क्षमताएँ बहुत बढ़ी-चढ़ी रही हैं; इसलिए उन्हें देवदूत, पैगम्बर और साक्षात् भगवान माना जाता रहा है । देव उपासना के द्वारा पुरुष और स्त्री शरीरों में ऐसी शक्तियों का आह्वान, धारण और प्रजनन, आज भी सम्भव है ।

मरियम तब कुमारी ही थीं, जब उन्होंने महापुरुष ईसा को जन्म दिया । मरियम की ईश्वर भक्ति और उनकी आत्म-पवित्रता सर्वविदित थी, इसलिए तब उन पर किसी ने दुराचरण का दोषारोपण नहीं किया । पीछे जिन लोगों ने सन्देह किया वह उनकी अपनी भ्रान्त धारणाएँ थीं। महापुरुष ईसा में जो विशेषताएँ थीं, वह बताती थीं कि इस आत्मा का प्रादुर्भाव वंशगत नहीं वरन् ब्रह्माण्ड की किन्हीं अदृश्य शक्तियों से है । तभी तो वे हर किसी के मन की बात जान सकते थे, एक पाव रोटी से, सैकड़ों आदमियों की भूख मिटा सकते थे, किसी भी रोगी को केवल स्पर्श और आशीर्वाद से अच्छा कर सकते थे । विज्ञान ने अमैथुनी सृष्टि की पुष्टि कर दी है, एक दिन वह भी आयेगा, जब चमत्कार जैसी लगने वाली महापुरुषों की यह बातें भी विज्ञान ऐसे सत्य सिद्ध कर देगा जैसे किसी छोटी-सी डाल के पत्ते गिनकर बता देना ।

कर्ण का जन्म कुन्ती के उदर से हुआ था । कुन्ती एक दिन गायत्री मन्त्र जप कर रही थीं । महाभारत में कथा आती है कि वे उस दिन अत्यधिक ध्यानावस्थित थीं । उन्हें लगा जैसे भगवान सूर्यदेव उनके पास हैं, उन्हें स्वीकार कर रहे हैं, उनका भर्ग (तेज) उनके गर्भ में प्रविष्ट हुआ और वे सचमुच गर्भवती हो गईं । कर्ण सूर्य के समान तेजस्वी और अप्रियतम दानी थे । वह क्षमता महाभारत के और किसी योद्धा में नहीं थी ।

पाण्डु ने एक बार ऐसे मृग के जोड़े का वध कर दिया था, जो उस समय काम-क्रीड़ा कर रहे थे । पाण्डु को मृगों ने शाप दिया । "तुम्हारी मृत्यु भी ऐसे ही होगी ।" और इसके बाद की घटना है कि उनकी दोनों रानियों कुन्ती और माद्री ने देव-शक्तियों के आह्वान द्वारा अमैथुन पुत्रों को जन्म दिया । यम के पुत्र युधिष्ठिर साक्षात् धर्मावतार थे । इन्द्र के पुत्र अर्जुन के शौर्य और पराक्रम का कोई और जोड़ीदार नहीं था । भीम मरुत पुत्र थे, उनमें वायु से भी प्रचण्ड बल विद्यमान था, नकुल सोम के अंश से जन्मे होने के कारण ज्योतिर्विद्या के अद्वितीय पण्डित थे । एक मात्र सहदेव ही ऐसे थे, जो सहवास से पैदा हुए थे और वही ऐसे थे, जिनमें अन्य भाइयों की अपेक्षा सांसारिकता का भाव और कामनाएँ अधिक थीं । हम देवशक्तियों के सम्पर्क में आकर आत्मतेज विकसित करते हैं, उसका प्रभाव पीढ़ी दर पीढ़ी चलता हुआ चला जाता है । यह बात हमें इन उदाहरणों से देखने को मिलती है । भारतीय अपने आपको देव-शक्तियों का अंश ऋषि पुत्र मानते हैं, उनके ज्ञान, गुण, सौन्दर्य आदि की क्षमता पाश्चात्य जगत नहीं कर सकता ।

कौरव भ्रूण सन्तान थे । अंजनी पुत्र हनुमान पितृहीन सन्तान थे । इन घटनाओं से यह सिद्ध हो गया कि संसार में ऐसे तथ्य विद्यमान हैं, जो गुण और स्वभाव से मानव प्रकृति के होकर भी ज्ञान, शक्ति और गुणों की दृष्टि से बहुत विकसित होते हैं, उनसे अतीन्द्रिय सम्पर्क स्थापित कर कोई भी स्त्री या पुरुष अपने आप में उन दैवी प्रतिभाओं को विकसित कर सकता है ।

प्रमाण और वैज्ञानिक व्याख्याएँ इस तथ्य का समर्थन ही करती हैं । बच्चे का जन्म, स्त्री के अण्ड (ओवम) और पुरुष के शुक्राणु (स्पर्म) के मिलने से होता है । अभी तक लोगों को पता था कि अण्ड और शुक्राणु की भेंट केवल सम्भोग से ही सम्भव है, किन्तु डॉ. स्टीवर्ड ने गाजर पर कई तरह के प्रयोग करके यह सिद्ध कर दिया है कि प्रत्येक कोशिका (सेल) में जीव-निर्माण की क्षमताएँ विद्यमान रहती हैं । इसलिए केवल अण्ड (ओवम) से ही सन्तान का जन्म सम्भव है, यह मान बैठना उचित नहीं । इस दिशा में विज्ञान की शोध अब काफी आगे तक बढ़ चुकी है ।

१८९९ में डॉ. जैम्वीस लीव ने एक प्रयोग किया । उन्होंने समुद्र में पाये जाने वाले 'अर्चिन' नामक जन्तु की मादा के अण्ड को मैग्नीशियम क्लोराइड से उद्दीप्त किया, उससे अण्ड में गर्भाधान (फरटलाइजेशन) बिना किसी शुक्राणु की सहायता से हो गया । इस घटना से वैज्ञानिक जगत में तीव्र प्रतिक्रिया हुई और कृत्रिम गर्भाधान की खोज के लिए वैज्ञानिकों में सर्वत्र होड़ मच गई ।

स्त्री के अण्ड (ओवम) में गर्भाधान के लिए यह आवश्यक है कि २४ गुणसूत्र (क्रोमोसोम्स) स्त्री के और २४ गुणसूत्र पुरुष के मिलना आवश्यक है । पुरुष के गुणसूत्रों में एक विशेषता यह होती है कि एक ग्रुप में २४ गुणसूत्र समान होते हैं, किन्तु दूसरे ग्रुप में २३ गुणसूत्र समान धर्म वाले होते हैं और एक गुणसूत्र ऐसा होता है, जो ४७ से किसी प्रकार भी नहीं मिलता । यह एक गुणसूत्र ही पुरुष के जन्म का कारण है, यदि स्त्री और पुरुष के वह ग्रुप मिलें, जिनमें २४ गुणसूत्र समान (इन्हें अंग्रेजी में एक्स क्रोमोसोम कहते हैं) होते हैं तो कन्या जन्म लेगी, किन्तु यदि स्त्री के २४

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गुणसूत्रों से पुरुष के गुणसूत्रों का वह ग्रुप मिले, जिसमें एक गुणसूत्र भिन्न प्रकृति का होता है (इसे बाई क्रोमोसोम कहते हैं) तो सन्तान पुत्र होगा । अर्चिन के मामले में शुक्राणु का कार्य मैग्नीशियम द्वारा सम्पन्न होना यह बताता है कि अन्तरिक्षीय शक्तियों के माध्यम से गर्भ में पितृहीन सन्तानों को स्थापित किया जा सकता है । इस पर डॉ. यूजीन बटाइलोन ने मेढक के अण्ड में पिन चुभोकर निषेचन की क्रिया के लिए प्रयास किया और इसमें उन्हें सफलता भी मिल गई । निषेचन का अर्थ है, गुणसूत्रों की संख्या दुगुनी हो जाना । यदि गुणसूत्रों की संख्या दुगुनी हो जाती है तो बिना पिता की सहायता से अण्ड में सन्तान रह सकती है । इस प्रयोग में ऐसा ही हुआ, पिन चुभोने से मेढक का निषेचन हो गया और उसको इस कृत्रिम गर्भाधान से ही सन्तान उत्पन्न हो गई । यह प्रयोग खरगोशों पर सफल हुए । १५ जुलाई १९६७ को, लन्दन से प्रकाशित होने वाली 'टिटविट्स' पत्रिका में डॉ. जिराल्ड मैकनाइट ने यह लिखा है कि ब्रिटेन में इस तरह का क्रमबद्ध प्रयोग चल रहा है । १०० स्त्रियों ने अपने आपको कृत्रिम निषेचन के लिए प्रस्तुत किया । जिनमें कम से कम ८ महिलाएँ ऐसी थीं जिन्हें बच्चा पैदा करने में किसी प्रकार पुरुष के सहयोग की आवश्यकता नहीं पड़ीं । श्रीमती एमोनेरी जोन्स ने 'मोनिका' नामक पुत्री को जन्म दिया । वैज्ञानिकों ने जोन्स की पूरी देखरेख की थी । वे इनके बारे में निर्विवाद थे, मोनिका के रंग-रूप, आकृति, प्रकृति में मानवोचित गुणधर्म एवं प्रकृति में बिल्कुल अन्तर नहीं था । वैज्ञानिक अब उन तत्वों की खोज में है, जो कृत्रिम गर्भाधान की क्रिया में शुक्राणु (स्पर्म) का स्थान ले सकते हैं । इन प्रयोगों की सफलता देवों या ब्रह्माण्ड स्थित चेतन शक्तियों के रहस्यों का भी उद्घाटन करेगी ।

अब एक ही प्रश्न शेष रह जाता है वह है, स्त्री के प्रजनन कोशों में 'बाई' किस्म के गुणसूत्र की विद्यमानता । अभी तक स्त्रियों के शरीर में इस गुणसूत्र की उपस्थिति का समर्थन नहीं हो पाया । यदि इतना और हो जाय तो किसी को भी यह जानने में आपत्ति शेष न रहेगी कि अमैथुनी सृष्टि का सिद्धान्त गलत है ।

वैज्ञानिक स्पष्ट रूप से व्याख्या भले ही न कर पाये हों, किन्तु ऐसे प्रमाण मिल चुके हैं, जिनसे पुरुषों में पर्याप्त मात्रा में स्त्रियोचित गुण और स्त्रियों में पुरुषोचित गुण पाये गए हैं । अमेरिका में इन दिनों यौन-परिवर्तन सामान्य ऑपरेशन की श्रेणी में आता जा रहा है । वहाँ के अखबारों में आये दिन किसी लड़की को लड़का और लड़के को लड़की की योनि में बदल जाने के समाचार छपते रहते हैं । यह ऑपरेशन उन दशाओं में ही सम्भव हैं, जबकि यौन परिवर्तन की इच्छा करने वालों में परिवर्तन के लिए उपयुक्त गुण किसी न किसी अंश में पहले से ही विद्यमान हों । इतिहास ऐसी घटनाओं से भरा पड़ा है, जिनसे पता चलता है कि स्त्रियों में पुरुषों के और पुरुषों में स्त्रियों के तत्व भी होते हैं और यह तभी सम्भव है, जब कि उनके वंश को निर्धारित करने वाले गुणसूत्रों में भी वह विशेषताएँ विद्यमान हों । यदि यह सच है तो यह मानने में किसी को कोई आपत्ति न होगी कि प्रकृति के प्रत्येक कण में पुरुष और स्त्री दोनों स्वभाव सनातन हैं, इसी को प्रकृति और परमेश्वर की—"गिरा अरथ जल-बीच सम" अभिन्नता कहते हैं । मैड्रिड (स्पेन) में मेडिकल फैकल्टी के एक सर्वेक्षण में डॉ. जान केस्लर नामक एक डॉक्टर का बयान छपा है, डॉ. केस्लर ने बताया कि लोजानो नामक व्यक्ति की स्त्री को दो जुड़वाँ सन्तानें हुईं । एक बालक था, एक बालिका । माँ के स्तनों में उतना दूध नहीं होता था, जितने से बच्चों की भूख मिट जाती । इस कारण बच्चे दिन भर रोया करते थे । संयोग से लोजानो के स्तन सामान्य पुरुषों से कुछ बड़े थे, सो वह बच्चों को बहलाने के लिए उन्हें अपने स्तनों में लगा लेता । बच्चे दूध पीने लगते, धीरे-धीरे लोजानो के स्तनों से दूध निकलने लगा । दूध इतना निकलने लगा कि उसने अपने बच्चों को ५ माह तक दूध पिलाया, पिता का दूध पी-पीकर बच्चे खूब स्वस्थ हो गए ।

नीमेस के डॉ. रेवाल ने एक १५ वर्षीय बालक का परिचय छापा था, जिसके दोनों स्तन बालिकाओं की तरह के थे, कुछ दिन में उनसे इतना दूध निकलने लगा कि उसे शर्म से स्तनों में रुई बाँधे रहना पड़ता था ।

जनवरी १९२४ के एक अमेरिकन समाचार पत्र में जवोटा जियोविच नाम के २२ वर्षीय सर्वियन युवक का समाचार छपा है और उसमें आश्चर्यपूर्वक स्वीकार किया गया है कि बेलग्रेड के अस्पताल में उसके पेट का ऑपरेशन करके १० और ५ इन्च लम्बे भ्रूण निकाले । इन भ्रूणों के गर्दन, छाती, हाथ, पाँव काफी स्पष्ट हो चुके थे ।

यह घटनाएँ पुरुषों की हैं और यह प्रामाणित करती हैं कि पुरुषों में स्त्रियोचित संस्कार होना असम्भव नहीं । भले ही वे प्रसुप्त अवस्था में हों पर यदि वे विकसित किए जा सकें तो मनुष्य स्वयं भी अपने शरीर में अमैथुनी सृष्टि पैदा कर सकता है ।

यही बात स्त्रियों के सम्बन्ध में भी है । उनमें अनेक बार पुरुषोचित गुण स्पष्ट रूप से देखने में आते हैं, यह तभी सम्भव हो सकता है, जब पुरुषों के गुण धर्म वाले सूत्र उनके शरीर में पहले से ही विद्यमान हों ।

अमेरिका की श्रीमती टेलर जैसे वृद्ध होती गईं, उनकी दाड़ी मूँछें काफी बड़ी निकल आयीं । इनकी दाढ़ी के बाल स्तनों के नीचे तक पहुँच गए थे । १७३२ में ड्रेसडेन में रोजिने मार्गरिट मुलर का निधन हुआ । उनके निधन का समाचार छापते हुए डॉ. गाल्ड और डॉ. पाइले ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'एनामलीज एण्ड क्युरियासिटीज ऑफ मेडिसन' में लिखा है कि श्रीमती मार्गरिट मुलर के खूब घनी और लम्बी-लम्बी दाढ़ी-मूँछें थीं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नील्स होपर ने अपनी पुस्तक 'पुरुष-स्त्री' (मैन इनटू अमैन) में लिखा है कि ड्रेसडेन (जर्मनी) के शल्य चिकित्सक डॉ. वार्नेक्रुत्सने ने ईनर वेलनर नामक एक चित्रकार की शल्य-चिकित्सा की और उसे मनुष्य से स्त्री बना दिया । इसके जीवन का मनोरंजक वृत्तान्त भी इसमें छपा है । १८ अप्रैल, १९४३ के 'हिन्दुस्तान स्टैण्डर्ड' (जो कलकत्ता से छपता है) में जोरहाट के पास चारवाल गाँव के केवट की १७ वर्षीया पुत्री सईदा खातून के पुरुष बन जाने का समाचार छापा है ।

यह घटनाएँ प्रामाणित करती हैं कि पुरुषों में स्त्रियोचित और स्त्रियों में पुरुषोचित गुणों की विद्यमानता प्रकृति का विलक्षण रहस्य है और उससे अमैथुनी सृष्टि का सिद्धान्त सत्य प्रमाणित होता है । प्रमाण और विज्ञान दोनों ही उसकी पुष्टि करते हैं ।

नर और नारी में श्रेष्ठ कौन ?

इस पर नर और नारी के शरीर की व आन्तरिक सामर्थ्य की दृष्टि से विवेचन कर विश्लेषण की स्थिति आये तो नारी का पलड़ा ही भारी होगा ।

नर शारीरिक दृष्टि से नारी की तुलना में बलिष्ठ भले ही हो पर इसके अतिरिक्त हर क्षेत्र में नारी की गरिमा बढ़ी-चढ़ी है । भावनात्मक उत्कृष्टता के क्षेत्र में तो वह निःसन्देह पुरुष की तुलना में कहीं आगे है ।

नारी गरिमा का एक तथ्य विज्ञान की कसौटी पर और भी स्पष्ट हुआ है । नारी एकाकी प्रजनन कर सकती है । पुरुष के संयोग के बिना भी उसके लिए सन्तानोत्पादन सम्भव है । पुरुष के लिए यह सर्वथा असम्भव है । इस दृष्टि से पुरुष अपूर्ण हुआ और नारी पूर्ण ठहरी । यदि सृष्टि संचालन की बात का ही भौतिक मूल्यांकन किया जाय तो एक एकड़ भूमि का मूल्य दस हजार और उसमें प्रयुक्त होने वाले पच्चीस किलो बीज का मूल्य पच्चीस रुपया होता है । सन्तानोत्पादन का श्रेय यदि दिया जाना हो तो वह नारी को ही मिल सकता है । नर तो उस महान् प्रक्रिया में मात्र एक स्वल्प सहयोग भर प्रदान करता है । सो भी इतना कम कि उसके बिना भी काम चल सकता है ।

यदि किसी कारणवश ऐसी स्थिति आ जाय कि नर और नारी में से इस सृष्टि में एक ही वर्ग शेष रह जाय दूसरा समाप्त हो जाय तो नारी में वह क्षमता है कि वह अकेले ही सृष्टि क्रम को संचालित रख सकती है, किन्तु पुरुष के लिए ऐसा कर सकना सर्वथा असम्भव है उसके पास वे यन्त्र उपकरण ही नहीं हैं जिनसे गर्भ धारण सम्भव होता है ।

अब तक यही माना जाता था कि नर संयोग के बिना अकेली नारी प्रजनन में असमर्थ है पर विज्ञान ने सिद्ध किया है कि इस क्षेत्र में भी नारी अपूर्ण नहीं सम्पूर्ण है । उसमें यह सम्भावना भी विद्यमान है कि यदि वह चाहे तो स्वावलम्बी रह कर सृष्टि संचालन कर सकती है । अभी विज्ञान इतना ही सिद्ध कर सकता है कि नारी केवल कन्याओं को ही जन्म दे सकती है । पुत्र जन्म के लिए पुरुष सहयोग अपेक्षित है । फिर अगले दिनों यह कमी जो आज अनुभव की जाती है उसका भी समाधान मिल सकता है ।

विज्ञान का हर विद्यार्थी जानता है कि प्रत्येक मनुष्य के भीतर उभय लिंगों का अस्तित्व विद्यमान रहता है । नारी के भीतर भी नर का अस्तित्व रहता है । इस अन्तर्नर को ऐनिमस कहते हैं और हर नर के भीतर नारी की सूक्ष्म सत्ता विद्यमान रहती है । इसे अन्तर्नारी की ऐनिमा कहते हैं । कोई मनुष्य न पूर्णतया नर है और न नारी । स्तन नारी के विकसित होते हैं पर उनका अस्तित्व नर के भीतर भी रहता है । उसी प्रकार प्रजनन अंगों के गह्वर में विपरीत लिंग का अस्तित्व भली प्रकार देखा जा सकता है । शरीर शास्त्र का कोई भी छात्र इसे सहज ही समझ सकता है । इतना ही नहीं स्वभाव और प्रवृत्तियों में भी बहुत-सी बातें ऐसी होती हैं जिनसे नर में नारी का और नारी में नर का अस्तित्व देखा जा सकता है ।

अविकसित जीवों में नर और मादा का संयोग बिना हुए भी सन्तानोत्पत्ति का क्रम चलता रहता है । बहुत से पौधे ऐसे हैं जिनकी टहनियाँ काटकर जमीन में गाड़ दी जायें तो वे उगती हैं और एक स्वतन्त्र पेड़ बन जाता है । ईख इसी किस्म का पौधा है । गाजर की हर कोशिका में एक नया गाजर का पौधा उगाकर अमेरिका के वनस्पति विज्ञानी प्रो. स्टीवर्ड ने दिखाया है । हाइड्रा नामक एक सूक्ष्म प्राणी के शरीर का कोई टुकड़ा गिर पड़े तो वह एक स्वतन्त्र हाइड्रा बन जाता है । बैक्टीरिया भी इसी तरह दो खण्डों में बँटते और अपनी वंश वृद्धि करते हैं । हर वनस्पति की भिन्न लिंगी पराग या बीज में उभयपक्षी लिंग भेद हों ही यह आवश्यक नहीं ।

पेड़-पौधों के प्रजनन में भी जीवधारियों की तरह परागण क्रिया ही मूल कारण होती है । रजवीर्य की तरह इनमें भी स्त्री केशर और पुंकेशर तत्व होते हैं और इनके मिलन पर ही फल एवं बीज की उत्पत्ति होती है और यहीं से वंशवृद्धि का आधार बनता है ।

कुछ पौधों में दोनों तत्व पाये जाते हैं और हवा के साथ उड़कर अथवा मधुमक्खियों, तितलियों अथवा अन्य छोटे कीड़ों द्वारा अपने पंख या पैरों के सहारे इधर-उधर किया जाता है और जब भिन्न लिंग पराग का परस्पर सम्मिश्रण होता है तो वे गर्भ धारण करते हैं । यह भ्रूण ही फल हैं । फल के अन्दर बीज उसकी अगली पीढ़ी की तैयारी समझी जानी चाहिए ।

बहुत से पेड़-पौधे एक लिंगी होते हैं । इस प्रकार के मादा पौधे यदि किसी अन्य पेड़ से नर केशर प्राप्त न कर सकें तो वे फलित नहीं होंगे । विज्ञान ने इन पौधों में भी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

कृत्रिम गर्भाधान की प्रक्रिया आरम्भ की है । समर्थ पुंकेशर का संयोग हल्की जाति के मादा केशर से कराने से पौधों के स्तर को अधिक विकसित करने का सफल प्रयोग इन दिनों बहुत चल रहा है ।

अच्छी जाति के बीज कठिनाई से मिलते हैं । फसल के समय जो बीज अच्छा होता है वह भी ऋतु प्रभाव या छूत के कीड़े चिपक जाने से अपना प्रभाव खो बैठता है और अच्छा दीखने वाला बीज भी घटिया सिद्ध होता है इसलिए एक नई विधि निकाली गई है कि गन्ना आदि की तरह पेड़ के टुकड़े काटकर उन्हें बोने को ही ऐसा योग कर दिया जाय कि अन्य पौधे भी उसी प्रकार बिना बीज के उगने और बढ़ने लगें । टहनियाँ काटकर बोने और उसी से पौधा उत्पन्न हो जाने की विधि अब तक कुछ खास किस्म के पौधों तक ही सीमित थी, पर अब यह प्रयत्न किया जा रहा है कि अधिकांश पौधों में यह सुधार कर दिया जाय कि वे संयोग परागण की यह बाहरी बीज की प्रतीक्षा किए बिना अपने आप में ही वह प्रयोजन पूरा कर लिया करें और परागण की प्रतीक्षा किए बिना ही टहनियों के द्वारा ही अपनी वंश वृद्धि जारी रख सकें ।

पर प्राणि जगत में यह बात आश्चर्य की समझी जाती थी (निर्जीव अण्डा देने वाली मुर्गियाँ बिना नर के संयोग के अण्डे तो दे लेती हैं पर उनसे बच्चे नहीं हो सकते । मनुष्य जैसे विकसित प्राणी के लिए तो यह और भी कठिन है ।

पुराणों में ऐसी कथा मिलती है जिनमें यह बताया गया है कि यौन सम्पर्क के बिना बच्चे हो सकते हैं । लंका दहन के पश्चात् हनुमान समुद्र में नहाए उनका पसीना मछली पी गई और उससे मकरध्वज का जन्म हुआ । देवताओं और ऋषियों के बारे में भी ऐसा वर्णन मिलता है, पर उन्हें अलंकारिक माना जाता है । पीछे के इतिहास काल में भी जब इस प्रकार की घटनाएँ देखने को मिलती हैं तब यह सोचने को विवश होना पड़ता है कि क्या यह सम्भव है कि बिना संयोग के सन्तान उत्पन्न हो सके । वृद्ध दशरथजी की तीन रानियों की सन्तानें यज्ञ चरु से हुई थीं । व्यासजी ने वंश नाश के संकट को बचाने के लिए राजा विचित्रवीर्य की रानियों को नम्न देखा भर था और उन्हें पाण्डु, धृतराष्ट्र तथा विदुर के रूप में तीन सन्तानें मिलीं । इस दिशा में खोज करने पर और भी उदाहरण मिलते हैं । कुन्ती ने कर्ण को कुमारी अवस्था में ही उत्पन्न किया था । कर्ण ही नहीं, धर्मराज से युधिष्ठिर की, इन्द्र से अर्जुन की, पवन से भीम की उत्पत्ति मानी जाती है । क्या अशरीरी देव शक्तियों का आवेश नर तल धारियों में सन्तानोत्पन्न कर सकता है । इस शृंखला में तब एक कड़ी और जुड़ जाती है जब हम कुमारी मरियम के पेट में से ईसा मसीह के जन्म की बात पढ़ते हैं ।

पुराने उदाहरणों के सम्बन्ध में कई तरह की आशंकाएँ की जा सकती हैं, और यह कहा जा सकता है कि नर संयोग को उन दिनों लोकलाज वश देव आवेश कह कर छिपाया गया होगा, चूँकि वे घटनाएँ बहुत पुरानी हो गईं और अब उनका परीक्षण विवेचन करने का समय नहीं रहा इसलिए इन उदाहरणों को लेकर इस निष्कर्ष पर पहुँचना कठिन है कि ईख, गुलाब की तरह टहनियों से अथवा हाइड्रा और बैक्टीरिया जैसे जीवों की तरह क्या मनुष्य भी बिना संयोग के सन्तानोत्पन्न कर सकता है । केला केवल मादा अण्डाशय का ही परिष्कृत रूप है । प्रकृति में तो यह एक लिंगी प्रजनन पार्थनोवेनेसिस चिरकाल से चला आ रहा है । प्रश्न केवल मनुष्य के सम्बन्ध में है ।

बात असम्भव-सी लगती है पर विज्ञान के बढ़ते हुए चरणों ने इस सम्भावना को एक सच्चाई के रूप में प्रस्तुत कर दिया है कि बिना नर की सहायता के नारी द्वारा अपने कौमार्य और ब्रह्मचर्य की रक्षा करते हुए सन्तानोत्पन्न कर सकना सम्भव है । नर ऐसा कर सके यह कठिन दीखता है क्योंकि उसके पास भ्रूण धारण करने के वे अवयव नहीं होते जो नारी को उपलब्ध हैं ।

कुछ समय पूर्व जीव विज्ञानी प्रो. हाल्डेन की सहयोगिनी सहधर्मिणी डॉ. हेलेन पर्व ने यह दावा किया था कि—"किसी असंदिग्ध कुमारी के गर्भवती होने की उतनी ही सम्भावना है जितनी एक साथ कई बच्चे किसी स्त्री के पेट से पैदा होने की । दोनों ही बातें अपवाद हैं पर असम्भव नहीं । एक साथ कई बच्चे हर स्त्री के नहीं होते, पर उनका होना असम्भव नहीं । इसी प्रकार यदि कोई कुमारी बिना नर की सहायता से गर्भ धारण करे तो इसे असाधारण भर कहा जाना चाहिए असम्भव नहीं ।"

इस दावे को लेकर पाश्चात्य देशों में एक बड़ा विवाद उठ खड़ा हुआ । दावे को सिद्ध करने की चुनौती दी गई । अस्तु डॉ. स्पर्व ने ब्रिटिश पत्रों में विज्ञापन छपाया कि जो महिलाएँ अपनी सन्तान की पिता भी स्वयं बनना चाहती हों वे वैज्ञानिक परीक्षा के लिए आगे आयें ।

इस विज्ञापन के आधार पर लगभग १०० महिलाओं ने इसके लिए अपने को प्रस्तुत किया । उनमें से प्राथमिक परीक्षा में ८६ उत्तीर्ण हुईं । इस प्रयोग की परीक्षा के लिए सुप्रसिद्ध जीव शास्त्रियों की डॉ. स्टेनली वाल्फेर लिन की अध्यक्षता में एक समिति गठित की गई । इसके दल में सम्मिलित सदस्य थे प्रख्यात डॉक्टर वर्नाडे केंम्बर, डॉ. सिडनी, डॉ. डेविड विन विलियम्स ।

प्रयोग के लिए सबसे उपयुक्त शरीर पाया गया श्रीमती ऐमीमोरी जोन्स का । प्रयोग सफल हुआ । श्रीमती जोन्स ने एक लड़की को जन्म दिया । इसमें कहीं किसी चालाकी की गुंजाइश न रहे इस दृष्टि से प्रतिबन्धों की सारी व्यवस्था पूरी कर ली गई और पूरे गर्भकाल में चिकित्सक मण्डली की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

निरन्तर देखभाल रही । नियत समय पर कन्या को जन्म देकर श्रीमती जोन्स ने उस असम्भव मानी जाने वाली बात को सम्भव करके दिखा दिया जिसमें सृष्टि संचालन के लिए नर नारी सम्पर्क आवश्यक कहा जाता था ।

इस प्रजनन से यह तथ्य स्पष्ट हो गया कि पानी के पूँछदार कीड़ों की तरह शुक्र कीटकों के सिर में २३ गुणसूत्र और पूँछ में माइटोकोण्ड्रिया नामक पिण्ड होते हैं । यह पिण्ड ही शुक्राणुओं को गतिशील होने की शक्ति प्रदान करते हैं । नारी अण्डकों का उद्दीपन और विभाजन आमतौर से शुक्राणु करते हैं । पर यह अनिवार्य नहीं, यह उत्तेजना दूसरे प्रकार से भी उत्पन्न की जा सके तो नारी स्वयं ही प्रजनन करने में सफल हो सकती है, क्योंकि उसके रज अण्ड में उत्पादन के सारे तत्व मौजूद हैं । नारी अण्ड में २३ गुणसूत्र होते हैं वे ४६ हो जायें तो भ्रूण धारण हो सकता है । यह कार्य नारी के दो अण्डों को मिला देने की वैज्ञानिक पद्धति से भी सम्भव हो गया और श्रीमती जोन्स ने कन्या को जन्म दिया । नर का शुक्राणु रहने से यह लाभ था कि सन्तान के पिता की वंश परम्परा माता की वंश परम्परा में मिलकर सन्तान को मिश्रित धर्मी बना सकती थी पर यदि वैसा नहीं हुआ तो केवल माता के स्वरूप और स्वभाव की ही सन्तान उत्पन्न होगी । यह मिश्रण तो सम्भव नहीं पर अण्डाणु को उत्तेजित करना और उसके गुणसूत्रों को द्विगुणित कर देना विज्ञान की पकड़ में है । यदि नर का इस धरती पर से किसी कारण वंश लोप हो जाय तो नारी अपने बलबूते पर सृष्टि उत्पन्न करती रह सकती है हाँ वर्तमान उपलब्धियों के आधार पर वह केवल कन्याएँ ही उत्पन्न कर सकती है । प्रकृति तो कुछ भी कर सकती है । उसके लिए मरियम के पेट से ईसा और कुन्ती के गर्भ से कर्ण का जन्म उनकी कुमारी माताओं द्वारा पूर्णतया सम्भव है, विज्ञान अभी वहाँ नहीं पहुँचा वह नारी के पेट से कन्या उत्पन्न कर सका है । अभी नारी केवल कन्या की पिता बन सकी है । आगे पुत्र की सम्भावना के लिए विज्ञान के अगले चरणों की प्रतीक्षा करनी पड़ेगी ।

श्रीमती जोन्स के गर्भ से उत्पन्न 'मोनका' नाम की लड़की अब किशोरावस्था में है । वह वैज्ञानिकों के लिए कौतूहल पूर्ण शोध का विषय बनी हुई है । इन माँ-बेटी के शरीर में इतना साम्य है कि किसी भी परीक्षण में उन दोनों की शरीर रचना में कोई अन्तर दिखाई नहीं पड़ता, रंग, रूप और अंगों की बनावट में इतनी समता है कि देखने वाले बड़ी उम्र की जोन्स को छोटी उम्र की जोन्स में बदली हुई ही कहने लगते हैं । बच्ची की ट्रू कापी सत्य प्रतिलिपि के रूप में देखने के लिए लोग दूर-दूर से आते हैं ।

नारी पर किया गया उपर्युक्त प्रयोग अब वैज्ञानिकों के लिए एक उत्साह और आशा का विषय बन गया है जो पशु केवल दूध के काम आते हैं उनके नर बच्चे बेकार सिद्ध होते हैं और खाल मांस के लिए उन्हें मौत के घाट उतारना पड़ता है । बकरे और भैंसे जितना खाते हैं, जगह घेरते हैं उसकी तुलना में लाभ कम देते हैं इसलिए उन्हें कसाई के हवाले ही किया जाता है । यदि वे दुधारू पशु केवल मादाएँ ही जनने लगें तो फिर दूध की कमी न रहे और मार-काट भी उतनी न मचानी पड़े । इसलिए पशुओं पर तथा दूसरे जन्तुओं पर यह प्रयोग किए जा रहे हैं कि मादा प्रजनन के सम्बन्ध में नर की आश्रित न रहकर अपने पैरों पर आप खड़ी हो सके । इसके लिए केवल उस विधि को व्यापक भर बनाना है जिसके अनुसार मादा का अण्ड उत्तेजित और एकत्रित हो सके । यह कार्य अब असम्भव नहीं रहा केवल कष्ट साध्य भर रह गया है, उसी को सरल बनाने के प्रयत्न बहुत जोरों से चल रहे हैं ।

फ्रांस के जीव विज्ञानी विग्यूर ने 'सी अर्चिन' नामक समुद्री जन्तु पर संयोग रहित प्रजनन के सफल प्रयोग किए हैं । डॉ. ए. स्टाल्क भी ऐसी ही सफलता ट्रथ स्कार्प मछलियों पर प्राप्त कर चुके हैं । अब अन्य पक्षियों और पशुओं पर यह परीक्षण हो रहे हैं । संग्रहीत अनुभवों के आधार पर मनुष्य की काया को यह सिद्ध करने के लिए हाथ में लिया जायेगा कि नर-नारी सम्पर्क दूसरी दृष्टि से भले ही उपयुक्त हों पर सन्तानोत्पादन का क्रम तो उसके बिना भी चल सकता है । अब उन प्राचीन पौराणिक उपाख्यान की सत्यता से इन्कार नहीं किया जा सकता जिनमें बिना नर संयोग के सन्तान जन्म का वर्णन है ।

गर्भस्थ शिशु का इच्छानुवर्ती निर्माण

महाभारत में एक कथा आती है कि "एक बार कुपित होकर अश्वत्थामा ने उत्तरा के गर्भस्थ शिशु (परीक्षित) पर आग्नेयास्त्र प्रयोग किया । परीक्षित माँ के उदर में ही असह्य पीड़ा से जलने लगा । माँ ने भी उसे जाना । उन्होंने सम्पूर्ण समर्पण भाव से परमात्मा का स्मरण किया तब उस बच्चे की रक्षा हो पायी ।"

गर्भस्थ शिशु को कोई अस्त्र तब तक नहीं छेद सकता जब तक माँ का शरीर न छिदे । दरअसल आग्नेयास्त्र मन्त्र शक्ति थी, जो संकल्प-शक्ति के द्वारा चलाई गई थी । बाहरी व्यक्ति द्वारा दूर से संकल्प-प्रहार से यदि गर्भस्थ बच्चा जल और मर सकता है, और फिर परमेश्वर के प्रति अटल विश्वास और रक्षा की भावना से उस बच्चे को बचाया जा सकता है तो उसके शरीर और मनोभूमि में भी इच्छानुवर्ती परिवर्तन लाया जा सकता है ।

सती मदालसा के बारे में कहा जाता है कि "वह अपने बच्चे के गुण, कर्म और स्वभाव की पूर्व घोषणा कर देती थी फिर उसी प्रकार निरन्तर चिन्तन, क्रिया-कलाप, रहन-सहन, आहार-विहार और व्यवहार-बर्ताव अपनाती थीं, जिससे बच्चा उसी मनोभूमि में ढल जाता था, जिसमें वह चाहती

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

थीं । प्रसिद्ध घटना है कि उनके पहले सभी बच्चे ज्ञानी, सन्त और ब्रह्मनिष्ठ होते गए । अपने पति की प्रार्थना पर उन्होंने अन्तिम गर्भस्थ बच्चे को राजनेता के अनुरूप ढाला । उसी ने पिता का राज्य-सिंहासन सँभाला और कुशल राजनीतिज्ञ हुआ ।

डॉ. फाउलर ने इस सम्बन्ध में काफी खोज की है, गर्भावस्था में भी गर्भिणी के हाव-भाव का बच्चे के शरीर और मन पर कैसा प्रभाव पड़ता है, इस सम्बन्ध में उनके कई प्रमाण हैं ।

प्रत्यक्षदर्शी घटना का वर्णन करते हुए फाउलर लिखते हैं—"एक स्त्री अपने बच्चे को नींद लाने वाली गोली देकर किसी आवश्यक कार्य से बाहर चली गई । लौटने पर वह बच्चा मरा पाया । स्त्री को इससे बहुत दुःख हुआ और वह शोक-मग्न रहने लगी । उसी अवस्था में उसने दूसरी बार गर्भ धारण किया । पहले बच्चे के प्रति उसका शोक ज्यों का त्यों बना रहा, इसलिए दूसरा लड़का रोगी हुआ । दूसरे वर्ष ही उसकी मस्तिष्क रोग से मृत्यु हो गई । अब वह और दुःखी रहने लगी । इस अवस्था में तीसरा पुत्र, वह हठी, सुस्त और कमजोर हुआ । दाँत निकलते समय उसकी भी मृत्यु हो गई । चौथा पुत्र भी ऐसे ही गया, किन्तु पाँचवी बार उसकी परिस्थितियों में सुखद परिवर्तन आये, जिससे उस स्त्री की मानसिक प्रसन्नता बढ़ी । वह पहले की तरह हँसने खेलने लगी । इस बार बच्चा हुआ वह पूर्ण स्वस्थ, नीरोग हुआ कुशाग्र बुद्धि का हुआ ।

डॉ. फाउलर का मत है कि क्रोध, आश्चर्य, घृणा, अहंकार, गम्भीरता आदि के अवसर पर माता की नासिका, मुख और आकृति में जैसे परिवर्तन उठाव, गिराव होते हैं, वैसे ही बच्चे की नाक, मुँह, माथे आदि अवयवों की शक्ल भी बनती है । गर्भाधान के बाद स्त्री प्रसन्न नहीं रहती, शोक या चिन्ता-ग्रस्त रहती है, तो बालक के मस्तिष्क में पानी की मात्रा बढ़ जाती है । यदि ४ वर्ष के बच्चे के सिर का व्यास बीस इंच से अधिक हो तो मानना चाहिए कि वह जल-संचय का शिकार हुआ है, उसकी माँ गर्भावस्था में दुःखी रही है ।

भय, विक्षेप, अशुभ चिन्तन, उत्तेजना से जिस तरह अंगों में भद्दीपन, बेडौल और खराब मुखाकृति बनती है, उस तरह शुभ संकल्प और प्रसन्नतापूर्ण विचारों से बच्चा स्वस्थ, सुन्दर और चरित्रवान बनता है । इसीलिए कहा जाता है—गर्भावस्था में माँ को सत्य भाषण, उत्साह, प्रेम, दया, सुशीलता, सौजन्यता, धर्माचरण और ईशभक्ति का अनुगमन करना चाहिए । यह बच्चे होनहार और प्रतापी होते हैं, जबकि क्रोध, ईर्ष्या, भय, उद्विग्नता आदि अधम वृत्तियों के बच्चे भी अधम, उत्पाती और स्वेच्छाचारी होते हैं । गलत खान-पान भी उसमें सम्मिलित हैं ।

इसके अतिरिक्त जो महत्त्वपूर्ण बातें गर्भस्थ शिशु को प्रभावित करती हैं, उनमें से वातावरण मुख्य है । ध्रुव ऋषि आश्रम में जन्मे थे । उनकी माँ सुनीति बड़ी नेक स्वभाव और ईश्वर भक्त थीं । ध्रुव के महान् तेजस्वी होने में वातावरण भी मुख्य सहायक था, जबकि उत्तानपाद के दूसरे बेटे में वैसी तेजस्विता न उभर सकी ।

एक पाश्चात्य डॉक्टर ने वातावरण के प्रभाव का अध्ययन इस प्रकार किया—"एक बार एक कमरे का फर्श और दीवार सबको नील पोत कर नीला कर दिया । उस कमरे में श्वेत रंग के खरगोशों का एक जोड़ा रखा गया । कुछ समय बाद खरगोश के दो बच्चे हुए, दोनों के बालों में नीले रंग की झलक थी । इससे पता चलता है कि बच्चे के मस्तिष्क में ही नहीं, वातावरण का सूक्ष्म प्रभाव स्थूल अंगों पर भी पड़ता है । गर्भवती का निवास ऐसे स्थान पर होना चाहिए, जहाँ चारुता हो, मोहकता और आकर्षक हो । हरे बगीचों, केले, फलों आदि से घिरे स्थान, देवस्थान और विशेष रूप से सजे-सजाये, साफ-सुथरे स्थान गर्भस्थ बच्चों पर सुन्दर प्रभाव डालते हैं ।

स्पेन के किसी अंग्रेज परिवार में एक बार एक स्त्री गर्भवती हुई । गर्भवती जिस कमरे में रहती थी, उसमें अन्य चित्रों के साथ एक इथोपियन जाति के बहादुर का चित्र लगा हुआ था । वह चित्र उस स्त्री को अतिप्रिय था । कमरे में वह उस चित्र को बहुत भावनापूर्वक देखा करती थी । दूसरे काम करते समय भी उसे उस चित्र का स्मरण बना रहता था । अन्त में, जब उससे बालक जन्मा तो उसके माता-पिता अंग्रेज होते हुए भी लड़के की आकृति और वर्ण इथोपियनों जैसा ही था । उस चित्र की मुखाकृति से बिल्कुल मिलता-जुलता, उसी के अनुरूप था । घरों में भगवान के, महापुरुषों के चित्र लगाये भी इसीलिए जाते हैं कि उनकी आकृतियों में निकलने वाले सूक्ष्म भावना-प्रवाह का लाभ मिलता रहे ।

वातावरण के अतिरिक्त गर्भिणी के साथ किए गए व्यवहार, बर्ताव और बातचीत का भी गर्भस्थ शिशु पर प्रभाव पड़ता है । क्रोध, मारपीट, धमकाना, डाँटना, दबाकर रखना आदि कुटिलताओं का बच्चे पर बुरा प्रभाव पड़ता है । कई बार इस प्रकार के आचरण बहुत ही दुःखदायी और कष्टप्रद परिलक्षित होते हैं । एक बार एक व्यक्ति ने समुद्री यात्रा के दौरान किसी बात से अप्रसन्न होकर अपनी गर्भवती पत्नी को जोर का धक्का मारा । गिरते-गिरते जहाज की जंजीर हाथ में पड़ गई । उससे वह गिरने से सँम्भल गई किन्तु वह व्यक्ति बड़ा क्रूर निकला । उसने छुरे का वार किया, जिससे उस स्त्री की जंजीर पकड़े हुए हाथ की तीन उंगलियाँ कट गईं । वह स्त्री समुद्र में चली गई ।

जहाज के चले जाने पर कुछ मल्लाहों ने उसकी रक्षा की । बाद में उस स्त्री को जो सन्तान हुई वह देखकर सब

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आश्चर्यचकित रह गए कि उसकी तीन उँगलियाँ ही नहीं थीं और वह बालक मानसिक दृष्टि से अपूर्ण, क्रोधी तथा शंकाशील स्वभाव का था ।

धमाका पैदा करने वाला ऐसा कोई व्यवहार गर्भवती से नहीं करना चाहिए, जिससे मस्तिष्क में तीव्र आघात लगे । इससे बच्चे के शरीर पर बुरा प्रभाव पड़ सकता है ।

बचों के मानसिक निर्माण में माता-पिता की घनिष्ठता, प्रगाढ़ प्रेम, परस्पर विश्वास का सबसे सुन्दर प्रभाव पड़ता है । सच बात तो यह है कि माता-पिता का संकल्प बच्चे को उसी प्रकार पकाता है, जिस प्रकार मादा कछुआ पानी में रहकर रेत में रखे अपने अण्डों को पकाती है । दिव्य गुणों का बच्चे में आविर्भाव ही प्रेमपूर्ण भावनाओं से होता है, इसलिए गर्भावस्था में स्त्री-पुरुष को अधिकांश समय साथ-साथ बिताना चाहिए, पवित्र आचरण और प्रगाढ़ मैत्री रखनी चाहिए । ऐसे बच्चे शरीर से ही नहीं मिजाज से भी पूर्ण स्वस्थ होते हैं ।

इस उदाहरण से यह बात और भी स्पष्ट होगी । एक अंग्रेज ने किसी ब्राजील लड़की से विवाह किया । लड़की का रंग साँवला था पर उसमें मोहकता अधिक थी । पति-पत्नी में घनिष्ठ प्रेम था । पर उन्हें कोई सन्तान नहीं हुई ।

कुछ समय पश्चात् वह स्त्री मर गई । पति को बड़ा दुःख हुआ । कुछ दिन बात उसने दूसरा विवाह अंग्रेज स्त्री से किया । वह गौरवर्ण की थी पर इस अंग्रेज को अपनी पूर्व पत्नी की याद बनी रहती थी । इसलिए वह अपनी नई पत्नी को भी उसी भाव से देखा करता था । इस स्त्री से एक कन्या उत्पन्न हुई, जो ब्राजीलियन लड़की की तरह साँवली ही नहीं मुखाकृति से भी मिलती-जुलती थी । यह गर्भावस्था में पिता के मस्तिष्क में जमा हुआ पत्नी-प्रेम का संस्कार ही था, जिसके कारण बालिका ने उसका रंग और आकार ग्रहण किया ।

इन समस्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि गर्भस्थ शिशुओं का इच्छानुवर्ती निर्माण सम्भव है । अपने रहन-सहन, स्वभाव और संकल्पों को स्वस्थ और सुन्दर बनाकर भावी बच्चों में भी स्वास्थ्य, सौन्दर्य, सद्गुण, तेजस्विता और मनविस्वता का विकास किया जाता है । यह बात माता-पिता दोनों को मालूम होनी चाहिए ।

विज्ञान के इस दिशा में प्रयास

गर्भस्थ शिशु का इच्छानुवर्ती निर्माण करने की दिशा में अब विज्ञान भी सक्रिय हुआ है । पिछले दिनों सन्तान पर पड़ने वाले माता-पिता के शरीर, रोग, स्वभाव और गुण-दोषों को लेकर जीव विज्ञान की एक शाखा है 'जेनेटिक्स' जिसे जनन विज्ञान भी कह सकते हैं, उसकी भी एक उपशाखा है 'यूजेनिक्स' जिसे हिन्दी में सुप्रजनन अथवा नस्ल सुधार कह सकते हैं में यह माना गया है कि मनुष्यों की वर्तमान पीढ़ी से पूर्वज लम्बाई, मजबूती, निरोगता, दीर्घ जीवन आदि सभी दृष्टि से बढ़े-चढ़े थे और हम उनकी अपेक्षा कहीं अधिक निर्बल एवं रुग्णता ग्रस्त हो गए हैं । इस कमी को पूरा करके पूर्वजों की अथवा उससे भी अच्छी स्थिति में पहुँचने की अपनी इच्छा स्वाभाविक है । यूजेनिक्स के अन्तर्गत इसके लिए उपाय ढूँढ़े जा रहे हैं । इतना ही नहीं मानसिक संरचना एवं व्यक्तित्व की अनेक धाराओं में भी ऐसे सुधार किए जाने अपेक्षित हैं, जिनके आधार पर मनुष्य को सुविकसित कहा जा सके ।

अच्छा बीज अच्छी जमीन में बोया जाय तो उससे मजबूत पौधा उगेगा और उस पर बढ़िया फल-फूल आयेंगे इस तथ्य से क्या शिक्षित, क्या अशिक्षित सभी परिचित हैं । जिन्हें कृषि एवं उद्यान से अच्छा प्रतिफल पाने की आकांक्षा है वे इस तथ्य पर आरम्भ से ही ध्यान रखते हैं कि उत्पादन के मूलभूत आधारों को सतर्कता के साथ जुटाया जाय और उनका स्तर ऊँचा रखा जाय ।

यों विवाह एक निजी मामला समझा जाता है और सन्तानोत्पादन को भी व्यक्तिगत क्रिया-कलाप की परिधि में सम्मिलित करते हैं, पर वस्तुतः यह एक सार्वजनिक सामाजिक एवं सार्वभौम प्रश्न है, क्योंकि भावी पीढ़ियों के निर्माण की आधारशिला यही है । राष्ट्र और विश्व का भविष्य उज्ज्वल एवं सुसम्पन्न बनाने की प्रक्रिया धन समृद्धि पर टिकी हुई नहीं, वरन् इस बात पर निर्भर है कि भावी नागरिकों का शारीरिक, बौद्धिक एवं चारित्रिक स्तर कैसा होगा ? धातुएँ, इमारतें या हथियार नहीं, किसी राष्ट्र की वास्तविक सम्पदा वहाँ के नागरिक ही होते हैं । वे जैसे भी भले या बुरे होंगे, उसी स्तर का समाज, समय एवं वातावरण बनेगा । इसलिए भावी प्रगति की बात सोचने में हमें सुसंतति के निर्माण की व्यवस्था जुटाने की बात ध्यान में रखनी चाहिए ।

घरेलू पशुओं यहाँ तक कि कुत्ते, बिल्लियों के बारे में हमारे प्रयास यह होते हैं कि उनकी सन्तानें उपयुक्त स्तर की हों । जिन्हें इस उद्देश्य को पूरा करने में रुग्ण, दुर्बल अथवा अयोग्य समझते हैं उनका प्रजनन प्रतिबन्धित कर देते हैं । इस प्रतिबन्धन, प्रोत्साहन में उचित वंशवृद्धि की बात ही सामने रखी जाती है । क्या मानव प्राणी की नस्लें ऐसे ही अस्त-व्यस्त बनने दी जानी चाहिए, जैसी कि इन दिनों बन रही हैं ? क्या इस सन्दर्भ में कुछ देख-भाल करना या सोचना-विचारना समाज का कर्तव्य नहीं ? क्या बच्चे मात्र माता-पिता की ही सम्पत्ति हैं ? क्या उनका स्तर समाज को प्रभावित नहीं करता ? इन बातों पर यदि गम्भीरतापूर्वक विचार किया जाय तो प्रतीत होगा कि किसी राष्ट्र या समाज का भविष्य उसकी भावी पीढ़ियों पर निर्भर है । यदि सुयोग्य नागरिकों की जरूरत हो तो भोजन, चिकित्सा अथवा शिक्षा का प्रबन्ध भर कर देने से काम नहीं चलेगा । इस सुधार का क्रम सुयोग्य जनक-जननी द्वारा सुविकसित सन्तान उत्पन्न करने का उत्तरदायित्व निबाहने से होगा । यह तैयारी विवाह के दिन से ही आरम्भ हो जाती है । यदि पति-पत्नी की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

शारीरिक, मानसिक और आर्थिक स्थिति सुयोग्य सन्तान के उत्पादन तथा भरण-पोषण के उपयुक्त नहीं है तो उनके द्वारा की जाने वाली वंशवृद्धि अवांछनीय स्तर की ही बनेगी और उसका दुष्परिणाम समस्त समाज को भुगतना पड़ेगा ।

वंशानुक्रम विज्ञान की चर्चा इन दिनों जोरों पर है जनन रस में पाये जाने वाले गुणसूत्रों को भावी पीढ़ियों के निर्माण का सारा श्रेय दिया जा रहा है । इन जीव कणों में हेर-फेर करके ऐसे उपाय ढूँढ़े जा रहे हैं जिनके आधार पर मनचाहे आकार-प्रकार की सन्तानों को जन्म दिया जा सके । इस अत्युत्साह में अभी तक आंशिक सफलता ही मिली है, क्योंकि गुणसूत्रों ने आकृति तक में अभीष्ट परिवर्तन प्रस्तुत नहीं किया फिर प्रकृति के परिवर्तन की तो बात ही क्या की जाय ?

प्रयोगशालाओं में रासायनिक पदार्थों की अथवा विद्युत उपचार की ऐसी विधि-व्यवस्था सोची जा रही है जिससे अभीष्ट स्तर की सन्तान पैदा की जा सकें । इस दिशा में जी तोड़ प्रयत्न हो रहे हैं और सोचा जा रहा है कि बिना माता का स्तर सुधारे अथवा बिना वातावरण की चिन्ता किए वैज्ञानिक विद्या के आधार पर सुसन्तति उत्पादन की व्यवस्था यान्त्रिक क्रिया-कलाप द्वारा सम्पन्न कर ली जायेगी ।

जनन-रस में पाये जाने वाले गुणसूत्र में एक व्यक्त रूपडामिनेन्ट है । दूसरा अव्यक्त रूप है—रिसेसिव । व्यक्त भाग को भौतिक माध्यमों से प्रभावित किया जा सकता है और उस सीमा तक भले या बुरे प्रभाव सन्तान में उत्पन्न किए जा सकते हैं । पर अव्यक्त स्तर को केवल जीव की निजी इच्छा-शक्ति ही प्रभावित कर सकती है । महत्त्वपूर्ण परिवर्तन इस चेतनात्मक परिधि में ही हो सकते हैं इसके लिए रासायनिक अथवा चुम्बकीय माध्यमों से काम नहीं चल सकता । इसके लिए चिन्तन को बदलने वाली अन्तःस्फुरणा अथवा दबाव भरी परिस्थितियाँ होनी चाहिए । इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए यह सोचा जाने लगा है कि माता-पिता का स्तर सुधारे बिना सुसन्तति की समस्या प्रयोगशालाओं द्वारा हल न हो सकेगी । वनस्पति अथवा पशुओं में सुधार उत्पादन सरल है, पर मनुष्यों में पाये जाने वाले चिन्तन तत्व में उत्कृष्टता भरने की आवश्यकता यान्त्रिक पद्धति कदाचित ही पूरी कर सकेगी ।

गुणसूत्रों में हेर-फेर करके तत्काल जिस नई पीढ़ी का स्वप्न इन दिनों देखा जा रहा है, उसे म्यूटेशन, आकस्मिक परिवर्तन प्रक्रिया कहा जा सकता है । म्यूटेशन के सन्दर्भ में पिछले दिनों पैवलव, मैकडुगल, मारगन, मुलर प्रभृति जीव विज्ञानियों ने अनेक माध्यमों और उपकरणों से विविध प्रयोग किए हैं । जनन रस को प्रभावित करने वाले उन्होंने विद्युतीय और रासायनिक उपाय अपनाये । सोचा यह गया था कि उससे अभीष्ट शारीरिक और मानसिक क्षमता सम्पन्न पीढ़ियाँ उत्पन्न होंगी, पर उनसे मात्र शरीर की ही दृष्टि से थोड़ा हेर-फेर हुआ । विशेषतया बिगाड़ प्रयोजन में ही सफलता अधिक मिली, सुधार की गति अति मन्द रही, गुणों में पूर्वजों की अपेक्षा कोई अतिरिक्त सुधार सम्भव न हो सका ।

एक जाति के जीवों में दूसरे जाति के जीवों की कलमें लगाई गईं और वर्णसंकर सन्तानें उत्पन्न की गईं । यह प्रयोग उसी जीवधारी तक अपना प्रभाव दिखाने में सफल हुए । अधिक से अधिक एक पीढ़ी कुछ बदली-सी जन्मी इसके बाद वह क्रम समाप्त हो गया । घोड़ी और गधे के संयोग से उत्पन्न होने वाले खच्चर अगली पीढ़ियों को जन्म देने में असमर्थ रहते हैं ।

वर्णसंकर सन्तान उत्पन्न करके पूर्वजों की अपेक्षा अधिक सशक्त और समर्थ पीढ़ियाँ उपजाने का उत्साह अब क्रमशः घटता चला जा रहा है । इस सन्दर्भ में प्रथम आवश्यकता तो यही रहती है कि प्रकृति एक ही जाति के जीवों में संकरण स्वीकार करती है । मात्र उपजातियों में ही प्रत्यारोपण सफल हो सकता है । यदि शरीर रचना में विशेष अन्तर होगा तो संकरण प्रयोगों में सफलता न मिलेगी, दूसरी बात यह है कि काया की दृष्टि से थोड़ा सुधार इस प्रक्रिया में हो भी सकता है, गुणों में नहीं । वर्णसंकर गायें मोटी, तगड़ी तो हुईं, पर अपने पूर्वजों की अपेक्षा अधिक दुधारू न बन सकीं । इन प्रयोगों से यह निष्कर्ष निकाला गया है कि उत्कृष्टता जीव के अपने विकास-क्रम के साथ जुड़ी हुई है, वह बाहरी उलट-पुलट करके विकसित नहीं की जा सकती ।

सुसन्तति के सम्बन्ध में वैज्ञानिक प्रयोग अधिक से अधिक इतना ही कर सकते हैं कि रासायनिक हेर-फेर करके शारीरिक दृष्टि से अपेक्षाकृत थोड़ी मजबूत पीढ़ियाँ तैयार कर दें, पर उनमें नैतिक, बौद्धिक एवं सामाजिक उत्कृष्टता भी होगी इसकी गारण्टी नहीं दी जा सकती । ऐसी दशा में उज्ज्वल भविष्य का निर्माण कर सकने वाले नागरिकों का सर्वतोमुखी सृजन कहाँ सम्भव होगा ?

उस अत्युत्साह से अब वंशानुक्रम लगभग हतोत्साहित हो चला है और सोचा जा रहा है कि अभिभावकों को ही सुयोग्य बनाने पर ध्यान दिया जाय । एक ओर अयोग्य व्यक्तियों को अवांछनीय उत्पादन से रोका जाय, दूसरी ओर सुयोग्य, सुसंस्कृत एवं समुन्नत लोगों को प्रजनन के लिए प्रोत्साहित किया जाय । विवाह निजी मामला न रहे, वरन् सामाजिक नियन्त्रण इस बात का स्थापित किया जाय कि शारीरिक ही नहीं अन्य दृष्टियों से भी सुयोग्य और समर्थ को विवाह बन्धन में बँधने और सन्तानोत्पादन के लिए स्वीकृति दी जाय ।

जर्मनी के तीन प्रसिद्ध जीव विज्ञानियों ने वंशानुक्रम विज्ञान पर एक संयुक्त ग्रन्थ प्रकाशित कराया है नाम है 'ह्यमन हैरेडिटी' । लेखकों के नाम हैं—डॉ. आरवेन वेवर, डॉ. आयोजिन फिशर और डॉ. फ्रिट्ज लेंज । उन्होंने वासना के उभार में चल रहे अन्धाधुन्ध विवाह सम्बन्धों के कारण

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सन्तान पर होने वाले दुष्प्रभाव को मानवी भविष्य के लिए चिन्ताजनक बताया है । लेखकों का संयुक्त मत है कि—'अनियन्त्रित' विवाह प्रथा के कारण पीढ़ियों का स्तर बेतरह गिरता जा रहा है, उन्होंने इस बात को भी दुःखद बताया है कि निम्न वर्ग की सन्तानें बढ़ रही हैं और उच्चस्तर के लोगों की संख्या तथा सन्तानें घटती चली जा रही हैं ।

पीढ़ियों में आकस्मिक परिवर्तन म्यूटेशन के विशेष शोधकर्त्ता टर्नियर का निष्कर्ष यह है कि मानसिक दुर्बलता के कारण गुणसूत्र में ऐसी अशक्तता आती है जिसके कारण पीढ़ियाँ गई-गुजरी बनती हैं । इसके विपरीत मनोबल सम्पन्न व्यक्तियों की आन्तरिक स्फुरणा उनके जनन रस में ऐसा परिवर्तन कर सकती है जिससे तेजस्वी और गुणवान ही नहीं शारीरिक दृष्टि से भी परिपुष्ट सन्तानें उत्पन्न हों । वंश परपरा में जुड़े हुए कुष्ठ, उपदंश, क्षय, दमा, मधुमेह आदि रोगों की तरह विधेयात्मक पक्ष यह भी है कि मनोबल के आधार पर उत्पन्न चेतनात्मक समर्थता पीढ़ी दर पीढ़ी आगे बढ़े और उसका सत्परिणाम शरीर, मन अथवा दोनों पर प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर हो सके । चमत्कारी आनुवंशिक परिवर्तन इसी आधार पर सम्भव है मात्र रासायनिक परिवर्तन के लिए भौतिक प्रयास इस प्रयोजन की पूर्ति नहीं कर सकते । यह तथ्य हमें इस निष्कर्ष पर पहुँचाता है कि जिस प्रकार परिवार नियोजन के द्वारा अवांछनीय उत्पादन रोकने का प्रयास किया जाता है उसी प्रकार समर्थ और सुयोग्य सन्तानोत्पादन के लिए आवश्यक ज्ञान, आधार-साधन एवं प्रोत्साहन उपलब्ध कराया जाय ।

क्या मनुष्य पूर्वजों की प्रतिकृति है ?

आनुवंशिकी-विज्ञान के अन्तर्गत पिछले दिनों यह सिद्ध किया जाता रहा है कि प्राणी अपने पूर्वजों की प्रतिकृति होते हैं । माता-पिता के डिम्ब-कीट और शुक्रकीट मिल-जुलकर भ्रूण-कलल में परिणत होते हैं और शरीर बनना आरम्भ हो जाता है । उस शरीर में जो मनः चेतना रहती है, उसका स्तर भी पूर्वजों की मनःस्थिति की भाँति ही उत्तराधिकार में मिलता है । शरीर की संरचना और मानसिक बनावट के लिए बहुत हद तक पूर्वजों के उन जीवाणुओं को ही जिम्मेदार ठहराया गया है, जो परम्परा के रूप में वंशधरों में उतरते चले जाते हैं ।

इस प्रतिपादन से यह निष्कर्ष निकलता है कि व्यक्ति अपने आप में कुछ बहुत अधिक महत्त्वपूर्ण नहीं है । पूर्वजों के ढाँचे में ढला हुआ एक खिलौना मात्र है । यदि सन्तान को सुयोग्य सुविकसित बनाना हो तो वह कार्य पीढ़ियों पहले आरम्भ किया जाना चाहिए । अन्यथा साँचे में ढले हुए इस खिलौने में कुछ महत्त्वपूर्ण परिवर्तन न हो सकेगा । आनुवंशिकी का प्रतिपादन जहाँ तक मानव-प्राणी का सम्बन्ध है, बहुत ही अपूर्ण और अवास्तविक है । पशु-पक्षियों में एक हद तक यह बात सही भी हो सकती है, पर मनुष्य के लिए यह कहना अनुचित है कि वह पूर्वजों के साँचे में ढला हुआ एक उपकरण मात्र है । यह मानवी इच्छा शक्ति, विवेक-बुद्धि, स्वतन्त्र-चेतना और आत्म-निर्भरता को झुठलाना है । समाज-शास्त्री, अर्थ-शास्त्री और मनोविज्ञान-वेत्ता वातावरण एवं परिस्थितियों के उत्थान-पतन का कारण बताते रहे हैं । आत्म वेत्ताओं ने एक स्वर से सदा यही कहा है—मनुष्य की अन्तःचेतना स्वनिर्मित है । वह वंश परम्परा से नहीं, संचित संस्कारों और प्रस्तुत प्रयत्नों के आधार पर विकसित होती है । इच्छा-शक्ति और संल्कप शक्ति के आधार पर अपने मानसिक ढाँचे में कोई चाहे तो आमूलचूल परिवर्तन कर सकता है ।

आनुवंशिकी की मान्यताएँ 'एक हद तक ही सही' ठहराई जा सकती है । चमड़ी का रंग, चेहरा आकृति, अवयव आदि पूर्वजों की बनावट के अनुरूप हो सकते हैं, पर गुण, कर्म स्वभाव भी पूर्वजों जैसे ही हों—यह आवश्यक नहीं है । यदि ऐसा ही रहा होता तो किसी कुल में सभी अच्छे और किसी कुल में सभी बुरे उत्पन्न होते । रुग्णता स्वस्थता, बुद्धिमत्ता-मूर्खता, सज्जनता, दुष्टता, कुशलता, अस्तव्यस्तता भी परम्परागत होती तो प्रगतिशील वर्ग के परिवार के सभी सदस्य सुविकसित होते हैं और पिछड़े लोगों का स्तर सदा के लिए गया-गुजरा ही बना रहता है । तब उत्थान-पतन के लिए किए गए प्रयत्नों की भी कुछ सार्थकता न होती । वातावरण का भी कोई प्रभाव न पड़ता, पर ऐसी स्थिति है नहीं । पूर्वजों की स्थिति से सर्वथा भिन्न स्तर की सन्तानों के अगणित उदाहरण पग-पग सर्वत्र बिखरे हुए देखे जा सकते हैं । इससे मनुष्य की स्वतन्त्र चेतना और इच्छा-शक्ति की प्रबलता का साक्ष्य ही स्पष्ट रूप से सामने आता है ।

मद्यप मनुष्यों की सन्तान क्या जन्मजात रूप से उस लत से ग्रसित होती है ? इस खोज-बीन में पाया गया कि ऐसी कोई बात नहीं है, वरन् उल्टा यह हुआ कि बच्चों ने बाप को मद्यपान के कारण अपनी बर्बादी करते देखा तो वे उसके विरुद्ध हो गए और उन्होंने न केवल मद्यपान से अपने को अछूता रखा, वरन् दूसरों को भी उसे अपनाने से रोका ।

मनुष्यों में गुणसूत्रों के हेर-फेर से जो परिणाम सामने आये हैं, उससे स्पष्ट है कि बिगाड़ने में अधिक और बनाने में कम सफलता मिली है । विकलांग और पैतृक रोगों से ग्रसित सन्तान उत्पन्न करने में आशाजनक सफलता मिली है, क्योंकि विषाक्त मादकता से भरे रसायन सदा अपना त्वरित परिणाम दिखाते हैं । यह गति विकासोन्मुख प्रयत्नों की नहीं होती । नीलाथोथा खाने से उल्टी तुरन्त हो सकती है, पर पाचन-शक्ति सुधार देने के प्रयोग उतने सफल नहीं होते । देव से असुर की शक्ति को अधिक मानने का यही आधार है । मनुष्यों में मनचाही सन्तान उत्पन्न करने का प्रयोग सिर्फ इतनी मात्रा में कुछ अधिक सफल हुआ है कि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

रंग-रूप और गठन की दृष्टि से जनक-जननी का सादृश्य दृष्टिगोचर हो सके । काया की आन्तरिक दृढ़ता, बौद्धिक तीक्ष्णता एवं भावनात्मक उत्कृष्टता उत्पन्न करने में वैज्ञानिक प्रयोगों का उत्साह-वर्धक परिणाम नहीं निकला है ।

गुणसूत्रों को बदलने में इन दिनों विद्युत-ऊर्जा एवं रासायनिक हेर-फेर के साधन जुटाये जा रहे हैं, पर वे यह भूल जाते हैं कि यह बाहरी थोप-थाप स्थिर न रह सकेगी उससे क्षणिक-चमत्कार भले ही देखा जा सके । शरीर के प्रत्येक अवयव को मस्तिष्क प्रभावित करता है और मस्तिष्क का सूत्र-संचालन इच्छा-शक्ति के हाथ में रहता है । अस्तु शारीरिक मानसिक समस्त परिवर्तनों का तात्विक आधार इस इच्छा-शक्ति को ही मानना पड़ेगा । गुणसूत्रों पर भी इसी ऊर्जा का प्रभाव पड़ता है और इसी माध्यम से वह परिवर्तन किए जा सकते हैं, जो मन-चाही पीढ़ियाँ उत्पन्न करने के लिए वैज्ञानिकों को अभीष्ट हैं ।

अभीष्ट स्तर की पीढ़ियाँ क्या रासायनिक हेर-फेर अथवा विद्युतीय प्रयोग उपकरणों द्वारा प्रयोगशालाओं में विनिर्मित हो सकती हैं । यह एक जटिल प्रश्न है । यदि हो सका तो यह मानना पड़ेगा कि मनुष्य इच्छा-शक्ति का धनी नहीं, वरन् रासायनिक पदार्थों की परावलम्बी प्रतिक्रिया मात्र है । यदि यह सिद्ध हो सका तो मनोबल और आत्मबल की गरिमा समाप्त कर देने वाली दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति ही कहा जायेगा, पर ऐसा हो सकना सम्भव दिखायी नहीं पड़ता, भले ही उसके लिए ऐड़ी-छोटी प्रयत्न कितने ही किए जाते रहें ।

शरीर के विभिन्न अंगों पर दबाव डाले जाते रहे हैं, पर प्राणी की मूल इच्छा ने उस दबाव को आवश्यक नहीं समझा तो उस तरह के परिवर्तन नहीं ही हो सके । चीन में शताब्दियों तक स्त्रियों के पैर छोटे होना, सौन्दर्य का चिन्ह माना गया, इसके लिए उन्हें कड़े जूते पहनाये जाते थे । उससे पैर छोटे बनाने में सफलता मिली । पर वंश-परम्परा की दृष्टि से वैसा कुछ भी नहीं हुआ । हर नई लड़की के पैर पूरे अनुपात से ही होते थे ।

प्राणियों के क्रमिक-विकास में इच्छा-शक्ति का ही प्रधान स्थान रहा है । मनुष्य तो मनोबल का धनी है, उसकी बात जाने भी दें और अन्य प्राणधारियों पर दृष्टिपात करें तो प्रतीत होगा कि उनकी वंश-परम्परा में बहुमुखी परिवर्तन होता रहा है । इसका कारण सामयिक परिस्थितियों का चेतना पर पड़ने वाले दबाव ही प्रधान कारण रहा है । असुविधाओं को हटाने और सुविधाएँ बढ़ाने की आन्तरिक आकांक्षा ने प्राणियों की शारिरिक स्थिति और आकृति में ही नहीं प्रकृति में भी भारी हेर-फेर प्रस्तुत किया है । जीव-विज्ञानी इस तथ्य से भली-भाँति परिचित हैं ।

यदि पूर्वजों के गुण लेकर ही सन्तानें उत्पन्न होने वाली बात को सही माना जाय तो जीवों की आकृति-प्रकृति में परिवर्तन कैसे सम्भव हुआ ? उस स्थिति में तो पीढ़ियों का स्तर एक ही प्रकार का चलता रहना चाहिए था ।

लैमार्क ने प्राणियों का स्तर बदलने में वातावरण को, परिस्थितियों को श्रेय दिया है । वे कहते हैं इच्छा-शक्ति इन्हीं दबावों के कारण उभरती, उतरती है । सुविधासम्पन्न परिस्थतियों के ऊपर किसी प्रकार का दबाव नहीं रहता । अतएव उनका शरीर ही नहीं बुद्धि-कौशल भी ठप्प पड़ता जाता है । अमीरी के वैभव में पले हुए लोग अक्सर छुईमुई बने रह जाते हैं और उनका चरखा बिखेर देने के लिए छोटा-सा आघात ही पर्याप्त होता है ।

लैमार्क ने नये किस्म के अनेक जीवधारियों की उत्पत्ति का लेखा-जोखा प्रस्तुत करते हुए कहा है कि बाहर से मौलिक जीव दीखने पर भी वस्तुतः किसी ऐसे पूर्व प्राणी के ही वंशज होते हैं, जिहें परिस्थितियों के दबाव से अपने परम्परागत ढाँचे में आमूलचूल परिवर्तन करना पड़ा ।

जीवों के विकास इतिहास के पन्ने-पन्ने पर यह प्रमाण भरे पड़े हैं कि प्राणियों के अंग-प्रत्यंग निष्क्रियता के आधार पर कुण्ठित हुए हैं और सक्रियता ने उन्हें विकसित किया है । प्रवृत्ति, प्रयोजन और चेष्टाओं की मूल इच्छा-शक्ति ही प्राणिसत्ता में विकास, अवसाद उत्पन्न करती है । रासायनिक पदार्थों और गुणसूत्रों की वंश-परम्परा विज्ञान में कायिक क्षमता को एक अंश तक प्रभावित करने वाला आधार भर माना जाना चाहिए । आधुनिक विज्ञान-वेत्ता मौलिक भूल यह कर रहे हैं कि मानवी-सत्ता को उन्होंने रासायनिक प्रतिक्रिया मात्र समझा है और उसका विकास करने के लिए जनक-जननी को नहीं उनके जनन-रसों को अत्यधिक महत्त्व दे रहे हैं । इस एकांगी आधार को लेकर मनचाही आकृति-प्रकृति की पीढ़ियाँ वे कदाचित ही पैदा कर सकें ।

वैज्ञानिक बीजमन ने चूहों और चुहियों की लगातार बीस पीढ़ियों तक पूँछें काटीं और देखा कि क्या इसके फलस्वरूप बिना पूँछ वाले चूहे पैदा किए जा सकते हैं ? उन्हें अपने प्रयोग में सर्वथा असफल होना पड़ा । बिना पूँछ के माँ-बाप भी पूँछ वाले बच्चे ही जनते चले गए । इससे यह निष्कर्ष निकला कि मात्र शारीरिक हेर-फेर से वंशानुक्रम कहीं बदला जा सकता । इसके लिए प्राणी की अपनी रुचि एवं इच्छा का समावेश होना नितान्त आवश्यक है ।

हरबर्ट स्पेन्सर ने अपनी खोजों में ऐसे कितने ही प्राणियों के उदाहरण प्रस्तुत किए हैं, जिन्होंने शरीर के किसी अवयव को निष्क्रिय रखा तो वह क्षीण होता चला गया और लुप्त भी हो गया । इसके विपरीत ऐसे उदाहरण भी कम नहीं हैं, जिनमें "आवश्यकता ही आविष्कार की जननी है" वाले सिद्धान्त को सही सिद्ध करते हुए अपने शरीर में कई तरह के नये पुर्जे विकसित किए और पुरानों को आश्चर्यजनक स्तर तक परिष्कृत किया ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समुद्र-तट की गहराई में रहने वाली मछलियों को प्रकाश से वंचित रहना पड़ता है । अतएव उनके आँखों का चिन्ह रहते हुए भी उनमें रोशनी नहीं होती है । आँख वाले अन्धों में उनकी गणना की जा सकती है । अँधेरी गुफाओं में जन्मे और पलने वाले थलचरों का भी यही हाल होता है । उनकी आँखें ऐसी होती हैं, जो अन्धेरे में ही कुछ काम कर सकें । प्रकाश में तो वे बेतरह चौंधिया जाती हैं और निकम्मी साबित होती हैं ।

समर्थ का चुनाव मात्र शारीरिक बलिष्ठता पर निर्भर नहीं है, वरन् सच पूछा जाय तो उनकी मनःस्थिति की ही परख इस कसौटी पर होती है । पशुवर्ग और सरीसृप वर्ग के विशालकाय प्राणी आदिम काल में थे । उनकी शरीरगत क्षमता अद्भुत थी, फिर भी वे मन्द-बुद्धि, अदूरदर्शिता, आलस्य जैसी कमियों के कारण दुर्बल संज्ञा वाले ही सिद्ध हुए और अपना अस्तित्व खो बैठे । जबकि उसी समय में छोटी काया वाले प्राणी अपने मनोबल के कारण न केवल अपनी सत्ता सँभालते रहे, वरन् क्रमशः विकासोन्मुख भी होते चले गए ।

जीवों के विकास क्रम का एक महत्त्वपूर्ण आधार यह है कि उन्हें परिस्थितियों से जूझना पड़ा, अवरोध के सामने टिके रहने के लिए अपने शरीर में तथा स्वभाव में अन्तर करना पड़ा । यह परिवर्तन किसी रासायनिक हेर-फेर के कारण नहीं, विशुद्ध रूप से इच्छा शक्ति की प्रवाह-धारा बदल जाने से ही सम्भव हुआ है । जीवन-संग्राम में जूझने की पुरुषार्थ-परायणता का उपहार ही अल्प-प्राण जीवों को महाप्राण स्तर का बन सकने के रूप में मिला है । जिन्होंने विपत्ति से लड़ने की हिम्मत छोड़ दी और हताश होकर पैर पसार बैठे, उन्हें प्रकृति ने कूड़े-कचरे की तरह बुहारकर घूरे पर पटक दिया । किसान और माली भी तो अपने खेत-बाग में अनुपयोगी खर-पतवार की ऐसी ही उखाड़-पछाड़ करते रहते हैं । विकास की उपलब्धि पूर्णतया जीवन-संग्राम में विजय प्राप्त करने के फलस्वरूप ही मिलती है और इस संघर्षशीलता का पूरा आधार साहसी एवं पुरुषार्थी मनोभूमि के साथ जुड़ा रहता है ।

आनुवंशिकी-विज्ञान की अन्यान्य शोधें कितनी ही महत्त्वपूर्ण क्यों न हों पर यह प्रतिपादन स्वीकार्य नहीं हो सकता कि प्राणियों का विशेषतया मनुष्यों का स्तर पूर्वजों के परम्परागत गुणसूत्रों पर निर्भर है । इच्छा-शक्ति की प्रचण्ड समर्थता के आधार पर शारीरिक, मानसिक और सामाजिक परिवर्तनों की सम्भावना को मान्यता देने के उपरान्त ही वंशागत विशेषताओं की चर्चा की जाय ही उचित है ।

मानव जाति के उज्जवल भविष्य का प्रश्न बहुत कुछ सुसंतति के निर्माण की प्रक्रिया पर निर्भर है । इसके विभिन्न पक्षों पर विचार करना पड़ेगा और आवश्यक आधार खोजना पड़ेगा । इस सन्दर्भ में उल्लेखनीय है कि भारतीय मनीषियों ने बहुत पहले ही सामान्य गृहस्थ जीवन में भी ब्रह्मचर्य का अधिकाधिक पालन करने पर ही सुविकसित सन्तान के जन्म की सम्भावना व्यक्त की थी और अनियन्त्रित कामोपभोग को न केवल स्वास्थ्य के लिए हानिकारक बताया था वरन् उससे अविकसित निर्बल तथा अयोग्य सन्तानों के जन्मे की आशंका व्यक्त की थी ।

विज्ञान भी अब इस तथ्य की पुष्टि करने लगा है । फिलैडेल्फिया मेडीकल सेन्टर द्वारा किए गए अनुसन्धान प्रयोगों के जो निष्कर्ष पिछले दिनों प्रकाशित हुए हैं उनमें यही बताया गया है—कामुक और लंपट व्यक्ति योग्य सन्तानों को जन्म देने में अक्षम असमर्थ रहते हैं इस मनःस्थिति वाले स्त्री-पुरुषों के संयोग से उत्पन्न जीवाणु भी निष्क्रिय और निस्तेज ही पाये गए हैं । ऐसे निस्तेज निराश गर्भाधान से मनस्वी और प्रतिभाशाली बालक उत्पन्न नहीं हो सकते ।

अधिक संख्या में सन्तानोत्पादन शरीर की रासायनिक स्थिति पर निर्भर नहीं है वरन् हार्मोन उत्तेजना से सम्बन्धित है । रासायनिक दृष्टि से जिस स्थिति का एक शरीर बन्ध्यत्व ग्रस्त होगा उस स्थिति का दूसरा शरीर बहु प्रजनन की अति भी कर सकता है । ऐसे शरीरों का विश्लेषण करने पर उनके आन्तरिक विद्युत प्रवाह को ही उस भिन्नता के लिए उत्तरदायी ठहराया जा सकता है ।

रूस की एक महिला ने २७ बार गर्भवती होकर २३ शिशुओं को जन्म दिया । यह महिला अपने समय में बहुत प्रख्यात हुई थी और सम्राट जार द्वितीय ने उसे सम्मानित किया था ।

फ्रांस की एक ग्रामीण नारी ने २१ सन्तानों की माँ बनकर इस समय में सर्वाग्रणी जननी का पद प्राप्त किया है । इण्डोनेशिया की एक महिला गत २८ वर्षों से हर साल एक सन्तान को अनवरत रूप से जन्म देती चली आ रही है । मांटीमिलेटो (इटली) की एक महिला श्रीमती रोसा अब तक २६ बच्चों को जन्म दे चुकी है ।

केवल कन्याओं को जन्म देने वाली महिलाओं में प्रथम हैं इण्डियाना पोलिस की श्रीमती सिसिल जिन्होंने लगातार १४ कन्याओं को जन्म दिया है । इसके बाद दूसरे नम्बर पर आती हैं श्रीमती लाइड ब्रुक्स उनके १३ कन्याएँ ही हैं । इन दोनों महिलाओं ने कभी भी पुत्र प्रसव नहीं किया ।

आयु के न्यून या अधिक होने पर भी प्रजनन अवयव इस स्थिति में हो सकते हैं कि वे सन्तानोत्पादन कर सकें—

गुआर्राटगुएट (ब्राजील) में २३ बच्चों के पिता जो से पार फरियो डी. एराओं ने १०९ वर्ष की आयु में ४८ वर्षीय महिला के साथ चौथा विवाह किया है । पूछने वालों को उसने बताया कि यदि मेरे और सन्तान होती है तो उसे पूर्णतया स्वाभाविक समझूँगा ।

नव-वधू का यह प्रथम विवाह है । वह बहुत समय से उसकी प्रेयसी रही है । लोगों ने इस वृद्ध विवाह का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

मखौल उड़ाया तो वधू ने इससे असहमति प्रकट की और उसने कहा, मेरा पति शारीरिक दृष्टि से पूर्ण सक्षम है और मैं सन्तुष्ट हूँ ।

दक्षिण पेरू के आरिक्या अस्पताल में एक ११ वर्षीया बालिका ने १८ किलोग्राम वजन के बच्चे को जन्म दिया । जच्चा और बच्चा दोनों ही स्वस्थ रहे ।

इससे पूर्व कम उम्र की लड़की द्वारा प्रजनन का पहला रिकार्ड यह है कि १९३८ में एक सात वर्षीय बालिका लिण्डा मैडिना ने कैस्ट्रोविरीना के अस्पताल में पुत्र को जन्म दिया था ।

यह प्रमाण बताते हैं कि शरीर की स्थिति पर प्रजनन निर्भर नहीं वरन् उसका सीधा सम्बन्ध ऐसी चेतना से है जो काय गत रासायनिक पदार्थों से कहीं ऊँचा है ।

इन तथ्यों पर विचार करने से काम प्रवृत्ति को नियन्त्रित, परिष्कृत, परिपुष्ट, प्रबल और शिथिल बनाने को ही नहीं अभीष्ट सन्तानोत्पादन के लिए उस विशिष्ट चेतना के साथ सम्पर्क बनाना पड़ेगा जो अस्थि मांस से नहीं वरन् अन्तः चेतना से सम्बन्धित है । चेतना का यह स्तर योगाभ्यास की कुण्डलिनी उत्थान जैसी साधना पद्धतियों से सम्बन्धित है । ब्रह्मचर्य का परिपूर्ण पालन और उस ओजस शक्ति का प्रखर व्यक्तित्व के रूप में परिवर्तन भी इसी स्तर की साधनाओं द्वारा सम्भव हो सकता है ।

ब्रह्मचर्य से शक्ति और संयम द्वारा प्रसन्नता

काम वासना का मनुष्य जीवन में बहुत छोटा-सा स्थान है । प्रकृति ने उसमें एक आनन्द इसलिए भर दिया है कि सृष्टि का क्रम चलता रहे, परन्तु आधुनिक सभ्यता और उसके विचारक काम प्रवृत्ति को ही सब कुछ, सर्वप्रधान मानने लगे हैं । यह भी कहा जाता है कि इस काम प्रवृत्ति को उन्मुक्त रूप से खुले खेलने देना चाहिए अन्यथा मन और शरीर में कई एक रोगों की उत्पत्ति हो सकती है । इस विचार को प्रतिपादित करने में प्रसिद्ध मनोविज्ञान शास्त्री सिगमंड फ्रायड का नाम अग्रणी है । उनका यह बहुचर्चित प्रतिपादन सर्वविदित है कि—काम वासना की अतृप्त इच्छाएँ ही मनोविकारों को उत्पन्न करती हैं और उस अवरोध से प्रतिभा कुण्ठित होती है । मानसिक ही नहीं शारीरिक स्वास्थ्य पर भी बुरा असर पड़ता है और व्यक्तित्व दब जाता है । वे कहते रहे हैं मनुष्य इंजन है और काम वासना उसमें बनती-बढ़ती भाप । यदि इस भाप को निकलने का अवसर न मिले तो विस्फोट होगा और व्यक्तित्व बिखर जायेगा । उन्होंने उन्मुक्त काम सेवन की वकालत की है और उस पर लगे प्रतिबन्धों को हानिकारक बताया है ।

उस प्रतिपादन ने यौन सदाचार पर बुरा प्रभाव डाला है और लोगों का जितना विश्वास फ्रायड के प्रतिपादन पर जमा है उतना ही असंयम और व्यभिचार को प्रोत्साहन मिला है । सुशिक्षित वर्ग में इस तथाकथित मनोविज्ञान के आधार पर यह मान्यता जड़ जमाती जा रही है कि कामेच्छा की पूर्ति आवश्यक है । उसे स्वच्छन्द उपभोग का अवसर मिलना चाहिए । संयम से शारीरिक और मानसिक हानि होती है । इस प्रतिपादन का कुप्रभाव नर-नारी के बीच पावन सम्बन्धों की समाज व्यवस्था पूरक सुव्यवस्था एवं पवित्रता पर पड़ रहा है । दाम्पत्य जीवन में यदि कुछ अतृप्ति रह जाती है, तो उसे बाहर पूरा करने में भय, लज्जा, संकोच, अनुभव नहीं करता वरन् उस उद्धत आचरण को शारीरिक, मानसिक स्वास्थ्य की दृष्टि से आवश्यक मानता है । यह व्यभिचार का खुला समर्थन है । दाम्पत्य मर्यादाओं को फिर कैसे स्थिर रखा जा सकेगा । अविवाहित या विधुर यदि व्याभिचार पथ पर प्रवृत्त होते हैं तो उन्हें किस तर्क से समझाया जा सकेगा । फिर जो छेड़छाड़ और गुण्डागर्दी की अश्लील शर्मनाक घटनाएँ आये दिन होती रहती हैं उन्हें अवांछनीय या अनावश्यक कैसे ठहराया जा सकेगा । फ्रायड का शास्त्र दूसरे शब्दों में व्यभिचार शास्त्र ही है जिसे मनोविज्ञान में दार्शनिक मान्यता देकर समाज व्यवस्था पर कुठाराघात ही किया जा रहा है । एक तो वैसे ही पशु प्रवृत्तियाँ यौन उच्छृंखलता की ओर प्रोत्साहित करती थीं, सामाजिक परिस्थितियाँ भी उसी ओर आकर्षण बढ़ाती थीं, इस पर उस प्रवृत्ति को वैज्ञानिक समर्थन मिलने लगे और संयम को हानिकारक बताया जाने लगे तब तो ब्रह्मचर्य और दाम्पत्य जीवन की पवित्रता का ईश्वर ही रक्षक है ।

इस प्रकार के प्रतिपादन का उत्साह सम्भवतः फ्रायड को पाश्चात्य धर्म मान्यताओं से भी मिला होगा, क्योंकि उनका तत्वदर्शन कुछ ऐसा ही अटपटा है ।

यहूदी और ईसाई धर्म मान्यताओं के अनुसार मनुष्य जन्म-जात पापी है । वह पाप वृत्तियाँ लेकर अवतरित हुआ है । उसकी प्रकृति पापमूलक है । इस 'ओरीजिनल सिन' को ही सम्भवतः फ्रायड ने मनुष्य की मूलभूत प्रवृत्ति माना है, जो कुछ वह सोचता है, करता है उसमें पाप ही प्रधान होना चाहिए । पाप में से प्रधानता किसे दी जाय । फ्रायड को इसके लिए सबसे सरल और आकर्षक 'सेक्स' ही जँचा और उसने यह मान्यता गढ़ डाली कि मनुष्य की स्थिरता एवं प्रगति 'सेक्स' पर अवलम्बित है । उसकी निरन्तर इच्छानुरूप-स्वच्छन्द पूर्ति न हो सकेगी तो मन में कम्प्लेक्स-ग्रन्थियाँ बनेंगी । मनोविकार उत्पन्न करेंगी, बीमारी लायेंगी और न जाने क्या-क्या करेंगी । इसलिए उन समस्त उपद्रवों और हानियों से बचने का एक ही आकर्षक तरीका है कि स्वच्छन्द काम सेवन की सुविधा प्राप्त की जाय । इस दिशा में लगे हुए प्रतिबन्धों और मर्यादाओं को अमान्य किया जाय । स्वेच्छाचार और स्वच्छन्दतावाद सम्भवतः

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इसलिए उन्हें उचित प्रतीत हुआ क्योंकि उस दर्शन में जिसमें फ्रायड पले यह माना जाता रहा है कि मनुष्य जन्मजात पापी है । पाप उसकी प्रकृति है । जब ऐसा ही है तो उस मूल प्रवृत्ति को क्यों रोका जाय ? उसे तृप्त ही क्यों न होते रहने दिया जाय ? यही है फ्रायड का अधूरा और बेतुका चिन्तन जिसे न जाने क्यों विचारशील लोगों ने आँखें बन्द करके स्वीकार कर लिया है ।

मनुष्य की प्रकृति में कामुकता का भी एक स्थान है, पर वह है सीमित, उसे मान्यता मिली है, उसे हर्षोल्लास के विकास की दृष्टि से प्रयुक्त भी होने दिया जाता है, पर उसकी दिशा ऊँची रखी जाती है और यह प्रयत्न किया जाता है वह ऊर्ध्वगामी होकर विकसित हो । विवाह के समय पत्नी प्रियतमा व प्रेयसी होती है । रस रंग में सहायक होती है, पर उसकी इस स्थिति की अवधि बहुत स्वल्प है । जल्दी ही वह माँ बन जाती है और फिर पति भी, पत्नी भी अपने उत्तरदायित्वों और गृहस्थ के कर्तव्यों को देखते हुए बालकों पर पड़ने वाले प्रभाव का ध्यान रखते हुए उस प्रणय प्रवृत्ति को जल्दी ही शालीनता में परिणत करने लगते हैं । आरम्भिक दिनों में चन्द्र वदनी, मृगनयनी आदि कहा जाता था पर थोड़े ही दिनों बाद वह मुन्नी की मम्मी, श्याम की माँ कहकर पुकारी जाती है । फिर परस्पर सम्बोधन बच्चों के नाम पर उनकी माताजी या उनके पिताजी कहकर किए जाते हैं । वासनात्मक दृष्टिकोण बदलकर अभिभावकों का, बुजुर्गों का बन जाता है । यही स्वस्थ दृष्टिकोण है । धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की चार उपलब्धियों में एक गणना काम की भी है, पर उसकी प्रधानता नहीं तीसरा नम्बर है । पहले धर्म कर्तव्य इसके बाद अर्थ पुरुषार्थ, तब कहीं काम, सो भी तुरन्त छुटकारे से, मोक्ष से, तनिक ही पूर्व । सूर्य, चन्द्र पर ग्रहण लगता तो है पर उसका मोक्ष काल भी जल्दी ही आ जाता है । यही है तथ्यपूर्ण काम मर्यादा ।

माना कि पशु प्रवृत्तियाँ भी मनुष्य के भीतर हैं पर इसका अर्थ यह तो नहीं है कि उन्हें खुलकर खेलने के लिए छुट्टल कर दिया जाय उनका उदात्तीकरण ही तो 'संस्कृति' है । बालों को काट-छाँटकर साज-सँभाल कर ही तो उन्हें सुन्दर बनाया जाता है । यदि उन्हें मूल रूप में ही बढ़ने दिया जाय तो फिर मनुष्य की शक्ल आदम मानव जैसी कुरूप बन जायेगी । बगीचे की कटाई, छटाई, खुदाई, निराई न की जाय तो वह झाड़-झंखाड़ के रूप में कुरूप बना खड़ा होगा । पशु-प्रवृत्तियों का उदात्तीकरण ही तो 'कला' है । कला रहित को सींग, पूँछ रहित पशु कहा गया है । 'काम' को भारतीय दर्शन में भी उसके मूल स्वरूप में स्वीकार किया गया है और उसका सम्मान भी किया गया है । उसे 'पाप' नहीं माना गया वरन् हर्षोल्लास, विनोद, कौतुक के भावान्दोलन का लाभ लेकर उसे श्रद्धा सिक्त अध्यात्म की दिशा में उन्मुख कर दिया गया है । शिव लिंग की प्रतिमाएँ देव मन्दिरों में पूजी जाती हैं यह नर-नारी की जननेन्द्रियाँ ही हैं । उन्हें सृष्टि बीज, चेतना केन्द्र के रूप में श्रद्धासिक्त दृष्टि से देखा जाता है और अर्चना अभ्यर्थना के उच्च स्तर पर उन्हें बिठाकर वन्दन अभिनन्दन किया जाता है । उच्छृंखल उन्माद के लिए कोमल भावनाओं के रूप में उन्हें मृदुल रस धारा बनाकर जीवन मरुभूमि में प्रवाहित करना ही ललित कलाओं का उद्देश्य है । शिव द्वारा काम दहन के पौराणिक कथानक ने स्थूल काम सेवन को विक्षोभकारी, असन्तुलन उत्पादन का अपराधी ठहरा कर विवेक के तृतीय नेत्र से उसे भस्म कराया है । साथ ही उसे अशरीरी बनकर अजर-अमर रहने का वरदान भी मिला है और उसे देवताओं की पंक्ति में बिठाया गया है । यही है काम सम्बन्धी परिष्कृत दृष्टिकोण ।

लेकिन फ्रायड ने काम प्रवृत्ति को उपभोग क्रीड़ा की दिशा में ही सरल रखना उचित बताया उनका कहना था कि काम प्रकृति की प्रेरणा है और वह बच्चों में जन्म के साथ ही विद्यमान रहती है । इसी प्रवृत्ति के कारण बच्चे माता-पिता की ओर आकर्षित होते हैं ।

अबोध बालकों में इस तरह का यौन आकर्षण होना अयुक्तिपूर्ण ही नहीं बहुत हास्यास्पद बात भी है । भारतवर्ष में मृत्युपर्यन्त माता के प्रति लोगों में इतनी पवित्रिता होती है कि ऐसे गंदे और फूहड़ विचार मस्तिष्क में आते तक नहीं । माता-पिता के प्रति दुर्भाव आना सहज वृत्ति रही होती तो श्रवण कुमार अपने माता-पिता को कंधों पर चढ़ाये हुए न घूमता । राम दशरथ की बात ठुकरा देते और अयोध्या में गृह-युद्ध की स्थिति पैदा कर देते । दुर्योधन जैसा अत्याचारी शासक भी अपने माता-पिता का उतना ही भक्त था, जितना किसी आदर्श सन्तान को होना चाहिए । भरतकुमार के लिए तो वन में कोई अवरोध नहीं था पर उसने अपनी माँ की उपासना देवताओं की तरह की ।

फ्रायड के इस थोथे सिद्धान्त की वास्तविकता प्रकट करते हुए, श्री इलाचन्द्र जोशी लिखते हैं—"फ्रायड अपनी सुन्दरी माता आमेलिया फ्रायड का पहला पुत्र था । आमेलिया के पति याकोब फ्रायड ने यह दूसरा विवाह किया था । जब फ्रायड का जन्म हुआ था, तब आमेलिया की आयु कुल २१ वर्ष की थी, प्रथम सन्तान के प्रति माँ का भी अत्यधिक स्नेह और लाड़-प्यार होता है, फ्रायड जन्मजात प्रतिभाशाली और तीव्र अनुभूतिशील बालक था । आश्चर्य नहीं कि इस प्रीकोशस बालक के मन में सचेत ही रूप में अपनी स्नेहशीला और सुन्दरी माता के प्रति बहुत छोटी अवस्था में ही तीव्र यौनाकांक्षा जाग उठी हो । फ्रायड कुतूहली और ईर्ष्यालु स्वभाव का भी था । पिता उसे कइ बार डाँटता भी था, इसलिए पिता के प्रति दुर्भाव हो जाना स्वाभाविक हो सकता है ।

अपने जीवन की इसी संस्कार जन्य कमजोरी को ही फ्रायड ने एक सर्व साधारण सिद्धान्त मान लिया और उसे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ही सत्य सिद्ध करने में जीवन भर लगा रहा । मनुष्य जीवन की साधारण गति अधोमुखी होती ही है, सो उसे समर्थक भी मिलते ही गए और देखते-देखते फ्रायड के सेक्स ने सारे पाश्चात्य समाज को अपनी कुंडली में बाँध लिया ।

प्रवृत्तियाँ और भी हैं

किन्तु ऐसा नहीं समझा जाना चाहिए कि मनोविज्ञान के कर्त्ता-धर्त्ता केवल फ्रायड ही हैं । उन्हीं की तरह दूसरे अन्वेषक भी हुए हैं और वे भी शोध कार्य में इस क्षेत्र के अग्रणी समझे जाते हैं, उन्होंने मूल प्रवृत्तियों की व्याख्या की है उसमें कामुकता को नहीं अन्य प्रवृत्तियों को प्रमुख माना है । उनकी खोज में कामुकता एक प्रवृत्ति तो है पर उसका स्थान बहुत ही हल्का एवं गौण है । इसे बदलने, सुधारने में उनके कथनानुसार कोई बड़ी कठिनाई नहीं होनी चाहिए । सामाजिक एवं नैतिक आवश्यकता के अनुरूप यदि उस पर एक सीमा तक प्रतिबन्ध लगाया जाय तो उससे किसी बड़ी हानि की आशंका नहीं है ।

मनोविज्ञानियों के विश्लेषणों में प्रधान मूलप्रवृत्तियों के सम्बन्ध में भारी मतभेद है । उदाहरणार्थ हाब्स ने मूल प्रवृत्तियों के अनुसार मनुष्य को निर्दयी तथा स्वार्थी माना है । एडम स्मिथ ने अपने ग्रन्थ, "सिम्पेथेटिक बेसिस ऑफ ह्यूमन एक्टिविटीज" में सहानुभूति को मूल प्रवृत्ति एवं मनुष्यों का पारस्परिक व्यवहार का प्रधान आधार माना है । ट्रोटर ने अपने ग्रन्थ-"इन्सिंक्ट्स ऑफ दि हर्ड इन पीस एण्ड वार" में मनुष्य को सामाजिकता एवं सामूहिकता की प्रवृत्तियों से ओत-प्रोत सिद्ध किया है ।

डॉ. पेमाख मूल प्रवृत्तियों के अस्तित्व को स्वीकार करते हैं, पर वे कहते हैं कि उत्तेजना मिलने पर ही वे जाग्रत होती हैं यदि उन्हें छेड़ा न जाय तो उनका क्वचित् प्रभाव ही दृष्टिगोचर होगा । वह भी इतना हल्का होगा कि उसे थोड़े प्रयत्न से मोड़ा मरोड़ा जा सके ।

"जिंसवर्ग" यह मानते हैं कि मूल प्रवृत्तियाँ मनुष्य की अभिरुचि को अपनी दिशा में आकर्षित तो करती हैं पर वे इतनी प्रबल नहीं होतीं कि रोकने मुड़ने पर कोई विग्रह खड़ा कर दें ।

मैक्डुगल ने अपने ग्रन्थ "आउट लाइन ऑफ साइकोलॉजी" में इस तथ्य को और भी अधिक स्पष्ट किया है कि मूल प्रवृत्तियों में ज्ञानात्मक, क्रियात्मक और रागात्मक तीनों प्रकार की मानसिक क्रियाएँ जुड़ी हुई हैं । फिर भी वे शरीर मस्तिष्क को चलाने वाली संचालित सहज क्रियाओं जैसी नहीं । ऋताभिधरण, श्वास-प्रश्वास, आकुंचन-प्रकुंचन जैसा अपरिहार्य उनका वेग नहीं है वे परिवर्तनशील हैं और सुधारी जा सकती हैं । शहद की मक्खी में छत्ता बनाने की जो प्रवृत्ति है वह सहज क्रिया है, पर कुत्ते की मूल प्रवृत्ति जहाँ भी आहार मिले वहाँ से झपट लेने की आदत बदली जा सकती है । उसे लिखा-पढ़ा कर शिष्ट बनाया जा सकता है और रोटी पाने के लिए उपयुक्त अवसर की प्रतीक्षा करने के लिए अभ्यस्त किया जा सकता है ।

मनोविज्ञानी जेम्स के अनुसार ६ प्रकार की मूलप्रवृत्तियाँ मनुष्यों में पायी जाती हैं पर यह आवश्यक नहीं कि हर किसी में वे समान रूप से उभरी हुई हों । किसी में इनमें से किसी का संवेग तीव्र हो सकता है और किसी में उसका स्तर इतना क्षीण हो सकता है कि उनके अस्तित्व की सम्भावना ही संदिग्ध प्रतीत होने लगे । जेम्स इन्हें छः की संख्या में गिनते हैं—(१) सार्वभौमिकता-यूनिवर्सिलिटी (२) जन्मजात-इन्नेट (३) संशोधन क्षमता-एडाप्टेबिलिटी (४) प्रयोजन-परपज (५) प्राथमिक पूर्णता-परफेक्शन फर्स्ट पर्टरिमेन्स (६) सम्पूर्ण मानसिक क्रिया-कम्पलीट मेन्टल एक्शन ।

थार्नडाइक का कथन है कि मनुष्य की मूल प्रवृत्तियाँ एक सौ तक गिनी जा सकती हैं जिनमें से चालीस तो ऐसी हैं जिनका अस्तित्व न्यूनाधिक मात्रा में प्रायः हर किसी में देखा जा सकता है । डॉ. बर्नार्ड ने अपने "एस्टडी ऑफ सोशल साइकोलॉजी" ग्रन्थ में लगभग उतनी ही संख्या में मूल प्रवृत्तियों की गणना की है जितनी कि थार्नडाइक बताते हैं ।

'ड्रेवर' ने अपने ग्रन्थ 'इन्स्टिक्ट इन मैन' में वासनात्मक और प्रतिक्रियात्मक दो वर्गों में मूल प्रवृत्तियों का विभक्तिकरण किया है । किल पेट्रिक ने (१) आत्म रक्षा की प्रवृत्ति—सेल्फ प्रिजर्वेटिव इंस्टिक्ट (२) सन्तानोत्पत्ति की प्रवृत्ति-रिप्रोडक्टिव इंस्टिक्ट (३) सामूहिक जीवन की प्रवृत्ति-ग्रेगेरियस इंस्टिक्ट (४) परिस्थितियों के अनुकूल जीवन चलाने की प्रवृत्ति-एडाप्टिव इंस्टिक्ट (५) आदर्श पालन की प्रवृत्ति-रेगुलेटिव इंस्टिक्ट को ही प्रधान माना है । शेष को या तो प्रवृत्तियों में गिनते ही नहीं, या फिर उन्हें तुच्छ उपेक्षणीय कहते हैं ।

वुडवर्थ ने उनका विभाजन नौ श्रेणियों में किया है—(१) आंगिक आवश्यकता (२) काम प्रेरणा (३) पलायन प्रेरणा (४) लड़ना (५) अनुसन्धान (६) विनोद (७) सामाजिक चेतना (८) संस्थापन (९) विनीतता ।

मैक्डुगल के ग्रन्थ 'सोशल साइकोलॉजी एण्ड आउट लाइन ऑफ साइकोलॉजी' में मूल प्रवृत्तियों की संख्या तेरह बताई गई है—(१) पलायन—एस्केप (२) युयुत्सा—कम्बैट या पुगनैसिटी (३) निवृत्ति—रपल्सन (४) सम्वेदना-अपील (५) भोग—मैटिंग आरसेक्स (६) जिज्ञासा—क्यूरियासिटी (७) दैन्य—सबमिशन (८) आत्म गौरव—सेल्फ एसोर्शन (९) सह-जीवन—ग्रेगेरियास नेस (१०) आहारान्वेषण—फडसीकिंग (११) संचय—एक्विजिसन (१२) विधायकता—कान्स्ट्रक्टिव नेस (१३) हास-लाफ्टर ।

मनःशास्त्री वेब्लोनस्की का कथन है कि मनुष्य की मूल प्रवृत्तियाँ इतनी अधिक हैं जितना अनन्त आकाश, उन्हें गणना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की सीमा से परे सार्वभौम कहना चाहिए, सार्वभौमिकता भूख-प्यास, निद्रा, जैसी उन प्रवृत्तियों को कहते हैं जो समस्त विश्व के मनुष्य में एक समान पायी जाती हैं । 'जन्मजात'—वे हैं जो बच्चों में जन्मते ही साथ आती हैं—दूध चूसना, अंग संचालन आदि । 'समयोजन की क्षमता' का तात्पर्य है—परिस्थितियों के अनुरूप उपाय खोजना और अपने को ढालना, 'प्रयोजन' किसी सामयिक आवश्यकता की पूर्ति के लिए सहज बुद्धि से तत्पर हो जाना । 'सम्पूर्ण मानसिक क्रिया का स्वरूप है विपत्ति सामने आते ही उसका सामना करने के लिए हर अंग का क्रियाशील हो जाना । शेर सामने आते ही मुँह से चिल्लाने, हाथों से पत्थर उठाने, पैरों से भागने जैसे बहुमुखी क्रियाकलाप का एक साथ-तत्काल आरम्भ हो जाना । जिज्ञासा, संग्रहशीलता, अहमन्यता का प्रदर्शन दूसरों की तुलना में श्रेष्ठ सिद्ध होने की इच्छा जैसी अनेकों अन्य प्रवृत्तियाँ भी ऐसी हैं जो न्यूनाधिक मात्रा में हर मनुष्य के अन्दर विद्यमान रहती हैं ।

मनः शास्त्रियों के अन्यान्य प्रतिपादनों को देखते हुए फ्रायड के काम स्वेच्छाचार का प्रतिपादन बहुत ही बचकाना और एकांगी प्रतीत होता है । खेद इसी बात का है कि ऐसे अधूरे और अवांछनीय निष्कर्षों को अग्रिम पंक्ति में बिठाने की ऐसी भूल की जा रही है जिसका परिणाम मानव का भविष्य अन्धकारमय ही बना सकता है ।

'रेतस' को ऊर्ध्वगामी बनाकर जो उल्लास शक्ति, प्रसन्नता, प्रमोद और आनन्द मिलता है, योग-शास्त्रों में उसकी बड़ी प्रशंसा की गई है और उसे अनवरत कामसुख से भी बढ़कर बताया गया है । यौनाकर्षण तो क्षणिक सुख की प्रेरणा देता है, इस प्रकार की तृप्ति से आंशिक सुख भले ही मिल जाता हो पर बाद में शरीर और आत्मा की दुर्गति ही होती है । मनुष्य के विचार और क्रिया-कलाप सब निम्नगामी होते चले जाते हैं, व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन में वह विद्रुप और उपद्रव उठ खड़े हो जाते हैं, जिनकी चर्चा इतिहास पुराणों में मिलती है ।

महाराजा ययाति वैसे तो बड़े ही विद्वान और ज्ञानवान राजा थे । किन्तु दुर्भाग्यवश उन्हें वासनाओं का रोग लग गया और वे उनकी तृप्ति में निमग्न हो गए । स्वाभाविक था कि ज्यों-ज्यों वे इस अग्नि में आहुति देते गए, त्यों-त्यों वह और भी प्रचण्ड होती गई और शीघ्र ही वह समय आ गया, जब उनका शरीर खोखला और शक्तियाँ बूढ़ी हो गईं । सारे सुकृत खोये, बेटे के प्रति अत्याचारी प्रसिद्ध हुए, परमार्थ का अवसर खोया और मृत्यु के बाद युग-युग के लिए गिरगिट की योनि पायी, किन्तु वासना की पूर्ति न हो सकी । पाण्डु जैसे बुद्धिमान राजा पीलिया रोग के साथ वासना के कारण ही अकाल मृत्यु को प्राप्त हुए । शातनु जैसे राजा ने बुढ़ापे में वासना के वशीभूत होकर अपने देवव्रत भीष्म जैसे महान् पुत्र को गृहस्थ सुख से वंचित कर दिया । विश्वामित्र जैसे तपस्वी और इन्द्र जैसे देवता वासना के कारण ही व्यभिचारी और तप-भ्रष्ट होने के पातकी बने । वासना का विषय निःसन्देह बड़ा भयंकर होता है, जिसके शरीर का शोषण पाता है, उसका लोक-परलोक पराकाष्ठा तक बिगाड़ देता है । इस विष से बचे रहने में ही मनुष्य का मंगल है ।

लाभ नहीं हानि ही हानि

कुछ भौतिकवादी मानसिक उपचारकों का विचार है कि काम-प्रवृत्ति मनुष्य की स्वाभाविक प्रवृत्ति होने से, उसके प्रकाशन और तृप्ति की प्रक्रिया में तब तक रोक नहीं लगाई जानी चाहिए, जब तक कि उससे समाज के किसी अन्य घटक को कोई क्षति या पीड़ा न पहुँच रही हो । उनकी मान्यता है कि कामोत्तेजना का दमन स्नायुविक तनाव का कारण बनता है और इससे विभिन्न शारीरिक-मानसिक रोगों की उत्पत्ति होती है ।

इस सन्दर्भ में अनेक ऐसे लोगों का परीक्षण किया गया जो कि बुद्धि और हृदय से काम-वासना सम्बन्धी उपर्युक्त मत को ही सत्य मानते थे और स्वयं डॉक्टर थे तथा शरीर की भली-भाँति जानकारी रखते थे । पाया यह गया कि उच्छृंखल काम सेवन या कि 'काम-चिन्तन' से इन लोगों को भी शारीरिक थकावट, निराशा, चिन्तावृद्धि, शंकालुता के अकारण उदय आदि से ग्रस्त-त्रस्त होना पड़ा । अधिक समय तक इसी में लगे रहने वाले ऐसे डॉक्टरों को भी औरों की तरह 'न्यूरेस्थेनीलॉया' का रोग हो गया । "साइकोलॉजी एण्ड मारल्स" नामक पुस्तक में मनोविज्ञानवेत्ता प्रोफेसर हेडफील्ड ने लिखा है कि स्वच्छन्द यौनाचरण का परामर्श देना, व्यक्ति को विनाश के मार्ग में ले जाने की विधि है ।

तब क्या यह सही नहीं है कि काम-वासना का दमन रोगों को जन्म देता है ? वस्तुतः सही यह है कि जब किसी तरह के भय के कारण काम-वासना दमित की जाती है, तो वह मात्र चेतन मन में दमित होती है । अचेतन मन में उसकी आग धधकती ही रहती है और वह कामकुटेवों तथा शारीरिक-मानसिक विकृतियों के रूप में फूटती है ।

एक ओर, काम-क्रीड़ा के प्रति जब व्यक्ति-मन में प्रबल पाप-भावना घर कर लेती है और दूसरी ओर अचेतन मन के प्रशिक्षण की विधियाँ जाने बिना मन की स्वाभाविक कामोत्तेजनाएँ बार-बार उभरकर उद्विग्न-उद्वेलित करती रहती हैं, तो एक प्रचण्ड संघर्ष का जन्म स्वाभाविक है । इस संघर्ष के बावजूद अनियन्त्रित-अप्रशिक्षित मन में कामोद्वेग तो उठेगा ही, इससे आत्मग्लानि की भावना उत्पन्न होने लगती है । साथ ही दमन की अस्वाभाविक आकांक्षा दुराग्रही और हठी बनती जाती है । यह अपने को ही अपना शत्रु मान बैठने की स्थिति होती है । परिणाम स्पष्ट है—क्षति स्वयं की ही होती है । दमित भावना अचेतन मन में चली जाती है और असामान्य क्रम में होने वाले स्वप्न दोषों से लेकर विभिन्न यौन-रोगों तथा शारीरिक-मानसिक विकृतियों का कारण बनती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

काम को मनुष्य की मूल प्रवृत्तियों में से एक मान लेना एक हास्यास्पद भ्रान्ति ही है । युंग ने फ्रायड की इस स्थापना पर कि "मानवीय इच्छाएँ" चेष्टाएँ प्रधानतया काम-वासना से प्रेरित-निर्देशित है, अपनी टिप्पणी यह की थी कि—"फ्रायड का यह कथन, अन्तःकरण और व्यवहार के बीच की एक धुँधली-सी पर्त की चर्चा भर है । यह मन की वास्तविक स्थिति नहीं, उसकी काली कुरूप छाया मात्र है । मन में अनेक लहरें उठती रहती हैं । क्रिया-प्रतिक्रिया की इन्हीं तरंगों में से एक कामवासना की तरंग भी है । उसे चेतना की मूल प्रेरणा मानना भ्रान्ति ही है ।"

मनोविज्ञान में किसी व्यक्ति की ही स्थापना को प्रमुखता देने वाले व्यक्तियों के भी मन का विश्लेषण अनिवार्य है । आज मनोविज्ञान बहुत आगे बढ़ा है; फिर भी आन्तरिक कुरूपता-दुर्बलता को गरिमा मंडित करने की निर्लज्ज चेष्टा में निरत लोग फ्रायड की उक्त स्थापना की ही दुहाई दिए चले जाते हैं जबकि स्वयं फ्रायड ने जीवन के अन्तिम दिनों में अपनी कई मान्यताओं का परिशोधन परिमार्जन किया था । हाब्स, एडम स्मिथ, मैक्डुगल, जेम्स, किल पेट्रिक, ड्रेवर, थार्नडाइक, वुडवर्थ आदि ने मूल प्रवृत्तियों का भिन्न-भिन्न रीति से विभाजन किया है । वेल्होनस्की का कथन है कि "मनुष्य की मूल प्रवृत्तियाँ अनन्त आकाश के समान गणनातीत हैं ।"

'जीन्सबर्ग' ने कहा है कि—"मूल प्रवृत्तियाँ मनुष्य को अपनी ओर आकर्षित तो करती हैं, किन्तु वे ऐसी प्रचण्ड कदापि नहीं होती कि रोकने-मोड़ने में कोई अनर्थमूलक विग्रह खड़ा कर दें ।"

अपनी पुस्तक "साइकोलॉजी एण्ड साइकोथेरेपी" में डॉ. विलियम ब्राउन ने कहा है-"रियलिटी" समय से परे है । वह समय से बाहर नहीं, समयातीत है । 'रियलिटी' की यह कालातीत होने की विशेषता ही हमें वह 'स्वतन्त्रता' देती है जिसके कारण हम अपनी मूल प्रवृत्तियों को नियन्त्रित कर सकते हैं । भौतिक विज्ञान की शब्दावली से मूल प्रवृत्तियों के नियन्त्रण की बात समझ में ही नहीं आ सकती । जहाँ तक भौतिक विज्ञान की वर्तमान पहुँच है, वहाँ तक 'डिटर्मिनिज्म' बिल्कुल सही है उसके अनुसार मूल प्रवृत्ति का प्रकाशन अनिवार्य है । इसमें अन्यथा हम कुछ नहीं कर सकते । लेकिन मात्र नियन्त्रक नहीं, प्रेरक-निर्देशक भी हैं । उनके बिना जीवन में किसी भी क्षेत्र में सार्थक क्रियाशीलता ही सम्भव न हो सकेगी । उसे परिष्कृत किया जाना चाहिए । उल्लास के रूप में परिणत करने के लिए कितने ही सौम्य प्रयोजन हैं, जो हमें हास-विलास, विनोद, क्रीड़ा-कौतुक के रूप में न केवल आनन्द देते हैं वरन् उत्साह, साहस और कौशल की वृद्धि भी करते हैं । काम भावना को इसी दिशा में परिष्कृत किया जा सके तो वह न तो विनाशकारी बनेगी और न अनैतिक रहेगी । उसे जीवन को उत्कृष्ट और आनन्दित बनाने के लिए बुद्धिमत्ता पूर्ण रीति से मोड़ा जाय तो वह हर दृष्टि से लाभदायक सिद्ध होगा ।

'रियलिटी' दिक्कालातीत है और स्वरूपतः आध्यात्मिक (या चेतनात्मक स्पिरिचुअल) है । हम इसी ब्रह्माण्ड-व्यापी चेतना के अंश हैं और इसी रूप में हम स्वतन्त्र हैं, मनुष्य की इच्छा शक्ति स्वतन्त्र है, पर कैसे स्वतन्त्र है ? यह निरी भौतिक-विज्ञानी विधियाँ तथा शब्दावलियों द्वारा हम न समझ सके हैं, न कभी समझ सकेंगे ।"

काम-कुटेवों समेत समस्त स्वेच्छाचारिता की प्रेरणा अचेतन मन से होती है । अचेतन मन पर अधिकार पाने के लिए इच्छा-शक्ति की महत्ता तथा स्वरूप को समझना आवश्यक होता है । हमारी सचेत इच्छा-शक्ति हमारे चेतन मन की ही उत्पत्ति है । अचेतन मन का विस्तार इससे बहुत अधिक है ।

स्नेह-प्रेम के अभाव तथा जीवन में विफलता के गहरे बोध से व्यक्ति की जीवनी-शक्ति का प्रवाह सहज नहीं रह जाता और वह विकृत रूपों में व्यक्त होता है । यह विकृति चेतन मन के समक्ष जब पहली बार आती है, तो व्यक्ति की नैतिक मान्यता उसे सहन नहीं कर पाती और उसे ग्लानि होती है । यह ग्लानि संकल्प से जुड़ने पर सृजनात्मक हो सकती है । दिशा-निर्देश के अभाव में यह आत्म-विश्वास हीनता को जन्म देती और इच्छाशक्ति को क्षीण करती है । क्षीण इच्छाशक्ति से विकृतियाँ रुकती नहीं, बढ़ती ही जाती हैं ।

कामवेग जन्य विकृतियों से बचने के लिए एक उपाय यह भी सुझाया जाता है कि नैतिक मान्यताएँ ही इसके स्वच्छन्द प्रकाशन को अनुचित ठहरातीं तथा ग्लानि उत्पन्न करती हैं, अतः उन्हें ही ध्वस्त कर दिया जाय, किन्तु नैतिक मान्यताएँ इतनी मामूली वस्तु नहीं । वे हमारी प्रगतिशीलता का आधार हैं । वे विवेकपूर्ण हों, तभी नैतिक मानी जायेंगी और विवेक से उत्पन्न नैतिक मान्यताओं की अस्वीकृति का अर्थ है विवेक की अस्वीकृति । विवेक के बिना व्यक्ति विचित्र गतिविधियों का पिटारा मात्र बनकर रह जायेगा । उसे किसी भी कार्य में न तो बौद्धिक आस्वाद प्राप्त होगा, न ही हार्दिक उल्लास । तब जीवन में आनन्द की भी स्पष्ट अनुभूति न हो सकेगी ।

नैतिक मान्यताओं का क्षेत्र अध्यात्म का क्षेत्र है । यह विकसित किया जा सके । धर्म से अविरुद्ध काम की गीता में भगवान ने अपना स्वरूप बताया है । धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष इन चार फलों में एक काम भी है । अस्तु उसे घृणित नहीं कहा जा सकता । इस बात की भी आवश्यकता नहीं कि उसे निरन्तर धिक्कारने और दबाने में ही लगा रहा जाय । विवेक का नियन्त्रण भर रखने से काम चलाऊ हल निकल आता है और उच्छृंखलता की सीमा तक बढ़ने की आवश्यकता नहीं पड़ती, किन्तु इस महाशक्ति को निरर्थक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भी क्यों जाने दिया जाय ? यौन भावना को नियन्त्रित किया जाय । यौन-शक्ति का श्रेष्ठतम उपयोग तो उसे सृजनात्मक दिशा देना ही है । दीपक का तेल बाती से होता हुआ उसके सिरे पर पहुँच कर प्रकाश उत्पन्न करता है । यदि दीपक की पेंदी में छेद की दिशा अधोमुखी हो तो न दीया जलेगा न तेल बचेगा । यौन-शक्ति को ऊर्ध्वगामी बनाना प्रयत्न और अभ्यास साध्य है । कालिदास ने प्रयत्न और अभ्यास से इसे सिद्ध कर जड़ बुद्धि से महाकवि बनने में सफलता प्राप्त की । पत्नी को एक क्षण के लिए छोड़ने को तैयार नहीं—तुलसी ने जब यह दिशा पकड़ी तो वे कामुक और लम्पट पुरुष से रामचरित मानस जैसे ग्रन्थ के प्रणेता और सन्त महापुरुष बन गए । गृहस्थ होते हुए भी यौनभावना को परिमार्जित और सृजनात्मक दिशा देकर बोलते समय काँपने वाले मोहनदास अपनी आवाज के करोड़ों लोगों में प्राण फूँकने वाले महात्मा गांधी हो गए । यौन-भावना को ऊर्ध्वमुखी बनाकर संसार में आश्चर्य-जनक सफलता प्राप्त करने वाली ज्ञात-अज्ञात विभूतियों का विवरण इकट्ठा किया जाय तो उनकी संख्या हजारों में नहीं लाखों में हो सकती है । यदि इतना एकदम सम्भव नहीं हो सके तो कम से कम उसे नियन्त्रित तो किया ही जा सकता है । सफलता का मतलब यश, कीर्ति ही नहीं है ।

नेपोलियन २५ वर्ष की आयु तक काम-सुख तो क्या नारी के प्रति भी आकृष्ट नहीं हुआ था । न्यूटन के मस्तिष्क में यौनाकर्षण उठा होता तो उसने अपना बुद्धि-कौशल सृष्टि के रहस्य जानने की अपेक्षा अपरिमित काम-सुख प्राप्त करने में झोंक दिया होता । भीष्म और हनुमान प्रतिज्ञाबद्ध हो सकते हैं, पर न्यूटन के सामने तो वैसी कठिनाई थी ही नहीं । जन्मजात प्रतिभाएँ अधोमुखी ही नहीं, ऊर्ध्वमुखी भी होती रही हैं और उनसे काम-सुख की अपेक्षा अधिक सुख लोगों को मिलता रहा है । हमारे देश में तो सच्चे और शाश्वत सुख की प्राप्ति में काम-वासना को प्रधान बाधा माना गया है । रामकृष्ण परमहंस विवाहित होकर भी योगियों की तरह रहे, वे सदैव आनन्द विह्वल रहते थे । स्वामी रामतीर्थ और भगवान बुद्ध ने तो ऊर्ध्व सुख के लिए तरुणी पत्नियों का परित्याग तक कर दिया था । महर्षि दयानन्द ब्रह्मचारी होकर जीये । महात्मा गाँधी ने ३६ वर्ष की अवस्था के बाद काम-वासना को बिल्कुल नियन्त्रित कर दिया था तो भी उनके जीवन से प्रसन्नता का फौब्बारा छूटता रहता था, तब फिर क्या 'काम-मुख' को प्रधान जीवन सुख और लक्ष्य की मान्यता दी जा सकती है ।

फ्रायड के सैक्स का प्रतिवाद

लिसैस्टर विश्वविद्यालय के मनोविज्ञान के प्राध्यापक श्री डैविड राइट ने अनेक बन्दी-शिविरों फौजी संस्थानों, खेल-कूद और पर्वतारोहण जैसी, सामाजिक सामुदायिक और राष्ट्रीय सन्धि के कार्यों में भाग लेने वालों के जीवन का विस्तृत अध्ययन करने के बाद पाया कि उनमें से अधिकांश सामान्य परिस्थितियों में ही सम्भोग का आनन्द लेते रहे । उन्हें अपने अभियान अथवा उसके बाद विषय-भोग की कभी भी इच्छा नहीं होती जब तक कि वे या तो स्वयं भूतकालीन सम्भोग का स्मरण नहीं करते या उनके सामने इस तरह की चर्चा के विषय नहीं आते । यदि वे इच्छा न करें अथवा उनके सामने कामुकता भड़काने वाली प्रवृत्तियाँ न आयें तो वे काम-वासना के लिए कभी परेशान नहीं होंगे वरन् मनो-विनोद और आह्लाद के स्वभाव का विकास ही होने लगता है ।

श्री डैविड राइट ने द्वितीय महायुद्ध के दौरान बन्दी बनाये गए जापानियों, साइबेरिया शिविर में बन्दी लोगों तथा अस्पतालों के उन लोगों से जाकर भेंट की जो लम्बे समय से किसी बीमारी से आक्रान्त पड़े थे । उनसे बात-चीत करते समय उन्होंने पाया कि उनमें कामवासना की कोई इच्छा नहीं रह गई थी तो भी वे न तो अशान्त थे न उद्विग्न वरन् उनके अन्तःकरण से एक प्रकार की शान्ति और आत्म-विश्वास की झलक देखने को मिलती थी । यह आत्म-विश्वास अच्छे अर्थों में था कि यदि इन परिस्थितियों से मुक्ति मिले तो अमुक-अमुक अच्छे काम करें ।

श्री डैविड राइट के इस कथन की और भी पुष्टि वैज्ञानिक अनुसन्धान द्वारा मिल जाती है और इस तरह फ्रायड के सिद्धान्त का लगभग अन्त ही हो जाता है । आने वाले समय में लोग फ्रायड के सिद्धान्त को तूल देकर अपना न तो मस्तिष्क खराब करेंगे और न शरीर की शक्तियाँ बर्बाद करेंगे वरन् शक्तियों के संचय से जीवन की अनेक ऐसी धाराओं का विकास करने में समर्थ होंगे, जिनका डॉ. डैबिट राइट ने अपने शोध पर्यवेक्षण से यह निष्कर्ष भी निकाला है कि काम वासना की स्वाभाविक एवं जन्मजात प्रवृत्ति नहीं है, वरन् वह सामाजिक जीवन के प्रचलन द्वारा आरोपित है, उन्होंने पशुओं पर किए गए अपने परीक्षणों से सिद्ध किया है कि काम सेवन के अभाव में कोई जन्तु हिंसक या समाज विरोधी नहीं बनता वरन् वह अपेक्षाकृत अधिक सौम्य हो जाता है । बंध्य बनाये गए, बैल, भैंसे, घोड़े, बकरे, गधे आदि उन्मुक्त काम सेवन करने वाले अपने सजातियों की तुलना में अधिक शान्त प्रकृति के होते हैं जबकि फ्रायड का कहना यह है कि यदि मनुष्य को काम सेवन की छूट न मिले तो वह समाज विरोधी बन जायेगा । यह बात उन्हीं लोगों के लिए सही हो सकती है जो उच्छृंखल वातावरण में रह रहे हैं, साधु प्रकृति के संयमी, सदाचारी और ब्रह्मचारी काम सेवन का अवसर न रहने पर भी न तो हिंस्र बनते हैं और न समाज विरोधी ।

श्री राइट ने अनेकों उदाहरणों से यह सिद्धान्त प्रतिपादित किया है कि यदि कामुकतापूर्ण वातावरण एवं चिन्तन से दूर रहा जाय तो वह प्रवृत्ति स्वयंमेव शिथिल या समाप्त हो जाती है । द्वितीय महायुद्ध में पकड़े गए बन्दी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

सैनिकों तथा साइबेरिया के श्रम शिविरों में बन्द लोगों का पर्यवेक्षण करने पर निष्कर्ष निकला है कि उनकी न केवल रति क्षमता वरन् वह इच्छा भी घट गई थी अथवा समाप्त हो गई । इसी प्रकार उन्होंने किन्हीं महत्त्वपूर्ण कार्यों में मनोयोगपूर्वक लगे हुए व्यक्तियों के उदाहरण देते हुए बताया है कि उन्हें अपने चिन्तन की व्यस्तता में काम सेवन की न तो इच्छा होती है और न आवश्यकता प्रतीत होती है । सेनानायक, नाविक, पर्वतारोही, वैज्ञानिक, शोधकर्त्ता, अध्ययन परायण व्यक्तियों की कामेच्छा बहुत स्वल्प होती है और वह भी तब तक जाग्रत नहीं होती जब तक कि वातावरण, संवाद अथवा स्वचिन्तन से ही उस तरह की अतिरिक्त उत्तेजना न मिले ।

भारत के नैतिक एवं सामाजिक स्वास्थ्य संगठन दिल्ली के एक शोध अध्ययन से पता चला है कि काम सेवन की न्यूनता से नहीं वरन् उसकी अति से पारिवारिक कलह उत्पन्न होते हैं । इस दिशा में अधिक आतुर, उत्सुक रहने वाले न केवल शारीरिक दुर्बलताग्रस्त होते हैं । वरन् मानसिक सन्तुलन खोकर चिड़चिड़े भी हो जाते हैं और उस अति को अपने ऊपर अत्याचार मानकर विरोध विद्रोह भी करते हैं । पारिवारिक कलह एवं मनोमालिन्य की घटनाओं में इस विग्रह का बहुत बड़ा हाथ पाया गया है जो लोग मर्यादाओं में रहते हैं उन्हें एक-दूसरे से शिकायत होना तो दूर उल्टे विश्वास, सम्मान, सन्तोष और सहयोग की मात्रा बढ़ी-चढ़ी रहती है ।

संयम अर्थात् शक्ति अर्थात् समर्थता

पृथ्वी पर प्रकृति की विकास व विनाश लीलाओं का क्रम अनवरत रूप से चलता रहता है । पृथ्वी अपने इर्द-गिर्द वायुमण्डल का एक कवच पहने हुए है । उसके तीन आवरण हैं । प्रत्येक से पृथ्वी को, इसके प्राणियों को तथा पदार्थों को बहुत कुछ मिलता है किन्तु यह भी एक कटु सत्य है कि उसी के कारण अपनी दुनिया को विनाश का कष्ट भी कम नहीं भुगतना पड़ता ।

हम सभी मनुष्य वातावरण के अदृश्य सागर के तले निवास करते हैं । प्रायः ९९ प्रतिशत वातावरण का भार ५ अरब टन है और वह सिर्फ ऊपर के ३० मील के क्षेत्र में सिमटा है । इस सघनता का लाभ यह है कि वह अन्तरिक्षीय किरणों, उल्कापातों आदि के घातक प्रभावों से पृथ्वी के जीवन की रक्षा करता है । साथ ही प्राणवायु, जल, रसायन आदि देता है । तापमान को नियन्त्रित रखता है । इस तरह यह घनीभूत वातावरण अपनी पृथ्वी के लिए हम सब प्राणियों के लिए एक रक्षा कवच का काम करता है ।

इस वातावरण में तनिक-सी भी उथल-पुथल पृथ्वी तल पर भयंकर चक्रवातों, प्रलयंकर तूफानों और विक्षुब्ध विनाश लीला का कारण बनती है । सागर की विशाल जलराशि भी निरन्तर उफनती रहती है, धरती के ऊपर का वातावरण भी सदा धधकता रहता है अभी तक ऐसा कोई यन्त्र नहीं बन पाया है, जो वतावरण की गहराई नाप सके और तथ्यों का सही एवं समग्र पता लगा सके । धरती की छाती में तो विशाल ज्वालामुखी का अविराम हाहाकार दबा ही रहता है ।

भीतर चल रही उथल-पुथल कभी-कभी आकस्मिक विस्फोटों के रूप में अभिव्यक्त होती है । यद्यपि कोई भी विस्फोट वस्तुतः आकस्मिक नहीं होता । वह एक क्रमिक प्रक्रिया की ही अनिवार्य परिणति होता है ।

सृष्टि के आरम्भ से ही प्राकृतिक परिवर्तन होते रहे हैं । मानव जाति के इतिहास में ऐसे तीव्र परिवर्तनों से सदा नये मोड़ आते हैं ।

इस परिवर्तन के स्वरूप बहुत तरह के होते हैं । सौर-मण्डल की गतिविधियों की एक दूसरे ग्रह पर भी पारस्परिक प्रतिक्रिया होती है व प्रभाव पड़ता है । ज्वालामुखियों के विस्फोट, तूफान, भूकम्प, ऊपरी वातावरण, विषमता से उत्पन्न हलचलें अथवा सौर-मण्डल की कोई भी असामान्य गतिविधि ऐसे तीव्र परिवर्तनों का कारण बन जाती हैं । अन्तरिक्ष में आवारागर्दी करने वाली उल्काएँ भी अपनी दुस्साहसिकता के कारण स्वयं को तो क्षति पहुँचाती ही हैं, पृथ्वी तथा अन्य ग्रहों को भी उथल-पुथल से भर देती हैं । इन उद्दण्ड उल्काओं की आवारागर्दी की गाथाएँ दुनिया भर के पौराणिक साहित्य में रोचक ढंग से वर्णित हैं ।

यूनान की पौराणिक गाथाओं में 'इकोरस' नाम के एक युवक की कथा है । यह सूर्य से मिलने की महत्त्वाकांक्षा रख, नकली पंख लगाकर चल पड़ा । पंख उसने मोम से चिपका लिए थे ।

अधिक ऊँचे जाने पर उसके पंख को जोड़ने वाली मोम गर्मी के कारण पिघल गई और पंख नीचे गिर पड़े, 'इकोरस' भी ओंधे मुँह नीचे समुद्र में आ गिरा तथा मर गया ।

पिछले दिनों इसी युवक की तरह का एक दुस्साहसी उल्का-पिण्ड भी देखा गया । इसका नाम भी 'इकोरस' ही रखा गया । यह 'इकोरस' उल्कापिण्ड कभी सूर्य के अधिक निकट जा पहुँचता है, इतना कि बस थोड़ा और पास जाय तो भुर्ता ही बन जाय । कभी लगता है वह बुध से कभी मंगल और कभी शुक्र से अब टकराया, तब टकराया । सूर्य के अति निकट पहुँच कर वह आग का गोला ही बन जाता है तो कभी सूर्य से इतनी दूर जा पहुँचता है कि शीत की अति हो जाती है । जून १९६८ में इस उद्दण्ड क्षुद्रग्रह के पृथ्वी के ध्रुवप्रदेश से आ टकराने की सम्भावना बढ़ गई थी । यदि खगोल शास्त्रियों की यह आशंका सत्य सिद्ध होती, तो पृथ्वी में भीषण हिम तूफान आते, समुद्र उफनकर दुनिया का थल-भाग अपनी चपेट में लेता, साथ ही लाखों वर्ग मील भूमि में गहरा गड्ढा हो जाने की सम्भावना थी जहाँ यह

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उफनता समुद्री जल भर जाता तथा कुल मिलाकर करोड़ों मनुष्यों का सफाया हो जाता । सन् १९०८ में मात्र हजार फुट व्यास की एक उल्का साइबेरिया के जंगल में गिरी थी, तो वहाँ अणुबम विस्फोट जैसे दृश्य उपस्थित हो गए थे । इकोरस तो उस उल्का से हजारों गुना बड़ा है, अतः परिणाम का अनुमान किया जा सकता है ।

सौभाग्यवश इकोरस पृथ्वी के समीप होकर गुजर गया और एक भीषण दुर्घटना टल गई । सौर-मण्डल में ऐसे अनेक क्षुद्र ग्रह हिडालगो, इरोस, अलवर्ट, अलिण्डा, एयोर, अपोलो, एडोरस, हर्मेस आदि चक्कर काट रहे हैं, जो सहसा टकराकर कभी भी धरती के जीवन में उथल-पुथल मचा सकते हैं ।

वैज्ञानिकों ने अध्ययन कर यह निष्कर्ष निकाला है कि सूर्य पर जो हर ११वें वर्ष कुछ धब्बे से बन जाते हैं, उनका कारण सौर-मण्डल के ग्रहों की गतिविधियाँ ही हैं । स्पष्ट है कि सौर-मण्डलीय ग्रहों की प्रत्येक गतिविधि का सूर्य पर प्रभाव पड़ता है, जिस तरह सूर्य की हर गतिविधि से सौर-मण्डलीय ग्रह प्रभावित होते हैं । सभी ग्रह पश्चिम से पूर्व की ओर—सूर्य की परिक्रमा करते हैं और पृथ्वी की ही भाँति अपनी धुरी पर भी घूमते हैं । इस परिभ्रमण काल में जो अगणित प्रकार की उथल-पुथल होती है उनसे पृथ्वी सहित सभी ग्रह उपग्रह प्रभावित होते हैं ।

दो अमेरिकी खगोलविदों—जान ग्रिवन और स्टीफेन प्लेगमैन ने जानकारी दी है कि सन् १९८२ में सौर मण्डल के नौ ग्रह यानी मंगल, बुध, वृहस्पति, शुक्र, शनि, पृथ्वी, यूरेनस, नेपच्यून और प्लूटो सूर्य के बिल्कुल एक तरफ एकत्र हो जायेंगे । इससे सूर्य पर कई बड़े धब्बे पड़ जायेंगे । इनका परिणाम होगा विश्व के विभिन्न हिस्सों में भयानक भूकम्प, प्रलयंकर बाढ़ें, प्राकृतिक विपदाएँ । इन दोनों वैज्ञानिकों के अनुसार सन् १९८२ में समुद्री ज्वार-भाटे तीव्र प्रबलतर हो जायेंगे । कैलीफोर्निया में एक प्रचण्ड भूकम्प आयेगा, जो कि १९०६ में सेन्फ्रान्सिस्को में आये भूकम्प से भी प्रबल और विनाशक हो सकता है । प्रकृति में समय-समय पर प्रचण्ड उथल-पुथल होती ही रहती है ।

ऐसी उथल-पुथल की स्मृतियाँ मानवीय इतिहास में सुरक्षित हैं । पुराण-कथाओं में इनका रोचक वर्णन मिलता है । मात्र क्षुद्र नक्षत्रों के टकराने अथवा सूर्य या किसी बड़े नक्षत्र में व्यापक परिवर्तन होने, उथल-पुथल मचने से ही धरती में जलप्लावन आदि की घटनाएँ नहीं घटतीं, बल्कि धरती के भीतर की हलचलें और उसके सिकुड़ने-फैलने की विभिन्न प्रक्रियाएँ भी जल प्रलय आदि के दृश्य उपस्थित करती हैं ।

सभी जानते हैं कि कभी भू-मण्डल के सभी महाद्वीप एक-दूसरे से जुड़े थे । ग्रहों की हलचलों और आकुंचन प्रसार की प्रक्रियाओं से वे एक-दूसरों से दूर हटते गए । हिमालय अभी भी लगातार उत्तर की ओर खिसक रहा है और भू-वैज्ञानिकों का कथन है कि ५ करोड़ वर्ष बाद सम्पूर्ण उत्तरी भारत का अधिकांश इलाका हिमालय के पेट में समा जायेगा । इसी तरह सन् १९६६ में मास्को में सम्पन्न द्वितीय अन्तर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक सम्मेलन में प्रो. डॉ. ब्रूस सी. हीजेन और डॉ. नील यू. डाइक ने घोषणा की थी कि आज से लगभग २ हजार ३२ वर्ष बाद पृथ्वी एक चुम्बकीय बल क्षेत्र अपना स्थान बदल देंगे साथ ही पृथ्वी की चुम्बकीय शक्ति घटेगी । इसमें मनुष्यों का आकार व जीवन भी प्रभावित होगा । वृक्ष-वनस्पति, कीट-पतंग आदि पर भी व्यापक प्रभाव पड़ेगा । प्रशान्त महासागर की तलहटी से निकाली गई मिट्टी और रेडियो सक्रियता एवं 'लारिया' नामक एक कोशीय जीव में हो रहे क्रमिक परिवर्तन से पता चलता है कि सन् चार हजार तक चुम्बकीय क्षेत्र में परिवर्तन होगा, जिससे ध्रुवों का स्थान भी परिवर्तित होगा । परिणामस्वरूप धरती में खण्डप्रलय की स्थिति हो जायेगी । बर्फीले तूफान चारों ओर उठेंगे । धरती में बेहद गर्मी और बेहद ठण्डक की स्थितियाँ पैदा करेंगी । समुद्रतल भी लगातार ऊपर उठ रहा है । इसका भी परिणाम अवश्यम्भावी है । ऐसी ही विशिष्ट प्राकृतिक उथल-पुथल अतीत में भी जल प्रलय जैसी घटनाओं का कारण बनती रही है ।

विश्व की अधिकांश प्राचीन सभ्यताओं के साहित्य में जलप्लावन तथा उसके बाद सृष्टि के नवीन क्रम का वर्णन मिलता है इसे धार्मिक पुट दिया गया है । लेकिन भू-गर्भ शास्त्रियों का भी अनुमान है कि समय-समय पर पृथ्वी के विशेष खण्ड टूट जाते थे और धरती पर जल ही जल हो जाता था ।

भू-गर्भ वेत्ता डॉ. ट्रिकलर के अनुसार हिमालय के आस-पास प्राप्त ध्वंसावशेषों से ज्ञात होता है कि जल प्रलय की घटना सत्य है ।

यूनानी साहित्य में भी जलप्लावन की चर्चा है । एक कथा के अनुसार 'अटिका' जलमय हो गई थी । दूसरी कथा के अनुसार 'जीयस' ने अपने पिता की इच्छापूर्ति के लिए 'ड्यूकालियन' का विनाश करना चाहा । जब ड्यूकालियन अपनी पत्नी पैरहा के साथ जल यात्रा कर रहा था, जीयस ने भीषण जल-वृष्टि द्वारा पृथ्वी को डुबा दिया । नौ दिन तक ड्यूकालियन और पैरहा पानी में ही अपनी नाव द्वारा तैरते रहे । जब वे पैरासस पहुँचे, तो जलप्लावन कुछ कम हुआ । तब उन दोनों ने अपने अंगरक्षक की देवताओं को बलि दे दी । इससे जीयस प्रसन्न हो गया और उनको सन्तान का वरदान दिया ड्यूकालियन और पैरहा ने वरदान पाकर जीयस पर पत्थरों की वर्षा की जो पत्थर ड्यूकालियन ने फेंके वे पुरुष हो गए और जो पैरहा ने फेंके, वे नारी हो गए ।

केबीलोनिया में भी ऐसी ही एक दन्त कथा है । तीन सौ ईस्वी पूर्व वहाँ वेरासस नामक पुरोहित था । उसने लिखा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

है—आरडेट्स की मृत्यु के बाद उसके पुत्र ने १८ 'सर' तक राज्य किया । एक सर ३६ सौ वर्षों का होता है । इसी अवधि में एक बार भीषण बाढ़ आयी । इसकी सूचना राजा को स्वप्न द्वारा पहले ही मिल चुकी थी । अतः उसने अपने लिए एक नाव बनवा ली थी । नाव में बैठकर वह जलप्लावन देखता घूमता रहा । जब जलप्लावन का वेग कम हो गया, तो उसने नाव में ही बैठे-बैठे तीन बार पक्षी उड़ाए । अन्तिम बार जब पक्षी लौट कर नहीं आये तो उसने देवताओं को बलि दी । इससे देवता प्रसन्न हुए और शान्ति का वातावरण बना ।

बाइबिल के अनुसार जल-देवता 'नूह' को खबर मिली कि धरती पर जल-प्रलय होगी । फिर ऐसा ही हुआ । चराचर इस भीषण जल-प्रलय में समाहित हो गए । जल-देवता 'नूह' तथा उनके कुछ साथी नौका में बच निकले । नौका द्वारा आराकान पर्वत पहुँचे । वहाँ दसवें महीने के पहले दिन जल कम होना शुरू हुआ । धीरे-धीरे पर्वत श्रेणियाँ दीखने लगीं । फिर अन्य हिस्से भी । हजरत 'नूर' ने ही मानवता का विकास किया । सुमेरियन ग्रन्थों में भी जलप्लावन का संकेत है । चीनी पुराण-साहित्य में भी जल-प्लावन की कथाएँ विद्यमान हैं ।

भारत में तो शतपथ ब्राह्मण से लेकर महाभारत और विविध पुराणों तक में जल-प्रलय का वर्णन मिलता है । महाभारत के वन-पर्व में मत्स्योपाख्यान के अन्तर्गत यह कथा है कि विवस्वान मनु ने दस हजार वर्ष हिमालय पर तपस्या की । उस समय एक मछली की प्रार्थना पर उन्होंने उसकी जीवन रक्षा की । तब मछली ने उनको आगामी भीषण जलप्लावन की अग्रिम जानकारी दी । साथ ही यह कहा कि तुम सप्त ऋषियों के साथ नौका में मेरी प्रतीक्षा करना । अन्य पर्वों में भी इस जलप्लावन का सुविस्तृत वर्णन है ।

सम्पूर्ण प्राचीन विश्व साहित्य में जल-प्रलय की ये कथाएँ निश्चय ही किसी घटित घटना की ही स्मृतियाँ हैं । अभिव्यक्ति की शैली भिन्न-भिन्न सभ्यताओं के परिवेश और सांस्कृतिक चेतना के अनुरूप अलग-अलग हैं, किन्तु उनमें एक आन्तरिक अविच्छिन्नता है । जल-प्रलय की बात बड़ी है, पर उसके छोटे-छोटे रूप अन्य प्रकार से भी दृष्टिगोचर होते रहते हैं । भूकम्प, विस्फोट, बाढ़ आना, वृष्टि, अतिवृष्टि, महामारी आदि कारणों से कम विनाश नहीं होता है । आये दिन जहाँ-तहाँ होते रहने वाले युद्ध और महायुद्ध भी सम्पत्ति और प्राणियों की कम हानि नहीं करते ।

एक ओर यह विनाशकारी घटनाएँ होती हैं दूसरी ओर उत्पादन और अभिवृद्धि का उपक्रम देखकर भी आश्चर्यचकित रहना पड़ता है । वनस्पति के सहारे ही जीव-धारियों का आहार निर्वाह होता है उसका खर्च जितना है उसे देखते हुए उत्पादन की मात्रा कम नहीं वरन् बढ़ी-चढ़ी ही रहती है । खाने वाले प्राणी और ग्रीष्म जैसी नष्ट कर सकने वाली परिस्थितियों का सामना करते रहने पर भी वन-सम्पदा और वनस्पति की सुषमा पृथ्वी पर छाई रहती है । हरितिमा के लिए प्रस्तुत सभी चुनौतियाँ अन्ततः निरस्त ही होती रहती हैं और अपनी धरती की हरियाली में घट बढ़ होती है, पर अन्त उसका कभी भी नहीं होता ।

तनिक-सी दीखने वाली एक भिनभिनाती मक्खी एक ही ग्रीष्म ऋतु में ४० हजार सन्तानें पैदा कर सकती है, यदि उसकी आकस्मिक मृत्यु न हो जाय । इन ४० हजार मक्खियों की तीन पीढ़ी में उत्पन्न सन्तानों को एक कतार में रखा जाय, तो पृथ्वी से सूरज तक की दूरी से कई गुनी लम्बी कतार बन जाय ।

एक परिपक्व पोस्त में ३ हजार बीज होते हैं । यदि हर बीज से एक पौधा उगने दिया जाय और फिर उनमें से हर पौधे में कम से कम एक पोस्त लगने पर फिर उनमें से हर एक के तीन हजार बीजों का उपयोग भी पौधे ही पैदा करने के लिए किया जाय, तो इस क्रम से ५० वर्षों में एक ही वृक्ष के वंश विकास द्वारा पूरी पृथ्वी ढक सकती है ।

प्रकृति की गतिविधियों का जितना ही अधिक निरीक्षण विश्लेषण किया जाय, यही ज्ञात होता चलेगा कि वह अत्यन्त दयामयी व कुशल है किन्तु इस दया में आवश्यकता उग्रता व रौद्ररूप भी सम्मिलित है । वस्तुतः सन्तुलन ही प्रकृति का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण व सार्वभौम अन्तःसूत्र है । सन्तुलन की यह प्रकृति-प्रवृत्ति हमें विभिन्न पशु-पक्षियों की प्राकृतिक संरचना में भी दिखाई पड़ती है ।

उचित है कि मनुष्य अपनी काम-वासना को भी नियन्त्रित करे । अन्यथा इसके कारण परिवार बढ़ने से लेकर जनसंख्या वृद्धि तक के संकट तो उत्पन्न हो ही सकते हैं, व्यक्तिगत रूप से भी स्वास्थ्य की बर्बादी और कमजोर अपाहिज लुंज-पुंज जीवन के अलावा कोई अच्छा परिणाम सम्भव नहीं है । प्रकृति आखिर किसी प्रकार तो अपना सन्तुलन बनायेगी ही । उसका अपना जो धर्म है, उसका पालन वह दृढ़तापूर्वक करेगी ही ।

पेड़ पौधे भी संयमी

यह कितने खेद की बात है कि जिस मनुष्य को अपना जीवन पुण्य और परमार्थ की साधना में व्यतीत करना चाहिए था, वह निकृष्ट और हेय जिन्दगी जीता है; जबकि निकृष्ट कहे जाने वाले पेड़-पौधों के आचरण बड़े प्रेरक और प्रकाश देने वाले होते हैं । मनुष्य चाहे तो इन तुच्छ जीवों से भी बड़ी महत्त्वपूर्ण शिक्षाएँ ग्रहण कर सकता है ।

वनस्पति शास्त्र का एक सिद्धान्त है, हेरेडिटी करेक्टर (वंशानुसंक्रमण) जो बीज बोया जाता है (पैरेन्ट सीड्स) उसके गुण पैदा होने वाले बीजों (डॉटर सीड्स) में ज्यों के त्यों आ जाते हैं । उदाहरण के लिए मटर के एक बीज में बीमारी के कुछ कीटाणु थे, उसे बो दिया । उस मटर की पौध में जितनी भी फलियाँ लगेंगी, उन सबमें उस बीमारी के लक्षण

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(सिम्पटम्स) विद्यमान होंगे । जब तक बीज के इस वंश (जनरेशन) को चलता रहने दिया जाता है, बीमारी के सिम्पटम्स अन्त तक बने रहते हैं । इससे यह प्रेरणा मिलती कि मनुष्य की जनरेशन कमजोर और निकम्मी न रहने पाये, इसके लिए मनुष्य अपने स्वास्थ्य, शरीर, चरित्र और भावनाओं का निर्माण करें । मानसिक धार्मिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक दृढ़ता वाले मनुष्य इस तरह की सन्तानें ही पैदा करते हैं । रोगी, आलसी, अपाहिज तो बिना किए भावी पीढ़ी को रोगी बनाने का पाप लेकर मर जाते हैं ।

आजकल पाश्चात्य शिक्षा और सभ्यता से प्रभावित लोग यौन सदाचार का पालन करते हुए हिचकिचाते हैं और तर्क प्रस्तुत करते हैं कि मनुष्य ने प्रकृति से ही प्रेरणाएँ ली हैं, प्रकृति के अनुसार फिर आचरण करने में हानि क्या है ? कुत्ते, बकरे, भेड़ें, बैल और दूसरे पशुओं में कामाचार की मर्यादाएँ अपने परिवार तक में लागू नहीं होतीं, इसलिए मनुष्य भी वैसा ही करता है तो वह कोई पाप नहीं । पहले विवाह सम्बन्ध दूर किए जाते थे, अब समीपवर्ती वातावरण में ही विवाह करने की परम्परा चल पड़ी । पेड़-पौधे यह बताते हैं, यदि मनुष्य ने ऐसा किया तो उससे पीढ़ियाँ कमजोर होंगी ।

दो अलग-अलग श्रेणी के बीज लेकर संयोजन (क्रासब्रीडिंग) से उत्पन्न हुए बीज (सीड्स) बहुत बलवान होते हैं, जबकि एक ही वृक्ष के फूल के स्त्रीकेशर और उसी फूल के पुंकेसर में स्वयंसेचन की क्रिया से जो बीज पैदा होता है, वह बिल्कुल कमजोर होता है । यदि प्रकृति का यह नियम रहा होता कि निकटवर्ती परिवार में यौन सदाचार का पालन न किया जाय तो पेड़-पौधों का यह आदर्श और उदाहरण सामने न आता ।

पराग (पालिनग्रेन) एक प्रकार के पीले कण हैं जो फूल के पुंकेसर में होते हैं । जब पराग कण स्त्री केसर के वर्तिकाग्र (स्टिगमा) तक पहुँचता है उसे परागण कहते हैं । परागण की क्रिया में स्वयं सेचन सरल है, एक ही फूल के पुंकेसर का पराग स्त्रीकेशर के वर्तिकाग्र (स्टिग्मा) तक आसानी से पहुँच जाता है, यह क्रिया पराग-झड़ना (पोलीनेशन) कहलाती है । क्रासब्रीडिंग में दूरी और मेलजोल की परेशानी होती है, इस तरह का तर्क किया जा सकता है, किन्तु भगवान ने विकास की सुविधाओं से किसी को वंचित नहीं रखा । भौंरे तितलियाँ और मधु-मक्खियाँ पराग का मधु चूसते हुए एक फूल पर बैठते हैं, रस तो वे चूस लेते हैं पर इतने स्वार्थी नहीं कि केवल अपना ही काम करके चल देते हों । वे अपने पैरों में पराग के कण चिपका लेते हैं और फिर वहाँ से उड़कर दूर किसी मादा फूल के वर्तिकाग्र (स्टिग्मा) में जा बैठते हैं, इस तरह नर-मादा फूलों का दूरवर्ती सम्बन्ध हो जाता है । इस तरह क्रासब्रीडिंग से उत्पन्न हुए बीज बड़े बलवान होते हैं ।

इसी प्रकार यदि बीज पक चुका है तो ही उसके डॉटर बीज अच्छे खाद्य वाले होंगे । इससे मनुष्य को एक सन्देश मिलता है कि वह गृहस्थाश्रम पूर्ण और परिपक्व अवस्था के बाद ही आरम्भ करें । भारतीय संस्कृति में २५ वर्ष तक ब्रह्मचर्य और विद्याध्ययन की अनिवार्यता थी । उससे बच्चों के शरीर ही नहीं मन और बुद्धि भी पर्याप्त परिपक्व हो जाते थे, इसीलिए उनका गृहस्थ भी सुखी होता था और आज जबकि छोटे-छोटे बच्चों के विवाह कर दिए जाते हैं, तब क्या यह आशा की जा सकती है कि आने वाली पीढ़ी मजबूत होगी ? पीढ़ियाँ समर्थ और शक्तिशाली तभी होंगी, जब कामाचार में परिपक्वता, चारित्रिक दृढ़ता का पालन किया जायेगा ।

संयम बनाम समर्थता

थोड़ी देर के लिए मनुष्य की बात छोड़ दें और जीव जगत की कल्पना करें तो वहाँ "शक्तिमान के ही जीवित रहने" के अधिकार की पुष्टि होती है । मनुष्य को परमात्मा ने बुद्धि और विवेक के दो विशिष्ट उपहार दिए हैं । इसलिए उसे तो विसंगति श्रेणी में रखना तथा सहयोग और सहकारिता में समृद्धि, सुव्यवस्था का पाठ पढ़ाना पड़ेगा, पर यदि वह अपनी इस ईश्वर प्रदत्त विशेषता का अपने जीवन में उपयोग न कर पशुओं का ही पेट-प्रजनन वाला जीवन जीने लगे तो जो व्यवस्थाएँ प्रकृति में चल रही हैं वैसे ही परिणाम से मनुष्य भी बच नहीं सकता ।

हाथी संसार का अति सामर्थ्यवान प्राणी है । विश्वास करें या न करें पर अफ्रीका में मोम्बासा से कीनिया को जो सड़क जाती है उस पर एक प्रवेश द्वार मात्र दो जोड़े हाथी दाँत का बना है । यह दाँत इतने विशाल हैं कि बस और भारी बोझ लदे ट्रक भी उसके नीचे से आसानी से निकल सकते हैं । जिन हाथियों के इतने विशाल और मजबूत दाँत होंगे, उनके शरीर की सामर्थ्य कितनी होगी उसका अनुमान करना कठिन है । हाथियों में जो सामर्थ्य द्वापर और त्रेता में थी वही आज भी विद्यमान है । इसका कारण प्रकृति का पक्षपात नहीं उसकी अपनी संयम शक्ति है जिसने इस समूची जाति को युग-युगों तक अपनी सामर्थ्य और अपनी सत्ता बनाये रखने योग्य बना दिया है ।

एक हाथी युगल अपने जीवन काल में अधिकतम दो या तीन बच्चों को जन्म देता है । यह उल्लेखनीय है कि प्राकृतिक जीवों में प्रायः एक ही बार के सहजीवन से गर्भाधान की क्रिया सम्पन्न हो जाती है । उसके सहजीवन की संख्या सारे जीवन में अधिकतम पाँच से अधिक नहीं होती । अपनी इस विशेषता के कारण कहीं भी उनकी जनसंख्या के विस्फोट की समस्या नहीं उठी । इतने जंगल कट जाने पर भी उनके लिए कभी खाद्य का अभाव नहीं पैदा हुआ ।

यही स्थिति बलशाली दूसरी सभी जातियों की है जिनमें सिंह, चीते, बाघ भी आते हैं । राजहंस पक्षी अपनी इसी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

प्रवृत्ति के कारण कभी भी संख्या के विस्फोट की स्थिति में नहीं पहुँचा, उसे प्रकृति के अत्यन्त प्रिय उपहार के रूप में सम्मानित किया जाता है ।

दूसरी ओर जन्मजात तुच्छ कहलाने वाली मक्खी को ही लें । एक मक्खी एक ही ग्रीष्म ऋतु में ४०००००००००० (चार नील) मक्खियाँ पैदा कर देती है । रावण की सेना से भी लाख गुनी इस सेना का मार्च यदि सूर्य की ओर हो तो २९ करोड़ मील दूर पहली मक्खी सूर्य की २० बार आ जाकर यात्रा पूरी कर लेगी तब आखिर सिपाही को कहीं पृथ्वी से प्रस्थान का अवसर मिलेगा । समुद्र में पायी जाने वाली मछलियों का प्रजनन इतनी तीव्र गति से होता है कि वे यदि सबकी सब जीवित बची रहें तो ६ महीने में समुद्र मछलियों का पहाड़ बन जाय, किन्तु इन असंयमित जीवों पर प्रकृति का क्रूर डंडा इतनी तेजी से फिरता है कि एक ही बार में उनकी करोड़ों की संख्या को मार डालता है । मक्खियों में इतनी भी क्षमता नहीं होती कि मैदानी इलाकों की ही शीत बर्दाश्त कर लें । फलतः उनका बुरी तरह वंश नाश होता रहता है । मछलियाँ तो आत्मविस्फोट की साक्षात् उदाहरण हैं । बड़ी मछली हर छोटी मछली पर दाँव लगाती और उन्हें चट करती है उन्हें अपने आप में ही इस तरह द्वन्द्व करते देखकर ही सम्भवतः मनुष्यों ने उन्हें पृथ्वी में अपना जीवन जीने योग्य नहीं समझा और उनका विधिवत् भक्षण करने लगा ।

मछली-मछली है मनुष्य-मनुष्य, पर प्रकृति की दृष्टि में दोनों एक हैं । यदि मनुष्य संयमित जीवन जीने के लिए तैयार नहीं होता तो उसे भी एक दिन ऐसे ही सर्वनाश की तैयारी प्रारम्भ कर देनी होगी ।

अतः यह निर्भ्रान्त तथ्य है कि सुखी, सुरक्षित और समुन्नत जीवन जीना है तो उसके लिए शक्ति सम्पन्न होना ही पड़ेगा । वैसे भी सुख और श्रेय मानव जीवन की दो महान् उपलब्धियाँ मानी गई हैं । इनको पा लेना ही जीवन की सफलता समझा जाता है ।

जीवन की सफलता

सुख की परिधि का परिकर संसार तक है । अर्थात् इस संसार के व्यवहार क्षेत्र में हम जो जीवन जीते हैं, उसका निर्विघ्न, स्निग्ध और सरलतापूर्वक चलते रहना ही सांसारिक सुख है । श्रेय आध्यात्मिक क्षेत्र की उपलब्धि है । ईश्वरीय बोध, आत्मा का ज्ञान और भव बंधन से मुक्ति को ही श्रेय कहा गया है ।

सुख प्राप्ति का आधार

सुख और श्रेय मानव-जीवन की दो महान् उपलब्धियाँ मानी गई हैं । इनको पा लेना ही जीवन की सफलता है । पार्थिव अथवा अपार्थिव किसी भी उपलब्धि के लिए शक्ति की अनिवार्य आवश्यकता है । शक्ति हीनता क्या साधारण और असाधारण दोनों प्रकार की प्रगतियों के लिए बाधा रूप है । शरीर अशक्त हो, मन निराश और कुण्ठित हो, बुद्धि की निर्णायक क्षमता शिथिल हो तो मनुष्य इच्छा रहते हुए भी किसी प्रकार का पुरुषार्थ नहीं कर सकता ।

संसार के सारे सुखों का मूलाधार साधनों को माना गया है । साधन यों ही अकस्मात प्राप्त नहीं हो जाते । उनके लिए उपाय तथा परिश्रम करना होता है । रोटी, कपड़ा, आवास के साथ और भी अनेक प्रकार के साधन जीवन को सरलतापूर्वक चलाने के लिए आवश्यक होते हैं । इनके लिए कार-रोजगार, मेहनत-मजदूरी, नौकरी-चाकरी कुछ न कुछ काम करना होता है । यह सब काम करने के लिए शक्ति की आवश्यकता है । अशक्तता की दशा में कोई काम नहीं किया जा सकता ।

केवल शक्ति ही नहीं आरोग्य तथा स्वास्थ्य भी सुख, शान्तिमय जीवन-यापन की एक विशेष शर्त है । साधन हों, कार-रोजगार हो, धन तथा आय की भी कमी न हो, तब भी जब तक तन-मन स्वस्थ और निरोग नहीं है, जीवन सुख और सरलतापूर्वक नहीं चलाया जा सकता । इस प्रकार शक्ति और स्वास्थ्य जीवन के सुख के आवश्यक हेतु है ।

शक्ति जन्मजात प्राप्त होने वाली कोई वस्तु नहीं है । जिस प्रकार धन, सम्पत्ति, जमीन-जायदाद उत्तराधिकार में मिल जाते हैं, उस प्रकार शक्ति के विषय में कोई भी उत्तराधिकार नहीं है । यह मनुष्यों की अपनी व्यक्तिगत वस्तु है, जिसे पाया नहीं, उपजाया जाता है । सांसारिक सुख और पारलौकिक श्रेय के लिए मनुष्य को शक्ति का उपार्जन कर लेना आवश्यक है ।

लौकिक विद्वानों से लेकर सिद्ध महात्माओं और मनीषियों सबने एक स्वर से समय को शक्ति का स्रोत बतलाया है । बहुत लोगों का विचार रहता है कि अधिक खाने-पीने से शक्ति प्राप्त होती है । पर उनका यह विचार समीचीन नहीं । अधिक अथवा बहुत बार खाने से शरीर को अनावश्यक श्रम करना पड़ता है, जिससे शक्ति बढ़ने के बजाय क्षीण होती है । स्वास्थ्य बिगड़ता है और आरोग्य नष्ट होता है । भोजन में निश्चय ही शक्ति के तत्व रहते हैं, किन्तु वे प्राप्त तभी होते हैं, जब भोजन का उपभोग संयमपूर्वक किया जाय । समय पर, नियन्त्रित मात्रा में उपयुक्त भोजन ही सुविधापूर्वक पचता और शक्तिदायक रसों को देता है ।

शक्ति संचय के लिए समय पर, सीमित और उपयुक्त भोजन किया जाय, स्वास्थ्य और आरोग्य के विषय में सावधान रहा जाय, पर ब्रह्मचर्य का पालन न किया जाय, तब भी सारे प्रयत्न बेकार चले जायेंगे और शक्ति के नाम पर शून्य ही हाथ में रहेगा । भोजन के तत्व वीर्य बनकर ही शरीर में संचय होते हैं और संचित और परिपक्व वीर्य का ही स्फुरण शक्ति की अनुभूति है । वीर्यवान शरीरों में न तो अशक्तता आती है और न उसका आरोग्य ही जाता है ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इसीलिए वीर्य को शरीर की शक्ति ही नहीं प्राण भी कहा गया है ।

इस महत्त्व के कारण भारतीय मनीषियों और आचार्यों ने वीर्य रक्षा अर्थात् ब्रह्मचर्य संयम को सबसे बड़ा माना है और निर्देश किया है कि लौकिक जीवन के सुख और पारलौकिक श्रेय के लिए मनुष्य को अधिकाधिक ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए ।

परशुराम, हनुमान और भीष्म जैसे महान् पुरुषों ने आजीवन ब्रह्मचारी रहकर ब्रह्मचर्य-व्रत की महत्ता प्रामाणित की है । इसी व्रत के बल पर वे न केवल अतुलित बलधाम बने बल्कि जरा और मृत्यु तक को जीत लिया । परशुराम और हनुमान के पास तो मृत्यु आयी ही नहीं, पर भीष्म ने तो उसे आने पर डाटकर ही भगा दिया और रोम-रोम में बिधे शरों की सेज पर तब तक सुखपूर्वक लेटे रहे, जब तक कि सूर्यनारायण उत्तरायण नहीं हो गए । सूर्य के उत्तरायण हो जाने पर ही उन्होंने इच्छा-मृत्यु का वरण स्वयं किया । शर-शय्या पर लेटे हुए, वे केवल जीवित ही नहीं बने रहे, अपितु पूर्ण स्वस्थ और चैतन्य भी बने रहे । महाभारत युद्ध के पश्चात् उन्होंने पाण्डवों को धर्म तथा ज्ञान का आदर्श उपदेश भी दिया । यह सारा चमत्कार उस ब्रह्मचर्य व्रत का ही था, जिसका कि उन्होंने आजीवन पालन किया था । हनुमान ने उसके बल पर समुद्र पार कर दिखाया और एक अकेले परशुराम ने इक्कीस बार पृथ्वी से आततायी और अनाचारी राजाओं को नष्ट कर डाला था । ब्रह्मचर्य की महिमा अपार है ।

ब्रह्मचर्य पालन के विषय में आजीवन अविवाहित और अनानुभवी व्यक्तियों को छोड़ भी दीजिए तो भी भारतीय इतिहास में ऐसे दृढ़ व्रती और संयमशील व्यक्तियों के उदाहरणों की कमी नहीं है, जिन्होंने विवाहित और अनुभव प्राप्त होने पर भी अनुकरणीय काम संयम करके दिखला दिए ।

यह सब तथ्य इस बात के ज्वलन्त प्रमाण हैं कि आजीवन अविवाहितों के लिए अथवा अनानुभवी व्यक्तियों के लिए ही नहीं ब्रह्मचर्य का संयम गृहस्थ और भुक्तभोगियों के लिए भी सर्वथा सम्भव है जो व्यक्ति इस विषय में विवशता अथवा निर्बलता प्रकट करते हैं, वे वास्तव में निर्बल व्यक्ति ही होते हैं और ब्रह्मचर्य के महत्त्व में सच्ची आस्था नहीं रखते । अपनी वासनाओं के प्रश्रय के लिए बहाने दिया करते हैं ।

काम-वासना सर्वथा सम्भव है और सबको करना ही चाहिए । इससे शारीरिक, मानसिक तथा बौद्धिक ही नहीं आत्मिक शक्ति भी बढ़ती है । मनुष्य में तेज तथा प्रभाव का प्रादुर्भाव होता है, वाणी में तेज तथा नेत्रों में ज्योति आती है । यह सारे गुण और सारी विशेषताएँ प्रेम तथा श्रेय दोनों की उपलब्धि में सहायक होते हैं । इन सहायकों के अभाव में आध्यात्मिक उन्नति तो दूर, सामान्य सांसारिक जीवन भी सुख और सरलतापूर्वक नहीं जीया जा सकता ।

जो व्यक्ति संसार के महान् व्यक्तित्व हुए हैं, जिन्होंने धर्म, समाज तथा देश के लिए उल्लेखनीय कार्य कर प्रेम प्राप्त किया है और जिन्होंने तप, साधना तथा चिन्तन मनन कर श्रेय पाया है, निर्विवाद रूप से उन्होंने ब्रह्मचर्य व्रत द्वारा सबसे पहले शक्ति की ही साधना की है । वासना को जीत और इन्द्रियों पर अधिकार कर सकने पर ही वे जीवन में श्रेयस्कर कार्य कर सकने में सफल हो सके हैं ।

वीर्य रक्षा से शरीर स्वस्थ तथा स्फूर्तिवान बना रहता है । रोगों का आक्रमण नहीं होने पाता । मन तथा बुद्धि इतने पुष्ट एवं परिपक्व हो जाते हैं कि बड़ी से बड़ी विपत्ति में भी विचलित नहीं होते । प्रमाद, आलस्य अथवा अवज्ञा का भाव नहीं आने पाता । परिश्रम तथा उपार्जन की स्फूर्ति बनी रहती है, जिससे उसके चरण दिन-दिन उन्नति के सोपानों पर ही चलते जाते हैं ।

भारतीय तत्व वेत्ताओं ने कामोत्तेजना को मनोज-मनसिज आदि नाम देकर बहुत पहले ही यह स्वीकार कर लिया था कि यह उद्वेग शारीरिक हलचल नहीं मानसिक उभार है । यदि मन पर नियन्त्रण किया जा सके—उसे ईश्वर-भक्ति; कला, साधना एवं आदर्श, निष्ठा में नियोजित किया जा सके तो पूर्वावस्था में भी शरीर और मन से ब्रह्मचारी रहा जा सकता है । इसके विपरीत यदि शारीरिक नियन्त्रण तो निभाया जाय पर मानसिक उत्तेजना उभरती रहे तो ब्रह्मचर्य का वह लाभ न मिल सकेगा जैसा कि साधन ग्रन्थों में उसका माहात्म्य बताया गया है । दृष्टिकोण में परिवर्तन ही इन्द्रिय-निग्रह का प्रधान आधार है । आहार-विहार के संयम से तो उसमें थोड़ी सी सहायता भर मिलती है ।

आमतौर से यह समझा जाता है कि सुन्दरता या परिपुष्ट स्थिति के नर-नारी अधिक काम तृप्ति करते होंगे एवं अच्छा प्रजनन करने में सफल रहते होंगे पर यह बात वैज्ञानिक तथ्यों के विपरीत है । मनुष्य की चेतनात्मक विद्युत शक्ति ही कामोत्तेजना उत्पन्न करती है और उसी की प्रबलता से यौन-तृप्ति का सम्बन्ध रहता है । यह भ्रम अब दूर होता चला जा रहा है कि शरीर गठन का कामोल्लास से सीधा सम्बन्ध है । वस्तुतः कामोत्तेजना विशुद्ध मानसिक प्रक्रिया है । वह जिस आयु में भी तथा जिस मात्रा में उल्लसित रहेगी उसी स्थिति में कामोद्वेग उठते रहेंगे और तृप्ति तथा प्रजनन की सफलता भी उसी अनुपात से सामने आती रहेगी ।

अतः यह कहा जा सकता है कि मन में, मस्तिष्क में उठने वाले कामुक विचारों को उनके केन्द्र पर ही रोका जा सकता है । उन विचारों की उत्पत्ति रोकने अथवा कामुक भावों के उत्पन्न होने में बहुत कुछ शिक्षा दीक्षा, वातावरण तथा संस्कारों का भी प्रभाव पड़ता है । हाल ही में अमेरिका

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में एक छोटी बालिका पर यह प्रयोग चल रहा है कि यदि किसी शिशु का वैज्ञानिक पद्धति से ठीक तरह लालन-पालन किया जाय तो क्या वह अमर या दीर्घजीवी हो सकता है । प्रयोग का आधार यह धारणा है कि कुविचार तथा असंयम ही बीमारियों के प्रधान कारण हैं । प्रयोग यह किया जा रहा है कि लड़की को न तो कुविचारों का शिकार बनने दिया जाय न असंयम का । अच्छी जलवायु वाले 'लाज' नामक टापू में एक भव्य भवन बनाकर उसे रखा गया और जीवनोपयोगी सभी सुविधाएँ वहाँ जुटाई गई हैं । रायल फ्रेटरनिटी ऑफ मास्टर मेटाफिजिशियन्स संस्था के अध्यक्ष जेम्स वी. शेफर इस प्रयोग में बहुत रुचि ले रहे हैं और लड़की की शारीरिक, मानसिक व्यवस्था को सुव्यवस्थित बनाये रखने के लिए उन्होंने विशेषज्ञों का एक दल नियुक्त कर दिया है ।

इसी आधार पर यह प्रयास भी किए जा रहे हैं कि मनुष्य की आयु को बढ़ाया जा सके । मृत्यु का कारण सामान्यतः यह समझा जाता है कि कोशिकाओं की मृत्यु के कारण ही शरीर भी मर जाता है । अब यह सोचा जा रहा है कि इन कोशिकाओं को फिर से नयी स्फूर्ति दी जा सके तो शायद मनुष्य मरने के बाद पुनः जी उठे ।

कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय के मनोविज्ञान प्राध्यापक डॉ. जेम्स की मृत्यु ७३ वर्ष की आयु में हो गई । उन्होंने मृत्यु से पूर्व अपनी संचित राशि ४००० डालर इस कार्य के लिए वसीयत की है कि उनके मृत शरीर को सुरक्षित रखा जाय और उसे विश्राम देने के बाद पुनर्जीवित करने का प्रयत्न किया जाय । इस धन राशि से उनके शरीर पर उपर्युक्त प्रकार का अनुसंधान कार्य चल रहा है ।

इस सम्भावना को आशा की दृष्टि से इसलिए देखा जा रहा है कि यदि मृत्यु के समय विघटन को एकाकी छोड़कर निर्माण की प्रक्रिया जो बन्द हो जाती है उसे यदि रोका जा सके तो मृत्यु को निरस्त कर सकना कुछ विशेष कठिन न रह जायेगा । यों शरीर में विघटन और निर्माण की प्रक्रिया साथ-साथ चलती रहती है और हम जीवित बने रहते हैं । मृत्यु एक ऐसी परिस्थिति का नाम है जिसमें विघटन तो चलता है पर निर्माण बन्द हो जाता है । यदि एनाबोलिज्म (कोशों की पुनर्रचना) तथा मेटाबोलिज्म (रस प्रक्रिया) का क्रम बन्द न हो तो मरणोत्तर जीवन इसी शरीर में सम्भव हो सकेगा । वैज्ञानिकों का विश्वास है कि २१वीं सदी के आदि या बीसवीं सदी के अन्त तक ऐसे उपाय निकल सकते हैं जिनसे मृतक को कुछ समय विश्राम देकर पुनः जीवित किया जा सके । अन्य जीव-जन्तुओं पर ऐसे प्रयोग भी चल रहे हैं उनसे मिली सफलता से अन्वेषकों का साहस इस दिशा में अधिक प्रबल होता जाता है ।

लेकिन इन प्रयोगों में भी संयम, सदाचार को कामुकता से बचाने और उच्च आध्यात्मिक विचारणाओं में रमण करना अनिवार्य माना गया है । लाज नामक टापू पर रखी गई बालिका पर इसी उद्देश्य से प्रयोग किए जा रहे हैं । यह प्रयोग और अब तक की मिली सफलताएँ इसी आर्ष वचन को सिद्ध करती हैं ।

ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्यु मुध्नात् अर्थात्-ब्रह्मचर्य और तप से देवताओं ने मृत्यु को भी जीत लिया ।

यह सोचना भी भूल होगी कि लिंगभेद, जैसी कोई विभाजन रेखा आत्मसत्ता में भी होगी । परस्पर 'विरोधी लिंगों की' भावना और उसका आकर्षण मनुष्य को तभी प्रभावित करता या गुदगुदाता है जब मन में कामुकता का ज्वार उठता हो । बस ट्रेनों की भीड़-भाड़ में किसी को यह ध्यान नहीं रहता । रहता भी है तो उस समय जब मन में काम-वासना का ज्वर उमड़ रहा हो । निद्रा और बेहोशी में भी लिंगभेद का अनुभव आभास नहीं होता । तब जाग्रत या सुषुप्त अवस्था में ही किसी को लिंगभेद का भान नहीं होता तो आत्मा के स्तर पर यह आभास कैसे हो सकता है । काम वासना के मनोविकार को नियन्त्रित परिष्कृत किए बिना किसी भी स्थिति में आत्मा का विकास, उन्नत आत्मिक स्थिति नहीं प्राप्त की जा सकती ।

मानवी काया, आत्मविज्ञान की बहुमूल्य प्रयोगशाला

संसार में अब तक मनुष्य कृत जितने भी यन्त्र उपकरण बने हैं उन सबकी तुलना में सृष्टा की अनुपम संरचना 'मानवी काया' हर दृष्टि से अत्यधिक अद्भुत एवं आश्चर्यजनक है । इसका एक-एक कण इतनी विशेषताओं से युक्त है कि उसकी गरिमा बखानने, यश गाथा गाने का कभी अन्त नहीं हो सकता । कर्म कौशल और बुद्धि वैभव में अपनी विशिष्टता सिद्ध करने वाले असंख्यों व्यक्ति समय-समय पर होते रहते हैं उनकी सूझ-बूझ, साहसिकता एवं तत्परता देखकर दांतों तले उँगली दबानी पड़ती है । इसी प्रकार जिस सृजनकर्त्ता के इस कलेवर के हर घटक को जितनी क्षमताओं से भर दिया है उसे देखकर और उसकी कलाकारिता को देखकर दंग रह जाना पड़ता है । विज्ञान के उच्चस्तरीय प्रयोजनों में काम आने वाले कम्प्यूटर, अणु विखण्डक अन्तरिक्षीय संप्रेषण सर्वश्रेष्ठ माने जाते हैं, पर इन सबमें प्रयुक्त हुए समन्वित कौशल की तुलना में मानवी काय कलेवर की संरचना हर दृष्टि से अनुपम है शरीर का प्रत्येक अवयव असाधारण रूप से लचीला, तालमेल बिठाकर चलने वाला सहनशील एवं सक्षम है कि उसे अपने ढंग का अनोखा ही कह सकते हैं । मस्तिष्कीय विशेषताएँ तो और भी अधिक अनिर्वचनीय हैं । लोक व्यवहार चतुर प्रतिभाशाली लोगों की बुद्धिमत्ता, योग्यता उन्हें कहाँ से कहाँ उठा ले जाती है । असंख्यों को अपने प्रभाव में बहाती और वातावरण को आश्चर्यजनक परिवर्तन प्रस्तुत करती है । इतने पर भी मनःशास्त्रियों के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अनुसार तीक्ष्ण से तीक्ष्ण बुद्धि वाले की विशिष्टता समूची मस्तिष्कीय क्षमता का मात्र सात प्रतिशत ही होता है । मस्तिष्कीय संरचना एवं विशेषताओं के बारे में जो खोजा गया है उसे अधिक से अधिक तेरह प्रतिशत कहा जा सकता है । इससे आगे के रहस्य अभी पर्दे के पीछे छिपे पड़े हैं । प्रकृति के भंडार से अभी बहुत कुछ खोजना बाकी है इसी प्रकार मस्तिष्क के रहस्यों, कौशलों एवं शक्ति स्रोतों के सम्बन्ध में भी अभी अटकलें ही लगाई जा सकी हैं । समझा यह जाता है कि पदार्थ जगत की मूर्धन्य संरचना मनुष्य की काया है और ब्रह्माण्डीय चेतना के परोक्ष वैभव का प्रत्यक्ष प्रतीक प्रतिनिधि मानवी मस्तिष्क है । इससे श्रेष्ठ और अगणित स्तर की सम्भावनाओं से भरे-पूरे यन्त्र उपकरण बनाने में मनुष्य कदाचित सदा ही असमर्थ रहेगा । अणु और विभु के मध्यान्तर की कोई सीमा नहीं । इसी प्रकार मनुष्य और परब्रह्म के वर्चस्व और कर्तव्य को भी समकक्ष होने का अवसर सम्भवतः कभी भी नहीं आ सकेगा ।

यह चर्चा इसलिए की जा रही है कि भौतिकी की तरह जब आत्मिकी की खोज और प्रक्रिया में बहुमूल्य यन्त्रों वाली प्रयोगशाला की आवश्यकता पड़ेगी तो वह कहाँ से जुटाई जायेगी ? प्रसन्नता की बात है कि इस प्रयोजन की आवश्यकता उपयोगिता हर व्यक्ति के लिए अनुभव करते हुए एक समूचा संयन्त्र उसके सुपुर्द कर दिया है । समूचा संयन्त्र और उसके विभिन्न अवयवों के माध्यम से वे सभी प्रयोग पराक्रम सम्भव हो सकते हैं जो अध्यात्म ऊर्जा उत्पन्न करने से लेकर उसे अभीष्ट प्रयोजनों में कार्यान्वित किए जाने हैं । इसके लिए कहीं अन्यत्र से कोई स्थापना करने, साधन जुटाने की किसी को भी आवश्यकता नहीं है । इसी यन्त्र में थोड़ी फेरबदल करके, थोड़ा सधा, समझाकर इस योग्य बनाया जा सकता है कि उसमें आत्मिक प्रगति के लिए आवश्यक सभी प्रयत्न उतने दायरे में ही सम्पन्न होते रहें ।

उदाहरण के लिए प्रेत विद्या में काम आ सकने योग्य यदि कायिक प्रयोगशाला में ढालना हो तो उसके लिए अपने आहार-विहार, रहन-सहन, चिन्तन, कृत्य, व्यवहार, रुझान इस प्रकार का बनाना पड़ेगा, जिससे वह उपयुक्त प्रयोजन में ठीक तरह काम दे सकने योग्य बन सके । प्रेत आह्वान उतना कठिन नहीं है जितना कि उसके लिए अनुकूल वातावरण निर्माण । यदि शरीर और मन का स्तर तद्नुकूल बना लिया गया तो समझना चाहिए कि तीन चौथाई मंजिल पार हो गई । अघोरी या पालिक प्रेत-सिद्धि अपने प्रयोग का आरम्भ यहीं से करते हैं जिससे उनकी काय सत्ता प्रेतों के लिए आकर्षक अनुकूल एवं अनुरूप बन सके । साधना अपने आपे की करनी पड़ती है । जिस स्तर की सफलता पानी है उसी प्रकार का सरंजाम जुटाना पड़ता है । वातावरण ढूँढ़ना पड़ता है और मन का रुझान तथा दिनचर्या का निर्धारण तदनुरूप करना पड़ता है । पहलवान, कलाकार, वैज्ञानिक, फौजी स्तर से विशिष्ट उद्देश्य वाले व्यक्ति अपने ही गोरख धन्धे में उलझे रहते हैं । मन और शरीर को उन्हीं कार्यों में जोते रहते हैं । महत्त्वपूर्ण सफलताओं का मार्ग भी यही है ।

'साधना से सिद्धि' के सिद्धान्त का रहस्य उतना ही है कि साधक अपनी शारीरिक और मानसिक गतिविधियों को इस प्रकार की बनाता है जिससे उसका व्यक्तित्व शक्तिशाली चुम्बक की तरह अभीष्ट सफलता को अपनी ओर खींच घसीट लाने में समर्थ हो सके । इस संसार में हर पदार्थ हर जीव अपने लिए जहाँ भी अनुकूलता, सुविधा देखता है उसी ओर खिंचता दौड़ता चला जाता है । फूलों में उद्यान में ये तितलियाँ, भौंरे, मधुमक्खियाँ न जाने कहाँ से पता लगते, रास्ता नापते बिना बुलाये दौड़ते चले आते हैं मरी लाश को पड़ी देखकर आसमान से चील, कौए उतरते और जमघट लगाते देखे गए हैं । कुत्ते और सियार भी न जाने कहाँ से आकर उसी लाश पर चढ़ दौड़ते हैं । नाले नदी में, नदी समुद्र में पहुँचने के लिए स्वयं दौड़ लगाते हैं क्योंकि उन्हें वहाँ अपने लिए अनुकूल आश्रय दीखता है । शराब की दुकानों पर नशेबाज जमे रहते हैं और जुआ घरों में जुआरी, साधु संतों की भी जमातें जुड़तीं और सत्संग चलते हैं । कुचक्री तक अपने गिरोह बनाते और षड्यन्त्र रचते रहते हैं । पृथ्वी का गुरुत्वाकर्षण आकाश से न जाने क्या-क्या घसीटता रहता है । बादलों को बरसने के लिए विवश करने से लेकर उसकी परत पर जमते रहने वाले पदार्थ यह बताते हैं कि वे स्वेच्छापूर्वक यहाँ नहीं आये वरन् उन्हें किसी ने खींचा घसीटा है ।

साधना के पीछे यही सिद्धान्त काम करता है । उच्चस्तरीय दैवी शक्तियों का किसी व्यक्ति विशेष की ओर आकर्षित करना—अनुग्रह बरसाना, सहयोग देना, अनुकूल होना केवल एक बात पर निर्भर है कि उनके स्तर की अनुकूलता उत्पन्न हुई या नहीं ।

मनुष्य की संरचना एवं समर्थता महान् है तो भी वह पूर्ण नहीं है । जीवनचर्या में पग-पग पर उसे दूसरों की सहायता लेकर काम चलाना पड़ता है । अन्न, वस्त्र, पुस्तक, कलम, माचिस, लैम्प, जैसी छोटी-छोटी आवश्यकताओं की पूर्ति में वह स्वावलम्बी नहीं है । आत्मिक प्रगति के लिए जो उच्चस्तरीय सहयोग की यह अपेक्षा और भी अधिक रहती है । स्वाध्याय, सत्संग में गुरुजनों का अनुग्रह चाहिए । अदृश्य लोक की देव शक्तियाँ भी उस उत्थान में अपना भाव भरा सहयोग प्रस्तुत करती हैं । ब्रह्म चेतना की अनुकूलता एवं अनुकम्पा आवश्यक होती है । वह ऊपर से बरसती है या भीतर से उछलती है यह प्रश्न उतना महत्त्वपूर्ण नहीं है जितना कि यह निर्धारण ऊँचा उठाने के लिए कोई न कोई सहारा चाहिए भले ही वह नीचे से उचका कर दिया गया हो या ऊपर से खींचकर । साधना से सिद्धि प्राप्त करने में जो जिन विभूतियों का सहयोग मिलता है वे निश्चय ही सामान्य स्तर की होती हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

साधना अर्थात् जीवन साधना । जीवन साधना अर्थात् आदतों, मान्यताओं एवं आकांक्षाओं को साध लेना । वैसा जैसा कि घोड़े, बैल आदि को सधाकर अनगढ़ आदतों से विरत किया और उपयोगी कार्यों में लगने के लिए अभ्यस्त किया जाता है । शेर, हाथी, रीछ, बन्दर, सांप भी प्रकृतितः मनुष्य के सहयोगी कहाँ होते हैं । उन्हें नरम-गरम करके सरकस तमाशों में ऐसे कौतूहल दिखाने में प्रवीण कर लिया जाता है जो आश्चर्यचकित करते और उनकी मूल प्रकृति के सर्वथा विपरीत होते हैं । पेड़-पौधों में कलम लगाना, उन्हें काट-छांटकर नयनाभिराम बनाना एक प्रकार से माली की साधना ही कही जायेगी । आदिकाल की ऊबड़-खाबड़ धरती और आज की समतल उपजाऊ स्थिति के बीच आश्चर्यजनक अन्तर देखकर यही कहा जायेगा कि धरती को मनुष्य के लिए अधिक उपयोगी बनने के लिए प्रयत्नपूर्वक सधाया गया है । अन्न, फल, शाक, जूट, कपास आदि खाद्य स्वभावतः इस प्रकार नहीं उगते थे और वैसे नहीं होते थे जैसे कि आज हैं । वनस्पतियों को सुव्यवस्थित बनाने में मनुष्य को लम्बी अवधि से साधना करनी और करानी पड़ रही है । वही सब कुछ मनुष्य को अपने आपे की साधना में भी करना पड़ता है । चौरासी लाख योनियों में परिभ्रमण करते हुए—विकास क्रम को एक के बाद दूसरी सीढ़ी पार करते हुए—मनुष्य आगे उठता ऊँचा चढ़ता तो आया है, किन्तु अभी उस स्तर तक नहीं पहुँचा है कि सभ्य संसार का सुसंस्कृत नागरिक कहला सके । ऐसी दशा में उसे बौना, कुबड़ा, पिछड़ा, उथला बनकर रहना पड़ रहा है । मानवी गरिमा के उपयुक्त उसका व्यक्तित्व ढले इसके लिए वैसा ही प्रयत्न करने की आवश्यकता पड़ेगी जैसी की कुशल माली, मदारी अपने-अपने यजमानों के निपटते हैं और उन्हें बलपूर्वक इच्छित स्थिति में बदलने के लिए साधते हैं ।

जन्म-जन्मान्तरों की संग्रहीत पशु प्रवृत्तियाँ बड़ी हठीली होती हैं । समझाने-बुझाने पर भी किसी न किसी बहाने अपना ढर्रा अपनाए रहने के लिए रास्ता बना लेती हैं । इनसे निपटना अनगढ़ को सुगढ़ बनाना इतना महत्त्वपूर्ण कार्य है कि उसके कष्टसाध्य होते हुए भी करने के लिए दूरदर्शिता को भरसक प्रयत्न करना पड़ता है । वह कदम ऐसा है जो हर प्रगतिशील को अनिवार्यतः उठाना ही चाहिए ।

लौकिक जीवन में सफल सम्मानित रहने के लिए ही नहीं व्यक्तित्व को वजनदार और बहुमूल्य बनाने के लिए जीवन साधना अनिवार्य रूप से आवश्यक है । यों अनगढ़ लोग भी अपनी सुसंस्कारिता बनाये रहकर, अनैतिक तरीकों से कुछ न कुछ कमा ही लेते हैं, किन्तु अविस्मरणीय यह है कि वे बड़े आदमी कहलाने पर भी आत्म-सन्तोष, लोक-सम्मान एवं दैवी अनुग्रह की तीनों ही विभूतियों से वंचित रहते हैं । अनीति उपार्जन एवं उद्धत उपभोग उनके लिए आत्म-प्रताड़ना से लेकर आधि-व्याधि लेकर भर्त्सना और ईश्वरीय दण्डों से आये दिन पीड़ित ही होते रहते हैं । इस प्रकार दूसरों की आँखों में चकाचौंध उत्पन्न करने वाला होते हुए भी वह वैभव अन्ततः बहुत महँगा पड़ता है और सिकन्दर, रावण, हिरण्यकश्यप आदि की तरह उस पर पश्चात्ताप ही करना पड़ता है ।

जीवन देवता की गौरवशाली व्यक्तित्व की साधना करने से मनुष्य को इसी हाड़-मांस की काया में रहते हुए देव स्तर का बन सकने का सुयोग मिलता है । परीक्षा अच्छे नम्बर लाने के अतिरिक्त प्रामाणिकता सिद्ध करना और तदनुरूप पद पाना कठिन है । महामानवों, सिद्ध पुरुषों, ऋषियों, देवदूतों की बिरादरी का हर सदस्य उसी परीक्षा में उत्तीर्ण होने के उपरान्त गौरव भरी विशिष्टता उपलब्ध करता रहा है ।

आत्मसत्ता में ईश्वर का अवतरण

तिलिस्मों से भरी मानवी काया जिन रहस्यमयी विलक्षणताओं, सहकार व्यवस्थाओं से युक्त है, उसे देखकर सृष्टा की कलाकारिता के प्रति सहज ही नतमस्तक हो जाना पड़ता है । इतना असाधारण शरीर पाकर भी यदि मनुष्य सांसारिक खिलवाड़ में नष्ट कर दे तो उसे चन्दन का वन सूखी लकड़ियों के भाव बेच देने वाले मूर्ख लकड़हारे की तरह ही समझा जायेगा । बुद्धिमत्ता इसी में है कि इस महान् उपहार के पीछे अभिव्यक्त विधाता की आकांक्षा को पहचान कर उसको पूरा किया जाय । जिस किसी ने थोड़ा भी उस पर चिन्तन-मनन किया है, अपने अन्दर विपुल रत्न राशि का भण्डार पाया है, जिसे प्रयुक्त कर वे स्वयं धन्य बने और सहस्रों को कृतार्थ कर गए ।

इसी प्रकार दिव्य जिज्ञासा के रूप में परमात्मा का एक और दिव्य अनुदान प्रत्येक मनुष्य को मिला हुआ है । यही प्रवृत्ति भावी विकास का आधार बनती है । जिन्होंने भी शाश्वत सत्य की खोज में अन्तःजिज्ञासा को—आत्म गरिमा के बोध की ओर मोड़ा, अपने जीवन को सार्थक बना लिया । सृष्टि के रहस्यों की खोज जिस प्रकार मानवी जिज्ञासा की ही परिणति है, सभी आविष्कारों का मूल उद्गम केन्द्र वही है, उसी प्रकार अन्तर्जगत के लीला रहस्यों, अपरिमित सामर्थ्यों की कुंजी भी यही है । बुद्ध, ईसा, विवेकानन्द, दयानन्द, गाँधी, सुकरात सभी ने शाश्वत सत्य के दर्शन को 'स्व पारायण होकर लक्ष्य बनाया, फलस्वरूप वे लक्ष्य प्राप्ति में सफल भी रहे ।

बहिरंग जगत पर जब एक दृष्टि डालते हैं तो पाते हैं कि अधिकांश व्यक्ति ऐसे हैं जो अभावग्रस्त, पिछड़ी स्थिति में जी रहे हैं, कुछ ऐसे हैं जो न दुःखी हैं न सुखी । किसी प्रकार यन्त्रवत् जी रहे हैं । कुछ ऐसे हैं जिनकी प्रतिभा चमकती है । वे ऊँचा सोचते हैं और ऊँचा करते हैं । अपनी साहसिकता के बल पर वे जहाँ भी चलते हैं, सफलताएँ उनके पीछे-पीछे चलती हैं । शरीर की दृष्टि से भिन्नता न होने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पर भी देखे जाने वाले इस अन्तर का एक मात्र कारण चेतना की स्थिति में भिन्नता का होना है । यदि पतित व यान्त्रिक स्थिति वाले व्यक्तियों ने भी समुन्नतों की तरह चेतना को सुसंस्कृत बनाने के प्रयास किए होते तो निश्चय ही वहाँ भी प्रगतिशीलता दृष्टिगोचर होती । इस तमिस्रा को निरस्त कर आत्म-जागरण का प्रयास किया गया होता तो स्थिति कुछ और ही होती ।

परन्तु यहाँ एक बात और ध्यान देने योग्य है केवल आत्म-जागृति ही पर्याप्त नहीं है, उसे सही मोड़ दिया जाना भी अत्यावश्यक है । दुस्साहस तो डाकुओं में भी होता है और असम्भव को सम्भव कर दिखाने वाले पुरुषार्थी में भी । यदि साहस को सही दिशा मिल जाय, आत्म-चेतना ऊर्ध्वमुखी हो जाय, यह चेतना सत्साहस में बदल जाय तो इसकी परिणति विधेयात्मक हो सकती है । इसी कारण मात्र शरीर की बलिष्ठता व पराक्रम का होना भी यथेष्ट नहीं है, लक्ष्य विशेष का उससे जुड़ा होना भी उतना ही जरूरी है । एक लक्ष्य के निर्धारित होने पर तथा चेतना के परिष्कृत होने पर मानव को वह पात्रता मिल जाती है कि वह व्यष्टि चेतना को समष्टि चेतना से जोड़कर अजस्र अनुदान पा सके । भौतिक योग्यता बढ़ने पर पारिश्रमिक और पद की वृद्धि होती है । आत्मिक क्षमता बढ़ने पर ब्रह्माण्डीय चेतना के समुद्र से व्यक्ति चेतना को बहुमूल्य उपहार मिलने का क्रम चल पड़ता है । छोटे बैंक यदि रिजर्व बैंक से जुड़े हैं तो आवश्यकतानुसार अपनी क्षमता, जमा पूँजी के आधार पर भारी आदान-प्रदान का लाभ उठा सकते हैं । इसी प्रकार यदि व्यक्ति की आन्तरिक सामर्थ्य जाग सके तो उसे संव्याप्त ब्रह्मतत्व से ऐसे अनुदान मिल सकते हैं जो उसके स्तर को असंख्य गुना सुसम्पन्न बना सकें ।

आत्म साधना का अर्थ है—व्यक्ति चेतना के स्तर को इतना परिष्कृत करना कि उस पर ब्रह्म चेतना के अनुग्रह का अवतरण सहज सम्भव हो सके । आत्म-सत्ता का चुम्बकत्व इस अनुदान को सहज आकर्षित कर सकता है पहले इसकी महत्ता को जानें तो सही । सूक्ष्म जगत की विभूतियों को पकड़ने हेतु सामर्थ्य की आवश्यकता होती है, वह अपने आपको जाने बिना सम्भव नहीं । बिजलीघर की बिजली, हमारे घर के बल्बों में उछल कर नहीं चली आती । इसके लिए सम्बन्ध जोड़ने वाले मध्यवर्ती तार बिछाने पड़ते हैं । ब्रह्माण्डीय चेतना से सम्बन्ध जोड़ने के लिए आदान-प्रदान के जो सूत्र जोड़े जाते हैं, उसके लिए 'आत्मा' रूपी 'सबस्टेशन' को बड़े 'पावर हाउस' से जुड़ सकने योग्य भी बनाया जाता है । इससे कम में आत्मिक उपलब्धियों की सिद्धि सम्भव नहीं ।

इस मार्ग पर बढ़ने के लिए सांसारिक उत्तरदायित्व के निर्वाह की उपेक्षा नहीं करनी पड़ती । उसे करते हुए भी आत्मिक प्रगति की जा सकती है । कठिनाई एक ही है कि अपनी दृष्टि में हम मात्र शरीर हैं । इसी कारण अपनी इच्छा, क्रिया, विचारणा भी उस तक ही सीमित रखते हैं । जबकि सोचा यह जाना चाहिए कि शरीर में आत्मा का भी अस्तित्व है । प्रगति का अवसर आत्मा को भी मिलना चाहिए । बाह्य सुविधाओं की तरह यदि आन्तरिक गरिमा का महत्त्व समझा जा सके तो निश्चित रूप से मनुष्य को आत्मिक प्रगति की उपयोगिता समझ में आयेगी ।

आज मानकर यह चला जा रहा है कि शरीर एवं मन तक ही हमारी सत्ता सीमित है । हमें इन्हीं के लिए सुख साधनों को जुटाने में निरत रहना है । इसी उपहासास्पद अज्ञान का नाम 'माया' है । वस्तुतः जड़ पंच तत्वों से बने इस कलेवर का मूल्य नगण्य है । बुढ़ापा, बीमारी और मौत उसे पानी के बुलबुले की तरह गला देती है । वस्त्रों की तरह जल्दी-जल्दी फटता और जीर्ण होता रहता है । ऐसे कलेवर की सुसज्जा ही लक्ष्य बन जाय एवं आत्मोत्कर्ष के उद्देश्य को विस्मृत कर दिया जाय तो यह बुद्धिमान कहे जाने वाले मनुष्य की सबसे बड़ी अबुद्धिमत्ता ही होगी । लगभग समस्त मानव समाज आज इसी आत्म प्रवंचना में मूर्च्छित पड़ा है ।

'साधना से सिद्धि' के सिद्धान्त को हृदयंगम करने के पूर्व यह समझना होगा कि आत्मसत्ता का जीवन का, प्रयोजन क्या है । दूरदर्शिता का तकाजा है कि हम शरीर और मन रूपी उपकरणों का प्रयोग जानें और उन्हीं प्रयोजनों में तत्पर रहें, जिनके लिए प्राणिजगत का यह सर्वश्रेष्ठ शरीर, सुरदुर्लभ मानव जीवन उपलब्ध हुआ है । आत्मा वस्तुतः परमात्मा का पवित्र अंश है । वह श्रेष्ठतम उत्कृष्टताओं से परिपूर्ण है । वह लेने की आकांक्षा से दूर प्रेम की उदात्त भावना से परिपूर्ण है । आत्मा को उसी स्तर का होना चाहिए, जिसका कि परमात्मा है । परमेश्वर ने मनुष्य को अपना युवराज चुना ही इसीलिए है कि वह सृष्टि को और सुन्दर, सुसज्जित बना सकें । उसका चिन्तन और कर्तृत्व इसी दिशा में नियोजित रहना चाहिए । यही है आत्मबोध, यही है आत्मिक जीवनक्रम । इसी को अपनाकर जीवन में उतारकर हम अपने अवतरण की सार्थकता सिद्ध कर सकते हैं ।

वस्तुतः आत्मावलम्बी व्यक्ति विवेकयुक्त दूरदर्शिता को ही अपना सम्बल बनाते हैं । उनका मार्गदर्शक उनका अपना अन्तःकरण होता है । ओछे लोग जिसे लाभ समझते हैं, वह यदि विवेक की कसौटी पर हानि सिद्ध होता है तो भी एकाकी निर्णय ले 'स्व पारायण व्यक्ति' सत्पथ पर अकेले ही चल पड़ते हैं । भले ही उन्मादियों की भीड़ उनका उपहास, असहयोग या विरोध करती रहे वह अपना भाग्य स्वयं निर्मित कर वहाँ जा पहुँचते हैं जहाँ कि लिए उनकी आत्मा का अवतरण इस धरती पर हुआ है ।

आत्मबल का अर्थ है ईश्वरीय बल । इसका अर्थ हुआ परमेश्वर की परिधि में आने वाली समस्त शक्तियों और वस्तुओं पर आधिपत्य । आत्मबल उपार्जित व्यक्ति ही शक्ति

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

का अवतार कहा जाता है । मनोगत दुर्भावनाएँ और शरीरगत दुष्प्रवृत्तियों का जो जितना परिशोधन करता चला जाता है, उसी अनुपात में उसका आत्मतेज निखरता चला जाता है । इससे उस तेजस्वी आत्मा का ही नहीं, समस्त संसार का भी कल्याण होता है ।

आत्मबल अभिवृद्धि का दूसरा चिन्ह वहाँ देखा जाता है जहाँ कोई व्यक्ति मोहान्ध जन समूह परामर्शों को उपेक्षा के गर्त में पटकता हुआ आदर्शवादी रीति-नीति अपनाने एकाकी चल पड़ता है । उत्कृष्टता का वरण करने के लिए ललचाते भर रहने वालों में सम्मिलित न होकर वह स्वयं को ऊँचा उठाता है । वह कर गुजरता है, जिसे करने के लिए उसका अन्तरात्मा उसे सतत कहता-पुकारता रहता है व जिन कृत्यों के कारण उसे इतिहास में सदैव याद रखा जाता है ।

मनुष्य राजकुमार है और ईश्वर उसका परम पिता । इन दोनों के बीच जो दूरी बनी है वह अज्ञानान्धकार के कायिक कलेवर के कारण है । इस सम्बन्ध-विच्छेद को मिटाकर दोनों का मिलन करा देना ही 'साधना' है । साधना का प्रयोजन है मनुष्य को उसकी गरिमा का बोध कराना एवं कुत्साओं और कुण्ठाओं की उन जंजीरों को काट डालना जो जीव और ईश्वर के मिलन में बाधा बनकर खड़ी हैं । तपश्चर्याएँ, तितिक्षाएँ, योग-साधनाएँ, प्रायश्चित, उपासना इसी उद्देश्य को पूरा करती हैं, जिसमें जन्म-जन्मान्तरों से संचित कुसंस्कारों का निराकरण किया जाता है एवं देव शक्तियों के अभिवर्धन का पथ-प्रशस्त होता है । इन सब दिव्य सामर्थ्यों से युक्त परमसत्ता बीज रूप में विद्यमान है । दुर्बुद्धि और दुष्प्रवृत्ति रूपी व्यामोह ही उन्हें मूर्च्छित बनाये हुए हैं । वे हट जायें तो मनुष्य में अनायास ही ईश्वर की झाँकी हो सकती है । वह अपने आपको लघु से महान्, आत्मा से परमात्मा, नर से नरायण के रूप में विकसित हुआ प्रत्यक्ष अनुभव कर सकता है । ऋद्धि-सिद्धियों की बात तो गौण है । जो उस सत्ता के साथ अपना सम्बन्ध बना सका, उसे न अपने लिए कुछ अभाव असन्तोष रहता है, न वह दूसरों को मुक्त हस्त से लुटाने में असमर्थ ही रहता है ।

अन्तरात्मा की विशेषता यही देव तत्व है । यह जिसका जग जाता है, वह दैत्य पक्ष के तर्कों को निरस्त कर देवत्व की ओर बढ़ता चला जाता है । ऐसा व्यक्ति कभी सो नहीं सकता । उसकी माँग, पुकार बढ़ती चली जायेगी । अन्तः में घुसे दानव के साथ उसका मल्लयुद्ध तीव्र ही होता चला जायेगा ।

मनुष्य के लिए यही श्रेष्ठ है कि वह अपनी विस्मृत गरिमा को जाने, ईश्वर को अपने अन्तःकरण के आँगन में क्रीड़ा कल्लोल करने का अवसर दे । सूर्य प्रकाश लिए हमारे द्वार पर खड़ा है, हम अपने दरवाजे व खिड़कियाँ भर खोल दें । ईश्वर से जुड़ने की, देवत्व अभिवर्धन की, यही पहली अनिवार्य शर्त है । देवमानव जैसी जीवन-नीति के निर्धारण एवं कार्यान्वयन हेतु सत्साहस एवं उत्साह जब उभरने लगे तो इस उमंग भरे उभार को ही व्यक्तिगत जीवन में ईश्वर का अवतरण कहा जाता है ।

इसी तथ्य को गीताकार ने स्पष्ट करते हुए कहा है— "उद्धरेदात्मनात्मानं" अपना उद्धार आप करो । अपनी प्रगति का पथ स्वयं प्रशस्त करो । जो माँगना है अपने जीवन देवता से माँगो । बाहर दीखने वाली हर वस्तु का उद्गम केन्द्र अपना ही अन्तरंग है । आत्मदेव की साधना ही जीवन देवता की उपासना है ।

अनुसन्धान आत्म चेतना का भी होना चाहिए

विज्ञान ने शोध के अनेकानेक आयामों में प्रवेश कर दृश्य जगत की कई पहेलियाँ सुलझाने में सहयोग दिया है । इससे न केवल मनुष्य की जानकारी बढ़ी है, उसे उन अविज्ञात साधनों का उपयोग भी भली-भाँति समझ में आ गया जिनका सुनियोजन कर उसने सुविधाएँ बढ़ाई हैं, रोगों से मुक्ति दिलाई है तथा भावी सम्भावनाएँ उज्ज्वल बनाई हैं लेकिन भौतिकी की शोध करने वाले मनीषियों को अब एक युगानुकूल दृष्टिकोण अपनाकर चेतना के क्षेत्र में भी प्रवेश करना होगा ।

आत्मिकी चेतना का विज्ञान है, अविज्ञात के रहस्यों की बहुमूल्य विधा है जिसका सदुपयोग न हो पाने के कारण मानव इस शक्तिशाली भण्डार का लाभ उठा पाने में असमर्थ रहा है, लेकिन इसे मान्यता दे कौन ? मात्र आप्त वचनों की दुहाई तो पर्याप्त नहीं । जब तर्क, तथ्य, प्रमाण, उदाहरण प्रस्तुत करने की जबाबदारी हर क्षेत्र में विज्ञान ने ले रखी है, पदार्थ ही नहीं चिन्तन पर भी उसका आधिपत्य है तो उसी का यह दायित्व भी है कि वह आत्मिकी के सूत्रों पर प्रयोग-अनुसन्धान कर उसे प्रामाणिक ठहराने हेतु वैसा ही वातावरण बनाए, साधन जुटाए तथा ऐसे समस्त उपायों पर मंथन करे जिनके प्रयोग से मानवी काया तथा मनःसंस्थान की प्रसुप्त क्षमताओं को उभारा जा सके, व्यक्ति को वर्तमान से कहीं अधिक सक्षम, समर्थ, असामान्य बनाया जा सके । अविज्ञात घटनाओं को मात्र संयोग या चमत्कार न कहकर उनकी वैज्ञानिक पृष्ठभूमि में जा पाना तभी सम्भव है जब विज्ञान स्वयं इसका दायित्व अपने हाथ में लेगा ।

अध्यात्म के कई उपचार अनुशासन मात्र श्रद्धा पर टिके हैं । कभी समय था, जब संयम-साधना के, योग-तप के इन उपक्रमों को आप्त वचनों के प्रति श्रद्धा के सहारे अपनाया जाना था और वे अपने चमत्कार दिखा पाने में समर्थ थे । अब धर्मश्रद्धा लड़खड़ा गई तो प्रखर तथ्यों के सहारे उस प्रयोजन की पूर्ति हो सकती है । विज्ञान की साक्षी इन दिनों प्रामाणिकता की परिचायक बन गई है । वरिष्ठता विज्ञान के पलड़े पर जा बैठी है । ऐसी दशा में विचार और भावना क्षेत्र को शालीनता समर्थक बनाने वाले तथ्यों को ढूँढ़ निकालने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में उसे अग्रगामी होना चाहिए । यह कार्य तनिक भी कठिन नहीं है । प्राचीनकाल में उसे जिस उपचार से सम्पन्न किया जाता था, उसका तर्ज तरीका भर आधुनिक बनाना है । यह निश्चित रूप से सरल एवं सम्भव हो सकता है ।

उदाहरणार्थ मनोविकारों एवं अन्तर्द्वन्द्वों की परिणिति शारीरिक मानसिक रोगों के रूप में होने और उस कुचक्र में फँस जाने पर आर्थिक, पारिवारिक एवं सामाजिक जीवन नष्ट-भ्रष्ट होने की बात पूर्णतः स्पष्ट है । पुरातनकाल में यही बात पाप-पुण्य, स्वर्ग-नरक की बात कहकर हृदयंगम कराई जाती थी । अब उसी को मनोविकारों की परिणिति सिद्ध करके व्यक्ति को सदाशयता अपनाने के लिए सहमत किया जा सकता है ।

प्राचीनकाल में साधना-निग्रह, आहार-विहार, ध्यान-धारणा, योग-तप जैसे अध्यात्म उपचारों की सफलता से देव अनुग्रह को माध्यम माना जाता था । अब उन्हीं को क्रिया-कृत्यों के सहारे स्वसम्मोहन, अचेतन-परिशोधन, प्रसुप्त शक्तियों का जागरण, संकल्पबल, एकाग्रता एवं इच्छाशक्ति का चमत्कार कहा एवं सिद्ध किया जा सकता है ।

मानवी सत्ता में सन्निहित ऐसे अनेकानेक आधार अब विदित उपलब्ध हो गए हैं जिन पर वैज्ञानिक प्रयोग प्रहार करके व्यक्ति की उपयोगी विशिष्टताओं को उभारा और उसे अनेक दृष्टियों से समर्थ बनाया जा सकता है । गुणसूत्र, हार्मोन्स, नाड़ी-गुच्छक, एक प्रकार से षटचक्रों, उपत्यिकाओं, महा ग्रन्थियों के परिवार के पुरातनकाल जैसी चमत्कारी भूमिका निभा सकते हैं अभी व्यक्ति का मात्र रासायनिक पक्ष समझा गया है । उसी को परिपुष्ट करने एवं सुधारने के लिए आहार-विहार, व्यायाम, सर्जरी, औषधि आदि का उपयोग होता रहा है । अब थोड़ा और भीतर उतरा जाय तो जीवाणुओं ऊतकों, न्यूरॉन्स की मूल प्रकृति में अन्तर ला सकने वाले ऐसे प्रयोग किए जा सकते हैं जो प्राचीनकाल की तरह आत्मशक्ति बढ़ाने वाले नये समय के अनुरूप नये द्वार खोल सकें ।

प्राचीनकाल में ऋद्धि-सिद्धियों की चर्चा अपने ढंग से होती थी । आज भी उन प्रसुप्त विशेषताओं का अस्तित्व स्वीकार करने और उन्हें उभारने की सम्भावना पर विज्ञान ने समर्थन की मुहर लगा दी है । सम्मोहन, विचार संचालन, दूर-श्रवण, भविष्य ज्ञान, स्वप्न विज्ञान, ब्रेन वाशिंग, प्राण विनिमय जैसे उपचार अब अध्यात्म न रहकर परामनोविज्ञान की जानी-मानी धाराएँ बन चुकी हैं । इन्हें एक कदम और बढ़ाया जा सके तो बहुचर्चित ऋद्धि-सिद्धियों से आज के मनुष्यों को भी लाभान्वित होने का अवसर मिल सकता है । इन दिनों इन्हें मात्र कौतूहल की तरह देखा समझा जा सकता है पर अगले दिनों इन्हीं उपलब्धियों को बड़े एवं व्यापक रूप में इसी प्रकार प्रयुक्त किया जा सकता है जैसा कि इन दिनों भाप, बिजली आदि का प्रयोग भौतिक क्षेत्र में किया जाता है ।

आज व्यक्तियों को न केवल श्रेष्ठ वरन् अधिक समर्थ बनाये जाने की भी आवश्यकता है ताकि वह विकृतियों से बचने बचाने में, विपत्ति से जूझने-जुझाने में प्रवीण एवं सफल सिद्ध हो सके । यह श्रेष्ठता एवं समर्थता शारीरिक, मानसिक एवं भावनात्मक तीनों ही स्तर की होनी चाहिए ताकि मनुष्य की कर्म, ज्ञान एवं भाव की त्रिविध क्षमताओं को उच्चस्तरीय बनाया जा सके । महामानव-निर्माण का यह समग्र क्षेत्र अनुसन्धान प्रक्रिया से गुजरे, यह समय की माँग है ।

मनुष्य को सुधारने के लिए आमतौर से वाणी, लेखनी आदि के सहारे प्रशिक्षण भर की व्यवस्था बन पा रही है । पर देखा यह जाता है कि आस्था क्षेत्र में निकृष्टता की जड़ें जमी होने के कारण बाहरी सुझाव तनिक भी प्रभावी सिद्ध नहीं होते । मस्तिष्क की क्षमता समझने-समझाने भर की है । उस सम्बन्ध में तो हर किसी को पहले से ही कुछ विदित रहा होता है । मानवी सत्ता का उद्गम केन्द्र अन्तःकरण है । उस क्षेत्र में भावनाओं का, मान्यताओं, आकांक्षाओं का साम्राज्य होता है । उसे सँभालने-सुधारने की सामर्थ्य किसी भी भौतिक उपचार में नहीं है । वहाँ तक पहुँच अध्यात्म की ही रही है । अब विज्ञान के सूक्ष्म प्रयोग ऐसे हो सकते हैं जो ब्रेन वाशिंग की तरह आस्था-परिष्कार का उद्देश्य भी पूरा कर सकें । प्राचीनकाल में शक्तिपात, कुण्डलिनी जागरण, षटचक्र वेधन जैसे उपचारों का आश्रय लिया जाता था । अब अचेतन को प्रभावित करने वाली अभिनव पद्धतियों द्वारा प्रभावित कर सकने वाले उपाय निकल सकते हैं । सामान्य को असामान्य बनाने के लिए भौतिक प्रयोग-परीक्षण चल ही रहे हैं । परखनली से लेकर इलेक्ट्रोड्रों द्वारा मस्तिष्कीय उथल-पुथल कर सकने के उपचार सफलतापूर्वक अग्रसर हो रहे हैं । इस प्रयोग शृंखला में आस्थाओं को उच्चस्तरीय बनाने वाले कई उपचारों ने उत्साहवर्धक सफलता के लिए आशा दिलाई और उत्साह बँधाया है । ध्यान एवं प्राणायाम के कई प्रयोग ऐसे हैं जो मानसिक धरातल में आवश्यक उथल-पुथल प्रस्तुत कर सकने में सफल हो सकते हैं ।

संक्षेप में, व्यक्ति की अतिमानस जगाने और अतिमानव बनने की पूरी-पूरी सम्भावना है । दार्शनिक, विज्ञानी, शासक, मनीषी, अध्यात्मवादी अपने-अपने ढंग से इस सम्भावना के सन्दर्भ में अपने सुझाव प्रस्तुत करते रहे हैं । आवश्यकता इस बात की है कि इस समूचे क्षेत्र को विज्ञान अपने हाथ में ले और देखे कि चिरकाल की —वह्यत और सफल होती रही मनुष्य में देवत्व के उदय की सम्भावना को वर्तमान परिस्थितियों में, वर्तमान साधनों से किस प्रकार पुनर्जीवित किया जा सकता है । अतीत में चिरकाल तक मनुष्य में देवत्व का उदय और धरती पर स्वर्ग के अवतरण की परिस्थितियाँ बनी रही हैं फिर कोई कारण नहीं कि उस

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

खोई कड़ी को न जोड़ा जा सके । विज्ञान चाहे तो यह सब कुछ कर सकता है । इसके लिए उसे अध्यात्म का सहयोगी एवं विश्वासी होकर चलना होगा । मानवता की यह उससे महत्त्वपूर्ण सेवा है जो कि अब तक विज्ञान ने पदार्थ को अधिकाधिक उपयोगी बनाने की दिशा में सफलता पाकर प्रस्तुत की है ।

अदृश्य जगत की सम्पर्क साधना

जिस प्रकार मनुष्य चेतना और पदार्थ सम्पदा का समन्वित पिण्ड है । ठीक उसी प्रकार यह ब्रह्माण्ड भी विराट् पुरुष का सुविस्तृत शरीर है । उसमें भी स्तर के अनुरूप असीम पदार्थ और अनन्त चेतन भरा पड़ा है । दोनों की मिली भगत से यह सृष्टि व्यवस्था चल रही है । उत्पादन, परिपोषण और परिवर्तन की त्रिविध कार्य पद्धति अपनाये हुए सृष्टा का यह स्थूल शरीर पदार्थ समुच्चय अपने हिस्से का काम पूरा करने में निरत है । सृष्टा का सूक्ष्म शरीर वह है जिसमें स्थूल जगत की प्रत्यक्ष घटनाओं के लिए उत्तरदायी अदृश्य क्रिया-प्रक्रिया बनती बिगड़ती रहती है । उसे परोक्ष वातावरण भी कह सकते हैं । इसी के अनुरूप संसार की अनेकानेक परिस्थितियाँ बनती और घटनाएँ घटित होती रहती हैं । सूक्ष्म जगत में भूत और भविष्य के सभी प्रवाह विद्यमान हैं जिन्हें समझ सकने पर इस अविज्ञात की जानकारी मिल सकती है कि भूतकाल में क्या घटित हुआ था और भविष्य में क्या होने जा रहा है ?

वर्षा, आँधी, तूफान, हिमपात, मौसम आदि की पूर्व जानकारी लक्षणों को देखते हुए अनुमान की पकड़ में आ जाती है । इसी प्रकार अदृश्य जगत में चल रही सचेतन हलचलों को देखते हुए भविष्य की सम्भावनाओं का, भूतकाल की घटनाओं का और वर्तमान की परिस्थितियों का पूर्वाभास प्राप्त किया जा सकता है । सामान्यतः मनुष्य की समझ अपने क्रिया-कलाप का निर्धारण करने में ही काम आती है उसे परिस्थितियों की पृष्ठभूमि तथा सम्भावना के सम्बन्ध में कोई बात अलग से जानकारी नहीं होती । सूक्ष्म जगत से सम्पर्क साध सकना यदि सम्भव हो सके तो अन्धेरी गलियों में भटकते रहने की अपेक्षा सुनिश्चित प्रकाश का अवलम्बन मिल सकता है । यह स्थिति जिन्हें भी प्राप्त होगी वे सम्भावनाओं को समझते हुए स्वयं उपयुक्त कदम उठायेंगे और दूसरों को अवसर के अनुरूप सतर्क रहने का मार्गदर्शन करेंगे ।

अदृश्य जगत अपने आपका एक परिपूर्ण संस्कार है । मनुष्यों की अपनी दुनिया, समाज व्यवस्था, रीति-नीति एवं जीवनचर्या है । इसी प्रकार जलचरों की, कृमि-कीटकों की, वन्य पशुओं की, पक्षियों की धूलि में पाये जाने वाले जीवाणुओं की, वायरस बैक्टीरियाओं की अपनी-अपनी दुनिया है । उनकी समस्याएँ, सुविधाएँ, आवश्यकताएँ, कठिनाइयाँ, इच्छाएँ, मनुष्यों की दुनिया में सर्वथा भिन्न ही समझी जा सकती हैं । पड़ौस में रहते हुए भी यह अनोखे संसार एक-दूसरे की परिस्थितियों से प्रायः अपरिचित ही रहते हैं । पालतू पशुओं, पक्षियों और मनुष्यों के बीच उदर पोषण जितना ही सम्बन्ध रहता है शेष का तो किसी से किसी प्रकार का आदान-प्रदान भी नहीं चलता और न कोई एक दूसरे के लिए विशेष सहयोगी ही सिद्ध होता है ।

ठीक इसी प्रकार अदृश्य लोक में सूक्ष्म जीवधारियों की एक अनोखी दुनिया है । शरीर छोड़ने के उपरान्त नया जन्म मिलने की स्थिति आने तक मनुष्यों को इसी क्षेत्र में रहना पड़ता है । भूत-प्रेतों की, देवी देवताओं की, लोक-लोकान्तरों की, स्वर्ग-नरक का चर्चा प्रायः होती ही रहती है । ऐसे प्रमाण उदाहरण आये दिन मिलते रहते हैं जिनसे दिवंगत आत्माओं के सूक्ष्म शरीर धारण किए हुए दिन गुजारने और यदा-कदा मनुष्यों के साथ सहयोग या विग्रह करने की जानकारियाँ मिलती हैं । मनुष्यों की तरह ही उनकी भी एक दुनिया है । चूँकि वे सभी मनुष्य शरीर को छोड़कर ही उस क्षेत्र में पहुँचे हैं इसलिए स्वभावतः इस संसार के साथ सम्पर्क साधने की इच्छा होती होगी । कठिनाई एक ही है कि जीवित या दिवंगत आत्माओं में से किसी को भी यह अनुभव नहीं है कि पारस्परिक सम्पर्क, साधना और आदान-प्रदान का सिलसिला चलाना किस प्रकार सम्भव हो सकता है । प्रयत्न में सफलता न मिलने पर कई प्रेतात्माएँ अनगढ़ उपाय करती हैं मूलतः मनुष्य इस अनुभूति से भयभीत एवं आतंकित होते हैं । जबकि उनमें से कितने ही प्रियजनों के साथ स्नेह, सौजन्य एवं सहयोग का सिलसिला चल सकता है । एक देश दूसरे देश की, एक समाज दूसरे समाज की, एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के स्नेह सहयोग में बँध जाने पर उपयोगी परिणाम उपलब्ध करते हैं फिर कोई कारण नहीं कि कुछ समय पूर्व के अपने ही जैसे मनुष्यों की इसलिए उपेक्षा करे कि शरीर खो बैठे और सूक्ष्म शरीर में, अन्तरिक्ष में निवास कर रहे हैं । आत्मिकी में वह सामर्थ्य है कि वह इन दोनों लोगों के बीच भावनात्मक एवं क्रियात्मक सहयोग का द्वार खोल सके ।

क्रुद्ध, विक्षुब्ध, रुग्ण, व्यथित पीड़ितों को सहकार देने वाली उदार मानवी करुणा विपन्न स्थिति में पड़े हुए प्रेतात्माओं की, विशेषतया सहायता की आशा करने वाले दिवंगत सम्बन्धियों की सहायता करना तो सरलतापूर्वक सम्भव हो सकता है । दूसरों को हानि पहुँचाने में निरत क्रुद्ध आत्माओं को सान्त्वना देकर उनके आक्रोश प्रतिशोध से कष्ट उठाने वालों को राहत दिलाई जा सकती है । प्रेत क्रुद्ध असन्तुष्ट दुर्गतिग्रस्त आत्माओं को कहते हैं और पितर वे हैं जो श्रेष्ठ समुन्नत जीवन जीते रहे हैं । वे जीवन काल की तरह मरणोत्तर स्थिति में पहुँचने की तरह किसी के आने, किसी को सहायता पहुँचाने और परिस्थितियाँ अच्छी बनाने में योगदान करना चाहते हैं । ऐसी आत्माओं की सहायता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

से कितनों ने ही कितने ही प्रकार के महत्त्वपूर्ण अनुदान प्राप्त किए हैं । यह प्रकरण ऐसा है जिसे आत्मिकी के आधार पर अधिक अच्छी तरह, अधिक व्यापक एवं योजनाबद्ध प्रयोजनों के लिए खोला जा सकता है । निश्चय ही इस प्रक्रिया में दोनों ही पक्षों को लाभ मिलेगा और सन्तोष होगा ।

अदृश्य जगत के सूक्ष्म शरीरधारी आत्माओं के साथ सम्बन्ध साधने, आदान-प्रदान का द्वार खोलने से मनुष्य का अपना दायरा और कार्यक्षेत्र बढ़ेगा । आधार रहित सम्पर्क ही डरावने परिणाम प्रस्तुत करते हैं—अन्यथा सांप, शेर, रीछ, बन्दर तक पालतू बनने पर दोनों पक्षों के उसका सत्परिणाम मिलता है । अदृश्य आत्माएँ किसी आचार संहिता के आधार पर मनुष्य जगत के साथ सम्पर्क सधे तो दो लोकों के बीच महत्त्वपूर्ण प्रत्यावर्तन चल पड़ेगा और मृतकों एवं जाग्रतों के बीच नाम मात्र का अन्तर रह जायेगा । विगत के अनुभवों का लाभ उठाने से मनुष्य और पुराने स्नेह सम्पर्क के जीवित रहने पर दिवंगत आत्माएँ अपने-अपने लिए एक उत्साहवर्धक आधार बनने की प्रसन्नता अनुभव करेंगे । प्राचीनकाल में मृतकों और जीवितों के बीच ऐसा ही उपयोगी प्रत्यावर्तन चलता था । श्राद्ध परम्परा में इस प्रक्रिया के बीजांकुर मौजूद हैं ।

ब्रह्माण्डीय चेतना-समष्टि प्राण-परब्रह्म-का विशाल भण्डार इस निखिल विस्तार के कण-कण में संव्याप्त है । उसमें से हर मनुष्य इतना ही अंश प्राप्त कर सकता है जितनी कि उसकी अवधारणा क्षमता है । समझा जा सकता है कि हर मनुष्य में पन्द्रह वाट का बल्ब लगा है यदि उसे हटाकर सौ वाट का लगा दिया जाय तो उसी अनुपात में उसे करेण्ट मिलने लगेगा । प्लग के माध्यम से जिस भी यन्त्र को भेजा जाता है वह चल पड़ता है । करेण्ट बनाने वाले तार और उपकरण का सिलसिला टूट जाने पर गतिशीलता एवं उपयोगिता समाप्त हो जाती है । ठीक इसी प्रकार विश्व चेतना, विराट् ब्रह्म के साथ सम्पर्क जुड़ने पर सामान्य स्तर के मनुष्य भी असामान्य बनते देखे गए हैं । महापुरुष तो व्यवहार जीवन में परब्रह्म की पवित्रता, प्रखरता उदारता के माध्यम से अपने जीवन क्रम में प्रतिष्ठित करते और अपनी क्षमता असाधारण रूप से बढ़ा लेते हैं । यह चेतन अचेतन का पक्ष हुआ । इसमें ऊँची भूमिका ऋषि कल्प योगी तपस्वियों की हैं । वे अपना उच्च चेतन अन्तःकरण परिष्कृत करते-करते इस स्तर तक पहुँचा देते हैं जिसमें परब्रह्म का तेजस् अधिक मात्रा में अवतरित हो सके । इस मार्ग पर चलते हुए मनुष्य में देवत्व का उदय सम्भव हो जाता है । तपस्वी ऋषि और मनस्वी मुनि मनुष्य शरीर में रहते हुए भी अपनी विशिष्टता इतनी बढ़ा लेते हैं कि उन्हें धरती के देवता भूसुर कहने में कोई अत्युक्ति न रहे ।

वर्षा सर्वत्र एक जैसी होने पर भी छोटे गड्ढे में थोड़ा और बड़े तालाब सरोवर में उनकी गहराई चौड़ाई के अनुरूप अधिक पानी जमा होता है । इसमें वर्षा का अनुग्रह नहीं गड्ढे की पात्रता का चमत्कार है । परब्रह्म का अनुग्रह हर किसी को समान रूप से उपलब्ध है । न उसका किसी से राग है न द्वेष । न उस पर प्रशंसा का प्रभाव पड़ता है न निन्दा का । निष्पक्ष न्यायाधीश की तरह उसकी व्यवस्था चलती है । अनुशासन का पालन करने और उच्छृंखलता बरतने वाले उसी तरह दण्ड पुरस्कार पाते रहते हैं जिस प्रकार आग या बिजली का सदुपयोग, दुरुपयोग करने वालों के सामने आता रहता है । अन्तःकरण को परिष्कृत करके परब्रह्म का अधिक अनुपात अपने में धारण करना और उसके बल पर अपनी विशिष्टता विकसित कर सकना किस प्रकार शक्य हो सकता है, यह आत्मिकी का विषय है । जो उसे जानते अपनाते हैं वे उसका सत्परिणाम भी हाथों हाथ उपलब्ध करते हैं ।

पेड़ों की आकर्षण शक्ति बादलों को बरसने के लिए विवश करती है । आँख की पुतली सही होने पर प्रकाश का और कान की झिल्ली ठीक रहने पर ध्वनि का लाभ मिलता है । सदाशयता को उलटकर सद्भावना, सहायता और प्रशंसा मिलती है । ठीक इसी प्रकार व्यक्ति द्वारा अन्तःक्षेत्र की पवित्रता प्रखरता बढ़ाने के प्रयत्न उसे एक ऐसा चुम्बकीय पिण्ड बना देते हैं जिससे वह दृश्य जगत में सद्भावना तथा अदृश्य जगत में दिव्य अनुकम्पा अभीष्ट परिमाण में उपलब्ध करता रहे । आत्मोत्कर्ष ही साधना का एकमात्र प्रयोजन है ।

प्रकृति को खोजने के लिए जिस स्तर के पुरुषार्थ हुए हैं उसी निष्ठा और तत्परता के साथ अब मानवी सत्ता के अन्तराल में सन्निहित विशिष्टताओं को खोजने, उगाने और कुशलतापूर्वक प्रयत्न करने का मार्ग प्राप्त किया जाना चाहिए । ब्रह्माण्डव्यापी पदार्थ सत्ता का वैभव आश्चर्यजनक है । उसी में से पृथ्वी अपने काम का मसाला उत्तरी ध्रुव के मुख माध्यम से खींचती और चूसने के बाद जो ठूँठ बचती है उस कूड़े-करकट को दक्षिणी ध्रुव के छिद्र से अन्तरिक्ष में धकेलती रहती है । इसी रीति-नीति के सहारे पृथ्वी अपनी दरिद्रता को घटाती और सम्पन्नता को बढ़ाती रहती है । अब इसी स्तर के एक चिर पुरातन चिर नवीन क्षेत्र में प्रवेश करने की आवश्यकता है । समष्टि मानव का चेतनात्मक समुच्चय अपने ढंग का एक भूलोक है । उसकी दरिद्रता मिटाने के लिए विराट् ब्रह्म का द्वार खटखटाया जा सकता है और समष्टिगत उच्च चेतन को विकसित कर उसे उतना ही क्षमता सम्पन्न बनाया जा सकता है जितना कि धरती का उत्तरी ध्रुव । पृथ्वी अन्तर्ग्रही क्षमताओं को खींचने और सोखने के कारण ही इतनी समृद्ध बनी है । यही विशेषता समष्टि मन को अध्यात्म परायण बनाकर चेतना जगत के लिए भी उपलब्ध हो सकती है । अभावों की पूर्ति मानवी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रयत्नों से न हो सके, उतना उच्चस्तरीय उपार्जन बन पड़े तो विराट् चेतन से वैसा सब कुछ प्राप्त किया जा सकता है ।

दृश्य लोक कितना ही महत्त्वपूर्ण क्यों न हो—अदृश्य लोक की विशिष्टता के साथ उसकी तुलना नहीं हो सकती । सम्पदा की आवश्यकता से इन्कार नहीं किया जा सकता किन्तु उत्कृष्टता का भी तो कोई मूल्य है । दृश्य जगत का पुरुषार्थ आवश्यक होते हुए भी पर्याप्त नहीं है । एकाकी पूर्णता तभी पूरी हो सकेगी जब चेतनात्मक विभूतियों का उपार्जन, संचय एवं अभिवर्धन बन पड़े ।

यह समूचा क्षेत्र आत्मिकी का है । उसे उपेक्षित नहीं किया जाना चाहिए और न ऐसी अस्त-व्यस्त स्थिति में रहने दिया जाना चाहिए जिसमें कि वह इन दिनों पड़ी हुई है ।

विज्ञान और धर्म मिलकर चलें तो ही प्रगति सम्भव

संसार में मनुष्य का जीवन प्रायः अभावपूर्ण होता है और उससे बचने के लिए तरह-तरह के प्रयत्न करता रहता है । ये अभाव दो प्रकार के होते हैं—शारीरिक और मानसिक । शारीरिक कष्टों और अभावों की निवृत्ति के लिए मनुष्य ने विज्ञान की उन्नति की ओर ध्यान दिया और मानसिक अभावों के लिए धार्मिक और दार्शनिक विचारों की वृद्धि की गई । विज्ञान प्रकृति के क्षेत्र में खोज करता है और दर्शन अन्तःकरण के विषय में चिन्तन करता है । व्यावहारिक जीवन में धर्म और विज्ञान का विशेष महत्त्व है । धर्म का आधार विश्वास है और उसकी प्रवृत्ति हृदय से होती है । विज्ञान का सम्बन्ध मस्तिष्क से है और उसके आधार तर्क और विचार हैं ।

शास्त्रों में धर्म की परिभाषा यह बतलाई गई है कि जो अभ्युदय और निःश्रेयस की प्राप्ति कराये, वही धर्म है, अर्थात् मनुष्य के कर्तव्य और अकर्तव्य-पाप और पुण्य-शुभ और अशुभ कर्म का सम्बन्ध धर्म से है । पाप और पुण्य की स्पष्ट व्याख्या कर सकना अथवा इन दोनों की ठीक-ठीक सीमा बतला सकना बड़ा कठिन कार्य है, क्योंकि इसका निर्णय करने के लिए देश और काल का विचार करना भी परमावश्यक है । ऐसी अनेक बातें हैं जो हमारे देश में पाप मानी जाती हैं, पर यूरोप और अमेरिका के अनेक देशों में उनको पाप नहीं माना जाता और न उनका कोई कुपरिणाम देखने में आता है । इस समस्या को सुलझाने के लिए धर्म के दो रूप मान लिए गए हैं, एक प्रमाण धर्म और दूसरा व्यवहार धर्म । समय के प्रभाव से इस समय हमारे व्यवहार धर्म का स्वरूप बड़ा विवादास्पद हो गया है । मत-मतान्तर, बाह्य आडम्बर आदि ही की उसमें अधिकता हो गई है । इसी कारण विज्ञान और तर्क के इस युग में रहने वाला सामाजिक प्राणी धर्म के विषय में उदासीन होता जाता है । इतना ही नहीं, वह धर्म पर तरह-तरह के आक्षेप भी करने लगा है । लोग कहा करते हैं कि—"पाप-पुण्य क्या है ? धर्म तो सदा बदलता रहता है । अपनी-अपनी सुविधा और लाभ की दृष्टि से ही लोग धर्म को मानते हैं, इसलिए कौन धर्म है और कौन अधर्म, इसका निर्णय कोई नहीं कर सकता" आदि । पर ऐसे व्यक्तियों को जानना चाहिए कि धर्म अखण्ड और एक रस है तथा उसकी परीक्षा का एकमात्र उपाय, जो ऋषियों ने बतलाया है, वह यही है कि "आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत" अर्थात् "जो बात अपने को बुरी लगती हो वह दूसरे के प्रति मत करो ।" इसी के आधार पर गोस्वामीजी ने पाप-पुण्य का यह लक्षण बतलाया है—

पर-हित सरिस धर्म नहीं भाई ।
पर-पीड़ा सम नहिं अधमाई ॥

वैज्ञानिकों का स्वभाव होता है कि हर बात में 'क्यों' और 'कैसे' का प्रश्न करना । इसका नतीजा यह हुआ कि मनुष्य के हृदय से श्रद्धा अथवा विश्वास का भाव घटता जाता है और वह हर एक बात को शंका की दृष्टि से देखने लगा है । वह हर एक वस्तु का विश्लेषण करके उसकी बनावट तथा मूल तत्वों को जानना अपना परम कर्तव्य समझता है । इसलिए वह मनुष्य शरीर को किसी महान् अथवा पवित्र शक्ति का निवास-स्थान न मानकर कैल्शियम, फॉस्फोरस आदि पदार्थों से बना हुआ एक चलता-फिरता पुतला मात्र मानने लगा है । वह हर बात में अंकों की दुहाई देता है और उनके द्वारा अनेक बार स्वयं ही धोखा खा जाता है । इस सबका आशय यही है कि वर्तमान समय में हम हृदय की भावनाओं की उपेक्षा करके बुद्धि तथा तर्क को ही सबसे बड़ा और सत्य मानने लगे हैं और हर एक बात को विवाद द्वारा ही तय करना चाहते हैं । इस विवाद का कहीं अन्त नहीं होता और इस कारण हम कभी एक अटल सिद्धान्त पर नहीं पहुँच पाते ।

आधुनिक विज्ञान का आरम्भ अरब देश से 'ऐलकैमी" के रूप में हुआ । यूरोप में उसने कैमिस्ट्री का रूप धारण किया । वहीं से वह भारतवर्ष में भी आया । पर इस विज्ञान के कारण न तो अरब निवासियों ने अपनी मस्जिदों का विरोध किया और न यूरोप वालों ने अपने गिरजाघरों को गिरा दिया । पर भारतवर्ष में ऐसे अनेक व्यक्ति मिलते हैं जो 'विज्ञान' का अर्थ यही समझ बैठे हैं कि धर्म का विरोध और खण्डन किया जाय । इसका एक मुख्य कारण हमारी सैकड़ों वर्षों की दासता है, जिसने हमें भुलावे में डाल दिया है । अन्यथा धर्म का विचार करने से ही हम यह जानने का उद्योग करते हैं कि इस जीवन के परे भी कुछ है, संसार का प्रत्येक पदार्थ अपने उत्पत्ति स्थान की ओर चला जा रहा है और हमको भी अपने उद्गम की खोज करनी चाहिए ।

वैज्ञानिक युग के तीन खास लक्षण माने गए हैं—(१) प्रकृति पर विजय, (२) यन्त्रों की अत्यधिक उन्नति और प्रचार, (३) तर्कवाद की प्रबलता । इसका तात्पर्य यह है कि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रत्येक आदमी किसी के मत को न मानकर अपनी ही राय और सम्मति को प्रधानता देता है और उसके लिए हर तरह के तर्क-वितर्क करता है जिसे देखकर गोस्वामीजी का यह कथन याद आता है—

मारग सोइ जा कहँ जो भावा ।
पंडित सोइ जो गाल बजावा ॥

पर यदि इतिहास पर निगाह डाली जाय तो इसमें विशेष आश्चर्य की कोई बात न जान पड़ेगी । रावण का ही उदाहरण ले लीजिए । उसने वायु, जल, अग्नि आदि पाँचों तत्वों पर अधिकार कर लिया था और मृत्यु तक को पराजित किया था । दूसरे शब्दों में, उसने प्रकृति पर पूर्ण विजय प्राप्त कर ली थी और यह वैज्ञानिक आविष्कारों से इच्छानुसार कार्य ले सकता था, पर उसकी बुद्धि पर कुतर्क का ऐसा पर्दा पड़ा कि वह धर्म का कट्टर विरोधी बन गया और सब कुछ देख-सुनकर भी वह भगवान पर विश्वास न कर सका । ऐसी ही दशा आज हो रही है । द्वितीय महासमर में ही महानाशकारी अस्त्र-शस्त्र काम में लाये गए । फिर एटम बम निकाला गया, उसके बाद हाइड्रोजन बम तैयार किया गया । इस प्रकार संसार सर्वनाश के निकट पहुँचता जाता है, पर लोगों की आँखें नहीं खुलतीं और वे यह विश्वास करने को तैयार नहीं होते कि इस विश्व का संचालन करने वाली कोई महान् शक्ति है और उसके बिना कोरा तर्क और विज्ञान मनुष्य का कल्याण कदापि नहीं कर सकता ।

विज्ञान के इस युग में यह एक फैशन-सा बन गया है कि प्रत्येक व्यक्ति अपनी बुद्धि को बहुत विशाल और युक्ति युक्त समझता है । इसका परिणाम भी स्पष्ट दिखलाई पड़ रहा है कि आज विनय और शील के दर्शन दुर्लभ हो गए हैं । कहाँ तो पहले जमाने में सुकरात जैसे ज्ञानी यह कहा करते थे कि "मुझे मालूम है कि मैं कुछ भी नहीं जानता ।" नैतिक आचरण की श्रेष्ठता के लिए यह आवश्यक है कि हम अपने में लघुत्व का अनुभव करें और इस प्रकार विश्व की संचालक महान् शक्ति की ओर अग्रसर होने का प्रयास करें । इस प्रकार की भावना, विश्वास के आधार पर ही उत्पन्न हो सकती है, तर्क-बुद्धि के द्वारा ऐसा होना सम्भव नहीं । भगवान कृष्ण ने अर्जुन से यही कहा था कि "तू अपने समस्त कर्मों को मुझे अर्पण कर, क्योंकि संसार के प्रत्येक पदार्थ और कार्य में मैं उपस्थित हूँ । तू चिन्ता मत कर, मैं समस्त कठिनाइयों से तेरा उद्धार कर दूँगा ।"

हमारे शरीर में मस्तिष्क और हृदय दोनों की ही आवश्यकता है । बुद्धि के बिना विश्वास अंधा है और विश्वास के बिना बुद्धि भी लंगड़ी है । इन दोनों का ठीक ढंग से सामंजस्य होने से ही जीवन सफल और सुखी बन सकता है । यही बात विज्ञान और धर्म के सम्बन्ध में भी लागू होती है । तब धर्म का ही दूसरा नाम वैज्ञानिक धर्म या वैज्ञानिक अध्यात्म होगा । अगले दिनों यही होने भी जा रहा है ।

समन्वय-सहकारिता की रीति-नीति

प्रकृति का क्रम स्थिर जैसा प्रतीत होता है । मोटी दृष्टि से घर, बाजार, सड़क, खेत आदि अपने स्थान पर यथावत् स्थिर मालूम पड़ते हैं । बारीकी से देखने पर उन सबमें प्रगति क्रम पर आधारित गतिशीलता अपने परिपूर्ण वेग के साथ काम करती दिखाई देती है । अणु-परमाणु अपने नाभिक के इर्द-गिर्द उसी क्रम से घूमते दिखाई पड़ते हैं जैसे सौर-मण्डल के ग्रह-उपग्रह । ब्रह्मांड में अवस्थित नीहारिकाओं से लेकर अनेकानेक ग्रह-नक्षत्र तक क्षण भर भी एक स्थान पर स्थिर नहीं रहते, उनकी गतिशीलता ही खगोल के वर्तमान स्वरूप को बनाये हुए है । स्थिर होने पर तो वे सम्भवतः अपना अस्तित्व ही गँवा बैठते ।

वनस्पतियों और प्राणियों पर भी यही नियम लागू होता है । वे उपजते हैं, बढ़ते हैं, परिपक्व होते, ढलते और अन्त में जराजीर्ण होकर परिवर्तन की स्थिति में गिरकर अपने पुराने स्वरूप को ही बदल देते हैं । इसी को सृजन, अभिवर्धन और परिवर्तन का क्रम कहते हैं । यह सचेतन जीवधारियों पर ही नहीं जड़ पदार्थों पर भी लागू होता है । इस नियमितक्रम के अनुरूप अपने मानस को ढालने की पूर्ण तैयारी हर किसी को करनी चाहिए । अन्यथा समय आगे बढ़ जायेगा और वह पिछड़ कर प्रतिस्पर्धा में पिछड़े हुओं की तरह हाथ मलता रह जायेगा ।

पेड़-पौधों के पत्ते सतत हिलते रहते हैं । वे ऊपर उठते, फैलते और फिर सिकुड़कर जरा जीर्ण होते, रूप बदलते और नया कलेवर धारण करते हैं । शरीर के भीतर और बाहर भी वही क्रिया चलती है । काया को कुछ न कुछ करते रहना पड़ता है । वह मूर्ति की तरह किसी एक स्थान पर बैठकर स्थिर नहीं रह सकती । चारपाई पर किसी कारणवश एक स्थिति में पड़े रहने वालों की पीठ में "बेडसोर" कहे जाने वाले घाव बन जाते हैं । अचल पड़े रहने वाले असंख्य रोगों के शिकार हो जाते हैं । उनका भोजन तक नहीं पचता । अंग-अवयव जकड़कर निष्क्रिय हो जाते हैं । शरीर के भीतर भी प्रत्येक अवयव जीवकोश अपनी-अपनी क्रियाओं में संलग्न रहता है । रक्त संचार से लेकर श्वास-प्रश्वास तक की अनेकानेक हलचलें काय कलेवर के अन्तराल में चलती रहती हैं । इसी गतिशीलता को जीवन कहते हैं ।

यदि यह सभी प्राणवान गतिविधियाँ एवं हलचलें एक क्षण के लिए भी रुक जायें तो फिर तत्काल मरण की स्थिति बन जाती है । भव्य भवन भी समयानुसार जरा जीर्ण होने लगते हैं और गिरकर खण्डहर बन जाते हैं । इस कबाड़ को हटा कर लोग नई संरचना करते हैं । पर्वत स्थिर प्रतीत होते हैं पर वास्तविकता यह है कि वे भी उठते, धँसते और आगे बढ़ने-पीछे हटने की गतिशीलता अपनाये रहते हैं । चाल भले ही धीमी हो । समुद्रों ने भी कितनी ही बार

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

पलटा खाया है । उनके खण्ड होते रहे हैं । वे कभी मिलते, कभी बिछुड़ते देखे गए हैं । ग्रह-नक्षत्र भी नये बनते और पिछले बूढ़े होकर दम तोड़ते रहे हैं । जिधर भी दृष्टि पसार कर देखा जाय, उधर ही परिवर्तन का अविच्छिन्न माहौल काम करता दीखता है । इसी को दूसरे शब्दों में "प्रगतिशीलता" भी कहा जा सकता है । इसे नकारा नहीं जा सकता, झुठलाने से भी बात नहीं बनती । हमें तथ्य को समझना और तदनुरूप अपने मानस को उस प्रक्रिया के अनुरूप अपने को तैयार करने के लिए अभीष्ट चिन्तन अपनाना चाहिए । किसी आग्रह पर अड़कर नहीं बैठना चाहिए । हठ जड़ता का चिह्न है । उसमें तो यथार्थता को नकारने की अदूरदर्शिता काम करती है ।

प्रथा परम्पराओं में अनादि काल से परिवर्तन होता रहा है । आरम्भ काल में जब साधनों का अभाव था, तब जीवन-यापन की एक पद्धति थी । इसके उपरान्त जैसे-जैसे ज्ञान की, साधनों की उपलब्धि का क्षेत्र बढ़ता गया, उसी अनुपात से रहन-सहन एवं सोच-विचार भी बदलता गया । यह प्रवाह निरन्तर चलता आ रहा है । इसे इतिहास के पृष्ठ उलटकर भली-भाँति देखा समझा जा सकता है । पिछली शताब्दियों में यान्त्रिक वाहन नहीं थे । जलयान, वाययान, तार, टेलीफोन, कल-कारखाने, बिजली आदि का कहीं अता-पता भी न था । उन दिनों रहन-सहन की पद्धति भी आज जैसी न थी । जैसे-जैसे साधन बढ़े, उसी के अनुरूप जीवन पद्धति में भी परिवर्तन हुआ और प्रचलनों में अन्तर पड़ता चला गया । आज हम पाँच शताब्दियों में ही इतने बदल गए हैं, जिसे देखते हुए जमीन-आसमान जैसा अन्तर हुआ समझा जा सकता है ।

सहस्राब्दियों की बात छोड़ें, मात्र कुछ दशाब्दियों की और आज की परिस्थितियों का तुलनात्मक अध्ययन करें तो प्रतीत होगा कि परिस्थितियाँ किस तेजी से बदलती गईं ? परिवर्तन किस आश्चर्यजनक ढंग से होते गए ? बात यहाँ तक बढ़ गई कि पुरातन काल जैसी रीति-नीति और प्रथा परम्पराएँ अपनाये रखना अब किसी भी प्रकार सम्भव नहीं रहा । सघन वन प्रदेशों में जहाँ-तहाँ आदिम जन-जातियों के कुछ कबीले पाये जाते हैं, उनकी मनःस्थिति और परिस्थिति को देखकर आश्चर्य होता है कि वे इन दिनों में किस प्रकार उस पुरातन पद्धति को अपनाये रह सके हैं । उन्हें एक कौतूहल ही समझा जा सकता है । इसे हठवादिता भी कहा जा सकता है, पूर्वाग्रह या पिछड़ापन भी । यदि उन्होंने प्रगति क्रम के साथ चलने की आवश्यकता समझी होती प्रगतिशीलों और पिछड़ों के बीच ताल-मेल बैठाया होता, सामंजस्य बैठा होता तो निश्चय ही पूर्वाग्रहों ने हार मानी होती और अनगढ़ लोग उस गई गुजरी स्थिति से आगे बढ़कर विकसित वर्ग में सम्मिलित हो गए होते । इसमें प्रगतिशीलों को भी उपेक्षा का दोषी ठहराया जा सकता है, पर अधिक दोष उस हठवादिता को दिया जायेगा जिसने समय के गतिशील प्रवाह को नहीं समझा और एक कदम आगे बढ़कर प्रस्तुत प्रगति के साथ सम्बन्ध जोड़ने में उत्साह नहीं दिखाया यह भूल किसी भी क्षेत्र में हो रही हो वह परिणाम में घाटा ही प्रस्तुत करेगी । हम आदिमकाल की ओर नहीं लौट सकते, बढ़ना आगे की ओर ही पड़ेगा । उल्टे पैरों पीछे की दिशा में चलने का कोई कौतूहल तो प्रस्तुत कर सकता है, पर लम्बी यात्रा कर सकना इस आधार पर सम्भव नहीं हो सकता । बुद्धिमानी आगे बढ़ने में ही है ।

यह समझा जा सकता हो कि प्रगति के अत्युत्साह में हम ऐसी अवांछनीयता न अपना लें जो अनर्थ का कारण बने । धन, उपकरण, बुद्धि कला आदि उपयोगी वस्तुओं का भी दुरुपयोग अनर्थ पैदा करता है फिर प्रगति यदि शालीनता की मर्यादाएँ तोड़ने लगे, तो उसका परिणाम भी भयावह ही होगा । इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए यदि प्रगति पथ पर अग्रसर हुआ जाय तो ही औचित्यपूर्ण है ।

प्रगति क्रम विज्ञान और बुद्धिवाद की बढ़ोत्तरी के साथ-साथ अधिक द्रुतगामी हुआ है जो परिवर्तन पूर्वकाल में धीमी गति से हजारों वर्षों में हो पाते थे वे अब अत्यन्त तेजी के साथ होने लगे हैं । दुनिया अब बहुत छोटी रह गई है । प्रेस और संचार साधनों ने विभिन्न क्षेत्रों में बिखरी हुई विचारधाराओं को एक-दूसरे के समीप खड़ा होने की स्थिति में ला दिया है । द्रुतगामी वाहनों ने स्थानों और क्षेत्रों की दूरी अपेक्षाकृत बहुत कम कर दी है । क्रमशः संसार एक छोटे प्रदेश "ग्लोबल विलेज" की तरह आपस में सिमट गया है । संस्कृतियों के बीच असाधारण रूप में घुलने-मिलने की स्थिति उत्पन्न हुई है । एक ने दूसरे से बहुत कुछ सीखा, अपनाया है । साथ ही सभी समुदायों ने अपनी पुरातन परम्पराओं में से उन तत्वों को हटाने का प्रयत्न किया है जो सामयिक उपयोगिता की कसौटी पर खरे नहीं उतर रहे थे । भाषा ही, साम्प्रदायिक, सांस्कृतिक कट्टरता क्रमशः अधिक लचीली होती गई है और प्रवाह उस दिशा में बढ़ रहा है जिसमें विश्वमानव की एकता के केन्द्र पर केन्द्रित होने के लिए प्रेरणा मिल रही है । लगता है अगली कुछ ही शताब्दियों में विश्वमानव इतनी समझदारी अपना लेगा जिसमें एकता, समता और सहकारिता के सिद्धान्तों को पूरी तरह अपना लिया जायेगा । लोग अपने-अपने आग्रहों के प्रति कट्टर न रहेंगे । बात इस प्रकार बनेगी कि अनेकानेक मान्यताओं के बीच जहाँ जितनी उपयोगिता पायी जायेगी, वहाँ से उसे उतनी मात्रा में ग्रहण कर लिया जायेगा । जो समय से पीछे रह गया उस परम्परा के लिए कोई आग्रह नहीं करेगा । कम से कम एक-दूसरे पर लादने का प्रयत्न तो करेगा ही नहीं ।

समन्वय का अर्थ प्रकारान्तर से सहकारिता ही है । मिलजुल कर रहने काम करने, सामंजस्य बिठाने की प्रक्रिया

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ऐसी है जिसका सहभागी होने वाले प्रत्येक घटक की शक्ति अनेक गुनी बढ़ जाती है । अकेला तिनका, पत्ता, धूलिकण, पौधा, मनुष्य सभी दुर्बल और अशक्त रह जाते हैं । उनके लिए कोई बड़ा काम कर सकना तो दूर-अपने आपकी रक्षा करना भी कठिन पड़ता है । खेत में, उद्यान में उगे हुए पौधे सहयोगी, सहभागी बनकर अपने आप में सुदृढ़ एवं शोभायमान लगते हैं, सरलतापूर्वक फलते-फूलते और सुदृढ़, सुरभित बने रहते हैं, पर यदि उनमें से प्रत्येक चीज अलग-अलग रहे पृथक-पृथक बने तो उसकी सुरक्षा सुनिश्चित न रहेगी । फलने-फूलने का अवसर तो कदाचित ही आये इस सिद्धान्त को सृष्टि के सभी समझदार प्राणी जानते और मानते हैं । चिड़ियाँ झुण्ड बनाकर रहतीं और साथ-साथ उड़ती लौटती हैं । हिरण से लेकर हाथी तक झुण्ड में रहते हैं । यह माना जाना चाहिए कि जो पृथकता की नीति अपनायेगा उसकी संकीर्णता, अहमन्यता उसी के लिए घातक सिद्ध होगी । झुण्ड से अलग रहने वाले पशु 'इक्कड़' कहे जाते हैं । उनका स्वभाव अन्यों की अपेक्षा अधिक उद्धत, अधिक अनगढ़ और अधिक असुरक्षित रहता है । वे अपने आप में अपेक्षाकृत अधिक आशंकित रहते हैं । दूसरे भी उन्हें देखकर आतंकित हो उठते हैं, बचने या खदेड़ने का प्रयत्न करते हैं । इस स्थिति में रहना, मनुष्य के लिए घातक और संकटापन्न ही बनता है । इससे बचना एवं सहकार, समन्वय की नीति अपनाकर प्रगति पथ पर चलते रहने में ही समझदारी है, इस तथ्य को भली प्रकार हृदयंगम कर लिया जाना चाहिए ।

धर्म और विज्ञान के समन्वय में ही कल्याण है

नर और नारी का कार्यक्षेत्र भिन्न है । नारी गृह-व्यवस्था में संलग्न रहती है । गर्भ धारण और शिशु-पालन यह दोनों काम उसी को करने होते हैं । नर का कार्यक्षेत्र भिन्न है वह खेत, दफ्तर, कारखाने आदि में काम करता है और उस उपार्जन से गृह-व्यवस्था के लिए नारी की आवश्यकताएँ पूरी करता है । देखने में दोनों के बीच भारी भिन्नता दिखाई पड़ती है । शरीर की रचना की दृष्टि से भी कई अवयवों में प्रतिकूल दीखने वाला भारी अन्तर भी रहता है । सहज स्वभाव में भी थोड़ा, किन्तु महत्त्वपूर्ण अन्तर रहता है इतने पर भी वे दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं । दोनों के सम्मिलित प्रयत्न से ही गृहस्थ की गाड़ी इन दो पहियों के सघन सहयोग से ही गतिशील रहती और आगे बढ़ती है ।

जागृति और सुषुप्ति का अन्तर स्पष्ट है । जागते समय मनुष्य सक्रिय रहता है और सोते समय वह निष्क्रिय बन जाता है । देखने वाले इसे परस्पर विरोधी स्थिति ही कहेंगे । इतने पर भी शरीर शास्त्री यही कहेंगे कि दोनों स्थितियाँ एक-दूसरे के पूरक हैं । जागृति की थकान ही निद्रा लाती है और निद्रा का विश्राम ही जागृति के समय श्रम करने की क्षमता प्रदान करता है ।

सर्दी और गर्मी परस्पर विपरीत हैं पर दोनों के तालमेल से ही इस धरती का ऋतु सन्तुलन बना हुआ है । यदि इनमें से एक का ही अस्तित्व रहे दूसरी को हटा दिया जाय तो जीवन को स्थिर एवं विकसित बनाने की सम्भावना ही समाप्त हो जायेगी और यह धरती प्राणियों के रहने योग्य ही नहीं रह जायेगी । विपरीत के बीच एकता का यह विलक्षण तालमेल है ।

पदार्थ और प्राण की जोड़ी भी इसी प्रकार है । प्रकृति और पुरुष के संयोग को अर्धनारीश्वर की समता दी गई है । दोनों के सम्मिलन से ही अपना यह संसार चल रहा है । यदि मात्र पदार्थ ही रह जाय और कोई जीवधारी उसका अनुभव उपयोग करने के लिए शेष न रहे तो फिर उसका महत्त्व ही न रह जायेगा । अस्तित्व की दृष्टि से तो प्रकृति के अन्तराल में अभी भी असंख्य शक्तियाँ छिपी पड़ी हैं पर उनका पूरा परिचय अपने को न होने के कारण स्थिति लगभग वैसी ही है मानो उनका कोई अस्तित्व ही न हो । यदि प्राणी न हो तो ब्रह्माण्ड में पदार्थ असीम भरा होने पर भी वह अपने आप में ही खोया रहेगा । अभी भी असंख्य नीहारिकाएँ और ग्रह-नक्षत्र ऐसे ही हैं जिनकी स्थिति और क्षमता परिपूर्ण होते हुए भी अपने लिए वे न होने के बराबर ही हैं ।

यदि पदार्थ न हो तो प्राणी के अस्तित्व भी प्रभावी न हो सकेंगे । अदृश्य आत्माओं का परिचय भी तभी मिलता है जब किसी न किसी प्रकार वे स्थूल या सूक्ष्म पदार्थ के साथ सम्बद्ध होकर अपना अस्तित्व प्रकट कर सकने की स्थिति में होती हैं । ऐसा न होने पर आत्मा या परमात्मा तक की स्थिति का ज्ञान न हो सकेगा । आत्मा का अस्तित्व तभी प्रकाश में आता है जब वह किसी न किसी प्रकार पदार्थ के साथ संयुक्त रहती है । परमात्मा के स्थूल या सूक्ष्म रूप में इन्द्रियगम्य बनने पर ही उसका आभास मिलता है अन्यथा निर्विकार ब्रह्म के सम्बन्ध में तो कल्पना करना तक नहीं बन पड़ता । पदार्थ के साथ जुड़ा न होने के कारण ही विज्ञान उसके अस्तित्व से इन्कार करता है ।

कथन का तात्पर्य इतना ही है कि जड़ और चेतन के संयोग से प्राणी और पदार्थ की संयुक्त सत्ता के रूप में यह संसार का अस्तित्व दृष्टिगोचर हो रहा है । दोनों का संयोग बिछुड़ जाय तो फिर न तो पदार्थ के लिए प्राणी का और न प्राणी के लिए पदार्थ का अस्तित्व उपयोग शेष रह जायेगा । मन और बुद्धि का कार्यक्षेत्र यह पदार्थों से बना संसार ही है । वे इसी परिधि में परिभ्रमण करते हैं । इन्द्रियजन्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

अनुभूतियाँ, मानसिक कल्पनाएँ, बौद्धिक विचारणाएँ अन्तःकरण की भाव सम्वेदनाएँ अपनी क्षमता तभी प्रकट कर सकती हैं जब शरीर अथवा पदार्थों के साथ उनका सम्बन्ध समन्वय बने । इसके बिना चिन्तन का सारा ढाँचा ही निष्क्रिय निरर्थक बन जायेगा ।

अन्योन्याश्रित युग्मों में एक क्षेत्र ज्ञान और विज्ञान के समन्वय का भी है । भौतिक विज्ञान में बुद्धि और पदार्थ का संयोग काम करता है । आत्मिक विज्ञान में बुद्धि का वह परिष्कृत स्तर काम करता है जिसे धर्म धारणा एवं ऋतम्भरा प्रज्ञा कहते हैं । ब्रह्म-विद्या के विशालकाय तत्व-दर्शन में उसी की चर्चा है । स्पष्ट है कि इन क्षेत्रों में परस्पर सघन ताल-मेल होने की आवश्यकता है । एकाकी रह जाने पर तो दोनों ही अपूर्ण अपंग बन जाते हैं । ऐसी स्थिति को पूरी तरह नासमझी ही कहा जायेगा । इससे आगे बढ़कर वे दोनों यदि परस्पर लड़ने, झगड़ने लगें, एक-दूसरे के अस्तित्व को चुनौती देने लगें, अप्रामाणिक और अनावश्यक ठहराने लगें, तब तो समझना चाहिए दुःखद दुर्भाग्य ही हमारे चिन्तन क्षेत्र पर ग्रहण की तरह लग गया है । अपने पैरों आप कुल्हाड़ी मारने की तरह ही इस विवाद को भी एक दुर्घटना की कहा जायेगा ।

धर्म और विज्ञान को एक-दूसरे पर गुर्राने की आवश्यकता नहीं है । यह तो दर्पण में अपनी ही छाया पर आक्रमण करने की तरह ही मूर्खतापूर्ण होगा । स्मरण रखे जाने योग्य तथ्य यह है कि न तो विज्ञान के बिना धर्म का अस्तित्व रह जाता है और न धर्म रहित विज्ञान व्यक्ति एवं समाज के लिए किसी प्रकार उपयोगी सिद्ध हो सकता है । आस्था रहित उपलब्धियाँ क्षणिक सुख साधन भले ही दे सकें उनका अनैतिक उपयोग अन्ततः सबके लिए सब प्रकार भयंकर अभिशाप की तरह संकट ही उत्पन्न करता चला जायेगा । इसी प्रकार धर्म को यदि उपयोगिता व्यावहारिकता और यथार्थता की वैज्ञानिक कसौटियों पर न कसा, परखा गया तो वह कल्पना की निरर्थक उड़ानों और अन्ध-विश्वासों की कँटीली झाड़ियों में ही भटकता रहेगा । उससे निहित स्वार्थों का पोषण व्यवसाय भर चलता रहेगा । धूर्त ठगते रहेंगे और मूर्ख ठगाते रहेंगे । तब धर्म की स्थिति ऐसी ही बनी रहेगी जैसी आज है । तब उसे उपहासास्पद उपेक्षित और तिरस्कृत स्थिति में पड़े रहने से उवार सकना इस बुद्धिवादी युग में किसी भी प्रकार सम्भव न हो सकेगा । युग की माँग है कि धर्म और विज्ञान के बीच सघन सहयोग होना चाहिए । दोनों को एक-दूसरे का पूरक बनकर अन्धे और पंगे के सहयोग से नदी पार कर लेने की तरह समझदारी का परिचय देना चाहिए । असहयोग एवं विरोध की स्थिति बनी रहने पर तो दोनों की ही हानि है । उनका विग्रह समस्त संसार की प्रगति और संस्कृति में भारी व्यवधान उत्पन्न करेगा ।

धर्म और विज्ञान को मिलकर चलना होगा

धर्म को पूजा प्रक्रिया तक और विज्ञान को शिल्प व्यवसाय तक सीमित रखा जाय तो दोनों की गरिमा बढ़ेगी नहीं गिरेगी ही । दोनों अपंग अधूरे रह जायेंगे । इन दोनों का परस्पर पूरक होकर रहना उचित ही नहीं आवश्यक है । पदार्थ में सौन्दर्य निखारने का यही तरीका है । कारीगर कलाकार तब बनता है जब अपने क्रिया-कलाप में भावपूर्ण मनोयोग को नियोजित करता है । भावपूर्ण मनोयोग तब कल्पना मात्र बन कर रह जायेगा जब उसमें श्रेष्ठ निष्ठा जुड़ी न होगी । इसी प्रकार मात्र श्रम की कोल्हू के बैल से, भारवाही गधे से तुलना की जाती रहेगी । दोनों का समन्वय ही कर्म कौशल बनकर सामने आता है ।

समग्र ज्ञान को दो भागों में बाँटा जा सकता है एक अन्तर्बोध पर आधारित अध्यात्म अथवा धर्म । दूसरा तर्क, परीक्षण, अनुभव तथा बताये गए तथ्यों के आधार पर भौतिक जगत सम्बन्धी निष्कर्ष । इनमें एक प्रथम को विद्या दूसरे को शिक्षा कहा जा सकता है । प्रथम जानकारी को प्रज्ञा, दूसरी को बुद्धि कहते हैं और भी स्पष्ट करें तो एक को ज्ञान दूसरे को विज्ञान । एक को धर्म और दूसरे को कर्म कहने से ही वस्तुस्थिति समझी जा सकती है । भ्रमवश यह समझा जाता रहा कि इन दोनों का स्वरूप तथा कार्यक्षेत्र पृथक-पृथक है । पर सही बात यह है कि दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं । यदि उन्हें असम्बद्ध होने दिया जाय तो स्थिति बहुत ही विद्रूप हो जायेगी ।

धर्म का लक्ष्य है अन्तरात्मा में सन्निहित सत्प्रवृत्तियों का मनोविज्ञान सम्मत पद्धति से इतना समुन्नत करना कि वे व्यावहारिक जीवन में ओत-प्रोत हो सकें । विज्ञान का लक्ष्य है प्रकृतिगत शक्तियों तथा पदार्थों के स्वरूप तथा क्रिया-कलाप की इतनी जानकारी देना कि उनका समुचित लाभ मानवी सुख-सुविधाओं की अभिवृद्धि के लिए किया जा सके । दोनों का कार्यक्षेत्र प्रत्यक्षतः अलग है, जिसमें एक-दूसरे को हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए । फिर भी वे दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं क्योंकि जीवन आत्मिक एवं भौतिक दोनों प्रकार के तत्वों से मिलकर बना है । जड़ चेतन के समन्वय से ही जीवन का स्वरूप प्रत्यक्ष होता है । इतने पर भी यह अन्तर रखना ही पड़ेगा कि हृदय और मस्तिष्क की तरह दोनों का कार्यक्षेत्र विभक्त हो । एक का कार्य दूसरे पर थोपने की गलती न की जाय । भौतिक तथ्यों की जानकारी में पदार्थ विज्ञान को प्रामाणिक माना जाय और आत्मिक आन्तरिक चिन्तन एवं भावनात्मक प्रसंग में श्रद्धा की आत्मानुभूति को मान्यता दी जाय ।

लन्दन विश्वविद्यालय के ऐस्टोफिजीसिस्ट प्रो. हर्बर्ट डिग्ले का कथन है—विज्ञान की एक सीमित परिधि है । पदार्थ के स्वरूप एवं प्रयोग का विश्लेषण करना उसका काम

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है । पदार्थ किसने बनाया ? किस प्रकार बना ? क्यों बना ? इसका उत्तर दे सकना वर्तमान में सम्भव नहीं । इसके लिए विज्ञान की बहुत ऊँची एवं बहुत अद्‌भुत कक्षा में प्रवेश करना पड़ेगा । वह कक्षा लगभग उसी स्तर की होगी जैसी कि अध्यात्म के तत्वांश को समझा जाता है ।

दार्शनिक रेनाल्ड कहते हैं—धर्मक्षेत्र को अपनी भावनात्मक मर्यादाओं में रहना चाहिए और व्यक्तिगत सदाचार एवं समाज गत सुव्यवस्था के लिए आचार व्यवहार की प्रक्रिया को परिष्कृत बनाये रखने में जुटा रहना चाहिए । इतनी बात भी कुछ कम नहीं है । यदि धर्म वेत्ता अपनी कल्पनाओं के आधार पर भौतिक पदार्थ की रीति-नीति का निर्धारण करेंगे तो वे सत्य की कुसेवा ही करेंगे और ज्ञान के स्वरूप विकास में बाधक ही बनेंगे ।

दार्शनिक पॉलटिलिच ने कहा है कि धर्म और विज्ञान का मिलन दार्शनिक स्तर पर ही हो सकता है । दोनों के क्रिया-कलाप एवं प्रतिपादन की दिशाएँ अलग-अलग ही बनी रहेंगी । न तो धर्मशास्त्रों के आधार पर खगोल, रसायन, पदार्थ विश्लेषण जैसे निष्कर्ष निकाल सकता है और न भौतिक विज्ञान की प्रयोगशालाएँ ईश्वर, आत्मा, कर्मफल, सदाचार, भावप्रवाह जैसे तथ्यों पर कुछ प्रामाणिक प्रकाश डाल सकती हैं । केवल दार्शनिक स्तर ही ऐसा है जहाँ यह दोनों धाराएँ मिल सकती हैं ।

"ह्यूमन डैस्टिनी" ग्रन्थ के लेखक सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक लैकोम्टे डु वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि अविवेक ने ही मानव समाज की दुर्गति की है । विज्ञान अभी तक पालने में पल रहा है । वह वस्तुओं के गुण-धर्म पर तो थोड़ा प्रकाश डालता है पर यह नहीं बताता कि दूरदर्शी बुद्धिमत्ता की घटोत्तरी को कैसे पूरा किया जाय ? धर्म में वे बीज मौजूद हैं जिनके आधार पर चेतना में विवेकशीलता का अधिक समावेश हो सकता है पर दुर्भाग्य यहाँ भी जमा बैठा है, आज धर्म का जो स्वरूप है उसमें दुराग्रहों ने जड़ जमा ली है और विवेकशील चिन्तन के द्वार अवरुद्ध कर दिए हैं । ऐसी दशा में सूझ नहीं पड़ता कि बुद्धिमत्ता की कमी किस प्रकार पूरी की जाय ?

विज्ञानी रुनेम्लोविश इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि पृथ्वी दो ध्रुवों अथवा शीत ग्रीष्म ऋतु प्रवाह की तरह एक-दूसरे से भिन्न दीखते हुए भी धर्म और विज्ञान वस्तुतः एक-दूसरे के पूरक हैं । दोनों में से एक के आधार पर जो भी निष्कर्ष निकाला जायेगा वह वस्तुतः अपूर्ण ही रहेगा । पदार्थ में चेतन का अस्तित्व और चेतना को सक्रिय रहने के लिए भौतिक पदार्थों की आवश्यकता पड़ती है । दोनों का समन्वय ही विश्व को वर्तमान स्वरूप प्रदान कर सका है । यदि उन्हें सर्वथा पृथक कर दिया गया तो अधूरे और भटकाव भरे निष्कर्ष ही हाथ लगेंगे ।

विज्ञान की प्रगति इसलिए होती गई कि उसने नये ज्ञान प्रकाश के लिए द्वार खुला रखा और अपनी भूलों के समझने तथा सुधारने के लिए निरन्तर प्रयत्न जारी रखा । जबकि धर्म ने अपने द्वार नये प्रकाश के लिए बन्द कर लिए । पूर्ववर्ती व्यक्तियों तथा पुस्तकों द्वारा जो कुछ कहा लिखा गया उसी को अन्तिम मान लिया गया और येन-केन प्रकारेण उसी को सत्य सिद्ध करने के लिए हठ किया जाता रहा । इसी भिन्नता के कारण प्रगति की दौड़ में विज्ञान आगे निकल गया और धर्म पिछड़ गया । यदि शोध और सुधार का द्वार खुला रखा गया होता तो निःसन्देह धर्म को भी वैसी ही मान्यता मिलती जैसी कि विज्ञान को मिली है ।

भावनात्मक प्रवाह विलक्षण रीति से बहते हैं । एक ही समय में विभिन्न देशों में एक ही प्रकार के महत्त्वपूर्ण प्रयास करते हुए कतिपय महामानव अवतरित होते हैं और वे सूक्ष्म जगत में गतिशील प्रवाह को अग्रगामी बनाते हुए विश्वव्यापी हलचलों का सृजन करते हैं । धर्मक्षेत्र में प्रायः ऐसा ही होता रहा है । लूथर जर्मनी में, ज्विगी स्विट्जरलैण्ड में, केल्विन फ्रांस में, जोन नोक्स स्काटलैण्ड में हुए । उन्हीं दिनों भारत में भी कई प्रख्यात सुधारकों ने जन्म लिया । विज्ञान के क्षेत्र में भी ऐसा ही होता रहा है । गैलीलियो इटली में, केपलर पोलैण्ड में, न्यूटन इंग्लैण्ड में एक ही समय हुए और उन्होंने विज्ञान की प्रगति को महत्त्वपूर्ण दिशाओं में अग्रसर किया और पुराने ढर्रे को नई पटरी पर चलने के लिए विवश कर दिया ।

भावनात्मक क्षेत्र में क्रान्तिकारी चिन्तन धारा प्रस्तुत करने वाले अनेक मनीषी एक ही समय में उत्पन्न हुए । भले ही वे विभिन्न देशों में जन्मे हों, भले ही उनका परस्पर परिचय न रहा हो पर प्रतीत होता है कि एक ही प्रताप से उठने वाले बुदबुदों की तरह ही वे समय की आवश्यकता पूरी करने में जुटे हुए थे ।

धार्मिक एवं भावनात्मक क्षेत्र में अभिनव प्रकाश उत्पन्न करने वाले विद्वानों में टम्पिले ब्रैथ, ब्रुमनेर, बेरडयेव, औलेन, न्यैगरैन, वैल्लीज, नैवुहरक, वुल्टमान, फैरी, टिलिच आदि का नाम उल्लेखनीय है । इन लोगों को चिन्तन की परम्परागत शैली को मोड़ देने के लिए सदा सराहा जाता रहेगा ।

वैज्ञानिक और आत्मवादी दोनों ही अन्तर्ज्ञान से प्रकाश की किरणें प्राप्त कर रहे हैं । आविष्कारों को अकारण ही ऐसी सूझ उठी जिसके सहारे वे अपनी खोज का आधार खड़ा कर सके । पूर्व शृंखला न होने पर भी इस प्रकार का अनायास अन्तर्बोध यही सिद्ध करता है कि मानवी चेतना के पीछे कोई अलौकिक प्रवाह काम कर रहा था, जिसे अप्रकट को प्रकट करने की उतावली थी । विज्ञान की प्रधान धाराओं के मूल आविष्कर्त्ता इस तथ्य से सहमत हैं कि उन्हें अपने विषय की सूझ-बूझ अन्तःकरण में अकारण ही प्रस्फुटित हुई । यदि उस प्रकाश किरण के लिए कुछ साधारण से कारण भी थे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तो भी उनमें कोई नवीनता नहीं थी । वह सब कुछ पहले से होता चला आया था । उमंग उठकर ठप्प नहीं हुई वरन् उसने एक के बाद एक कदम आगे बढ़ने में सहारा दिया और सूझ-बूझ की उस शृंखला में एक के बाद एक कड़ी जुड़ती चली गई । यदि ऐसा न होता तो शोध की उठी हुई इच्छा मार्ग न मिलने पर कुण्ठित ही रह जाती ।

विज्ञान का क्षेत्र हो अथवा धर्म का, उसमें समुद्र मंथन करके कुछ रत्न प्राप्त कर सकने का श्रेय मनुष्य की रहस्यमय प्रवृत्तियों को ही है । वे स्वल्प मात्रा में कहीं भी पायी जा सकती हैं पर यदि किसी प्रकार उनके प्रखर किया जा सके तो उनकी परिणति असाधारण उपलब्धियों के रूप में ही होती है । इसी अवलम्बन के सहारे सामान्य ज्ञान को महद्ज्ञान और सामान्य व्यक्तित्व को महामानव बनने का श्रेय सौभाग्य प्राप्त होता है ।

विज्ञान और धर्म की प्रगति में जो तथ्य सहायक रहे हैं उनमें से कुछ प्रमुख युग्म इस प्रकार हैं—(१) विवेक और औचित्य (२) विश्वास एवं श्रद्धा (३) तर्क एवं आशा (४) जिज्ञासा और जानकारी (५) सभ्यता और शालीनता (६) प्रेम और वफादारी (७) त्याग और सेवा (८) लगन और निष्ठा (९) धैर्य और साहस (१०) पुरुषार्थ एवं मनोयोग । इनका अवलम्बन लेकर चलने वाले व्यक्तित्व इस संसार में कुछ बहुमूल्य रत्न प्राप्त करते ही रहते हैं । धर्म हो अथवा विज्ञान हर क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण उपलब्धियों का श्रेय अन्ततः कुछ विशिष्ट सत्प्रवृत्तियों पर ही निर्भर सिद्ध होता है । कहना न होगा कि वह अन्तःस्फुरणा जो प्रसुप्त दिव्य प्रवृत्तियों को जाग्रत कर सके किसी अज्ञात संकेत से ही उद्भूत होती हैं ।

विद्वान ह्वाइट हैड का यह कथन बहुत हद तक सही है कि—"धर्म के सिद्धान्त मानवता के अनुभवों में निहित सत्यता को संक्षेप में प्रदर्शित करने का एक प्रयास मात्र है । इसी प्रकार विज्ञान भी मानव की ज्ञानेन्द्रिय शक्ति में निहित सत्यों को संक्षेप में सूत्रीकरण करने का प्रयास मात्र है ।"

दार्शनिक रैक्वे कहते हैं—मनुष्य ने विज्ञान द्वारा प्रकृति के अन्तराल को समझा है और धर्म के द्वारा अपनी महानता का आभास पाया है ।

दार्शनिक पैट्रन का कथन है कि यदि धर्म मान्यताओं के लिए पक्षपात पूर्वाग्रह और कट्टरता की दृष्टि रहे तो ऐसा मनुष्य घोर अनैतिक भी हो सकता है भले ही वह धार्मिक समझा जाता रहे ।

श्री जेविन्स का कथन है कि जादू-टोने, चमत्कार तथा रहस्यवाद के आधार पर जो धर्म अथवा धर्माधिकारी खड़े हैं उनकी जड़ें खोखली हैं । सिद्धान्तों और प्रेरणाओं की दृष्टि से जहाँ खोखलापन होगा वहीं लोगों को आकर्षित करने के लिए ओछे हथकण्डे काम में लाये जायेंगे । धर्म तो अपने आप में इतना उपयोगी है कि उसका यथार्थ स्वरूप समझने पर वह स्वयं ही एक ऐसा जादू, चमत्कार प्रतीत होता है जिसके आधार पर व्यक्तित्व में क्रान्तिकारी परिष्कार एवं उनका सत्परिणाम प्रत्यक्ष देखा जा सके । फिर उसे जादुई चमत्कारों के साथ क्यों जोड़ा जाय ?

धर्म की उपेक्षा से पछतावा ही हाथ लगेगा

जीवन उतना जटिल नहीं है जितना कि बन गया है या बना दिया गया है । हँसी-खुशी की सम्भावनाओं से वह भरा-पूरा है । शरीर और मन की संरचना इस प्रकार हुई है कि वह बाहर के तनिक से साधनों की सुविधा प्राप्त हो जाने पर सहज ही स्वस्थ और सुखी रह सकता है । अति स्वल्प साधनों से अन्य जीवधारी अपना सन्तोषपूर्ण व्यवस्था क्रम चलाते रहते हैं, न उन्हें रुग्णता सताती है और न खिन्नता । यदि उन्हें सताया न जाय तो शरीर यात्रा की प्रचुर परिमाण में उपलब्ध साधन सामग्री से ही अपना काम चला लेते हैं और हँसी-खुशी के दिन काटते हैं ।

मनुष्य को यह सुविधा और भी अधिक मात्रा में उपलब्ध है । उसका अस्तित्व एवं व्यक्तित्व इतना समर्थ है कि न केवल शारीरिक सुविधा की सामग्री वरन् मानसिक प्रसन्नता की परिस्थिति भी स्वल्प प्रयत्न से प्रचुर मात्रा में प्राप्त कर सकता है । इतने पर भी देखा यह जाता है कि मनुष्य खिन्नता और अतृप्ति से ही घिरा रहता है । आधियों और व्याधियों की घटाएँ उस पर छाई रहती हैं ।

सौभाग्य जैसे समस्त साधन प्राप्त होने पर भी दुर्भाग्य की जलन में झुलसते रहने के पीछे एक ही कारण ढूँढ़ा जा सकता है कि सहज सरल रीति-नीति को छोड़कर हम जाल-जंजाल, विद्रूप विडम्बनाओं में उलझ गए और अपना मार्ग स्वयं कंटकाकीर्ण बना लिया । सहज स्वाभाविकता का नाम है धर्म और इसके विपरीत आचरण को अधर्म कहते हैं । वैयक्तिक और सामाजिक कर्तव्यों को जो सही तरह पालन करता है उसे स्वल्प साधनों में भी तुष्ट-पुष्ट और प्रगतिशील देखा जा सकेगा । धर्म की धारणा निश्चित रूप से सुख-शान्ति के प्रतिफल प्रदान करती है ।

ऐलिस ने कहा है—मनुष्य के मन और शरीर को आधि-व्याधियों ने इसलिए घेरा है कि उसे धर्म का समुचित संरक्षण नहीं मिला । यदि आहार निद्रा की तरह धर्म को भी जीवन की अनिवार्य आवश्यकता माना गया होता तो हम शोक-सन्तापों की विविध विधि व्यथाएँ सहने से सहज ही बच सकते थे ।

सन्त ऑगस्टाइन ने मानव की मानव के प्रति कर्तव्य घोषणा को धर्म माना है । सेन्टपाल का कथन है पतन के गर्त से उत्थान के शिखर पर चढ़ने की सीढ़ी को धर्म कहना उपयुक्त होगा ।

हेम्रोज ने धर्म को दो धाराओं में विभक्त किया है, एक आस्था मूलक दूसरी व्यवहारपरक । आस्था की स्थापना अध्यात्म के आधार पर होती है और आचरण व्यवहार का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समीकरण धर्माचरण पथ द्वारा किया जाता है । दोनों के समन्वय को धर्म कह सकते हैं । ईश्वरवाद के सहारे ही धर्म सिद्धान्तों की व्याख्या और पुष्टि की जा सकती है ।

विलियम वेक ने धर्म को आत्मा का कवित्व कहा है । वे कहते हैं पुराणों के अलंकार में परियों की गाथाएँ और जादुई किंवदन्तियाँ भरी पड़ी हैं । इन सबका सार निष्कर्ष यह है कि आत्मा की भाव सरिता यदि उत्कृष्टता की दिशा में बह निकले तो उसका प्रतिफल व्यक्ति और समाज के लिए उतना सरस और आकर्षक हो सकता है जैसा कि देवताओं का सौन्दर्य वैभव और कर्तृत्व ।

ल्यूवा ने धर्म को एक सनातन राज मार्ग बताया है जिस पर धीरे-धीरे चलते हुए मनुष्य जाति विकास के वर्तमान स्तर तक पहुँचने में समर्थ हुई है और भविष्य में अधिक कुछ पाने की आशा कर सकती है ।

प्लान्टिस ने कहा—धर्म की सबसे बड़ी उपलब्धि यह है कि वह मनुष्य के मरणोत्तर जीवन का विश्वास कराती है और दुष्कर्म एवं सत्कर्म के बीच का अन्तर बताते हुए उसके दुष्परिणामों, सतपरिणामों का निश्चय कराती है । यदि यह मान्यता मनुष्य समाज में से निकल जाय, वह अपने को नाशवान और मर्यादाओं से स्वतन्त्र मान बैठे तो फिर यहाँ हर किसी का व्यवहार पैशाचिक स्तर का हो उठेगा । धर्म का अस्तित्व और मनुष्य जाति का अस्तित्व दोनों एक-दूसरे के साथ अत्यन्त सघनता के साथ जुड़े हुए हैं ।

फ्रेजर धर्म को ईश्वरीय आदेश और आत्मतृप्ति का आधार मानते थे । कॉम्टे की मान्यता थी कि अन्तरात्मा के मृदुल रस को बाह्य संसार के साथ समन्वित करके कैसे बहुमुखी सरसता उत्पन्न की जा सकती है इस आवश्यकता की पूर्ति कर सकने वाली कला का नाम ही धर्म है ।

सन्त डाइनाइसिअस का निरूपण यह था कि अदृश्य जगत और दृश्य जगत के परस्पर विरोधी प्रतीत होने वाली धाराओं को एकात्म बना देने वाले महासमुद्र का नाम धर्म है । उसके आधार पर ही विरोध को सहयोग में एवं पृथकता को एकता में बदला जा सकता है ।

मेक्समूलर ने अपनी "एन इन्ट्रोडक्शन टू दी साइन्स ऑफ रिलीजन" पुस्तक में धर्म की विवेचना करते हुए लिखा है—धर्म अन्तरात्मा की पुकार है जो तर्क और जानकारियों से प्रभावित तो करती है, पर उससे प्रभावित नहीं होती । उसका आधार अतीन्द्रिय है । दिव्य चेतना ही हमें धर्मनिष्ठा अपनाने के लिए प्रेरित करती है ।

विलियम जेम्स ने लिखा है—धर्म एक दूरगामी चिन्तन है जिससे व्यक्ति की सामयिक परिस्थितियों की अपेक्षा समष्टि की सर्वांगीण और सर्वकालीन आवश्यकताओं का ध्यान रखा जाता है ।

अलबर्ट का कथन है—धर्म हमारे भौतिक जीवन को सुखी बनाने में सहायक हो सकता है पर भौतिक सुखों के लिए धर्म का उपयोग करना न तो उचित होगा और न सम्भव । धर्म एक आध्यात्मिक भूख है जिसे तृप्त करने के लिए भौतिक कष्ट भी सहने पड़ सकते हैं ।

पास्कल ने कहा है—हृदय के विवेक से धर्म का उदय होता है । उसे मात्र तर्कों की बैसाखी लगाकर खड़ा नहीं किया जा सकता ।

काण्ट ने धर्म की परिभाषा करते हुए उसे ऐसी मानवी कर्तव्यनिष्ठा बताया है जो मस्तिष्क तक सीमित न रहकर अन्तःकरण में निष्ठा में घनीभूत हो गई हो ।

तत्वदर्शियों के उपर्युक्त अभिवचनों में धर्म शब्द के अन्तर्गत जिस आधार की चर्चा की है उसे उत्कृष्टवादी चिन्तन और आदर्शवादी कर्तृत्व के अन्तर्गत ही गिना समझा जाना चाहिए । कर्तव्य परायणता का ही दूसरा नाम धर्म है । शारीरिक, मानसिक, पारिवारिक, सामाजिक और सार्वभौमिक जिम्मेदारियों से मनुष्य की उच्छृंखलता को मर्यादित किया गया है उसे अपने स्तर के अनुरूप सृष्टि संतुलन के प्रति अपनी जिम्मेदारियाँ भी निबाहनी होती हैं । धर्म का प्रयोजन इसी मानवोचित शालीनता और कर्तव्यनिष्ठा को अक्षुण्ण बनाये रखना है । संस्कृति और सम्प्रदायों में क्षेत्रीय और सामयिक परिस्थितियों के अनुसार आचार व्यवहार की व्यवस्था रहती है । इसलिए परिस्थिति के अनुसार उनमें बराबर सुधार परिवर्तन करना पड़ता है पर धर्म के बारे में ऐसी बात नहीं है वह शाश्वत और सनातन है । उसका स्वरूप सदाचार, मर्यादा और लोकहित के रूप में चिर अतीत से ही निर्धारित किया जा चुका है उसमें परिवर्तन की आवश्यकता कभी भी किसी को भी नहीं पड़ सकती ।

सुख-शान्ति के लिए अधिक सुविधाजनक साधनों की खोज में विज्ञान और शासन के प्रयास जुटे रहते हैं पर यह भुला नहीं दिया जाना चाहिए, मनुष्य एक चेतनात्मक परिपूर्ण सत्ता है । आनन्द का उद्गम उसके भीतर है । वही अन्तर्ज्योति जब बाह्य जगत पर प्रतिबिम्बित होती है तो सौन्दर्य, सन्तोष एवं रसानुभूति का अनुभव होता है । विचारणा का स्तर ऊँचा उठाये बिना विपुल साधन सम्पन्न होने पर भी न आनन्द मिल सकेगा न उल्लास न सन्तोष । विचारणा को उत्कृष्टता के स्तर तक उठाने और सुदृढ़ बनाने में धर्म का तत्वज्ञान ही समर्थ हो सकता है । सहायता नहीं कर सकता है ।

'मार्डन मैन इन सर्च ऑफ रिलीजन' ग्रन्थ में यह प्रतिपादन किया गया है कि—विज्ञान में भी किसी वस्तु का ज्ञान प्राप्त करने के लिए विशिष्ट यन्त्र ही उपयोगी होते हैं । न तो सूक्ष्मदर्शक यन्त्र द्वारा दूरस्थ तारा दिखाई देता है और नहीं सर्जन की छुरी से कालेनिया के अत्यन्त सूक्ष्म परमाणु देखे जा सकते हैं । इसी प्रकार बुद्धि के द्वारा आध्यात्मिक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सत्यों का परीक्षण नहीं किया जा सकता भले ही वह कितनी ही तीक्ष्ण क्यों न हो ?

विज्ञान द्वारा सुविधा साधनों की वृद्धि की दिशा में किए गए प्रयासों से समुचित लाभ तभी उठाया जा सकेगा जब भावना एवं दृष्टिकोण का ऊँचा उठा सकने में समर्थ धर्मतत्व को समझने के लिए भी समानान्तर प्रयास किया जाय ।

'ईबोल्यूशन इन साइन्स एण्ड रिलीजन' के लेखक का कथन है—विज्ञान ने शक्ति को पदार्थ के रूप में और पदार्थ को शक्ति के रूप में परिवर्तित करके यह सिद्ध कर दिया है कि सूक्ष्म को स्थूल और स्थूल को सूक्ष्म में बदला जा सकता है ।

दर्शन भी यह सिद्ध करता रहा है कि विचार को घटना के रूप में विकसित किया जा सकता है और घटनाएँ विचारों का निर्माण कर सकने में समर्थ हैं ।

पदार्थ से सुख मिलता है यह सिद्धान्त भी अपने स्थान पर ठीक है । पर गलत यह भी नहीं कि उत्कृष्ट चिन्तन उपलब्ध साधनों की मात्रा अधिक न होने पर भी हस्तगत है । उससे इतना आनन्द उठाया जा सकता है जो परिपूर्ण सन्तोष प्रदान कर सके ।

सामाजिक सुव्यवस्था के लिए धर्म धारणा से बढ़कर और कोई साधन नहीं हो सकता । बलपूर्वक अवांछनीयता पर नियन्त्रण करने में शासन की अधिकांश क्षमता नष्ट होती रहती है फिर भी कुछ हमें लाभदायक समाधान नहीं मिलता । यदि धर्म धारणा को प्रखर और समुन्नत बना सकने योग्य वातावरण उत्पन्न किया जा सके, उचित साधन जुटाये जा सके तो निःसन्देह सामाजिक सुव्यवस्था और राष्ट्रीय समर्पण का प्रयोजन सहज ही पूरा हो सकता है । सार्वभौम और सर्वकालीन सुख-शान्ति की स्थापना धर्म धारणा को सुदृढ़ और समुन्नत बनाकर ही की जा सकती है ।

विज्ञान और धर्म में समन्वय अनिवार्य

पदार्थ के रूप में विज्ञान भी आन्तरिक सत्ता का उद्घाटन करता है । धर्म के क्षेत्र में परमात्मा एक विश्व व्यापक शक्ति है और पदार्थ भी शक्ति के ही कण हैं । सच तो यह है कि शक्ति के अतिरिक्त संसार में और कुछ है ही नहीं । धर्म उसे अन्तर्चेतना के रूप में देखता है । वह उदाहरण देता है कि गाँधीजी का आत्मबल ही था जिसने ब्रिटिश सत्ता को बिना लड़े निकाल दिया और विज्ञान कहता है एक छोटे से शस्त्र ने जो हिरोशिमा के ७० हजार नागरिक पल भर में भून डाले वह क्या कम जबर्दस्त शक्ति थी । भले ही एक का स्वरूप रचनात्मक हो और दूसरे के स्वभाव ध्वंस, पर विज्ञान और धर्म दोनों ने ही शक्ति के एक ही स्वरूप की जानकारी दी है । दोनों में कोई विरोध नहीं है ।

यह झगड़ा तो राम और शिव की तरह का है । राम शिव के उपासक हैं और शिव राम के । पर शिवजी के भक्त भूत-प्रेतों का स्वभाव, राम के भक्त रीछ-वानरों के स्वभाव से नहीं मिलता । इसीलिए वे परस्पर लड़ते हैं । आज विज्ञान धर्मावलम्बियों को हीन मानता है तो धर्म को मानने वाले भौतिकतावादी या पदार्थ की शक्ति पर विश्वास करने वालों को ओछा मानते हैं । दरअसल दोनों को एक समझना चाहिए कि धर्म और विज्ञान के मूलभूत उद्देश्य एक ही सत्य को प्राप्त करना है ।

रामकृष्ण परमहंस के शब्दों में मंगल का उपवास लड़की भी रखती हैं और माँ भी, दोनों के लिए "मंगल" एक ही है पर मान्यताएँ अलग-अलग हैं । वह कहती हैं कि मैं मंगल का व्रत हूँ, माँ कहती है कि मैं मंगल का व्रत हूँ—उद्देश्य दोनों के एक हैं केवल मैं—मैं का झगड़ा है ।

धार्मिकता अनिवार्य होनी चाहिए पर उसका यह अर्थ नहीं कि विज्ञान को छोड़ दिया जाय । विज्ञान का परित्याग ही विश्वास को अन्ध-विश्वास और श्रद्धा को अन्ध-श्रद्धा बनाता है । जबकि धर्म का उद्देश्य सत्य को खोजकर मनुष्य को एक ऐसा रास्ता दिखाना है जिसमें वह अपने हर पड़ौसी के साथ, मिलने-जुलने वाले के साथ शान्ति, प्रेम और भाई-चारे का जीवनयापन कर सके । भारतवर्ष में इस समन्वय की गंगा बह चुकी है । जब यहाँ धर्म और विज्ञान दोनों का समन्वय किया गया था और मनुष्य जीवन को इस तरह सन्तुलित किया गया था जिसमें धर्म भी था, विज्ञान भी; तभी यह देश चरमोत्कर्ष कर सका था ।

धर्म-ग्रन्थों में जीव को ईश्वर अंश बताते हुए कहा जाता है व्यक्ति भगवान है (ईसा, कृष्ण या राम के रूप में) अर्थात् व्यक्ति में ईश्वरीय गुणों की खोज करते हैं लेकिन विज्ञान ब्रह्माण्ड के ज्ञान में वृद्धि करता है तब हमें पता चलता है कि रचयिता (क्रियेटर) मनुष्य नहीं हो सकता । अलबत्ता वह मनुष्यों की सी शक्ति, क्षमता, ज्ञान और सामर्थ्य का विकसित रूप होना चाहिए । इस दृष्टि से विज्ञान ने सत्य की खोज में मदद की और यह बताया कि ईश्वर एक सर्वव्यापी तत्व होना चाहिए । मनुष्य को उसका प्रतिबिम्ब होना चाहिए ।

यदि इन निष्कर्षों को मान लेते हैं तो सचमुच मनुष्य को दीक्षित करने की एक बड़ी भारी समस्या हल हो जाती है । फिर तो मनुष्य को इतना समझना शेष रह जाता है कि हम अपनी शक्तियों को अपव्यय से बचाकर उनका किस प्रकार विकास करें कि अपनी अपूर्णता ईश्वरीय पूर्णता में परिवर्तित हो जाय । इस कार्य को फिर धर्म पूरा कर सकता है ।

दोनों का लक्ष्य अच्छाई और सत्यान्वेषण रहे तो विज्ञान और धर्म एक-दूसरे का विरोध कर भी नहीं सकते । अभी हमारा विज्ञान केवल पदार्थ सम्बन्धी जानकारी देता है, लक्ष्य नहीं बताता, इसलिए धर्म की दृष्टि में वह अहितकारक है । इसी प्रकार अध्यात्म अन्ध-विश्वास को मान्यता देता है जिसे विज्ञान कभी स्वीकार नहीं कर सकता । यह दोनों की भूलें

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हैं । दोनों में से किसी को भी अपनी सच्चाई से विमुख नहीं होना चाहिए ।

विज्ञान विशिष्ट तरीकों से ज्ञान प्राप्त कराता है और धर्म की अनुभूति भिन्न प्रकार की होती है । विज्ञान की दिशाएँ पदार्थ के ज्ञान की ओर बढ़ती हुई चली जाती हैं और एक दिन वहाँ पहुँचेंगी जहाँ से ईश्वरीय शक्तियों ने स्वेच्छा या अन्य किसी कारण से पदार्थ में परिवर्तित होना प्रारम्भ किया । इसी प्रकार आत्मा का प्रकाश तथा आत्मा की विशालता की अनुभूति भी एक दिन उसी सर्वव्यापी सर्वचेतन्य तत्व तक पहुँचा देती है । दोनों एक ही स्थान से उठते हैं और दोनों के गन्तव्य भी एक हैं, इसलिए उनको यहाँ भी साथ-साथ ही रहना चाहिए । मनुष्य को इस जीवन में भौतिक सुखों की अनुभूति भी रहनी चाहिए और आध्यात्मिक लक्ष्य की प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील भी, इसलिए दोनों का समन्वय आवश्यक हो जाता है ।

अकेले विज्ञान को ही महत्त्व देना तो अन्धों की कहानी की तरह होगा । एक बार अन्धा अपने घर से निकल पड़ा और उस दरवाजे पर जाकर सहायता के लिए पुकारने लगा जिस घर में एक दूसरा अन्धा रहता था । वह अन्धा बाहर तो आया पर कोई रास्ता बताने के पहले उसे यही पता लगाना कठिन हो गया कि यह अन्धा किधर से आया है और वह किधर जाना चाहता है, वह दिशा किस तरफ है । बेचारे से असमर्थता ही प्रकट करते बनी । यदि विज्ञान केवल पदार्थ से ही उलझा रहा तो मनुष्य शरीर में भावनाओं के ईश्वरत्व के विकास का क्या बनेगा ? यदि सब कुछ पदार्थ को ही मान लिया गया तो प्रेम, मैत्री, सेवा, सन्तोष और शान्ति की भावनाओं का क्या होगा ? क्या इनकी उपेक्षा करके मनुष्य सुखी रह सकता है ?

भौतिकवादी दर्शनशास्त्र (मैटेरियलिस्टिक फिलॉस्फी) मृत्यु के बाद जीवन के अस्तित्व में विश्वास नहीं करता, लेकिन विज्ञान अब भौतिकता से आगे बढ़ गया है । अब यह माना जाने लगा है कि शरीर और विश्व में कुछ वस्तुएँ जैसे संस्कार-कोश (जीन्स) अमर तत्व हैं उनका कभी नाश नहीं होता ? उसी प्रकार अब भौतिकतावाद का यह सिद्धान्त "पदार्थ नष्ट नहीं होता" पुराना पड़ गया । इलेक्ट्रॉन जो कि पदार्थ का विद्युत आवेश है ऊर्जा केन्द्र (सेन्टर्स ऑफ एनर्जी) में वाष्पीकृत हो जाता है तब पदार्थ का अस्तित्व ही समाप्त हो जाता है और ऊर्जा (एनर्जी) में बदल जाता है, पदार्थ में भार होता है, पर ऊर्जा (एनर्जी) में कोई भार नहीं रह जाता ।

परामनोविज्ञान अब मानव-विज्ञान के उस अध्यात्म में प्रवेश कर रहा है जिसे हम पुनर्जन्म कहते हैं और इस प्रकार विज्ञान धर्म की मान्यताओं पर आ रहा है यह कहा जा सकता है—भारतवर्ष के प्रायः सभी धर्म पुनर्जन्म को मानते हैं । मनोविज्ञान के अनुसंधानकर्त्ताओं को ऐसे लड़के-लड़कियाँ मिली हैं जो अपने पूर्वजन्मों का हाल बताती हैं । अमेरिकी मनोवैज्ञानिक डॉ. स्टीवेन्सन कुछ दिन पूर्व नई दिल्ली आये, उन्होंने बताया कि मैंने विश्व के लगभग ५०० मामलों का अध्ययन किया है उससे मुझे विश्वास हो गया है कि पुनर्जन्म की कल्पना कपोल कल्पित नहीं । उनकी इस सम्मति को वैज्ञानिकों में बहुत महत्त्व दिया जा रहा है । यह बताता है कि वैज्ञानिक धार्मिक सत्यों से आँख नहीं मींचते वरन् वे अब उस स्थान पर हैं जहाँ से धर्म के सत्यों को सरलता से प्रतिपादित किया जा सकता है ।

वैज्ञानिक राबर्ट ब्लेचफोर्ड ने माना कि 'आज भौतिकवाद और भोगवाद के पग उखड़ रहे हैं और अब वह समय आ गया है जब विज्ञान खाओ पिओ मौज करो (ईट-ड्रिंक एण्ड बी मेरी) के भौतिकतावादी सिद्धान्त को छोड़ देगा और आध्यात्मिक क्षेत्र में प्रवेश करेगा ।' डॉ. ब्लेचफोर्ड का यह सिद्धान्त अब पश्चिम (वेस्टर्न कन्ट्रीज) में फिलॉस्फी ऑफ ब्लेचफोर्ड (ब्लेचफोर्ड के सिद्धान्त) के नाम से तीव्रता से प्रसिद्ध हो रहा है ।

वैज्ञानिक तरीकों से प्राप्त ज्ञान में अन्तर्ज्ञान तत्व अन्तर्हित है जबकि आत्म चेतना का प्रकाश भी सत्य को प्रदर्शित करता है । दोनों ही रहस्यपूर्ण हैं और जैसा कि विलियम जैम्स ने कहा—जीवन का सत्य भी रहस्य की दिशा में ही है । रहस्य में वास्तविकता भी हो सकती है और निरर्थक एवं पथभ्रष्टता भी । इसलिए जब सत्य और रहस्यों की दिशा में बढ़ें तब मनोवैज्ञानिक सत्य छुपें नहीं उसके लिए यह आवश्यक हो जाता है कि धर्म और विज्ञान दोनों ही साथ-साथ पथ-प्रदर्शन करें । जहाँ तक विज्ञान की पहुँच है वहाँ तक का अन्तर्ज्ञान ही देकर वह धर्म का रास्ता साफ करे और धर्म का कर्तव्य है कि वह वैज्ञानिक उपलब्धियों के साथ अपनी उपलब्धियों की संगतियाँ बैठाकर उस अपूर्णता को दूर करे जो विज्ञान के लिए आगे बढ़ने में आकस्मिक अवरोध के कारण उत्पन्न होती है । विज्ञान पदार्थ की स्थूलता का विश्लेषण कर सकता है, ज्ञान और अनुभूति के प्रसंग में वह किंकर्तव्यविमूढ़ हो जाता है । ज्ञान और अनुभूति के लिए विचार और भावनाओं की शक्तियाँ काम देती हैं और इनका विकास धार्मिकता के अन्तर्गत आता है । मनुष्य पदार्थ और भावनाओं का मिला-जुला स्वरूप है इसलिए सम्पूर्ण सत्य की खोज के लिए दोनों का विश्लेषण आवश्यक है । अकेला विज्ञान भावनाओं की परिधि तक पहुँच कर रुक जाता है जबकि धर्म भी पदार्थ को जानकारी न दे सकने के कारण मनुष्य को उसके भौतिक आकर्षण से नहीं बचा पाता । इसलिए विकास और अन्तिम सत्य की खोज तभी सम्भव होगी जब इनमें से किसी को भी छोड़ा न जाय ।

धर्म और विज्ञान जुड़वाँ भाई

पिछले दिनों धर्म और विज्ञान को विरोधी माना जाता रहा है । दोनों के तर्क, प्रतिपादन और आधार एक-दूसरे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

से भिन्न समझे जाते रहे हैं । एक को प्रत्यक्षवादी और दूसरे को परोक्षवादी कहकर उन्हें असम्बद्ध कहा जाता रहा है । इसलिए दोनों की दिशा विपरीत मान ली गई और माना गया कि किसी धार्मिक के लिए विज्ञान को समझना एवं किसी वैज्ञानिक को धर्म के बारे में जानना आवश्यक नहीं ।

इतने पर भी यह शाश्वत सत्य यथा स्थान है, धर्म और विज्ञान जुड़वाँ भाई हैं । एक ही पर्वत से निकलने वाले दो महा निर्झर हैं । क्षेत्र भिन्नता की दृष्टि से उनका स्वरूप भिन्न है तो भी वे एक ही महाप्रयोजन की पूर्ति करते हैं । उनकी उपयोगिता मनुष्य के कंधों में जुड़ी हुई दो भुजाओं जैसी है । वे एक-दूसरे के विरोधी नहीं वरन् पूरक हैं ।

धर्म और विज्ञान दोनों एक ही महा सत्य को दो दिशाओं से खोजना आरम्भ करते हैं और जैसे-जैसे आगे बढ़ते हैं वैसे-वैसे एक-दूसरे के अधिकाधिक निकट पहुँचते हैं । विज्ञान जड़ जगत की संरचना और क्रिया-पद्धति का स्वरूप निर्धारण करता है और यह बताता है कि उसका अधिकाधिक उपयोग किस प्रकार किया जा सकता है । धर्म चेतन जगत के रहस्यों का उद्घाटन करता है और सिखाता है कि विश्व की इस महती शक्ति का व्यक्ति और समाज के लिए श्रेष्ठतम उपयोग क्या हो सकता है । जड़ और चेतन के उभय-पक्षीय रहस्यों का उद्घाटन एवं उपयोग सीखने के लिए हमें धर्म और विज्ञान का समानान्तर उपयोग करते हुए आगे बढ़ना होगा ।

आदिम काल में जड़ पदार्थों के सम्बन्ध में अनेकों भ्रान्त मान्यताएँ गढ़ ली गई थीं । प्रकृति की साधारण हलचलें देवताओं या भूत-प्रेतों की करतूतें समझी जाती थीं । वर्षा, आँधी, तूफान, सर्दी, गर्मी, दुर्भिक्ष, रोग, हानि, दुर्घटना आदि के साथ किन्हीं अदृश्य आत्माओं का अभिशाप समझा जाता था और सफलताओं में उनका वरदान माना जाता था । देवताओं की अप्रसन्नताओं को प्रसन्नता में बदलने के लिए तरह-तरह के विषय, अनुरोध, भेंट, उपहार प्रस्तुत किए जाते थे । विज्ञान ने उन सब मान्यताओं को झुठला दिया और बताया कि प्रकृति की शक्तियों को यन्त्र बन्धनों में बाँधकर वह सब किया जा सकता है जो मन्त्र-तन्त्र से सम्भव नहीं था । जिन कारणों से संसार में अभाव दारिद्रय का बाहुल्य था—उनके निवारण कर सकने योग्य अनेकानेक साधन उपस्थित करके समृद्धि, प्रगति की ओर मनुष्य को बढ़ाया । इस दृष्टि से विज्ञान की मनुष्य जाति ऋणी है, उसे पाकर निश्चित रूप से सुख-सुविधाओं में वृद्धि हुई है । उसकी उपयोगिता के कारण विज्ञान के प्रति हर किसी का सम्मान है । वह सत्य के लिए ही नहीं, सुख-शान्ति के लिए भी हमारा पथ-प्रदर्शन करता है । दुरुपयोग की तो बात ही अलग है । गलत प्रयोग करके तो अमृत भी विष बन सकता है । दुष्ट प्रयोजन के लिए यदि विज्ञान का प्रयोग किया जाय तो इसमें प्रयोक्ताओं की मूर्खता ही निन्दनीय ठहराई जायेगी, उससे विज्ञान की गरिमा नहीं घटेगी ।

ठीक यही बात धर्म के सम्बन्ध में लागू होती है । आदिमकाल का मनुष्य एक दुर्बलकाय पशु मात्र था । उसके पास कोई आचार, व्यवहार, दर्शन, आदर्श, नियम, विधान नहीं था । मत्स्य न्याय ही चलता था, जंगल का कानून ही मनुष्य भी पालते थे । अपनी सुविधा के साथ दूसरों का हनन करने में निकृष्ट स्तर के प्राणी संकोच नहीं करते; वैसा ही बर्ताव मनुष्यों का था । समझ की दृष्टि से थोड़ा विकसित होने के कारण वह अन्य पशुओं की तुलना में अधिक छली और अधिक दुष्ट था ।

धर्म के उदय ने आचार, मर्यादा और कर्तव्य की जंजीरों में उन आदिमकालीन क्रूरताओं को जकड़ा और सभ्यता का सृजन करके मनुष्य को शालीनता एवं सामाजिकता का पाठ पढ़ाया । यह अत्यधिक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है जिसे धरती की समस्त सम्पदा से भी बढ़ी-चढ़ी माना जा सकता है । धर्म ने क्रमशः पशुता के, असुरता के पर्तों को उखाड़ा है और मनुष्य को उस स्तर तक पहुँचाया है जिसमें वह बढ़ी-चढ़ी सम्पत्ति के आधार ही नहीं सुविकसित सभ्यता के आधार पर भी गर्व करने का, गौरवान्वित होने का अधिकारी है ।

लोभ-लाभ की आकांक्षा से अथवा द्वेष-क्रोध भरी प्रतिहिंसा से प्रेरित होकर क्रूर कर्म कर बैठने पर बहुत कुछ बन्धन धर्म ने लगाया है । उदार, दयालु, सहिष्णु, सरल एवं सहृदय बनने में भी धर्म का योगदान कम नहीं है । अपराध-निरोधक, सरकारी और गैरसरकारी जितने भी प्रतिबन्ध, प्रतिरोध हैं उन सबकी सम्मिलित शक्ति से भी कहीं बढ़ी-चढ़ी शक्ति धर्म की है जो मनुष्यता की शालीनता को सजीव बनाये रहती है और जिसके आधार पर आनन्द, उल्लास के स्नेह, सौहार्द्र के आदर्श, उत्कर्ष के अभिनव उदाहरण प्रस्तुत होते हैं । वस्तुतः विकास का सर्वोत्तम आधार इन्हीं उपलब्धियों को माना जा सकता है ।

विज्ञान क्रमशः आगे बढ़ रहा है—धर्म भी अपने उस रूप से कहीं आगे बढ़ चला जिसे किसी समय बहुत आदर प्राप्त था, पर अब उसे अन्ध-विश्वास का पोषक माना जाता है । विज्ञान के सम्बन्ध में भी यही बात है । पत्थरों को रगड़कर जब आग पैदा की गई थी तब वह एक महती क्रान्ति थी । आग की उत्पत्ति ने उस समय मानव प्रगति में उतना ही बड़ा योगदान दिया था जितना कि इन दिनों बिजली द्वारा किया जा रहा है । आज की दृष्टि से पत्थर रगड़कर चिन्गारी निकालने की कला एक विनोद मात्र है । ठीक इसी तरह धर्म सम्बन्धी वे मान्यताएँ जो अब दकियानूसी कही जा सकती हैं कभी अपने समय में महती आवश्यकता पूरी कर रही थीं । उन दिनों का पिछड़ापन उन परम्पराओं ने ही हल्का किया था जिन्हें आज हम उपहासास्पद मानते हैं ।

विज्ञानी पालटिनिश का कथन है—विज्ञान और दर्शन तेजी से नजदीक दौड़ते चले आ रहे हैं और वह दिन दूर नहीं जब वे अपने बाहुपाश में एक-दूसरे को कस लेंगे ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विज्ञान प्रत्यक्ष है वह यन्त्रों द्वारा—प्रयोगशालाओं में प्रमाणित किया जा सकता है । धर्म अप्रत्यक्ष तो है पर अप्रमाणित नहीं । अधर्मी व्यक्ति के उच्छृंखल जीवन और सुसंस्कृत व्यक्ति की, शालीनता की प्रतिक्रियाओं का तुलनात्मक अध्ययन किया जाय तो स्पष्ट हो जायेगा कि धर्म की उपयोगिता प्रामाणिक है । वह व्यक्ति के अन्तरंग और बहिरंग जीवन में सर्वतोमुखी प्रगति के आधार प्रस्तुत करती है ।

विद्वान एच. के. शिलेंग ने अपनी पुस्तक 'साइन्स एण्ड रिलीजन' में यह भविष्यवाणी की है कि अगली शताब्दी में धर्म को विज्ञान का और विज्ञान को धर्म का अविच्छिन्न अंग मान लिया जायेगा । अस्तु विज्ञान और धर्म के समन्वय से ही उसकी उभय-पक्षीय प्रगति का सुसन्तुलित आधार बन सकेगा ।

धर्म और दर्शन की उत्क्रान्ति भी आवश्यक

भावी पीढ़ी को मानसिक दिग्भ्रान्ति से बचाने के लिए यह प्रश्न सुलझाना आवश्यक है । धर्म के गिरते हुए मूल्य को देखकर ऐसा लगता है कि कहीं आने वाली पीढ़ियाँ पूर्णतया पदार्थवादी होकर अपनी आध्यात्मिक शक्तियाँ नष्ट न कर डालें ।

हमारी तरह से ऐसे विचार दुनिया के अनेक मनीषियों के मस्तिष्क में आये और उन्होंने अपनी-अपनी तरह के विचार भी दिए । किसी भी ठोस निर्णय के लिए उनके विचारों का बड़ा भारी महत्त्व हो सकता है । एक अमेरिकी स्नातक श्री हरोल्ड केशेलिंग के मस्तिष्क में भी यह प्रश्न उठा था । उन्होंने "विज्ञान और धर्म में क्या सम्बन्ध है ?" इस सम्बन्ध में विस्तृत अध्ययन किया और अपने निर्णयों को एक "थीसिस" के रूप में "साइन्स एण्ड रिलीजन" (विज्ञान और धर्म) के नाम से पेन्सिलवेनिया यूनीवर्सिटी को प्रस्तुत किया । थीसिस के मध्य-पृष्ठों में श्री केशेलिंग ने भी चेतावनी देते हुए लिखा है कि—"हमें व्यक्तिगत और सामूहिक रूप से इस परिस्थिति की ओर सच्चे रूप में ध्यान देना होगा, हमेशा के लिए यह तय करना होगा कि वास्तव में धर्म और विज्ञान में कोई समझौता हो सकता है या नहीं ।"

इसी सन्दर्भ में अपने विचार व्यक्त करते हुए उन्होंने आगे लिखा—"कई धार्मिक संस्थाओं ने यह पहचान लिया है कि धर्म और विज्ञान की सम्मिलित प्रगति से मनुष्य जाति की यथार्थ प्रगति हो सकती है । इस ओर उन्होंने काम भी प्रारम्भ किया है इससे अनेक मानवीय समस्याओं के सही हल सामने आये हैं । विज्ञान की महत्त्वपूर्ण बातों में कई बातें ऐसी हैं जो धार्मिक संस्थाओं के लिए उचित हैं तथा उनकी स्वयं की जानकारी का स्पष्टीकरण करती हैं । पिछले दिनों धर्म विज्ञान का संघर्ष मुख्य बातों में असहयोग के कारण होता था जो अब समाप्त होता जा रहा है । पहले तो बातें विरोधी लगती थीं, अब पूर्ण रूप से एकरूप और अनुरूप प्रतीत होती हैं ।"

यह विचार वस्तुतः मार्गदर्शक है । आइन्स्टीन, न्यूटन, गैलीलियो जैसे महान् वैज्ञानिकों को अन्ततः यह स्वीकार करना पड़ा कि सब कुछ पदार्थ ही नहीं है, कुछ मानसिक और भावनात्मक सत्य भी संसार में है, विज्ञान का दृष्टिकोण उनका स्पष्टीकरण करना है । इस तरह कर्तव्यों के बाद ही रूढ़िवादी वैज्ञानिक और धार्मिक व्यक्तियों दोनों को अपना हठ समझौते के लिए बदलना पड़ा । आज पाश्चात्य देशों में इसीलिए लोग विज्ञान की बातों की संगतियाँ आध्यात्मिक सत्यों से जोड़ने लगे । उसे उनकी समझदारी कहना चाहिए । विज्ञान कितना ही आगे बढ़ जाय हम मनुष्य जीवन के मूलभूत सत्यों यथा जन्म-मरण, परलोक, पुनर्जन्म, कर्मफल, परमात्मा आदि के अस्तित्व और मानव-मानव के बीच सम्बन्धों को ठुकरा नहीं सकते । उनको सुलझाने के लिए हमें भावनात्मक आधार बनाना ही पड़ेगा और तब-तब धर्म की उपस्थिति अनिवार्य होगी ही ।

अलबर्ट आइन्स्टीन ने प्रिन्स्टन यूनिवर्सिटी में कहा था—"संसार में ज्ञान और विश्वास दो वस्तुएँ हैं ।" ज्ञान को विज्ञान और विश्वास को धर्म कहेंगे । इस युग में लोगों की मान्यता है कि ज्ञान बड़ा है, क्योंकि यह क्रमबद्ध है, स्कूलों में इसी का शिक्षण होता है, किन्तु यह मानव जीवन के उद्देश्य को बहुत देर तक प्रयोग करके भी शायद ही बता सके, जबकि विश्वास में तार्किक चिन्तन और क्रमबद्ध ज्ञान (राशनल नॉलेज) दोनों ही आधार हैं, जो हमारा सम्बन्ध सीधे परम अवस्था या अपने मूलभूत उद्देश्य से जोड़ देते हैं ।

विज्ञान किसी भी वस्तु (आब्जेक्टिव फील्ड) का वैज्ञानिक निर्णय और तार्किक चिन्तन (लॉजिकल थिंकिंग) सही दे सकता है, उदाहरण के लिए वह मौसम की जानकारी दे सकता है । बम विस्फोट से कितनी ऊर्जा (एनर्जी) पैदा होगी, यह बता सकता है, पृथ्वी से चन्द्रमा के बीच की दूरी नाप सकता है, किन्तु मानवीय व्यवहार और न्याय का एक क्षेत्र है, उसे विज्ञान अपनी तार्किक चिन्तन (लॉजिकल थिंकिंग) से बताये तो उसका निर्णय गलत बैठेगा । विज्ञान एक शक्तिशाली साधन है, पदार्थ के अध्ययन का, पर अन्तिम उद्देश्य केवल धर्म द्वारा ही निर्धारित किए जा सकते हैं । वैज्ञानिक शोधों का मूल्यांकन और उन्हें मानवीय जीवन में उतारना एक सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य है, जिसे केवल धर्म ही पूरा कर सकता है ।

प्रसिद्ध वैज्ञानिक ब्वायल ने एक सिद्धान्त (ब्वायल्स लॉ) प्रतिपादित कर बताया कि यदि दबाव (प्रेशर) बढ़ाया जाय तो आयतन (वोल्यूम) कम हो जायेगा । अर्थात् आयतन और दबाव दोनों एक दूसरे के विपरीत अनुपात (रेसीप्रोकल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रपोर्शन) में हैं । हवा भर कर किसी गुब्बारे को एक निश्चित आयतन में फुला लें और फिर उसे दाबें तो जितना अधिक गुब्बारे को दाबते चलेंगे, उसका आकार उतना ही छोटा होता चला जायेगा ।

धर्म और विज्ञान भी इसी प्रकार एक दूसरे के विपरीत अनुपात (रेसीप्रोकल प्रपोर्शन) में दिखाई देते हैं, जहाँ पर धर्म आ जाता है, वहाँ विज्ञान की आवश्यकता कम हो जाती है और जहाँ पर विज्ञान की मात्रा बढ़ जाती है, वहाँ धर्म को उतना स्थान छोड़ना पड़ता है । इस विपरीत अनुपाती सिद्धान्त के अनुसार ऐसा जान पड़ता है कि धर्म और विज्ञान में परस्पर विरोध है ।

दबाव बढ़ाते जाने की भी एक सीमा है, उस सीमा के आगे गुब्बारा फट जाने की तरह उस वस्तु का अस्तित्व ही समाप्त हो सकता है उसी प्रकार आयतन बढ़ाते चलो तो एक अवस्था ऐसी आयेगी, तब भीतरी फैलाव ही उस वस्तु के अस्तित्व को फोड़कर नष्ट कर देगा । धर्म को इतना बढ़ाते चला जाय कि विज्ञान से कोई वास्ता ही न रहे तो धर्म, धर्म न रहकर अन्ध-विश्वास हो जायेगा ।

विज्ञान के पीछे किसी सशक्त सत्ता का रहना आवश्यक है, अन्यथा उसकी उपयोगिता मारी जा सकती है । मानवता के लिए उसका उपयोग तभी सम्भव है । यह सत्ता केवल धर्म या विश्वास की ही हो सकती है । धार्मिक लक्ष्य की पूर्ति के लिए भी यदि हम ध्यान रखें तो साधनों का अभाव हमारे लिए कोई अभाव नहीं है । इसी तरह हम धार्मिक आधार पर मनुष्य जीवन का अन्तिम लक्ष्य निर्धारित करें, किन्तु उसके पीछे वैज्ञानिक तर्कों का समावेश आवश्यक है ।

ब्वायल के सिद्धान्त (ब्वायल्स लॉ) की तरह विपरीत जान पड़ने वाले धर्म और विज्ञान वस्तुतः विरोधी होकर ही एक स्थान पर रहकर ही मानव-जीवन का कल्याण कर सकते हैं । चार्ल्स का सिद्धान्त (चार्ल्स लॉ) के अनुसार जैसे-जैसे ताप (टेम्पेरेचर) बढ़ेगा उसी अनुपात में आयतन (वोल्यूम) भी बढ़ेगा अर्थात् ताप और आयतन सीधे अनुपात (डाइरेक्टली प्रपोर्शन) में है । विज्ञान और धर्म का भी सम्बन्ध ऐसा ही है, जब धर्म बढ़ेगा उसकी रूढ़िवादिता और अन्ध-विश्वास को दूर करने के लिए विज्ञान का बढ़ना अनिवार्य हो जायेगा, उसी तरह अब जब कि विज्ञान अपनी चरम प्रगति पर बढ़ चुका है उसके एकाधिकार और निरंकुशता और समाप्त करने एवं मनुष्य जीवन का निश्चित लक्ष्य निर्धारित करने के लिए धर्म का विकास आवश्यक ही नहीं अनिवार्य हो जायेगा ।

इतिहास मर्मज्ञ डॉ. टायनवी से एक पत्रकार ने पूछा—निकट भविष्य में जब वैज्ञानिक प्रगति के कारण मनुष्य को सहज ही सस्ते मूल्य पर प्रचुर सुविधाएँ मिलने लगेंगी, तब वह बैठे-ठाले अपना समय किस प्रकार बिताया करेगा ? इस प्रश्न के उत्तर में टायनवी ने कहा—"उसके पास काम करने का इतना बड़ा और इतना महत्त्वपूर्ण क्षेत्र खाली है, वह क्षेत्र ऐसा है जिसमें प्रगति होते हुए भी भौतिक सुविधाएँ उसके लिए सुखद न कर दुःखद बनती जायेंगी । यह उपेक्षित क्षेत्र अध्यात्म का है । चिन्तन को परिष्कृत बनाने वाला क्षेत्र आवश्यकताओं की पूर्ति की अपेक्षा बड़ा भी है और व्यापक भी । सुविधाओं की अभिवृद्धि के कारण जो समय बचेगा, उसे आगामी पीढ़ियाँ अध्यात्म उत्पादन में लगाया करेंगी । संगीत, साहित्य, कला के माध्यम से विचारों का परिष्कार करने की आवश्यकता अनुभव की जायेगी और भावनात्मक सहयोग एक के द्वारा दूसरे को मिलता रहे, इसकी आवश्यकता अनुभव की जायेगी । इसलिए मानवी अन्तरात्मा की भूख बुझाने के साधन जुटाने में अगली पीढ़ियों को लगना होगा । चैन करने और मौज उड़ाने की वर्तमान हवस की निरर्थकता सिद्ध होने पर मनुष्य को अन्तर्मुखी प्रवृत्तियों के जागरण का अधिक उपयोगी प्रयास करने में जुटना पड़ेगा । बेकारी या शून्यता उत्पन्न नहीं होने पायेगी । विज्ञान की प्रगति की उपलब्धियों का उपयोग धर्म के क्षेत्र में ही हो सकेगा । अस्तु उन्हें एक-दूसरे के पूरक बन कर रहना होगा ।

दर्शन अन्तर्ज्ञान शक्ति 'इन्टरनल पावर' तर्क सम्वेदन और दूरदर्शी विवेक पर अवलम्बित है और विज्ञान बौद्धिक शक्ति पर प्रयोगात्मक तथ्यों पर । इस प्रकार से उनके साधन तो पृथक-पृथक हैं पर सत्य के समीप तक पहुँचाने का दोनों का मूलभूत उद्देश्य एक है । ब्रिटिश विज्ञानी सर जेम्स जीन्स ने अपनी पुस्तक 'फिजिक्स एण्ड फिलोसफी' में लिखा है—विज्ञान और दर्शन के परस्पर विरोध का झगड़ा अब मर चुका है । ज्ञान के विस्तार ने अब दोनों के बीच की सीमा-रेखा तोड़ कर फेंक दी है । दोनों क्षेत्र यह सोचते हैं कि एक-दूसरे की सहायता के बिना किसी का भी प्रयोजन पूरा न हो सकेगा । दर्शनशास्त्री बिल ड्ररण्ट ने अपने ग्रन्थ 'दी स्टोरी ऑफ फिलोसफी' में इसी से मिलते-जुलते विचार व्यक्त किए हैं । वे कहते हैं 'विज्ञान का आरम्भ दर्शन में होता है और अन्त कला में ।" यदि विज्ञान में मानवी चेतना की सुसम्वेदना उत्पन्न करने की क्षमता न होती तो उसके लिए कठोर श्रम करने में किसी को भी उत्साह न होता । केवल कौतूहल के लिए विज्ञान की शोध थोड़े ही होती है । उसके पीछे मानवी सुख-शान्ति का जो उत्साह भरा लक्ष्य जुड़ा है, उसी ने विज्ञान की उन्नति का पथ प्रशस्त किया है । विद्वान केसर लिंग ने अपनी पुस्तक 'क्रिएक्टिव अण्डर स्टोर्डिंग' में कहा है—ज्ञान की दो धाराएँ विज्ञान और दर्शन अविच्छिन्न हैं । विज्ञान या दर्शन को मिलाकर एक शब्द वैज्ञानिक दर्शन अथवा दार्शनिक विज्ञान नाम दिया जाना इस युग के ज्ञान विस्तार को देखते हुए सब प्रकार उपयुक्त ही होगा । विज्ञान के अन्तर्गत जिस प्रकार रसायन शास्त्र, शरीर शास्त्र, यान्त्रिकी, तकनीकी आदि धाराएँ आती हैं, उसी प्रकार ज्ञान मीमांसा, प्रमाण मीमांसा, मनोविज्ञान, तर्क शास्त्र और अध्यात्म जैसे दार्शनिक विषयों को भी सम्मिलित किया

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जाना चाहिए । दोनों के बीच में परस्पर सहयोग से ही समग्र सत्य का दर्शन हो सकता है ।

एफ. सी. नार्थरोम का कथन है—वैज्ञानिक सिद्धान्तों को जितना वास्तविक माना जाता है, उससे अधिक वे काल्पनिक हैं । किसी प्रयोग का सही उतरना इस बात की गारण्टी नहीं है कि प्रयोग की जो व्याख्या विवेचना की गई है, उसके जो आधार कारण बताए गए हैं वे सही ही हैं । अक्सर ऐसा होता रहता है कि पुराने सिद्धान्त काट कर उनके स्थान पर नये सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया जाता है । इस पर भी प्रयोग पूर्ववत सही ही बने रहते हैं । विज्ञानी करनर हाईसवर्ग ने अपने 'भौतिक विज्ञान और दर्शन' ग्रन्थ में अनिश्चितता के नियमों पर प्रकाश डालते हुए लिखा है विज्ञान वस्तुतः दर्शन शास्त्र की स्थूल जाति का निरूपण करने की एक शैली मात्र है । सिद्धान्तों के हाथ लगने के बाद ही वैज्ञानिक प्रयोगों में पूर्णता आती है ।

डॉ. राधाकृष्णन ने 'दर्शन' की परिभाषा करते हुए उसे "सत्य को समझने का बौद्धिक प्रयास" कहा है—महर्षि अरविन्द ने इस निरन्तर चल-बदल रहे संसार में एक मात्र सत्य वैचारिक निष्ठा को ही माना है । भले ही वह सापेक्ष बनी रहे । वे कहते हैं—"विचार ही जगत के निर्माता हैं । इसलिए वस्तुतः वे ही सत्य हैं । वस्तुओं अथवा व्यक्तियों के माध्यम से जो अनुभूतियाँ होती हैं, उनका मूल कारण विचारगत निष्ठा के अतिरिक्त और कुछ नहीं है । कात्यायन ने "यथार्थता के मर्मस्थल तक पहुँच सकने वाली तीखी विवेक दृष्टि को दर्शन की संज्ञा दी है और कहा की अध्यात्म अन्धता का निराकरण मात्र दर्शनिक दृष्टि मिलने पर ही हो सकता है ।"

दार्शनिक लिनयुतांग के विचार से वस्तुओं के परखने उधेड़ते रहने पर जगत का न तो स्वरूप समझ में आ सकता है और न उसका प्रयोजन स्पष्ट होता है । इसके लिए दर्शन का सहारा लिए बिना काम नहीं चल सकता । डॉ. राधाकृष्णन कहते हैं—विज्ञान को लिए बिना दर्शन की सहायता में विश्व का तात्विक स्वरूप समझ सकना अशक्य है । दार्शनिक 'जीन ड्यू प्लेसिस' का मत है—जगत का स्थूल स्वरूप ही विज्ञान हमें समझा सकता है और पदार्थों की प्रकृति पहचान कर उससे लाभ उठाना सम्भव कर सकता है । इसके आगे उसकी गति नहीं । जो है सो क्यों है ? किस लिए है ? कैसा है ? इन प्रश्नों का उत्तर दर्शन के अतिरिक्त और किसी माध्यम से मिल ही नहीं सकता ।

आइन्स्टीन ने लिखा है—"वैज्ञानिक चिन्तन के विस्तार से एक बात बिल्कुल स्पष्ट हो गई है कि भौतिक जगत का कोई ऐसा रहस्य नहीं है जो अपने आगे भी किसी रहस्य की ओर इंगित न करता हो ।"

"फिलॉसफी ऑफ फिजीक्ल साइन्स" के लेखक सर ए. एस. एडिंगटन ने अपनी मान्यता व्यक्त करते हुए लिखा है—"विज्ञान के सिद्धान्तों का समझाना और समझना दर्शन शास्त्र के सिद्धान्तों के सहारे ही सम्भव हो सकता है ।" "फ्रोम युक्लिड टू एडिंगटन" के लेखक सर एडमन्ड ह्वेटेकार ने लिखा है—प्राचीन दर्शन शास्त्र के विवादास्पद सिद्धान्तों को वैज्ञानिक प्रयोगों के आधार पर अधिक प्रमाणित रीति से परखा और जाना जा सकता है । "दि फिलॉसफी ऑफ स्पेस एण्ड टाइम प्रिफेस" के लेखक हन्स राइसन वाच ने लिखा है, वह जमाना लद गया जब विज्ञान और दर्शन को एक-दूसरे से सर्वथा पृथक कहा जाता था, अब हम इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि दर्शन और विज्ञान की जोड़ी में से एक को हटा देने पर दूसरा लड़खड़ाने लगा है । थ्योरी आफ रिलेटिविटी तथा थ्योरी ऑफ सेट्स जैसे सिद्धान्तों की उपज दर्शन और विज्ञान को अन्योन्याश्रित मान कर ही हो सकती है ।

यूनान के सुकरात से भी पुराने दार्शनिक दर्शन का अर्थ—'बहिर्जगत का अध्ययन' करते रहे । ग्रीक के शब्द कोषों में ऐसा ही उल्लेख मिलता है । इससे प्रकट है कि प्राचीनकाल में दर्शन और विज्ञान की गणना एक स्तर पर ही होती है । अन्यान्य देशों के प्राचीन मनीषियों ने भी लगभग इसी स्तर की व्याख्या की है । इन दोनों क्षेत्रों का जब अधिक विस्तार हुआ, तभी बँटवारे की बात सामने आयी और अन्तरंग चिन्तन की धारा को दर्शन और बर्हिरंग हलचलों के ऊहापोह को विज्ञान कहा जाता रहा है । इतने होते हुए भी यह स्पष्ट है कि दोनों को मिलाये बिना न तो चिन्तन में स्पष्टता आती है और न वैज्ञानिक प्रगति का पथ प्रशस्त होता है ।

अब दर्शन की बारी है उसे कुछ करने दिया जाय

विज्ञान का तात्पर्य प्रकृति के कुछ रहस्यों का उद्घाटन अथवा कुछ उपकरणों का निर्माण कर लेना मात्र नहीं है वरन् उसकी व्यापकता मानवी दृष्टिकोण को अधिक सुविस्तृत, तथ्यपूर्ण एवं सत्यनिष्ठ बनाने तक चली जाती है । विज्ञान का उपयोग भौतिक सुख सुविधाओं के संवर्धन अथवा जानकारियों का क्षेत्र बढ़ाने तक सीमित नहीं है, वरन् वास्तविक उपयोग यह है कि हम तथ्य और सत्य को प्रश्रय दें । परम्पराएँ कितनी ही पुरानी अथवा बहुमान्य क्यों न हों यदि वे यथार्थता और उपयोगिता की कसौटी पर सही नहीं उतरती तो उन्हें बदलने के लिए सदा तत्पर रहें । नये या पुराने के झंझट में न पड़कर विज्ञानी सत्य को ही मान्यता प्रदान करता है ।

विज्ञान न केवल एक प्रक्रिया है, वरन् एक प्रवृत्ति भी है । जिसका फलितार्थ है—साहसपूर्ण विवेचनात्मक एवं तथ्य समर्थित यथार्थवादी दृष्टिकोण । सत्य की खोज के लिए यह आवश्यक है कि हम तर्क और तथ्य की कसौटी पर प्रत्येक मान्यता और परम्परा को कसें और उनमें से जो खरी उतरती हों उन्हीं को अंगीकार करें । विज्ञान के इस पक्ष को दर्शन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कहा जाता रहा है । वस्तुतः दोनों के समन्वय से ही एक पूर्ण विज्ञान की प्रतिष्ठापना होती है ।

मान्यता पुरानी है या नई इस व्यामोह से निकल कर जो तथ्य है उसी को स्वीकार करने की बात यदि मन में समा जाय तो समझना चाहिए कि वैज्ञानिक दृष्टिकोण मिल गया । यथार्थवादी चिन्तन और औचित्य का अवलम्बन जिन्होंने अपनाया उन्हें विचार क्षेत्र का वैज्ञानिक ही कहना चाहिए । दूसरे शब्दों में, उसे दार्शनिक भी कह सकते हैं ।

भौतिक विज्ञान की अपनी सीमा और उपयोगिता है । वह पदार्थ की स्थिति और गति का विवेचन करता है और वस्तु की मूलभूत सूक्ष्म सत्ता का पता लगाता है । वह सूक्ष्म से सूक्ष्मतम और सूक्ष्मतर तक पहुँचने के लिए निरन्तर आकुल-व्याकुल रहता है और अधिकाधिक गहराई तक पहुँचने के लिए अधिकाधिक प्रयास करता है ।

भावनात्मक क्षेत्र में भी दर्शन विज्ञान की गतिविधि इसी आधार पर अधिकाधिक कलात्मक और सौन्दर्योपासक बनती जाती है । किन व्यक्तियों और किन पदार्थों की कितनी उपयोगिता है इस स्थूल कसौटी की अपेक्षा वह उनकी स्थिति में सन्निहित महान् सम्वेदनाओं की गहराई तक पहुँचने का प्रयास करता है ।

चेतना का सूक्ष्मतम स्तर है—सत्यं, शिवम्, सुन्दरम् । वस्तुओं में लोभ और व्यक्तियों में मोह का दृष्टिकोण बहुत ही स्थूल है । यह अहंता का आरोपण मात्र है । जिस सम्पत्ति को हम अपने अधिकार के अन्तर्गत मानते हैं वह हमें प्रिय लगती है और जिन व्यक्तियों को इसी अपने परिवार के मान लेते हैं उनमें आसक्ति बढ़ जाती है । इसी 'प्रिय' परिधि की समीपता सुहाती है और उसे बढ़ाने तथा रखाने की ललक लगी रहती है । आमतौर से सुख सन्तोष की परिधि उतने ही क्षेत्र में अवरुद्ध होकर रह जाती है । जो किया और चाहा जाता है वह उसी में बँधा रहता है यह अहंता की प्रतिध्वनि मात्र है इसमें वस्तु के मूल सौन्दर्य का दर्शन हो ही नहीं पाता और व्यक्ति लोभ और मोह के अंवर-डंवर देखता हुआ बाल कौतुकों में उलझा रहता है ।

कला, काव्य एवं सौन्दर्य को भावनात्मक सम्वेदना तथा चिन्तन की सूक्ष्मतर परिधि कह सकते हैं । नृत्य, गायन, कला नहीं, कला का आवरण है उस माध्यम से अन्तःकरण में उल्लास पूर्ण प्रस्फुरण उमँगता है वह सम्वेदना ही कला है । काव्य किन्हीं तुकबन्दी या छन्द विन्यास को नहीं कहते । शब्दों का आवरण उठाकर विशिष्ट स्तर के भावोद्रेक को सजाया भ ाता है । उन शब्दों के अन्तरंग में जो कोमलता झाँकती है और चेतना में गुदगुदी पैदा करती है वही कविता है । सौन्दर्य, वस्तुओं की सज्जा, दृश्यों की शोभा एवं व्यक्तियों के अंग गठन पर निर्भर नहीं है वह तो प्रकृति की मृदुल एवं आत्मा की कोमलकान्त सम्वेदनशीलता को अपने अन्तरंग चित्रपट पर कलात्मक तूलिका के साथ चित्रण कर सकने की कलाकारिता है । सुन्दरता को दूसरे शब्दों में दिव्यानुभूति कह सकते हैं । जो भाव भरे अन्तःकरण में अपनी विशिष्टता के अनुरूप उमँगती, उभरती रहती है । उसका किसी के अंग संगठन से कोई विशेष सम्बन्ध नहीं है ।

द्रोपदी और लैला बिल्कुल स्याह काले रंग की थीं साथ ही कुरूप भी, पर उनके प्रेमी प्राण-प्रिय मानते थे । इसमें विशेषता उन महिलाओं के अंग गठन की अथवा हाव-भावों की नहीं, आरोपण में श्रेय, देखने वाले के अपने दृष्टिकोण को जितना दिया जायेगा उतना प्रिय पात्र को नहीं ।

भौतिक विज्ञान को असंस्कृत समझने का कोई कारण नहीं, क्योंकि उसका उद्देश्य न केवल अणु-सत्ता का विवेचन एवं उपयोग जानना है, वरन् चेतना के साथ जुड़ी हुई कोमल सम्वेदनाओं को उभार कर अन्तःकरण की भाव भरी रसानुभूति प्रदान करना भी है । इन दोनों प्रयोजनों को साथ लेकर चलने से ही विज्ञान की पूर्णता बनती है अन्यथा भौतिकी को ही विज्ञान मान लेने पर तो वह सचमुच ही असंस्कृत बन जायेगा । तब उसे लँगड़े, काने, कुबड़े, पंगे, नकटे, बूचे की संज्ञा दी जा सकेगी वह वस्तुतः कुरूप एवं कर्कश ही बन जायेगा ।

जीवन को जड़ और चेतन का समन्वय कह सकते हैं । हमें पदार्थों का भी उपयोग करना पड़ता है और चेतनता से भी वास्ता पड़ता है । हमारा शरीर स्वयं जड़ पदार्थों से बना है और अन्तःकरण में चेतना की सत्ता विद्यमान है । उभय-पक्षीय वस्तुस्थिति से अधिकाधिक आनन्द लेने के लिए उनकी सूक्ष्मता में प्रवेश करना आवश्यक है, ताकि जो अभी तक नहीं मिल सका वह आगे मिल सके । इस आवश्यकता की पूर्ति स्थूल जड़ जगत के क्षेत्र में भौतिकी द्वारा सम्भव होती है और चेतना के क्षेत्र में भाव सम्वेदना के अन्तराल में प्रवेश करके वह प्रयोजन सिद्ध किया जा सकता है ।

विज्ञान और दर्शन का क्षेत्र पृथक रखा जाय तो दोनों ही अपूर्ण रह जायेंगे । वस्तुतः वे दोनों दो हैं भी नहीं । एक ही तथ्य के दो पूरक पक्ष हैं । भौतिक जड़ पक्ष को सँभालता है और ब्रह्मविद्या चेतना को सुसंस्कृत बनाती है । तथ्यों की उपेक्षा करके, मात्र चिन्तन की कलाबाजी का खेल खड़ा करते रहने वाला दर्शन भ्रान्तियों का भण्डार बन जायेगा, वह हमें अवास्तविक कल्पनाओं की उड़ान में उड़ते रहने वाला, दिवास्वप्न देखते रहने वाला मात्र बनाकर रख देगा । इसी प्रकार जड़ पदार्थों की क्षमता पर निर्भर होते-होते हम स्वयं हृदयहीन मशीनी मनुष्य मात्र बनकर रह जायेंगे । विज्ञान को दर्शन के साथ और दर्शन को विज्ञान के साथ अपना ताल-मेल बिठाना पड़ेगा । यद्यपि आज यह बहुत कठिन दीखता है पर कल इसकी अनिवार्यता अनुभव की जायेगी । सत्य और तथ्य का समन्वय करने से ही सर्वतोमुख प्रगति के दोनों पहिए गतिशील हो सकेंगे ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विज्ञानी को कलाकार बनाना चाहिए और कलाकार को विज्ञान के साथ अपना मेल-जोल बढ़ाना चाहिए । दर्शन और विज्ञान को मिलाकर उभय-पक्षीय आवश्यकताओं की पूर्ति करनी चाहिए । दोनों को दो धाराओं में बहते हुए भी एक लक्ष्य पर पहुँचना चाहिए । पिछली कितनी ही मान्यताएँ, परम्पराएँ, परिभाषाएँ और आकांक्षाएँ अब अवास्तविक और असामायिक ठहरा दी गई हैं । किसी समय उनका औचित्य रहा होगा पर अब उनके साथ चिपके रहना हमें केवल उपहासास्पद ही बना सकता है । ठीक इसी प्रकार यदि विज्ञानी बिना हित अनहित का विचार किए घातक आविष्कार करता रहा और विलास वृद्धि में आविष्कारों का उपयोग होता रहा तो मनुष्य अपनी कलाकारिता को अनावश्यक समझने लगेगा और उसकी सौन्दर्यानुभूति समाप्त हो जायेगी । यदि ऐसा हुआ तो विज्ञान की प्रगति सचमुच बहुत महँगी पड़ेगी ।

विज्ञान के सम्पर्क में दर्शन की सत्ता को खतरा उत्पन्न हो जायेगा, इस प्रकार सोचना तभी उचित है जब वह अवास्तविक आधारों को लेकर चल रहा हो । अब बुद्धिवादी युग आ गया । क्यों और कैसे की कसौटी पर कसे बिना अगले दिनों किसी भी प्रचलन की स्वीकार न किया जा सकेगा । यथार्थता की परीक्षा से यदि दर्शन भागेगा तो उसका यह भगोड़ापन हो उसकी कच्चाई समझ ली जायेगी और दंभी बताकर समय का प्रवाह उसका साथ छोड़ देगा, तब उसे बेमौत मरना पड़ेगा । इससे अच्छा यही है कि वह समय रहते आत्म-निरीक्षण, परीक्षण करके उसे इस योग्य बना ले कि तथ्यों का सामना करने में उसे डरने की तनिक भी आवश्यकता न रहे । दर्शन का गौरव इसी में है ।

भाव-सम्वेदनाओं का क्षेत्र उतना ही सुविस्तृत है जितना कि भौतिक जगत । यह एक तथ्य है कि मनुष्य की आत्म संतुष्टि शान्ति और प्रसन्नता भावनाओं के ही स्पन्दन हैं फिर भी भावनाओं की उपेक्षा की जाती रहती है । भाव विज्ञान और धर्म एक ही सिक्के के उभयपक्ष हैं, दो भिन्न वस्तुएँ नहीं । इस तरह धर्म के बिना हमारा काम वैसे ही चल नहीं सकता । जिस तरह अन्न और वस्त्र के बिना, इससे मानवीय व्यवहार प्रभावित होता है । धर्म का उद्देश्य उसे निरंकुश होने से बचाना है अतएव उसकी उपेक्षा नहीं की जानी चाहिए । विज्ञान के साथ धर्म का समन्वय बना रहने से ही मानवीय प्रगति की शान्ति और प्रसन्नता स्थिर रह सकती है इससे कम में नहीं । निकट भविष्य में वैज्ञानिक धर्म अर्थात् तर्क, तथ्य एवं प्रमाणों की कसौटी पर खरा उतरने वाला धर्म ही जीवित रहेगा । वैज्ञानिक धर्म की यही आधारशिला है ।

⌘⌘⌘



Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

परमपूज्य गुरुदेव की अभिनव पाँच स्थापनाएँ

युगदृष्टा के स्तर की अवतारी सत्ता के रूप में परमपूज्य गुरुदेव ने अपने अस्सी वर्ष के जीवन काल में जितना भी कुछ किया, उसकी मिसाल कहीं देखने को नहीं मिलती। करोड़ों व्यक्तियों के मनों का निर्माण उनके सोचने के तरीके में बदलाव एवं युगनिर्माण की पृष्ठभूमि बनाकर रख देने का कार्य इन्हीं के स्तर की सत्ता कर सकती थी जो लाखों वर्षों में कभी-कभी धरती पर आती है। उनके द्वारा की गयी स्थापनाओं का जब प्रसंग आता है तब ईंट-गारे-चूने-सीमेंट से बने भवनों से पहले उनकी स्नेह-संवेदना से सिक्त हुए, ममत्व में स्नानकर उनके अपने हो गये लाखों व्यक्ति दिखाई पड़ते हैं, जिनने उनके एक इशारे पर अपना सब कुछ उनको अर्पित कर दिया। स्वतंत्रता संग्राम के दिनों में कभी ऐसा ही वातावरण भारत के कोने-कोने में दिखाई देता था, जब हर घर से सत्याग्रही निकलकर आ रहे थे। भावनाओं का आवेग चिरस्थायी नहीं रहता। वे ही लोग जो कभी राष्ट्रनिर्माण के लिए अपना सब कुछ छोड़ पढ़ना-लिखना छोड़ देश को आजाद बनाने के लिए कूद पड़े थे, कभी गड़बड़ाने न पाएँ, उसी के लिए बापू ने आजादी के बाद कांग्रेस भंग कर देने व सभी को एक आदर्श स्वयं सेवक की तरह दरिद्र नारायण का उत्थान कर राष्ट्र निर्माण में लग जाने की सलाह दी थी।

सभी इस तथ्य को जानते हैं कि ऐसा नहीं हुआ, राष्ट्र का कीर्ति स्तम्भ रूपी वह महापुरुष भी एक वर्ष के अंदर ही शहादत को प्राप्त हो चला गया। गिने-चुने उनके आदर्शों पर चलने वाले रह गये, अवसरवादियों को राजनेतृत्व भाने लगा एवं राष्ट्र आजाद होकर भी उनके हाथ में आ गया जो ब्रिटिश तो नहीं थे किन्तु, उसी रंग में रंगे सत्ता के उन्माद में काम करने वाले शासक थे- सृजेता नहीं। जिंदा रहा तो मात्र बापू का दर्शन बुनियादी आधार पर टिका-मानव को बनाने का तंत्र-आश्रम तंत्र जो सेवाग्राम-साबरमती आश्रम के रूप में कार्य करता रहा और वह भी शीर्ष-पुरुष के न रहने, बिनोबा जी के चले जाने के बाद अस्तित्त्व व महत्व की दृष्टि से गौण हो गया। परमपूज्य गुरुदेव ने अपनी दिव्य-दृष्टि से यह सब पूर्व में ही देख लिया था कि कोई भी भव्य निर्माण आश्रम या तंत्र बनाने से पूर्व राष्ट्र को सांस्कृतिक भौतिक, आध्यात्मिक आजादी दिलाने वाले अगणित व्यक्ति तैयार करने पड़ेंगे। १९११ में आज से ८४ वर्ष पूर्व वि. संवत् २०६८ में जन्में राष्ट्र की आजादी में उन्मत्त बने श्रीराम मत्त कहलाने वाले, आचार्य श्री ने पहले स्वयं को तपाया, वैचारिक क्रांति के निर्माण का आधारभूत तंत्र स्वयं व परमवंदनीया माता जी के रूप में खड़ा किया, 'अखण्ड ज्योति' पत्रिका-अपनी लेखनी से लिखी ममत्व भरी चिट्ठियों व छोटी-छोटी एक आने की किताबों से जन-जन के मन को छुआ, तब जाकर अपने एक लक्ष के २४ गायत्री महापुरश्चरणों की पूर्णाहुति पर उनने गायत्री तपोभूमि, मथुरा की स्थापना की बात १९५२-५३ में सोची। सबसे पहली मंत्र दीक्षा वहीं पर १९५३ में दी व यह मानते हुए कि बिना आध्यात्मिक आधार बनाये, मनोभूमि में, भावनाओं के स्तर पर बदलाव लाये कोई क्रांति सफल नहीं हो सकती, धीमी खुराक देते हुए हर व्यक्ति को गायत्री व यज्ञ के तत्व दर्शन से जोड़ते हुए चले गये। गायत्री परिवार रूपी विराट वट वृक्ष का मूल आधार वह स्थापना है जो जन-जन के मनों में पहले हुई- उनकी भाव संवेदनाओं के उदात्तीकरण के रूप में संपन्न हुई व उनके अंदर अपनी गुरु सत्ता को देखकर त्याग करने की यज्ञीय जीवन अपनाने की प्रेरणा बलवती होने लगी। उनने सर्वमेध के रूप में अपना सर्वस्व बलिदान एवं नरमेघ के रूप में अपने आप को समाज के हित न्यौछावर करने की भावना से दो यज्ञ किये। अपनी जमींदारी के बाण्ड बेचकर एवं परमवंदनीया माताजी के कीमती सोने के जेवर (ढाई सौ तोले) बेचकर जो स्वेच्छा से संपन्न हुआ, एक स्थापना भवन के रूप में जो हुई- वह थी गायत्री तपोभूमि, मथुरा जो वृन्दावन रोड पर ऋषि दुर्वासा की जन्मस्थली पर बनी आज से ४२ वर्ष पूर्व १९५३ में। प्रारंभिक स्थापना यों अखण्ड ज्योति संस्थान को माना जा सकता है जहाँ अखण्ड दीपक आँवल खेड़ा से अपनी जन्मभूमि से जो वहाँ से मात्र ४० मील दूर थी, स्थापित किया गया था एवं प्रारंभिक तप-तितिक्षा वहीं पर १९४१ से, तपोभूमि की स्थापना से भी 12 वर्ष पूर्व आरंभ हो गयी थी। इस प्रकार जन-जन के मनों का निर्माण उनके अंत: स्थल में प्रवेश कर उनके अंदर देवत्व के जागरण की ललक पैदा करने वाली पृष्ठभूमि पर स्थापनाओं का क्रम बना। किराये की ऐसी हवेली जिसे भुतहा

हवेली कहा जाता था, में अखण्ड दीपक की स्थापना, उसके समक्ष तप, **अखण्ड ज्योति संस्थान, घीयामण्डी, मथुरा** के रूप में विकसित हुआ एवं एक और दूसरा निर्माण मथुरा में ही गायत्री तपोभूमि के रूप में हुआ जोकि ३ मील दूर वृन्दावन रोड पर १९५३ बनाई गई। १९५३ में एवं क्रमशः सुसंगठित गायत्री परिवार के बनने की प्रक्रिया चल पड़ी।

इस प्रारंभिक भूमिका को समझने के बाद ही परमपूज्य गुरुदेव की पाँच मूल स्थापनाओं एवं बाद में देश के कोने-कोने में बनी भव्य इमारतों के रूप में शक्तिपीठों- प्रज्ञा संस्थानों भारत व विश्वभर में घर-घर में स्थापित स्वाध्याय मण्डलों व गायत्री परिवार की शाखाओं, प्रज्ञापीठों-चरणपीठों का महत्व समझा जा सकता है। नहीं तो जैसे अन्यान्य आश्रम-संस्थान बनते हैं ऐसे इनका भी वर्णन किया जा सकता था व यह कहा जा सकता था कि यह वैभवपूर्ण स्थापनाएँ पूज्यवर ने कीं। उनमें यदि प्राण फूँके गये हों, प्राणवान व्यक्ति वहाँ रहते हों व उस शक्ति के महा-अवसान के बाद भी वे सतत उसी दिशा में चल रहे हों तो माना जाना चाहिए कि प्रारंभिक पुरुषार्थ जो किया गया, वह औचित्य पूर्ण था।

परम पूज्य गुरुदेव की महत्वपूर्ण पाँच स्थापनाएँ, इस प्रकार हैं-

(१) युगतीर्थ आँवलखेड़ा (२) अखण्ड ज्योति संस्थान, घीयामण्डी, मथुरा (३) गायत्री तपोभूमि, मथुरा (४) शांतिकुंज, गायत्री तीर्थ, सप्तसरोवर, हरिद्वार तथा (५) ब्रह्मवर्चस शोध संस्था., सप्तसरोवर, हरिद्वार।

युगतीर्थ आँवलखेड़ा का नाम सबसे पहले इसलिए लिखा कि यहीं पर वह युगपुरुष जन्मा संवत् १९६८ की आश्विन कृष्ण त्रयोदशी तिथि के दिन ब्राह्म मुहूर्त में, जो अँग्रेजी तारीख से २० सितम्बर १९११ के दिन आती थी। एक श्री मंत ब्राह्मण परिवार में, जहाँ धन की कोई कमी नहीं थी, पूरा परिवार संस्कारों से अनुप्राणित-पिता भागवत के प्रकाण्ड पंडित बहुत बड़ी जागीर के मालिक। आज जहाँ पूज्यवर की स्मृति में एक विराट स्तंभ की, एक चबूतरे की तथा उनके कर्तृत्व रूपी शिलेखों की स्थापना हुई है- वहीं पूज्यवर ने शरीर से जन्म लिया था। समीप बनी दो कोठरियाँ जो काल प्रवाह के क्रम में गिर सी गयी थीं, जीर्णोद्धार कर वैसी ही निर्मित कर दी गयी हैं- जैसी उनके समय में थी। जन्मभूमि का कण-कण उस दैवीसत्ता की चेतना से अनुप्राणित है। उनके हाथ से खोदा कुआँ जिसे पूरे गाँव का एक मात्र मीठे जल वाला कुआँ माना गया- वह अभी भी है, उनके हाथ से रोपा नीम का पेड़ एवं वह बैठक जहाँ स्वतंत्रता संग्राम के दिनों में सब बैठकर चर्चा करते थे, आज भी उन दिनों की याद दिलाते हैं। पास में ही दो कोठरियाँ हैं जिनमें से एक कक्ष में वह स्थान है जहाँ दीपक के प्रकाश में से सूक्ष्म शरीर धारी गुरुसत्ता प्रकट हुई थी तथा जिसने उनके जीवन की दिशा धारा का १९२६ के बाद के क्रम का निर्धारण कर दिया था। यह सब देखकर मस्तिष्क पटल पर वह दृश्य उभर आता था, जिसे गुरुसत्ता ने कभी देखा था व जो गायत्री परिवार की स्थापना का मूल आधार बना। आँवलखेड़ा में ही उनकी माताजी की स्मृति में स्थापित माता दानकुँवरि इंटर कालेज है जो उनके द्वारा दान दी गयी जमीन में प्रदत्त धन राशि द्वारा विनिर्मित्त है। १९६३ से चल रहे इस इंटर कालेज से कई मेधावी छात्र निकल कर आत्म निर्भर बने हैं व उच्च पदों पर पहुँचे हैं।

१९७९-८० में गायत्री शक्तिपीठ-एवं कन्या इंटर कालेज की स्थापना का ताना-बाना बुना जाने लगा एवं एक विशाल शक्तिपीठ तथा आसपास के दो सौ ग्रामों की बालिकाओं के पठन-पाठन की व्यवस्था करने वाले, उन्हें सुशिक्षित संस्कारवान आत्मावलम्बी बनाने वाले कन्या महाविद्यालय का अब रूप ले चुका है। प्रथम पूर्णाहुति हेतु इसी भूमि को जो शक्तिपीठ-जन्मभूमि-ग्रामीण क्षेत्र के चारों ओर है, इसीलिए चुना गया कि यहाँ से उद्भूत प्राण ऊर्जा से यहाँ आने वाला हर संकल्पित साधक अनुप्राणित होकर जाए व राष्ट्र के नव निर्माण की सांस्कृतिक-भावनात्मक क्रांति की पृष्ठभूमि रख सके। यहाँ पूज्यवर १९३६-३७ तक ही रहे, कुछ दिन आगरा रहकर १९४०-४१ में मथुरा चले गये जहाँ दो-तीन मकान बदलने के बाद वर्तमान मकान किरायें पर लिया जिसे आज अखण्ड-ज्योति संस्थान कहते हैं।

अखण्ड ज्योति संस्थान, घीया मण्डी, मथुरा में स्थित हैं। परमपूज्य गुरुदेव सीमित साधनों में अपने अखण्ड दीपक के साथ यहीं रहने लगे एवं यहीं से क्रमशः आत्मीयता विस्तार की जन-जन तक अपने क्रांतिकारी चिंतन के विस्तार की प्रक्रिया 'अखण्ड ज्योति' पत्रिका, जो आगरा से ही आरंभ कर दी गयी थी, की 'गायत्री चर्चा' स्तंभ व अन्यान्य

लेखों की पंक्तियों के माध्यम से संपन्न होने लगी। व्यक्तिगत पत्रों द्वारा उनके अंतस्तल को स्पर्श कर एक महान स्थापना का बीजारोपण होने लगा। यहीं पर अगणित दुखी, तनाव ग्रसित व्यक्तियों ने आकर उनके स्पर्श से नये प्राण पाये तथा उनके व परम वंदनीया माताजी के हाथों से भोजन-प्रसाद पाकर उनके अपने होते चले गये। हाथ से बने कागज पर छोटी टेण्ड्रिल मशीनों द्वारा यहीं पर अखण्ड ज्योति पत्रिका छापी जाती थी व छोटी-छोटी किताबों द्वारा लागत मूल्य पर उसे निकालने योग्य खर्च निकलता था। बगल की एक छोटी सी कोठरी में जहाँ अखण्ड दीपक जलता था, आज पूजा घर विनिर्मित है। पूरी बिल्डिंग को खरीद कर उनके सुपुत्र ने एक नया आकार व मजबूत आधार दे दिया है किन्तु यह कोठरी अंदर से वैसी ही रखी गयी है जैसी पूज्यवर के समय में 1942-43 में रही होगी। तब से लेकर आगामी ३० वर्ष का साधनाकाल-लेखनकाल पूज्यवर का इसी घीयामण्डी के भवन में छोटी-छोटी दो कोठरियों में गहन तपश्चर्या के साथ बीता। तपोभूमि निर्माण की पृष्ठभूमि यहीं बनी, १९५८ सहस्र कुण्डीयज्ञ की आधार शिला यहीं रखी गयी, यहीं सारी योजना बनी एवं विधिवत-गायत्री परिवार बनता चला गया। रोज आने वाले पत्रों को स्वयं परम वंदनीया माताजी पढ़ती जातीं एवं पूज्यवर इतनी ही देर में जवाब लिखते जाते, यही सूत्र संबंधों के सुदृढ़ बनने का आधार बना। हर परिजन को तीन दिन में जवाब मिल जाता, शंका-समाधान होता चला जाता एवं देखते-देखते एक विराट गायत्री परिवार बनता चला गया। गायत्री महाविज्ञान के तीनों खण्ड, युग निर्माण परक साहित्य, आर्ष-ग्रन्थों के भाष्य को अंतिम आकार देने का कार्य यहीं संपन्न हुआ। जन सम्मेलनों छोटे-बड़े यज्ञों एवं १००८ कुण्डी पाँच विराट यज्ञों में पूज्यवर यहीं से गये एवं विदाई सम्मेलन की रूपरेखा बनाकर स्थायी रूप से इस घर से १९७१ की २० जून को विदा लेकर चले गये। इस संस्थान के कण-कण में जहाँ आज १० लाख से अधिक संख्या में हिन्दी सहित सभी भाषाओं में अखण्ड ज्योति पत्रिका के प्रकाशन विस्तार डिस्पैच आदि का एक विराट तंत्र स्थापित है, परमपूज्य गुरुदेव की चेतना संव्याप्त अनुभव की जा सकती है। भले ही बहिरंग का कलेवर बदल गया हो, अंदर प्रवेश करते ही परमपूज्य गुरुदेव व परम वंदनीया माताजी की सतत विद्यमान प्राणचेतना के स्पन्दन वहाँ विद्यमान हैं, यह प्रत्यक्षतः देखा जा सकता है।

गायत्री तपोभूमि, मथुरा को परमपूज्य गुरुदेव की चौबीस महापुरश्चरणों की पूर्णाहुति पर की गयी स्थापना माना जा सकता है, जिसे विनिर्मित ही गायत्री परिवार रूपी संगठन के विस्तार के लिए किया गया था। इसकी स्थापना से पूर्व चौबीस सौ तीर्थों के जल व रज को संग्रहीत करके यहाँ उनका पूजन किया गया, एक छोटी किन्तु भव्य यज्ञशाला में अखण्ड अग्नि स्थापित की गयी तथा एक गायत्री महाशक्ति का मन्दिर विनिर्मित किया गया। चौबीस सौ करोड़ गायत्री मंत्रों का लेखन जो श्रद्धापूर्वक नैष्ठिक साधकों द्वारा किया गया था, यहाँ पर संरक्षित कर रखा गया है। पू० गुरुदेव की साधना स्थली व प्रातः काल की लेखनी की साधना की कोठरी यदि अखण्ड ज्योति संस्थान में थी तो उनकी जन-जन से मिलने, साधनाओं द्वारा मार्गदर्शन देने की कर्म-भूमि गायत्री तपोभूमि थी। यहीं पर १०८ कुण्डी गायत्री महायज्ञ में १९५३ में पहली बार पूज्यवर ने साधकों को मंत्र दीक्षा दी। यहीं पर १९५६ में नरमेध यज्ञ तथा १९५८ में विराट सहस्रकुण्डी यज्ञायोजन संपन्न हुए। श्रेष्ठ नररत्नों का चयन कर गायत्री परिवार को विनिर्मित करने का कार्य यहीं व्यक्तिगत मार्गदर्शन द्वारा संपन्न हुआ। हिमालय प्रवास से लौटकर पूज्य आचार्य श्री ने युग निर्माण योजना के शत सूत्री कार्यक्रम एवं सत्संकल्प की तथा युगनिर्माण विद्यालय के एक स्वावलम्बन प्रधान शिक्षा देने वाले तंत्र के आरंभ होने की घोषणा की। यह विधिवत् १९६४ से आरम्भ किया गया एवं अभी भी सफलतापूर्वक चल रहा है। जिस कक्ष में परमपूज्य गुरुदेव सभी से मिला करते थे, अभी भी यहाँ देखा जा सकता है। भव्य निर्माण परमपूज्य गुरुदेव की १९७१ की विदाई के बाद यहाँ हो गया है किन्तु, कण-कण में उनकी प्राणचेतना का दर्शन किया जा सकता है। विराट प्रज्ञानगर, युग निर्माण विद्यालय, साहित्य की छपाई हेतु बड़ी-बड़ी ऑफसेट मशीनें तथा युगनिर्माण साहित्य जो पूज्यवर ने जीवन भर लिखा, उसका वितरण-विस्तार तंत्र यहाँ पर देखा जा सकता है।

शांतिकुंज, हरिद्वार- ऋषि परम्परा के बीजारोपण केन्द्र के रूप में १९७१ में स्थापित किया गया था, जब परमपूज्य गुरुदेव मथुरा स्थायी रूप से छोड़कर परमवंदनीया माताजी को अखण्ड दीपक की रखवाली हेतु यहाँ छोड़कर हिमालय में चले गये। गुरुसत्ता के निर्देश पर वे पुनः एक वर्ष बाद लौटे व तब शांतिकुंज को उनने एक बड़ा विराट रूप देने,

सभी ऋषिगणों की मूलभूत स्थापनाओं को यहाँ साकार बनाने का निश्चय किया । इससे पूर्व परमवंदनीया माताजी ने 24 कुमारी कन्याओं के साथ अखण्ड दीपक के समक्ष २४० करोड़ गायत्री मंत्र का अखण्ड अनुष्ठान आरंभ कर दिया था । पूज्यवर ने प्राण प्रत्यावर्त्तन सत्र जीवन साधना सत्र, वानप्रस्थ सत्र आदि के माध्यम से विभिन्न क्षेत्र में सक्रिय कार्य करने वाले कार्यकर्त्ता यहीं गढ़े । यह सत्र श्रृंखला कल्प साधना, संजीवनी साधना सत्रों के रूप में तब से ही ९ दिवसीय सत्रों व एक माह के युग शिल्पी प्रशिक्षण सत्रों के रूप में चल रही है, अभी भी अनवरत उसमें आने वालों का तांता लगा रहता है । पहले से ही सब अपनी बुकिंग इसमें करा लेते हैं ।

शांतिकुंज को गायत्री तीर्थ का रूप देकर सप्त ऋषियों की मूर्त्तियों की स्थापना १९७८-७९ में की गयी, एक देवात्मा हिमालय विनिर्मित किया गया एवं यहाँ सभी संस्कारों को संपन्न करते रहने का क्रम बन गया जो सतत चल रहा है। नित्य यहाँ दीक्षा, पुंसवन, नामकरण, विद्यारम्भ, यज्ञोपवीत, विवाह, श्राद्ध-तर्पण आदि संस्कार संपन्न होते हैं! इस बीच परम वंदनीया माताजी ने जागरण सत्र श्रृंखलाएँ संपन्न करना आरम्भ रखा । देव कन्याओं को प्रशिक्षित कर पूरे भारत में जीप टोलियों में भेजा गया । इनके माध्यम से तीन वर्ष तक भारत के कोने-कोने में तुमुलनाद होता रहा ।

शांतिकुंज का गायत्री नगर जो आज एक विराट स्थापना के रूप में, एक अकेडमी के रूप में नजर आता है व जिसमें एक बार में एक साथ दस हजार व्यक्ति एक साथ ठहर सकते हैं १९८१-८२ में बनना आरम्भ हुआ । विलक्षण, दुर्लभ जड़ी बूटियों के पौधे यहाँ लगाये गये तथा प्रखर प्रज्ञा-सजल श्रद्धा रूपी तीर्थ स्थली का पूज्यवर ने अपने सामने निर्माण कराया । यहीं उनके निर्देशानुसार उनके शरीर छोड़ने पर दोनों सत्ताओं को अग्नि समर्पित की जानी थी । स्वावलम्बन विद्यालय से लेकर एक विशाल चौके का निर्माण एवं गायत्री विद्यापीठ से लेकर भारत के सभी सरकारी विभागों के प्रशिक्षण के तंत्र की स्थापना यहाँ पर की गयी है एवं यह एक जीता जागता तीर्थ अब बन गया है, जहाँ पर उज्ज्वल भविष्य की पूर्व झलक देखी जा सकती है। कम्प्यूटरों से सज्जित विशाल कार्यालय से लेकर पत्राचार विद्यालय जहाँ नित्य हजारों पत्रों के द्वारा पूरे तंत्र का मार्गदर्शन किया जाता है, यहाँ की विशेषता है ।

ब्रह्मवर्चस शोध संस्थान परम-पूज्य गुरुदेव की अभिनव पाँचवी स्थापना है, जहाँ पर विज्ञान और अध्यात्म के समन्वय का अभिनव शोध कार्य चल रहा है। इसे १९७९ की गायत्री जयंती पर आरम्भ किया गया था । वर्तमान शांतिकुंज-गायत्री तीर्थ से आधा किलोमीटर दूरी पर गंगातट पर स्थित यह संस्थान अपनी आकर्षक बनावट के कारण सहज ही सबके मनों को मोहकर आमंत्रित करता रहता है। इसमें तीन मंजिलों में प्रथम तल पर एक विज्ञान के उपकरणों से सुसज्जित यज्ञशाला विनिर्मित है तथा चौबीस कक्षों में गायत्री महाशक्ति की चौबीस मूर्त्तियाँ बीजमंत्रों व उनकी फल-श्रुतियों सहित स्थापित हैं । द्वितीय तल पर एक वैज्ञानिक प्रयोगशाला है, जहाँ ऐसे उपकरण स्थापित हैं जो यह जाँच पड़ताल करते हैं कि साधना से पूर्व व पश्चात्, यज्ञादि मंत्रोच्चारण के पूर्व व पश्चात् क्या-क्या परिवर्त्तन शरीर-मन की गतिविधियों व रक्त आदि संघटकों में देखने में आये । इनके आधार पर साधकों को साधना संबंधी परामर्श दिया जाता है । यहाँ पर वनौषधियों का विश्लेषण भी किया जाता है तथा यज्ञ ऊर्जा-मंत्र शक्ति का क्या प्रभाव साधक की मस्तिष्कीय तरंगों-जैव विद्युत आदि पर पड़ा यह देखा जाता है । विभिन्न प्रकार के मनोवैज्ञानिक परीक्षण भी यहाँ किये जाते हैं । तृतीय तल पर एक विशाल ग्रंथागार स्थापित हैं, जहाँ विश्वभर के शोध प्रबंध वैज्ञानिक अध्यात्मवाद पर एकत्रित किये गये हैं । यहाँ प्रायः ४५००० से अधिक ग्रंथ हैं, जिनमें कई पुरातन पाण्डुलिपियाँ हैं । यह अपने आप में एक अनूठा संकलन है जो और कहीं एक साथ देखने में नहीं मिलता ।

परमपूज्य गुरुदेव की उपरोक्त पाँच स्थापनाएँ किसी को भी यह परिचय दे सकती हैं कि किस विलक्षण दृष्टास्तर की वह महासत्ता थी जो हम सबके बीच अपना लीला संदोह रचकर चली गयी । प्रत्यक्ष तो यह केन्द्रीय पाँच स्थापनाएँ नजर आती हैं किन्तु ४८०० से अधिक अपने भवनों वाले प्रज्ञा संस्थान २४००० से अधिक प्रज्ञा मण्डल व स्वाध्याय मण्डल तथा अगणित गायत्री परिवार की शाखाएँ यदि इनमें मिलाई जायें तो इनका मूल्य राशि में आँका नहीं जा सकता। यही वह सब है जो उस महापुरुष को एक अवतारी स्तर की सत्ता के रूप में प्रतिष्ठापित करता है व जिसके कर्तृत्व पर श्रद्धावनत होने का मन करता है । ❑❑❑

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पं. श्रीराम शर्मा आचार्य का जीवनदर्शन : समग्र वाङ्मय

परमपूज्य गुरुदेव पं. श्रीराम शर्मा आचार्य ने जीवन भर जो अपनी लेखनी से लिखा, औरों को प्रेरित कर उनसे सृजनात्मक लेखन करवाया, पुस्तकों-पत्रिकाओं में जो प्रकाशित हुआ, समय-समय पर उनने अमृतवाणी के माध्यम से जो विचारों की अभिव्यक्ति की, विचारसार व सूक्तियाँ जो वे लिख गये या अनायास कभी कह गये तथा पत्रों के माध्यम से जो अंतरंग स्पर्श जन-जन को दिया, वह समग्र इस वाङ्मय के खण्डों में है । जिनके नाम इस प्रकार हैं :-

१. युगद्रष्टा का जीवन-दर्शन
समग्र वाङ्मय का परिचय
२. जीवन देवता की साधना-आराधना
३. उपासना-समर्पण योग
४. साधना पद्धतियों का ज्ञान और विज्ञान
५. साधना से सिद्धि-१
६. साधना से सिद्धि-२
७. प्रसुप्ति से जाग्रति की ओर
८. ईश्वर कौन है, कहाँ है, कैसा है ?
९. गायत्री महाविद्या का तत्वदर्शन
१०. गायत्री साधना का गुह्य विवेचन
११. गायत्री साधना के प्रत्यक्ष चमत्कार
१२. गायत्री की दैनिक एवं विशिष्ट अनुष्ठान-परक साधनाएँ
१३. गायत्री की पंचकोशी साधना एवं उपलब्धियाँ
१४. गायत्री साधना की वैज्ञानिक पृष्ठभूमि
१५. सावित्री, कुण्डलिनी एवं तंत्र
१६. मरणोत्तर जीवन : तथ्य एवं सत्य
१७. प्राणशक्ति : एक दिव्य विभूति
१८. चमत्कारी विशेषताओं से भरा मानवी मस्तिष्क
१९. शब्द ब्रह्म-नाद ब्रह्म
२०. व्यक्तित्व विकास हेतु उच्चस्तरीय साधनाएँ
२१. अपरिमित संभावनाओं का आगार मानवी व्यक्तित्व
२२. चेतन, अचेतन एवं सुपर चेतन मन
२३. विज्ञान और अध्यात्म परस्पर पूरक
२४. भविष्य का धर्म : वैज्ञानिक धर्म
२५. यज्ञ का ज्ञान-विज्ञान
२६. यज्ञ : एक समग्र उपचार प्रक्रिया
२७. युग-परिवर्तन कैसे और कब ?
२८. सूक्ष्मीकरण एवं उज्ज्वल भविष्य का अवतरण-१
२९. सूक्ष्मीकरण एवं उज्ज्वल भविष्य का अवतरण-२ (सतयुग की वापसी)
३०. मर्यादा पुरुषोत्तम राम
३१. संस्कृति-संजीवनी श्रीमद्भागवत एवं गीता
३२. रामायण की प्रगतिशील प्रेरणाएँ
३३. षोडश संस्कार विवेचन
३४. भारतीय संस्कृति के आधारभूत तत्त्व
३५. समस्त विश्व को भारत के अजस्र अनुदान
३६. धर्मचक्र प्रवर्त्तन एवं लोकमानस का शिक्षण
३७. तीर्थ सेवन : क्यों और कैसे ?
३८. प्रज्ञोपनिषद्
३९. नीरोग जीवन के महत्त्वपूर्ण सूत्र
४०. चिकित्सा उपचार के विविध आयाम
४१. जीवेम शरदः शतम्
४२. चिरयौवन एवं शाश्वत सौन्दर्य
४३. हमारी संस्कृति : इतिहास के कीर्ति स्तम्भ
४४. मरकर भी अमर हो गये जो
४५. सांस्कृतिक चेतना के उन्नायक : सेवाधर्म के उपासक
४६. भव्य समाज का अभिनव निर्माण
४७. यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवता
४८. समाज का मेरुदण्ड सशक्त परिवार तंत्र
४९. शिक्षा एवं विद्या
५०. महापुरुषों के अविस्मरणीय जीवन प्रसंग-१
५१. महापुरुषों के अविस्मरणीय जीवन प्रसंग-२
५२. विश्व वसुधा जिनकी सदा ऋणी रहेगी
५३. धर्मतत्त्व का दर्शन व मर्म
५४. मनुष्य में देवत्व का उदय
५५. दृश्य जगत् की अदृश्य पहेलियाँ
५६. ईश्वर विश्वास और उसकी फलश्रुतियाँ
५७. मनस्विता प्रखरता और तेजस्विता
५८. आत्मोत्कर्ष का आधार- ज्ञान
५९. प्रतिगामिता का कुचक्र ऐसे टूटेगा
६०. विवाहोन्माद : समस्या और समाधान
६१. गृहस्थ : एक तपोवन
६२. इक्कीसवीं सदी : नारी सदी
६३. हमारी भावी पीढ़ी और उसका नवनिर्माण
६४. राष्ट्र समर्थ और सशक्त कैसे बने ?
६५. सामाजिक, नैतिक एवं बौद्धिक क्रान्ति कैसे ?
६६. युग निर्माण योजना-दर्शन, स्वरूप व कार्यक्रम
६७. प्रेरणाप्रद दृष्टान्त
६८. पूज्यवर की अमृतवाणी (भाग एक)
६९. विचारसार एवं सूक्तियाँ (प्रथम खण्ड)
७०. विचारसार एवं सूक्तियाँ (द्वितीय खण्ड)

वाङ्मय के आगे प्रकाशित होने वाले ३८ खण्ड निम्न विषयों पर होंगे—

७१. मनोविकारों की मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि
७२. तनाव के कारण एवं उनके निवारण के उपाय
७३. चिन्तन का विधेयात्मक-निषेधात्मक स्वरूप
७४. पुरुषार्थ और मानवी जिजीविषा
७५. संकल्प बल का अनूठा प्रभाव
७६. बाल-विकास के विविध सोपान
७७. बाल मनोविज्ञान का सही उपयोग
७८. पारिवारिकता में सुसंस्कारों का योगदान
७९. पारिवारिक पंचशील और परिवार-निर्माण
८०. व्यक्तित्व के विकास की प्रक्रिया
८१. विचार-विज्ञान का महत्त्व
८२. सामाजिक समस्याएँ और उनका समाधान
८३. समाज-निर्माण के विभिन्न चरण
८४. सामाजिक जीवन में सद्गुणों की भूमिका
८५. नर-नारी की सामान्य समस्याएँ और उनका समाधान
८६. नारी जागृति की बाधाएँ एवं उनके निराकरण के उपाय
८७. पारिवारिक जीवन: एक तप-साधना
८८. दाम्पत्य जीवन के संयुक्त दायित्व
८९. नीति-विज्ञान और नैतिकता
९०. कृषि, व्यवसाय और उद्योग की उन्नति के आधार
९१. पूज्य गुरुदेव के स्फुट विचार
९२. पूज्यवर की अमृतवाणी-२
९३. पूज्य गुरुदेव की दिव्य अनुभूतियाँ
९४. पूज्य गुरुदेव के लिखे स्मरणीय पत्र
९५. तंत्र महाविज्ञान विवेचन
९६. मंत्र महाविज्ञान विवेचन
९७. महापुरुषों के प्रेरक जीवन-प्रसंग
९८. प्रेरणाप्रद कथा एवं गाथाएँ
९९. हृदयस्पर्शी विविध कथाएँ
१००. शान्तिकुंज का प्रज्ञा अभियान
१०१. युग निर्माण मिशन का क्रमिक इतिहास
१०२. वेद-सार-चिन्तन
१०३. पुराण-शोध-सार
१०४. उपनिषद् और आरण्यकों की दार्शनिक विषयवस्तु
१०५. काव्य-गीत-मंजूषा
१०६. मिशन के रचनात्मक कार्यक्रमों का क्रमिक इतिहास
१०७. मिशन की लोक-व्यवहार संहिता
१०८. गुरुदेव की अपने आत्मीय जनों से अपनी बातें

❑❑❑

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org